कृष्णदास संस्कृत सीरीज १७१

त्रिविक्रमभट्टप्रणीतः

नलचम्पूः

(दमयन्ती-कथाः)

'कल्याणी-' 'ज्योत्स्ना'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतः

संस्कृतव्याख्याकारः
पं. श्री रामनाथ त्रिपाठी शास्त्री

हिन्दीव्याख्याकारः सम्पादकश्च
आचार्य श्रीनिवास शर्मा

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

903/9

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
१७१

॥ श्रीः ॥

त्रिविक्रमभट्टप्रणीतः

नलचम्पूः

(दमयन्ती-कथा)

'कल्याणी-' 'ज्योत्स्ना'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतः

संस्कृतव्याख्याकारः
पं० श्री रामनाथ त्रिपाठी शास्त्री

हिन्दीव्याख्याकारः सम्पादकश्च
आचार्य श्रीनिवास शर्मा

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, विक्रम सम्वत् २०५८, सन् २००१

ISBN : 81-218-0083-8

© कृष्णदास अकादमी

पो० बा० नं० १११८
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

पोस्ट बाक्स नं० १००८
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
निकट गोलघर (मैदागिन)
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन आफिस : ३३३४५८, फोन-निवास : ३३४०३२ एवं ३३५०२०
e. mail : cssoffice@satyam. net. in

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES

171

❀❀❀❀

NALACAMPŪ

(DAMAYANTI-KATHA)

of

Trivikram Bhatta

With

'Kalyani'–Sanskrit Commentary

Of

Pt. Ramnath Tripathi Shastri

Edited With

'Jyotsna'-Hindi Commentary

by

Acharya Shrinivas Sharma

Krishnadas Academy

VARANASI

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Publisher : Krishnadas Academy, Varanasi.

Printer : Chowkhamba Press, Varanasi.

ISBN : 81-218-0083-8

© KRISHNADAS ACADEMY

Post Box. No. 1118
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Varanasi-221001 (India)
Phone : 335020

Also Can be had from :

Chowkhamba Sanskrit Series Office

K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi-221001 (India)
Phone : Off. 333458, Resi. : 334032 & 335020
e. mail : cssoffice@satyam.Net.in

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

वाराणसी–२२१००५

BANARAS HINDU UNIVERSITY

VARANASI–221005

शुभाशंसा

महाकवि त्रिविक्रमभट्ट द्वारा रचित 'नलचम्पू' संस्कृत साहित्य के चम्पूकाव्य का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह चम्पू अपनी भाषा, शैली और भावगाम्भीर्य के कारण एक श्रेष्ठ कृति है। इसी एक रचना ने महाकवि को संस्कृत वाङ्मय में अमर बना दिया है। किन्तु आज जब संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन की प्राचीन शैली और इसके प्रति लोगों में अनुराग का ह्रास हो रहा है, तब यह चम्पू भी उन रसिकों के लिये क्रमशः कठिन से कठिनतर होता जा रहा है। अतः इसकी एक सरल संस्कृत व्याख्या और हिन्दी व्याख्या की अत्यधिक आवश्यकता थी। श्री श्रीनिवास शर्मा ने इस ग्रन्थरत्न को रामनाथ त्रिपाठी द्वारा संग्रथित 'कल्याणी' नामक संस्कृत-व्याख्या के साथ अपनी 'ज्योत्स्ना' नामक हिन्दी व्याख्या से अलङ्कृत करके एक महनीय कार्य किया है। हिन्दी व्याख्या के अन्तर्गत निबद्ध 'विमर्श' कवि के आशय को समझने में नितान्त उपयोगी है। इन सबके लिये श्री शर्मा साधुवादार्ह हैं।

हमें पूर्ण विश्वास है कि 'नलचम्पू' का यह संस्करण संस्कृतकाव्यानुरागी सहृदय अध्यापकों और छात्रों के लिये बहुत ही लाभप्रद होगा।

आशा है, विद्वज्जन इस संस्करण का समादर कर श्रीनिवास जी को प्रोत्साहित करेंगे, जिससे भविष्य में भी ये संस्कृत वाङ्मय की इसी प्रकार अविच्छिन्न रूप में सेवा करते रहें।

दिनाङ्क ३०–८–२००१

—श्रीनारायण मिश्र
संकाय प्रमुख, कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रो० शिवजी उपाध्याय
विभागाध्यक्ष
साहित्य-सङ्गीत-कला विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,
वाराणसी

फोन २०४५५७
३, आचार्य निवास
सम्पूर्णानन्द संस्कृत
विश्वविद्यालय,
वाराणसी

शुभाशंसा

संस्कृत साहित्य में काव्य के तीन भेद किये गये हैं—गद्य, पद्य और गद्य-पद्यमय चम्पू। गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते। चम्पूकाव्य की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वस्तुतः श्रौत ग्रन्थों में भी चम्पूकाव्यों का स्रोत विद्यमान है। उपनिषदों को यदि श्रौत चम्पूकाव्य कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। लौकिक संस्कृत काव्यों में चम्पूकाव्य श्रौतानुप्राणित होकर ही प्रवृत्त हुआ—यह ऐतिहासिक तथ्य है। इस पर मतभेद हो सकता है, किन्तु काव्य का मूल स्रोत वेद है—इसमें कोई वैमत्य नहीं है। पश्यदेवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति इस उक्ति से परमात्मनिःश्वसित वेद अपौरुषेय काव्य है—यह निर्विवाद है; अतः चम्पूकाव्य का भी मूल वेदों में ही, विशेषकर उपनिषदों में सन्निहित है।

उक्त चम्पूकाव्य की परम्परा में महाकवि त्रिविक्रम भट्ट द्वारा प्रणीत 'नलचम्पू' का एक उत्कृष्ट स्थान है। प्रसन्न श्लेषगम्भीर पदावली में सम्पूर्ण काव्य ललित भाषा में निबद्ध है। गद्य और पद्य में सर्वत्र श्लेष की छटा सन्दर्शनीय है। त्रिविक्रम भट्ट की यह विशेषता है कि सम्पूर्ण काव्य श्लेषगर्भ होने पर भी क्लिष्टतर नहीं है। लालित्य और अलङ्कारों तथा रस-गुणादि काव्यतत्त्वों का समुचित सन्निवेश सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है—इसलिए सुधी सहृदय समाज में इस काव्य को पूर्ण समादर प्राप्त हुआ है और अविच्छिन्न अध्ययन-अध्यापन की परम्परा में यह काव्य समाविष्ट है। यद्यपि सम्प्रति शताधिक चम्पूकाव्य उपलब्ध हैं एवं आधुनिक समय में भी अनेकों लिखे गये और लिखे जा रहे हैं, तथापि 'नलचम्पू' काव्य सर्वशीर्षस्थ सम्मान प्राप्त कर सर्वस्पृहणीय बना हुआ है—यही इस काव्य की रचनाशैली की चारुता का निदर्शन है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उक्त नलचम्पू काव्य की संस्कृत-हिन्दी टीका पहले भी की गई है, परन्तु सहजता-सरलता, जो विशेषकर अधीति छात्रों के लिए आवश्यक है, के लिए वह पर्याप्त नहीं है। इसी अभाव को दृष्टिगत कर आचार्य श्रीनिवास शर्मा ने राष्ट्रभाषा में उक्त काव्य का अनुवाद करके इस काव्य को सर्वसाधारण के लिए सुगम और सुलभ बनाया है। श्री शर्मा ने इसके पूर्व भी अनेक गद्य और पद्यकाव्यों का हिन्दी में अनुवाद किया है, जिसकी विद्वत्समाज एवं छात्रसमुदाय में समभाव से प्रशंसा हुई है और पाठ्यक्रमों में उन्हें स्थान भी प्राप्त है। प्रस्तुत चम्पूकाव्य का अनुवाद श्री शर्मा की सूक्ष्मेक्षिका और गूढ़ार्थ-बोध-क्षमता को प्रदर्शित करता है। सामान्यतः जो भावानुवाद या तात्पर्य-प्रदर्शनात्मक अनुवाद किये जाते हैं उनसे ग्रन्थ का पंक्तिबोध नहीं हो पाता। इस प्रकार का अनुवाद श्रीनिवास जी का नहीं है। इन्होंने पूर्णतः अर्थावगम करके पंक्तिशः अनुवाद किया है—जो छात्रों के हित की दृष्टि से और उनके सहज अर्थबोध के लिए अत्यन्त उपयोगी है। मैं श्री श्रीनिवास शर्मा के इस स्तुत्य प्रयास के प्रति अपनी शुभाशंसा व्यक्त करता हूँ और इनकी सफलता के लिए श्री विश्वेश्वर से हार्दिक अभ्यर्थना करता हूँ।

अनन्तचतुर्दशी, २०५८ —शिवजी उपाध्याय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राक्कथन

भारतीय साहित्य का संस्कृत वाङ्मय चिरकाल से विभिन्न विधाओं से पूर्णतया अलंकृत एवं सुसमृद्ध रहा है। इन सबके उपजीव्य रूप में रामायण, श्रीमद्भागवत; महाभारत, पुराण, कथासरित्सागर आदि रहे हैं। इन रचनाओं के प्रणयन-काल से आरम्भ कर अद्यावधि प्रणेता कवियों ने विभिन्न विषयों को अपनी लेखनी का आधार बनाया, जिसके माध्यम से गद्य एवं पद्य दोनों ही अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में निखार प्राप्त कर हमारे सामने आये। अपेक्षाकृत विशेष आह्लादक होने के कारण गद्य-पद्यमय काव्य भी हमारे सामने प्रस्फुटित हुए, जिन्हें लोकव्यवहार में 'चम्पू' के नाम से जाना गया।

संस्कृत वाङ्मय में चम्पूकाव्यों का उद्भव कब से हुआ, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी कह पाना यद्यपि आज भी सम्भव नहीं है, फिर भी हम देखते हैं कि प्रथम काव्यशास्त्राचार्य भामह ही प्रथमतः इसके स्वरूप का स्मरण करते हैं। तत्पश्चात् आचार्य दण्डी तो अपने काव्यादर्श में नाम्ना ही इसका निर्देश करते हैं—

गद्यपद्यमयी काचिच्चम्पूरित्यभिधीयते।

चम्पूसाहित्य के इतिहास में राजाश्रित कवि त्रिविक्रम भट्ट द्वारा सात उच्छ्वासों में निबद्ध 'नलचम्पू' निश्चित रूपेण रचना एवं काव्यसौष्ठव—दोनों ही दृष्टियों से अन्यतम है। इसे ही चम्पू साहित्य का आदि ग्रन्थ भी माना जाता है। इसमें इतिहासप्रसिद्ध राजा नल की प्रख्यात कथा का सरस और सजीव वर्णन है, जिसका उपजीव्य महाभारत के वनपर्व का नलोपाख्यान है। इस चम्पूकाव्य में मधुरतम श्लेषविन्यास तथा अद्भुत भाव-सृष्टि के सर्वत्र दर्शन होते हैं, जो इसे सर्वोत्कृष्टता के शिखर पर स्थापित करते हैं। इस चम्पूकाव्य का सर्वातिशायी वैशिष्ट्य है—त्रिविक्रम भट्ट द्वारा किया गया सभंग श्लेष का प्रयोग। इसमें प्रयुक्त श्लेषों का चमत्कार नितान्त श्लाघनीय है। अपने इन्हीं अलौकिक गुणों के कारण इस काव्य ने सहृदय समाज में अप्रतिम ख्याति अर्जित की है।

यामुनत्रिविक्रम की इस रचना में काव्यकला के साथ-साथ लोकविद्या तथा इतिवृत्त तत्त्वों की भी बहुलता है। सरस, रमणीय एवं प्रसाद गुणसम्पन्न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्लेष की प्रचुरता और शब्दार्थप्रौढ़ता को ध्यान में रखकर ही इस काव्य को विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा स्नातकोत्तर कक्षाओं में पाठ्यग्रन्थ के रूप में स्थान दिया गया है।

वर्तमान में इस ग्रन्थ के दो ही प्रचलित संस्करण उपलब्ध हैं। एक आचार्य परमेश्वरदीन पाण्डेय द्वारा व्याख्यायित और दूसरा आचार्य कैलासपति त्रिपाठी द्वारा हिन्दी व्याख्या के साथ सम्पादित। इसके अतिरिक्त दो टिप्पणियाँ भी उपलब्ध होती हैं--एक चण्डपालकृत 'विषमपदप्रकाश' और दूसरी नन्दकिशोर शर्माकृत 'भावबोधिनी'। ये दोनों ही टिप्पणियाँ ग्रन्थ के दुरूह स्थलों को सहृदय-संवेद्य बनाने में यद्यपि पूर्णतः समर्थ हैं, तथापि कठिनाई यह है कि एक तो ये टिप्पणियाँ सम्पूर्ण ग्रन्थ पर न होकर कतिपय अंशों तक ही सीमित हैं और दूसरे वर्तमान में अनुपलब्ध-प्राय भी हैं।

उपलब्ध दोनों संस्करण भी एकांगी ही हैं। यतः आचार्य त्रिपाठी द्वारा सम्पादित संस्करण में हिन्दी व्याख्या तो पूर्ण विस्तार लिये हुए है, जो आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र से सम्बद्ध लोगों हेतु अतिशय उपयोगी है, लेकिन संस्कृत शिक्षा से सम्बद्ध छात्रों को उससे यथेष्ट लाभ की प्राप्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि संस्कृत व्याख्या के स्थान पर उसमें चण्डपालकृत 'विषमपदप्रकाश' को ही रख दिया गया है। इसी प्रकार द्वितीयतः प्राप्त संस्करण को भी उभयविध छात्रों के लिए पूर्णतः उपादेय नहीं कहा जा सकता; क्योंकि संस्कृत व्याख्या के दर्शन तो उसमें होते हैं लेकिन हिन्दी व्याख्या को एकांगी बना दिया गया है, जबकि नलचम्पू काव्य की यह विशेषता है कि इसके अधिकांश स्थल दो-दो, तीन-तीन अर्थों को अपने में समाहित किये हुए हैं, जिनका ज्ञान होना जिज्ञासुओं के लिए नितान्त आवश्यक है।

अद्यावधि उपलब्ध समस्त संस्करणों की उन किञ्चित् कमियों को ध्यान में रखते हुए ही कृष्णदास अकादमी के अनुरोध पर पं० श्री रामनारायण त्रिपाठी जी ने प्रकृत चम्पूकाव्य को 'कल्याणी' संस्कृत व्याख्या से विभूषित किया, जो गद्यमय थी। यह व्याख्या ग्रन्थ से पूर्णतया साक्षात्कार कराने में अपने-आप में समर्थ थी और ग्रन्थकर्ता द्वारा प्रयुक्त दुरूह शब्दों के कारण अपने अन्तस्थल में छिपाये हुए समस्त भावों को पाठकों के समक्ष स्पष्ट कर देने का सामर्थ्य रखती थी, लेकिन इसके साथ हिन्दी व्याख्या करने का समय आचार्यप्रवर श्री त्रिपाठी जी को नहीं मिल पाया और वे गोलोकवासी हो गये। अब समस्या इसके हिन्दी व्याख्या करने की थी और आवश्यकता थी पं० रामनारायण त्रिपाठीकृत गद्यमयी 'कल्याणी' संस्कृत व्याख्या को पठन-पाठन के वर्तमान परिवेश में ढालने की, जो कि एक दुरूह कार्य था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्तु; कृष्णदास अकादमी के व्यवस्थापकद्वय ने इस दुरूह कार्य को सम्पन्न करने हेतु मुझे प्रोत्साहित किया। कार्य की दुरूहता और अपनी अल्पज्ञता को देखते हुए प्रथमतः तो मैं स्वयं को इसके लिए असमर्थ ही महसूस कर रहा था; लेकिन अन्ततः श्री गुप्तद्वय के सतत् प्रोत्साहन तथा अपने शुभेच्छु मित्रों— सर्वश्री डॉ० शिवप्रसाद शर्मा, आचार्य लोकमणि दाहाल, विजय शर्मा आदि के अनवरत उत्साह-वर्धन से इस ओर प्रवृत्त हुआ; जिसके परिणामस्वरूप 'ज्योत्स्ना' हिन्दी व्याख्या के साथ-साथ 'कल्याणी' संस्कृत व्याख्या से अलंकृत वर्तमान संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए किञ्चित् संकोच के साथ-साथ अन्तस्थल में अपार हर्ष का भी अनुभव कर रहा हूँ।

यद्यपि यह सत्य है कि संस्कृत भाषा में निबद्ध ग्रन्थों की प्रतिपद संस्कृत व्याख्या तो की जा सकती है, लेकिन उसी रूप में हिन्दी व्याख्या करने में विभिन्न कठिनाइयाँ होती हैं, अतः यह स्वाभाविक हो जाता है कि हिन्दी लिखने की प्रचलित शैली से भिन्न शैली का आश्रयण किया जाय। फिर भी यहाँ यह कोशिश की गई है कि हिन्दी व्याख्या के आधार पर मूल पुस्तक को समझने में जिज्ञासुओं को किसी असमञ्जसपूर्ण स्थिति का सामना न करना पड़े और मूल पाठ का अर्थ उन्हें सुगमतापूर्वक स्पष्ट हो जाय। इसके साथ-साथ ग्रन्थ के प्रत्यक्ष-परोक्ष दोनों ही अर्थों को स्पष्ट कर दिया गया है और यत्र-तत्र विमर्श के रूप में विशिष्ट सामग्रियाँ भी दी गई हैं, इस उद्देश्य के साथ कि पाठक को पूर्ण भावावबोध हो सके। यही शैली पं० रामनाथ त्रिपाठीकृत संस्कृत व्याख्या 'कल्याणी' की भी है। अतः आशा है कि प्रकृत संस्करण संस्कृत-हिन्दी उभयविध छात्रों के लिए सर्वतो-भावेन सन्तुष्टि प्रदान करने वाला सिद्ध होगा।

यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि पं० रामनारायण त्रिपाठी जी ने जिज्ञासुओं के लिए हस्तामलकवत् 'कल्याणी' संस्कृत व्याख्या लिखने के साथ-साथ प्रचलित संस्करणों में मूलस्थित अशुद्धियों को भी शुद्ध स्वरूप प्रदान किया है; जिससे कि ग्रन्थकर्ता के भावों से पाठक को तादात्म्य स्थापित करने में कोई कठिनाई का अनुभव न करना पड़े। इस प्रकार यह संस्करण अपने आपमें अनुपम, सर्वजन-संवेद्य एवं सहृदयहृदयग्राही सिद्ध होगा—ऐसा मेरा विश्वास है।

विमर्शसहित 'ज्योत्स्ना' हिन्दी व्याख्या से प्रकृत काव्य को अलंकृत करने में मैंने पं० रामनारायण त्रिपाठीकृत 'कल्याणी' संस्कृत व्याख्या के साथ-साथ आचार्य कैलासपति त्रिपाठीकृत हिन्दी व्याख्या का भी सहयोग लिया है, एतदर्थ मैं उन दोनों ही आचार्यप्रवरों का हृदयतः आभारी हूँ। साथ ही साथ पूर्वोक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने शुभेच्छु मित्रों का भी परम कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने समय-समय पर अपना अमूल्य परामर्श हमें प्रदान किया, जिसके फलस्वरूप प्रकृत संस्करण के मूर्त रूप ग्रहण करने में मैं निमित्त बन सका।

ग्रन्थ के आकार-प्रकार के अनुरूप ही पाठकों को चम्पूकाव्य के इतिहास, ग्रन्थ की पृष्ठभूमि तथा ग्रन्थरचना के समय भारतवर्ष की सामाजिक, राजनीतिक, भौगोलिक एवं धार्मिक स्थितियों आदि से परिचित कराने हेतु उसी स्तर की प्रस्तावना का भी होना आवश्यक था, तभी ग्रन्थ अपने आप में पूर्णता को प्राप्त कर सकता था। अतः उपलब्ध समस्त सामग्रियों से प्रस्तावना भाग को सुसज्जित करने का प्रयास किया गया है। एतदर्थ आचार्यप्रवर डॉ० छत्रिनाथ त्रिपाठी द्वारा शोधप्रबन्ध के रूप में निबद्ध 'चम्पूकाव्य का आलोचनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन' से यथेष्ट सहायता प्राप्त की गई है, अतः उनका मैं कोटिशः आभारी हूँ।

साथ ही साथ कृष्णदास अकादमी के व्यवस्थापक गुप्तद्वय विशेष रूपेण साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने पूर्ण तत्परता से अनवरत रूप में मुझे प्रोत्साहित करते हुए इस ग्रन्थ को प्रकाशित कर अत्यन्त अल्प समय में ही पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का स्तुत्य कार्य सम्पन्न किया।

अन्त में सहृदय पाठकों के समक्ष नलचम्पू के प्रकृत संस्करण को प्रस्तुत करते हुए उनसे मैं यही अपेक्षा करूँगा कि यदि इसमें कहीं कोई त्रुटि रह गई हो तो उसका सुधार करते हुए उससे अवगत कराने की कृपा अवश्य करें, क्योंकि समस्त सावधानियों के बाद भी मानव-स्वभाववश त्रुटियों का रह जाना असम्भव नहीं है, अतएव उनसे मेरी यही प्रार्थना है कि

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

श्रीकृष्णजन्माष्टमी, २०५८

—श्रीनिवास शर्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रस्तावना

साहित्य जगत् में कवियों द्वारा व्यक्त की गई अनुभूतियों का ग्रहण सहृदय जनों द्वारा चक्षुरिन्द्रिय एवं श्रोत्रेन्द्रिय के माध्यम से किया जाता है, फलतः इन्द्रिय-ग्राह्यता के आधार पर काव्य को दो रूपों में विभाजित किया गया है—१.दृश्य एवं २. श्रव्य। शैली के आधार पर श्रव्य काव्य के भी तीन प्रकार दृष्टिगोचर होते हैं—१. पद्यकाव्य, २. गद्यकाव्य और ३. मिश्रकाव्य। इनमें से छन्दःशास्त्र के नियमों द्वारा अनुशासित काव्य पद्यकाव्य के नाम से जाने जाते हैं, जबकि गद्यकाव्य छन्दः-शास्त्रीय अनुशासनों से सर्वथा मुक्त होते हैं। गद्य और पद्य दोनों की मिश्रित शैली में निबद्ध किया गया काव्य मिश्रकाव्य के नाम से जाना जाता है। गद्यकाव्य का अर्थगौरव एवं पद्यकाव्य की रागमयता—इन दोनों को एकत्र समाविष्ट करने की प्रवृत्ति ही मिश्रकाव्य की जन्मदात्री है। इस मिश्र शैली में ही यद्यपि रूपक, उपरूपक आदि का भी प्रणयन किया जाता है, फिर भी चक्षुरिन्द्रिय से ग्राह्य होने के कारण वे दृश्यकाव्य के ही अन्तर्गत आते हैं, न कि श्रव्यकाव्य के अन्तर्गत। इस श्रव्यकाव्य के अन्तर्गत मिश्रकाव्य का प्रबन्धात्मक स्वरूप ही साहित्य जगत् में चम्पू-काव्य के नाम से अभिहित किया जाता है।

'चम्पू' शब्द की व्युत्पत्ति चुरादिगणीय गत्यर्थक 'चपि' धातु से 'उ' प्रत्यय लगा कर 'चम्पयतीति चम्पूः' की जाती है। लेकिन यह व्युत्पत्ति 'चम्पू' शब्द के स्वरूपमात्र को ही उपस्थापित करने वाली सिद्ध होती है। चम्पू शब्द का व्यवहार जिस सरस, रमणीय रचना के लिए किया जाता है वहाँ तक इस व्युत्पत्ति के द्वारा आसानी से नहीं पहुँचा जा सकता। इसीलिए हरिदास भट्टाचार्य ने चम्पू शब्द की व्याख्या करते हुए कहा है—चमत्कृत्य पुनाति सहृदयान् विस्मयीकृत्य प्रसादयतीति चम्पूः। इस व्याख्या से स्पष्ट होता है कि चम्पूकाव्य की सफलता के लिए उसमें सहृदय-हृदय को चमत्कृत, विस्मित, पवित्र और प्रसन्न करने की आश्चर्यजनक विशेषताओं का होना नितान्त आवश्यक होता है।

संस्कृत वाङ्मय में 'चम्पू' शब्द को पारिभाषिक शब्द की मान्यता प्रदान कर सर्वप्रथम उसे पारिभाषित करने का श्रेय आचार्य दण्डी को ही जाता है। उन्होंने अपने काव्यादर्श में कहा है कि—

मिश्राणि नाटकादीनि तेषामन्यत्र विस्तरः।
गद्यपद्यमयी काचिच्चम्पूरित्यभिधीयते॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आचार्य दण्डी द्वारा 'चम्पू' शब्द को प्रदान की गई इस सामान्य परिभाषा को देखने से यही प्रतीत होता है कि उनके मान्य समय (६००–७०० ई०) तक चम्पूकाव्यों का अस्तित्व तो संस्कृत वाङ्मय में स्थापित हो चुका था, लेकिन इस ओर पूर्ण रूप से उन जैसे समीक्षकों द्वारा दृष्टिपात नहीं किया गया था। इसका एकमात्र कारण यही हो सकता है कि उस समय तक चम्पूकाव्यों का निर्माण गति नहीं प्राप्त कर सका था। तत्पश्चात् आचार्य हेमचन्द्र और वाग्भट दोनों ने अपने-अपने काव्यानुशासननामक लक्षणग्रन्थ में गद्य-पद्यमिश्रण के अतिरिक्त साङ्क और सोच्छ्वास होना भी चम्पू के लिए आवश्यक घोषित किया—

गद्यपद्यमयी साङ्का सोच्छ्वासा चम्पूः।

चम्पूरामायण के प्रणेता भोज ने चम्पूकाव्य के भीतर वाद्य एवं संगीत से समन्वित माधुर्यसदृश गद्य-पद्य के मिश्रित आनन्द की तो चर्चा की, लेकिन 'चम्पू' शब्द का विवेचन और विश्लेषण कर कोई विशेष लक्षण नहीं प्रस्तुत किया। साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने भी इस सम्बन्ध में आचार्य दण्डी का ही अनुसरण किया और बाद में विश्वनाथ का ही अनुकरण मन्दारमन्द ने भी किया।

इस सन्दर्भ में डॉ सूर्यकान्त द्वारा सम्पादित नृसिंहचम्पू की भूमिका में किसी अज्ञात विद्वान् द्वारा प्रस्तुत की गई 'चम्पू' शब्द की एक परिभाषा विशेषरूपेण स्पृहणीय है, जो इस प्रकार है —

गद्यपद्यमयी साङ्का सोच्छ्वासा कविगुम्फिता।
उक्तिप्रत्युक्तिविष्कम्भशून्या चम्पूरुदाहृता॥

इस प्रकार 'चम्पू' के सन्दर्भ में उपलब्ध विभिन्न आचार्यों की परिभाषाओं के अध्ययन के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कोई एक ऐसी सर्वमान्य परिभाषा, जो चम्पू के स्वरूप को पूर्ण रूप से प्रतिपादित कर सके, साहित्य जगत् में अद्यावधि प्रस्तुत नहीं की जा सकी है। न तो किसी भी आचार्य ने इस ओर गम्भीरता से ध्यान दिया और न ही इसका विश्लेषण किया। गद्य-पद्यमय होने के अतिरिक्त सामान्यतया ऐसी कोई भी अन्य विशेषता दृष्टिगोचर नहीं होती, जो उपलब्ध सभी चम्पूकाव्यों में समान रूप से विद्यमान हो। फिर भी विभिन्न आचार्यों द्वारा प्रदत्त लक्षणों के आधार पर चम्पूकाव्यों की कतिपय विशेषताओं का निर्धारण किया जा सकता है; जैसे कि १. चम्पूकाव्य गद्य-पद्यमय होता है, २. साङ्क होता है, ३. विभिन्न उच्छ्वासों में विभाजित होता है, ४. उक्ति-प्रत्युक्ति से रहित होता है और ५. विष्कम्भक से भी रहित होता है।

उपर्युक्त लक्षण प्रकृत ग्रन्थ नलचम्पू में तो घटित होते हैं, लेकिन ऐसा नहीं है कि ये लक्षण समस्त चम्पूकाव्यों में भी घटित होते हों। तथ्य यह है कि चम्पू-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काव्यों के प्रणेता प्रारम्भ से ही अपनी रचनाओं के निर्माण-क्रम में पूर्णतः स्वच्छन्द मनोवृत्ति के रहे हैं। काव्य-प्रणयन के सम्बन्ध में उन्होंने किसी भी शास्त्रीय प्रतिबन्ध को स्वीकार नहीं किया है। इसीलिए चम्पूकाव्यों के गुम्फन में इतनी विविधतायें दृष्टिगोचर होती हैं कि किसी एक परिभाषा के द्वारा उन सबको और उनकी विशेषताओं को पारिभाषित करना सम्भव ही नहीं है। ऐसी स्थिति में भी डॉ० छविनाथ त्रिपाठी ने अपने शोधप्रबन्धात्मक ग्रन्थ 'चम्पूकाव्य का आलोचनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन' में एक अभिनव परिभाषा प्रस्तुत करने का स्तुत्य प्रयास किया है, जो चम्पूकाव्यों के स्वरूप को सर्वाधिक स्पर्श करता हुआ दिखाई देता है—

गद्यपद्यमयं श्रव्यं सबन्धं बहुवर्णितम्।
सालङ्कृतं रसैः सिक्तं चम्पूकाव्यमुदाहृतम्॥

उपर्युक्त परिभाषा चम्पूकाव्य का स्वरूप स्पष्ट करने में अधिक सशक्त सिद्ध होती है। इसमें प्रयुक्त श्रव्यम् पद से दृश्य रूपक उपरूपक आदि नाटक चम्पू की श्रेणी से पृथक् हो जाते हैं, सबन्धम् पद के उपादान से मिश्र शैली में निबद्ध मुक्तक रचनायें पृथक् हो जाती हैं, सालङ्कृतम् पद गद्य-पद्यमिश्रित कथा-कहानियों और आख्यायिकाओं को चम्पूकाव्य से पृथक् कर देता है एवं बहुवर्णितम् पद चम्पूकाव्यगत वर्णन-विस्तार की प्रवृत्ति को इंगित करता है। शेष रससिक्तता तो उदात्त काव्य की प्रयोजिका होती ही है। इस प्रकार हम पाते हैं कि चम्पूकाव्य की समस्त विशेषतायें उपर्युक्त परिभाषा में समाहित हो जाती हैं, फलतः चम्पूकाव्य की परिभाषा आचार्य कैलासपति त्रिपाठी के शब्दों में निम्न रूप में प्रस्तुत की जा सकती है—

"यह गद्य-पद्यमिश्रित होता है, श्रव्य होता है, प्रबन्धकाव्य होता है, वर्णन-प्रधान होता है एवं अलंकारबहुल तथा सरस होता है।"

चम्पूकाव्यों का उद्भव एवं विकास

गद्य-पद्यमिश्रित शैली में श्रव्यकाव्य-रचना का आरम्भ वैदिक काल में ही हो चुका था। कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तरीय, मैत्रायणी तथा कठ संहिताओं में यह शैली स्पष्टतया प्रयुक्त की गई दिखलाई पड़ती है। ब्राह्मणग्रन्थों के उपाख्यानों में भी इस शैली का स्पष्ट स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। ऐतरेय ब्राह्मण (अध्याय ३३) का हरिश्चन्द्रोपाख्यान इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जो परवर्ती चम्पूकाव्य की शैली में ही निबद्ध किया गया है—

हरिश्चन्द्रो ह वैधस, ऐक्ष्वाको राजाऽपुत्र आसीत्। तस्य ह शतं जाया बभूवुः। तासु पुत्रं न लेभे। तस्य ह पर्वतनारदौ गृह ऊषतुः। स ह नारदं पप्रच्छ इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यं न्विमं पुत्रमिच्छन्ति ये विजानन्ति ये च न ।
किंस्वित्पुत्रेण विन्दते तन्म आचक्ष्व नारद ॥

इस उपाख्यान को विविध प्रकार की कथाओं एवं चम्पूकाव्यों में प्रयुक्त की गई मिश्रित शैली का प्राचीनतम रूप ही कहा जा सकता है। यह उपाख्यान मुक्तक गद्य-पद्यों का संकलन-मात्र न होकर उनके प्रबन्धाश्रित स्वरूप को ही अभिव्यक्त करता है। इस उपाख्यान में जिन विशेषताओं को इंगित किया गया है, वे समस्त विशेषतायें चम्पूकाव्यों में उपलब्ध होती हैं। यद्यपि इनकी भाषा अलंकारों के बोझ से आक्रान्त नहीं है, फिर भी कई स्थानों पर स्वाभाविक रूप से अलंकार प्रयुक्त हुए दिखाई अवश्य देते हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों के समान ही कठ, प्रश्न, मुण्डक आदि उपनिषदों में भी यह शैली दृष्टिगोचर होती है। कठोपनिषद् अपने अन्तराल में कथावस्तु को समाहित किया हुआ वर्णनप्रधान उपनिषद् है। इसके नचिकेतोपाख्यान का आरम्भ इसी शैली में किया गया दिखाई देता है—

ॐ उशन् ह वै वाजश्रवसः सर्ववेदसं ददौ। तस्य ह नचिकेता नाम पुत्र आस। तं ह कुमारं सन्तं दक्षिणासु नीयमानासु श्रद्धाऽऽविवेश सोऽमन्यत।—१।१।१-२॥

पीतोदका जग्धतृणा दुग्धदोहाः निरिन्द्रियाः।
अनन्दा नाम ते लोकास्तान् स गच्छति ता ददत्॥—१।१।३॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रबन्धात्मक मिश्र शैली में ही इस उपाख्यान का प्रारम्भ हुआ है, जो कि कथावतार या कथा की भूमिका के रूप में है। मुख्य कथा का आरम्भ एक पद्य द्वारा नचिकेता के अन्तर्द्वन्द्व को प्रदर्शित करते हुए किया गया है—

बहूनामेमि प्रथमो बहूनामेमि मध्यमः।
किंस्विद्यमस्य कर्तव्यं यन्मयाद्य करिष्यति॥

इस प्रकार हम पाते हैं कि वैदिक काल से आरम्भ होकर ब्राह्मणग्रन्थों, उपनिषदों आदि में प्रयुक्त होती हुई मिश्र शैली की परम्परा पौराणिक जीवन्धर आदि चम्पूकाव्यों तक अविच्छिन्न रूप से प्रयुक्त होती चली आई है।

तत्पश्चात् वेदांग काल में ग्रन्थों की रचनायें सूत्रशैली में की जाने लगीं। ये सूत्र यद्यपि लिखे तो गद्य में ही गये थे, किन्तु संक्षिप्तता की उस सीमा को ये प्राप्त कर गये थे, जहाँ कवित्व की कल्पना ही असम्भव थी। वैदिक युग के पश्चात् लौकिक साहित्य का उदय होने के साथ ही साथ गद्य का भी ह्रास होना आरम्भ हो गया। वैदिक गद्य का प्रसाद और सौन्दर्य लौकिक गद्य में तिरोहित हो गया और गद्य का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्र व्याकरण तथा दर्शन तक ही सीमित रह गया; साथ ही साथ वह अत्यन्त दुरूह, प्रसाद गुणरहित और नीरस भी हो गया। लेकिन सूत्रकाल के पश्चात् वही गद्य पुनः अपना कलेवर बदलकर प्रसृत रूप में प्रयुक्त होने लगा। इसका स्पष्ट उदाहरण पतञ्जलिकृत व्याकरणमहाभाष्य का गद्य है। इसके साथ ही गद्य में पुनः रमणीयता का समावेश भी हो गया। इस समय तक फिर से मिश्र शैली में रचनाओं का प्रचलन आरम्भ हो गया। इसका प्रमाण हमें पतञ्जलि द्वारा वर्तमान में अनुपलब्ध आख्यायिका-ग्रन्थों वासवदत्ता, सुमनोत्तरा तथा भैमरथी को निर्दिष्ट करने से प्राप्त होता है। फिर भी इस काल की साहित्यिक एवं काव्यात्मक कृतियों के अनुपलब्ध होने के कारण मिश्र शैली एवं गद्य तथा पद्य का स्वरूप इस काल में क्या था ? इस विषय में स्पष्टतया कुछ भी कहना सम्भव नहीं है।

सूत्रकाल एवं सूत्रोत्तर व्याख्याकाल के पश्चात् जातक ग्रन्थों में मिश्र शैली की रचनायें अत्यन्त मनोहर रूप में पर्याप्त संख्या में पाई जाती हैं। इस समय तक की रचनाओं में हम पाते हैं कि उनमें प्रसाद गुण की ही विशेषता रही, कृत्रिमता का नामोनिशान तक नहीं था और वस्तुबोधन ही वक्ता का मुख्य उद्देश्य था।

इनमें से प्रथम शताब्दी तक प्रणीत जातककथायें उस युग के मिश्र शैली की एकमात्र प्रबन्धात्मक स्वरूप को ही प्रस्तुत करती हैं। इन जातककथाओं का आंशिक प्रभाव चम्पूकाव्यों पर एवं पूर्ण प्रभाव पञ्चतन्त्र, हितोपदेश आदि नीतिकथाओं पर स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है। इस युग में पद्यों के विविध रूपों के साथ-साथ प्रयोग से ही चम्पूकाव्यों का इनसे साम्य भी परिलक्षित होता है। प्रथम या द्वितीय शताब्दी में रचित अवदानशतक एवं आर्यसूरप्रणीत जातकमाला की शैली भी मिश्र शैली ही है। वर्ण्य विषय की दृष्टि से ये जातककथायें भले ही प्राचीन लगें, लेकिन संस्कृत में निबद्ध मिश्र शैली की ये रचनायें अपने वर्णन का मुख्य आधार गद्य और पद्य को समान रूप से बनाकर दोनों के प्रौढ़ एवं कवित्वपूर्ण रूप को दर्शाते हुए भविष्य में निबद्ध की जाने वाली मिश्र शैली की कृतियों के लिए पथप्रदर्शिका ही सिद्ध होती हैं।

तृतीय शताब्दी आते-आते चम्पूकाव्येतर मिश्र शैली के तीन पृथक् रूप पूर्णरूपेण स्पष्ट हो चुके थे, वे थे —१. नीति और उपदेशपरक कथात्मक रूप, २. पौराणिक रूप और ३ दृश्यकाव्यात्मक रूप। इनके विकास की स्वतन्त्र दिशायें भी निर्धारित हो चुकी थीं और इन तीनों का पारस्परिक अन्तर भी बहुत कम रह गया था। फिर भी इनके गद्यभाग में न तो समासों की गाढ़बद्धता थी, न ही अलंकारों का प्रचुर प्रयोग। इनका पद्य भाग भी सामान्य तौर पर सूक्तिपरक और उपदेशात्मक ही था। उपनिषदें, जातककथायें और पञ्चतन्त्र—ये तीनों ही तीन अलग-अलग काल की रचनायें होने पर भी प्रयुक्त वर्णन-शैली, गद्य-पद्य के स्वरूप, पद्य के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रयोग की स्थितियाँ आदि की दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न नहीं थीं। इतना ही नहीं; बल्कि दण्डी, सुबन्धु एवं बाणभट्ट के गद्यकाव्यों तथा सोमदेव, हरिचन्द्र, भोज आदि द्वारा चम्पूकाव्यों के निर्माण के बाद भी इस प्रकार की कथाओं ने अपने प्राचीन कलेवर के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं किया था।

लगभग इसी समय के आस-पास मिश्र शैली की उपर्युक्त तीनों विधाओं से सर्वथा स्वतन्त्र एक कृत्रिम स्वरूप विकसित हुआ; जिसका स्पष्ट दर्शन हरिषेणकृत 'समुद्रगुप्तप्रशस्ति' में हमें प्राप्त होता है। इससे स्पष्ट है कि चतुर्थ शताब्दी के आते-आते चम्पूकाव्य-निर्माण का बीज अंकुरित हो चुका था। न केवल शैली, अपितु वर्णन-विस्तार की दृष्टि से भी समुद्रगुप्तप्रशस्ति चम्पूकाव्यशैली का प्रथम एवं भव्यतम उदाहरण प्रस्तुत करती है। द्वितीय शताब्दी से षष्ठ शताब्दी तक गद्य-साहित्य को गाढ़बद्ध एवं अलंकृत बनाने की प्रवृत्ति उत्तरोत्तर विकसित होती गई, जिसकी झलक उस समय के प्राप्त शिलालेखों में भी दिखाई देती है।

इस प्रकार काव्यशास्त्रीय इतिहास पर समग्र रूप में दृष्टिपात करने मे हमें ज्ञात होता है कि ईशा की दशवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के पूर्व तक अर्थात् नलचम्पू के प्रणयन से पूर्व तक कालिदास, अश्वघोष, भारवि, भट्टि, कुमारदास, माघ और रत्नाकर जैसे कवि अपने-अपने विश्वविश्रुत महाकाव्यों की रचनायें कर चुके थे; कालिदास एवं अश्वघोष सहित हर्ष, विशाखदत्त आदि के रूपक भी सामने आ चुकेथे; आचार्य दण्डी, बाण और सुबन्धु की प्रौढ़ लेखनी अपना चमत्कार प्रदर्शित कर चुकी थी; दण्डी, भामह, उद्भट, वामन, आनन्दवर्धन एवं राजशेखर जैसे काव्यमीमांसक काव्य के विविध अंगों का विश्लेषण कर चुके थे; फिर भी चम्पूकाव्य की शैली पत्थरों की गोद का परित्याग कर ग्रन्थों में अपनी आकारगुरुता अभी तक प्राप्त नहीं कर पाई थी। विविध दानपत्रों और शिलालेखों आदि में भी मिश्र शैली का मुक्तक रूप ही अधिक स्फुटित होता दिखाई दे रहा था। इन्हीं सब स्थितियों के कारण अन्य काव्यविधाओं की अपेक्षा ज्यादा सहृदयश्लाघ्य होते हुए भी चम्पूकाव्य समीक्षकों की दृष्टि से ओझल ही बने रहे और किसी भी समीक्षक ने उन पर ध्यान देना आवश्यक नहीं समझा।

पश्चात् सातवीं शताब्दी आते-आते चम्पूकाव्य अपना अस्तित्व ग्रहण करने लगा और इस शताब्दी के चन्द्रगिरि के शिलालेख ने चम्पूकाव्य के उस स्वरूप को उपस्थापित किया, जिसे बाद में जैन चम्पूकाव्यों—जीवन्धर, पुरुदेव आदि द्वारा अंगीकार किया गया। प्रथम शताब्दी की हरिषेणकृत समुद्रगुप्तप्रशस्ति के पश्चात् चम्पूकाव्य के स्वरूप को अभिव्यक्त करने वाला यह लेख वर्णन के विस्तार, घटना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का समावेश, गुरुपरम्परा का वर्णन, अलंकृत पदावली एवं सुमधुर ध्वन्यात्मक समस्त शब्दावली का समावेश आदि के कारण अपने-आप में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

चम्पूकाव्यों का उत्कर्ष

हरिषेणकृत 'समुद्रगुप्तप्रशस्ति' से प्रारम्भ होकर दशम शताब्दी तक प्राप्त शिलालेखों की सर्वातिशायी विशेषता उनकी गद्यबहुलता रही। मिश्र शैली में निबद्ध इन लेखों में यद्यपि आरम्भ और अन्त में पद्यों की प्रचुरता थी, लेकिन मध्यभाग में बृहत्काय गद्यभाग ही गुम्फित दिखाई देते हैं। यशस्तिलक अथवा नलचम्पू में भी पद्यभाग की अपेक्षा गद्यभाग का ही प्राधान्य दृष्टिगोचर होता है; लेकिन दशम शताब्दी के पश्चात् ये रचनायें क्रमशः पद्यबहुल होती चली गईं और दिनानुदिन अपने उत्कर्ष की ओर अग्रसर होने लगीं।

यद्यपि दशम शताब्दी के आरम्भ में ही चम्पूकाव्य अपने पाषाणरूपी कलेवर का परित्याग कर साहित्य के ठोस धरातल पर ग्रन्थ का आकार ग्रहण करते हुए देदीप्यमान होने लगा था, दशम शताब्दी के पूर्वार्द्ध में महाकवि त्रिविक्रमभट्टप्रणीत 'नलचम्पू' काव्य को सर्वप्रथम निबद्ध किये जाने वाले महत्त्वपूर्ण चम्पूकाव्य होने का सौभाग्य प्राप्त हो गया था और इसके साथ ही बहुतायत में इनका निर्माण भी प्रारम्भ हो गया था, फिर भी दशवीं से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य के छः सौ वर्षों में इनके निर्माण की गति अत्यन्द मन्द ही बनी रही और इस लम्बे समय का प्रतिनिधित्व जीवन्धरचम्पू (सम्भवतः ९०० ई०), नलचम्पू (९१५ ई०), मदालसाचम्पू (९१५ ई०), यशस्तिलकचम्पू (९५९ ई०), रामायणचम्पू, (१०१८ ई०), भोजप्रबन्ध (११वीं शती), उदयसुन्दरीकथा (१०६० ई०), भागवतचम्पू, अभिनवभारतचम्पू एवं राजशेखरचरित (सभी ११ वीं शती), पुरुदेवचम्पू (१३वीं शती), अनन्तभट्टकृत भारतचम्पू एवं भागवतचम्पू (१५वीं शती) आदि सीमित चम्पूकाव्य ही करते दिखाई देते हैं। इनमें भी अधिकांश का रचनास्थल दक्षिण भारत ही रहा है।

तत्पश्चात् पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर ८वीं शताब्दी के मध्य तक में चम्पूकाव्यों की संख्या में प्रचुर वृद्धि हुई। इसी अवधि में केरली तथा तेलगू भाषाओं में भी बहुतायत में चम्पूकाव्यों का प्रणयन किया गया। संस्कृत भाषा में निबद्ध अधिकांश चम्पूकाव्य भी इस अवधि में दक्षिण भारत में ही लिखे गये। यही कारण है कि दक्षिण भारत की तत्कालीन साहित्यिक कृतियों की प्रवृत्ति ही परवर्ती चम्पूकाव्यों के प्रणयन को आक्रान्त किये रही। अद्यावधि प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में उपलब्ध चम्पूकाव्यों की गणना करते हुए डॉ० छविनाथ त्रिपाठी ने अपने शोध प्रबन्धात्मक ग्रन्थ 'चम्पूकाव्य का आलोचनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन' में इनकी संख्या दो सौ पैंतालीस बतलाई है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चम्पूकाव्यों का मूल स्रोत

चम्पूकाव्यों के मूल स्रोत के रूप में रामायण, महाभारत, श्रीमद्भावत, पुराण, कथासरित्सागर आदि दिखाई देते हैं। इनमें भी रामायण और महाभारत पर आधारित चम्पूकाव्यों में से कतिपय अपने उपजीव्य की समग्र कथा का स्पर्श करते हैं तो कतिपय विशेष उपाख्यानों पर आधारित हैं और कुछ ने तो पात्रविशेष के चरित्र को ही अपना उपजीव्य बनाया है। इनके अतिरिक्त कतिपय चम्पूकाव्य दार्शनिक दृष्टिकोण पर आधारित हैं तो कुछ किंवदन्तियों अथवा काल्पनिक कथाओं पर निर्भर हैं। इस प्रकार समग्र रूप में हम पाते हैं कि चम्पूकाव्यों के उपजीव्य का क्षेत्र अत्यन्त विस्तार लिए हुए है। वर्ण्य वस्तु को आधार बनाकर प्रकाशित-अप्रकाशित समस्त चम्पूकाव्यों का वर्गीकरण निम्न रूप में किया जा सकता है :—

(क) रामायण पर आधारित, (ख) महाभारत पर आधारित, (ग) पुराणों पर आधारित, (घ) जैन ग्रन्थों पर आधारित, (ङ) प्रख्यात पुरुषों के जीवनवृत्त पर आधारित, (च) यात्राप्रबन्धों पर आधारित, (छ) देवताओं के चरित्र तथा महोत्सवों पर आधारित, (ज) दार्शनिक दृष्टिकोण पर आधारित (झ) किंवदन्तियों अथवा काल्पनिक कथाओं पर आधारित।

उपर्युक्त वर्गों के अन्तर्गत आनेवाले विभिन्न चम्पूकाव्यों का विशद् विवरण डॉ० छविनाथ त्रिपाठी के अनुसार निम्नवत् है—

(क) रामायण पर आधारित चम्पूकाव्य

१. रामायणचम्पू (३)
४. अमोघराघवचम्पू
५. काकुत्स्थविजय
६. रामचन्द्रचम्पू (२)
८. रामकथासुधोदय
९. रामचर्यामृत
१०. रामाभ्युदय
११. रामचम्पू
१२. अभिनवरामायण (२)
१४. राघवचम्पू
१५. उत्तररामचरित
१६. उत्तरचम्पू (७)
२३. सीताविजय
२४. सीताचम्पू
२५. रामायण युद्धकाण्ड (४)
३०. मारुतिविजय
३१. आञ्जनेयविजय
३२. हनुमदापातन
३३. चूडामणिचम्पू।

इनमें क्रमांक ३० से ३३ तक के चम्पूकाव्य हनुमच्चरित्र पर आधारित हैं।

(ख) महाभारत पर आधारित चम्पूकाव्य

१. भारतचम्पू (२)
३. भारतचम्पूतिलक
४ भारतचरितचम्पू
५. अभिनवभारतचम्पू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६. राजसूयप्रबन्ध
७. पाञ्चालीस्वयंवर
८. सुभद्राहरण
९. नलायणीचरित
१०. कौन्तेयाष्टक
११. दूतवाक्य
१२. किरातचम्पू
१३. द्रौपदीपरिणय
१४. शङ्करानन्दचम्पू
१५. कर्णचम्पू
१६. वकवध
१७. पञ्चेन्द्रोपाख्यान
१८. अश्वमेधचम्पू
१९. किरातार्जुनीयचम्पू
२०. नलचम्पू
२१. वसुचरित्रचम्पू
२२. मत्स्यावतारप्रबन्ध
२३. शिवविलास
२४. दमयन्तीपरिणय
२५. सत्यसन्धचरित
२६. हरिश्चन्द्रचरित
२७. कुवलयाश्वविलास

इनमें क्रमांक २० से २७ तक के चम्पूकाव्य विभिन्न उपाख्यानों पर आधारित हैं।

(ग) पुराणों पर आधारित चम्पूकाव्य

१. भागवतचम्पू (४)
५. रुक्मिणीपरिणय(२)
७. आनन्दवृन्दावन (२)
९. गोपालचम्पू (४)
१३. पञ्चकल्याणचम्पू
१४. मन्दारमन्दचम्पू
१५. माधवचम्पू
१६. नृगमोक्षचम्पू
१७. आनन्दकन्दचम्पू
१८. भैष्मीपरिणय
१९ मद्रकन्यापरिणय
२०. कालिन्दीमुकुन्दचम्पू
२१. सत्राजितीपरिणय
२१. यादवशेखरचम्पू
२३. कृष्णचम्पू (२)
२५. बालभागवतचम्पू
२६. आनन्ददामोदर
२७. वृन्दावनविनोद
२८. वासुदेवानन्दिनी
२९. गजेन्द्रचम्पू
३०. प्रणयीमाधव
३१. गंगावतरण
३२. भागीरथीचम्पू
३३. गंगाविलास
३४. गंगागुणादर्श
३५. पारिजातहरण
३६. बाणासुरविजय
३७. उषापरिणय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३८. अनिरुद्धचम्पू
३९. सुदर्शनचम्पू
४०. शंवरासुरविजय
४१. यादवचम्पू
४२. कल्याणवल्लीकल्याण
४३. कल्याणचम्पू
४४. कुमारभार्गवीय
४५. कुमाराभ्युदय
४६. कुमारविजय
४७. कुमारसम्भव (३)
५०. त्रिपुरविजय
५१. दक्षयाग
५२. पार्वतीपरिणय
५३. वल्लीपरिणय
५४. वीरभद्रविजय
५५. गौरीपरिणय
५६. पार्वतीस्वयंवर
५७. शिवचरित्रचम्पू
५८. नीलकण्ठविजय
५९. मीनाक्षीपरिणय
६०. मीनाक्षीकल्याणचम्पू
६१. चिन्तामणिविजय
६२. जगदम्बाचम्पू
६३. नृसिंहचम्पू
६४. पुरुषोत्तमचम्पू
६५. स्वाहासुधाकरचम्पू
६६. मदालसाचम्पू (२)
६८. शिवचरितचम्पू
६९. दत्तात्रेयचम्पू
७०. लक्ष्मीश्वरचम्पू (२)
७२. हयवदनचम्पू

इनमें से क्रमांक १ से ३४ तक भागवत पर, ३५ से ४१ तक हरिवंशपुराण पर, ४२ से ६० तक शिवपुराण पर, ६१, ६२ देवीभागवत पर, ६३ नृसिंहपुराण पर, ६४, ६५ ब्रह्मपुराण पर, ६६ से ६९ तक मार्कण्डेयपुराण पर, ७०-७१ स्कन्दपुराण पर और ७२ हयग्रीवतन्त्र पर आधारित है।

(घ) जैनग्रन्थों पर आधारित चम्पूकाव्य

१. जीवन्धरचम्पू (४)
५. पुरुदेवचम्पू
६. भरतेश्वराभ्युदय
७. यशस्तिलकचम्पू
८. समरादित्यकथा

(ङ) प्रख्यात पुरुषों के जीवनवृत्त पर आधारित चम्पूकाव्य

१. आचार्यदिग्विजय
२. जगद्गुरुदिग्विजय
३. शङ्करचम्पू
४. शङ्कराचार्यचम्पू
५. शङ्करमन्दारसौरभ
६. नाथमुनिविजय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७. रामानुजचम्पू
८. वेदान्ताचार्यविजय
९. यतिराजविजय
१०. आनन्दकन्दचम्पू
११. गोदापरिणय
१२. जैनाचार्यविजय
१३. आनन्दरङ्गविजय
१४. कृष्णविजय
१५ कृष्णराजाभ्युदय
१६ कृष्णप्रभावोदय
१७ कृष्णराजकालोदय
१८. कृष्णराजेन्द्रयशोविलास
१९. गुणेश्वरचरित
२०. चोलचम्पू
२१. प्रतापचम्पू
२२. भारतचम्पू
२३. भोजप्रबन्ध
२४. भोसलवंशावली
२५. महीसूराभिवृद्धि
२५. महीसुरदेशाभ्युदय
२७. मानभूपालचरित
२८. मृगयाचम्पू
२९. रघुनाथविजय
३०. राजशेखरचरित
३१. वरदाम्बिकापरिणय
३२. विशाखकीर्तिविलास
३३. विशाखातुलाप्रबन्ध
३४. विशाखासेतुयात्रावर्णन
३५. वीरचम्पू
३६. वीरभद्रदेवचम्पू
३७. श्रीकृष्णरामाभ्युदय
३८. श्रीकृष्णनृपोदयप्रबन्ध
३९. शङ्करचेतोविलास
४०. शालिवाहनकथा
४१. शाहराजसभासरोवर्णिनी
४२. धर्मविजय
४३. सुमतीन्द्रजयघोषणा
४४. किशोरचरित
४५. चन्द्रशेखरचरित
४६. रथशेखरचरित
४७. श्रीकृष्णचम्पू

(च) यात्राप्रबन्धों पर आधारित चम्पूकाव्य

१. कविमनोरञ्जकचम्पू
२. केरलाभरण
३. चित्रचम्पू
४. विबुधानन्दप्रबन्ध
५. यात्राप्रबन्धचम्पू
६. विश्वगुणादर्शचम्पू
७ वैकुण्ठविजयचम्पू
८. श्रीनिवासमुनियात्राविलास
९. श्रुतकीर्तिविलासचम्पू

(छ) देवताओं के चरित्र तथा महोत्सवों पर आधारित चम्पूकाव्य

१ अश्वत्थक्षेत्रयाग
२. इन्दिराभ्युदय
३. कृष्णविलासचम्पू
४. गौरीमायूरमाहात्म्य
५. जप्येशोत्सवचम्पू
६. दिव्यचापविजय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७. पद्मनाभचरित
८. पद्मावतीपरिणय
९. बाणायुधचम्पू
१०. भद्राचलचम्पू
११. भिल्लकन्यापरिणय
१२. मार्गसहायचम्पू
१३. यदुगिरिभूषण
१४. लक्ष्मणचम्पू
१५. व्याघ्रालयेशाष्टभीमहोत्सव
१६. वज्रमुक्तिविलास
१७. वरदाभ्युदय
१८. विरूपाक्षमहोत्सव
१९. वेङ्कटेशचम्पू
२०. श्रीनिवासचम्पू
२१. श्रीनिवासविलास
२२. स्यानन्दूरवर्णन
२३. सम्पत्कुमारविलास

(ज) दार्शनिक दृष्टिकोण पर आधारित चम्पूकाव्य

१. तत्त्वगुणादर्श
२. विद्वन्मोदतरङ्गिणी

(झ) किंवदन्तियों अथवा काल्पनिक कथाओं पर आधारित चम्पूकाव्य

१. उदयसुन्दरीकथा
२. कोटिविरह
३. यमुनावर्णन
४. विक्रमसेनचम्पू
५ सारावतीजलपातवर्णन ।

उपर्युक्त समस्त चम्पूकाव्यों का पूर्ण विवेचन तत्तद् ग्रन्थों का नामनिर्देश करते हुए डॉ० छविनाथ त्रिपाठी ने अपने शोधप्रबन्धात्मक ग्रन्थ में किया है, जो चम्पूकाव्यों के सम्बन्ध में विस्तृत ज्ञान की जिज्ञासा रखने वाले सहृदयों के लिए परमोपयोगी है ।

महाकवि त्रिविक्रम भट्ट : जीवनवृत्त

अद्यावधि उपलब्ध प्रकाशित या अप्रकाशित चम्पूकाव्यों में नलचम्पू अथवा दमयन्तीकथा सर्वप्रथम एवं साहित्यिक सौष्ठव की दृष्टि से अन्यतम कृति है । इसके प्रणेता महाकवि त्रिविक्रम भट्ट का समय और स्थान भी संस्कृत वाङ्मय के अन्य ख्यातनाम कवियों के समान यद्यपि अनुमान के आधार पर ही ज्ञेय है, फिर भी नलचम्पू में बहुत-से ऐसे संकेत प्राप्त होते हैं, जिनके आधार पर त्रिविक्रम भट्ट के समय, स्थानसहित उनके जीवन-परिचय के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

महाकवि त्रिविक्रम भट्ट का जन्म शाण्डिल्यगोत्रीय कर्मनिष्ठ ब्राह्मण परिवार में हुआ था । इनके पिता का नाम नेमादित्य और पितामह का नाम श्रीधर था । जैसा कि नलचम्पू में वे स्वयं ही निर्देश करते हैं :—

क्रतुक्रियाकाण्डशौण्डस्य शाण्डिल्यनाम्नो महर्षेर्वंशः—पृ०सं० १७ ।।
तेषां वंशे विशदयशसां श्रीधरस्यात्मजोऽभूद्
देवादित्यः स्वमतिविकसद्वेदविद्याविवेकः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्कल्लोलां दिशि दिशि जनाः कीर्तिपीयूषसिन्धुं
यस्याद्यापि श्रवणपुटकैः कूणिताक्षाः पिबन्ति ॥१-१९॥
तैस्तैरात्मगुणैर्येन त्रिलोक्यास्तिलकायितम् ।
तस्मादस्मि सुतो जातो जाड्यपात्रं त्रिविक्रमः ॥१-२०॥

श्री त्रिविक्रम भट्ट हैदराबाद के अन्तर्गत मान्यखेटनरेश राष्ट्रकूटकुलोत्पन्न इन्द्रराज तृतीय की राजसभा के प्रमुख पण्डित थे। राजा इन्द्रराज तृतीय का समय निश्चित करने वाला ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण एक लेख बड़ौदा के निकटस्थित नौसारी नामक ग्राम में प्राप्त होता है, जिसके अनुसार इन्द्रराज तृतीय का राज्याभिषेक कृष्ण-गंगा के संगम पर वर्तमान कुरूण्डक नामक ग्राम में फाल्गुन शुक्ल सप्तमी वि०सं०९७२, तदनुसार २४ फरवरी ९७५ ई० को हुआ था। इस अवसर पर उसने ढेर सारे स्वर्ण, तुला और ग्रामादि का दान किया था। इसी प्रकार इन्द्रराज तृतीय का समय निश्चित करने वाला एक और लेख धारवाड़ के हत्तित्तूर नामक ग्राम में भी प्राप्त होता है, जिसे ९१६ ई० में इन्द्रराज तृतीय के किसी महासामन्त द्वारा उत्कीर्ण कराया गया था। इन्द्रराज तृतीय के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण विभिन्न ऐतिहासिक ग्रन्थों में भी देखा जा सकता है। इसके बहुविध दान से सम्बन्धित जो लिखित प्रशस्तियाँ उपलब्ध होती हैं उनके लेखक नेमादित्य-पुत्र त्रिविक्रम भट्ट ही थे। गुजरात के वगुम्रा नामक ग्राम में शक वर्ष ८३६ तदनुसार ९१४ ई० का एक अभिलेख भी प्राप्त होता है, जिसे इन्द्रराज तृतीय की प्रशस्ति में नेमादित्यपुत्र त्रिविक्रम भट्ट ने ही लिखा था। इसके अतिरिक्त त्रिविक्रम भट्ट इन्द्रराज तृतीय के समकालीन थे, इसकी पुष्टि आज से ७२ वर्ष पूर्व गुजरात से प्राप्त दो अन्य अभिलेखों एवं कुछ ही वर्षों पूर्व महाराष्ट्र से प्राप्त एक अभिलेख— इन तीनों में ही अंकित निम्न श्लोक से भी होता है :—

श्रीत्रिविक्रमभट्टेन नेमादित्यस्य सूनुना ।
कृता शस्ता प्रशस्तेयमिन्द्रराजांघ्रिसेविना ॥

इस प्रकार बहुविध प्रमाणों के द्वारा यह स्पष्ट है कि श्रीत्रिविक्रम भट्ट इन्द्रराज तृतीय के समकालीन थे। चूंकि इन्द्रराज तृतीय का समय दशम शताब्दी का पूर्वार्द्ध होना सर्वविदित है, अतः त्रिविक्रम भट्ट भी दशम शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही थे, यह निर्विवाद रूप से सत्य है।

ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार इन्द्रराज तृतीय के युवराज पद पर रहते हुए ही उसके पिता की मृत्यु हो गई थी; फलतः अपने पितामह कृष्णराज द्वितीय से ही इन्द्रराज ने राज्याधिकार प्राप्त किया था। अतः यह कहा जा सकता है कि त्रिविक्रम भट्ट न केवल इन्द्रराज तृतीय के ही राजसभापण्डित थे, अपितु निश्चित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूप से उनका सम्बन्ध कृष्णराज द्वितीय के दरबार से भी था। सुप्रसिद्ध ज्योतिर्विद भास्कराचार्य त्रिविक्रम भट्ट के ही वंशज थे, इसे डॉ० भाऊदा ने नासिक के समीप प्राप्त एक शिलालेख के माध्यम से सिद्ध भी किया है।

त्रिविक्रम भट्ट ने अपने पूर्ववर्ती कवियों की प्रशंसा के क्रम में गुणाढ्य और बाण की भी चर्चा की है तथा धारानरेश भोजप्रणीत 'सरस्वतीकण्ठाभरण' में नलचम्पू के श्लोक को उद्धृत भी किया गया है। इससे स्पष्ट है कि त्रिविक्रम भट्ट बाण के परवर्ती और भोज के पूर्ववर्ती थे। महाकवि बाण हर्षवर्धन की सभा में थे, जिसका समय ६०६–६४७ ई० निर्धारित है और धारानरेश भोज का समय तो १०१५–१०५५ ई० इतिहासप्रसिद्ध है ही।

मुम्बई से प्रकाशित नलचम्पू की भूमिका में नलचम्पू के अपूर्ण रहने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए एक किंवदन्ती का उल्लेख किया गया है, जिसके अनुसार सकल शास्त्रनिष्णात देवादित्य नाम के एक राजपण्डित थे, जिनके पुत्र का नाम त्रिविक्रम था। त्रिविक्रम ने प्रारम्भ से ही किसी शास्त्र का अभ्यास नहीं किया था और वह नितान्त मूर्ख था। किसी समय देवादित्य की नगर में अनुपस्थिति जानकर किसी विद्वान ने राजसभा में उपस्थित होकर राजपण्डित से शास्त्रार्थ कराने अथवा विजय पत्र दिये जाने का राजा से आग्रह किया। राजा ने देवादित्य को तत्काल बुलाने हेतु उनके घर दूत भेजा और देवादित्य को नगर से बाहर गया हुआ जानकर उनके पुत्र को ही राजा ने शास्त्रार्थ हेतु दरबार में बुला लिया। चिन्तित त्रिविक्रम ने बहुविध स्तुतियों के द्वारा सरस्वती को प्रसन्न कर पिता की वापसी-पर्यन्त अपने मुख में उनके वास का वरदान प्राप्त कर वर की महिमा से राजदरबार में अपने प्रतिद्वन्द्वी को परास्त कर राजा से पुरस्कृत हो घर लौट आया। घर आने के पश्चात् पिता की वापसी तक में वरदान का लाभ उठाने का उसने विचार किया और पुण्यश्लोक नल के चरित को गद्य-पद्योभय मिश्रित शैली में लिखना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार लिखते हुए सप्तम उच्छ्वास की समाप्ति के दिन उसके पिता देवादित्य वापस चले आये और वरदान के अनुसार सरस्वती उसके मुख से निकल गईं। इसीलिए सप्तम उच्छ्वास के आगे नलचम्पू का प्रणयन नहीं किया जा सका और यह अपूर्ण ही रह गया।

इस प्रकार की किंवदन्तियाँ संस्कृत वाङ्मय के स्वनामधन्य महाकवियों के बारे में बहुधा प्रचलित हैं, जिनका कोई भी तार्किक आधार नहीं है। त्रिविक्रम का स्वयं को जाड्यपात्र कहना उनकी विनयशीलता का द्योतक है, न कि उनकी मूर्खता का। सही अर्थों में इस किंवदन्ती के पल्लवन का आधार नलचम्पू काव्य में कथा की तथाकथित अपूर्णता, त्रिविक्रम भट्ट द्वारा स्वयं के सन्दर्भ में जाड्योक्ति और नलचम्पू काव्य की अतिमानवीय सफलता ही है, और कुछ नहीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यास्तयिक रूप में हम यह पाते हैं कि श्री त्रिविक्रम भट्ट की उत्पत्ति एक सभ्य, सुसंस्कृत, लब्धप्रतिष्ठ, सकलशास्त्रनिष्णात, कर्मनिष्ठ शाण्डिल्यगोत्रीय ब्राह्मण परिवार में हुई थी, जो कि यज्ञादि धार्मिक कृत्यों का अनुष्ठान किया करता था। इसके साथ-साथ पौराणिक प्रवचन भी इस परिवार का मुख्य कार्य था। इनके कुल को विभिन्न विषयों के ख्यातनाम विद्वानों का जन्मदाता कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। इसी सर्वातिशायी विशेषता के कारण त्रिविक्रम भट्ट के वंशजों विद्यापति भास्कर, सर्वज्ञ गोविन्द, तेजस्वी प्रभाकर, मनोरथ, कविसम्राट् महेश्वर, ज्योतिर्विद भास्कराचार्य, अनन्तदेव आदि सभी को तत्कालीन नरेशों का आश्रय प्राप्त था।

त्रिविक्रम भट्ट की उत्पत्ति से आर्यावर्त का कौन-सा भूभाग अलंकृत हुआ, इस विषय में यद्यपि स्पष्टतया कोई निर्देश नहीं प्राप्त होता, लेकिन उनकी ख्यातनाम रचना 'नलचम्पू' के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि ये विदर्भ क्षेत्र में पयोष्णी के तटवर्ती भाग के निवासी थे, क्योंकि पयोष्णी और विदर्भ कवि को सर्वाधिक प्रिय रहे हैं और उनका वर्णन करते समय उनको महिमामण्डित करने में कवि ने अपने श्लेषकौशल के उदात्ततम अंशों का प्रयोग किया है। दूसरी बात यह भी है कि कवि-कृत दक्षिण, विदर्भमण्डल और कुण्डिनपुर के वर्णन को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र के कोने-कोने से वे पूर्णतया परिचित थे और इस क्षेत्र की महत्त्वहीन वस्तुयें भी उनके लिए महत्त्वपूर्ण थीं। पयोष्णी की महत्ता प्रतिपादित करते हुए सुरसरित् गंगा का भी उनके द्वारा उपहास करना इसका ज्वलन्त उदाहरण है। अतः साक्ष्यगत परिस्थितियों के आधार पर निश्चितरूपेण यह कहा जा सकता है कि महाकवि त्रिविक्रम भट्ट ने अपने जन्म से विदर्भ क्षेत्र को ही अलंकृत किया था।

त्रिविक्रम भट्ट यद्यपि किसी देवताविशेष के कट्टर उपासक नहीं प्रतीत होते; क्योंकि उन्होंने अपने ग्रन्थ में बड़े ही भक्तिभाव से भगवान् शिव, नारायण सूर्य, गणेश एवं कार्तिकेय का स्मरण किया है। प्रत्येक उच्छ्वासों के अन्त में हरचरणसरोज की ओर उनके झुके दिखाई देने के कारण यह तो स्पष्ट है कि भगवान् शिव की उपासना में उनकी विशेष रुचि थी. फिर भी यह कहा जा सकता है कि उनके आराध्यदेव कार्तिकेय ही थे; क्योंकि उनकी रचना में नल से मिलने वाला प्रथम पथिक गन्धमादनस्थित कार्तिकेय का दर्शन करके ही लौट रहा है और राजा भीम भी स्वप्न में गणेश एवं शिव का दर्शन कार्तिकेय के साथ ही करते हैं। साथ-साथ यह भी कि सदा-सर्वदा से विदर्भ क्षेत्र के आराध्य भगवान् कार्तिकेय ही रहे हैं और आज भी उस क्षेत्र में उनकी उपासना बड़े ही भव्य रूप में की जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्रिविक्रम भट्ट : कृतियाँ

संस्कृत वाङ्मय के ऐतिह्यविदों ने दो चम्पूग्रन्थों—नलचम्पू और मदालसा चम्पू को ही त्रिविक्रम भट्ट की कृतियों के रूप में मान्यता प्रदान की है। इनमें से मदालसा चम्पू भी नलचम्पू के समान ही एक प्रणयगाथा है। इसके नायक कुवलयाश्व और नायिका मदालसा हैं। कुवलयाश्व और मदालसा की प्रेमकथा मार्कण्डेय पुराण के १८ से २२ अध्याय तक में वर्णित है। कुवलयाश्वचरित, पाताल-केतु-वध, मदालसा-परिणय, मदालसा-वियोग, कुवलयाश्व का नागराज के घर जाना और अन्ततः मदालसा की पुनः प्राप्ति इस चम्पूकाव्य में वर्णित मुख्य घटनायें हैं। भाषा-सौष्ठव एवं काव्य-कुशलता की दृष्टि से नलचम्पूसदृश रमणीयता का तो इसमें सर्वथा अभाव ही दृष्टिगोचर होता है, फिर भी कथा के विकास एवं आकर्षण के कारण उनकी यह कृति भी कम रोचक नहीं है। इसमें वर्णित मदालसा की कथा को ही आधार बनाकर मदालसापरिणय, मदालसा-नाटक, मदालसा आदि कई कृतियों को उनके परवर्ती साहित्यकारों ने निबद्ध किया है।

नलचम्पू अथवा दमयन्ती-कथा

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से अद्यावधि उपलब्ध समस्त चम्पूकाव्यों में नलचम्पू एक अन्यतम रचना है। इसकी कथा का मूल स्रोत महाभारतीय वनपर्व का नलोपाख्यान है।

नलोपाख्यान संस्कृत वाङ्मय में कवियों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र रहा है और इसे आधार बनाकर अनेकों कवियों ने विभिन्न रचनायें रची हैं, जिनमें महाकवि श्रीहर्षकृत 'नैषधीयचरितम्', लक्ष्मीधरकृत 'नल-वर्णन-काव्य' और श्रीनिवास दीक्षितकृत 'नैषधानन्द' प्रमुख हैं, परन्तु इन सबसे अलग एक सर्वथा नवीन विचारधारा को अंगीकार करते हुए चात्मत्कारिक कवि त्रिविक्रम भट्ट ने प्रकृत चम्पूकाव्य का निर्माण किया है, जो अपने-आप में अनूठा है।

यह अनुपम ग्रन्थ कुल सात उच्छ्वासों में निबद्ध है, जिसमें नल का दमयन्ती के पास पहुँच कर इन्द्र आदि लोकपालों के सन्देश को पहुँचाने तक की कथा का सरस वर्णन है। इतने पर ही ग्रन्थ की समाप्ति हो जाने के कारण नलोपाख्यानस्थित कथा का दमयन्ती-परित्याग आदि मार्मिक प्रकरण इसमें नहीं आ सका है, जिससे इस ग्रन्थ के अपूर्ण होने की धारणा को बल मिलता है। इसमें सरस, रमणीय एवं प्रसाद गुणसमन्वित श्लेष की प्रचुरता है। यद्यपि कहीं-कहीं श्लेषमयी दुरूहता और सभंग श्लिष्टता के भी दर्शन इसमें होते हैं, लेकिन कवि ने यथासम्भव इनसे बचने का ही प्रयास किया है, साथ ही पाठकों को भी श्लेषबन्धता के कारण अनुभूत होनेवाली कठिनता से उद्विग्न न होने की सम्मति भी दी है। वे कहते हैं कि—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाचः काठिन्यमायान्ति भङ्गश्लेषविशेषतः।
नोद्वेगस्तत्र कर्तव्यो यस्मान्नैको रसः कवेः ॥१-१६

कवियों की अकुशलता त्रिविक्रम भट्ट को किञ्चित् भी पसन्द नहीं है, इसीलिए अकुशल कवियों पर इन्होंने व्यंग्यवाणों की बौछार-सी कर दी है—

अप्रगल्भाः पदन्यासे जननीरागहेतवः।
सन्त्येके बहुलालापाः कवयो बालका इव ॥१-६॥

सहृदय रसमर्मज्ञों को महाकवि त्रिविक्रम की मनोहारिणी कल्पनाओं ने बहुत ज्यादा ही आकर्षित किया है। इनकी इन्हीं मनोहारिणी कल्पनाओं के कारण इन्हें 'यामुनत्रिविक्रम' की उपाधि से विभूषित भी किया गया है; जैसे कि—

उदयगिरिगतायां प्राक्प्रभापाण्डुताया-
मनुसरति निशीथे शृङ्गमस्ताचलस्य।
जयति किमपि तेजः साम्प्रतं व्योममध्ये
सलिलमिव विभिन्नं जाह्नवं यामुनं च ॥ ६-१ ॥

त्रिविक्रम भट्ट के अनुसार कवियों के काव्य और धनुर्धारियों के बाण—दोनों के लक्ष्य समान ही होने चाहिए; पाठकों एवं प्रतिपक्षियों के हृदय पर आघात कर उन्हें व्यामोहित कर देना। यदि ऐसा करने में ये दोनों समर्थ नहीं हो पाते, तो दोनों ही व्यर्थ हैं; जैसा कि वे कहते भी हैं—

किं कवेस्तेन काव्येन किं काण्डेन धनुष्मता।
परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः ॥ १-" ॥

वर्षा, शरद् आदि ऋतुओं के वर्णन में महाकवि की वाणी अलौकिक वैभव से सम्पन्न दिखाई देती है। अलङ्कारों के बहुविध प्रयोग में त्रिविक्रम भट्ट सिद्धहस्त हैं। श्लेषानुप्राणित उपमा, उत्प्रेक्षा, यमक एवं अनुप्रास की छटा तो नलचम्पू में देखते ही बनती है। जैसे कि—

चलच्चकोरचक्रवाकचञ्चुचञ्चलचञ्चरीकचरणचूर्णितचम्पकाङ्कुर-मरिचमञ्जरीदलदन्तुरेण वनमार्गेण स्तोकमन्तरमतिक्रान्ततस्या पुनरेवं बभाषे ॥ नल. पृ. १३१ ॥

सात उच्छ्वासों में निबद्ध इस अतिविशिष्ट चम्पूकाव्य में कुल ६३ पात्रों का महाकवि ने बड़ी ही कुशलतापूर्वक समावेश किया है, जिनमें ३३ पुरुष-पात्र, २९ स्त्री-पात्र तथा १ किन्नर युगल है। इसका नायक निषध देशाधिपति नल और नायिका कुण्डिनपुराधीश्वर भीम की अनुपम लावण्यसम्पन्ना पुत्री दमयन्ती है। यह नलचम्पू पौराणिक उपाख्यानों पर चम्पूकाव्यों के निर्माण एवं गद्य-पद्य दोनों में समानरूपेण कवि-कौशल के प्रदर्शन का अन्यतम उदाहरण है। प्रबन्धपटुता के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साथ-साथ वर्णन-विस्तार का समन्वय, रचयिता के प्रगाढ़ पाण्डित्य, शब्दभण्डार की समृद्धि एवं प्रवाहशील भाषा की निर्माण-क्षमता, क्रियापदों से निर्मित शब्दावली आदि दृष्टियों से त्रिविक्रम भट्टकृत 'नलचम्पू' एक सर्वातिशायी वैशिष्ट्य से समन्वित चमत्कारप्रधान चम्पूकाव्य ही सिद्ध होता है।

नलचम्पू : सुखान्त या दुःखान्त

कथा के जिस भाग पर नलचम्पू काव्य की पूर्णता प्रदर्शित की गई है उसे देखने से यह एक दुःखान्त काव्य ही दृष्टिगोचर होता है; क्योंकि सप्तम उच्छ्वास की समाप्ति पर नायक-नायिका दोनों ही विषण्ण अवस्था में दिखाई देते हैं। ऐसी स्थिति में इसका विवेचन अनावश्यक है कि पूर्वप्रचलित प्रथा के विपरीत दुःखान्त काव्य का निर्माण ही त्रिविक्रम को अभीष्ट था या दुःखान्त घटनाओं को दिखाकर व्यंग्यरूप में सुखान्तता प्रदर्शित करना उन्हें अभिप्रेत था।

यह निर्विवाद है कि त्रिविक्रम भट्ट स्थापित परम्परा से हट कर नवीन विचारधारा के कवि थे। इसीलिए अपनी प्रवृत्तिगत नवीनता को प्रदर्शित करने हेतु ही शायद उन्होंने इसी बिन्दु पर ग्रन्थ की समाप्ति कर दी हो, ऐसा माना जा सकता है। क्योंकि ग्रन्थ की पूर्णता कथा के उस अंश पर आकर दिखाई देती है, जिसके भाव सुखान्त ही व्यंग्य होते हैं। आगे दमयन्ती और नल के परिणय होने में कोई विघ्न दिखाई नहीं देता। एक-दूसरे को साक्षात् देख लेने के पश्चात् दोनों का अनुराग इतना अधिक पुष्ट हो चुका है कि लोकपालों की तेजस्विता भी उसके समक्ष नगण्य स्थिति में रह गई है। वैसे भी देवताओं के द्वारा विघ्न उपस्थित किये जाने का यहाँ कोई कारण नहीं है; क्योंकि नल ने उनकी आज्ञा का अक्षरशः पालन कर अपने कर्तव्य को पूर्णता प्रदान कर दी है। अतएव दोनों के परिणय का मार्ग विघ्न से सर्वथा रहित है। इस प्रकार व्यञ्जना से ग्रन्थ की समाप्ति सन्निकट आ पहुँची है; अतएव स्पष्ट है कि प्रत्यवायरहित परिणय-मार्ग दृष्टिगोचर होने से ग्रन्थ की सुखान्तता स्पष्ट ही परिलक्षित है।

वैसे भी सम्पूर्ण ग्रन्थ में परिणय की बातें प्रायः व्यंग्य द्वारा ही स्फुटित हैं, न कि अभिधा के द्वारा। कथा की फलप्राप्ति भी व्यञ्जना के द्वारा नल-दमयन्ती का परिणय ही है, जो कि दोनों का एक-दूसरे के प्रति उत्सुक होने, पिता द्वारा स्वयंवर आयोजित कर देने, नल द्वारा देवताओं का दौत्यकर्म सम्पन्न कर देने और देवताओं का भय समाप्त हो जाने पर अवश्यम्भावी है। अतः इसे सुखान्त कहना ही समीचीन प्रतीत होता है, न कि दुःखान्त। इससे यह भी स्पष्ट है कि कवि ने कथा के निर्धारित अंश पर ही ग्रन्थ को पूर्णता प्रदान की है; अतएव इसे अपूर्ण ग्रन्थ का नाम देना भी कथमपि युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नलचम्पू : कथावस्तु

प्रथम उच्छ्वास

प्रथमतः चन्द्रमौलि भगवान् शंकर तथा पीयूषवर्षी कवियों के वाग्विलास की प्रशंसा के साथ श्री त्रिविक्रम भट्ट द्वारा ग्रन्थ का आरम्भ किया गया है। समस्त जगत् के उद्भवस्थल काम एवं नवयौवनाओं के नेत्रविभ्रम की सर्वोत्कृष्टता प्रतिपादित करते हुए विबुधानन्दमन्दिरस्वरूपा देवी सरस्वती के मधुर प्रवाह को नमस्कार कर असत् उक्तियों तथा अभद्र कवियों की निन्दा एवं सूक्तियों तथा सत्कवियों की प्रशंसा करते हुए दौर्जनी संसद को भी नमन करने की लोगों को कवि ने सलाह दी है। सत्कवियों में मुख्यतः वाल्मीकि, व्यास, गुणाढ्य तथा बाण को अतिशय आदर के साथ स्मरण करते हुए सभङ्ग श्लेष के प्रयोग के कारण पाठकों को उद्विग्न न होने की भी सलाह दी गई है। तदनन्तर श्री त्रिविक्रम भट्ट स्वयं के कुल-गोत्र को इंगित करते हुए अपने-आपको शाण्डिल्य-गोत्रीय श्रीधर का पौत्र एवं देवादित्य का पुत्र होना घोषित करते हैं। इस प्रकार परिचयात्मक उपक्रमणिका के पश्चात् ग्रन्थ में वर्णनीय कथा का प्रारम्भ किया गया है।

सर्वप्रथम आर्यावर्त की सम्पन्नता एवं रमणीयता का चित्रण करते हुए उसकी तुलना स्वर्गलोक से की गई है। उसी आर्यावर्त में एक निषधानामक नगरी है, जिसकी प्राकारभित्ति इन्द्रनीलमणि से निर्मित है और जो स्वर्ग की सुषमा से स्पर्धा करने वाली है। इसी नगरी में महाप्रतापी, समुद्रान्त पृथ्वी के कीर्तिस्तम्भस्वरूप महाराज नल निवास करते हैं। उनके मन्त्री सालङ्कायनपुत्र श्रुतशील हैं, जो समस्त विद्याओं के आधारस्तम्भ होते हुए भी नल के लिए द्वितीय प्राण के समान हैं। उनके कारण राज्य की शासन-व्यवस्था सुव्यवस्थित रूप से सञ्चालित है, जिससे महाराज नल राज्य के चिन्ताभार से पूर्णतः मुक्त होकर आखेट, विहार एवं आमोद-प्रमोद में मग्न रहते हैं।

किसी समय वर्षा ऋतु में एक वनरक्षक आकर राजा से निवेदन करता है कि उनके विहारवन में एक करालकाल कोल (सूकर) ने आकर लीलासरोवर को मथ कर अस्त-व्यस्त कर दिया है। इस प्रकार के विप्लवकारी वराह के आगमन की सूचना पाकर राजा नल उस वनस्थली को देखने हेतु उत्कण्ठित हो जाते हैं और शिकार की समस्त सामग्रियों से सुसज्जित सेनापति बाहुक के साथ-साथ यमदूतसदृश व्याधों को साथ ले घोड़े पर सवार हो चल देते हैं। वन में प्रविष्ट होते ही व्याधसेना वनस्थली को व्यथित कर देती है, शराघात के कारण अन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पशु अपनी जान बचाने के लिए इधर-उधर भागने लगते हैं और शर-संयोग हो जाने पर धड़ाधड़ भूमि पर गिरने भी लगते हैं। इसी मध्य नासिका को टेढ़ी किये, बादल के समान गर्जन करता हुआ, गुस्से से पूँछ को फटकारता हुआ, एक पङ्किल जलाशय पर दावानल से दग्ध पर्वत के समान वराह को महाराज नल देखते हैं। तदनन्तर सावधान हो चिरकाल तक उत्कृष्टतम पराक्रम प्रदर्शन के पश्चात् महाराज नल राक्षसेन्द्र रावण पर राम की विजय के समान वीररस के रसिक उस सूकर पर विजय प्राप्त करते हैं।

सूकर को विजित करने के पश्चात् आखेट-श्रम से क्लान्त नल विश्राम हेतु एक सालवृक्ष की छाया में बैठ जाते हैं और भीनी-भीनी सुगन्ध से समन्वित हवा का स्पर्श होने के कारण झपकी लेने लगते हैं। उनका परिजनवर्ग अभी भी मृगवधुओं को वैधव्य की दीक्षा देने में ही व्यस्त है। इसी मध्य एक पथिक वहाँ आता है, जिसने लताओं की छाल से अपने श्वेत बालों को आबद्ध कर रखा है, साथ ही कन्धे पर डण्डा, गले में मिट्टी से निर्मित गोलियों की माला, कैथ रंग का कौपीन, पैरों में फटे चिथड़े और हाथ में काष्ठनिर्मित भिक्षापात्र को धारण कर रखा है। शरीर से अत्यन्त ही दुर्बल वह पथिक राजा नल के असामान्य सौन्दर्य को देखकर मन ही मन उनके महापुरुष होने का निश्चय कर, समीप जा 'कामविजयिन् ! आपका मंगल हो।' ऐसा कहकर सम्बोधित करता है।

साश्चर्य राजा शिर उठाकर पथिक का अभिनन्दन कर वह किस देश से आ रहा है ? उसे कहाँ जाना है ? इत्यादि पूछने के साथ ही उससे बैठने की प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि थोड़ा विश्राम कर कुछ सुनाइये; क्योंकि आप देश-विदेश का भ्रमण करने वाले हैं, अतः आपने विविध आश्चर्यों को अवश्य ही देखा होगा। प्रथम परिचय के कारण आपसे स्नेह स्वल्प है, ऐसी आशंका आप न करें; यतः प्रथम दर्शन होने पर भी मणि अपनी कान्ति नहीं छिपाते। आश्वस्त पथिक राजा नल की जिज्ञासा का शमन करते हुए कहता है कि समस्त संसार में कमनीयता के लिए प्रख्यात दक्षिण दिशा में स्त्री एवं पुरुषरत्नों के सागरस्वरूप विदर्भ देश में भगवान् शंकर के पावन चरणों से अलंकृत, कैलास की शोभा को भी तिरस्कृत करने वाले श्रीशैल पर्वत पर फूलों एवं फलों से सम्पन्न गोदावरी के तट पर सुरासुरों से पूजित भगवान् कार्तिकेय का दर्शन करने हेतु मैं गया था। वहाँ से दर्शन कर लौटने के क्रम में मार्गश्रम से क्लान्त हो किसी वटवृक्ष को छाया में विश्राम करते समय मैंने आश्चर्य-चकित हो देखा कि एक अनुपम सौन्दर्यशालिनी राजकुमारी चारो ओर से सखियों से घिरी हुई उसी वटवृक्ष के नीचे आकर बैठ गई। अनवरत रूप से डुलाये जा रहे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चँवर की हवा से उसकी अलकवल्लरी स्पन्दित हो रही थी और किञ्चित् निमीलित नयनों वाली वह सुन्दरी सुधा-माधुरी से भी स्पर्धा करने वाली संगीतलहरी को सुनने में दत्तचित्त थी। उसे देखने से ऐसा प्रतीत होता था, मानों नारायण के वक्षःस्थल से विलग हो कर साक्षात् लक्ष्मी ही वहाँ आ पहुँची हो।

इस समय आप जिस प्रकार मुझसे दक्षिण दिशा के बारे पूछ रहे हैं उसी प्रकार वह भी उत्तर दिशा के किसी पथिक से कुछ पूछती हुई कुछ देर वहीं बैठी रही। उत्तर दिग्वर्ती उस पथिक के द्वारा किसी श्लाघनीय गुणों वाले राजा का वर्णन किया जा रहा था; जिसे सुनने का लोभ मैं संवरण न कर सका और उनकी वार्ता की ओर आकृष्ट हो गया। वह उत्तर दिग्वर्ती पथिक कह रहा था कि—वे आँखें धन्य हैं, जिन्होंने उस कामविजयी राजा का दर्शन कर तृप्ति का अनुभव किया है। तुम काममञ्जरी हो और वह युवक तुम्हारा आस्वादक भ्रमर है। तुम्हारे लिए वही उपयुक्त है और तुम दोनों का मिलन हो जाने पर विधाता की कला भी साकार हो उठेगी।

पता नहीं, वह पुण्यात्मा कौन था, जिसके वर्णन-मात्र ने ही उस अनिन्द्य-सुन्दरी को रोमाञ्चित कर दिया। आश्चर्यचकित मैं भी किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया और उस सुन्दरी से यह भी न पूछ सका कि वह कौन थी और कहाँ से आई थी? उसके चले जाने पर भी मैं स्तब्ध-सा बैठा ही रहा। सम्प्रति मैं यही सोच रहा हूँ कि जिस प्रकार उस अनिन्द्य सुन्दरी को देखकर मेरी दक्षिण-यात्रा सफल रही थी, उसी प्रकार अपने अलौकिक सौन्दर्य से काम को भी तिरस्कृत करने वाले आपको देख आज पुनः मैं कृतकृत्य हो गया। अब आप मुझे जाने की आज्ञा दें। इतना कहकर वह पथिक मौन हो गया।

उस पथिक की बातें सुनकर राजा सोचने लगा कि निश्चय ही वह दक्षिण देश स्त्रीरत्नों का आकर है और यह पथिक भी यथार्थवक्ता है। यतः ब्रह्मा का निर्माण-कौशल संसार में बहुविध आश्चर्यों को प्रस्तुत किया ही करता है। खेद का विषय यही है कि उस लावण्य-सम्पदा को मैं न देख सका, जिसके विषय में श्रवणमात्र से ही मेरा मनोबल क्षीण होता जा रहा है। यद्यपि मैंने अपनी नेत्राञ्जलि से उसकी रूपसुधा का पान नहीं किया और उसके नामपल्लव को अपने कानों का भूषण भी नहीं बनाया, फिर भी उसकी लावण्यकीर्ति मुझे अपनी ओर आकर्षित कर रही है। यह ठीक भी है, क्योंकि अप्राप्य के प्रति अनुराग उत्पन्न होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। मुझे तो उसके बारे में श्रवण-मात्र से ही ज्वर के बिना ही अस्वस्थता, वृद्धावस्था के बिना ही जड़ता और आत्मसमर्पण के बिना ही परवशता का बोध हो रहा है तथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आँखों और कानों के रहते हुए भी मैं अन्धे और बहरे के समान हो गया हूँ। अतः उस कामदेव के लिए नमस्कार है, जो सज्जनों को भी अपने व्यापार से दुर्जन के रूप में परिवर्तित कर दिया करता है।

इसी प्रकार विचार करते हुए राजा ने अपने अंगों से आभूषणों को उतार कर उस पथिक को उपहाररूप में समर्पित करते हुए उसे जाने की आज्ञा दी और स्वयं भी व्याघ्र-परिजनों के साथ अपने राजभवन को प्रस्थान किया। लेकिन उसी समय से उसके मानसरूपी पर्णकुटीर में कामाग्नि प्रज्वलित हो उठी और उसके लिए वे वर्षाकालीन दिन अन्य पथिकों से उस अनिन्द्य सुन्दरी के बारे में पूछते हुए ही व्यतीत हो गये।

द्वितीय उच्छ्वास

वर्षाकाल समाप्त हो रहा था और शरद् ऋतु के आगमन के उपलक्ष्य में भ्रमरों तथा हंसों ने स्वागत-गान आरम्भ कर दिया था। राजा नल एक समीपवर्ती वन में विहार कर रहे थे, जब एक दिन किन्नरयुगल द्वारा गाये जा रहे तीन श्लोकों को उन्होंने सुना। उनकी संगीतलहरी से उत्कण्ठित राजा नल उद्यान की ओर चल दिये। इसी समय कतिपय वनपालिकायें वहाँ आकर भंगश्लेषोक्ति-कुशलता से वर्णन करती हुई वन के विविध दर्शनीय स्थानों को राजा को दिखाने लगीं। उनकी उक्तिवक्रता से सन्तुष्ट हो प्रसन्न राजा अपने शरीर से आभूषणों को उतार कर उन्हें पुरस्कृत करते हैं और मनोविनोद हेतु सर्वर्तुनिवास नामक उस वन में भ्रमण करना प्रारम्भ कर देते हैं।

इसी समय सहसा श्वेत कमलसदृश अपने शुभ्र पंखों से धरती को अलंकृत करता हुआ राजहंसों का समूह वहाँ उतर कर अपनी बुभुक्षा शान्त करने के लिए कमल-नालों को तोड़ने लगता है। एक बार तो सपरिजन राजा नल उन्हें निर्निमेष नजरों से देखते ही रह जाते हैं, लेकिन फिर चैतन्य होकर कौतुकवश उन हंसों को पकड़ने का प्रयत्न करने लगते हैं और अन्ततः उनमें से एक को पकड़ भी लेते हैं। रक्तकमल के मध्यभागसदृश राजा के करपल्लव पर वह हंस पद्मरागमणि की शुक्ति पर रखे श्वेत कमल की तरह प्रतीत होता है और हाथों में आते ही वह हंस रजतनिर्मित झर्झरी की ध्वनिसदृश सुमधुर ध्वनि में 'स्वस्ति' कहकर राजा की अभ्यर्थना करता है। हंस की निर्भीकता तथा स्वरमाधुरी को सुन आश्चर्य के साथ-साथ उत्कण्ठित राजा पक्षिवेष में उसे कोई देवता समझकर स्वागत करते हुए उसका कुशलक्षेम पूछते हैं, लेकिन 'आपके दर्शन-मात्र से ही मैं तृप्त हूँ।' यह कहकर वह हंस नल को अपने प्रति और भी अनुरागसम्पन्न बना देता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतने में ही अपने सहचर को पकड़ा गया देखकर उस हंस की सहचरी राजा के सम्मुख आकर उसे बहुविध उलाहनायें देती हुई श्लेषमयी वाणी में कहती है कि "हे राजन् ! मुक्ताहार परिच्छद एकान्त विचरक, सारसों आदि के साथ जल में निवास करने वाला हंस भी क्या कहीं बाँधने योग्य होता है ?" राजा नल भी श्लेषमयी उक्तियों के द्वारा ही उसका उत्तर देता है, लेकिन हंस कटु व्यंग्यों द्वारा अपनी सहचरी को पीड़ित करने के लिए राजा को मना करता है।

इस प्रकार इन तीनों का वाग्विनोद चल ही रहा रहा था कि उसी समय स्पष्ट आकाशवाणी सुनाई पड़ती है कि 'हे कमलदलनयन राजन् ! शीघ्र ही हंस को मुक्त कर दें। यह हंस ही दमयन्ती को आपकी ओर आकृष्ट करने में सहायक होकर आपका दौत्यकार्य करेगा।' 'दमयन्ती' नाम सुनते ही राजा रोमाञ्चित हो जाता है और हंस, आकाशवाणी तथा दमयन्ती के विषय में ही विचार करता हुआ एक छायादार लतामण्डप में प्रवेश कर जाता है। वहाँ एक शीतल शिलातल पर बैठ कर वह हंस से कहता है कि—सात कदम साथ चलने-मात्र से ही लोगों में मित्रता हो जाती है। साथ ही मित्रता करने योग्य सत्पुरुष वाले समस्त लक्षण भी आपमें विद्यमान हैं; अतः हे मित्र ! आप मुझे बताओ कि यह दमयन्ती कौन है ? किसकी पुत्री है ? उसकी सौन्दर्यलक्ष्मी कैसी है ? राजा की उत्कण्ठा से परिपूर्ण जिज्ञासा को जानकर हंस कहता है कि—हे श्रृंगार के स्वर्णकलश ! यदि आप जानना ही चाहते हैं तो लीजिये, दमयन्ती के रमणीयतम परिचयपल्लव को अपने कर्णेन्द्रियों का आभूषण बनाइये। इसके पश्चात् दमयन्ती का परिचय उपस्थापित करता हुआ हंस कहता है कि—

गंगा और गोदावरी के पावन प्रवाह से दुरित दावानल का मूलतः शमन कर देने वाला दक्षिण देश समस्त देशों में सर्वोत्कृष्ट है। उसी दक्षिण देश के एक महत्त्वपूर्ण भाग में वैदर्भमण्डल को अलंकृत करने वाला कुण्डिन नाम का एक नगर है, जिसके निकट ही देवनदी गंगा का उपहास-सा करती हुई पुण्यसलिला पयोष्णी नदी प्रवहमान है। उस नगरी के राजा महाराज भीम हैं, जिनकी राजमहिषी प्रियंगुमञ्जरी अपनी सुन्दरता के लिए विश्वविख्यात है। जब इन दोनों के कोई सन्तान न थी, उसी समय एक दिन वनविहार के क्रम में अपने बच्चे को उदर से चिपकाये एक वानरी को देखकर अपनी सन्तानहीनता के कारण इस दम्पती का मन सन्तान-प्राप्ति के लिए व्यग्र हो उठा। अभी दोनों विचारमग्न ही थे कि अन्धकार का आगमन हो गया, तब राजा भीम ने रानी प्रियंगुमञ्जरी से सन्तान-प्राप्ति हेतु अम्बिकापति भगवान् शिव की आराधना करने का आग्रह किया। उधर भगवान् भुवनभास्कर भी थक कर वारुणी (पश्चिम) दिशा को प्रस्थान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर रहे थे। अतः राजा भीम और प्रियंगुमञ्जरी भी मन ही मन भगवान् शिव को नमन कर राजभवन लौट आये। तदनन्तर चन्द्रमा की आह्लादकारिणी किरणों के दशों दिशाओं में फैल जाने पर पति के परामर्श को याद कर भगवान् शंकर के चरणारविन्दों में मन लगाई हुई प्रियंगुमञ्जरी कुशों की पवित्र शय्या पर लेट कर प्रगाढ़ निद्रा में अवगाहन करने लगी ॥

तृतीय उच्छ्वास

रात्रि की समाप्ति-वेला में रानी प्रियंगुमञ्जरी ने स्वप्न देखा कि सकल सुरासुरवन्दित-चरणकमल भगवान् शिव उसकी उपासना से प्रसन्न हो गये हैं और हाथों में कपाल तथा त्रिशूल, शरीर पर भस्म, कानों में कुवलय, शिर पर फुफुकारते हुए सर्प को धारण किये पार्वती के साथ चन्द्रमण्डल से उतर कर उसके पास आकर "वत्से प्रियंगुमञ्जरि ! इस पारिजातमञ्जरी को ग्रहण करो, डरो मत। हमारी आज्ञा से प्रातःकाल महामुनि दमनक आयेंगे और तुम्हें अनुगृहीत करेंगे।" ऐसा कहकर मादक सुगन्धयुक्त पारिजातमञ्जरी अपने कानों से उतार कर उसे पकड़ा देते हैं। भगवान् शंकर का प्रसाद समझ रानी भी स्वप्न में ही आदरपूर्वक उस मञ्जरी को ग्रहण कर उनकी स्तुति कर ही रही होती है कि प्रातःकालीन मंगलवाद्य वजने लगते हैं और उसकी निद्रा खुल जाती है। रानी उठकर भगवान् भुवनभास्कर को प्रणाम करती है।

उधर प्रातःकृत्य से निवृत्त हो राजा भीम पुरोहित को आगे कर रानी को देखने के लिए अन्तःपुर में प्रविष्ट होते हैं तो वहाँ अन्य दिनों की अपेक्षा रानी के शरीर से कुछ विचित्र प्रकार का अलौकिक तेज छिटकता हुआ तथा उसे प्रसन्नता से परिपूर्ण देखते हैं। कारण पूछने पर रानी प्रियंगुमञ्जरी स्वप्न का सम्पूर्ण समाचार कह सुनाती है। तब राजा कहते हैं कि मैंने भी स्वप्न में शक्ति-धारी स्वामी कार्तिकेय तथा मंगलमूर्ति गणेश को धारण की हुई भगवती पार्वती के साथ भगवान् शिव का दर्शन किया है। साथ ही साथ अपने और रानी के एक ही समान स्वप्नों का फल-विचार करने के लिए पुरोहित से आग्रह भी करते हैं। पुरोहित भी विचार कर अतीव प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहता है कि ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी कीर्ति से समग्र संसार को पवित्र करने वाले सन्तति की प्राप्ति आपको होने ही वाली है।

इसी समय एक महामुनि आकाशमण्डल से अवतीर्ण होते हैं, जिनके ललाट पर त्रिपुण्ड्र विराजमान है, गले में स्फटिक की माला है और हाथ में कुशसमन्वित कमण्डलु है। स्वप्न के अनुकूल ही उनका आगमन देख सभी अत्यन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसन्न होते हैं एवं राजा भीम प्रणामोपरान्त उन्हें समुचित आसन पर आसीन कराकर स्वयं नीचे ही बैठ जाते हैं। पश्चात् मुनि कहते हैं कि "हे चिरजीविन् ! भगवान् शंकर की आज्ञा से ही मैं यहाँ आया हूँ। आप शीघ्र ही अपने सम्मान के अनुरूप, तीनों लोकों को अपनी प्राञ्जल यशोराशि से मण्डित करने वाले असामान्य कन्यारत्न को प्राप्त करेंगे।" पुत्र की अभिलाषिणी प्रियंगुमञ्जरी कन्या-प्राप्ति-सम्बन्धी वरदान को सुनकर अतीव व्यथित हो श्लेषमयी वाणी द्वारा दमनक मुनि की प्रशंसा और निन्दा दोनों ही करने लगती है, जिस पर मुनि भी श्लेषमयी वाणी द्वारा ही उसे समझाते हुए कहते हैं कि भगवान् शिव कर्मानुसार ही प्राणियों को शुभाशुभ फल प्रदान करते हैं। तत्पश्चात् प्रियंगुमञ्जरी अपने व्यवहार के लिए क्षमा माँगती हुई उन्हें बहुमूल्य उपहार प्रदान करती है। जिसे अपने लिए अनुपयोगी बताते हुए अपना कमण्डलु उठा महामुनि नील गगन में उड़ जाते हैं।

कालक्रमानुसार रानी प्रियंगुमञ्जरी गर्भ धारण करती है और उन दिनों गर्भस्थ लावण्य परमाणुपुञ्ज के प्रभाव से रानी के शरीर से एक असामान्य आभा छिटकने लगती है। उपयुक्त समय आने पर प्रातःकाल में वह एक आसामान्य कन्यारत्न को जन्म देती है। उस समय उसके जन्म से समस्त दिशायें प्रसन्न हो जाती हैं, अप्सरायें नृत्य करने लगती हैं और समस्त संसार कुछ नूतन-सा प्रतीत होने लगता है। कुछ समय पश्चात् नामकरण संस्कार के समय दमनक मुनि द्वारा वर प्रदान करने वाली बात को ध्यान में रखकर उसका नाम 'दमयन्ती' रखा जाता है। शैशवोचित लीलाओं से सबको आनन्दित करती हुई वह कन्या दिनानुदिन वृद्धि को प्राप्त होने लगती है और कुछ ही दिनों में विविध विद्याओं में पूर्ण प्रवीणता प्राप्त कर लेती है। चित्र एवं नृत्यविद्या में तो वह अप्रतिम आचार्यत्व ही प्राप्त कर लेती है। दिनानुदिन शारीरिक वृद्धि को प्राप्त करती हुई वह दमयन्ती सौन्दर्य की अधिष्ठातृस्वरूपा ही दिखाई देने लगने लगती है। उसे देखकर काम अपने धनुष की प्रत्यञ्चा और बाण को प्रतिदिन सज्जित करता रहता है। अब तो युवकों की आँखें भी उसे देखकर उसी में उलझकर रह जाती हैं।

यह सब सुन प्रसन्नता के साथ राजा नल हंस से कहता है कि उसकी वयःसंधि का वर्णन करो। तब हंस कहता है कि हे देव ! जिसके समस्त अंग ही सर्वदेवमय हैं उसका वर्णन भला मैं क्या कर सकता हूँ। उसका मुखमण्डल निरन्तर कान्तिसुधा बरसाता रहता है, उसके स्तनयुगल स्वर्णकमल के कलिका की शोभा को धारण करने वाले हैं, वाणी मन्द मुस्कान से मण्डित है, दृष्टि भ्रूविलासों से रमणीय है और कटाक्ष अत्यन्त ही सकाम हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे विधाता ने उसे नक्षत्रमयी बनाया हो। समस्त युवकों के मानसमयूर का निवासस्थान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथा समस्त विश्व के सौन्दर्य की अधिष्ठात्री उस दमयन्ती का वृत्तान्त अत्यन्त ही आश्चर्योत्पादक है। अधिक क्या कहा जाय, भगवान् शिव की आराधना करने वाला तथा अप्रतिम पुण्य प्राप्त किया हुआ वह पुरुष निश्चय ही धन्य होगा, जो उस दुर्लभ कन्यारत्न को प्राप्त करेगा। इस प्रकार कहकर वह हंस मौन हो गया॥

चतुर्थ उच्छ्वास

उस गृहीत हंस की बातें सुन आश्चर्यचकित राजा नल रोमाञ्चित होता हुआ उत्कण्ठित हो अनुमान करता है कि—प्राय: यह वही सुन्दरी है, जिसके विषय में पथिकमुख से मैंने सुना था। फिर कुछ विचार कर हँसते हुए हंस से कहता है कि आज का दिन मेरे लिए अतीव मंगलमय है, आपकी सूक्तियों ने मुझे अपूर्व तृप्ति प्रदान की है। अब नित्यक्रिया का समय नजदीक है, अतएव मैं दैनिक नित्यकर्म करने जा रहा हूँ, आप भी इस मनोरम सरोवर में यथेच्छ विहार करें। साथ ही वनपालिका को भी यह आदेश देकर कि 'जब ये सरोवर-विहार और कमलक्रीड़ा कर लें तो इन्हें मेरे पास विश्रामगोष्ठी में तुम ले आना' चला जाता है। हंस भी 'कृतकमलक्रीडा' आदि राजा की श्लेषमय वाणी का स्मरण कर यह अनुमान लगाता है कि अपने दरबार में राजा मुझे नियन्त्रित करना चाहता है, अत: वह कमलक्रीड़ा के पश्चात् परिजनों सहित वहाँ से उड़ जाता है।

आकाश में उड़ता हुआ वह हंससमुदाय शीघ्र ही विदर्भ देश के आभूषण-स्वरूप कुण्डिननगर में राजभवन के निकट कन्याओं के अन्त:पुर के उद्यानस्थित क्रीड़ासरोवर में उतर जाता है। तट पर विहार कर रही दमयन्ती की सखियाँ तत्काल ही इसकी सूचना अपनी प्रिय सखी को देती हैं, फलस्वरूप वह स्वयं वहाँ आकर अपने चञ्चल चरणों तथा चञ्चुओं से कमलकन्दों पर प्रहार कर रहे हंसों को पकड़ने का उन्हें आदेश देती है और स्वयं भी उनका पीछा करती हुई उस विस्मयकारी राजहंस को पकड़ लेती है। पकड़ा गया वह राजहंस भी उसके अनिन्द्य सौन्दर्य को देखकर निश्चित कर लेता है कि यही दमयन्ती है, अतएव उसे सर्वविध सुखिनी और चिरायु होने का आशीर्वाद देते हुए कहता है कि विधि के शिल्पविधान के अद्वितीय निदर्शन नल को पतिरूप में प्राप्त करो।

दमयन्ती उस हंस की संस्कृतनिष्ठ वाणी सुनकर आश्चर्यचकित हो उठती है और सोचने लगती है कि 'यह हंस सम्भवत: उसी नल के विषय में कह रहा है, जिसके बारे में गौरी महोत्सव में जाते समय मैंने उस पथिक के मुख से सुना था।' फिर वह पूछती है कि 'यह नल कौन है, जिसके बारे में तुम कह रहे हो।' उसके पूछने पर वह हंस भी 'यदि आप सुनना ही चाहती हैं तो सावधान हो, मन को एकाग्र कर सुनें' कहते हुए इस प्रकार कहना आरम्भ कर देता है—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निषध देश के स्वामी सम्राट् वीरसेन, जिनकी शरच्चन्द्रिकासदृश यशोराशिरूप राजहंसों ने चारो समुद्रों के तटों को चिह्नित कर रक्खा है, की पत्नी का नाम रूपवती है। सन्तानहीन होने के कारण उस राजदम्पती ने सन्तानकामना से एक बार भगवान् शिव की उपासना की, जिसके परिणामस्वरूप रूपवती गर्भवती हुई और यथासमय एक दिन प्रातः शुभ पुण्य मुहूर्त में उसने एक अलौकिक तेजःसम्पन्न बालक को जन्म दिया। अत्यन्त प्रफुल्ल वातावरण में सूतकदिवस व्यतीत हो जाने पर ब्राह्मणों द्वारा उसका 'नल' नाम प्रतिष्ठित किया गया। अत्यन्त स्नेहमय वातावरण में पालित होता हुआ वह बालक थोड़े ही दिनों में समस्त विद्याओं का ज्ञाता हो गया। इसी के साथ-साथ उसका शरीर भी तरुणाई से युक्त हो गया और उसका मुखमण्डल चन्द्रमा से स्पर्धा करने लगा, आँखें नीलकमलों को तिरस्कृत करने वालीं और उसके कन्धे मतवाले साँड़ों को चुनौती देने वाले हो गये। रूप, गुण, शील, अवस्था, विद्या आदि में उसी की बराबरी करने वाला श्रुतशीलनामक एक ब्राह्मण युवक उसका मित्र है, जो उसके लिए द्वितीय प्राण के समान है। श्रुतशील के पिता सालङ्कायन राजा वीरसेन के प्रधान अमात्य हैं।

एक दिन राजा वीरसेन मन्त्री सालङ्कायनसहित अपनीराजसभा में बैठे थे, जब नल ने सभा में प्रवेश कर अपने पिता को तो प्रणाम किया, लेकिन सालङ्कायन को नहीं किया। उसके इस अशिष्ट आचरण से क्रुद्ध हो सालङ्कायन ने श्लेषबहुल पदावली में उससे कहा कि 'राजकुमार ! राजहंस होते हुए भी अहंस्वरूप मोहवान मत बनो। यौवन को प्राप्त कर विनय का परित्याग मत करो। जड़ता का परित्याग कर स्वभावतः मधुर बनो। स्त्रियों, श्री तथा दुष्ट सहायकों पर विश्वास मत करो....'आदि-आदि। राजा वीरसेन ने भी अभिन्नहृदय सालङ्कायन की बातों का समर्थन किया। तदनन्तर उसी सभा में यह निश्चय हुआ कि नल का राज्याभिषेक कर दिया जाय।

तत्पश्चात् सर्वविध अनुकूल मुहूर्त में गगनमण्डल से अवतरित मुनियों द्वारा नल का राज्याभिषेक किया गया। उपस्थित ऋषियों ने बहुविध आशीर्वाद प्रदान किया, देवताओं ने पुष्पवृष्टि की और सम्पूर्ण नगर आनन्द में आकण्ठ निमग्न हो गया। इसी प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर एक दिन राजा वीरसेन उसे गोद में बिठाकर 'आयुष्मन् ! तुम्हें देखा, पूछा, आलिङ्गित किया, क्षमा किया तथा अभद्र बातें भी कीं। अब मेरे लिए जटाभार ही उचित है, हार नहीं। सहायता के लिए साधु विद्वान् ही अच्छे हैं, बान्धव नहीं।' इस प्रकार कहते हुए वानप्रस्थ का सेवन करने के लिए रानी रूपवतीसहित सहसा वन को प्रस्थान कर गये। मन्त्री सालङ्कायन ने भी अपने पुत्र श्रुतशील को महाराज नल को समर्पित कर वन के लिए प्रस्थित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सपत्नीक राजा का अनुगमन किया। पितृतुल्य राजा के अचानक चले जाने पर प्रजा ने करुण क्रन्दन किया और राजा नल भी शोकमग्न हो बहुविध विलाप करने लगे। तदनन्तर उनके परिजनवर्ग विविध प्रकार के मनोविनोद द्वारा पितृवियोगजन्य उनके दुःख को समाप्त करने की चेष्टा करने लगे। इस प्रकार कालक्षय से क्लेश के कुछ कम हो जाने पर इस समय भगवान् शंकर के चरणकमलों में ध्यान लगा कर महाराज नल प्रजापालन में प्रवृत्त हैं।

पञ्चम उच्छ्वास

निषधनरेश नल का वर्णन कर जब गृहीत राजहंस मौन हो गया तो दमयन्ती ने निश्चित कर लिया कि यह वही पथिक-वर्णित नल है। फलतः उसके अन्तस्तल में नल के प्रति स्वाभाविक अनुराग उल्लसित हो उठा और वह कामव्यथा से पीड़ित होने लगी। उसकी अवस्था का अनुमान कर परिहासशीला नाम वाली उसकी अभिन्नहृदया सखी उसपर कटाक्ष करती हुई हंस से बोली—'महानुभाव ! आपने तो ऐसी कथा कह सुनाई, जिससे हमलोगों को तृप्ति ही नहीं हो रही; कृपया पुनः इस कथासुधा का हमें पान कराइये।' तब हंस ने पुनः नल की विशेषताओं का वर्णन कर 'सुन्दरि ! इस संसार-सागर में दो ही स्त्री-पुरुष रत्नस्वरूप उत्पन्न हुए हैं—स्त्रियों में आप अर्थात् दमयन्ती और पुरुषों में वह अर्थात् नल। अतः तुम सर्वथा उस पृथ्वीपति के ही योग्य हो।' उसकी कल्याणकामना करते हुए वहाँ से जाने को उद्यत हो गया। तब शीघ्रता से परिहासशीला ने नल के हृदय में भी दमयन्ती के प्रति अनुराग उत्पन्न करने की हंस से प्रार्थना की। इतने में ही दमयन्ती उससे पुनः आने का निवेदन करती हुई अपने गले का हार उतार कर उपहारस्वरूप नल को देने हेतु हंस के गले में डाल दिया, जिसे हंस यह कहते हुए कि 'सुन्दरि ! इस मुक्तावली के बहाने से ही नल के सामने आपके वर्णन का भार मैंने अंगीकार कर लिया है। स्वीकार कर परिजनों के साथ वहाँ से उड़ गया। हंस के प्रस्थान कर जाने के पश्चात् दमयन्ती के उत्सुकता की भी कोई सीमा न रही और नल का ही चिन्तन करती हुई वह खाना, पीना, बोलना, सोना आदि सबकुछ भूल गई। उसकी समस्त व्यथा का उपचार एकमात्र नलकथा ही रह गई।

इधर हंसमण्डली भी वनों, पर्वतों, नगरों आदि का अतिक्रमण करती हुई कुछ दिनों में ही पुनः निषध नगरी के उपवन में पहुँच कर स्वच्छन्दतापूर्वक बिहरण करने लगी। उनमें से एक हंसी को क्रीड़ासरोवर के मध्य कमलों में विचरण करते देख सरोवरपालिका ने राजा को सूचित किया। अभी सरोवररक्षिका निवेदन कर ही रही थी कि वनपालिका उस हंस को पकड़ी हुई आई और उसे राजा के सामने रखकर निवेदन किया कि महाराज ! उत्कण्ठा उत्पन्न करने वाला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह वही हंस है। रक्षिकाओं को विदा कर सामने स्थित हंस का प्रसन्नतापूर्वक निर्निमेष नजरों से राजा ने स्वागत करते हुए स्नेहपूर्वक उसे उठाते हुए उसका स्पर्श किया। हंस भी अपने एक चरण से गले से दमयन्तीप्रदत्त हार को निकालकर राजा को देते हुए दमयन्ती की बाहुलता के समान ही उसे अपने गले में धारण करने का निवेदन करते हुए बहुत देर तक दमयन्तीविषयक वार्तालाप करता हुआ वहीं बैठा रहा। प्रहरसमाप्तिसूचक नगाड़े की ध्वनि सुनकर राजा राजहंस को बिना अनुमति प्राप्त किये न जाने को कहकर दैनिक कृत्य करने के लिए उठ खड़ा हुआ। पुनः प्रातःकाल राजा से अनुमति प्राप्त कर वह हंस अपने यथेष्ट स्थान को प्रस्थान कर गया और उसी समय से राजा नल दक्षिण दिग्वासियों के प्रति स्वाभाविक अनुराग से सम्पन्न हो गया।

इधर दमयन्ती भी हंसदर्शन के दिन से ही कामव्यथा से व्यथित रहने लगी। शृंगार रस की राजधानी दमयन्ती की यह दशा देख विदर्भनरेश ने मन्त्रियों से परामर्श कर उसका स्वयंवर आयोजित करने का निश्चय किया और सूचना देने हेतु दूतों को सभी दिशाओं में प्रेषित कर दिया। उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान करने वाले वृद्ध ब्राह्मण से स्वयं दमयन्ती ने भी श्लेषयुक्त वाणी में नल को अवश्य लाने का निवेदन किया।

विदर्भनरेश भीम के निमन्त्रण और दमयन्ती के आग्रह पर राजा नल पूर्णतया तैयार हो कर मित्रमन्त्री श्रुतशील के साथ विदर्भ के लिए प्रस्थान किया। अनेक गिरिग्रामों, नदियों, वनों को पार कर विन्ध्य की रमणीयता का दर्शन करते हुए राजा नल ने नर्मदा के तट पर पड़ाव डाला। तदनन्तर नल और श्रुतशील अभी वार्तालाप कर ही रहे थे कि उनकी दृष्टि आकाश से उतरते हुए एक दिव्य पुरुष पर पड़ी। उस व्यक्ति ने सामने आकर नल से निवेदन किया कि इन्द्र आदि लोकपाल आ रहे हैं, अतएव उनके स्वागत के लिए आप तैयार हो जायें। यह सुन घबड़ाहट के साथ उठकर नल आगे बढ़े ही थे कि कानों पर पारिजातमञ्जरी धारण किये इन्द्र अन्य लोकपालों के साथ पूर्व दिशा से सामने आ गये। यथोचित स्वागत के पश्चात् इन्द्र से संकेतित कुबेर ने राजा को बताया कि वे लोग भी दमयन्ती-स्वयंवर में भाग लेने जा रहे हैं, किन्तु अपने मुख से ही अपनी याचकता का वर्णन करना अच्छा नहीं लगता, अतएव हमलोगों ने अपनी कार्यसिद्धि के लिए दूतरूप में आपको नियुक्त करने का निर्णय किया है। इसलिए आपसे निवेदन है कि आप हमलोगों की ओर से दमयन्ती के पास जाकर निवेदन करें कि वह किसी लोकपाल का ही पतिरूप में चयन करे। साथ ही यह भी कहा कि हमलोगों के प्रभाव से आपको वहाँ कोई न देख सकेगा, जबकि आप सबको देखने में समर्थ होंगे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुझे मन से नल ने देवताओं का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, लेकिन मनोरथ-सिद्धि में आये इस आकस्मिक विघ्न ने उसके अन्तस्तल को व्यग्र कर दिया। उस परिस्थिति में श्रुतशील ने उसे धैर्य धारण कराते हुए कहा कि वह निश्चिन्त रहे, दमयन्ती उसे छोड़ लोकपालों का वरण नहीं करेगी। अपनी अनुपम सुन्दरता द्वारा देवताओं को तिरस्कृत करने की तो दमयन्ती की आदत-सी पड़ चुकी है, अतः वह अपने प्रयत्न से विरत न हो।

श्रुतशील के बहुविध सान्त्वना-वचनों से भी नल के मन को शान्ति न प्राप्त हो सकी और उसे साथ लिये ही वह वन के रमणीय भाग में एकान्त विहार के लिए निकल गया। वहाँ एक सरोवर में किरातकामिनियों को स्नान का आनन्द लेते हुए बहुत देर तक जब वह देखता रहा, तब श्रुतशील ने वहाँ से उसका ध्यान हटाने के लिए रेवा की तटीय सुषमा से उसका साक्षात्कार कराते हुए उनका वर्णन करना आरम्भ कर दिया। इतने में ही सन्ध्या का आगमन हो गया, अतः परिजनों के साथ राजा शिविर को लौट आया, लेकिन विषादवश दैनिक कृत्यों का सम्पादन भी भूल गया। इस परिस्थिति में उसे दैनिक कृत्य का स्मरण कराने के लिए किन्नरयुगल गान करने लगे, जिसे सुनकर राजा ने सन्ध्यावन्दनादि दैनिक कृत्य सम्पन्न किया और भगवान् शंकर के चरणकमलों की आराधना करते हुए वीणा की सुमधुर ध्वनि से मनोविनोद करते हुए रात्रि को वहीं व्यतीत किया॥

षष्ठ उच्छ्वास

अन्धकाराच्छन्न आकाश के उषःकालीन कान्ति से प्रकाशित होते ही प्राभातिक भेरी एवं वैतालिकों की पाठध्वनि के कारण निद्रा से प्रबुद्ध राजा ने दैनिक कार्यों को सम्पन्न कर भगवान् भुवनभास्कर को प्रणाम किया और भगवान् नारायण की स्तुति कर विजयी गजेन्द्र पर आरूढ़ हो सेनासहित वहाँ से प्रस्थान कर गया। समुद्र की दूसरी राजपत्नी मेकलपुत्री नर्मदा को पार कर मार्गस्थित वनों की प्राकृतिक छटा का दर्शन करते हुए एवं मन्त्रीमित्र श्रुतशील से उनकी जानकारी प्राप्त करते हुए वे विन्ध्यवन में जा पहुँचे। मार्ग में सन्ध्या होने पर सेनासहित सभी विश्राम करते और प्रातः फिर यात्रा प्रारम्भ हो जाती। इस प्रकार यात्रा करते हुए वे एक ऐसे स्थल पर जा पहुँचे, जहाँ उत्कण्ठित राजहंसों का समूह कमलों को चूम रहा था। वहीं पर एक वृक्ष की छाया में कोई श्रान्त पथिक विश्राम कर रहा था। उस पथिक ने राजा को देखते ही बड़े ही मनोरम शब्दों में उसे आशीर्वाद प्रदान किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजा द्वारा उसका और सामने प्रवाहित नदी का परिचय पूछने पर उस पथिक ने स्वयं को पुष्कराक्षनामधारी वार्तिक (सन्देशवाहक) बताते हुए निवेदन किया कि यह तापी नदी है। साथ ही यह भी बताया कि वह दमयन्ती के द्वारा राजा का समाचार ज्ञात करने के लिए भेजा गया है और जिस मार्ग से राजा कुण्डिन नगर पहुँचेंगे, उसी ओर की खिड़की पर बैठी हुई दमयन्ती उनकी प्रतीक्षा कर रही है। आगे पुष्कराक्ष ने यह भी बताया कि दमयन्ती ने आपके पास एक किन्नरयुगल को भी भेजा है, जो यहाँ से थोड़ी ही दूर पर पयोष्णी नदी के किनारे ठहरा हुआ आपको मिलेगा। इस प्रकार निवेदन करते हुए ही उसने भूर्जपत्र पर लिखित दमयन्ती की पत्रिका को निकालकर राजा को समर्पित कर दिया। नल ने अत्यन्त उत्सुकता के साथ उसे खोलकर पढ़ा, जो इस प्रकार था—'हे नैषध ! नल होकर भी तुम मेरे लिए अनलतुल्य हो गये हो। मानरूप सागर से परिपूर्ण अबलाओं के मानस को इस प्रकार ग्रहण करना तुम जैसों का धर्म नहीं है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि दैव भी दुर्बलों को ही सताता है। कामदेव भी अपने बाणों का प्रयोग जिस प्रकार निर्बलों और अबलाओं पर करता है, उस प्रकार बलवानों पर नहीं करता। न जाने कब कुण्डिनपुर की भूमि स्थलकमलसदृश आपके चरणों से अलंकृत होगी।"

पत्रिका द्वारा अभिव्यक्त की गई मञ्जुल जिज्ञासा से परिपूर्ण मधुर प्रवाहयुक्त सुधाधारा से नल का हृदय पूर्णतःआप्लावित हो उठा। प्रियतमा के दूत को देख उसके प्रसन्नता की सीमा न रही। फिर मन्द मुस्कान के साथ उसने पुष्कराक्ष से कहा—'पुष्कराक्ष ! यह राजपुत्री सर्वथा प्रशंसनीय है।' तदनन्तर दमयन्ती से सम्बन्धित उत्कण्ठा-भरे कई प्रश्न उसने दूत से किये और पुष्कराक्ष भी अपने उत्तरों से उसकी उत्कण्ठा को और भी उद्दीप्त करता रहा। दोपहर हो जाने पर पयोष्णी के किनारे पड़ाव डाल दिया गया। वहीं पर मुनियों के निर्देश पर राजा ने पयोष्णी में स्नान कर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया और दैनिक कृत्य करने के पश्चात् पुष्कराक्ष-सूचित किन्नरमिथुन को देखने की लालसा से परिजनों के साथ विचरण करने लगा। इसी क्रम में उसने एक पर्वत की शिलासन्धि पर अपने प्रियतम को निमित्त कर गान करती हुई किन्नरी को देखा। पुष्कराक्ष ने आगे बढ़ उस किन्नर से—'सुन्दरक ! अपनी प्रिया का मुख देखने में ही लगे रहोगे। देखते नहीं, महाराज नल तुम्हारी आँखों के सामने हैं।' कहते हुए सुन्दरक एवं विहङ्गवागुरिका नामक दमयन्तीप्रेषित उस किन्नरमिथुन से राजा का परिचय कराया।

किन्नरयुगल ने राजा को प्रणाम किया और सुन्दरक ने दमयन्तीप्रदत्त एक नामाङ्कित अंगूठी और लाल रंग का दिव्य वस्त्रयुगल राजा को समर्पित किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्नेहपूर्वक उसे स्वीकार करते हुए राजा ने कहा कि "सुन्दरक! मैं तो देवी के नाम से ही मुद्रित और प्रेम से ही आच्छादित हूँ। यह मुद्रिका तथा वस्त्रयुगल तो पुनरुक्त मात्र ही हैं। आप जैसे प्रेमी परिजनों को मेरे पास भेज कर देवी ने मुझे क्या नहीं समर्पित कर दिया है।"

उनके इस प्रकार वार्तालाप करते हुए ही सन्ध्याकाल का आगमन हो गया। हाथियों के समूह की तरह अँगड़ाइयाँ लेता हुआ अन्धकार उमड़ पड़ा। अतः परिजनसहित राजा शिविर को लौट आया। सायंकालिक कृत्य के पश्चात् सबने स्वादिष्ट भोजन का आनन्द लिया और विश्राम के समय किन्नरयुगल ने अपने मधुर संगीत से वातावरण को अत्यन्त ही स्पृहणीय बना दिया। वैतालिक गीत की सराहना कर रहे थे और किन्नरयुवक गीत की समानता दमयन्ती के साथ कर रहा था; लेकिन किन्नरयुवती ने उससे असहमति व्यक्त कर गीत में स्थित अनेक दोषों तथा दमयन्ती में स्थित अनेक गुणों का उद्भावन किया और अन्त में दमयन्ती की तुलना वेदविद्या के साथ की। इसी प्रकार उत्कण्ठापूर्ण वातावरण में रात्रि व्यतीत हो गई।

प्रातः दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होने के पश्चात् पुनः यात्रा प्रारम्भ हो गई और पुष्कराक्ष के साथ यात्रा करते राजा ने एक विशाल हाथी को देखा, जो रमण की इच्छा से अपनी प्रिया की चाटुकारिता कर रहा था। 'अनुरागी दम्पतियों के क्रीडारस में विघ्न नहीं डालना चाहिए।' यह सोच राजा ने उसे छेड़ा तो नहीं, लेकिन स्वयं भी कामविह्वल हो गया। मार्ग में इसी प्रकार के और भी उद्दीपक दृश्य उसे दिखलाई पड़े और विन्ध्याटवी के मनोरम दृश्यों का अवलोकन करते हुए जब वे आगे बढ़े तो उन्होंने देखा कि गाँवों के उच्चतम स्थानों पर चढ़कर ललनायें उन्हें देखने को उतावली हो रही थीं। इसी समय विनोद-पूर्ण वार्तालाप करते हुए पुष्कराक्ष ने राजा को सूचित किया कि वे कुण्डिनपुर पहुँच गये हैं।

यह सुन राजा ने पड़ाव डालने का आदेश दिया और विदर्भा तथा वरदा के संगम पर सेना ठहर गई। सैनिकों के पादप्रहार से उठी धूलि ने नल के आगमन की सूचना कुण्डिनपुरवासियों को भी दे दिया। शिविर में सैनिकों तथा परिजनों सहित राजा के सुव्यवस्थित हो जाने के कुछ ही समय पश्चात् कुण्डिन नगर से थोड़ी ही दूर पर दण्डपाशिक की आवाज सुनाई पड़ी—"निषध देश के सम्राट् आ गये। अतः राजमार्गों को चन्दनजल से सिञ्चित किया जाय, पुष्पयुक्त तोरण-पताकायें फहरा दी जायें, घरों के प्राङ्गणों में धान्ययुक्त जलपूर्ण कुम्भ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थापित किये जायें, बहुविध आभूषणों से अलंकृत नगरवधुयें मङ्गलगान करती हुईं बाहर निकलें तथा कुलवधुयें भगवान् शिव की कृपा से देवलोक से अवतरित कामसदृश महाराज नल के दर्शनों से स्वयं को कृतार्थ करें ॥

सप्तम उच्छ्वास

उच्च स्वर में दण्डपाशिक की उद्घोषणा के मध्य ही स्वर्णनिर्मित जंजीर धारण किये एक वृद्ध प्रतिहार ने आकर नल को प्रणाम कर निवेदन किया कि 'मंगलवेषधारी पुष्प-फल-अक्षत से परिपूर्ण स्वर्णपात्रों को हाथों में लेकर मन्त्रपाठ करते ब्राह्मण, कुण्डिनपुर के नागरिक एवं नगरवधुयें श्रीमान् के दर्शनार्थ द्वार पर प्रतीक्षा में खड़े हैं। विदर्भनरेश भी श्रीमान् के दर्शनार्थ यहीं आ रहे हैं और उनके साथ आ रहे वन्दीजनों का आपके गुणगान से समन्वित कोलाहल भी यहीं से सुनाई दे रहा है।

यह सुनते ही राजा नल ने तत्काल ही आगे बढ़कर विदर्भनरेश को स्वागत के साथ लाने के लिए दौवारिक को आदिष्ट किया, जिसका दौवारिक ने पूरी तन्मयता से पालन किया। थोड़ी दूर पर ही एक चञ्चल घोड़े पर आते भूपाल भीम दृष्टि-गोचर हुए, जिन्हें देख नल भी सामन्तों के साथ स्वागतार्थ आगे बढ़े। एक-दूसरे पर दृष्टि पड़ते ही प्रसन्नता से दोनों ने एक-दूसरे का आलिङ्गन किया और कुशल-प्रश्न के पश्चात् जब दोनों ही मणिमय सिंहासन पर विराजमान हो गये तो विदर्भनरेश ने राजा नल से—"आज दक्षिण दिशा धन्य हो गई। हमारे महान् पुण्यों के फलस्वरूप ही आपका यहाँ आगमन हुआ है। इससे हमारा जीवन श्लाघनीय हो गया और संसारचक्र में मेरा भ्रमण करना भी सफल हो गया।" कहते हुए राजा नल का अतिथि सत्कार करने के पश्चात् उपहार के रूप में हाथियों, घोड़ों, मणिराशियों, वारांगनाओं को समर्पित करते हुए आसमुद्रान्त पृथ्वी के साथ-साथ सम्पत्तिसहित स्वयं को भी समर्पित कर दिया। महाराज भीम की नम्रता एवं आत्मसमर्पण से नल मुग्ध हो उठे एवं उपहारों की अपेक्षा उनसे मिलन को ही अपने लिए ज्यादा महत्त्वपूर्ण बताया। कुछ समय पश्चात् सन्तुष्ट राजा भीम वापस राजभवन लौट गये। तत्पश्चात् दमयन्ती द्वारा प्रेषित कुबड़ी तथा वामनी दासियाँ बहुविध उपहारों के साथ प्रविष्ट हुईं, जिनसे उपहारों को स्वीकार कर कुशल-प्रश्न के अनन्तर अपने द्वारा प्रदत्त विविध उपहारों से सन्तुष्ट कर उन्हें राजा नल ने वापस भेज दिया। परिचारिकाओं के चले जाने के पश्चात् पर्वतक नामक बौने के साथ पुष्कराक्ष और किन्नरयुगल को भी बहुविध उपहारों से अलंकृत कर राजा ने उन्हें दमयन्ती के पास भेज दिया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतने में ही मध्याह्नकाल उपस्थित हो गया, अतः राजा नल आह्निक कृत्य सम्पन्न कर भोजन करने जा ही रहे थे कि बाहर कोलाहल सुनाई पड़ा। पूछने पर दौवारिक से पता चला कि देवी दमयन्ती द्वारा प्रेषित रसोइये सैनिकों आदि को सुस्वादु भोजन करा रहे हैं और देवी ने आपके लिए भी स्वयं अपने हाथों से बनाकर सुस्वादु भोजन भेजा है। प्रिया के हाथ का बनाया भोजन करते हुए दमयन्ती के पाचन-कौशल की राजा ने बहुविध प्रशंसा की। भोजन पूर्ण कर लेने के बाद भी राजा अतृप्त-से ही बने रहे। तत्पश्चात् विश्रामकक्ष में प्रासङ्गिक मनोविनोद चल ही रहा था कि दमयन्ती द्वारा पूर्णतया सुसज्जित एवं अलंकृत पर्वतक ने प्रवेश कर बताया कि—महाराज ! यहाँ से जाने के पश्चात् स्वर्ग से भी मनोरम मार्गों एवं मार्गस्थित चौराहों को पार कर सुन्दर भवनों को देखता हुआ जब मैं राजभवन पहुँचा तो उसकी अलौकिक सम्पन्नता देखकर दंग रह गया। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे रत्नों का तो वह खजाना ही है। फिर दमयन्ती का वर्णन करता हुआ वह बोला—

"महाराज ! उस बाला के निर्माण में तो सृष्टिकर्ता ने अपना समस्त कौशल ही लगा दिया है। आपके दूत के रूप में मेरा आगमन जानकर उनके प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। अत्यधिक आदर-सत्कार के साथ उसके सम्मुख ही मुझे बैठाया गया। कुशल-प्रश्न के अनन्तर आप द्वारा प्रेषित उपहार को मैंने उन्हें समर्पित किया, जिसे अत्यन्त उत्सुकता के साथ उन्होंने स्वीकार कर लिया। वार्तालाप के प्रसंग में पुष्कराक्ष ने जब यह कहा कि—'देवि ! यद्यपि महाराज नलः पूर्णरूपेण आपमें ही अनुरक्त हैं, फिर भी इन्द्र आदि लोकपालों के दूत बनकर उन्हीं में से किसी को वरण करने का आपसे निवेदन करने के लिए यहाँ आये हैं।' और उसके इस कथन का जब मैंने भी समर्थन किया तो वे अत्यधिक व्यग्र हो उठीं। चिन्ता से उनका मुख म्लान हो गया। फिर जब मैं चलने को उद्यत हुआ तो भी वे मौन ही रहीं। सखियों के अनुरोध पर भी उन्होंने केवल हाथ उठाकर ही मुझे विदा दिया, मुख से कुछ न कह सकीं। उस विषण्णता की स्थिति में उन्होंने न तो मुझे आपके लिए कोई उपहार दिया, न कोई सन्देश कहा, न कुछ पूछ ही सकीं।"

दमयन्ती की स्थिति को जानकर राजा नल अत्यधिक चिन्तित हो उठा। इतने में ही वैतालिक ने सन्ध्याकाल के आगमन की सूचना दी। जब कुछ रात्रि व्यतीत हुई तो उत्कण्ठा से व्याकुल नल का मन काम के बाणों से जीर्ण होने लगा। इधर लोकपालों की आज्ञा उसकी मनोरथपूर्ति में सबसे बड़ी बाधिका बन रही थी। बहुविध सोच-विचार के पश्चात् लोकपालों की आज्ञा का पालन करना ही उसने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रेयस्कर समझा और इस निश्चय पर पहुँचने के उपरान्त इन्द्र के वर की महिमा से महाराज भीम के कैलास पर्वतसदृश भव्य एवं विशाल भवनों को पार करता हुआ विना किसी की दृष्टि में आये दमयन्ती के महल में पहुँच गया। वहाँ दमयन्ती की सखियाँ उसका मनोविनोद करने में व्यस्त थीं। दमयन्ती के सामने पहुँचकर उसने अपने स्वरूप को सर्वदृश्य बना लिया। इस प्रकार उसे वहाँ उपस्थित देख दमयन्ती तथा उसकी सखियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अनेक प्राकारों तथा रक्षकों से घिरे, पक्षियों के लिए भी दुष्प्रवेश्य उस अन्तःपुर में पुरुष का प्रवेश असामान्य बात तो थी ही। दमयन्ती उसे देखकर बार-बार यह सोचने लगी कि निश्चय ही वह युवती भाग्यशालिनी होगी, जिसके गले में यह युवक मुक्ता-मालासदृश अपनी बाहें डालेगा।

विहङ्गवागुरिका को पूर्व से ही पहचानने के कारण नल उससे बोला कि क्या तुम्हारी स्वामिनी का यही आचरण है कि किसी अभ्यागत का स्वागत वे आलाप से भी नहीं करतीं। तब प्रणाम करती हुई उसने कहा कि 'महाराज ऐसा न कहें। लज्जा से अवनतमुखी स्वामिनी ने श्रीमान् के चरणकमलों में अपने नेत्रकमल समर्पित कर काँपते हाथों की कंकण ध्वनि से ही आपका स्वागत कर दिया है तथा द्वारस्थित स्तनयुगलरूपी मंगलकलशों से युक्त हृदय में आपको स्थान भी दिया है। अतः आप जैसे अतिथि के लिए मेरी स्वामिनी ने सब कुछ समर्पित कर दिया है। कृपया इसके द्वारा समर्पित आसन पर आप बैठें। दूसरों के मुख से सुनकर पूर्व से ही आप दोनों एक-दूसरे से परिचित हैं और अब अन्योन्य दर्शन का लाभ उठावें। इस प्रकार कहने के पश्चात् दोनों ही सखियों द्वारा प्रदत्त दो आसनों पर बैठ गये। उत्सुकता से स्तब्ध एवं लज्जा से संकुचित दोनों के ही हृदय में एक-दूसरे पर दृष्टि पड़ने के साथ ही सभी रस उमड़ पड़े। सखियों के कहने पर स्वयं को अर्घ्य प्रदान करने के लिए उद्यत दमयन्ती को हँसते हुए नल ने रोक दिया और मन ही मन कुछ विचार करते हुए लोकपालों का आदेश अक्षरशः उससे सुना दिया।

नल द्वारा लोकपालों का आदेश सुनकर भी दमयन्ती कुछ मुस्कुराती हुई सखी प्रियंवदिका से जब इधर-उधर की बातें करने लगी तब राजा नल पुनः उसे इन्द्र का वरण करने से होने वाले स्वर्गसुख इत्यादि अलौकिक लाभों के बारे में समझाने लगा, जिसे सुनकर व्यग्र दमयन्ती ने निःश्वास छोड़ते हुए दूसरी ओर देखना प्रारम्भ कर दिया और उसका मुखकमल मलिनता को प्राप्त हो गया। इस स्थिति में प्रियंवदिका ने कहा—'महाराज! सुन लिया जो सुनना था, समझ लिया देवताओं का आदेश; किन्तु मेरी यह सखी स्वतन्त्र नहीं है। प्राणियों की प्रवृत्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथा निवृत्ति ईश्वरेच्छा के अधीन होती है, साथ ही कामिनिजनों का अनुराग विचारपूर्वक नहीं चलता। अनुराग-व्यवहार में कोई विशेष गुण कारण नहीं होते।'

इस तरह बहुविध उपाख्याननिपुण उस प्रियंवदिका के साथ तत्क्षणोचित हास्यसुधास्निग्ध, शठताशून्य, कर्कशतारहित और प्रियता से समन्वित बातें करता हुआ राजा अभी तृप्त भी नहीं हुआ था कि 'अन्तःपुर में अधिक समय तक ठहरना उचित नहीं है'—यह सोच कर चलने को उद्यत हो आसन से उठ खड़ा हुआ और प्रथमोत्थित लज्जा से अवनत सखियों सहित दमयन्ती के साथ दो-तीन कदम चलकर 'अब कष्ट न करें, सुखपूर्वक बैठिये'। कहकर राजा नल अपने शिविर को प्रस्थान कर गया।

यद्यपि अपने नेत्ररूपी प्याले से नल ने दमयन्ती के लावण्यमधु का पान कर लिया था, लेकिन उसको तृप्ति नहीं प्राप्त हुई थी, इसीलिए शिविर में आकर शिरीष-पुष्पसदृश कोमल शय्या भी उसे कँटीली अनुभव होने लगी और लेटे-लेटे ही वह सोचने लगा कि क्या वह रमणीय मुख पुनः दिखाई पड़ेगा ? वह दमयन्ती न तो उसकी आँखों से ओझल होती थी, न ही रात व्यतीत हो रही थी और न ही उसे नींद आ रही थी। काम उस पर प्रहार करने लगा था और एक-एक क्षण उसके लिए असह्य होने लगा था। ऐसी स्थिति में चिन्तातुर राजा नल ने आँखों को बन्द कर भगवान् शिव के चरणकमलों में अपने चित्त को समर्पित करते हुए किसी-किसी प्रकार जागती आँखों के साथ ही उस रात्रि को व्यतीत किया।।

नलचम्पू के प्रमुख पात्र : चरित्रोपस्थापन

नलचम्पू-निर्माण में महाकवि त्रिविक्रम भट्ट का उद्देश्य केवल अपना श्लेष-कौशल प्रदर्शित करना ही नहीं था, बल्कि आगत पात्रों की चारित्रिक चमत्कृतियों को अभिव्यक्ति भी प्रदान करना था। शब्दार्थचयन और पात्रों के चरित्रोपस्थापन में वे महाकवि बाण से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं। उनके पात्र देवदुर्लभ कीर्ति से मण्डित हैं और उनका उदात्त चरित्र निश्चय ही पूर्ण प्रभावोत्पादक है। सत्कीर्ति के अर्जन में तो ये पात्र निश्चित ही देवताओं से भी उच्च शिखर पर स्थित पाये जाते हैं, लेकिन कवि ने इन्हें देवताओं की श्रेणी में न रखकर मानव-मात्र ही बने रहने दिया है। उनके कतिपय प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण निम्नवत् है—

१. नल—त्रिविक्रमभट्टप्रणीत प्रकृत चम्पूकाव्य का नायक निषधनरेश नल है, जो धीरललित नायक की श्रेणी में आता है। वह इतना अधिक सौभाग्य-शाली है कि उसकी तुलना में इन्द्रादि लोकपालों का दिव्य वैभव भी भीमपुत्री नायिका दमयन्ती को तुच्छ दिखाई देने लगते हैं। किसी पथिक के मुख से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विदर्भाधिपति भीमपुत्री दमयन्ती का आंशिक वर्णन सुन कर राजा नल उसमें अनुरक्त हो जाता है, किन्तु उसकी यह आन्तरिक अनुरक्ति विषयासक्ति से समन्वित उद्दामता की बोधिक नहीं बन पाती। यद्यपि दमयन्ती-प्राप्ति हेतु मन ही मन वह व्यग्र हो उठता है और ऐसा हो भी क्यों न, क्योंकि जिस दमयन्ती की अलौकिक सुन्दरता तथा कीर्ति को सुनकर इन्द्रादि देवगण भी मोहित हो उसके प्राप्ति की कामना करने लगते हैं, उसकी ओर मनुष्य का आकृष्ट हो जाना कोई आश्चर्य-जनक बात भी नहीं है। लेकिन ऐसा होने मात्र मे ही किसी भी पुरुष का पुरुषोत्तमत्व प्रभावित हुआ नहीं माना जा सकता।

दमयन्ती के स्वयंवर का सन्देश प्राप्त कर जब राजा नल उसमें भाग लेने के लिए सपरिजन प्रस्थान करता है तब मार्ग में इन्द्रादि समस्त लोकपाल उसके पास आते हैं और दमयन्ती के पास अपना दूत बन कर जाने के लिए उससे निवेदन करते हैं। उस समय पुरुषोत्तम नल देवताओं की दौत्यदासता को स्वीकार तो कर लेता है, लेकिन उसकी मनःस्थिति विचलित हो जाती है। एक ओर काम अपने बाणों से उसे व्यथित कर रहा होता है तो दूसरी ओर लोकपालों की अनति-क्रमणीय आज्ञा उसे व्यग्र किये रहती है। कभी उसका मन मर्त्यमार्ग की ओर पलायित होता है तो कभी दिव्य मार्ग की ओर। इस प्रकार स्वार्थ और परार्थ के द्वन्द्व में अन्ततः परार्थ की ही विजय होती है और नल उन देवताओं की आज्ञा को शिरोधार्य कर उनके द्वारा प्रदत्त अदृश्यत्वरूप वरदान के प्रभाव से दमयन्ती के अन्तःपुर में प्रविष्ट होता है। वहाँ दमयन्ती को प्रत्यक्ष देखकर पुनः उसका मनुष्यत्व जागृत हो जाता है, लेकिन मनुष्य की उद्दाम स्वार्थ प्रवृत्ति पर विजय पाने में नल सफल हो जाता है और अपनी तरह ही दमयन्ती को भी पूर्णरूपेण अपने ही ऊपर अनुरक्त पाकर भी अपने कर्तव्य का पालन करता हुआ देवताओं का आदेश सुनाते हुए दमयन्ती से कह उठता है कि 'हे चंचलनेत्रे! लोकपालगण मेरे मुख से तुम्हारा चयन करना चाहते हैं।' इस प्रकार मानवसुलभ स्वार्थ की उद्दाम प्रवृत्ति भी उस महामानव से पराजित हो जाती है।

उसके अभूमिरसि मर्त्यलोकस्तोकसुखानाम् कहने से स्पष्ट है कि वह दमयन्ती को मर्त्यलोक के स्वल्प सुखों का पात्र नहीं मानता। यद्यपि स्वर्गलोक-निवासी देवताओं के लिए दुर्लभ दमयन्ती उसे सहज ही प्राप्त है, लेकिन उसका देवत्व मनुष्यत्व को पराभूत कर देता है और अपनी एकमात्र दमयन्ती-प्राप्तिरूप कामना का परित्याग कर देवकार्य को ही वह प्राथमिकता देता है। व्यथा की चरम अवस्था में भी धैर्य का वह परित्याग नहीं करता और यही गुण अन्ततः उसे देवताओं से भी उच्च पद पर प्रतिष्ठापित कर देते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार नलचम्पू काव्य का नायक नल सच्चे अर्थों में धीरललित नायक है, जिसे सर्वोत्कृष्ट गुणों से सम्पन्न होने के कारण महामानव की कोटि में स्थान देना किसी भी प्रकार से अनुपयुक्त नहीं है ।।

२. दमयन्ती—नलचम्पू काव्य में दमयन्ती मुग्धा नायिका है, जिसके चित्रण में महाकवि त्रिविक्रम का सर्वाधिक मनोयोग दृष्टिगोचर होता है। उसके चरित्र की अपेक्षा रूप के चित्रण में ही कवि ने अधिक कुशलता का परिचय दिया है। उसके चारित्रिक अंश को पथिक, हंस, किन्नरयुगल और नल ही मुख्यतः उपस्थापित करते हैं। बाल्यावस्था में ही वह समस्त विद्याओं में निपुणता प्राप्त कर लेती है। उसकी वीणावादन-प्रवीणता तथा कुलाचार के निर्वाह में निराकुलता को व्यक्त करते हुए कवि कहता है कि—

नैपुण्यं पुण्यकर्मारम्भेषु, जाता प्रवीणा वीणासु, निराकुला कुलाचारेषु ।

यह स्पष्ट है कि सुन्दरता में विश्वविश्रुत दमयन्ती के लायण्यसुधा का पान करने के लिए इन्द्रादि देवगण भी यद्यपि लालायित हैं; फिर भी वह स्वयं नल की अपेक्षा उससे पूर्व से ही पथिक के मुख से उसके बारे में सुनकर उसमें अनुरक्त हो चुकी है, फिर भी अपनी शालीनता का वह कभी भी परित्याग नहीं करती। यद्यपि नल के शब्दों में वह निखिल विश्व में सौन्दर्य की अधिष्ठात्री है एवं एकमात्र उसी पर अनुरक्त है। उसे कहीं सर्वदेवमयी बताया गया है तो कहीं नक्षत्रमयी। नल के समक्ष उसका वर्णन करते समय किन्नरयुगल उसकी तुलना वेदविद्या तक से करता है। वियोग की स्थिति में सकल दुरवस्थाओं के होते हुए भी नल के प्रति उसकी एकतानता अप्रतिहत ही बनी रहती है।

उसके वर्णन-क्रम में हंस भी दमयन्ती की पवित्रता को ही प्रधानता देता है और इसका प्रमाण नल को तब प्राप्त भी हो जाता है जब उसके द्वारा इन्द्र का आदेश सुनाये जाने पर भी व्यग्रता को प्रकट न करते हुए अपनी शालीनता की वह रक्षा करती है। अपनी अवस्था को व्यक्त करने के लिए वह केवल इतना ही कह पाती है कि—

वन्द्याः खलु गुरवो देवाश्च, बिभेमि तेभ्योऽहम् ।

इस प्रकार हम पाते हैं कि भीमसुता दमयन्ती की समस्त विद्याओं तथा कलाओं में प्रवीणता, एकमात्र नल में ही अनुरक्तता के साथ-साथ उसके पुण्यकर्मों की निपुणता तथा कुलाचारनिर्वाह उसकी पवित्रता को ही प्रकाशित करते हैं। यद्यपि वह पाककला में भी प्रवीण है, यह भी कवि ने स्पष्ट कर दिया है ।।

३. वीरसेन—प्रकृत चम्पूकाव्य के नायक नल के पिता वीरसेन अपनी धवल कीर्ति से समस्त सुरासुरों के कानों को भर देने वाले, कामसदृश कमनीय देहयष्टि वाले, अत्यन्त प्रभावशाली, निषध राज्य के रक्षक, महान् पराक्रमी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्राट् हैं; जिनकी मनोवृत्ति अतीव उदार तथा आज्ञा अनुल्लंघनीय है। परदाराओं में अनासक्त वीरसेन स्वभाव से विनम्र तथा शरणागतरक्षक हैं। इनकी पत्नी का नाम रूपवती है।

निस्सन्तान वीरसेन ने पत्नीसहित अपनी आराधना से भगवान् शिव को प्रसन्न कर अत्यन्त तेजःसम्पन्न यशस्वी पुत्र के रूप में नल को प्राप्त किया और राज्यभार सम्भालने के योग्य होने पर मन्त्रियों से परामर्श कर उसका राज्याभिषेक कर स्वयं सपत्नीक तपस्या हेतु वन को प्रस्थान कर गये। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राजा वीरसेन वर्णाश्रम धर्म के प्रबल पक्षधर हैं और यद्यपि अपने इकलौते पुत्र नल के प्रति उनका आकर्षण अत्यन्त प्रबल है, फिर भी पुत्रमोह के वशीभूत होकर नियमों को भङ्ग करना उन्हें कथमपि पसन्द नहीं है।

अपनी प्रजा में वे अत्यधिक लोकप्रिय हैं और इसीलिए जब वे तपस्या हेतु सपत्नीक वन को प्रस्थान करते हैं तो उनकी प्रजा रात्रि होने पर वियुक्त चक्रवाकी के समान करुण क्रन्दन करने लगती है। फिर भी वीरसेन का वन के लिए प्रस्थान कर जाना इस बात का प्रतीक है कि वे अत्यन्त ही दृढ़प्रतिज्ञ धर्मपालक और आश्रम-व्यवस्था के प्रबल पक्षधर हैं।

इस प्रकार हम पाते हैं कि वीरसेन बुद्धिवैभव और दूरदृष्टि से सर्वविध सम्पन्न थे; फिर भी कवि ने उनके चित्रण-क्रम में उनकी आश्रमोन्मुखता को ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

४. भीम—प्रकृत चम्पूकाव्य की नायिका दमयन्ती के पिता भीम विदर्भ देश के सम्राट् हैं। प्रियंगुमञ्जरी नाम की अत्यन्त रूपवती, सद्गुणसम्पन्न उनकी रानी है। बहुत समय तक निस्सन्तान रहने के पश्चात् रानी प्रियंगुमञ्जरी-सहित भगवान् शिव की आराधना कर उनकी प्रसन्नता के फलस्वरूप एकमात्र कन्यासन्तति के रूप में इस राजा भीम ने दमयन्ती को प्राप्त किया है।

स्वयं राजा भीम लावण्य की पुण्यप्रतिमा, इन्द्र के समान प्रख्यात, अतितेजस्वी, धीरता के आधार तथा वीरों में अग्रणी हैं। वे सर्वविध अतिथिवत्सल तथा एक अत्यन्त उदार सम्राट् हैं। विन्ध्याचल से लेकर समुद्रपर्यन्त समस्त दक्षिण देश के वे एकमात्र स्वामी हैं। उनकी उदारातिशयता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि नल के कुण्डिनपुर आगमन पर उससे मिलन के प्रसंग में उपहारसमर्पण-क्रम में पूर्ण सम्पदा-समन्वित अपने सम्पूर्ण राज्य के साथ-साथ स्वयं अपने-आपको भी वे उपहाररूप में नल को समर्पित कर देते हैं। इस प्रकार उदारता से परिपूर्ण उनका जीवन ही इस चम्पूकाव्य में सर्वाधिक दर्शनीय है। लेकिन उनके अन्य गुणों को भी तिरोहित न करते हुए एक स्थान पर उनकी विशेषताओं को इंगित करते हुए कवि कहता है कि—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यः श्रृंगारं जनयति नारीणां नारीणाम्, यः करोत्याश्रितजनस्य नवं धनं न बन्धनम्, यो गुणेषु रज्यते नरमणीनां न रमणीनाम् ।"

५. श्रुतिशील—निषधराज वीरसेन के प्रधानामात्य सालङ्कायन का पुत्र श्रुतिशील नल का अभिन्न मित्र और मन्त्री है। वह स्वभाव, अवस्था, विद्या, बुद्धि, वेष, कान्ति आदि समस्त गुणों में नल की समानता रखते हुए सर्वविध नल का सहायक भी है। नल की मित्रता के साथ-साथ वंशपरम्परया भी उसे मन्त्रीपद प्राप्त है और प्रजा की सुख-शान्ति तथा रक्षा का उत्तरदायित्व भी उसी पर है। जैसा कि कवि की निम्न उक्ति से स्पष्ट भी है—

मित्रं च मन्त्री च सुहृत्प्रियश्च विद्यावयःशीलगुणैः समानः ।
बभूव भूपस्य स तस्य विप्रो विश्वम्भराभारसहः सहायः ॥१-३८॥

दमयन्ती-स्वयंवर में भाग लेने के लिए कुण्डिनपुर की यात्रा के क्रम में वह भी राजा नल का सहचर रहता है और मार्गस्थित रमणीय दृश्यों का बड़ी ही कुशलता से वर्णन करते हुए सदा राजा नल का मनोविनोद करने में तत्पर रहता है। इन्द्रप्रमुख लोकपालों के दौत्यकार्य को अंगीकार करने के अनन्तर नल जब व्यग्र हो उठता है तो उसे धैर्य धारण कराने वाली श्रुतिशील की उक्तियाँ ही उसके व्यक्तित्व को प्रकाशित करती हैं। अपनी वाक्कुशलता के द्वारा वह विषाद और निर्वेद के अन्धकूप से राजा नल को परावर्तित कर पुनः प्रकाश की ओर लाता है। वह कहता है कि देवताओं की तो यह प्रकृति ही होती है कि अनिन्द्य सौन्दर्य को देख वे उसे पाने को अधीर हो जाते हैं, इसीलिए तो लक्ष्मी के लिए भी वे आपस में ही लड़ पड़े थे; लेकिन लक्ष्मी ने विष्णु के गले में ही वरमाला डाली थी। उसकी मान्यता है कि स्त्री जिस पुरुष को एक बार अपने हृदय में स्थान दे देती है, उसका फिर कभी त्याग नहीं करती। इसी क्रम में वह नल से कहता है कि आप अधीर न हों। निश्चित ही देवताओं को वञ्चित करती हुई दमयन्ती आपका ही वरण करेगी; क्योंकि देवताओं को वञ्चित करने की तो उसकी आदत-सी पड़ गई है।

महाकवि त्रिविक्रम ने श्रुतिशील के परिचयक्रम में प्रथम उच्छ्वास में उसके वंश और विद्या की जो सराहना की है वह निश्चय ही उपर्युक्त उक्तियों के द्वारा पुष्टि को प्राप्त होती है। राजसेवा में वह पूर्ण दक्ष है। इसीलिए दुर्व्यसनों से नल को हतोत्साहित करते समय भी उसकी उक्तियों में मधुरता का अद्भुत समावेश है। उन्मत्त शबरांगनाओं के जलविहार को नल द्वारा सातिशय देखा जाना उसे जरा भी रुचिकर नहीं प्रतीत होता; क्योंकि उसकी मान्यता है कि काम धीर पुरुषों को भी अधीर कर देता है। इसीलिए वह कहता है—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकलयति कलाकुशलं हसति शुचिं पण्डितं विनोदयति ।
अधरयति धीरपुरुषं क्षणेन मकरध्वजो देवः ॥ ५।६६ ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रुतिशील मन्त्री और मित्र के रूप में सदा सर्वदा परम प्रज्ञासम्पन्न, सहृदय मित्र तथा राजा नल का सर्वविध हितचिन्तक होने के साथ-साथ उत्तम चरित्र से समन्वित और व्यक्तित्व का भी धनी है ॥

६. प्रियंगुमञ्जरी—यह विदर्भनरेश महाराज भीम की राजमहिषी तथा दमयन्ती की जनयित्री है। यह राजा भीम के लिए शृंगार की आगार, रमणीयता की पताका, विकसित यौवनश्री से सम्पन्न और अन्तःपुर की कुलांगनाओं में प्रमुख है। चिरकाल तक सन्तान से रहित रहने के पश्चात् भगवान् शंकर की कृपा से उसे पुत्रप्राप्ति का दृढ़ विश्वास हो जाता है, किन्तु दमनक मुनि के मुख से जब वह कन्याप्राप्तिरूप वरदान को सुनती है तो उसका धैर्य जबाव देने लगता है। असन्तुष्ट प्रियंगुमञ्जरी अपनी श्लेषमयी उक्तियों से मुनि के लिए बहुविध उलाहनापूर्ण वचन बोलती हुई कह उठती है—अलमलमनेन कन्यावरप्रदानेन। पुनः अमर्ष की शान्ति हेतु मुनि से वह क्षमा भी माँगती है तथा बहुविध उपहारों के द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करने का प्रयत्न भी करती है।

इस प्रकार प्रियंगुमञ्जरी के चरित्र को महाकवि ने पूर्णतः स्वाभाविकता प्रदान की है। बलवती आशा के अचानक भग्न होने पर क्रोधोद्रेक का होना स्वाभाविक क्रिया है; लेकिन उसका वह क्रोध भी तात्कालिक ही है, चिरस्थायी नहीं। तत्काल ही वह मुनि के समक्ष श्रद्धावनत हो जाती है। इस प्रकार कुलधर्म की वह अच्छी ज्ञाता सिद्ध होती है। दमनक मुनि के प्रस्थान के समय उसके द्वारा प्रदर्शित विनम्रता उसके चरित्र को और भी उन्नत बना देती है ॥

७. प्रियंवदिका—नल के लिए श्रुतिशील के समान ही प्रियंवदिका दमयन्ती के लिए सुख-दुःख में सदा उसका साथ देने वाली, अत्यन्त शिष्ट और मृदुभाषिणी उसकी प्रिय सखी है। यद्यपि इसका दर्शन काव्य में बहुत ही स्वल्प समय के लिए होता है, परन्तु उतने समय में ही यह अपने प्रत्युत्पन्नमतित्व की अमिट छाप पाठकों के अन्तःपटल पर सदा के लिए छोड़ जाती है। दमयन्ती के अन्तःपुर में इन्द्रादि का आदेश सुनाकर और उसका समर्थन कर राजा नल जब मौन धारण कर लेता है तो दमयन्ती अत्यन्त स्तब्ध और विषण्ण हो जाती है। उस स्थिति में अपनी वाक्चातुरी से दमयन्ती का प्रतिनिधित्व करती हुई प्रियंवदिका राजा से कहती है कि राजकुमारी स्वतन्त्र नहीं है। उसकी मान्यता है कि प्राणियों की प्रवृत्ति और निवृत्ति ईश्वरेच्छा के अधीन होती है। विशेषकर किसी के प्रति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्रियों के अनुराग का कोई विशेष कारण तो उपस्थापित किया ही नहीं जा सकता। इसमें किसी विशेष गुण का बन्धन भी कारण रूप में आवश्यक नहीं होता। किसी भी किसी के प्रति अनुराग हो सकता है। अपने कथन को पुष्टि प्रदान करती का हुई प्रमाणरूप में सप्तम उच्छ्वास में वह कहती है—

भवति हृदयहारी क्वापि कस्यापि कश्चिन्न खलु गुणविशेषः प्रेमबन्धप्रयोगे।
किसलयति वनान्ते कोकिलालापरम्ये विकसति न वसन्ते मालती कोऽत्र हेतुः॥

इस प्रकार प्रियंवदिका नलचम्पू काव्य में अपने वाक्चातुर्यता में श्रुतिशील के पश्चात् सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। उसके इन्हीं गुणों को देखते हुए कवि ने उसके लिए 'प्रस्तावपण्डिता' एवं 'अनेकविधोपाख्याननिपुणा' जैसे विशेषणों का प्रयोग किया है, जिसकी वह नितान्त अधिकारिणी भी है। बौद्धिक विशेषता तो उसमें कूट-कूटकर भरी है॥

6. हंस—नलचम्पू काव्य में हंस की उपस्थिति दूत के रूप में दृष्टिगोचर होती है, जो कि प्राचीन काल से ही चली आ रही मनुष्येतर प्राणियों को दूत बनाने की प्रथा के सर्वथा अनुकूल है। ऋग्वेद में सरमा नाम की देवशुनी, वाल्मीकीय रामायण में हनुमान् और कालिदासकृत मेघदूत में मेघ इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं, फिर नल-दमयन्ती कथा से तो हंस का सम्बन्ध अत्यन्त प्रसिद्ध है ही.

नलचम्पू काव्य का हंस अपने स्वरूपगत वैशिष्ट्य की अपेक्षा दौत्यकार्यरूप चारित्रिक विशेषता के लिए ही अधिक प्रसिद्ध है। दमयन्ती के अनुसार वह निष्कारण-वत्सल, निरपेक्ष पक्षपाती, स्वभावतः सुजन और कृत्रिमतारहित स्नेह-सम्पन्न है। उसके लिए हंस के स्वाभाविक प्रेम, सौहार्द्र एवं मैत्री की कोई समानता नहीं है। सज्जनों का वह निमित्तरहित बन्धु है। चन्द्र और चन्दन की तरह उसकी शीतलता निर्बाध है। समर्पित एवं अंगीकृत कार्य को वह पूर्ण तत्परता के साथ पूर्ण करता है। इसीलिए दमयन्ती अपने हार को नल को समर्पित करने के लिए जब उसके गले में पहना देती है तो वह सहर्ष कहता है—

"सुन्दरि! सोऽयं स्कन्धीकृतो मया मुक्तावलीच्छलेन तस्य पुरो भवद्वर्णनभारः॥" अर्थात् हे सुन्दरि! इस मुक्तावली के बहाने से राजा नल के सामने आपके वर्णन का कार्यभार मैंने अपने कन्धे पर ले लिया॥

इतना ही नहीं, वह हंस नल के लिए भी निष्कारणवत्सल तथा अनिमित्त मित्र बन जाता है। आकाशवाणी के परिप्रेक्ष्य में जब नल उससे दमयन्तीविषयक बहुविध प्रश्न करता है तो वह कुछ इस प्रकार से उत्तर देता है कि नल की दमयन्तीविषयक उत्कण्ठा और भी बलवती हो उठती है और अन्ततः वह हंस नल-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दमयन्ती दोनों का ही सम्पर्कसूत्र बन जाता है। इस प्रकार वह हंस नल के लिए जितना प्रिय है, उससे कुछ कम दमयन्ती के लिए भी नहीं है। दोनों के लिए ही वह समान रूप से पवित्र, सर्वदा स्मरणीय तथा आह्लादकारक है।

नलचम्पू : काव्यगत विशेषतायें

विश्वविश्रुत चम्पूकाव्य 'नलचम्पू' के प्रणेता महाकवि त्रिविक्रम भट्ट की प्रकृति स्वाभाविक रूप से रसानुगुण प्रतीत होती है, फिर भी अपने समकालीन शैली के प्रभाव से वे अपने-आपको अलग नहीं रख पाये हैं और चमत्कारवादी बनने के लिए विवश हो गये-से प्रतीत होते हैं। व्यक्तिगत रूप से प्रसाद गुण अभीष्ट होने के कारण यद्यपि वाल्मीकि और व्यास उनके आदर्श हैं, लेकिन महाकवि बाण के शब्दजाल और सुबन्धु के श्लेषमय पदविन्यास की ओर आकर्षित होने से स्वयं को वे रोक नहीं पाते हैं। तत्कालीन वाङ्मय में काव्य-रचना की नानाविध पद्धतियाँ उनके सामने थीं। एक ओर महाकवि दण्डी के पदलालित्य का आकर्षण था तो दूसरी ओर महाकवि भारवि और माघ की कृत्रिम शैली भी अत्यधिक लोकप्रिय हो चुकी थी। तत्कालीन साहित्य जगत् को ऐसे काव्यों की ही आवश्यकता थी, जो चमत्कार का प्रदर्शन करने वाले हों। रसप्रधान एवं भावप्रधान काव्यों को उस समय प्राथमिकता नहीं प्राप्त थी। इन्हीं परिस्थितियों में त्रिविक्रम भट्ट का उदय हुआ था, अतः उनकी रचना का भी चमत्कारप्रधान सूक्तियों और पाण्डित्यप्रधान पदबन्धों से अलंकृत होना स्वाभाविक ही था। इसीलिए तत्कालीन काव्यजगत् की धारणा को ही अभिव्यक्ति देते हुए कवि को यह कहने को बाध्य होना पड़ा कि—

"किं कवेस्तेन काव्येन किं काण्डेन धनुष्मता।
परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः॥"

युगीय प्रवृत्ति को अपनी काव्यरचना में प्रधानता देते हुए भी त्रिविक्रम भट्ट के लिए रस उपेक्षणीय नहीं था; बल्कि रस और बन्ध दोनों ही उनके लिए अभिनन्दनीय थे। सुरस तथा बद्ध काव्य का सर्जन ही उन्हें अभीष्ट था। इसीलिए उन्होंने नलचम्पू के रूप में एक ऐसे काव्य की रचना की, जो रसान्तर-प्रौढ़ थी, जिसके रस का सारस्वत प्रवाह देवकोटि के विद्वानों को ही उपलब्ध था। अपने काव्य के वैशिष्ट्य को इङ्गित करते हुए वे कहते हैं कि—

अगाधान्तःपरिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरम्।
वन्दे रसान्तरप्रौढं स्रोतः सारस्वतं महत्॥

अर्थगुरुता एवं मृदुतापूर्ण श्लेषमय सूक्तियों का तो नलचम्पू आकर ही है। काव्यप्रणयन में त्रिविक्रम का लक्ष्य ही है प्रसाद, कान्ति एवं श्लेषनामक गुण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथा शब्दश्लेष और अर्थश्लेष अलंकारों से अलंकृत पदकदम्बों का नवीनतम प्रयोग; क्योंकि इन गुणों एवं अलंकारों से अलंकृत भारती ही सतत् प्रसन्नता प्रदान करने वाली, कान्तिशील तथा विविध आश्लेष कथाओं में प्रवीण रमणी के समान आनन्द प्रदान करने वाली होती है। इसी को उद्घोषित करते हुए वे कहते भी हैं—

प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यो नानाश्लेषविचक्षणाः।
भवन्ति कस्यचित् पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः॥

अपनी इसी धारणा को वे साकार स्वरूप भी प्रदान करते हैं। यही कारण है कि नलचम्पू में प्रयुक्त श्लेष की समता प्रदर्शित करने वाला अन्य कोई भी काव्य संस्कृत वाङ्मय में दृष्टिगोचर नहीं होता। यद्यपि कवि ने अत्यन्त सरल शैली में ही सभङ्ग श्लिष्ट रचना की है, लेकिन पदविन्यास पर दृष्टि समधिक केन्द्रित होने के कारण कहीं-कहीं वह दुरूह भी बन गई है। इसके परिमार्जन के लिए वे पाठकों से यह निवेदन भी कहते हैं कि भङ्गश्लेष में वाणी का क्लिष्ट हो जाना असामान्य नहीं है, अतः इससे उन्हें उद्विग्न नहीं होना चाहिए—

"वाचः काठिन्यमायान्ति भङ्गश्लेषे विशेषतः।
नोद्वेगस्तत्र कर्तव्यो यस्मान्नैको रसः कवेः॥"

फिर भी क्लिष्टता को अपनी रचना में उन्होंने प्रमुख स्थान नहीं ग्रहण करने दिया है; क्योंकि सभङ्ग श्लेष को भी सरल एवं सरस बनाकर अभिव्यक्ति देने में वे पूर्णतः समर्थ हैं। छोटे से छोटे पद्यों में भी श्लेष की चमत्कारपूर्ण योजना करने में वे सर्वथा सफल रहे हैं। उदाहरणार्थ छठे उच्छ्वास का निम्न श्लोक स्पृहणीय है—

पर्वतभेदि पवित्रं जैत्रं नरकस्य बहुमतङ्गहनम्।
हरिमिव हरिमिव हरिमिव वहति पयः पश्यत पयोष्णी॥"

त्रिविक्रम की सर्वातिशायी विशेषता यह है कि कल्पनाप्रवणता में उनकी कोई समानता नहीं है और अपने इसी अलौकिक गुण के कारण 'यामुनत्रिविक्रम' की उपाधि से वे विभूषित भी हो चुके हैं। आकाश में गंगा की सत्ता तो प्रसिद्ध है, किन्तु यमुना के साथ उसका संगम प्रदर्शित करने का श्रेय त्रिविक्रम की कल्पना-प्रवणता को ही जाता है। उनके काव्य में दो-दो, चार-चार पंक्तियों पर पदप्रयोग की परिवर्तित होती पद्धतियाँ पाठकों को साश्चर्य अनुरञ्जित कर देती हैं। सर्वाधिक आश्चर्यजनक तो यह है कि श्लिष्ट शब्दों के प्रयोग-प्रकार को भी अतीव तीव्रता के साथ इनकी रचना में परिवर्तित किया गया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलंकारशास्त्रियों ने श्लेष के आठ भेद माने हैं; लेकिन यह निर्विवाद है कि अलंकारवैविध्य चमत्कारवैविध्य से ही प्रादुर्भूत होता है; क्योंकि चमत्कार ही अलंकार का मूल है। इस परिप्रेक्ष्य में परिसंख्या तथा विरोध का तो त्रिविक्रम को कविसम्राट् ही कहा जा सकता है। उनके अनुप्रास तथा यमक के प्रयोग की छटा भी मुग्ध करने वाली है। उदाहरणार्थ द्वितीय उच्छ्वास की निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

यः शृङ्गारं जनयति नारीणां नारीणाम्, यः करोत्याश्रितस्य नवं धनं न बन्धनम्, यो गुणेषु रज्यते नरमणीनां न रमणीणाम्, यस्य च नमस्याहारेषु श्रूयते नलोपाख्यानं, न लोषाख्यानम् ॥"

यद्यपि उनके काव्य का मुख्य रस विप्रलम्भ शृंगार है, लेकिन वीर, रौद्र, करुण, भयानक तथा हास्य रसों की योजना भी दर्शनीय है। फिर भी अपने मुख्य रस विप्रलम्भ को सुसज्जित करने के लिए उद्दीपन सामग्रियों का यथास्थान रोचकतम प्रयोग कवि ने किया है। उनके काव्य में प्रकृति एवं कथोपकथन के प्रस्तुतीकरण के अवसर पर तो सर्वत्र उद्दीपन सामग्री के ही प्रायः दर्शन होते हैं।

वस्तुचित्रण में भी कवि को पर्याप्त सफलता मिली है। अपनी अलौकिक कल्पना-तूलिका से स्वाभाविक वस्तुओं पर भी वे ऐसा चित्र खींचने में सफल रहे हैं जिससे कि वे परम्परागत कवियों के वर्ण्य विषय न होकर सर्वथा नूतन प्रतीत होते हैं। आचार्य कुन्तक के मतानुसार स्वभावोक्ति के वर्णन में सर्वातिशायी विशेषता तब परिलक्षित होती है, जब वर्ण्य विषय का विवेचन इस प्रकार किया जाय, जिससे कि वह पाठकों के अन्तस्तल में यथावत् निविष्ट हो जाय। त्रिविक्रम इस प्रकार के चित्रण में सिद्धहस्त दिखाई देते हैं। प्रथम उच्छ्वास में सूकरवर्णन, षष्ठ उच्छ्वास में मुनिवर्णन एवं ग्राम्य स्त्रियों का चित्रण पूर्णतया सजीव, मनोहारी और स्वाभाविकता से ओत-प्रोत दिखाई देता है।

भावात्मक स्थलों को भी सुसज्जित करने में त्रिविक्रम ने सिद्धहस्तता का प्रदर्शन किया है। देवदूत बन कर नल जब दमयन्ती के अन्तःपुर में प्रवेश करता है तो पक्षियों के लिए भी दुष्प्रवेश्य उस महल में उसको प्रविष्ट देखकर अद्भुत रसावेश से दमयन्ती स्तब्ध रह जाती है। फिर उसे मौन पाकर किन्नरी विहंगवागुरिका से जब उसके प्रति नल कटाक्ष करता है तो विहंगवागुरिका का उत्तर भावाभिव्यक्ति का जीता-जागता प्रमाण है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि श्लेषयुक्त रमणीयतर चित्रण शैली काव्य जगत् को त्रिविक्रम की मौलिक देन है। यद्यपि वर्णन की प्रत्येक स्थिति में श्लेष की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राथमिकता कवि को अभीष्ट है, तथापि वर्ण्य वस्तु की सरसता को अप्राथमिक होने देना भी उन्हें अभीष्ट नहीं है। उनके द्वारा किया गया रस, वस्तु और अलंकार का एक ही साथ अद्भुत सन्निवेश चम्पू जगत् में उन्हें सर्वोच्च शिखर पर स्थापित करने के लिए पर्याप्त है ।।

नलचम्पू : सामाजिक विधान

किसी भी रचना को निबद्ध करते समय कवि का यह पूर्ण प्रयत्न होता है कि अपनी रचना में जिस समय की कथा का वह निरूपण कर रहा है, उस समय का वातावरण स्पष्टतया परिलक्षित हो। आशय यह कि कथा के समय के साथ लेखक अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है, जिसका परिणाम यह सामने आता है कि अतीत के दर्पण में वर्तमान सामने उपस्थित हो जाता है। त्रिविक्रम भट्ट ने भी अपनी रचना 'नलचम्पू' के माध्यम से राष्ट्रकूटों की हिन्दू संस्कृति और तत्कालीन समाज का विशद् स्वरूप उपस्थापित किया है। लोकचित्रण के क्रम में प्रायः यह देखा जाता है कि विशेषकर संस्कृतकवियों ने राज्याश्रित रहने के कारण सामान्य वर्ग को प्रायः उपेक्षित ही रखा है, लेकिन त्रिविक्रम इस मामले में सर्वथा अलग दिखाई देते हैं। उन्होंने अपने काव्य में सामान्य वर्ग का भरपूर चित्रण कर एक सर्वथा नवीन कार्य किया है।

नलचम्पू को देखने से स्पष्ट है कि उस समय आर्यावर्त में राजतन्त्र था, जो कि वंशानुगत था। युवा राजकुमार जब राज्यभार सम्भालने की योग्यता अर्जित कर लेता था तो राजा मौहूर्तिकों द्वारा निर्दिष्ट शुभ मुहूर्त में स्वर्णकलश में संगृहीत मन्दाकिनी, गोदावरी, नर्मदा आदि पवित्र नदियों के जल से मन्त्री के साथ स्वयं अपने हाथों से उसका अभिषेक करता था और ऋषि-मुनि-पुरोहित आदि वैदिक मन्त्रों का उच्चारण करते हुए उसे आशीर्वाद प्रदान करते थे। इस प्रकार राजा अपने उत्तराधिकारी को राज्यभार सौंपकर अपने जीवन की सान्ध्य वेला में तपस्या हेतु सपत्नीक वन की राह लेता था। उस समय वानप्रस्थ जीवन पूर्णरूपेण प्रचलन में था। राजा के साथ-साथ उसका मन्त्री भी उसका अनुगमन करता था और इस प्रकार नये राजा के मन्त्री पद पर भी पुराने मन्त्री का पुत्र प्रतिष्ठित हो जाता था।

मन्त्री अधिकांशतः ब्राह्मण वर्ग के ही होते थे। यद्यपि यह पद भी वंशानुगत था, लेकिन योग्यता आवश्यक थी। मन्त्री प्रायः विद्या, वय, शील और गुण में राजा के समान ही होता था। राज्य-कार्य का सञ्चालन प्रायः मन्त्री ही करता था, लेकिन इसके साथ ही साथ वह राजा का अभिन्न सहायक भी होता था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजा अथवा राजपुत्र की स्वेच्छाचारिता पर वह अपने रोष को यदा-कदा प्रकट भी किया करता था। युवराज को राजा बनाने के लिए प्रशिक्षित करने का कार्य भी मन्त्री ही करता था। इन सबके होते हुए भी सफल मन्त्री वही होता था, जो राजा का प्रियपात्र होता था।

ब्राह्मण सत्यवादी, निश्छल व्यवहार वाले तथा पूर्ण तेजस्वी होते थे। अपनी तेजस्विता नष्ट होने के भय से वे राजकीय दक्षिणा तक नहीं ग्रहण करते थे। यज्ञ-विधि के वे पूर्ण ज्ञाता होते थे और मुख्यतः वेद का ही वे स्वाध्याय करते थे। युवावस्था में भी वे सदा शिर मुंडाते थे। कभी भी आधी क्षौरक्रिया नहीं करते थे।

राज्य की सुरक्षा के लिए सेना रहती थी, जिसका प्रधान राजा होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय स्थलसेना की ही प्रधानता थी; क्योंकि अन्य किसी सेना का संकेत भी नलचम्पू में नहीं किया गया है। चतुरंगिणी सेना में हाथी, घोड़े, रथ तथा पदातियों के अलग-अलग वर्ग थे और उनके मुख्य अस्त्र धनुष-बाण तथा तलवार होते थे। प्रयाणकाल में सैनिक प्रायः उन्मत्त हो जाते थे और तीर्थस्थलों, यज्ञस्थलों, यज्ञस्तम्भों, उद्यानों तथा वनों को भी वे नष्ट कर डालते थे। इसीलिए राजा को यह आदेश प्रसारित करना पड़ता था कि वे ऐसा अनर्थ न करें; अन्यथा देवमन्दिरों एवं ऋषियों के आश्रमों को भी लूटने तथा नष्ट करने में वे सैनिक पीछे नहीं रहते थे। राज्य में आखेट-सेना का भी एक विभाग होता था और इसका भी प्रधान राजा ही होता था। शिकार के समय कुत्तों का समूह भी शिकारियों के साथ रहता था।

नलचम्पू को देखने से ज्ञात होता है कि विवाह के लिए उस समय स्वयंवर प्रथा ही प्रचलित थी। एक आयोजित समारोह में राजकन्यायें स्वयंवर विधि से मनोनुकूल पति का वरण किया करती थीं, जिसका आयोजन पुत्री की योग्य अवस्था को देखकर मन्त्रियों के सलाह से राजा स्वयं करता था। कभी-कभी ये स्वयंवर मात्र परम्परा का निर्वाह करने के लिए भी आयोजित किये जाते थे। स्वयंवर में राजाओं को निमंत्रित करने हेतु पुत्री का पिता राजा बड़े ही चतुर दूतों को उपहारों के साथ भेजता था। राजा लोग दल-बल के सहित पूरी तैयारी से स्वयंवर में भाग लेने हेतु आते थे; क्योंकि उस समय प्रायः झगड़े की आशंका बनी रहती थी। आगत समस्त अभ्यर्थी राजाओं तथा उनके परिजनों के भोजन, निवास आदि की व्यवस्था कन्या का पिता किया करता था। विशिष्ट अतिथि के लिए राजमार्गों को चन्दन-जल या सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित किया जाता था, पताकायें फहराई जातीं थीं, घरों के आगे मंगलकलश रखे जाते थे तथा नगरवधुयें पूर्णतया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलंकृत होकर मंगलद्रव्यों से थाल सजाकर मंगलगीत का गान करती थीं। स्वयंवर में स्वयं के चयन हेतु कन्या के पास सन्देश भिजवाने की भी प्रथा प्रचलित थी।

लोग अपनी योग्यता तथा अवसर के अनुकूल वेषभूषा धारण करते थे। नागरिकों में स्वच्छ वस्त्र धारण करने की प्रथा प्रचलित थी। राजा के आखेट पर जाते समय उसके पीछे चलने वाले शिकारी कार्दमिक रंग के कपड़ों से अपने बालों को बाँधते थे। अश्वारोही अत्यन्त चुस्त वस्त्र पहनते थे तथा कटिभाग में एक विशेष प्रकार की पेटी बाँधते थे। शिर पर पगड़ी बाँधने की प्रथा सामान्य थी। दरिद्र से दरिद्र व्यक्ति भी शिर के बालों को कपड़ा न रहने पर वृक्ष की छाल से ही बाँध लेता था। कुण्डल, हार, कंकण, अंगुलीयक मुख्य आभूषण थे। साधारण वस्त्रों के अतिरिक्त उच्च वर्गों या राजपरिवारों में चीनांशुक, पट्टांशुक या नेत्रसंज्ञक वस्त्रों का भी पर्याप्त प्रचलन था। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही त्रिपुण्ड्र का तिलक लगाते थे। स्त्रियों में सीमन्तमौक्तिक, काजल, मोतियों का हार, कानों में नवीन पल्लव, कस्तूरी से पत्ररचना आदि का प्रचलन था। किरात हाथियों का शिकार करते थे, अन्त: उनकी स्त्रियाँ गजमुक्ताहार धारण करती थीं, हाथियों का मदजल ही उनका अंगराग था, मयूरपिच्छगुच्छों से वे वेणियाँ सजाती थीं। ग्राम्य स्त्रियाँ कर्णिकार की मालाओं से अपनी वेणियाँ सजाती थीं। जौ, चावल या आटे में तज, अंगिया, बकुची आदि मिलाकर उबटन लगाती थीं, लाह का कंकण पहनती थीं और शरीर में हल्दी लगाती थीं।

चित्रकला की स्थिति अत्यन्त उन्नत थी और लोगों को चित्रकला का पर्याप्त ज्ञान था। भित्तियों पर चित्र बनाने की प्रथा व्यापक थी। लकड़ी की पट्टियों पर चित्र बनाकर घरों की सजावट की जाती थी।

संगीत कला पर विशेष ध्यान दिया जाता था। वीणा, मृदङ्ग, झाल तथा वंशी उस समय के मुख्य वाद्य थे। संगीत के नन्दयन्ती, वर्धमान, आसारितक, पाणिक आदि पारिभाषिक तथ्यों से लोग पूर्णतया परिचित थे तथा षड्ज, मध्यम, गान्धार, पञ्चम आदि स्वरों के प्रयोग में लोग दक्ष थे। ग्राम्य तरुणियाँ लौकिक संगीत का प्रयोग करती थीं, जबकि किन्नरों में शास्त्रीय संगीत का प्रचलन था।

उपासना में नित्य और नैमित्तिक दोनों ही विधियाँ शामिल थीं। सभी लोग त्रिकाल सन्ध्या करते थे। सूर्य की उपासना के पश्चात् ही इष्टदेव की उपासना की जाती थी। कार्तिकेय-पूजन की परम्परा खूब प्रचलित थी। कुमारी कन्यायें गौरी-पूजन करती थीं। शिवोपासकों की बहुलता थी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नैमित्तिक अनुष्ठानों में वृहत्तर यज्ञों का सम्पादन किया जाता था। दान देने की प्रथा जोरों पर थी। बलिवैश्वदेव, गोग्रास, ब्राह्मणभोजन तथा दीनों और अनाथों को भी भोजन कराने की प्रथा थी।

पाककला अत्यन्त उन्नत अवस्था में थी। भोजन में पेय, आस्वाद्य, आलेह्य तथा कवल्य—ये चार प्रकार के भोज्य पदार्थों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में होता था। दाक्षिणात्यों में मांस का प्रचलन नहीं था। भोजन के पश्चात् घृत की चिकनाहट समाप्त करने के लिए चन्दनरज का उपयोग किया जाता था और सबसे अन्त में ताम्बूल का प्रयोग किया जाता था।

नलचम्पू : भौगोलिक वर्णन

नलचम्पू के परिशीलन से हमें न केवल तात्कालिक सामाजिक, राजनीतिक स्थिति का; बल्कि भौगोलिक स्थितियों का भी पर्याप्त ज्ञान होता है। इसमें त्रिविक्रम भट्ट ने तत्कालीन ख्यातिप्राप्त विभिन्न जनपदों, नगरों, पर्वतों तथा नदियों का यथास्थान वर्णन किया है। दक्षिण देश से ज्यादा आत्मीयता होने के कारण उस भाग का कवि द्वारा सविस्तार वर्णन किया गया है। इनमें महाराष्ट्र जनपद, कुण्डिनपुर, निषध, विदर्भ, वरदा, गोदावरी, पयोष्णी, श्रीशैल, विन्ध्य आदि आते हैं। कतिपय स्थानों का नाम्ना संकेतमात्र ही किया गया है, जिनमें अंग, कंग, कलिंग, वंग, मगध आदि हैं। आर्यावर्त के नामग्रहण से तो वे मूल कथा प्रारम्भ ही करते हैं। उन उपर्युक्त वर्णित अथवा संकेतित स्थलों का विवरण उनकी स्थिति के ज्ञानार्थ आवश्यक है, जो इस प्रकार है—

१. आर्यावर्त—निस्सन्देह आर्यों की निवासभूमि आर्यावर्त के नाम से जानी जाती है, किन्तु इसकी सीमा-निर्धारण के क्रम में विभिन्न मत दृष्टिगोचर होते हैं। वैदिक काल का विहंगावलोकन करने से आर्यावर्त की कोई सीमारेखा तो नहीं प्राप्त होती, लेकिन आर्यों की निवासभूमि में मुख्य रूप से कुम्भा (काबुलनदी) क्रमु (कुर्रम), गोमती, सिन्धु, परुष्णी, शुतुद्री (शतलुज), वितस्ता (झेलम), सरस्वती, गंगा, यमुना आदि नदियों का प्रवाहित होना ज्ञात होता है। ब्राह्मणग्रन्थ कुरु तथा पञ्चाल को आर्यसंस्कृति का केन्द्र घोषित करते हैं। उपनिषदों में यह काशी तथा विदेह तक फैली दिखाई देती है। वशिष्ठधर्मसूत्र (१।८।९) के अनुसार इसकी सीमा पश्चिम में आदर्श (विनशन और सरस्वती नदी के लुप्त होने का स्थान) से लेकर पूर्व में कालकवन (प्रयाग) तक तथा दक्षिण में विन्ध्य से लेकर उत्तर में हिमालय तक निर्धारित है। मनुस्मृति के अनुसार पूर्व और पश्चिमी समुद्र तथा विन्ध्य और हिमालय का मध्यवर्ती भाग ही आर्यावर्त है। वे कहते भी हैं—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"आसमुद्रात्तु वै पूर्वात् आसमुद्राच्च पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥"

गुप्तकाल में इसकी प्रसिद्धि कुमारीद्वीप के नाम से दिखाई देती है। इस प्रकार हम पाते हैं कि इन समस्त विवरणों को देखने से भी आर्यावर्त के सम्बन्ध में स्पष्ट ज्ञान नहीं हो पाता। इनकी अपेक्षा पुराणों का ही मत ज्यादा स्पष्ट है। उनके अनुसार आर्यावर्त ही 'भारतवर्ष' था; अतः प्राचीन भारत की भौगोलिक सीमा ही आर्यावर्त की सीमा थी, ऐसा माना जा सकता है।

२. महाराष्ट्र—नलचम्पू में कवि ने महाराष्ट्र को वरदा के तट पर स्थित दर्शाया है, जिसके समीप ही विदर्भा नदी प्रवहमान थी।

३. विदर्भ—विदर्भ का वर्णन दक्षिण देश के रूप में किया गया है और कुण्डिनपुर तथा भोजकट को उसका भीतरी भाग कहा गया है। इसकी अवस्थिति नर्मदा से दक्षिण में थी।

४. मध्यदेश—हिमालय से लेकर विन्ध्याचल तथा प्रयाग से लेकर कुरुक्षेत्र तक के मध्यवर्ती भाग को मध्य देश के रूप में जाना जाता था।

५. कुण्डिननगर—यह विदर्भ देश की राजधानी थी। इसकी स्थिति का निर्देश करते हुए कवि कहता है कि—

देशानां दक्षिणो देशस्तत्र वैदर्भमण्डलम् ।
तत्रापि वरदातीरमण्डलं कुण्डिनं पुरम् ॥

तात्पर्य यह कि दक्षिण देश के विदर्भमण्डल में वरदा के तट से अलंकृत कुण्डिननगर था। अधिकांश लोगों के मतानुसर वर्तमान बरार के सुरवती जिले में स्थित कौण्डिन्यपुर ही तत्कालीन कुण्डिननगर था; लेकिन पं० राजेश्वर मनोहर काटे (नागपुर) के अनुसार विदर्भ के बुल्ढ़ाना जिले का लोणार नामक गाँव ही कुण्डिननगर था। लोणार में वरदा का एक स्रोत प्रवाहित है, जिसे श्रीगंगाभोगवती के नाम से जाना जाता है। कहा जाता है कि गंगा की तीन धाराओं में से यह धारा पृथ्वी के भीतर प्रवाहित है और एक बार इसने महाराज नन्द को वरदान दिया था, जिसके कारण इसका नाम वरदा पड़ा। यह धारा पृथ्वी के भीतर प्रयाग से लोणार तक प्रवाहित है। त्रिविक्रम ने भी वरदा के साथ कहीं भी नदी शब्द का प्रयोग नहीं किया है, जबकि विदर्भा का स्पष्टतया नदी के रूप में नामोल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि वरदा के उल्लेख से वे किसी नदी को न कहकर उस स्रोत को ही कहना इङ्गित करना चाहते थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोणार के समीप में एक अतिप्राचीन कुण्ड है, जिसकी उत्पत्ति ज्वालामुखी-आघात के कारण हुई बताई जाती है। साथ ही 'कुण्डिन' नाम भी 'कुण्ड' से सम्बन्धित प्रतीत होता है। यह भी लोणार के ही कुण्डिननगर होने का संकेत करता है।

त्रिविक्रम के अनुसार कुण्डिननगर के पश्चिम में भार्गव का आश्रम था। भार्गव का वह प्रसिद्ध आश्रम वर्तमान में भी लोणार के समीप भग्नावशेष के रूप में स्थित है, जिसकी छत पर बलराम और रुक्मी के युद्ध का दृश्य उत्कीर्ण है। रुक्म की बहन और श्रीकृष्ण की पत्नी रुक्मिणी भी कुण्डिनपुर की ही थीं। इस प्रकार हम देखते हैं कि समस्त बाह्य साक्ष्य लोणार के ही कुण्डिननगर होने का संकेत करते हैं।

६. निषधा नगरी—नलचम्पू के अनुसार आर्यावर्त में ही निषध जनपद में निषधा नगरी अवस्थित थी। लैसेन के अनुसार बरार के उत्तर-पश्चिम स्थित सतपुड़ा की पहाड़ियों में यह स्थित थी। 'एन्टिक्विटिज आफ काठियावाड एण्ड कच्छ' में वरगेस भी इसे मालवा के दक्षिण में ही अवस्थित मानते हैं। त्रिविक्रम इसे 'उदीच्य देश' के रूप में उल्लिखित करते हैं।

७. कुरुक्षेत्र—यह आर्यावर्त की प्राचीन पुण्यभूमि है। कुरु द्वारा कर्षण किये जाने के कारण इस क्षेत्र का नाम कुरुक्षेत्र पड़ा। वर्तमान थानेश्वर को ही कुरुक्षेत्र कहा जाता है। इसमें कुल दो सौ पैंसठ तीर्थस्थल हैं। इसका कुल परिमाण बारह योजन माना गया है—

"धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं द्वादशयोजनावधि ॥"

८. त्रिपुष्कर—अजमेर का समीपवती वर्तमान पुष्कर तीर्थ।

९- नासिक्य—महाराष्ट्र में मुम्बई के उत्तर-पूर्व में स्थित नासिकनामक प्रसिद्ध तीर्थ।

१०—प्रभासतीर्थ—द्वारका के पास अवस्थित एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान। यहाँ स्नान करने से राजयक्ष्मा रोग से मुक्ति मिल जाती है—ऐसा महाभारत में उल्लेख प्राप्त होता है।

११- नर्मदा—दमयन्ती-स्वयंवर में भाग लेने हेतु कुण्डिननगर की यात्रा के क्रम में राजा नल ने मेकलकन्या नदी को पार किया है। यह नर्मदा का ही नाम है और इस नाम से ही ग्रन्थ में यह वर्णित भी है। वर्तमान में यह अमरकंटक से उद्भूत होकर खम्भात की खाड़ी में विलीन होती दिखाई देती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२. वरदा—प्राय: लोग इसे ही आधुनिक वर्धा नदी के नाम से जानते हैं, लेकिन डॉ० उपाध्याय इससे सहमत नहीं हैं। कुछ लोग इसे श्रीगंगाभोगवती भी मानते हैं। नलचम्पूकार त्रिविक्रम को भी सम्भवत: वरदा नाम से नदी न होकर कोई स्रोत ही अभीष्ट है; क्योंकि नदीरूप में उन्होंने कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया है।

१३. गोदावरी—गोदावरी का उद्गमस्थल ब्रह्मगिरि है, जो महाराष्ट्र में नासिक से कुछ दूर त्र्यम्बक नामक गाँव के पास अवस्थित है।

१४. पयोष्णी—वर्तमान में यह 'पूर्णा' के नाम से जानी जाती है। तत्कालीन समय में यह कुण्डिनपुर के समीप से प्रवाहित होती थी।

१५. कावेरी—यह आज भी इसी नाम से जानी जाती है, जो दक्षिण की एक प्रसिद्ध नदी है। यह ब्रह्मगिरि पर्वत के चन्द्रतीर्थ नामक सोते से निकलती है।

१६. विदर्भा - यह इस समय खड्गपूर्णा के नाम से जानी जाती है, जो गोदावरी में विलीन होती है। तत्कालीन समय में यह भी कुण्डिनपुर के पास ही प्रवाहित थी और वरदा का सोता इसी में मिलता था।

१७. गन्धमादन—कालिकापुराण के अनुसार यह कैलास के दक्षिण में स्थित है। वराहपुराण तथा महाभारत के अनुसार बदरिकाश्रम इसी पर्वत पर स्थित है।

१८ श्रीशैल—यह दक्षिण में स्थित रमणीयता में कैलास से भी उत्कृष्ट कोई पर्वत था। ऐसा प्रतीत होता है कि विन्ध्य पर्वतशृंखला का ही यह कोई विशेष भाग रहा होगा।

१९. विन्ध्य—वर्तमान में भी यह इसी नाम से अभिहित है, जो भारत को उत्तर-दक्षिण के रूप में दो भागों में विभाजित करता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि नलचम्पू काव्य में भौगोलिक दृष्टि से बहुत से महत्त्वपूर्ण स्थानों, नदियों, पर्वतों आदि का कहीं विस्तार से और कहीं नाम्ना उल्लेख किया गया है, जिससे प्राचीन भारत की अवस्थिति का परिचय प्राप्त करने में पूर्ण सहायता प्राप्त होती है।

—श्रीनिवास शर्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयानुक्रमणिका

प्रथम उच्छ्वास १–१२१

१ मंगलाचरण १
२ सत्काव्य-प्रशंसा ५
३ दुर्जन-निन्दा तथा सज्जनप्रशंसा ८
४ वाल्मीकि, व्यास, गुणाढ्य आदि कवियों की प्रशंसा १२
५ कविवंश-परिचय १७
६ कवि का काव्यगत उद्देश्य २१
७ चम्पूकाव्य-प्रशंसा २३
८ आर्यावर्त-वर्णन २४
९ आर्यावर्त-निवासियों का सौख्यवर्णन २६
१० निषध जनपद तथा निषधा नगरी का वर्णन ३७
११ नल-वर्णन ४७
१२ नलमन्त्री श्रुतशील-वर्णन ६३
१३ नल का व्यावहारिक जीवन ६६
१४ वर्षा-वर्णन ७३
१५ आखेटवन के रक्षक का आगमन, सूकरकृत उपद्रव की सूचना तथा नल का आखेटार्थ प्रस्थान ७७
१६ आखेट-वर्णन ८९
१७ शालवृक्ष के नीचे विश्राम करते हुए नल के पास दक्षिणदेश के पथिक का आगमन १००
१८ वार्ताक्रम में पथिक द्वारा दक्षिणदिशा, कावेरी भूमि तथा एक युवती (दमयन्ती) का वर्णन १०३
१९ युवती (दमयन्ती) को देखकर पथिक की आश्चर्यानुभूति १०७
२० पथिक द्वारा युवती (दमयन्ती) के समक्ष उत्तर दिशा के युवक (नल) की प्रशंसा किये जाने की सूचना देना ११२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२१ नल का युवती (दमयन्ती) के प्रति आकर्षण तथा पथिक का प्रस्थान ११५
२२ कामविह्वल नल ११९

द्वितीय उच्छ्वास १२२–२०६

१ वर्षा ऋतु के पश्चात् शरद् ऋतु का आगमन-वर्णन १२२
२ किन्नरमिथुन द्वारा गाये गये तीन श्लोक १२५
३ गीतध्वनि से उत्कण्ठित राजा का वनविहार १२७
४ वनपालिका द्वारा वनसुषमा का वर्णन १३१
५ सर्वर्तुनिवास नामक वन का वर्णन, नलभ्रमण तथा हंसमण्डली का आगमन १४२
६ नल द्वारा हंस का पकड़ा जाना १४५
७ हंस द्वारा नल की स्तुति १४७
८ हंस की उक्ति पर नल को आश्चर्य १५०
९ नल द्वारा हंस के पकड़े जाने पर कुपित हंसी की श्लेषोक्ति १५२
१० नल द्वारा हंसी को प्रत्युत्तर १५५
११ हंस-हंसी का प्रणय-कलह १६०
१२ हंस द्वारा राजा नल तथा अनुकूल कलत्रसुख का वर्णन १६१
१३ आकाशवाणी द्वारा हंस के दूत बनने की नल को सूचना १६३
१४ नल द्वारा हंस से दमयन्तीविषयक प्रश्न १६४
१५ हंस द्वारा दक्षिणदेश का वर्णन १६६
१६ कुण्डिनपुर-वर्णन १७२
१७ कुण्डिनपुरनरेश भीम तथा रानी प्रियङ्गुमञ्जरी का वर्णन १८०
१८ सन्तान के लिए उत्कण्ठित प्रियङ्गुमञ्जरी द्वारा महेश्वर की आराधना १९३
१९ चन्द्रिका-वर्णन १९९

तृतीय उच्छ्वास २०७–२४६

१ प्रियङ्गुमञ्जरी को स्वप्न में भगवान् शिव का दर्शन २०७
२ दमनक मुनि के आगमन की सूचना २०९
३ प्रभातवर्णन तथा प्रियङ्गुमञ्जरी द्वारा सूर्य की स्तुति २१२
४ राजा भीम का भी स्वप्न में शिवदर्शन तथा पुरोहितों द्वारा स्वप्न-फल का कथन २१७
५ दमनक मुनि का आगमन २१९
६ राजा भीम द्वारा दमनक मुनि का अभिवादन तथा दमनक द्वारा राजा को होने वाले कन्या-लाभ का कथन २२६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७ मुनिवचन से असन्तुष्टा प्रियङ्गुमञ्जरी द्वारा श्लिष्ट कटूक्तियाँ कहना २३६
८ दमनक मुनि का प्रत्युत्तर २३९
९ प्रियङ्गुमञ्जरी द्वारा क्षमा-याचना तथा दमनकमुनि का प्रस्थान २४२
१० मध्याह्न-वर्णन २४५
११ राजा भीम के स्नान आहारदि का वर्णन २४८
१२ प्रियङ्गुमञ्जरी द्वारा गर्भधारण तथा दोहद-वर्णन २६२
१३ दमयन्ती की उत्पत्ति का वर्णन २६८
१४ दमयन्ती का शैशव-वर्णन २७२
१५ दमयन्ती की युवावस्था तथा सौन्दर्य का वर्णन २८१

चतुर्थ उच्छ्वास २८७–३६८

१ हंस द्वारा दमयन्ती का सौन्दर्य-वर्णन सुनकर नल का उत्कण्ठित होना २८७
२ हंस का विहार एवं प्रस्थान २९१
३ हंस का कुण्डिनपुर-गमन, दमयन्ती के समक्ष नल-वर्णन तथा दमयन्ती को रोमाञ्च २९३
४ हंस से दमयन्ती द्वारा नलविषयक प्रश्न तथा हंस द्वारा वीरसेन और रूपवती का वर्णन ३००
५ नलोत्पत्ति-वर्णन ३०८
६ नल की शिक्षा, तारुण्य तथा मन्त्री श्रुतशील का वर्णन ३१४
७ सालंकायन का नल के प्रति उपदेश ३२३
८ वीरसेन द्वारा सालंकायन के उपदेशों का समर्थन ३४५
९ नल का राज्याभिषेक-वर्णन ३४९
१० सपत्नीक राजा वीरसेन का वन-गमन ३६३
११ पिता के वियोग में पुत्र नल की उदासीनता ३६४

पञ्चम उच्छ्वास ३६९–५०६

१ हंस द्वारा नल-प्रशंसा सुनकर दमयन्ती की नलविषयिणी उत्कण्ठा ३६९
२ दमयन्ती द्वारा हंस के माध्यम से नल को हार-प्रेषण और हंस का प्रस्थान ३८१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३ दमयन्ती की नलविषयक उत्सुकता ३८४
४ राजहंसों का निषधोद्यान में अवतरण ३८६
५ सरोवररक्षिका द्वारा नल को राजहंसों के आगमन की सूचना ३८८
६ वनपालिका द्वारा नल के समीप हंस का समर्पण ३९१
७ हंस के द्वारा नल की स्तुति ३९२
८ हंस द्वारा दमयन्ती प्रदत्त हार-समर्पण तथा दमयन्ती-समाचार-वर्णन ३९६
९ हंस-नल-संवाद तथा हंस का नल-भवन से प्रस्थान ४०२
१० नल-विप्रलम्भ-वर्णन ४०६
११ दमयन्ती-विप्रलम्भ-वर्णन ४१०
१२ दमयन्ती-स्वयंवरोपक्रम ४१५
१३ उत्तर दिशा से आये दूत से नल का वृत्तान्त-श्रवण ४१८
१४ सेनासहित नल का विदर्भदेश के लिए प्रस्थान ४२७
१५ श्रुतशील द्वारा वन-शोभा का वर्णन ४३४
१६ नर्मदातट पर सैन्यावास ४४३
१७ इन्द्रादि लोकपालों का आगमन तथा नल की दौत्यकार्य में नियुक्ति ४५५
१८ लोकपालों का दूत बनने के कारण नल को चिन्ता तथा श्रुतशील द्वारा सान्त्वना ४६१
१९ स्वयंवर में नल की सफलताविषयक श्रुतशील की तर्कपूर्ण उक्ति ४७२
२० मनोविनोद के लिए गये नल द्वारा किरात-कामिनियों का दर्शन ४७९
२१ श्रुतशील द्वारा नल की मनोवृत्ति का परिवर्तन ४९४
२२ रेवातट-दर्शन ४९५
२३ संध्या-वर्णन ५००

षष्ठ उच्छ्वास ५०७–६२८

१ प्रभात-वर्णन ५०७
२ शिविर समेट कर अग्रिम यात्रा ५१०
३ नल द्वारा भगवान् सूर्य की स्तुति ५११
४ नल द्वारा नारायण की स्तुति ५१२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५ विन्ध्याटवी-वर्णन ५१८
६ विदर्भ-मार्ग में दमयन्तीदूत पुष्कराक्ष से नल-मिलन तथा दमयन्ती-प्रेषित प्रणयपत्रिका की प्राप्ति ५३७
७ नल-पुष्कराक्ष-संवाद ५४२
८ मध्याह्न-वर्णन ५४५
९ पयोष्णीतट पर सेना का विश्राम ५४९
१० पयोष्णीतटनिवासी मुनियों का वर्णन ५५२
११ मुनियों द्वारा राजा नल को आशीर्वाद-प्रदान ५६१
१२ किन्नरयुगल से राजा नल का मिलन ५६५
१३ सन्ध्या-वर्णन ५७५
१४ किन्नरमिथुन आदि के साथ राजा नल का शिविर की ओर प्रस्थान ५७६
१५ रात्रि मे शिविर में किन्नरमिथुन द्वारा दमयन्तीवर्णन-विषयक गीत तथा रात्रि-विश्राम ५७९
१६ प्रभात-वर्णन, आगे यात्रा के क्रम में मार्ग में प्रियानुरक्त हाथी का नल द्वारा अवलोकन ५९३
१७ हस्ती-वर्णन ५९७
१८ विन्ध्याचल-वर्णन ६०२
१९ विदर्भ नदी, विदर्भ की प्रजा तथा अग्रहारभूमि का वर्णन ६०९
२० ग्राम्य-स्त्रियों द्वारा नल का चित्राङ्कन ६११
२१ शाकवाटिका, उद्यान, वरदा-विदर्भा संगम का वर्णन ६१४
२२ सैन्य-शिविर-वर्णन ६१९
२३ कुण्डिनपुर में नल के आगमनसम्बन्धी हर्षोल्लास ६२३

सप्तम उच्छ्वास ६२९–७३८

१ नल के समीप विदर्भराज का आगमन तथा कुशलक्षेम पूछना ६२९
२ विदर्भनरेश द्वारा विनम्रता-प्रदर्शन ६३६
३ विदर्भनरेश द्वारा राजभवन-प्रस्थान तथा नल की उत्सुकता ६४२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

४ दमयन्ती द्वारा उपहारसहित कुबड़ी नारी और किरात कन्याओं को नल के पास भेजना ६४५
५ नल द्वारा उपहार-स्वीकृति, कुशलपृच्छानन्तर कन्याओं का दमयन्तीभवन प्रस्थान ६५१
६ नल द्वारा पर्वतक, पुष्कराक्ष तथा किन्नरमिथुन को दमयन्ती के पास भेजना ६५५
७ ससैन्य राजा नल का मध्याह्न भोजन-वर्णन ६५६
८ दमयन्ती के पास से पर्वतक का प्रत्यागमन ६७२
९ पर्वतक द्वारा कन्यकान्तःपुरसहित दमयन्ती का नल से वर्णन ६७३
१० पर्वतक द्वारा दमयन्ती की नल तथा देवदूतविषयक विषण्णता का वर्णन ६८६
११ सन्ध्या-वर्णन ६९५
१२ चन्द्रोदय-वर्णन ६९७
१३ इन्द्र के वरप्रभाव से अदृश्य नल का कन्यकान्तःपुर में दमयन्ती-प्रेक्षण तथा स्वागत-वर्णन ७०५
१४ कन्यान्तःपुर में नल का प्रत्यक्ष होना, ससखी दमयन्ती का विस्मय वर्णन ७१४
१५ नल-विहङ्गवागुरिका-सम्वाद ७१८
१६ नल-दमयन्ती का अन्योन्य-दर्शन ७२०
१७ दमयन्ती के समक्ष नल द्वारा इन्द्रसन्देश-कथन और दमयन्ती द्वारा देवताओं के प्रति अनिच्छा प्रकट करना ७२९
१८ नल द्वारा देव-वैभव का वर्णन ७३०
१९ दमयन्ती की विषण्णता, प्रियंवदिका द्वारा दमयन्ती की ओर से नल को प्रत्युत्तर ७३२
२० नल द्वारा दमयन्ती-भवन से प्रस्थान ७३५
२१ उत्कण्ठित नल का हरचरणसरोज का ध्यान करते हुए रात्रि-यापन ७३६

परिशिष्टम्

नलचम्पू काव्य में प्रयुक्त छन्द : लक्षण तथा श्लोकसंख्यायें ७३९–७४४

श्लोकानुक्रमणिका ७४५–७५१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

नल	: नायक, निषधनरेश वीरसेन के पुत्र ।
वीरसेन	: निषधराज, नायक नल के पिता ।
सालङ्कायन	: वीरसेन के मन्त्री ।
श्रुतशील	: नल-मन्त्री, सालङ्कायन-पुत्र ।
मौहूर्तिक	: राजा वीरसेन के ज्योतिषी ।
पथिक	: उत्तर तथा दक्षिण दिशाओं से आये हुये पथिक ।
पर्वतक	: नल का सेवक ।
प्रतीहार	: नल का सेवक ।
प्रस्तावपाठक	: नल का सेवक ।
मृगया वनपालक	: नल का सेवक ।
वैतालिक	: नल का सेवक ।
बाहुक	: नल का सेनापति ।
भद्रभूति	: राजा नल का दौवारिक ।
भीम	: कुण्डिनपुर के राजा, दमयन्ती के पिता ।
पुरोधा	: राजा भीम के पुरोहित ।
पुष्कराक्ष	: दमयन्ती का दूत ।
सुन्दरक	: दमयन्ती का किन्नर ।
सोमशर्मा	: स्वयंवर निमन्त्रण के लिए उत्तर को जाने वाला ब्राह्मण ।
हंस	: दमयन्ती को लुभाने वाला नल का दूत ।
इन्द्र-कुवेर-यम-वरुण	: लोकपाल—दमयन्ती-वरण के इच्छुक ।
पुरुष	: लोकपालों का अनुचर ।
ब्रह्मर्षि	: नल का अभिषेक करने के लिये आये ऋषि ।
मुनि	: पयोष्णी तट के तपस्वी ।
अवसरपाठक	: भीम तथा नल के सेवक ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्री-पात्र

दमयन्ती	: नायिका—कुण्डिननरेश भीम की पुत्री।
प्रियंगुमञ्जरी	: दमयन्ती की माता—कुण्डिनपुर की राजमहिषी।
रूपवती	: नल की माता—राजा वीरसेन की पत्नी।
कक्कोलिका, कलिका,	: दमयन्ती की चेटियाँ।
चकोरी, चङ्गी	: ,,
चन्दना, चन्द्रप्रभा	: ,,
चन्द्रवदना, चन्द्री	: ,,
चम्पा	: ,,
मालती	: ,,
नन्दनी	: ,,
परिहासशीला	: ,,
प्रियंवदिका	: ,,
लवङ्गी	: ,,
गौरी	: ,,
सुन्दरी	: ,,
विहङ्गवागुरिका	: दमयन्ती की किन्नरी।
मज्जन-कामिनियाँ	: राजा भीम की सेविकाएँ।
किरात-कामिनियाँ	: नर्मदातटवासिनी।
गोपी	: विदर्भातीरचारिणी।
लवङ्गिका	: नल की सरोवर-रक्षिका।
सारसिका	: नल की वनपालिका।
हंसी	: हंस की पत्नी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

महाकवित्रिविक्रमभट्टप्रणीतः

नलचम्पूः

'कल्याणी-ज्योत्स्ना'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतः

प्रथम उच्छ्वासः

जयति गिरिसुतायाः कामसन्तापवाहि-
न्युरसि रसनिषेकश्चान्दनश्चन्द्रमौलिः ।
तदनु च विजयन्ते कीर्तिभाजां कवीना-
मसकृदमृतबिन्दुस्यन्दिनो वाग्विलासाः ॥ १ ॥

अन्वयः—गिरिसुतायाः कामसन्तापवाहिनी उरसि चान्दनः रसनिषेकः चन्द्रमौलिः जयति । तदनु च कीर्तिभाजां कवीनाम् असकृत् अमृतबिन्दुस्यन्दिनः वाग्विलासाः विजयन्ते ॥१॥

❀ कल्याणी ❀

करोतु कल्याणमचिन्त्यगौरवो विनायको विघ्नविनाशकारकः ।
सुधांशुमौलेस्तनुजो गजाननो हिमाद्रिपुत्रीकरलालितो विभुः ॥ १ ॥
इन्द्रनीलरुचिं रामं कौसल्यानन्दवर्द्धनम् ।
जानकीवल्लभं शान्तं वन्देऽहं रघुनन्दनम् ॥ २ ॥
पितरं निर्मलात्मानं 'महादेवं' मनस्विनम् ।
'सरयूं' जन्मदात्रीं च भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥ ३ ॥

अथ व्यासादिप्राचीनकविगीतं पुण्यश्लोकनिषधाधीश्वरस्य नलस्य चरितं गद्यानुबन्धरसमिश्रितपद्यसूक्तेर्हृद्यतया चम्पूप्रबन्धात्मना निबद्धुमनास्तत्रभवान् समधिकप्रसन्नमनोहरसरलश्लेषप्रयोगनिपुणो विचित्रसरसकाव्यप्रणयनयशस्वी महाकवित्रिविक्रमभट्टश्चिकीर्षितग्रन्थस्य निर्विघ्नसमाप्तये तत्रादौ शिष्टाचारज्ञापितः स्मृतितर्कितश्रुतिबोधितकर्त्तव्यताकं मङ्गलं ग्रन्थतो निबध्नाति—जयतीति । गिरिसुतायाः—गिरिः=पर्वतः, हिमवानित्यर्थः, तस्य सुता=पुत्री, गौरीत्यर्थः, तस्याः; कामसन्तापवाहिनि—कामस्य=मदनस्य, सन्तापं=पीडां, वहति=धारयतीति तथोक्ते, (ताच्छील्ये णिनिः) । उरसि=वक्षसि, चान्दनः—चन्दनस्यायमिति चान्दनः=चन्दनसम्बन्धी, ('तस्येदमि'त्यण्) । रसनिषेकः=द्रवाभिषेकः, तद्रूप इत्यर्थः, गाढालिङ्गनेन प्रियाया वक्षसि संसक्तश्चन्दनरस इव तत्कामजनितसन्तापहारीति भावः । चन्द्रो मौलौ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मस्तके यस्य स चन्द्रमौलिः=शिव इत्यर्थः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। तदनु=तदनन्तरं, च कीर्तिभाजाम्—कीर्तिं भजन्त इति कीर्तिभाजस्तेषां=नवरसरुचिरानवद्यकाव्यप्रणयन-प्रथितयशसामित्यर्थः, कवीनाम्=वाल्मीकिव्यासकालिदासादीनाम्, असकृत्=निरन्तरम्, अमृतबिन्दुस्यन्दिनः—अमृतबिन्दून् स्यन्दयन्ति=वर्षन्तीति तथोक्ताः, अनुपमशृङ्गारादिरसनिष्यन्दमधुरा इति भावः। वाग्विलासाः—वाचां=वाणीनां, विलासाः=विभ्रमाः, आस्वादा इत्यर्थः, विजयन्ते=सर्वोत्कर्षेण वर्तन्ते, परमानन्दानुभावकत्वादिति भावः। ('विपराभ्यां जेः' इत्यात्मनेपदत्वम्)।

अत्र शिवस्य सर्वोत्कृष्टत्ववर्णनेन 'सर्वोत्कृष्टश्च सर्वेषां नमस्यः स्यात्' इति तं प्रति कवेः प्रणतिः स्वतः परिलक्ष्यते। किञ्च पूर्वार्द्धे गिरिः विदर्भाधिपतिर्भीमनृपः 'गिरिर्भीमनृपे सूर्ये स्वभावे पर्वते जले' इत्युक्तेः। तस्य सुता=दमयन्ती, तस्याः कामसन्तापवाहिन्युरसि चान्दनो रसनिषेकश्चन्द्रमौलिः—चन्द्राणां=चन्द्रवंश्यानां, मौलिः=शिरोमणिः, नल इत्यर्थः, जयतीति व्याख्याश्रयणादस्मिञ्चम्पूप्रबन्धे विदर्भाधिपतिभीमनृपतितनयायाः दमयन्त्याः कामसन्तप्त उरसि चन्द्रकुलशिरोमणिनलस्य चन्दनरसनिषेकभावो वर्णयिष्यत इति तत्कथातत्त्वमपि सूच्यते।

अत्र चन्द्रमौलौ चान्दनरसनिषेकत्वारोपाद्रूपकालङ्कारः। मालिनी वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।' इति ॥ १ ॥

❀ ज्योत्स्ना ❀

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्।
महामृत्युञ्जयञ्चैव नमस्कृत्य पुनः पुनः ॥ १ ॥
अभिलाषात्मजो धीमान् श्रीनिवासाभिधो द्विजः।
नलचम्पूरिदं चम्पूं ज्योत्स्नयाऽलङ्करोति यः ॥ २ ॥

पर्वतपुत्री पार्वती के काम से उत्पन्न सन्ताप को धारण करने वाले, वक्षस्थल पर चन्दन-रस की धारा के समान शीतल लगने वाले] भगवान् चन्द्रमौलि [शिव] सर्वोत्कृष्ट हैं और उन भगवान् शिव के पश्चात् निरन्तर सुधारस को बरसाने वाला यशस्वी कवियों का वाग्विलास भी सर्वोत्कृष्ट है।

पूर्वार्द्ध का नलपक्ष में—राजा भीम की पुत्री दमयन्ती के काम से सन्तप्त वक्षस्थल पर चन्दन-रस की धारा के समान शीतल प्रतीत होने वाले चन्द्रमौलि अर्थात् चन्द्रवंशियों में भूषण-स्वरूप राजा नल सर्वोत्कृष्ट हैं—अर्थ भी होता है; जिससे ग्रन्थ में वर्ण्यमान कथावस्तु का संकेत प्राप्त होता है।

विमर्श—प्रारभ्यमाण ग्रन्थ के विघ्नरहित पूर्णता-प्राप्ति हेतु मंगलाचरण करने की परम्परा साहित्य-जगत् में अनादि-काल से प्रवहमान दृष्टिगोचर होती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। उसी परम्परा का अनुसरण करते हुए चम्पूकाव्य-प्रणेता महाकवि त्रिविक्रम भट्ट ने भी प्रकृत ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण किया है, जो कि नमस्कारात्मक भी है और वस्तुनिर्देशात्मक भी।

"ज्ञानमिच्छेत्तु शङ्करात्।" इस उक्ति के अनुसार भगवान् शंकर ज्ञान को प्रदान करने वाले हैं; इसीलिए महाकवि ने प्रथमतः भगवान् शंकर की ही वन्दना की है। इसके साथ ही साथ प्रकृत मंगलाचरण द्वारा ही यशस्वी कवियों के वाग्विलास के प्रति कवि द्वारा श्रद्धा भी प्रकट की गई है, किन्तु उनमें भी महाकवि को वही वाग्विलास अभीष्ट है, जो अमृत की वर्षा करने वाला हो—यह भी स्पष्ट किया गया है। इससे यह ध्वनित होता है कि महाकवि को वाणी की मधुरता ही अभीष्ट है, वक्रता नहीं।

प्रकृत मंगलाचरण के पूर्वार्द्ध द्वारा निबध्यमान ग्रन्थ के कथावस्तु की ओर भी संकेत किया गया है; क्योंकि 'गिरि' शब्द का अर्थ एक ओर जहाँ 'पर्वत' होता है, वहीं दूसरी ओर "गिरिर्भीमनृपे सूर्ये स्वभावे पर्वते जले" उक्ति के अनुसार 'राजा भीम' भी होता है। इसी प्रकार 'चन्द्रमौली' शब्द एक ओर जहाँ भगवान् शंकर का बोधक है, वहीं दूसरी ओर वह चन्द्र—चन्द्रवंशियों में, मौलि—श्रेष्ठ अर्थात् राजा नल का भी वाचक है, जिसकी कथा को प्रकृत ग्रन्थ में निबद्ध किया गया है; इसीलिए इस चम्पूकाव्य का दूसरा नाम "नल-दमयन्ती कथा" भी है। ॥ १ ॥

जयति मधुसहायः सर्वसंसारवल्ली-
जननजरठकन्दः कोऽपि कन्दर्पदेवः।
तदनु पुनरपाङ्गोत्सङ्गसञ्चारितानां
जयति तरुणयोषिल्लोचनानां विलासः ॥ २ ॥

अन्वयः—मधुसहायः सर्वसंसारवल्लीजननजरठकन्दः कः अपि कन्दर्पदेवः जयति। तदनु पुनः अपाङ्गोत्सङ्गसञ्चारितानां तरुणयोषिल्लोचनानां विलासः जयति ॥ २ ॥

कल्याणी—सरागयोः पार्वतीपरमेश्वरयोर्या परस्परस्वसंवेद्यसुखसंवेदनात्मिकाऽनुभूतिस्तत्र कन्दर्पदेवस्यैव कारणतां विचिन्त्य कविस्तमपि सर्वोत्कृष्टत्वेन स्तौति—जयति मधुसहाय इति। मधुः=वसन्तः, स सहायः=सहायकः यस्य स तथोक्तः, सर्वसंसारवल्लीजननजरठकन्दः—सर्वः=समस्तः, संसार एव वल्ली=लता, तस्या जनने=समुत्पादने, जरठः=कठोरः; कन्दः=ग्रन्थिलं मूलम्, तद्रूप इत्यर्थः, सर्वजगदुत्पत्तिहेतुरिति भावः। कोऽपि=विचित्रप्रभावः, कन्दर्पदेवः=कामदेवः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। किन्तु कामदेवस्य साफल्यं नवयुवः सुन्दरीनयनविलासायत्तमिति विचिन्त्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तल्लोचनानां विलासमपि सर्वोत्कृष्टत्वेन कविः स्तौति—तदन्विति। तदनु=पुनः तदनन्तरं च, अपाङ्गोत्सङ्गे=नेत्रप्रान्तक्रोडे, संचारितानां=कामोद्दीपनाय कमपि कामुकमुद्दिश्य प्रवर्तितानां, तरुणयोषिल्लोचनानां=नववयोविलासिनीनेत्राणां, विलासः=कटाक्षादिविभ्रमः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। 'सर्वसंसारवल्लीजननजरठकन्दः' इत्यत्र संसारस्य वल्लीभावारोपः कन्दर्पदेवस्य जरठकन्दत्वारोपे निमित्तमिति परम्परितरूपकालङ्कारः। मालिनीवृत्तम्; लक्षणं तु प्रागेवोक्तम् ॥ २ ॥

ज्योत्स्ना · वसन्त जिसका सहायक है और समस्त संसाररूपी लता को उत्पन्न करने के लिए जो कठोर कन्द के समान है; वह अनुपम ऐश्वर्यशाली कामदेव सर्वोत्कृष्ट है, उसकी जय हो। तत्पश्चात् नवयौवनाओं की आँखों के प्रान्तभागरूपी गोद से सञ्चालित होनेवाला आँखों का (भ्रूविक्षेपादि) विलास भी सर्वोत्कृष्ट है; अतः उसकी भी जय हो।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि जिस प्रकार कठोर कन्द अत्यन्त सुकोमल लताओं को उत्पन्न करने में सक्षम होता है, उसी प्रकार कामदेव भी इस समस्त रमणीय संसार को उत्पन्न करने में सक्षम है। इसीलिए कवि ने कामदेव की तुलना कठोर कन्द से की है।

उपर्युक्त दोनों श्लोकों का सूक्ष्मतया विश्लेषण पर कवि के वर्णन-कला की विशिष्टता का भान होता है। पूर्व श्लोक में प्रथमतः जहाँ ज्ञान-प्रदाता भगवान् शंकर की वन्दना करने के पश्चात् तत्सम्बन्धित कवियों के वाग्विलास का उल्लेख किया गया है; वहीं दूसरे श्लोक में प्रेम के प्रवर्त्तक कामदेव की वन्दना के पश्चात् तत्फलभूत कामिनियों के भ्रूविक्षेपादि कटाक्षों का स्मरण किया गया है, जो कि कवि के प्रत्युत्पन्न मति से सम्पन्न होने का परिचायक है ॥ २ ॥

अगाधान्तःपरिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरम्।
वन्दे रसान्तरप्रौढं स्रोतः सारस्वतं बहत् ॥३॥

अन्वयः—अगाधान्तः परिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरं रसान्तरप्रौढं बहत् सारस्वतं स्रोतः वन्दे ॥३॥

कल्याणी—अथ प्रथमश्लोकोक्तानां वाग्विलासानां वैशिष्ट्यं श्लोकत्रयेणाह—अगाधेति। अगाधः=कल्पनातीत इत्यर्थः, अन्तः=मनसि, परिस्पन्दः=चमत्कारः, येन तादृशम्; पक्षान्तरे—अगाधा=गभीरा, अन्तः=मध्ये, परि=समन्तात्, स्पन्दा=आवर्तविशेषा यस्य तादृशम्। बिबुधानन्दमन्दिरम्—विबुधाः=पण्डिता, देवता देवा वा, तेषामानन्दमन्दिरम्=आनन्दस्थानम्, आनन्दसम्पादकमिति यावत्। पक्षान्तरे—वयः=पक्षिणः, तेषां मध्ये बुधाः=पण्डिताः, राजहंसा इत्यर्थस्तेषामानन्दसम्पादकम्। रसान्तरप्रौढम्—रसान्तरैः=शृङ्गारादिभिर्विविधरसैः, प्रौढं=लब्धपरिपाकम्। पक्षान्तरे—रसा=पृथ्वी,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्या अन्तरे=अभ्यन्तरे, प्रौढं=कृतप्रवाहम् । वहत्=प्रसरत्, सरस्वती=वाणी, नदीविशेषश्च, तस्या इदं सारस्वतम्; स्रोतः = प्रवाहं, वन्दे = नमस्करोमि ।

अत्र प्रकरणेन भारतीपरोऽर्थो वाच्यो नदीपरोऽपरार्थस्तु शब्दशक्तिमहिम्ना व्यङ्ग्य इति ज्ञेयम् । तस्मादत्र शब्दशक्तिमूलक उपमाध्वनिरेव, न तु श्लेषालङ्कारस्तस्यार्थद्वयवाच्यत्व एवेष्यमाणत्वात् । अत्र त्वेकोऽर्थो वाच्योऽपरस्तु व्यङ्ग्यः । अनुष्टुब्वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः । गुरु षट्कं च सर्वेषामेतच्छ्लोकस्य लक्षणम्' ।।इति ।।३।।

ज्योत्स्ना—(सरस्वती–वाणी-पक्ष में) अपने भावगाम्भीर्य के कारण अन्तःकरण में अलौकिक चमत्कार उत्पन्न करने वाले; देवताओं और विद्वानों को आनन्द प्रदान करने वाले, विभिन्न शृङ्गारादि रसों की विशिष्टताओं से परिपूर्ण, सर्वदा प्रवहमान सरस्वती (वाणी) के स्रोत (धारा) की (मैं त्रिविक्रम भट्ट) वन्दना करता हूँ ।

[सरस्वती नदी पक्ष में] अथाह गहराई के बीच चारो ओर तरङ्गित होने वाले, देवताओं अथवा विद्वानों के लिए आनन्द के आगारस्वरूप; पृथ्वी के भीतर अत्यन्त प्रगल्भता से प्रवहमान सरस्वती नदी के स्रोत—प्रवाह की वन्दना करता हूँ ।

विमर्श—प्रकृत श्लोक से प्रारम्भ कर अग्रिम दो श्लोक तक मङ्गलाचरणरूप प्रथम श्लोक में कथित 'कवियों के वाग्विलास' का वैशिष्ट्य प्रतिपादित किया गया है । साथ ही साथ ग्रन्थकार के वाग्विलास की यह विशिष्टता भी इन तीनों श्लोकों के अवलोकन से दृष्टिगोचर होती है तथा स्पष्ट होता है कि महाकवि द्व्यर्थी शब्दों के प्रयोग में कितना चतुर है । यहाँ प्रयुक्त 'अगाधान्तःपरिस्पन्दं', 'विबुधानन्द मन्दिरम्' और 'रसान्तरप्रौढम्'–तीनों शब्द श्लिष्ट हैं, जिनके वागधिष्ठात्री देवी सरस्वती और सरस्वती नदी–दोनों के पक्ष में अर्थ प्रस्फुटित होते हैं ।।३।।

प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यो नानाश्लेषविचक्षणाः ।
भवन्ति कस्यचित्पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः ।।४।।

अन्वयः— पुण्यैः कस्यचित् मुखे प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यः नानाश्लेषविचक्षणाः वाचः गृहे स्त्रियः भवन्ति ।।४।।

कल्याणी—प्रसन्ना इति । पुण्यैः=पूर्वजन्मकृतैः सुकृतैः, कस्यचित्=पुण्यात्मनः, मुखे=वक्त्रे, प्रसन्नाः=प्रसादगुणोपेताः । तथा च काव्यप्रकाशकारः—

'श्रुतिमात्रेण शब्दानां येनार्थप्रत्ययो भवेत् ।
साधारणः समग्राणां स प्रसादो गुणः स्मृतः' ।।इति।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कान्तिहारिण्यः— कान्तिः=औज्ज्वलरूपः शब्दगुणो दीप्तरसत्वरूपोऽर्थगुणश्च, तदाख्य-गुणेन हर्तुं=मनोवशीकर्तुं शीलं यासां तास्तथोक्ताः। नानाश्लेषविचक्षणाः—नाना=बहुविधः यः श्लेषः=श्लेषालङ्कारः, वर्णश्लेषः प्रत्ययश्लेषो लिङ्गश्लेषः प्रकृतिश्लेषः पदश्लेषो विभक्तिश्लेषो वचनश्लेषो भाषाश्लेषश्चेति यावत्, तं विशेषेण चक्षते=अभिव्यञ्जन्तीति तादृश्यो वाचः=सूक्तयः, गृहे=सदने च, प्रसन्नाः=प्रतुष्टाः, कान्त्या=सौन्दर्येण, हारिण्यः=मनोज्ञाः, नाना=बहुविधे, श्लेषे=आलिङ्गने, विचक्षणाः=कुशलाः, स्त्रियः=नार्यः, भवन्ति। श्लेषालङ्कारः। प्रसन्नादिश्लिष्टशब्दैः स्त्रीणां वाचां चोपमानोपमेयभावो व्यज्यते। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४॥

ज्योत्स्ना—(वाणीपक्ष में) किन्हीं अलौकिक पुण्यों के कारण ही किसी व्यक्ति के मुख में प्रसाद गुण से समन्वित, कान्ति गुण के कारण औज्ज्वल्यमान तथा दीप्त-रसत्वादि गुण से मन को हरण करने वाली और वर्ण-पद-प्रत्यय आदि बहुविध श्लेषों को प्रकट करने में समर्थ वाणी आती है।

[स्त्रीपक्ष में] किन्हीं अलौकिक पुण्यों के परिणामस्वरूप ही प्रसन्नवदना, अपनी कान्ति—सौन्दर्य के कारण मनोहारिणी और अनेक प्रकार के श्लेषों—आलिङ्गनादि विधियों में चतुर स्त्रियाँ किसी पुरुष के घर में आती हैं।

विमर्शः—यहाँ प्रयुक्त प्रसन्न, कान्ति और श्लेष शब्द वाणी-पक्ष में प्रसाद, कान्ति और श्लेष गुणों के वाचक हैं। जिस पद से तत्क्षण अर्थ की प्रतीति होती है, वहाँ प्रसाद गुण होता है। जैसा कि आचार्य मम्मट ने अपने काव्यप्रकाश में कहा भी है—

श्रुतिमात्रेण शब्दात्तु येनार्थप्रत्ययो भवेत्।
साधारणं समग्राणां स प्रसादो गुणः स्मृतः॥

जिस रचना में उज्ज्वलता—नूतनता होती है, वहाँ कान्ति गुण होता है। श्लेष शब्द अलंकार और गुण—दोनों का बोधक है। इन त्रिविध गुणों से युक्त वाणी किसी पुण्यात्मा व्यक्ति की ही होती है।

दूसरी ओर स्त्रीपक्ष में 'प्रसन्न' शब्द प्रसन्नता का, 'कान्ति' शब्द सौन्दर्य का और 'श्लेष' शब्द आलिङ्गन अर्थ का द्योतक है। आचार्य वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र के द्वितीय अध्याय में बारह प्रकार की आलिङ्गन-विधियों का वर्णन किया है, वे हैं—स्पृष्टक, विद्धक, उद्घृष्टक, पीड़ितक, लतावेष्टितक, वृक्षाधिरूढ़क, तिलतण्डुलक, क्षीरनीरक, जघनोपगूहन, स्तनालिङ्गन और ललाटिका ॥४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं कवेस्तेन काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः ।
परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः ॥५॥

अन्वयः—कवेः तेन काव्येन किम् ? धनुष्मतः (तेन) काण्डेन किम् ? यत् परस्य हृदये लग्नं शिरः न घूर्णयति ॥५॥

कल्याणी—किं कवेरिति । कवेः=काव्यस्रष्टुः, तेन=तादृशेन, काव्येन=प्रबन्धेन, धनुष्मतः=धनुर्धारिणः वीरस्य, तेन=तथाविधेन, काण्डेन=बाणेन, किं=किंप्रयोजनम्, यत् काव्यं काण्डं च, परस्य=श्रोतुः शत्रोश्च, हृदये=अन्तःकरणे वक्षसि च, लग्नम्=अनुषक्तं सत्, शिरः=शीर्षम्, न घूर्णयति=एकत्र रसानुभूतिवशादपरत्र च पीड़ानुभूतिवशाच्छिरो न विधूनयति । यथा धनुर्धरस्य स एव शरः श्लाघ्यः यः शत्रोर्वक्षस्थलं विभिद्यासह्य-वेदनया तच्छिरः प्रकम्पयति तथा कवेस्तदेव काव्यं प्रशस्यं यच्छ्रोतुरन्तःकरणं श्रवणमात्रेण रसनिर्भरं कृत्वा रसानुभूतिवशात्तच्छिरश्चालयतीति भावः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—कवि के इस प्रकार के काव्य का क्या प्रयोजन, जो कि दूसरे—श्रोता के हृदय पर आघात कर उसे कम्पित न कर दे ? और धनुर्धारी के इस प्रकार के बाण का क्या प्रयोजन, जो कि दूसरे—शत्रु के वक्षःस्थल पर लग कर उसे शिर धुनने पर मजबूर न कर दे । तात्पर्य यह कि यदि उपर्युक्त परिणाम देने में कवि का काव्य और धनुर्धारी का बाण समर्थ नहीं है तो वे दोनों ही निष्प्रयोजन हैं, उनका होना भी न होने के ही बराबर है ।

विमर्श—प्रकृत श्लोक में 'पर' शब्द श्लिष्ट है, जिससे 'दूसरे' और 'शत्रु' दोनों अर्थ ध्वनित होते हैं ॥५॥

अप्रगल्भाः पदन्यासे जननीरागहेतवः ।
सन्त्येके बहुलालापाः कवयो बालका इव ॥ ६ ॥

अन्वयः—पदन्यासे अप्रगल्भाः जननीरागहेतवः बहुलालापाः बालकाः इव एके कवयः सन्ति ॥ ६ ॥

कल्याणी—अथ तादृशश्रोतृहृदयावर्जककाव्येऽप्रगल्भान् कवीन्निन्दन्नाह—**अप्रगल्भा इति** । पदन्यासे=समुचितशब्दप्रयोगे, पक्षे—चरणन्यासे; अप्रगल्भाः=अनिपुणाः, असमर्था इत्यर्थः, जननीरागहेतवः—जनानां=लोकानां, नीरागे=रागाभावे, समुद्वेजन इत्यर्थः, हेतवः=कारणभूताः । तादृशं काव्यं श्रुत्वा न हि सहृदया रसनिर्भरा भवन्त्यपि तु समुद्वेगमेव लभन्ते । पक्षे—जनन्याः=मातुः, रागहेतवः=अनुरागकारणभूताः । जनन्यो वात्सल्यवशात्स्खलच्चरणान् बालकानवलोक्य प्रमुदिता भवन्ति । तथा बहुलालापाः—बहुलः=समधिकः, आलापः=निःसारोक्तिः येषां ते तथोक्ताः; पक्षे बह्वीर्लालाः=सृणिकाः पिबन्तीति तादृशा बालका इव=शिशव इव, एके=केचन, कवयः सन्ति=वर्त्तन्ते ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समुचितपदप्रयोगेष्वनिपुणा रसिकेषु काव्यं प्रति विरक्तिजनका निःसार-वाक्यकदम्बकभाषिणः कवयस्तादृशाः शिशव इव सन्ति ये भूम्यां पदविन्यासेऽसमर्थाः केवलं जननीहृदयेऽनुरागमेवोत्पादयन्ति समधिकलाला एव पिबन्ति चेति सरलार्थः। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ६ ॥

ज्योत्स्ना—(कविपक्ष में) समुचित पदों—सुबन्त-तिङन्तादि शब्दों के प्रयोग में असमर्थ, सारहीन बातों को कहने के कारण (स्वयं के प्रति) लोगों में अरुचि (विरक्ति) उत्पन्न करने वाले कतिपय कवि अत्यधिक आलाप (व्यर्थ बकवास) करने वाले बच्चों के समान होते हैं।

(बालकपक्ष में) सम्यक् प्रकार से पाँव रखने में – चलने में असमर्थ, मात्र अपनी माता को प्रसन्न करने का कारण बने हुए बच्चे बहुत-सी अव्यक्त बातों को कहते हुए जिस प्रकार अत्यधिक मात्रा में लार पीते रहते हैं; उसी प्रकार कतिपय कवि भी अपनी रचना में समुचित पदों के स्थापन में असमर्थ होने के कारण व्यर्थ बकवास करते रहते हैं ॥ ६ ॥

अक्षमालापवृत्तिज्ञा कुशासनपरिग्रहा।
ब्राह्मीव दौर्जनी संसद्वन्दनीया समेखला ॥ ७ ॥

अन्वयः—अक्षमालापवृत्तिज्ञा कुशासनपरिग्रहा दौर्जनी संसद् समेखला ब्राह्मी इव वन्दनीया ॥ ७ ॥

कल्याणी—काव्यनिन्दकदुर्जनानां सदाचारपरायणविप्राणां च श्लिष्टविशेषणपदैः साम्यं प्रदर्शयन् कविस्तेषां दुर्जनानां परिहाराय निर्दिशति—**अक्षमालेति**। अक्षमालापवृत्तिज्ञा – अक्षमाः=रोषः, तया आलापस्य=संभाषणस्य, वृत्तिं=व्यवहारं, जानातीति तथोक्ता, रुशद्वचनभाषिणीत्यर्थः। कुशासनपरिग्रहा—कु-शासनस्य=कुत्सितशिक्षणस्याभद्रविधीनां वा, परिग्रहः=स्वीकारः, यस्यास्तथाविधा, समेखला-समे=सज्जने, खला=दुष्टा, दुर्जनानां=सदसद्विवेकशून्यानाम्, इयं दौर्जनी संसत्=सभा, अक्षमालापवृत्तिज्ञा—अक्षमाला=रुद्राक्षमाला तस्या अपवृत्तिः=कराङ्गुलिद्वारा सञ्चालनं जानातीति तथोक्ता, स्वेष्टदेवनामजपपरायणेत्यर्थः। कुशासनपरिग्रहा—कुशासनस्य=दर्भविष्टरस्य, परिग्रहः=स्वीकारः यस्यास्तादृशी, समेखला—मेखलया=मौञ्ज्या सहिता, ब्रह्मणां=विप्राणामियं ब्राह्मी, संसदिव=सभेव, वन्दनीया=नमस्करणीया, द्वयोरित्थं समानविशेषणैः साम्येऽपि विप्रसभा सदा सेवनीया, दुर्जनसभा तु दूरत एव नमस्कृत्य परिहर्त्तव्येति भावः। श्लेषमूलोपमालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ७ ॥

ज्योत्स्ना—(दुर्जनगोष्ठी-पक्ष में) असहनीय वाणी और व्यवहार को जाननेवाली, निन्दनीय शिक्षा अथवा अभद्र व्यवहारों को स्वीकार करने वाली,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सज्जनों पर दुष्टता का प्रदर्शन करने वाली दुर्जनों की गोष्ठी को ब्राह्मणों की सभा के समान दूर से ही नमस्कार करना चाहिए।

(विप्रगोष्ठी पक्ष में) अक्ष—रुद्राक्षमाला के सञ्चालन—जप की विधि को जानने वाली, कुश के आसनों को ग्रहण करने वाली, मेखला—करधनी से युक्त ब्राह्मणों की सभा—गोष्ठी को दुर्जनों की गोष्ठी के समान दूर से ही नमस्कार करना चाहिए।

विमर्श—यहाँ पर दुर्जनों की सभा और ब्राह्मणों की सभा में शाब्दी समानता प्रदर्शित की गई है। कवि का आशय मात्र इतना ही है कि ब्राह्मणों की सभा का निरन्तर सेवन चाहिए और अकारण द्वेष करने वाले दुर्जनों से सदा दूर ही रहना चाहिए ॥ ७ ॥

रोहणं सूक्तरत्नानां वृन्दं वन्दे विपश्चिताम्।
यन्मध्यपतितो नीचः काचोऽप्युच्चैर्मणीयते ॥ ८ ॥

अन्वयः—सूक्तरत्नानां रोहणं विपश्चितां वृन्दं वन्दे; यन्मध्यपतितः नीचः काचः अपि उच्चैः मणीयते ॥ ८ ॥

कल्याणी—अथ विपश्चिद्वृन्दं स्तुवन्नाह—**रोहणमिति**। सूक्तरत्नानाम्—सूक्तानि=सुभाषितान्येव रत्नानि=मणयस्तेषां रोहणम्=आकरं, सूक्तिमाणिक्यगिरिमित्यर्थः, विपश्चितां=विदुषां, वृन्दं=समाजं, वन्दे=नमस्करोमि। यन्मध्यपतितः—यस्य=विपश्चिद्-वृन्दस्य माणिक्यशैलस्य च, मध्ये पतितः=अन्तर्लब्धस्थानः, नीचः=निकृष्टः, काचः—कच्यन्ते=बध्यन्तेऽर्था अस्मिन्निति काचः=काव्यम्, धातुविशेषश्च; उच्चैर्मणीयते=समधिकं मणिरिवाचरति ('कर्तुः क्यङ् सलोपश्चेति, पाणिनीयसूत्रेणाचारेऽर्थे क्यङ्, अकृत्सार्वधातुकयोरिति दीर्घः, ङित्त्वादात्मनेपदम्)। यथा माणिक्यशैलोऽभ्यन्तरगतं निकृष्टमपि काचं समुत्कृष्टमणिमिव प्रत्याययति तथैव सुभाषितरत्नाकरा विपश्चितोऽपि परेषां निकृष्टमपि काव्यं स्वीकृत्य विलक्षणव्याख्यानेनोत्कृष्टतां गमयन्ति, तत्ते काव्यकर्तारः स्वकीयवाग्विलासैर्मुदमुपयान्तोऽपि परेषां निकृष्टास्वपि भणितिषु समादरवन्तोऽस्माकं सदा वन्द्या इति भावः।

अत्र विपश्चिद्वृन्दस्य माणिक्यशैलस्य चोपमानोपमेयभावो व्यज्यते। सूक्तरत्नानामित्यत्र रूपकालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ८ ॥

ज्योत्स्ना—(काव्यपक्ष में) सुभाषितस्वरूप रत्नों के रोहण—उत्पत्तिस्थान विद्वानों के समूह की मैं वन्दना करता हूँ, जिनके मध्य में पड़ा हुआ निकृष्ट काव्य भी विलक्षण व्याख्यानों के द्वारा उत्कृष्ट काव्य का स्वरूप धारण कर लेता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(रत्नपक्ष में) प्रशंसनीय रत्नों के रोहण—आरोहण-स्थान मणिक्य पर्वत की मैं वन्दना करता हूँ, जिन रत्नों के मध्य में स्थित होकर काच-शीशा भी उत्कृष्ट मणि के समान प्रतीत होता है।

विमर्श—बन्धनार्थक कच् धातु से निष्पन्न काच शब्द काव्य अर्थ का भी वाचक होता है; जिसका अर्थ होता है—सहृदय-ग्राह्य अर्थों का भी निबन्धन करने वाला। साथ ही जनसामान्य में प्रचलित 'काच' शब्द 'शीशा' का वाचक है, जो कि रेह मिट्टी से बनाया किया जाता है।

कवि का आशय मात्र इतना ही है कि जिस प्रकार मणियों के बीच में रख देने पर शीशा भी मणिरूप ही हो जाता है, उसी प्रकार सामान्य काव्य भी विद्वानों के बीच में जाने पर उनके विलक्षण व्याख्यानों के द्वारा उत्कृष्ट काव्य के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है ॥ ८ ॥

अत्रिजातस्य या मूर्तिः शशिनः सज्जनस्य च।
क्व सा वै रात्रिजातस्य तमसो दुर्जनस्य च ॥९॥

अन्वयः—अत्रिजातस्य शशिनः सज्जनस्य च या मूर्तिः सा वै रात्रिजातस्य तमसः दुर्जनस्य च क्व ॥९॥

कल्याणी—न हि केवलं गुणतः, सज्जनदुर्जनयोः स्वरूपतोऽपि महदन्तरमित्याह-**अत्रीति**। अत्रिजातस्य-अत्रिर्नाम मुनिविशेषः, तस्मात् जातस्य=उत्पन्नस्य, अत्रिमुनिनेत्रोत्पन्नस्येत्यर्थः, शशिनः=चन्द्रस्य, न त्रिभिर्जात इत्यत्रिजातः तस्य, जनन्यां वैधपितुरेव न हि कस्माच्चिदन्यस्मात्पुरुषाज्जातस्याजारजस्येत्यर्थः, सज्जनस्य च=साधोश्च, या अवैरा=वैररहिता, मित्रभावात्मिका; सौम्येत्यर्थः, मूर्तिः=आकृतिः भवति, सा वै=निश्चयेन, रात्रिजातस्य=निश्युत्पन्नस्य, तमसः=अन्धकारस्य, त्रिजातस्य=जारजस्येत्यर्थः, दुर्जनस्य च=असाधोश्च, क्व=कुत्र भवति, यतो हि सा वैरा=वैरप्रधाना। सज्जनस्य त्ववैरा। सज्जनदुर्जनयोः प्रकाशान्धकारयोरिव महदन्तरमिति भावः। अत्र शशिसज्जनयोस्तमोदुर्जनयोश्च परस्परं सादृश्यं व्यज्यते। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—कहाँ तो अत्रि ऋषि से उत्पन्न चन्द्रमा के समान सज्जनों की प्रसन्न एवं कल्याणमयी मूर्ति और कहाँ रात्रि के कारण उत्पन्न होने वाला अन्धकार तथा वैरप्रधान वर्णसंकर दुष्ट व्यक्ति की अमङ्गलमयी मूर्ति ?

विमर्श—अत्रि ऋषि से उत्पन्न होने के कारण चन्द्रमा को अत्रिजात कहा जाता है, दूसरी ओर सज्जन पुरुषों को भी अत्रिजात—अ + त्रिजात—कहा जाता है; जिसका तात्पर्य होता है—माता-पिता के अतिरिक्त किसी तीसरे से जन्म न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेने वाला अर्थात् वर्ण संकररहित। इस प्रकार 'अत्रिजात' शब्द के यहाँ दोनों अर्थ प्रसङ्गतः गृहीत होते हैं।

इसी प्रकार 'वैरात्रिजात' का भी दो अर्थ गृहीत किया जाता है। वै=निश्चय ही, रात्रिजात=रात्रि द्वारा उत्पन्न—अन्धकार; यह अन्धकार अर्थ का वाचक है। दूसरी ओर वैरा=वैरप्रधान. त्रिजात=तीसरे से उत्पन्न अर्थात् वर्णसंकर; यह दुर्जन पुरुष अर्थ का बोधक होता है।

कवि का तात्पर्य यह है कि प्रकाश और अन्धकार में जिस प्रकार स्वाभाविक अन्तर होता है, उसी प्रकार सज्जनों और दुर्जनों में भी स्वाभविक अन्तर होता है, अतः इन दोनों की समानता करना कथमपि सम्भव नहीं है। यहाँ चन्द्रमा और सज्जन तथा अन्धकार और दुर्जन में एकरूपता प्रतिपादित की गई है ॥९॥

निश्चितं ससुरः कोऽपि न कुलीनः समेऽमतिः।
सर्वथासुरसम्बद्धं काव्यं यो नाभिनन्दति ॥१०॥

अन्वयः—यः सुरसं बद्धं काव्यं न अभिनन्दति (सः) निश्चितं कः अपि ससुरः न कुलीनः; सर्वथा समे अमतिः ॥१०॥

कल्याणी—निश्चितमिति। यः=जनः, सर्वथा सुरसम्-सु=शोभना रसाः=शृङ्गारादयः यत्र तादृशं, बद्धं=रचितं, काव्यं=प्रबन्धं, नाभिनन्दति न प्रशंसति, स निश्चितं=निस्सन्देहमेव, कोऽपि=कश्चन, ससुरः—सुरया=मद्येन सहितः, मद्यप इत्यर्थः, न कुलीनः=न सद्वंशप्रसूतः, समे=साधावपि, अमतिः—नास्ति मतिः=आदरः यस्य स तथाविधः, अनादरभावयुक्त इत्यर्थः। पक्षान्तरे—यः=जनः, सर्वथा असुरसम्बद्धम्-असुरैः=दैत्यैः, सम्बद्धं=मिलितम्, असुरहितपरायणमित्यर्थः; काव्यं=शुक्राचार्यं, नाभिनन्दति=न स्तौति, स निश्चितं=ध्रुवमेव, कोऽपि=सुरो देवः, न कु-लीनः—कौ=पृथिव्यां, लीनः=रमणशीलः, दिवौका इत्यर्थ, समेमतिः—मा=लक्ष्मीः, इः=कामः, ताभ्यां सहितः समे=विष्णुः, तत्र मतिः=आदरः यस्य स तथाविधो भवति। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१०॥

ज्योत्स्ना—(काव्यपक्ष में) जो व्यक्ति अत्यन्त श्रेष्ठ शृङ्गारादि रसों से समन्वित काव्य का अभिनन्दन नहीं करता, वह निश्चित रूप से सुरापायी अर्थात् शराबी होता है, अकुलीन होता है और हर समय सज्जनों में स्नेह नहीं रखने वाला होता है।

[भृगुपक्ष में] जो व्यक्ति असुरों—राक्षसों से सम्बद्ध काव्य—कविपुत्र भृगु का अभिनन्दन नहीं करता; वह निश्चित रूप से कोई देवता है। वह कु—पृथिवी में लीन नहीं रहता तथा सर्वदा मा—लक्ष्मी और ई—कामदेवसहित विष्णु में मति—विश्वास रखता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श -- असुरगुरु शुक्राचार्य के सुयोग्य पुत्र भृगु मुनि का सम्बन्ध भी अपने पिता के समान ही असुरों से होने के कारण देवता लोग उनका भी अभिनन्दन नहीं करते। स्वर्ग के निवासी होने के कारण देवतागण कभी भी पृथ्वी का स्पर्श नहीं करते; बल्कि वे तो सदा-सर्वदा लक्ष्मी और काम—प्रद्युम्नसहित भगवान् विष्णु के ध्यान में ही रत रहते हैं ॥१०॥

सदूषणापि निर्दोषा सखरापि सुकोमला।
नमस्तस्मै कृता येन रम्या रामायणी कथा ॥११॥

अन्वयः—येन सदूषणा अपि निर्दोषा, सखरा अपि सुकोमला रम्या रामायणी कथा कृता, तस्मै नमः ॥११॥

कल्याणी-अथ कविराद्यं कविं नमस्कुर्वन्नाह-सदूषणापीति। येन=आदिकविना वाल्मीकिना, सदूषणापि=दोषसहिताऽपि, निर्दोषा=दोषरहितेति विरोधः, दूषणनामकेन राक्षसेन सहितेति विरोधपरिहारः। तथा च सखरापि=कठिन्ययुक्तापि, सुकोमलेति विरोधः, खरनामकेन राक्षसेन सहितेति सखरेति विरोधपरिहारः। दूषणखरौ वर्णितौ यत्र तादृशीत्यर्थः। रम्या=रमणीया, रामायणी कथा=रामायणसम्बन्धिनी कथा, रामायणमित्याख्यं निरुपमरमणीयकं पावनञ्च महाकाव्यमित्यर्थः, कृता=रचिता, तस्मै=वाल्मीकिनाम्ने कविवेधसे नमः।

अत्र पूर्वार्द्धे विरोधाभासोऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—दोषयुक्त होने पर भी निर्दुष्ट एवं खर—रूक्ष अथवा दूषण और खर नामक राक्षस से युक्त होने पर भी सुकोमल और रमणीय रामायण की कथा का जिसने सृजन किया, उस (आदिकवि वाल्मीकि) के लिए नमस्कार है।

विमर्श—कवि का तात्पर्य यह है कि खर-दूषणादि विभिन्न राक्षसों के उग्रतासम्पन्न एवं अनौचित्यबहुल चरित्रों को चित्रित करते हुए भी काव्य की रमणीयता एवं कोमलता को अक्षुण्ण रखते हुए जिसने रामायण-जैसे महाकाव्य की रचना की, वह आदिकवि वाल्मीकि निश्चित रूप से अभिनन्दनीय हैं—वन्दनीय हैं ॥ ११ ॥

व्यासः क्षमाभृतां श्रेष्ठो वन्द्यः स हिमवानिव।
सृष्टा गौरीदृशी येन भवे विस्तारिभारता ॥ १२ ॥

अन्वयः—येन भवे विस्तारिभारता ईदृशी गौः सृष्टा, क्षमाभृतां श्रेष्ठः सः व्यासः हिमवान् इव वन्द्यः ॥ १२ ॥

कल्याणी तत: कविर्व्यासं स्तुवन्नाह- व्यास इति। येन=कृष्णद्वैपायनेन हिमवता च, भवे=संसारे, विस्तारि=विस्तरणशीलं, भारतं=भारताख्यानं यस्यां सा तथोक्तेदृशी गौः=वाक्, सृष्टा=रचिता, हिमवत्पक्षे विस्तारिणी भा=कान्तिः यस्याः सा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विस्तारिभा, भवे=शिवे, रता = अनुरक्ता, दृशी गौरी = पार्वती, सृष्टा=जनिता; क्षमाभृताम्=क्षमाशीलानां, श्रेष्ठः=अतिशयेन प्रशस्यः, सः=व्यासः,क्षमाभृतां=भूधराणां श्रेष्ठः, हिमवानिव=हिमालयमिव, वन्द्यः = नमस्करणीयः । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ १२ ॥

ज्योत्स्ना—(व्यासपक्ष में) जिसके द्वारा इस संसार में अत्यन्त विस्तृत महाभारतरूप वाणी की रचना की गई, क्षमाशीलों में श्रेष्ठ वे महर्षि व्यास पर्वतश्रेष्ठ हिमालय के समान वन्दनीय हैं—अभिनन्दन करने योग्य हैं ।

(हिमालयपक्ष में) जिसके द्वारा भगवान् शिव में अनुरक्ता और विकसनशील कान्तिसम्पन्ना गौरी–पार्वती को उत्पन्न किया गया, वह पर्वतों में श्रेष्ठ हिमालय महर्षि व्यास के समान वन्दनीय है ।

विमर्श—यहाँ प्रयुक्त प्रत्येक शब्द श्लिष्ट है, जिसके दो-दो अर्थ निकलते हैं । जैसे—क्षमाभृता–क्षमा धारण करने वालों में और पर्वतों में । भवे—संसार में एवं भगवान् शंकर में । विस्तारिभारता—विशाल महाभारत और विकसन कान्तियुक्त । गौरीदृशी—गौ—वाणी के समान अथवा गौरी के समान ।

कतिपय संस्करणों में नौरीदृशी पाठ भी मिलता है, जो असङ्गत है ॥१२॥

कर्णान्तविभ्रमभ्रान्तकृष्णार्जुनविलोचना ।
करोति कस्य नाह्लादं कथा कान्तेव भारती ॥१३॥

अन्वयः – कर्णान्तविभ्रमभ्रान्तकृष्णार्जुनविलोचना कान्ता इव भारती कथा कस्य आह्लादं न करोति ॥ १३ ॥

कल्याणी—कविस्तामेव व्याससृष्टां भारतीं कथां स्तुवन्नाह–कर्णेति । कर्णान्तयोः = श्रवणप्रान्तयोः, विभ्रमेण=विलासेन, भ्रान्ते=चञ्चले, कृष्णार्जुने=श्यामश्वेते, विलोचने=नयने यस्यास्तादृशी, कान्तेव=रमणीव, कर्णस्य=राधेयस्य, अन्ते=विनाशे, वेः=गरुडस्य, भ्रमेण = वेगेन, भ्रान्तौ = संचरितुं प्रवृत्तौ, कृष्णार्जुनौ=वासुदेवपार्थौ, अपि च विभ्रमेण=शोकजन्यसंक्षोभेण, भ्रान्तः=घूर्णितशिरस्कः, विलोचनः = धृतराष्ट्रः यस्यां तादृशी; भारती कथा=कृष्णद्वैपायनकृतमहाभारतकथा, कस्य = जनस्य, आह्लादं = हर्षं, न करोति=विदधाति, सर्वेषामाह्लादं करोतीति भावः । श्लेषमूलोपमा । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—(महाभारत-कथापक्ष में) युद्ध में कर्ण का अन्त (मृत्यु) हो जाने पर विस्मय के कारण इधर-उधर सञ्चरण करने वाले चञ्चल कृष्ण और अर्जुन तथा शोक के कारण क्षोभ से इधर-उधर घूमते हुए धृतराष्ट्र की कथा जिसमें वर्णित है, इस प्रकार की कान्ता-सदृशी महाभारत की कथा किसे आह्लादित नहीं करती ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(कान्तापक्ष में) कर्णपर्यन्त (भ्रूविक्षेपादि) विलास से चंचल तथा कर्णपर्यन्त प्रसरित काली तथा सफेद नेत्रों—पुतलियों वाली कान्ता—प्रिया के समान भारती कथा किसे आह्लादित नहीं करती ?

विमर्श—तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार भ्रूविक्षेपादि विलासों से युक्त चञ्चल रमणी सबकी प्रसन्नता का कारण होती है, उसी प्रकार महाभारत की कथा भी सबके लिये आनन्ददायिनी है ।।१३।।

शश्वद्बाणद्वितीयेन नमदाकारधारिणा ।
धनुषेव गुणाढ्येन निःशेषो रञ्जितो जनः ।।१४।।

अन्वयः—शश्वद्बाणद्वितीयेन नमदाकारधारिणा गुणाढ्येन धनुषा इव निःशेषः जनः रञ्जितः ।।१४।।

कल्याणी—अथ बृहत्कथाकारं महाकविं गुणाढ्यं स्तुवन्नाह–शश्वदिति । शश्वत्=निरन्तरं, बाणः=शरः, द्वितीयः=सहचरः, यस्य तादृशेन, शरयुक्तेनेत्यर्थः; नमन्तम् आकारम्=आकृतिं धारयितुं शीलमस्येति नमदाकारधारि तेन, बाणकर्षणाय वक्री भूतेनेत्यर्थः, गुणेन=मौर्व्या, आढ्येन = युक्तेन, धनुषेव = चापेनेव, बाणः=कादम्बरीरचयिता यशस्वी बाणो नाम महाकविः, द्वितीयः=लब्धद्वितीयस्थानः यस्य तेन, नमदाकारं=जाड्यादिरूपं, धरतीत्येवंशीलेन गुणाढ्येन = बृहत्कथाकारेण गुणाढ्याख्येन कविना, निःशेषः=समग्रः, जनः = लोकः, रञ्जितः=प्रमोदं प्रापितः, धनुःपक्षे निःशेषो जनः=समग्रः, प्रतिपक्षलोकः, अरम्=अत्यर्थं, जितः=पराजितः, भवति । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ।।१४।।

ज्योत्स्ना—(कविपक्ष में) बाण कवि को निरन्तर द्वितीय स्थान प्रदान करनेवाले अथवा बाण कवि को निरन्तर अपने साथ रखने वाले, मदयुक्त आकार को धारण न करनेवाले अर्थात् अभिमानरहित गुणाढ्य नामक महाकवि ने सभी लोगों को आनन्द प्रदान किया ।

(धनुषपक्ष में) हर समय बाण को अपने साथ रखने वाला, झुकी हुई आकृति को धारण करने वाला और गुण—प्रत्यञ्चा से आढ्य—मजबूत धनुष समस्त शत्रुवर्ग को पूर्ण रूप से जीत लेता है ।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि मद (मद्य या अभिमान) से व्यक्ति में शैथिल्य आता है, जिससे विवेक शक्ति कुण्ठित हो जाती है; लेकिन महाकवि गुणाढ्य इस दुर्गुण से रहित हैं, इसीलिए बाण जैसे महाकवि उनके समक्ष द्वितीय स्थान पर ही ठहरते हैं, उस महाकवि गुणाढ्य ने अपनी बृहत्कथा से समस्त लोगों को हर्ष प्रदान किया ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार गुणाढ्य की श्रेष्ठता सिद्ध करना ही कवि को अभीष्ट है। यहाँ प्रयुक्त 'धनुष' शब्द मात्र शब्दगत समानता के कारण ही महाकवि गुणाढ्य के उपमान के रूप में उपस्थित है ॥१४॥

इत्थं काव्यकथाकथानकरसैरेषां कवीनाममी
विद्वांसः परिपूर्णकर्णहृदयाः कुम्भाः पयोभिर्यथा।
वाचो वाच्यविवेकविक्लवधियामीदृग्विधा मादृशां
लप्स्यन्ते क्व किलावकाशमथवा सर्वंसहाः सूरयः ॥१५॥

अन्वयः—इत्थं पयोभिः परिपूर्णकर्णहृदयाः कुम्भा इव एषां कवीनां काव्यकथाकथानकरसैः अमी विद्वान्सः (सन्ति, अतः) मादृशां वाच्यविवेकविक्लवधियां इदृग्विधा वाचः क्व किल अवकाशं लप्स्यन्ते; अथवा सूरयः सर्वंसहाः (भवन्ति) ॥१५॥

कल्याणी—प्राक्तनकविवर्णनमुपसंहरन् स्वलाघवं प्रदर्शयितुमाह—इत्थमिति। इत्थम् = अनेन प्रकारेण, पयोभिः=जलैः दुग्धैर्वा, परिपूर्णे=आपूरिते, कर्णः=ऊर्ध्वभागः, हृदयं=मध्यभागश्च, येषां तादृशाः, कुम्भा इव=कलशा यथा, एषां=वाल्मीकिप्रभृतिप्राक्तनानां कवीनां काव्यकथाकथानकरसैः—काव्यानां, कथानां कथानकानां च रसैः, परिपूर्णानि=आपूरितानि, कर्णौ=श्रवणे, हृदयं=मानसं च येषां तादृशा; अमी=एते, इदानीन्तना विद्वांसः सन्ति, ततः मादृशां=मद्विधानां, वाच्यविवेकविक्लवधियाम्—वाच्यानां=प्रतिपाद्यविषयाणां, विवेके=निर्धारणे, विक्लवा=विह्वलाऽकुशलेत्यर्थः, धीःजेबुद्धिर्येषां तथाविधानाम्, इदृग्विधाः=एवंप्रकाराः, तुच्छा इत्यर्थः, वाचः=वाण्यः, क्व किल=कुत्र खलु, अवकाशं=स्थानं, लप्स्यन्ते=प्राप्स्यन्ति ? तर्हि किमर्थोऽयमायास इत्याह—अथवेति। अथवा सूरयः=विद्वांसः, सर्वंसहाः=सर्वमुत्कृष्टं निकृष्टं वा सहन्ते क्षमन्त इति तादृशा भवन्ति। विद्वांसो मर्षणशीलतया निकृष्टभणितिष्वपि तोषं यान्तीति विचिन्त्य मल्लक्षणस्यापि जनस्य काव्ये प्रवृत्तिरिति भावः। सर्वंसहा इत्यत्र 'संज्ञायां भृतॄवृजिधारिसहितपि दमः' इति खचि, 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' इति मुमागमः। पूर्वार्द्धे उपमाऽलंकारः। शार्दूलविक्रीड़ितं वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्। इति ॥१५॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार इन कवियों के काव्य, कथा, कथानक आदि के रसों से परिपूर्ण कर्ण एवं अन्तःकरण से युक्त ये विद्वान् लोग दुग्ध से आप्लावित कलश के समान हैं—ऐसी स्थिति में वर्णनीय वस्तु के उपस्थापन में विवेकशून्य हमारे जैसे व्यक्तियों की वाणी कहाँ से स्थान प्राप्त कर सकेगी ? अथवा (फिर भी) निराश होने की कोई आवश्यकता नहीं है; क्योंकि विद्वान् लोग (उत्कृष्ट या निकृष्ट) सब कुछ सहन करने में समर्थ होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—यहाँ महाकवि त्रिविक्रम भट्ट द्वारा अपनी विनम्रता का प्रदर्शन किया गया है, जो कि उचित ही है ॥१५॥

वाचः काठिन्यमायान्ति भङ्गश्लेषविशेषतः ।
नोद्वेगस्तत्र कर्तव्यो यस्मान्नैको रसः कवेः ॥१६॥

अन्वयः—वाचः भङ्गश्लेषविशेषतः काठिन्यम् आयान्ति, तत्र उद्वेगः न कर्तव्यः; यस्मात् कवेः एकः रसः न (भवति) ॥१६॥

कल्याणी—कठिनाऽपि भङ्गश्लेषमयी शैली काव्यरचनाचारुत्वेन कोमलकाव्यापेक्षयोत्कृष्टं रसमनुभावयति, तन्न तत्रोद्वेगः कार्यं इति श्लोकद्वयेनाह—वाच इति। वाचः=गिरः, भङ्गश्लेषविशेषतः—सभङ्गश्लेषालङ्कारवैशिष्ट्यात, काठिन्यं=दुर्बोधत्वम्, आयान्ति=प्राप्नुवन्ति। तत्र=तादृशे काव्ये, उद्वेगः=खेदः, न कर्त्तव्यः=नोद्विग्नं मनः कार्यमिति भावः। यस्मात्=यतो हि कवेः एकः रसः न, भिन्नरुचिर्हि कविरित्यर्थः। प्रतिभासम्पन्नः कविः स्वकाव्ये कुत्रचित् काठिन्यं जनयति तथापि तस्य कठिना अपि सूक्तयः सहृदयहृदयं प्राप्य रचनाचारुत्वेन परमानन्दमेवानुभावयन्ति न तूद्वेगमिति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१६॥

ज्योत्स्ना—सभङ्गश्लेष में वाणी यद्यपि विशेष रूप से क्लिष्ट हो जाती है, फिर भी उसमें उद्वेग नहीं करना चाहिए—उसके प्रति उद्विग्न होकर अनिच्छा नहीं प्रकट करनी चाहिए; क्योंकि कवि के लिए (सर्वदा) एक ही रस नहीं होता अर्थात् कवि की अभिरुचि बराबर एक समान नहीं रहती।

विमर्श—यहाँ प्रकारान्तर से यह स्पष्ट किया गया है कि श्लिष्ट काव्यों की रचना में कवि को आनन्द की अनुभूति होती है ॥१६॥

काव्यस्याम्रफलस्येव कोमलस्येतरस्य च ।
बन्धच्छायाविशेषेण रसोऽप्यन्यादृशो भवेत् ॥१७॥

अन्वयः—कोमलस्य इतरस्य च आम्रफलस्य इव बन्धच्छायाविशेषेण रसः अपि अन्यादृशः (भवति, तथैव) काव्यस्य (बन्धच्छायाविशेषेण रसोऽपि अन्यादृशः) भवेत् ॥१७॥

कल्याणी—काव्यस्येति। कोमलस्य=मृदुलस्य, इतरस्य=भिन्नस्य कठोरस्य च आम्रफलस्य, इव=यथा, मृदुलस्य कठोरस्य चाम्रफलस्य, बन्धच्छायाविशेषेण-बध्यतेऽनेनेति बन्धः=वृन्तं, छाया=रक्तपीतादिकान्तिश्च तयोर्विशेषेण=भेदेन रसोऽपि=स्वादोऽपि, अन्यादृशः=मधुराम्लादिरूपः विभिन्नः भवति, तथैव कोमलस्य=प्रसादगुणोपेतस्य, इतरस्य च=तद्भिन्नस्य वचनभङ्गिम्ना दुर्वेद्यस्य च, काव्यस्य=काव्यग्रन्थस्य, बन्धच्छायाविशेषेण—बन्धस्य=कोमलत्ववक्रत्वादिविशिष्टरचनायाः, छायाया=भङ्ग्यन्तरेण,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्षणया व्यञ्जनया चार्थप्रकाशनपरिपाट्याश्च; विशेषेण=भेदेन, रसोऽपि=शृङ्गारादिरसोऽपि, अन्यादृशः=अन्यरूपः, भवेत्, कोमलकाव्यापेक्षया कठिनकाव्यस्य रसः समुत्कृष्ट इव स्यादिति भावः। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१७॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार खुली जगह में धूप एवं हवा के सम्पर्क से पके हुए आम्रफल के स्वाद की अपेक्षा डण्ठलों से आवृत्त छाया में पकाये गये आम्रफल का रस—स्वाद भिन्न प्रकार का (अतिशय मधुर) हो जाता है, उसी प्रकार कोमल प्रसादादि गुणों से समन्वित काव्य की अपेक्षा भङ्गश्लेषादि से समन्वित क्लिष्ट काव्य का रस—आनन्द कुछ और ही होता है।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि प्रसाद आदि गुण से समन्वित सुकोमल काव्यों के आलोड़न से होनेवाली रसानुभूति में और श्लेषयुक्त क्लिष्ट काव्यों के आलोड़न से होनेवाली रसानुभूति में बन्धच्छाया—पदसंघटनामूलक विशिष्टता के कारण अन्तर आ ही जाता है ॥१७॥

अस्ति समस्तमुनिमनुजवृन्दवृन्दारकवन्दनीयपादारविन्दस्य भगवतो विधेर्विश्वव्यापिव्यापारपारवश्यादवतीर्णस्य संसारचक्रे क्रतुक्रियाकाण्डशौण्डस्य शाण्डिल्यनाम्नो महर्षेर्वंशः।

कल्याणी—कविः स्ववंशपरिचयं ददाति—अस्तीत्यादिना। समस्तमुनीनां, मनुजानां=मानवानां च, वृन्देन=समूहेन, वृन्दारकैः=देवैश्च, वन्दनीये=नमस्करणीये, पादारविन्दे=चरणकमले, यस्य तस्य, भगवतः=षडैश्वर्यसम्पन्नस्य, विधेः=ब्रह्मणः, विश्वव्यापी यो व्यापारः=सृष्टिरचनात्मिका क्रिया, तस्य पारवश्यात्=पारतन्त्र्यात्, संसारचक्रे=संसारश्चक्रमिव, जन्ममरणावृत्त्येति भावः। तस्मिन् अवतीर्णस्य=गृहीतजन्मनः, क्रतुक्रियाकाण्डशौण्डस्य=याज्ञिककर्मकाण्डप्रवीणस्य, शाण्डिल्यनाम्नः=शाण्डिल्याख्यस्य, महर्षेः=महामुनेः, वंशः=कुलम्, अस्ति=वर्तते।

ज्योत्स्ना—समस्त मुनियों एवं मानवसमूहों के श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा वन्दनीय चरणकमलों वाले, भगवान् ब्रह्मा के संसार में व्याप्त (जन्म-मरणरूप) व्यापार की परवशता—अधीनता से इस संसार-चक्र में अवतीर्ण हुए, यज्ञ-कर्म में निष्णात शाण्डिल्य नामक महर्षि का वंश है।

विमर्श—सृष्टिकर्ता अपने सृष्टिरचनारूपी व्यापार का विषय सबको बना लेते हैं; क्योंकि सभी लोकों के समस्त चराचर प्राणी, देवी-देवता इत्यादि उनके ही अधीन हैं। उनके इसी व्यापार का विषय होने के कारण भगवान् विष्णु को भी राम-कृष्ण आदि के रूप में अवतार धारण कर संसार-चक्र में आना पड़ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। इसी प्रकार दिव्य शक्तिसम्पन्न देवकोटि वाले महर्षि शाण्डिल्य को भी सृष्टिकर्ता ब्रह्मा द्वारा अपने व्यापार का विषय बना दिये जाने पर पराधीनता के कारण इस संसार-चक्र में आबद्ध होकर जन्म ग्रहण करना पड़ा ॥

श्रूयन्ते च यत्र श्रवणोचिताश्चन्दनपल्लवा इव केचिदनूचानाः शुचयः सत्यवाचो विरञ्चिवर्चसोऽर्चनीयाचारा ब्रह्मविदो ब्राह्मणाः। पुण्यजनाश्च न च ये लङ्कापुरुषाः, ससूत्राश्च न च ये लम्पटाः, प्रसिद्धाश्च न च ये लम्पाकाः, कामवर्षाश्च न च ये लङ्घनाः सन्मार्गस्य, नववयसोऽपि न च ये लम्बालकाः, महाभारतिकाश्च न च ये रङ्गोपजीविनः, सेविताप्सरसोऽपि न च ये रम्भयान्विताः।

कल्याणी – श्रूयन्त इति। यत्र=शाण्डिल्यनाम्नो महर्षेर्वंशे, श्रवणोचिताः—श्रवणयोः=कर्णयोरवतंसीकरणाय, उचिता=योग्याः, चन्दनपल्लवा इव=चन्दनतरुकिसलया इव, श्रवणोचिता=आकर्णनयोग्याः, पुण्यरूपत्वादिति भावः। केचित्, अनूचानाः=विद्वांसः, शुचयः=पवित्राः, सत्यवाचः=सत्यवादिनः, विरञ्चिवर्चसः—विरञ्चिः=ब्रह्मा, तस्येव वर्चः=तेजः येषां ते तथोक्ताः, अर्चनीयाचाराः-- अर्चनीयः=पूज्यः, प्रशस्य इत्यर्थः। आचारः=आचरणं येषां ते तादृशाः, ब्रह्मविदः=ब्रह्मवेत्तारः, ब्राह्मणाः=विप्राः; श्रूयन्ते=आकर्ण्यन्ते, प्रथितयशस्कत्वादिति भावः। पुण्यजनाः राक्षसाश्च न ये लङ्कापुरुषाः—न हि लङ्कावासिन इति विरोधः, ('अथ पुण्यजनो यक्षे राक्षसे सज्जनेऽपि च' इति कोशः) पुण्यजनाः=पवित्रजनाः, सज्जना इत्यर्थः, न च ये अलम्=अत्यर्थं, कापुरुषाः=कुत्सिताः पुरुषा इति विरोधपरिहारः। ससूत्राश्च न च ये लम्पटाः—सूत्रेण=तन्तुना सहिता अपि (येलम्पटाः=ये अलम् पटाः) ये अलम्=अत्यन्तं, पटा=वस्त्राणि येषां ते तादृशा न सन्तीति विरोधः, सूत्रेण=उपवीतेन युक्ता ये लम्पटा=दुश्चरित्रा न सन्तीति विरोधपरिहारः। प्रसिद्धाश्च न च ये लम्पाकाः—प्रकर्षेण सिद्धा=अग्निना संस्कृता अपि (येलम्पाकाः—ये अलम् पाकाः) ये अलम्=अत्यर्थं, पाकः=पक्वभावः येषां ते तादृशा न सन्तीति विरोधः, प्रसिद्धाश्च=प्रख्याताश्च, ये लम्पाका=लम्पटा न सन्तीति विरोधपरिहारः। कामवर्षाश्च न च ये लङ्घनाः सन्मार्गस्य—कामवर्षा=यथेच्छं वर्षणशीला अपि न च (ये+अलम् घनाः) ये अलम्=अत्यर्थं, घना=मेघा इति विरोधः, कामवर्षाः=अभीष्टदातारः न च ये सन्मार्गस्य=सत्पथस्य, लङ्घनाः=अतिक्रमणशीला इति विरोधपरिहारः। नववयसोऽपि न च ये लम्बालकाः—नववयसः अल्पावस्था अपि न च (ये+अलम् बालकाः) ये अलम्=अत्यन्तं, बालकाः=शिशव इति विरोधः, नवत्रयसः=तरुणावस्था अपि न च (ये+लम्बालकाः) ये लम्बा=दीर्घा, अलकाः=केशा येषां ते तादृशाः इति विरोधपरिहारः। महाभारतिकाश्च न च ये रङ्गोपजीविनः—महाभारतिकाः=महान्तो नटाश्च, न च ये रङ्गोपजीविनः=नाट्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शालावृत्तय इति विरोधः, महाभारतिकाः=महाभारतकथावाचकाश्च न च (ये+अरम्+गोप जीविनः) ये अरम्=अत्यन्तं, गां=भूमिं पातीति गोपः= राजा, तस्मादुपजीवन्ति=तद्दत्तमन्नादिकं भुञ्जते इति तादृशाः, 'राजान्नं तेज आदत्ते' इति दोषप्रसिद्धेः, इति विरोधपरिहारः। सेविताप्सरसोऽपि न च ये रम्भयान्विताः—सेविता=भुक्ता, अप्सरसः=सकलदेवाङ्गना यैस्ते तादृशा अपि न च ये रम्भया=तन्नाम्न्या अप्सरसा, अन्विताः=युक्ता इति विरोधः, सेवितानि, अपां=जलानां, सरांसि=जलपूर्णाः सरोवरा यैस्ते तादृशा अपि न च (ये+अरम्+भयान्विताः) ये अरम्=अत्यर्थं, भयान्विताः=त्रासयुक्ता इति विरोधपरिहारः। अत्र सर्वत्र श्लेषानुप्राणितो विरोधाभासोऽलङ्कारः।

ज्योत्स्ना—उन्हीं महर्षि शाण्डिल्य के कुल में कानों पर धारण किये जाने योग्य चन्दन वृक्ष के पल्लवों के समान प्रिय, विद्वान्, पवित्र, सत्यवक्ता, ब्रह्मतेज से समन्वित, पूजनीय आचरण से युक्त कतिपय ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण (उत्पन्न हुए, ऐसा) सुना जाता है। वे पुण्य—पवित्र लोग थे, परन्तु लङ्कापुरुष - राक्षस नहीं थे; यज्ञोपवीतधारण करने वाले थे, पर लम्पट—धूर्त नहीं थे; विख्यात थे, लेकिन लम्पाक—नीच नहीं थे; समस्त कामनाओं को देने वाले थे, किन्तु उचित मार्ग का अतिक्रमण करने वाले नहीं थे; युवा थे, लेकिन उनके बाल लम्बायमान (लम्बे-लम्बे) नहीं थे; महाभारत की कथा को कहने वाले थे, लेकिन नाटक आदि का प्रदर्शन कर अपनी जीविका का निर्वाह करनेवाले नहीं थे अथवा विशाल भारत के निवासी तो थे, लेकिन वहाँ के राजा से कुछ लेने वाले नहीं थे; सरोवरों का सेवन करने वाले थे, लेकिन रम्भा आदि अप्सराओं से सम्बद्ध नहीं थे।

किं बहुना,

जानन्ति हि गुणान्वक्तुं तद्विधा एव तादृशाम्।
वेत्ति विश्वम्भरा भारं गिरीणां गरिमाश्रयम् ॥१८॥

अन्वयः—तादृशां गुणान् वक्तुं तद्विधाः एव जानन्ति; हि गिरीणां गरिमाश्रयं भारं विश्वम्भरा एव वेत्ति ॥१८॥

कल्याणी—किं बहुना=अधिकेन किम्। जानन्तीति। तादृशां=तथाविधानां सकलगुणगौरवमण्डितानां, गुणान्=दयादाक्षिण्यादीन्, वक्तुं=वर्णयितुं, हि तद्विधा=तत्तुल्या एव जना जानन्ति, न हि मादृशो जन इति भावः। गिरीणां=पर्वतानां, गरिमाश्रयम्=गुरुत्वाधारं, भारं, विश्वंभरा=पृथिवी एव, वेत्ति=जानाति। अत्र सादृश्याभिव्यञ्जनानिर्भरे वाक्यार्थद्वये एकैव क्रिया पौनरुक्त्यनिरासाय भिन्नवाचकतया निर्दिष्टा, तस्मात् प्रतिवस्तूपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ, उनके समान गुणों से समन्वित पुरुषों के गुणों का वर्णन करने में उन गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही समर्थ हो सकते हैं; क्योंकि पर्वतों के गरिमामूलक भार को विश्व के भार को धारण करने वाली पृथ्वी ही जानती है, (अन्य कोई नहीं) ॥१८॥

तेषां वंशे विशदयशसां श्रीधरस्यात्मजोऽभूद्
देवादित्यः स्वमतिविकसद्वेदविद्याविवेकः ।
उत्कल्लोलां दिशि दिशि जनाः कीर्तिपीयूषसिन्धुं
यस्याद्यापि श्रवणपुटकैः कूणिताक्षाः पिबन्ति ॥१९॥

अन्वयः—विशदयशसां तेषां वंशे स्वमतिविकसद्वेदविद्याविवेकः देवादित्यः श्रीधरस्य आत्मजः अभूत्; यस्य दिशि दिशि उत्कल्लोलां कीर्तिपीयूषसिन्धुम् अद्यापि जनाः कूणिताक्षाः श्रवणपुटकैः पिबन्ति ॥१९॥

कल्याणी—**तेषामिति** । विशदं=निर्मलं, यशो येषां तथाविधानां, तेषां =शाण्डिल्यवंश्यानां विप्राणां, वंशे=कुले, स्वमतिविकसद्वेदविद्याविवेकः—स्वमत्या=स्वप्रतिभया, विकसन्=प्रकाशमानः, वेदविद्यायाः विवेकः=यथोचितज्ञानं यस्य स तथोक्तः, देवादित्यः=तदाख्य इत्यर्थः, श्रीधरस्य=तदाख्यस्य पुरुषस्य, आत्मजः=पुत्रः, अभूत्=जातः। यस्य=देवादित्यस्य, दिशि दिशि=प्रतिदिशम्, उत्कल्लोलाम्=तरङ्गमालाकुलाम्, कीर्तिपीयूषसिन्धुम्—कीर्तिरेव पीयूषसिन्धुः=सुधासरित् ताम्, ("देशे नदविशेषेऽब्धौ सिन्धुर्ना सरिति स्त्रियाम्" इत्यमरः) । अद्यापि=इदानीमपि, जनाः=लोकाः, कूणिताक्षाः—कूणितानि=सुखात् किञ्चिन्निमीलितानि, अक्षीणि=नेत्राणि येषां ते तथाभूताः श्रवणपुटकैः=कर्णचषकैः, पिबन्ति=पानं कुर्वन्ति । यस्य यशोऽद्यापि प्रतिदिशमभिव्याप्याक्षीणं विद्यत इति भावः । रूपकालङ्कारः । मन्दाक्रान्ता वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मोभनौ तौ गयुग्मम् ।' इति ॥

ज्योत्स्ना—निर्मल यश से समन्वित उन शाण्डिल्य मुनि के कुल में श्रीधर के पुत्र देवादित्य हुए, जो अपनी प्रतिभा के विकसित होने से वेद-विद्या के समुचित ज्ञान से सम्पन्न थे; जिनकी प्रत्येक दिशा में उमड़ती हुई कीर्तिरूपी सुधा-सिन्धु का आज भी लोग आँखें मूंदकर कर्ण (कानरूपी) पुटकों (दोनों) से पान करते हैं। अर्थात् जिनकी कीर्ति आज भी समस्त संसार में व्याप्त है और जिसका सांसारिक जन बराबर गान करते रहते हैं ॥१९॥

तैस्तैरात्मगुणैर्येन त्रिलोक्यास्तिलकायितम् ।
तस्मादस्मि सुतो जातो जाड्यपात्रं त्रिविक्रमः ॥२०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—तैः तैः आत्मगुणैः येन त्रिलोक्याः तिलकायितम्; तस्मात् जाड्यपात्रं त्रिविक्रमः सुतः जातः अस्मि ॥२०॥

कल्याणी— तस्तैरिति । तैस्तैः=प्रसिद्धैः, आत्मगुणैः=स्वकीयालौकिकगुणैः; येन=देवादित्येन, त्रिलोक्याः=त्रिभुवनस्य, तिलकायितम्=तिलकवदाचरितम्, क्यङन्ताद्भावे क्तः । तस्मात्=देवादित्यात्, जाड्यपात्रं=मन्दबुद्धिः, त्रिविक्रमः=त्रिविक्रमनामा, सुतः=पुत्रः, जातोऽस्मि=उत्पन्नोऽस्मि । 'येन त्रिलोक्यास्तिलकायितम्' इत्यत्रोपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२०॥

ज्योत्स्ना—अपने उन उपर्युक्त अलौकिक गुणों के कारण जो तीनों लोकों में तिलक के समान थे—शीर्षस्थ थे, उन्हीं देवादित्य से जड़ता का पात्रस्वरूप मैं त्रिविक्रम नामक पुत्र उत्पन्न हुआ हूँ ।

विमर्श—कवि ने अपने पिता देवादित्य की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए अपने को जड़—मूर्ख कहकर अपनी विनम्रता एवं पिता के प्रति अतिशय श्रद्धा का प्रदर्शन किया है ॥२०॥

सोऽहं हंसायितुं मोहाद् बकः पङ्गुर्यथेच्छति ।
मन्दधीस्तद्वदिच्छामि कविवृन्दारकायितुम् ॥२१॥

अन्वयः—सः अहं मन्दधीः यथा पङ्गुः बकः मोहात् हंसायितुम् इच्छति; तद्वत् कविवृन्दारकायितुम् इच्छामि ॥२१॥

कल्याणी— सोऽहमिति । सोऽहं=तथाविधः मन्दधीः, अहं त्रिविक्रमः, यथा=येन प्रकारेण, पङ्गुः= भग्नचरणः, बकः=बकपक्षी, मोहाद्=अज्ञानात्, हंसायितुम्=स्वभावसुभगगतिर्हंस इवाचरितुम्, इच्छति=आकांक्षति, तद्वत्=तथैव, कविवृन्दारकायितुम्—कविवृन्दारक =कविश्रेष्ठ इवाचरितुम्, इच्छामि=अभिलषामि । यथा कश्चिद् बकः पङ्गुरपि मोहाद्धंसो भवितुमभिलषति तथैवाहं मन्दधीरपि कविश्रेष्ठो भवितुं वाञ्छामीति भावः । उपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार लंगड़ा (टूटे पैरों वाला) बगुला अपनी अज्ञानता के कारण स्वभावतः सुन्दर गति से चलने वाले हंस के समान बनना चाहता है—चलने की इच्छा करता है, उसी प्रकार मन्द बुद्धि वाला मैं त्रिविक्रमभट्ट भी कवियों के समूह में श्रेष्ठ बनने की कामना करता हूँ ॥२१॥

भङ्गश्लेषकथाबन्धं दुष्करं कुर्वता मया ।
दुर्गस्तरीतुमारब्धो बाहुभ्यामम्भसां पतिः ॥२२॥

अन्वयः—दुष्करं भङ्गश्लेषकथाबन्धं कुर्वता मया दुर्गः अम्भसां पतिः बाहुभ्यां तरीतुम् आरब्धः ॥२२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—भङ्गश्लेषेति। दुष्करं=दुःसाध्यं, भङ्गश्लेषकथाबन्धं—भङ्गश्लेषेण=सभङ्गश्लेषेण, कथाबन्धं=नलदमयन्तीकथासंरचनां, कुर्वता=विदधता, मया=त्रिविक्रमेण, दुर्गः=दुस्तर इत्यर्थः, अम्भसां पतिः=सागरः, बाहुभ्यां=भुजाभ्यां, तरीतुम्, आरब्धः=उपक्रान्तः। भङ्गश्लेषेण दुष्करकथाबन्धकरणं बाहुभ्यां, दुस्तरसमुद्र सन्तरणमिवेति भावः। निदर्शनाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—अत्यन्त कठिन भङ्गश्लेष से समन्वित कथा-प्रबन्ध का प्रणयन करते हुए मुझे ऐसा प्रतीत होता है, मानों मैं दुस्तर सागर को अपने दोनों हाथों से पार करना प्रारम्भ कर रहा हूँ ॥२२॥

उत्फुल्लगल्लैरालापाः क्रियन्ते दुर्मुखैः सुखम्।
जानाति हि पुनः सम्यक्कविरेव कवेः श्रमम् ॥२३॥

अन्वयः—दुर्मुखैः उत्फुल्लगल्लैः सुखम् आलापाः क्रियन्ते, पुनः कवेः श्रमं कविः एव सम्यक् जानाति ॥२३॥

कल्याणी—उत्फुल्लेति। दुर्मुखैः=कटुभाषिभिर्दुष्टैररसिकैः, उत्फुल्लगल्लैः—उत्फुल्लौ=प्रसारितौ, गल्लौ=कपोलौ, येषां तैस्तथाविधैः सद्भिः, सुखम्=स्वैरम्, आलापाः=व्यङ्ग्यपूर्णानि संभाषणानि, क्रियन्ते। पुनः=किन्तु, कवेः=काव्यकर्तुः, श्रमं=प्रयासं, कविरेव=यः स्वयं काव्यकर्ता स एव, सम्यक्=पूर्णतः, जानाति। हीति निश्चये। कस्यचित्कवेः काव्यमव लोक्य दुर्जना अरसिकास्तद्दोषानेवोद्भावयन्त आनन्दमनुभवन्ति किन्तु कश्चित्कविरपरस्य कवेः श्रममवगत्य तत्काव्यसौष्ठवं प्रशंसतीति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२३॥

ज्योत्स्ना—दुर्मुख—निन्दा करने वाले लोग गला फाड़-फाड़कर बड़े ही सुख के साथ आलाप—दूसरों की निन्दारूप प्रलाप किया करते हैं, किन्तु कवि द्वारा किये गये (काव्यनिर्माणरूप) परिश्रम को तो कोई (काव्यकर्त्ता) कवि ही अच्छी प्रकार समझ सकता है।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि परनिन्दारत प्रलापी लोग किसी कवि द्वारा अपनी कृति में व्यक्त किये गये भावों को समझने में असमर्थ होकर उसकी निन्दा में ही सर्वदा रत रहते हैं, क्योंकि कवि के भावों को तो कोई कवि ही समझने में समर्थ हो सकता है ॥२३॥

संगता सुरसार्थेन रम्या मेरुचिराश्रया।
नन्दनोद्यानमालेव स्वस्थैरालोक्यतां कथा ॥२४॥

अन्वयः—सुरसार्थेन सङ्गता रम्या मेरुचिराश्रया नन्दनोद्यानमाला इव कथा स्वस्थैः आलोक्यताम् ॥२४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—संगतेति । सुरसार्थेन–सुराणां=देवानां, सार्थेन=समूहेन, संगता=सहिता, रम्या=रमणीया, मेरुचिराश्रया—मेरुर्नाम गिरिः, चिरं=चिरकालमभिव्याप्य, आश्रयः=निवासस्थानं यस्याः सा तथोक्ता; नन्दनोद्यानमालेव=इन्द्रोपवनपंक्ति र्यथा, स्वस्थैः–स्वः=स्वर्गः, तत्रस्थैर्देवैः आलोक्यते, स्वस्थैरित्यत्र स्वर्गतविसर्गलोपो ज्ञेयः 'खर्परे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः' इति वचनात् । सुरसार्थेन–शोभना रसाः=शृङ्गारादयः, यत्र तादृशेन अर्थेन संगता=सम्पृक्ता, मे=मम, रुचिराश्रया—रुचिरः=मनोरमः आश्रयः=आधारः, नलोपाख्यानरूप इत्यर्थः; यस्यास्तादृशी कथा=वर्णयिष्यमाणा नलदमयन्ती कथा स्वस्थैः=समाहितचित्तैः, आलोक्यताम्=गुणदोषविवेचनेन परिशील्यताम् । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—[कथापक्ष में] सुन्दर शृङ्गारादि रसमय अर्थों से परिपूर्ण, रमणीय तथा अत्यन्त मनोरम आख्यान–नलोपाख्यान (नल-दमयन्ती कथा) पर आधारित नन्दन वन-पंक्तिसदृश मेरी इस कथा को सुस्थिर चित्त वाले लोग देखें, अर्थात् गुणदोषविवेचनपूर्वक मेरी इस रचना का परिशीलन करें।

[नन्दनवन पक्ष में] देवताओं के समूह से समन्वित, रमणीय तथा चिरकाल से मेरु पर्वत का आश्रय लेकर अवस्थित नन्दन-वनपंक्ति स्वर्ग में रहने वाले देवताओं द्वारा देखी जाती है ॥२४॥

उदात्तनायकोपेता गुणवद्वृत्तमुक्तका ।
चम्पूश्च हारयष्टिश्च केन न क्रियते हृदि ॥२५॥

अन्वयः—उदात्तनायकोपेता गुणवद्वृत्तमुक्तका चम्पूः हारयष्टिः च केन हृदि न क्रियते ॥२५॥

कल्याणी—उदात्तेति । उदात्तनायकोपेता—उदात्तेन=भद्रेण, धीरोदात्तेनेत्यर्थः, नायकेन=नेत्रा, उपेता=युक्ता, गुणवद्वृत्तमुक्तका—गुणवन्ति=ओजःप्रसादादिगुणयुक्तानि, वृत्तानि=पद्यानि, मुक्तकानि=गद्यानि यस्यां सा; चम्पूः=गद्यपद्यमयी साङ्का सोच्छ्वासा कथा, उदात्तेन=महार्घेण, नायकेन, हारमध्यमुख्यमणिना, उपेता=युक्ता, गुणवत्यः=सूत्रमत्यः, वृत्ताः=वर्तुलाकाराः, मुक्ताः=मौक्तिकानि यस्यां तादृशी; हारयष्टिश्च=मुक्ताहारलता च, केन=जनेन, हृदि=चित्ते वक्षसि च, न क्रियते=न धार्यते, सर्वेणैव धार्यत इत्यर्थः । अत्र चम्पूहारयष्टिरूपप्रस्तुताप्रस्तुतयोरेकधर्माभिसम्बन्धाद् दीपकालङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—(चम्पूपक्ष में) उदात्त नायक से युक्त, प्रसाद-ओज-माधुर्य आदि गुणों, छन्दों तक मुक्तक—गद्य से समन्वित चम्पू को उज्ज्वल मध्यमणि की माला के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान कौन व्यक्ति हृदयङ्गम नहीं करता ? अर्थात् सभी लोग ऐसी रचना को अपने हृदय में स्थान देते हैं।

(हारपक्ष में) उज्ज्वल और मध्य में मणि से समन्वित, तन्तुओं— सूत्रों में गूँथी गई मोतियों के हार को कौन व्यक्ति अपने वक्षःस्थल पर धारण नहीं करता ? अर्थात् सभी लोग धारण करते हैं ॥२५॥

अस्ति समस्तविश्वंभराभोगभास्वल्ललामलीलायमानः समानः सेव्यतया नाकलोकस्य, ग्राम्यकविकथाबन्ध इव नीरसस्यमनोहरः; भीम इव भारतालङ्कारभूतः, कान्ताकुचमण्डलस्पर्श इवाग्रणीः सर्वविषयाणाम् । अनधीतव्याकरण इवादृष्टप्रकृतिनिपातोपसर्गलोपवर्णविकारः पशुपति-जटाबन्ध इव विकसितकनककमलकुवलयोच्छलितरजःपुञ्जपिञ्जरितहंसावतंसया प्रचुरचलच्चकोरचक्रवाककारण्डवमण्डलीमण्डिततीरया भगीरथभूपालकीर्तिपताकया स्वर्गगमनसोपानवीथीयमानरिङ्गत्तरङ्गया गङ्गया पुण्यसलिलैः प्लावितश्चन्द्रभागालंकृतैकदेशश्च, सारः सकलसंसारचक्रस्य, शरण्यः पुण्यकारिणाम्, आरामो रामणीयककदलीवनस्य, धाम धर्मस्य, आस्पदं संपदाम्, आश्रयः श्रेयसाम्. आकरः साधुव्यवहाररत्नानाम्, आचार्यभवनमार्यमर्यादोपदेशानामार्यावर्तो नाम देशः ॥

कल्याणी—अस्तीति । समस्तविश्वंभराभोगभास्वल्ललामलीलायमानः—समस्तः यः विश्वम्भरायाः=भुवः, आभोगः=मण्डलं, तत्र, भास्वद्=दीप्यमानं, ललामं=शिरोभूषणं, तस्य लीला=सौन्दर्यमिव, आचरतीति तथोक्तः, सकलभूमण्डलश्रेष्ठ इति भावः । क्यङन्ताल्लटः शानच् । सेव्यतया=सेवनीयतया, नाकलोकस्य=स्वर्गलोकस्य, समानः, स्वर्गलोक इव सेवनीय इत्यर्थ । ग्राम्यकविकथाबन्ध इव-ग्राम्याः=सामान्या, ये कवयः, तेषां कथाबन्धः=कथाग्रन्थ इव, नीरसस्यमनोहरः—नीरेण=जलेन, सस्येन= धान्येन, च मनोहरः=मनोज्ञः; पक्षे नीरसस्य=अरसिकस्य, मनोहरः=मनोज्ञः । भीमः=द्वितीयः पाण्डवः, राजकुमारः, स इवः भारतालंकारभूतः=भारतवर्षस्य मण्डनभूतः, पक्षे—महाभारतकाव्यस्यालङ्कारभूतः असाधारणशौर्यशक्तिसाहसप्रदर्शनादिति भावः । कान्ताकुचमण्डलस्पर्शः=रमणीस्तनस्पर्श इव, सर्वविषयाणां=सकलदेशानां, पक्षे-सकलेन्द्रियभोग्यविषयाणाम्, अग्रणीः=मुख्यः । अनधीतव्याकरण इव—नाधीतं व्याकरणं येन स इव, अदृष्टप्रकृतिनिपातोपसर्गलोपवर्णविकारः—न दृष्टः प्रकृतीनां=प्रजानां, निपातः= पतनम्, उपसर्गः=धनापहारादिरूप उपद्रवः, लोपः=वेदविहितनियमाद्यपालनम्, वर्णविकारः=चातुर्वर्ण्याव्यवस्था च यस्मिन् स तथोक्तः, पक्षे—न दृष्टः=न ज्ञातः, प्रकृतयः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धात्वादयः, निपातः=चादयः, उपसर्गाः=प्रादयः, लोपः=प्रसक्तस्यादर्शनम्, वर्णविकारश्च=अक्षरविकृतिश्च येन स तथोक्तः। पशुपतिजटाबन्ध इव—पशुपतिः=शिवः, तस्य जटाबन्धः=जटाजूट इव, विकसितानि=उत्फुल्लानि, यानि कनककमलानि=स्वर्णजलजानि, कुवलयानि=नीलकमलानि च, तेषाम् उच्छलितैः, परित उत्पतितैः, रजःपुञ्जैः=परागसमूहैः, पिञ्जरिता=ईषत्पीतवर्णा, हंसा=हंसाख्यपक्षिण एव, अवतंसा=आभूषणानि यस्यास्तादृश्या, प्रचुराणां=बहुलानां, चलताम्=इतस्ततः विरहतां, चकोराणां=चक्रवाकानां च, कारण्डवानां=जलपक्षिविशेषाणां च, मण्डलीभिः=समूहैः मण्डितम्=अलङ्कृतं, तीरं=तटप्रदेशः यस्यास्तादृश्या, भगीरथो नाम यो भूपालः=राजा, तस्य या कीर्तिस्तस्याः पताकेव तया, स्वर्गगमनाय सोपानवीथयः=सोपानपरम्परा इव, आचरन्तः, रिङ्गन्तः=मन्दमन्दं चलन्तः, तरङ्गा=लहर्यः, यस्यास्तया गङ्गया, पुण्यसलिलैः=पावनवारिभिः, प्लावितः=आर्द्रीकृतः, चन्द्रभागा नाम नदी, तयाऽलङ्कृत एकदेशः=एकभागः यस्य तादृशश्च, पक्षे—चन्द्रभागेन=शशिखण्डेन, चालङ्कृत एकदेशः यस्य स तथोक्तः। सकलसंसारचक्रस्य=समस्तभुवनमण्डलस्य, सारः=तत्त्वभूतोंऽशः, पुण्यकारिणां=सुकृतिनां, शरण्यः=आश्रयः, रामणीयकस्य=सौन्दर्यरूपस्य, कदलीवनस्य आरामः=उपवनम्, धर्मस्य धाम=आवासस्थानम्, संपदाम् आस्पदं=स्थानं, श्रेयसां=मङ्गलानाम्, आश्रयः=निकेतनम्, साधुव्यवहाराः=सदाचारा एव रत्नानि, तेषाम् आकरः=निधिः। आर्यमर्यादोपदेशानाम्—आर्याणां या मर्यादा=प्रतिष्ठा, तस्या उपदेशानाम्, आचार्यभवनं=गुरुकुलम्, आर्यावर्तो नाम='आ समुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात्। तयोरेवान्तरं गिर्योः (हिमविन्ध्ययोः) आर्यावर्तं विदुर्बुधाः' इति (१०।३४) मनुस्मृत्युक्तलक्षण आर्यावर्तः प्रसिद्धो देशोऽस्ति।

ज्योत्स्ना समस्त भूमण्डल में सर्वाधिक प्रकाशयुक्त, सुन्दर तथा शोभासम्पन्न, स्वर्गलोक के समान सेवनीय; ग्राम्य—साधारण कवियों के कथात्मक ग्रन्थ के समान अरसिक लोगों के लिए भी मनोहर अथवा नीर—जल और सस्य—धान्यों के कारण सुन्दर; महाभारत के भीम के समान भूषणस्वरूप अथवा महाभारतस्थित भीम के समान ही भारत देश के भूषणस्वरूप; कामिनी के सभी भोग्य विषयों में अग्रणी कुचयुगल के स्पर्श के समान सभी देशों में अग्रगण्य; व्याकरण शास्त्र का अध्ययन किये हुए के लिए अज्ञात प्रकृति, प्रत्यय, निपात, उपसर्ग, लोप और वर्णविकार-ज्ञान के समान प्रजा में पतन; उपद्रव, वेदविहित नियमों का लोप तथा चारो वर्णों की व्यवस्था में किसी प्रकार की विकृति से रहित; एक भाग में चन्द्रमा से अलंकृत भगवान् शंकर के जटाबन्ध के समान खिले हुए पीले एवं नीलवर्ण के कमलों के झरते हुए परागों से केशरिया रंग वाले रमणीय हंस के समान दिखाई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देने वाली, सर्वथा चलायमान चकोर, चक्रवाक और सारस पक्षी के झुण्डों से सुशोभित किनारे वाली, राजा भगीरथ के लिए कीर्तिपताका के समान, स्वर्ग जाने के लिए सीढ़ियों के समान गलियों में तरङ्गित होती हुई भगवती गंगा के द्वारा पवित्र जल से आप्लावित और एक भाग में चन्द्रभागा नदी से अलंकृत; समस्त भूमण्डल के सारस्वरूप; सदाचारियों के लिए आश्रयस्वरूप (निवास करने योग्य); कदली-वन के सुन्दर उपवनों से युक्त; धर्म के निवासस्थानस्वरूप; सम्पदाओं के भूमिस्वरूप; समस्त मङ्गलों के निकेतनस्वरूप; सज्जनों के व्यवहाररूपी रत्नों के लिए निधिस्वरूप और आर्यों के लिए मर्यादास्वरूप उपदेशों को प्रदान करने के लिए गुरुकुल के समान आर्यावर्त नाम का देश है।

विमर्श—दक्षिणस्थित हिमालय और उत्तरस्थित विन्ध्य पर्वत के मध्य का वह भाग; जो पूर्व और पश्चिम में समुद्र से वेष्टित है—आर्यावर्त के नाम से जाना जाता है; जैसा कि मनु ने कहा भी है—

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरङ्गिर्यो रार्यावर्त्तं विदुर्बुधाः॥

यस्मिन्ननवरतधर्मकर्मोपदेशशान्तसमस्तव्याधिव्यतिकराः पुरुषायुषजीविन्यः सकलसंसारसुखभाजः प्रजाः। तथाहि—कुष्ठयोगी गान्धिकापणेषु, स्फोटप्रवादो वैयाकरणेषु, संनिपातस्तालेषु, ग्रहसंक्रान्तिर्ज्योतिःशास्त्रेषु, भूतविकारवादः सांख्येषु, क्षयस्तिथिषु, गुल्मवृद्धिर्वनभूमिषु, गलग्रहो मत्स्येषु, गण्डकोत्थानं पर्वतवनभूमिषु, शूलसंबन्धश्चण्डिकायतनेषु दृश्यते न प्रजासु॥

कल्याणी—यस्मिन्निति। यस्मिन्=आर्यावर्ते, अनवरतं=निरन्तरं, धर्माणां च, कर्मणां चोपदेशैः शान्ताः, समस्तव्याधिव्यतिकराः=सर्वविधतापरूपविपदः यासां तास्तथोक्ताः, पुरुषस्यायुरिति पुरुषायुषं, शतं वर्षाणीति भावः, 'शतायुर्वै पुरुष' इत्युक्तेः। 'अचतुरविचतुरेत्यादिना' (५-४-७७) पाणिनीयसूत्रेण पुरुषायुषमित्यजन्तं निपात्यते, षष्ठीसमासाद् अजिति भाष्यम्। पुरुषायुषं जीवन्तीति पुरुषायुषजीविन्यः, सकलानि=सर्वविधानि, संसारसुखं भजन्त इति तथोक्ताः प्रजा विद्यन्ते। कुष्ठयोगी गान्धिकापणेषु—कुष्ठम्=औषधविशेषः रोगविशेषश्च, तद्युक्तो जनः गन्धद्रव्यविक्रेतृणामापणेष्वेव दृश्यते, न तु प्रजासु कोऽपि कुष्ठरोगयुक्तो दृश्यत इति भावः। स्फोटप्रवादो वैयाकरणेषु—स्फुट्यते=व्यज्यतेऽर्थोऽनेनेति स्फोटः=वैयाकरणप्रसिद्धं शब्दब्रह्म, तस्य प्रकर्षेण वादः=कथनम्। स्फोटस्य=पिटकस्य प्रवादश्च। वैयाकरणेष्वेव तादृशः स्फोटप्रवादो दृश्यते, प्रजासु तु स्फोटप्रवादः (पिटकस्य प्रवादः) न दृश्यत इति भावः। संनिपातस्तालेषु—संनिपातः=उभयहस्तयोजनम्। यदुक्तम्—"यस्यां दक्षिणहस्तेन तालं वामेन योजयेत्। उभयोर्हस्तयोः पातः संनिपातः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स उच्यते ।।" वातपित्तश्लेष्मजो ज्वरविशेषश्च । सङ्गीतकप्रसङ्गेन तालदानकाल एव संनिपातः (करद्वयस्य संघर्षः) दृश्यते, न तु प्रजासु सन्निपातः (त्रिदोषजो ज्वरः) दृश्यत इति भावः । ग्रहसंक्रान्तिर्ज्योतिःशास्त्रेषु—ज्योतिःशास्त्रेष्वेव ग्रहसंक्रान्तिः=(ग्रहाणां=सूर्यादीनां) मेषादिराशौ संक्रान्तिः, न तु प्रजासु ग्रहसंक्रान्तिः (ग्रहः=बन्धनं, तस्य सङ्क्रान्तिः) दृश्यते, न कोऽपि प्राणी बन्धनाक्रान्तो दृश्यत इति भावः । भूतविकारवादः सांख्येषु—सांख्येष्वेव पृथिव्यादिभूतानां विकृतिर्दृश्यते, न तु प्रजासु भूतानां (प्रेतानाम्) विकारः=प्रकोपः दृश्यत इति भावः । क्षयस्तिथिषु—तिथिष्वेव क्षयः (हानिः) दृश्यते, न तु प्रजासु क्षयः (रोग-विशेषः) दृश्यत इति भावः । गुल्मवृद्धिर्वनभूमिषु—वनभूमिष्वेव गुल्मानां=लतादिपुञ्जानां, वृद्धिर्दृश्यते, न हि प्रजासु गुल्मस्य=तदाख्यस्य रोगविशेषस्य वृद्धिर्दृश्यत इति भावः । गलग्रहो मत्स्येषु—मीनेष्वेव बडिशेन गलेग्रहणं दृश्यते, नहि प्रजासु गलग्रहो नाम रोगविशेषो दृश्यत इति भावः । गण्डकोत्थानं पर्वतवनभूमिषु—पर्वतवनभूमिष्वेव गण्डकानां=खड्गिपशूनामुत्थानं दृश्यते, न हि प्रजासु गण्डकानां=ह्रस्वस्फोटकानामुत्थानं दृश्यत इति भाव । शूलसम्बन्धश्चण्डिकायतनेषु दृश्यते न प्रजासु—चण्डिकामन्दिरेष्वेव शूलः=आयुधविशेषस्तस्य सम्बन्धो दृश्यते, प्रजासु शूलः=रोगविशेषस्तस्य सम्बन्धो न दृश्यत इति भावः । अत्र सर्वत्र परिसंख्याऽलङ्कारः, तस्य च श्लेषमूलत्वेन वैचित्र्यविशेषो दृश्यत इत्यवगन्तव्यम् ।।

ज्योत्स्ना—जिस—आर्यावर्त देश—में निरन्तर धर्म एवं कर्म के उपदेश द्वारा समस्त प्रकार की—आध्यात्मिक-आधिभौतिक-आधिदैविक—आपद् बाधाओं को शान्त कर पुरुष-प्रमाण—सौ वर्ष तक जीवित रहने वाली और समस्त सांसारिक सुखों का उपभोग करने वाली प्रजा थी; क्योंकि-उस आर्यावर्त में—कुष्ठनामक औषधि गन्ध-द्रव्य बेचने वाले दुकानों पर ही दिखाई पड़ती थी, (प्रजा में कुष्ठ रोग नहीं था); स्फोटवाद—शब्दब्रह्मवाद—व्याकरण शास्त्र के ज्ञाताओं में ही दिखाई देता था, (प्रजा में स्फोट—फोड़ा-फुन्सी या मतभेद नहीं था); सन्निपात—दोनों हाथों का संघर्ष—ताल—संगीत के प्रसङ्ग में ही दिखाई देता था, (प्रजा में सन्निपात ज्वर का प्रकोप नहीं था); ग्रहों के संक्रान्ति की चर्चा ज्यतिष शास्त्र में ही दृष्टिगोचर होती थी (प्रजा ग्रह—बन्धन से आक्रान्त नहीं थी); भूतों—पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश—की विकृति केवल सांख्यदर्शन में ही दिखाई देती थी (प्रजा में भूत-प्रेतादि का विकार नहीं था); क्षय—ह्रास—प्रतिपद् आदि तिथियों में ही दिखाई पड़ता था (प्रजा में क्षयरोग नहीं था); गुल्म—लता आदि की वृद्धि केवल जंगलों में ही दिखाई देती थी (प्रजा में गुल्मरोग की वृद्धि नहीं दिखाई देती थी); गल-ग्रहण—गला फाँसना केवल मछलियों में ही देखा जाता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

था, (प्रजा में गलग्रह नामक रोग नहीं था); गण्डक—गैंडा का उत्थान उछाल पर्वतीय वनभूमि में ही दृष्टिगोचर होता था (प्रजा में गण्डक—फोड़ा-फुन्सी नहीं उठते थे); शूल (अस्त्रविशेष) का सम्बन्ध केवल चण्डी के मन्दिर में ही दृष्टिगोचर होता था, प्रजा से शूलनामक रोग का सम्बन्ध नहीं दिखाई देता था।

विमर्श - स्फोटवाद—यह व्याकरणशास्त्र का प्रसिद्ध सिद्धान्त है जिसे शब्दब्रह्मवाद के नाम से भी जाना जाता है। वाक्यस्फोट तथा पदस्फोट के भेद से यह मुख्यतः दो प्रकार का माना जाता है।

सन्निपात—दोनों हाथों से ताली बजाने को संगीतशास्त्र में सन्निपात के नाम से जाना जाता है। आयुर्वेद शास्त्र में वात-पित्त और कफनामक त्रिदोषों के एक साथ कुपित होने को सन्निपात कहते हैं।

ग्रहसंक्रान्ति—सूर्य आदि ग्रह प्रतिमास क्रमशः मेष-वृष आदि बारह राशियों का संक्रमण करते हुए बारह महीनों में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूर्ण करते हैं, इसी को ज्योतिष-शास्त्र में ग्रहसंक्रान्ति के नाम से जाना जाता है।

भूतवाद सांख्यशास्त्र में कुल पच्चीस तत्त्व होते हैं। इनमें मूल प्रकृति होती है, उससे महान्, उससे अहंकार, अहंकार से पाँच तन्मात्रायें—पृथिवी, अप्, तेज, वायु और आकाश, उनसे पञ्च महाभूत—रूप-रस-गन्ध-स्पर्श तथा शब्द होते हैं, फिर पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ तथा मन—ये ग्यारह इन्द्रियाँ होती हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर चौबीस तत्त्व और पच्चीसवाँ पुरुष होता है, जो कि प्रकृति-विकृति से सर्वथा रहित होता है। इन्हीं सबों के तर्क-वितर्क को सांख्यशास्त्र में भूतवाद के नाम से जाना जाता है॥

यत्र चतुरगोपशोभिताः सङ्ग्रामा इव ग्रामाः, तुङ्गसकलभवनाः सर्वत्र नगा इव नगरप्रदेशाः, सदाचरणमण्डनानि नूपुराणीव पुराणि, सदानभोगाः प्रभञ्जना इव जनाः, प्रियालपनसाराणि यौवनानीव वनानि, विटपिहिताश्चेटिका इव वाटिकाः, निर्वृतिस्थानानि सुकलत्राणीवेक्षुक्षेत्रसत्राणि, जलाविलक्षणाः पशुपुरुषा इवाप्रमाणास्तड़ागभागाः, कुपितकपिकुलाकुलिता लङ्केश्वरकिङ्करा इव भग्नकुम्भकर्णघनस्वापाः कूपाः, पीवरोधसः सरित इव गावः, सतीव्रतापदोषाः सूर्यद्युतय इव कुलस्त्रियः॥

कल्याणी - यत्रेति। यत्र च=यस्मिन् देशे च, तुरगोपशोभिताः—तुरगैः=अश्वैः, उपशोभिताः, संग्रामा इव=समरा इव, चतुर-गोप-शोभिताः—चतुरैः=दक्षैः, गोपैः=गोपालकैः, शोभिता ग्रामाः, तुङ्गसकलभ-वनाः—तुङ्गानां=पुंनागानां, ('पुंनागे पुरुषस्तुङ्गः केसरो देववल्लभः' इत्यमरः)। सकलभानि=गजशावकसहितानि, वनानि=विपिनानि यत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तादृशा नगाः=पर्वता इव, सर्वत्र=सकलप्रदेशेषु, तुङ्गसकल-भवनाः-तुङ्गानि=उन्नतानि; सकलानि, भवनानि=गृहाणि, यत्र तादृशा नगरप्रदेशाः सन्ति। सदा-चरण-मण्डनानि—सदा=सर्वदा, चरणमण्डनानि=पादभूषणभूतानि, नूपुराणीव सद्-आचरण-मण्डनानि—सदाचरणं=सदाचार एव, मण्डनं=भूषणं, येषां तथाविधानि पुराणि=नगराणि, सन्ति। सदा-नभोगाः— सदा नभसि=आकाशे, गच्छन्ति=वान्तीति तादृशाः, प्रभञ्जनाः=वायव इव, स-दान-भोगाः—दानभोगाभ्यां=त्यागोपभोगाभ्यां सहिता, जनाः=लोकाः, सन्ति। प्रिया-आलपन-साराणि—प्रियया=दयितया, सह आलपनं=साकूताभिभाषण-मेव, सारः=तत्त्वभूतोंऽशः, येषु तानि यौवनानीव प्रियालपनसाराणि— प्रियालानि=प्रियालवृक्षफलानि 'चिरौंजी' इति भाषायां प्रसिद्धानि, पनसानि च=कण्टकिफलानि च, इयूति=प्राप्नुवन्तीति तथोक्तानि, वनानि=विपिनानि, सन्ति। विट-पिहिताः=विटैः=लम्पटैः, पिहिताः=वेष्टिताः, चेटिका इव=दास्य इव, विटपि-हिताः-विटपिनः=वृक्षाः, तेभ्यो हिता वाटिका=उपवनानि सन्ति। निर्वृतिस्थानानि-निर्वृतेः=सुखस्य, स्थानानि=आस्पदानि, सुकलत्राणीव=सद्भार्या इव, निर्वृतिस्थानानि-वृतिः=निवारणम्, तदभावेन स्वच्छन्दं स्थीयते यत्र तादृशानि इक्षुक्षेत्रे सत्राणि=दानशालाः सन्ति। जलाविलक्षणाः— जडाः (जलयोरभेदात्)=मन्दबुद्धयः, विलक्षणाः=व्यपगतशास्त्राः, पशुपुरुषाः=पशुतुल्यपुरुषा इव जलाविलक्षणाः—जलार्थिभिः सदा सेव्यतया जलेन आविलाः=पिच्छिलाः, क्षणाः=अवतारादितीरप्रदेशो यत्र तादृशाः, अप्रमाणाः=अगाधाः, पक्षे—आगमादिप्रमाणरहिताः, तडागभागाः=जलाशयस्थलानि सन्ति। कुपितकपिकुलाकुलिता—कुपितेन=संजातक्रोधेन, कपिकुलेन=वानरसमूहेन, आकुलिताः=उद्वेजिताः, भग्नकुम्भ-कर्णघनस्वापाः— भग्नः=असमये विच्छिन्नः, कुम्भकर्णस्य, घनः=प्रगाढः, षण्मासाव-धिक इत्यर्थः; स्वापः=शयनं, यैस्तथाविधाः लङ्केश्वरकिंकरा इव=रावणभृत्या इव, कुपितकपिकुलाकुलिताः—समीपस्थवृक्षशाखारूढेन कुपितेन कपिकुलेन आकुलिताः=पत्रादिपातनेन विक्षोभिताः, भग्नकुम्भकर्णाः—भग्नाः=स्फुटिताः, कुम्भानां=घटानां, कर्णाः=कण्ठा यत्र तादृशाश्च ते, घनस्वापाश्च— घनाः=प्रचुराः, स्वाः=स्वकीयाः, पातालमूलोत्था इति भावः। आपः=जलानि येषु तथाविधाः कूपा विद्यन्ते। पीव-रोधसः—पीवः=स्थूलं, रोधः=तटं, यासां ताः सरितः=नद्य इव, पीवर-ऊधसः— पीवरं=स्थूलम्, ऊधः=आपीनं यासां तादृश्यः गावः=धेनवः सन्ति। ('ऊधस्तु क्लीबमापीनम्' इत्यमरः)। अत्र गोपक्षे तथा बहुव्रीहौ कृते स्त्रियाम् 'ऊधसोऽनङ्' इत्यनङादेशस्ततो 'बहुव्रीहेरूधसो ङीष्' इति ङीष् च कथं न स्यादिति शङ्का न कार्या। अत्र गोशब्दो धेन्वर्थोऽपि स्त्रीनरलिङ्गः' इति व्याडिः; पीवरमूधो येषामिति विग्रहः कार्यः; ततः पुंस्त्वादनङ् न, तद्विधौ 'स्त्रियाम्' इत्युप-संख्यानात्। यद्वा गावः पीवरं च तदूधश्च (इति कर्मधारये) पीवरोधस्तस्मात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पीवरोधसो हेतोः सरित इवेति व्याख्येयम् । स-तीव्र-ताप-दोषाः=तीव्रतापदोषेण सहिताः, सूर्यद्युतय इव, सतीव्रत-अपदोषाः —सतीव्रतेन, अपगता=नष्टा, दोषाः=कलङ्का यासां तादृश्यः, कुलस्त्रियः = कुलाङ्गनाः सन्ति । अत्र सर्वत्र श्लेषमूलोपमाऽलंकारः ।

ज्योत्स्ना—जहाँ पर अश्वों से सुशोभित युद्ध के समान चतुर गोपों से सुशोभित गाँव हैं; चारो ओर उन्नत एवं हाथियों के बच्चों से युक्त वनों वाले पर्वतों के समान समस्त ऊँचे-ऊँचे भवनों वाले नगर-प्रदेश हैं; सदा—हर समय चरणों को अलंकृत करने वाले नूपुरों के समान सत् – सुन्दर आचरणरूप अलंकार से अलंकृत पुर हैं; सदा—हर समय आकाश में चलने वाले प्रभञ्जन— वायु (आंधी) के समान सदानभोग - दान और भोग से युक्त लोग हैं; प्रिया के साथ वार्तालाप ही मुख्य तत्त्व है जिस अवस्था में—इस प्रकार के यौवन के समान प्रियाल— प्रियंगु (चिरौंजी) और पनस के फलों से युक्त वन हैं; विट– लम्पट पुरुषों से पिहित—आवृत्त चेटी - दासियों के समान विटपि-हित—वृक्षों के लिए हितकर बावलियाँ हैं, निर्वृत्ति के स्थान अर्थात् आनन्द के केन्द्रभूत सुन्दर भार्या के समान गन्ने के खेतों में चलने वाली सत्र – रस की प्रतिबन्धरहित दानशालायें हैं; मन्दबुद्धि एवं लक्षण – शास्त्रज्ञान से हीन तथा अप्रमाण—बेडौल पशुतुल्य पुरुषों के समान जलाविल क्षण – जल से पिच्छिल स्थान वाले और अप्रमाण – विशाल तालाब हैं; क्रुद्ध वानरों द्वारा व्यथित किये गये लंकेश्वर रावण के अनुचरों द्वारा कुम्भकर्ण की निद्रा-भङ्ग किये जाने के समान भग्न - फटे हुए, कुम्भकर्ण—कण्ठवाले घड़ों से युक्त, घन – गहरे, स्वाप – सुन्दर जल से परिपूर्ण कूप हैं; पीव–विशाल तटवाली नदियों के समान पीवर—स्थूल ऊधः—थनों वाली गायें हैं; तीक्ष्ण ज्वालारूपी दोष से युक्त सूर्य की कान्ति के समान सतीव्रत—सती व्रत धारण करने के कारण अपदोष—दोषों से रहित कुलवधुयें हैं ।

यत्र च मनोहारिसारसद्वन्द्वास्तत्पुरुषेण द्विगुना चाधिष्ठिताः कादम्बरीगद्यबन्धा इव दृश्यमानबहुव्रीहयः केदाराः ॥

कल्याणी—यत्रेति । यत्र च=यस्मिन्नार्यावर्ते देशे च, मनोहारिसार-सद्वन्द्वाः— मनोहारिणः=रमणीयाः, सारा=रसा येषु तादृशाश्च ते, सद्वन्द्वाश्च=द्वन्द्वसमास-सहिताश्च, तत्पुरुषेण=तत्पुरुषसमासेन, द्विगुना=द्विगुसमासेन च, अधिष्ठिताः=युक्ताः, दृश्यमानो बहुव्रीहिः=बहुव्रीहिसमासो यत्र तथाभूताश्च द्वन्द्वतत्पुरुषद्विगुबहुव्रीहिसमास-बहुला इत्यर्थः । कादम्बरीगद्यबन्धा इव=बाणभट्टकृतकादम्बरीकथागद्यरचना इव, केदाराः=परिष्कृतक्षेत्राणि, मनोहारिसारसद्वन्द्वाः— मनोहारीणि=मनोज्ञानि, सारसानां=सारसपक्षिणां, द्वन्द्वानि=युगलानि यत्र ते तथाविधाः, द्विगुना—द्वौ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गावौ=वृषभौ यस्य तेन तत्पुरुषेण=तत्स्वामिना च । अधिष्ठिताः=सनाथाः, दृश्यमाना बहवः व्रीहयः=धान्यानि येषु तादृशाः सन्ति । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ।

ज्योत्स्ना—और जहाँ पर मनोहर सार—तथ्यों और सद्वन्द्व—द्वन्द्व समास से समन्वित, तत्पुरुष तथा द्विगु समास से सनाथित एवं बहुव्रीहि समास से अलंकृत कादम्बरी ग्रन्थ के गद्यबन्ध के समान मन को आकृष्ट करने वाले सारसद्वन्द्व—सारस पक्षियों के जोड़े, द्विगुना—दो गायों अथवा बैलों से समन्वित खेतों के स्वामी तथा अपरिमित धान की फसलों से युक्त खेत दिखाई देते हैं ।

किं बहुना,

नास्ति सा नगरी यत्र न वापी न पयोधरा ।
दृश्यते न च यत्र स्त्री नवापीनपयोधरा ॥२६॥

अन्वयः—(किं बहुना) यत्र सा नगरी नास्ति, (यत्र) वापी न पयोधरा च न (दृश्यते) । यत्र पीनपयोधरा नवा स्त्री (च) न दृश्यते ॥२६॥

कल्याणी—नास्तीति । यत्र=यस्मिन्नार्यावर्ते देशे, सा=तादृशी कापि नगरी नास्ति, यत्र=यस्यां, वापी=दीर्घिका, न दृश्यते, पयोधरा—पयःप्रधाना धरा=भूमिश्च न दृश्यते, यत्र=यस्यां च पीनपयोधरा=मांसलकठिनस्तनी, नवा=नववयस्का,स्त्री=कान्ता न दृश्यते । तत्रार्यावर्ते देशे सकलासु नगरीषु वाप्यः पयःप्रधाना भूमयो घन पीनपयोधरा रमण्यश्च विलसन्तीति भावः । अत्र पादावृत्तिरूपो यमकोऽलङ्कारः, प्रस्तुतयोर्नगरीस्त्रियोरेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता च, तयोरेकत्रावस्थानात् संकरः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; उस आर्यावर्त देश में ऐसी कोई नगरी नहीं है, जहाँ तालाब न हो, जलप्रधान भूमि न हो और नूतन मांसल स्तनों से समन्वित वनितायें न हों । आशय यह है कि आर्यावर्त देश की प्रत्येक नगरियाँ तालाबों से युक्त थीं, समग्र भूमि जलप्रधान थी और वहाँ की समस्त नवयौवनायें उन्नत मांसल स्तनों से अलंकृत दिखाई पड़ती थीं ॥२६॥

अपि च,

भवन्ति फाल्गुने मासि वृक्षशाखा विपल्लवाः ।
जायन्ते न तु लोकस्य कदापि च विपल्लवाः ॥२७॥

अन्वयः—फाल्गुने मासि वृक्षशाखा विपल्लवाः भवन्ति, न तु कदापि च लोकस्य विपल्लवाः जायन्ते ॥२७॥

कल्याणी—भवन्तीति । फाल्गुने मासि, वृक्षाणां शाखाः, विगताः पल्लवाः=पत्राणि यासां ता विपल्लवा=व्यपगतपत्रा भवन्ति, न तु कदापि च, लोकस्य=जनस्य,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विपल्लवाः—विपदां लवाः=लेशा अपि जायन्ते=भवन्ति । परिसंख्यालङ्कारः; पदावृत्तिरूपं यमकं च । तयोरेकत्रावस्थानात् संकरः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२७॥

ज्योत्स्ना—और भी—उस आर्यावर्त में वृक्षों की शाखायें तो फाल्गुन के महीने में पल्लवों से रहित हो जाती हैं अर्थात् फाल्गुन मास में होनेवाले पतझड़ के मौसम में वृक्षों की डालियाँ तो पत्तों से रहित हो जाती हैं, लेकिन इस देश के लोगों पर विपत्तियों का अंश भी कभी नहीं आता, अर्थात् वहाँ के लोग पूर्णतया आपत्तियों से रहित हैं । ॥२७॥

यत्र सौराज्यरञ्जितमनसः सकलसमृद्धिवर्धितमहोत्सवपरम्परारम्भनिर्भराः, सततमकुलीनं कुलीनाः, प्राप्तविमानमप्राप्तविमानभङ्गाः, कतिपयवसुविराजितमनेकवसवः, समुपहसन्ति स्वर्गवासिनं जनं जनाः, कथं चासौ स्वर्गान्नि विशिष्यते ॥

कल्याणी—यत्रेति । यत्र=यस्मिन्नार्यावर्ते देशे, सौराज्यरञ्जितमनसः—सौराज्येन=सत्प्रशासनेन, रञ्जितानि=प्रसादितानि, मनांसि=चेतांसि येषां ते तथाविधाः, सकलसमृद्धिभिः=समस्तैश्वर्यैः, वर्धिता=दिनानुदिनं वृद्धिं नीता, या महोत्सवपरम्परा=महोत्सवशृङ्खला, तस्या आरम्भे=कृत्ये, निर्भराः=संलग्नाः, सततं=निरन्तरम्, अकुलीनं—न कौ=पृथिव्यां, लीनं=कृताधिवासं, कुलीनाः=सद्वंशप्रसूताः, प्राप्तविमानम्—प्राप्तः=अधिगतः, विमानः=व्योमयानं येन तं तथोक्तम्, अप्राप्तविमानभङ्गाः—न प्राप्तो विमानेन=अनादरेण, भङ्गः=अधःपतनं यैस्ते तादृशाः, कतिपयवसुराजितम्—कतिपयैः=अष्टसंख्यकैरेव, वसुभिः=देवसमूहविशेषेण, राजितम्=उपशोभितम्, यथोक्तम्—'धरो ध्रुवश्च सोमश्च अहश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टाविति स्मृताः' । इति । अनेकवसवः—अनेकानि=बहूनि, वसूनि=रत्नानि, येषां ते तादृशाः (देवभेदेऽनले रश्मौ वसू रत्ने धने वसु' इत्यमरः) । जनाः=प्रजाः, स्वर्गवासिनं जनं=तथाकथितं देवलोकनिवासिनं जनं, देववृन्दमित्यर्थः, समुपहसन्ति=अतिशेरत इत्यर्थः । कथं चासावार्यावर्तो देशः स्वर्गान्नि विशिष्यते नोत्कृष्टतरः, सर्वथोत्कृष्टतरः स्वर्गादार्यावर्त इति भावः ।

आर्यावर्तीयजना स्वर्गस्थान् देवानपि तिरस्कुर्वन्ति । यतो हि ते कुलीना, देवास्तु सदाऽकुलीनाः (न कौ पृथिव्यां लीनाः कृताधिवासाः) सन्ति, ते अप्राप्तविमानाः (अलब्धावमानाः) देवास्तु प्राप्तविमानाः (लब्धदेवयानाः) सन्ति, ते बहुवसवः (बहुरत्नाः) किन्तु देवा अष्टाभिरेव वसुभिर्युक्तास्तदित्थमार्यावर्तो देशः स्वर्गादप्युत्कृष्टतर इति भावः । अत्रार्यावर्तीयजनानामुपमेयानां देवेभ्य उपमानेभ्य उत्कर्षवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारः, स च श्लेषोत्थापितः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—जिस (आर्यावर्त) में सर्वोत्तम राज्य के कारण प्रसन्न चित्तवाले, सर्वविध सम्पन्नताओं से दिन-प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त करने के कारण बड़े-बड़े उत्सवों की परम्परा को प्रारम्भ करने वाले लोग कुलीन—उत्तम कुल वाले अथवा पृथ्वी पर लीन रहने वाले हैं, कुलहीन नहीं हैं; अहंकार के कारण उत्पन्न वक्रताओं से रहित हैं और विपुल धन-सम्पति से सम्पन्न हैं। इसीलिए वे लोग अकुलीन—पृथ्वी पर लीन न रहने वाले; प्राप्तविमान—देवरथ से समन्वित एवं ध्रुव आदि आठ वसुओं से मण्डित स्वर्गवासी देवताओं का निरन्तर यह कहते हुए उपहास करते रहते हैं कि यह (आर्यावर्त) स्वर्ग से बढ़कर क्यों नहीं है ?

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड में त्रिविक्रम भट्ट द्वारा स्वर्ग के ऊपर आर्यावर्त की श्रेष्ठता स्थापित की गई है और देवताओं की अपेक्षा यहाँ के निवासियों को श्रेष्ठ बताया गया है ॥

यत्र गृहे गृहे गौर्यः स्त्रियः, महेश्वरो लोकः, सश्रीका हरयः, पदे पदे धनदाः सन्ति लोकपालाः। केवलं न सुराधिपो राजा। न च विनायकः कश्चित् ॥

कल्याणी—अथार्यावर्तस्य स्वर्गाद् वैशिष्ट्यं प्रतिपादयन्नाह—यत्रेति। यत्र=यस्मिन्नार्यावर्ते देशे, गृहे गृहे=प्रतिगृहं, गौर्यः=गौरवर्णाः, स्त्रियः=अङ्गनाः, सन्ति; स्वर्गे तु एकैव गौरी=पार्वती, विद्यत इति भावः। लोकः=सर्वः प्रजाजनः, महेश्वरः=महान् ईश्वरः, अतिसमृद्धेत्यर्थः, स्वर्गे तु एक एव महेश्वरः=शिवः, विद्यते इति भावः। सह श्रिया=शोभया सश्रीकाः=शोभासम्पन्ना. हरयः=अश्वाः ('यमानिलेन्द्रचन्द्रार्कविष्णुसिंहांशुवाजिषु। शुकाहिकपिभेकेषु हरिर्न्ना कपिले त्रिषु।' इत्यमरः)। स्वर्गे त्वेको विष्णुरेव सश्रीकः—श्रिया=लक्ष्म्या सहितः विराजत इति भावः। पदे पदे=स्थाने-स्थाने, धनदाः=धनप्रदातारः, लोकपालाः=प्रजापालका नृपाः, सन्ति, स्वर्गे त्वेकस्मिन्नेव स्थाने धनदः=कुबेरः, एक एव लोकपालो विद्यत इति भावः। केवलं=परम्, आर्यावर्ते न सुराधिपः=मद्यपः, राजा, स्वर्गे तु सुराणामधिपः=अधिनायकः, इन्द्रो राजा वर्तत इति भावः। न च=नापि, आर्यावर्ते, कश्चित्=कोऽपि, विनायकः=विरुद्धनायकः, स्वर्गे तु विनायकः=गणेशोऽस्त्येव। अत्र सर्वेषां वाक्यार्थानामार्यावर्तस्य स्वर्गाद्वैशिष्ट्यनिष्पादने हेतुत्वेनोपन्यासात्काव्यलिङ्गालङ्कारः, उपमेयस्यार्यावर्तस्योपमानात्स्वर्गादुत्कर्षवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारश्च तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः।

ज्योत्स्ना—जहाँ पर घर-घर में गौरी—गौर वर्णवाली स्त्रियाँ हैं, अत्यन्त सम्पन्न लोग हैं, अत्यन्त शोभासम्पन्न घोड़े हैं और पग-पग पर धन को देनेवाले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रजापालक हैं। जहाँ का राजा केवल मद्य पीने वाला नहीं है अर्थात् विलासी नहीं है और जहाँ कोई विनायक—नायक के विरुद्ध अथवा दुष्ट नायक भी नहीं है।

विमर्श—प्रकृत गद्य-खण्ड के द्वारा स्वर्ग से आर्यावर्त की श्रेष्ठता-सिद्धि में हेतु उपस्थापित किया गया है। यतः देवलोक में एक ही गौरी—पार्वती हैं, किन्तु आर्यावर्त में घर-घर में गौरी हैं, वहाँ एक ही महेश्वर—शंकर हैं, जबकि यहाँ बहुतायत में समृद्ध लोग है, वहाँ श्री—लक्ष्मी से समन्वित एक ही विष्णु हैं, जबकि यहाँ अगणित श्री—कान्तियुक्त घोड़े हैं, वहाँ धनद—कुवेर भी एक ही हैं, जबकि यहाँ धनदाताओं की अधिकता है, वहाँ का राजा सुराधिप—इन्द्र है, जबकि यहाँ का राजा सुरापायी=मद्य पीने वाला नहीं है और वहाँ स्वर्ग में विनायक—गणेश हैं, जबकि यहाँ आर्यावर्त में विनायक—नायकविरुद्ध कोई नहीं है॥

यत्र च लतासम्बन्धः कलिकोपक्रमश्च पादपेषु दृश्यते न पुरुषेषु। यत्र चमरकवार्ता परमहिमोपघातश्च तुहिनाचलस्थलीषु श्रूयते न प्रजासु॥

कल्याणी—यत्रेति। यत्र च=यस्मिन्नार्यावर्ते च, लतासम्बन्धः=वल्लरीयोगः कलिकोपक्रमः—कलिकानां=कुड्मलानाम् उपक्रमः=प्रादुर्भावश्च, पादपेषु=वृक्षेषु, दृश्यते, पुरुषेषु=जनेषु, चलतासम्बन्धः=चाञ्चल्ययोगः, कलि-कोप-क्रमः—कलेः=कलहस्य कोपस्य च क्रमः=प्रादुर्भावश्च न दृश्यते। यत्र=यस्मिन्नार्यावर्ते, चमरकाणां=चामरमृगाणां, वार्ता=वृत्तान्तः, परम-हिमोपघातश्च—परमेन=बहुलेन हिमेन=तुहिनेन उपघातः=विनाशश्च, तुहिनाचलस्थलीषु=हिमाचलभूमिष्वेव श्रूयते; प्रजासु च—मकरवार्ता=अकालमरणवृत्तान्तः, पर-महिमोपघातश्च—परस्य, महिमा=माहात्म्यं, तस्य उपघातः=विनाशश्च, न श्रूयते। श्लेषमूलकपरिसंख्यालङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और जहाँ लताओं का सम्पर्क तथा कलियों का उद्भव मात्र वृक्षों में ही दृष्टिगोचर होता है, न कि पुरुषों में अर्थात् यहाँ के पुरुषों में चलता—चञ्चलता का योग एवं कलि—कलह तथा कोप—क्रोध का क्रम—परम्परा दिखाई नहीं देती।

जहाँ पर चमरकवार्ता—चमरी गायों की चर्चा एवं परमहिमोपघात—अत्यधिक हिमपात से विनाश पर्वतीय स्थानों अर्थात् हिमालय पर ही सुनाई देता है; प्रजाओं में (च) मरकवार्ता—मृत्युसम्बन्धी चर्चा और पर—दूसरे का महिमोपघात—प्रतिष्ठा का हनन नहीं सुनाई देता॥

यश्च नीतिमत्पुरुषाधिष्ठितोऽप्यनीतिः, सवटोऽप्यवटसंकुलः, कारूपयुतोऽप्यगतरूपशोभः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—यश्चेति । यः=आर्यावर्तदेशश्च, नीतिमत्पुरुषैरधिष्ठितोऽपि, अनीतिः=नीतिरहित इति विरोधः, अनीतिः—न विद्यन्ते षडीतयः=षड्उपद्रवा यत्र तथाविध इति परिहारः । षडीतयो यथा—अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः खगाः । अत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः ।।' इति । सवटः=वटैर्न्यग्रोधपादपैः, सहितोऽपि अवटसंकुलः—न वटैः=वटवृक्षैः संकुलः = व्याप्तः इति विरोधः, अवटैः=कूपैः, संकुलः=व्याप्त इति परिहारः । कारूपयुतः—कुत्सितेन रूपेण युतोऽपि, अगतरूपशोभः —न गता=नष्टा रूपशोभा=रूपसौन्दर्यं यस्य स तादृश इति विरोधः, कारु-उपयुतः—कारुभिः=शिल्पिभिः, उपयुतः=युक्तः, अग-तरु-उपशोभः—अगैः=पर्वतैः, तरुभिः=वृक्षैश्च उपगता शोभा यस्य स तादृश इति परिहारः । श्लेषानुप्राणितो विरोधाभासः ।।

ज्योत्स्ना—और जो नीतिमान् पुरुषों से समन्वित होते हुए भी अनीति—इति (उपद्रवों) से रहित है, वटवृक्षों से युक्त होते हुए भी अवट—कूप आदि गड्ढों से व्याप्त है तथा कारु—शिल्पियों से समन्वित होते हुए भी वृक्ष-पर्वत आदि की सौन्दर्यसम्पन्नता से हीन नहीं है ।

विमर्श—ईतियाँ छः प्रकार की होती हैं—अतिवृष्टि, अनावृष्टि; चूहे; कीट-पतंगें, पक्षिगण और राजाओं की अत्यन्त समीपता । यहाँ प्रत्येक वाक्य में प्रथमतः विरोध की प्रतीति होती है, जैसे नीतिमान् पुरुषों से युक्त होते हुए भी अनीतियुक्त है यह विरोधात्मक प्रतीति है, क्योंकि नीतिज्ञों के मध्य अन्याय का होना सम्भव नहीं है । इसी प्रकार वटवृक्षों के होते हुए भी उनसे व्याप्त नहीं है और वहाँ के पुरुष कुरूप होते हुए भी रूप-शोभा से रहित नहीं हैं—यह विरोधात्मक प्रतीति होती है ।

इस प्रकार सामान्यतया ज्ञात होने वाले इन सभी अर्थों से विरोध ही प्रतीत होता है; इसीलिए यहाँ श्लेषमूलक विरोधाभास अलंकार है ।।

यत्र च गुरुव्यतिक्रमं नक्षत्रराशयः, मात्राकलहं लेखशालिकाः, मित्रोदयद्वेषमुलूकाः, अपत्यत्यागं कोकिलाः. बन्धुजीवविघातं ग्रीष्मदिवसाः कुर्वन्ति न जनाः ।।

कल्याणी—यत्र चेति । यत्र च=यस्मिंश्चार्यावर्ते, गुरुः=बृहस्पतिः, तस्य व्यतिक्रमम्=उल्लङ्घनं, नक्षत्रराशयः=ज्योतिःशास्त्रे तारापुञ्जरूपाः प्रसिद्धाः, राशयः कुर्वन्ति, जनाः=प्रजाः, गुरुव्यतिक्रमम्=आचार्यावमानं, न कुर्वन्ति । मात्राकलहं=वर्णानां ह्रस्व-दीर्घादिमात्राविषये, कलहं=विवादं, लेखशालिकाः=लेखनकर्मणि व्यापृता नार्यः, कुर्वन्ति, जनाः, मात्रा=जनन्या सह, कलहं न कुर्वन्ति । मित्रोदयद्वेषम्=सूर्योदयद्रोहम्, उलूकाः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुर्वन्ति, दिवान्धत्वादिति भावः, जनाः मित्रोदयद्वेषं=सुहृदभ्युदयविरोधं, न कुर्वन्ति। अपत्यत्यागं=सन्तानत्यागं, कोकिलाः=परभृतः, कुर्वन्ति, स्वाण्डानां परिपालनाय काकनीडेषु तान् संस्थापयन्ति, काका अपि भेदाभावेन तान्स्वकीयानेवावगम्य पालयन्ति, जनाः सन्तानत्यागं न कुर्वन्ति। बन्धुजीवविघातं—बन्धुजीवं=बन्धूकपुष्पं, तस्य विघातं=विनाशं, ग्रीष्मदिवसाः=निदाघवासराः कुर्वन्ति, जनाः बन्धु-जीव-विघातं—बन्धूनां=बान्धवानां, जीवस्य=जीवनस्य, विघातं=विनाशं, न कुर्वन्ति। श्लेषानुप्राणितपरिसंख्याऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—जहाँ पर नक्षत्र-राशियाँ ही गुरु—बृहस्पति ग्रह का परिवर्तन—उल्लंघन करती हैं, मनुष्य गुरु—आचार्य का परिवर्तन—उल्लंघन नहीं करते; लेखन कार्य में संलग्न नारियाँ ही ह्रस्व-दीर्घ आदि मात्राओं के सम्बन्ध में विवाद करती हैं, लोग अपनी माता के साथ कलह नहीं करते; मित्र—सूर्य के उदय से केवल उलूक पक्षी ही द्वेष करता है, लोग अपने मित्रों की उन्नति से द्वेष नहीं करते; अपनी सन्तान का परित्याग केवल कोयल पक्षी ही करते हैं; लोग अपनी सन्तति का त्याग नहीं करते; बन्धुजीव—बन्धूक पुष्प का विनाश ग्रीष्मकालीन दिन ही करता है, कोई व्यक्ति अपने बन्धु—भाई के जीव—जीवन का विनाश नहीं करता।

विमर्श—गुरुव्यतिक्रम—ज्योतिष शास्त्र के अनुसार नक्षत्रों की गति में बृहस्पति ग्रह अपनी गति के कारण सूर्य-मंगल आदि ग्रहों से आगे-पीछे होता रहता है; इसी को गुरु-व्यतिक्रम के नाम से जाना जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार व्यक्ति के जीवन में गुरु एक ही होता है, वह परिवर्तनीय नहीं होता; इसीलिए आर्यावर्त के निवासी अपने गुरुओं में कभी भी परिवर्तन अथवा उनका उल्लंघन नहीं करते।

मित्रोदय—यह लोकप्रसिद्ध है कि मित्र—सूर्य के प्रकाश में उल्लू को दिखाई नहीं देता, इसीलिए सूर्य से उसका विरोध रहता है और वे नहीं चाहते कि कभी सूर्योदय हो।

अपत्यत्याग—कोयल और कौवे के अण्डे तथा छोटे बच्चों में कोई भेद नहीं होता, अपितु देखने में दोनों एक समान ही प्रतीत होते हैं; इसीलिए कोयल चालाक होने के कारण अपने अण्डों को सेने के लिए कौवे के घोंसले में ले जाकर रख देता है। बाद में उसमें से बच्चे निकलकर जब उड़ने लायक हो जाते हैं तो वे वहाँ से उड़ जाते हैं, इसीलिए कोयल को 'परभृत्' भी कहा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आर्यावर्त में पक्षी तो अपने बच्चे का त्याग कर देते हैं, लेकिन मनुष्य कभी भी अपनी सन्तति का त्याग नहीं करते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बन्धुजीव—एक विशेष प्रकार का पुष्प, जो ग्रीष्मकाल में नष्ट हो जाता है ॥

किं बहुना,

देशः पुण्यतमोद्देशः कस्यासौ न प्रियो भवेत् ।
युक्तोऽनुक्रोशसम्पन्नैर्यो जनैरिव योजनैः ॥२८॥

अन्वयः—असौ पुण्यतमोद्देशः कस्य प्रियः न भवेत् यः अनुक्रोशसम्पन्नैः योजनैः इव जनैः युक्तः ॥२८॥

कल्याणी—देश इति । असौ=सः, पुण्यतमा=पवित्रतमा, उद्देशाः=प्रदेशाः, यत्र तथाविधो देशः=आर्यावर्तः, कस्य=जनस्य, प्रियः=प्रीतिकरः, न, भवेत्=स्यात्, यः, अनुक्रोशसम्पन्नैः=दयायुक्तैः, जनैरिव अनुक्रोशं=प्रतिक्रोशं सम्पन्नैः=अन्नजल-वृक्षादिभिः समृद्धैः, योजनैश्च=क्रोशचतुष्टयैश्च, युक्तः=वर्तते । अत्रोत्तरार्द्धवाक्यार्थस्य पूर्वार्द्धवाक्यार्थनिष्पादने हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गालङ्कारः । उत्तरार्द्धे श्लेषमूलोपमा च । देशः देशः, यो जनैः योजनैरित्यत्र यमकालङ्कारश्च । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२८॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; प्रत्येक क्रोश पर रत्न-जल-वृक्ष आदि से समन्वित योजन के समान अनुक्रोश—दया से समन्वित लोगों से युक्त पुण्यशाली प्रदेशों (तीर्थस्थलों) वाला यह देश किसे प्रिय नहीं होगा ?

विमर्श—एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी व्यक्त करने वाला सामान्य लोगों में प्रचलित 'कोस' शब्द संस्कृत भाषा के 'क्रोश' शब्द का अपभ्रंश है । सामान्य भाषा में दो मील की दूरी को एक क्रोश (कोस) कहा जाता है और चार क्रोश का एक योजन होता है ।

महाकवि का आशय यह है कि उस आर्यावर्त देश में प्रत्येक क्रोश पर जलाशय आदि के साथ-साथ वृक्ष आदि भी लगे हुए थे; इसके अतिरिक्त अनुक्रोश—दयासम्पन्न लोगों से भी वह देश समन्वित था । अतः सर्वविध सम्पन्न तथा दयावान् लोगों से समन्वित वह आर्यावर्त देश सभी को अत्यन्त ही प्रिय था ॥२८॥

तस्य विषयमध्ये निषधो नामास्ति जनपदः प्रथितः ।
तत्र पुरी पुरुषोत्तमनिवासयोग्यास्ति निषधेति ॥२९॥

अन्वयः—तस्य विषयमध्ये निषधः नाम प्रथितः जनपदः अस्ति । तत्र पुरुषोत्तमनिवासयोग्या निषधा इति पुरी (अस्ति) ॥२९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तस्येति। तस्य=तथाविधस्यार्यावर्त्तस्य, विषयस्य=देशस्य, मध्ये=अभ्यन्तरे, निषधः नाम=निषधाभिधः, प्रथितः=प्रसिद्धः, जनपदः=प्रदेशः, अस्ति। तत्र=तस्मिन्, निषधजनपदे, पुरुषोत्तमनिवासयोग्या=पुरुषश्रेष्ठनिवासोचिता, पुरुषोत्तमविष्णुनिवासयोग्या च, वैकुण्ठतुल्येति भावः। निषधेति=निषधाभिधाना, पुरी=नगरी, विद्यते। आर्या जातिः। तल्लक्षणं यथा—'यस्याः प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या' ॥इति ॥२९॥

ज्योत्स्ना—उस आर्यावर्त देश के मध्य में 'निषध' नाम का अत्यन्त प्रसिद्ध जनपद है, जहाँ श्रेष्ठ जनों के निवास करने योग्य निषधा नाम की नगरी है।

विमर्श—पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु का भी नाम है। इस पक्ष में अर्थ होगा कि वह पुरी भगवान् विष्णु के निवास करने योग्य है अर्थात् वैकुण्ठ लोक के समान है ॥२८॥

जननीतिमुदितमनसा सततं सुस्वामिना कृतानन्दा।
सा नगरी नगतनया गौरीव मनोहरा भाति ॥३०॥

अन्वयः—जननीतिमुदितमनसा सुस्वामिना कृतानन्दा सा नगरी सततं नगतनया गौरी इव मनोहरा भाति ॥३०॥

कल्याणी—अथ कविर्निषधां वर्णयन्नाह— जननीतीति। जनस्य=जनसामान्यस्य, नीत्या=व्यवहारेण, मुदितं=प्रसन्नं, मनः=चित्तं यस्य तादृशेन, सुस्वामिना=सुप्रभुणा, सततं=निरन्तरं, कृतः=विहितः, आनन्दः=हर्षः यस्याः सा, प्रहर्षितेतिभावः। न-गतनया—न गतः=भ्रष्टः नयः=नीतिः यस्यास्तादृशी सन्नीतिमती, सा=नगरी निषधा, जननीतिमुदितमनसा—जननी=माता इति=हेतोः मुदितं=हर्षितं मनो यस्य तेन, सुस्वामिना=सुन्दरेण स्वामिकार्तिकेयेन, कृतानन्दा=प्रहर्षं प्रापिता, नगतनया—नगस्य=पर्वतस्य हिमालयस्य, तनया=पुत्री, गौरीव=पार्वतीव, मनोहरा=रम्या, पक्षे मनसि हरः शिवः यस्यास्तादृशी, हरध्यानावस्थितेत्यर्थः, भाति=विराजते। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। आर्या जातिः ॥३०॥

ज्योत्स्ना—(नगरी पक्ष में) वह नगतनया [न गत नया] अनीति से रहित अर्थात् न्याय से सम्पन्न वह निषधा नगरी जनसामान्य के व्यवहार से प्रफुल्लित चित्तवाले सर्वोत्तम अधिपति से निरन्तर आनन्दित एवं नगतनया—पर्वतपुत्री पार्वती के समान मनोहर प्रतीत होती है।

[गौरी-पार्वती पक्ष में] जननी—माता होने कारण सदा प्रसन्न चित्त वाली, सुस्वामिना—सुन्दर स्वामी कार्तिकेय से आनन्दित और मनोहर—हर—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शंकर को मन में स्थान देने वाली पर्वतपुत्री गौरी के समान वह निषधा नगरी निरन्तर सुशोभित हो रही है ॥३०॥

यस्यामभ्रंलिहेन्द्रनीलशालशिखरसहस्रनिभृतांशुजालबालशाद्वलाङ्कुराग्रग्रासलालसाः स्खलन्तः खे खेदयन्ति मध्येदिनं सादिनं रविरथतुरङ्गमाः ॥

कल्याणी—यस्यामिति । यस्यां=निषधायाम्, अभ्रंलिहानि=गगनस्पर्शीनि, इन्द्रनीलशालस्य=इन्द्रनीलमणिनिर्मितप्राकारस्य, यानि शिखरसहस्राणि=शृङ्गसहस्राणि, तेषां निभृतांशुजालानि=सूक्ष्मकिरणसमूहा, एव बालशाद्वलाङ्कुराग्राणि=नूतनहरिततृणाङ्कुराग्राणि, तेषां ग्रासे=कवलने, लालसा=आतुरा, अतएव स्खलन्तः=स्वमार्गाद् प्रभ्रश्यन्तः, रविरथतुरङ्गमाः=सूर्यरथाश्वाः, खे=आकाशे, मध्येदिनं=मध्याह्नकाले, सादिनं=रथिनं, सूर्यमिति भावः। खेदयन्ति=खेदं प्रापयन्ति। अत्रेन्द्रनीलांशुजालेषु बालशाद्वलाङ्कुरभ्रान्तिवर्णनाद् भ्रान्तिमदलंकारः ॥

ज्योत्स्ना—जिस निषधा नगरी में इन्द्रनीलमणि से निर्मित आकाश को छूने वाले प्राकारों (चहारदीवारियों) के शिखरों से निकलने वाली हजारों अतिसूक्ष्म किरणें, जो नवीन तृणों (दूब) के अंकुर के समान प्रतीत हो रही हैं, के अग्रभाग को खाने की इच्छा रखने के कारण नीचे की ओर खिसकते हुए अकाशस्थित सूर्य-रथ के घोड़े मध्याह्न काल में रथ के सारथी को कष्ट पहुँचा रहे हैं।

विमर्श—उस निषधा नगरी की चहारदीवारियाँ इन्द्रनीलमणि से बनाई गईं थीं और उनसे जो नीली-नीली किरणें निकलती थीं वे दूर से अंकुरित तृण (दूब) के समान दिखाई देती थीं। घोड़ों को दूब अत्यन्त प्रिय होता है, अतः मध्याह्न समय में सूर्य का रथ जब मध्य आकाश में आता था तो उन दूर्वाङ्कुरों को देखकर रथ के घोड़े उन्हें खाने के लिए नीचे उतरने का प्रयत्न करने लगते थे। ऐसी स्थिति में रथ को नियन्त्रित करने में सारथी अत्यन्त कष्ट का अनुभव करता था ॥

यस्यां च स्फटिकमणिशिलानिबद्धभवनप्राङ्गणगतासु सञ्चरद्गृहिणीचरणालक्तकपदपङ्क्तिषु पतन्ति निर्मलसलिलाभ्यन्तरतरत्तरुणारुणकमलकाङ्क्षया मुग्धमधुपपटलानि ॥

कल्याणी—यस्यां चेति । यस्यां=निषधायां च, स्फटिकमणिशिलाभिः=स्फटिकमणिप्रस्तरैः, निबद्धानि=निर्मितानि, भवनप्राङ्गणानि=गृहाजिराणि, तत्र गतासु=प्रतिफलितासु, संचरन्तीनां=विहरन्तीनां, गृहिणीनां=नारीणां, चरणयोः=पादयोः, अलक्तकपदपंक्तिषु=लाक्षारसयुक्तचरणचिह्नेषु, निर्मलसलिलस्य=स्वच्छजलस्य, अभ्यन्तरे=मध्ये, तरतां=प्लवमानानां, तरुणानां=नवविकसितानाम्, अरुणकमलानां=रक्तपद्मानां, काङ्क्षया=अभिलाषेण, मुग्धाः=मोहंगताः, ये मधुपाः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ्रमराः, तेषां पटलानि=वृन्दानि, पतन्ति=उत्पत्य वेगेनागच्छन्तीत्यर्थः। अत्र स्फटिकनिबद्धभवनप्राङ्गणगतलाक्षारसरञ्जितनारीचरणपंक्तिषु निर्मलजलाभ्यन्तरतरुणकमलभ्रान्तिवर्णनाद् भ्रान्तिमदलंकारः ॥

ज्योत्स्ना—और जिस नगरी के स्फटिक मणि की शिलाओं से निर्मित भवनों के आंगन में गई हुई और भ्रमण करती हुई लाक्षारस (महावर) से रञ्जित चरणों वाली गृहिणियों के पदचिह्नों को निर्मल जल के भीतर तैरते हुए नूतन विकसित लाल कमल समझ कर उन पर मुग्ध होकर भ्रमरों के समूह (उन चरण-चिह्नों पर) गिरने लगते हैं।

विमर्श—स्फटिक मणि से निर्मित भवनों के आंगन अत्यन्त स्वच्छ जल के समान प्रतीत होते थे और उनपर भ्रमण करने वाली गृहस्वामिनियों के लाक्षारस से रञ्जित पदचिह्न दूर से विकसित कमल होने का आभास देते थे; अतः लाल कमलों के रसपान को उत्सुक भ्रमरों का समूह वहाँ आ जाता था ॥

यस्यां च विविधमणिनिर्मितवासभवनभव्यभित्तिषु स्वच्छासु स्वां छायामवलोकयन्त्यः कृतापरस्त्रीशङ्काः कथमपि प्रत्यानीयन्ते प्रियैः प्रियतमाः ॥

कल्याणी—यस्यां चेति। यस्यां=निषधायां च, स्वच्छासु=निर्मलासु, विविधमणिभिः, निर्मितानां=रचितानां, वासभवनानां=निवासगृहाणां, भव्यासु=सुरम्यासु, भित्तिषु=कुड्येषु, स्वां छायां=स्वकीयं प्रतिबिम्बम्, अवलोकयन्त्यः=पश्यन्त्यः; कृतापरस्त्रीशङ्काः=कृताऽपरस्त्रीणां, शङ्का=सन्देहः, याभिस्ताः, प्रियतमाः=दयिताः, प्रियैः=दयितैः; कथमपि=केनापि प्रकारेण, महता कृच्छ्रेणेत्यर्थः। प्रत्यानीयन्ते=विश्वास्य प्रत्यावृत्ताः क्रियन्ते।

अत्रापि रमणीनां स्वप्रतिबिम्बेष्वपरस्त्रीबुद्धिवर्णनाद् भ्रान्तिमदलङ्कारः, भवनानां विविधमणिनिर्मितत्वरूपलोकोत्तरवैभववर्णनादुदात्तालंकारश्च, तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः ॥

ज्योत्स्ना—तथा जिस नगरी में विविध मणियों से निर्मित आवास-भवनों की स्वच्छ भव्य दीवालों पर अपनी ही छाया को देखकर; दूसरी स्त्री के होने की शंका करने वाली प्रियतमायें किसी-किसी प्रकार से प्रियतमों के द्वारा (आश्वस्त कर) लौटाई जाती हैं।

विमर्श—मणिनिर्मित भवनों की भित्तियों पर सञ्चरण करती हुई प्रियतमाओं की परछाइयाँ वहाँ अन्य किसी रमणी के उपस्थित होने की आशंका उनके मन में उत्पन्न कर देती हैं, जिससे नाराज होकर वे अपने प्रियतम से मान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर बैठती हैं। ऐसी स्थिति में बेचारा प्रियतम अत्यन्त कठिनाई से किसी-किसी प्रकार विश्वास दिलाकर ही उन्हें मना पाता है ॥

यस्यां च दिव्यदेवकुलालङ्कृताः स्वर्गा इव मार्गाः, सततमपांसुवसनाः सागरा इव नागराः, समत्तवारणानि वनानीव भवनानि, सुरसेनान्विताः स्वर्गभूपा इव कूपाः, अधिकंधरोद्देशमुद्भासयन्तो हारा इव विहाराः ॥

कल्याणी—यस्यां चेति। यस्यां=निषधायां च, दिव्यैः=रम्यैः, देवकुलैः=देवालयैः, अलङ्कृताः=सुशोभिताः, मार्गाः=पन्थानः, दिव्यैः=स्वर्गोद्भवैः, देवकुलैः=देववंशैः, अलङ्कृताः स्वर्गा इव, अपांसु=रेणुरहितं, स्वच्छं, वसनं=वस्त्रं येषां तादृशा, नागरा=नगरवासिनः, अपां=जलानां, सुवसनाः—शोभनं, वसनं=भवनं, येषां तादृशाः, सागराः=समुद्रा इव, समत्तवारणानि—मत्तवारणैः=अलिन्दैः, सहितानि, भवनानि=गृहाणि, समत्तवारणानि—मत्तवारणैः=मदोन्मत्तगजैः, सहितानि, वनानि=काननानीव, सुरसेन=मधुरजलेन, अन्विताः=युक्ताः, कूपाः। सुरसेनान्विताः—सुरसेनया=देवसैन्येन, अन्विताः=युक्ताः, स्वर्गभूपा इव=स्वर्गाधिपा इव, अधिकंधरोद्देशम्—अधिकमिति क्रियाविशेषणम्, अतिशयेनेत्यर्थः, धरोद्देशं=भूप्रदेशम्, उद्भासयन्तः=शोभयन्तः, विहाराः=बौद्धाश्रमाः, अधिकंधरोद्देशम्=अधिग्रीवाप्रदेशम्; कंधरोद्देशे इति विग्रहे विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः, उद्भासयन्तः, हारा इव विराजन्ते। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और जिस नगरी में भव्य देवगृहों—मन्दिरों से अलंकृत मार्ग दिव्य—स्वर्ग में होने वाले कल्पवृक्ष और देवताओं के कुल (वंश) से समन्वित स्वर्ग के समान हैं, निरन्तर निर्मल वस्त्रों (को धारण करने) वाले नागरिक जन जल में निर्मित सुन्दर भवनों वाले समुद्र के समान हैं; मदमत्त हाथियों से समन्वित भवन मत्त हाथियों से परिपूर्ण जंगल के समान हैं; मधुर जल से युक्त कुएँ देवसेना से युक्त स्वर्गस्थित राजाओं के समान हैं; भूप्रदेश को सुशोभित करते हुए बौद्धमठ स्कन्धभाग (ग्रीवा) को उद्भासित करने वाले हार के समान हैं।

विमर्श—महाकवि का आशय यह है कि उस आर्यावर्त-स्थित निषधा नगरी के राजमार्गों पर जगह-जगह मन्दिर बने हुए थे, नागरिक सदा स्वच्छ श्वेत वस्त्र धारण करते थे, सभी भवनों के द्वार हाथियों से सुशोभित थे, कूपों का जल अत्यन्त मधुर था और जगह-जगह बौद्धमठ भी बने हुए थे ॥

यस्यां च बहुलक्षणाः सुधावन्तो दृश्यन्तेऽन्तः प्रचुराः प्रासादाः बहिश्च वारणेन्द्राः। सुशोभितरङ्गाः समालोक्यन्तेऽन्तः सङ्गीतशाला बहिश्च क्रीड़ाकमलदीर्घिकाः। बहुधान्यनिरुद्धाः कथमप्यभिगम्यन्तेऽन्तः पण्यस्त्रियो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहिश्च क्षेत्रभूमयः। नानाशुकविभूषणाः शोभन्तेऽन्तः सभा बहिश्च सहकारवनराजयः। ससौगन्धिकप्रसाराः विराजन्तेऽन्तर्विपणयो बहिश्च सलिलाशयाः ॥

कल्याणी—यस्यां चेति। यस्यां=निषधायां च, अन्तः=अभ्यन्तरे, बहुलक्षणाः—बहुलाः=बहवः, क्षणा=भूमिका येषु ते, सुधावन्तः—सुधा=लेपविशेषः, तद्वन्तः; प्रचुराः=बहवः, प्रसादाः=राजभवनानि, बहिः=बाह्यप्रदेशे, बहुलक्षणाः—बहूनि, लक्षणानि=प्राशस्त्यद्योतकचिह्नानि येषां तादृशाः, सु-धावन्तः—सुष्ठु, वेगेनेत्यर्थः। धावन्तः=गच्छन्तः, वारणेन्द्राः=गजाः, दृश्यन्ते=अवलोक्यन्ते। अन्तः=अभ्यन्तरे, सुशोभित-रङ्गाः—सुशोभितः=सदलङ्कृतः, रङ्गः=अभिनयस्थली यासु, ताः सङ्गीतशालाः=सङ्गीतभवनानि, बहिः=बाह्यप्रदेशे च, सुशोभि-तरङ्गाः—सुशोभितस्तरङ्गाः=लहर्यः, यासु ताः, क्रीडाकमलदीर्घिकाः—क्रीडाकमलानां, दीर्घिका=वाप्यः, क्रीडायै=जलक्रीडार्थं, कमलपूर्णवाप्यो वा समालोक्यन्ते=सन्दृश्यन्ते। अन्तः=अभ्यन्तरे, बहुधा-अन्यनिरुद्धा—बहुधा=बहुप्रकारेण, अन्यैः=विटैः, निरुद्धा=धनप्रदानेन नियन्त्रिताः, पण्यस्त्रियः=वाराङ्गना, बहिः=बाह्यप्रदेशे च, बहुधान्यनिरुद्धा—बहुभिर्धान्यैः=सस्यैः, निरुद्धाः=अवबाधिताः, क्षेत्रभूमयः, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। अभिगम्यन्ते=प्राप्यन्ते। अन्तः, नाना-आशुकवि-भूषणाः—नाना=अनेके, आशुकवयः=सत्वरकाव्यरचनासमर्थाः कवयः, भूषणं यासां ताः, सभा=संसदः; बहिश्च, नाना-शुक-विभूषणाः=नाना शुका विभूषणं यासां ताः, सहकारवनराजयः=आम्रोद्यानपङ्क्तयः, शोभन्ते। अन्तः ससौगन्धिकप्रसाराः—सौगन्धिकानां=गन्धद्रव्यविक्रेतॄणां, प्रसारैः=विक्रेयवस्तुभिः, सहिता विपणयः=पण्यवीथिकाः, बहिश्च, सौगन्धिकानां=श्वेतकमलपुष्पाणां, प्रसारेण=विस्तारेण, सहिता, सलिलाशया=जलाशया, विराजन्ते=संशोभन्ते। अत्र प्रतिवाक्यं प्रस्तुतद्वयस्य श्लिष्टशब्दैरेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिताऽलंकारः ॥

ज्योत्स्ना—और जिस नगरी के भीतरी भाग में पर्याप्त स्थान वाले चूने से पुते हुए बहुत से भवन हैं तथा बाहर विविध शुभ लक्षणों से समन्वित और अच्छी प्रकार दौड़ते हुए उत्तम हाथी हैं; भीतर सुन्दर रङ्गमञ्चों से समन्वित संगीतशालायें हैं और बाहर रमणीय तरङ्गों से युक्त कमलों से परिपूर्ण क्रीडा-सरोवर हैं; भीतरी भाग में बहुधा-धूर्तों से घिरी, अतः किसी-किसी प्रकार नजदीक जाने योग्य वारांगनायें हैं और बाहर अत्यधिक धान्य से परिपूर्ण, अतः बड़ी कठिनाई से बीच में जाने योग्य कृषि-भूमि (खेत) हैं; भीतरी भाग में अनेक आशुकवियों (तत्क्षण कविता करने वालों) से समन्वित सभायें हैं तो बाहर की ओर अनेक प्रकार के शुकों से विभूषित आम्र वृक्ष के उद्यानों की पंक्तियाँ हैं, भीतर सुगन्धित द्रव्य बेचने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वालों की छोटी-छोटी दुकानों से सुशोभित बाजार हैं तो बाहर सुगन्ध फैलाने वाले कमलों से सुशोभित जलाशय हैं।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड में कतिपय शब्द अपने गर्भ में दो दो अर्थों को छिपाये हैं, जैसे—**बहुलक्षणाः**—१. बहुल=पर्याप्त, क्षणाः=स्थान वाले, २, बहु=अनेक, लक्षणाः=लक्षणों वाले।

सुधावन्तः—(१) सुधा=एक प्रकार का लेपविशेष (चूना), वन्तः=युक्त, २. सु=अच्छी प्रकार, धावन्तः=दौड़ते हुए।

सुशोभितरङ्गाः- १. सुशोभित, रङ्गाः=रङ्गमञ्च वाले, २. सुशोभि=अच्छी तरह से शोभायमान, तरङ्गाः=तरंगों वाले।

बहुधान्यनिरुद्धाः—१. बहुधाः=प्रायः, अन्य=दूसरों से, निरुद्धाः=घिरी हुई, २. बहु=अत्यधिक, धान्य=धान (फसलविशेष) से, निरुद्धाः=घिरे हुए।

नानाशुकविभूषणा—१. नाना=अनेकों, आशुकवि=तत्क्षण कविता बनाने वाले से, भूषणा=विभूषित। २. नाना=अनेक, शुक=पक्षिविशेष (तोता) से विभूषित॥

किं बहुना,

भूमयो बहिरन्तश्च नानारामोपशोभिताः।
कुर्वन्ति सर्वदा यत्र विचित्रवयसां मुदम्॥३१॥

अन्वयः—यत्र भूमयः बहिः अन्तः च नानारामोपशोभिताः सर्वदा विचित्र वयसां मुदं कुर्वन्ति॥३१॥

कल्याणी—**भूमय इति**। यत्र=निषधायां, भूमयः=भूप्रदेशाः, बहिः, नानारामोपशोभिताः—नानाऽऽरामैः=विविधोपवनैः, उपशोभिता=अलंकृता, सर्वदा, विचित्रवयसां=विविधवर्णानां पक्षिणां, मुदम्=आनन्दं, कुर्वन्ति। अन्तश्च=अभ्यन्तरे च, नाना-रामोपशोभिता—नानारामाभिः=अनेकविलासिनीभिः, उपशोभिताः; विचित्रवयसां—विचित्रं=नवमित्यर्थः। वयः=अवस्था येषां तथाविधानां, नवयौवनशालिनां पुरुषाणामिति भावः। मुदम्=आनन्दं, कुर्वन्ति। अत्र प्रस्तुतानां बहिरन्तर्भूमीनामेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिताऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम्॥३१॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय, इस नगरी का बाहरी भाग जहाँ अनेक प्रकार के आरामों (बगीचों) से सुशोभित होने के कारण विभिन्न प्रकार के रंग-विरंगे पक्षियों को सदा आनन्दित करता रहता है; वहीं अनेक वनिताओं से सुशोभित नगरी का भीतरी भाग युवावस्था वाले अद्भुत पुरुषों को आनन्द प्रदान करता रहता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—नानारामोशोभिताः—१. नाना=अनेक, आरामाः=बगीचों से, उपशोभिताः=सुशोभित। २. नाना=अनेक, रामाः=रमणियों से, उपशोभिताः=सुशोभित।

विचित्रवयस्—१. रंगबिरंगे पक्षियों, २. अद्भुत युवावस्था वाले ॥३१॥

यस्यां च भक्तभाजो देवतायतनेषु देवताः सन्निधाना दृश्यन्ते हट्टेषु वणिग्जनाः। अक्षरसावधानाः कविगोष्ठीषु कवयो विलोक्यन्ते द्यूतस्थानेषु द्यूतकाराः। कान्तारागप्रियाः करिणो राजद्वारेषु सञ्चरन्ति वेश्याङ्गणेषु भुजङ्गाः॥

कल्याणी—यस्यां चेति। यस्यां=निषधायां च, भक्तभाजः=भक्तजनावृताः, देवताः, देवतायतनेषु=देवालयेषु, संनिधानाः=संनिहिताः, दृश्यन्ते=अवलोक्यन्ते, हट्टेषु=पण्यवीथिकासु, भक्तभाजः=पक्वान्नसेविनः, वणिग्जनाः, संनिधानाः=निधिमन्तः, दृश्यन्ते। कविगोष्ठीषु=कविसभासु, अक्षर-सावधानाः—अक्षरेषु=वर्णेषु, तद्विन्यासेष्वित्यर्थः। सावधाना=दत्तचित्ताः, कवयः, द्यूतस्थानेषु च, अक्ष-रसावधानाः—अक्षाणां=पाशकानां, रसे=क्रीडारुचौ, अवधानम्=एकाग्रता येषां ते, द्यूतकाराः=द्यूतक्रीडकाः, विलोक्यन्ते=दृश्यन्ते। राजद्वारेषू कान्तार-अग-प्रियाः—कान्तारे=अरण्ये, अगाः=सल्लक्यादयो वृक्षाः, प्रिया=रुचिकरा येषां ते, करिणः=गजाः, वेश्याङ्गणेषु=वारवनिताप्राङ्गणेषु, कान्ता-रागप्रियाः—कान्तानां=सुन्दरीणां, रागः=अनुरागः प्रियो येषां तादृशा, भुजङ्गाः=लम्पटाः, संचरन्ति=विहरन्ति। श्लेषानुप्राणिततुल्ययोगिताऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—जिस निषधा नगरी के देवालयों में देवताओं के समीप भक्ति से परिपूर्ण लोग (भक्तजन) सन्नद्ध दिखाई देते हैं और बाजारों में अन्न बेचने वाले लोग [बनिये) धन से पूर्ण दृष्टिगोचर होते हैं, कविगोष्ठियों में अक्षरविन्यास में दत्तचित्त कविगण दिखाई देते हैं तो जुआघर में जुआड़ी लोग पाशा फेंकने में दत्तचित्त दृष्टिगोचर होते हैं; राजद्वारों पर जंगल के वृक्षों से प्रेम रखने वाले हाथी घूमते रहते हैं तो गणिकाओं के आँगन में कान्ता के अनुराग से प्रेम रखने वाले विटजन भ्रमण करते दिखाई देते हैं।

विमर्श—भक्तभाजः—१. भक्ति से समन्वित, २. अन्न से समन्वित। अक्षरसावधान—१. अक्षर=वर्णविन्यास में, सावधान=दत्तचित्त, २. अक्ष=पाशा, रस—रुचि में, अवधान=दत्तचित्त। कान्तारागप्रिय—१. कान्तार=जंगल, अग=वृक्ष, प्रिय २. कान्ता=प्रिया, राग=स्नेह, प्रिय॥

यस्यां च चतुरुदधिवेलाविराजितसकलधराचक्रचूडामणौ मणिकर्मनिर्मितरम्यहर्म्यतया सुरपतिपुरीपराभवकारिण्याम् अव्ययभावो व्याकरणो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पसर्गेषु न धनिनां धनेषु, दानविच्छित्तिरुन्माद्यत्करिकपोलमण्डलेषु न त्यागिगृहेषु, भोगभङ्गो भुजङ्गेषु न विलासिलोकेषु, स्नेहक्षयो रजनीविरामविरमत्प्रदीपपात्रेषु न प्रतिपन्नजनहृदयेषु, कूटप्रयोगो गीततानविशेषेषु न व्यवहारेषु, वृत्तिकलहो वैयाकरणच्छात्रेषु न स्वामिभृत्येषु, स्थानकभेदश्चित्रकेषु, न सत्पुरुषेषु ॥

कल्याणी—यस्यां चेति। चत्वारो य उदधयः=समुद्राः, तेषां वेलाभिः=तटैः, विराजितं:=शोभितं, परिवेष्टितमिति यावत्। यत् सकलधराचक्रं=समस्तभूमण्डलं, तस्य चूडामणौ=शिरोभूषणीभूतायाम्, अनुत्तमायामिति यावत्। मणिकर्मभिर्निर्मितानि रम्याणि हर्म्याणि=प्रसादा यत्र सा मणिकर्मनिर्मितरम्यहर्म्या, तस्या भावस्तत्ता, तया सुरपतिपुरी=इन्द्रनगरी, तस्याः पराभवकारिण्यां=तिरस्कारकारिण्यां, यस्यां=निषधायां च, अव्ययभावः=अव्ययत्वं, व्याकरणोपसर्गेषु—व्याकरणस्य=व्याकरणशास्त्रस्य, उपसर्गेषु=प्रादिषु वर्तते, धनिनां धनेषु, अव्ययभावः=व्ययराहित्यं न वर्तते, दानविच्छित्तिः=मदशोभा, उन्माद्यत्करिकपोलमण्डलेषु—उन्माद्यताम्=उन्मादं गच्छतां, करिणां=गजानां, कपोलमण्डलेषु=गण्डस्थलेषु दृश्यते, त्यागिगृहेषु दानप्रवणजनगृहेषु, दानविच्छित्तिः=त्यागविच्छेदः, न दृश्यते। भोगभङ्गः—भोगः=सर्पशरीरं, तस्य भङ्गः=आमर्दनं, भुजङ्गेषु=सर्पेषु, दृश्यते, विलासिलोकेषु=विलासशीलजनेषु, भोगानां=विलासानां, भङ्गः=बाधा, न दृश्यते। स्नेहक्षयः=तैलह्रासः, रजनिविरामे=निशावसाने, विरमत्सु=निर्वाणं गच्छत्सु, प्रदीपपात्रेषु=दीपकपात्रेषु, विलोक्यते, प्रतिपन्नजनहृदयेषु—प्रतिपन्नजनानां=विश्वस्तजनानां, हृदयेषु=चित्तेषु, स्नेहक्षयः=प्रेमविनाशः, न विलोक्यते। कूटप्रयोगः—कूटस्य=कूटाख्यशब्दविशेषस्य, प्रयोगः, गीतानां, तानविशेषेषु=विलम्बितस्वरप्रधानलयविशेषेषु, विद्यते, व्यवहारेषु=आचरणेषु, कूटप्रयोगः=कपटव्यापारः, न विद्यते। वृत्तिकलहः—वृत्तिः=सूत्रविवरणं, तद्विषये कलहः=विवादः, वैयाकरणच्छात्रेषु=व्याकरणशास्त्राध्ययनरतेषु छात्रेषु, दृश्यते, स्वामिभृत्येषु=प्रभुसेवकेषु, वृत्तिकलहः=वेतनादिविषये विवादः, न दृश्यते। स्थानकभेदः—स्थानकम्=अवस्थितिः, तस्य भेदः=प्रकारः, चित्रकेषु=चित्रेषु, विद्यते, सत्पुरुषेषु=सज्जनेषु, स्थानकस्य=रक्षणीयनगरादेः, भेदः=विघटनं, न विद्यते। श्लेषानुप्राणितः परिसंख्यालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—चारो समुद्रों के तटों से सुशोभित समस्त भूमण्डल के शिरोरत्नभूत, मणियों से निर्मित रम्य भवनों के कारण इन्द्र की नगरी को भी तिरस्कृत करने वाली उस निषधा नगरी में अव्ययभाव व्याकणशास्त्र के प्र, परा आदि उपसर्गों में ही केवल दिखाई देता है, न कि धनी लोगों के धनों में अर्थात् वहाँ के धनसम्पन्न लोग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अव्ययभाव=व्यय न करनेवाले नहीं हैं, बल्कि अत्यन्त उदारतापूर्वक धन को व्यय करने वाले हैं। दान (मद) की विच्छित्ति (शोभा) केवल उन्माद से युक्त हाथियों के गण्डस्थल पर ही दृष्टिगोचर होती है, त्यागी-जनों के घर में दान का त्याग नहीं दिखाई देता। भोग (साँप के शरीर) का भंग (टेढ़ापन) केवल सर्पों में ही दिखाई देता है, विलासी लोगों में भोग (विषय-वासनादि)-विलासों का विनाश नहीं दिखाई देता। स्नेहक्षय (तैल की समाप्ति) रात्रि की समाप्ति में शान्त होते हुए (बुझते हुए) दीपक-पात्रों में ही दिखाई देता है, भक्त लोगों के हृदय में स्नेह (प्रेम) का विनाश नहीं देखा जाता। कूटरूप शब्दविशेष का प्रयोग केवल संगीत के विलम्बित स्वरप्रधान लयविशेष (तान) में ही दिखाई देता है, व्यवहार में कूट (छल) का प्रयोग दिखाई नहीं देता। कलह (विवाद) केवल वृत्ति (व्याकरण सूत्रों के अर्थ-विवेचन) के प्रसंग में व्याकरण के अध्ययन करने वाले छात्रों में ही देखा जाता है, स्वामी तथा सेवकों के मध्य वृत्ति (वेतन) के विषय में कलह नहीं दिखाई देता। स्थानसम्बन्धी भेद (ऊपर, नीचे, छोटे, बड़े इत्यादि) केवल चित्रों में ही देखे जाते हैं, सज्जन लोगों में स्थानक (नगर के रक्षणीय स्थानों) के सम्बन्ध में भेद (विघटनकारी प्रवृत्ति) नहीं देखी जाती।

विमर्श—अव्यय—व्याकरणशास्त्र में प्रयुक्त प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर् दुस्. दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, उत्, अभि, प्रति, परि और उप—ये बाईस उपसर्ग विभक्तिजन्य विकारों से रहित होते हैं। इनका मूल स्वरूप अपरिवर्तनीय रहता है, इसीलिए ये अव्यय कहलाते हैं।

कूट—संगीतशास्त्र में कुण्ड आदि के भेद से तान (लय) उञ्चास प्रकार के होते हैं; उन्हीं में एक तानविशेष का नाम कूट भी है॥

किं बहुना,

त्रिदिवपुरसमृद्धिस्पर्धया भान्ति यस्यां
सुरसदनशिखाग्रेष्वाग्रहग्रन्थिनद्धाः ।
नभसि पवनवेल्लत्पल्लवैरुल्लसद्भिः
परममिह वहन्त्यो वैभवं वैजयन्त्यः ॥ ३२ ॥

अन्वयः—यस्यां त्रिदिवपुरसमृद्धिस्पर्धया सुरसदनशिखाग्रेषु आग्रहग्रन्थिनद्धाः नभसि उल्लसद्भिः पवनवेल्लत्पल्लवैः परमं वैभवं वहन्त्यः वैजयन्त्यः इह भान्ति ॥ ३२ ॥

कल्याणी—त्रिदिवेति। यस्यां=निषधायां, त्रिदिवपुरसमृद्धिस्पर्धया—त्रिदिवपुरस्य=स्वर्गनगरस्य, या समृद्धिः=ऐश्वर्यं, तस्याः स्पर्धया=ईर्ष्यया, सुरसदन-शिखाग्रेषु—सुरसदनानां=देवालयानां, शिखाग्रेषु=शिखराग्रभागेषु, आग्रहग्रन्थिनद्धाः—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आगृह्यन्त एभिरित्याग्रहाः=दण्डाः, तेषां ग्रन्थिभिः=अग्रपर्वभिः, नद्धाः=दृढं बद्धाः, नभसि=आकाशे, उल्लसद्भिः=शोभमानैः, पवनवेल्लत्पल्लवैः—पवनेन=वायुना, वेल्लद्भिः=चलद्भिः, पल्लवैः=वस्त्राञ्चलैः, परमम्=उत्कृष्टं, वैभवम्=ऐश्वर्यं, वहन्त्यः=धारयन्त्यः, वैजयन्त्यः=पताका, इह=अत्र, भान्ति=शोभन्ते। प्रतीयमानोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। मालिनी वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।' इति ॥ ३२॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; देवताओं की पुरी स्वर्ग के ऐश्वर्य की ईर्ष्या से देवताओं के प्रासादों के शिखरों के ऊपर स्थित दण्डों के अग्रभाग पर पूर्णतया मजबूती से बाँधी गई, आकाश में शोभायमान, वायु के कारण चलायमान (हिलते हुए) वस्त्राञ्चलों से युक्त सर्वोत्कृष्ट ऐश्वर्य को धारण की हुई पताकायें यहाँ सुशोभित हो रही हैं।

विमर्श—कवि का तात्पर्य यह है कि निषधा नगरी ऐश्वर्य में किसी भी प्रकार से स्वर्गलोक से कम नहीं है। इसीलिए स्वर्गस्थ देवताओं के भवनों पर उनके ऐश्वर्यसूचक पताकायें जिस प्रकार फहराती रहती हैं उसी प्रकार यहाँ के निवासियों के भवनों पर भी उनके ऐश्वर्यसूचक पताकायें सुशोभित होती रहती हैं ॥३२॥

अपि च,

चार्वी सदा सदाचारसज्जसज्जनसेविता।
नगरी न गरीयस्या संपदा सा विवर्जिता ॥ ३३ ॥

अन्वयः—सदा सदाचारसज्जसज्जनसेविता चार्वी सा नगरी गरीयस्या सम्पदा न विवर्जिता (विद्यते) ॥३३॥

कल्याणी—चार्वीति। सदा=सततं, सदाचारे=साध्वाचरणे, सज्जाः=तत्पराः, ये सज्जनाः=साधवः, तैः सेविता=श्रिता, चार्वी=मनोज्ञा। चारुशब्दात्स्त्रियां, 'वोतो गुणवचनात्' इति वा ङीप्, तत्र सूत्रे ङीषोऽननुवृत्तिः, 'गुणवचनाद् ङीबाद्युदात्तार्थः' इति वार्तिकादिति ज्ञेयम्। सा=निषधा, नगरी=पुरी, गरीयस्या=श्रेयस्या, संपदा=श्रिया, न विवर्जिता=न परित्यक्ता, सकलाभीष्टसंपद्युक्ता विद्यत इति भावः। 'सदा-सदा', 'सज्ज-सज्ज', 'नगरी-नगरी' इति यमकालंकारः। त्रयाणां तेषां परस्परनिरपेक्षतया संस्थितेः संसृष्टिः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३३॥

ज्योत्स्ना—और भी, हर समय सत् आचरणों में संलग्न सज्जन पुरुषों से सेवित अत्यन्त मनोरम वह निषधा पुरी विशाल सम्पदा से परित्यक्त नहीं है अर्थात् निषधा पुरी समस्त प्रकार के अभीप्सित सम्पदाओं से परिपूर्ण है ॥३३॥

तस्यामासीन्निजभुजयुगलबलविदलितसकलवैरिवृन्दसुन्दरीनेत्रनीलोत्पलगलद्बहलबाष्पपूरप्लवमानप्रतापराजहंसः, सकलजलनिधिवेलावननिखातकीर्तिस्तम्भभूषितभुवनवलयः, विश्वम्भराभोग इव बहुधारणक्षमः, प्रसाद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इव नवसुधाहारी, रविरिवानेकधामाश्रयः । दनुजलोक इव सदानवः स्त्रीजनस्य, वसिष्ठ इव विश्वामित्रत्रासजननः, जनमेजय इव परीक्षितनयः, परशुराम इव परशुभासितः, राघव इवालघुकोदण्डभङ्गरञ्जितजनकः, सुमेरुरिव जातरूपसम्पत्तिः, तुहिनाचल इव पुण्यभागीरथीसहितः, चिन्तामणिः प्रणयिनाम्, अग्रणीः साङ्ग्रामिकाणाम्, उपाध्यायोऽध्यायविदाम्, आदर्शो दर्शनानाम्, आचार्यः शौर्यशालिनाम्, उपदेशकः शस्त्रशास्त्रस्य, परिवृढो दृढप्रहारिणाम्, अग्रगण्यः पुण्यकारिणाम्, अपश्चिमो विपश्चिताम्, अपाश्चात्यस्त्यागवताम्, अचरमश्चातुर्याचार्याणाम्, अपर्यन्तभूभाराधारस्तम्भभूतभुजकाण्डकीलितशालभञ्जिकायमानविजयश्रीः, श्रीवीरसेनसूनुः, समस्तजगत्प्रासादसिरःशेखरीभूतकान्तकीर्तिध्वजो, राजा, राज्यलक्ष्मीकरेणुकाचापलसंयमनश्रृङ्खलः खलवृन्दकन्दलदावानलो नलो नाम ॥

कल्याणी— तस्यामासिदिति । तस्यां=निषधानगर्यां, निजभुजयुगलस्य=स्वकीयबाहुद्वयस्य, बलेन=शक्त्या, विदलितानि=विनाशितानि, यानि सकलवैरिवृन्दानि=समस्तशत्रुसमूहाः, तेषां याः सुन्दर्यः=स्त्रियः, तासां नेत्रनीलोत्पलेभ्यः=नयननीलकमलेभ्यः, गलति=प्रवहति, बहलबाष्पपूरे=समधिकाश्रुप्रवाहे, प्लवमानः=सन्तरन्, प्रताप एव राजहंसो यस्य स तथोक्तः [रूपकालङ्कारः] । सकलजलनिधिवेलाऽवनाय=समस्तसमुद्रतटरक्षणाय, निखाताः=स्थापिताः, ये कीर्तिस्तम्भाः=यशःस्थूणाः, तैः भूषितम्=अलङ्कृतं, भुवनवलयं=भुवनमण्डलं येन स तादृशः, विश्वम्भराभोग इव —विश्वम्भरा=पृथ्वी, तस्या आभोगः=विस्तार इव, बहुधा-रण-क्षमः—बहुधा=अनेकशः, रणे=संग्रामे, क्षमः=समर्थः, पक्षे, बहु-धारण-क्षमः—बहूनाम्=अनेकगुरुत्वसम्पन्नवस्तूनां, धारणे=वहने, क्षमः=समर्थः, प्रासाद इव=राजसदनमिव, नवसुधाहारी=न कस्यापि वसुधां (पृथ्वीं) हरतीति तच्छीलः, पक्षे नव-सुधा-हारी—नवया=नूतनया, सुधया=लेपविशेषेण, हारी=रम्यः, रविरिव=सूर्य इव, अनेकधामाश्रयः—अनेकधा= बहुधा, मा=लक्ष्मीः, तस्या आश्रयः=आवासस्थानम्, पक्षे, अनेकस्य=प्रचुरस्य, धाम्न =तेजसः, आश्रयः, दनुजलोक इव, स्त्रीजनस्य=कान्तावृन्दस्य, सदा-नवः—सदा=सततं, नवः=अतिरम्यतयाऽपूर्वः, पक्षे दानवैः सहितः; वसिष्ठ इव विश्वामित्रत्रासजननः—विश्वेषां=सर्वेषाम्, अमित्राणां=शत्रूणां, त्रासजननः=भयजनकः, पक्षे विश्वामित्रो नाम मुनिस्तस्य त्रासजननः, जनमेजय इव परीक्षित-नयः—परीक्षितः=सम्यगालोचितः, नयः=नीतिर्येन स तादृशः, पक्षे परीक्षिन्नामाभिमन्युसुतस्तस्य तनयः=पुत्रः, परशुरामः=जामदग्न्यः, इव परशुभासितः—परेषाम्=अन्येषां, शुभे=कल्याणे, आसितः=स्थितः, पक्षे परशुना=कुठारेण, भासितः=सुशोभितः, राघवः=श्रीरामचन्द्र इव, अलघुकः+दण्डभङ्गरञ्जितजनकः—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलघुकः=महान्, दण्डभङ्गेन—दण्डस्य=ताडनादिशारीरिकदण्डस्य, यथाऽपराधमार्थिकदण्डस्य च, भङ्गेन=मुक्त्या, रञ्जिताः=प्रसादं नीताः, जनाः=प्रजाः, येन स तादृशश्च, पक्षे—अलघुः=विशालः, यः कोदण्डः=शिवधनुस्तस्य भङ्गेन=त्रोटनेन, रञ्जितः=प्रसन्नीकृतः, जनकः=मिथिलाधिपः येन सः, सुमेरुः=सुमेरुपर्वत इव, जात-रूपसंपत्तिः—जाता=समुत्पन्ना, रूपसम्पत्तिः=सौन्दर्यसंपद् यस्य सः, पक्षे—जातरूपं=सुवर्णमेव, संपत्तिः=ऐश्वर्यं यस्य सः, तुहिनाचलः=हिमालयपर्वत इव, पुण्यभागी-रथी-सहितः—पुण्यभागी=पुण्याधिकारी, रथी=रथमारुह्य संग्रामकर्ता, सहितः—हितैः सहितश्च, पक्षे—पुण्या=पावनी, या भागीरथी=गङ्गा, तया सहितः, [अत्र सर्वत्र श्लेषमूलोपमा]। प्रणयिनां=याचकानां, चिन्तामणिः=तद्रूपोऽभीष्टफलप्रदातेत्यर्थः, सांग्रामिकाणां=योधानाम्, अग्रणीः=प्रमुखनेता, श्रेष्ठ इत्यर्थः। अध्ययनविदाम्= अध्येतॄणाम्, उपाध्यायः=आचार्यः, दर्शनानां=दर्शनशास्त्राणाम्, आदर्शः=निर्मलदर्पणः, शौर्यशालिनां=शूराणाम्, आचार्यः=गुरुः, शस्त्रशास्त्रस्य=शस्त्रविद्यायाः, शास्त्र-विद्यायाश्च, उपदेशकः=शिक्षकः, दृढप्रहारिणां=दृढं प्रहर्तुं शीलं येषां तेषां वीराणां, परिवृढः=प्रधानः, पुण्यकारिणां=सुकृतिनाम्, अग्रगण्यः=श्रेष्ठः, विपश्चितां=विदुषाम्, अपश्चिमः=प्रथमः, त्यागवतां=दानशीलानाम्, अपाश्चात्यः=पूर्वः; चातुर्याचार्याणां=चातुर्योपदेशकानाम्, अचरमः=सर्वोत्कृष्टः [उल्लेखाऽलङ्कारः]। अपर्यन्तः=अनन्तः, यो भूभारस्तस्य आधारस्तम्भभूतं यद् भुजकाण्डं=बाहुदण्डः, तत्र कीलिता=बद्धा, स्थिरीकृतेत्यर्थः। शालभञ्जिकायमाना—शालभञ्जिका=पुत्तलिका, सेवाचरन्ती विजयश्रीः=विजयलक्ष्मीः यस्य स तथोक्तः, श्रीवीरसेनस्य=तदाख्यभूपालस्य, सूनुः=पुत्रः, समस्तं=सकलं, जगत्=लोक एव, प्रासादः=राजसदनं, तत्र शिरःशेखरीभूतः=शिरोभूषणायमाना, उच्चतमभागे विलसित इत्यर्थः। कान्तः=भास्वरः, कीर्तिध्वजः=यशोवैजयन्ती यस्य स तथोक्तः [रूपकालङ्कारः]। राज्यलक्ष्मीरेव, करेणुका=हस्तिनी, तस्याः चापल्यसंयमनाय=चाञ्चल्यप्रतिबन्धाय, शृङ्खलः=निगडरूपः [रूपकालङ्कारः]। खलवृन्दानि=दुर्जनसमूहा एव कन्दलाः=अङ्कुराः; तेषां दावानलः=वनवह्निः, नलो नाम=नल इति नाम्ना प्रसिद्धः, राजा=नृपः, आसीत्=अभवत्। [रूपकालङ्कारः, 'नलो-नलो' इति यमकं च]॥

ज्योत्स्ना— उस निषधा नगरी में अपनी दोनों भुजाओं की शक्ति से समस्त शत्रुसमूह को विनष्ट करने के कारण उन शत्रुओं की वनिताओं के नीलकमल-समान आँखों में तैरते हुए प्रतापी राजहंस के समान; सम्पूर्ण समुद्रतट की सुरक्षा के लिए स्थापित अपने कीर्तिस्तम्भों से समस्त पृथ्वी को अलंकृत करने वाले; पृथ्वी की विशालता के समान अनेक युद्धों में समर्थ अथवा अनेक गुरुत्वसम्पन्न वस्तुओं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को धारण करने में सक्षम; चूने से तत्काल पुते हुए होने के कारण मनोहर भवनों के समान सुख-शान्तिस्वरूप अमृत को तत्काल देने वाले होने के कारण मनोहर अथवा देवताओं एवं ब्राह्मणों के निमित्त दान की गई पृथ्वी का हरण न करने वाले, सूर्य के समान अनेक प्रकार की कान्ति के आश्रय-स्थान अथवा अत्यधिक तेज के आश्रयस्थानस्वरूप, दानवों से समन्वित असुरलोक की तरह स्त्रियों के लिए निरन्तर अत्यन्त नवीन दिखाई देने के कारण अपूर्व; विश्वामित्र के लिए भय के हेतुभूत वशिष्ठ के समान समस्त शत्रुओं में भय उत्पन्न करने वाले; परीक्षितपुत्र जनमेजय के समान अपनी नीतियों का परीक्षण करने वाले; परशुनामक अस्त्रविशेष से सुशोभित परशुराम के समान दूसरों का कल्याण करने वाले; अत्यन्त विशाल शिव-धनुष को तोड़ने के कारण राजा जनक को प्रसन्न करने वाले श्रीराम के समान प्रजा को दिये जाने वाले अत्यन्त गौरवयुक्त (भयानक) शारीरिक अथवा आर्थिक दण्डों को समाप्त करने के कारण प्रजा को प्रसन्न करने वाले; सुवर्णरूप सम्पत्ति से युक्त सुमेरु पर्वत के समान समुत्पन्न सौन्दर्यरूप सम्पत्ति से समन्वित; पवित्र गंगा से युक्त हिमालय के समान पुण्य के अधिकारी, रथ पर आरूढ़ होकर संग्राम करने वाले कल्याण-भावना से परिपूर्ण; याचकों के लिए चिन्तामणि के समान उनके समस्त अभीष्ट फलों को देने वाले; युद्ध करने वालों में सर्वश्रेष्ठ; अध्ययन करने वालों के लिए आचार्य (गुरु) के समान; दर्शनशास्त्रों के लिए आदर्श (निर्मल दर्पण) के समान; वीरता से सम्पन्न लोगों के लिए गुरु के समान; शस्त्रविद्या और शास्त्रविद्या के उपदेशक (शिक्षक) के समान; दृढ़तापूर्वक प्रहार करने वाले वीरों में प्रधान; पुण्यशालियों में अग्रणी; विद्वानों में प्रथम अर्थात् सर्वश्रेष्ठ; दान देने वालों में सदा आगे रहने वाले; चातुर्य की शिक्षा देने वालों में सर्वोत्कृष्ट; अनन्त भूभार के आधारस्तम्भभूत अपने भुजदण्ड में बद्ध कठपुतली के समान स्थिर की गई विजय-लक्ष्मी वाले; वीरसेन के पुत्र; समस्त संसाररूपी भवनों के शिखरभाग पर अपनी भास्वर कीर्तिपताका को फहराने वाले; राज्यलक्ष्मीरूपी हथिनी की चञ्चलता को प्रतिबन्धित करने के लिए जञ्जीर के समान; दुष्टसमूहरूपी अंकुरों को विनष्ट करने वाले दावानल (वनाग्नि) के समान नल नाम के राजा थे ॥

यस्येन्दुकुन्दकुमुदकान्तयः सकललोककर्णप्रियातिथयो गुणाः सततमेकब्रह्माण्डसंपुटसंकीर्णनिवासव्यसनविषादिनः पुनरनेकब्रह्माण्डकोटिघटनाम न्यर्थयमाना इव भगवतो विश्वसृजः कमलसम्भवस्य कर्णलग्नाः स्वर्गलोकमधिवसन्ति स्म ॥

कल्याणी—यस्येति। यस्य=नलस्य, इन्दुः=चन्द्रः, कुन्दं पुष्पविशेषः, कुमुदं चापि पुष्पविशेषः, तेषां कान्तिरिव कान्तिर्येषां ते तथोक्ताः, चन्द्रकुन्दकुमुदवद्धवला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्यर्थः । सकललोकस्य=समस्तजनस्य, कर्णानां=श्रोत्राणां, प्रियाः=प्रीतिकराः, अतिथयः=अभ्यागताः, समस्तजनकर्णगोचरा इति भावः । गुणाः=दयादाक्षिण्यशौर्यादयः, सततं=निरन्तरम्, एकस्मिन् ब्रह्माण्डसम्पुटे, सङ्कीर्णः=अव्यवस्थितः, अपर्याप्त इत्यर्थः । निवासः=स्थितिः, तदेव व्यसनं=विपद्, तेन विषादिनः=संजातदुःखाः, पुनः=भूयोऽपि, अनेकब्रह्माण्डकोटीनां=बहुब्रह्माण्डकोटिसंख्यानां, घटनां=रचनाम्, अभ्यर्थयमाना इव, भगवतः=षडैश्वर्यसम्पन्नस्य, विश्वसृजः=जगद्विधातुः, कमलसंभवस्य=कमलजस्य, ब्रह्मण इति भावः । कर्णलग्नाः=श्रवणसंसक्ताः, स्वर्गलोकमधिवसन्ति स्म ['उपान्वध्याङ्वसः' इत्याधारस्य कर्मत्वम्] । नलस्य गुणाः जगद्विधातुरपि कर्णानामातिथ्यमयासिषुः । ते प्राचुर्यादेकस्मिन् ब्रह्माण्डेऽमान्तः स्वनिवासार्थमनेककोटिब्रह्माण्डरचनां प्रार्थयितुमिव तत्कर्णलग्ना अभूवन्निति भावः । 'इन्दुकुन्दकुमुदकान्तयः' इत्युपमा, गुणानामचेतनत्वाद्विषादासम्बन्धेऽपि तद्वर्णनादसम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्तिः. 'अभ्यर्थयमाना इव' इति हेतूत्प्रेक्षा ॥

ज्योत्स्ना जिस राजा नल के चन्द्रमा, कुन्दपुष्प एवं कुमुदपुष्प के समान कान्ति से युक्त एवं निखिल लोगों के कानों के लिए प्रीतिदायक गुण निरन्तर एक ही ब्रह्माण्ड में सम्पुटित (बन्द) रहने से अत्यन्त संकीर्णतापूर्वक निवास करने के कारण कष्ट का अनुभव करते हुए पुनः अनेकों करोड़ ब्रह्माण्ड की रचना करने के लिए समस्त विश्व की रचना करने वाले, कमल से उत्पन्न होने वाले भगवान् ब्रह्मा के कानों से लगकर प्रार्थना करते हुए के समान स्वर्ग में निवास करते थे ।

विमर्श—कवि का तात्पर्य यह है कि राजा नल के गुण इतने ज्यादा प्रीतिदायक थे कि उनका गान देवलोक, ब्रह्मलोक, विष्णुलोक तक में किया जाता था अर्थात् राजा नल के गुणों का गान समस्त लोकों में बराबर होता रहता था ॥

यस्मिंश्च राजनि जनितजनानन्दे नन्दयति मेदिनीम्, गीतेषु जातिसङ्कराः, तालेषु नानालयभङ्गाः, नृत्येषु विषमकरणप्रयोगाः, वाद्येषु दण्डकरप्रहाराः, पुण्यकर्मारम्भेषु प्रबन्धाः, सारिद्यूतेषु पाशप्रयोगाः, पुष्पितकेतकीषु हस्तच्छेदाः, न्यग्रोधेषु पादकल्पनाः, कञ्चुकमण्डनेषु नेत्रविकर्तनानि आसन्; न प्रजासु ॥

कल्याणी—यस्मिंश्चेति । यस्मिंश्च, जनितः=समुत्पादितः, जनानां=प्रजानाम्, आनन्दः=हर्षः, येन तथाभूते, राजनि=नले, मेदिनीं=पृथ्वीं, नन्दयति=अनुरञ्जयति, शासति सतीति भावः । भावे सप्तमी । गीतेषु, जातिसंकराः—जातीनां=नन्दयन्तीप्रभृतीनामष्टादशानां, संकराः=मिश्रप्रतीतयः, प्रजासु जातिसंकराः=वर्णसंकरा न । तालेषु=चञ्चत्पुटादिषु, नाना-लयानां=द्रुत मध्य-विलम्बितलक्षणानां, भङ्गाः=तरङ्गाः, आरोहावरोहा इत्यर्थः । प्रजासु नाना-आलयभङ्गाः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभिन्नगृहध्वंसाः, न। नृत्येषु विषम-करणप्रयोगाः—नृत्येषु=नर्तनेषु, विषमाः वक्रीकृताकां, करणानां=हस्तपादाद्यङ्गानां, यद्वा नृत्यशास्त्रे प्रसिद्धानां विषमक णानां=तलपुष्पपटादीनां, प्रयोगा आसन्, प्रजासु विषमक-रण-प्रयोगाः—विषमा विषमकाः (विषमशब्दात् स्वार्थे कः), विषमकाणां=नीतिविरुद्धानां, रणानां=युद्ध प्रयोगाः न। वाद्येषु=डिण्डिमप्रभृतिषु, दण्डकरप्रहाराः—दण्डैः=कोणैः, करैः=पा भिश्च, प्रहाराः=ताडनान्यासन्, प्रजासु दण्डाः=वधादयः, कराः=राजदेयां तैः प्रहाराः=पीडनानि, न। पुण्यकर्मणां=पवित्रकृत्यानाम्, आरम्भेषु, प्रबन्धाः अविच्छिन्नप्रवचनानि, श्रीमद्भागवतादिधार्मिकग्रन्थानामखण्डपाठा इत्यर्थः। आस प्रजासु, प्रबन्धाः=प्रकृष्टबन्धनानि, न। सारिद्यूतेषु=अक्षक्रीडासु, पाशप्रयोगा पाशकानां प्रयोगाः, आसन्, प्रजासु पाशप्रयोगाः=वधार्थं गले बन्धनरज्जुप्रयो न। पुष्पितकेतकीषु, हस्तच्छेदाः—हस्ताः=केतकीगर्भाः, तेषां छेदाः=त्रोटना मध्यभागत्रोटनानीत्यर्थः। आसन्, प्रजासु हस्तच्छेदाः=पाणिकर्तनानि, न न्यग्रोधेषु=वटवृक्षेषु, पादकल्पनाः—पादानां=मूलानां, कल्पनाः=रचनाः, आस वटवृक्षा एव नूतनमूलानां सृष्टिं कुर्वन्ति स्मेत्यर्थः। प्रजासु पादकल्पनाः=चर कर्तनानि, न, कस्यापि जनस्य पादो न छिद्यते स्मेत्यर्थः। कञ्चुकमण्डनेषु=कञ्चु कानां मण्डनविधिषु, नेत्रविकर्तनानि—नेत्रं=क्षौमवस्त्रविशेषः, तस्य विकर्तनानि विशेषेणाङ्गप्रमाणेन कर्तनानि, आसन्, कञ्चुकसीवनकालेऽङ्गप्रमाणेन नेत्रनामक वस्त्रविशेषस्य कर्तनं भवति स्मेत्यर्थः। प्रजासु नेत्रविकर्तनं न, कस्यापि ज नयननिष्कासनं न क्रियते स्मेत्यर्थः। श्लेषमूला परिसंख्या॥

ज्योत्स्ना—और जिस राजा नल के शासनकाल में प्रजा के हर्षित से पृथ्वी प्रमुदित रहती थी। नन्दयन्ती आदि अट्ठारह प्रकार के जातियों गीतों में ही थे, प्रजा वर्णशंकर नहीं थी। विभिन्न प्रकार के द्रुत, मध्य, विलंबि आदि लय (संगीत के; तालों में ही होते थे, प्रजा के घरों में ध्वंस (विनाश) न होता था। तल, पुष्प, पट आदि (नृत्यशास्त्र में प्रसिद्ध) विषम करणों का प्रयो अथवा हाथ-पैर आदि अवयवों के टेढ़े-मेढ़े प्रयोग केवल नृत्य में ही होते थे, प्रजाओं नीतिविरुद्ध युद्ध नहीं देखा जाता था। दण्डों तथा हाथों के प्रहार (डिण्डिम आदि वाद्यों पर ही होते थे, प्रजा में (मृत्यु आदि) दण्ड तथा कर से होने वाला उत्पीड़ नहीं था। पुण्यकार्यों के प्रारम्भ में ही प्रबन्ध (लगातार प्रवचन अथवा श्रीमद्भाग आदि धार्मिक ग्रन्थों का अखण्ड पाठ) किया जाता था, प्रजा में किसी प्रकार विशेष बन्धन आदि नहीं था। पाशों का प्रयोग केवल जुए के खेल में ही होता प्रजा में पाश-प्रयोग (वध हेतु गले में रस्सी का प्रयोग) नहीं किया जाता था हस्तच्छेद (मध्य भाग का तोड़ना) विकसित केतकी के पुष्पों में ही होता था,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में हस्तच्छेद (हाथों का काटना) नहीं देखा जाता था। पादकल्पना (मूल—जड़ की रचना) वटवृक्षों में ही प्राप्त होती थी, किसी व्यक्ति का पैर नहीं काटा जाता था। नेत्रनामक विशेष प्रकार के वस्त्रों को चोली आदि बनाने के लिए ही विशेष प्रकार से काटा जाता था, प्रजा में किसी व्यक्ति के नेत्र (आँखों) का विकर्तन (निष्कासन) नहीं किया जाता था।

विमर्श—कवि का तात्पर्य यह है कि राजा नल के शासनकाल में राजकोष अत्यन्त समृद्ध था तथा प्रजा अत्यन्त सम्पन्न, प्रसन्न तथा सदाचरणों से युक्त थी; जिस कारण किसी भी प्रकार के राजदण्ड का प्रयोग उसके शासनकाल में नहीं होता था और न ही उसके राज्य में किसी प्रकार के अनाचार होते थे॥

यश्च कोऽप्यन्यादृश एव लोकपालः। तथाहि—अपूर्वो विबुधपतिः; अदण्डकरो धर्मराजः; अजघन्यः प्रचेताः, अनुत्तरो धनदः॥

कल्याणी—यश्चेति। यश्च=राजा नलः, कोऽपि=कश्चिदपि, अन्यादृश एव=इन्द्रादिदिक्पालेभ्यो विलक्षण एव, लोकपालः=दिगीशः, पक्षे प्रजापालकः। स्वोक्तमेव द्रढयन्नाह—तथाहीति। अपूर्वः—न पूर्वस्यां दिशि स्थितः, विबुधानां=देवानां, पतिः=स्वामी, इन्द्र इत्यर्थः। इन्द्रस्य पूर्वदिग्वर्त्तितया नलस्यापूर्वत्वेन च तस्येन्द्राद्विलक्षणत्वमिति भावः। पक्षे, अपूर्वः=असाधारणः, विबुधानां=विदुषां, पतिः=श्रेष्ठ इत्यर्थः। अदण्डकरो धर्मराजः—न दण्डो विद्यते करे=हस्ते यस्य सः; तथाविधोऽपि धर्मराजः=यमः, यमस्य दण्डपाणित्वान्नलस्य च अदण्डकरत्वात्तस्य यमाद्विलक्षणत्वमिति भावः। पक्षे; न विद्यते दण्डः=प्रजानां वधादिः, करः=कस्मैचिद्राज्ञे देयोंऽशो यस्मात्सोऽदण्डकरः, धर्मराजः=न्यायपरायणो राजा। अजघन्यः प्रचेताः—न जघन्यया= पश्चिमया दिशा सह वर्तत इति, तादृशोऽपि प्रचेताः=वरुणः, इति विलक्षणत्वं नलस्य, प्रचेतसः पश्चिमदिग्वर्तित्वादिति भावः। पक्षे, अजघन्यः=अनिन्द्यः, प्रचेताः=उत्कृष्टमनाः। अनुत्तरो धनदः—नोत्तरदिशि स्थितोऽपि, धनदः=कुबेरः, इति नलस्य कुबेराद्विलक्षणत्वं तस्योत्तरदिग्वर्त्तित्वादिति भावः। पक्षे— न विद्यत उत्तरः=उत्कृष्टतर; यस्मात् स तादृशः, धनदः=वित्तप्रदः॥

ज्योत्स्ना—और यह राजा नल तो कुछ अन्य प्रकार के ही विलक्षण लोकपाल (प्रजापालक) थे अर्थात् इन्द्र आदि दिक्पालों से भिन्न प्रकार के विलक्षण ही लोकपाल थे; क्योंकि देवताओं के स्वामी इन्द्र तो केवल पूर्व दिशा में रहते थे; परन्तु यह तो असाधारण विबुधों—विद्वानों में भी श्रेष्ठ थे। यमराज तो हाथ में सदा दण्ड लिये रहते हैं, परन्तु राजा नल दण्ड से रहित, अन्य राजाओं से कर न लेने वाले और न्यायपूर्वक राज्य करने वाले थे। प्रचेता—वरुण तो जघन्य—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पश्चिम दिशा में रहने वाले हैं, लेकिन यह राजा नल अजघन्य – अनिन्द्य तथा प्रचेता – उत्कृष्ट चित्तवाले थे। धनद – कुबेर तो उत्तर दिशा के स्वामी हैं, परन्तु राजा नल तो उत्तर दिशा में स्थित न रहते हुए भी धन का दान करने वालों में अनुत्तर—सर्वश्रेष्ठ थे।

विमर्श – इन्द्र के संपूर्व, लेकिन नल के अपूर्व; यमराज के दण्डपाणि, लेकिन नल के अदण्डपाणि; वरुण के जघन्य, लेकिन नल के अजघन्य; धनद के उत्तर, लेकिन नल के अनुत्तर होने के कारण यह नल उन पूर्वादि दिशाओं के दिक्पालों से सर्वथा विलक्षण लोकपाल थे॥

येन प्रचण्डदोर्दण्डमण्डलीविश्रान्तविजयश्रिया श्रवणोत्पलदलायमानमानिनीमानलुण्ठाकलोचनेन पृथ्वी प्रिया च कामरूपधारिणी सा तेन भुक्ता॥

कल्याणी—येनेति। प्रचण्डा=असह्या, बलशालिनीत्यर्थः। या दोर्दण्डमण्डली=मण्डलाकारभुजदण्डपाशः, तस्यां विश्रान्ता=सुखेन चिरस्थिता, विजयश्रीः=विजयलक्ष्मीः, यस्य तेन। श्रवणयोः=कर्णयोः, उत्पलदलायमाने=कमलपत्र इव सुशोभिते, कर्णपर्यन्तविस्तृत इत्यर्थः। तथा च, मानिनीनां=मानवतीनां रमणीनां, मानस्य=प्रणयकोपस्य, लुण्ठाके=अपहारके, लोचने=नयने, यस्य तादृशेन येन=राज्ञा नलेन, कामरूपधारिणी—कामरूपं देशविशेषं धरतीति तथोक्ता, पृथ्वी=भूमिः, कामं=स्पृहणीयं, सातिशयं च रूपं धरतीत्येवंशीला प्रिया=दयिता च, सातेन=सुखेन (सातशर्मसुखानि च' इत्यमरः), भुक्ता=उपभोगविषयीकृता। (अत्र प्रस्तुतयोः पृथ्वीप्रिययोर्भोगरूपैकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिताऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—जिस राजा नल ने अपनी शक्तिसम्पन्न मण्डलाकार भुजाओं में सुखपूर्वक स्थित विजयलक्ष्मी से युक्त होकर कर्णपर्यन्त विस्तृत अथवा कमलदल के समान सुशोभित एवं कामिनियों के प्रणयकोप का अपहरण करने वाली आँखों से समन्वित होकर कामरूप नामक देश को धारण करने वाली पृथ्वी तथा कामरूप (अतिशय सौन्दर्य) को धारण करने वाली प्रिया का सुखपूर्वक उपभोग किया॥

यस्याः सकलजनमनोहारिविशेषकम्, पृथुललाटमण्डलम्, अभिलषणीयकान्तयः कुन्तलाः, श्लाघनीयो नासिक्यभागः, बहुलवलीकः सरोमालिकालङ्कारश्च मध्यदेशः, प्रकटितकामकोटिविलासः काञ्चीप्रदेशः। किं बहुना; यस्याः कृष्णागरुचन्दनामोदबहुलकुचाभोगभूषणा नृत्यतीवाङ्गरङ्गे रमणीयतया निरुपमा नवा यौवनश्रीः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तामेव पृथ्वीं प्रियां च विशिनष्टि—यस्या इति। यस्याः=पृथ्व्याः, प्रियायाश्च, सकलजनमनोहारिविशेषकम् -सकलजनानां, मनोहारी=चित्ताकर्षकः, विशेषकः=पुण्ड्रकदेशविशेष एव विशेषकः केसरतिलको यत्र तादृशम्। पृथुललाटमण्डलम्—पृथुलं=विस्तृतं, लाटमण्डलं=लाटाख्याप्रदेश एव, पृथु=प्रशस्तं; ललाटमण्डलं=भालप्रदेशः, प्रियापक्षे—यस्याः=प्रियायाः, सकलजनमनोहारी विशेषकः=पुण्ड्रकदेशविशेष इव विशेषकः, तिलकः यत्र तादृशं पृथुलं लाटमण्डलमिव पृथु ललाटमण्डलम्। अभिलषणीयकान्तयः—अभिलषणीया=स्पृहणीया, कान्तिः=शोभा, येषां तादृशाः, कुन्तलाः=कुन्तलाख्यो देशः। प्रियापक्षे—यस्याः=प्रियायाः, कुन्तलाः=केशाः, अभिलषणीयकान्तयः सन्ति। श्लाघनीयः=प्रशंसनीयः, नासिक्यभागः=नासिक्यप्रदेश एव नासिकाभागः। प्रियापक्षे—नासिक्यप्रदेश इव नासिकाभागः। बहुलवलीकः सरोमालिकालङ्कारश्च मध्यदेशः—यस्याः=पृथिव्याः, मध्यदेशः=मध्यभागः, उदरप्रदेशश्च। बह्व्योः लवल्यः=लताविशेषा एव बहुला, वल्यः=उदररेखा यत्र तादृशः, सरोमालिका=तडागपंक्तिः, तद्रूप एव अलंकारः, तेन युक्तः, रोमावलिरूपालङ्कारेण युक्त इव शोभते। प्रियापक्षे—प्रियाया उदरभागो रोमावलिरूपालङ्कारेण युक्तः सरोमालिकया=तडागपङ्क्त्याऽलंकृत इव शोभते। प्रकटितकामकोविलासः काञ्चीप्रदेशः—यस्याः=पृथ्व्याः, काञ्चीप्रदेशः=काञ्चीत्याख्यः प्रदेश एव काञ्चीप्रदेशः=नितम्बभागः, प्रकटितः कामकोटयाः=तन्नाम्न्याः देव्याः, विलास एव कामकोटिविलासः=मदनोत्कर्षविलासः, यत्र तादृशो विद्यते। प्रियापक्षे—काञ्चीत्याख्यप्रदेश इव यस्याः=प्रियायाः, काञ्चीप्रदेशः=नितम्बभागः, प्रकटितः, कामकोटिदेव्याः विलास इव कामकोटिविलासः=मदनोत्कर्षविलासः, यत्र तादृशः शोभते। किं बहुना=किमधिकेन? यस्याः=पृथिव्याः, कृष्णागरुचन्दनौ=वृक्षविशेषौ, तयोः आमोदः=परिमलः, बहूनां, लकुचानां=वृक्षविशेषाणाम्, आभोगः=विस्तारश्च, तौ भूषणं यस्याः सा। वनश्रीः=काननशोभा, निरुपमानवायौ=अनुपमपवने वाति सतीति भावः। रमणीयतया=रम्यतया; अङ्गरङ्गे=अङ्गाख्यदेशरूपे नर्तनस्थले, नृत्यतीव। प्रियापक्षे—यस्याः=प्रियायाः, कृष्णागरुचन्दनयोः, आमोदेन=सौरभेण, तद्रसचर्चाविशादिति भावः। बहुलः=व्याप्तः, कुचाभोगः=स्तनमण्डलं, भूषणम्=अलङ्कारः, यस्यास्तादृशी नवा=नूतना, यौवनश्रीः=तारुण्यशोभा, अङ्गरङ्गे=शरीरावयरूपनर्तनस्थले, रमणीयतया नृत्यतीव। ('विशेषकस्तु पुण्ड्रके विशेषाद्यायकेऽपि वा' इत्यनेकार्थसंग्रहः; 'विशेषकः स्यात् तिलके' इति विश्वश्च); अङ्गरङ्ग इत्यत्र रूपकालङ्कारः, नृत्यतीवेत्यत्रोत्प्रेक्षा, सकलजनेत्याद्यारभ्य सर्वत्र श्लेषालङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—प्रकृत गद्यखण्ड के आर्यावर्तीय भूमि और राजा नल की प्रिया—दोनों पक्षों में अर्थ स्फुटित होते हैं, अतएव सौकर्य हेतु दोनों ही अर्थ द्रष्टव्य हैं—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(भूमिपक्ष में) जिस भूमि का (पर) समस्त लोगों के चित्त को आकर्षित करने वाला विशेषक प्रदेश, अत्यन्त विस्तृत लाट प्रदेश-समूह, स्पृहणीय कान्ति से समन्वित कुन्तल प्रदेश, अत्यन्त प्रशंसायोग्य नासिक्य प्रदेश, अत्यधिक लवली वृक्षों (अथवा ऊँची-नीची भूमि) एवं सरोवरों की शृंखला से अलंकृत मध्यदेश तथा करोडों कामदेवों के विलास को व्यक्त करने वाला काञ्ची प्रदेश (स्थित) है। अधिक क्या कहा जाय; जिस भूमि की कृष्णागरु (अगरु) एवं चन्दन वृक्षों की सुगन्ध तथा अधिकांश लकुच-वृक्षों की व्यापकता से सुशोभित वनलक्ष्मी रमणीय होने के कारण अनुपम वायु के प्रवाह से अङ्गप्रदेशरूप रङ्गमञ्च पर नृत्य-सी कर रही है।

(प्रियापक्ष में) जिस कामरूपधारिणी प्रिया का तिलक समस्त लोगों के चित्त को आकर्षित करने वाला, ललाट-भाग विस्तृत, केश सर्वथा स्पृहणीय; नासिका भाग अतीव प्रशंसनीय, मध्यदेश (कटि प्रदेश) त्रिवलियों एवं रोम-राजियों रूपी अलंकारों से अलंकृत तथा काञ्चीप्रदेश (करधनी धारण करने का स्थान—श्रोणी) करोड़ों कामदेवों के निवास को प्रकट करने वाला है।

अधिक क्या कहा जाय; अगरु तथा चन्दन की सुगन्ध और उन्नत उरोजों की व्यापकता से विभूषित, रमणीयता के कारण उपमा-रहित एवं नूतन यौवनश्री जिसके अंग-(शरीरावय)-रूप रंगमञ्च पर नृत्य-सी कर रही है।

विमर्श—त्रिवली—पेट और स्तनों के मध्य में पड़ने वाली तीन रेखायें। काञ्ची प्रदेश—स्त्रियों के करधनी धारण करने का स्थान; इसे ही कटिप्रदेश अथवा श्रोणी-भाग भाग भी कहा जाता है।

निरूपमानवायौवनश्रीः का विच्छेद पृथ्वी पक्ष में स्पष्टार्थ हेतु निरुमान + वायौ + वनश्रीः करना चाहिए॥

किञ्चान्यत्; अन्य एव नवावतारः स कोऽपि पुरुषोत्तमो यो न मीन-रूपदूषितः, नाङ्गीकृतविश्वविश्वम्भराभारोऽपि कूर्मीकृतात्मा, न वराहव-पुषा क्लेशेन पृथ्वीं बभार, न च नरसिंहः समुत्सन्नहिरण्यकशिपुः, न बलिराजबन्धनविधौ वामनो दैन्यमकरोत्, नापि रामो लङ्केश्वरश्रियम-पाहरत्, नापि बुद्धः कल्किकुलावतारी॥

कल्याणी—किञ्चान्यदिति। किं चान्यत्। सः=नलः, अन्य एव=अपूर्व एव, कोऽपि, नवावतारः—नवः नूतनः, विलक्षण इत्यर्थः। अवतारः=जन्म, यस्य स तथाभूतः। पुरुषोत्तमः=विष्णुः, यो न मीनरूपेण दूषित इति ह्यपूर्वत्वं विष्णो-र्मीनरूपदूषितत्वात्। पक्षे—यः=नलः, पुरुषोत्तमः=पुरुषेषूत्तमः, श्रेष्ठ इत्यर्थः। अनमी—न अमी अनमी=नीरोगः, अथवा नमी=नमयति, शत्रूनिति तथाविधः, न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपदूषितः=रूपे दूषितः=विकृतः, न। अङ्गीकृतविश्वविश्वम्भराभारोऽपि=स्वीकृत-सकलभूभारोऽपि, न, कूर्मीतात्मा— कूर्मीकृतः=कच्छपीकृतः, आत्मा=स्वरूपं, येन तादृशो नेति नलस्यापूर्वत्वं, विष्णोर्भूभारधारणार्थं गृहीतकूर्मावतारत्वादिति भावः। पक्षे—यः=नलः, स्वीकृतसकलधराधुरोऽपि न कूर्मीकृतात्मा—कूर्मीकृतः= पीड-याऽवनमितः आत्मा=देहः, येन तादृशो न, अक्लेशेनैव सकलराज्यभारं बभारेत्यर्थः। न वराहवपुषा = वराहशरीरेण, क्लेशेन=कष्टेन, पृथ्वीं=भुवं, बभार = दध्रे इति नलस्यापूर्वत्वं, विष्णोर्भूभारधारणार्थं धृतवराहशरीरत्वादिति भावः। पक्षे—वराहव-पुषा—वराहवं = श्रेष्ठयुद्धं, पुष्णातीति तेन क्लेशेन न, किन्तु सुखेनैव पृथ्वीं बभार=भुवं शशास। न च, नरसिंहः=नृसिंहावतारधरः, समुत्सन्नहिरण्यकशिपुः—समुत्सन्नः = विनाशितः, हिरण्यकशिपुः=तन्नामा दैत्यः, येन तादृश इत्यपूर्वत्वं, विष्णोर्नरसिंहावतारधारित्वादिति भावः। पक्षे—(शौर्यात्) नरेषु सिंहः सन्नपि, समुत्सन्नं=विनाशितं, हिरण्यं=सुवर्णं, कशिपुः=भोजनाच्छादनानि, च येन तादृशो न, (कशिपुस्त्वन्नमाच्छादनं द्वयम्' इत्यमरः)। न, वामनः=वामनावतार-धरः, सन् बलिराजबन्धनविधौ=दैत्यराजस्य बलेर्बन्धनकर्मणि, दैन्यमकरोत्= दीनभावमङ्गीकृतवानिति नलस्यापूर्वत्वं विष्णोर्बलिबन्धनार्थं धृतवामनरूपत्वादिति भावः। पक्षे —बलिनां=बलशालिनां राज्ञां, बन्धनविधौ=संयमनकर्मणि मनोदैन्यं वा=चित्तखेदं च, नाकरोत्। नापि=न च, रामः=दशरथपुत्रः, सन् लङ्केश्वरश्रियं= रावणलक्ष्मीम्, अपाहरत्=अपहृतवानिति नलस्यापूर्वत्वं, धृतरामावतारेण विष्णुना तथा कृतत्वादिति भावः। पक्षे—रामः=सुन्दरः, सन्नपि अलम्=अत्यर्थं, कस्य=ब्रह्मणः; ईश्वरस्य=शिवस्य च, श्रियं=सम्पत्तिं, नापाहरत्, न देवस्वापहारक इत्यर्थः। नापि=न च, बुद्धः=सुगतः, कल्किकुलावतारी च=गृहीतकल्क्यवतारश्चेति ह्यपूर्वत्वं, पुरुषोत्तमस्य विष्णोर्गृहीतबुद्धकल्क्यवतारत्वादिति भाव। पक्षे—बुद्धः= विद्वान्, किन्तु कल्किकुलावतारी=पापिकुलोत्पन्नः, नासीत्॥

ज्योत्स्ना—और यह (निषधाधिपति नल) कोई अलग ही प्रकार के नवीन अवतार थे, जो कि पुरुषोत्तम (विष्णुस्वरूप) होते हुए भी मीन-रूप (मत्स्यावतार धारण करने) से दूषित न होने के कारण भी अनमी (निरोग, शत्रुओं को झुकाने वाले) तथा रूपदूषित (विकृत सौन्दर्य वाले) नहीं थे; सम्पूर्ण पृथ्वी के भार को धारण करते हुए भी कच्छप का स्वरूप धारण करने वाले नहीं थे; (वराहावतार के समान) वराह का शरीर धारण कर कष्टपूर्वक पृथ्वी को धारण नहीं किये थे; नरसिंह होते हुए भी हिरण्यकशिपु का विनाश नहीं किये थे, राजा बलि को बन्धन में बाँधने के लिए दीनता का प्रदर्शन करने वाले भगवान् वामन के समान बलशाली राजाओं को अधीन करने में दैन्य (कष्ट) को नहीं प्राप्त किये थे; राम (सुन्दर) होते हुए भी लंकेश्वर की श्री का हरण करने वाले दशरथपुत्र राम के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान (अलं) व्यर्थ ही क (ब्रह्मा) और ईश्वर (शंकर) अर्थात् देवताओं के भाग-स्वरूप सम्पत्ति का अपहरण करने वाले नहीं थे और बुद्ध (विद्वान्) होते हुए भी कल्कि (पापी) कुल में अवतार धारण करने वाले भी नहीं थे।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड द्वारा महाकवि ने राजा नल को, पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु के सभी दशों अवतारों का निर्देश करते हुए उनकी अपेक्षा, श्रेष्ठ प्रतिपादित किया है। इसीलिए राजा नल को उन्होंने नवावतार (नवीन अवतार) की संज्ञा दी है। भगवान् विष्णु के दश अवतार हैं—मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। कहा भी गया है—

मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नृसिंहो वामनस्तथा।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धश्च कल्किरित्यपि॥

तात्पर्य यह है कि भगवान् विष्णु को कार्यविशेषवश तत्तत् रूपों को धारण कर कष्ट उठाना पड़ा था, लेकिन राजा नल को विभिन्न कार्यों के सम्पादन के लिए किसी भी प्रकार का क्लेश नहीं करना पड़ता था; इसीलिए वे विलक्षण पुरुषोत्तम अवतार थे॥

किं बहुना;

धन्यास्ते दिवसाः स येषु समभूद् भूपालचूड़ामणि-
र्लोकालोकगिरीन्द्रमुद्रितमहीविश्रान्तकीर्तिर्नलः।
लोकास्तेऽपि चिरन्तनाः सुकृतिनस्तद्वक्त्रपङ्केरुहे
यैर्विस्फारितनेत्रपत्रपुटकैर्लावण्यमास्वादितम्॥३४॥

अन्वयः—ते दिवसाः धन्याः, येषु भूपालचूडामणिः लोकालोकगिरीन्द्र-मुद्रितमहीविश्रान्तकीर्तिः नलः समभूत्। ते चिरन्तनाः लोकाः अपि सुकृतिनः (आसन्), यैः विस्फारितनेत्रपत्रपुटकैः तद् वक्त्रपङ्केरुहे लावण्यम् आस्वादितम्॥३४॥

कल्याणी—धन्या इति। ते दिवसाः, धन्याः=उत्तमाः, (आसन्)। येषु, सः=प्रसिद्धः, भूपालचूडामणिः=नृपशिरोमणिः, लोकालोकगिरीन्द्रमुद्रितमहीविश्रान्तकीर्तिः—लोकालोको नाम गिरीन्द्रः=पर्वतश्रेष्ठः, लोक्यते एकस्मिन् पार्श्वे इति लोकः, न लोक्यतेऽपरस्मिन् पार्श्वे इत्यलोकः, लोकश्चासावलोकश्चेति लोकालोकः। एकस्मिन् पार्श्वे सूर्यस्य सञ्चारादालोकमयः, अपरस्मिन् पार्श्वे सूर्यस्य गत्यभावादन्धकारमयः। तथा चोक्तम्—

'स्वादूदकस्य परतो दृश्यते लोकसंस्थितिः।
द्विगुणा काञ्चनी भूमिः सर्वजन्तुविवर्जिता॥
लोकालोकस्तथा शैलो योजनायुतविस्तृतः।
ततस्तमः समावृत्य तं शैलं सर्वतः स्थितम्'॥इति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेन मुद्रिता = समावृता, या मही=धरित्री, तत्र विश्रान्ता=गत्वा स्थिता, कीर्तिर्यस्य स तथोक्तः, समग्रभूमण्डलप्रथितयशा इत्यर्थः। नलः=नलो नाम राजा, समभूत् = संजातः। ते, चिरन्तनाः=प्राचीनाः, लोकाः = जनाः, अपि, सुकृतिनः= पुण्यवन्तः, (आसन्)। यैः, विस्फारितनेत्रपत्रपुटकैः— विस्फारितानि=विस्तारितानि, नेत्राण्येव पत्रपुटकानि=पत्रनिर्मितपात्राणि तैः, तद्वक्त्रपङ्केरुहे–तस्य = नलस्य, वक्त्रम्=आननमेव पङ्केरुहं=कमलं तस्मिन्, लावण्यं=सौन्दर्यम्, आस्वादितं=पीतम्। अत्र नलजन्मदिवसानां नलवक्त्रलावण्यस्य च लोकोत्तरवर्णनयोदात्तालङ्कारः। 'भूपालचूडामणि, रित्यत्रोपमा। 'वक्त्रपङ्केरुहे' इत्यत्र 'नेत्रपत्रपुटकैरित्यत्र' च रूपकम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलक्रीडितम् ॥३४॥

ज्योत्स्ना— अधिक कहने से क्या लाभ; वे दिन धन्य (उत्तम) थे, जिनमें राजाओं में चूडामणिस्वरूप, लोक और आलोक नामक पर्वतों से घिरी हुई समस्त पृथ्वी पर प्रख्यात कीर्ति वाले राजा नल उत्पन्न हुए। वे प्राचीन (वृद्ध) लोग भी पुण्यस्वरूप थे, जिन्होंने प्रसरित नेत्ररूपी पत्रपुटकों (दोनों) से उस राजा नल के मुखकमल के सौन्दर्य का पान किया ॥३४॥

अपि च;

ये कुन्दद्युतयः समस्तभुवनैः कर्णावतंसीकृता
यैः सर्वत्र शलाकयेव लिखितैर्दिग्भित्तयश्चित्रिताः।
यैर्वक्तुं हृदि कल्पितैरपि वयं हर्षेण रोमाञ्चिता-
स्तेषां पार्थिवपुङ्गवः स महतामेको गुणानां निधिः ॥३५॥

अन्वयः—कुन्दद्युतयः ये (गुणाः) समस्तभुवनैः कर्णावतंसीकृता, यैः, सर्वत्र शलाकया लिखितैः दिग्भित्तयः चित्रिताः, यैः वक्तुं हृदि कल्पितैरपि वयं हर्षेण रोमाञ्चिताः, तेषां महतां गुणानां सः पार्थिवपुङ्गवः एकः निधिः (आसीत्) ॥३५॥

कल्याणी—ये कुन्दद्युतय इति। कुन्दस्य=माध्यकुसुमस्य, द्युतिरिव द्युतिर्येषां ते तथोक्ताः, कुन्दकुसुमवच्छुभ्रकान्तय इत्यर्थः। ये=गुणाः, समस्तभुवनैः=समग्रलोकैः, कर्णावतंसीकृताः = स्व-स्वकर्णयोर्भूषणत्वेन धारिताः। यैः=गुणैः, सर्वत्र=सर्वेषु स्थानेषु, शलाकयेव=तूलिकयेव, लिखितैः = चित्रभावं नीतैः, दिग्भित्तयः=दिश एव भित्तय.=आधाराः, चित्रिताः = शोभिताः, सर्वा दिशोऽभिव्याप्य ये गुणाः संस्थिता इति भावः। यैः वक्तुं=वर्णयितुं; हृदि=चित्ते, कल्पितैरपि=चिन्तितैरपि, वयं, हर्षेण= आनन्देन, रोमाञ्चिताः=पुलकिताः स्म, तर्हि किमुत तैरुच्यमानैरिति भावः इत्यर्थापत्तिर्नामालङ्कारः। तेषां, महतां=प्रशस्यानां, गुणानां=दयादाक्षिण्यादीनां,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स पार्थिवपुंगवः=नृपश्रेष्ठः नलः, एकः=अद्वितीयः, निधिः=भाण्डारम्, आसीदिति शेषः। 'कुन्दद्युतयः' इत्यत्रोपमा। 'शलाकयेव' इत्यत्रोत्प्रेक्षा। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३५॥

ज्योत्स्ना—और भी; कुन्दपुष्प की कान्ति के समान कान्तियुक्त जो गुण समग्र लोगों द्वारा अपने-अपने कानों के लिए आभूषणस्वरूप धारण किये गये थे, जिन गुणों के द्वारा समस्त स्थानों पर तूलिका से लिखित (चित्रित) के समान दिशारूपी दीवालें सुशोभित थीं अर्थात् जो गुण समस्त दिशाओं में फैले हुए थे, जिनका वर्णन करने के लिए मन में विचार करने मात्र से भी हम सभी लोग आनन्द से पुलकित हो जाते हैं; इस प्रकार के महान् गुणों के भाण्डारस्वरूप अद्वितीय वह राजा नल थे ॥३५॥

यस्य च युधिष्ठिरस्येव न क्वचिदपार्थो वचनक्रमः, मरुमण्डलमिवापापं मानसम्, महानसमिव सूपकारसारं कर्म; कार्मुकमिव सत्कोटिगुणं दानम्, दानवकुलमिव दृष्टवृषपर्वोत्सवं राज्यम्, राजीवमिव भ्रमरहितं सर्वदा हृदयम्। यश्च परमहेलाभिरतोऽप्यपारदारिकः। शान्तनुतनयोऽपि न कुरूपयुक्तः ॥

कल्याणी—यस्य चेति। यस्य च=नलस्य, वचनक्रमः=वचनपरिपाटी, युधिष्ठिरस्येव, अपार्थः=अपगतः अर्थः सारो यस्मात्तादृशः, निरर्थक इत्यर्थः। न (आसीत्)। पक्षे—अपार्थः=पार्थोक्तिभिन्नः, युधिष्ठिरस्य पृथाया अपत्यत्वादिति भावः। मानसं=मनः, मरुमण्डलमिव=मरुस्थलमिव, अपापं=पापरहितम् (आसीत्)। पक्षे—अपगता आपो जलानि यस्मात्तादृशम्। कर्म=कृत्यं, महानसमिव=पाकालय इव—सूपकारसारम्—सुष्ठु उपकारः (परहितसाधनमेव) सारः=(मुख्योंऽशः) यस्मिन् तादृशम् (आसीत्)। पक्षे—सूपकारः (पाचकः) एव सारः (मुख्यतत्त्वं), यस्मिन् तादृशम्। दानम्, कार्मुकमिव=धनुरिव, सत्कोटिगुणं—नृपान्तरापेक्षया शोभनं कोटिगुणं च (आसीत्)। पक्षे—सती=सुदृढा, कोटिः=अटनिः, सन् शोभनः गुणः=मौर्वी च यस्मिंस्तादृशम्। राज्यं, दानवकुलमिव दृष्टवृषपर्वोत्सवम्—दृष्टः (अनुष्ठितः) वृषः (धर्मः) पर्वम् (पौर्णमास्यादिरूपम्) उत्सवः (पुत्रजन्मविवाहादिश्च) यत्र तादृशम् (आसीत्)। पक्षे—दृष्टो वृषपर्वणः=तदाख्यदानवस्य उत्सवः यत्र तादृशम्। हृदयं=मानसं, सर्वदा, राजीवमिव=कमलमिव, भ्रमरहितम्—भ्रमेण=संशयेन, रहितम् (आसीत्)। पक्षे—भ्रमरेभ्यो हितं=हितकरम्। अत्र सर्वत्र—श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। यश्च=नलः, परेषाम्=अन्येषां; महेलासु=नारीषु, अभिरतः=आसक्तोऽपि, अपारदारिकः=न हि परदारेष्वासक्त इति विरोधः; परमहेलाभिरतः—परमा=उत्कृष्टा, या हेला=शृङ्गारचेष्टा, तत्राभिरतः=संलग्नः यद्वा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परः=उत्कृष्टः, महः = उत्सवः, यस्यां तादृशी या इला=पृथिवी, तस्याम् अभिरतः= अनुरक्त इति परिहारः। शान्तनु-तनयोऽपि -- शान्तनोः तनयः=पुत्रः, भीष्मः सन्नपि, न कुरु-उपयुक्तः --- कुरूणां=क्षत्रियाणामुपयोगीति विरोधः। शान्त-नुत-नयः—शान्तः= शान्तियुक्तः, नुतः=स्तुतः, नयः=नीतिर्यस्य स तादृशः न, कुरूप-युक्तः=कुत्सित-रूपेण समन्वितः इति परिहारः। श्लेषमूलकविरोधाभासोऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—जिस राजा नल का कोई भी वचनक्रम युधिष्ठिर के समान ही अपार्थ (निरर्थक) नहीं था अर्थात् जिस प्रकार पृथापुत्र राजा युधिष्ठिर की कोई बात निरर्थक नहीं होती थी उसी प्रकार राजा नल भी कोई बात निरर्थक नहीं बोलते थे। वे राजा नल मरुमण्डल के समान अपाप मन वाले थे अर्थात् जिस प्रकार मरुभूमि अपाप (जलरहित) होती है उसी प्रकार राजा नल भी अपाप (पापरहित) मन वाले थे। रसोई घर के समान वे भी सूपकाररूप मुख्य कर्म वाले थे अर्थात् जिस प्रकार रसोई घर में सूपकार (पकाने वाले) का कार्य ही सार (मुख्य) होता है उसी प्रकार राजा नल में भी सूपकार (सम्यक् रूप से उपकार करना) रूप कर्म ही मुख्य अंश था। उनका दान धनुष के समान करोड़ों सुन्दर गुणों से युक्त था अर्थात् जिस प्रकार धनुष सुदृढ़ कोटि (यष्टि) तथा गुण (प्रत्यञ्चा) से युक्त होता है उसी प्रकार राजा नल का दान भी सत्कोटि गुण (करोड़ों गुणों से युक्त अथवा अन्य राजाओं की अपेक्षा करोड़ों गुना अधिक) था। दानवकुल के समान उनके राज्य ने भी वृषपर्वोत्सव को देखा था अर्थात् राक्षसकुल ने जिस प्रकार वृषप-र्वोत्सव (वृषपर्वा नामक राक्षस के उत्सव) को देखा था उसी प्रकार राजा नल का राज्य भी वृष (धर्म), पर्व (पूर्णिमा आदि पर्व) तथा उत्सव (पुत्रजन्म-विवाहादि के अवसर पर होनेवाले समारोहों) से दृष्ट (अनुष्ठित) था। उनका हृदय कमल के समान भ्रमरहित था अर्थात् जिस प्रकार कमल हर समय भ्रमरहित (भौंरों से घिरा) रहता है, उसी प्रकार राजा नल का हृदय भी हर समय भ्रम + रहित (संशय से रहित) रहता था। जो दूसरों की स्त्रियों मे अनुरक्त होते हुए भी अपारदारिक अर्थात् परस्त्रियों में आसक्त नहीं थे अथवा जो राजा नल परम (उत्कृष्ट) हेला (शृंगार-चेष्टाओं) में संलग्न होते हुए भी (या उत्कृष्ट उत्सवों से सम्पन्न पृथिवी में अनुरक्त होते हुए भी) अपार दारिकाओं (कन्याओं) वाले थे। शान्तनु-तनय होते हुए भी जो कुरुवंशी क्षत्रियों के लिए उपयुक्त नहीं थे अथवा शान्त (शान्तियुक्त) तथा नुत (प्रशंसित) नय (नीति) से सम्पन्न होते हुए भी वे कुरूपयुक्त (निन्दित रूप वाले) नहीं थे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं बहुना;

सदाहंसाकुलं बिभ्रन्मानसं प्रचलज्जलम् ।
भूभृन्नाथोऽपि नो याति यस्य साम्यं हिमाचलः ॥३६॥

अन्वयः—सदाहंसाकुलं प्रचलत् जलं मानसं बिभ्रद् भूभृन्नाथः अपि हिमाचलः यस्य साम्यं नो याति ॥३६॥

कल्याणी—सदेति । सदा=सर्वदा, हंसाकुलं—हंसैः=तदाख्यपक्षिभिः, आकुलं=व्याप्तं, प्रचलत्=चञ्चलं, जलं=वारि, यस्य तादृशं मानसं=तदाख्यं सरः, बिभ्रद्=दधानः, भूभृन्नाथः—भूभृतां=पर्वतानां, नाथः=अधिराजः, सन्नपि हिमाचलः=तदाख्यो गिरिः, सदाहं—दाहेन=ईर्ष्याजन्यसन्तापेन सहितं, साकुलं=व्यग्रतासहितं, प्रचलत्=कम्पमानं, जडं (डलयोरभेदात्)=व्यामूढं, मानसं=हृदयं, बिभ्रद्=दधानः, इव यस्य, भूभृन्नाथस्य—भूभृतां=राज्ञां, नाथस्य=अधिराजस्य नलस्य, साम्यं=समानतां, नो याति=न प्राप्नोति । साकुलमित्यत्र 'आकुलशब्दो भावप्रधानः, यथा "तिष्ठन्ति च निराकुलाः" इत्यवधेयम् । सत्यपि द्वयोर्भूभृन्नाथत्वे हिमालयो नलस्य साम्यं न याति, तेन ससन्तापं व्यग्रं कम्पमानं मानसं धारयतीवेति भावः । अत्र नलस्य हिमाचलादाधिक्यवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारः । सदाहंसाकुलं प्रचलज्जडं मानसं बिभ्रदिवेति श्लेषानुप्राणिता प्रतीयमानोत्प्रेक्षा च । तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३६॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; (वे ऐसे राजा थे कि) निरन्तर हंस पक्षियों से परिव्याप्त, कम्पायमान जल से युक्त मानसरोवर को धारण करता हुआ पर्वतों का राजा हिमालय भी जिनकी समानता नहीं प्राप्त कर पाता ।

अथवा—दाह (ईर्ष्याजनित सन्ताप) के साथ-साथ अत्यन्त आकुल (व्याकुल) होने से कम्पायमान जड़ (व्यामूढ़) मन को धारण करने के कारण पर्वतराज हिमालय भी राजाओं के अधिपति महाराज नल की समानता नहीं कर पाता ।

विमर्श—आशय यह है कि भूभृन्नाथ हिमालय और राजा नल—दोनों ही हैं; किन्तु हिमालय सदाह और साकुल मानस (मानसरोवर) को धारण करने वाला है, जबकि राजा नल सदाह (ईर्ष्यायुक्त) और साकुल (व्याकुलता से परिपूर्ण) मानस (मन) को धारण करने वाले नहीं हैं, बल्कि वे तो सदा हंसों के सदृश उज्ज्वल गुण से समन्वित सचिवों से युक्त हैं और जल के सदृश चञ्चल मन वाले होते हुए भी राजाओं के अधिपति हैं । इसीलिए पर्वतराज हिमालय भी उनकी समानता नहीं प्राप्त कर पाता ॥३६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च;

नक्षत्रभूः क्षत्त्रकुलप्रसूतेर्युक्तो नभोगैः खलु भोगभाजः।
सुजातरूपोऽपि न याति यस्य समानतां काञ्चन काञ्चनाद्रिः ॥३७॥

अन्वयः—सुजातरूपः अपि नक्षत्रभूः नभोगैः युक्तः काञ्चनाद्रिः क्षत्रकुलप्रसूतेः भोगभाजः यस्य न खलु काञ्चन समानतां याति ॥३७॥

कल्याणी—नक्षत्रेति। सुजातरूपः—सुष्ठु, जातरूपं=सुवर्णं यत्र, नलपक्षे—सुष्ठु जातं रूपं=सौन्दर्यं यत्र तादृशः, द्वयोरपि सुजातरूपत्वम्। सत्यप्येवं नक्षत्रभूः—नक्षत्राणां=तारकाणां, भूः=स्थानम्, नभोगैः—नभसि गच्छन्तीति नभोगाः=देवाः, तैर्युक्तः, काञ्चनाद्रिः=सुमेरुगिरिः, क्षत्रकुलप्रसूतेः—क्षत्रकुले = क्षत्रियवंशे, प्रसूतिः=जन्म यस्य तादृशस्य, भोगभाजः = सुखैश्वर्यादिसम्पन्नस्य, यस्य=नलस्य, न खलु, काञ्चन=कामपि, समानतां, याति = प्राप्नोति, यतोऽयं सुमेरुर्न-क्षत्रभूः—क्षत्राद्=क्षत्रियाद् भवतीति क्षत्रभूर्नास्ति, न —भोगैर्युक्तः=नापि सुखैश्वर्यादिसम्पन्नः। व्यतिरेकालङ्कारः, स च श्लेषानुप्राणितः। इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोर्मिश्रणादुपजातिवृत्तम् ॥३७॥

ज्योत्स्ना—और भी—सुजातरूप (सुवर्णमय) होते हुए भी नक्षत्रों के स्थानस्वरूप तथा देवताओं से समन्वित सुमेरु पर्वत भी क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होकर सुख-ऐश्वर्य आदि से सम्पन्न जिस राजा नल की किसी भी प्रकार से समानता नहीं कर पाता; क्योंकि वह सुमेरु पर्वत न तो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुआ है और न ही सुख-ऐश्वर्य आदि से सम्पन्न है ॥३७॥

तस्य च महामहीपतेरस्ति स्म प्रशस्तिस्तम्भः सकलश्रुतिशास्त्रशासनाक्षरमालिकानाम्, न्यग्रोधपादपः पुण्यकर्मप्ररोहाणाम्, आकरः साधुव्यवहाररत्नानाम्। इन्दुः पार्थिवनीतिज्योत्स्नायाः, कन्दः सकलकलाङ्कुरकलापस्य, सागरः समस्तपुरुषगुणमणीनाम्, आलानस्तम्भश्चपलराज्यलक्ष्मीकरेणुकायाः, सकलभुवनव्यापारपारावारनौकर्णधारः, सुधाम्भोनिधिडिण्डीरपिण्डपाण्डुरयशःकुशेशयखण्डमण्डितसकलसंसारसराः, सरागीकृतसमस्तपार्थिवानुजीवी, जीवितसमः, प्राणसमः, हृदयसमः, शरीरमात्रभिन्नो द्वितीय इवात्मा, कुलक्रमागतः, संक्रान्तिदर्पणः सुखदुःखयोः, स्वभावनुरक्तः, शुचिः, सत्यपूतवाक्, कृतज्ञः, ब्राह्मणः सालङ्कायनस्य सूनुः श्रुतशीलो नाम महामन्त्री ॥

कल्याणी—तस्य चेति। तस्य च, महामहीपतेः=महाराजस्य नलस्य, सकलश्रुतिशासनाक्षरमालिकानाम्—सकलानां, श्रुतीनां=वेदानां, शास्त्राणां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्मृत्यादीनां, शासनानां=नीतीनां, च या अक्षरमालिका=वर्णपङ्क्तयः, तासां प्रशस्तिस्तम्भः=कीर्तिस्तम्भः, आश्रय इति यावत्। पुण्यकर्मप्ररोहाणां—पुण्यकर्माण्येव प्ररोहाः=मूलानि, तेषां न्यग्रोधपादपः=वटवृक्षः, पुण्यकर्मानुष्ठातेति भावः। साधुव्यवहाररत्नानां—साधुव्यवहाराः=सदाचाराः एव रत्नानि, तेषाम् आकरः=खनिः, पार्थिवनीतिज्योत्स्नायाः—पार्थिवनीतिः=राजनीतिः, सैव ज्योत्स्ना=चन्द्रिका, तस्याः इन्दुः=चन्द्रः, सकलकलाङ्कुरकलापस्य—सकलाः कला एवाङ्कुरास्तेषां कलापस्य=समूहस्य, कन्दः=ग्रन्थिलं मूलम्, समस्तपुरुषगुणमणीनां—समस्ता ये पुरुषाणां गुणास्त एव मणयस्तेषां सागरः, चपला या राज्यलक्ष्मीः, सैव करेणुका=हस्तिनी, तस्या आलानस्तम्भः=बन्धनस्थूणा, सकलः=समस्तः, भुवनव्यापारः=लोककार्यमेव, पारावारः=सागरस्तस्य नौकर्णधारः=पोतवाहः, सुधाम्भोनिधेः=अमृतसिन्धोः, यानि डिण्डीरपिण्डानि=फेनपटलानि, तानीव पाण्डुराणि=धवलानि, यानि यशांसि=कीर्त्तयः, तान्येव कुशेशयखण्डाः=कमलसमूहाः, तैर्मण्डितम्=अलङ्कृतं, सकलसंसार एव सरो येन तादृशः, [अत्र सर्वत्र रूपकालङ्कारः]। सरागीकृताः=अनुरक्तीकृताः, समस्ताः=सकलाः, पार्थिवानुजीविनः=नृपाश्रितजनाः, येन स तादृशः, जीवितसमः=जीवनतुल्यः, प्राणसमः=प्राणतुल्यः, हृदयसमः=हृदयतुल्यः, शरीरमात्रभिन्नः—शरीरमात्रेण=केवलेन शरीरेणैव भिन्नः=पृथक्, द्वितीयः=अपरः, आत्मेव, कुलक्रमागतः=कुलक्रमात् आगतः=प्राप्तः, सुखदुःखयोः, संक्रान्तिदर्पणः=संक्रमणादर्शः, स्वभावनुरक्तः—स्वभावेन=प्रकृत्या, अनुरक्तः=सस्नेहः, शुचिः=पवित्रः, सत्यपूतवाक्—सत्येन=सत्यभाषणेन, पूता=पवित्रा, वाक्=वाणी, यस्य स तथोक्तः। कृतज्ञः, सालंकायनस्य, सूनुः=पुत्रः, श्रुतशीलो नाम, ब्राह्मणः, महामन्त्री=महामात्यः, अस्ति स्म=आसीत्। अत्रोल्लेखालङ्कारोऽपि एकस्यैव श्रुतशीलस्यानेकधोल्लेखात्तदेवं रूपकोल्लेखयोः संकरः॥

ज्योत्स्ना—और उन महाराज नल का समस्त वेदों, स्मृति आदि शास्त्रों एवं नीतिविद्याओं के कीर्तिस्तम्भस्वरूप (आश्रयस्वरूप), समस्त पुण्यकर्मों के प्ररोह हेतु वटवृक्षस्वरूप अर्थात् पुण्य-कर्मों के अनुष्ठान में सदा रत रहने वाला, सदाचाररूपी रत्नों के लिए समुद्रस्वरूप, राजनीतिरूपी ज्योत्स्ना के चन्द्रस्वरूप, समस्त कलाओं के अंकुरण के लिए मूलस्वरूप, समस्त पुरुषों के गुणरूपी मणियों के लिए सागरस्वरूप, चलायमान राजलक्ष्मीरूपी हथिनी के लिए बन्धनस्तम्भ के समान, समस्त भूमण्डल के व्यापाररूपी समुद्र के लिए नौ-कर्णधार—पोतवाहक के समान, अमृतरूपी समुद्र के फेनपिण्ड के समान अत्यन्त धवल कीर्तिरूपी कमलसमूहों से अलंकृत सम्पूर्ण संसार-सरोवर के समान, समस्त राज्याश्रित लोगों को अनुरक्त करने वाला, जीवन के समान, प्राण के समान, हृदय के समान, शरीर-मात्र से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलग दूसरी आत्मा के समान, वंशानुक्रम से प्राप्त, सुख और दुःख दोनों ही स्थितियों में संक्रान्तिदर्पण के समान, स्वभावतः स्नेह रखने वाला, पवित्र आचरण वाला, सत्य एवं पवित्र वचन बोलने वाला तथा कृतज्ञ श्रुतशील नाम का ब्राह्मण सालंकायन का पुत्र महामन्त्री था ॥

मित्रं च मन्त्री च सुहृत्प्रियश्च विद्यावयःशीलगुणैः समानः ।
बभूव भूपस्य स तस्य विप्रो विश्वम्भराभारसहः सहायः ॥३८॥

अन्वयः—स विप्रः तस्य भूपस्य मित्रं च मन्त्री च सुहृत्प्रियश्च विद्यावयः-शीलगुणैः समानः विश्वम्भराभारसहः (सः) सहायः बभूव ॥३८॥

कल्याणी—मित्रमिति । स विप्रः=श्रुतशीलो नाम ब्राह्मणः, तस्य भूपस्य=नलस्य, मित्रं च, मन्त्री च, सुहृत्प्रियश्च-शोभनं हृदयं यस्य स सुहृत्, प्रियः=स्निग्धश्च, विद्यावयःशीलगुणैः—विद्यया, वयसा, शीलेन=स्वभावेन, गुणैः=दयादाक्षिण्यादिभिश्च, समानः=तुल्यः, विश्वम्भरायाः=पृथिव्याः, भारं, सहते=वहतीत्यर्थः । स तादृशः सहायः=सहायकः, बभूव-जातः । उल्लेखालंकारः । इन्द्र-वज्रोपेन्द्रवज्रयोर्मिश्रणादुपजातिर्वृत्तम् ॥३८॥

ज्योत्स्ना—वह ब्राह्मण उन राजा नल का मित्र भी था और मन्त्री भी था, सुहृत् भी था और प्रिय भी था । विद्या, अवस्था, स्वभाव और गुणों में भी वह ब्राह्मण राजा नल के समान था । साथ ही पृथ्वी के भार को धारण करने में राजा नल का वह (श्रुतशील ब्राह्मण) सहायक भी था ॥३८॥

अपि च;

ब्रह्मण्योऽपि ब्रह्मवित्तापहारी स्त्रीयुक्तोऽपि प्रायशो विप्रयुक्तः ।
सद्वेषोऽपि द्वेषनिर्मुक्तचेताः को वा तादृग्दृश्यते श्रूयते वा ॥३९॥

अन्वयः—ब्रह्मण्यः अपि ब्रह्मवित्तापहारी, स्त्रीयुक्तः अपि प्रायशः विप्रयुक्तः, सद्वेषः अपि द्वेषनिर्मुक्तचेताः, तादृक् को वा दृश्यते श्रूयते वा ॥३७॥

कल्याणी—ब्रह्मण्य इति । ब्रह्मण्यः-ब्रह्मभ्यः=ब्राह्मणेभ्यः हितोऽपि, ब्रह्म-वित्त-अपहारी—ब्रह्मणां=ब्राह्मणानां, वित्तं=धनम्, अपहरति=आच्छिनत्ति इत्येवं-शील इति विरोधः, ब्रह्मवित्-तापहरी—ब्रह्म वेत्तीति ब्रह्मवित्, अपि च तापं=परेषां खेदं, हरति=अपनयतीत्येवंशील इति परिहारः । स्त्रीयुक्तः-स्त्रिया=भार्यया, युक्तोऽपि प्रायशः=बहुधा, विप्रयुक्तः=वियुक्त इति विरोधः; विप्र-युक्तः—विप्रैः=ब्राह्मणैः, युक्तः=परिवृत इति परिहारः । सद्वेषः=द्वेषेण सहितोऽपि, द्वेषनिर्मुक्त-चेताः=द्वेषरहितमानसः इति विरोधः, सद्-वेषः-सन्=शोभनः, वेषः यस्य स तादृश

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इति परिहारः। तादृक्=तथाविधः, को वा=जनः, दृश्यते श्रूयते वा। श्रुतशील इवान्यो जनो न दृश्यते नापि श्रूयते; सोऽसाधारण आसीदिति भावः। श्लेषानुप्राणितो विरोधाभासोऽलङ्कारः। शालिनीवृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः।' इति ॥३९॥

ज्योत्स्ना—ब्रह्मण्य (ब्राह्मणों का हितचिन्तक) होते हुए भी वह ब्राह्मण ब्रह्मविद् (ब्रह्म को जानने वालों अर्थात् ब्राह्मणों) के तापों (कष्टों) का अपहरण (दूर) करने वाला था। भार्या से समन्वित होते हुए भी वह प्रायः विप्रों (ब्राह्मणों) से युक्त (घिरा) रहता था। सद्वेष (उत्तम वेष) से युक्त होते हुए भी वह द्वेष से रहित मन वाला था। उसके समान कोई अन्य व्यक्ति न तो दिखाई देता था और न ही सुनाई पड़ता था। अर्थात् वह श्रुतशील नामक ब्राह्मण महामन्त्री सर्वथा असाधारण पुरुष था ॥३९॥

अथ स पार्थिवस्तस्मिन्नमात्ये परिजनपरिवृढे प्रौढप्रेमणि निगूढमन्त्रे मन्त्रिणि तृणीकृतस्त्रैणविषयरसे सौराज्यरागजनने जननीयमाने जनस्य, सर्वोपधाशुद्धबुद्धौ निधाय राज्यप्राज्यचिन्ताभारमभिनवयौवनारम्भरमणीये रम्यरमणीजननयनहृदयप्रिये प्रियङ्गुभासि जितमदनमहस्यपहसितसुरासुर-सौभाग्ययशसि विस्मापितसमस्तजनमनसि लसल्लावण्यपुञ्जपराजितसकल-समुद्राम्भसि कान्तिकटाक्षितचन्द्रमसि वयसि वर्तमानो मानितमानिनीजन-यौवनसर्वस्वः स्वयमनवरतं सकलसंसारसुखसन्दोहमन्वभूत् ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, स, पार्थिवः=राजा नलः, परिजन-परिवृढे—परिजनेषु=नृपानुयायिषु, परिवृढे=मुख्ये, प्रौढप्रेमणि—प्रौढं=प्रवृद्धं, प्रेम=अनुरागः यस्य तस्मिन्, निगूढमन्त्रे—निगूढः=नितरां गुप्तः, मन्त्रः=परामर्शः, यत्र तस्मिन्, तृणीकृत०—तृणीकृतः=तृणवत् परित्यक्तः, स्त्रैणविषयस्य=स्त्रीजन-सम्बन्धिभोगविलासस्य, रसः=आस्वादः, येन तस्मिन्, सौराज्यरागजनने—सौराज्ये=सत्प्रशासने, रागं=जनानां स्नेहं, जनयतीति तादृशे, जनस्य=लोकस्य, जननीयमाने—जननी=माता इवाचरन्निति जननीयमानस्तस्मिन्, सर्वोपधाशुद्धबुद्धौ—सर्वाभ्यः उपधाभ्यः=छलच्छद्मादिभ्यः, शुद्धा=विमला, बुद्धिः=मतिः, यस्य तस्मिन्, तस्मिन्=पूर्वोक्तगुणविशेषणविशिष्टे श्रुतशीलनाम्नि, अमात्ये=मन्त्रिणि, राज्य-प्राज्यचिन्ताभारम्—राज्यस्य=शासनस्य, प्राज्यं=गुरुतरं, चिन्ताभारं=चिन्तनभरं, निधाय=निक्षिप्य, अभिनवयौवनारम्भरमणीये—अभिनवेन=प्रत्यग्रेण, यौवनारम्भेण=तारुण्यागमनेन, रमणीये=आनन्दप्रदे, रम्यरमणीजननयनहृदयप्रिये—रम्यस्य=मनोहर-स्य, रमणीजनस्य=ललनावृन्दस्य, नयनयोः=नेत्रयोः, हृदयस्य=चित्तस्य, च प्रिये=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रीतिकरे, प्रियंगुभासि-प्रियंगुर्नाम लता, सा स्त्रीणां स्पर्शाद्विकसतीति कविसमयः, प्रियंगोरिव भाः=कान्तिः यस्य तस्मिन्, जितमदनमहसि—जितं=पराभूतं, मदनस्य=मन्मथस्य, महः=तेजः, येन तादृशे, अपहसितं=तिरस्कृतं, सुरासुराणां=देवदानवानां, सौभाग्ययशः=सौन्दर्यकीर्तिर्येन तादृशे, विस्मापितानि=विस्मितीकृतानि, समस्तजनानां=सकलमानवानां, मनांसि=चेतांसि, येन तस्मिंस्तथोक्ते, लसल्लावण्यपुञ्जपराजितसकलसमुद्राम्भसि—लसन्=देदीप्यमानः, यो लावण्यपुञ्जः=सौन्दर्यसमूहः (समुद्राम्भःपक्षे—क्षारत्वसमूहः), तेन पराजितानि=तिरस्कृतानि, सकलसमुद्राणाम् अम्भांसि=जलानि येन तस्मिन्, कान्त्या, कटाक्षितः=तिरस्कृतः चन्द्रमा येन तादृशे, वयसि=तारुण्ये, वर्तमानः, मानितं=स्वीकृतं, मानिनीजनस्य—मानवतीनां=रमणीनां वृन्दस्य, यौवनमेव सर्वस्वं येन तादृशः, स्वयम्=आत्मना, अनवरतं=सततं, सकलस्य संसारसुखस्य=सांसारिकानन्दस्य, सन्दोहं=समष्टिम्, अन्वभूत्=अभुङ्क्त ॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् उन राजा नल ने अपने परिजनों (अनुयायियों) में परिवृढ़ (मुख्य), प्रगाढ़ प्रेम करने वाले, (राजकीय) परामर्शों को सर्वथा गोपनीय रखने वाले, स्त्रीसम्बन्धी भोग-विलास-रस का तृण के समान परित्याग कर देने वाले, सत्प्रशासन के प्रति लोगों में स्नेह उत्पन्न करने वाले, लोगों के प्रति माता के समान आचरण करने वाले, छल-छद्म आदि समस्त आपदाओं से रहित शुद्ध बुद्धि वाले अथवा समस्त प्रकार की आपत्तियों में शुद्ध बुद्धि रखने वाले उस श्रुतशील नाम के मन्त्री पर राज्यविषयक गुरुतर चिन्तनभार को डालकर तत्काल यौवन प्राप्त करने के कारण रमणीय, मनोहर कामिनियों के नेत्रों और हृदयों के लिए प्रिय, प्रियंगु लता के समान कान्ति से युक्त, कामदेव के तेज को भी विजित करने वाली, देवताओं तथा दानवों की सौन्दर्य-कीर्ति को तिरस्कृत करने वाली, समस्त लोगों के चित्त को विस्मित करने वाली; देदीप्यमान सौन्दर्य-पुञ्ज के द्वारा समस्त समुद्र के जल को भी पराजित करने वाली; अपनी कान्ति से चन्द्रमा को भी तिरस्कृत करनेवाली अवस्था (युवावस्था) में स्थित कामिनियों के यौवन को ही सर्वस्व मानते हुए स्वयं निरन्तर समस्त सांसारिक सुखों का अनुभव करने लगे—उपभोग करने लगे ॥

तथाहि—

कदाचिदनुत्पन्नविषमरणो गरुड इवाहितापकारी हरिवाहनविलासमकरोत् ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्=कस्मिंश्चित् समये, गरुडः=वैनतेय इव, अनुत्पन्नविषमरणः—अनुत्पन्नः=असञ्जातः, विषमः=घोरः, रणः=विग्रहः, यस्य स तथोक्तः; पक्षे—अनुत्पन्नं विषान्मरणं=मरणभयं यस्य स तथोक्तः। अहिताप-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारी—अहितानां=शत्रूणाम्, अपकारी=अपकारकारकः, पक्षे—अहीनां=सर्पाणां, तापकारी=सन्तापकः। हरिवाहनविलासम्—हरीणाम्=अश्वानां, वाहनं=वाह्यात्यां प्रधावनं, तेन विलासम्=आनन्दम्, अकरोत्, पक्षे—हरेः=विष्णोः वाहनविलासं=यानलीलाम्। श्लेषमूलोपमा।

ज्योत्स्ना—(राजा नल द्वारा सांसारिक सुखों के विभिन्न प्रकार से किये जानेवाले अनुभवों को ग्रन्थकार द्वारा क्रमशः प्रतिपादित किया जा रहा है)—

विष (जहर) के कारण कभी भी मृत्यु की उत्पति न होने देने वाले गरुड़ के समान राजा नल भी अनुत्पन्न + विषम + रण (किसी भी समय भयंकर युद्ध की स्थिति उपस्थित होने देने वाले नहीं थे। जिस प्रकार गरुड़ सर्पों के लिए सन्तापदायी होता है उसी प्रकार राजा नल भी अहि + तापकारी (शत्रुओं के लिए अपकार करने वाले) थे। जिस प्रकार गरुड़ ने भगवान् विष्णु की सवारी बनने की लीला की थी उसी प्रकार राजा नल ने भी हरि + वाहन + विलास (घोड़ों के ऊपर सवारी की लीला अथवा घोड़ों के द्वारा खींचने वाले रथ पर सवारी का आनन्द) प्राप्त किया था॥

कदाचिच्चन्द्रमौलिरिव मदनबाणासनातिमुक्तशरसञ्छादितायां पर्वतभुवि विजहार॥

कल्याणी कदाचिदिति। कदाचित्, चन्द्रमौलिः=शिवः, इव, मदनबाणासनातिमुक्तशरसञ्छादितायाम्—मदनः=वकुलतरुः, बाणः=वृक्षकविशेषः, लोके 'नीलझिण्टी' इति नाम्ना प्रसिद्धः; असनः=वृक्षविशेषः, पीतसाल इति नाम्ना प्रसिद्धः, अतिमुक्तः=माधवी लता, शरः=लोके 'सरकण्डा' इति नाम्ना प्रसिद्धः क्षुपविशेषः, तैः सञ्छादितायां=व्याप्तायां, पर्वतभुवि=गिरिभूमौ, विजहार=बभ्राम। चन्द्रमौलिपक्षे—मदनः=मन्मथः, तस्य बाणासनं=धनुः, तेना अतिमुक्ताः=प्रक्षिप्ताः, ये शराः=बाणाः, तैः संछादितायां=विधुरायां, पर्वतभुवि—पर्वताद्=हिमालयाद्, भवति=जायत इति पर्वतभूः=पार्वती, तस्यां विजहार=रेमे। श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार चन्द्रमौलि (भगवान् शंकर) ने कभी मदन (कामदेव) के धनुष से प्रक्षिप्त किये गये बाणों से सञ्छादित (ढ़की हुई) पर्वतभूमि पर विचरण किया था उसी प्रकार राजा नल ने भी मदन (वकुल), बाण (नीलझिण्टी) असन (पीतसाल), अतिमुक्त (माधवीलता), शर (शरकण्डा) आदि वृक्षविशेषों से आच्छादित पर्वतभूमि पर भ्रमण किया॥

कदाचिदच्युत इव शिशिरकमलाकरावगाहनोत्पन्नपुलककोरकितततनुरनन्तभोगभाक्सुखमन्वतिष्ठत्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचिद्, अच्युत इव=विष्णुरिव, शिशिरः=शीतलः, यः कमलाकरः=कमलाकुलतडागः, तस्मिन् अवगाहनेन=स्नानेन, उत्पन्नाः=संजाताः, पुलकाः=रोमाञ्चाः, तैः कोरकिता=कुड्मलिता, तनुः=शरीरं, यस्य स तथोक्तः। अनन्तभोगभाक्=अनन्तभोगान् भुञ्जानः, सुखम्, अन्वतिष्ठत्=आनन्दमन्वभूत्। अच्युतपक्षे—शिशिरौ=शीतलौ, यौ कमलायाः=लक्ष्म्याः, करौ=भुजौ, ताभ्यां यद् अवगाहनम्=आलिङ्गनं, तेनोत्पन्नपुलककोरकिततनुः, अनन्तस्य=शेषनागस्य, भोगं=शरीरं, भजते=सेवत इति तथोक्तः, शेषशय्यामधिशयान इत्यर्थः। सुखमन्वतिष्ठत्। श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार भगवान् विष्णु लक्ष्मी के ठण्ढे हाथों के आलिङ्गन से रोमाञ्चित (पुलकित) होकर शेषनाग के शरीर का सुखपूर्वक सेवन करते हैं (सुखपूर्वक शेषशय्या पर स्थित रहते हैं) उसी प्रकार कभी-कभी राजा नल भी शिशिर ऋतु में कमलों से व्याप्त तालाब में स्नान करने के कारण शरीर में रोमाञ्च का अनुभव करता हुआ अनन्त भोग-विलासों से युक्त आनन्द का अनुभव किया करता था॥

कदाचन नलिनयोनिरिव राजसभावस्थितः प्रजाव्यापारमचिन्तयत्॥

कल्याणी—कदाचनेति। कदाचन, नलिनयोनिरिव=ब्रह्मेव, राजसभावस्थितः—राजसभायां=भूपरिषदि, अवस्थितः; पक्षे—राजसभावे=रजोगुणमयभावे, स्थितः, प्रजाव्यापारं=लोकहितकार्यं, पक्षे—प्रजासृष्टिकार्यम्, अचिन्तयत्। श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार नलिनयोनि—ब्रह्मा कभी-कभी राजस भाव में स्थित होकर प्रजा-सृष्टि के व्यापार की चिन्ता किया करते हैं उसी प्रकार वह राजा नल भी कभी-कभी राजसभा में बैठ कर प्रजा-व्यापार—(प्रजा के कार्य—रक्षण, पालन-पोषण आदि) पर विचार किया करता था॥

कदाचिन्मयूर इव कान्तोन्नमत्पयोधरमण्डलिविलासेन हर्षमभजत्॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्, मयूर इव, कान्तोन्नमत्पयोधरमण्डलिविलासेन कान्तायाः=रमण्याः, उन्नमन्तौ=उद्गच्छन्तौ, यौ पयोधरौ=स्तनौ, तयोः मण्डलिविलासेन=वर्तुलाकारस्वरूपसौन्दर्येण; पक्षे—उन्नमताम्=उद्गच्छतां, पयोधराणां=मेघानां, मण्डलिविलासेन=चक्राकारस्फुरणेन, हर्षम्=आनन्दम्, अभवत्=अवाप्नोत्॥ श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार (वर्षा ऋतु में) मयूर उमड़ते हुए अत्यन्त सुन्दर बादलों को देखकर मण्डलाकर नृत्य करते हुए आनन्द को प्राप्त करता है, उसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार राजा नल भी कभी-कभी रमणियों के उन्नत स्तनों के वर्तुलाकार (गोलाई लिये हुए) स्वरूप-सौन्दर्य को देखकर अथवा उनका आलिङ्गन कर आनन्द को प्राप्त किया करते थे ॥

कदाचिन्नक्षत्रराशिरिवाश्विन्या सेनया समन्वितो मृगानुसारी बहुशष्पवनमार्गं बभ्राम ॥

कल्याणी – कदाचिदिति । कदाचित्, नक्षत्रराशिरिव=तारासमूह इव, अश्विन्या—अश्वाः सन्त्यस्यामित्यश्विनी=अश्वयुक्ता, तादृश्या सेनया समन्वितः=युक्तः, मृगानुसारी—मृगान्=हरिणान्, अनुसरति=अनुधावतीत्येवंशीलः, बहुशष्पवनमार्गम्—बहूनि=प्रभूतानि, शष्पाणि = नूतनतृणानि, यत्र तादृशं वनमार्गम्=अरण्यपथं, बभ्राम=भ्रमति स्म । ('अकर्मकधातुभिर्योगे देशःकालोऽध्वा च कर्मसंज्ञक इति वक्तव्यम्' इति कर्मत्वे कर्मणि द्वितीया) । नक्षत्रराशिपक्षे—सेनया, इनः=सूर्यः तेन सहिता सेना, तया अश्विन्या=तन्नाम्ना नक्षत्रेण समन्वितः, मृगं=मृगशीर्षं नक्षत्रमनुसरतीति मृगानुसारी, बहुशः=प्रायशः, पवनमार्गं=गगनं, बभ्राम । (अत्रेदमवधेयम्—नक्षत्रराशिपक्षे 'बहुशः+पवनमार्गम्' इति विच्छेदे पकारात्प्राग् विसर्जनीय उपध्मानीयो वा इत्येवं रूपभेदेऽपि श्रुतिसाम्यान्न दोष इति कविसमयः ।) श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार नक्षत्रों का समूह सूर्यसहित अश्विनी नक्षत्र से समन्वित होकर मृगशिरा नक्षत्र का अनुसरण करता हुआ बहुधा आकाश में विचरण करता रहता है, उसी प्रकार राजा नल भी कभी-कभी घुड़सवार सेना से समन्वित होकर हरिणों के पीछे दौड़ते हुए प्रचुर घासों से युक्त वनमार्ग में विचरण किया करते थे ॥

कदाचिदाञ्जनेय इवाक्षविनोदमन्वतिष्ठत् ।

कल्याणी—कदाचिदिति । कदाचित्, आञ्जनेयः=हनूमान् इव, अक्षविनोदम्—अक्षैः=पाशकैः विनोदं=क्रीडां; पक्षे—अक्षस्य=तन्नाम्नः रावणपुत्रस्य, विनोदं=वधम्, अन्वतिष्ठत्=अकरोत् । श्लेषमूलोपमा ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार किसी समय आञ्जनेय (हनुमान्) ने अक्षय कुमार के साथ विनोद (वधरूप क्रीड़ा) किया था उसी प्रकार नल भी कभी-कभी अक्ष—पासे से (जुए के खेल में) विनोद—मनोरञ्जन किया करते थे ॥

कदाचिद्वानरेश्वर इव सुग्रीवो वैदेहीति ब्रुवाणस्यालघुकाकुस्थस्यार्थिनः प्रार्थना क्रियतां सफलेति वानरपुङ्गवानादिदेश ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—कदाचिदिति । कदाचित्, वानरेश्वरः=कपीशः सुग्रीव इव, सुग्रीवः—शोभना ग्रीवा यस्यासौ नलः, वै=नूनं, देहि=मह्यं धनमिति भावः । इति=एवं प्रकारेण, ब्रुवाणस्य=प्रार्थयमानस्य, अलघुकाकुस्थस्य—अलघ्वी=महती, या काकुः=याच्ञावशाद्भिन्नकण्ठध्वनिः, तत्र तिष्ठतीति तस्य तथोक्तस्य, करुणस्वरमिश्रित-वचनोच्चारकस्येत्यर्थः । अर्थिनः=याचकस्य, प्रार्थना=याच्ञा, सफला क्रियतामित्येवं प्रकारेण (वेति समुच्चये), नरपुङ्गवान्=पुरुषश्रेष्ठान्, आदिदेश=आदिष्टवान् । वानरेश्वरपक्षे—सुग्रीवः=तदाख्यो वानराधिपः, वैदेही=सीतेति, ब्रुवाणस्य=प्रलपतः, अलघोः=गुरोः काकुत्स्थस्य=ककुत्स्थवंश्यस्य रामस्य, अर्थिनः=सप्रयोजनस्य, प्रार्थना सफला क्रियताम्, इति=अमुना प्रकारेण, वानरपुङ्गवान्=वानरश्रेष्ठान्, आदिदेश । रामपक्षे काकुत्स्थशब्दे सकारात्प्राक् तकारसत्त्वेऽपि श्रुतिसाम्यान्न दोष इत्यवगन्तव्यम् । श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार वानरों के स्वामी सुग्रीव ने किसी समय "वैदेही" कहकर प्रलाप करते हुए "महान् ककुत्स्थ वंशोत्पन्न रामरूप याचक की प्रार्थना को सफल करो" इस प्रकार का आदेश वानरश्रेष्ठों को दिया था, उसी प्रकार सुन्दर ग्रीवा वाले राजा नल भी "वै+देही—निश्चित रूप से मुझे (धन) दो—इस प्रकार अत्यन्त विनम्रतापूर्वक भिन्न-भिन्न कण्ठध्वनि वाले याचकों की प्रार्थना को पूर्ण करो" इस प्रकार का आदेश अपने नरपुङ्गवों (वरिष्ठ अधिकारियों) को दे रखा था ।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड के माध्यम से महाकवि द्वारा राजा नल के दान, शीलता की ओर इंगित किया गया है । राजा नल इतने महान् दानी थे कि उन्होंने अपने कर्मचारियों को याचकों की याञ्चा पर बिना विचार किये उसे तत्काल पूर्ण करने का आदेश पूर्व से ही अपने अधिकारियों को दे रखा था ॥

कदाचिन्मकरकेतन इव सुमनसो मार्गणान् विधाय स्वगुणं कर्णपूरीचकार ।

कल्याणी—कदाचिदिति । कदाचित्; मकरकेतन इव=कामदेव इव, मार्गणान्=याचकान्, सुमनसो विधाय=अभीष्टार्थप्रदानेन प्रसन्नचित्तान् कृत्वा, स्वगुणं=त्यागाख्यं स्वकीयं गुणं, कर्णपूरीचकार=जनानां कर्णावतंसीचकार । मकर-केतनपक्षे—सुमनसः=पुष्पाणि, मार्गणान्=शरान्, विधाय=कृत्वा, स्वगुणं=स्वकीयां मौर्वीं, कर्णपूरीचकार=कर्णान्तमाकृष्टवान् । श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार मकरकेतन—कामदेव ने किसी समय पुष्पों का बाण बनाकर अपने धनुष की प्रत्यञ्चा को कर्णपर्यन्त खींच लिया था, उसी प्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजा नल ने भी याचकों को उनके अभीष्ट-प्रदान द्वारा प्रसन्नचित करके त्यागरूप अपने गुण को उनके कानों में भर दिया था ॥

कदाचिदम्भोनिधिरिवोच्चैः स्तननाभिरम्याः, कृतानिमेषनयनविभ्रमाः, सकन्दर्पाः, सिषेवे वेलाविलासिनीः ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्, अम्भोनिधिरिव=जलधिरिव, उच्चैः स्तननाभिरम्याः—उच्चैः स्तनाभ्यां नाभ्या च रम्याः=रमणीयाः, कृतानिमेषनयनविभ्रमाः—कृता अनिमेषाभ्यां=निर्निमेषाभ्यां नयनाभ्यां=नेत्राभ्यां, विभ्रमाः=विलासाः याभिस्ताः। सकन्दर्पाः=सकामाः, वेलाविलासिनी=वाराङ्गनाः, सिषेवे=बुभुजे। अम्भोनिधिपक्षे—उच्चैःस्तनन-अभिरम्याः—उच्चैः, स्तननेन=गर्जनेन अभिरम्याः=नितान्तरमणीयाः, कृतानिमेषनयनविभ्रमाः—कृतम्, अनिमेषाणां=मत्स्यानां नयनं=स्थानान्तरप्रापणं, यैस्तादृशाः, विभ्रमाः=विविधा आवर्ताः यासु तथोक्ताः, सकन्दर्पाः—कं=जलं, तस्य दर्पेण=औद्धत्येन सहिताः, वेला =तटभूमयः, एव विलासिन्यस्ताः सिषेवे। श्लेषानुप्राणितोपमा। अम्भोनिधिपक्षे वेला एव विलासिनीरिति रूपकम्। तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार समुद्र अत्यन्त उच्च स्वर से गर्जन करने के कारण नितान्त रमणीय, मछलियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने वाले विभिन्न आवर्तों से समन्वित जल के तरङ्गों से युक्त तटरूपी विलासिनी—नायिका का सेवन करता है, उसी प्रकार राजा नल भी कभी-कभी अत्यन्त उन्नत स्तन तथा सुन्दर नाभि के कारण रमणीय, निर्निमेष नयनों से विभ्रम को उत्पन्न करने वाली, काम से समन्वित वारांगनाओं का कभी-कभी उपभोग करते रहते थे ॥

कदाचिद्दशरथ इवायोध्यायां पुरि स्थितः सुमित्रोपेतो रममाणराम-भरतप्रेक्षणेन क्षणमाह्लादमन्वभूत्।

एवमस्य सकलजीवलोकसुखसन्तानमनुभवतो यान्ति दिनानि ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचिद् दशरथ इव, अयोध्यायां=योद्धुमशक्यायाम्, अपराजेयायामित्यर्थः। पुरि=नगर्यां, निषधायामित्यर्थः। स्थितः, सुमित्रोपेतः—सुमित्रैः, उपेतः=युक्तः, रममाणराम-भरतप्रेक्षणेन – रममाणः=विलसन्त्यः, रामाः=विलासिन्यः, यत्र तादृशस्य, भरतस्य=भरतनाट्यस्य, प्रेक्षणेन=दर्शनेन, क्षणं=कञ्चित्कालं यावत्, आह्लादम्=आनन्दम्, अन्वभूत्=प्रापत्। दशरथपक्षे—अयोध्यायां पुरि=तदभिधानायां नगर्यां, स्थितः, सुमित्रोपेतः=सुमित्रेति नाम भार्या, तया उपेतः=युक्तः, रममाणौ=विक्रीडन्तौ, यौ रामभरतौ=रामभरतनामानौ पुत्रौ, तयोः प्रेक्षणेन=अवलोकनेन, क्षणमाह्लादमन्वभूत्। श्लेषानुप्राणितोपमा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवम्=अनेन प्रकारेण, समस्तः यः जीवलोकस्य=संसारस्य, सुखसन्तानः=आनन्दप्रसारः, तम् अनुभवतः=भुञ्जानस्य, अस्य=नृपस्य, नलस्य; दिनानि=वासराः, यान्ति=व्यतियन्ति ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार सुमित्रा नामक पत्नी से समन्वित राजा दशरथ अयोध्या में स्थित होकर क्रीड़ा करते हुए राम और भरत को देखकर कुछ समय के लिए आनन्द का अनुभव किया करते थे उसी प्रकार राजा नल भी अपनी अपराजेय निषधा पुरी में स्थित हो, अपने सुन्दर मित्रों से युक्त होकर विलासपूर्ण रमणियों के भरतनाट्य को देखकर कुछ समय के लिए आनन्द का अनुभव किया करते थे।

इस प्रकार समस्त संसार की सुख-परम्परा का अनुभव करते हुए इस राजा नल के दिन व्यतीत हो रहे थे ॥

अथ कदाचिदुन्नमत्पयोधरान्तरपतद्धारावलीविराजिताः कमलदलकान्तनयनाः, सुरचापचक्रवक्रभ्रुवः, विद्युन्मणिमेखलालङ्कारधारिण्यः, शिञ्जानामुक्तकलहंसकाः, प्रौढ़करेणुसञ्चारहारिण्यः, कम्रकन्धराः, तिरस्कृतशशाङ्ककान्तिकलापोच्चमुखमण्डलाः, सकलजगज्जेगीयमानगुणमिममनुपमरूपलावण्यराशिराजितं राजानमवलोकयितुमिवावतरन्ति स्म वर्षाः ॥

कल्याणी—अथ=अनन्तरं कदाचित्=कस्मिन्नपि समये, उन्नमताम्=उद्गच्छतां, पयोधराणां=मेघानाम्, अन्तरात्=मध्यात् पतन्ती या धारावली=जलधाराश्रेणी, तया विराजिताः=सुशोभिताः, पक्षे—उन्नमतोः=उद्गच्छतोः, पयोधरयोः=कुचयोः, अन्तरे=मध्ये, पतन्ती=विलसन्ती, या हारावली, तया विराजिताः=सुशोभिताः, कमलदलकान्तनयनाः—कमलदलस्य=कमलसमूहस्य, कान्तम्=अभीष्टं, नयनम्=अतिवाहनं यासां ताः, वर्षाणामतिवाहने कमलानामुल्लसितत्वादिति भावः। पक्षे—कमलदवत्=पङ्कजपत्रवत्, कान्ते=सुन्दरे, नयने=नेत्रे यासां ताः; सुरचापचक्रवक्रभुवः—सुरचापचक्रम्=इन्द्रधनुर्मण्डलमेव वक्रे=कुटिले, भ्रुवौ यासां ताः, पक्षे—सुचापचक्रमिव वक्रे भ्रुवौ यासां ताः। विद्युन्मणिमेखलालंकारधारिण्यः=विद्युत्=सौदामिन्येव मणिमेखलालङ्कारः=रत्नकाञ्चीरूपालङ्कारः, तं धारयन्तीत्येवंशीलाः, पक्षे—विद्युदिव=सौदामिनीव मणिमेखलालङ्कारः तद्धारिण्यः। शिञ्जानमुक्तकलहंसकाः [शिञ्जानाः+मुक्तकलहंसकाः]—शिञ्जानाः—गर्जन्त्यः तथा मुक्ताः=मानसं प्रति प्रस्थापिताः कलहंसकाः याभिस्ताः, वर्षासु हंसानां मानसे गमनादिति भावः। पक्षे—शिञ्जाने=शब्दायमाने, आमुक्ते=बद्धे, कलहंसके=नूपुरौ यासां ताः। प्रौढ़करेणुसञ्चारहारिण्यः—प्रकर्षेण ऊढमिति प्रौढं=प्रवृद्धं, कं=जलं, तेन रेणुसञ्चारं=रजसामुत्पतनं, हरन्ति=रुन्धन्तीत्येवंशीलाः, पक्षे—प्रौढा=विशाला, या करेणुः=हस्तिनी, तस्याः सञ्चारं=गतिं, हरन्ति=तिरस्कुर्वन्तीत्येवंशीलाः। कम्रकन्धरा=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कम्राः=मनोज्ञाः, कन्धराः=जलधराः, यासु ताः, पक्षे—कम्रा=कमनीया, कन्धरा=ग्रीवा यासां ताः। तिरस्कृतशशाङ्क०=तिरस्कृता=मेघैराच्छादिता; शशांककान्तिः=चन्द्रिका, यासु ताः। तथा च कं=जलं, तस्मै लापाः=कलापाः, वर्षागीतानि। तत्र उच्चानि=ऊर्ध्वानि, मुखमण्डलानि=गायिकानां मुखबिम्बानि यासु ताः, पक्षे—तिरस्कृतः=पराजितः, शशांककान्तिकलापः=चन्द्रशोभासमूहः, येन तादृशमुच्चम्=उत्कृष्टं, मुखमण्डलं यासां ताः, वर्षाः, सकलजगज्जेगीयमानगुणम्—सकलेन=समस्तेन, जगता=लोकेन, जेगीयमानाः—भूयोभूयः प्रशस्यमानाः, गुणाः=दयादाक्षिण्यादयः, यस्य तम्। अनुपमरूपलावण्यराशिराजितम्—अनुपमस्य=अलौकिकस्य, रूपस्य=लावण्यस्य च, राशिना=समूहेन, राजितं=शोभितं, राजानं=नृपं नलम्, अवलोकयितुमिव=प्रेक्षितुमिव, अवतरन्ति स्म=आगच्छन्ति स्म। अत्र प्रस्तुतासु वर्षासु श्लेषेण समानकार्यलिङ्गविशेषणैरप्रस्तुतनायिकाव्यवहारसमारोपात् समासोक्तिरलङ्कारः। तत्समासोक्तेरुपमा रूपकं चाङ्गम्। अवलोकयितुमिवेत्युत्प्रेक्षा॥

ज्योत्स्ना—(प्रकृत गद्यखण्ड का अर्थ वर्षा और नायिका—दोनों पक्षों में घटित होता है।)

वर्षापक्ष में—इसके बाद किसी समय उमड़ते हुए बादलों के मध्य से गिरती हुई जलधारा की श्रेणी से सुशोभित, कमलदलों के लिए प्रिय आगमन वाली, इन्द्रधनुष के मण्डल के समान तिरछी भौंहों वाली, बिजली के समान मणियों से निर्मित मेखलारूपी अलंकारों को धारण करने वाली, गर्जन करती हुई तथा सुन्दर हंसों को मानसरोवर की ओर छोड़ देनेवाली, प्रौढ़—धाराप्रवाह जल के कारण धूलि के सञ्चार का हरण करने वाली, रमणीय मेघों से समन्वित, चन्द्रमा की कान्ति को तिरस्कृत कर देने वाली तथा जल के लाप (आवाज) से लोगों के मुखमण्डल को ऊपर की ओर उठा देने वाली वर्षा समस्त संसार के द्वारा प्रशस्यमान गुण वाले अनुपम सौन्दर्य-राशि से सुशोभित इस राजा (नल) को देखने के लिए ही मानो उत्तर रही थी।

नायिकापक्ष में—उन्नत स्तनों के मध्य विलास करती हुई हारों की माला से सुशोभित, कमलपत्रों के समान सुन्दर नयनों वाली, इन्द्रधनुर्मण्डल के समान वक्राकार भौंहों वाली, बिजली के समान मणियों से निर्मित मेखला-(करधनी)-रूप आभूषणों को धारण करने वाली, मधुर शब्द करने वाले नूपुरों को चरणों में धारण करने वाली, मदमत्त हस्तिनी की चाल को भी तिरस्कृत करने वाली, कमनीय ग्रीवा वाली, उत्कृष्ट मुखमण्डल के द्वारा चन्द्रमा की कान्ति को भी तिरस्कृत करने वाली नायिकायें समस्त संसार के द्वारा गाये जाते हुए गुण वाले, अनुपम सौन्दर्य-राशि से सुशोभित इस राजा (नल) को देखने-मात्र के लिए ही मानों अवतरित हो रहीं थीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्र च;

आकर्ण्य स्मरयौवराज्यपटहं जीमूतनूत्नध्वनिं
नृत्यत्केकिकुटुम्बकस्य दधतं मन्द्रां मृदङ्गक्रियाम् ।
उन्मीलन्नवनीलकन्दलदलव्याजेन रोमाञ्चिता
हर्षेणेव समुच्छ्रिताः वसुमती दध्रे शिलीन्ध्रध्वजान् ॥४०॥

अन्वयः—(यत्र च) नृत्यकेकिकुटुम्बकस्य मन्द्रां मृदङ्गक्रियां दधतं स्मरयौवराज्यपटहं जीमूतनूत्नध्वनिं आकर्ण्य उन्मीलन्नवनीलकन्दलदलव्याजेन रोमाञ्चिता हर्षेण इव समुच्छ्रिता वसुमती शिलीन्ध्रध्वजान् दध्रे ॥४०॥

कल्याणी – आकर्ण्येति । यत्र=यस्मिन्नेव वर्षाकाले च, नृत्यतः=नर्तनं कुर्वतः, केकिकुटुम्बकस्य=मयूरकुलस्य, मन्द्रां=गम्भीरां, मृदङ्गक्रियां=मृदङ्गव्यापारं, दधतं=धारयन्तम्, नृत्यतां मयूराणां कृते मृदङ्गवाद्यकार्यं कुर्वन्तमित्यर्थः । स्मरयौवराज्यपटहम्=युवा चासौ राजा चेति युवराजस्तस्य भावो यौवराज्यम् । स्मरस्य=कामस्य, यौवराज्ये=यौवराज्याभिषेककाल इत्यर्थः । पटहं=डिण्डिमं, तद्रूपमित्यर्थः । जीमूतनूत्नध्वनिम्—जीमूतानां=मेघानां, नूत्नम्=अभिनवं, ध्वनिं=गर्जितम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, उन्मीलन्नवनीलकन्दलदलव्याजेन–उन्मीलतां=प्रादुर्भवतां, नवनीलकन्दलदलानां=नूतननीलतृणाङ्कुराणां, व्याजेन=छलेन, रोमाञ्चिता=पुलकिता, हर्षेणेव=आनन्देनेव, समुच्छ्रिता=समृद्धा, वसुमती=पृथिवी, शिलीन्ध्रध्वजान्=शिलीन्ध्रान्येव ध्वजाः=पताकाः तान्, दध्रे=धारयामास । अत्र जीमूतध्वनौ पटहत्वारोपाद्रूपकम् । जीमूतध्वनौ मृदङ्गक्रियाया असम्भावनया असम्भवद्वस्तुसम्बन्धो बिम्बप्रतिबिम्बभावं बोधयतीति निदर्शना । कन्दलदलव्याजेनेत्यपह्नुतिः । शिलीन्ध्रेषु ध्वजत्वारोपाद्रूपकम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४०॥

ज्योत्स्ना – और जिस वर्षा ऋतु में नृत्य करते हुए मयूर-परिवारों की गम्भीर. मृदङ्ग बजाने की क्रिया को धारण करते हुए कामदेव के युवराज पद पर अभिषेक-काल में बजने वाले पटह—ढोल के समान मेघों की अभिनव ध्वनि—गर्जना को सुनकर प्रादुर्भूत होते हुए नूतन श्यामल शस्य के अंकुरों के बहाने से पुलकित, अतएव आनन्द से समृद्ध बनी हुई पृथ्वी मानों शिलीन्ध्र-(गोमय)-रूप पताकाओं को धारण कर रही थी ॥४०॥

अपि च;

पर्णैः कर्णपुटायितैर्नवरसप्राग्भारविस्फारितैः
शृण्वन्तो मधुरं द्युमण्डलमिलन्मेघावलीगर्जितम् ।
शाखाग्रग्रथमानसौरभभरभ्रान्तालिपालिध्वजा-
स्तोषेणेव वहन्ति पुष्पपुलकं धाराकदम्बद्रुमाः ॥४१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—नवरसप्राग्भारविस्फारितैः कर्णपुटायितैः पर्णैः मधुरं द्युमण्डलमिलन्मेघावलीगर्जितं शृण्वन्तः शाखाग्रग्रथमानसौरभभरभ्रान्तालिपालिध्वजाः धाराकदम्बद्रुमाः तोषेण इव पुष्पपुलकं वहन्ति ॥४१॥

कल्याणी—पर्णैरिति। नवरसः—नूतनवर्षाजलमेव नवरसः=नूतनानन्दः, तस्य प्राग्भारेण=समुच्चयेन, विस्फारितैः=विस्तारितैः, कर्णपुटायितैः=कर्णपुटवदाचरद्भिः (कर्णपुटशब्दात् 'कर्तुः क्यङ् सलोपश्च' इति क्यङ्, तदन्तात्कर्तरि क्तः)। पर्णैः=पत्रैः, मधुरं=मनोहरं, द्युमण्डलेन=नभोमण्डलेन, मिलन्ती=संगच्छन्ती, या मेघावली=मेघपङ्क्तिः तस्याः गर्जितं=ध्वनिं, शृण्वन्तः=आकर्णयन्तः, शाखाग्रेषु ग्रथमानाः=सम्मिलन्त्यः, सौरभभरेण=सुगन्धातिशयेन, भ्रान्ता=उपर्युपरि भ्रमणं कुर्वन्त्यश्च, अलिपालयः=भ्रमरपंक्तयः एव ध्वजाः=पताकाः येषां ते तादृशाः, धाराकदम्बद्रुमाः=वर्षासु घनगर्जितेन सहैव ये पुष्प्यन्ति तादृशाः कदम्बवृक्षाः, तोषेणेव=घनगर्जितश्रवणजन्यहर्षेणेव, पुष्पपुलकं—पुष्पाणि=कुसुमानि एव पुलकः=रोमाञ्चः, तं वहन्ति=धारयन्ति। 'कर्णपुटायितैः' इत्यत्र क्यङ्गतोपमा। 'नवरस' इत्यत्र श्लिष्टरूपकम्। भ्रमरपंक्तौ इत्यत्र ध्वजत्वारोपाद्रूपकम्। तोषेणेवेत्युत्प्रेक्षा। पुष्पेषु पुलकत्वारोपाद्रूपकम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४१॥

ज्योत्स्ना—और भी;

नूतन वर्षा-जल के भार से खिले हुए पत्ररूप कर्णपुटों से नभोमण्डल से मिलती हुई मेघपंक्ति के मनोहर शब्दों को श्रवण करती हुई, (वृक्षों की) शाखाओं के अग्रभाग में सम्मिलित-सी सुगन्ध की अधिकता से ऊपर ही ऊपर भ्रमण करती हुई भ्रमरपंक्तिरूपी ध्वजा से समन्वित वर्षा ऋतु में बादलों की गर्जना के साथ ही खिलने वाले धाराकदम्ब के वृक्ष मेघ-गर्जनरूप शब्द को सुनकर अत्यन्त आनन्द से मानों पुष्परूप रोमाञ्च को धारण कर रहे हैं।

विमर्श—कदम्ब वृक्ष दो प्रकार के होते हैं—एक वे, जिनपर वसन्त ऋतु में फूल लगते हैं, जिन्हें धूलीकदम्ब कहा जाता है और दूसरे वे, जिनपर वर्षा ऋतु में फूल खिलते हैं, जिन्हें धाराकदम्ब के नाम से जाना जाता है। इसीलिए यहाँ धाराकदम्ब का उल्लेख किया गया है ॥४१॥

अथ क्रमेण;

नीरं नीरजनिर्मुक्तं नीरजस्कं भुवस्तलम्।
जातं जातिलतापुष्पगन्धान्धमधुपं वनम् ॥४२॥

अन्वयः—नीरं नीरजनिर्मुक्तं भुवस्तलं नीरजस्कं वनं जातिलतापुष्पगन्धान्धमधुपं जातम् ॥४२॥

कल्याणी—नीरमिति। नीरं=जलं, नीरजैः=कमलैः, निर्मुक्तं=रहितं, वर्षाणां कमलप्रतिकूलत्वादिति भावः। भुवस्तलं=भूपृष्ठं, नीरजस्कं=धूलिरहितं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वनं=विपिनं, जातिलतानां=मालतीवल्लरीणां, यानि पुष्पाणि=कुसुमानि, तेषां गन्धेन = सुगन्धेनेत्यर्थः, अन्धाः=मत्ताः, मधुपाः=भ्रमराः यत्र तादृशं, जातम्=अभूत् । अत्र वर्षावर्णनस्य प्रस्तुतत्वात्प्रस्तुतानां नीरादीनामेकक्रियारूपधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता, सा च यमकछेकानुप्रासाभ्यां सङ्कीर्यते । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४१॥

ज्योत्स्ना — तदनन्तर वर्षाकाल के आ जाने पर क्रमशः जल कमलों से रहित हो गये, भूतल धूलि से रहित हो गया और वन-प्रदेश माधवी लता के पुष्पों के सुगन्ध से मत्त भ्रमरों से सम्पन्न हो गया ।

विमर्श — कमल के लिए प्रतिकूल होने के कारण वर्षा ऋतु में कमल नहीं खिलते और वर्षा होने के कारण पृथ्वी भी धूलि से रहित हो जाती है; साथ ही वर्षाकाल में जंगलों में भी माधवीलताओं पर अत्यन्त सुगन्धित फूल लगने खिलने हैं, जिन पर भ्रमरों का समूह रसपान करता हुआ मदमत्त होकर बराबर गुञ्जार कर रहता है ॥४२॥

अपि च;

धुतकदम्बकदम्बकनिष्पतन्नवपरागपरागममन्थराः ।
हृततुषारतुषा रतिरागिणां प्रियतमा मरुतो मरुतो ववुः ॥४३॥

अन्वयः— धुतकदम्बकदम्बकनिष्पतन्नवपरागपरागममन्थराः हृततुषारतुषाः रतिरागिणां प्रियतमाः मरुतः मरुतः ववुः ॥४३॥

कल्याणी — **धुतेति** । धुतानि=कम्पितानि, यानि कदम्बकदम्बकानि=कदम्बतरुसमूहः, तेभ्यः निष्पतन्तः=निर्गच्छन्तः, ये नवपरागाः=नवकुसुमरेणवः, तत्परागमेन=संसर्गेण, मन्थराः=मन्दाः, हृततुषारतुषाः—हृताः=परिगृहीताः, तुषारस्य=हिमस्य, तुषाः=कणाः, यैस्ते तथोक्ताः । रतिरागिणां=रतौ रागोऽस्ति येषां तेषां, कामुकानामित्यर्थः । प्रियतमाः=अतिप्रियाः, मरुतः=वायवः, मरुतः=पर्वतात्, (मरुशब्दात् 'पञ्चम्यास्तसिल्' इति तसिल्) । ववुः—वहन्ति स्म । ('मरू धन्वधराधरौ' इत्यमरः) । 'कदम्ब-कदम्ब; पराग-पराग, तुषार-तुषार, मरुतो मरुतो' इति यमकम् । द्रुतविलम्बितं वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ' । इति ॥४३॥

ज्योत्स्ना—और भी,

कम्पायमान कदम्ब वृक्षसमूहों से निकलते हुए नूतन पराग से संसर्ग के कारण मन्थर—मन्द, हिमकणों को ग्रहण किये हुए कामी पुरुषों के लिए अत्यन्त प्रिय पवन (वायु) मरुनामक पर्वत से बह रहे थे ॥४३॥

ततश्च । तिरस्कृततरणित्विषि, विगलद्वारिविप्रुषि, शान्तचातकतृषि, निर्वाणवारणवपुषि, मानिनीमानग्रहग्रन्थिमुषि, जनितजवासकशुषि, विधववधूविद्विषि, वर्धितमण्डूकहृषि, मुद्रितचन्द्रमसि, विद्राणपङ्कजसरसि;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वाधीनप्रियप्रेयसि, प्रोषितकलहंसवयसि, नष्टनक्षत्रमण्डलमहसि, मेचकितनभसि, निष्पतन्नीपरजसि, स्फुटकुटजरजःपुञ्जपिञ्जरिताष्टदिग्भासि, भासुरसुरचापचक्रभृति, मयूरमदकृति, महिषशोषहृति, विस्तरत्सरिति, विद्योतमानविद्युति, वहन्मन्दमेघङ्करमरुति, हृष्यत्कृषाणयोषिति, पुष्प्यत्केतकीगन्धपानमत्तमधुकृति; प्रोद्भूतभूरुहि, दरिद्रनिद्राद्रुहि, सगर्वगोदुहि, कदम्बस्तम्बालम्बिमधुलिहि, मुदितमदनाट्टहासायमानघननादमुचि, पच्यमानजम्बूफलश्यामलितवनान्तररुचि, रचितपान्थसार्थशुचि, श्रूयमाणमदमधुरमयूरवाचि, विनिद्रकोशातकीशालिनि; यूथिकाजालिनि, नवमालिकामालिनि, कन्दलभाजि, पच्यमानजम्बूतरुवनराजिभ्राजि, भिक्षाक्षणक्षपितपरिव्राजि, शान्तसारङ्गरुजि, नीडनिर्माणाकुलबलिभुजि, सान्द्रेन्द्रगोपयुजि, श्च्योतत्तमालधारागृहसदृशि, श्यामायमानदशदिशि, दिवाऽपि श्रूयमाणरजनिशङ्काकुलचक्रवाकचक्रक्रुशि, शकटसञ्चाररुधि, पल्लवितवीरुधि, विश्रान्तजिष्णुक्ष्मापालयुधि, क्षीणोक्षक्षुधि, क्षीरसमुद्रनिद्राणबाणबाहुच्छिदि, सिन्धुरोधोभिदि, दवदहननुदि, विरहिमनस्तुदि, जनितजनमुदि, तापिच्छच्छायानुच्छेदिनि, छन्नकुटीमध्यबध्यमानवाजिनि, विकसितवकुलवनविराजिनि, सीरसीमन्तितग्रामसीमनि, विजयमानमनोजन्मनि, जाते जगज्जीविनि, जीमूतसमये कदाचिदम्भसि दिवसे मृगयावनपालकः प्रविश्य राजानं विज्ञापयामास ॥

कल्याणी—ततश्चेति । ततश्च–तदनन्तरं च, तिरस्कृताः=आच्छादिताः, तरणेः=सूर्यस्य, त्विट्=प्रभा येन तस्मिन् । विगलन्त्यः=गगनात्पतन्त्यः, वारिविप्रुषः=जलबिन्दवः यत्र तस्मिन् । शान्ता=अपसृता, चातकानां=तदाख्यपक्षिणां, तृट्=पिपासा यत्र तस्मिन् । निर्वाणानि=शीतलतां गतानि, वारणानां=गजानां, वपूंषि=शरीराणि यत्र तस्मिन् । मानिनीनां=मानवतीनां तरुणीनां, यो मानग्रहः=प्रणयकोपधारणं, तस्य ग्रन्थि=दाढर्यं, मुष्णाति=अपहरतीति तस्मिन् । जनिता=कृता, जवासकानां, शुट्=शोषः येन तस्मिन् । विगता=मृता, धवाः=पतयः यासां तादृश्यो या वध्वः=अङ्गनाः, तासाम् । विद्विषि=रिपुभूते, वर्धिता=वृद्धिं प्रापिता, मण्डूकानां=दर्दुराणां, हृट्=हर्षः येन तस्मिन् । मुद्रितः=जलदैराच्छादितः चन्द्रमा येन तस्मिन् । विद्राणानि=दुर्गतिमापन्नानि, पङ्कजसरांसि=कमलसरोवराः यत्र तस्मिन् । स्वाधीनप्रियाणां='कान्तो रतिगुणाकृष्टो न जहाति यदन्तिकम् । विचित्रविभ्रमासक्ता सा स्यात्स्वाधीनभर्तृका ॥' इति लक्षणलक्षितानां रमणीनां, प्रेयसि=अतिप्रिये, प्रोषितानि=कृतप्रवासानि, मानसं प्रति गतानीत्यर्थः । कलहंसवयांसि=तदाख्यपक्षिणः यत्र तस्मिन् । नष्टं=क्षीणं, नक्षत्रमण्डलस्य=तारासमूहस्य, महः=तेजः यत्र तस्मिन्, गगनतलस्य मेघैराच्छादितत्वादिति भावः । मेचकितम्=अन्धकाराच्छन्नं, नभः=गगनं यत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मिन् । निष्पतन्ति=निर्गच्छन्ति, नीपरजांसि=कदम्बपुष्पपरागाः यत्र तस्मिन् । स्फुटानां=विकसितानां, कुटजानां=कुटजकुसुमानां, रजःपुञ्जैः=परागपटलैः, पिञ्जरिताः=पिङ्गलवर्णतां गताः, या अष्टौ दिशस्ताभिर्भासत इति तस्मिन् । भासुरं=दीप्तिमत्, सुरचापचक्रम्=इन्द्रधनुर्मण्डलं, बिभर्ति=धारयतीति तस्मिन् । मयूराणां मदं=हर्षं करोतीति तस्मिन् । महिषाणां शोषं=कार्श्यं, हरति=दूरीकरोतीति तस्मिन् । विस्तरन्त्यः=विस्तारं गच्छन्त्यः, सरितः=नद्यः यत्र तस्मिन् । विद्योतमाना=देदीप्यमाना, विद्युत्=तडित्, यत्र तस्मिन् । वहन्त=संचरन्तः, मन्दाः मेघंकराः=मेघोत्पादकाः, मरुतः=वायवः यत्र तस्मिन् । हृष्यन्त्यः=प्रसन्नतां गच्छन्त्यः, कृषाणयोषितः=कृषकवध्वः यत्र तादृशे । पुष्प्यन्तीनां=विकसन्तीनां, पुष्पितानामिति यावत् । केतकीनां=तदाख्यलतानां, गन्धपानेन=सौरभास्वादनेन, मत्ताः=मदान्विताः, मधुकृतः=भ्रमराः यत्र तादृशे । प्रोद्भूताः=प्राचुर्येणोत्पन्नाः, भूरुहः=वृक्षाः यत्र तस्मिन् । दरिद्राणां=निर्धनानां, निद्रायै, द्रुह्यति=कोपान्निद्राविषयकमपकारं करोतीति तस्मिन् । सगर्वगोदुहि—सगर्वा=उच्छृङ्खला, दुर्दोहा इति यावत् । तादृशीरपि गाः=धेनूः दोग्धीति तस्मिन् । बाहुल्येन हरितगष्पचरणात्ताभिर्दुग्धावेगस्य रोद्धुमक्यत्वादिति भावः । यद्वा गाः दुहन्तीति गोदुहः=गोपालाः, सगर्वाः गोभ्यः प्रचुरदुग्धप्राप्त्या गर्वयुक्ता गोदुहो यत्र तस्मिन् । कदम्बस्तम्बेषु=नीपतरुपुञ्जेषु, आलम्बिनः=कृताश्रयाः, मधुलिहः=भ्रमराः यत्र तस्मिन् । मुदितस्य=प्रसन्नस्य, मदनस्य=कामदेवस्य, अट्टहासायमानः=उच्चैर्हासवदाचरन् यो मेघनादः=घनगर्जितम्; तं मुञ्चति=उच्चारयतीति तस्मिन् । पच्यमानैः=परिपाकं गच्छद्भिः, जम्बूफलैः श्यामलिताः=श्यामलभावं गताः, वनान्तरस्य=विपिनमध्यभागस्य, रुक्=कान्तिः यत्र तादृशे । रचिता=कृता, पान्थसार्थस्य=पथिकवृन्दस्य, शुक्=प्रियासङ्गमबाधजन्यः शोकः येन तादृशे । श्रूयमाणा=आकर्ण्यमाना, मदेन=हर्षेण, मधुरा=कर्णप्रिया, मयूराणां वाक्=वाणी यत्र तस्मिन् । विनिद्राः=विकसिताः, कोशातक्यः=कोशातकीफलानि, ताभिः शालते=शोभत इति तस्मिन् । यूथिकानां=लताविशेषाणां, जालं=राशिः अस्त्यस्मिन्निति तादृशे । नवमालिकामालिनि—नवमालिकानां=लताविशेषाणां, माला=पंक्तिः अस्त्यस्मिन्निति तादृशे । कन्दलभाजि—कन्दलानि=नवतृणाङ्कुरान्, भजते=प्राप्नोतीति तस्मिन् । पच्यमानानि=परिपाकं गच्छन्ति, यानि जम्बूफलानि; तेषां तरवः=वृक्षाः तेषां वनराजिभिः=वनपंक्तिभिः, भ्राजते=शोभत इति तस्मिन् । भिक्षाक्षणे=भिक्षाटनकाले, क्षपिताः=निरोधेन खेदिताः, दुर्दिनतयेति भावः । परिव्राजः=संन्यासिनः येन तादृशे । शान्ताः=अपगताः, सारङ्गाणां=मृगाणां, रुजः=रोगाः यत्र तस्मिन् । नीडनिर्माणे=कुलायरचनायाम्, आकुलाः=व्यापृताः, बलिभुजः=काकाः यत्र तस्मिन् । सान्द्रेन्द्रगोपयुजि—सान्द्रैः=प्रचुरैः, इन्द्रिगोपैः=कीटविशेषैः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युज्यते=युक्तो भवतीति तस्मिन् । श्च्योतत्तमालधारागृहसदृशे श्च्योतन्तः=पत्रान्तरालेभ्यः जलबिन्दून् वर्षन्तः, तमालाः=तापिच्छतरवः, धारागृहसदृशाः=धारायन्त्रयुक्तस्नानागारतुल्याः यत्र तस्मिन् । श्यामायमानाः=कृष्णायमानाः, दश दिशो यत्र तस्मिन् । दिवाऽपि=दिवसेऽपि, श्रूयमाणाः=आकर्ण्यमानाः, रजनिशङ्कया=निशाभ्रान्त्या, आकुलस्य=उद्विग्नस्य, चक्रवाकचक्रस्य=चक्रवाकपक्षिवृन्दस्य, क्रुशः=क्रन्दनानि यत्र तस्मिन् । शकटानां सञ्चारं=गतिं, रुणद्धि=निवारयतीति तस्मिन् । पल्लविताः=किसलययुक्ताः, वीरुधः=लता यत्र तस्मिन् । विश्रान्ताः=विरामं गताः, जिष्णूनां=विजेतॄणां, क्ष्मापालानां=भूपतीनां, युधः=संग्रामाः यत्र तस्मिन् । क्षीणा=स्वल्पतां गता, उक्ष्णां=वृषभाणां, क्षुद्=बुभुक्षा, यत्र तस्मिन् । क्षीरसमुद्रे निद्राणः=शयितः, बाणबाहुच्छिद्=बाणासुरभुजोच्छेदकः विष्णुर्यत्र तस्मिन् । सिन्धूनां=सरितां, रोधांसि=कूलानि, भिनत्ति=विदारयतीति तस्मिन् । दवदहनं=वनवह्निं, नुदति=अपसारयति, शमयतीति यावदिति तस्मिन् । विरहिणां=वियोगिनां, मनांसि=चित्तानि, तुदति=वियोगानलेन सन्तापयतीति तस्मिन् । जनिता=समुत्पादिता, जनानां=मानवानां, मुद्=आनन्दः येन तादृशे । तापिच्छानां=तमालपादपानां, छायायाः अनुच्छेदः=अविनाशोऽस्त्यस्मिन्निति तादृशे । छन्नानां=रचितपटलानां, कुटीनां=कुटीराणां, मध्ये=अभ्यन्तरे, बध्यमानाः=संयम्यमानाः, वाजिनः=अश्वाः यत्र तस्मिन् । विकसितैः वकुलवनैः=केसरसमूहैः, विराजते=शोभत इत्येवंशीले । सीरेण=हलेन, सीमन्तिताः=विभाजिताः, ग्रामसीमानः=वसतिप्रदेशाः येन तादृशे । विजयमानः=सर्वोत्कर्षेण वर्त्तमानः, मनोजन्मा=कन्दर्पः यत्र तस्मिन् । जगल्लोकं जीवयति=प्राणयतीत्येवंशीले । जीमूतसमये=वर्षाकाले, जाते=समागते सति, कदाचित्=एकदा, अम्भसि दिवसे=मेघैराच्छन्ने वासरे, मृगयावनस्य=आखेटकाननस्य पालकः=रक्षकः, प्रविश्य=समीपमासाद्य, राजानं=नलं, विज्ञापयामास=निवेदयाञ्चकार ॥

ज्योत्स्ना - तदनन्तर भगवान् भास्कर की कान्ति को तिरस्कृत करने वाले, जलकणों को गिराने वाले, चातक पक्षियों की पिपासा को दूर करने वाले, हाथियों के शरीर को शीतलता प्रदान करने वाले अथवा निर्वाण—शून्य में हाथी का रूप प्रदर्शित करने वाले, मानवती युवतियों के प्रणयकोप के कारण मानरूपी ग्रन्थियों का अपहरण करने वाले, उत्पन्न हुए जवास के पौधों को सुखा देने वाले, पति से रहित अंगनाओं के लिए शत्रु के समान, मेढ़कों की प्रसन्नता को बढ़ाने वाले, चन्द्रमा को आच्छादित कर लेने वाले, कमलयुक्त सरोवरों की दुर्गति करने वाले, स्वाधीनपतिका स्त्रियों को अत्यन्त प्रिय लगने वाले, कलहंस नामक पक्षियों को (मानसरोवर की ओर) भेज देने वाले, तारामण्डल के तेज को क्षीण कर देने वाले, नभोमण्डल को अन्धकार से ढक देने वाले, कदम्ब के पुष्प-परागों को गिराने वाले,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकसित कुटज पुष्प के पीले पराग से आठो दिशाओं की कान्ति को पीतवर्ण कर देने वाले, देदीप्यमान इन्द्रधनुर्मण्डल को धारण करने वाले, मयूरों को मदमत्त कर देने वाले, भैंसों की दुर्बलता को दूर करने वाले, नदियों को विस्तृत कर देने वाले, देदीप्यमान बिजलियों वाले, बादलों को उत्पन्न करने वाली मन्द-मन्द वायु का सञ्चार करने वाले, कृषक-वधुओं को प्रसन्न करने वाले, खिले हुए केतकी-पुष्पों के सुगन्ध-पान से भ्रमरों को मदमत्त कर देने वाले, प्रचुर मात्रा में वृक्षों को उत्पन्न करने वाले, धनहीनों पर कोप कर उनकी निद्रा को दूर करने वाले, कठिनता से दुही जानेवाली गायों को भी दुहवा देने वाले अथवा प्रचुर दुग्ध-प्राप्ति से गोपालों को गर्वसम्पन्न बना देने वाले, कदम्ब वृक्षों के पुष्पगुच्छों पर भौरों को आश्रय प्रदान करने वाले, प्रसन्न कामदेव के अट्टहास के समान बादलों की गर्जना को व्यक्त करने वाले, पकते हुए जामुन के फलों की श्यामलता से वन के मध्यभाग की कान्ति को श्यामल बना देने वाले, पथिकों में (अवनी प्रिया से संगम में बाधारूप) शोक उत्पन्न कर देने वाले, मद के कारण आनन्दित मयूरों की मधुर ध्वनि सुनाने वाले, विकसित कोशातकी-फलों के कारण शोभित होने वाले, यूथिका – जूही लता के जाल को (पल्लवयुक्त) करने वाले, नवमालिका की पंक्तियों वाले, नवीन तृणांकुरों को धारण करने वाले, पकते हुए फलों वाले जामुन के वृक्षों की पंक्ति से सुशोभित होने वाले, भिक्षाटन-काल में संन्यासियों को कष्ट देने वाले, हरिणों के के रोगों को दूर करने वाले, बलि का भोजन करने वाले (कौवों) को घोंसला बनाने के लिए व्याकुल कर देने वाले, इन्द्रगोप नामक विशेष प्रकार के कीटों को बहुलता में एकत्रित कर देने वाले, चूती हुई तमाल वृक्ष की धाराओं से युक्त गृहों के समान, दशो दिशाओं को अन्धकार-पूर्ण बना देने वाले, दिन में भी रात्रि की भ्रान्ति से उद्विग्न चक्रवाक पक्षियों के रुदन को सुनाने वाले, गाड़ियों की गति को अवरुद्ध कर देने वाले, लताओं को किसलयों से युक्त कर देने वाले, विजयेच्छु राजाओं के युद्ध पर विराम लगा देने वाले, वृषभों (साँड़ों) की भूख को कम कर देने वाले, बाणासुर को भुजाओं को काटने वाले विष्णु को क्षीरसागर में सुला देने वाले, नदियों के किनारों को छिन्न-भिन्न कर देने वाले, दावाग्नि का शमन करने वाले अथवा दावाग्नि को दूर करने वाले, विरही-जनों के मन को सन्तप्त करने वाले, लोगों में प्रसन्नता को उत्पन्न करने वाले, तापिच्छ—तमाल वृक्षों की छाया का अनुकरण करने वाले, आच्छादित कुटी के अन्दर बँधे हुए घोड़ों वाले, विकसित वकुल—मौलश्री वृक्षसमूहों की शोभा से सुशोभित, हल से गाँव की सीमा को विभाजित करने वाले, कामदेव को पूर्णरूपेण विजयी बनाने वाले, समस्त संसार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के जीवनस्वरूप वर्षा ऋतु के आ जाने पर कभी मेघों से आच्छादित दिन में आखेट-वन के रक्षक ने प्रवेश कर राजा नल से निवेदन किया।

विमर्श—मानिनी—कामिनियों के लिए वर्षा ऋतु अत्यन्त उत्तेजक होती है, अतः वे विना किसी मनुहार के ही अपने प्रिय के अनुकूल हो जाती हैं।

जनितजवास ग्रीष्म ऋतु में नदियों के किनारों पर जवास के पौधे बहुतायत मे उग जाते हैं, जो कि वर्षा ऋतु की बूंदें पड़ते ही नष्ट हो जाते हैं।

महिषशोषहृति—ग्रीष्म ऋतु में प्रचण्ड गर्मी से घासों के जल जाने से चारा न मिलने के कारण भैंसे अत्यन्त दुःखी हो जाते हैं, लेकिन वर्षा ऋतु में पुनः चारों की बहुतायत से वे प्रसन्न और हृष्ट-पुष्ट हो जाते हैं।

दरिद्रनिद्राद्रुहः—दरिद्रों अथवा धनहीनों की झोपड़ियाँ घास-फूस के छप्परों से निर्मित होती हैं, जो कि वर्षा ऋतु में टपकने लगती हैं, जिसके कारण उन्हें रातें जागकर ही बितानी पड़ती हैं। इस प्रकार वर्षा ऋतु उनके लिए निद्राद्रोही होती है।

सगर्वगोदुहि—वर्षा ऋतु में हरे चारों की बहुलता होने के कारण अन्य दिनों में जो गायें दूध दुहते समय उच्छृंखलता का प्रदर्शन करती हैं, वे भी दूध के वेग को रोक न पाने के कारण आसानी से अपना दूध दुहवा लेती हैं।

विनिद्रकोशातकी—कोशातकी—लौकी का पौधा वर्षा ऋतु में खूब हरा-भरा रहता है और इस समय प्रचुर फल देता है।

भिक्षाक्षणक्षपितपरिव्राजि—परिव्राजक—संन्यासियों के लिए वर्षा ऋतु चातुर्मास्य व्रत का समय होता है, जिसमें उन्हें एक ही स्थान पर सीमित रहना पड़ता है। इस कारण भोजन हेतु भिक्षाटन के लिए वे बाहर नहीं जा पाते, जिससे एक ही सीमा में बार-बार भिक्षाटन करने में उन्हें अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ता है।

शकटसञ्चाररुधि—वर्षा ऋतु में मार्ग कीचड़ से भर जाते हैं, जिससे उस समय गाड़ियों का आना-जाना पूर्णतः अवरुद्ध हो जाता है।

क्ष्मापालयुधि—वर्षा ऋतु में जलभराव एवं कीचड़ से मार्ग अवरुद्ध हो जाने के कारण आवागमन में अत्यन्त असुविधा होती है, अतः अन्य प्रदेशों पर विजय प्राप्ति के इच्छुक राजाओं को अपना अभियान इस समय रोक देना पड़ता है॥

'देव,

> किं स्यादञ्जनपर्वतः स्फटिकयोर्द्वन्द्वं दधद्दीर्घयो-
> रम्भोमेदुरमेघ एष किमुत श्लिष्यद्बलाकाद्वयः।
> शून्यः किं नु करेण कुञ्जर इति भ्रान्तिं समुत्पादय-
> न्दंष्ट्राद्वन्द्वकरालकालवदनः कोलः कुतोऽप्यागतः॥४४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—(देव !) किं दीर्घयोः स्फटिकयोः द्वन्द्वं दधत् अञ्जनपर्वतः स्यात् ? किमुत एषः श्लिष्यद्बलाकाद्वयः अम्भोमेदुरमेघः ? किं नु करेण शून्यः कुञ्जरः (स्यात्) इति भ्रान्तिं समुत्पादयन् दंष्ट्राद्वन्द्वकरालकालवदनः कोलः कुतोऽपि आगतः ॥४४॥

कल्याणी - किं स्यादिति । देव=महाराज !, दीर्घयोः=विशालयोः, किम्, एष=अयं, स्फटिकयोः=श्वेतप्रस्तरयोः, द्वन्द्वं=युगलं, दधत्=धारयन्, अञ्जनपर्वतः=कज्जलगिरिः, स्यात्=भवेत्, किमुत=अथवा, किमेषोऽयं श्लिष्यद्बलाकाद्वयः=श्लिष्यत्=संयुज्यमानं, बलाकाद्वयं=बकपक्षिद्वयं यत्र तादृशः । अम्भोमेदुरमेघः=अम्भसा=जलेन, मेदुरः=निर्भरः, मेघः=घनः स्यात्, किं नु=अथवा किं, करेण=शुण्डादण्डेन, शून्यः=हीनः, कुञ्जरः=गजः, स्यादिति भ्रान्ति=भ्रमं, सन्देहमिति यावत् । समुत्पादयन्=जनयन्, दंष्ट्राद्वन्द्वेन=दन्तयुगलेन, करालं=भयङ्करं, कालवदनं=कालोपमं कृष्णं वा, वदनं=मुखं यस्य स तथोक्तः । कोलः=शूकरः, कुतोऽपि=कस्माच्चित् स्थानात्, आगतः=समायातः, मृगयावने इति भावः । कोलेऽञ्जनपर्वतस्य, मेघस्य, शुण्डादण्डरहितकुञ्जरस्य च सन्देहात् सन्देहालङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ।४४॥

ज्योत्स्ना—हे भगवन् ! क्या यह दो विशाल स्फटिक-प्रस्तरखण्डों को धारण किया हुआ अञ्जन पर्वत (कज्जलगिरि) है ? अथवा क्या यह दो सटे हुए बलाकाओं (बकपक्षियों) से समन्वित जल से परिपूर्ण मेघ है ? अथवा क्या यह शुण्ड हाथ से रहित हाथी है ? इस प्रकार के सन्देह को उत्पन्न करता हुआ अपने दो दांतों के कारण भयंकर काल के समान अथवा कृष्ण वर्ण मुख वाला कोल—शूकर कहीं से (आपके क्रीड़ावन में) आ गया है ? ॥४४॥

ततश्चासौ,

भिन्दन्कन्दकसेरुकन्दलभृतः स्निग्धप्रदेशान् भुवो
भञ्जन्नञ्जनशैलशृङ्गसदृशः फुल्लल्लतामण्डपान् ।
मन्दं मन्दरलीलयाब्धिसदृशं मथ्नंश्च लीलासरः
क्रोडः क्रीडति भाययन्निव भवत्क्रीडावने रक्षकान् ॥४५॥

अन्वयः—(ततः चासौ) क्रोडः कन्दकसेरुकन्दलभृतः भुवः स्निग्धप्रदेशान् भिन्दन् अञ्जनशैलशृङ्गसदृशः फुल्लल्लतामण्डपान् भञ्जन् मन्दरलीलया अब्धिसदृशं लीलासरः मन्दं मथ्नन् च भवत्क्रीडावने रक्षकान् भाययन् इव क्रीड़ति ॥४५॥

कल्याणी—भिन्दन्निति । ततः=तदनन्तरं, चासौ क्रोडः=शूकरः, कन्दान्, कसेरुकान्, कन्दलानि=नवशष्पाङ्कुरांश्च, बिभ्रति=धारयन्तीति तथोक्तान् । भुवः=भूमेः, स्निग्धप्रदेशान्=आर्द्रस्थानानि, भिन्दन्=विदारयन्, अञ्जनशैलशृङ्गसदृशः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कज्जलगिरिशिखरतुल्यः, सः, फुल्लन्तीनां=विकसन्तीनां, लतानां मण्डपान्=कुञ्जान्, भञ्जन्=विनाशयन्, मन्दरलीलया=मन्दराचलक्रीडया, अब्धिसदृशं=समुद्रतुल्यं, समुद्रं मन्दर इवेति भावः। लीलासरः=क्रीडासरोवरं, मन्दं=शनैः शनैः, मथ्नन्=आलोडितं कुर्वंश्च, भवतः क्रीडावने रक्षकान्=रक्षाधिकृतपुरुषान्, भाययन्निव=स्वरूपेण दारुणव्यापारैश्च भीतान् कुर्वन्निव, क्रीडति=स्वमनोरञ्जनं करोति। अत्र शूकरस्य चेष्टायाः स्वरूपस्य च वर्णनात् स्वभावोक्तिरलङ्कारः। 'अञ्जनशैलशृङ्गसदृशः' इत्युपमालङ्कारः। 'मन्दरलीलया' इत्यत्र असम्भवद्वस्तुसम्बन्धनिदर्शनालङ्कारः। भाययन्निवेत्युत्प्रेक्षालङ्कारः। एतेषामङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४५॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर वह शूकर कन्द तथा कसेरु के नूतन अंकुरों को धारण करने वाली भूमि के गीले स्थानों का भेदन करता हुआ, कज्जल गिरि के शिखर के समान विकसित लतामण्डपों को विनष्ट करता हुआ और मन्दराचल की (समुद्रमन्थनरूप) लीला के समान समुद्र की तरह क्रीड़ा-सरोवर का धीरे-धीरे मन्थन करता हुआ आपके क्रीड़ावन में रक्षकों को (अपने स्वरूप और भयंकर कार्यों से) भयभीत करता हुआ मानों अपना मनोरञ्जन कर रहा है—खेल रहा है ॥४५॥

राजा तु तदाकर्ण्य चिन्तितवान्—

'अच्छाच्छैः शुकपिच्छगुच्छहरितैश्छन्ना वनान्तास्तृणैः
सेव्याः सम्प्रति सान्द्रचन्द्रकिकुलैरुत्ताण्डवैर्मण्डिताः।
येषु क्षीरविपाण्डुपल्वलपयः कल्लोलयन्तो मनाग्
वाता वान्ति विनिद्रकेतकवनस्कन्धे लुठन्तः शनैः ॥४६॥

अन्वयः—अच्छाच्छैः शुकपिच्छगुच्छहरितैः तृणैः छन्नाः उत्ताण्डवैः सान्द्रचन्द्रकिकुलैः मण्डिताः वनान्ताः सम्प्रति सेव्याः, येषु क्षीरविपाण्डुपल्वलपयः मनाक् कल्लोलयन्तः विनिद्रकेतकवनस्कन्धे लुठन्तः वाताः शनैः वान्ति ॥४६॥

कल्याणी—अच्छेति। अच्छाच्छैः=अतिनिर्मलैः, शुकपिच्छगुच्छहरितैः=कीरपक्षपुञ्जवद्धरितवर्णैः, तृणैः=शष्पैः छन्नाः=आच्छादिताः, उत्ताण्डवैः—उद्गतं ताण्डवं=नृत्यं येषां तैः, नृत्यं कुर्वद्भिरिति यावत्। सान्द्रचन्द्रकिकुलैः—सान्द्राणां=प्राचुर्येण संहतानां, चन्द्रकिणां=मयूराणां, कुलैः=समूहैः, मण्डिताः=अलंकृताः, वनान्ताः=वनप्रदेशाः, सम्प्रति=अधुना वर्षाकाले, सेव्याः=सेवनीयाः, येषु=वनान्तेषु, क्षीरवद्=दुग्धवद्, विपाण्डु=स्वच्छं धवलं च, पल्वलानां=तडागानां, पयः=जलं, मनाक्=ईषत्, कल्लोलयन्तः=तरङ्गितं कुर्वन्तः, विनिद्राणां=विकसितानां, केतकवनानां, स्कन्धे=विशालशाखाप्रदेशे, लुठन्तः=सञ्चरन्तः, वाताः=पवनाः, शनैः=मन्दं, वान्ति=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वहन्ति । शुकपिच्छगुच्छहरितैरित्यत्र, क्षीरविपाण्डुपल्वलपयः इत्यत्र चोपमा, तयोः परस्परनैरपेक्ष्येण संसृष्टिः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४६॥

ज्योत्स्ना—आखेट-वनरक्षक के वचनों को सुनकर राजा ने विचार किया कि अत्यन्त निर्मल शुक पक्षी के पंखों के गुच्छों के समान हरित वर्ण के तृणों से आच्छादित, उद्धत नृत्य करते हुए अत्यन्त प्रसन्न मयूरसमूहों से अलंकृत वनप्रदेश इस समय सेवन करने के योग्य है; जिसमें दूध के समान स्वच्छ धवल पल्वलों—सरोवरों के जल से कुछ-कुछ कल्लोल करती हुई विकसित केतकी (केवड़े) के वन-प्रदेश में सञ्चरण करती हुई हवायें धीरे-धीरे वह रही हैं ॥४६॥

माद्यन्ति च तेषु सम्प्रति प्रोथिनः । 'तद्युज्यते विहर्तुम्' इत्यवधारयन्नाहूय बाहुकनामानं सेनापतिमादिदेश ॥

कल्याणी—माद्यन्तीति । तेषु=वनान्तेषु च, सम्प्रति=वर्षाकाले, प्रोथिनः=शूकराः, माद्यन्ति=मत्ता भवन्ति' तत्=तस्मात्, विहर्तुं=मृगयाविहारं कर्तुं, युज्यते=युक्तमस्ति, इति=एवम्, अवधारयन्=निश्चिन्वन्, बाहुकनामानं सेनापतिम्, आहूय=आकार्य, आदिदेश=आज्ञापयामास ॥

ज्योत्स्ना—उन वनप्रदेशों में इस वर्षाकाल में शूकर मदमत्त हो रहे हैं, "इसलिए (इस समय) मृगया-विहार करना उपयुक्त है" इस प्रकार निश्चित करते हुए (राजा ने) बाहुक नामक सेनापति को बुलाकर आदेश दिया ॥

'भद्र द्रुतमनुष्ठीयताम्, समादिश्यन्तां कृतवैरिविपत्तयः पत्तयः, पर्याण्यन्तां मनस्तुरगास्तुरगाः, सज्जीक्रियन्तां निजवेगनिर्जितमातरिश्वानः श्वानः, समारोप्यन्तामपनीताहितायूंषि धनूंषि, गृह्यन्तां निर्मथितप्रोथियूथपाशाः पाशाः' इति ॥

कल्याणी—भद्रेति । भद्र=प्रिय !, द्रुतमनुष्ठीयतां=शैघ्र्यं क्रियताम्, कृता=विहिता, वैरिणां=शत्रूणां, विपत्तयः याभिस्तादृश्यः, पत्तयः=पदातयः, समादिश्यन्ताम्=आज्ञाप्यन्ताम्, मनस्तुरगाः—मन इव तुरेण=वेगेन गच्छन्तीति तादृशास्तुरगाः=अश्वाः, पर्याण्यन्तां=पर्याणयुक्ताः क्रियन्ताम्, 'अश्वानां पर्याण कुर्वन्तु' इति विग्रहे 'तत्करोति तदाचष्टे, इति णिचि; अश्वानां च सम्बन्धनिवृत्तौ कर्मत्वम्, णिजन्तात्कर्मणि लोडिति ज्ञेयम् । निजवेगेन=स्वधावनजवेन, निर्जितः=परास्तः, मातरिश्वा=पवनः यैस्तादृशाः, श्वानः=कुक्कुराः, सज्जीक्रियन्ताम्=सुसज्जिता विधीयन्ताम्, अपनीतानि=हृतानि, अहितानां=शत्रूणाम् आयूंषि=जीवननियतकालाः, यैस्तादृशानि, शत्रुसंहारकाणीति यावत् । धनूंषि=शरासनानि, समारोप्यन्ताम्=सज्जीक्रियन्ताम्, निर्मथिताः=विनाशिताः, प्रोथितयूथपानां=शूकरेन्द्राणाम्, आशा=मनोरथा यैस्ते पाशाः=जालानि, गृह्यन्ताम्=आदीयन्ताम् । अत्रैकस्यैव सेनापतेरनुष्ठानाद्यनेकक्रियासम्बन्धाद् दीपका-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लङ्कारः। 'मनस्तुरगाः' इत्युपमा। 'पत्तयः-पत्तयः, तुरगाः-तुरगाः, श्वानः-श्वानः, पाशाः-पाशाः' इति यमकम् ॥

ज्योत्स्ना—"भद्र ! शीघ्रता करो, शत्रुओं के लिए विपत्ति लाने वाली सेनाओं को आज्ञा दो कि मन की गति से चलने वाले घोड़ों को जीनों से युक्त करें, अपने वेग से वायु को भी परास्त करने वाले कुक्कुरों को सज्जित करें—तैयार करें; शत्रुओं के आयु को हरण करने वाले अर्थात् शत्रुसंहारक धनुषों को चढ़ा लें; शूकरों के मनोरथ को विनष्ट करने वाले पाशों—जालों को ले लें" ॥

अथ मौलिमिलन्मुकुलितकरकमलयुगलेन सेनापतिना 'यदाज्ञापयति देवः' इत्यभिधाय त्वरया तथा कृते सति ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=नृपादेशानन्तरं, मौलिना=मस्तकेन, मिलत्=संगच्छमानं, मुकुलितम्=अञ्जलिबद्धमित्यर्थः। करकमलयुगलं यस्य तेन सेनापतिना 'यदाज्ञापयति देवः'='यदादिशति महाराजः', इत्यभिधाय=इत्युक्त्वा, त्वरया=वेगेन, तथा कृते सति ॥

ज्योत्स्ना—राजा के आदेश के पश्चात् अञ्जुली बाँधकर माथे से लगाते हुए सेनापति द्वारा "महाराज की जैसी आज्ञा" इस प्रकार कहकर शीघ्र ही राजाज्ञा के अनुसार कार्य सम्पन्न कर लिये जाने पर ॥

स्वयमपि,

निर्मांसं मुखमण्डले परिमितं मध्ये लघुं कर्णयोः
स्कन्धे बन्धुरमप्रमाणमुरसि स्निग्धं च रोमोद्गमे।
पीनं पश्चिमपार्श्वयोः पृथुतरं पृष्ठे प्रधानं जवे
राजा वाजिनमारुरोह सकलैर्युक्तं प्रशस्तैर्गुणैः ॥४७॥

अन्वयः—(स्वयमपि) राजा मुखमण्डले निर्मांसम्, मध्ये परिमितम्, कर्णयोः लघुम्, स्कन्धे बन्धुरम्, उरसि अप्रमाणं च रोमोद्गमे स्निग्धम्, पश्चिमपार्श्वयोः पीनम्, पृष्ठे पृथुतरम्, जवे प्रधानम्, सकलैः प्रशस्तैः गुणैः युक्तं वाजिनम् आरुरोह ॥४७॥

कल्याणी—निर्मांसमिति। स्वयमपि, राजा=नलः, मुखमण्डले=वदनमण्डले, निर्मांसं=मांसरहितं, मध्ये=मध्यभागे, परिमितम्=अल्पप्रमाणं, कर्णयोः=श्रोत्रयोः, लघुं=ह्रस्वं, स्कन्धे=अंसे, बन्धुरं=सुघटितत्वान्मनोज्ञम्, उरसि=वक्षसि, अप्रमाणम्=अपरिमितं, विस्तृतमिति यावत्। रोमोद्गमे, स्निग्धं=चिक्कणं; पश्चिमपार्श्वयोः=पश्चाद्भागयोः, पीनं=मांसलं, पृष्ठे=पृष्ठभागे, पृथुतरम्=अतिविस्तृतं, जवे=वेगे, प्रधानं=मुख्यम्, अग्रगण्यमिति यावत्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकलैः=समस्तैः, प्रशस्तैः=प्रशंसनीयैः, गुणैः युक्तं, वाजिनम्=अश्वम्, आरुरोह=आरूढः। स्वभावोक्तिरलंकारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४७॥

ज्योत्स्ना—राजा नल स्वयं भी इस प्रकार के घोड़े पर आरूढ़ हो गये, जिसका मुख मांसरहित था अर्थात् वह मोटा नहीं, बल्कि पतला था; मध्य भाग (कटि प्रदेश) परिमित था अर्थात् सुडौल था; दोनों कान छोटे-छोटे थे; दोनों स्कन्ध सुघटित होने के कारण सुन्दर थे; वक्षःस्थल विस्तृत था; रोमसमूह (रोंये) सुकोमल थे; दोनों पिछले भाग मांसल थे; पृष्ठभाग अत्यन्त विस्तृत था तथा जो दौड़ने में अग्रगण्य (सबसे आगे रहने वाला) था। इस प्रकार वह घोड़ा समस्त प्रशंसनीय गुणों से युक्त था ॥४७॥

आरुह्य च क्रमेण कार्दमिककर्पटावनद्धमूर्धजैर्दण्डखण्डपाणिभिः क्रूरकर्मोचिताकारैर्वागुरावाहिभिरनन्तैः कृतान्तदूतैरिव पाशहस्तैः पापर्द्धिकैरनुगम्यमानः, दूरादुन्नमितकन्धरैस्तथोर्ध्वकर्णसम्पुटैरकाण्डोड्डीनप्राणैरिव वनप्राणिभिराकर्ण्यमानहर्षितहयहेषारवः, पवनकम्पिततरुशाखाग्रपल्लवव्याजेन दूरादेवोत्क्षिप्तहस्ताभिरुड्डीयमानशकुनिकुलकोलाहलच्छलेन भयान्निवार्यमाण इव वनदेवताभिः, अभिमुखागतैरुन्मिषत्तरुपुष्पप्रकरमकरन्दबिन्दुवर्षवाहिभिर्वनविनाशशङ्कितैरर्घ्यमिवोपपादयद्भिरुपरुध्यमान इव वनमारुतैः, उन्निद्रसान्द्रकुसुमकेसराङ्कुरजालजटिलाभिर्भयादुद्गतरोमाञ्चप्रपञ्चाभिरिवोद्भ्रान्तभृङ्गरवगद्गदरुदितेन निषिध्यमान इव वनवीरुद्भिः, उद्भिन्नभास्वदमन्दकन्दलावलोकनेनानन्द्यमानः श्वानुगतोऽप्यश्वानुगतः, सगजमप्यगजं तद्वनमाससाद ॥

कल्याणी—आरुह्य चेति। (वाजिनम्) आरुह्य च, क्रमेण=क्रमशः, कर्दमेन रक्तं कार्दमिकं=पङ्किलं, कृष्णवर्णमिति यावत्। 'लाक्षारोचनाट्ठक्' इति सूत्रे 'शकलकर्दमाभ्यामुपसंख्यानम्' इति वार्तिकेन ठक्, तादृशेन कर्पटेन=वस्त्रेण, अवनद्धाः=संयमिताः, मूर्धजाः=केशाः, यैस्तादृशैः, दण्डखण्डः=लघुर्दण्ड इत्यर्थः। पाणौ=करे, येषां तैः। क्रूरकर्मोचितः आकारो येषां तैः। वागुरा=मृगबन्धनी रज्जुस्तां वहन्ति=धारयन्तीत्येवंशीलैः; 'वागुरा मृगबन्धनी' इत्यमरः। पाशहस्तैः, कृतान्तदूतैरिव=यमराजदूतैरिव, अनन्तैः=असंख्यैः, पापर्द्धिकैः=आखेटकैः, अनुगम्यमानः, दूरात्=विप्रकृष्टस्थानादेव उन्नमिता=ऊर्ध्वीकृता, कन्धरा=ग्रीवा यैस्तादृशैः। तथा=किं च, ऊर्ध्वौ=उद्गतौ, कर्णसंपुटौ येषां तादृशैः। अकाण्डे=अनवसरे, उड्डीनाः=उत्पतिताः, प्राणा येषां तादृशैरिव, वनप्राणिभि=वनजन्तुभिः। आकर्ण्यमानः=श्रूयमाणः, हर्षितानां=मुदितानां, हयानाम्=अश्वानां, हेषारवः=ह्रेषाध्वनिर्यस्य सः। पवनेन=वायुना, कम्पिता=आन्दोलिता ये तरुशाखाग्रपल्लवाः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेषां व्याजेन=छलेन, दूरादेव, उत्क्षिप्तहस्ताभिः–उत्क्षिप्ताः=उन्नमिताः, हस्ताः=कराः, याभिस्तादृशीभिः। वनदेवताभिः=वनाधिष्ठातृदेवीभिः, उड्डीयमानानाम्=उत्पततां, शकुनिकुलानां=खगवृन्दानां, कोलाहलच्छलेन=कलकलध्वनिव्याजेन, भयात्=त्रासात्, निवार्यमाण इव=निरुध्यमान इव, अभिमुखं=संमुखम्, आगतैः=प्राप्तैः, उन्मिषन्=विकसन्, यः तरूणां=वृक्षाणां, पुष्पप्रकरः=कुसुमपुञ्जः तस्य ये मकरन्दबिन्दवः=रसकणाः, तेषां वर्षं=वृष्टिं, वहन्ति=धारयन्तीत्येवंशीलैः। वनविनाशस्य=विपिनसंहारस्य, शङ्का=सन्देहः येषां तैः। अर्घ्यमिव=पूजोपहारमिव, उपपादयद्भिः=ददद्भिः, वनमारुतैः=विपिनपवनैः, उपरुध्यमान इव=अनुनीयमान इव, उन्निद्राणां=विकसितानां, सान्द्राणां=घनानां, कुसुमानां=पुष्पाणां, केसराङ्कुरजालैः=परागकोशाङ्कुरसमूहैः, जटिलाभिः=व्याप्ताभिः, भयात्=त्रासाद्धेतोः, उद्गतः=उद्भूतः, रोमाञ्चस्य=पुलकस्य, प्रपञ्चः=विस्तारः यासां तादृशीभिरिव वनवीरुद्भिः=विपिनलताभिः, उद्भ्रान्तानाम्=उत्पतितानां, भृङ्गाणां=मधुपानां, रवः=ध्वनिरेव गद्गदरुदितेन=विह्वलतापूर्णक्रन्दनेन, निषिध्यमान इव=निवार्यमाण इव, उद्भिन्नानि=प्रस्फुटितानि, भास्वन्ति=दीप्तिमन्ति, अमन्दानि=अनल्पानि यानि कन्दलानि=नवाङ्कुराः, तेषाम्=अवलोकनेन=प्रेक्षणेन, आनन्द्यमानः=प्रसाद्यमानः, श्वभिः=कुक्कुरैः, अनुगतः=अनुसृतोऽपि अश्वानुगतः। न श्वभिरनुगत इति विरोधः; अश्वैः=वाजिभिरनुगत इति परिहारः। गजैः=हस्तिभिः, सहितमपि अगजम्=न गजाः यस्मिंस्तत्तादृशमिति विरोधः, अगः=पर्वतः तत्र जातमिति परिहारः। तदरण्यं=तच्छूकराधिष्ठितं वनम्, आससाद=प्राप। श्वानुगतोऽप्यश्वानुगतः, सगजमप्यगजमिति विरोधाभासोऽलङ्कारः। कृतान्तदूतैरिवेत्यादावुत्प्रेक्षा, शाखाग्रपल्लवव्याजेनेत्यादौ चापह्नुतिः॥

ज्योत्स्ना–उस घोड़े पर आरूढ़ होकर क्रमशः अपने बालों को रक्त वस्त्र से नियन्त्रित किये हुए, हाथ में छोटे-छोटे डण्डे लिए हुए, क्रूर कार्यों को करने लायक वेष धारण किये हुए, मृगों को फँसाने लायक जाल लिये हुए, यमराज के दूतों के समान हाथों में पाश (फंदा) लिये हुए, शिकारियों से अनुगमन किये जाते हुए, दूर से ही गर्दनों तथा कानों को ऊपर की ओर उठाये हुए, असमय में ही मानों प्राणों के उड़ते हुए वन्य प्राणियों द्वारा प्रसन्न घोड़ों की ह्रेषा ध्वनि (हिनहिनाहट) को सुनते हुए, वायु के द्वारा कम्पायमान वृक्षों की टहनियों के अग्रभाग पर स्थित पल्लवों के बहाने से दूर से हाथों को ऊपर उठाये हुए, उड़ते हुए पक्षियों के कलरव के बहाने से मानों भय से वनदेवियों द्वारा रोके जाते हुए, सामने से आते हुए विकसित वृक्ष-पुष्पों के पराग-कणों की वृष्टि को ढोने वाले, वन के विनाश से सशंकित होने के कारण अर्घ्य-सा देते हुए, जंगल में चलने वाली हवा द्वारा घेरे जाते हुए, विकसित घने पुष्पों के पराग-कोश के अंकुर-समूहों से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्याप्त, भय के कारण रोमाञ्चित वनलताओं के ऊपर से उड़ते हुए भ्रमरों के-गुञ्जाररूप विह्वलता से परिपूर्ण क्रन्दन द्वारा मानों रोके जाते हुए, प्रस्फुटित होते हुए चमकीले अपरिमित नवीन अंकुरों को देखकर आनन्दित, श्वानों (कुत्तों) से अनुगत होते हुए भी घोड़ों से अनुगत, हाथियों से युक्त होते हुए भी पहाड़ों और वृक्षों से उत्पन्न होने वाले उस शूकर के रहने वाले जंगल को प्राप्त किया अर्थात् उस जंगल में पहुँच गया ।।

ततश्च केचिदुद्यत्परश्वधा गणपतयः, केऽपि दृष्टसिंहिकासुतविक्रमाः शशधराः, केऽपि पाशपाणयो जम्बुकदिक्पालाः, केऽपि हरिमार्गानुसारिणो बलभद्राः, केऽपि चक्रपाणयो मधुसूदनाः, केऽपि शिवागमावर्तिनो रौद्राः, केऽप्याहिताग्नयो विप्रलोकाः, केऽपि खण्डिताञ्जनाधरप्रवालाः प्रभञ्जनाः, केऽप्युत्खातदन्तिदन्तमुष्टयो निस्त्रिंशाः, तस्य पृथ्वीपतेराकुलितश्वापदाः पदातयो वनं रुरुधुः ।।

कल्याणी—ततश्चेति । ततः=तदनन्तरं च, तस्य, पृथिवीपतेः=नलस्य, आकुलितश्वापदाः—आकुलिताः=उद्वेगं प्रापिताः, श्वापदाः=वन्यहिंस्रजन्तवः यैस्ते पदातयः=पत्तयः, वनं रुरुधुः । कीदृशास्ते पदातय इत्याह—केचिदिति । केचित्, उद्यत्-पर-श्व-धाः—उद्यन्तः=पलायमानाः, परे=उत्कृष्टाः ये श्वानस्तान् दधति=धारयन्तीति तथोक्ताः, गणपतयः=सेनाध्यक्षाः । पक्षे उद्यत्-परश्वधाः—उद्यन्तः=ऊर्ध्वं गच्छन्तः, परश्वधाः=परशवः येषां ते गणपतयः=हेरम्बाः । केऽपि=केचित्, दृष्टसिंहिकासुतविक्रमाः—दृष्टः=परीक्षितः, सोढ इत्यर्थः । सिंहिकासुतानां=केसरिकिशोराणां, विक्रमः=पराक्रमः, यैस्ते शशधराः—शशान्=शशकान्, धरन्ति=धावन्तः गृह्णन्तीति ते तादृशाः । पक्षे—दृष्टः सिंहिकासुतस्य=राहोर्विक्रमः यैस्ते शशधराः=चन्द्रमसः । केऽपि=केचित्, पाशपाणयः=पाशहस्ताः, जम्बुकदिक्पालाः—जम्बुकानां=शृगालानां, दिशं, पालयन्ति=प्रतीक्षन्त इति तथोक्ताः । पक्षे—जम्बुकः=वरुणः तस्य दिशं=प्रतीचीं, पालयन्ति=रक्षन्तीति ते पाशपाणयः=वरुणाः, 'जम्बुको क्रोष्टुवरुणौ' इत्यमरः । केऽपि=केचित्, हरिमार्गानुसारिणः—हरिं=सिंहं, मार्गं=मृगं, चानुसरन्तीत्येवंशीलाः, बलभद्राः—बलेन, भद्राः=प्रशस्ताः । पक्षे—हरेः=कृष्णस्य, मार्गम्=अध्वानम् अनुसरन्तीत्येवंशीलाः, बलभद्राः=बलदेवाः । केऽपि=केचित्, चक्रं पाणौ येषां ते मधुसूदनाः-मधु=क्षौद्रं, सूदयन्ति=क्षारयन्तीति तथोक्ताः । पक्षे—चक्रपाणयः=सुदर्शनचक्रहस्ताः, मधुसूदनाः—मधुं=तन्नामानं दैत्यं, सूदयन्ति=घ्नन्तीति मधुसूदनाः=विष्णव इत्यर्थः । केऽपि=केचित्, शिवागमावर्तिनः—शिवानां=शृगालीनाम्, आगमाय=अधिग्रहणाय, आवर्तन्ते=भ्राम्यन्तीत्येवंशीलाः, रौद्राः=भयङ्कराः । पक्षे—शिवागमावर्तिनः=शिव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्रानुयायिनः, रौद्राः=शैवाः। केऽपि=केचित्, आहिताग्नयः—आहितः=गृहीतः, अग्नियैस्ते वि-प्रलोकाः—वीन्=पक्षिणः, प्रलोकयन्ति=पश्यन्तीति तादृशाः। पक्षे—आहितः=आधानसंस्कारेण स्थापितः, अग्नियैस्ते तथोक्ताः, अग्निहोत्रिण इत्यर्थः। विप्र-लोकाः=ब्राह्मणजनाः। केऽपि, खण्डिताञ्जनाधरप्रवालाः—खण्डिताः = छिन्नाः, अञ्जनानाम्=अञ्जनवृक्षाणाम्, अधरप्रवालाः=अधःपल्लवा, यैस्ते प्रभञ्जनाः=प्रकर्षेण भञ्जनाः, प्रबलपीडादायिनः। पक्षे—खण्डितः=दष्टः, अञ्जनायाः=तन्नाम्न्याः स्वप्रियायाः, अधरप्रवालः=अधरोष्ठकिसलयः यैस्ते प्रभञ्जनाः=वायवः। केऽपि, उत्खातदन्तिदन्तमुष्टयः, उत्खाताः = उद्धृताः, दन्तिनां=गजानां, दन्ताः मुष्टौ येषां ते तथाविधाः। निस्त्रिंशाः=निर्दयाः, पक्षे—उत्खातदन्तिदन्तानाम्=उत्क्षिप्त-गजदन्तानां, मुष्टिः=त्सरुः येषु ते निस्त्रिंशाः=खड्गाः। अत्र विषयस्य (उपमेयस्य) निगरणेन निगीर्णस्वरूपविषयेण पदातिना सह विषयिणः (गणपत्यादिरूपोपमानस्य) अभेदप्रतिपादनादतिशयोक्तिरलङ्कारः। विषयस्य (उपमेयस्य) पदातेरत्रोपादानेऽप्यधःकरणमात्रेण निगीर्णत्वं ज्ञेयम्। यथोक्तम्—'विषयस्यानुपादानेऽप्युपादानेऽपि सूरयः। अधःकरणमात्रेण निगीर्णत्वं प्रचक्षते ॥इति ॥

ज्योत्स्ना—उसके बाद उन राजा नल के वन्य-प्राणियों को उत्तेजित करने वाले पैदल शिकारियों ने वन में प्रवेश किया, (वे शिकारी-गण किस प्रकार के थे, इसे बतलाते हैं कि—) उनमें से कुछ सैन्य टुकड़ियों के नायक कुठार को धारण किये हुए तैयार गणपति (गणेश) के समान भागते हुए उत्तम नस्ल के कुत्तों को लिए हुए थे, कुछ लोग सिंहिका-सुत (राहु) का पराक्रम देख चुके चन्द्रमा के समान सिंहिनी के शावक (बच्चे) का पराक्रम देख चुके और खरगोशों को पकड़े हुए थे, कुछ लोग हाथों में पाश को धारण किये हुए जम्बुक (वरुण) की दिशा अर्थात् पश्चिम दिशा के स्वामी वरुण के समान अपने हाथों में पाश लिए हुए जम्बुक (शृगालों) के आने-जाने के मार्ग पर प्रतीक्षारत थे, कुछ लोग हरि (श्रीकृष्ण) के मार्ग का अनुसरण करने वाले बलभद्र (बलदेव) के समान हरि (सिंह) के मार्ग का अनुसरण करते हुए बलभद्र (बल से सम्पन्न—शक्तिशाली) थे, कुछ लोग चक्रपाणि (हाथों में चक्र धारण करने वाले) मधुसूदन (मधु नामक दैत्य को मारने वाले—विष्णु) के समान अपने हाथों में चक्र लेकर मधुमक्खियों के छत्तों से मधु (शहद) चुवा रहे थे, कुछ लोग शैवागम (शैव दर्शन) का अनुगमन करने वाले रौद्रों (शैवों) के समान शैव (शृगालों) के आने वाले मार्गों पर उन्हें पकड़ने के लिए इधर-उधर घूमते हुए (देखने में) रौद्र (अत्यन्त भयंकर) प्रतीत होते थे, कुछ लोग आहिताग्नि (अग्निहोत्री) ब्राह्मणों के समान अग्नि को गृहीत कर (तापते हुए) उसमें पक्षियों को तप्त कर रहे थे—जला रहे थे, कुछ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोग अञ्जना नामक अपनी प्रिया के अत्यन्त कोमल अधरों का पान करने वाले प्रभञ्जन (वायु) के समान अञ्जन नामक वृक्ष के पल्लवों को तोड़ने के कारण अत्यन्त पीड़ादायक प्रतीत हो रहे थे, कुछ लोग उखाड़े गये हाथी के दाँतों से निर्मित मूठ वाली (निस्त्रिंश) तलवार के समान निस्त्रिंश (निर्दय) थे और अपनी मुट्ठी मे हाथियों के दाँतों को उखाड़ कर लिए हुए थे ॥

ततश्च तैः क्रियन्ते विकलभा वननिकुञ्जाः कुञ्जराश्च, ध्रियन्तेऽनेकधारयातिपातिनः खड्गा खड्गिनश्च, कृष्यन्ते कूजनकोदण्डदण्डा गण्डकाश्च; विक्षिप्यन्ते परितः शराः शरभाश्च, भज्यन्ते तरवस्तरक्षवश्च ॥

कल्याणी—ततश्चेति । ततः=तदनन्तरं च, तैः=पदातिभिः, वननिकुञ्जाः, कुञ्जराश्च=गजाश्च, विकलभाः-विकलाः=क्षीणाः, भाः=कान्तिर्येषां तादृशाः, विगता=मृताः, कलभाः=शावकाः येषां तादृशाश्च क्रियन्ते । [अनेकधारया+अतिपातिनः] द्विधारत्वादनेकया धारया अतिपतन्ति=आक्रामन्तीत्येवंशीलाः खडगाः, [अनेकधा+अतिपातिनः] अनेकधा=बहुधा, रयेण=वेगेन, अतिपतन्ति=आक्रामन्तीत्येवंशीलाः खड्गिनश्च=प्रौढगण्डकाश्च, ध्रियन्ते=गृह्यन्ते । कूजन्तः=शब्दं कुर्वन्तः, कोदण्डदण्डाः=धनुर्दण्डाः, गण्डकाश्च=गण्डकशावकाश्चेत्यर्थः । कृष्यन्ते=धनुर्दण्डा नताः क्रियन्ते, गण्डकाश्च भुवि लुठन्तः=नीयन्त इत्यर्थः । शराः=बाणाः, शरभाश्च=अष्टापदहिंस्रजन्तुविशेषाश्च, परितः, विक्षिप्यन्ते=विप्रकीर्यन्ते । परितः शरप्रक्षेपाः क्रियन्ते, येन भयाच्छरभाः परितः पलायमाना दृश्यन्त इति भावः । तरवः=वृक्षाः, तरक्षवः=चित्रकनामानो हिंस्रजन्तुविशेषाश्च, भज्यन्ते=विनष्टाः क्रियन्ते । श्लेषानुप्राणिता तुल्ययोगिताऽलङ्कारः ।

ज्योत्स्ना—तदनन्तर उन पैदल शिकारियों द्वारा वन की निकुञ्जें (झाड़ियाँ) कान्तिहीन की जा रही थीं और हाथी अपने बच्चों से रहित किये जा रहे थे अर्थात् वे हाथियों के बच्चों का वध कर रहे थे, अनेक धाराओं से आक्रमण करने वाले अथवा दोनों तरफ धार वाले तलवारों को धारण किये हुये थे और बहुत तेजी से आक्रमण करने वाले गैंड़े पकड़े जा रहे थे, शब्दायमान (टंकार करते हुए) धनुर्दण्ड झुकाये (खींचे) जा रहे थे और चीत्कार करते हुए गैंड़ों के बच्चे पकड़े जा रहे थे, चारो ओर बाण प्रक्षिप्त किये (फेंके) जा रहे थे और शरभनामक जन्तु भगाये जा रहे थे अर्थात् उनके द्वारा चारो ओर बाणों की बौछार किये जाने के कारण भय से शरभ नामक आठ पैरों वाले जंगली जीव भागते हुए दिखलाई पड़ रहें थे तथा वृक्ष और तरक्षु (सर्प) विनष्ट किये जा रहे थे ॥

क्षणेन च पतन्ति पीवरा, वराहाः, सीदन्ति दन्तिनः, विरसं रसन्ति सातङ्का रङ्कवः, प्रकाशैलं शैलं भयादारोहन्ति रोहिताः, शरसंघातघूर्णिताः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यान्ति महीं महिषाः, दुर्गसंश्रयं श्रयन्ते तरलितनेत्राश्चित्रकाः, त्वरितसरं तरन्तीवोत्पतन्तो नभसि निजजवनिर्जिततुरङ्गाः कुरङ्गाः ॥

कल्याणी—क्षणेन चेति। क्षणेन=क्षणमात्रेणैव च, पीवराः=स्थूलशरीराः, वराहः=शूकराः, पतन्ति, भूमाविति शेषः। दन्तिन=गजाः, सीदन्ति=नश्यन्ति, रङ्कवः=मृगाः, सातङ्काः=सभयाः, विरसम्=अप्रियं, करुणमिति यावत्। रसन्ति=शब्दं कुर्वन्ति। रोहिताः=रोहितमृगाः, भयात्=त्रासात्, प्रकाशाः=स्पष्टाः, एलाः=एलालताः यत्र तं शैलं=पर्वतम् आरोहन्ति=आरूढा भवन्ति। शरसंघातघूर्णिताः- शरसंघातेन=बाणनिकरेण, घूर्णिताः=स्खलिताः, महिषाः=सैरिभाः, महीं यान्ति=भूमौ पतन्ति। तरलितनेत्राः—तरलिते=भयाच्चञ्चले, नेत्रे येषां ते चित्रकाः=तरक्षवः, दुर्गसंश्रयं श्रयन्ते=गिरिगुहादिशरणस्थलं यान्ति। त्वरिततरम्=सत्वरम्, उत्पतन्तः=उत्प्लवमानाः, निजजवेन=स्ववेगेन, निर्जिताः=तिरस्कृताः, तुरङ्गाः=अश्वाः, यैस्तादृशाः कुरङ्गाः=हरिणाः, नभसि=आकाशे, तरन्तीव=तरणं कुर्वन्तीव। 'वरा—वरा, दन्ति—दन्ति, शैलम्—शैलम्, रंगाः—रंगाः' इति यमकम्। नभसि तरन्तीवेत्यत्रोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—फिर कुछ ही क्षण बाद मोटे-मोटे शूकर (भूमि पर) गिरने लगे, हाथी विनष्ट होने लगे, भयभीत हरिण अप्रिय शब्द करने लगे अर्थात् करुण-क्रन्दन (चित्कार) करने लगे, रोहित मृग भय के कारण स्फुट एला-लताओं से युक्त पर्वत पर चढ़ने लगे, बाण के आघात से मूर्च्छित भैंसे पृथ्वी पर लोटने लगे, भय से चञ्चल आँखों वाले चित्रक चीता) पर्वत की गुफाओं में आश्रय लेने लगे और अत्यन्त शीघ्रता से उछलने के कारण अपने वेग से घोड़ों को भी तिरस्कृत करने वाले हरिण मानों आकाश में तैरने लगे ॥

तत्र च व्यतिकरे,

जाताकस्मिकविस्मयैः किमिदमित्याकर्ण्यमानः सुरैः
सन्त्रासोज्झितकर्णतालचलनान् दिग्दन्तिनः कम्पयन्।
जन्तूनां जनितज्वरः स मृगयाकोलाहलः कोऽप्यभू-
द्येनेदं स्फुटतीव निर्भरभृतं ब्रह्माण्डभाण्डोदरम् ॥४८॥

अन्वयः—(तत्र च व्यतिकरे) जाताकस्मिकविस्मयैः सुरैः किमिदं इति आकर्ण्यमानः सन्त्रासोज्झितकर्णतालचलनान् दिग्दन्तिनः कम्पयन् जन्तूनां जनितज्वरः कोऽपि सः मृगयाकोलाहलः अभूत्, येन निर्भरभृतम् इदं ब्रह्माण्डभाण्डोदरं स्फुटतीव ॥४८॥

कल्याणी—जातेति। (तत्र च व्यतिकरे=तथाविधे वृत्ते सति) जातः=समुत्पन्नः, आकस्मिकः=अकस्मादागतः, विस्मयः=आश्चर्यं येषां तैः सुरैः=देवैः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किमिदं=किमेतदिति, आकर्ण्यमाणः=श्रूयमाणः, सन्त्रासाद्=भयाद्, उज्झितं=परित्यक्तं, कर्णतालचलनं=श्रोत्रसञ्चरणं यैस्तान् दिग्दन्तिनः=दिग्गजान्, कम्पयन्=भयाच्चालयन्, जन्तूनां=प्राणिनां, जनितः=उत्पादितः, ज्वरः=तापः येन सः, कोऽपि=अश्रुतपूर्वः, सः=तादृशः, मृगयाकोलाहलः=आखेटकलकलः, अभूत्=जातः। येन निर्भरभृतम्=अतिशयपूर्णम् इदं ब्रह्माण्डमेव भाण्डं=पात्रं, तस्य उदरम्=अभ्यन्तरं, स्फुटतीव=विदीर्यत इव तत्कोलाहलस्यामितत्वादिति भावः। अतिशयोक्तिरलङ्कारः। स्फुटतीवेत्यत्रोत्प्रेक्षा। तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४८॥

ज्योत्स्ना—और इसी बीच में अचानक आश्चर्य में पड़े हुए देवताओं द्वारा "यह क्या है" इस प्रकार सुने जाते हुए, भय के कारण कानों को फड़फड़ाना बन्द कर देने वाले दिग्गजों (हाथियों) को कम्पायमान करता हुआ, प्राणियों में ज्वर को उत्पन्न करने वाला शिकार का एक अभूतपूर्व कोलाहल वहाँ पर उत्पन्न होने लगा, जिससे यह समस्त ब्रह्माण्डरूपी भाण्ड (पात्र) का उदर (उस कोलाहल को अपने में समाहित न कर पाने के कारण) मानों विदीर्ण-सा होने लगा ॥४८॥

राजाऽप्येकशरप्रहारपातितमत्तमातङ्गः सर्वतो विहारिहरिहरिणशशकशम्बरवराहहननहेलया विचरन्नितस्ततस्तरुणतरतमालमञ्जरीजालनीलोद्धुषितस्कन्धकेसरमूर्ध्वस्तब्धकर्णसंपुटमश्वचक्राय क्रुध्यन्तमाघूर्णितघोणमनवरतकृतघनघोरघर्घररवमुत्क्षिप्तपुच्छगुच्छमभिमुखमेकस्मिन्नतिसान्द्रभद्रमुस्तास्तम्बभाजि पङ्किलपल्वलप्रदेशे तं शूरशूकरमपरमिव दवदहनदग्धाद्रिमद्राक्षीत् ॥

कल्याणी—राजाऽपीति। राजा=नलोऽपि, एकस्यैव, शरस्य=बाणस्य, प्रहारेण=आघातेन, पातिताः=हताः, मत्तमातङ्गाः=मदोन्मत्तगजाः येन सः। सर्वतः=समन्ताद्, विहारिणः=विहरणशीला ये हरयः=सिंहाः, हरिणाः=मृगाः, शशकाः, शम्बराः=मृगविशेषाः, वराहाः=शूकराश्च, तेषां हननहेलया=वधलीलया, इतस्ततः विचरन्=भ्रममाणः, तरुणतरस्य तमालवृक्षस्य, मञ्जरीजालं=किसलयाङ्कुरसमूह इव, नीलाः=कृष्णवर्णाः, उद्धुषिताः=ऊर्ध्वमुखाः, स्कन्धकेसराः=अंससटाः यस्य तम्, ऊर्ध्वौ=उद्गतौ, स्तब्धौ=निश्चलौ च कर्णसंपुटौ यस्य तम्, अश्वचक्राय=वाजिसमूहाय, क्रुध्यन्तं=कुप्यन्तम्, आघूर्णिताः=इतस्ततः भ्रान्ताः, घोणा=नासिका यस्य तम्, अनवरतं=सततं, कृतः घनः=सान्द्रः, घोरः=भीषणः घर्घररवः=घर्घरध्वनिर्येन तम्, उत्क्षिप्तः=ऊर्ध्वं नीतः, पुच्छगुच्छः येन तम्, अभिमुखम्=पुरतो विद्यमानम्, एकस्मिन्=कस्मिंश्चिद्, अतिसान्द्रान्=अत्यन्तघनीभूतान्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भद्रमुस्तास्तम्बान्=भद्रमुस्तानां तृणविशेषाणां पुञ्जान् भजत इति तस्मिन् । पङ्किल-पल्वले=पङ्कयुक्तलघुजलाशये, अपरम्=अन्यं, दवदहनदग्धाद्रिमिव—दवदहनेन=वनवह्निना दग्धो योऽद्रिः=पर्वतस्तमिव तं=मृगयावनपालकेन पूर्ववर्णितं शूर-शूकरं=वीरवराहम्, अद्राक्षीत्=दृष्टवान् । स्वभावोक्तिरलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—एक ही बाण के आघात से मदोन्मत्त हाथी को भी धराशायी देने वाले राजा ने भी चारो तरफ सञ्चरण करने वाले सिंह, हरिण, खरगोश, शम्बर मृग और शूकर को मारने की इच्छा से इधर-उधर भ्रमण करते हुए अतिनूतन तमाल वृक्ष के मंजरीसमूह के समान स्कन्धदेश के काले-काले बालों को ऊपर की ओर उठाये हुए तथा स्तब्ध कानों को ऊपर की ओर खड़े किये हुए, अश्वसमूह के प्रति क्रोध व्यक्त करते हुए, नासिका को इधर-उधर चलायमान करते हुए, निरन्तर अत्यन्त भीषण घर्घर ध्वनि (घुरघुराहट की आवाज) करते हुए, पूंछ के गुच्छे को ऊपर की ओर फेंकते हुए, सामने ही विद्यमान किसी अत्यन्त घने मुस्ता से सुशोभित, पंक-(कीचड़)-युक्त छोटे जलाशय में वनाग्नि से दग्ध दूसरे पर्वत के समान आखेट-वनरक्षक के द्वारा वर्णित उस वीर शूकर को देखा ॥

दृष्ट्वा च रचितशरसन्धानलाघवो राघव इव राक्षसेश्वरस्य तस्योपरि परिणद्धविविधपत्त्रैः पतत्त्रिभिरभ्यवर्षत् ॥

कल्याणी—दृष्ट्वा चेति । दृष्ट्वा च तं शूरशूकरम्, रचितं=कृतं, शरसन्धानस्य=बाणारोपणस्य, लाघवं=कौशलं येन स नलः, राघवः=राम इव, राक्षसेश्वरस्य=रावणस्य, तस्य=शूकरस्य, उपरि, परिणद्धानि=बद्धानि, विविधानि पत्त्राणि=पक्षा येषु तादृशैः पतत्त्रिभिः=शरैः, अभ्यवर्षत्=वृष्टिमकरोत् । उपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—उस (वीर शूकर को) देखकर ही शरसन्धान में कुशल (राजा नल ने) राक्षसराज रावण पर (बाणवर्षा करने वाले) राम के समान उस शूकर के ऊपर अनेक पंखों से युक्त बाणों की बौछार कर दिया ॥

तत्र च व्यतिकरे,

किमश्वः पार्श्वेषु प्लवनचतुरः किं नु नृपतिः
शरान्मुञ्चन्नुच्चैश्चलतरकराकृष्टधनुषा ।
किमालोलः कोलः परिहृतशरः शौर्यरसिको
न जानीमस्तेषां क इह परमो वर्ण्यत इति ॥४९॥

अन्वयः—(तत्र च व्यतिकरे) किं पार्श्वेषु प्लवनचतुरः अश्वः किं नु उच्चैः चलतरकराकृष्टधनुषा शरान् मुञ्चन् नृपतिः किं परिहृतशरः शौर्यरसिकः आलोलः कोलः, तेषां कः इह परमः वर्ण्यत इति न जानीमः ॥४९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—किमश्व इति । (तत्र च व्यतिकरे=तथाविधे वृत्ते सति), किम्, पार्श्वेषु=पार्श्वभागेषु, प्लवनचतुरः-प्लवने=उत्पतने, चतुरः=निपुणः, अश्वः=तुरंगः किं नु=किं वा, उच्चैः=अत्यन्तं, चलताभ्यां=चञ्चलाभ्यां, कराभ्यां=हस्ताभ्याम्=आकृष्टं यद् धनुः=चापः तेन, शरान्=बाणान्, मुञ्चन्=उपक्षिपन्, नृपतिः=भूपः नलः, किं=किंवा, परिहृतशरः-परिहृताः=निवारिताः, मोघीकृता इति यावत् । शराः=बाणाः येन तादृशः । शौर्यरसिकः=वीररसरसिकः, महाञ्छूर इति यावत् आलोलः=चञ्चलः, कोलः=शूकरः, तेषां=अश्वनृपतिशूकराणां, कः=कतमः, इह=नृपतिशूकरयुद्धे, परमः=सर्वोत्कृष्टः वर्ण्यत इति, न, जानीमः=विद्मः । शिखरिणीवृत्तम् । तल्लक्षणं यथा-'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी' इति ॥४९॥

ज्योत्स्ना—उस स्थिति में, समीप ही उछलने में निपुण घोड़ा अथवा चपल हाथों से आकृष्ट किये (खींचे) गये धनुष से तीव्र बाणों को प्रक्षिप्त करता हुआ राजा (नल) अथवा बाणों को (अपने लक्ष्य से) विफल करता हुआ बीर रसरसिक अर्थात् महान् शूर वह चंचल शूकर ? इनमें से इस (राजा और शूकर के युद्ध) में किसको सर्वोत्कृष्ट कहा जाय—यह समझ में नहीं आ रहा था अर्थात् यह निर्धारित करना अत्यन्त कठिन था कि नल और शूकर में श्रेष्ठ कौन था ॥४९॥

अपि च—

अजनि जनितपृथ्वीमण्डलोत्पादकम्पं
किमपि चलितशैलं द्वन्द्वयुद्धं तयोस्तत् ।
स्खलिततुरगवेगो विस्मयेनैष यस्मिन्
दिनपतिरपि शौर्याश्चर्यसाक्षी बभूव ॥५०॥

अन्वयः—तयोः जनितपृथ्वीमण्डलोत्पादकम्पं चलितशैलं किमपि तत् द्वन्द्वयुद्धं अजनि, यस्मिन् विस्मयेन स्खलिततुरगवेगः एषः दिनपतिः अपि शौर्याश्चर्यसाक्षी बभूव ॥५०॥

कल्याणी—अजनीति । तयोः=नलशूकरयोः, जनितः=कृतः, पृथ्वीमण्डले=भूमण्डले, उत्पादैः=पादप्रहारैः, कम्पो येन तत् । चलिताः=कम्पिताः, शैलाः=गिरयः, येन तत् । किमपि=अनिर्वचनीयं तद्, द्वन्द्वयुद्धम्, अजनि=जातम्, यस्मिन्, विस्मयेन=आश्चर्येण, स्खलितः=निवारितः, तुरगानाम्=अश्वानां, वेगः=जवः, येन सः । एषः दिनपतिः=सूर्योऽपि, शौर्याश्चर्यसाक्षी=अद्भुतशौर्यस्य साक्षाद् द्रष्टा, बभूव । अत्र दिनपतेः स्खलिततुरगवेगत्वासम्बन्धेऽपि तत्सम्बन्धवर्णनादतिशयोक्तिरलङ्कारः । मालिनी वृत्तम् ॥५०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी, उन दोनों (राजा नल और वीर शूकर) में अपने-अपने पाद-प्रहारों से भूमण्डल में कम्पन उत्पन्न कर देने वाला तथा पर्वतों को भी चलायमान कर देने वाला अनिर्वचनीय द्वन्द्व युद्ध हुआ, जिसमें आश्चर्य के कारण अपने अश्वों की गति को अवरुद्ध (रोक) कर भगवान् सूर्य भी उन दोनों के अद्भुत शौर्य के साक्षी बन गये ।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि उस युद्ध में राजा और महा बलशाली शूकर की गति इतनी ज्यादा तीव्र थी कि सूर्य भी रुक-सा गया था ।।५०।।

अथ कथमपि नाथं प्रोथियूथस्य जित्वा
ज्वरित इव विशालं सालसः सालमूले ।
सुखमभजत राजा राजमानः श्रमाम्भः—
कणकलितकपोलालोललीलालकेन ॥ ५१ ॥

अन्वयः—अथ कथमपि विशालं प्रोथियूथस्य नाथं जित्वा ज्वरित इव सालसः राजा सालमूले श्रमाम्भःकणकलितकपोलालोकलीलालकेन राजमानः (सन्) सुखम् अभजत ॥५१॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरं, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः । विशालं=महाकायं, प्रोथियूथस्य=वराहकुलस्य, नाथं=स्वामिनं, वराहश्रेष्ठमिति यावत् । जित्वा=पराजित्य, ज्वरित इव=ज्वरयुक्त इव, सालसः=स्फूर्तिहीनः; अत्र अलसशब्दो भावप्रधान इति ज्ञेयम् । राजा=नरपतिर्नलः, सालमूले=सालतरोरधस्तात्, श्रमाम्भःकणैः=श्रमजनितस्वेदजलबिन्दुभिः, कलितौ=युक्तौ, यौ कपोलौ=गण्डप्रदेशौ, तयोः लोलेन=चञ्चलेन, लीलालकेन=ललितकुन्तलेन, राजमानः=शोभमानः सन्, सुखम्=आनन्दम्, अभजत=अवाप्नोत्, सुखमुपाविशदिति भावः । ज्वरित इव सालस इत्यनेन श्रमातिशयो व्यज्यते, अन्योऽपि ज्वरितो मूलादिसेवनेन संजातस्वेदतया ज्वरमुक्तो राजते । मलिनी वृत्तम् ॥५१॥

ज्योत्स्ना—इसके बाद किसी प्रकार अत्यन्त कष्टपूर्वक उस महाकाय वाराहों के स्वामी को विजित कर ज्वराक्रान्त के समान स्फूर्ति से रहित राजा नल सालवृक्ष के नीचे परिश्रम के कारण उत्पन्न स्वेद-जल (पसीने) की बूंदों से समन्वित कपोल एवं चञ्चल सुन्दर बालों से सुशोभित होते हुए प्रसन्नतापूर्वक बैठ गये ।

विमर्श—आशय यह है कि उस द्वन्द्व युद्ध में राजा नल ने किसी प्रकार शूकर को पराजित तो कर दिया, लेकिन उसके लिए उन्हें इतना अधिक श्रम करना पड़ा कि वे पसीने से लथपथ हो गये और उनके बाल अस्त-व्यस्त हो गए । अतः अपनी थकान दूर करने के लिए वे उसी जगह एक सालवृक्ष के नीचे बैठ गये ॥५१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्र च स्थितं श्रममुकुलितनयनारविन्दम्, आन्दोलयन्तः कुसुमित-तरून्, तरलयन्तः शिखिशिखण्डमण्डलानि, ताण्डवयन्तस्तनुलतापल्लवनि-वहान्, वहन्तो वहन्निर्झरजलशिशिरशीकरनिकरान्, करालयन्तः कुटज-कुड्मलानि, मकरन्दबिन्दूनमुचो मन्दमानन्दयामासुः कम्पितनीपवनाः पवनाः ॥

कल्याणी—तत्र चेति। तत्र=सालमूले च, स्थितम्=उपविष्टं, श्रमेण=श्रान्त्या, मुकुलिते=निमीलिते, नयनारविन्दे=नेत्रकमले यस्य तं नृपं नलं, कुसुमित-तरून्=पुष्पितपादपान्, आन्दोलयन्तः=कम्पयन्तः, शिखिशिखण्डमण्डलानि=मयूरपिच्छचक्राणि, तरलयन्तः=चञ्चलीकुर्वन्तः, तनुलतापल्लवनिवहान्–तनुलतानां=कृशवल्लरीणां, पल्लवनिवहान्=पत्रसमूहान्, ताण्डवयन्तः=नर्तयन्तः, वहतां=प्रस्रवतां, निर्झराणां यानि जलानि तेषां, शिशिरशीकरनिकरान्=शीतलकणसमूहान्, वहन्तः=धारयन्तः, कुटजकुड्मलानि=कुटजकोरकाणि, करालयन्तः=विकासयन्तः, मकरन्दबिन्दून्=पुष्परसकणान्, मुञ्चन्ति=वर्षन्तीति तथोक्ताः, कम्पितानि=आन्दोलितानि, नीपवनानि=कदम्बकाननानि यैस्ते, पवनाः=वायवः, मन्दं=शनैः शनैः, आनन्दयामासुः=हर्षनिर्भरं चक्रुः। अत्रैकेषामेव पवनानामान्दोलनाद्यनेकक्रियाभि-सम्बन्धवर्णनाद् दीपकालङ्कारः। 'पवनाः–पवनाः' इति यमकम् ॥

ज्योत्स्ना—और उस शालवृक्ष के नीचे बैठे हुए परिश्रम के कारण अर्धनिमिलित (अधखुले) कमलसदृश नयनों वाले राजा नल को, पुष्पित वृक्षों को कम्पायमान करता (कँपाता) हुआ, मयूरों के पुच्छों को चञ्चल बनाता हुआ, पतली (कमनीय) लताओं के पल्लवों (कोमल पत्तों) को नचाता हुआ, प्रवहमान झरनों के शीतल बिन्दुओं (जलकणों) को धारण करता हुआ अथवा ढ़ोता हुआ, हुआ, कुटज पुष्प की कलियों को विकसित करता हुआ, पुष्प-रसकणों की वर्षा करता हुआ और कदम्ब-वृक्षसमूहों को आन्दोलित करता हुआ वायु धीरे-धीरे आनन्द प्रदान करने लगा ॥

अनन्तरमनवरतकरालकालकौलेयककुलकवलनाकुलितकोलकरिकुर-ङ्गकण्ठीरवकिशोरदृषत्पृष्ठधाविते परितः परिजने, जनितविविधमृगवधू-वैधव्याधीन्व्याधान्निवारयितुमिवान्तरान्तरा प्रसारितकरे मध्यस्थतां गतवति गभस्तिमालिनि, सहसंवर्धितमृगविनाशशोकभरादिव वनवीरुधां पतत्सु पुष्पलोचनेभ्यो बाष्पेष्विव मध्याह्नोष्णविलीनमकरन्दबिन्दुषु, श्रूयमाणेषु वनदेवतानां वनविमर्दोपालम्भेष्विव तरूखण्डोड्डीनविविधविहङ्गविरुतेषु, विघट्टितार्भककुरङ्गकुटुम्बिनीकरुणकूजितव्याजेनान्यायमिव पूत्कुर्वतीषु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वनराजिषु, इतस्ततः सञ्चरच्चटुलतरतुरङ्गखुरशिखरशिखोत्खातधरणिमण्डलाद्वनविनाशवार्तां गगनचरेभ्यः कथयितुमिवोत्पतितेऽम्बरतलमकृतपरित्राणे च मूर्च्छित इव पुनः पुनः पतति भुवि भवनपारावतपतत्रिपत्रधूसरे धूलिपटले, सकम्पकपिकलापोल्ललनलुलिततरुतरुणमञ्जरीपुञ्जनिकुञ्जादुद्वेजिते मञ्जु गुञ्जति वनान्तरमपरमुच्चलिते चञ्चलचञ्चरीकचक्रवाले, चङ्क्रमणक्रमेण च सम्पन्ने सैन्यस्य श्रमावसरे तस्यैव सरससरलशालद्रुमस्याधस्तान्निषण्णे श्रमभाजि राजनि ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरम्, अनवरतं=निरन्तरं, करालकाल इव=भयंकरमृत्युरिव, यत् कौलेयककुलं=श्वानवृन्दं, तस्य कवलनाय=भक्षणाय, आकुलिता=आतुरा ये कोलाः=शूकराः, करिणः=गजाः, कुरङ्गाः=हरिणाः, कण्ठीरवाणां=सिंहानां, किशोराः दृषदः प्रस्तरा इवेति किशोरदृषदः=बलवच्छादका इत्यर्थः। तेषां पृष्ठे=पश्चाद्, धाविते=वेगेन गते, परितः=सर्वतः, परिजने=पार्षद्धिकसमूहे, जनितः=समुत्पादितः, विविधानां, मृगवधूनां=हरिणीनां, वैधव्याधिः—वैधव्यमेवाधिः=मानसी व्यथा यैस्तादृशान्, व्याधान्=लुब्धकान्, निवारयितुमिव=निषेद्धुमिव, अन्तरा-अन्तरा=मध्ये-मध्ये, प्रसारितकरे=विस्तारितकिरणे, विस्तारितहस्ते च; गभस्तिमालिनि=सूर्ये, मध्यस्थतां गतवति=गगनमध्यवर्तिनि, दलद्वये पारस्परिककलहनिवारणाय मध्यस्थे च जाते, सहैव संवर्धितानां=पोषितानाम्, [एतेन स्वजनत्वोक्तिः] मृगाणां विनाशेन=वधेन यः शोकभरः=खेदातिशयस्तस्मादिव वनवीरुधां=काननवल्लरीणां, पुष्पाण्येव लोचनानि तेभ्यो बाष्पेष्विव=अश्रुष्विव, मध्याह्नोष्णेन=मध्याह्नकालिकतापेन, विलीनाः=तरलीभूताः, ये मकरन्दबिन्दवः=पुष्परसकणाः, तेषु पतत्सु, वनदेवतानां=काननाधिष्ठातृदेवीनां, वनविमर्देन=काननविनाशेन ये उपालम्भाः=उपालम्भयुक्तवचनानीत्यर्थः। तेष्विव तरुखण्डेभ्यः=वृक्षसमूहेभ्यः, उड्डीनानां=भयादुत्पतितानां, विविधविहङ्गानां=विविधपक्षिणां, विरतेषु=चीत्कारेषु, श्रूयमाणेषु=आकर्ण्यमानेषु, विघट्टिताः=विमर्दिताः, अर्भकाः=शावकाः यासां ताः, कुरङ्गकुटुम्बिन्यः=मृगवध्वस्तासां करुणकूजितव्याजेन=करुणक्रन्दनच्छलेन, वनराजिषु=काननपंक्तिषु, अन्यायमिव=अत्याचारमिव, पूत्कुर्वतीषु=निर्भर्त्सयन्तीषु, इतस्ततः सञ्चरतां=विहरतां, चटुलतरतुरङ्गाणां=चञ्चलवाजिनां, खुरशिखरशिखाभिः=खुरशिखराग्रभागैः, उत्खातं=क्षुण्णं यद् धरणिमण्डलं=धरातलं, तस्मात् वनविनाशस्य=अरण्यध्वंसस्य, वार्तां=वृत्तान्तं, गगनचरेभ्यः=आकाशचारिभ्यः, कथयितुमिव=निवेदयितुमिव, भवनपारावतपतत्रिणां=गृहकपोतपक्षिणां, पत्रवत्=पक्षवत्, धूसरे=धूमिलवर्णे, धूलिपटले=रजःपुञ्जे, अम्बरतलं=गगनमण्डलम्, उत्पतिते=उद्गते, न, कृतं=विहितं, परित्राणं=परिरक्षणं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यस्य तस्मिन्; तादृशे च मूर्च्छित इव=मोहं गत इव; पुनः पुनः=भूयोभूयः, भुवि=भूमौ, पतति सति, सकम्पः=कम्पोपेतः यः कपिकलापः=वानरवृन्दं, तस्य उल्लनेन=उत्कूर्दनेन, लुलितानां=कम्पितानां, तरुतरुणमञ्जरीणां=पादपपूर्णविकसितलतानां; ये पुञ्जाः=समूहास्तेषां यो निकुञ्जः=लतामण्डपस्तस्माद् उद्वेजिते=संक्षोभिते, मञ्जु=कलं, गुञ्जति=शब्दायमाने, अपरम्=इतरद्, वनान्तरं=विपिनाभ्यन्तरम्, उच्चलिते=प्रयाते, चञ्चलचञ्चरीकचक्रवाले=चपलभृङ्गसमूहे, चङ्क्रमणक्रमेण—चङ्क्रमणम्=पुनः-पुनरितस्ततो भ्रमणम्, तस्य क्रमेण=नैरन्तर्येण, सैन्यस्य=सेनायाः, श्रमावसरे सम्पन्ने जाते=सैन्ये श्रान्ति गते सतीत्यर्थः। तस्यैव सरसः=लावण्यमयः, सरलः=अवक्रः, यः शालद्रुमः=शालतरुस्तस्य अधस्तात्=अधःप्रदेशे, श्रमभाजि—श्रमं=श्रांति. भजते=प्राप्नोतीति श्रमभाक् तस्मिंस्तथोक्ते, श्रान्ते इत्यर्थः। राजनि=नृपे नले, निषण्णे=उपविष्टे सति ॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर निरन्तर भयंकर काल के समान कुत्तों को खाने के लिए व्याकुल शूकर, हाथी, मृग एवं सिंहों के पत्थर के समान बलशाली बच्चों के पीछे चारो तरफ परिजनों (शिकारियों) के भागने पर, अनेक हरिणियों के लिए वैधव्यरूप मानसिक व्यथा उत्पन्न करने वाले व्याघ्रों को रोकने के लिए मानों बीच-बीच में किरणरूप हाथों को फैलाये हुए गभस्तिमाली (भगवान् सूर्य) के मध्य आकाश में चले जाने पर अथवा दोनों पक्षों के झगड़े को समाप्त कराने के लिए मध्यस्थ बन जाने पर, एक साथ ही पोषित मृगों के विनाशरूपी शोकभार से वृक्षलताओं द्वारा अपने पुष्परूपी आँखों से आँसुओं के समान मध्याह्नकालिक (दोपहर में होने वाली) गर्मी के कारण तरलीभूत पुष्प-रसकणों के गिराये जाने पर, वनदेवियों के द्वारा वनों के विनाश के कारण उलाहना देते हुए वचनों के समान वृक्षों के ऊपर से उड़ते हुए अनेकों पक्षियों के चित्कार सुनाई पड़ने पर, बिछड़े हुए बच्चों वाली मृगियों के करुण क्रन्दन के बहाने से वनपंक्तियों पर अत्याचार के लिए मानों भर्त्सना किये जाने पर, इधर-उधर भ्रमण करते हुए चञ्चल घोड़ों के खुरों के अग्रभाग से खुदे हुए भूमण्डल से जंगल के विनाश के समाचार को आकाशचारियों को बताने के लिए मानों गृहकपोतों (घरेलू कबूतरों) के पँख के समान धूसरित रजःपुञ्ज (धूलि) के आकाश-मण्डल में उड़ने पर भी रक्षा न होने पर मूर्च्छित के समान बार-बार पृथ्वी पर गिरने पर, कम्पायमान बन्दरों के उछल-कूद से काँपते हुए वृक्षों के पूर्ण विकसित मञ्जरीसमूहों के लतामण्डपों से उद्वेजित (व्याकुल) होकर मञ्जुल गुञ्जार करते हुए चपल भ्रमर द्वारा दूसरे वन की ओर प्रयाण करने पर तथा बार-बार इधर-उधर चक्कर काटने के कारण सेना के विश्राम का समय हो जाने पर उसी सरस तथा सीधे शाल वृक्ष के नीचे थके हुए राजा के बैठ जाने पर ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकस्मात्कुतोऽपि,

वल्लीवल्कपिनद्धधूसरशिराः स्कन्धे दहद्दण्डकं
ग्रीवालम्बितमृन्मणिः परिकुथत्कौपीनवासाः कृशः ।
एकः कोऽपि पटच्चरं चरणयोर्बद्ध्वाऽध्वगः श्रान्तवा-
नायातः क्रमुकत्वचा विरचितां भिक्षापुटीमुद्वहन् ॥५२॥

अन्वयः—'अकस्मात् कुतोऽपि) वल्लीवल्कपिनद्धधूसरशिराः, स्कन्धे दण्डकं दधत् ग्रीवाऽऽलम्बितमृन्मणिः परिकुथत् कौपीनवासाः कृशः पटच्चरं चरणयोः बद्ध्वा श्रान्तवान् एकः कोऽपि अध्वगः क्रमुकत्वचा विरचितां भिक्षापुटीम् उद्वहन् आयातः ॥५२॥

कल्याणी—वल्लीति । अकस्मात्=सहसा, कुतोऽपि=कुतश्चिद्देशात्, वल्लीवल्केन=लतावल्कलेन, पिनद्धं=बद्धं, धूसरं=मलिनं, शिरो येन स तथोक्तः । स्कन्धे=अंसप्रदेशे, दण्डकं=लगुडकं; दधत्=धारयन्, ग्रीवायां=कण्ठे, आलम्बितः=धृतः, मृन्मणिः=मृत्तिकानिर्मितमणिर्येन स तथोक्तः । परिकुथद्=जीर्णं, कौपीनम्=अधोवस्त्रमेव वासः=वस्त्रं यस्य स तथोक्तः । कृशः=क्षीणतनुः, पटच्चरं=जीर्णवस्त्रखण्डं, चरणयोः=पादयोः, बद्ध्वा=उपवेष्ट्य, श्रान्तवान्=श्रान्तः, एकः, कोऽपि=कश्चित्, अध्वगः=पान्थः, क्रमुकत्वचा=पूगद्रुमवल्कलेन, विरचितां=निर्मितां, भिक्षापुटीं=भिक्षापात्रम्, उद्वहन्=धारयन्, आयातः=समागतः । स्वभावोक्तिरलङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५२॥

ज्योत्स्ना—अचानक कहीं से लता के वल्कल (छाल) से मलिन शिर को बाँधा हुआ, कन्धे पर दण्ड को धारण किया हुआ, गले में मिट्टी से बनाई गयी मणि (गोली) को लटकाया हुआ, जीर्ण कौपीनरूप अधोवस्त्र वाला, अत्यन्त दुर्बल, पैरों में पुराने कपड़े को बाँधा हुआ, थका हुआ, सुपाड़ी के पेड़ की छाल से निर्मित भिक्षापात्र को लिया हुआ कोई पथिक आया ॥५२॥

आगत्य च राजानमवलोक्य सविस्मयमेष चिन्तयाञ्चकार—

'अब्जश्रीसुभगं युगं नयनयोर्मौलिर्महोष्णीषवा-
नूर्णारोमसखं मुखं च शशिनः पूर्णस्य धत्ते श्रियम् ।
पद्मं पाणितले गले च सदृशं शङ्खस्य रेखात्रयं
तेजोऽप्यस्य यथा तथा सजलधेः कोऽप्येष भर्ता भुवः ॥५३॥

अन्वयः—अस्य नयनयोः युगं अब्जश्रीसुभगम्, मौलिः महोष्णीषवान्, ऊर्णारोमसखं मुखं च पूर्णस्य शशिनः श्रियं धत्ते । पाणितले पद्मं गले च शङ्खस्य सदृशं रेखात्रयं, तेजोऽपि यथा (दृश्यते) तथा एषः कोऽपि सजलधेः भुवः भर्ता ॥५३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी–राजानमवलोक्य सोऽद्भुतो यच्चिन्तयाञ्चकार तदेवाह–अब्जेति। अस्य=पुरुषस्य, नयनयोः=नेत्रयोः, युगं=युगलम्, अब्जस्य=कमलस्य, या श्रीः=शोभा कान्तिर्वा, तया सुभगं = मनोज्ञम्, कमलवत्सुन्दरमित्यर्थः। मौलिः=मस्तकं, महोष्णीषवान्—उष्णीषं=चक्रवर्तिलक्षणविशेषः 'उष्णीषं तु शिरोवेष्टे किरीटे लक्षणान्तरे' इति विश्वः। महच्च तदुष्णीषमिति महोष्णीषम्, तदस्त्यस्मिन्निति महोष्णीषवान्=उष्णीषरेखातुल्यदृश्यमानचिह्नयुक्त इत्यर्थः। ऊर्णारोमसखम्—ऊर्णा=आवर्ताकारं भ्रुवोर्मध्ये लोममयं चिह्नम्, 'ऊर्णा मेषादिलोम्नि स्यात्, आवर्ते चान्तरा भ्रुवोः' इत्यमरः। उर्णा रोम्णां सखेति ऊर्णारोमसखम्, 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति समासान्तष्टच्। ऊर्णारोमरूपलक्षणविशेषेण युक्तमित्यर्थः। मुखम्=आननं च पूर्णस्य=षोडशकलाधारिणः, शशिनः=चन्द्रस्य, श्रियं=शोभां, धत्ते=धारयति। पाणितले=करतले, पद्मं=पद्माकारं चिह्नं, गले च=कण्ठे च, शङ्खस्य सदृशं रेखात्रयं दृश्यते, तेजोऽपि यथा=येन प्रकारेण (दृश्यते) तथा=तेन प्रकारेण, एषः अयं, कोऽपि=कश्चिदपि, सजलधेः=समुद्रसहितायाः, भुवः=भूमेः, भर्ता=स्वामी। अत्रोपमानिदर्शनानुमानालङ्काराणामङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५३॥

ज्योत्स्ना—और आकर राजा को देखकर आश्चर्य के साथ इस प्रकार विचार करने लगा—

इस पुरुष की दोनों आँखें कमल की कान्ति के समान सुन्दर हैं, शिर बृहद् पगड़ी से युक्त है, ऊर्णा–रोमरूप विशेष लक्षण से युक्त इसका मुख पूर्ण चन्द्रमा की शोभा को धारण कर रहा है। हाथों में कमल का चिह्न है और गले में शंख के समान तीन रेखायें हैं। यह जैसा दिखाई दे रहा है उसी प्रकार का इसका तेज भी है। (जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि) यह कोई आसमुद्रान्त पृथ्वी का स्वामी है अर्थात् चक्रवर्ती राजा है।

विमर्श—मुख के ऊपर भौंहों के मध्य उगे हुए बालों को ऊर्णा कहा जाता है ॥५३॥

तदेवंविधाः खलु महनीया महानुभावा भवन्ति' इत्येवमवधार्य समुपसृत्य 'स्वस्ति स्वकान्तिनिर्जितमकरध्वजाय तुभ्यम्' इत्यवादीत् ॥

कल्याणी—तदेवमिति। तत्=तस्मात्, एवंविधाः=पूर्वोक्तलक्षणोपेताः, महनीयाः=पूज्याः, महानुभावाः=प्रभावशालिनः भवन्ति, इत्यवधार्य=विनिश्चित्य, समुपसृत्य=उपगम्य, स्वकान्त्या=स्वसौन्दर्येण; निर्जितः=परास्तः, मकरध्वजः=मनसिजः येन तादृशाय; तुभ्यं=भवते, स्वस्ति। नमःस्वस्तीत्यादिना सूत्रेण स्वस्तियोगे चतुर्थी। इति=एवम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इसलिए "इस प्रकार के उपर्युक्त लक्षणों से समन्वित लोग वास्तव में पूज्य और प्रभावशाली होते हैं" इस प्रकार निश्चय कर, पास जाकर "अपनी कान्ति से कामदेव को भी विजित करने वाले आपका कल्याण हो" इस प्रकार बोला ॥

राजापि सविस्मयमना मनागुन्नमितमस्तकः स्वागतप्रश्नेनाभिनन्द्य 'तीर्थयात्रिकः कुतः प्रष्टव्योऽसि । क्व च कियच्चाद्यापि गन्तव्यम् । उपविशः विश्रम्य कथय काञ्चिदपूर्वां किंवदन्तीम् । अनेकदेशदृश्वानः किलाश्चर्यदर्शिनो भवन्तीति । न चाकस्मिकं दर्शनमपूर्वः परिचयः स्वल्पा प्रीतिरित्येकमप्याशङ्कनीयम् । अपूर्वदर्शनेऽपि न जात्या मणयः स्वच्छतामपह्नुवते । तदेहि; मुहूर्तमेकत्र गोष्ठीसुखमनुभवावः' इत्येनमवादीत् ॥

कल्याणी—राजाऽपीति । राजा=नलोऽपि, सविस्मयं=विस्मयान्वितं, मनः=चित्तं यस्य स तथोक्तः । मनाग्=ईषत्, उन्नमितम्=उत्थापितं, मस्तकं=शिरः येन स तथाविधः सन् । स्वागतप्रश्नेन=शुभागमनप्रश्नेन, अभिनन्द्य=सत्कृत्य, तीर्थयात्रिक ! कुतः=कस्मात् स्थानादागतोऽसि, प्रष्टव्यः=प्रष्टुं योग्योऽसि, भवन्तं प्रष्टुमिच्छामीति भावः । किं प्रष्टव्यमित्याह—क्व च=कुत्र च, कियच्च=कियद्दूरं च, अद्यापि=सम्प्रत्यपि, गन्तव्यम् । उपविश=निषीद, विश्रम्य=विश्रामं कृत्वा, काञ्चित्=कामपि, अपूर्वाम्=अद्भुतां, किंवदन्तीम्=जनश्रुतिं, कथय=श्रावयेत्यर्थः । अनेकदेशदृश्वानः—अनेकदेशान्=बहुस्थानानि, दृष्टवन्तो जनाः, 'दृशेः क्वनिप्' इति क्वनिप् । किल=निश्चयेन, आश्चर्यदर्शिनः=अद्भुतवस्तुद्रष्टारः, भवन्तीति । न च, आकस्मिकम्=अकस्माज्जातं, दर्शनं=साक्षात्कारः, अपूर्वः=नवः, परिचयः, स्वल्पा=अतिन्यूना, प्रीतिः=स्नेहः, इत्येकमपि आशङ्कनीयं=शङ्कितव्यम् । अपूर्वदर्शनेऽपि=प्रथमसाक्षात्कारकालेऽपि, जात्या मणयः=विशिष्टजातीयरत्नानि, स्वच्छतां=नैर्मल्यं, न अपह्नुवते=न प्रच्छादयन्ति । तत्=तस्मात्, एहि=आगच्छ । मुहूर्तं=क्षणम्, एकत्र=एकस्मिन् स्थाने, गोष्ठीसुखम्=संलापजनितानन्दम्, अनुभवावः=आस्वादयावः, इति=एवंविधम्, एनम्=अध्वगम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—राजा भी आश्चर्य के साथ शिर को थोड़ा उठाकर स्वागतप्रश्न के द्वारा (उसका) सत्कार करके "हे तीर्थयात्रि ! किस स्थान से आ रहे हो ? (मैं तुमसे) पूछना चाहता हूँ कि कहाँ और कितनी दूर तक इस समय (तुमको) जाना है ? बैठो, (थोड़ी देर) विश्राम करके कुछ अद्भुत किंवदन्तियों (कथानकों) को सुनाओ । अनेक देशों को देखने वाले लोग निश्चय की अद्भुत वस्तुओं को देखने वाले होते हैं । अचानक दर्शन, अपूर्व (नूतन) परिचय और अत्यन्त थोड़ा प्रेम—इस प्रकार की कोई भी शंका (तुम्हें) नहीं करनी चाहिए, क्योंकि अपूर्व दर्शन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(प्रथम वार साक्षात्कार) होने पर भी विशिष्ट प्रकार की मणियाँ अपनी कान्ति को नहीं छिपातीं। इसलिए आओ, कुछ देर एक स्थान पर (बैठकर) हम दोनों बातचीत के द्वारा होनेवाले आनन्द का अनुभव करें।" इस प्रकार उस पथिक से बोला ॥

असावपि 'अपूर्वकौतुककथाकर्णनरसिक, श्रूयतां यद्येवम्' इत्यभिधाय सुखोपविष्टस्यास्य समीपे स्वयमुपविश्य कथयितुमारभत ॥

कल्याणी—असाविति। असौ = अध्वगोऽपि, हे अपूर्वकौतुककथाकर्णन-रसिक—अपूर्वाणां = नूतनानां, कौतुककथानाम् = अश्चर्यपूर्णकथानकानाम्, आकर्णने= श्रवणे, रसिक ! =आनन्दानुभावक ! यद्येवं (तत्) श्रूयताम्, इति=एवम्, अभिधाय= उक्त्वा, सुखेन उपविष्टस्य अस्य=नृपस्य नलस्य, समीपे=पार्श्वे, उपविश्य कथयि-तुमारभत ॥

ज्योत्स्ना—उस पथिक ने भी "हे नूतन आश्चर्यपूर्ण कथाओं को सुनने का आनन्द लेने वाले ! यदि ऐसा है तो सुनिए" इस प्रकार कह कर सुखपूर्वक बैठे हुए उस राजा के समीप ही स्वयं भी बैठकर कहना प्रारम्भ किया ॥

'अस्ति स्वर्गसमः समस्तजगतां सेव्यत्वसंख्याग्रणी-
र्देशो दक्षिणदिङ्मुखस्य तिलकः स्त्रीपुंसरत्नाकरः।
यस्मिंस्त्यागमहोत्सवव्यसनिभिर्धन्यैरशून्या जनै-
रुद्देशाः स्पृहणीयभावभरिताः कं नोत्सुकं कुर्वते ॥५४॥

अन्वयः—समस्तजगतां सेव्यत्वसंख्याग्रणीः दक्षिणदिङ्मुखस्य तिलकः स्त्रीपुंसरत्नाकरः स्वर्गसमः देशः अस्ति, यस्मिन् त्यागमहोत्सवव्यसनिभिः धन्यैः जनैः अशून्याः स्पृहणीयभागभरिताः उद्देशाः कम् उत्सुकं न कुर्वते ॥५४॥

कल्याणी—अस्तीति। समस्तजगतां=सकललोकानां, सेव्यत्वसंख्याग्रणीः— सेव्यत्वं=दर्शनीयत्वं, तस्य संख्यायां = गणनायाम्, अग्रणीः=प्रमुखः, दक्षिणदिङ्-मुखस्य=दक्षिणा या दिक्, तस्या मुखस्य; तिलकः, स्त्रीपुंसरत्नाकरः=स्त्रियश्च पुमांसश्चेति स्त्रीपुंसाः 'अचतुरे'—त्यादिना अच्प्रत्ययान्तो निपात्यते। स्त्रीपुंसानां रत्नाकरः=समुद्रः, स्वर्गसमः=देवलोकतुल्यः, देशः=विदर्भदेश इति भावः। अस्ति विद्यते। यस्मिन्=विदर्भदेशे, त्यागः=दानं, स एव महोत्सवस्तस्य व्यसनिभिः= आसक्तिमद्भिः, धन्यैः=सुकृतिभिः, जनैः, अशून्याः=सम्पन्नाः, स्पृहणीयैः=वाञ्छनीयैः, भावैः=वस्तुभिः भरिताः=परिपूर्णाः, उद्देशाः=प्रदेशाः, कं=जनम्, उत्सुकम्= उत्कण्ठितं, न कुर्वते, सर्वानेवोत्सुकान् कुर्वन्तीत्यर्थः। 'स्वर्गसमः' इत्युपमा, दक्षिणदिङ्-मुखस्य तिलकः' 'स्त्रीपुंसरत्नाकरः' इति च रूपकम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—समस्त संसार के सेवनीय—दर्शनीय स्थानों की गणना में अग्रणी, दक्षिण दिशा (रूपी नायिका) के मुख पर तिलकस्वरूप, स्त्री और पुरुषरूपी रत्नों का भण्डारस्वरूप अथवा स्त्री और पुरुषों का समुद्रस्वरूप (और) स्वर्ग के समान (एक) देश (विदर्भ देश) है, जिसमें दानरूपी महोत्सव के व्यसनी (अभ्यासी) पुण्यवान लोगों से सम्पन्न (और) अभीप्सित वस्तुओं से परिपूर्ण प्रदेश किसे उत्कण्ठित नहीं करते ?

विमर्श—पथिक के कहने का तात्पर्य यह है कि (यहाँ से) दक्षिण दिशा का भूषणस्वरूप, अत्यन्त दर्शनीय, असंख्य स्त्री-पुरुषों से समन्वित, स्वर्गसमान स्थित विदर्भ देश, जहाँ के धर्मात्मा लोग निरन्तर दान करने में ही रत रहते हैं और जो सभी ईप्सित वस्तुओं को देने वाला है, वह प्रदेश सभी को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है ॥५४॥

कथञ्चासौ न प्रशस्यते—

यत्र त्रिपुरपुरन्ध्रिरोध्रतिलकहारिणा हरिविरञ्चिचूडामणिमरीचिचक्रचकोरचुम्बितचरणनखचन्द्ररुचिनिचयेन भगवता सेव्यते सेव्यतयाऽपहसितकैलासश्रीः श्रीशैलः शूलपाणिना ॥

कल्याणी—कथमिति। असौ=विदर्भदेशः, कथं, न प्रशस्यते=न स्तूयते, यत्र, त्रिपुरस्य=त्रिपुरासुरस्य, पुरन्ध्रीणां=नारीणां, रोध्रतिलकं=मस्तके लोध्रपुष्परसेन कृतं सौभाग्यसूचकं चिह्नविशेषं हरतीति तेन, त्रिपुररमणीवैधव्यकारिणेति भावः। हरिः=विष्णुः, विरञ्चिः=ब्रह्मा, तयोः चूडामणिमरीचिचक्राणि=चूडामणिकिरणजालान्येव चकोराः=चकोरपक्षिणः, तैश्चुम्बितः=स्पृष्टः आस्वादितश्च, चरणनखचन्द्ररुचिनिचयः=चरणयोर्नखा एव चन्द्रास्तेषां रुचिनिचयः=कान्तिसमूहः यस्य तादृशेन, भगवता=षडैश्वर्यसम्पन्नेन, शूलपाणिना=शङ्करेण, सेव्यतया=भोग्यतया, अपहसिता=तिरस्कृता, कैलासस्य=कैलासाख्यगिरेः, श्रीः=शोभा येन सः, श्रीशैलः=तदाख्यो गिरिः, सेव्यते=अधिष्ठीयते। मरीचिचक्रे चकोरत्वारोपो नखे चन्द्रत्वारोपे निमित्तमिति परम्परितरूपकम्। अपहसितकैलासश्रीरित्यत्र व्यतिरेकः॥

ज्योत्स्ना—और यह विदर्भ देश प्रशंसनीय भी क्यों न हो; जहाँ त्रिपुरासुर की स्त्रियों के लोध्रपुष्परस से किये गये सौभाग्यसूचक तिलक (सिन्दूर) का अपहरण करने वाले अर्थात् उन्हें वैधव्य प्रदान करने वाले विष्णु तथा ब्रह्मा के मुकुटों के किरण रूपी चकोर पक्षी के द्वारा चुम्बित चरणनखरूपी चन्द्रमा के कान्तिसमूह के समान कान्ति से समन्वित भगवान् शंकर द्वारा सेवनीय होने के कारण कैलास पर्वत की शोभा को भी तिरस्कृत करने वाला श्रीशैल नामक पर्वत विद्यमान है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्शः—प्रकृत गद्यखण्ड में भगवान् शंकर द्वारा पूर्व में किये गये त्रिपुरासुर-वध को इंगित करते हुए विष्णु और ब्रह्मा से उनकी श्रेष्ठता प्रतिपादित की गई है; साथ ही भगवान् शंकर द्वारा सेवनीय होने के कारण श्रीशैल पर्वत को भी कैलास से श्रेष्ठ बताया गया है और उस श्रीशैल पर्वत के विदर्भ देश में स्थित होने के कारण वह देश भी सर्वाधिक प्रशंसनीय है, यह स्पष्ट किया गया है ।।

यत्र च विकचविविधवनविहारसुरभिसमीरणान्दोलितकदलीदलव्यजन-वीज्यमाननिधुवनविनोदखेदविद्रावणनिद्रालुद्रविडमिथुनसनाथपरिसराः सरसघननिचुलतलचलच्चकोरचक्रवाककुलकपिञ्जलमयूरहारिण्यो नाकलोककमनीयतां कलयन्ति कलमकेदारसाराः सरससहकारकारस्कराः कावेरीतीरभूमयः ।।

कल्याणी—यत्रेति । यत्र=विदर्भदेशे च, विकचेषु=विकसितेषु, विविधेषु=अनेकप्रकारेषु, वनेषु=काननेषु, विहारेण=सञ्चारेण, सुरभिः=सुगन्धयुक्तः यः समीरणः=पवनः तेन आन्दोलितानि=सञ्चालितानि, कदलीदलानि=रम्भापत्राण्येव व्यजनानि=तालवृन्तानि तैः वीज्यमानानि=वायुभिः शीतलीक्रियमाणानि अतएव निधुवनविनोदखेदविद्रावणेन=सुरतक्रीडाजनितश्रमापनोदेन, निद्रालूनि = सयानानीत्यर्थः । यानि द्रविडमिथुनानि=द्रविडद्वन्द्वानि, तैः सनाथाः=युक्ताः, परिसराः=प्रदेशाः यासु ताः । सरसाः=स्निग्धाः, घनाः=निविडाः, ये निचुलाः=निचुलाख्यवृक्षाः तेषां तले=अध.प्रदेशे, चलद्भिः=सञ्चरद्भिः, चकोरैः=चक्रवाककुलैः, कपिञ्जलैः=चातकैः, मयूरैः=हारीतैश्च, हारिण्यः=मनोहराः, कलमकेदारसाराः=धान्यक्षेत्रैर्महत्त्वपूर्णाः, सरसाः=हरिताभाः, सहकाराः=रसालपादपाः, कारस्कराः=किम्पाकवृक्षाश्च, यत्र ताः, कावेरीतीरभूमयः=कावेरीसरित्तटभुवः, नाकलोककमनीयतां=स्वर्गलोकरामणीयकं, कलयन्ति=धारयन्ति । अत्रान्यस्य धर्मं कथमन्यो वहत्विति कावेरीतीरभूमीनां नाकलोकगतकमनीयताकलनमसम्भवात्तत्कमनीयतासदृशीं कमनीयतामवगमयत्कावेरीतटभूमीनां नाकलोकस्य च बिम्बप्रतिबिम्बभावं बोधयतीत्यसम्भवद्वस्तुसम्बन्धनिदर्शना ।।

ज्योत्स्ना—और जिस (विदर्भ) देश में विकसित अनेक प्रकार के वनों में सञ्चरण करती हुई सुगन्धयुक्त वायु के द्वारा आन्दोलित केले के पत्ररूप पंखों से की जा रही हवा द्वारा निधुवन (सुरतव्यापार) के कारण उत्पन्न थकावट को दूर करने से निद्रा के वशीभूत द्रविड़युगलों (द्रविड़ स्त्री-पुरुषों) से समन्वित प्रदेश (तथा) सरस (चिकने) एवं घने निचुल-(वेंत)-वृक्षों के नीचे सञ्चरण करते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुए चकोर, चक्रवाक, चातक और मयूरसमूहों के कारण मनोहर, कलम (धान) के खेतों के कारण महत्त्वपूर्ण, सरस आम्र तथा कारस्कर नामक वृक्षों से युक्त कावेरी नदी की तटभूमि देवलोक की रमणीयता को धारण करती है ॥

किं बहुना—

अस्तु स्वस्ति समस्तरत्ननिधये श्रीदक्षिणस्यै दिशे
स्वर्गस्पर्धिसमृद्धये हृदयहृद्गोदावरीरोधसे ।
यत्र त्रस्तकुरङ्गकार्भकदृशः संभोगलीलाभुवः
सौख्यस्यायतनं भवन्ति रसिकाः कन्दर्पशस्त्रं स्त्रियः ॥५५॥

अन्वयः—(किं बहुना) स्वर्गस्पर्धिसमृद्धये हृदयहृद्गोदावरीरोधसे समस्तरत्ननिधये श्रीदक्षिणस्यै दिशे स्वस्ति अस्तु । यत्र स्त्रियः त्रस्तकुरङ्गकार्भकदृशः सम्भोगलीलाभुवः सौख्यस्य आयतनं कन्दर्पशास्त्रं रसिकाः भवन्ति ॥५५॥

कल्याणी—विदर्भवर्णनमुपसंहरन्नाह—अस्त्विति । स्वर्गस्पर्धिसमृद्धये—स्वर्गस्पर्धिनी=स्वर्गलोकप्रतियोगिनी, समृद्धिः=सम्पद् यस्यास्तस्यै, हृदयहृद्=चित्ताकर्षकं, गोदावरीरोधः=गोदावरीसरित्तटप्रदेशः यस्यां तस्यै, समस्तरत्ननिधये—समस्तानि यानि रत्नानि=जगदुत्कृष्टवस्तूनि, तेषां निधये=निधानभूतायै 'जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते' इति मल्लिनाथः । श्रीदक्षिणस्यै दिशे, स्वस्त्यस्तु= कल्याणमस्तु । 'नमःस्वस्ति'—इत्यादिना चतुर्थी । यत्र=यस्यां दक्षिणस्यां दिशि, स्त्रियः=रमण्यः, त्रस्तानां=भीतानां, कुरङ्गकार्भकाणां=मृगशावकानां, दृश इव दृशः=नयनानि यासां तादृश्यः, संभोगलीलाभुवः=विलासक्रीडाभूमयः, सौख्यस्य=सुखस्य, आयतनं=गृहम्, कन्दर्पशस्त्रं=कामदेवस्यायुधं, रसिकाः=रसज्ञाश्च भवन्ति । उपमारूपकोल्लेखानां संकरः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५५॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; स्वर्ग से स्पर्धा करने वाली सम्पदा से समन्वित, चित्ताकर्षक गोदावरी नदी की तटभूमि तथा समग्र रत्नों के आकर-स्वरूप उस दक्षिण दिशा का कल्याण हो, जहाँ की भयभीत मृगशावकों के समान नयनों वाली स्त्रियाँ सुरतक्रीड़ा का आधार, सुख का घर, कामदेव का शस्त्र (बाण) और रसिक हुआ करती हैं ॥५५॥

तत्र प्रणतसुरासुरशिरःशोणमरीचिचयवहलकुङ्कुमानुलेपपल्लवितपादारविन्दद्वयस्य क्रौञ्चभिदो भगवतः सुगन्धिगन्धमादनाधिवासिनः स्कन्ददेवस्य दर्शनार्थमितो गतवानस्मि ।

तस्माच्च निवर्तमानेन क्वचिदेकस्मिन्नध्वरोधिनि न्यग्रोधपादपतले दीर्घाध्वश्रान्तेन विश्राम्यता मया श्रूयतां यदाश्चर्यमालोकितम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी-तत्रेति। तत्र=विदर्भदेशे, प्रणतानां=नमस्कुर्वतां, सुरासुराणां=देवदानवानां, शिरसां=मस्तकानां, शोणमरीचिचयाः=रक्तकिरणसमूहा एव बहलकुङ्कुमाः=प्रचुरकेसराः, तेषाम् अनुलेपेन=चर्चया, पल्लवितं=किसलयितं, पादारविन्दद्वयं=चरणकमलयुगलं यस्य तस्य, सुगन्धिगन्धमादनाधिवासिनः—सुगन्धि=शोभनगन्धयुक्तं, गन्धमादनं=तन्नामानं गिरिम्, अधिवसतीत्येवंशीलस्य, भगवतः = षडैश्वर्यसम्पन्नस्य, क्रौञ्चभिदः=क्रौञ्चपर्वतविदारणस्य, स्कन्ददेवस्य=स्वामिकार्त्तिकेयस्य, दर्शनार्थम्, इतः=अस्मात् स्थानात्, गतवानस्मि। तस्माच्च=ततश्च, निवर्तमानेन=प्रत्यागच्छता, क्वचित्=कुत्रचित्, एकस्मिन्, अध्वानं=मार्गं, रुणद्धि=आच्छादयति, स्वविस्तारेणेत्येवंशीले न्यग्रोधपादपतले=वटवृक्षस्याधःभूमौ, दीर्घाध्वश्रान्तेन=दीर्घेण, अध्वना=मार्गेण, श्रान्तः=श्रान्तिं गतस्तादृशेन, विश्राम्यता=विश्रामं कुर्वता, मया, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम्, यदाश्चर्यम्, आलोकितं=दृष्टम्। मरीचिचये कुङ्कुमत्वारोपाद्रूपकम्। पादारविन्देत्युपमा। तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः॥

ज्योत्स्ना—उस विदर्भ देश में प्रणाम करते हुए देव-दानवों के मस्तकों के लाल किरण-समूहरूप प्रचुर कुंकुम (केसर) के अनुलेप से पल्लवित (सुकोमल) चरणकमलों वाले, सुगन्धित गन्धमादन पर्वत पर निवास करने वाले, क्रौञ्च पर्वत का विदारण (भेदन) करने वाले भगवान् स्कन्ददेव (कार्त्तिकेय) का दर्शन करने के लिए (मैं) यहाँ से गया था और वहाँ से लौटते हुए किसी जगह मार्ग को अवरुद्ध करने वाले (समस्त मार्ग को आच्छादित करने वाले) एक वटवृक्ष के नीचे लम्बा रास्ता (तय करने) से थका हुआ होने के कारण विश्राम करते समय मैंने जो आश्चर्य देखा, उसे सुनिये॥

अतिललितपदविन्याससारसाधुसिन्धुरवधूस्कन्धमधिरूढा, प्रौढसखीसहायप्राया, प्रान्तपतच्चारुचामरमरुन्नर्तितालकवल्लरी, कर्णकुवलयालङ्कारधारिणी, रुचिररुचिमच्चरणनूपुरा, पुरःसरसरागगान्धर्विककण्ठकन्दरविनिःसरत्सरसगीतप्रेङ्खोलनप्रयोगेषु दत्तावधाना, नेत्रे मनाग् मीलयन्ती, म्रियमाणमायूरातपत्रमण्डला, मण्डलितमदनचापचक्रवक्रभ्रूः भूपालपुत्रिका कापि क्वापि कुतोऽप्युच्चलिता तदेव न्यग्रोधपादपच्छायामण्डपमशिश्रियत्॥

कल्याणी—अतिललितेति। अतिललिताः=अतिकमनीयाः, पदविन्यासाः=पादविक्षेपाः एव सारः मुख्यगुणः यस्याः तादृशी, या साधुसिन्धुरवधूः=प्रशस्तकरिणी, तस्याः स्कन्धं=पृष्ठदेशम्, अधिरूढा, प्रौढाः=वयस्काः, सख्यः=आलयः,-सहायाः प्रायेण यस्याः तादृशी, प्रान्तयोः=पार्श्वयोः, पततोः=वीज्यमानयोः, चारुचामरयोः=सुन्दरबालव्यजनयोः, मरुता=वायुना, नर्तिता=नृत्यं कारिता, आन्दोलितेति यावत्। अलकवल्लरी=केशलता यस्याः सा तथोक्ता, कर्णयोः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रवणप्रान्तयोः, कुवलयं=नीलकमलमेव अलङ्कारः=भूषणं तद्धारिणी, रुचिरौ=रम्यौ च, रुचिमन्तौ च=कान्तिमन्तौ च, चरणयोः=पादयोः, नूपुरौ=मञ्जीरौ यस्याः सा तथोक्ता, पुरःसराः=अग्रागमिनः, सरागाः=रागयुक्ताः ये गान्धर्विकाः=गायकाः तेषां कण्ठकन्दरात्=गलगह्वराद् विनिःसरतां=निर्गच्छतां, सरसगीतानां=मधुरगानानां, प्रेङ्खोलनप्रयोगेषु=आरोहावरोहप्रयोगेषु, दत्तावधाना=कृतमनोयोगा, नेत्रे=नयने; मनाग=ईषत्, मीलयन्ती=मुकुलयन्ती, आनन्दनिमग्नतयेति भावः। ध्रियमाणं=धार्यमाणं, मायूरं=मयूरपिच्छनिर्मितम्, आतपत्रमण्डलं=छत्रचक्रवालं यस्याः सा तथोक्ता, मण्डलितं=चक्रीकृतं, मदनचापचक्रं=कामदेवधनुर्मण्डलं, तद्वत् वक्रे=कुटिले, भ्रुवौ यस्याः सा तथोक्ता, कापि=काचित्, भूपालपुत्रिका=राजकन्या, कुतोऽपि=कस्मादपि स्थानात्, क्वापि=कुत्रचित् स्थाने, उच्चलिता=प्रस्थिता; तदेव न्यग्रोधपादपच्छायामण्डपं=वटवृक्षच्छायावितानम्, अशिश्रियत्=असेवत, तत्रागमदित्यर्थः ॥

ज्यत्स्ना—अत्यन्त कमनीय पदविन्यासरूप मुख्य गुण से उत्तम सिन्धूरवधू (हस्तिनी) के कन्धे पर आरूढ़ अर्थात् हस्तिनी की चाल को भी मात करने वाली, प्रायः वयस्क (सयानी) सखियों रूप सहायिकाओं वाली, पार्श्वभाग (अगल-बगल) से डुलाये जाते हुए सुन्दर चँवर की हवा से नृत्य करती हुई (उड़ती हुई) केशपाशों वाली, कानों में कमलरूपी आभूषण को धारण करने वाली, सुन्दर तथा कान्तिमान् चरणों में नुपूरों को पहनने वाली, आगे-आगे चलते हुए मधुर रागयुक्त गायकों के कण्ठरूपी कन्दरा (गुफा) से निकलते हुए मधुर गीतों के आरोह-अवरोह प्रयोगों में दत्तचित्त, (आनन्द-निमग्न होने के कारण) नयनों को थोड़ा-थोड़ा मूँदती हुई, मयूर के पंखों से निर्मित छत्र को धारण की हुई, कामदेव के मण्डलाकार (टेढ़े) धनुर्मण्डल के समान कुटिल भौंहों वाली, कहीं से आई हुई कोई राजकुमारी ने किसी स्थान के लिए जाते समय उसी वटवृक्ष के छायामण्डप का आश्रयण किया अर्थात् उसी वटवृक्ष के नीचे छाया में विश्राम करने हेतु बैठ गई ॥

ताञ्चालोक्य चिन्तितवानस्मि विस्मितमनाः—

किं लक्ष्मीः स्वयमागता मुररिपोर्देवस्य वक्षःस्थलात्
कोपात्पत्युरुतावतारमकरोद् देवी भवानी भुवि।
श्यामाम्भोजसदृक्षपक्ष्मलचलन्नेत्रामिमां पश्यतो
धातस्तात करोषि किं न वदने चक्षुःसहस्रं मम ॥५६॥

अन्वयः—देवस्य मुररिपोः वक्षःस्थलात् स्वयं लक्ष्मीः आगता किम्? उत पत्युः कोपात् देवी भवानी भुवि अवतारम् अकरोत्। हे तात धातः! श्यामाम्भोजसदृक्षपक्ष्मलचलत् नेत्राम् इमां पश्यतः मम वदने चक्षुःसहस्रं किं न करोषि ॥५६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी–विस्मितमना अध्वगो यच्चिन्तितवान् तदेव कथयति–किमिति। देवस्य=भगवतः; मुररिपोः=मुरारेर्विष्णोः, वक्षःस्थलात्=वक्षःप्रदेशात्, 'खर्परे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः' इति वार्तिकेन विसर्गलोपे 'वक्षस्थल' इत्यपि भवति। स्वयं=साक्षात्, लक्ष्मीरागता किम् ? उत=अथवा, पत्युः=भर्तुः शिवस्य। कोपात्=क्रोधाद्धेतोः, देवी भवानी = पार्वती, भुवि=पृथिव्याम्, अवतारमकरोत्=अवातरत्, अवतीर्णा। हे तात धातः=पूज्य पितामह ! श्यामाम्भोजसदृशे=नीलकमलोपमे, पक्ष्मले = =पक्ष्मयुक्ते च चलती=चञ्चले, नेत्रे=नयने यस्याः तादृशीम् इमां = कन्यकां, पश्यतः=अवलोकमानस्य, मम, वदने=मुखमण्डले, चक्षुःसहस्रं=सहस्रनेत्राणि, किं न करोषि=कुतो न विदधासि, येनैनां सम्यगवलोकयेयमिति भावः। किमियं लक्ष्मीरुत भवानीति सन्देहात् सन्देहालङ्कारः। श्यामाम्भोजसदृशेत्यादौ उपमालङ्कारः। तयोः परस्परनैरपेक्ष्येण स्थितेः संसृष्टिः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५६॥

ज्योत्स्ना—और उसे (राजकुमारी को) देखकर आश्चर्यचकित मैं विचार करने लगा—क्या (यह) भगवान् विष्णु के वक्षःस्थल से (उठकर) स्वयं लक्ष्मी आ गई हैं, अथवा पति के क्रोध के कारण देवी पार्वती ने ही पृथ्वी पर अवतार धारण कर लिया है ? हे पूज्य पितामह ! नीलकमल के समान पक्ष्मों (पलकों) से युक्त नयनों वाली इस (राजकन्या) को देखते हुए मेरे मुखमण्डल पर (आप) हजार आँखें क्यों नहीं बना देते (जिससे कि मैं इस राजकन्या को भली-भाँति देख सकूँ।) ॥५६॥

अपि च–

इन्दोः सौन्दर्यमास्यं कलयति कमलस्पर्धिनी नेत्रपत्रे
कालिन्द्याः कुन्तलाली तुलयति विभवं भव्यभङ्गैस्तरङ्गैः।
तस्याः किं श्लाघ्यतेऽन्यत्सुभगगुणनिधेः काप्यपूर्वैव यस्याः
पुष्पेषोर्वैजयन्ती जयति युवजनोन्मादिनी यौवनश्रीः ॥५७॥

अन्वयः—(अपि च) आस्यम् इन्दोः सौन्दर्यं कलयति नेत्रपत्रे कमलस्पर्धिनी, कुन्तलाली भव्यभङ्गैः तरङ्गैः कालिन्द्याः विभवं तुलयति। सुभगगुणनिधेः तस्याः अन्यत् किं श्लाघ्यते, यस्याः पुष्पेषोः वैजयन्ती युवजनोन्मादिनी कापि अपूर्वा एव यौवनश्रीः जयति ॥५७॥

कल्याणी—इन्दोरिति। किञ्च आस्यं=मुखम्, इन्दोः=चन्द्रमसः, सौन्दर्यं=कान्तिं, कलयति=धारयति, नेत्रपत्रे=नयनदले, कमलस्पर्धिनी—कमलेन स्पर्धेते=स्पर्धां कुर्वाते इत्येवंशीले, कुन्तलालीः=केशराजिः, भव्या=रमणीया, भङ्गाः=भङ्गयः येषां तादृशैः तरङ्गैः=लहरीभिः, कालिन्द्याः=यमुनायाः, विभवं=सम्पदं, सौन्दर्यमिति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यावत् । तुलयति=तिरस्करोति । सुभगगुणनिधेः=प्रशस्तगुणनिधानभूतायाः तस्याः अन्यत्=अधिकं, किं, श्लाघ्यते=प्रशस्यते, यस्याः, पुष्पेषोः=कुसुमशरस्य, कामदेवस्येत्यर्थः । वैजयन्ती=पताकारूपा, युवजनोन्मादिनी=युवकानामुन्मादयित्री, कापि=काचिदपि, अपूर्वैव=लोकोत्तरैव, यौवनश्रीः=तारुण्यशोभा, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । पूर्वार्द्धेऽसम्भवद्वस्तुसम्बन्धनिदर्शनाद्वयम् । यौवनश्रियां वैजयन्त्यारोपाद् रूपकम् । तेषां परस्परनैरपेक्ष्येण संस्थितेः संसृष्टिः । स्रग्धरा वृत्तम्, तल्लक्षणं यथा—'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।' इति ॥५७॥

ज्योत्स्ना—और भी; (इस राजकन्या का) मुख चन्द्रमा की कान्ति अथवा सौन्दर्य को धारण कर रहा है, दोनों आँखें मानों कमल से स्पर्धा कर रही हैं, केशराशि रमणीय आवर्तों वाली तरङ्गों (लहरों) से समन्वित कालिन्दी (यमुना) के ऐश्वर्य (सौन्दर्य) से बराबरी कर रही हैं अर्थात् इसके बाल सुन्दर आवर्तयुक्त तरङ्गों वाली यमुना के समान हैं । समस्त गुणों की आकरस्वरूपा उस (राज्यकन्या) की अधिक क्या प्रशंसा की जाय, जिसकी यौवनश्री कामदेव की पताकास्वरूपा, युवकों को उन्मत्त बना देने वाली लोकोत्तर है । अर्थात् उस राजकन्या का अपूर्व यौवन जो कि युवकों को उन्मत्त बना देने के लिए पर्याप्त है, साक्षात् कामदेव के पताका के समान ही है ॥५७॥

अपि च–

आकारः स मनोहरः स महिमा तद्वैभवं तद्वयः
सा कान्तिः स च विश्वविस्मयकरः सौभाग्यभाग्योदयः ।
एकैकस्य विशेषवर्णनविधौ तस्याः स एव क्षमो
यस्य स्यादुरगप्रभोरिव मुखे जिह्वासहस्रद्वयम् ॥५८॥

अन्वयः—(अपि च) सः मनोहरः आकारः, स महिमा, तद् वैभवं, तद् वयः, सा कान्तिः, स च विश्वविस्मयकरः सौभाग्यभाग्योदयः । तस्याः एकैकस्य विशेषवर्णनविधौ स एव क्षमः यस्य मुखे उरगप्रभोः इव जिह्वासहस्रद्वयं स्यात् ॥५८॥

कल्याणी—आकार इति । सः=तादृशः, मनोहरः=मनोरमः, आकारः=आकृतिः, सः महिमा=माहात्म्यं. तद्=तादृक्, वैभवं=सम्पत्तिः, तद्=तादृक्, वयः=नवयौवनम्, सा=तादृशी, कान्तिः=सौन्दर्यम्, स च=तथा विश्वविस्मयकरः=सर्वेषामाश्चर्यकरः, सौभाग्यभाग्योदयः—सौभाग्यं=लालित्यमेव भाग्यं, तस्य उदयः=आविर्भावः । तस्याः=राजकन्यायाः, एकैकस्य=प्रत्येकस्य, विशेषवर्णनविधौ=विशेषेण वर्णनकर्मणि, स एव क्षमः=समर्थः, यस्य=जनस्य, मुखे=वक्त्रे, उरगप्रभोः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शेषनागस्य इव, जिह्वासहस्रद्वयं=रसनासहस्रयुगलम्, स्याद्=भवेत्। सम्भावनाऽलङ्कारः। उरगप्रभोरिवेत्युपमा। तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५८॥

ज्योत्स्ना—और भी; वह मनोहर आकृति, वह महिमा, वह ऐश्वर्य, वह अवस्था, वह कान्ति (सौन्दर्य) और सम्पूर्ण संसार को आश्चर्यचकित करने वाला वह सौभाग्यरूपी भाग्योदय। उस राजकन्या की उपर्युक्त प्रत्येक (विशेषताओं) का वर्णन करने में वही समर्थ हो सकता है, जिसके मुख में शेषनाग के समान दो हजार जिह्वायें हों।

आशय यह है कि इस संसार में कोई भी व्यक्ति उसकी उपर्युक्त समस्त विशेषताओं का वर्णन करने में समर्थ नहीं है, अतः मैं (पथिक) भी उसका वर्णन नहीं कर सकता ॥५८॥

सापि यथा त्वमिदानीं मामिह पृच्छसि तथार्धपथमिलितं कञ्चिदुदीचीनीनमध्वगं दक्षिणस्यां दिशि प्रस्थितमादरेण पृच्छन्ती मुहूर्तमिव तत्रैव विश्रमितुमारभत।

श्रुतश्चायं मयापि तेन तस्याः पुरः कस्यचिदुदीच्यनरपतेः श्लाघ्यमानकथावशेषालापः॥

कल्याणी—सापीति। सा=राजकन्यापि, यथा=येन प्रकारेण, त्वं=राजा, इदानीं=सम्प्रति, इह=अत्र, मां पृच्छसि, तथा=तेन प्रकारेण, अर्धपथमिलितम्—अर्धपथे=अर्धमार्गे, मिलितं=सङ्गतं, कञ्चिदुदीचीनम्=उत्तरदिग्वासिनं, दक्षिणस्यां दिशि, प्रस्थितम्=उच्चलितम्, अध्वगं=पान्थम्, आदरेण पृच्छन्ती, मुहूर्तमिव=क्षणमिव, तत्रैव विश्रमितुं=विश्रामं कर्तुम्, आरभत। श्रुतश्च=आकर्णितश्च, मयापि, तेन=पान्थेन, तस्याः=राजकन्यायाः, पुरः=अग्रे, कस्यचित्, उदीच्यनरपतेः= उत्तरदिग्वर्तिनो भूपालस्य, अयं=वक्ष्यमाणः, श्लाघ्यमानकथायाः=प्रशस्यमानकथानकस्य, अवशेषालापः=अवशिष्टसंलापः॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार इस समय यहाँ पर आप मुझसे पूछ रहे हैं, उसी प्रकार आधे रास्ते में मिले हुए दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान करने वाले पथिक से वह (राजकुमारी) भी आदर के साथ पूछती हुई कुछ देर के लिए वहीं (वटवृक्ष के नीचे) विश्राम करने लगी। मैंने भी उस पथिक के द्वारा (उस राजकुमारी के) आगे (कहे जाते हुए) उत्तर दिशा में स्थित किसी राजा की प्रशस्यमान कथा के अवशेष (भाग) को सुना। अर्थात् पथिक द्वारा कही जाती हुए उत्तर दिग्वर्ती राजा की प्रशंसनीय कथा के कुछ अंशों को सुना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मिन्स्मितमुखे यूनि यूपदीर्घभुजद्वये ।
ते धन्या न्यपतन्येषां कन्दर्पसदृशे दृशः ॥५९॥

अन्वयः—स्मितमुखे यूपदीर्घभुजद्वये कन्दर्पसदृशे तस्मिन् यूनि येषां दृशः न्यपतन् ते धन्याः ॥५९॥

कल्याणी—तस्मिन्निति । स्मितम्=ईषद्धास्ययुक्तं, प्रसन्नमिति यावत् । मुखम्=आननं यस्य तस्मिन्, यूपदीर्घभुजद्वये—यूपवद्=यज्ञस्तम्भवद्, दीर्घं=विशालं, भुजद्वयं=बाहुयुगलं यस्य तस्मिन्, कन्दर्पसदृशे=कामदेवसमे, तस्मिन् यूनि=तरुणे, येषां=जनानां, दृशः=नयनानि, न्यपतन्=अपतन्, ते=पुरुषाः, धन्याः=पुण्यवन्तः । यूपदीर्घेत्यत्र कन्दर्पसदृश इत्यत्र चोपमालङ्कारः । द्वयोः सङ्करः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५९॥

ज्योत्स्ना—थोड़े-थोड़े मुस्कुराते हुए मुख वाले और यज्ञस्तम्भ के समान लम्बी भुजाओं वाले कामदेव के समान सुन्दर उस (उत्तर देश में विद्यमान) युवक पर जिनकी निगाहें पड़ी हों, वे (आँखें) धन्य हैं ॥५९॥

किं बहुना—

सा त्वं मन्मथमञ्जरी स च युवा भृङ्गस्तवैवोचितः
श्लाघ्यं तद्भवतोः किमन्यदपरं किं त्वेतदाशास्महे ।
भाग्यैर्योग्यसमागमेन युवयोर्मानुष्यमाणिक्ययोः
श्रेयानस्तु विधेर्विचित्ररचनासंकल्पशिल्पश्रमः ॥६०॥

अन्वयः—सा त्वं मन्मथमञ्जरी, स च युवा तवैव उचितः भृङ्गः, तद् भवतोः अन्यत् किं श्लाघ्यम्, किन्तु अपरम् एतत् आशास्महे यद् भाग्यैः मानुष्यमाणिक्ययोः युवयोः योग्यसमागमेन विधेः विचित्ररचनासङ्कल्पशिल्पश्रमः श्रेयान् अस्तु ॥६०॥

कल्याणी—सेति । सा त्वं=एतादृशी त्वम्, मन्मथमञ्जरी=कन्दर्पलता, स च, युवा=तरुणः, तवैव=त्वदेव, उचितः=योग्यः, भृङ्गः=मधुपः, तत्=तस्माद्, भवतः=युवयोः, अन्यत्=अपरं, किं श्लाघ्यं=प्रशस्यं, किंतु=तथापि, अपरम्=अन्यत्, एतद् आशास्महे=कामयामहे, यद् भाग्यैः=दैवात्, मानुष्यमाणिक्ययोः=मानवसमुदायरत्नयोः, युवयोः=भवतोः, योग्यसमागमेन=औचित्यपूर्णमिलनेन, विधेः=विधातुः, विचित्ररचनासंकल्पशिल्पश्रमः—विचित्ररचनाया=अपूर्वनिर्माणस्य, संकल्पः=प्रतिज्ञा, यत्र तादृशः शिल्पश्रमः=निर्माणायासः, श्रेयान्=अतिशयप्रशस्यः, सफल इति यावत्, अस्तु=भवतु । समालङ्कारः, रूपकं च तदङ्गमिति तयोः सङ्करः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना -- अधिक कहने से क्या लाभ;

इस प्रकार की तुम कामदेव की मञ्जरी हो और वह युवक (मञ्जरी के पराग का पान करने वाले) भ्रमर के समान तुम्हारे ही योग्य है। तुम दोनों के विषय में अन्य क्या प्रशंसा की जाय ? फिर भी हम केवल इतनी ही आशा करते हैं कि भाग्य से मानव-समुदाय के रत्नस्वरूप तुम दोनों के औचित्यपूर्ण मिलन से भगवान् प्रजापति द्वारा अपूर्व निर्माण के प्रतिज्ञारूपी शिल्प (रचना) में किया गया अतिशय परिश्रम सफल हो ॥६०॥

तन्न जाने स कः सुकृती तेन तस्याः श्रवणादेवोल्लसद्बहुलपुलकाङ्कुरोत्तम्भितांशुकायाः पुरो विस्तरेणैवं वर्णितः ॥

कल्याणी–तन्नेति। तत्=तस्मात्, न जाने=न वेद्मि, सकः सुकृती=पुण्यवान्, तेन=अध्वगेन, श्रवणादेव=आकर्णनमात्रेण, दर्शनं तु दूरे तिष्ठत्विति भावः। उल्लसन्तः=उद्गच्छन्तः, बहुलाः=समधिकाः, ये पुलकाङ्कुराः=रोमाञ्चप्ररोहाः तैः उत्तम्भितं=संधृतम्, अंशुकं=वसनं, यस्यास्तथोक्तायास्तस्याः, पुरः=अग्रे, विस्तरेण=विस्तारक्रमेण, एवम्=इत्थम्प्रकारेण, वर्णितः=प्रशंसितः ॥

ज्योत्स्ना—(लेकिन) मैं नहीं जानता कि वह कौन पुण्यात्मा है (जिसके बारे में) उस पथिक के द्वारा श्रवण-मात्र से ही वह राजकुमारी अत्यन्त उल्लास के कारण इतनी अधिक रोमाञ्चित हुई कि उसके वस्त्र तक ऊपर उठ गये। (उस पथिक ने) उसके आगे विस्तार से इस प्रकार वर्णन किया ॥

न च मयापि विस्मयविस्मृतविवेकेन केयं कस्येयं कुत्र कुतो वा प्रस्थितेति प्रश्नाग्रहः कृतः। केवलमदृष्टपूर्वरूपोत्पन्नाकस्मिककौतुकातिरेकास्तमितसमस्तान्यव्यापारेणैकाग्रतया ग्रहनिरुद्धेनेवान्धेनेव मूकेनेव मूर्च्छितेनेव विषविघूर्णितेनेव स्तोभस्तम्भितेनेव गतायामपि तस्यां तेनाध्वनीनेन सह तत्रैव न्यग्रोधतरुतले सुचिरमासितमासीत् ॥

कल्याणी–न चेति। न च, विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्मृतः विवेकः=कर्त्तव्याकर्त्तव्यज्ञानं येन तथाविधेन, मयापि, केयं=किमभिधेयेयं, कस्येयं=कस्य महानुभावस्य कन्येयं, कुत्र=कस्मिन् स्थाने, कुतो वा=कस्मात्स्थानाद्वा, प्रस्थिता=उच्चलिता, इति=एवं, प्रश्नाग्रहः=पृच्छोद्यमः, कृतः=विहितः। केवलं, न पूर्वं दृष्टमित्यदृष्टपूर्वं, तेन रूपेण=सौन्दर्येण, उत्पन्नः=सञ्जातः, यः आकस्मिकः=तात्कालिकः, कौतुकातिरेकः=कुतूहलातिशयः तेन अस्तमिताः=परित्यक्ताः, समस्ताः=सकलाः, अन्यव्यापाराः=इतरकार्याणि यस्य तेन, एकाग्रतया=एकतानतया, ग्रहनिरुद्धेनेव—ग्रहः=सूर्यादिकः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पीड़ाकरः, पिशाचवर्गविशेषो वा, तेन निरुद्धेन=गृहीतेनेव, अन्धेनेव, मूकेनेव=मूढेनेव मोहापन्नेव वा, मूर्च्छितेनेव=चेतनारहितेनेव, विषविघूर्णितेनेव—विषेण=गरलेन, विघूर्णितः=भ्रान्तः तेनेव, स्तोभस्तम्भितेनेव—स्तोभः=जाड्यं, तेन स्तम्भितः=स्तब्धीकृतः, तेनेव, तस्यां=राजकन्यायां, गतायामपि=प्रस्थितायामपि, तेन अध्वनीनेन=पान्थेन सह; अध्वनोऽलंगामीतिविग्रहे अध्वन् शब्दात् 'अध्वनो यत्खौ' इति खः; तस्येनादेशः, 'आत्माध्वानौ खे' इति प्रकृतिभावान्न टिलोपः। तत्रैव=तस्मिन्नेव स्थले, न्यग्रोधतरुतले=वटवृक्षतले, सुचिरं=दीर्घकालपर्यन्तम्, आसितम्=उपविष्टमासीत्। आसितमित्यत्र आस्धातोर्भावे क्त इति ज्ञेयम्। ग्रहनिरुद्धेनेवेत्यादावुत्प्रेक्षालङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—विस्मय के कारण कर्तव्याकर्तव्य के विषय में विवेकशून्य मैं भी यह कौन थी? किसकी (पुत्री) थी? कहाँ से आई थी? अथवा कहाँ जानेवाली थी? यह सब पूछने का आग्रह नहीं कर पाया। उसे देखने के पूर्व उस प्रकार का रूप (सौन्दर्य) नहीं देखे होने के कारण उत्पन्न हुए आकस्मिक अति कौतूहल के कारण सभी अन्य व्यापारों के समाप्त (शान्त) हो जाने से एकाग्रचित्त हो किसी ग्रह (अथवा कष्टदायक पिशाचादि) के द्वारा पकड़े गये के समान, अन्धे की भाँति, गूँगे की भाँति, चेतनारहित (मूर्च्छित) के समान, विष के कारण उन्मत्त हो जाने वाले के समान, (उस अपूर्व सौन्दर्य को देख) जड़तावश स्तब्ध (किंकर्तव्यविमूढ़) हो जाने के समान उस राजकन्या के चले जाने पर भी उस पथिक के साथ उसी वटवृक्ष के नीचे बहुत काल तक (मैं) बैठा ही रह गया॥

तदायुष्मन्नेष कथितः स्ववृत्तान्तः।

तस्यां दिशि तया सकलजगज्ज्योत्स्नया, अस्मिन्नपि देशे निःशेषजननयनकुमुदेन्दुना त्वया दृष्टेन; दृष्टं यद्द्रष्टव्यम्। अभूच्च मे श्लाघ्यं जन्म। जाते कृतार्थे चक्षुषी। सम्पन्नः सफलः परिभ्रमणप्रयासः॥

कल्याणी—तदिति। तत्, आयुष्मन्=चिरंजीविन्! एषः=अयं, कथितः=श्रावितः, स्ववृत्तान्तः=स्वकीयवार्ता। तस्यां=दक्षिणस्यां दिशि, सकलजगतः=समस्तसंसारस्य, ज्योत्स्नया=कौमुदीरूपया, तया=राजकन्यया [दृष्टया] अस्मिन्नपि देशे=एतस्मिन्नपि स्थाने, निःशेषजनानां=समस्तमानवानां, नयनानि=नेत्राणि, तान्येव कुमुदानि=कैरवाणि, तेषाम् इन्दुना=चन्द्ररूपेण, त्वया=भवता, दृष्टेन=अवलोकितेन, दृष्टम्=अवलोकितं, यद्, द्रष्टव्यं=द्रष्टुं योग्यम्। तत्र तस्या राजकन्याया अत्र च भवतो दर्शनेन जगति सर्वं द्रष्टुं योग्यं मया दृष्टम्, न हीदानीं किञ्चिद् द्रष्टव्यमवशिष्यत इति पान्थोक्तेराशयः। मे=मम, जन्म=जननं च, श्लाघ्यं=प्रशंसनीयम्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभूत्=जातम् । युवयोर्दर्शनेन सफलत्वादिति भावः । चक्षुषी=नेत्रे, कृतार्थे=कृतकृत्ये, जाते । परिभ्रमणप्रयासः=पर्यटनश्रमः, सफलः, सम्पन्नः=जातः ॥

ज्योत्स्ना इस प्रकार हे आयुष्मन् ! मैंने अपना यह वृत्तान्त (आपसे) कह दिया ।

उस (दक्षिण) दिशा में समस्त संसार की कान्तिस्वरूपा उस राजकन्या को और इस देश में समस्त लोगों के नयनरूप कुमुद के लिए चन्द्रमा के समान आपको देख लेने से मैंने वह सब देख लिया जो (धरातल पर) देखने लायक था । अब कुछ भी देखना शेष नहीं रहा और मेरा जन्म प्रशंसनीय (सफल) हो गया । हमारे नेत्र कृतकृत्य हो गये । मेरे पर्यटन (देशाटन) का प्रयत्न सफल हो गया ॥

'तदिदानीं किमन्यत् । अनुमन्यस्व स्वविषयगमनाय माम्' इत्यभिधाय व्यरंसीत् । राजाऽप्येतदाकर्ण्य चिन्तितवान् ॥

कल्याणी - तदिदानीमिति । तत्=तस्मात्, इदानीं=सम्प्रति, किमन्यत्=अपरं (कथनीयम्) । मां=पान्थं, स्वविषयगमनाय=स्वदेशप्रस्थानाय, अनुमन्यस्व=अनुजानीहि, इति=एवम्; अभिधाय=उक्त्वा, व्यरंसीत्=तूष्णीमभूत् । राजाऽपि=नलोऽपि, एतत्=इदम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, चिन्तितवान्=चिन्तनमकार्षीत् ॥

ज्योत्स्ना—इस कारण इस समय और क्या कहूँ ? मुझ पथिक को अपने देश जाने के लिए अब अनुमति दीजिये । इस प्रकार कहकर वह मौन हो गया । राजा भी इसे (उपर्युक्त वृत्तान्त को) सुनकर सोचने लगा ॥

स्त्रीमाणिक्यमहाकरः स विषयः पान्थोऽप्ययं तथ्यवाग्
व्यापारोऽपि विधेर्विचित्ररचनस्तत्किं न सम्भाव्यते ।
किं त्वाश्चर्यमदृष्टरूपविभवोऽप्याकर्ण्यमाना सती
कान्तेत्युन्नतचेतसोऽपि कुरुते नाम्नैव निम्नं मनः ॥६१॥

अन्वयः—सः विषयः स्त्रीमाणिक्यमहाकरः, अयं पान्थः अपि तथ्यवाक्, विधेः व्यापारः अपि विचित्ररचनः । तत् किं न सम्भाव्यते । किन्तु आश्चर्यम् (एतद् यत्) अदृष्टरूपविभवः अपि आकर्ण्यमाना सती कान्ता इति नाम्नैव उन्नतचेतसः (मम) मनः निम्नं कुरुते ॥६१॥

कल्याणी—स्त्रीति । सः विषयः=विदर्भदेशः, स्त्रीमाणिक्यमहाकरः—स्त्रियः=ललना एव माणिक्यानि=रत्नानि, तेषां महाँश्चासावाकरश्चेति महाकरः=प्रशस्तखनिः, अयं पान्थः=पथिकोऽपि, तथ्यवाक्=यथार्थवक्ताऽस्ति, विधेः=विधातुः, व्यापारः=कर्मापि, विचित्ररचनः = विचित्रा रचना यत्र तादृशोऽस्ति, आश्चर्यपूर्णां कृतिं सम्पादयतीति भावः । तत्=तस्मात्, किं न सम्भाव्यते=सर्वमपि भवितुं शक्यत इत्यर्थः । किन्तु=परन्तु, आश्चर्यमेतद्यद्, अदृष्टरूपविभवापि—न दृष्टो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपविभवः=सौन्दर्यसम्पद् यस्याः सा तादृश्यपि। आकर्ण्यमाना=श्रूयमाणा सती, पान्थमुखादिति भावः। 'कान्ता' इति नाम्नैव, उन्नतचेतसः=उन्नतं चेतः=चित्तं यस्य तादृशस्यापि, धीरोदात्तस्यापीत्यर्थः। मम, मनः=चित्तं, निम्नं कुरुते=अधैर्यं गमयति। अत्र रूपविभवदर्शनरूपप्रसिद्धकारणाभावेऽपि मनोनिम्नत्वरूपकार्योत्पत्तिर्वर्णिता। तथावर्णने नामरूपनिमित्तमुक्तम्। तदुक्तनिमित्ता विभावना। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६१॥

ज्योत्स्ना—वह विदर्भ देश स्त्रीरूपी माणिक्यों (रत्नों) का विशाल खजाना है और यह पथिक भी सत्यवक्ता है। जगत्स्रष्टा का कार्य भी विचित्र रचनाओं से परिपूर्ण है अर्थात् विधाता भी आश्चर्यपूर्ण कृतियाँ बनाता रहता है। इसलिए (विधाता की रचनाओं में) क्या सम्भव नहीं है? (कुछ भी हो सकता है) लेकिन आश्चर्य यही है कि उस स्वरूप-सौन्दर्यरूपी सम्पदा को विना देखे, (पथिक के मुख से) सुनने मात्र से ही "कान्ता" इस नाम से ही उन्नत चित्त वाले अर्थात् धीरोदात्त मेरा भी मन गिरता-सा जा रहा है; धैर्य का परित्याग-सा कर रहा है॥

विमर्श—आशय यह है कि पथिक के द्वारा उस राजकन्या के अपूर्व सौन्दर्य को सुनकर राजा नल उस रूप को साक्षात् देखने के लिए अधीर हो उठा ॥६१॥

तथाहि—

नो नेत्राञ्जलिना निपीतमसकृत्तस्याः स्वरूपामृतं
नो नामान्वयपल्लवोऽपि च मया कर्णावतंसीकृतः।
चित्रं चुम्बति चुम्बकाश्मकमयो यद्वद्बलाद् दूरत-
स्तद्वत्तर्जितधैर्यमेतदपि मे तस्यां मनो धावति ॥६२॥

अन्वयः—नो मया नेत्राञ्जलिना असकृत् तस्याः स्वरूपामृतं निपीतम्; च नो नाम अन्वयपल्लवोऽपि कर्णावतंसीकृतः। चित्रम्; यद्वत् अयः दूरतः चुम्बकादश्मकं चुम्बति तद्वत् तर्जितधैर्यम् एतत् मे मनोऽपि तस्यां बलात् धावति ॥६२॥

कल्याणी—नो नेत्रेति। नो=नैव, मया=नलेन, नेत्राञ्जलिना=नयनरूपपाणिपुटेन, असकृत्=अनेकशः, तस्याः=राजकन्यायाः, स्वरूपामृतं=सौन्दर्यसुधा, निपीतं=नितरामास्वादितम्। नो नाम=न वै, अन्वयपल्लवोऽपि=कुलकिसलयोऽपि, कर्णावतंसीकृतः=श्रवणभूषणीकृतः। मया नेत्राभ्यां न तस्याः स्वरूपं दृष्टं नापि कर्णाभ्यां तस्याः वंशः श्रुत इति भावः। चित्रम्=आश्चर्यं, यद्वद्=यथा, अयः=लोहं कर्तृ, दूरतः=दूरात्, चुम्बकाश्मकं=चुम्बकसंज्ञकं पाषाणं, चुम्बति=स्पृशति, तद्वत्=तथा, तर्जितं=तिरस्कृतं, धैर्यं येन तत्तादृशमेतन्मे मनोऽपि तस्यां=तां राजकन्यकां प्रति, बलात्=हठात्, धावति=वेगेन गच्छति। अत्रापि विना हेतुं कार्योत्पत्तिवर्णनाद् विभावना। पूर्वार्द्धे रूपकम्, उत्तरार्द्धे उपमा। तेषामङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—क्योंकि; मैंने नेत्ररूपी अञ्जुलि से उस राजकन्या के सौन्दर्यरूपी अमृत का बार-बार पान नहीं किया और न ही उसके नामरूपी पल्लव को अपने कानों का आभूषण बनाया। फिर भी आश्चर्य है कि चुम्बक नामक पत्थर जिस प्रकार दूर से ही लोहे का चुम्बन कर लेता है -अपनी ओर खींच लेता है, उसी प्रकार धैर्य का परित्याग करने वाला यह मेरा मन भी हठात् उसी की ओर दौड़ रहा है खींच रहा है।

विमर्श – पथिक द्वारा वर्णित उस राजकन्या के प्रति मन में उठने वाली अपनी अधीरता को व्यक्त करते हुए राजा कहता है कि न तो मैंने उस सुन्दरी को कभी देखा है और न ही उसके कुल-नाम आदि को कभी सुना है, फिर भी जिस प्रकार चुम्बक लोहे को दूर से भी अपनी ओर खींच लेता है उसी प्रकार वह सुन्दरी भी मुझे अपनी ओर खींच रही है ॥६२॥

सोऽयं दुर्लभेष्वनुरागः पुंसाम्, अज्वरमस्वास्थ्यम्, अदौर्गत्यं दौःस्थ्यम्, अविषास्वादनमाघूर्णनम्, असाध्वसं कम्पनम्, अनात्मविक्रयं पारवश्यम्, अजरं जाड्यम्, अनिन्धनं ज्वलनम्, अलग्नग्रहमुन्मादनम्, अवात्याघातमुद्भ्रमणम्, अमौनं मौक्यम्, अहीनश्रुतिबाधिर्यम्, अनष्टदृष्टिकमन्धत्वम्, अस्खलितमनोरथं मनःस्तम्भनम्, अमन्त्र आवेशः ॥

कल्याणी—सोऽयमिति। सोऽयं=तादृगेषः, दुर्लभेषु=दुष्प्राप्येषु वस्तुषु, पुंसां=पुरुषाणाम्, अनुरागः=स्नेहः, अज्वरं—नास्ति ज्वरः=तापः यस्मिंस्तादृशम्, अस्वास्थ्यम्=अस्वस्थता, अदौर्गत्यं=दुर्गतस्य भावः दौर्गत्यं, न दौर्गत्यं यत्र तादृशं, दौःस्थ्यम्=दुःस्थितिः, अविषास्वादनम्—न विषस्य=गरलस्य; आस्वादनं=पानं यत्र तादृशम्, आघूर्णनं=शिरोभ्रान्तिः, असाध्वसम्=न साध्वसं=भयं यत्र तादृशं, कम्पनं=वेपथुः, अनात्मविक्रयम्=न आत्मनो विक्रयो यत्र तादृशं, पारवश्यं=पराधीनता, अजरम्— न जरा=वार्धक्यं यत्र तादृशं; जाड्यम्=अङ्गचेष्टाविघातः, अनिन्धनम्— न इन्धनं=काष्ठं यत्र तादृशं, ज्वलनम्=भस्मीभवनम्, अलग्नग्रहम्—न लग्नः=संबद्धः, ग्रहः=सूर्यादिर्यत्र, तदुन्मादनम्=उन्मत्तता, अवात्याघातम्—न वात्यायाः=चक्रवातस्य, आघातः=प्रहारः यत्र तद्, उद्भ्रमणम्=उद्भ्रान्तिः, अमौनम्—नास्ति मौनं=तूष्णींभावो यत्र तादृशं, मौक्यम्=मूकभावः, अहीनश्रुतिः—न हीने=नष्टे, श्रुती=कर्णौ यत्र तादृशं, बाधिर्यम्=बधिरत्वम्, अनष्टदृष्टिकम्—न नष्टे दृष्टी=नेत्रे यत्र तादृशम्, अन्धत्वम्=दर्शनाशक्तत्वम्। अस्खलितमनोरथम्—न स्खलितः=बाधितः, मनोरथः=अभिलाषः यत्र तद्, मनःस्तम्भनम्=मनसश्चेतसः स्तम्भनम्=स्तब्धत्वम्; अमन्त्रः— न मन्त्रः, मन्त्रप्रयोग इत्यर्थः, यस्मिन् स आवेशः=यक्षपिशाचादीनां मनसि प्रवेशः। विभावनाऽलङ्कारः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार का यह दुर्लभ वस्तुओं में जो पुरुषों का अनुराग होता है (वह) विना ज्वर के ही अस्वस्थता, विना दुर्गति के ही दुःस्थिरता, विना विषपान किये ही शिर का घूमना (बेहोशी), विना भय के ही कम्पन, विना आत्मसमर्पण किये ही पराधीनता, विना वृद्धता के ही जड़ता, बिना ईन्धन के ही ज्वाला (जलना), विना ग्रहों से सम्बद्ध हुए ही उन्मत्तता, विना चक्रवात के प्रहार के ही (पक्षाघात या वायुविकार के विना ही) उद्भ्रान्ति (छटपटाहट), विना मौन हुए ही मूकता (गूंगापन), विना कानों के नष्ट हुए ही बधिरता (बहरापन), विना आँखों के नष्ट हुए ही अन्धता, विना मनोरथों के नष्ट हुए ही मानसिक स्तब्धता और विना मन्त्र (प्रयोग) के ही आवेश के समान होता है ॥

"सर्वथा नमः सुस्थितजनदुर्जनाय मनोजन्मने, यस्यायमेवंविधो व्यापारः" इत्यवधारयन्नवतार्य सर्वाङ्गेभ्यो भूषणानि तस्मै सदयमदात् ॥

कल्याणी—सर्वथेति। सुस्थितजनदुर्जनाय—सुस्थितेषु=स्वस्थचित्तेषु, जनेषु=लोकेषु, दुर्जनाय=दुष्टाय, मनोजन्मने=कामदेवाय, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, नमः, यस्य=मनोजन्मनः, अयम्=एवंविधः, व्यापारः=कर्म। इति=एवम्, अवधारयन्-चिन्तयन्, सर्वाङ्गेभ्यः=सकलावयवेभ्यः, भूषणानि=अलङ्कारान्, अवतार्य=उद्धृत्य, तस्मै=पान्थाय, सदयं=सकरुणम्, अदात्=प्रदत्तवान्।

ज्योत्स्ना—(इस प्रकार) "सर्वथा स्वस्थ चित्त लोगों को भी दुर्जन अर्थात् सुस्थिर चित वाले लोगों को भी दुर्जन बना देने वाले कामदेव के लिए नमस्कार है, जिसका इस प्रकार का यह व्यापार (कार्य) है" इस प्रकार विचार करते हुए (अपने) समस्त अंगों पर से आभूषणों को उतार कर अत्यन्त दया के साथ उस (पथिक) को दे दिया ॥

तैस्तैरालापैः स्थित्वा च कञ्चित्समयमिममथ यथाप्रस्थितं पान्थं कथमपि प्रेषयामास ॥

कल्याणी—तैस्तैरिति। तैस्तैः=बहुविधैः, आलापैः=प्रासङ्गिकभाषणैश्च, कञ्चित्समयं=कञ्चित्कालं, स्थित्वा=समुपविश्य, अथ=अनन्तरम्, इमं, पान्थं=पथिकं, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। यथाप्रस्थितम्=प्रस्थातव्यप्रदेशं प्रति, प्रेषयामास=विससर्ज ॥

ज्योत्स्ना—उन-उन प्रकार के बहुविध प्रासंगिक बातों के द्वारा कुछ समय व्यतीत करने के पश्चात् (राजा ने) उस पथिक को किसी-किसी प्रकार से उसके जाने योग्य देश की ओर भेजा ॥

स्वयमपि तत्कालान्तरालमिलितैर्नक्षत्रैरिव सार्द्रमृगशिरोहस्तैः सश्रवणचित्रकृत्तिकोपस्करवाहिभिः पार्द्धिकपरिजनैरनुगम्यमानो राजा निजावासमयासीत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—स्वयमिति । राजा=नलः, स्वयमपि=आत्मनापि, तत्कालान्तराले=तत्समयाभ्यन्तरे, मिलितैः=संगतैः, नक्षत्रैरिव=तारकाभिरिव, सार्द्रमृगशिरोहस्तैः—आर्द्राणि=रुधिरलिप्तानि, यानि मृगाणां शिरांसि तैः सहिताः हस्ता येषां तादृशैः; नक्षपक्षे—आर्द्रा-मृगशिरा-हस्तश्च ये नक्षत्रविशेषास्तैः सह विद्यमानैः; सश्रवणचित्रकृत्तिकोपस्करवाहिभिः—सश्रवणां=कर्णसहितां, चित्रकृत्तिकां=चित्रनाम्नः पशुविशेषस्य कृत्तिकां=चर्म, उपस्करं च=मृगयोचितसामग्रीं च, वहन्ति=धारयन्तीत्येवंशीलैः; नक्षत्रपक्षे—सश्रवणचित्रः=श्रवणचित्रनक्षत्रसहितः, यः कृत्तिकोपस्करः=कृत्तिकासमूहस्तं वहन्तीति तैः । नक्षत्राणां षट्कं कृत्तिकेति प्रसिद्धिः । पापर्द्धिकपरिजनैः=आखेटकपरिवारैः, अनुगम्यमानः अनुस्रियमाणः, निजावासं=स्वनिवासस्थानम, अयासीत्=अगमत् । श्लेषानुप्राणितोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—(नलपक्ष में) स्वयं राजा भी उस समय बीच (रास्ते) में मिले हुए नक्षत्रों के समान रक्त से लिप्त (सने हुए) मृग के शिरों को हाथों में लिये हुए और कर्णयुक्त चित्रनामक विशेष प्रकार के पशु (चित्रमृग) के चमड़े तथा शिकार के लिए उचित सामग्रियों से युक्त शिकारीरूप परिजनों (व्याधों) से अनुगम्यमान होता हुआ अपने निवास-स्थान को चला गया ।

(चन्द्र पक्ष में) स्वयं चन्द्रमा भी उस समय मध्य में मिले हुए आर्द्रा, मृगशिरा और हस्त नक्षत्र के साथ विद्यमान श्रवण, चित्रा एवं कृतिका नक्षत्र के समुदाय से समन्वित नक्षत्रमण्डल के द्वारा अनुगम्यमान होता हुआ अपने आवास-स्थान की ओर चला गया ।

विमर्श—शाब्दी समानता के कारण प्रकृत गद्यखण्ड के राजा एवं चन्द्रमा दोनों पक्षों में अर्थ निकलते हैं ॥

ततः प्रभृति च—

> हृद्योद्यानमरुत्तरङ्गितसरित्तीरे तरूणामध-
> स्तल्पेऽनल्पसरोजिनीनवदलप्रायेऽपि खिन्नात्मनः ।
> धीरस्यापि मनाङ्मनस्तृणकुटीकोणान्तराले बला-
> ल्लग्नोऽस्येति विभाव्यते परवशैरङ्गैरनङ्गानलः ॥६३ ॥

अन्वयः—हृद्योद्यानमरुत्तरङ्गितसरित्तीरे तरूणाम् अधः अनल्पसरोजिनीनवदलप्रायेऽपि तल्पे खिन्नात्मनः धीरस्य अपि अस्य परवशैः अङ्गैः मनाक् मनस्तृणकुटीकोणान्तराले अनङ्गानलः बलात् लग्नः इति विभाव्यते ॥६३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—हृद्येति । हृद्योद्यानं—हृद्यं=मनोहरम्, उद्यानम्=उपवनं यत्र तादृशं यत् मरुत्तरङ्गितसरितः=पवनान्दोलितनद्याः, तीरं=तटं, तस्मिन् । तरूणां=वृक्षाणाम्, अधः=तलप्रदेशे, अनल्पाः—प्रभूताः, याः सरोजिन्यः— कमलिन्यः, तासां नवदलानि=नूतनपत्राणि, तत्प्रायेऽपि, तल्पे=शय्यायां, खिन्नात्मनः=खिन्नः सन्तप्तः, आत्मा=मनः शरीरं वा यस्य तादृशस्य, मदनशरविद्धत्वाद्विरहानलसन्तापाद्वेति भावः । धीरस्यापि=धैर्यशालिनोऽपि, अस्य=नलस्य, परवशैः=पराधीनैः, अङ्गैः=अवयवैः, मनाक्=ईषत्, मन एव तृणकुटी=पर्णशाला, तस्याः कोणान्तराले=एकदेशमध्ये, अनङ्गानलः=कामाग्नि, बलात्=हठात्, लग्नः=अनुषक्तः, इति=एवं, विभाव्यते=ज्ञायते । अत्रोक्तनिमित्ता विशेषोक्तिः । मनसि तृणकुटीत्वारोपादनङ्गे चानलत्वारोपाद्रूपकम् । तेषां सङ्करः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६३॥

ज्योत्स्ना—और उसी समय से, मनोहर उपवन की हवा से आन्दोलित (लहराती हुई) नदी के तीर पर स्थित वृक्षों के नीचे प्रभूत (पर्याप्त) कमलिनी के नूतन पत्रों से युक्त पलंग पर (लेटे होते हुए) भी खिन्न मन वाले धैर्यशाली राजा के पराधीन अंगों से भी यह प्रतीत होता था कि उसके मनरूपी पर्णकुटी के किसी भाग में हठात् थोड़ी कामाग्नि लग गयी थी अर्थात् राजा नल उस अपूर्व सुन्दरी में आसक्त हो जाने से कामरूपी अग्नि से जलने लगा था ॥६३॥

एवमस्य—

पुनरपि तदभिज्ञान्पृच्छतः पान्थसार्थान्
प्रतिपथमथ यूनो यान्ति तस्य क्रमेण ।
हरचरणसरोजद्वन्द्वमुद्राङ्कमौले-
र्मदनमदनिवासा वासराः प्रावृषेण्याः ॥६४॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां हरचरण-सरोजाङ्कायां प्रथम उच्छ्वासः समाप्तः ।

अन्वयः—(एवमस्य) पुनरपि प्रतिपथं तदभिज्ञान् पान्थसार्थान् पृच्छतः हरचरणसरोजद्वन्द्वमुद्राङ्कमौलेः तस्य यूनः क्रमेण मदनमदनिवासाः प्रावृषेण्याः वासराः यान्ति ॥६४॥

कल्याणी—पुनरपीति । एवमस्य, पुनरपि=भूयोऽपि, प्रतिपथं=प्रतिमार्गं, तदभिज्ञान्—तस्याः=दमयन्त्याः, अभिज्ञा=वेत्तारः तान्, पान्थसार्थान्=पथिकसमूहान्, पृच्छतः=दमयन्तीविषयकप्रश्नान् कुर्वतः, हरस्य=शिवस्य, यत् चरणसरो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जद्वन्द्वं=पादद्वयुगलं, तस्य मुद्राङ्कः=मुद्राचिह्नं, मौलौ=मस्तके यस्य तादृशस्य तस्य यूनः=तरुणस्य नलस्य, क्रमेण=क्रमशः, मदनमदनिवासाः—मदनमदस्य=काममदस्य निवासः येषु तादृशाः, प्रावृषेण्याः—प्रवर्षतीति प्रावृट्=वर्षर्तुः, तत्र भवाः प्रावृषेण्याः, वासराः=वर्षाकालिकदिवसाः; 'प्रावृष एण्यः' इति भवार्थे एण्यः। यान्ति=गच्छन्ति। मालिनी वृत्तम् ॥६४॥

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां
प्रथमोच्छ्वासः समाप्तः।

ज्योत्स्ना—इस प्रकार इसके बाद बार-बार प्रत्येक मार्ग में उस (राजकन्या दमयन्ती) को जानने वाले पथिकों से पूछते हुए (दमयन्तीविषयक प्रश्नों को करते हुए) भगवान शंकर के चरणकमलों के चिह्न से चिन्तित मस्तक वाले उस युवक के काम-मद के निवासस्वरूप वर्षाकाल के दिन क्रमशः व्यतीत हो रहे थे।

विमर्श—कवि का आशय यह है कि पथिक के मुख से विदर्भ राजकुमारी दमयन्ती के अपूर्व सौन्दर्यरूपी रस का आस्वादन कर राजा नल उस पर इतना अधिक अनुरक्त हो गया कि मार्ग में आने-जाने वाले पथिकों से भी उसी के विषय में बराबर पूछताछ करने लगा ॥६४॥

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टप्रणीत नलचम्पू-काव्य के प्रथम उच्छ्वास की श्रीनिवासशर्माकृत 'ज्योत्स्ना' हिन्दी व्याख्या समाप्त हुई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वितीयः उच्छ्वासः

अथ कदाचिदवगलद्बहलपरिमलमिलदलिकुलाकुलितकुटजकदम्बकुसुमकर्णपूरशून्यकाननासु, विश्राम्यन्मदमुखरमयूररसनावलीकलक्वणितासु, विरलतरतडिल्लताललितलावण्यासु, विगतहंसद्विजराजिषु, पतत्पयोधरासु, क्षीणशुक्रासु, वृद्धास्विव गतप्रायासु वर्षासु, रतिमकुर्वाणो मदकलकलहंसहासहारिण्यामुत्सुकस्तरुण्यामिवागतायां शरदि, द्विरदमदगन्धसम्बन्धानुधाविते कुसुमितसप्तच्छदच्छायासु विस्फूर्जति रोषोद्घूषितकेसरकरालकण्ठे कण्ठीरवकदम्बके, गृहदीर्घिकामृणालिकाकाण्डखण्डनविरामरमणीयमुन्नदत्सु शरत्समयप्रवेशमङ्गलमृदङ्गेष्विव हंसमण्डलेषु, स्मरशरनिकरनिर्मथितपान्थसार्थप्रहाररुधिरनिष्यन्दबिन्दुसन्दोह इव वनस्थलीषून्मिषति बन्धुरबन्धूककुसुमप्रकरे, प्रसरन्तीषु शरल्लक्ष्मीप्रवेशानन्दवन्दनमालासु निःशङ्कशुककुलावलीषु, श्रूयमाणासु स्मरराजराज्यविजयघोषणासु पक्वकलमगन्धशालिपालिकाबालिकाहर्षगीतिषु, शरच्छ्रीकटाक्षेषून्मीलत्सु नीलनीरजेषु, क्वणति वर्षावधूप्रस्थानपटहे षट्चरणचक्रवाले, प्रभात इव घनतिमिरविरामरमणीये जाते जलनिधिशयनशायिशार्ङ्गिनिद्राद्रुहि विनिद्रसान्द्ररससरोजराजिराजितसरसि शरत्समये. स महीपतिः समासन्नवनविहारिकिन्नरमिथुनेन गीयमानमिदमनश्लीलं श्लोकत्रयमश्रृणोत् ॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरम्, कदाचित्=कस्मिंश्चित्काले, वृद्धास्विव=वार्धक्यं गतासु स्त्रीष्विव, अवगलता=प्रसरता, बहलेन=प्रचुरेण, परिमलेन=सौरभेण, मिलन्ति=संगच्छमानानि, यानि अलिकुलानि=मधुपवृन्दानि, तैः आकुलितानि=व्याप्तानि, कुटजकदम्बकुसुमानि=कुटजनीपपुष्पाणि, तान्येव कर्णपूराः=श्रवणभूषणानि, तैः शून्यानि=विरहितानि, काननानि=विपिनानि यासु तादृशीषु । वृद्धापक्षे—तादृशैः कुसुमैः=पुष्पदामभिः, कर्णपूरैश्च=उत्तंसैश्च, शून्यं=विरहितं, कं=शिरः, आननं=मुखं च यासां तासु । विश्राम्यद्=विरमत्, मदेन=उल्लासेन, मुखराणां=शब्दायमानानां, मयूराणां या रसनावली=जिह्वाश्रेणिः, तस्याः कलक्वणितं=मधुरध्वनिः यासु तासु । वृद्धापक्षे—विश्राम्यन्मदमुखरमयूराणां कलक्वणितमिव रसनावल्याः=काञ्चीश्रेण्याः, कलक्वणितं=मधुरध्वनिः यासां तासु । विरलतरम्=अतिन्यूनतां गतं, तडिल्लतानां=विद्युद्वल्लरीणां, ललितं=मनोहरं, लावण्यं=सौन्दर्यं यासु तासु । वृद्धापक्षे— विरलतरं तडिल्लतानामिव ललितं=मधुराङ्ग-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विन्यासः, लावण्यं= सौन्दर्यं च यासां तासु । विगता=व्यपेता, हंसद्विजानां= मरालपक्षिणां, राजयः=पङ्क्तयः यासु तासु । वृद्धापक्षे—विगता हंसा इव (शुभ्राः) ये द्विजाः=दन्ताः, तेषां राजिः=पंक्तिः यासां तासु । पतन्तः=भ्रश्यन्तः, पयोधराः= मेघाः, यासु तादृशीषु । वृद्धापक्षे—पतन्तः=अवनमन्तः, पयोधराः=कुचाः यासां तासु । क्षीणः, शुक्रः=शुक्राख्यग्रहः यासु तासु । वृद्धापक्षे—क्षीणं=विनष्टं, शुक्रं= रजः यासां तासु; शुक्रस्य पुंसां वीर्यभावेन स्त्रीणां च रजोभावेन प्रसिद्धिः । 'पुमान् पुंसोऽधिके शुक्रे स्त्री भवत्यधिके (शुक्रे) स्त्रियाः' ।—इति मनुः । गतप्रायासु= स्वल्पशेषासु, वृद्धापक्षे—गतः=व्यपेतः, प्रायः=प्रकृष्टः, महानिति यावत् । अयः= भाग्यं यासां तासु । वर्षासु रतिं=चित्तासक्तिं, पक्षे–संभोगम्, अकुर्वाणः=न विदधानः, तरुण्यामिव = युवत्यामिव, आगतायाम् = अभिनवप्रवृत्तायां, पक्षे — रागात्स्वयं प्राप्तायां, मदकलकलहंसहासहारिण्यां—मदेन कलाः=शब्दायमानाः, कलहंसाः= राजहंसाः एव हासः, तेन हारिण्यां=रम्यायां, पक्षे—मदेन=तारुण्योद्रेकेन, कलकलः= अस्पष्टः संक्षुब्धो वा ध्वनिर्यस्यास्तथा हंसाविव (शुभ्रौ) हासहारौ स्तोऽस्यामिति तथोक्तायां; कर्मधारयान्मतुबर्थ इनिः, न कर्मधारयान्मत्वर्थीयो बहुव्रीहिश्चेत्तदर्थ- प्रतिपत्तिकर इति तु प्रायिकम् । शरदि उत्सुकः=उत्कः, कुसुमितसप्तच्छदच्छायासु— कुसुमिताः=पुष्पिताः, ये सप्तच्छदाः=सप्तपर्णवृक्षाः, तेषां छायासु । द्विरदमद- गन्धसम्बन्धानुधाविते— द्विरदमदगन्धसम्बन्धेन=शरदि — पुष्पितानां सप्तच्छदानां गजमदगन्धित्वादयं गजमदगन्ध इति प्रत्यभिज्ञया, अनुधाविते । रोषोद्घुषित- केसरकरालकण्ठे— रोषेण=गजभ्रान्तिजनितक्रोधेन, उद्घुषितैः=उद्गतैः, केसरैः= ग्रात्वाकेशैः, करालः=भीषणः, कण्ठः=गलप्रदेशः यस्य तस्मिन् । कण्ठीरवकदम्बके= सिंहसमूहे, विस्फूर्जति=गर्जति सति । शरत्समयप्रवेशमङ्गलमृदङ्गेष्विव —शरत्स- मयस्य प्रवेशे=प्रवेशावसर इत्यर्थः, मङ्गलसूचकमुरजेष्विव, हंसमण्डलेषु=मराल- चक्रेषु, गृहदीर्घिकासु=गृहवापीषु या मृणालिकाः=कमलिन्यः तासां ये काण्डाः= दण्डाः, तेषां खण्डनाय=चञ्चुभिर्विदारणाय यो विरामः=अवरोधः अर्थान्नादस्य, तेन रमणीयं=रम्यं यथा स्यात्तथा । उन्नदत्सु=नादं कुर्वत्सु सत्सु, नादकाले हंसाः मध्ये-मध्ये मृणालमपि चर्वन्ति, तत्कषायसंशुद्धकण्ठाश्च नादं कुर्वन्तीत्यर्थः । वनस्थ- लीषु=वनभूमिषु, स्मरशरनिकरैः=कन्दर्पशरसमूहै, निर्मथिताः=प्रहताः, ये पान्थ- सार्थाः=पथिकसमूहाः, तेषु ये प्रहाराः=आघाताः, तेभ्यो यो रुधिरनिष्यन्दः= शोणितप्रवाहः, तस्य बिन्दुसंदोह इव=बिन्दुसमूह इव, बन्धुरबन्धूककुसुमप्रकरे=मनो- ज्ञबन्धूककुसुमसमूहे, उन्मिषति=विकसति सति, निःशङ्कशुककुलावलीषु—निःश- ङ्कानि=निर्भयानि, यानि शुककुलानि=कीरसमूहाः, तेषाम् अवलीषु=पंक्तिषु, शरल्ल- क्ष्म्याः प्रवेशेन यः आनन्दः=हर्षः, तेन वन्दनमालासु=तोरणरूपासु, प्रसरन्तीषु=सम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्ततः विचरन्तीषु, पक्वः=परिणतः, यः कलमः=श्वेतशालिश्च गन्धशालिश्च, तयोः पालिकाः=रक्षाधिकृताः, या बालिकाः=कृषककन्यकाः, तासां हर्षगीतिषु=प्रमोदपूर्णगीतिषु, स्मरराजराज्यविजयघोषणासु=मदननृपतिराज्यस्य विजयघोषणारूपासु, श्रूयमाणासु=आकर्ण्यमानासु सतीषु। नीलनीरजेषु=श्यामाम्भोरुहेषु, शरच्छ्रीकटाक्षेषु=शरल्लक्ष्म्याः कटाक्षरूपेषु, उन्मीलत्सु=विकसत्सु सत्सु। षट्चरणचक्रवाले=मधुपमण्डले, वर्षावधूप्रस्थानपटहे—वर्षा एव वध्वः=अङ्गनाः, तासां प्रस्थाने=प्रयाणकाले, पटहे=दुन्दुभिरूपे, क्वणति=शब्दायमाने सति। प्रभात इव=प्रातःकाल इव, घनतिमिरविरामरमणीये—घनैः=मेघैः, हेतुभिर्यः तिमिरः=अन्धकारः, तस्य विरामेण=अवसानेन रमणीये=रम्ये। प्रभातपक्षे—घनस्य=निबिडस्य, तिमिरस्य विरामेण रमणीये। विनिद्रसान्द्रसरससरोजराजिराजितसरसि— विनिद्राणि=विकसितानि, सान्द्राणि=निबिडानि, सरसानि=स्निग्धानि च, यानि सरोजानि=कमलानि, तेषां राजिभिः=पङ्क्तिभिः, राजितानि=सुशोभितानि, सरांसि=तडागाः यत्र तादृशे, प्रभातस्यापि विशेषणमेतदिति बोध्यम्। जलनिधिशयनशायिशार्ङ्गिनिद्राद्रुहि— जलनिधिः=क्षीरसागरः, एव शयनं=शय्या,. तत्र शेते इत्येवंशीलस्य शार्ङ्गिणः=विष्णोः, निद्रायै द्रुह्यति इति तस्मिन्, क्षीरसागरे मासचतुष्टयं शयानो विष्णुः शरत्समय एव प्रबुध्यत इति ज्ञेयम्। तादृशे शरत्समये। जाते=प्रादुर्भूते, स महीपतिः=नृपतिर्नलः, समासन्ने=समीपवर्तिनि, वने=विपिने, विहारिणा=विहरणशीलेन, किन्नरमिथुनेन=किम्पुरुषयुगलेन, गीयमानमिदम् अनश्लीलम्=अश्लीलत्वदोषविवर्जितम्, सर्वथा शोभनमिति यावत्। श्लोकत्रयम् अशृणोत्=आकर्णयत्। श्लेषानुप्राणितोपमा, रूपकमुत्प्रेक्षालङ्कारश्च। तेषां परस्परनैरपेक्ष्येण संसृष्टिः॥

ज्योत्स्ना—इसके बाद किसी समय वृद्धावस्था को प्राप्त स्त्री के समान फैलते हुए प्रचुर पराग पर झूमते हुए भ्रमरों से व्याप्त कुटज एवं कदम्बरूप कर्णाभूषणों से रहित जंगल में मद से शब्दायमान मयूरों के जिह्वाओं की मधुर ध्वनि के शान्त हो जाने पर, विद्युल्लता की मनोरम लावण्यता के अत्यन्त न्यून हो जाने पर, हंस पक्षियों की पंक्तियों के चले जाने पर, मेघों के समाप्त हो जाने पर, शुक्र ग्रह के क्षीण हो जाने पर, समाप्तप्राय वर्षा ऋतु में चित्तासक्ति न रहने पर, तरुणी के समान आती हुई मद से शब्दायमान राजहंसरूप हास के कारण मनोहर शरद् ऋतु के प्रति उत्कण्ठित, पुष्पित सप्तपर्ण वृक्षों की छाया में हाथी के मदजलगन्ध की भ्रान्ति से दौड़ते हुए क्रोध से उलटे हुए केसरों (गर्दन पर स्थित बालों) के कारण भयंकर गलप्रदेश (कण्ठ) वाले सिंहों के गर्जन करते समय, शरद ऋतु के प्रवेश के समय मंगलसूचक मृदंग वाद्य के समान हंससमूहों के अन्तःपुर की दीर्घिकाझील में स्थित कमलिनी के दण्ड को खाकर मधुर ध्वनि करने पर, वनप्रदेशों में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कामदेव के बाणसमूह के द्वारा निर्मथित (आहत) पथिकों के आघात-स्थलों से बहते हुए रुधिर-बिन्दुसमूह के समान रमणीय बन्धूक-पुष्पों के प्रस्फुटित होने पर, निर्भय शुक पक्षी की पंक्तियों के शरद्रूपी लक्ष्मी के प्रवेश के समय आनन्द के कारण ध्वजपताकाओं के समान चारो तरफ विचरण करने पर, पके हुए श्वेत एवं सुगन्धित धान की रक्षा के लिए अधिकृत कृषक-कन्याओं के द्वारा कामदेवरूप राजा की विजयघोषणारूप आनन्ददायक गीतों को सुनते हुए, शरद्रूपी लक्ष्मी के कटाक्षस्वरूप नीलकमलों के विकसित होने पर, वर्षारूपी वधू के प्रस्थान के समय भ्रमरसमुदाय द्वारा दुन्दुभिरूप शब्द करने पर, मेघजन्य अन्धकार के समाप्त हो जाने के कारण प्रातःकाल के समान रमणीय प्रस्फुटित घने स्निग्ध कमलों की पंक्तियों से तालाबों के सुशोभित होने पर, क्षीरसागररूप शय्या पर शयन करने वाले भगवान् विष्णु की निद्रा को समाप्त करने वाले शरद् ऋतु के प्रादुर्भूत होने पर उस राजा नल ने समीपवर्ती जंगल में विहार करते हुए किन्नरयुगलों द्वारा गाये जाते हुए अत्यन्त सुन्दर इन तीन श्लोकों को सुना।

विशेष—प्रकृत गद्य खण्ड में श्लिष्ट पदों की बहुलता है। यहाँ कर्णपूरशून्य, मुखमयूर, विरलतरतडिल्लता, हंसद्विज आदि शब्दों के वर्षा ऋतु पक्ष में और वृद्धा स्त्री पक्ष में अर्थ प्रस्फुटित होते हैं। एतदर्थ संस्कृत व्याख्या का अवलोकन करना चाहिए ॥

धन्याः शरदि सेवन्ते प्रोल्लसच्चित्रशालिकान्।
प्रासादान् स्त्रीसखाः पौराः केदारांश्च कृषीवलाः ॥१॥

अन्वयः—शरदि धन्याः स्त्रीसखाः पौराः प्रोल्लसच्चित्रशालिकान् प्रासादान् कृषीवलाः (प्रोल्लसच्चित्रशालिकान्) केदारांश्च सेवन्ते ॥१॥

कल्याणी—धन्या इति। शरदि=शरत्काले, धन्याः=पुण्यवन्तः, स्त्रीसखाः=सपत्नीकाः, पौराः=पुरवासिनः, प्रोल्लसच्चित्रशालिकान्—प्रोल्लसन्त्यः=विलसन्त्यः, चित्रशालिकाः=आलेख्यभूमिकाः येषु, तथाविधान् प्रासादान्=हर्म्याणि, कृषीवलाः=कृषकाः, प्रोल्लसन्तः=विलसन्तः, चित्राः=बहुविधाः, शालयः=धान्यानि येषु, तथाविधान् केदारांश्च=क्षेत्राणि च, सेवन्ते=उपभुञ्जते रक्षन्ति च। श्लेषालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१॥

ज्योत्स्ना—शरत्काल में भाग्यशाली नागरिक लोग रमणीय चित्रों से सजे हुए महलों और धानों से समन्वित खेतों का पत्नियों सहित सेवन करते हैं अथवा वे नागरिक लोग धन्य हैं, जो मनोरम चित्रों से युक्त भित्तियों वाले महलों तथा धान से युक्त खेतों का सपत्नीक सेवन करते हैं ॥१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नमिताः फलभारेण न मिताः शालिमञ्जरीः ।
केदारेषु हि पश्यन्तः के दारेषु विनिःस्पृहाः ॥२॥

अन्वयः—हि केदारेषु फलभारेण नमिताः न मिताः शालिमञ्जरीः पश्यन्तः दारेषु के विनिःस्पृहाः (स्युः) ॥२॥

कल्याणी—तेषां स्त्रीसखत्वे हेतुमाह—नमिता इति । हि=यतः, केदारेषु=क्षेत्रेषु, फलभारेण=फलभरेण, नमिताः=वक्रिताः, न, मिताः=स्तोकाः, प्रचुरा इति यावत् । शालिमञ्जरीः=शाल्यन्नगुच्छाः, पश्यन्तः=विलोकयन्तः, तद्दर्शनस्योद्दीपनत्वाद् दारेषु=रमणीषु, के=पुरुषाः, विनिःस्पृहाः=अनुत्कण्ठिताः स्युः, सर्वेऽपि तदानीं दारेषूत्सुका भवन्तीत्यर्थः । अत्रार्थापत्तिरलङ्कारः । 'नमिताः—न मिताः, केदारेषु=के दारेषु' इति यमकद्वयम् । तेषां सङ्करः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि, खेतों में फलों के भार से झुकी हुई अपरिमित धान की बालियों को देखता हुआ (उनका दर्शन उत्तेजक होने के कारण) कौन पुरुष स्त्रियों के प्रति उत्कण्ठित नहीं होता अर्थात् ऐसे समय में सभी लोग स्त्रियों के प्रति उत्कण्ठित हो जाते हैं ॥२॥

प्रावृषं शरदं चापि बहुधाकाशहारिणीम् ।
विलोक्य नोत्सुकः कः स्यान्नरो नीरजसङ्गताम् ॥३॥

अन्वयः—बहुधा आकाशहारिणीं नीरजसं प्रावृषं (बहुधा काशहारिणीं) नीरजसङ्गतां शरदं च अपि विलोक्य कः नरः उत्सुकः न स्यात् ॥३॥

कल्याणी—प्रावृषमिति । [बहुधा+आकाशहारिणीम् बहुधा=प्रायशः, आकाशहारिणीम्=आकाशं हरति, मेघैस्तिरोदधातीत्येवंशीलां, [नीरजसम्+गताम्] नीरजसं=निःपांशुं गताम्, प्रावृषम्=वर्षर्तुं, बहुधा, काशैः=काशपुष्पैः, हारिणीम्=मनोज्ञां, [नीरज+सङ्गताम्] नीरजैः=कमलैः, सङ्गतां=युक्तां, शरदं चापि विलोक्य=दृष्ट्वा, को नरः= पुरुषः, उत्सुकः=उत्कण्ठितः, न स्यादिति शेषः । सर्वेऽप्युत्सुका भवन्तीत्यर्थत आपाद्यमानतयाऽर्थापत्तिः । प्रस्तुतस्य प्रावृषः शरदश्च बहुधाकाशहारिणीत्वनीरजसङ्गतात्वरूपैकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिताऽलङ्कारः, स च श्लेषमूलकः । द्वयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३॥

ज्योत्स्ना—प्रायशः आकाश को तिरोहित करने वाली, धूलि से रहित वर्षा ऋतु और काश-पुष्पों के कारण मनोरम तथा कमलों से युक्त शरद ऋतु को देखकर कौन पुरुष उत्कठित नहीं होता ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आशय यह है कि वर्षा ऋतु में आकाश मेघों से आच्छन्न रहता है और वर्षा के कारण पृथ्वी धूलिरहित हो जाती है तथा शरद् ऋतु में काश पुष्प खिले रहते हैं और विकसित कमलों की बहुलता रहती है। अतः ये दोनों ही ऋतुयें सामान्यतया सबको आकर्षित करते हुए कामोद्दीपक होती हैं ॥३॥

अनेन मृदुमूर्च्छनातरङ्गरङ्गिताक्षरेण श्रवणपथप्रथमप्रियातिथिना श्लोकत्रयेण विषविषमविषयवैरस्यव्रततिकठिनकुठारेण, दारपरिग्रहपराङ्मुखोऽपि शृङ्गारशृङ्गिशृङ्गमुत्तुङ्गमारोप्यमाणस्तदेवोद्यानममन्दमन्दारमकरन्दामोदमत्तमधुकरमधुरझङ्काररमणीयमुपसर्तुमारभत ॥

कल्याणी—अनेनेति। मृदुमूर्च्छनातरङ्गरङ्गिताक्षरेण—मृद्वी=कोमला या मूर्च्छना=स्वराणां नियमितारोहावरोहः, तस्य तरङ्गैः=लहरीभिः, रङ्गितानि=ओतप्रोतानि अक्षराणि यस्य तेन। श्रवणपथस्य=श्रोत्रमार्गस्य, प्रथमः=अपूर्वः, प्रियः=प्रीतिकरः, तिथिः=प्रथमश्रुत इत्यर्थस्तेन। अनेन=किन्नरमिथुनगीयमानेन, विषमिव=गरलमिव, विषमः=अनिष्टकरः यः विषयः=लौकिकोपभोगः, तस्य वैरस्यम्=अप्रियत्वमेव व्रततिः=लता, तस्याः कठिनकुठारेण=कठोरपरशुभूतेन, श्लोकत्रयेण=श्लोकत्रयसमूहेन, दारपरिग्रहपराङ्मुखोऽपि=प्रियाग्रहविमुखोऽपि, उत्तुङ्गम्=उच्चैः, शृङ्गारशृङ्गिशृङ्गं=शृङ्गारशैलशिखरम्, आरोप्यमाणः=नीयमानः (राजा नल), तदेव=पूर्ववर्णितमेव, अमन्दैः=समधिकैः, मन्दारमकरन्दामोदैः=मन्दारपुष्परससौरभैः, मत्ताः=उन्मत्ताः, ये मधुकराः=भ्रमराः, तेषां मधुरझङ्कारेण=कलगुञ्जितेन, रमणीयं=रम्यम्, उद्यानम्=उपवनम्, उपसर्तुम्=उपगन्तुम्, आरभत=आरब्धवान् ॥

ज्योत्स्ना—स्वरों के सुमधुर आरोहावरोहपूर्वक तरङ्गों से ओतप्रोत अक्षरों से समन्वित, कर्णमार्गों के लिए अपूर्व प्रीति प्रदान करने वाले अतिथि, विष के समान अनिष्टकर जो सांसरिक विषयोपभोग, उससे विरक्तिरूपी लता के लिए तीक्ष्ण कुठाररूप किन्नरयुगलों द्वारा गीयमान उक्त तीन श्लोकों से पत्नी-ग्रहण से पराङ्मुख होते हुए भी उन्नत शृंगाररूपी पर्वत के शिखर पर आरूढ़ होते हुए राजा नल ने विकसित मन्दार-पुष्पों के तीक्ष्ण सुगन्ध से उन्मत्त भ्रमरों के मधुर गुञ्जार के कारण रमणीय बने हुए उसी पूर्ववर्णित उपवन की ओर चलना आरम्भ किया ॥

'प्रथमसम्मुखप्रेङ्खितेन चलच्चन्दनामोदनन्दिनान्दोलनवेगवित्रस्तकुसुमिततरुशिखरसुप्तसुरतश्रमखिन्नकिन्नरीनिबिडतरपरिरभ्यमाणकिन्नरनमस्कृतेन क्रीडाकमलदीर्घिकातरङ्गोत्सङ्गरिङ्खत्तरुणतामरसरसविसरोद्गारहारिणा यौवनमदनिरुद्धनैषधीधम्मिल्लवल्लरीचलनविलासलासकेन वन-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मारुतेनोत्पुलकिततनुः स्तोकमन्तरमतिक्रम्य 'देवः भवद्वैरिवधूवदने वने च नारङ्गतरूपशोभे भान्ति गण्डशैलस्थलालङ्कारधारिण्यो लोध्रलताः, नागरुचिताश्चन्दनपत्रभङ्गाः, नालिके रचितस्तिलकः, नवा दृष्टिपथमवतरति घनाञ्जनयष्टिका, नाभिरम्या नीलतमालका, नाधरीकृतस्ताम्बूलीरागः, पल्लवितमेतद् दृश्यतेऽशोकजालम्। इतश्च काञ्चनगिरिरिव सुरचितः क्रीडापर्वतः। इतश्च गूर्जरकूर्चमिवाखण्डितप्रवालं बालशालवनम्। इतश्च भवद्वैरिनगरमिवानेकविधबकुलसंकुलं कूपकुलम्। इतश्च धूर्जटिजटाजूट इव पुंनागवेष्टितो वापीपरिसरः। इतश्च कुरुसेनेव कृताश्वत्थामहिता च क्रीडासरित्पुलिनपालिः। इति भङ्गश्लेषोक्तिकुशलया वनपालिकया निवेद्यमानानि वनविनोदस्थानान्यवलोकयाञ्चकार ॥

कल्याणी—प्रथमेति। प्रथमसम्मुखप्रेङ्खितेन—प्रथमं सम्मुखं=पुरः, प्रेङ्खितेन=प्रदोलितेन, चलच्चन्दनामोदनन्दिना—चलतां=कम्पमाननां, चन्दनानां=मलयजतरूणाम्, आमोदेन=सुगन्धेन, नन्दति=हृष्यतीत्येवंशीलेन, आन्दोलनस्य=स्पन्दनस्य, वेगात्=प्रचण्डत्वात्, वित्रस्ताः=समधिकभीताः, कुसुमिततरुशिखरेषु=पुष्पितपादपाग्रभागेषु, सुप्ताः=शयिताः, याः सुरतश्रमखिन्नाः=रतिक्रीडाजनितश्रान्त्या क्लान्ताः, किंनर्यः=किंनरयोषितः, ताभिः निबिडतरं=प्रगाढं, परिरभ्यमाणैः=आश्लिष्यमाणैः, किंनरैः नमस्कृतेन=वन्दितेन, क्रीडाकमलदीर्घिकायाः=क्रीडा-कमलवाप्याः, ये तरङ्गाः=वीचयः, तेषाम् उत्सङ्गेन=सम्पर्केण, रिङ्गतां=कम्पमानानां, तामरसानां=कमलानां, यः रसः=मकरन्दः, तस्य विसरन्=व्याप्नुवन्, य उद्गारः=उत्सर्गः, तेन हारिणा=मनोज्ञेन, यौवनोन्मदेन=तारुण्योद्रेकेन इव, निरुद्धा=संयमिताः, नैषधीनां=निषधसुरन्दरीणां, या धम्मिलवल्लर्यः=वेणीलताः, तासां चलनविलासलासकेन—चलनविलासं=दोलनलालित्यं, लासयति=अभ्यासयतीति तेन वनमारुतेन=विपिनवायुना, उत्पुलकिततनुः=रोमाञ्चितदेहः [स नलः], स्तोकं=स्वल्पम्, अन्तरं=व्यवधानम्, अतिक्रम्य=समीपमुपगम्येत्यर्थः। देव !=महाराज ! नारङ्गतरूपशोभे भवद्वैरिवधूवदने च। अत्र वदनपक्षे, 'न+अरम्+गतरूपशोभे' इति पदच्छेदं कृत्वा 'न' इत्यस्य 'भान्ति' इति क्रिययाऽन्वयः कार्यः, किन्तु वनपक्षे 'नारङ्गतरूपशोभे' इत्येव पाठ्यम्, तदेवं वनपक्षे 'न भान्ति' इतिरूपा क्रिया; वनपक्षे तु 'भान्ति' इतिरूपैवेति ज्ञेयम्। अरम्=अत्यर्थं, गतरूपशोभे=रूपसौन्दर्यविरहिते, भवद्वैरिवधूवदने=त्वदरिस्त्रीमुखे, गण्डशैलस्थलालङ्कारधारिण्यः=कपोलफलकालङ्कारिण्यः, लोध्रलताः=लोध्रविलेपनेन निर्मितलताः, लताचिह्नानि न भान्ति=न शोभन्ते, [न+अगरुचिताः] अगरुचिताः=अगुरुमिश्रिताः, चन्दनपत्रभङ्गाः=चन्दनद्रव्यस्य पत्रवल्ल्यः, न, भान्ति=शोभन्ते, [न+अलिके+रचितः] न अलिके=ललाटे,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रचितः=कृतः, तिलकः=पुण्ड्रकः, [नवा—न+वा, वेति समुच्चये] न वा, घनाञ्जनयष्टिका—घनं=सान्द्रम्, अञ्जनं=कज्जलं, तस्य यष्टिका=शलाका, दृष्टिपथं=दृष्टिमार्गम्, अवतरति। [नाभिरम्याः=न+अभिरम्याः] न, अभिरम्याः=अभिरमणीयाः, सुसंस्कृता इति यावत्। [नीलतम+अलकाः] नीलतमाः=अतिशयेन नीलाः, अलकाः=कुटिलकेशाः, न, ताम्बूलीरागः—ताम्बूली=नागवल्लरी, तस्या रागः, अधरीस्कृतः=ओष्ठसम्बद्धः कृतः, न ताम्बूलरक्तिम्ना अधरो रक्तीकृत इति भावः। [दृश्यते—शोकजालम्] एतद् शोकजालं=शोकसंघातः, पल्लवितं=प्रवृद्धं, दृश्यते।

वनपक्षे—नारङ्गतरूपशोभे=नारङ्गतरुभिः सुशोभिते, वने=विपिने, गण्डशैलस्थलालङ्कारधारिण्यः—गण्डशैलाः=भूकम्पेन वात्यया वा पातितस्थूलपाषाणाः तत्स्थलस्य अलङ्कारिण्यः, लोध्रलताः—लोध्रस्य=वृक्षविशेषस्य, लताः, नागरुचिताः—नागैः=सर्पैः, रुचिताः=सुशोभिताः, चन्दनपत्रभङ्गाः=चन्दनतरुपत्राणां वैशिष्ट्यानि, भान्ति=शोभन्ते, नालिकेरैः=तरुभिः, चितः=व्याप्तः, तिलकः=तदाख्यो वृक्षः [भाति] नवा=नूतना, घनाञ्जनयष्टिका—घनानां=निविडानाम्, अञ्जनानाम्=अञ्जनवृक्षाणां; यष्टिका=प्रकाण्डः, दृष्टिपथमवतरति=दृश्यत इत्यर्थः। नीलतमालकाः=नीलाः श्यामवर्णाश्च ते तमालकाः=ह्रस्वतापिच्छवृक्षाः [ह्रस्वेऽर्थे कन्]; अतएव नाभिरम्याः=नाभिमात्रा इति भावः। न अधरीकृतः=हीनीकृतः, ताम्बूलीनां=नागवल्लरीणां, रागः=सौन्दर्यम्, [दृश्यते+अशोकजालम्] एतद्, अशोकजालम्=अशोकाख्यतरुवृन्दं, पल्लवितं=किसलयितं, दृश्यते=अवलोक्यते। अत्र वनवर्णनप्रसङ्गे प्रस्तुतवनस्याप्रस्तुतस्य वैरिवधूमुखस्य च नारङ्गतरुपशोभत्वाद्येकधर्माभिसम्बन्धाद् दीपकालङ्कारः। इतश्च=अस्मात् स्थानाच्च, काञ्चनगिरिरिव=सुमेरुपर्वत इव, सुरचितः=सुनिर्मितः, क्रीडापर्वतः (दृश्यते)। इतश्च, गूर्जरकूर्चमिव=गुर्जरदेशवासिनां, कूर्चमिव=श्मश्रुवद्, अखण्डितप्रवालम्=अच्छिन्नकिसलयं, कूर्चपक्षे—अच्छिन्नकेशं; बालशालवनं=नवसर्जतरुवनं (विद्यते)। इतश्च, भवद्वैरिनगरमिव=त्वद्रिपुपुरमिव; अनेकविध-वकुलसङ्कुलं=विविधवकुलतरव्याप्तं, पक्षे [अनेक-विधव-कुलसङ्कुलम्] अनेकाः=बह्व्यः, विधवा=मृतभर्तृका, येषु तादृशैः कुलैः=गृहैः, सङ्कुलं=व्याप्तं; कूपकुलं=कूपसमूहः (शोभते)। इतश्च, धूर्जटिजटाजूट इव—धूर्जटिः=शिवः, तस्य जटाजूट इव=जटासमूह इव, पुंनागवेष्टितः=पुंनागाः=नागकेसराख्यवृक्षाः, तैः वेष्टितः=परिवृतः, पक्षे—पुंनागः=पुमान् सर्पः, वासुकिरित्यर्थः, तेन वेष्टितः, वापीपरिसरः=दीर्घिकातटप्रान्तः (शोभते)। इतश्च, कुरुसेनेव=कुरूणां सेनेव, [कृताश्वत्था—महिता]—कृता=रोपिता, अश्वत्थाः=पिप्पलवृक्षाः यस्यां तथाविधा महिता=पूजिता च, सौन्दर्यसमन्वितेति भावः। पक्षे—[कृत-अश्वत्थाम-हिता] कृतं=विहितम्;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अश्वत्थाम्ने=द्रोणपुत्राय, हितम्=उपकारः यया सा, क्रीडासरित्पुलिनपालिः=क्रीडानद्यास्तटश्रेणिः (सुशोभते)। काञ्चनगिरिरिवेत्याद्यारभ्य सर्वत्र श्लेषमूलोपमालङ्कारः। इति=एवं, भङ्गश्लेषोक्तिकुशलया=भङ्गश्लेषपूर्णवचनदक्षया, वनपालिकया=वनरक्षाधिकृतया स्त्रिया, निवेद्यमानानि=विज्ञाप्यमानानि, वनविनोदस्थानानि=वने यानि विनोदस्थानानि = क्रीडास्थलानि, तानि अवलोकयाञ्चकार=ददर्श ॥

ज्योत्स्ना—प्रथमतः अत्यन्त सामने ही प्रवाहित होती हुई, प्रसरित हो रही चन्दन वृक्ष के सुगन्ध से हर्षित, हवा के प्रचण्ड वेग के कारण भयभीत, पुष्पित वृक्षों की टहनियों पर सुरत-व्यापार के श्रम से थक कर सोई हुई किन्नर-पत्नियों द्वारा प्रगाढ़ आलिंगन प्राप्त किये हुए किन्नरों से नमस्कृत, क्रीड़ाकमल से परिपूर्ण बावलियों की तरङ्गों के सम्पर्क से कम्पायमान तामरस (कमल) के मकरन्द से व्याप्त होने के कारण मनोरम, यौवन-मद को नियन्त्रित करने के लिए निषध-सुन्दरियों द्वारा बाँधी गई वेणीरूपी लता में कम्पनरूपी बिलासपूर्ण नृत्य कराने वाले वन-पवन के कारण रोमाञ्चित शरीर वाले राजा के थोड़े नजदीक आकर (भङ्गश्लेष के प्रयोग से परिपूर्ण वचनों को बोलने में चतुर वनपालिका ने कहा)—

हे देव ! रूप-सौन्दर्य से पूर्णतः रहित आपकी शत्रु-पत्नियों के मुख पर कपोलफलक को अलंकृत करने वाली लोध्र (लाल रंग) के विलेपन से निर्मित की गई लताओं के चिह्न शोभित नहीं होते, अगरुमिश्रित चन्दन से निर्मित पत्ररचनायें तथा ललाट पर किये गये तिलक भी अच्छे नहीं लगते, गहरी अञ्जनयुक्त शलाकायें दिखलाई नहीं देतीं, गहरी काले रंग की अलकें भी सुन्दर नहीं लगतीं, पान की लालिमा से (उनके द्वारा अपने) ओष्ठों को लाल नहीं किया जाता। इस प्रकार यह शोकजाल पल्लवित होते हुए (निरन्तर बढ़ते हुए) के समान ही दिखाई देता है ।

वनपक्ष में—हे देव ! नारंग के वृक्षों से सुशोभित (इस) वन में गण्डशैलों (भूकम्प अथवा आँधी से गिरे हुए प्रस्तर-खण्डों) से अलंकृत लोध्र-वृक्षों की वल्लरियाँ तथा नागों (सर्पों) से सुशोभित चन्दन वृक्ष के पत्रों की विशेषतायें शोभित होती हैं, नारिकेल (नारियल) के वृक्षों से समन्वित तिलकनामक वृक्ष सुशोभित होते हैं। नूतन एवं घने अञ्जन वृक्ष की शाखायें (टहनियाँ) दिखलाई नहीं देती हैं, नीले रंग के तमाल-वृक्ष नाभिरम्य (अत्यन्त रमणीय) हैं, पान के लताओं की सुन्दरता क्षीण नहीं हुई है (और) अशोक वृक्षों का यह समूह भी पल्लवित दिखाई दे रहा है।

और इधर सुरचित—देवताओं से समन्वित काञ्चनगिरि (सुमेरु पर्वत) के समान ही सुरचित— अच्छी प्रकार से निर्मित क्रीड़ापर्वत दिखलाई देता है, गूर्जर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(गुजरात) प्रदेश में रहनेवालों की अखण्डित दाढ़ी के समान ही अखण्डित (न तोड़े गये) पल्लवों से युक्त नवीन शालवृक्षों का जंगल है, अनेकविधवकुलसंकुल -- अनेक विधवाओं के घरों से परिव्याप्त आपके शत्रुओं के नगरों के समान ही नाना प्रकार के बकुल वृक्षों से समन्वित कूप-समुदाय है, पुंनाग—विशिष्ट प्रकार के वासुकि नामक सर्प को वेष्टित किये हुए (लपेटे हुए) भगवान् शंकर की जटा के समान ही पुन्नाग (नागकेसर) नामक वृक्षों से घिरा हुआ वावलियों का तीर-प्रदेश है, अश्वत्थामा (द्रोणपुत्र) का हित करने वाली कौरवों की सेना के समान ही उत्पन्न हुए अश्वत्थ—पीपल के वृक्षों से पूजित क्रीड़ा-सरोवर की तट-पंक्तियाँ हैं।

इस प्रकार भङ्गश्लेष के द्वारा बोलने में चतुर वनरक्षिका के द्वारा निवेदित किये जाते हुए (सूचित किये जाते हुए) वन के क्रीड़ास्थलों को राजा नल ने देखा ॥

चलच्चकोरचक्रवाकचक्रचञ्चुचञ्चलचञ्चरीकचरणचूर्णितचम्पकाङ्कुरमरिचमञ्जरीदलदन्तुरेण वनमार्गेण स्तोकमन्तरमतिक्रान्तस्तया पुनरेवं बभाषे ॥

कल्याणी—चलदिति। चलताम्=इतस्ततो भ्रमतां, चकोरचक्रवाकानां=चकोराणां चक्रवाकपक्षिणां च, यत् चक्रं=समूहः, तस्य चञ्चुभिः, चञ्चलचञ्चरीकचरणैश्च=चञ्चल-मधुपपादैश्च, चूर्णिताः=मर्दिताः ये चम्पकाङ्कुराः=चम्पकवृक्षकुड्मलाः, मरिचमञ्जरीदलानि च— मरिचानां=वृक्षविशेषाणां, मञ्जरीदलानि=कुड्मलपत्राणि च, तैः दन्तुरेण=उन्नतावनतेन, विषमेणेति यावत्। वनमार्गेण=विपिनपथेन, स्तोकं=स्वल्पम्, अन्तरं=व्यवधानम्, अतिक्रान्तः=किञ्चिद्दूरं गतः, स राजा नलः इत्यर्थः। तया=वनपालिकया, पुनः=भूयः, एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण, बभाषे=उक्तः ॥

ज्योत्स्ना—इधर-उधर घूमते हुए चकोरों एवं चक्रवाक पक्षियों के समूहों की चोंचों तथा चञ्चल भ्रमरों के पैरों से मर्दित किये गये चम्पा के अंकुरों एवं मरिच की मञ्जरियों से समन्वित ऊँचे-नीचे वनमार्ग से थोड़ा और आगे बढ़े हुए राजा नल से उस वनरक्षिका ने पुन: इस प्रकार कहा ॥

'देव' ! पुरन्दरानन्दिनन्दनोद्यानस्पर्धिनोऽस्य वनस्य किं किं वर्ण्यते ॥

कल्याणी— देवेति। देव=महाराज !, पुरन्दरम्=इन्द्रम् आनन्दयतीत्येवंशीलं यत् नन्दनोद्यानं=नन्दनाख्यं वनं, तत् स्पर्धिनः=प्रतिद्वन्द्विनः, अस्य=वनस्य, किं किं (वस्तु) वर्ण्यते=कथ्यते, किमपि वस्तु वर्णयितुं न शक्यत इत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—हे राजन् ! इन्द्र को आनन्द प्रदान करने वाले नन्दन वन से प्रतिस्पर्धा रखने वाले इस वन की किन-किन विशेषताओं का वर्णन किया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाय ? अर्थात् इसकी समस्त विशेषताओं का वर्णन करने में तो कोई भी समर्थ नहीं हो सकता ॥

यत्र त्रिजटाश्रयमनेकजटाः, स्फुरदेकपुष्पकमनेकपुष्पाः, समुद्वेजितरामानन्दितरामा, समुपहसन्ति लङ्केश्वरं तरवः ॥

कल्याणी – यत्रेति । यत्र=यस्मिन् वने, अनेकजटाः—अनेका=असंख्याता, जटा=मूलानि येषु ते, असंख्यातजटाश्रया इत्यर्थः । अनेकपुष्पाः—अनेकानि=असंख्यानि पुष्पाणि=कुसुमानि येषां ते, आनन्दितरामाः—आनन्दिताः, रामा=रमण्यः यैस्ते, तरवः=वृक्षाः, त्रिजटाश्रयं—त्रिजटा=रावणस्वसा, तस्या आश्रयं=शरणस्थानम्, स्फुरदेकपुष्पकम्—स्फुरद्=दीप्यमानम् एकमेव पुष्पकं=तदाख्यं विमानं यस्य तं, समुद्वेजितरामम्—समुद्वेजितः=समधिकपीडितः, रामः=दाशरथिः येन तं लङ्केश्वरं=रावणं, समुपहसन्ति=तिरस्कुर्वन्ति । अत्रत्यपादपा रावणमप्युपहसन्ति यतो रावणः त्रिजटाश्रयः [त्रिजटाया राक्षस्याः शरणम्], एते पादपास्तु असंख्यातजटाश्रयाः । रावण एकपुष्पकः [पुष्पकविमानेनैव युक्तः] एते तु असंख्यातपुष्पाः रावणः समुद्वेजितरामः [रामपीडकः], एते तु आनन्दितरामाः [रामाणामानन्दिनः] सन्तीति स्पष्टार्थः । अत्र तरूणां लङ्केश्वरादाधिक्यवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारः; स च श्लेषमूलकः ॥

ज्योत्स्ना— जिस वन में अनेक जटाओं (मूलों) वाले, अपरिमित पुष्पों से समन्वित और रमणियों को आनन्दित करने वाले वृक्ष; त्रिजटा को आश्रय प्रदान करने वाले, एकमात्र पुष्पकनामक विमान वाले, राम को अत्यधिक उद्विग्न करने वाले लंकेश्वर (राक्षसराज रावण) का भी उपहास करते हैं ।

आशय यह है कि रावण के पास एक ही त्रिजटा थी, एक ही पुष्पक विमान था और वह एकमात्र राम को ही उद्विग्न करने वाला था, जबकि इस वन के वृक्ष अनेकों जटाओं से परिपूर्ण थे, अपरिमित पुष्पों से समन्वित थे और (असंख्य) रामाओं को आनन्द प्रदान करने वाले थे; अतः ऐसा प्रतीत होता था, मानों ये वृक्ष राक्षसराज रावण को सदा ही तिरस्कृत करते रहते थे ॥

यस्मिंश्च मत्तमयूरहारिणि भद्रभुजङ्गप्रयाते विचित्रक्रौञ्चपदे छन्दःशास्त्र इव वैतालीयं मालिनी शिखरिणी पुष्पिताग्रा च दृश्यते विविधा जातिः ॥

कल्याणी—यस्मिंश्चेति । मत्तमयूरहारिणी=मत्तमयूरं नाम छन्दस्तेन हारिणि=मनोज्ञे, भद्रभुजङ्गप्रयाते—भद्रं=मनोज्ञं, भुजङ्गप्रयातं=तन्नाम छन्दो यत्र तस्मिन्, विचित्रक्रौञ्चपदे—विचित्रं=विलक्षणं, शोभनमिति यावत् । क्रौञ्चपदं=तदाख्यं छन्दो यत्र तस्मिन् छन्दःशास्त्र इव, मत्तमयूरहारिणि—मत्तैः मयूरैः=तदा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ख्यपक्षिभिः, हारिणि=मनोज्ञे, भद्रभुजङ्गप्रयाते —भद्रं=मनोज्ञं, भुजङ्गानां=सर्पाणां विटानां च, प्रयातं=गमनं यत्र तादृशे, विचित्रक्रौञ्चपदे—विचित्रं क्रौञ्चानां = क्रौञ्चपक्षिणां, पदे=स्थाने, आश्रय इति यावत्। यस्मिन् वने च [वै+ताली+ इयम्] वै=स्फुटमियं, ताली=तालद्रुमः, मालिनी=मालाऽस्त्यस्यामिति मालिनी, पंक्तिबद्धेति यावत्। शिखरिणी=शिखराः सन्त्यस्यामिति, नवाङ्कुरयुक्तेति भावः। पुष्पिताग्रा=कुसुमिताग्रभागा च, विविधा जातिः=मालती; पक्षे—वैतालीयं मालिनी शिखरिणी पुष्पिताग्रा च विविधा जातिः=विविधः छन्दसां प्रकारः, दृश्यते=अवलोक्यते। श्लेमूलोपमाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और जिस प्रकार छन्दःशास्त्र में मत्तमयूर, भुजङ्गप्रयात, वैतालीय, मालिनी, शिखरिणी, पुष्पिताग्रा आदि विविध छन्दों के प्रकार देखे जाते हैं उसी प्रकार मदमत्त मयूरों से मनोहारी, मनोज्ञ सर्पों एवं एवं विटों के गमन से समन्वित, विचित्र क्रौञ्च पक्षियों के आश्रयस्वरूप इस उद्यान में स्पष्टतः तालनामक वृक्षों की यह पंक्तियाँ शिखरयुक्त (नवीन अंकुर से युक्त) और (उनके) अग्रभाग पर पुष्पित अनेकों जाति (मालती) लतायें दिखलाई पड़ती हैं॥

यस्मिंश्च एकभीमार्जुनविनिर्जितानाक्रान्तानेकभीमार्जुनाः, कोपितैकनकुलानाह्लादितानेकनकुलाः सहदेवेनैकेन स्पर्धमानाननेकैः सहदेवैः सङ्गताः। न बहु मन्यते कुरुवीरान्वीरुधः॥

कल्याणी - यस्मिंश्चेति। यस्मिंश्च=वने, आक्रान्तानेकभीमार्जुनाः—आक्रान्ताः=पराभूताः, आच्छादिता इत्यर्थः। अनेके=असंख्याताः, भीमाः=अम्लवेतसपादपाः, अर्जुनाः=अर्जुनाख्याः वृक्षविशेषा याभिस्ताः, 'भीमोऽम्लवेतसे शंभौ घोरे वापि वृकोदरे' इति विश्वः। आह्लादितानेकनकुलाः—आह्लादिताः=आनन्दिताः, अनेके, नकुलाः=नकुलाख्याः जीवविशेषाः याभिस्ताः, अनेकैः=असंख्यातैः, सहदेवैः=सहदेवाख्यैः वृक्षविशेषैः, सङ्गताः=मिलिताः, वीरुधः=लताः, एकभीमार्जुनविनिर्जितान्—एकेनैव भीमेन=तदाख्येन पाण्डुपुत्रेण, अर्जुनेन=तदाख्येन तृतीयेन पाण्डवेन च, विनिर्जितान्=पराभूतान्, कोपितैकनकुलान्—कोपितः=कोपं नीतः, एक एव नकुलः=तदभिधानश्चतुर्थपाण्डवो यैस्तान्, एकेन, सहदेवेन=तदाख्येन पञ्चमपाण्डवेन, स्पर्धमानान्=स्पर्धां कुर्वाणान्, कुरुवीरान्=कौरवपक्षीयवीरान्, न बहु मन्यन्ते=तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः। वीरुधां कुरुवीरेभ्यः आधिक्यवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारः; स च श्लेषमूलकः॥

ज्योत्स्ना—और जिस उद्यान में अनेकों भीम—अम्लवेतस तथा अर्जुननामक वृक्षों से आच्छादित, अनेकों नकुलों—नेवलों को आनन्द प्रदान करने वाली और अनेकों सहदेव नामक वृक्षों से मिली हुई लतायें एक ही भीम और अर्जुन से पराभूत, एकमात्र नकुल (माद्रीसुत) से क्रुद्ध होने वाले और एकमात्र सहदेव से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रतिस्पर्धा करने वाले कौरव पक्ष के वीरों को गौरवान्वित नहीं होने देती अर्थात् उनका तिरस्कार-सी करती रहती हैं ॥

किं चान्यदवलोकयतु देव —

पटलमलिकुलानामुन्नमन्मेघनीलं
भ्रमदुपरि तरूणां पुष्पितानां विलोक्य ।
मृदुमदकलकेकानिर्भरो नृत्यसक्त-
स्तरलयति कलापं मन्दमन्दं मयूरः ॥४॥

अन्वयः—पुष्पितानां तरुणाम् उपरि भ्रमत् उन्नमन् मेघनीलम् अलिकुलानां पटलं विलोक्य मृदुमदकलकेकानिर्भरः नृत्यसक्तः मयूरः कलापं मन्दमन्दं तरलयति ॥४॥

कल्याणी—पटलमिति । पुष्पितानां=कुसुमितानां, तरूणां=वृक्षाणाम्, उपरि=ऊर्ध्वभागे, भ्रमत्=भ्रमणं कुर्वत्, उन्नमन्तः=उद्गच्छन्तः ये मेघाः=जलदाः, तद्वत् नीलं=श्यामम्, अलिकुलानां=मधुपसमूहानां, पटलम्=आवरणं, विलोक्य=दृष्ट्वा, मृदुमदकलकेकानिर्भरः—मृद्वी=कोमला, मदेन=आनन्दातिरेकेन, कला=मधुरा च या केका=वाणी, तया निर्भरः=सम्पन्नः, नृत्यसक्तः=नर्तनपरायणः, मयूरः=केकी, कलापं=पिच्छं, मन्दमन्दं=शनैः शनैः, तरलयति=चञ्चलं करोति । 'उन्नमन्मेघनीलम्' इत्यत्रोपमालङ्कारः । पुष्पितानां तरूणामुपरि भ्रमति भ्रमरसमूहे मयूरस्य मेघ-भ्रान्त्या भ्रान्तिमदलंकारः । तथा च तद्भ्रान्तिवशात्कृतचेष्टानां वर्णनात् स्वभावो-क्तिरलङ्कारः । तेषामङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः । मालिनी वृत्तम् ॥४॥

ज्योत्स्ना—और महाराज यह भी देखें कि,

(यहाँ) विकसित पुष्पों वाले वृक्षों के ऊपर घूमते हुए, उमड़ते हुए बादलों के समान श्यामवर्ण वाले भ्रमरसमूहों के आवरण को देखकर सुकोमल, आनन्दातिरेक से मधुर वाणी से सम्पन्न एवं नृत्य में तत्पर मयूर भी अपने पंखों को धीरे-धीरे चञ्चल कर रहा है अर्थात् हिला रहा है ॥४॥

अपि च—

भ्राम्यद्द्विरेफाणि विकासभाञ्जि संयोज्य पुष्पाणि शिलीमुखेषु ।
इह स्थितः सर्वजगज्जयाय धनुःश्रमं पुष्पशरः करोति ॥५॥

अन्वयः—भ्राम्यद्द्विरेफाणि विकासभाञ्जि पुष्पाणि शिलीमुखेषु संयोज्य इह स्थितः पुष्पशरः सर्वजगज्जयाय धनुःश्रमं करोति ॥५॥

कल्याणी—भ्राम्यदिति । भ्राम्यन्तः=भ्रमणं कुर्वन्तः, द्विरेफाः=भ्रमराः यत्र तादृशीनि, विकासभाञ्जि=विकासं गतानि, पुष्पाणि=कुसुमानि, शिलीमुखेषु=शरेषु,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संयोज्य; कुसुमानि शरत्वेन प्रयुज्येत्यर्थः। इह = वने, स्थितः=अवस्थितः, पुष्पशरः= कामदेवः, सर्वजगज्जयाय=सर्वलोकान् विजेतुं, धनुःश्रमं=शरासनविषयकमभ्यासं, करोति=विदधाति। अन्योऽपि वीरो रिपुजयाय पूर्वं कुत्राप्युचितस्थले अस्त्रसञ्चालन-मभ्यस्यति। पूर्वार्द्धेन वनस्य सुरभिकुसुमसंपदुक्ता, उत्तरार्द्धेन तस्योद्दीपनत्वं चोक्तम्। असम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्तिः। इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोर्मिश्रणादुपजातिर्वृत्तम्। तयोर्लक्षणे यथा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः'। तथा च—'उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा'। इति। अत्र पूर्वार्द्धे 'इन्द्रवज्रा' उत्तरार्द्धे तूपेन्द्रवज्रा' इति ज्ञेयम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—और भी; (ऐसा प्रतीत होता है, मानो) भ्रमण करते हुए भ्रमरों से समन्वित खिले हुए पुष्पों को अपने बाणों में संयुक्त कर इस वन में अवस्थित कामदेव समस्त लोकों को विजित करने के लिए अपना धनुर्विषयक अभ्यास कर रहा है ॥५॥

इतश्च—

हरिति हरिणयूथं यूथिकाजालमूले
कुसुमजमधुबिन्दुस्यन्दसन्दोहभाजि।
मधुरमधुकरालीगीतदत्तावधानं
लिखितमिव न दूर्वापल्लवानुल्लुनाति ॥६॥

अन्वयः—हरिति यूथिकाजालमूले कुसुमजमधुबिन्दुस्यन्दसन्दोहभाजि मधुरमधुकरालीगीतदत्तावधानं हरिणयूथं लिखितमिव दुर्वापल्लवान् न उल्लु-नाति ॥२६॥

कल्याणी—हरितीति। हरिति=शाद्वले, यूथिकाजालस्य=यूथिकासमूहस्य, मूले=अधःप्रदेशे, कुसुमजमधुबिन्दुस्यन्दसन्दोहभाजि—कुसुमजानि=पुष्पजातानि, यानि मधूनि=मकरन्दाः, तेषां ये बिन्दवः=कणाः तेषां स्यन्दः=प्रस्रवणं, तस्य सन्दोहं= संघातं भजते इति तादृशे सत्यपि मधुरमधुकरालीगीतदत्तावधानम्—मधुरं=कोमलं, यन्मधुकराल्याः=भ्रमरश्रेण्याः, गीतं=गानं, तत्र दत्तं=कृतम् अवधानं येन तत्; हरिणयूथं=मृगसमूहः, लिखितमिव=चित्रगतमिव, दूर्वापल्लवान्=दूर्वाङ्कुरान्, नोल्लुनाति=नोच्छिनत्ति, न भक्षयतीत्यर्थः। अत्र यूथिकाजालमूलस्य शाद्वलत्वे, मधुबिन्दुसन्दोहसम्बन्धात् स्पृहणीयत्वेऽपि च हरिणयूथेन दूर्वापल्लवानामनुल्लवनमिति हेतौ सत्यपि फलाभावाद्विशेषोक्तिः। सा च गीतदत्तावधानत्वरूपनिमित्तस्योक्तत्वा-दुक्तनिमित्ता। मालिनी वृत्तम् ॥६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इधर; पुष्पों से निकले हुए मकरन्द-कणों से समन्वित हरे-भरे जूही के पौधों के नीचे भ्रमरपंक्तियों के सुमधुर गीतों पर ध्यान लगाये हुए मृगों का झुण्ड चित्रलिखित के समान होकर दूब के अंकुरों का चर्वण भी नहीं कर रहा है।

आशय यह है कि उद्यान में स्थित जूही के पुष्पों की सुन्दरता को देखकर और उनके ऊपर मँडराते हुए भ्रमरों के सुमधुर गुञ्जार को सुनकर वहाँ स्थित हरिणों का समूह अपने मुख में लिये हुए दूब के अंकुरों को चबाना भी भूल गया है ॥६॥

इतोऽपि—

सोऽयं क्रीडाचलो भव्य-लोभव्यसनवर्जित।
यस्मिन्नासन्नसारङ्गा सारं गायति किन्नरी ॥७॥

अन्वयः—हे भव्य! लोभव्यसनवर्जित! सः अयं क्रीडाचलः (शोभते) यस्मिन् आसन्नसारङ्गाः किन्नरी सारं गायति ॥७॥

कल्याणी—सोऽयमिति। हे भव्य, हे लोभेन व्यसनैः=दुर्व्यसनैश्च वर्जित=रहित! सोऽयं=उक्त एषः, क्रीडाचलः=क्रीडागिरिः, (शोभते) यस्मिन्=यत्र क्रीडाशैले, आसन्नाः=समीपस्थाः, सारङ्गाः=मृगाः यस्याः सा, मधुरगीताकृष्टमृगपरिवृतेत्यर्थः। किंनरी=किंनरस्त्री, सारम्=उत्कृष्टं, गायति=गायनं करोति। अत्र किंनरी सारं गायतीति वाक्यार्थस्तस्या आसन्नसारङ्गत्वे हेतुरिति काव्यलिङ्गम्। 'सारंगा-सारंगा' इति यमकम्। 'भव्य-लोभव्य' इति 'यस्मिन्नासन्न' इति च संयुक्तयोर्व्यञ्जनयोः स्वरूपतः क्रमतश्च सकृदावृत्त्या छेकानुप्रासः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥७॥

ज्योत्स्ना—हे सुन्दर एवं लोभ तथा व्यसनों से विहीन राजन्! यह वही क्रीडापर्वत है, जिस पर मृगों के मध्य अवस्थित होकर किन्नरी अपना उत्कृष्ट गान करती है।

तात्पर्य यह है कि इस मनोरम उद्यान में गायन-कार्य में रत किन्नरियों के चारो तरफ मृगों का झुण्ड एकत्रित हो जाता है ॥७॥

राजते राजतेनाऽयं सानुना सानुनायकः।
यस्मिन्निशम्य गायन्तं किन्नरं किं न रंस्यते ॥८॥

अन्वयः—अयं सानुनायकः राजतेन सानुना राजते, यस्मिन् गायन्तं किन्नरं निशम्य न किं रंस्यते ॥८॥

कल्याणी—राजत इति। अयम्=एषः, सानुनायकः=पर्वतः, क्रीडागिरिरिति यावत्। राजतेन=रजतनिर्मितेन, सानुना=शिखरेण, राजते=शोभते, यस्मिन्=यत्र,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गायन्तं=गानपरायणं, किंनरं=किंपुरुषम्, निशम्य=श्रुत्वा, न किं रंस्यते=रंस्यत एवेत्यर्थः। 'राजते-राजते', 'सानुना-सानुना,' 'किंनरं-किंनरं' इति यमकत्रयम्। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—यह सानुनायक नामक क्रीडापर्वत चाँदी से निर्मित शिखरों से सुशोभित है, जिस पर गीत गाते हुए किन्नरों को सुनकर कौन ऐसा व्यक्ति है, जो रमणोन्मुख नहीं हो जाता अर्थात् सभी रमणोन्मुख हो जाते हैं ॥८॥

इतश्चास्य—

जनयति जलबुद्धिं बाललीलामृगाणा-
मयमिह पटुकान्तिः स्फाटिको भित्तिभागः।
इह हरितमणीनामुल्लसन्तो मयूखाः
सरसनवतृणालीलोभमुत्पादयन्ति ॥९॥

अन्वयः—(इतश्चास्य) स्फाटिकः अयं पटुकान्तिः भित्तिभागः इह बाललीलामृगाणां जलबुद्धिं जनयति, इह हरितमणीनाम् उल्लसन्तः मयूखाः सरसनवतृणालीलोभम् उत्पादयन्ति ॥९॥

कल्याणी—जनयतीति। इतश्चास्य=क्रीडाशैलस्य, स्फाटिकः=स्फटिकनिर्मितः, अयम्=एषः, पटुकान्तिः-पट्वी=प्रसरणशीला कान्तिः=दीप्तिः यस्य सः, भित्तिभागः=कुड्यप्रदेशः, इह=अत्र, बाललीलामृगाणाम्—लीलायै मृगाः इति लीलामृगाः, बालाश्च ते लीलामृगा इति बाललीलामृगास्तेषां, जलबुद्धिं=वारिभ्रान्तिं, जनयति=उत्पादयति। इह=अत्र, हरितमणीनां=नीलमणीनाम्, उल्लसन्तः=व्याप्नुवन्तः, मयूखाः=किरणाः, तेषां बाललीलामृगाणां सरसा=हरिताभा, नवा=नूतना, या तृणालीः=शष्पश्रेणिः, तस्यां लोभम्=उत्कण्ठाम्, उत्पादयन्ति=जनयन्ति। भ्रान्तिमदलङ्कारः। मालिनी वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—और इधर इस (क्रीडापर्वत) का—स्फटिक मणि से निर्मित प्रसरणशील कान्ति वाला यह भित्तिभाग बाल स्वभाववाले मृगों में जल की भ्रान्ति (मृगतृष्णा) को उत्पन्न करता रहता है और यहाँ हरित मणियों से भासित किरणें उन बाल स्वभाव वाले मृगों में सरस तथा नवीन तृणपंक्तियों के प्रति उत्कण्ठा उत्पन्न करती रहती हैं ॥९॥

इयं च—

गौरवं गौरवंशस्य पर्वतः पर्वतस्थले।
भ्रमरी भ्रमरीणस्य कुरुतेऽकुरुतेन ते ॥१०॥

अन्वयः—गौरवंशस्य पर्वतस्थले पर्वतः (अतएव) भ्रमरीणस्य ते अकुरुतेन भ्रमरी गौरवं कुरुते ॥१०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—गौरवमिति। गौरः=उज्ज्वलः, वंशः=अन्वयः यस्य तस्य, पर्वतस्थले=गिरिभूमौ, पर्वतः=गच्छतः अतएव, भ्रमरीणस्य—भ्रमेण=परिभ्रमणेन, रीणस्य=खिन्नस्य, ते=तव राज्ञो नलस्य, अकुरुतेन—कुत्सितं रुतमिति कुरुतम्, न कुरुतमित्यकुरुतं तेन=मृदुमधुरध्वनिनेत्यर्थः। भ्रमरी=भृङ्गी, गौरवं=संमानं, कुरुते=विदधाति, भ्रमरी स्वमधुरझङ्कारैः कर्णप्रियं स्वागतवचनमुच्चारयतीवेति भावः। प्रतीयमानोत्प्रेक्षा। "गौरवं-गौरवं, पर्वतः-पर्वतस्;' श्रुतिसाम्यादैक्यमिति कविसमय, 'भ्रमरी-भ्रमरी, कुरुतेऽकुरुते' इति यमकानि, तैरेकाश्रयानुप्रवेशात्प्रतीयमानोत्प्रेक्षा सङ्कीर्यते, तदेकाश्रयानुप्रवेशरूपः सङ्करः, उत्प्रेक्षोत्थापकपदेष्वेव यमकानामपि च्छटा-दर्शनात्। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१०॥

ज्योत्स्ना—और यह भी कि उच्च वंश वाले अर्थात् उच्च कुलोत्पन्न, पर्वतीय भूमि पर भ्रमण करते हुए, अतएव भ्रमण के कारण थके हुए आप (राजा नल) का अपनी सुकोमल मधुर ध्वनि के द्वारा यह भ्रमरी सम्मान कर रही है—स्वागत कर रही है ॥१०॥

अपि च—

इह कवलितकन्दं कन्दरे कन्दलिन्यां
भुवि विरचितकेलि क्रीडति क्रोडयूथम्।
इह सरसिजगर्भभ्रान्तभृङ्गं कुरङ्गाः
सरसि सरलयन्तः कन्धरां कं धयन्ति ॥११॥

अन्वयः—इह कन्दरे कवलितकन्दं कन्दलिन्यां भुवि विरचितकेलि क्रोडयूथं क्रीडति। इह सरसि कुरङ्गाः कन्धरां सरलयन्तः सरसिजगर्भभ्रान्तभृङ्गं कं धयन्ति ॥११॥

कल्याणी—इहेति। इह=क्रीडाशैले, कन्दरे=गुहायां, कवलितानि=भक्षितानि, कन्दानि=ग्रन्थिलमूलानि येन तत्, कन्दलिन्याम्=अङ्कुराच्छादितायां; भुवि=भूमौ, विरचिता=विहिता, केलिः=क्रीडा येन तत्। क्रोडयूथम्=वराहवृन्दं; क्रीडति=क्रीडां करोति। इह सरसि=अस्मिन् सरोवरे, कुरङ्गाः=हरिणाः, कन्धरां=ग्रीवां, सरलयन्तः=सरलां कुर्वन्तः, सरसिजगर्भे=कमलकोषे, भ्रान्ताः=कृतभ्रमणाः, भृङ्गाः=मधुपाः यत्र तत्तथाविधं, कं=जलं, धयन्ति=पिबन्ति। स्वभावोक्तिरलङ्कारः, छेकानुप्रासश्च। तयोरेकाश्रयानुप्रवेशरूपः सङ्करः। मालिनी वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—और भी; यहाँ (इस) क्रीडापर्वत पर गुफाओं में खाये गये कन्द के अंकुरों से आच्छादित भूमि पर क्रीड़ा करता हुआ वराहों का झुण्ड खेल रहा है और यहाँ (इस) तालाब में गर्दन को सीधे करते हुए हरिण कमलकोषों पर सञ्चरण करते हुए भ्रमरों वाले जल का पान कर रहे हैं ॥११॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इह पुनरनिशं निशम्य भिन्न
द्रुममुकुलानि कुलानि षट्पदानाम् ।
श्रुतिसुखकरणं रणन्ति वीणां
तदनुगुणां गुणयन्ति किन्नरेन्द्राः ॥१२॥

अन्वयः—इह भिन्नद्रुममुकुलानि श्रुतिसुखकरणं रणन्ति षट्पदानां कुलानि पुनः अनिशं निशम्य किन्नरेन्द्राः तदनुगुणां वीणां गुणयन्ति ॥१२॥

कल्याणी—इहेति । इह=अत्र, भिन्नद्रुममुकुलानि—भिन्नाः=संश्लिष्टाः, द्रुममुकुलाः=तरुकुड्मलाः यैस्तानि, श्रुतिसुखकरणं=कर्णप्रियं, रणन्ति=शब्दायमानानि, रणन्तीति शत्रन्तं षट्पदकुलविशेषणम् । षट्पदानां=भ्रमराणां, कुलानि=समूहान्, पुनः=भूयः, अनिशं=सततं, निशम्य=श्रुत्वा, किंनरेन्द्राः=किंनरश्रेष्ठाः, तदनुगुणां=तदनुगामिनीं, वीणां=विपञ्चीम्, गुणयन्ति=वादयन्ति; वीणावादनेन अलिरुतस्य सङ्गतिं कुर्वन्तीति भावः । मालिनी वृत्तम् ॥१२॥

ज्योत्स्ना—फिर यहाँ अत्यन्त सटे हुए वृक्षों की मञ्जरियों पर कानों को प्रिय लगने वाले शब्द करते हुए भ्रमर-समूहों को अनवरत रूप से सुनकर उसी के अनुरूप शब्द वाली वीणा को श्रेष्ठ किन्नर लोग बजा रहे हैं ॥१२॥

इतश्च क्रीडाचलस्थलकमलदीर्घिकातीरतरुतलमनुसरतु देवः ॥

कल्याणी—इतश्चेति । इतश्च, देवः=महाराजः, क्रीडाचले=लीलागिरौ या स्थलकमलदीर्घिका भूमावेव, न तु जले, यानि रोहन्ति=विकसन्ति च तानि स्थलकमलानि तैः; सम्पन्ना या दीर्घिका=वापी, तस्याः तीरतरुतलम्—तीरे=तटे, यः तरुः=वृक्षः, तस्य तलम्=अधोभागम्, अनुसरतु=अनुगच्छतु ॥

ज्योत्स्ना—और (हे महाराज !) इधर क्रीडापर्वत पर स्थित स्थलकमलों से समन्वित बावली के तट पर स्थित वृक्षों की छाया का आप अनुसरण करें अर्थात् वृक्षों की छाया में पधारें ॥

यत्र च—

वहति नवविकासोल्लासिकिञ्जल्कलुभ्यन्-
मधुकरकृतगीता नर्त्तयन्नब्जराजीः ।
वनकरिमदगन्धस्पर्धिसप्तच्छदाली
कुसुमजकणशारः शारदीनः समीरः ॥१३॥

अन्वयः—(यत्र च) नवविकासोल्लासिकिञ्जल्कलुभ्यन् मधुकरकृतगीताः अब्जराजीः नर्त्तयन् वनकरिमदगन्धस्पर्धिसप्तच्छदाली कुसुमजकणशारः शारदीनः समीरः वहति ॥१३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी— वहतीति। (यत्र=स्थलकमलदीर्घिकातीरे च) नवविकासेन कमलानामिति भावः। उल्लासिनः=प्रकाशमानाः, स्पष्टं दृश्यमाना इति यावत्। ये किञ्जल्काः=पुष्पतन्तवः, केसरा इति यावत्। तेषु लुभ्यद्भिः=लोभं कुर्वद्भिः, मधुकरैः=भ्रमरैः, कृतं=विहितं, गीतं=कलरुतं यत्र तादृशी, अब्जराजीः=कमलपंक्तीः, नर्तयन्=कम्पयन्नित्यर्थः। वनकरिणः=वन्या गजाः, तेषां यो मदः=कुम्भस्थलात्प्रस्रवणशीलं जलं, 'मदवारि' इति नाम्नाऽपि प्रसिद्धः। तस्य यो गन्धः, तेन स्पर्धते इत्येवंशीला, गजगन्धसदृशगन्धेन सम्पन्नेत्यर्थः। तादृशी या सप्तच्छदाली=सप्तपर्णतरुपंक्तिः, तस्या ये कुसुमजकणाः=मकरन्दबिन्दवः, तैः शारः=शबलः, शारदीनः—शरदि भवानि शारदानि, शाल्यादीनि धान्यानि; तानि सन्त्येषामिति शारदिनः=कृषकः, तेषाम् इनः=स्वामी, तत्तत्सस्यसंपत्तिहेतुत्वादिति भावः। तादृशः समीरः=पवनः, वहति=वाति। मालिनीवृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—और जिस स्थलकमलयुक्त बावली के तट पर नवीन विकसित कमलों के परागों पर लुब्ध होकर भ्रमरों द्वारा किये जा रहे गुञ्जार से समन्वित कमलों की पंक्तियों को कम्पायमान करते हुए जंगली हाथियों के मदजल के गन्ध से प्रतिस्पर्धा करने वाले पंक्तिबद्ध सप्तच्छद वृक्षों के मकरन्दबिन्दुओं (पराग-कणों) से समन्वित शरत्कालीन हवा प्रवहमान हो रही है—बह रही है ॥१३॥

राजा तु तेन तस्याः सकललितवनप्रदेशप्रकटनप्रियालापप्रपञ्चेन परितोषितः 'साधु भोः सारसिके सुभाषितमञ्जरि ! साधु ! गृहाण पारितोषिकम्' इत्यभिधाय सर्वाङ्गीणाभरणप्रदानेन प्रसन्नाननां तामकरोत् ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, तस्याः=वनपालिकायाः, तेन=तादृशेन, सकललितवनप्रदेशानां=समस्तसुन्दरवनभागानां, प्रकटने=प्रदर्शने, ये प्रियालापाः=प्रीतिकरसंभाषणानि, तेषां प्रपञ्चेन=बाहुल्येन, परितोषितः=प्रसादितः सन्, साधु=सुष्ठु, भोः सारसिके—सारसिका सारसिकाभिधाना वनपालिका तस्याः सम्बुद्धौ सारसिके ! सुभाषितमञ्जरि—सुभाषितानां=सूक्तीनां, मञ्जरी=लता, सूक्तिकुशलेति भावस्तत्सम्बुद्धौ सुभाषितमञ्जरि ! 'पारितोषिकं गृहाण' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, सर्वाङ्गीणाभरणप्रदानेन—स्वकीयसकलावयवानां यानि आभरणानि=भूषणानि, तेषां प्रदानेन=दानेन, प्रसन्नाननां=प्रसन्नम् आननं=मुखं यस्याः तादृशीम्, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—(फिर) तो राजा नल उस वनरक्षिका के द्वारा समस्त सुन्दर वन प्रदेश के वर्णन और उसके प्रीतिकर सम्भाषण से प्रसन्न होकर "हे सुन्दरि सारसिके !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूक्तिकुशले ! पुरस्कार ग्रहण करो" इस प्रकार करते हुए अपने शरीर पर स्थित समस्त आभूषणों को प्रदान करके उसे प्रसन्न मुख वाली बना दिया अर्थात् प्रसन्न कर दिया ॥

ततश्च संचरच्चटुलभृङ्गविहंगवेल्लद्वकुलचम्पकचूतचन्दनमन्दरामन्दस्यन्दमानमकरन्दबिन्दुसंदोहाडम्बरिताकाण्डप्रावृषि, प्रलम्बताम्बूलवल्लीवलयितनितम्बनिम्बकिम्बजम्बीरजम्बूस्तम्बकदम्बके कुसुमितकरवीरवीरुधि कोरकितकरञ्जाञ्जननिकुञ्जशिञ्जानशुककपिञ्जले, जलदसमयनीरदनीलतमतमालतलताण्डवितशिखण्डिनि, मण्डलितमदकलकलहंसोत्तंसकमलवापीमण्डिते, मञ्जरितसिन्दुवारसुन्दरामोदनन्दिनि, मन्दतरमारुतान्दोलनविलोलकल्लोलकुड्मलफलनालिकेरलवङ्गपूगपुंनागनारङ्गरङ्गितविहङ्गे भृङ्गमुखनखरपञ्जरजर्जरितसर्जखर्जूरमञ्जरीरजःपुञ्जपांसुलभुवि, भुवो भूषणायमाने, 'सर्वर्तुनिवास'नामनि वने विहर्तुमारभत ॥

कल्याणी—ततश्चेति । ततः=तदनन्तरं च, सञ्चरताम्=इतस्ततो भ्रमतां, चटुलानां=चञ्चलानां, भृङ्गाणां = भ्रमराणां, विहंगानां=पक्षिणां च, वेगेन=सञ्चारवेगेनेत्यर्थः । वेल्लन्तः=कम्पमानाः, ये वकुलाश्चम्पकाश्चूताः=रसालाश्चन्दना मन्दरामन्दारा वृक्षाः, मन्दरशब्दो मन्दारार्थकत्वेनापि प्रयुज्यते । तेभ्यो अमन्दं=समधिकं, स्यन्दमाना=प्रस्रवन्तः, ये मकरन्दबिन्दवः=पुष्परसकणाः तेषां, सन्दोहेन=समूहेन आडम्बरिता=आभासिता, अकाण्डे=अनवसरे, प्रावृट्=वर्षर्तुः यत्र तस्मिन् । प्रलम्बाभिः=समाधिकदीर्घाभिः, ताम्बूलवल्लीभिः=नागवल्लरीभिः, वलयितः=परिवेष्टितः, नितम्बः=स्कन्धभागः येषां तथाविधा ये निम्बाः, किम्बाः=वृक्षविशेषाः, जम्बीराः=जम्बूवृक्षाः, स्तम्बाः=गुल्माः, तेषां कदम्बकानि = समूहाः यत्र तस्मिन् । कुसुमिताः=पुष्पिताः, करवीराणां=करवीरपादपानां वीरुधः=शाखा यत्र तस्मिन् । कोरकितानां=कुड्मलितानां, करञ्जानां=करञ्जतरूणाम्, अञ्जनानाम्=अञ्जनवृक्षाणां च, निकुञ्जेषु=कुञ्जेषु, शिञ्जानाः=शब्दायमानाः, शुकाः=कीराः, कपिञ्जलाः=चातकाश्च यत्र तस्मिन् । जलदसमये=वर्षाकाले, ये नीरदाः=मेघाः तद्वत् नीलतमा=प्रकर्षेण श्यामवर्णाः, ये तमालाः=तापिच्छतरवः, तेषां तले=अधःप्रदेशे, ताण्डविताः=कृतनृत्याः, शिखण्डिनः=मयूराः यत्र यस्मिन् । मण्डलिताः=कृतमण्डलाः, मदेन=आनन्दातिरेकेन, कलाः=उन्मत्ताः मदकला मधुरध्वनिकारिणो वा ये कलहंसाः=मरालाः, त एव उत्तंसाः=भूषणानि यासां तथाविधा या कमलवाप्यः=कमलदीर्घिकाः, ताभिः मण्डिते=अलंकृते । मञ्जरिताः=पुष्पगुच्छसमन्विताः, ये सिन्दुवाराः=वृक्षविशेषाः, तेषां सुन्दरामोदेन=प्रकृष्टसौरभेण, नन्दयति=हर्षयतीत्येवंशीले । मन्दतरः=समधिकमन्दगामी यो मारुतः=वायुः, तस्य आन्दोलनेन=स्पन्दनेन,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विलोलाः=चञ्चलाः, ये कल्लोलाः=वृक्षविशेषाः, तेषां कुड्मलेषु=कोरकेषु फलेषु च, किं नालिकेरेषु=नारिकेलवृक्षेषु, लवङ्गेषु=लवङ्गतरुषु, पूगेषु=पूगवृक्षेषु, पुंनागेषु=नागकेसरवृक्षेषु, नारङ्गवृक्षेषु च, रङ्गिता=अनुरक्ता, विहङ्गा यत्र तस्मिन्। भृङ्गाणां=च धूम्याटपक्षिणां, मुखैः=वदनैः, नखरैः=नखैः, पञ्जरैः=पार्श्वभागैश्च, जर्जरिताः=मर्दिताः, ये सर्जाः=सालवृक्षाः, खर्जूराः=खर्जूरपादपाश्च, तेषां मञ्जरीरजःपुञ्जेन=पुष्पपरागसमूहेन, पांसुलाः=रजश्छन्नाः, रजस्वलेत्यपि गम्यते। भूः=पृथ्वी यत्र तस्मिन्, भुवः=पृथिव्याः, भूषणायमाने=भूषणमिवाचरति, भूषणसदृश इति यावत्। 'सर्वर्तुनिवास' नामनि, वने=कानने [स राजा नलः] विहर्तुमारभत=बिचरितुमारब्धवान्॥

ज्योत्स्ना—इसके बाद इधर-उधर सञ्चरण करते हुए चंचल भ्रमरों और पक्षियों के वेग से कम्पायमान वकुल, चम्पा, आम, चन्दन और मन्दार वृक्षों से पूर्णरूपेण झरते हुए पराग-कणों के कारण असमय ही वर्षा ऋतु का आभास कराने वाले, अत्यन्त लम्बी ताम्बूल-लताओं से परिवेष्टित नीम, किम्ब, जम्बीर (नीबू) तथा जामुन के वृक्षों से समन्वित झुरमुटों वाले, पुष्पों से युक्त करवीर (कनेर) वृक्ष की शाखाओं वाले, मुकुलित करंज तथा अंजन वृक्षों के कुंजों में शब्द करते हुए शुकपक्षियों एवं चातकों वाले, वर्षाकालीन श्याम वर्ण वाले मेघों के समान तमाल वृक्षों के नीचे नृत्य करते हुए मयूरों वाले, गोल घेरा बनाये हुए आनन्दातिरेक से उन्मत्त, अतएव मधुर ध्वनि करने वाले कलहंसरूपी भूषणों से सुशोभित और कमल से समन्वित तड़ागों से अलंकृत, पुष्पगुच्छों से समन्वित सिन्दुवार वृक्षों के सुन्दर सुगन्ध से हर्षित करने वाले, अत्यन्त मन्द (धीमी गति वाली) वायु के झोकों से चञ्चल कल्लोल वृक्ष की कलियों एवं फलों तथा नारियल, लवंग, सुपारी, पुन्नाग (नागकेसर) एवं नारंग के वृक्षों में अनुरक्त पक्षियों वाले, धूम्याट पक्षियों के मुखों (चोंचों), नाखूनों और पंजों से मर्दित सर्ज (शाल) तथा खजूर वृक्ष की मंजरियों से निःसृत पराग-कणों से धूसरित भूमि वाले, पृथ्वी के आभूषण के समान 'सर्वर्तुनिवास' नामक वन में (उस राजा नल ने) विहार करना—भ्रमण करना आरम्भ किया॥

तत्र च व्यतिकरे प्रलयप्रचण्डपवनोल्लासिततनुतुहिनाचलगण्डशैललीलामाकलयन्तः, मन्दमरुत्तरङ्गिततनुतरशरदभ्रविभ्रमायमाणाः, सुरवारणेन्द्रविक्षोभितगगनमन्दाकिनीपतत्पांडुरडिण्डीरपिण्डपटलानि विडम्बयन्तः, शकलोदितेन्दुमण्डलसहस्रसंछादितमिव गगनमापादयन्तो, मन्दरगिरिपरिक्षेपक्षुभितक्षीरवारिधिदूरसमुच्छलितदुग्धकल्लोललीलां दर्शयन्तः, शेषाहिफणचक्रवालधवलाः, प्रमुदितहराट्टहासलवा इव मूर्तिमन्तः पतन्तः, अमन्दमन्द्रकोलाहल-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भरितभुवनान्तरालाः, सपदि धरातलमुत्फुल्लपाण्डुपङ्कजप्रकरप्रकारेण मण्डयन्तो निपेतुः कुतोऽपि पुण्डरीकपाण्डुपक्षपत्रराजयो सपदि राजहंसाः ॥

कल्याणी—तत्रेति । तत्र च व्यतिकरे=तथा च घटिते, प्रलये=प्रलयकाले, यः प्रचण्डपवनः=भीषणवातः, तेन उल्लासिता=उत्क्षिप्ता ये तनवः=ह्रस्वाः, तुहिनाचलस्य=हिमालयस्य, गण्डशैलाः=पाषाणखण्डाः, तेषां लीलां=शोभाम्, आकलयन्तः=धारयन्तः, मन्दमरुता=मन्दपवनेन, तरङ्गिताः=कम्पिताः, तनुतराः=समधिकह्रस्वाः ये शरदभ्राः=शारदमेघाः, तेषां विभ्रमाः=विलासा इव आचरन्तः तत्सदृशा इत्यर्थः । सुरवारणेन्द्रेण=ऐरावतेन, विक्षोभिता=मथिता या गगनमन्दाकिनी=आकाशगङ्गा, तस्याः पतन्ति पाण्डुरडिण्डीरपिण्डपटलानि=पतच्छुभ्रफेननिबिडपुञ्जान्. विड़म्बयन्तः=उपहसन्तः, शकलोदितेन्दुमण्डलसहस्रसंछादितमिव=उदितचन्द्रमण्डलस्य खण्डसहस्रेणाच्छादितमिव, गगनम्=आकाशम्, आपादयन्तः=कुर्वन्तः, मन्दरगिरेः=मन्दराचलस्य, परिक्षेपेण=अवपातेन, क्षुभितः=आन्दोलितः यः क्षीरवारिधिः=क्षीरसागरः, तस्य दूरं गगनमण्डल इति भावः । उच्छलिताः=उत्क्षिप्ताः, दुग्धकल्लोलाः=दुग्धोर्मयः तेषां लीलां=विलासं, दर्शयन्तः=प्रकटयन्तः, मूर्तिमन्तः=देहधारिणः, शेषाहिफणचक्रवालधवलाः=शेषनागस्य फणसमूह इव शुभ्राः, प्रमुदितस्य=प्रसन्नस्य, हरस्य=शिवस्य, अट्टहासलवा=अट्टहासांशा इव, पतन्तः=अध आगच्छन्तः, अमन्देन=समधिकेन, मन्द्रेण=गम्भीरेण, कोलाहलेन=कलकलध्वनिना, भरितं=व्यापितं, भुवनान्तरालं=भुवनमध्यभागः यैस्ते, सपदि=क्षणेन, धरातलम्=भूतलम्, उत्फुल्लेन=विकसितेन, पाण्डुपंकजप्रकरप्रकारेण=श्वेतकमलसमूहेनेव, मण्डयन्तः=अलंकुर्वन्तः, पुण्डरीकपाण्डुपक्षपत्रराजयः—पुण्डरीकं=श्वेतपङ्कजं, तद्वत् पाण्डुपक्षपत्रराजिः=शुभ्रपतत्रपत्रपङ्क्तिः येषां तादृशाः राजहंसाः=मरालाः, सपदि=तत्क्षणं, कुतोऽपि=कस्माच्चित् स्थानात्, निपेतुः=अवतेरुः । उपमाऽलङ्कारः । 'सहस्रसंछादितमिव' 'मूर्तिमन्तोऽट्टहासलवा इव' इत्यादावुत्प्रेक्षा ॥

ज्योत्स्ना—राजा के विचरण करते समय ही वहाँ पर प्रलयकालीन प्रचण्ड वायु से ऊपर की ओर उठाकर फेंके गये हिमालय के प्रस्तर-खण्डों की शोभा को धारण करते हुए, धीमी वायु से कम्पायमान छोटे-छोटे शरत्कालीन मेघों के विलास के समान आचरण करने वाले, ऐरावत द्वारा मथित आकाशगंगा से गिरते हुए श्वेत फेनपुंज को विडम्बित करते हुए, उदित चन्द्रमण्डल के हजारों खण्डों से आकाश को आच्छादित करने वाले, मन्दराचल पर्वत के गिरने से आन्दोलित क्षीरसागर से दूर तक अर्थात् आकाश तक उछले हुए दूध के छीटों की सुन्दरता को प्रकट करते हुए, देहधारी शेषनाग के फणों के समान श्वेत, आनन्दित भगवान् शिव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अट्टहासलवों के समान नीचे आते हुए, विशेष गम्भीर कलकल ध्वनि से भुवनों के मध्यभाग को व्याप्त करते हुए, शीघ्र खिले हुए श्वेत कमलों से धरातल को अलंकृत करते हुए के समान, श्वेत कमलों के समान शुभ्र पंखों की पंक्ति वाले राजहंस कहीं से उतर पड़े ॥

तथाविधे च व्यतिकरे विस्मयविस्मृतनिमेषतया निर्वातनिश्चलनीलोत्पलपलाशशोभायमानलोचनः कौतुकाकूततरलितमनाः सपरिजनो नरपतिरवलोकयन्निश्चल एवावतस्थे ॥

कल्याणी—तथाविध इति । तथाविधे च व्यतिकरे=तथा च घटिते, विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्मृतः निमेषः=निमीलिका येन तस्य भावस्तत्ता तया निर्वातनिश्चलनीलोत्पलपलाशशोभायमानलोचनः—निर्वातनिश्चलनीलोत्पलं=वायुवेगाभावात् स्थिरनीलकमलं, तस्य यत्पलाशं=पत्रं, तस्य शोभेवाचरतीति शोभायमाने लोचने यस्य सः; शोभायमानलोचनेत्यत्र शोभाशब्दात्तद्वति वर्तमानात् कर्तृवाचकादुपमानादाचारेऽर्थे 'कर्तुः क्यङ् सलोपश्च' इति क्यङ्, तदन्तात्कर्तरि लटः शानच् । कौतुकाकूततरलितमनाः—कौतुकस्य=कुतूहलस्य, यत् आकूतं=संवेगः, तेन तरलितम्=आन्दोलितं मनो यस्य सः । सपरिजनः—परिजनैः=अनुयायिभिः सहितः, नरपतिः=नलः, अवलोकयन्=पश्यन् तान् राजहंसानिति भावः । निश्चल=स्तब्ध एव, अवतस्थे=अवस्थितो बभूव ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार की स्थिति में आश्चर्य के कारण पलकों को झपकाना भूल जाने वाले, हवा के झोंकों के अभाव में कम्पन से रहित नीलकमल के समान शोभायमान नेत्रों वाले, कौतूहल के आवेग से आन्दोलित चित्त वाले, परिजनों से समन्वित राजा नल (उन राजहंसों को) देखते हुए स्तब्ध होकर खड़े ही रह गये ॥

ते च धार्तराष्ट्रा अपि कृतपाण्डुपक्षपाताः, द्विजातयोऽपि सुराजिताः; केचिदुच्चचञ्चुपुटविघटितनिकटबालस्थलकमलकुड्मलाः सरसबिसकिसलयानि कवलयन्तः, केऽप्युन्नतसरलगलनालयो नलिनवनविमुखाः खमालोकयन्तः, केचिदुत्क्षिप्तपक्षविक्षेपपवनकम्पितकन्दलाः सलीलमुत्पतन्तः, केचिन्मदमधुरनिजनिनादनिर्जितशिञ्जानमूपुराः, पुरःपुरोऽस्य धावन्तो विचरितुमारभन्त ॥

कल्याणी—ते चेति । धार्तराष्ट्राः=कुरवोऽपि, कृतः=विहितः, पाण्डोः=नृपस्यः, पक्षपातः=गृह्यत्वं यैस्ते तथोक्ता इति विरोधः, धार्तराष्ट्राः=कृष्णचरणाननाः हंसविशेषाः, अपि च, कृतः=विहितः, पाण्डुपक्षाणां=शुभ्रपतत्राणां, पातः=न्यासः यैस्ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथोक्ता इति परिहारः। द्विजातयः=विप्राः, अपि सुरा-जिताः—सुरया=मद्येन; जिताः=वशीकृताः इति विरोधः, द्विजातयः=पक्षिणः, अपि=च, सु-राजिताः= सुशोभिता इति परिहारः। केचित्=राजहंसाः, उच्चैः=उन्नतैः, चञ्चुपुटैः=चञ्चुभिः, विघटिताः=विदारिताः, निकटबालस्थलकमलानां=समीपस्थनवजातस्थलपङ्कजानां; कुड्मलाः=कलिकाः यैस्तादृशाः। सरसबिसकिलयानि=सुस्वादुकमलतन्तून्नवाङ्कुरांश्च, कवलयन्तः=भक्षयन्तः, केऽपि=केचिद्, उन्नतसरलगलनालयः—उन्नताः= उत्थिताः, अतएव सरलाः गलनालिः=कण्ठकाण्डं येषां ते नलिनवनविमुखाः=कमलवनेभ्यः पराङ्मुखाः, खम्=आकाशम्, अवलोकयन्तः=पश्यन्तः, केचित्, उत्क्षिप्तौ= ऊर्ध्वं प्रेरितौ यौ पक्षौ=पक्षती, तयोर्यो विक्षेपः=ऊर्ध्वमधश्च सञ्चालनं, तस्य पवनेन= तज्जनितवायुना, कम्पितानि=आन्दोलितानि, कन्दलानि=कमलनालानि यैस्ते, सलीलं=सविलासम्, उत्पतन्तः=उड्डीयन्तः, केचित्=अपरे, मदेन=हर्षातिरेकेण, मधुरेण=माधुर्ययुक्तेन, निजनिनादेन=स्वकीयध्वनिना, निर्जिताः=तिरस्कृताः, शिञ्जाना=क्षंकृतिं कुर्वाणा, नूपुराः=पादालङ्काराः यैस्तादृशास्ते च राजहंसाः। अस्य=नृपस्य नलस्य, पुरःपुरः=अग्रेऽग्रे, धावन्तः=प्रचलन्तः, विचरितुमारभन्त= भ्रमितुमारेभे। 'धार्तराष्ट्रा अपि'—इत्यादौ विरोधाभासः। अत्र राजहंसानां कविसंवेद्यक्रियाणां वर्णनात्स्वभावोक्तिरलङ्कारश्च ॥

ज्योत्स्ना—और वे (राजहंस) धार्तराष्ट्र—(धृतराष्ट्रपुत्र होते हुए भी पाण्डवों के प्रति पक्षपाती के समान)—कृष्ण वर्ण के पैरों और मुखों से युक्त विशेष प्रकार के हंस होते हुए भी श्वेत पंखों को गिराने वाले, द्विजाति—(ब्राह्मण होते हुए भी मदिरा से पराजित के समान)—पक्षी होते हुए भी सुशोभित; कुछ राजहंस अपने उन्नत चञ्चुओं से समीप ही स्थित स्थलकमलों की नूतन कलियों को विदीर्ण कर (तोड़ कर) लिये हुए, सुस्वादु कमलतन्तुओं और नूतन अंकुरों को भक्षण करते हुए; कुछ ऊँचे, अतएव सीधे गर्दन किये हुए कमलवनों से विमुख होकर आकाश की ओर देखते हुए; कुछ ऊपर की ओर उठाये हुए पंखों के विक्षेप (ऊपर-नीचे चलाने) से उत्पन्न वायु के द्वारा कमलनालों को कम्पायमान करने के साथ-साथ कौतुक के साथ उड़ते हुए एवं कुछ आनन्दातिरेक के कारण अपनी सुमधुर ध्वनि से नूपुरों के झंकारों को भी तिरस्कृत करते हुए इस राजा नल के आगे-आगे दौड़ते हुए विचरण करने लगे ॥

राजापि परिधावितविहङ्गग्रहणाग्रहसमग्रव्यग्रपरिग्रहः परिहासोन्मीलदमलदन्तकान्तिस्तबकिताधरपल्लवो विहसन्नेव तेषामन्यतममनुच्चचटुलचरणचारीचर्यया चारु संचरन्तमीषदुत्क्षिप्तपक्षविलासविहसितविलासिनीलास्यलीलमुन्नमिताग्रग्रीवं जग्राह हेलया हंसम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी राजापीति। परिधावितानां=पलायमानानां, विहङ्गानां=राजहंसानां, ग्रहणे य आग्रहः=अभिनिवेशः तेन समग्रं यथा स्यात्तथा, पूर्णत इत्यर्थः। व्यग्राः=व्याकुलाः, परिग्रहाः=परिजनाः यस्य सः। राजा=नलोऽपि, परिहासेन=यूयमेकस्यापि हंसस्य ग्रहणे न शक्ता इति व्यङ्ग्यपूर्णहासेन, उन्मीलन्ती=प्रकाशमाना, या अमला=स्वच्छा, दन्तकान्तिः=दशनप्रभा, तया स्तबकितः=पुष्पगुच्छोपेतः अधरपल्लवः=अधरकिसलयः यस्य सः। विहसन्नेव=प्रहसन्नेव, तेषां=हंसानाम्, अन्यतमम्=एकम्; अनुच्चचटुलचरणचारीचर्यया=ह्रस्वचपलपदविन्यासविधिना, चारु=रम्यं यथा यथा संचरन्तं=गच्छन्तम्, ईषत्=स्वल्पम्, उत्क्षिप्तौ=ऊर्ध्वं प्रेरितौ, यौ पक्षौ=पक्षती, तयोर्विलासेन=लीलया, विहसिता=तिरस्कृता, विलसिनीनां=रमणीनां, लास्यलीला=नृत्यविलासः येन तम्, उन्नमिता, अग्रग्रीवा=ग्रीवायः पूर्वभागः येन तम्, हंसं=मरालं, हेलया=लीलया, अनायासेनेति यावत्। जग्राह= गृहीतवान् ॥

ज्योत्स्ना—इधर-उधर दौड़ते हुए राजहंसों को पकड़ने के लिए पूर्ण रूप से व्याकुल परिजनों से युक्त (आप लोग एक हंस को भी पकड़ने में सक्षम न हो सके—इस प्रकार) परिहास के कारण प्रकाशमान स्वच्छ दन्तकान्ति के कारण पुष्पगुच्छों से समन्वित अधरकिसलयों वाला होकर हँसते हुए ही उन हंसों में से छोटे-छोटे पैरों की गति के कारण सुन्दर रूप से इधर-उधर घूमते हुए, थोड़े ऊपर की ओर उठे हुए पंखों के विलास से रमणियों की नृत्यलीला को भी तिरस्कृत करने वाले और गर्दन के अग्रभाग को ऊपर की ओर उठाये हुए एक हंस को खेल-खेल में ही पकड़ लिया ॥

उत्क्षिप्तः स च तेन रक्तकमलगर्भविभ्रमायमाणपाणिपल्लवे, पाण्डुपद्म इव पद्मरागशुक्तितले, क्षणमुदयशैलशोणमाणिक्यशिखरशिखायामिन्दुरिव, विराजितो राजहंसो मृदुवाद्यमानरौप्यघनघर्घरीजर्जरस्वरेण कृतस्वस्तिशब्दो विस्पष्टवर्णविशेषं राजानमुपश्लोकयाञ्चकार ॥

कल्याणी—उत्क्षिप्त इति। तेन=राज्ञा नलेन, सः=हंसश्च, उत्क्षिप्तः=गृहीतः, रक्तकमलगर्भस्य=अरुणकमलकोषस्य, विभ्रमः=विलास इव आचरतीति तादृशे पाणिपल्लवे=करकिसलये; विभ्रमशब्दात्तद्वति वर्तमानादुपमानात्कर्तृवाचकादाचारेऽर्थे क्यङ्। पद्मरागशुक्तितले=पद्मरागो नाम मणिः, तस्य या शुक्तिः तत्तले, तदुपरीत्यर्थः। पाण्डुपद्म इव=श्वेतकमलमिव; पद्मशब्दस्य कमलवाचकत्वे पुंस्त्वमपि ज्ञेयम्। क्षणं=कञ्चित्कालम्, उदयशैलस्य=उदयाचलस्य, शोणमाणिक्यानां=रक्तमणीनां, शिखरशिखायां=शृङ्गाग्रभागे, इन्दुरिव=चन्द्र इव, विराजितः=सुशोभितः राजहंसः, मृदु=मधुरं यथा तथा, वाद्यमाना=वादनशीला या रौप्या=रजतनिर्मिता, घना=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुदृढा, घर्घरी=वाद्यविशेषः, जर्जरस्वरेण=जर्जरेत्यनुकरणात्मकः शब्दः, जर्जरेति ध्वनिनेत्यर्थः। कृतः=उच्चारितः, स्वस्तीति मङ्गलार्थकः शब्दो येन सः, विस्पष्टाः=समधिकस्फुटाः, वर्णविशेषाः यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, राजानं=नृपं नलम्, उपश्लोकयाञ्चकार=श्लोकैरुपतुष्टाव। उपमाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—उस राजा नल के द्वारा पकड़ा गया वह हंस भी लाल कमल के मध्य भाग के समान भ्रम उत्पन्न करने वाले करकिसलय में पद्मराग मणि की शुक्ति के ऊपर स्थित श्वेत कमल के समान कुछ काल के लिए उदयाचल की रक्त मणियों से समन्वित शिखरों के अग्र भाग पर स्थित चन्द्रमा के समान सुशोभित होकर मधुर रूप से बजते हुए रजतनिर्मित सुदृढ़ घर्घरी (झाँझ) की जर्जर ध्वनि से मङ्गलसूचक 'स्वस्ति' शब्द कहकर अत्यन्त सुस्पष्ट शब्दों के द्वारा (श्लोकों के द्वारा) राजा नल की स्तुति करने लगा॥

पाण्डुपङ्कजसंलीनमधुपालीसमं गलम्।
यो बिभर्ति विधेयात्ते ना कपाली स मङ्गलम्॥१४॥

अन्वयः—पाण्डुपङ्कजसंलीनमधुपालीसमं गलं यः बिभर्ति सः ना कपाली, ते मङ्गलं विधेयात्॥१४॥

कल्याणी—पाण्डुपङ्कजेति। पाण्डुपङ्कजे=श्वेतकमले, संलीना=संपृक्ता या मधुपाली=भ्रमरश्रेणिः, तत्समं=तन्निभं, गलं=कण्ठं यो बिभर्ति=धारयति, सः ना=पुरुषः, कपाली=कपालमाली, शिव इत्यर्थः। ते=तव नलस्य, मङ्गलं=शुभं, विधेयात्=क्रियात्। आशिषि लिङ्। नाकपालीत्यनेन नाकं=स्वर्गं, तन्निवासिनो देवानिति यावत्। पालयितुं शीलमस्येति शिवस्य सुरपालकत्वमपि गम्यते। उपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम्॥१४॥

ज्योत्स्ना—श्वेत कमल पर संपृक्त भ्रमरपंक्ति के समान (नीले) गले को धारण करने वाले अर्थात् नीलकण्ठ वे कपाली पुरुष—भगवान् शंकर तुम्हारा मंगल करें॥१४॥

अपि च—

सरलप्रियं गुणाढ्यं लम्बितमालं विचित्रतिलकं च।
वनमिव वपुस्तवैतत्कथमवनं नृप जनस्याभूत्॥१५॥

अन्वयः—नृप! वनम् इव सरलप्रियं गुणाढ्यं लम्बितमालं विचित्रतिलकं च तव एतद् वपुः कथं जनस्य अवनं अभूत्॥१५॥

कल्याणी—सरलेति। नृपः=राजन्! वनमिव=विपिनमिव, सरलप्रियं—सरलाः=अकुटिलाः प्रियाः=सुहृदः यस्य तत्। गुणाढ्यं=शौर्यादिगुणसम्पन्नम्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वनपक्षे—[सरल-प्रियंगुणा+आढ्यम्] सरलाश्च प्रियंगवश्च तेषां समाहारः सरल-प्रियंगु, तेन सरलप्रियङ्गुणा आढ्यं=सम्पन्नम्, सरलवृक्षैः प्रियङ्गुलताभिश्च सुशोभितमित्यर्थः। लम्बिता=लम्बायमाना, माला=स्रक् यत्र तत्, वनपक्षे—[लम्बि-तमालम्] लम्बिनः=प्रलम्बाः, तमालाः=तापिच्छवृक्षाः यत्र तत्। विचित्र-तिलकम्—विचित्रः=अतिमनोहरः, तिलकः=पुण्ड्रकः यत्र तत्, वनपक्षे—विचित्रः=अद्भुतः, तिलको नाम वृक्षः यत्र तत्। तव=ते, एतद्=इदं, वपुः=शरीरं, कथं=केन प्रकारेण [कथमिति विरोधे] जनस्य=लोकस्य, अवनं—न वनमिति विरोधः, अवनं=रक्षकः अभूदिति विरोधपरिहारः। श्लेषमूलोपमायाः श्लेषमूलकविरोधाभासस्य चाङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। आर्या जातिः। तल्लक्षणं यथा—'यस्याः पादे प्रथमे द्वादश-मात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या ॥इति॥१५॥

ज्योत्स्ना—और भी;

(राजापक्ष में) हे राजन्! वन के समान सरल मित्रों से युक्त, शौर्य आदि गुणों से समन्वित, लम्बी मालाओं वाला एवं विचित्र प्रकार के (अत्यन्त मनोहर) तिलक वाला तुम्हारा यह शरीर लोकों का रक्षक किस प्रकार हो गया?

(वनपक्ष में) हे राजन्! सीधे प्रियंगु वृक्षों वाला, गुणों से सुशोभित, अत्यन्त लम्बे तमाल वृक्षों और आश्चर्यजनक तिलक वृक्षों से समन्वित तुम्हारा यह वनरूपी शरीर अवन कैसे हो गया? ॥१५॥

अपि च—

वरसहकारकरञ्जकवीरतरोऽशोकमदनपुंनाग ।
विविधद्रुममय राजन्कथमसि न विभीतकः क्वापि ॥१६॥

अन्वयः—राजन्! वरसहकारकरञ्जकवीरतरः अशोकमदनपुंनाग विविध-द्रुममय कथं (त्वं) क्वापि विभीतकः न असि ॥१६॥

कल्याणी—वरसहकारेति। हे राजन्=हे नृप! वरसहकार!—सहकारो-ऽतिसौरभाम्रतरुः, 'आम्रश्चूतो रसालोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः' इत्यमरः। करञ्जक! वीरतरो!—वीरतरुरर्जुनो वृक्षः, 'नदीसर्ज्जो वीरतरुरिन्द्रद्रुः ककुभोऽर्जुनः' इत्यमरः। अशोक! मदन!—मदः शल्यो नाम वृक्षः; 'पिण्डीतको मरुवकश्श्वसनः कर-हाटकः। शल्यश्च मदने' इत्यमरः। लोकेऽयं 'मयनफर' इति नाम्ना प्रसिद्धः। पुंनाग!—पुंनागः केसरो नाम वृक्षः, 'पुंनागे पुरुषस्तुङ्गः केसरो देववल्लभः' इत्यमरः, लोकेऽयं 'नागकेसर' इति नाम्ना प्रसिद्धः। (एवं) हे विविधद्रुमय! कथं त्वं क्वापि=कुत्रापि, बिभीतकः—विभीतकोऽक्षो नाम तरुः, 'विभीतकः। नाऽक्षस्तुषः कर्षफलो भूतावासः कलिद्रुमः' इत्यमरः; लोके 'बहेरा' इति नाम्ना प्रसिद्धः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नासि । विविधद्रुममयत्वसंपत्त्यै त्वया विभीतकेनापि भाव्यं तत्कथं नेति भावः; इति विरोधः । वराः=श्रेष्ठाः, सहकारकाः=सचिवादयः यस्य तत्सम्बुद्धौ हे वरसहकारक ! रञ्जयतीति रञ्जकः=मोदकः, प्रजानामिति भावः, तत्सम्बुद्धौ हे रञ्जक ! वीराणां=शूद्रकादीनामिव, तरः=बलं जवो वा यस्य तत्सम्बुद्धौ हे वीरतर ! 'अत्वसन्तस्य चाधातो' रिति सूत्रेण न दीर्घः, तस्यासम्बुद्धावेव प्रवृत्तेः । न शोको यस्य तत्सम्बुद्धौ हे अशोक !=हे शोकरहितः ! हे मदन !=हे काम ! मदनः=कामः, स इवेति भावः । हे पुन्नाग=पुरुषश्रेष्ठ ! समासान्ते प्रयुक्तो नागशब्दः प्राशस्त्यवाचकः । विविधानां=शरणार्थिनामिति भावः । द्रुममय=आश्रयमय !; यथा द्रुमाः विविधानां पक्षिणां पान्थानां च शरण्या भवन्ति तथैव त्वमपि विविधशरणार्थिनां शरण्योऽसीति भावः । क्वापि त्वं विभीतकः=विशेषेण भीतकः, प्राप्तभयो नासीति प्रकृतार्थेन विरोधपरिहारः । विभीतक इत्यत्र कुत्सायामनुकम्पायां वा कन् । श्लेषोत्थापितो विरोधाभासः । आर्या जातिः ॥१६॥

ज्योत्स्ना—और भी; (वनपक्ष में) हे राजन् ! श्रेष्ठ आम, करञ्जक, वीरतरु (अर्जुन), अशोक, मदन (शल्य) और पुंनाग (केसर) आदि विविध वृक्षों से परिपूर्ण होते हुए भी (तुम्हारा यह वन) विभीतक (बहेरा) से समन्वित क्यों नहीं है ?

(राजापक्ष में) हे राजन् ! हे श्रेष्ठ सहायकों वाले ! हे प्रजाओं के रञ्जक ! हे शूद्रक आदि वीरों के समान वेगवान् ! हे शोक से हीन ! हे कामदेव के समान (सुन्दर) ! एवं हे पुरुषों में सर्वोत्तम ! हे विशिष्ट पक्षियों के पोषक वृक्ष के समान विविध प्रकार के शरणार्थियों के आश्रयस्वरूप ! कहीं भी तुम्हें विभीतक—जुआ खेलने में तल्लीन पाया जाता ॥१६॥

अपि च—

बाणकरवीरदमनकशतपत्रकबन्धुजीवकसुजाते ।
नृप विविधविटपरूपस्तथापि विटपः कथं नासि ॥१७॥

अन्वयः—बाणकरवीरदमनकशतपत्रकबन्धुजीवकसुजाते ! नृप ! विविधविटपरूपः (त्वम् असि) तथापि विटपः कथं नासि ॥१७॥

कल्याणी—बाणेति । हे बाण ! करवीर ! दमनक ! शतपत्रक ! बन्धुजीवक ! शोभना जातिरिति सुजातिस्तत्सम्बुद्धौ हे सुजाते ! इति बाणादीनां सर्वेषां विटपत्वाच्छब्दतो विविधविटपरूपस्त्वं हे नृप ! तथापि विटपः कथं नासीति विरोधः । बाणाः करे यस्य स बाणकरस्तत्सम्बुद्धौ हे बाणकर !, वीरान्दमयतीति वीरदमनः स एव वीरदमनकः, तत्सम्बुद्धौ हे वीरदमनक !=शूरनाशक !, शतं=शतसंख्याकं;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पत्रं=वाहनं यस्य सः शतपत्रः, स एव शतपत्रकस्तत्सम्बुद्धौ हे शतपत्रक !=हे शतवाहन !, बन्धून् जीवयति=रक्षतीति बन्धुजीवकस्तत्सम्बुद्धौ हे बन्धुजीवक ! शोभना जातिः=क्षत्राख्या यस्य सः सुजातिस्तत्सम्बुद्धौ हे सुजाते !=हे शोभनकुल !, हे नृप ! =हे राजन् !, विटान्=लम्पटान् पातीति विटपः, दुर्जनपालक इति यावत् । नासीति प्रकृतार्थेन विरोधपरिहारः । श्लेषोत्थापितो विरोधाभासः । आर्या जातिः ॥१७॥

ज्योत्स्ना—और भी; हाथों में बाणों को धारण करने वाले, वीरों का दमन करने वाले, सौ वाहनों वाले, बन्धुओं की रक्षा करने वाले, उत्तम क्षत्रिय कुल वाले हे राजन् ! शब्दतः बाण, करवीर, दमनक, शतपत्रक, बन्धुजीवक आदि सुन्दर जाति के विभिन्न वृक्षों के रूप वाले होते हुए भी आप किसी भी प्रकार से विटपों=धूर्तों के पालक (रक्षक) नहीं हैं । १७॥

राजा तु तदाकर्ण्य सविस्मयम् 'अहो अस्य धैर्यं मनुष्यसन्निधौ, आश्चर्यं रूपे, माधुर्यं वाचि, प्राचुर्यं प्रज्ञायाम्, औदार्यमर्थे, गाम्भीर्यं वर्णव्यक्तौ । प्रायेणाहारमैथुननिद्राभयभ्रमणमात्रविवेकासु कथं प्रागल्भ्यमेतत्पक्षिजातिषु । तदेष विहंगव्यञ्जनः कोऽपि कामचारी भविष्यति । सर्वथा मनसापि नावज्ञेयाः केऽपि प्राणिनः । यतः कर्मतः कामतः शापतः संछन्नरूपाण्यपि भ्रमन्ति विविधाश्चर्यभाञ्जि 'भूतानि' इति चिन्तयन्नुचितज्ञस्तमीषदुल्लसितसिन्दुवारमञ्जरीभिरिव कुन्दकान्तदीप्तिभिरर्चयन्स्वागतमपृच्छत् ॥

कल्याणी—राजेति । राजा तु=नलस्तु, तत्=हंसकृतोपस्तुतिवचः, आकर्ण्य=निशम्य, सविस्मयं=साश्चर्यं यथा तथा । अहो इति विस्मयद्योतकमव्ययपदम् । मनुष्यसंनिधौ=मनुष्यसामीप्ये, अस्य=हंसस्य, धैर्यं=निर्भीकता, रूपे आश्चर्यम्=आश्चर्यजनकं रूपमित्यर्थः । माधुर्यं वाचि=मधुरा वाणी, प्राचुर्यं प्रज्ञायाम्=प्रगाढबुद्धिः, औदार्यमर्थे=उदारतापूर्णमर्थप्रकाशनम्, गाम्भीर्यं वर्णव्यक्तौ=गम्भीरतापूर्णं स्पष्टवर्णोच्चारणम् । प्रायेण=साधारणतः, आहारमैथुननिद्राभयभ्रमणमात्रे विवेको यासां तासु पक्षिजातिषु=विहङ्गजातिषु, कथमेतत् प्रागल्भ्यं=वाक्पटुता निःशङ्कता च स्यात् । तत्=तस्मात्, एषः=अयं, विहङ्गव्यञ्जनः=पक्षिरूपधारी, कोऽपि=कश्चित्, कामचारी=स्वेच्छाचारी, विद्याधरादिरित्यर्थः । भविष्यति=स्यात् । सर्वथा=सर्वप्रकारेण, मनसापि=चित्तेनापि, केऽपि=केचन अपि, प्राणिनः=जीवधारिणः, न, अवज्ञेयाः=तिरस्करणीयाः । यतः=यस्मात्, कर्मतः=कर्मवशात्, कामतः=कामवशात्, शापतः=शापवशात्, संछन्नरूपाण्यपि—संछन्नं=गुप्तं, रूपं=स्वरूपं यैस्तादृशान्यपि, विविधाश्चर्यभाञ्जि=विविधाश्चर्ययुक्तानि, भूतानि=प्राणिनः, भ्रमन्ति=विचरन्ति । इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, उचितज्ञः—उचितं जानातीति उचितज्ञः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विधिज्ञः स राजा, ईषत्=मनाग्, उल्लसिता=विकसिता या सिन्दुवारमञ्जर्यः ताभिरिव कुन्दस्य=माध्यस्येव, कान्ता=मनोज्ञा या दीप्तयः=स्वशरीरकान्तयः; ताभिः अर्चयन्=पूजयन्, स्वागतमपृच्छत्—'कथयतु, कुशली भवान्' इत्यादिकं स्वागतप्रश्नमकरोत् ।।

ज्योत्स्ना—राजा तो इसे (हंसकृत स्तुतिरूप वचन को) सुनकर आश्चर्य-पूर्वक "अहो ! मनुष्य के समीप में भी इस हंस का धैर्य, आश्चर्यजनक रूप, मधुर वाणी, प्रगाढ़ बुद्धि, उदारतापूर्वक अर्थों का प्रकाशन और गम्भीरतापूर्वक वर्णों का स्पष्ट उच्चारण आश्चर्यजनक है। सामान्यतया भोजन, मैथुन, निद्रा, भय एवं भ्रमणमात्र तक ही विवेक से युक्त पक्षि जाति में इस प्रकार की प्रगल्भता कैसी ? इसलिए यह पक्षिरूपधारी (निश्चित ही) कोई स्वेच्छाचारी विद्याधर होगा। (न केवल कार्यों से, बल्कि) मन से भी किसी भी प्राणी का थोड़ा भी तिरस्कार नहीं करना चाहिए; क्योंकि कर्म के कारण, काम (कामना) के कारण या शाप के कारण नाना प्रकार के आश्चर्यजनक प्राणी अपने मूल स्वरूप को छिपाकर भी (इधर-उधर) विचरण किया करते हैं।"—इस प्रकार विचार करते हुए उचित (समयोचित कार्यों) को जानने वाले राजा नल ने किञ्चित् खिली हुई सिन्दुवार-मंजरी के समान कुन्दपुष्प-सदृश मनोहर अपने शरीर की कान्ति से उसकी पूजा करते हुए (उससे) स्वागत-प्रश्न पूछा ।।

असावपि प्रणयप्रणतशिराः शुचिरोचिषां चयेन पाण्डुपुष्पप्रकरप्रकारेण प्रतिपूजयन्निव 'देव ! भवदवलोकनेनाह्लादितमनसो ममाद्य स्वागतम्, इति ब्रुवाणो राजानं रञ्जयाञ्चकार ।।

कल्याणी—असावपीति । असौ=हंसोऽपि, प्रणयेन=प्रेम्णा, प्रणतं=नतं शिरो यस्य स तथाभूतः । पाण्डुपुष्पप्रकरप्रकारेण=श्वेतपुष्पपुञ्जसदृशेन, शुचिरोचिषां चयेन=स्वश्वेतदीप्तीनां पुञ्जेन, प्रतिपूजयन्निव=प्रत्यर्चयन्निव; उत्प्रेक्षालङ्कारः । देव !=महाराज !, भवतः=श्रीमतः, अवलोकनेन=दर्शनेन, आह्लादितमनसः=आनन्दितचित्तस्य, मम=मे, अद्य==इदानीं, स्वागतम्, इति=एवं, ब्रुवाणः=वदन्; राजानं=नलं, रञ्जयाञ्चकार=आनन्दयामास ।।

ज्योत्स्ना—उस हंस ने भी प्रेम के कारण शिर को झुकाकर, श्वेत पुष्पपुञ्ज के समान अपनी श्वेत कान्तिसमूह से प्रतिपूजन-सा करते हुए "हे देव ! श्रीमान् के दर्शन-मात्र से ही आनन्दित चित्त वाले मेरा आज स्वागत हो गया"—इस प्रकार कह कर राजा नल को आनन्दित कर दिया ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्रान्तरे त्रासतरलतरतरत्तारकमकाण्डाडम्बरितबाष्पप्लवप्लवमानमिव वहन्ती चक्षुः, उत्क्षिप्तपक्षपत्रपल्लवव्याजेन संगृहीते सहचरे शाखोद्धारमिव दर्शयन्ती, हंसी दरादवनिपालमवाप्य रौप्यमयघण्टाटङ्कारकोमलया गिरा श्लोकद्वयमपठत् ॥

कल्याणी—अत्रान्तर इति। अत्रान्तरे=एतस्मिन्नेवान्तरे, त्रासेन=भयेन, तरलतरा=समधिकचञ्चला, तरन्ती=प्लवमाना, तारका=कनीनिका यस्मिंस्तत्। अकाण्डे=अनवसरे, आडम्बरिते=प्रवृद्धे, बाष्पप्लवे=अश्रूपूरे, प्लवमानमिव=तरदिव, चक्षुः=नेत्रं, वहन्ती=धारयन्ती [उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः] उत्क्षिप्तपक्षपत्रपल्लवव्याजेन—उत्क्षिप्तौ=उद्ध्वं प्रेरितौ यौ पक्षपत्रपल्लवौ=पतत्रकिसलयौ तयोः व्याजेन=छलेन, संगृहीते=राज्ञा धृते, सहचरे=स्वामिनी प्रिये हंसे, शाखोद्धारमिव दर्शयन्ती—शाखोद्धारम्=अन्यायपूत्कारचिह्नं शाखाग्रहणं प्रकटयन्ती [उत्प्रेक्षालङ्कारः]=अन्याय्यमेतन्निरपराधपीडनमिति प्रकटयन्तीव; हंसी=तद्धंसप्रिया, दूरात्=दूरप्रदेशात्, अवनिपालं=नृपं नलम्, अवाप्य=उपगम्य, रौप्यमयघण्टाटङ्कारकोमलया—रौप्यमयी=रजतनिर्मिता, या घण्टा तस्याः टङ्कारः=टमिति ध्वनिः, तद्वत् कोमलया=मृदुलया, गिरा=वाण्या, श्लोकद्वयमपठत्=वक्ष्यमाणौ द्वौ श्लोकौ पठितवती ॥

ज्योत्स्ना—इसी बीच भय के कारण अत्यन्त चञ्चल तैरती हुई पुतलियों वाली, असमय ही आँसुओं की बाढ़ में डूबी हुई नयनों वाली, सेवक के द्वारा पकड़ लिये जाने पर फड़कड़ाते हुए पंखरूपी पल्लवों के बहाने से राजा के अन्याय के प्रति विरोध को व्यक्त करने के लिए एक शाखा से दूसरी शाखा पर बैठती हुई-जैसी हंसी (पकड़े गये हंस की प्रिया) दूर से राजा के समीप आकर रजतनिर्मित घंटे की ध्वनि के समान कोमल वाणी के द्वारा दो श्लोक पढ़ने लगी ॥

एकान्ते सेवते योगं मुक्ताहारपरिच्छदः।
हंसः समोक्षयोग्योऽपि देव किं बध्यते त्वया ॥१८॥

अन्वय—(हंसपक्षे) ए ! देव ! मुक्ताहारपरिच्छदः यः (हंसः) कान्ते अगं सेवते, मोक्षयोग्योऽपि स हंसः त्वया किं बध्यते ॥

(आत्मपक्षे) देव ! मुक्ताहारपरिच्छदः (यः) हंसः एकान्ते योगं सेवते, स (हंसः) मोक्षयोग्योऽपि त्वया किं बध्यते ॥१८॥

कल्याणी—एकान्त इति। हंसपक्षे—['ए-कान्ते' इति यः+अगम् इति च विच्छेदनीयम्] अः=विष्णुः, तस्यापत्यम् इः=कामदेवः, तत्प्रतिमस्तत्सम्बुद्धौ ए !, हे देव !=राजन् !, मुक्ताहारः=मौक्तिकमाला, तद्वत् परिच्छदौ=पक्षती यस्य स

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथोक्तः । यो हंसः=मरालः, कान्ते-कं=जलं, तस्य अन्ते=समीपे, अगं=वृक्षं, सेवते=अधिवसति, मोक्षयोग्योऽपि=मोचनयोग्योऽपि स हंसः=जलचरः, त्वया भवता=किं=किमर्थं, बध्यते=निगड़ीक्रियते ॥

आत्मपक्षे—[एकान्ते इति योगमिति चैकैकं पदम्] मुक्ताहारपरिच्छदः-मुक्तः=परित्यक्तः, आहाराणाम्=इन्द्रियभोग्यानां, परिच्छदः=समूहः येन स तथोक्तः । यो हंस=आत्मा, एकान्ते=विजने, योगम्=अध्यात्मं, सेवते स आत्मा मोक्षयोग्योऽपि त्वया=प्रकृत्या किं बध्यते ? न बध्यत एवेत्यर्थः । अत्र पक्षे त्वशब्दः सर्वादिगण-पठितोऽन्यार्थकः, अतः पुरुषापेक्षयाऽन्यया प्रकृत्येत्यर्थः । यद्वा ए-कान्ते=कमनीये, ए अः=विष्णुस्तस्मिन् ए=विष्णौ, त्यक्ताहारविहारः सन् योगम्=अध्यात्मं, सेवते । समः+अक्षयोग्योऽपि—समः=समदर्शनः, अक्षयोग्यः=इन्द्रियसंबद्धोऽपि, प्रकृत्या किं बध्यते ? न बध्यत एवेत्यर्थः । श्लेषाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१८॥

ज्योत्स्ना—(हंसपक्ष) विष्णुपुत्र कामदेव के समान अप्रतिम हे राजन् ! मोतियों की माला के समान उज्ज्वल पंखों वाला जो हंस जल के समीप-स्थित वृक्ष का सेवन करता है, (इस प्रकार का) मुक्त कर दिये जाने योग्य होते हुए भी वह जलचर हंस आपके द्वारा क्यों बाँधा गया है—पकड़ा गया है ?

(आत्मपक्ष) हे देव ! इन्द्रियों द्वारा भोग किये जाने वाले विषयसमूहों का परित्याग किया हुआ जो आत्मा एकान्त स्थान में योग (अध्यात्म) का सेवन करता है वह आत्मा मुक्त किये जाने के योग्य होते हुए भी क्या प्रकृति के द्वारा बद्ध किया जा सकता है ? अर्थात् उसे आबद्ध नहीं किया जा सकता ॥१८॥

नीरञ्जनपदे तिष्ठन्विश्वसंसारसङ्गतः ।
हंसः किं बध्यते क्वापि यस्य नालम्बनं प्रियम् ॥१९॥

अन्वयः—नीरञ्जनपदे विश्वसं सारसङ्गतः हंसः यस्य नालं वनं प्रियं क्वापि बध्यते किम् ? ॥१९॥

कल्याणी—नीरेति । हंसपक्षे—[नीरम्+जनपदे+अतिष्ठन्—विश्वसम्—सारसम्+गतः इति पूर्वार्द्धं विच्छेदनीयम्] जनपदे=पुरग्रामादौ, अतिष्ठन्=अवसन्, विश्वसम्-श्वसन्तीति श्वसाः=प्राणिनः, वयः=पक्षिणः श्वसा यत्र तथाभूतं; सारसम्—सरस इदं सारसं=सरोवरसम्बन्धि, नीरं=जलं, गतः=श्रितः, हंसः=मरालः, यस्य [नालम्+वनम्, बवयोरभेदः] नालं—नलं=कमलं, तस्येदं नालं=कमलसम्बन्धि, वनं=समूहः, प्रियं=प्रीतिकरं, क्वापि=कुत्रापि, बध्यते किम् ?=न बध्यत एवेत्यर्थः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मपक्षे–[पूर्वार्द्धस्य 'नीरञ्जनपदे-तिष्ठन्-विश्वसंसारसङ्गतः' इति विच्छेदः] विश्वस्य=सम्पूर्णस्य, संसारस्य=जगतः, संगतः=अनुरागात्, समस्त-संसारसङ्गमुत्सृत्येर्थ। 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' इति पञ्चमी, तदर्थे तसिल्। नीरञ्जनपदे=नीरागमार्गे, तिष्ठन्=स्थितः सन्, हंसः=आत्मा, यस्य क्वापि=कुत्रापि, [न+आलम्बनम्] न, आलम्बनम्=आसक्तिः, प्रियं, बध्यते किम्?=न बध्यत एवेत्यर्थः श्लेषालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१९॥

ज्योत्स्ना—(हंसपक्ष) जनपद—नगर-ग्राम आदि में निवास न करते हुए विश्वस—पक्षियों के निवास्थानस्वरूप सरोवरसम्बन्धी जल में निवास करने वाला हंस, जिसे कमलों का वन अत्यन्त प्रिय है वह, भी क्या कहीं बाँधा जाता है?

(आत्मपक्ष)—समस्त सांसारिक अनुरागों का परित्याग कर वैराग्यमार्ग में स्थित आत्मा, जिसके लिए किसी भी प्रकार की सांसारिक आसक्ति प्रिय नहीं है, वह भी क्या कहीं (सांसारिक जन्म-मरणरूप बन्धनों में) आबद्ध किया जाता है? ॥१९॥

अन्यच्च—

राजन्! जलपक्षिणो मुनय इव ये मीनाहारं वाञ्छन्ति, बहुधावन-व्यसनिनो बिसाधाराः। तदलमाग्रहेण ॥

कल्याणी—राजन्निति। राजन्! जलपक्षिणः=हंसाः, मुनय इव=मुनितुल्या भवन्ति, ये=जलपक्षिणः, मीनाहारं=मत्स्यभोजनं, वाञ्छन्ति=कामयन्ते। मुनिपक्षे [ये+अमी+न+आहारम्] ये अमी=मुनयः, आहारं=भोजनं, न वाञ्छन्ति। [बहु-धावन-व्यसनिनः] बहु धावनमेव व्यसनं येषान्ते तथोक्ताः, समधिकोत्पतनप्रिया इत्यर्थः। यद्वा [बहुधा-वनव्यसनिनः] बहुधा=प्रायेण, वनं=जलं, तद् व्यसनिनः=जलस्थाः, मुनिपक्षे—बहुधा=प्रायसः, वनव्यसनिनः=अरण्यवासिनः। बिसाधाराः–बिसं=पद्मिनीकन्दः, आधारः=जीविकाश्रयः येषां ते तथोक्ताः। मुनिपक्षे [वि-साधाराः] विगतः=व्यपेतः, साधारः=साधारणतिथिपर्वोत्सवादिर्येभ्यः, लोकोत्तरवृत्तत्वात्ते तथोक्ताः। 'बिसादनाः' इति पाठे बिसमदनं भोजनं येषां ते, मुनिपक्षे—विगतं सादनं=सन्तापः येभ्यस्ते, असन्तापकरा इत्यर्थः। तत्=तस्मात्, अलमाग्रहेण=नाग्रहः कार्यं इत्यर्थः। श्लेषमूलोपमा ॥

ज्योत्स्ना—हे राजन्! क्योंकि ये राजहंस आहार (भोजन) की कामना न रखने वाले, प्रायः वन में निवास करने वाले और (लोकोत्तर आचरण वाले होने के कारण) सामान्यतया तिथि–पर्वादि उत्सवों से निस्पृह रहने वाले मुनियों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान ही मात्र मछलियों के रूप में ही आहार की कामना करने वाले, प्रायः दौड़ते रहने वाले अथवा प्रायः जल में निवास करने वाले और (जीविका के लिए) कमलकन्दरूपी आधार वाले होते हैं। अतः इनके प्रति आग्रह नहीं करना चाहिए। अर्थात् इनको बन्धन में जकड़ना नहीं चाहिए ॥

राजा तु तेन तस्याः श्लेषश्लाघिना श्लोकोक्तिरसेनाह्लाद्यमानो नर्मालापलीलया तां बभाषे ॥

कल्याणी–राजेति। राजा तु=नलस्तु, तस्याः=हंस्याः, श्लेषश्लाघिना–श्लेषं श्लाघते=बहु मन्यत इति श्लेषश्लाघी तेन, श्लेषमयेनेत्यर्थः। तेन=तादृशेन, श्लोकोक्तिरसेन=पद्यगद्यजनितानन्देन, आह्लाद्यमानः=प्रसाद्यमानः, नर्मालापलीलया—नर्मालापः=परिहासपूर्णं सरसं भाषणं, तस्य लीलया=क्रीडया, तां=हंसीं, बभाषे=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल उस हंसी की इस प्रकार की श्लेषमयी श्लोकरूपी उक्ति से आनन्दित होकर प्रसन्न होते हुए हास-परिहासपूर्वक सरस वार्तालाप के द्वारा उससे बोले ॥

'अनेकधा यः किल पक्षपातं सदा सदम्भोजगतः करोति।
स हंसिकेदारविहारशीलो न बध्यते किं बहुनाशकुन्तः' ॥२०॥

अन्वयः—हे हंसिके ! यः सदा सदम्भः जगत् अनेकधा पक्षपातं करोति किल (तथा) बहुनाशकुन्तकः दारविहारशीलः सः किं न बध्यते ? ॥२०॥

कल्याणी—अनेकधेति। [हंसिके–दारविहारशीलः] हे हंसिके ! यः सदा=सर्वदा, [सदम्भः + जगतः] सदम्भः=दम्भेन सहितः, अहङ्कारीत्यर्थः। जगतः=सर्वस्य, अनेकधा=बहुधा, पक्षपातं=ममत्वं, करोति। किलेति निश्चये। तथा [बहु + नाश + कुन्तः]—बहून्नाशयत्येवंविधः कुन्तः=प्रासः यस्य स तथोक्तः; हिंसापापपरायण इत्यर्थः। दारविहारशीलः=स्त्रीक्रीडापरायणः, स कथं न बध्यते, संसारकारायामिति भावः। अथवा यः सदम्भः=दाम्भिकः, अनेकधा=बहुधा, जगतः=सर्वस्य, पक्षस्य=मित्रवर्गस्य, पातं=विनाशं, करोति, किल, तथा जगतः=सर्वस्य, दारेषु=स्त्रीषु, विहारशीलः=क्रीडापरः, तथा बहून्नाशयत्येवंविधः कुन्तः=प्रासः यस्य सः, धृतविनाशकरास्त्र इत्यर्थः। कुन्तशब्दोपादानमस्त्रमात्रोपलक्षणम्। स किं न बध्यते=बध्यत एवेति भावः। इति हंसीवचनप्रतिवचनत्वेन राज्ञो नर्मोक्तिः।

परमार्थस्तु [हंसि-केदारविहारशीलः] हे हंसि ! यः सदा सदम्भोजगतः=सत्पद्माश्रितः सन् अनेकधा=बहुधा, पक्षपातं=पक्षतिपातं करोति, उत्क्षिप्तपक्षपत्रो विलसतीति भावः। केदारविहारशीलः=क्षेत्रेषु विहरणशीलः, किं बहुना=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किमधिकेन [बहुना-शकुन्तः] स शकुन्तः=पक्षी न वध्यते, तद्युक्तमुक्तं त्वयेति। श्लेषाऽलङ्कारः। उपेन्द्रवज्रा वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा–'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' इति ॥२०॥

ज्योत्स्ना—(१) हे हंसिके! जो निरन्तर अहंकारयुक्त रहता है, बहुधा सबके साथ पक्षपात करता रहता है और बहुतों का विनाश करने वाले कुन्तनामक अस्त्र के समान हिंसा में रत रहते हुए भी स्त्री के साथ विहार में ही निमग्न रहता है; वह क्यों नहीं बाँधा जायेगा? अर्थात् अवश्य ही बाँधा जायेगा।

अथवा—(२) हे हंसिके! जो अहंकारी सर्वदा अपने पक्ष के समस्त सुहृद्-वर्गों का विनाश करता रहता है और जगत् की समस्त स्त्रियों के प्रति विहारशील रहने के साथ-साथ अत्यन्त विनाशक कुन्तनामक अस्त्र को धारण किये रहता है, वह निश्चित रूप से आबद्ध किया जाता है।

(प्रकृतार्थ)—हे हंसिके! जो निरन्तर उत्तम कमलों पर आश्रित रहते हुए प्रायः अपने पंखों को फड़फड़ाता रहता है और सदा खेतों में विहार करने में रत रहता है, उसके बारे में अधिक क्या कहा जाय; वह पक्षी (हंस) निश्चय ही बाँधने योग्य नहीं होता अर्थात् तुम्हारा यह कहना कि 'वह मुक्त कर देने योग्य है' यह सर्वथा ही उचित है ॥२०॥

किं चान्यदपि श्रूयतां बन्धस्य कारणम् ॥

कल्याणी—किमिति। किं च = किन्तु, अन्यदपि = पूर्वोक्तकारणेभ्यो भिन्नं विशिष्टमपि, बन्धस्य=ग्रहणस्य, कारणं=हेतुः, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम् ॥

ज्योत्स्ना—लेकिन (इतना ही नहीं, बल्कि इस हंस को) आबद्ध करने के लिए पूर्वोक्त कारणों के अतिरिक्त अन्य भी कारण हैं, (जिन्हें तुम) सुनो ॥

अस्ति मत्परिग्रहे मृणालिकानामवननायिका, सापरागस्थगितमुखकमलापि बलादनेन विनाशिता, विनिपत्योपरि जर्जरिता नखैः खण्डितमधरदलम्, ललितमलिकालकमण्डनम्, अपनीतः सुकुमारभावः ॥

कल्याणी–अस्तीति। मत्=मम, परिग्रहे=परिजनवृन्दे, मृणालिकानामवननायिका—मृणालिकानां=कमलिनीनाम्, अवने=रक्षणे, नायिका=स्वामिनी (अस्ति) सा, अपरागात्=प्रेमाभावात्, स्थगितं=संवृतं, मुखकमलम्=आननसरोजं यया तादृश्यपि, बलात्=हठात्, अनेन=हंसेन, विनाशिता=भग्नशीला कृता। तदेवाह—विनिपत्येति। विनिपत्योपरि–तदुपरि विनिपत्य=आक्रम्य, नखैः=नखरैः; जर्जरिता=विदारिता, कृतनखक्षतेति यावत्। अधरदलम्=ओष्ठकिसलयं, खण्डितं=दष्टम्, ललितं=मनोज्ञम्, अलिकस्य=ललाटस्य, अलकाः=केशा एव मण्डनं=भूषणं, खण्डितं=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकीर्णं, सुकुमारभावः=कौमार्यम्, अपनीतः=अपहृतः। इति राज्ञो नर्मोक्तिः। परमार्थस्तु मत्परिग्रहे=मदधिकृतभूमौ [मृणालिका-नाम-वननायिका] मृणालिका=कमलिनी। नामेति निश्चये। वननायिका-वनस्य नायिकेव। [सा-पराग] सा=मृणालिका, परागैः स्थगितं=छन्नं मुखं यस्य तादृशं कमलं यस्यां तथाविधाऽपि बलात्=हठात् [अनेन विना+अशिता] अनेन विना=पक्षिणा, त्वद्भर्त्रेत्यर्थः। अशिता=भक्षिता, [कर्मणि क्तः] अधरदलम्=अधःपत्त्रम्, खण्डितं=छिन्नं, ललितं=मनोज्ञम्, अलिकालकमण्डनम्—अलयः=भृङ्गा एव कालं=कृष्णं, कस्य=शिरसः, तदुपरिभागस्येत्यर्थः। मण्डनं=भूषणं, खण्डितं=दलितं, सुकुमारभावः=मृदुत्वम्, अपनीतः=विनाशितः, नखैर्जर्जरितत्वात्। अत्र हंसे समैः कार्यैः हठकामुकव्यवहारसमारोपात्समासोक्तिः, सा च श्लेषोत्थापिता ॥

ज्योत्स्ना—(निन्दापक्ष में) कमलिनियों की रक्षा हेतु मेरे द्वारा नियुक्त और प्रेमाभाव के कारण अपने कमलरूप मुख को बन्द की हुई नायिका को इस (हंस) ने बलपूर्वक विनष्ट कर दिया है अथवा उसका शील भंग किया है, उसके ऊपर आक्रमण कर (अपने) नखों से उसे विदीर्ण कर डाला है, उसके ओष्ठरूपी किसलयों को काट डाला है, उसके मनोहारी ललाट के आभूषणस्वरूप अलकों को विकीर्ण कर दिया है और उसके कौमार्य का अपहरण कर लिया है।

(प्रकृत पक्ष में)—मेरे द्वारा अधिकृत भूमि में स्थित मृणालिका (कमलिनी) वन की नायिकास्वरूपा मृणालिकानामक नायिका को, जिसका मुखकमल परागों से भरा हुआ (था) इस हंस ने बलात्—जबर्दस्ती भक्षण कर लिया है, उसके ऊपर आरूढ़ होकर अपने नखों से उसे क्षत कर दिया है, उसके नीचे के पत्तों को काट दिया है और मनोहारी भ्रमरों के कालिमारूपी आभूषण को दलित कर दिया है। इस प्रकार (अपने नखों से जर्जर बना दिये जाने के कारण इसने उसकी) सुकुमारता को नष्ट कर दिया है (अतएव इसे बन्धन में आबद्ध करना सर्वथा ही उचित है) ॥

किं वापीवरेणानेन न कृतम् ॥

कल्याणी—किमिति। [किंवा-पीवरेण-अनेन] वा=अथवा, अनेन=एतेन, पीवरेण=स्थूलेन, किं न कृतं=सर्वमेव कृतं तदित्यर्थः।

परमार्थे तु [किं-वापीवरेणअनेन] वाप्यां=दीर्घिकायां, वरेण=प्रधानेन, अनेन=हंसेन, किं न कृतम् ॥

ज्योत्स्ना—अथवा इस स्थूल (हृष्ट-पुष्ट हंस) ने क्या-क्या नहीं किया? अर्थात् सब कुछ किया है।

(अथवा) सरोवर के इस प्रधान हंस ने क्या नहीं किया?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेष यावन्मध्यं बहुधापाञ्जरन्नावगाहते तावन्मे कुतः संतोषः। न च नदीक्षिते द्विजन्मनि निगृहीतेऽपि गरीयः पातकमस्ति ॥

कल्याणी–तदेष इति। प्रथमपक्षे–तत् = तस्मात्, एषः=अपराधी; पञ्जरस्येदं पाञ्जरं मध्यं=पिञ्जरान्तः, यावद्=यावत्कालम्, बहुधा = प्रायः, न अवगाहते= न तिष्ठते, दीर्घं कालं पञ्जरमध्ये न निवसतीत्यर्थः। तावत्=तावत्कालम् मे=मम, कुतः=कस्मात्, सन्तोषः=सन्तुष्टिः। अथायं द्विजन्मत्वादनिग्राह्य इत्यत आह–न चेति। न दीक्षिते–दीक्षा = शैवादिमतपरिग्रहः संजातोऽस्येति दीक्षितः। न दीक्षिते, द्विजन्मनि=ब्राह्मणे, अथ च नद्यां क्षिते=उषिते, द्विजन्मनि=पक्षिणि, निगृहीते=दण्डितेऽपि, न च गरीयः=अत्यर्थं पातकमस्ति।

द्वितीयपक्षे–तत्=तस्मात्, एषः=तव पतिः; जरन्यावत्=वार्धक्यपर्यन्तं, बहुधा= प्रायः, अपां=जलानां, मध्ये=अन्तः, नावगाहते=तत्र न विहरति, तावन्मे कुतः सन्तोषः। न दीक्षिते, द्विजन्मनि=विप्रे, अथ च नदी-क्षिते=नद्यामुषिते, द्विजन्मनि= पक्षिणि, निगृहीते=नितरां गृहीते, स्नेहात्स्वीकृते गरीयः=अत्यर्थं, न च पातकमस्ति। सरोवरतटस्थितोऽयं हंसो मया स्नेहात्स्वीकृतः। वार्धक्यं यावदयं जले विहरतु। कामयेऽस्य सततं मङ्गलमिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए यह अपराधी (हंस) जब तक बहुत समय तक पिंजड़े के भीतर नहीं रखा जाता, तब तक मुझे सन्तोष कैसे हो सकता है? फिर दीक्षा-विहीन ब्राह्मण अथवा नदी-तट पर निवास करने वाले पक्षी को पकड़ कर बाँध लेने में कोई बड़ा पाप भी तो नहीं होता।

(अथवा) इसलिए तुम्हारा पति यह हंस अपनी वृद्धावस्थापर्यन्त जबतक जल में विहार नहीं करता रहेगा, तब तक मुझे सन्तुष्टि नहीं प्राप्त होगी। (क्योंकि) शैव-वैष्णवादि मतों में दीक्षारहित ब्राह्मण को भी दण्डित करने में जब महान् पाप नहीं होता तो नदी के तीर पर निवास करने वाले पक्षी को (स्नेहवश) पकड़ लेना महान् पाप कैसे होगा?

विमर्श—आशय यह है कि इस हंस को मैंने स्नेहवश पकड़ा है। वास्तव में तो यह आजीवन जल में विहार करता रहे और इसका सदा मंगल हो—यही मेरी कामना है ॥

अयि मुग्धे कलहंसिके! त्वं पुनः मानसङ्गतापि विमाननां सहसे, विपरीतः खल्वेषः। यतः सद्वंशकान्तारागविमुखो मधुपश्रेणिश्रयणीयां सुराजीविनीं कान्तां कामयते। तदलमनेन। 'गच्छ वत्से! यथाप्रियम्' इत्यभिहितवति वसुन्धरेश्वरे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अयीति। प्रथमपक्षे—अयीति नम्रसम्बोधने। मुग्धे=प्रमादापन्ने ! कलहंसिके ! त्वं=भवती, पुनः=भूयः, मानसङ्गतापि—मानेन संगता=युक्तापि, विमाननाम्=अवहेलनां, सहसे=सहनं करोषि इति विरोधः, मानेन=प्रणयकोपेन संगतेति परिहारः। एषः=तव पतिर्हंसः, विपरीतः=विरुद्धवृत्तः। खल्विति निश्चये। तद्विपरीतत्वं प्रकाशयितुमाह—यत इति। यतः=यस्मात्, सद्वंशकान्तारागविमुखः—शोभनः वंशः=अन्वय; यस्यास्तथाविधा या कान्ता=रमणी, तस्यां यो रागः=स्नेहः, तस्माद्विमुखः=पराङ्मुखः, मधुपश्रेण्या—मधु=मद्यं पिबन्तीति मधुपाः=मद्यपाः, तच्छ्रेण्या=पंक्त्या, श्रयणीयाम्=उपभोग्यां, सुरा-जीविनीं—सुरया = मदिरया जीवति या तां, कान्तां=प्रियां, कामयते=वाञ्छति। तदलमनेन—तत्=तस्मात्, अनेन=दुर्वृत्तेन, अलं=किञ्चित्साध्यं नास्ति, परित्यजैनं दुर्वृत्तमिति भावः। वत्से !, गच्छ=प्रयाहि, यथाप्रियं—प्रियम् इष्टप्रदेशमनतिक्रम्येति यथाप्रियम्।

अपरपक्षे—अयि मुग्धे=सुन्दरि ! त्वं मानसं—गता=मानसं सरो गता, विषु=पक्षिषु, माननां=सम्मानं, सहसे=अनुभवसि, एष=त्वद्भर्ता, विपरीतः—विभिः = पक्षिभिः, परीतः=परिवृतः, हंसकदम्बकेश्वरादिति भावः। अयं शोभना वंशा=मस्करा येषु तेषु, कान्तारेषु=काननेषु, ये अगाः=वृक्षाः, तेभ्यो विमुखो मधुपश्रेण्या=भृङ्गावल्या, श्रयणीयां=सेवनीयां [सु-राजीविनीम्] सुष्ठु=शोभनां, राजीविनीं=कमलिनीं, कामयते, न हि विपरीतमेतदिति भावः। [तदलम्। अनेन गच्छ···] तदलम्=तत्पर्याप्तम्, न हीतोऽधिकं वक्तव्यमिति भावः। अनेन=स्वभर्त्रा सह, वत्से ! यथाप्रियं गच्छ। इत्युक्तवति नृपे। श्लेषालङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—हे मुग्धे कलहंसिके ! फिर भी तुम मान—प्रेममूलक कोप से युक्त होते हुए भी अवहेलना को सहन कर रही हो। तुम्हारा यह पति (हंस) निश्चय ही (तुम्हारे) विपरीत आचरण वाला है; क्योंकि उत्तम कुल में उत्पन्न प्रिया के अनुराग से विमुख (होते हुए यह हंस) मद्यपायी लोगों की पंक्ति का आश्रयण करने वाली मदिरा से ही जीवित रहने वाली प्रिया को चाहता है। इसलिए यह उचित नहीं है। (अतः) 'हे वत्से ! (तुम) अपने प्रिय स्थान को जाओ'—इस प्रकार से राजा के कहने पर;

(अथवा) हे मुग्धे कलहंसिके ! फिर तुम तो मानसरोवर में रहनेवाले पक्षियों में सम्मान को प्राप्त करती हो और यह (तुम्हारा पति हंस) पक्षियों से घिरा रहता है। क्योंकि सुन्दर बाँसों के वनों में वृक्षों से विमुख (होकर यह) भ्रमरपंक्तियों से सेवित मनोहर कमलिनी की कामना करता है; अतः (इस विषय में) अब और कुछ नहीं कहना है। हे वत्से ! तुम अपने इस पति के साथ अपने अभीष्ट स्थान को प्रस्थान करो। इस प्रकार से राजा नल के कहने पर;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सापि सपरिहासं हंसी 'हंहो विहङ्गभुजङ्ग, मृणालिकां तामरसान्तरसानुरागरञ्जितमनाः कामयसे किं वापीनदेहे नीरसेवके त्वयि न संभाव्यते' इत्याकलितकलहं कलहंसमवादीत् ॥

कल्याणी— सापीति । प्रथमपक्षे—सा=हंस्यपि, सपरिहासं–परिहासेन=उपहासेन सहितं यथा तथा । हंहो इति प्रश्नपूर्वामन्त्रणे । विहङ्गभुजङ्ग=विहङ्गकामुक!, तां=नृपनिवेदितां, मृणालिकां=नायिकाम्, अरसाम्=अननुरागां, तरसा=वेगेन बलेन वा । नुः किमर्थे । रागेण=आसक्त्या, रञ्जितमनाः सन् कामयसे=वाञ्छसि । [वा-पीनदेहे] वा=अथवा, पीनदेहे=स्थूलकाये, [नीरसे-वके] नीरसे=निःस्नेहे, वके=वकप्राये, त्वयि, किं न संभाव्यते=सर्वमपि संभाव्यते । [अत्र संभावना निन्दाविषया] इति=एवम्, आकलितः=धृतः, कलहः=ईर्ष्याकलहः यस्मिंस्तद् यथा स्यातथा, कलहंसम् अवादीत्, हंसमनिन्ददित्यर्थः ।

अपरपक्षे–सा=हंस्यपि, सपरिहासं = प्रसादद्योतकहासपूर्वकं, हंहो, विहङ्गानां=पक्षिणां, भुजङ्ग=प्रभो ! [तामरसान्तरसानुराग] तामरसान्ते=कमले, यो रसः=निर्यासः, तत्र अनुरागो यस्य तथाविध ! रञ्जितमनाः=अनुरक्तचित्तः सन्, मृणालिकां=कमलिनीं, कामयसे=वाञ्छसि । वापी-नदेहे—वाप्यः=दीर्घिका नदाश्च, तेषु ईहा=कामना यस्य स वापीनदेहस्तस्मिंस्त्वयि, नीरं सेवत इति नीरसेवकस्तस्मिन्, किं न संभाव्यते, अत्र संभावना प्रशंसाविषया। इति=एवम्, आकलितकलहम्—आकलितः=नियन्त्रितः, कलहः यस्मिंस्तद् यथा तथा, सस्नेहमित्यर्थः । कलहंसमवादीत्=हंसमस्तौदित्यर्थः । श्लेषाऽलङ्कारः, 'कलहं–कलहं' इति यमकं च । 'विहङ्गभुजङ्ग' इत्यत्र संयुक्तवर्णयोः स्वरूपतः क्रमतश्चावृत्त्या छेकानुप्रासः ॥

ज्योत्स्ना—वह हंसी भी परिहास के साथ "हे पक्षियों के साथ विलास करने वाले ! उस मृणालिका नाम की प्रेमशून्या नायिका को हठात् (उसके प्रति) आसक्ति के कारण प्रमुदित मनवाले तुम चाहते हो. अथवा स्थूलकाय, स्नेहरहित बगुले के समान तुममें क्या-क्या सम्भावना नहीं की जा सकती ?" इस प्रकार ईर्ष्या को धारण करती हुई कलहंस से बोली ।

(अथवा) वह हंसी भी परिहासपूर्वक "हे पक्षियों के स्वामी ! हे कमलरस के अनुरागी ! (बड़े ही) अनुरक्त चित्त से (तुम) कमलिनी की कामना कर रहे हो । (अतः) बावलियों और नदों की कामना रखने वाले तथा जल का सेवन करने वाले तुममें क्या सम्भव नहीं है ?" इस प्रकार कलह को नियंत्रित करती हुई अर्थात् स्नेह के साथ कलहंस से बोली ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोऽपि 'वैदग्ध्यधुरंधर, धूर्तालापपण्डित, प्रज्ञाप्राग्भारगुरो, चातुर्याचार्य, मा मे प्रियां प्रकोपय। सदृशा एव यूयं वयं च राजहंसाः। सरसां श्रियमनुभवामः। नदीनां पात्रेष्ववस्थितिं कुर्मः। न चरणचर्यायां न श्लाघ्यामहे। तत्सपक्षेषु विपक्षो मा भूः॥

कल्याणी— सोऽपीति। स=हंसोऽपि, हे वैदग्ध्यधुरन्धर=नैपुण्यविशारद! धूर्तालापपण्डित—धूर्त इव आलापपण्डित=भाषणकुशल! प्रज्ञायाः=बुद्धेः, प्राग्भारेण=विशिष्टभरेण, गुरो=गम्भीर, महाप्राज्ञेत्यर्थः। चातुर्याचार्य! मे=मम, प्रियां=हंसीं, मा प्रकोपय=संजातकोपां मा कुरु। यूयं वयं च राजहंसाः=नृपश्रेष्ठाः, पक्षे—मरालाः, सदृशाः=तुल्या एव। सरसां श्रियमनुभवामः—यूयं सरसां=जनानुरागकरीं, श्रियं=लक्ष्मीम्, अनुभवथ। वयं=हंसाः, सरसां = सरोवराणां, श्रियं=लक्ष्मीम्, अनुभवामः। यूयं, पात्रेषु = दानीयपात्रेषु, दीनामवस्थितिं=कार्पण्यं, न कुरुथ। वयमपि, नदीनां=सरितां, पात्रेषु=प्रवाहेषु पुलिनप्रदेशेषु वा, अवस्थितिम्=अवस्थानं कुर्मः। यूयं न च रणचर्यायां=युद्धानुष्ठाने श्लाघ्यध्वे इति न, श्लाघ्यध्व एवेत्यर्थः। वयमपि, न चरणचर्यायां = सविलासविशिष्टगतौ, श्लाघ्यामहे=प्रशस्यामहे इति न, श्लाघ्यामह एवेत्यर्थः। तत्=तस्मादुक्तप्रकारेण, सपक्षेषु=समानपक्षेषु, पक्षतिसहितेषु च, विपक्षः=विरुद्धपक्षः रुष्टश्च, मा भूः=नैव भूयात्।

ज्योत्स्ना—वह कलहंस भी "हे नैपुण्यविशारद! हे धूर्तों के समान बातचीत में कुशल! हे बुद्धि के विशेष भार से गम्भीर अर्थात् महाप्राज्ञ! हे चतुरता के आचार्य! मेरी प्रिया को (आप) क्रोधयुक्त न करें। आप और हम एक समान ही राजहंस हैं अर्थात् आप जिस प्रकार राजाओं में श्रेष्ठ हैं उसी प्रकार हम भी पक्षियों में श्रेष्ठ हैं। आप लोगों को अनुरक्त करने वाली सरस राजलक्ष्मी का अनुभव करते हैं तो हम हंस सरोवर की लक्ष्मी का अनुभव करते हैं। आप दान देने योग्य पात्रों में दीन अवस्था अर्थात् कृपणता नहीं करते तो हम भी नदियों के प्रवाह अथवा तट प्रदेशों पर निवास करते हैं तथा (जिस प्रकार) युद्ध के अनुष्ठान में आप प्रशंसित न होते हों, ऐसी बात नहीं है (उसी प्रकार) विलासपूर्वक भ्रमण करने में हम हंस भी प्रशंसित न होते हों, ऐसी बात नहीं है। इसलिए (आप) समान पक्ष वालों में विपक्ष (प्रतिकूल) न हों अथवा सुन्दर पंखों को धारण करने वाले (पक्षियों) के प्रति रुष्ट न हों॥

एषा मे हृदयं जीव उच्छ्वासः प्राण एव च।
संसारसुखसर्वस्वं प्राणिनां हि प्रियो जनः॥२१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः— एषा मे हृदयं जीवः उच्छ्वासः प्राण एव च (अस्ति)। हि प्रियः जनः प्राणिनां संसारसुखसर्वस्वं (भवति) ॥२१॥

कल्याणी— एषेति। एषा=हंसी, मे=मम, हृदयं=मनः, अभिन्नभावादिति भावः। जीवः=जीवितम्, तत्सद्भावे जीवनादिति भावः। उच्छ्वासः=श्वसनम्, श्वासरोधकचिन्तादिदुःखभरापगमहेतुत्वादिति भावः। प्राण एव च=बलमपि च, अस्ति। हि=निश्चयेन, प्रियः जन=प्रियतमः, प्राणिनां=जीवानां, संसारसुखसर्वस्वं—संसारे=लोके, यानि सुखानि=आनन्दानि, तेषां सर्वस्वं=सर्वसम्पत्तिः भवति। रूपकालङ्कारः; अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—यह हंसी ही (मेरी अभिन्न होने के कारण) मेरा हृदय, जीवन, श्वास और प्राण भी है; क्योंकि प्रिय लोग ही अथवा प्रियतम ही प्राणियों के लिए संसार में सुखों के खजाने होते हैं ॥२१॥

रूपसम्पन्नमग्राम्यं प्रेमप्रायं प्रियंवदम्।
कुलीनमनुकूलं च कलत्रं कुत्र लभ्यते ॥२२॥

अन्वयः रूपसम्पन्नम् अग्राम्यं प्रेमप्रायं प्रियंवदं कुलीनम् अनुकूलं च कलत्रं कुत्र लभ्यते ॥२२॥

कल्याणी—रूपेति। रूपसम्पन्नं=रूपसम्पद्युक्तम्, अग्राम्यं=शिष्टं, प्रेमप्रायं=प्रेम्णा तुल्यं, सस्नेहमित्यर्थः। प्रियंवदं=प्रियं वदतीति तादृशम्, कुलीनं=सद्वंशजातम्, अनुकूलम्=अनुरक्तं च कलत्रं=पत्नी, कुत्र लभ्यते=क्व प्राप्यते, कुत्रापि न लभ्यत इत्यर्थः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—स्वरूप-सम्पत्ति से परिपूर्ण, शिष्ट स्वभाव वाली, स्नेह से परिपूर्ण, प्रिय वचन बोलने वाली, उत्तम कुल-प्रसूता और (अपने लिए सर्वथा) अनुकूल पत्नी कहाँ मिलती है? अर्थात् कहीं भी नहीं मिलती ॥२२॥

तदलमलीककलहारम्भेण भवानप्येवं प्रेमप्रपञ्चनाटकनायको नातिचिरादेव यथा भवति तथा कमप्युपकारं करिष्यामि' इति राजानमवादीत् ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, अलीकम्=अप्रियं, यत् कलहं=सङ्घर्षः, तस्य आरम्भेण=प्रयत्नेन अलम्, इतः परं स्ववाक्प्रपञ्चेन मा मे प्रियां प्रकोपयेति भावः। भवानपि=त्वमपि, एवम्=ईदृक्, प्रेमप्रपञ्चनाटकनायकः—प्रेमप्रपञ्चः=स्नेहविस्तार एव नाटकं=दृश्यं, तस्य नायकः=मुख्यः, नातिचिरादेव=शीघ्रमेव, यथा=येन प्रकारेण, भवति=सम्भवति, तथा=तेन प्रकारेण, कमपि उपकारम्=उपकारात्मकं प्रयत्नं, करिष्यामि=विधास्यामि, इति=एवं, राजानं=नलम्, अवादीत्=अवोचत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—"अतः व्यर्थ के (इस) अप्रिय कलह कराने के प्रयत्न से क्या फायदा ? अर्थात् अपनी वाक्पटुता से आप मेरे प्रति मेरी प्रिया को क्रुद्ध मत करें। आप भी जिस प्रकार से शीघ्र ही इस प्रेमप्रपञ्चरूप नाटक के नायक बन जायँ, उस प्रकार कोई भी उपकारात्मक उपाय (मैं अवश्य) करूँगा।" इस प्रकार से राजा जल से (हंस ने) कहा ॥

अत्रान्तरेऽन्तरिक्षमण्डलादतिस्पष्टवर्णव्यक्तिमनोहारिणी वागश्रूयत ॥

कल्याणी—अत्रान्तर इति। अत्रान्तरे=एतस्मिन्नेवान्तरे, अन्तरिक्षमण्डलाद्=गगनतलात्, अतिस्पष्टा=सुस्पष्टा, वर्णव्यक्तिः=अक्षरव्यञ्जना, तया मनोहारिणी=मनोज्ञा, वाक्=वाणी, अश्रूयत=आकर्ण्यत ॥

ज्योत्स्ना—इसी मध्य में आकाशमण्डल से सुस्पष्ट वर्णव्यञ्जना के कारण मनोरम वाणी सुनाई पड़ी अर्थात् सुस्पष्ट आकाशवाणी सुनाई पड़ी ॥

राजन्राजीवपत्राक्ष क्षिप्रं हंसो विमुच्यताम्।
भविष्यत्येष ते दूतो दमयन्त्याः प्रलोभने ॥२३॥

अन्वयः—हे राजीवपत्राक्ष राजन्! क्षिप्रं हंसः विमुच्यताम्; एषः दमयन्त्याः प्रलोभने ते दूतः भविष्यति ॥२३॥

कल्याणी—राजन्निति। राजीवपत्राक्ष—राजीवपत्रे=कमलदले इवाक्षिणी=नेत्रे यस्य तत्सम्बुद्धौ हे राजीवपत्राक्ष!=कमलनयन!, राजन्!=नृप!, क्षिप्रं=शीघ्रं, हंसः=मरालः, विमुच्यतां=परित्यज्यताम्। एषः=अयं हंसः, दमयन्त्याः=भीमसुतायाः, प्रलोभने=आकर्षणे, ते=तव राज्ञः, दूतः=सन्देशहरः भविष्यति, दौत्यं करिष्यतीति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२३॥

ज्योत्स्ना—हे कमलदलों के समान आँखों वाले राजन्! शीघ्र ही (आप) हंस को मुक्त कर दें। (क्योंकि) भीमपुत्री दमयन्ती को आपकी ओर आकर्षित करने में यह (हंस) ही आपका दूत बनेगा ॥२३॥

राजा तु तस्याः सोष्मबलातैलपूरेणेवाङ्गमुत्पुलकयता; कर्णान्तरमवतीर्णेन, दमयन्तीति नाम्ना कोमलतैत्तिरपिच्छस्पर्शसुखमिवानुभवन्मनाङ्निमीलिताक्षश्चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, तस्याः=आकाशवाणीनिवेदितायाः, सोष्मबलातैलपूरेणेवाङ्गमुत्पुलकयता—बलाः=गन्धद्रव्यविशेषः, सोष्म=उष्णं, यद् बलातैलं, तस्य पूरेणेव=धारयेव अङ्गं=शरीरम्, उत्पुलकयता=रोमाञ्चितं कुर्वता, कर्णान्तरं=श्रवणाभ्यन्तरम्, अवतीर्णेन=प्रविष्टेन, दमयन्तीति नाम्ना=दमयन्तीत्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिधानेन, कोमलतैत्तिरपिच्छस्पर्शसुखमिव—कोमलं=मृदुलं, यतैत्तिरस्य=पक्षिविशेषस्य, पिच्छं=पुच्छं, तस्य स्पर्शसुखमिव=स्पर्शानन्दमिव, अनुभवन्=अनुभवं कुर्वन्, मनाग्=ईषत्, निमीलिते=पिहिते, अक्षिणी=नेत्रे यस्य स, तादृशः सन्, चिन्तयाञ्चकार=विचारयामास। उत्प्रेक्षालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल तो उस आकाशवाणी के द्वारा जिस प्रकार गरम तेल छिड़कने से शरीर रोमाञ्चित हो जाता है उसी प्रकार कानों के भीतर प्रविष्ट हुए 'दमयन्ती' इस नाम के श्रवण से रोमाञ्चित होकर तीतर पक्षी के सुकोमल पूँछ के स्पर्श के समान आनन्द का अनुभव करता हुआ अधखुले आँखों वाला होकर विचार करने लगा ॥

'आह्लादयन्ति सौख्याम्भःशातकुम्भीयकुम्भिकाः।
काञ्चीकलापसश्रीकः श्रोणीबिम्बाः श्रुता अपि ॥२४॥

अन्वयः—सौख्याम्भः शातकुम्भीयकुम्भिकाः काञ्चीकलापसश्रीकः श्रोणीबिम्बाः श्रुता अपि आह्लादयन्ति ॥२४॥

कल्याणी—आह्लादयन्तीति। सौख्याम्भः—सौख्यमेव अम्भः=जलं, तस्य शातकुम्भीयकुम्भिकाः=सौवर्णकलश्यः, काञ्चीकलापेन=रशनाकलापेन, सश्रीकं=शोभान्वितं, श्रोणीबिम्बं=नितम्बमण्डलं यासां तथाविधाः (रमण्यः), श्रुताः=श्रवणविषयभूता अपि, आह्लादयन्ति=आनन्दयन्ति, सर्वसौख्यस्य सर्वात्मनाऽधारभूतत्वात् तासां श्रवणमप्याह्लादयति, किमुत दर्शनं स्पर्शनं वेति भावः। अर्थापत्तिरलङ्कारः। 'सौख्याम्भः शातकुम्भीयकुम्भीकाः' इत्यत्र परम्परितरूपकं तदङ्गम्। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—सुखरूपी जल से परिपूर्ण सुवर्ण-कलशों के समान, करधनी के कारण शोभा से समन्वित नितम्बों को धारण करने वाली (रमणियाँ केवल देखने या स्पर्श करने मात्र से ही नहीं, बल्कि) सुनने-मात्र से भी आनन्दित कर देती हैं ॥२४॥

तत्केयं दमयन्ती, कश्चायमाश्चर्यभूतो विहङ्गः, का चेयं नभोभारती, सर्वमेतद्विस्तरेण वेदितव्यम्' इत्यवधारयन्नेकस्यामुत्फुल्लपल्लवितलतामण्डपच्छायायामुन्निद्रकुसुममकरन्दशीकरासारशिशिरे शिलातले निषद्य तं हंसमवादीत् ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, इयम्=एषा श्रुता, दमयन्ती=दमयन्तीनाम्नी, का=किंपरिचया, आश्चर्यभूतः=अद्भुतः, अयम्=एषः, विहंगः=हंसश्च कः=किंपरिचयः, इयं=श्रुता, नभोभारती=आकाशवाणी च का, एतत्सर्वं=इदमखिलं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विस्तरेण=समग्रेण, वेदितव्यं=ज्ञातव्यम्, इति=एवम्, अवधारयन्=विनिश्चयं कुर्वन्, एकस्यां=कस्याञ्चित्, उत्फुल्लपल्लवितलतामण्डपच्छायायाम्—उत्फुल्लः=पुष्पितः, पल्लवितश्च=पल्लवसम्पन्नश्च, यः लतामण्डपः=वल्लरीगृहं, तस्य च्छायायां=छायातले, उन्निद्राणां=विकसितानां, कुसुमानां=पुष्पाणां च, मकरन्दशीकरासारेण=पुष्परसबिन्दुवर्षणेन, शिशिरे=शीतले, शिलातले=प्रस्तरभागे, निषद्य=उपविश्य, तं हंसं = मरालम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए (आकाशवाणी द्वारा सुनी गई) यह दमयन्ती कौन है ? आश्चर्यजनक यह (हंस) पक्षी कौन है ? और यह आकाशवाणी क्या है ? यह सब कुछ विस्तार के साथ जानना चाहिए—इस प्रकार निश्चय करते हुए एक पुष्पित और पल्लवित लतामण्डप की छाया में विकसित पुष्पों के मकरन्दशीकरों की वर्षा से शीतल हुए शिलातल पर बैठकर (राजा नल) उस हंस से बोला ॥

'भद्र ! साप्तपदीनं सख्यम्, उत्पन्नकतिपयप्रियालापा प्रीतिः, प्रयोजनविरपेक्षं दाक्षिण्यम्, अकारणप्रगुणं वात्सल्यम्, अनिमित्तसुन्दरो मैत्रीभावः सतां लक्षणम् ॥

कल्याणी—भद्रेति । भद्र=प्रियमित्र !, सप्तभिः पदैः=पदसंभाषणैः पदविक्षेपैर्वाऽवाप्यत इति साप्तपदीनम्; तद्धितार्थे द्विगुः, अवाप्यत इत्यर्थे खञ् । सख्यं=सखिभावः, उत्पन्नकतिपयप्रियालापाः—उत्पन्नाः=संजाताः, कतिपयप्रियालापाः=कतिचिन्मधुरसंभाषणानि यत्र तादृशी, प्रीतिः=स्नेहः, प्रयोजननिरपेक्षं=निष्प्रयोजनं, दाक्षिण्यम्=औदार्यम्, अकारणप्रगुणं=अकारणोत्कृष्टं, वात्सल्यं=पक्षपातः, अनिमित्तसुन्दरः=अहेतुरमणीयः, मैत्रीभावः=मित्रत्वं, सतां=सज्जनानां, लक्षणं भवतीति ॥

ज्योत्स्ना—हे प्रिय मित्र ! सात पग साथ-साथ चलने से मैत्री, कतिपय प्रिय वार्तालापों के द्वारा प्रीति की उत्पत्ति, प्रयोजन-निरपेक्ष उदारता, अकारण वात्सल्य (पक्षपात) और अकारण सुन्दर मैत्रीभाव—ये सभी सज्जनों के लक्षण हैं ॥

विमर्श—कवि का आशय यह है कि कुछ पग साथ-साथ चलने से ही सज्जनों के मध्य मैत्री स्थापित हो जाती है, कतिपय रुचिकर बातचीत के द्वारा ही उनमें प्रेम का श्रीगणेश हो जाता है, उनकी उदारता किसी प्रयोजन के लिए नहीं होती; किसी के प्रति प्रेम में कोई कारण नहीं छिपा होता और किसी के साथ मैत्रीभाव प्रकट करने में भी कोई हेतु नहीं होता; अर्थात् ये सभी सज्जनों के स्वाभाविक गुण होते हैं ॥

अस्ति च तत्सर्वं भवन्मूर्तावतो निःशङ्कमभिधीयसे कथय केयं दमयन्ती, कस्य सुता, कीदृग्रूपम्, कुत्र सा वसति, कश्च भवानस्माकमुपकर्तुमिच्छति, का चेयं दिव्यवाणी,—इत्येवमुक्तः स कथयितुमारेभे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अस्तीति । तत्सर्वं=तत्सम्पूर्णं, सतां लक्षणं च, भवन्मूर्तौ—भवतः=तव, मूर्तौ=शरीरे, अस्ति=वर्तते, अतः=अस्मात्कारणात्, निःशङ्कं=निःसंशयम्, अभिधीयसे=प्रार्थ्यसे, कथय=निवेदय; इयं=नभोभारतीनिवेदिता, दमयन्ती=दमयन्तीनाम्नी, का=किंपरिचया, कस्य = पुरुषस्य, सुता=पुत्री, कीदृग् रूपं=सौन्दर्यम्, सा =दमयन्ती, कुत्र=कस्मिन् स्थाने, वसति=निवसति, भवाँश्च=त्वं च, कः=किंपरिचयः, अस्माकं=मामकीनम्—उपकर्तुम्=उपकारं कर्तुम्, इच्छति=अभिलषति, इयम्=एषा, दिव्यवाणी=नभोभारती च का—इति=एवम् उक्तः=प्रार्थितः, सः=हंसः, कथयितुं=निवेदयितुम् आरेभे=आरब्धवान् ॥

ज्योत्स्ना—उपर्युक्त समस्त लक्षण आपके शरीर में विद्यमान हैं। इसलिए निःसन्दिग्ध रूप से मैं आपसे प्रार्थना कर रहा हूँ—"कहो, यह दमयन्ती कौन है? किसकी पुत्री है? उसका रूप (सौन्दर्य) किस प्रकार का है? वह कहाँ निवास करती है? और आप कौन हैं, जो मेरा उपकार करना चाहते हैं तथा यह आकाशवाणी क्या है?"—इस प्रकार (राजा के) पूछने पर उस हंस ने कहना आरम्भ किया ॥

'शृङ्गाररसभृङ्गार तस्याः सौन्दर्यवीरुधः ।
कर्णमारोप्यतां देव वार्ताविस्मयपल्लवः ॥२५॥

अन्वयः-(हे) शृङ्गाररसभृङ्गार देव ! सौन्दर्यवीरुधः तस्याः वार्ता (तस्याः) कर्णम् आरोप्यताम् ॥२५॥

कल्याणी—शृङ्गारेति । हे शृङ्गाररसस्य भृङ्गार=सुवर्णकलश ! देव=राजन् ! सौन्दर्यवीरुधः=सौन्दर्यलतायाः, तस्याः=दमयन्त्याः, वार्ता=वृत्तान्तः, तया विस्मयपल्लवः-विस्मयः=चमत्कार एव पल्लवः=किसलयः, कर्णं=श्रवणप्रान्तं, कलशपक्षे-कर्णम्=ऊर्ध्वभागम्, आरोप्यताम्=समारोपणं क्रियताम् । रूपकालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—हे शृङ्गार रस के सुवर्णकलशस्वरूप राजन् ! सौन्दर्य की लतास्वरूपा उस दमयन्ती की वार्तारूपी चमत्कारी पल्लव को (अपने) कानों पर चढ़ाइये अर्थात् उसके आश्चर्यजनक वृत्तान्त का श्रवण कीजिये ॥२५॥

अस्ति विस्तीर्णमेदिनीमण्डलमण्डनायमानो नगनगरपुरविहारारामरमणीयः सीतासहायसञ्चरितरघुपतिपादपद्मपवित्रारण्यः पुण्यतरतरङ्गगङ्गागोदावरीवारिवारितदुरितदावानलप्रसरः मन्दर इव बलिराजजनितपरिवर्तनः, कैलाश इव महेश्वरलोककृतवसतिः, मेरुरिव सुवर्णप्रकृतिकमनीयो, यदुवंश इव दृष्टशूरपुरुषावतारः, सोमान्वय इव बुधप्रधानो, वेदपाठ इवानेकैः सवनैरुपेतः, पर्वते-पर्वते स्थाणुभिः, पुरे-पुरे पुराणपुरुषैः, जले-जले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कमलोद्भवैः, पदे-पदे देवकुलैः; वने-वने वरुणैः, स्थाने-स्थाने नन्दनोद्यानैः, अर्गलः स्वर्गस्य, तापीप्रायोऽप्यनुपतापी जनस्य, विन्ध्याद्रिमुद्रितायां दिशि देशानामुत्तरोऽपि दक्षिणो देशः ॥

कल्याणी—अस्तीति । विस्तीर्णमेदिनीमण्डलमण्डनायमानः—विस्तीर्णं=प्रसृतं यत् मेदिनीमण्डलं=भूमण्डलं, तस्य मण्डनं=भूषणमिव आचरन्; मण्डनशब्दात् 'कर्तुः क्यङ् सलोपश्च' इति क्यङ्, तदन्ताल्लटः शानजादेशः । नगनगरपुरविहारारामरमणीयः—नगैः=पर्वतैः, नगरैः=जनपदैः, पुरैः=ग्रामैः, विहारैः=मठै, आरामैः=उपवनैः रमणीयः=मनोज्ञः, सीतासहायसञ्चरितरघुपतिपादपद्मपवित्रारण्यः—सीतासहायः=ससीत इत्यर्थः । संचरितः=कृतयात्रः; यः रघुपतिः=श्रीरामचन्द्रः, तस्य पादपद्मेन=चरणकमलेन, पवित्राणि=पूतानि; अरण्यानि=काननानि यस्य स तथोक्तः । पुण्यतरतरङ्गगङ्गागोदावरीवारिवारितदुरितदावानलप्रसरः—पुण्यतरा=अतिशयेन पवित्राः, तरङ्गाः=लहर्यः ययोस्तथाविधे ये गङ्गागोदावर्यौ=नद्यौ, तयोः वारिभिः=जलैः, वारितः=शमितः, दुरितं=पापमेव दावानलः=वनवह्निः, तस्य प्रसरः=विस्तारः यत्र स तथोक्तः । मन्दरः=मन्दरगिरिरिव, बलिराजजनितपरिवर्तनः—बलिना=बलवता, राज्ञा=भीमेन, जनितं=कृतं, परिसमन्ताद् वर्तनं=पालनं यस्य स तथोक्तः । पक्षे—बलिराजो नाम दैत्यस्तेन जनितं=समुत्पादितं, परिवर्तनं=भ्रमणं यस्य सः । कैलासः=कैलासगिरिरिव, महेश्वरलोककृतवसतिः—महान्तश्च ते ईश्वराः=अतिसमृद्धाः इत्यर्थः, तेषां लोकेन=समूहेन, कृता=विहिता, वसतिः=अवस्थानं यत्र स तथाविधः, पक्षे—महेश्वरः=शिवः, तस्य लोकाः=गणाः तैः कृता वसतिर्यत्र । मेरुरिव=मेरुगिरिरिव, सुवर्णप्रकृतिकमनीयः—सुष्ठु वर्णाः=द्विजातयः, प्रकृतयः=अमात्याद्याः, तैः कमनीयः=काम्यः, पक्षे—सुवर्णप्रकृत्या=काञ्चनस्वभावेन, काम्यः । यदुवंश इव=यदुकुल इव, दृष्टशूरपुरुषावतारः—दृष्टः=अवलोकितः, शूरपुरुषाणां=विक्रमशालिनां नराणाम्, अवतारः येन सः, पक्षे—दृष्टः=अवलोकितः, शूरः=वसुदेवपिता, तल्लक्षणस्य पुरुषस्यावतारो येन सः । सोमान्वय इव=चन्द्रवंश इव, बुधप्रधानः=पण्डितबहुलः, पक्षे—बुधो नाम ग्रहविशेषः, सः प्रधानः=मुख्यः यत्र । वेदपाठ इव=वेदपठनसदृशः, अनेकैः=बहुभिः [स इति भिन्नम्] वनैः=विपिनैः,उपेतः=युक्त; पक्षे—सवनैः=यज्ञैः युक्तः । पर्वते-पर्वते=प्रतिपर्वते, स्थाणुभिः=स्तम्भैः [पक्षे—स्थाणुः=शिवः], पुरे-पुरे=ग्रामे-ग्रामे, पुराणपुरुषैः=वृद्धपुरुषैः [पक्षे पुराणपुरुषो विष्णुः] जले-जले, कमलोद्भवैः=क्रमलोत्पत्तिभिः, [पक्षे—कमलोद्भवो ब्रह्मा], पदे-पदे=प्रतिपदे, देवकुलैः=देवालयैः [पक्षे—देवकुलं=सुरवृन्दम्], वने-वने, वरुणैः=वृक्षविशेषैः [पक्षे—वरुणः=प्रचेताः], स्थाने-स्थाने, नन्दनोद्यानैः—नन्दनैः=प्रीतिकरैः, उद्यानैः=आरामैः [पक्षे—नन्दनोद्यानं नामेन्द्रवनम्] तैस्तैः बहुत्वविशिष्टैः स्वर्गस्य अर्गलः=दिवोऽधिकः, स्वर्गे त्वेक एव स्थाणुः (शिव), एक एव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुराणपुरुषः (विष्णु) एक एव कमलोद्भवः=ब्रह्मा, एकमेव देवकुलम्; एक एव वरुणः, एकमेव नन्दनोद्यानं वर्तते । तापयति प्रायेणेति तापीप्रायोऽपि, जनस्य=लोकस्य, अनुपतापी=न जनमुपतापयतीत्येवंशीलः इति विरोधः, तापी नाम नदी प्रायेण यत्रेति तापीप्रायः इति विरोधपरिहारः । विन्ध्याद्रिमुद्रितायां=विन्ध्यगिरिणा चिह्नितायां, तेन विभाजितायामित्यर्थः । दिशि=दिग्भागे, देशानामुत्तरः=उत्तरदिग्वर्ती, दक्षिणो देशः अस्तीति विरोधः, देशानाम् उत्तरः=श्रेष्ठ इति परिहारः । श्लेषमूलोपमा । दक्षिणदेशस्य स्वर्गादप्याधिक्यवर्णनाद् व्यतिरेकः ॥

ज्योत्स्ना—प्रसरित भूमण्डल के भूषणस्वरूप, पर्वत-नगर-ग्राम-मठ एवं उपवनों के कारण रमणीय; सीता के साथ भ्रमण करते हुए श्रीरामचन्द्र के चरण-कमलों के कारण पवित्र वनों वाला; अत्यन्त पवित्र तरंगयुक्त गंगा और गोदावरी के जल से शमित किये गये पापरूपी दावानल के प्रसार वाला; दैत्यराज बलि के द्वारा चारो ओर घुमाये गये मन्दराचल पर्वत के समान बलशाली राजा भीम द्वारा चारो ओर से पालित; भगवान् शिव के गणों के निवासस्थानस्वरूप कैलाश पर्वत के समान अत्यन्त सम्पन्न लोगों का निवासस्थानभूत; काञ्चन प्रकृति के कारण कमनीय मेरु पर्वत के समान उत्कृष्ट द्विजाति वर्णों एवं अमात्यादि प्रकृतियों के कारण कमनीय; वसुदेव के पिता शूरसेन के समान पुरुषों के अवतार (जन्म) को देखे हुए यदुकुल के समान पराक्रमशाली पुरुषों के अवतार को देखा हुआ; बुध जैसे मुख्य ग्रह से युक्त सोमवंश के समान पण्डितों की बहुलता वाला; सवनों—यज्ञों से युक्त वेदपाठ के समान अनेक वनों से युक्त; प्रत्येक पर्वतों के स्थाणु (शिव) से, प्रत्येक नगरों के वृद्ध पुरुषों (विष्णुप्रतिमाओं) मे, सर्वत्र जल में कमलों की उत्पत्ति (कमलोद्भव ब्रह्मा) से, पग-पग पर देवालयों (सुरवृन्दों) से, प्रत्येक वनों में वरुण-नामक वृक्षों (वरुण—सूर्य देवता) से, इन्द्र के नन्दन उद्यान के समान स्थान-स्थान पर आनन्ददायक उद्यानों के कारण स्वर्गलोक से भी अधिक (विशिष्ट), तापी नामक नदीबहुल होने के कारण लोगों के लिए तापरहित, विन्ध्य पर्वत के द्वारा चिह्नित (विभाजित) की गई दिशाओं में समस्त देशों में श्रेष्ठ दक्षिण देश है ॥

यत्र शास्त्रे शस्त्रे च वेदे वैद्ये च भरते भारते च कल्पे शिल्पे च प्रधानो, धनी, धन्यो, धान्यवान्, विदग्धो वाचि, मुग्धो मुखे, स्निग्धो मनसि वसति निरन्तरमशोको लोकः ॥

कल्याणी—यत्रेति । यत्र=यस्मिन् देशे, शास्त्रे=व्याकरणादिषड्विधशास्त्रे, शस्त्रे=शस्त्रविद्यायामित्यर्थः । वेदे=श्रुतौ, वैद्ये=आयुर्वेदे च, भरते=भरतनाट्यशास्त्रे, भारते=महाभारतलक्षणे लोकोत्तरग्रन्थे, कल्पः=धार्मिककृत्यानुष्ठानविधानं वेदाङ्ग-विशेषो वा, तद्यथा—'शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दसां च यः । ज्योतिषा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मयनं चैव वेदाङ्गानि षडेव तु ।' इति । तत्र कल्पः=कर्मकाण्डस्य अनुष्ठानपद्धतेर्वा बोधकः, तस्मिन् कल्पे, शिल्पे च=कलायां च, प्रधानः=मुख्यः, धनी=धनवान्, धन्यः=महाभागः, धान्यवान्=धान्यसम्पन्नः, वाचि=वचने, विदग्धः=प्रवीणः, मुखे=आनने, मुग्धः=सुन्दरः, मनसि=चित्ते, स्निग्धः=स्नेहशीलः, निरन्तरं=सततम्, अशोकः=शोकविरहितः, लोकः=प्रजासमूहः, वसति=निवासं करोति । प्रधान इति प्रकृष्टं धानं धारणं यस्य । शस्त्रशास्त्रादीनि प्रकर्षेण धारयतीत्यर्थः । एवं सर्वत्र वाच्यलिङ्गता । मुख्यार्थस्य हि प्रधानशब्दस्याविशिष्टनपुंसकलिङ्गत्वमिति चण्डपालः ॥

ज्योत्स्ना—जिस दक्षिण देश में शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त-छन्द-ज्योतिषरूप छहों शास्त्र, शस्त्र, वेद, वैद्य (आयुर्वेद), भरत (नाट्यशास्त्र), भारत (महाभारतादि अलौकिक ग्रन्थ), कल्प एवं शिल्प में प्रमुख, धनसम्पन्न, धन्य, धान्यसम्पन्न, बोलने में प्रवीण, मुख से सुन्दर, चित्त से स्नेही और निरन्तर शोक से रहित लोग निवास करते हैं ॥

यत्र क्रुद्धधूर्जटिललाटलोचनानलज्वालाकवलनाकुलः, त्रासादपाङ्गावलोकनमात्रनिर्जितपरमेश्वरमनसां विलासिनीनामुच्चकुचकुम्भयोः शृङ्गारसर्वस्वम्, अधरपल्लवेषु मधु, भ्रूभङ्गेषु धनुः, कटाक्षेषु पुष्पबाणान्निधाय निलीनोऽङ्गेषु जघनस्थलस्थापितरतिर्मकरकेतनः ॥

कल्याणी—यत्रेति । यत्र=दक्षिणदेशे, क्रुद्धधूर्जटिललाटलोचनानलज्वालाकवलनाकुलः—क्रुद्धस्य=संजातकोपस्य, धूर्जटेः=शिवस्य, ललाटलोचनानलः=भालस्थनेत्रवह्निः तेन यत् कवलनं=ग्रसनं, तेन आकुलः=भयविह्वलः, त्रासाद्=भयाद्धेतोः, अपाङ्गावलोकनमात्रेण=नेत्रकोणवीक्षणमात्रेण, निर्जितं=स्ववशीकृतं, परमेश्वरस्य=समृद्धजनस्य, अथ च शिवस्य, मनः=चित्तं, याभिस्तासां विलासिनीनां=रमणीनाम्, उच्चकुचकुम्भयोः=उन्नतस्तनकलशयोः, शृङ्गारसर्वस्वम्=शृङ्गारस्य सारभूतं तत्त्वम्, अधरपल्लवेषु=ओष्ठकिसलयेषु, मधु=मद्यं, भ्रूभङ्गेषु=भ्रूवक्रत्वेषु, धनुः=चापं, कटाक्षेषु=दृष्टिविभ्रमेषु, पुष्पबाणान्=कुसुमशरान्, निधाय=स्थापयित्वा, अङ्गेषु=अवयवेषु, निलीनः=तिरोहितः, जघनस्थलेषु=जघनभागेषु, स्थापिता रतिः=स्वप्रिया येन स मकरकेतनः=कामदेवः तिष्ठति । प्रतीयमानोत्प्रेक्षा ॥

ज्योत्स्ना—जिस दक्षिण देश में कुपित भगवान् शंकर के ललाटस्थित नयनाग्नि की ज्वाला द्वारा ग्रसित किये जाने के कारण व्याकुल, भय के कारण अपाङ्ग भाग से अर्थात् आँखें तिरछी करके देख लेने मात्र से ही अत्यन्त समृद्धिशाली राजाओं के मन को भी जीत लेने वाली कामिनियों के ऊँचे-ऊँचे स्तनरूपी कलशों पर शृङ्गार (रस) के सारभूत तत्त्व को, अधरपल्लवों पर मधु को, भौंहों की वक्रता में धनुष को, कटाक्षों में पुष्प-बाणों को स्थापित करते हुए (उनके)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जघनस्थानों में (अपनी प्रिया) रति को स्थापित करने वाला कामदेव (स्वयं उन कामिनियों के विभिन्न) अंगों में छिपा रहता है ॥

यासां तारुण्यमेव सर्वाङ्गेषु शोभार्थमाभरणम्, उत्तुङ्गस्तनमण्डललावण्यमेव मुखकमलावलोकनाय दर्पणः, तारतरनयनकान्तिरेव मुखमण्डलमण्डनाय चन्दनललाटिका, भ्रूभङ्गा एव विभ्रमाय मृगमदपत्रभङ्गाः, कटाक्षा एव युवजनजयाय परमास्त्राणि, बन्धूककुसुमकान्तिदन्तच्छद एव लोकलोचनमनोमोहनाय माहेन्द्रमणिः; मुखकमलपरिमलागतमधुकरमधुरझंकार एव विनोदाय वीणाध्वनिः ॥

कल्याणी—यासामिति। यासां=विलासिनीनां, तारुण्यं=यौवनमेव, सर्वाङ्गेषु=सकलावयवेषु, शोभार्थं=शोभानिमित्तम्, आभरणं=भूषणम्, उत्तुङ्गम्=उन्नतं, यत् स्तनमण्डलं=कुचचक्रवालं, तस्य लावण्यं=दीप्तिरेव, मुखकमलावलोकनाय=आननपद्मदर्शनाय, दर्पणः=आदर्शः, तारतरयोः=अतिचञ्चलयोः, नयनयोः=नेत्रयोः, कान्तिः=प्रभैव, मुखमण्डलमण्डनाय=वदनमण्डलालङ्करणाय, चन्दनललाटिका=मलयजतिलकम्, भ्रूभङ्गाः=भ्रूकुटय एव, विभ्रमाय=विलासाय, मृगमदपत्रभङ्गाः=कस्तूरिकानिर्मितपत्ररचनाः, कटाक्षाः=तिर्यग्दृष्टय एव, युवजनजयाय=तरुणजनवशीकरणाय, परमास्त्राणि=उत्कृष्टायुधानि, बन्धूककुसुमस्य=बन्धूकपुष्पस्य, कान्तिः=आभेव कान्तिर्यस्य तादृशः दन्तच्छदः=ओष्ठ एव, लोकलोचनमनोमोहनाय—लोकानां=जनानां, यानि लोचनानि=नेत्राणि मनांसि=चित्तानि च, तेषां मोहनाय=स्वव्यापारनिरोधाय, माहेन्द्रमणिः—माहेन्द्रम्=इन्द्रजालं, तदर्थो यो मणिर्माहेन्द्रमणिः, मुखकमलपरिमलाय=आननपद्मसौरभाय, आगतानां=आयातानां, मधुकराणां=भृङ्गाणां, मधुरझङ्कार एव=मृदुलझंकृतिरेव, विनोदाय=मनोरञ्जनाय, वीणाध्वनिः=विपञ्चीरवः। तारुण्यादिष्वाभरणत्वादीनामभेदारोपात्सर्वत्र रूपकम् ॥

ज्योत्स्ना· जिन कामिनियों का यौवन ही (उनके) समस्त अङ्गों को शोभायमान करने हेतु आभूषण है, उन्नत स्तन-मण्डलों की कान्ति ही मुखकमल को देखने के लिए दर्पण है, अत्यन्त चञ्चल नयनों की कान्ति ही मुखमण्डल को अलंकृत करने हेतु चन्दन का तिलक है, भौंहों की भङ्गिमा (भ्रूवक्रता) ही विभ्रम (विलास) को प्रस्फुटित करने के लिए कस्तूरी से निर्मित पत्ररचना है, कटाक्ष ही युवक लोगों को वश में करने के लिए सब से बड़ा अस्त्र है, बन्धूक (अड़हुल) के पुष्प की कान्ति के समान कान्ति वाले वाले ओष्ठ ही लोगों की आँखों और मनों को सम्मोहित करने के लिए जादू की मणिस्वरूप माहेन्द्रमणि है, मुखकमल के सुगन्ध (को पान करने) के लिए आये हुए भ्रमरों का मधुर झङ्कार ही (उनके) मनोरञ्जन के लिए वीणा की ध्वनि है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं बहुना—

ता एव निर्वृतिस्थानमहं मन्ये मृगेक्षणाः ।
मुक्तानामास्पदं येन तासामेव स्तनान्तरम् ॥२६॥

अन्वयः—ता एव मृगेक्षणाः निर्वृत्तिस्थानम् अहं मन्ये; येन तासाम् एव स्तनान्तरं मुक्तानां आस्पदम् ॥२६॥

कल्याणी—ता एवेति । ता एव=एता एव, मृगेक्षणा=हरिणाक्ष्यः रमण्यः, निर्वृतिस्थानं—निर्वृति = मुक्तिः सुखं च, तत्स्थानमित्यहं मन्ये; येन=येन हेतुना, तासां=रमणीनामेव, स्तनान्तरम्=कुचमध्यवर्तिदेशः, मुक्तानां=मुक्तात्मनां मौक्तिकानां च, आस्पदं=स्थानम् । श्लेषोत्थोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः; अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; उन मृगनयनी कामिनियों को ही मैं निर्वृत्ति— मुक्ति और सुख का स्थान मानता हूँ; क्योंकि उन हरिणाक्षी कामिनियों के स्तनों का मध्यवर्ती स्थान ही मुक्तों—मुक्त लोगों तथा मुक्तामणियों का स्थान होता है ॥२६॥

मन्ये च; ताभिरेव विविधनिधुवननिधानकुम्भीभिः कुम्भोद्भवोऽपि भगवान् प्रलोभितो भविष्यति, येनाद्यापि न मुञ्चति दक्षिणां दिशमेव ॥

कल्याणी—मन्ये चेति । मन्ये च=संभावयामि च, विविधनिधुवननिधान-कुम्भीभिः— विविधानि यानि निधुवनानि=सुरतकेलयः, तेषां निधानम्=आरक्षणं, तस्मै कुम्भ्यः=कलश्यः, सुरतक्रीडानिपुणा इत्यर्थः । ताभिरेव=दक्षिणदेशनिवासिनीभिर्ललनाभिरेव, भगवान्=षडैश्वर्यसम्पन्नः, कुम्भोद्भवोऽपि=महर्षिरगस्त्योऽपि, प्रलोभितः=मोहितः, भविष्यति । येन=येन कारणेन, अद्यापि=साम्प्रतमपि, दक्षिणां दिशमेव=अवाची दिशमेव, न मुञ्चति=न परित्यजति । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । विविधनिधुवनेत्यादिपदार्थस्य कुम्भोद्भवस्य प्रलोभने हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गं च, तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः ॥

ज्योत्स्ना—और यह भी मानता हूँ कि नाना प्रकार की सुरतक्रीडाओं को रखने के लिए कलशस्वरूपा अर्थात् सुरतक्रीडाओं में निपुण उन दक्षिणदेशनिवासिनी कामिनियों के द्वारा ही महर्षि कुम्भज—अगस्त्य भी प्रलोभित हुए होंगे, जिस कारण आज भी वे दक्षिण दिशा का परित्याग नहीं कर पा रहे हैं ॥

अथवा—

देशो भवेत्कस्य न वल्लभोऽसौ स्त्रीसंकुलः सुस्थितकामकोटिः ।
दग्धैककामं त्रिदिवं विहाय यस्मिन्कुमारोऽपि रतिं चकार ॥२७॥

अन्वयः—सुस्थितकामकोटिः स्त्रीसंकुलः असौ देशः कस्य न वल्लभः; यस्मिन् कुमारोऽपि दग्धः एकः कामः त्रिदिवं विहाय रतिं चकार ॥२७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—देश इति । सुस्थितकामकोटिः—सुस्थिता=प्रतिष्ठिता कामकोटिः=कामकोटिर्देवी कन्दर्पचापाग्रभागश्च यत्र सः, स्त्रीसंकुलः—स्त्रीभिः=ललनाभिः संकुलः=व्याप्तः, असौ देशः=दक्षिणदेशः, कस्य=जनस्य, न, वल्लभः=प्रियः, सर्वस्यापि वल्लभ इत्यर्थः । यस्मिन्=दक्षिणदेशे, कुमारोऽपि=पञ्चवर्षदेशीयोऽपि बालकः, दग्धः=अपसारित इत्यर्थः । एकः=अद्वितीयः, प्रबलतर इति यावत् । कामः=विषयोपभोगेच्छा येन तादृशं त्रिदिवं—दीव्यते=क्रीडयतेऽत्रेति दिवं=क्रीडा, त्रिदिवं=त्रिविधां क्रीडां, विहाय=परित्यज्य, रतिं=सुरतं, चकारेति विरोधः, यस्मिन् देशे दग्धैककामं त्रिदिवं=स्वर्गं विहाय कुमारः=कार्तिकेयः, रतिम्=आस्थां चकारेति परिहारः । श्लेषमूलको विरोधाभासः । इन्द्रवज्रावृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ।' इति ।।२७।।

ज्योत्स्ना—कामकोटि देवी से सनाथित और स्त्रियों से भरा हुआ यह दक्षिण देश किसे प्रिय नहीं है ? अर्थात् समस्त लोगों को प्रिय है, जहाँ कुमार कार्तिकेय भी कामदग्ध स्वर्ग का परित्याग कर प्रेमपूर्वक निवास करते हैं ।

(अथवा) कामकोटि (कामदेव की धनुष-कोटि) से सनाथित और स्त्रियों से व्याप्त यह दक्षिण देश किसे प्रिय नहीं है ? अर्थात् सभी को प्रिय है, जिससे अत्यन्त प्रबल कामवासनाओं को दूर करने वाली त्रिविध क्रीडाओं का परित्याग कर बालक भी रति—प्रेम करने लगते हैं ।।२७।।

तस्यान्तर्भूतवैदर्भमण्डलस्यालङ्कारभूतमनाकुलममरपतिपुरप्रतिस्पर्धिपरितः परिखाप्रान्तरूढप्रौढहृद्योद्यानमालावलयितमदभ्रशुभ्राभ्रंलिहप्रासादशिखरशिखाभोगभग्नरविरथतुरङ्गवेगम्, एकत्राग्निहोत्रमन्त्रपवित्राहुतिहतसमस्तदिव्यान्तरिक्षभौमोत्पातसङ्घातैः, कृतमन्युभिरपि मन्युशून्यैः, उक्तसूक्तैरपि निरुक्तपरैः, सन्मार्गस्थैरपि गृहस्थैः, सकलत्रैरपि ब्रह्मचारिभिः, अभ्यस्ततिथिभिरप्यतिथिकुशलैः, सामप्रयोगप्रधानैरपि दण्डावलम्बिभिः, शतपथानुसारिभिरप्येकमार्गैः, ब्राह्मणैरध्यासितम्; एकत्र कुरुभिरिव द्रोणपुरःसरैः, प्रासादैरिव तुलाधारिभिः नैयायिकैरिवानुमेयानुमाननिपुणैः, वैशेषिकैरिव द्रव्यानुगुणकर्मविशेषपण्डितैः, वैयाकरणैरिव रूपसिद्धिप्रधानैः, रुद्रैरिवानेकग्रन्थिबद्धकपर्दकैः, विपणिवणिग्जनैरधिष्ठितम्; एकत्र विटकौलदम्भदीक्षाभिरिव कुचरूपलोभितलोकाभिः, कुकविकाव्यपद्धतिभिरिव भग्नयतिगणवृत्ताभिः, निशाचरीभिरिव रजनिरागिणीभिः, सर्वतोमुखजघनचपलाभिरप्यनार्याभिः, कर्णाटचेटीभिर्भरितम्; एकत्र बालकमिव कुलालाकीर्णम्; एकत्र वृद्धमिव कुजराजितम्; एकत्र चित्रविद्ययेव प्रवर्धमानसकलशिशुशोभितया विन्यस्तस्वस्तिकया सर्वतोभद्रभूषणया भवनमालयालङ्कृतम्; एकत्र नाटकैरिव पताकाङ्कसन्धिसङ्गतैः, दुष्टकिरातैरिव दृष्टकूटकर्मभिः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शस्त्रैरिव सुधारैः, विचित्रैरपि सचित्रैः, सतुलैरप्यतुलैर्देवकुलैः संकुलम्; विशालमपि शालासम्पन्नम्, चतुश्चरणसंयुक्तमपि चरणरहितम्, विट्सम्भृतमपि शुचिमार्गम्, सर्वत्र चत्वराधिकमपि स्थिरप्रकृति, मज्जन्महाराष्ट्रकुटुम्बिनीमुखमण्डलविधीयमानोत्फुल्लकमलशोभायास्तुङ्गतरङ्गरिङ्गत्तरुणार्जुनराजीवराजमानराजहंसविराजितवारेर्वरादायास्तीरे रामणीयकरसकुण्डं कुण्डिनं नाम नगरम् ॥

कल्याणी—तस्येति । तस्य=दक्षिणदेशस्य,अन्तर्भूतम्=अन्तर्गतं, यद् वैदर्भमण्डलं=विदर्भप्रदेशः, तस्य अलङ्कारभूतं=भूषणभूतम्, अनाकुलं=निरुपद्रवम्, अमरपतिपुरेण=स्वर्गेण, प्रतिस्पर्धते=स्पर्धां करोतीत्येवंशीलं, परितः=समन्तात्, परिखाप्रान्ते—परिखा=खातकं, तस्याः प्रान्ते=सीम्नि तटे वा, रूढानि=उपजातानि, प्रौढानि=उत्कृष्टानि, हृद्यानि=मनोहराणि च यानि उद्यानानि=उपवनानि, तेषां मालाभिः=श्रेणीभिः, वलयितं=परिवेष्टितम्, अदभ्राः=प्रचुराः, शुभ्राः=धौताः, अभ्रंलिहाः=गगनस्पर्शिनः ये प्रासादाः=हर्म्याणि, तेषां शिखरशिखाभोगेन=शृङ्गाग्रभागविस्तारेण, भग्नः=विहतः, रवेः=सूर्यस्य, रथतुरङ्गानां=रथाश्वानां, वेगः=जवः येनत त्तादृशम् । एकत्र=कुत्रचित्, अग्निहोत्रमन्त्रैः=हवनमन्त्रैः, पवित्राहुतिभिः=पूतहवनकर्मभिः, हतः=विनाशितः, समस्तः=सकलः, दिव्यानां=दैविकानाम्, आन्तरिक्षाणाम्=अन्तरिक्षसम्बन्धिनां, भौमानां=भूमिसम्बन्धिनाम्, उत्पातानाम्=उपद्रवाणां, संघातः=समूहः यैस्तादृशैः । कृतमन्युभिः=कृतकोपैरपि, मन्युशून्यैः=कोपशून्यैरिति विरोधः, कृतमन्युभिः=कृतक्रतुभिरिति परिहारः, 'मन्युर्दैन्ये क्रतौ क्रुधि' इत्यमरः । उक्तसूक्तैरपि—उक्तानि=कथितानि, सूक्तानि=सुभाषितानि यैस्तादृशैरपि निरुक्तपरैः=अभाषणतत्परैरिति विरोधः, उक्तानि=पठितानि, सूक्तानि=पुरुषसूक्तादीनि स्तोत्राणि यैस्तादृशैर्निरुक्तं=वेदाङ्गविशेषस्तत्र परैः=तत्परैरिति परिहारः । सन्मार्गे=शोभनाध्वनि, तिष्ठन्तीति तादृशैपि गृहस्थैः=गृहे तिष्ठन्तीति तथाविधैरिति विरोधः, सन्मार्गस्थैः=सदाचारपरायणैः, गृहस्थैः=गृहिभिश्चेति परिहारः । सकलत्रैरपि=पत्नीसहितैरपि, ब्रह्मचारिभिः=निषिद्धकामैरिति विरोधः, सकलं=सर्वं, त्रायन्ते=रक्षन्तीति तादृशैः, ब्रह्म=वेदं, चरन्ति=जानन्त्यवश्यमिति तथाविधैश्चेति परिहारः । अभ्यस्ततिथिभिरपि—अभ्यस्ता तिथिः=तिथिविद्येत्यर्थो यैस्तादृशैरपि अतिथिकुशलैः—न तिथौ=तिथिविद्यायां, कुशलैः=निपुणैरिति विरोधः, अतिथीन्=आगन्तून् कुशांश्च लान्ति=स्वीकुर्वन्तीति तथाविधैर्यद्वा अतिथिसेवानिपुणैरिति परिहारः । सामप्रयोगप्रधानैरपि—साम=सान्त्वं, तत्प्रयोगनिपुणैरपि,दण्डावलम्बिभिः=दमनपरायणैरिति विरोधः, साम=वेदः, तत्प्रयोगप्रधानैः=तद्गाननिपुणैः, दण्डावल-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म्बिभिः=पलाशण्डधारिभिश्चेति परिहारः। शतपथं=शतसंख्यं, पन्थानं=मार्गम् अनुसरन्तीत्येवंशीलैरपि एकमार्गैः=एकमार्गगामिभिरिति विरोधः, शतपथं नाम यजुर्वेदभागमनुसरन्तीति तैरेकमार्गैः=एक एव मार्गः=नीतिर्येषां तैः, ऋजुभिरिति यावदिति परिहारः। तादृशैः ब्राह्मणैः=विप्रैः, अध्यासितं=सनाथम्। एकत्र=कुत्रचिच्च, कुरुभिरिव=कौरवैरिव, द्रोणपुरःसरैः—द्रोणः परिमाणविशेषः, तत्पुरःसरैः=तदवलम्बिभिरिति यावत्, पक्षे द्रोणो नाम कुरुगुरुः, तत्पुर सरैः = तत्प्रधानैः, प्रासादैरिव=सदनैरिव, तुलाधारिभिः—तोल्यतेऽनयेति तुला, तद्धारिभिः; पक्षे—तुला=गृहादीनां तिर्यग्धारणस्तम्भः, तद्धारिभिः, नैयायिकैरिव=न्यायशास्त्रविशारदैरिव, अनुमेयानुमाननिपुणैः—अनुमेयं=पण्यवस्तु, तस्य अनुमाने=उद्देशादिज्ञाने, निपुणैः, पक्षे—अनुमीयते तदनुमेयम्, अनुमीयतेऽनेन तदनुमानम्, यथाऽयं पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वादित्यत्र वह्निरनुमेयो धूमश्चानुमानम्, तदेवमनुमेयानुमाननिपुणैः। वैशेषिकैरिव=वैशेषकदर्शनशास्त्रज्ञैरिव, द्रव्यानुगुणकर्मविशेषपण्डितैः—द्रव्यस्य=रूप्यकादेः, अनुगुणः=उपयुक्तः यो कर्मविशेषः=व्यापारः तस्मिन् कुशलैः, पक्षे—द्रव्यानुगताः गुणकर्मविशेषास्तेषु पण्डितैः। वैयाकरणैरिव=व्याकरणशास्त्रज्ञैरिव, रूपसिद्धिप्रधानैः—रूपाणां=टङ्कक-रूपकादीनां, सिद्धौ=सम्यगवाप्तौ, प्रधानं—प्रकृष्टं धानं=धारणं येषां तैर्निपुणैरिति यावत्, पक्षे—रूपसिद्धिप्रधानैः=शब्दसिद्धिप्रधानैः, रुद्रैरिव=शिवैरिव, अनेकैर्ग्रन्थिभिर्बद्धः कपर्दकः=वराटः यैस्तादृशैः, पक्षेऽनेकैर्ग्रन्थिभिर्बद्धः=संयमितः, कपर्दकः=जटाजूटः यस्तैः तादृशैः, विपणिवणिग्जनैः—विपणिनः=व्यापारिणः, ये वणिग्जनाः=वैश्यवर्गाः, तैरधिष्ठितं=सम्पन्नम्, एकत्र=कुत्रचिच्च, विटकौलदम्भदीक्षाभिरिव=धूर्तवाममार्गिशाक्तानां दम्भदीक्षाभिरिव, कुचरुपलोभितलोकाभिः—कुचयोः=स्तनयोः रूपेण=सौन्दर्येण लोभितः=आकर्षितः, लोकः=जनः याभिस्तादृशीभिः, पक्षे—कुचरु-उपलोभितलोकाभिः—कुत्सितेन चरुणा=मांसादिनोपलोभितलोकाभिः, कुकविकाव्यपद्धतिभिरिव=असमर्थकविरचनासरणिभिरिव, भग्नयतिगणवृत्ताभिः—भग्नं=खण्डितं, यतिगणस्य=मुनिवृन्दस्य, वृत्तं=शीलं याभिस्तथाविधाभिः, पक्षे—भग्ना यतयः=विरामाः, गणाः=मगणादयोऽष्टौ येषु तथाविधानि वृत्तानि=छन्दांसि यासु ताभिः, निशाचरीभिरिव=राक्षसीभिरिव, रजनिरागिणीभिः—रजनिः=हरिद्रा, तया रागिणीभिः=कृताङ्गरागाभिः; पक्षे—रजन्यां=निशायाम्, रागिणी=अनुरागवती, सर्वतः मुखजघनचपलाभिरपि—मुखचपला—जघनचपला चेत्यवान्तरभेदविशेषद्वयं यासु ताभिरपि अनार्याभिः=आर्या नाम छन्दोभेदविशेषः, न आर्याभिरित्यनार्याभिरिति विरोधः, आर्या नाम मात्रासंख्याविनियमितछन्दोविशेषः, तस्या नवभेदा यथा—'पथ्या विपुला चपला मुखचपला-जघनचपला च। गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिर्नवैव वार्यायाः' ॥इति॥ मुखेन जघनेन च

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चपलाभिरनार्याभिः=असाध्वीभिश्चेति विरोधपरिहारः। कर्णाटचेटीभिः—कर्णाटो नाम दक्षिणभारतस्य प्रदेशविशेषः; तच्चेटीभिः=दासीभिः, भरितं=व्याप्तम्, एकत्र=कुत्रचिच्च, बालकमिव=बालमिव, कुलालाकीर्णम्—कुलालैः=कुम्भकारैः, आकीर्णं=सङ्कुलं; पक्षे—[कुलाला-आकीर्णम्]-कुत्सितलालया आकीर्णम्, एकत्र=कुत्रचिच्च, वृद्धमिव=जरठमिव, कुजराजितम् - कुजैः=वृक्षैः, राजितं=शोभितं; पक्षे—[कुजराजितम्] कुत्सितजरया जितं=पराभूतम्, एकत्र=कुत्रचिच्च, चित्रविद्ययेव=चित्रकलयेव, प्रवर्धमानसकलशिशुशोभितया—प्रवर्धमानैः सकलैः=कलावद्भिः, शिशुभिः=डिम्भैः, पक्षे—वर्धमानः सकलः शिशुरित्याख्यैः पत्रैः शोभितया, विन्यस्तः स्वस्तिकः=मौक्तिकादिचूर्णरचितचतुष्कः, पक्षे—स्वस्तिकाख्यं पत्रं यस्यां ताभिः, [भवनमालापक्षे 'सर्वतः' इति भिन्नम्] सर्वतः=सर्वत्र, भद्राणि=वास्तुशास्त्राख्यातानि, पक्षे—सर्वतोभद्र इत्याख्यं पत्रं=भूषणं यस्यां तया भवनमालया=गृहश्रेण्या,अलंकृतं=मण्डितम्। एकत्र=कुत्रचिच्च, नाटकैरिव पताकाङ्कसन्धिसंगतैः—पताका=ध्वजवस्त्रं, सैवाङ्कः=चिह्नं येषां तानि च सन्धिषु संगतानि च, अविभाव्यमानसन्धीनीति यावत् तादृशैः, पक्षे—पताका=प्रासङ्गिकेतिवृत्तविशेषः, अङ्कः=प्रबन्धविभागः; सन्धयः=मुख-प्रतिमुख-गर्भ-विमर्श-निर्वहणाख्याः पञ्चसन्धयस्तत्संगतैः, दुष्टकिरातैरिव दृष्टकूटकर्मभिः—दृष्टं, कूटकर्म=शिखरनिर्माणरूपं कर्म यैस्तैः, पक्षे—दृष्टं कूटकर्म=कपटपूर्णं कर्म यैस्तैः, शस्त्रैरिव सुधारैः—सुधां=लेपविशेषमियृति=प्राप्नुवन्तीति तैः, पक्षे—शोभना धारा येषां तैः, विचित्रैरपि=विगतचित्रैरपि, सचित्रैः=चित्रसहितैरिति विरोधः, विचित्रैः=बहुविधैरिति परिहारः। सतुलैरपि—सतुलाभिः=धारणस्तम्भेन सहितास्तैरपि अतुलैः—न तुला=धारणस्तम्भा येषु तैरिति विरोधः, न तुला=साम्यं येषां तैरिति परिहारः। तादृशैः देवकुलैः=देवालयैः, संकुलं=व्याप्तम्। विशालमपि—विगताः शाला=गजादीनामालयाः यत्र तदपि शालासम्पन्नमिति विरोधः, विशालं=विस्तीर्णमिति परिहारः। चतुश्चरणसंयुक्तमपि—चत्वारश्चरणा येषां ते चतुश्चरणाः=चतुष्पदाः पशवस्तैः संयुक्तमपि चरणरहितमिति विरोधः, ['च' इति छित्त्वा 'अपि' इत्यनेन योजनीयं तदेवमपि चेति विरोधे] तदा रणरहितं=युद्धरहितमिति परिहारः। विट्संभृतमपि=विष्ठाभिर्व्याप्तमपि, शुचिमार्गं—शुचयः=पवित्राः, मार्गाः=पन्थानः यत्र तदिति विरोधः, विट्संभृतं—विड्भिः=वैश्यैः, संभृतमिति परिहारः। सर्वत्र च-त्वराधिकमपि=क्षिप्रताधिकमपि स्थिरप्रकृति—स्थिरा प्रकृतिः स्वभावः यस्य तदिति विरोधः, चत्वराधिकं=चतुष्पथाधिकं, स्थिरा प्रकृतिः=अमात्यादिः यत्र तदिति परिहारः। मज्जन्तीनां=स्नानं कुर्वतीनां, महाराष्ट्रस्य=तन्नाम्नः प्रदेशस्य, कुटुम्बिनीनां=नारीणां, मुखमण्डलैः=आननचक्रवालैः, विधीयमाना=क्रियमाणा, उत्फुल्लकमलानां=विकसितपङ्कजानां, शोभा=सौन्दर्यं यस्यां तस्याः, तुङ्गैः=उन्नतैः, तरङ्गैः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऊर्म्मिभिः, रिङ्गन्ति=कम्पमानानि यानि तरुणानि=विकसितानि, अर्जुनराजीवानि=श्वेतकमलानि, तैः राजमानाः=दीप्यमानाः, ये राजहंसाः=मरालाः, तैः विराजितम्=अलङ्कृतं, वारि=जलं यस्यास्तस्याः वरदायाः=वरदाभिधानायाः नद्याः, तीरे=तटे, रामणीयकरसकुण्डं—रमणीयस्य भावो रामणीयकम् ['योपधाद्गुरूपोत्तमाद् वुञ्' इति वुञ्] रामणीयकं=सौन्दर्यं, तस्य यो रसः=तत्त्वभूतोंऽशः, तस्य कुण्डं=पल्वलं, कुण्डिनं नाम=कुण्डिननामकं, नगरं=पुरम्, अस्तीति शेषः। श्लिष्टोपमानां विरोधाभासानां च संसृष्टिः॥

ज्योत्स्ना—उस दक्षिण देश के अन्तर्गत वैदर्भमण्डल (विदर्भ-प्रदेशों) का अलङ्कारभूत, उपद्रवरहित; स्वर्ग से प्रतिस्पर्धा करने वाला; चारो तरफ से खाइयों रूपी सीमा वाले उत्कृष्ट एवं मनोहर उपवनों से परिवेष्टित, प्रचुर शुभ्र गगनचुम्बी भवनों के शिखरों से सूर्यरथ के घोड़ों के वेग को रोक देने वाला; (जहाँ) कहीं पर अग्निहोत्र मन्त्रों के द्वारा पवित्र आहुतियों से समस्त स्वर्ग, अन्तरिक्ष और भूमिसम्बन्धी उत्पात-समूह को विनष्ट करने वाले, मन्यु—यज्ञ करनेवाले होते हुए भी मन्यु—कोप से शून्य, सूक्त—पुरुषसूक्तादि स्तोत्रों का पाठ करते हुए भी निरुक्तशास्त्र में तत्पर, सन्मार्गस्थ—सदाचारपरायण होते हुए भी गृहस्थ—घरों में रहने वाले, सकलत्र—सभी के रक्षक होते हुए भी ब्रह्मचारी—ब्रह्मविद्या को जानने वाले, अभ्यस्ततिथि—पञ्चाङ्ग विद्या के अभ्यस्त होते हुए भी अतिथिकुशल—आगन्तुकों और कुशों का स्वागत करने वाले अथवा अतिथिसेवा में कुशल, सामप्रयोग—सामवेद के प्रयोग में प्रधान अर्थात् गान में निपुण होते हुए भी दण्डावलम्बी—पलाशदण्ड को धारण करने वाले, शतपथानुसारी—शतपथ नामक यजुर्वेद के एक भाग का अनुसरण करने वाले होते हुए भी एक ही मार्ग—नीति पर चलने वाले ब्राह्मणों से सनाथित; कहीं पर द्रोणपुरस्सर—द्रोणाचार्य-प्रधान कौरवों के समान द्रोण—मानप्रधान, तुलाधारी—तिरछे स्तम्भों (खम्भों) को धारण करने वाले प्रासादों के समान तुला—तराजू को धारण करने वाले, अनुमेयानुमाननिपुण—अनुमेय-अनुमान आदि के ज्ञान में निपुण नैयायिकों के समान अनुमेय—पण्य वस्तु के अनुमान—उद्देश्य, फल, भाव आदि की जानकारी करने में कुशल, द्रव्यानुगुणकर्मविशेषपण्डित—द्रव्य-गुण-कर्म-विशेष-सामान्यादि पदार्थों के विशेषज्ञ वैशेषिक दर्शन के ज्ञाताओं के समान द्रव्य—रूपये के अनुकूल कर्मविशेष—व्यापार में निपुण, रूपसिद्धिप्रधान—शब्दों के साधन में निपुण वैयाकरणों—व्याकरण शास्त्र के ज्ञाताओं के समान रूप—टाँका-रूपक आदि के साधन में चतुर, अनेक गाठों के द्वारा अपनी कपर्दक—जटा को बाँधने वाले रुद्रों के समान अनेक गठरियों में कपर्दक—कौड़ियों को बाँधने वाले व्यापार करने वाले बनियों से अधिष्ठित; कहीं पर कुचरु—गर्हित चरु—मांसादि के द्वारा लोगों को उपलोभित—आकृष्ट करने वाली विट-कौलों—धूर्त वाममार्गी शाक्तों की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दम्भ–अहंकारपूर्ण दीक्षा के समान अपने कुचरूपलोभित—स्तनों के सौन्दर्य से लोगों को आकर्षित करने वाली, भग्नयतिगणवृत्त—यति (विराम), गण (मगणादि आठ गण) आदि से रहित असमर्थ कवि की काव्यपद्धति के समान यतिगण—मुनियों के वृत्त—शील को भङ्ग करने वाली, रजनिरागिणी—रात्रि से ही प्रेम करने वाली निशाचरियों के समान रजनिरागिणी—रजनी (हल्दी) के द्वारा अंगराग लगाने वाली, मुखचपला-जघनचपला से पूर्णतः युक्त होते हुए भी आर्या छन्द से रहित के समान मुख-जघनस्थलादि से पूर्णतः चपल—चञ्चल अनार्या—दुष्टा कर्णाटक प्रदेश की दासियों से परिपूर्ण; कहीं पर कुलालकीर्ण—गर्हित लार टपकाने वाले बालकों के समान कुलालों—कुम्भकारों से आकीर्ण—व्याप्त; कहीं पर कुजरा-जित—कुत्सित वृद्धता से पराजित वृद्ध पुरुषों के समान कुज-राजित—वृक्षों से सुशोभित; कहीं पर बढ़ते हुए कलाओं से युक्त बालकों के चिह्नों से सुशोभित, स्वस्तिक-चिह्न-विधान के द्वारा सर्वतोभद्र वेदिका-निर्माणविधि से अलंकृत चित्रविद्या के समान भविष्णु शिशुओं से सुशोभित, मौक्तिकादि चूर्ण से निर्मित स्वस्तिक चिह्नों से युक्त और वास्तुशास्त्र में प्रसिद्ध भद्रनामक भूषणों से भूषित भवनपंक्तियों से अलंकृत; कहीं पर पताका, अङ्क और सन्धियों से युक्त नाटकों के समान पताका—ध्वजारूप अंक-चिह्न एवं सन्धियों से समन्वित; कूटकर्म—कपटपूर्ण व्यापार को देखने वाले दुष्ट किरातों के समान कूटकर्म—शिखरनिर्माणरूप कर्मों को देखने वाले; सु-धार—सुन्दर धार वाले शस्त्रों के समान सुधा—चूने से लिप्त; विचित्र—विना चित्र के होते हुए भी आश्चर्यजनक; तुला—स्तम्भों से युक्त होते हुए भी अतुलनीय देवमन्दिरों से व्याप्त; अत्यन्त विस्तृत शाला—अश्वशाला, हस्तिशाला आदि से सम्पन्न; चारों चरणों—ऋग्, यजुः, साम, अथर्व से युक्त होते हुए भी अथवा चार चरण वाले पशुओं से युक्त होते हुए भी रण—युद्ध से रहित; विट्—वैश्यों से व्याप्त होते हुए भी पवित्र मार्गों वाला; सब जगह चौराहों की अधिकता होते हुए भी स्थित प्रकृति—अमात्यादि वाला; स्नान करती हुई महाराष्ट्र प्रदेश की कामिनियों के मुखमण्डल से विधीयमान विकसित कमलों की शोभा वाली; उन्नत तरङ्गों से कम्पायमान विकसित अर्जुनराजीव—श्वेत कमलों से दीप्यमान राजहंसों से अलंकृत जल वाली वरदा नदी के तट पर सौन्दर्य-रस के कुण्ड के समान 'कुण्डिन' नाम का नगर है ॥

यस्य नातिदूरे दर्शनदूरीकृतदुरितोपप्लवाऽऽप्लवनजनितपातक-भङ्गां गङ्गामुपहसन्ती स्वर्गमार्गाश्रयनिश्रेणी पुण्यपयाः पयोष्णी वहति ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—यस्येति। यस्य=नगरस्य, नातिदूरे=समीप एव, दर्शनेन=अवलोकनेन, दूरीकृतः=अपसारितः, दुरितानां=पापानाम्, उपप्लवः=उपद्रव; यया सा, आप्लवनेन=स्नानेन, जनितः=कृतः, पातकभङ्गः—पातकानां=पापानां, भङ्गः=विनाशः यया तादृशीं गङ्गां=भागीरथीम्, उपहसन्ती=तिरस्कुर्वती, गङ्गास्नानात् पुण्यहेतुः पयोष्णी तु दर्शनादपीति तदुपहासकारणं ज्ञेयम्। स्वर्गमार्गस्याश्रये ग्रहणे निःश्रेणी=सोपानरूपा, पुण्यपयाः=पावनजला, पयोष्णी=पयोष्णी नाम नदी, वहति=प्रवहति। अत्र दर्शनदूरीकृतदुरितोपप्लवेति पदार्थस्य आप्लवनजनितपातकभंगाया गङ्गाया उपहासे हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम्। तच्च गङ्गापेक्षया पयोष्णीसरित आधिक्यवर्णनरूपव्यतिरेकालङ्कारस्याङ्गम्, तदेवं द्वयोः सङ्करः। 'प्लवाप्लव' इत्यत्र 'भङ्गां गङ्गाम्' इत्यत्र च छेकानुप्रासः॥

ज्योत्स्ना—जिस कुण्डिन नगर के समीप ही देखने मात्र से ही पापों के उपद्रवों को दूर करने वाली एवं स्नान करने से पापों का विनाश करने वाली गङ्गा नदी का उपहास करती हुई स्वर्ग-मार्ग का आश्रयण करने के लिए सीढ़ी के समान पवित्र जल वाली 'पयोष्णी' नामक नदी प्रवाहित होती है॥

यस्य च पश्चिमदेशे प्रणतसुरासुरमौलिनीलमणिमरीचिचञ्चरीकचक्रचुम्बितचरणाम्भोजस्य भोजकटकूपजन्मनो जरापातितययातेः प्रचण्डदण्डदाण्डिक्यदण्डनाडम्बरितगण्डपाषाणविदलितवैदर्भमण्डलस्य भगवतो भार्गवस्याश्रमः॥

कल्याणी—यस्येति। यस्य=नगरस्य च, पश्चिमदेशे=पश्चिमदिग्भागे, प्रणताः=कृतप्रणामाः, ये सुरासुराः=देवदानवाः, तेषां मौलिषु=शिरःसु, ये नीलमणयः तेषां मरीचयः=किरणा एव चञ्चरीकाः=भ्रमराः, तच्चक्रेण=तन्मण्डलेन, चुम्बितं=स्पृष्टं, चरणाम्भोजं=पादपद्मं यस्य तस्य, भोजकटकूपजन्मनः=भोजकटकूपो नाम स्थानं तत्र जन्म यस्य तस्य, जरायां=वार्धक्ये पातितो ययातिर्येन तस्य; नृपतिर्ययातिः शुक्रसुतां देवयानीमुपयेमे, तयैव सह वृषपर्वदैत्यसुता शर्मिष्ठापि दासीभावेन तद्गृहमध्युवास, कालान्तरे शर्मिष्ठाप्रीत्या देवयानीमवजानन् ययाति'स्त्वं वृद्धो भव' इति शुक्रेण शप्त इति पौराणिकी कथाऽत्रानुसन्धेया। प्रचण्डम्=उग्रं, दण्डं=शासनं यस्य तथाविधः यः दाण्डिक्यः=तन्नामा भोजकटदेशाधिपः, तस्य दण्डनाय=तं दण्डयितुमित्यर्थः, तुमर्थाच्च भाववचनादिति चतुर्थी। आडम्बरितः=सञ्जातरोषः, अतएव गण्डपाषाणैः=गण्डशैलवृष्टिभिरित्यर्थः। विदलितं=मर्दितं, वैदर्भं मण्डलं=विदर्भचक्रवालं येन तस्य भगवतः=षडैश्वर्यसम्पन्नस्य, भार्गवस्य=शुक्रस्य, आश्रमो विराजते। भोजकटाधिपो दाण्डिक्यनृपतिः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षत्रियः सन्नपि बलाच्छुक्रसुतामरजः संज्ञामुपयेमे। ततः क्रुद्धेन शुक्रेण गण्डशैल-वृष्टिभिर्वैदर्भमण्डलं विदलितमिति कथाऽत्रानुसन्धेया ॥

ज्योत्स्ना—जिस कुण्डिन नगर के पश्चिम दिशा में प्रणाम करने वाले देवताओं एवं दानवों के शीर्षभाग पर स्थित नीलमणियों की किरणों रूपी भ्रमर-पुञ्जों से चुम्बित चरण-कमल वाले, 'भोजकटकूप' नामक स्थान में जन्म लेने वाले, राजा ययाति के ऊपर (युवावस्था में ही) बुढ़ापा को गिरा देने वाले अर्थात् वृद्ध हो जाने का शाप देनेवाले, अत्यन्त उग्र शासन करने वाले, भोजकटदेशाधिपति दाण्डिक्य को दण्डित करने के लिए (क्रोधपूर्वक) पाताल-पर्वत के प्रस्तरों की वर्षा के द्वारा वैदर्भमण्डल को विनष्ट कर देने वाले भगवान् भार्गव (भृगुपुत्र शुक्राचार्य) का आश्रम है।

विमर्श—(१) पौराणिक कथा है कि राजा ययाति ने वृषपर्वा दैत्य की पुत्री शर्मिष्ठा और शुक्रपुत्री देवयानी के साथ विवाह किया था। शर्मिष्ठा पर अधिक आसक्त होने के कारण ययाति द्वारा देवयानी के होते हुए अपमान को देखकर शुक्राचार्य ने राजा ययाति को युवावस्था में ही वृद्ध हो जाने का शाप दे दिया था।

(२) भोजकट देश के राजा दाण्डिक्य ने क्षत्रिय होते हुए भी शुक्राचार्य की पुत्री अरजा के साथ बलात् विवाह कर लिया था; जिससे क्रुद्ध शुक्राचार्य ने गण्डशैल की वर्षा कर वैदर्भमण्डल को विनष्ट कर दिया था।

इन्हीं पौराणिक कथाओं का कवि ने यहाँ वर्णन किया है ॥

यत्र च विपत्त्राः सन्ति साधवो न तु तरवः, विजृम्भमाणकमलानि सरांसि न जनमनांसि, कुवलयालङ्काराः क्रीडादीर्घिकाः न सीमन्तिन्यः, विपदाक्रान्तानि सरित्कूलानि न कुलानि ॥

कल्याणी—यत्र चेति। यत्र=यस्मिन् नगरे च, विपत्त्राः=विपद्भ्य-स्त्रायन्त इति तादृशाः, साधवः=सन्तः, न तु तरवः=वृक्षाः, विपत्त्राः=विपर्णाः सन्ति, विजृम्भमाणानि=विकसन्ति, कमलानि=सरोजानि यत्र तादृशानि, सरांसि=सरोवराः, न तु जनमनांसि=लोकचित्तानि, विजृम्भमाणकमलानि—विजृम्भमाणः=प्रसरन्, कः=कामः तस्य मलः=पापं, दोष इति यावत्; येषु तादृशानि सन्ति, 'मलं किट्टे पुरीषे च पापे च कृपणे मलः' इति विश्वः। कुवलयानि=कमलानि एव अलंकाराः=भूषणानि यासां तास्तथोक्ता क्रीडादीर्घिकाः=क्रीडावाप्यः, न सीमन्तिन्यः=सौभाग्यशालिन्यः स्त्रियः, कुत्सितकङ्कणालङ्काराः सन्ति, विपदाक्रान्तानि—वीनां=पक्षिणां, पदैः=चरणैः, आक्रान्तानि, सरित्कूलानि=नदीतटप्रदेशाः, न तु कुलानि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वंशा गृहाणि वा, विपदा=विपत्त्या, आक्रान्तानि=पराभूतानि सन्ति। परिसंख्याऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—जिस कुण्डिन नगर में विपत्त्र—विपत्तियों से रक्षा करने वाले सज्जन लोग तो हैं, लेकिन विपत्त्र—बिना पत्तों वाले वृक्ष नहीं हैं; सरोवरों में तो कमल विकसित होते हैं, लेकिन लोगों के मन में क—काम का मल—पाप विकसित नहीं होता, क्रीड़ासरोवर तो कमलरूपी अलंकार से सम्पन्न हैं, लेकिन सौभाग्यवती स्त्रियाँ कु—कुत्सित वलय—कङ्कणरूपी अलंकारों—आभूषणों वाली नहीं हैं; नदियों के तटभाग वि—पक्षियों के पत्—चरणों से आक्रान्त तो हैं, लेकिन किसी का कुल या घर विपत्—विपत्तियों से आक्रान्त नहीं है ॥

किं बहुना—

देशानां दक्षिणो देशस्तत्र वैदर्भमण्डलम्।
तत्रापि वरदातीरमण्डनं कुण्डिनं पुरम् ॥२८॥

अन्वयः—(बहुना किं) देशानां दक्षिणः देशः, तत्र वैदर्भमण्डलम्, तत्रापि वरदातीरमण्डनं कुण्डिनं पुरं (रम्यं वर्तते) ॥२८॥

कल्याणी—देशानामिति। बहुना=विस्तरेण, किं=किं प्रयोजनम्, उपसंहरन्नेतावदेव निवेदयामीति भावः। देशानां=देशेषु, दक्षिणो देशो रम्य इति भावः। तत्र=तस्मिन् दक्षिणे देशेऽपि, वैदर्भमण्डलं=विदर्भदेशस्य मण्डलं, रम्यमिति भावः। तत्रापि=वैदर्भमण्डलेऽपि, वरदातीरमण्डनं—वरदा नाम नदी, तत्तीरस्य=तत्तटस्य, मण्डनं=भूषणभूतं, कुण्डिनं=कुण्डिननामकं, पुरं=नगरं [रम्यं] वर्तते। अत्र वस्तुन उत्तरोत्तरमुत्कर्षवर्णनात् सारो नामालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ २८॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; (समस्त) देशों में दक्षिण देश (रम्य) है, उसमें भी वैदर्भमण्डल (रम्य) है और उस वैदर्भमण्डल में भी वरदा नदी के तट का अलंकारस्वरूप 'कुण्डिन' नामक नगर (रम्य) है ॥२८॥

तत्रास्ति समस्तरिपुपक्षक्षोददक्षदक्षिणक्षोणीपालमौलिमाणिक्यनिकषनिर्मलितचरणनखदर्पणश्चतुरुदधिपुलिनचक्रवालवालुकासंख्यसंख्यविख्यातकीर्तनीयकीर्तिसुधाधवलितवसुन्धरावलयो निजभुजपञ्जरान्तरनिरुद्धशारिकायमाणरणरङ्गाङ्गणार्जितोर्जितजयश्रीः, यौवनमदमत्तकान्तकुन्तलविलासिनीनयननीलोत्पलदलमालार्च्यमानलावण्यपुण्यप्रतिमः, रविरिव नासत्यजनकः, पुरन्दरइव नाकविख्यातः, गरुत्मानिव नागमाधिक्षेपी, पद्मखण्ड इव नालसहितः, व्याकरणप्रबन्ध इव नामसंपन्नः, धाम धाम्नाम्, आधारो धीरतायाः, पुरं पुरुषकारस्य, आश्रयः श्रेयसां श्रियां श्रुतीनां च, राजा रणाङ्गणेष्वगणितभीर्भीमो नाम ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तत्रेति। तत्र=तस्मिन् कुण्डिने नगरे, समस्तरिपुपक्षस्य=सम्पूर्णशत्रुदलस्य, क्षोदे=विमर्दने, दक्षा=निपुणा, ये दक्षिणाः=अनुकूलाः दक्षिणदेशवासिनश्च, क्षोणीपालाः=भूपतयः, तेषां मौलिषु=मस्तकेषु, यानि माणिक्यानि=मणयः, तेषां निकषेण=घर्षणेन, निर्मलिताः=निर्मार्जिताः, चरणनखाः=पादनखराः, त एव दर्पणाः=आदर्शाः यस्य स तथोक्तः। चत्वारश्च य उदधयः=समुद्राः, तेषां पुलिनचक्रवालेषु=तटमण्डलेषु, या वालुकाः=वालुकाकणाः, तद्वदसंख्येषु=अगणितेषु, संख्येषु=रणेषु, विख्याता=प्रथिता, कीर्तनीया=प्रशस्या, या कीर्तिः=यशः, सैव सुधा=लेपविशेषः,तया धवलितं=श्वेतितं, वसुन्धरावलयं=भूमण्डलं येन स तथोक्तः। निजभुजपञ्जरान्तरे=निजभुजावेव पञ्जरं, तदन्तरे=तन्मध्ये, निरुद्धा=वन्दीकृता, शारिकायमाणा=शारिकेवाचरन्ती, रण एव रङ्गः=रङ्गभूमिः, तस्याङ्गणे=युद्धभूमावित्यर्थः। अर्जिता=अधिगृहीता, ऊर्जिता=उद्दीप्ता, जयश्रीः=जयलक्ष्मीः येन स तथोक्तः। यौवनमदेन=तारुण्यातिरेकेण, मत्ताः=क्षीबाः, कान्ता=रमणीया, याः कुन्तलस्य=कुन्तलदेशस्य, विलासिन्यः=रमण्यः, तासां नयनानि=नेत्राण्येव नीलोत्पलदलानि=नीलकमलपत्राणि, तेषां मालाभिः=दामभिः, अर्च्यमाना=पूज्यमाना, लावण्यं=सौन्दर्यमेव पुण्यप्रतिमा=पवित्रमूर्त्तिः यस्य स तथोक्तः। रविरिव=सूर्य इव, नासत्यजनकः [न—असत्यजनकः]=न मिथ्यावादीत्यर्थः, पक्षे—नासत्यजनकः नासत्यावश्विनौ=देववैद्यत्वेन विख्यातौ, तयोर्जनकः=पिता। पुरन्दर इव=इन्द्र इव, नाकविख्यातः [न—अकवि-ख्यातः]—न अकविभिः=अप्रशस्तकविभिः, ख्यातः=स्तुतः, पक्षे—नाके=स्वर्गे, विख्यातः=प्रसिद्धः। गरुत्मानिव=गरुड़ इव, नागमाधिक्षेपी=[न+आगम+अधिक्षेपी] न वेदनिन्दकः, पक्षे [नाग—मा—अधिक्षेपी] नागानां=सर्पाणां, मा=लक्ष्मीः, तामधिक्षिपति=अपहरतीत्यर्थः, इत्येवंशीलः। पद्मखण्ड इव=कमलसमूह इव, नालसहितः=[न—अलस—हितः] न अलसानामुपकारकः, पक्षे—नालेन=कमलदण्डेन, सहितः। व्याकरणप्रबन्ध इव=व्याकरणशास्त्रमिव, नामसम्पन्नः—[न—आमसम्पन्नः] न, आमेन=रोगेण, सम्पन्नः=युक्तः, पक्षे—नाम=प्रातिपदिकं, तत्सम्पन्नः। धाम्नां=तेजसां, धाम=गृहम्, धीरतायाः=धैर्यस्य, आधारः=अवलम्बः, पुरुषकारस्य=पौरुषस्य, पुरं=नगरम्, श्रेयसां=कल्याणानां, श्रियां=सम्पदां, श्रुतीनां=वेदानां च, आश्रयः, रणाङ्गणेषु=युद्धभूमिषु, अगणितभीः—न गणिता=चिन्तिता, भीः=भयं येन स तथोक्तः, उपेक्षितभय इत्यर्थः। भीमो नाम=भीमाभिधः, राजाऽस्ति। 'चरणनखदर्पण' इत्यत्र, 'कीर्तिसुधा' इत्यत्र, 'भुजपञ्जर' इत्यत्र, 'नयननीलोत्पल' इत्यत्र, धाम धाम्नामित्यादिषु च रूपकाणि। शारिकायमाणेत्यत्र क्यङ्गतोपमा। रविरिव नासत्यजनक इत्यादिवाक्येषु श्लेषमूलोपमाः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—उस कुण्डिन नगर में समस्त शत्रुपक्ष को विनष्ट कर देने में प्रवीण, अनुकूल दक्षिण देशस्थ भूपतियों के मस्तकस्थित मणियों के घर्षण से प्रक्षालित (धुले हुए) चरणनख वाले, चारो समुद्रों के तटमण्डलों पर स्थित बालुकणों के समान अगणित युद्धों में प्रख्यात एवं प्रशंसनीय कीर्तिरूपी सुधा से भूमण्डल को स्वच्छ बना देने वाले, अपने बाहुदण्डरूपी पिंजड़े के मध्य में बन्दी बनाई गई शारिका के समान युद्धरूपी रङ्गभूमि के प्राङ्गण में अर्थात् युद्धक्षेत्र में प्राप्त उद्दीप्त विजयलक्ष्मी वाले, तारुण्य की अधिकता से मत्त रमणीय कुन्तल देश की कामिनियों के नयनरूपी नीलकमलों की माला से पूज्यमान लावण्यरूपी पवित्र प्रतिमा (मूर्ति) वाले, नासत्यजनक—देववैद्य अश्विनीकुमारों के पिता सूर्य के समान नासत्यजनक—असत्य को उत्पन्न न करने वाले अर्थात् सदा सत्य बोलने वाले, नाकविख्यात—स्वर्ग में विख्यात इन्द्र के समान नाकविख्यात (न + अकवि + ख्यात)—निन्दनीय कवियों में ख्यात न होने वाले अर्थात् विशिष्ट कवियों में ख्यात, नागमाधिक्षेपी—नागों की लक्ष्मी के अपहर्त्ता गरुड़ के समान [न + आगम + अधिक्षेपी] वेदों की निन्दा न करने वाले, नालसहित कमलों के समान [न + अलस + हित] आलसियों का हित न करने वाले, नाम—प्रातिपदिकों से सम्पन्न व्याकरण शास्त्र के समान [न + आम + सम्पन्न] रोगों से रहित, तेजों के धामस्वरूप, धैर्य के आधारस्वरूप, पौरुष के नगरस्वरूप, समस्त कल्याणों, सम्पत्तियों और वेदों के आश्रयस्वरूप, युद्धभूमि में भय का विचार न करने वाले अर्थात् भय को पूर्णतया उपेक्षित कर देने वाले भीम नाम के राजा हैं ॥

यस्यानवरतमुत्कृष्टालयः क्रीडावनपादपाः पौरलोकश्च, अपरुषो दायादा वाविरभवश्च, विमत्सरा सभासदो देशश्च, विकसद्रुचयोऽङ्गावयवाः क्रीडापर्वतश्च, अपराजयो मण्डनमणयः सेनासमूहश्च, अगतरुजो वने विनाशमन्वभवन्नितान्तं रिपवः पुष्पप्रकरश्च ॥

कल्याणी—यस्येति। यस्य=भीमनृपस्य, क्रीडावनपादपाः—क्रीडायै वनमिति क्रीडावनं=विहारोद्यानं, तस्य पादपाः=वृक्षाः, अनवरतं=सततम्, उत्कृष्टालयः—उत्=प्राबल्येन, कृष्टा=आनीता, अलयः=भ्रमराः यत्र तादृशाः, पौरलोकः=पुरवासिसमूहश्च, उत्कृष्टाः=श्रेष्ठाः, आलयाः=गृहाणि यस्य स तथोक्तः, दायादाः=बान्धवाः, अपरुषः—अपगता रुट्=क्रोधः येभ्यः ते तथोक्ताः, वाग्विभवः=वाणीसम्पच्च, अपरुषः—न परुषः=रूक्षः, मधुर इत्यर्थः। सभासदः=सदस्याः, विमत्सराः—विगतः=व्यपगतः, मत्सरः=ईर्ष्या येभ्यस्तादृशाः, देशश्च=राज्यञ्च, विमत्सराः—वयः=पक्षिणः सन्त्येष्विति विमन्ति, 'वि' शब्दान्मतुप्। विमन्ति=पक्षियुक्तानि, सरांसि=तड़ागानि यत्र तादृशः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अङ्गावयवाः= अङ्गभागाः विकसद्रुचयः—विकसन्ती रुचिः=कान्तिर्येषां ते तथोक्ताः, क्रीडापर्वतश्च=क्रीडाशैलश्च, विकस–द्रु–चयः—विकसः=विकसतः, रुचयः=वृक्षसमूहः यत्र स तादृशः, मण्डनमणयः=भूषणमणयः, अप–राजयः—अपगता, राजिः=सन्धिर्येभ्यस्ते तथोक्तः, अविभाव्यसन्धय इत्यर्थः। सेनासमूहश्च=सैन्यमण्डलञ्च, अपराजयः—न पराजीयत इत्यपराजयः, यद्वा न पराजयो यस्य सः, अजेय इति भावः। अगतरुजः—न गता रुक्=पीडा येभ्यस्ते रिपवः=शत्रवः, वने=कानने, [अन्वभवन्+इतान्तम्] इतान्तम्—इतः=प्राप्तः, अन्तः=मरणं यत्र तथाभूतं, विनाशं=विशिष्टं नाशम्, अदर्शनमित्यर्थः। अन्वभवन्=अनुभूतवन्तः, अग–तरुजः—अगे=पर्वते, ये तरवः=वृक्षाः, तेषु जातः=उत्पन्नः, पुष्पप्रकरः=कुसुमसमूहश्च, वने [अन्वभवत्+नितान्तम्] नितान्तम्=अत्यर्थं, विनाशं=प्रध्वंसम्, अन्वभवत्। अत्र वचनश्लेषः। वाक्ये-वाक्ये नृपवर्णनप्रसङ्गेन प्रस्तुतयोर्द्वयोरेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता, सा च श्लेषमूला॥

ज्योत्स्ना—जिस राजा भीम के क्रीड़ा-उपवन के वृक्ष निरन्तर भ्रमरों को बलात् अपनी ओर आकृष्ट किये रहते हैं और (उसके) नगर–निवासी लोग भी उत्कृष्ट घरों वाले हैं, दायाद—बान्धवगण भी क्रोध से रहित रहते हुए मधुर वाणी से सम्पन्न हैं, सभासद—सभा के सदस्य विमत्सर—ईर्ष्या से रहित हैं और देश भी [विमत्+सराः] पक्षियों से युक्त सरोवरों वाला है, अङ्गभाग प्रस्फुटित कान्ति वाले एवं क्रीडापर्वत भी विकसित वृक्षों से सम्पन्न हैं, आभूषणों की मणियाँ सन्धियों—जोड़ों से रहित हैं और सेनायें भी पराजित होने वाली नहीं हैं, पीड़ा से सम्पन्न शत्रु लोग वन में मरण को प्राप्त होकर विनाश का अनुभव करते हैं तथा अग–तरुज—पर्वतों पर स्थित वृक्षों में उत्पन्न पुष्पसमूह भी वन में पर्याप्त विनाश का अनुभव करता है॥

तस्य च कन्दर्पकमनीयकान्तेर्मत्ताः करिणः सदामानो न मानिनीलोकः, कृतविटपानमनाः क्रीडोद्यानतरवो नावरोधजनः, कटकालंकृतदोषः सीमन्तिन्यो न परिपन्थिकः॥

कल्याणी—तस्य चेति। तस्य च कन्दर्पस्य=कामदेवस्येव कमनीया=रमणीया, कान्तिः=दीप्तिः यस्य तस्य=भीमनृपतेः, मत्ताः=क्षीबाः, करिणः=गजाः, सदामानः—सह दाम्ना=बन्धनेन, विद्यन्त इति सदामानः=बन्धनयुक्ताः, न, मानिनीलोकः—मानवतीनां=वामानां, लोकः=समूहः, सदा मानः=प्रणययुक्तकोपः यस्य तादृशः, क्रीडोद्यानतरवः=क्रीडोपवनवृक्षाः, कृतविटपानमनाः—कृतं=विहितं; विटपानां=शाखानाम्, आनमनम्=आनतिः यैस्ते तादृशाः, न अवरोधजनः=नृपरमणीलोकः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विटानां=लम्पटानां, पाने=चुम्बने, मनो यस्य स तथाभूतः, सीमन्तिन्यः=सौभाग्यवत्यः रमण्यः, कटकालंकृतदोषः—कटकैः=वलयैः, अलंकृतौ=शोभितौ, दोषौ=बाहू यासां तास्तथोक्ताः, न परिपन्थिकः=शत्रुः, कटके=स्कन्धावारे, अलम्=अत्यर्थं, कृतः=विहितः, दोषः=उपद्रवः येन स तथाभूतः। परिसंख्याऽलङ्कारः, वचनश्लेषश्च तदङ्गम् ॥

ज्योत्स्ना—और कामदेव के समान रमणीय कान्ति वाले उस राजा भीम के मदमत्त हाथी स–दामान—बन्धन से युक्त रहते हैं, लेकिन मानवतियों—कामिनियों का समूह सदा—निरन्तर मान—प्रणयकोप से युक्त नहीं रहता; क्रीड़ा-उपवन के वृक्ष कृत+विटप+आनमन—(अपनी-अपनी) शाखाओं को झुकाये रहते हैं, किन्तु अन्तःपुर की स्त्रियाँ विट+पान+मन—लम्पट लोगों के चुम्बन में (अपना) मन नहीं लगातीं; सौभाग्यवती स्त्रियों के हाथ वलयरूपी आभूषणों से अलंकृत रहते हैं, किन्तु (उसके) शत्रु स्कन्धावार में पर्याप्त उपद्रव नहीं कर पाते ॥

यस्य च चरणाम्भोजयुगलं विमलीक्रियते नमज्जनेन न मज्जनेन ॥
यः शृङ्गारं जनयति नारीणां नारीणाम् ॥
यः करोत्याश्रितस्य नवं धनं न बन्धनम् ॥
यो गुणेषु रज्यते नरमणीनां न रमणीनाम् ॥

कल्याणी—यस्य चेति। यस्य=भीमनृपस्य च, चरणाम्भोजयुगलं=पादपद्मयुगलं, नमज्जनेन—नमता=प्रणमता, जनेन=लोकेन, तन्मौलिस्पर्शेनेति भावः। विमलीक्रियते=स्वच्छीक्रियते, न मज्जनेन=न क्षालनेन। यः=भीमनृपः, नारीणां=कामिनीनां, शृङ्गारं=रतिस्पृहां, जनयति=समुत्पादयति। न, अरीणां=शत्रूणां, शृङ्गारं=स्नेहरसं, जनयति। यः=भीमः, आश्रितस्य=शरणागतस्य, नवं=नूतनं, धनं=वित्तं, करोति=ददातीत्यर्थः, न बन्धनं करोति। यः=भीमः, नरमणीनां=पुरुषश्रेष्ठानां, गुणेषु=शौर्यादिषु, रज्यते=अनुरक्तो भवति। न रमणीनां=सुन्दरीणां, गुणेषु=सौन्दर्यादिषु, रज्यते=अनुषक्तो भवति। यमकपरिसंख्ययोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः ॥

ज्योत्स्ना—जिस राजा भीम के दोनों चरणकमल नमन करते हुए लोगों से अर्थात् नमन करने वाले लोगों के मस्तकों के स्पर्श से स्वच्छ किये जाते हैं, न कि (जल से) धोकर स्वच्छ किये जाते हैं। जो राजा भीम कामिनियों में शृंगार—रति की कामना उत्पन्न करता है, शत्रुओं में शृंगार—स्नेहरूपी रस की उत्पत्ति नहीं करता। जो अपनी शरण में आये हुए लोगों को नूतन धन से युक्त कर देता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है अर्थात् उन्हें धनसम्पन्न बना देता है, बन्धन में नहीं डालता। जो श्रेष्ठ लोगों के शौर्य आदि गुणों से अनुराग करता है, सुन्दरियों के सौन्दर्यादि में अनुरक्त नहीं होता ॥

यस्य च नमस्याग्रहारेषु श्रूयते नलोपाख्यानं न लोपाख्यानम् ॥

कल्याणी—यस्य चेति। यस्य=भीमनृपस्य च, नमस्याः=पूज्याः, विप्रादयस्तेषाम् अग्रहारेषु=ग्रामेषु, [महाभारतकथाश्रवणप्रसङ्गेन] नलोपाख्यानं=नलसम्बन्धिकथा, श्रूयते=आकर्ण्यते, न लोपाख्यानं=न महाभारतवर्णितकौरवादि-विनाशात्मिका कथा, श्रूयते=आकर्ण्यते। एतेन नलस्य समादरपात्रत्वं तत्कथायाः सरसत्वं च व्यज्यते ॥

ज्योत्स्ना—और जिस राजा भीम के पूजनीय ब्राह्मणों के घरों में (महाभारतादि कथाओं को सुनने के प्रसंग में) नलोपाख्यान—नलसम्बन्धी कथा ही सुनी जाती है, लोपाख्यान—महाभारत में वर्णित कौरव आदि की विनाश-सम्बन्धी कथा सुनाई नहीं देती।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड के द्वारा राजा नल के प्रति लोगों के मन में अत्यन्त आदर एवं उनके कथा की सरसता को दर्शाया गया है ॥

यस्य च राज्ये साक्षरस्य पुस्तकस्य बन्धः, सगुणस्य कार्मुकस्याकर्षणम्, सुवंशप्रभवस्य च्छत्रस्य दण्डः, सुजातेरुद्यानविशेषस्योत्खननम्, कुलीनस्य कन्दस्योन्मूलनारम्भः, सन्मार्गलग्नस्य पुनर्वसुभाजश्चन्द्रस्यैव ग्रहणालोकनमभूत् ॥

कल्याणी—यस्येति। यस्य च=भीमनृपस्य, राज्ये=शासने, साक्षरस्य=लिखिताक्षरस्य, पुस्तकस्य=ग्रन्थस्य, बन्धः=बन्धनम्। न तु साक्षरस्य=अधीताक्षरस्य, विदुष इत्यर्थः, बन्धनं दृष्टम्। सगुणस्य=समौर्वीकस्य, कार्मुकस्य=धनुषः, आकर्षणं=कर्णान्तप्रापणम्। न हि सगुणस्य=दयादाक्षिण्यादिगुणोपेतस्य जनस्य, आकर्षणं=सावमानापकर्षणं दृष्टम्। सुवंशप्रभवस्य=सद्वेणुजातस्य, छत्रस्य=आतपत्रस्य, दण्डः=यष्टिः, न तु सुवंशप्रभवस्य=सत्कुलोत्पन्नस्य जनस्य, दण्डः=दमनं, दृष्टम्। सुजातेः—शोभना जातिः=लता यस्मिंस्तस्य, उद्यानविशेषस्य=विशिष्टोपवनस्य, उत्खननं=पादपपुष्टय आलवालमार्दवाय चोत्कृष्टं खननम्; न तु सुजातेः=विप्रादेः, उत्खननम्=उच्छेदनं दृष्टम्। कुलीनस्य—कौ=पृथिव्यां, लीनस्य=प्रच्छन्नस्य, कन्दस्य=कठिनमूलस्य उन्मूलने=उत्पाटने, आरम्भः=प्रयत्नः, न तु कुलीनस्य=अभिजातस्य जनस्य, उन्मूलनम्=उच्छेदनं दृष्टम्; सन्मार्गलग्नस्य—सद्=विद्यमानं, मृगस्येदं मार्गं, तल्लग्नस्य=मृगशिरोयुक्तस्य, पुनर्वसुभाजः=पुनर्वसुनक्षत्रोपेतस्य च, चन्द्रस्य=इन्दोः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रहणालोकनम्—ग्रहणं=राहुयोगः, तस्य आलोकनं=दर्शनम्, अभूत्=जातम्। न हि कस्यचित्सन्मार्गलग्नस्य=सदाचारपरायणस्य, पुनरिति भिन्नम्, वसुभाजः=धनिनः, ग्रहणालोकनम्—ग्रहणं=परवशीकरणं, तस्य आलोकनं=दर्शनं जातम्। परिसंख्यालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—जिस राजा भीम के राज्य में अक्षरयुक्त पुस्तक को ही बाँधा जाता है [अक्षरों को पढ़े हुए अर्थात् विद्वान् लोगों को बन्धन में नहीं डाला जाता]; मौर्वीसहित धनुष का ही आकर्षण किया जाता है [दया-दाक्षिण्यादि गुणों से युक्त व्यक्ति का अपमानपूर्वक आकर्षण नहीं देखा जाता]; उत्तम बाँस से उत्पन्न (बाँस) का ही छत्र का दण्ड होता है [उत्तम कुल में उत्पन्न लोगों को दण्डित होते नहीं देखा जाता]; सुन्दर लताओं वाले विशिष्ट उपवन के ही वृक्षों की वृद्धि और पानी देने हेतु आलवाल—क्यारी बनाने के लिए खुदाई की जाती है [सुजाति—ब्राह्मणादि जातियों का उत्खनन—उच्छेदन नहीं किया जाता]; पृथ्वी में छिपे हुए कन्द-मूलादि को उखाड़ने का ही प्रयत्न किया जाता है [कुलीन-अभिजात-वर्ग का उन्मूलन नहीं किया जाता]; विद्यमान मृगशिरा नक्षत्र से युक्त और पुनर्वसु नक्षत्र से समन्वित चन्द्रमा का ही ग्रहण देखा जाता है [किसी सदाचारपरायण धन-सम्पन्न व्यक्ति का ग्रहण—परवशीकरण नहीं देखा जाता] ॥

किं बहुना—

देवो दक्षिणदिङ्मुखस्य तिलकः कर्णाटकान्ताकुच-
क्रीडाशैलमृगः प्रतापकदलीकन्दः स किं वर्ण्यते।
यस्यारातिकरीन्द्रकुम्भरुधिरक्लिन्नासिदंष्ट्राङ्कुरा-
शौर्यश्रीर्भुजदण्डमण्डपतले सिंहीव विश्राम्यति ॥२९॥

अन्वयः—किं बहुना, देवः दक्षिणदिङ्मुखस्य तिलकः कर्णाटकान्ताकुचक्रीडाशैलमृगः प्रतापकदलीकन्दः सः किं वर्ण्यते। यस्य सिंहीव शौर्यश्रीः अरातिकरीन्द्रकुम्भरुधिरक्लिन्नासिदंष्ट्राङ्कुरा भुजदण्डमण्डपतले विश्राम्यति ॥२९॥

कल्याणी—देव इति। किं बहुना=बहूक्तेन किम्, उपसंहरन्नेतावदेव कथयामीति भावः। देवः=महाराजो भीमः, दक्षिणदिङ्मुखस्य—दक्षिणा या दिक् तस्या मुखस्य=आननस्य, तिलकः=पुण्ड्रकः, कर्णाटकान्ताकुचक्रीडाशैलमृगः—कर्णाटस्य=कर्णाटप्रदेशस्य, याः कान्ताः=रमण्यः, तासां कुचाः=स्तना एव क्रीडाशैलाः=क्रीडापर्वताः, तेषां मृगः=हरिणः, प्रतापकदलीकन्दः—प्रतापः=तेज एव कदली=रम्भातरुः, तस्य कन्दः=कठिनमूलं; कठिनकन्दाद्यविच्युता कदली वर्द्धते। सः=भीमनृपः, किं वर्ण्यते=कथमपि वर्णयितुं न शक्यत इति भावः। यस्य=भीमनृपस्य, सिंहीव=मृगेन्द्रीव, शौर्यश्रीः=वीरत्वलक्ष्मीः, अरातिकरीन्द्रकुम्भरुधिरक्लिन्ना-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिदंष्ट्राङ्कुरा—अरातयः=वैरिणः एव करीन्द्राः=गजेन्द्राः, तेषां कुम्भरुधिरैः=गण्डस्थलशोणितैः, क्लिन्नः=आर्द्रः, असिः=खड्ग एव दंष्ट्राङ्कुरः=दंष्ट्राग्रभागः यस्यास्तादृशी; पक्षे—अरातय इव ये करीन्द्राः तेषां कुम्भरुधिरैः क्लिन्नोऽसिरिव दंष्ट्राङ्कुरो यस्याः सा। भुजदण्डमण्डपतले—भुजदण्ड एव मण्डपः=निकुञ्जः, तस्य तले=अधःप्रदेशे, पक्षे—भुजदण्ड इव मण्डपस्तस्य तले, विश्राम्यति=श्रममपनुदति। यथा काचित् सिंही गजेन्द्रान् हत्वा तत्कुम्भरुधिरेण दंष्ट्राग्रं दिग्ध्वा कस्यचिल्लतामण्डपस्य तले विश्राम्यति तथैव भीमनृपस्य शौर्यश्रीर्वैरिणो निपात्य तद्रुधिरेण खड्गं दिग्ध्वा नृपभुजदण्डच्छायायां विश्राम्यतीति भावः। उपमारूपकयोः सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२९॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; राजा भीम दक्षिण दिशा के मुख का तिलक, कर्णाटक प्रदेश की कामिनियों के स्तनरूपी क्रीडापर्वतों का हरिण (और) प्रताप—तेजरूप केले का कन्द—मूल है; उसका कहाँ तक वर्णन किया जाय ? अर्थात् किसी भी प्रकार उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिसकी सिंहिनी-सदृश विजयश्री शत्रुरूपी गजराजों के गण्डस्थल से बहते हुए रक्त से आर्द्र खड्गरूपी दाँतों के अग्रभाग वाली होकर भुजदण्डरूपी मण्डप की छाया में विश्राम कर रही है।

विमर्श—आशय यह है कि जैसे कोई सिंहिनी गजराजों को मार कर उनके कुम्भस्थल से बहते हुए रक्त से दाँतों के अग्रभाग को सिक्त कर किसी लतामण्डप की छाया में अपनी थकान मिटाती है उसी प्रकार राजा भीम की शौर्यलक्ष्मी भी अपने शत्रुओं का वध करके उनके रक्त से तलवार को सिक्त कर राजा के भुजदण्ड की छाया में विश्राम कर रही है ॥२९॥

तस्य च महामहीपतेरात्मरूपापहसितसमस्तसुरसुन्दरीसौन्दर्यसारसंपत्तिकलङ्ककुलकन्दकन्दलीकन्दर्पदर्पगजेन्द्रावष्टम्भस्तम्भयष्टिरखिलजननयनकुरङ्गवागुरा रामणीयकपताकायमानोद्भिन्ननवयौवनश्रीः, शृङ्गारस्यागारम्, अवनिर्वनिताविभ्रमाङ्कुराणाम्, आभोगः सौभाग्यभागस्य, रङ्गशाला रागवृत्तनृत्तस्य, सर्वान्तःपुरपुरंध्रिकाप्रधानभूताऽस्ति प्रिया प्रियङ्गुमञ्जरी नाम ॥

कल्याणी—तस्येति। तस्य=एतस्य, महामहीपतेः=महाराजस्य भीमस्य च, आत्मरूपेण=स्वसौन्दर्येण, अपहसिता=तिरस्कृता, सुरसुन्दरीणां=देवाङ्गनानां, या सौन्दर्यसारसम्पत्तिः=सौन्दर्यतत्त्वलक्ष्मीः, तस्या यत् कलङ्ककुलं=रूपापहासजनितगर्हासमुदय एव कन्दः=कठिनमूलं, तस्य कन्दली=रम्भातरुः। कठिनकन्दादिना यथा कन्दलीविकासस्तथैव सुरसुन्दरीरूपापहासेन तस्याः सौन्दर्यसम्पत्तिप्राशस्त्यं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसरतीति भावः। कन्दर्पस्य=कामदेवस्य, दर्पः=गर्व एव गजेन्द्रः=मत्तगजः, तस्यावष्टम्भाय=एकत्रावस्थानाय, स्तम्भयष्टिः=स्तम्भदण्डः; अखिलजनानां=समस्तनराणां, नयनानि=लोचनान्येव कुरङ्गाः=मृगाः, तेषां बन्धनाय वागुरा=पाशः, रामणीयकं=सौन्दर्यं, तस्य पताकायमाना=पताकेवाचरन्ती, उद्भिन्ना=उद्गता विकसिता च, नवयौवनश्रीः=नूतनतारुण्यलक्ष्मीर्यस्याः सा। शृङ्गारस्य=रतिस्थायिनः शृङ्गाररसस्य, आगारम्=आवासस्थानम्, वनिताविभ्रमाङ्कुराणां=ललनाविलासाङ्कुराणाम्, अवनिः=उद्भवभूमिः, सौभाग्यभागस्य=सौभाग्यांशस्य, आभोगः=विस्तारः, रागवृत्तनृत्तस्य—रागेण=स्नेहेन, वृत्तं=घटितं, यन्नृत्तं=रागात्मकनृत्तमिति यावत्, तस्य रङ्गशाला=रङ्गभूमिः, सर्वान्तःपुरपुरन्ध्रिकाप्रधानभूता—सर्वासाम्, अन्तःपुरपुरन्ध्रिकाणाम्=अन्तःपुरकुलाङ्गनानां, प्रधानभूता=प्रमुखतमा, प्रियङ्गुमञ्जरी नाम, प्रिया=दयिता अस्ति। रूपकालङ्कारः। 'रामणीयकपताकायमाने'त्यत्र क्यङ्गतोपमा॥

ज्योत्स्ना—उस पृथ्वीपति महाराज भीम की अपने स्वयं के सौन्दर्य से देवाङ्गनाओं के सौन्दर्यरूपी प्रधान सम्पत्ति को भी तिरस्कृत करने वाली, (उनके सौन्दर्यापहासरूप) कलंकसमूह के कन्द—मूल से (अंकुरित) कदली के समान, कामदेव के अहंकाररूपी गजराज को स्तम्भित करने के लिए स्तम्भदण्ड के समान, समस्त लोगों के नेत्ररूपी हरिणों को आबद्ध करने लिए पाश—जाल के समान; सौन्दर्य की पताका के समान विकसित नूतन यौवन-लक्ष्मीस्वरूपा, शृङ्गार की आगारस्वरूपा, वनिताओं के विलासरूपी अङ्कुरों के लिए भूमिस्वरूपा, सौभाग्य के अंश की विस्ताररूपा, रागात्मक नृत्य की रंगभूमिस्वरूपा, समस्त अन्तःपुर की कुलांगनाओं में प्रमुखतमा प्रियंगुमञ्जरी नाम की प्रिया है॥

यस्याः पद्मानुकारिणी कान्तिर्लोचने च, रम्भाप्रतिस्पर्धिनीरूपसंपत्तिरूरुमण्डले च, सुमनोहारिणी केशकबरी भ्रूभङ्गचक्रे च, भ्रमरकोद्भासिनी ललाटपट्टिका कर्णोत्पले च, प्रवालानुकारिणी दन्तच्छदच्छाया करचरणयुगले च॥

कल्याणी—यस्या इति। यस्याः=प्रियङ्गुमञ्जर्याः; कान्तिः=दीप्तिः, पद्मानुकारिणी—पद्मा=श्रीः, तामनुकुरुते=अनुसरति इत्येवंशीला, लोचने=नयने च, पद्मं=कमलमनुकुर्वति इत्येवंशीले। रूपसम्पत्तिः=स्वरूपसम्पदा, रम्भाप्रतिस्पर्धिनी=रम्भा नाम अप्सरास्तया प्रतिस्पर्धते इत्येवंशीला, ऊरुमण्डले च=जघनस्थले च, रम्भा=कदलीस्तम्भः, तया प्रतिस्पर्धेते इत्येवंशीले। केशकबरी=केशवेणी; सुमनोहारिणी—सुमनोभिः=पुष्पैः, हारिणी=मनोज्ञा; तदलंकृतत्वात्। भ्रूभङ्गचक्रे च=भ्रूभङ्गमण्डले च सुमनोहारिणी=सुष्ठु मनो हरत इत्येवंशीले। ललाटपट्टिका=भालफलकम्, भ्रमरको-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्भासिनी—भ्रमरकैः=ललाटस्थैरलकैः, उद्भासते=शोभत इत्येवंशीला, कर्णोत्पले च=अवतंसत्वेन धृते कर्णकमले च, भ्रमरकैः=भृङ्गैः, उद्भासेते=शोभेते इत्येवंशीले। दन्तच्छदस्य=ओष्ठस्य, छाया=कान्तिः, प्रवालानुकारिणी—प्रवालं=विद्रुमम्, अनुकरोतीत्येवंशीला; करचरणयुगले च=पाणिपादयुगले च, प्रवालानुकारिणी—प्रवालं=किसलयम्, अनुकुर्वात इत्येवंशीले। 'पद्मानुकारिणी'त्यादिपदेषु नान्तत्वात्प्रथमैकवचनद्विवचनयोः स्त्रीक्लीवयोश्च श्लेषः। प्रियङ्गुमञ्जरीवर्णनप्रसङ्गे कान्तिलोचनादितत्तद्द्वयस्य प्रस्तुतस्यैकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता, सा च श्लेषानुप्राणिता ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रियंगुमञ्जरी की कान्ति पद्मा—लक्ष्मी का अनुकरण करने वाली और आँखें पद्म—कमल का अनुकरण करने वाली हैं, स्वरूपसम्पदा रम्भानामक अप्सरा से प्रतिस्पर्धा करने वाली और ऊरुमण्डल (जँघायें) रम्भा—कदली-स्तम्भ से प्रतिस्पर्धा रखने वाली हैं, उसके बालों की वेणी फूलों से (अलंकृत होने के कारण) मनोहारिणी है तथा भौंहों की भंगिमायें भी अत्यन्त मनोहारिणी हैं, भालप्रदेश ललाटस्थित अलकों (बालों की लटों) से सुशोभित हैं और कानों में (आभूषण के रूप में धारण किये हुए) कमल भ्रमरकों—भ्रमरों के समान सुशोभित हैं, ओष्ठों की कान्ति प्रवाल—मूँगों के समान और हाथ-पैर भी प्रवाल—पल्लवों का अनुकरण करने वाले हैं ॥

यस्याः सुवर्णमयं वचनं नूपुरं पदे-पदे मनो हरति ॥

कल्याणी—यस्या इति। यस्याः=प्रियङ्गुमञ्जर्याः, सुवर्णमयं—सुष्ठु, वर्णः=अकारादिः, तेन निर्वृत्तं वचनं; सुवर्णमयं—सुवर्णेन=काञ्चनेन, निर्वृत्तं नूपुरं=पादाभूषणं च सुबन्ततिङन्तरूपे पादविन्यासरूपे च, पदे पदे, मनः=चित्तं, हरति=आकर्षति। प्रस्तुतयोर्वचननूपुरयोरेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता, सा च श्लेषानुप्राणिता ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रियंगुमञ्जरी के सुवर्णमय—सुन्दर वर्णों से युक्त वचन प्रत्येक प्रकृति-विभक्ति आदि पदों पर तथा सुवर्णमय—काञ्चन से निर्मित नूपुर पग-पग पर मन को आकर्षित करने वाले हैं ॥

यस्याः सुमधुरया वाचा सदृशी शोभते कण्ठे कुसुममालिका। अलिकालयाऽप्यलकवल्लरीमालया सह विराजते तिलकमञ्जरी ॥

कल्याणी—यस्या इति। यस्याः=प्रियङ्गुमञ्जर्याः, कण्ठे=ग्रीवायां, सुमधुरया=सुकोमलया, वाचा=वचनेन, सदृशी=समा; सुमधुरया—सुष्ठु, मधुनः=मकरन्दस्य, रयः=प्रसरः यत्र तथाविधा, कुसुममालिका=पुष्पस्रक्, शोभते=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजते। अलिकं=ललाटम्, आलयः=स्थानं यस्याः सा तिलकमञ्जरी=तिलकमेव-मञ्जरी, सापि अलिः=भ्रमरः, तद्वत् कालः=कृष्णवर्णः यस्यास्तया, अलकवल्लरीमालया=केशकवरीश्रेण्या, सह विराजते=शोभते। अत्र तृतीयाप्रथमयोर्विभक्त्योः श्लेषः। वाक्कुसुममालिकयोः समानविशेषणशब्दबलेन सादृश्याभिधानाच्छ्लेषानुप्राणितोपमा, तथालिकालयेत्यादिवाक्ये सहोक्तिः ॥

ज्योत्स्ना—जिसके कण्ठ में सुमधुर वाणी के समान सुन्दर मकरन्द को फैलाने वाली पुष्पों की माला शोभित होती है। ललाटरूपी निवासस्थान वाली तिलकरूपी मञ्जरी भी भ्रमर के समान वर्ण वाली बालों की वेणी के साथ सुशोभित होती है ॥

किं बहुना—

तस्याः कान्तिनिरुद्धमुग्धहरिणीलीलाचलच्चक्षुष-
स्तारुण्यस्य भरादनालसलसल्लावण्यलक्ष्मीरसः।
लुभ्यल्लोकविलोचनाञ्जलिपुटैः पेपीयमानोऽपि स-
न्नङ्गेष्वेव न माति सुन्दरतरो रङ्गंस्तरङ्गैरिव ॥३०॥

अन्वयः—किं बहुना, कान्तिनिरुद्धमुग्धहरिणीलीलाचलच्चक्षुषः तस्याः तारुण्यस्य भरात् अनालसलसल्लावण्यलक्ष्मीरसः लुभ्यल्लोकविलोचनाञ्जलिपुटैः पेपीयमानः सन् अपि तरङ्गैः सुन्दरतरः रङ्गन् इव अङ्गेषु एव न माति ॥३०॥

कल्याणी—तस्या इति। किं बहुना=बहुवर्णनेन किम्, तत्सौन्दर्यवर्णनमुपसंहरन्नेतावदेव कथयामीति भावः। कान्तिनिरुद्धमुग्धहरिणीलीलाचलच्चक्षुषः—कान्त्या=शोभया, निरुद्धानि=अचलीकृतानि, मुग्धहरिणानां=मत्तमृगाणां, लीलया=विलासेन, चलन्ति=चञ्चले चक्षूंषि=नेत्राणि यया, तस्याः=प्रियङ्गुमञ्जर्याः, तारुण्यस्य=यौवनस्य, भरात्=अतिरेकाद्; अनालसम्—आ समन्तादलसमित्यालसं, न आलसमित्यनालसम्=अमन्दमित्यर्थः, यथा तथा लसन्=देदीप्यमानः, लावण्यलक्ष्मीरसः=सौन्दर्यलक्ष्मीरसः, लुभ्यतां=सस्पृहानां, लोकानां=जनानां, लोचनानि=नयनान्येवाञ्जलिपुटानि तैः, पेपीयमानः=पुनः पुनः पीयमानः सन्नपि, तरङ्गैः=लहरीभिः, सुन्दरतरः=चारुतरः, रङ्गन्निव=विलसन्निव, अङ्गेषु=अवयवेष्वेव, न माति=न लसते, अन्तःस्थातुमवकाशमेव न प्राप्नोतीति भावः। प्रथमपादे कान्त्याः मुग्धहरिणीचञ्चलनेत्रनिरोधासम्बन्धेऽपि सम्बन्धकथनादतिशयोक्तिः। उत्तरार्द्धे वाच्योत्प्रेक्षा। तयोर्नैरपेक्ष्येण संस्थितेः संसृष्टिः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; कान्ति के कारण अचल हुए मुग्ध हरिणियों के विलासकालीन चञ्चल नयनों के समान नयनों वाली उस रानी प्रियंगुमञ्जरी के यौवन के भार से आलस्यरहित देदीप्यमान सौन्दर्यरूपी लक्ष्मी-रस पर लुब्ध लोगों के नयनरूपी अञ्जलिपुटों के द्वारा बार-बार पान किये जाने पर भी (वह सौन्दर्यलक्ष्मी-रस) तरंगों के द्वारा अत्यन्त रमणीय रूप से तरंगित होते हुए अंगों में समाविष्ट नहीं हो पाता अर्थात् उसका अप्रतिम लावण्य उसके अंगों में छिप नहीं पाता, बल्कि बाहर छलकता-सा रहता है ॥३०॥

एवमनयोः सकलसंसारसुखरसास्वादमुदितमनसोर्यान्ति दिवसाः ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, सकलानां=समस्तानां, संसारसुखानां=लोकानन्दानां, रसास्वादेन मुदिते = प्रसन्ने, मनसी=चित्ते, ययोस्तयोः; अनयोः=दम्पत्योः, प्रियङ्गुमञ्जर्याः भीमस्य च, दिवसाः=दिनानि, यान्ति= व्यतियन्ति ।

ज्योत्स्ना—इस प्रकार समस्त सांसारिक सुखों के रसास्वादन से प्रसन्न चित्त वाले उन दोनों अर्थात् प्रियंगुमञ्जरी और राजा भीम के दिन व्यतीत होते हैं ॥

कदाचिच्चटुलतरतरुणषट्चरणचक्रचुम्बनाक्रमणभरभज्यमानञ्जरीजालगलदमन्दमकरन्दबिन्दुकर्दमितेषु विविधाङ्गविहङ्गविहारविदलितदलदन्तुरालेषु स्मरबन्धुसुगन्धिगन्धवाहवाजिबाह्यालीषु वरदायाः पुण्यपुलिनपालिपादपतलेषु रममाणयोः परिणतेन्द्रवारुणारुणकपोलकान्तिरुद्घुषितदेहपिण्डकण्डूयनाकूततरलितकरकिसलया बालकमेकमुदरदेशलग्नमपरमपि पृष्ठप्रतिष्ठितमुद्वहन्ती कापि कपिकुटुम्बिनी दृष्टिपथमवातरत् ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्=कस्मिंश्चित्समये, चटुलताः= चञ्चलाः, तरुणाः=युवानः, ये षट्पदा=भ्रमराः, तेषां चक्रेण=मण्डलेन, चुम्बनाय=रसपानाय, आक्रमणं=निपतनं, तस्य भराद्=भाराद्, यत् भज्यमानमञ्जरीजालं=भिद्यमानलतावृन्दं, तस्माद् गलन्तः=प्रस्रवन्तः, अमन्दाः=अनल्पाः, ये मकरन्दबिन्दवः=मधुकणाः,-तैः कर्दमितेषु=पङ्किलेषु, विविधाङ्गानां=विविधाकृतीनां, विहङ्गानां=पक्षिणां, विहारेण=सञ्चारेण, विदलितैः=भग्नैः, दलैः=पत्रैः, दन्तुरम्= उन्नतावनतम्, अन्तरालं=मध्यवर्तिप्रदेशः येषां तेषु, स्मरस्य=कन्दर्पस्य, बन्धुः= सहायः, यः सुगन्धिः=सौरभान्वितः, गन्धवाहः=वायुः, स एव वाजी=अश्वः, तस्य बाह्यालीषु=धावनस्थलीरूपेषु, वरदायाः=वरदानाम्न्या नद्याः, पुण्यपुलिनपालिपादपतलेषु=पवित्रतटसीम्नि, पादपाः=वृक्षाः तेषां तलेषु=अधोभूतलेषु, रममाणयोः= क्रीडतोः, तयोः दम्पत्योः, परिणतं=परिपक्वं, यत्, इन्द्रवारुणं=किम्पाकफलं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तद्वत् अरुणा=रक्ता, कपोलयोः कान्तिः=आभा यस्याः सा, उद्घुषितः=दीप्तः, यः देहपिण्डः=देहगोलकः, तस्य कण्डूयनं=खर्जूविनयनं, तस्य आकूतेन=अभिप्रायेण, तरलितः=चञ्चलः, करकिसलयः=पाणिपल्लवः यस्याः सा, एकं बालकं=शिशुम्, उदरदेशे=जठरस्थाने, लग्नं=संसक्तम्, अपरमपि=अन्यमपि, पृष्ठप्रतिष्ठितम्=पृष्ठदेशे स्थितम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, कापि=काचित्, कपिकुटुम्बिनी=वानरपत्नी, दृष्टिपथमवातरत्=दृष्टेत्यर्थः। भृङ्गेषु नायकव्यवहारसमारोपात्समासोक्तिः। 'गन्धवाहवाजिबाह्यालीषु' इत्यत्र परम्परितरूपकम्। 'परिणतेन्द्रवारुणारुणकपोलकान्तिः' इत्यत्रोपमा ॥

ज्योत्स्ना—किसी समय अत्यन्त चञ्चल युवक भ्रमरसमूहों के द्वारा चुम्बन के लिए अर्थात् पुष्प के रसपान के लिए किये गये आक्रमण से भग्न हुए मञ्जरीसमूहों से बहती हुई प्रचुर पराग-कणों से पङ्किल बने हुए, विभिन्न आकार वाले पक्षियों के विहार से भग्न हुई पत्तियों के कारण ऊँचे-नीचे मध्य भागवाले, कामदेव के सहायक सौरभान्वित वायुरूपी अश्वों के लिए वाह्याली अर्थात् दौड़ने के लिए स्थानस्वरूप वरदानामक नदी के पावन तटपंक्तियों पर स्थित वृक्षों के नीचे विहार करते हुए उस दम्पति (प्रियंगुमञ्जरी और राजा भीम) को पूर्णतः पके हुए इन्द्रवारुण अर्थात् किम्पाक के फल के समान रक्त वर्ण की कपोलकान्ति वाली, चमकीले शरीर को खुजलाने के अभिप्राय से चञ्चल हाथों रूपी पल्लवों वाली, एक बालक को उदरप्रदेश (पेट) में चिपकाई हुई तथा दूसरे को पीठ पर बैठा कर ढ़ोती हुई कोई कपिकुटुम्बिनी अर्थात् वानरी दिखलाई पड़ी ॥

तां चावलोक्य चेतस्यास्पदमकरोत्तयोरनपत्ययोर्विषमविषादवेदनाव्यतिकरः ॥

कल्याणी—तामिति। तां=कपिकुटुम्बिनीं, चावलोक्य=दृष्ट्वा, अनपत्ययोः=निःसन्तानयोः, तयोः=दम्पत्योः, चेतसि=मनसि, विषमविषादवेदनाव्यतिकरः=असह्यविषादव्यथासम्पर्कः, आस्पदं=स्थानमकरोत् ॥

ज्योत्स्ना—और उस वानरी को देखकर निस्सन्तान उस दम्पति के मन में असह्य वेदना ने स्थान बना लिया।

आशय यह है कि सन्तति से संयुक्त उस वानरी को देखकर सन्ततिरहित राजा भीम और रानी प्रियंगुमञ्जरी अत्यन्त दुःखी हो गये ॥

करपत्त्रधाराकर्तनदुःसहदुःखदूनमनसोर्वैमनस्यमभूद् भूम्नि राज्ये जने जीविते च। किमनेनाधिपत्येनापत्यशून्येन ॥

कल्याणी—करपत्त्रेति। करपत्त्रं=क्रकचः तस्य धारया कर्तनेन=छेदनेन, दुःसहं=असह्यं, यद् दुःखं=कष्टं, तद्वद् दुःखेन दूनमनसोः=व्यथितचित्तयोः, भूम्नि राज्ये=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विशाले राज्ये, जने=परिजने, जीविते=जीवने च, वैमनस्यं=विरक्तिरभूत्। अपत्यशून्येन=सन्तानरहितेन, अनेन=एतेन, आधिपत्येन=प्रभुसत्तया, किं=को लाभः ? ॥

ज्योत्स्ना—करपत्र अर्थात् काटने वाले आरे की धार के द्वारा कटने के समान असह्य दुःख के कारण व्यथित चित्त वाले उस दम्पति को (अपने) विशाल राज्य तथा परिजनों के साथ-साथ अपने जीवन की तरफ से भी विरक्ति हो गई (और वे सोचने लगे कि) सन्तान से रहित (होने के कारण) इस आधिपत्य अर्थात् प्रभुसत्ता से क्या फायदा ? ॥

सर्वथा सकलसुरासुरकिरीटकोटीकोणशोणमणिमरीचिचञ्चरीकचुम्बितचरणाम्बुजमम्बिकाप्रियं प्रतिपद्यामहे महेश्वरमित्यन्योन्यमालोचयाञ्चक्रतुः ॥

कल्याणी—सर्वथेति। सकलानां=समस्तानां, सुरासुराणां=देवदानवानां, किरीटकोटीकोणेषु=मुकुटशिखरैकदेशेषु, ये शोणमणिमरीचयः=रक्तमणिकिरणाः; त एव चञ्चरीकाः=भ्रमराः, तैः चुम्बिते=संस्पृष्टे, चरणाम्बुजे=पदपद्मे, यस्य तं महेश्वरं=शिवम्, अम्बिका=पार्वती, तस्याः प्रियं=कान्तं, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, प्रतिपद्यामहे=आश्रयामहे, आराधयिष्याम इत्यर्थः, वर्तमानसामीप्ये लट्। 'मरीचिचञ्चरीकचुम्बितचरणाम्बुजम्' इत्यत्र परम्परितरूपकम्। इति=एवम्, अन्योन्यं=परस्परम्, आलोचयाञ्चक्रतुः=विचारयामासतुः ॥

ज्योत्स्ना—समस्त देव-दानवों के मुकुटों के ऊपर एक भाग में जड़ित रक्तमणियों की किरणों रूपी भ्रमरों से चुम्बित चरणकमल वाले (और) भगवती पार्वती के प्रिय भगवान् शिव की हम सब प्रकार से आराधना करेंगे—इस प्रकार से (उन दोनों ने) आपस में विचार-विमर्श किया।

अथ विपुलवियद्विलङ्घनश्रमप्रशमनार्थमरुणेन वारुणीं प्रतिपानार्थमिवावतार्यमाणेषु रविरथतुरङ्गमेषु, अपरासक्ते दिवसभर्तरि शोकभरादिव तमःपटलेनापूर्यमाणामाश्वासयितुमिव पूर्वां दिशमभिधावमानासु पादपच्छायासु, हारीतहरितहरिहारिणस्तरणेररण्यान्तराच्च मन्दमपवर्त्तमानेषु गोमण्डलेषु, अस्ताचलवनदेवतादत्तरक्तचन्दनार्घसलिलप्लवप्लाव्यमान इव लोहितायति पश्चिमाशामुखे, वारविलासिनीभिः कपोलमण्डलीमण्डनाय क्रियमाणेषु पत्त्रभङ्गेषु, भयेनेव पादपैः प्रारब्धे पत्त्रसङ्कोचकर्मणि, विघटिष्यमाणचक्रवाककामिनीकरुणकूजितव्याजेन दिवसभर्तुरस्ताचलगमनं निवा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रयन्तीभिरिव विरहविधुराभिः कमलिनीभिर्विधीयमानेषु प्रार्थनाप्रणामाञ्जलिपुटेष्विव कमलमुकुलेषु, क्रमेण पश्चिमाम्भोधितरङ्गान्तरतस्तरुणतरताम्रतामरसानुकारिकेसरायमाणरश्मिमञ्जरीजालजटिलमवलोक्य तरणिमण्डलमतिसंभ्रमभ्रमद्भ्रमरनिकुरम्ब इव प्रधावमाने दूरं तिमिरपटले, कृष्णागुरुपङ्कपत्त्रभङ्गभूष्यमाणेष्विव दिगङ्गनामुखेषु, कोकिलकलापैराक्रम्यमाणेष्विव वनान्तरेषु विकचकुवलयबहलमेचकरुचिनिचयश्यामलीक्रियमाणेष्विव सलिलाशयेषु, तापिच्छगुच्छच्छदच्छाद्यमानास्विव वनवृतिषु, नृत्यत्कलापिकुलकलापैः कालीक्रियमाणेष्विव शैलशिरःशिलातलेषु, कज्जलालेख्यचित्रचर्च्यमानास्विव भवनभित्तिषु, विरहिणीनिःश्वासधूमश्यामलीक्रियमाणेष्विव पान्थावसथेषु, कस्तूरिकासलिलसिच्यमानास्विव कामुकविलासवासवेश्मवाटीषु, मदान्धसिन्धुरनिरुध्यमानेष्विव नृपभवनाङ्गणेषु, कलितकालकञ्चुकायामिव गगनलक्ष्म्याम्, मदनशरनिकरविद्रुतदरिद्रविटविषादानलस्फुलिङ्गेष्विव रङ्गत्सु ज्योतिरिङ्गणेषु, काञ्चनीषु तिमिरकरिकुम्भभेदभल्लीष्विव निशितासु प्रदीप्यमानासु प्रदीपकलिकासु, प्लवमानपाण्डुपुण्डरीककल्माषितकालिन्दीपरिस्यन्दसुन्दरेऽमृतमथनक्षणक्षुब्धक्षीरसागररसबिन्दुस्तबकितनारायणवक्षःस्थल इव काञ्चिदपि श्रियं कलयति ताराविराजिते वियति, विटङ्कान्तमनुसरन्तीषु वेश्यासु वेश्मपारावतपतत्रिपंक्तिषु च, भ्रमरसङ्गतासु कुलटासु कुमुदिनीषु च, नदीपालिविरहितेषु चत्वरेषु चक्रवाकमिथुनेषु च, जाते जरद्गवयकायकालकान्तिकाशिनि निशावतारे, तरुणतमालकाननमिवाञ्जनगिरिगुहागर्भमिवेन्द्रनीलमणिमहामन्दिरोदरमिव विशति सकलजीवलोके स लोकेश्वरः 'प्रिये प्रियङ्गुमञ्जरि! प्रसादय प्रणतप्रियकारिणमभङ्गानङ्गदर्पहरं हरम्। अहं च तदाराधनावधानमनुविधास्यामि' इत्यभिधाय यथावासमयासीत् ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, विपुलस्य=विस्तीर्णस्य, वियतः=नभसः, विलंघनेन=अतिक्रमणेन, यः श्रमः=क्लान्तिः, तत्प्रशमनार्थम्=अपनोदनार्थं; वारुणीं=पश्चिमां दिशं प्रति, वारुणीं सुरां प्रतिपानार्थमिव=पानकरणार्थमिव; अरुणेन=सूर्यसारथिना, रविरथतुरङ्गमेषु=सूर्यरथाश्वेषु, अवतार्यमाणेषु=नीयमानेषु; भावे सप्तमी, एवमेव सर्वत्र ज्ञेयम्। अपरासक्ते—अपरा=पश्चिमा दिक्, अङ्गनान्तरं च; तत्रासक्ते=बद्धरागे, दिवसभर्तरि=सूर्ये, शोकभरादिव=मनोव्यथातिरेकादिव, तमःपटलेन—तमः=मोहः ध्वान्तं च, तत्पटलेन=समुदयेन, आपूर्यमाणम्=आच्छाद्यमानामिव, पूर्वां=प्राचीं दिशम्, आश्वासयितुमिव=आश्वस्तां कर्तुमिव, अभिधावमानासु=वेगेन गच्छन्तीषु, पादपच्छायासु=वृक्षच्छायासु; समासोक्तिरुत्प्रेक्षा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

च, तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। हारीताः=शुकाभाः पक्षिविशेषाः, तद्वद्धरिताः=हरितवर्णाः, ये हरयः=अश्वाः, तैः हार्यते=नीयते, इत्येवंशीलात् तरणेः=सूर्यात्; तरणेरिति पञ्चम्यन्तं ज्ञेयम्। हारीतैः=हारीतपक्षिभिः; हरितैः=शाद्वलैश्च, हरिभिः=वानरैश्च हारिणः=मनोज्ञात्, अरण्यान्तराच्च=वनमध्यभागाच्च, मन्दं=शनैः, अपवर्त्तमानेषु=व्यपगच्छत्सु; गोमण्डलेषु=किरणचक्रवालेषु धेनुसमूहेषु च सत्सु, अस्ताचलवनदेवता=अस्ताचलस्य यद्वनं तदधिष्ठातृदेवता, तया; सूर्यस्वागतार्थमिति भावः। दत्तं=समर्पितं, यद्रक्तचन्दनमिश्रितमर्घसलिलम्=अर्घजलं, तस्य प्लवे=पूरे, प्लाव्यमान इव=निमज्ज्यमान इव, लोहितायति=लोहिते भवति; भवत्यर्थे 'लोहितादिडाज्भ्यः क्यष्' इति क्यष्, 'वा क्यषः' इति परस्मैपदत्वं च। पश्चिमाशामुखे=पश्चिमदिङ्मुखे सति, समासोक्तेरुत्प्रेक्षायाश्च संकरः। वारविलासिनीभिः=वाराङ्गनाभिः, कपोलमण्डलीमण्डनाय=गण्डस्थलालङ्करणाय, पत्रभङ्गेषु=पत्रवल्लीसंज्ञेषु, विलेपनचित्रेषु, पत्राणां=पर्णानां, भङ्गेषु=भञ्जनेषु च, क्रियमाणेषु=विधीयमानेषु सत्सु, भयेनेव=त्रासेनेव, पादपैः=वृक्षैः, पत्रसंकोचकर्मणि=दलसङ्कोचकार्ये, प्रारब्धे=आरम्भे सति; उत्प्रेक्षालङ्कारः। वियटिष्यमाणाः=वियोगं लप्स्यमानाः, याः चक्रवाककामिन्यः=चक्रवाक्यः; तासां करुणकूजितव्याजेन=करुणक्रन्दनच्छलेन, दिवसभर्तुः=सूर्यस्य, अस्ताचलगमनं=अस्ताचलाय प्रयाणं, निवारयन्तीभिरिव=निषेधन्तीभिरिव, विरहविधुराभिः=वियोगखिन्नाभिः, कमलिनीभिः=पद्मिनीभिः विधीयमानेषु=क्रियमाणेषु; प्रार्थनाप्रणामाञ्जलिपुटेष्विव=विनयनमस्काराञ्जलिष्विव, कमलमुकुलेषु=पङ्कजकुड्मलेषु सत्सु, अपह्नुत्युत्प्रेक्षयोः संकरः। क्रमेण=क्रमशः, पश्चिमाम्भोधेः=पश्चिमसमुद्रस्य, तरङ्गाणां=लहरीणाम्, अन्तरतः=मध्ये, तरुणतरं=पूर्णविकसितं, यत्ताम्रं=रक्तं, तामरसं=कमलं, तदनुकारि=तत्सदृशमित्यर्थः। तरणिमण्डलं=सूर्यबिम्बं, केसरायमाणेन=परागसदृशेन, रश्मिमञ्जरीजालेन=किरणरेखासमूहेन, जटिलं=मिश्रितम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, अतिसंभ्रमेण=समधिकत्वरया, भ्रमतां=सञ्चरतां, भ्रमराणां=षट्पदानां, निकुरम्ब इव=समूह इव, प्रधावमाने=प्रकर्षेण द्रुतगत्याऽऽक्रामति, दूरम्=अत्यधिकं, तिमिरपटले=अन्धकारसमूहे; उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। कृष्णागुरुपङ्कपत्रभङ्गभूष्यमाणेष्विव—कृष्णागुरोः पङ्केन=द्रवेण, निर्मितः यः पत्रभङ्गः=पत्रवल्लीसंज्ञं विलेपनचित्रं, तेन भूष्यमाणेष्विव=अलङ्क्रियमाणेष्विव, दिगङ्गनामुखेषु—दिश एव अङ्गनाः; तासां मुखेषु; रूपकोत्प्रेक्षयोः संकरः। कोकिलकलापैः=पिकसमूहैः, आक्रम्यमाणेषु=आच्छाद्यमानेष्विव, वनान्तरेषु=विभिन्नवनेषु; उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। विकचानां=विकसितानां, कुवलयानां=नीलकमलानां, बहलमेचकरुचिनिचयेन=समधिकनीलकान्तिपटलेन, श्यामलीक्रियमाणेष्विव=कृष्णीविधीयमा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नेष्विव, सलिलाशयेषु=जलाशयेषु, तापिच्छगुच्छस्य=तमालतरुसमूहस्य, छदैः=पत्रैः, छाद्यमानासु=आव्रियमाणास्विव, वनवृतिषु=विपिनपर्यावरणेषु, नृत्यतां=नर्तनं कुर्वतां, कलापिकुलानां=मयूरवृन्दानां, कलापैः=पिच्छैः, कालीक्रियमाणेष्विव=श्यामलीक्रियमाणेष्विव, शैलशिरःशिलातलेषु=गिरिशृङ्गप्रस्तरतलेषु, उत्प्रेक्षाऽलंकारः। कज्जलेन आलेख्यानि=अङ्कनयोग्यानि यानि चित्राणि, तैः चर्च्यमानास्विव=अलङ्क्रियमाणास्विव, भवनभित्तिषु=गृहकुड्येषु; उत्प्रेक्षा। विरहिणीनां=वियोगिनीनां, निःश्वासा एव धूमास्तैः श्यामलीक्रियमाणेष्विव=कृष्णायमाणेष्विव, पान्थानां=पथिकानाम्, आवसथेषु=विश्रामस्थलेषु; रूपकोत्प्रेक्षयोः संकर। कस्तूरिकायाः=मृगमदस्य, सलिलेन=जलेन, द्रवेणेत्यर्थः। सिच्यमानास्विव=आर्द्र्यमाणास्विव, कामुकानां=कामरसिकानां, विलासवासाः=क्रीडामन्दिराणि, तेषां वेश्मवाटीषु=गृहवाटिकासु; उत्प्रेक्षाऽलंकारः। मदान्धसिन्धुरैः=मदमत्तगजेन्द्रैः, निरुध्यमानेष्विव=परिव्रियमाणेषु, नृपभवनाङ्गणेषु=नरपतिसदनप्राङ्गणेषु, कलितः=धृतः, कालः=कृष्णवर्णः, कञ्चुकः यया तथाभूतायामिव गगनलक्ष्म्याम्=आकाशश्रियाम्, मदनशरनिकरैः=मनसिजबाणसमुदयैः, विद्रुता=विद्धा ये दरिद्राः=निर्धनाः; विटाः=लम्पटाः, तेषां विषादः=मनस्ताप एव अनलः=वह्निः, तस्य स्फुलिङ्गेष्विव=अग्निकणेष्विव, ज्योतिरिङ्गणेषु=खद्योतेषु, रङ्गत्सु=भासमानेषु, काञ्चनीषु=सुवर्णनिर्मितासु, निशितासु=तीक्ष्णासु, तिमिरः=अन्धकार एव करीगजः, तस्य कुम्भभेदाय=ललाटस्थलविदारणाय, भल्लीष्विव=तीक्ष्णास्त्रविशेषेष्विव; रूपकोत्प्रेक्षयोः संकरः। प्रदीप्यमानासु=प्रकर्षेण भासमानासु, प्रदीपकलिकासु=प्रदीपप्रकाशकिरणरेखासु, प्लवमानैः=तरद्भिः, पाण्डुपुण्डरीकैः=श्वेतकमलैः, कल्माषितः=कर्बुरितः; यः कालिन्दीपरिस्यन्दः=यमुनाप्रवाहः, तद्वत् सुन्दरे=मनोज्ञे; अमृतमथनक्षणे=सुधामथनसमये, क्षुब्धस्य=आन्दोलितस्य, क्षीरसागरस्य=क्षीरसमुद्रस्य, रसबिन्दुस्तबकितं=रसकणगुच्छयुक्तं, यत् नारायणवक्षःस्थलं=विष्णोरुरःप्रदेशः, तस्मिन्निव ताराभिः=नक्षत्रैः, विराजिते=सुशोभिते, वियति=आकाशे, काञ्चिदपि=अवर्णनीयां, श्रियं=शोभां; पक्षे—समुद्रतनयां लक्ष्मीं, कलयति=धारयति सति; उपमाऽलंकारः, कालिन्दीपरिस्यन्दो नारायणवक्षश्च वियत उपमानम्, पाण्डुपुण्डरीकाणि क्षीरसागररसबिन्दवश्च ताराणामुपमानमित्यवगन्तव्यम्। वेश्यासु=वाराङ्गनासु, वेश्मपारावतपतत्रिपंक्तिषु=गृहकपोतपक्षिश्रेणीषु च, विटम्—कान्तम्—अनुसरन्तीषु=कामुकं प्रियमनुगच्छन्तीषु, पक्षे—विटङ्कान्तं—पक्षिणामावासयष्टेः; उन्नतोंऽशो विटङ्कस्तस्यान्तं तत्प्रदेशमनुसरन्तीषु, कुलटासु=व्यभिचारिणीषु स्त्रीषु कुमुदिनीषु=कुमुदपङ्क्तिषु च, भ्रम—रसम्—गतासु—भ्रमः=भ्रमणं, तत्र यः रसः=आनन्दः, तं गतासु=आपन्नासु, पक्षे—भ्रमर—संगतासु—भ्रमरैः=मधुपैः, संगतासु=युक्तासु;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चत्वरेषु=चतुष्केषु, चक्रवाकमिथुनेषु=चक्रवाकपक्षियुगलेषु च; न–दीपालिविरहितेषु= न दीपपङ्क्तिवियुक्तेषु, दीपावलिसुशोभितेष्विति यावत् । पक्षे—नदी–पालि–विरहितेषु—नद्याः=सरितः; पालि=सीमा, तया विरहितेषु=वियोजितेषु; सायंकाले चक्रवाको नद्याः एकतीरप्रदेशे तिष्ठति चक्रवाकी त्वपरतीरप्रदेशे तिष्ठति, तदित्थं नदीपालिस्तद्युगलं वियोजयति । त्रिष्वपि वाक्येषु श्लेषबलेन तत्तत्प्रस्तुतयोर्द्वयोरेकधर्माभिसम्बन्धाच्छ्लेषोत्था तुल्ययोगिता । जरन्=जीर्णः, यः गवयः=नीलगौः, तस्य कायः=शरीरं, तद्वत् कालकान्त्या=कृष्णदीप्त्या, काशते=दीप्यत इत्येवंशीले; निशावतारे=रात्र्युदये जाते, सकलजीवलोके=समस्तप्राणिसमूहे, तरुणतमालकाननमिव=पूर्णविकसिततापिच्छवनमिव, अञ्जनगिरिगुहागर्भमिव=कज्जलगिरिकन्दराभ्यन्तरमिव, इन्द्रनीलमणिमहामन्दिरोदरमिव=इन्द्रनीलमणिरचितविशालगृहगर्भमिव, विशति=प्रविशति सति; उत्प्रेक्षाऽलंकारः । स लोकेश्वरः = जगत्प्रभुर्भीमः, 'प्रिये प्रियङ्गुमञ्जरि ! प्रणतप्रियकारिणं=शरणागतमनोरथसम्पादकं, अभङ्गानङ्गदर्पहरं—नास्ति भङ्गः=पराभवः, यस्य तथाविधः यः अनङ्गः=कन्दर्पः, तस्य दर्पहरं=गर्वापहारिणं, हरं=शिवं, प्रसादय=प्रसन्नतां गमय; तदर्चयेति भावः । अहं च = अहमपि तदाराधनावधानमनुविधास्यामि—तस्य=शिवस्य, आराधने=उपासनायाम्, अवधानम्=एकतानताम् अनुविधास्यामि=त्वदनुसरणपूर्वकं करिष्यामि' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, आवासस्यानतिक्रमेण यथावासम्, अयासीत्=अगमत् ।।

ज्योत्स्ना—इसके बाद विस्तृत आकाश को लाँघने में हुई थकावट को दूर करने के लिए पश्चिम दिशा के प्रति वारुणी सुरा का पान करने के लिए मानो सूर्यरथ के सारथि के द्वारा सूर्यरथ के घोड़ों को उत्तारे जाने पर, पश्चिम दिशारूपी दूसरी अङ्गना में दिन के स्वामी अर्थात् सूर्य के आसक्त होने पर मनोव्यथा से भरी हुई के समान अन्धकारसमूह से अच्छाद्यमान पूर्व दिशा को आश्वस्त करने के लिए (उसी की ओर) वेग से जाती हुई वृक्षों की छाया में, शुकों की कान्ति के समान हरित वर्ण के घोड़ों द्वारा ले जाये जा रहे सूर्य से हारित पक्षियों। शाद्वलों और वानरों के कारण मनोहारी वन के मध्य भाग से सूर्यकिरणों के समूहों तथा गोसमूहों के धीरे-धीरे लौट जाने पर, अस्ताचल के वनदेवता के द्वारा (सूर्य के स्वागतार्थ) समर्पित किये गये रक्तचन्दनमिश्रित अर्घ्य जल में तैरते हुए के समान लाल वर्ण की बनी हुई पश्चिम दिशारूपी नायिका के मुख पर तैरते रहने पर, वाराङ्गनाओं द्वारा गण्डस्थल—कपोलमण्डल को अलंकृत करने के लिए पत्ररचना करते रहने पर मानो भय के कारण वृक्षों द्वारा पत्रों को संकुचित करने का कार्य आरम्भ कर दिये जाने पर, वियोग को प्राप्त करती हुई चक्रवाक-कामि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नियों के करुण क्रन्दन के बहाने से सूर्य के अस्ताचल-गमन को रोकती हुई के समान वियोग के कारण खिन्न कमलिनियों द्वारा किये जा रहे सविनय प्रणामाञ्जलि के समान अपनी कमलकलियों को कर लिये जाने पर, क्रमशः पश्चिमी समुद्र की लहरों के मध्य पूर्ण विकसित रक्तकमल के समान मकरन्दसदृश किरणों की रेखाओं से समन्वित सूर्यबिम्ब को देखकर अत्यन्त शीघ्रता से भ्रमण करते हुए भ्रमर-समूहों के समान अन्धकारसमूह के अत्यन्त तीव्र गति से आक्रमण करने पर, कृष्ण अगुरु के पङ्क—लेप से निर्मित पत्ररचना से विभूषित किये जाते हुए के समान दिशारूपी नायिका के मुख के विभूषित हो जाने पर, कोकिलसमूहों के द्वारा आक्रमण किये जाते हुए के समान विभिन्न वनों में (अन्धकार-समूह के) आक्रमण किये जाते रहने पर, विकसित नीलकमलों की गाढ़ी नीली कान्तिपुञ्ज से श्यामल कर दिये जाने के समान (अन्धकारसमूह द्वारा) जलाशयों को श्यामल किये जाते रहने पर, तमाल वृक्षों से आच्छादित के समान वन की लताओं के (अन्धकारसमूह द्वारा) आच्छादित किये जाते रहने पर, नृत्य करते हुए मयूरों के पंखों से काले किये जाते हुए के समान पर्वतों के शिखरस्थित शिलाखण्डों के (अन्धकारसमूह द्वारा) काले किये जाते रहने पर, कज्जल से निर्मित किये जाने योग्य चित्रों से अलंकृत किये जाते हुए के समान भवनों की दीवालों को (अन्धकारसमूह द्वारा) अलंकृत किये जाते रहने पर, वियोगिनियों के निःश्वासरूपी धूम से काले किये जाते हुए के समान पथिकों के विश्राम-स्थलों को (अन्धकारसमूह द्वारा) काला किये जाते रहने पर, कामियों के विलासगृहों के कक्षों को कस्तूरिका के जल से सिञ्चित किये जाते रहने पर, मदमत्त सिन्धूरों—गजराजों के द्वारा निरुद्ध किये जाते हुए के समान राजभवन के प्राङ्गणों को (अन्धकारसमूह द्वारा) निरुद्ध किये जाते रहने पर, कृष्ण वर्ण की कञ्चुकी को धारण की हुई के समान आकाशलक्ष्मी द्वारा अन्धकार-समूह को धारण कर लिये जाने पर, कामबाणों से विद्ध निर्धन लम्पटों के विषाद-रूपी अग्नि से निकलते हुए स्फुलिङ्गों के समान खद्योतों—जुगनुओं के प्रदीप्त हो जाने पर, अन्धकाररूपी हाथी के कुम्भस्थल का भेदन करने के लिए सुवर्णनिर्मित तीक्ष्ण भाले के समान दीप के प्रकाशरूपी किरणरेखा के पूर्ण रूप से प्रदीप्त हो जाने पर, तैरते हुए श्वेत कमलों से कर्बुरित—विविध रंगों से समन्वित यमुना के प्रवाह के समान सुन्दर अमृत-मन्थन के समय आन्दोलित क्षीरसागर के रसबिन्दु-समूहों से समन्वित भगवान् नारायण के वक्षःस्थल पर धारित समुद्रतनया लक्ष्मी के समान नक्षत्रों से सुशोभित आकाश द्वारा किसी अवर्णनीय शोभा के धारण कर लेने पर, वेश्याओं द्वारा कामुक प्रियों का अनुसरण किये जाने पर एवं गृहकपोत पक्षियों के अपने-अपने घोंसलों के भीतर चले जाने पर, व्यभिचारिणी स्त्रियों के भ्रमरस-भ्रमणरूपी आनन्द में निमग्न हो जाने पर एवं कुमुदिनियों के भ्रमरों से युक्त हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाने पर, चतुष्पथों—चौराहों के दीपपंक्तियों से सुशोभित हो जाने पर एवं चक्रवाक पक्षियुगलों के नदी-सीमा से विरहित हो जाने पर [आशय यह है कि सायंकाल में नदी के एक तीर पर चक्रवाक रहता है और दूसरे तट पर चक्रवाकी रहती है, इस प्रकार नदी की सीमा दोनों को अगल कर देती है।]; वृद्ध नीलगाय के शरीर के समान काली कान्ति से सुशोभित के समान रात्रि के अवतरित हो जाने पर, समस्त प्राणिसमूह के पूर्ण विकसित तमाल-वन के समान, कज्जल-गिरि की गुफा के भीतरी भाग के समान, इन्द्रनीलमणि से निर्मित (मन्दिर के) विशाल गर्भगृह के समान (उस अन्धकार में) प्रविष्ट हो जाने पर वे राजा भीम—"प्रिये प्रियंगुमञ्जरि ! प्रणतों—शरणागतों के मनोरथ का सम्पादन करने वाले, पराभव-रहित कामदेव के अहंकार का हरण करने वाले भगवान् शिव को प्रसन्न करो और मैं भी (तुम्हारा अनुसरण करते हुए) उनकी आराधना में ध्यानावस्थित होऊँगा।" इस प्रकार कहकर अपने निवास स्थान को प्रस्थान कर गये ।।

ततश्च—अखण्डितप्रभावोऽथ प्रदोषेणान्धकारिणा।
तस्याश्चित्ते स्थितः शम्भुरुदयाद्रौ च चन्द्रमाः ॥३१॥

अन्वयः—अथ तस्याः चित्ते प्रदोषेण अन्धकारिणा अखण्डितप्रभावः शम्भुः उदयाद्रौ च चन्द्रमाः स्थितः ॥३१॥

कल्याणी—अखण्डितेति। अथ=वाक्यारम्भे, तस्याः=प्रियङ्गुमञ्जर्याः, चित्ते=मनसि, प्रदोषेण—प्रकृष्टाः दोषाः=दुर्गुणाः यस्मिंस्तेन, अन्धकारिणा=अन्धकनाम्ना अरिणा=प्रतिपक्षेण, अखण्डितप्रभावः—न खण्डितः=भग्नः, प्रभावः=महिमा यस्य तथाविधः, शम्भुः=शिवः, उदयाद्रौ=उदयाचले च, अन्धकारिणा=अन्धत्वविधायिना अन्धकारयुक्तेन वा, प्रदोषेण=रजनीमुखेन, अखण्डितप्रभावः=अव्याहतकान्तिः, चन्द्रमाः=इन्दुः, स्थितः=स्थानमाप। प्रस्तुतयोः शम्भुचन्द्रमसोरेकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३१॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात्,

(शिवपक्ष में) उस प्रियंगुमञ्जरी के मन में प्रकृष्ट दोषों से समन्वित अन्धकनामक शत्रु के द्वारा खण्डित न किये गये प्रभाव वाले भगवान् शंकर स्थित हो गये।

(चन्द्रपक्ष में) अन्धत्व को देने वाला अथवा अन्धकार से युक्त प्रदोष (सायंकाल) के द्वारा अव्याहत कान्ति वाला चन्द्रमा उदयाचल पर स्थित हो गया ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आशय यह है कि अपने पति के साथ विचार-विमर्श के पश्चात् अपना भावी कार्यक्रम निश्चित कर अव्याहत कान्ति से समन्वित चन्द्रमा के उदय होते ही उस प्रियंगुमञ्जरी ने अक्षत प्रभावसम्पन्न भगवान् शिव को अपने मन में बैठा लिया ॥३१॥

बिभ्रते हारिणीं छायां चन्द्राय च शिवाय च ।
नभोगरुचये तस्मै नमस्कारं चकार सा ॥३२॥

अन्वयः—सा हारिणीं छायां बिभ्रते, नभोगरुचये तस्मै चन्द्राय च शिवाय च नमस्कारं चकार ॥३२॥

कल्याणी—बिभ्रत इति । सा=प्रियङ्गुमञ्जरी, हारिणीं—हरिणस्येयं हारिणी तां, मनोहारिणीमित्यर्थः । छायां=कलङ्कमित्यर्थः, बिभ्रते=धारयते, नभोगरुचये—नभोगा=वियद्व्यापिनी; रुचिः=कान्तिः यस्य तस्मै चन्द्राय च, हारिणीं=मनोज्ञां, छायां=कान्ति, बिभ्रते=धारयते, भोगे=सांसारिकविलासे, रुचिः=स्पृहा यस्य स भोगरुचिः, न भोगरुचिस्तस्मै शिवाय च, नमस्कारं=प्रणतिं; चकार=कृतवती । तुल्ययोगिलाऽलङ्कारः, श्लेषश्च तदङ्गम् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३२॥

ज्योत्स्ना—(शिवपक्ष में) उस प्रियंगुमञ्जरी ने मनोहारिणी कान्ति को धारण करने वाले और सांसारिक भोग-विलास में रुचि न रखने वाले भगवान् शिव को प्रणाम किया ।

(चन्द्रपक्ष में) उस प्रियंगुमञ्जरी ने मनोहारी कलङ्करूपी छाया को धारण करने वाले एवं आकाशव्यापिनी कान्ति वाले चन्द्रमा को प्रणाम किया ॥३२॥

नित्यमुद्वहते तुभ्यमन्तः सारङ्गरञ्जितम् ।
भूतिपाण्डुर गोवाह सोम स्वामिन्नमो नमः ॥३३॥

अन्वयः—हे भूतिपाण्डुर ! हे गोवाह ! हे सोम ! हे स्वामिन् ! अन्तः सारं गरञ्जितं नित्यं उद्वहते तुभ्यं नमो नमः ॥३३॥

कल्याणी—नित्यमिति । शिवपक्षे—हे भूतिपाण्डुर ! भूत्या=भस्मना, पाण्डुर=शुभ्र ! गोवाह—गौः=वृषः, वाहः=वाहनं यस्य तत्सम्बुद्धौ हे गोवाह ! सोम—उमया=पार्वत्या सह, विद्यमान इति सोमस्तत्सम्बुद्धौ हे सोम ! हे स्वामिन्=प्रभो !, अन्तः=अभ्यन्तरे, सारम्=उत्कृष्टं, गरञ्जितं—जितं=स्वमहिम्ना निष्फलीकृतं, गरं=कालकूटं, नित्यं=सदा, उद्वहते=धारयते, तुभ्यं=भवते, नमो नमः=पुनः पुनः नमः । प्रकर्षे द्विरुक्तिः ।

चन्द्रपक्षे—भूतिपाण्डुर—भूतिः=जन्म, भूत्या=जन्मना, पाण्डुर=शुभ्र ! गोवाह—गाः=किरणान्, वहति=धारयतीति गोवाहः, तत्सम्बुद्धौ हे गोवाह !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'कर्मण्यण्' इत्यण् । सोम=चन्द्र !, स्वामिन् !, सारङ्गेण=मृगेण, रञ्जितं=लाञ्छितम्, अन्तः=हृदयं, नित्यं=सदा, उद्वहते=धारयते, तुभ्यं नमो नमः । श्लेषालङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३३॥

ज्योत्स्ना—(शिवपक्ष में) हे भस्म के कारण शुभ्र वर्ण वाले ! वृषरूपी वाहन वाले ! उमा के साथ विद्यमान रहने वाले प्रभो ! अत्यन्त उत्कृष्ट होते हुए भी अपनी महानता के कारण निष्फल बना दिये गये कालकूट विष को सदा अपने भीतर धारण करने वाले आपके लिए बारम्बार (मेरा) प्रणाम है ।

(चन्द्रपक्ष में) हे जन्मजात शुभ्र वर्ण वाले ! किरणों को धारण करने वाले सोमदेव ! मृग के द्वारा लाञ्छित अन्तःकरण को निरन्तर धारण करने वाले आपके लिए (मेरा) बार-बार प्रणाम है ॥३३॥

एवं च नातिचिरात्—

क्षुभ्यत्क्षीरसमुद्रसान्द्रसलिलोल्लोलैरिव प्लावय-
ल्लोकं लोचनलोभनः स्मरसुहृज्जातः स चन्द्रोदयः ।
यस्मिन्संभृतवैरदारुणरणप्रारम्भिणो भ्राम्यतः
क्रुद्धोलूककदम्बकस्य पुरतः काकोऽपि हंसायते ॥३४॥

अन्वयः—(एवं च नातिचिरात्) क्षुभ्यत् क्षीरसमुद्रसान्द्रसलिलोल्लोलैः लोकं प्लावयन् इव लोचनलोभनः स्मरसुहृत् सः चन्द्रोदयः जातः; यस्मिन् सम्भृतवैरदारुणरणप्रारम्भिणः भ्राम्यतः, क्रुद्धोलूककदम्बकस्य पुरतः काकः अपि हंसायते ॥३४॥

कल्याणी—क्षुभ्यदिति । (एवम्=अनेन प्रकारेण च, नातिचिरात्=स्वल्पेनैव कालेन) क्षुभ्यत्क्षीरसमुद्रसान्द्रसलिलोल्लोलैः—क्षुभ्यन्=उत्तरङ्गतां गच्छन्, चन्द्रोदयादिति भावः । यः क्षीरसमुद्रः=क्षीरसागरः, तस्य यानि सान्द्राणि=निबिडानि, सलिलानि=जलानि, तेषां लोलैः=चञ्चलैः, उल्लोलैः=महातरङ्गैः, लोकं=जगत्, प्लावयन्निव=जलनिमग्नं कुर्वन्निव, लोचनलोभनः=नयनाकर्षकः, स्मरसुहृत्=कन्दर्पसहायः, सः=एषः, चन्द्रोदयः=इन्दूदयः, जातः=सञ्जातः, यस्मिन्=चन्द्रोदये, सम्भृतवैरदारुणरणप्रारम्भिणः—संभृतं=परिपोषं गतं, वैरं=शत्रुत्वं, तेन दारुणं=भीषणं, रणं=युद्धं, प्रारभते इत्येवंशीलस्य; भ्राम्यतः=सञ्चरतः, क्रुद्धोलूककदम्बकस्य=रुष्टोलूकपक्षिसमूहस्य, पुरतः=अग्रे, काकोऽपि=वायसोऽपि, हंसायते=हंस इवाचरति, तत्सदृशः प्रतीयत इत्यर्थः । प्रवृद्धवैरवशादुलूकाः रात्रौ काकैः सह योद्धुं तान्विष्यन्ति किन्तु चन्द्रकिरणैः श्वेतीकृतांस्तान् काकानपि ते हंसान्मत्वा नाक्रम्यन्तीति भावः । प्रथमपादे उत्प्रेक्षा । उत्तरार्द्धे काकानां स्वकृष्णत्वत्यागपूर्वकं चन्द्रकिरणशुक्लत्वधारणात्तद्गुणालङ्कारः । उभयोर्नैरपेक्ष्येण संसृष्टिः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इस प्रकार बहुत शीघ्र ही; (चन्द्रोदय के कारण) ऊपर की ओर तरङ्गित होते हुए क्षीरसागर के गहरे जल की चञ्चल तरंगों से संसार को जलनिमग्न करते हुए के समान नेत्रों को आकर्षित करने वाला, कामदेव के सहायक चन्द्रमा का उदय हो गया; जिसमें परिपुष्ट वैरभाव के कारण भीषण युद्ध को प्रारम्भ करने वाले, इधर-उधर सञ्चरण करते हुए क्रुद्ध उलूक पक्षियों के समक्ष कौआ भी हंस के समान प्रतीत होता है।

विमर्श—आशय यह है कि उल्लुओं और कौओं का परस्पर दृढ़ बैर है, जिस कारण रात्रि में उल्लू कौवे के साथ लड़ाई करने के लिए उसकी खोज में बराबर निकलता रहता है, लेकिन चन्द्रमा की धवल किरणों से श्वेत दिखाई देने वाले कौओं को भी हंस ही मान कर वह अपने स्वाभाविक शत्रु पर भी आक्रमण नहीं कर पाता ॥३४॥

अपि च—

इच्योतच्चन्दनचारुचन्द्ररुचिभिर्विस्तारिणीभिर्भरा-
ज्जातेयं जगती तथा कथमपि श्वेतायमानद्युतिः।
उन्निद्रो दिनशङ्कया कृतरुतः काको वराकः प्रिया-
मन्विष्यन्पुरतः स्थितामपि यथा चक्रभ्रमं भ्राम्यति ॥३५॥

अन्वयः—इच्योतच्चन्दनचारुभिः विस्तारिणीभिः चन्द्ररुचिभिः इयं जगती भरात् कथमपि तथा श्वेतायमानद्युतिः जाता, यथा वराकः काकः दिनशङ्कया उन्निद्रः कृतरुतः पुरतः स्थितामपि प्रियां अन्विष्यन् चक्रभ्रमं भ्राम्यति ॥३५॥

कल्याणी—इच्योतदिति। इच्योतत्=क्षरत्, चन्दनं=तद्रस इत्यर्थः, तद्वत् चारुभिः=मनोज्ञाभिः, श्वेताभिरित्यर्थः। विस्तारिणीभिः=प्रसृताभिः, चन्द्ररुचिभिः=चन्द्रिकाभिः, इयं=एषा, जगती=पृथ्वी, भरात्=चन्द्रकिरणातिरेकात्, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अनिर्वचनीयप्रकारेणेति भावः। तथा श्वेतायमानद्युतिः=शुभ्रायमानकान्तिः, जाता=अभूत्, यथा वराकः=अनुकम्पनीयः, काकः=वायसः, दिनशङ्कया=दिवसभ्रान्त्या, उन्निद्रः=प्रबुद्धः, कृतरुतश्च=विहितध्वनिश्च, पुरतः=अग्रे, स्थितामपि=अवस्थितामपि, प्रियां=काकीम्, अन्विष्यन्=गवेषयन्, चक्रभ्रमं—चक्रवद्भ्रमः=भ्रमणं यत्र तद्यथा स्यात्तथा, भ्राम्यति=भ्रमणं करोति। चन्द्रकिरणैः श्वेतायमाने लोके दिनभ्रान्त्या वराकः काकः प्रबुद्धः सन् श्वेतायमानां पुरतः स्थितामपि प्रियां प्रत्यभिज्ञातुमशक्नुवन् सक्रन्दनमन्विष्यति चक्रवच्च भ्राम्यतीति भावः। काकस्य रात्रौ दिनभ्रान्त्या भ्रान्तिमदलङ्कारः, काक्याः शौक्ल्यगुणग्रहणात्तद्गुणश्च, तयोः संकरः। 'चन्दनचारु' इत्यत्रोपमा। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी; झरते हुए चन्दन-रस के समान मनोहर फैलती हुई चन्दमा की चन्द्रिका के कारण यह पृथ्वी चन्द्रकिरणों की अधिकता के कारण अनिर्वचनीय रूप से शुभ्र होती हुई कान्ति वाली हो गई। (जिससे) दया करने योग्य बेचारा कौआ दिन निकल आने की भ्रान्ति से (सोते से) जाग कर आवाज करता हुआ सामने ही बैठी हुई अपनी प्रिया की खोज करता हुआ चक्रवत्—गोलाकार घूमने लगता है।

आशय यह है कि चन्द्रमा की धवल चन्द्रिका से समस्त पृथ्वी के धवल-समान हो जाने से कौवे की प्रिया भी धवल वर्ण वाली हो गई, जिस कारण सामने ही उसके स्थित होने पर भी कौआ उसे पहचान नहीं पाता और उसकी खोज में उसे आवाज देता हुआ इधर-उधर चक्कर काटता रहता है ॥३५॥

अपि च—

मुग्धा दुग्धधिया गवां विदधते कुम्भानधो बल्लवाः
कर्णे कैरवशङ्कया कुवलयं कुर्वन्ति कान्ता अपि।
कर्कन्धूफलमुच्चिनोति शबरी मुक्ताफलाकांक्षया
सान्द्रा चन्द्रमसो न कस्य कुरुते चित्तभ्रमं चन्द्रिका ॥३६॥

अन्वयः—मुग्धाः बल्लवाः दुग्धधिया गवाम् अधः कुम्भान् विदधते, कान्ताः अपि कुवलयं कैरवशङ्कया कर्णे कुर्वन्ति, शबरी मुक्ताफलाकांक्षया कर्कन्धू-फलम् उच्चिनोति, चन्द्रमसः सान्द्रा चन्द्रिका कस्य चित्तभ्रमं न कुरुते ॥३६॥

कल्याणी—मुग्धा इति। मुग्धाः=स्वभावेन सरलाः, बल्लवाः=गोपाः; दुग्धधिया=चन्द्रिकां दुग्धं मत्वा, गवामधः=धेनुपयोधराणामधः, कुम्भान्=दोहन-पात्रत्वेन प्रयुज्यमानान्, घटान्, विदधते=कुर्वन्ति, स्थापयन्तीति भावः। कान्ताः=रमण्योऽपि, कुवलयं=नीलकमलं, कैरवशङ्कया=कुमुदभ्रान्त्या, कुमुदं मत्वेत्यर्थः। कर्णे=श्रोत्रप्रदेशे, कुर्वन्ति=धारयन्ति, अवतंसत्वेनेति भावः। शबरी=किराती; मुक्ताफलाकाङ्क्षया=मुक्ताभिलाषेण, मुक्तां मत्वेति भावः। कर्कन्धूफलं=बदरीफलम्, उच्चिनोति=ऊर्द्ध्वंतश्चयनं करोति। चन्द्रमसः=चन्द्रस्य, सान्द्रा=प्रगाढा, चन्द्रिका=ज्योत्स्ना, कस्य=जनस्य, चित्तभ्रमं न कुरुते, सर्वस्यापि चित्तभ्रमं कुरुत इति भावः। भ्रान्तिमदलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३६॥

ज्योत्स्ना—और भी; स्वभावतः सरल गोप-बालक चन्द्रिका को ही दुग्ध समझकर गायों के (थनों के) नीचे घड़ों को रख देते हैं, रमणियाँ भी नीलकमल को ही कैरव—श्वेत कमल समझकर अपने कानों पर (आभूषण के रूप में) धारण कर लेती हैं और शबरी—भीलनी मुक्ताफल की आकांक्षा से अर्थात् मुक्ताफल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझकर बेर के फल को ही ऊपर से चुनने लगती है—तोड़ने लगती है। (इस प्रकार) चन्द्रमा की प्रगाढ़ चाँदनी किसके चित्त को भ्रमित नहीं कर देती ? अर्थात् सबको ही भ्रमित कर देती है ॥३६॥

यत्र च—

मुक्तादाममनोरथेन वनिता गृह्णन्ति वातायने
गोष्ठे गोपवधूर्दधीति मथितुं कुम्भीगतान्वाञ्छति।
उच्चिन्वन्ति च मालतीषु कुसुमश्रद्धालवो मालिकाः
शुभ्रान्विभ्रमकारिणः शशिकरान्पश्यन्न को मुह्यति ॥३७॥

अन्वयः—वनिताः वातायने मुक्तादाममनोरथेन शशिकरान् गृह्णन्ति, गोष्ठे गोपवधूः कुम्भीगतान् (शशिकरान्) 'दधि' इति मत्वा मथितुं वाञ्छति मालतीषु (पतितान् शशिकरान्) कुसुमश्रद्धालवः मालिकाः उच्चिन्वन्ति, विभ्रमकारिणः शुभ्रान् शशिकरान् पश्यन् कः न मुह्यति ॥३७॥

कल्याणी—मुक्तादामेति। वनिताः=ललनाः, वातायने=गवाक्षे, मुक्तादाममनोरथेन=मुक्तामालाकाङ्क्षया, मुक्तामालां मत्वेति भावः। शशिकरान्=चन्द्रकिरणान्, गृह्णन्ति=ग्रहीतुं प्रयतन्त इत्यर्थः। गोष्ठे=गोशालायां, गोपवधूः=गोपाङ्गनाः, कुम्भीगतान्=कलशीगतान्, शशिकिरणान् 'दधि' इति मत्वा, मथितुं=विलोडितुं, वाञ्छति=अभिलषन्ति। मालतीषु=मालतीपादपेषु, पतितान् चन्द्रकिरणान् कुसुमश्रद्धालवः=मालतीकुसुमाभिलाषिण्यः, मालतीपुष्पाणि मत्वेत्यर्थः। मालिकाः=मालिकाङ्गनाः, उच्चिन्वन्ति च=अवचयं कुर्वन्ति च। विभ्रमकारिणः=भ्रान्त्युत्पादकान्, शुभ्रान्=श्वेतान्, शशिकरान्=चन्द्रकिरणान्, पश्यन्=अवलोकयन्, कः=जनः, न, मुह्यति=मूढो जायते, सर्वेऽपि विमूढतां यान्तीति भावः। भ्रान्तिमदलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३७॥

ज्योत्स्ना—और जहाँ पर; वनितायें खिड़कियों में (खड़ी होकर) मुक्तामाला की अभिलाषिणी होकर (आती हुई) चन्द्रकिरणों को पकड़ने का प्रयत्न करने लगती हैं। गोशालों में गोपवधुयें घड़ों में प्रविष्ट हुई चन्दकिरणों को ही दधि समझकर उसे मथने की इच्छा करने लगती हैं (और) मालती के वृक्षों पर पड़ रही चन्द्रकिरणों को मालती-पुष्पों को चाहने वाली मालिनियाँ (मालती पुष्प समझकर) ऊपर से चुनने लगती हैं—तोड़ने लगती हैं। (इस प्रकार) भ्रम को उत्पन्न करने वाले चन्द्रकिरणों को देखता हुआ कौन व्यक्ति मोहित नहीं हो जाता ? अर्थात् सभी मोहित हो जाते हैं ॥३७॥

अपि च—

किं कर्पूरकणाः स्रवन्ति वियतः किं वा मनोनन्दिनो
ऽमन्दाश्चन्दनबिन्दवः किमु सुधानिष्यन्दधारा इमाः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्थं भ्रान्तिममी जनस्य जनयन्त्यङ्गे लगन्तः परा-
मिन्दोः कुन्दविकासिकुड्मलदलस्रक्सुन्दरा रश्मयः ॥३८॥

अन्वयः— वियतः कर्पूरकणाः स्रवन्ति किम् ? वा अमन्दाः मनोनन्दिनः चन्दनबिन्दवः (स्रवन्ति किम् ?) सुधानिष्यन्दधाराः इमाः (सन्ति) किमु ? इत्थं जनस्य अङ्गे लगन्तः अमी कुन्दविकासिकुड्मलदलस्रक्सुन्दराः इन्दोः रश्मयः परां भ्रान्तिं जनयन्ति ॥३८॥

कल्याणी—किमिति । वियतः=गगनमण्डलात्, कर्पूरकणाः=कर्पूरक्षोदाः, स्रवन्ति=च्यवन्ते किम् ? वा=अथवा, अमन्दाः=अनल्पाः, मनोनन्दिनः=चित्ताह्लादकाः, चन्दनबिन्दवः=चन्दनरसकणाः, च्यवन्ते किम् ? अथवा सुधानिष्यन्दधाराः=अमृतरसप्रवाहाः, इमाः=एताः, सन्ति किमु ? इत्थम्=अनेन प्रकारेण, जनस्य=लोकस्य, अङ्गे=शरीरावयवे, लगन्तः=निषजन्तः, अमी=एते, कुन्दविकासिकुड्मलदलस्रक्—कुन्दस्य=माध्यस्य, विकासिनां=विकासशीलानां, कुड्मलदलानां=कलिकापत्राणां, स्रगिव=मालेव, सुन्दराः=मनोज्ञाः, इन्दोः=चन्द्रस्य, रश्मयः=किरणाः, पराम्=उत्कृष्टां, भ्रान्तिं=संशयं, जनयन्ति=समुत्पादयन्ति । अत्र भ्रान्तिशब्दः कस्मिंश्चित्पदार्थेऽन्यस्य पदार्थस्यानिश्चयात्मकबुद्धेर्वाचकस्तत् सन्देहालङ्कार एव न हि भ्रान्तिमानिति बोध्यम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३८॥

ज्योत्स्ना—और भी; क्या आकाश से कपूर के कण चू रहे हैं ? अथवा मन को आह्लादित करने वाली चन्दन-रस की बूंदे अत्यधिक मात्रा में चू रही हैं ? अथवा क्या यह कोई अमृतरस का प्रवाह है ? इस प्रकार लोगों के शरीर के विभिन्न अंगों को स्पर्श करती हुई विकसित हो रही कुन्दकलियों की माला के समान रमणीय ये चन्द्रकिरणें अत्यन्त उत्कृष्ट भ्रान्ति को उत्पन्न कर रही हैं अर्थात् प्रत्येक वस्तु को अपनी ज्योत्स्ना से सन्देहास्पद बना दे रही हैं ॥३८॥

इति जनितमुदिन्दोः सिन्दुवारस्रगाभं
किरति किरणजालं मण्डले दिङ्मुखेषु ।
हरचरणसरोजद्वन्द्वमाराधयन्ती
शुचिकुशशयनीये साऽथ निद्रां जगाम ॥३९॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां
हरचरणसरोजाङ्कायां द्वितीय उच्छ्वासः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—इति इन्दोः मण्डले दिङ्मुखेषु जनितमुद् सिन्दुवारस्रगाभं किरण-जालं किरति (सति) अथ सा हरचरणसरोजद्वन्द्वम् आराधयन्ती शुचिकुशशयनीये निद्रां जगाम ॥३९॥

कल्याणी—इतीति । इति=अमुना प्रकारेण, इन्दोर्मण्डले=चन्द्रस्य बिम्बे, दिङ्मुखेषु=दिशामग्रभागेषु, जनितमुद् - जनिता=समुत्पादिता; मुद्=आनन्दः येन तत्, सिन्दुवारस्रगाभं—सिन्दुवारस्रजः=निर्गुण्डीकुसुममालायाः, आभा=कान्तिरिवाभा यस्य तत्; किरणजालं=रश्मिपटलं, किरति=प्रसारयति सति, अथ=अनन्तरं, सा=राज्ञी, हरचरणसरोजद्वन्द्वम्=शिवपादपद्मयुगलम्, आराधयन्ती=ध्यायन्ती, शुचिकुश-शयनीये=पवित्रदर्भशय्यायां, निद्रां जगाम=अस्वपत् । 'सिन्दुवारस्रगाभम्' इत्यत्रोपमा । मालिनी वृत्तम् ॥३९॥

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां द्वितीयोच्छ्वासः ।

ज्योत्स्ना—इस प्रकार चन्द्रबिम्ब द्वारा समस्त दिशाओं में आनन्द को उत्पन्न करने वाली, सिन्दुवार-(निर्गुण्डी)-पुष्पों की माला-सदृश कान्ति के समान कान्ति वाली किरणों को फैला देने के पश्चात् वह रानी प्रियंगुमञ्जरी भगवान् शंकर के चरणकमलों की आराधना करती हुई—ध्यान करती हुई पवित्र कुशों की शय्या पर निद्रा को प्राप्त हुई अर्थात् सो गई ॥३९॥

इस प्रकार श्रीनिवासशर्माकृत 'ज्योत्स्ना' नामक नलचम्पू काव्य की हिन्दी व्याख्या में द्वितीय उच्छ्वास समाप्त हुआ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तृतीयः उच्छ्वासः

अथ क्रमेण रजतकुम्भमम्भोभरणार्थमिवेन्दुमण्डलमादाय पश्चिमाम्भोनिधिपुलिनमनुसरन्त्यां तरुणकपोतकन्धरारोमराजिराजिन्यां रजन्याम्, अखिलकमलखण्डकमलिनीनां विनिद्रायमाणकमलकुड्मलविलोचनेषु कज्जलरेखास्विवोल्लसन्तीषु भ्रमरराजिषु, राजीवराजिपुञ्जनिकुञ्जे शिञ्जानमञ्जीरमञ्जुलमुन्नदत्सु शरद्बलाहकवलक्षपक्षविक्षेपपवनतरलिततरुणतामरसेषु दीर्घिकावतंसेषु हंसेषु, क्रेङ्कारयति च चक्रवाकमिथुनमेलकमङ्गलमृदङ्ग इव रौप्यघर्घररवसरसं सारसकुले, अवश्यायजलशिशिरशीकरिणि मन्दान्दोलितविनिद्रद्रुममञ्जरीरजःकणकषायिते तमःसर्पसंदष्टोज्जीवितजगन्निश्वासायमाने प्रस्खलति प्रभातसुरतश्रमखिन्नसुन्दरीकुचमण्डले मरुति, मनोहारिहारीतहरितहये हरति तिमिरपटलपटीं गगनलक्ष्म्याः करपरामृष्टपयोधरे रागवति सवितरि, मृगमदमिलितबहलकुङ्कुममण्डनमञ्जरीभिरिव पिञ्जरिते पुरन्दरदिङ्मुखे सुखप्रसुप्ता सा स्वप्नमद्राक्षीत् ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, क्रमेण=क्रमशः, तरुणकपोतकन्धरारोमराजिराजिन्यां—तरुणकपोतस्य=वयस्कपारावतस्य, या कन्धरा=ग्रीवा, तस्याः रोमराजिरिव=रोमपंक्तिरिव, राजिन्यां=सुशोभिन्यां, रजन्यां=निशायाम्, अम्भोभरणार्थमिव=जलानयनार्थमिव, इन्दुमण्डलं=चन्द्रबिम्बं, तद्रूपमिति भावः। रजतकुम्भं=रौप्यकलशम्, आदाय=गृहीत्वा, पश्चिमाम्भोनिधिपुलिनं=पश्चिमसमुद्रतटम्, अनुसरन्त्याम्=अनुगच्छन्त्यां सत्यां, अखिलकमलखण्डे=समस्तकमलवने, कमलिनीनां=पद्मिनीनां, विनिद्रायमाणा=विकसन्त उन्मील्यमानाश्च, कमलकुड्मलाः=पद्मकोरकान्येव विलोचनानि=नेत्राणि, तेषु कज्जलरेखास्विव=अञ्जनलेखास्विव; भ्रमरराजिषु=अलिपंक्तिषु, उल्लसन्तीषु=विलसन्तीषु सतीषु; रूपकोपमयोः संकरः। शरद्बलाहकवलक्षानां=शारदमेघधवलानां, पक्षाणां=पक्षतीनां; यः विक्षेपः=ऊर्ध्वमधश्च नयनं, तस्य पवनेन=तज्जनितवायुना, तरलितानि=चञ्चलीकृतानि, तरुणानि=विकसितानि, तामरसानि=कमलानि यैस्तेषु दीर्घिकावतंसेषु=वापीभूषणेषु, हंसेषु=मरालेषु, राजीवराजिपुञ्जनिकुञ्जे=कमलश्रेणिसमूहमण्डपे; शिञ्जानमञ्जीरमञ्जुलं=शब्दायमाननूपुरमधुरम्, उन्नदत्सु=ध्वनिं कुर्वत्सु, चक्रवाकमिथुनस्य=चक्रवाकपक्षियुगलस्य, मेल एव मेलकः=संयोगः तत्र मङ्गलमृदङ्ग इव=मङ्गलसूचकमुरज इव, सारसकुले=सारसपक्षिसमूहे, रौप्यस्य=रजतनिर्मितस्य,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घर्घरस्य=वाद्यविशेषस्य, रवः=ध्वनिः, तद्वत् सरसं=कर्णप्रियं यथा तथा, क्रेङ्कारयति=क्रेमित्याकारको ध्वनिः=क्रेङ्कारः, तं कुर्वति सति च, अवश्यायजलस्य=तुषारजलस्य, ये शिशिरशीकराः=शीतलकणाः, तद्वति मन्दम्=अल्पम्, आन्दोलितानां=कम्पितानां, विनिद्राणां=विकसितानां, द्रुममञ्जरीणां=तरुपुष्पगुच्छानां, रजःकणैः=परागकणैः, कषायिते=सुगन्धिते, तमः=अन्धकार एव सर्पः, कृष्णसर्प इत्यर्थः। तेनादौ संदष्टं पश्चादुज्जीवितं च यज्जगत् तस्य निश्वास इवाचरति निश्वासायमानस्तस्मिन्; रूपकोपमयोः संकरः। मरुति=वायौ, प्रभाते=प्रातःकाले, यत् सुरतं=सम्भोगः, तस्य श्रमेण=खेदेन, खिन्नानां=परिश्रान्तानां, सुन्दरीणां=रमणीनां; कुचमण्डले=पयोधरचक्रवाले, प्रस्खलति=प्रस्खलनपूर्वकं चलति सति, मनोहारी=मनोज्ञः, यः हारीतः=पक्षिविशेषः, तद्वत् हरिता=हरिद्वर्णा, हयाः=अश्वाः यस्य तस्मिन्, गगनलक्ष्म्याः=आकाशश्रियाः, तिमिरपटलम्=अन्धकारसमूह एव पटी=अवगुण्ठनं वस्त्रं वा, हरति=अपनयति सति, करैः=किरणैः पाणिभिश्च, परामृष्टौ=संस्पृष्टौ, पयोधरौ=मेघौ स्तनौ च, येन तस्मिन्, सवितरि=सूर्ये, रागवति=आरक्ते आसक्ते च सति [अन्योऽपि रागवान् किल पटीमुत्सार्य कराभ्यां स्तनौ परामृशतीति सवितरि नायकव्यवहारसमारोपात् समासोक्तिः, सा च श्लेषोत्था]; पुरन्दरदिङ्मुखे—पुरन्दरस्य=इन्द्रस्य, या दिक्=प्राचीत्यर्थः, तस्याः मुखे; मृगमदेन=कस्तूरिकाद्रवेण, मिलितं=मिश्रितं, बहलं=प्रचुरं, यत् कुङ्कुमं=केसरं, तन्मण्डनमञ्जरीभिरिव=तत्कृतशृङ्गाराङ्कुरैरिव, पिञ्जरिते=पीत-रक्तवर्णे, जाते सति [तादृशे उषःकाले] सुखप्रसुप्ता=सुखेन प्रसुप्ता, शयानेत्यर्थः। सा=प्रियङ्गुमञ्जरी, स्वप्नम् अद्राक्षीत्=दृष्टवती॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर क्रमशः तरुण कपोतों के कन्धों की रोमपंक्ति के समान सुशोभित रात्रि में जल भरने के लिए मानों चन्द्रबिम्बरूप चाँदी के घड़ों को लेकर पश्चिमी समुद्र के तट का अनुसरण किये जाने पर, समस्त कमलवनों में कमलिनियों के विकसित हो रहे कमलकुड्मलरूपी नयनों में कज्जलरेखा के समान भ्रमरपंक्तियों के उल्लसित हो जाने पर, शरत्कालीन मेघों के धवल पंखों के विक्षेप (ऊपर-नीचे चलाना) से उत्पन्न वायु के द्वारा चञ्चल बनाये गये नूतन विकसित कमलों वाली दीर्घिकाओं के आभूषणस्वरूप हंसों के द्वारा कमलपंक्तियों वाले निकुञ्जों में बजते हुए नूपुरों के समान शब्द करने पर, चक्रवाक पक्षियुगल को मिलाने के लिए मंगल-सूचक मृदंग के समान सारस पक्षियों द्वारा रजतनिर्मित घर्घरी (झाँझ) की ध्वनि के समान कानों को प्रिय लगने वाली क्रेंकार (कें-कें) ध्वनि किये जाने पर, तुषार-(ओस)-जल के शीतल कणों के समान मन्द-मन्द कम्पायमान विकसित वृक्ष-पुष्पगुच्छों के रजःकणों से सुगन्धित अन्धकाररूपी सर्प के द्वारा पूर्व में दष्ट (काटे गये) और बाद में जीवित किये गये जगत् के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निःश्वास के समान वायु के प्रातःकालीन सम्भोग के श्रम से क्लान्त रमणियों को स्तनमण्डलों पर प्रस्खलित होने पर—धीरे-धीरे चलने पर, मनोहारी हारीत पक्षी के समान हरे रंग के घोड़ों वाले भगवान् सूर्य के आकाशलक्ष्मी के अन्धकार-समूहरूपी वस्त्र को हटाते हुए किरणरूपी हाथों से मेघरूपी स्तनों का स्पर्श करने के कारण रक्तवर्ण के हो जाने पर अथवा रागयुक्त हो जाने पर, पूर्व दिशा के मुख के कस्तूरी-रस मिश्रित प्रचुर कुंकुमों से मण्डित शृंगार की मञ्जरियों के समान पिञ्जरित (पीत एवं रक्त वर्ण के) हो जाने पर सुखपूर्वक सोई हुई उस भीमप्रिया प्रियंगुमञ्जरी ने स्वप्न देखा ॥

किल सकलसुरासुरशिरःशेखरीकृतचरणकमलः, कमलाधिवासेन ब्रह्मणा नारायणेन च रचितरुचिरस्तुतिः कृशानुरूपेण ललाटलोचनेन चन्द्रमसा च भासमानः-विकचं कर्णे कुवलयं करे कपालं च कलयन्, अहिंसाटोपं मनसा शिरसा च बिभ्राणः प्रोज्ज्वलन्नयनार्चिश्चिताभस्म च समुद्वहन्, अधिकङ्कालेन स्कन्धेन कन्धरार्धेन च विराजमानः, सालसदृशं भुजवनं भवानीं च दधानः, सर्वदानववारं त्रिशूलं मन्दाकिनीं च धारयन्, देवो दर्पितदनुजेन्द्रनिद्राहरो हरश्चन्द्रमण्डलादवतीर्य 'पुत्रि प्रियंगुमञ्जरि'! मञ्जरीमिमां गृहाण। मा भैषीः। प्रत्युषसि मन्नियोगाद्दमनकनामा महामुनिरेष्यति स तेऽनुग्रहं करिष्यति, इत्यभिधाय स्वश्रवणशिखरान्तरादमन्दमकरन्दस्यन्दसुन्दरामोदमाद्यन्मधुकररवरमणीयां पारिजातमञ्जरीमदात् ॥

कल्याणी—किलेति। किलेति वार्तायाम्। सकलसुरासुराणां=समस्तदेवदानवानां, यानि शिरांसि=मूर्धानः, तेषां शेखरीकृते=भूषणीकृते, चरणकमले=पादपद्मे यस्य सः। कमलाधिवासेन—कमलेऽधिवासः=निवासः यस्य तेन ब्रह्मणा=विधात्रा, कमलायाः=श्रियाः अधिवासः=निवासः, तेन नारायणेन=विष्णुना च; रचिता=कृता, रुचिरा=मनोज्ञा, स्तुतिः—स्तोत्रं यस्य सः। कृशानुरूपेण=वह्निस्वरूपेण; ललाटलोचनेन=भालनेत्रेण, कृशेन=क्षीणेन, अनुगतरूपेण=अविनाभावसंबद्धमूर्तिना; चन्द्रमसा=चन्द्रेण च, भासमानः=विलसन्, कर्णे=श्रोत्रप्रदेशे, विकचं=विकसितं, कुवलयं=नीलोत्पलं, करे=हस्ते, विकचं—विगताः कचाः=केशाः यस्मात्तादृशं; कपालं=शिरोऽस्थि, कलयन्=धारयन्, मनसा=चित्तेन, अहिंसाऽऽटोपम्—अहिंसाया आटोपम्=आवेशम्, शिरसा च=मूर्ध्ना च [अहि—साटोपम्] साटोपं=सस्पन्दम्; अहिं=सर्पं, बिभ्राणः=धारयन्, प्रोज्ज्वलत्=दीप्यमानं, नयनार्चिः=तृतीयनेत्रदीप्ति, प्रोज्ज्वलत्=प्रकर्षेण उज्ज्वलं चिताभस्म च समुद्वहन्=बिभ्राणः, अधिकङ्कालम्—अधिगतं=गृहीतं, कङ्कालं=शरीरास्थि अर्थात् खट्वाङ्गं येन तादृशेन, स्कन्धेन=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंसेन, [अधिकं-कालेन] कालेन=कालकूटेन सह कन्धरार्धेन=ग्रीवार्धेन च अधिकं विराजमानः=शोभमानः, साल-सदृशम्=सालतरुतुल्यं, प्रांशुत्वादिति भावः। भुजवनं=बाहुसमूहं; सालस-दृशम्—सालसे=लीलामन्थरे, दृशौ=नेत्रे यस्यास्तां भवानीं=पार्वतीं च, दधानः=बिभ्राणः, सर्व-दानव-वारम्—सर्वान्=सकलान्, दानवान्=दैत्यान्, वारयति=अपगमयतीति तादृशं, त्रिशूलं; सर्वदा-नववारम् – सर्वदा=नित्यं, नवा=नूतना, वाः=पयः यस्यास्तादृशीं मन्दाकिनीं=गङ्गां च धारयन्, देवः=भगवान्, दर्पितानां=गर्वितानां, दनुजेन्द्राणां=दानववीराणां, निद्रां हरति=अपनयतीति तथोक्तः, हरः=शिवः, चन्द्रमण्डलात्=विधुमण्डलमध्यात्, अवतीर्य=अवतरणं कृत्वा, 'पुत्रि=वत्से ! प्रियङ्गुमञ्जरि ! इमां=प्रदीयमानां, मञ्जरीं, गृहाण=आदत्स्व। मा भैषीः=भयं मा कुरु। प्रत्युषसि=प्रातःकाले, मन्नियोगात्=ममादेशात्, दमनकनामा महामुनिः, एष्यति=आगमिष्यति, सः=मुनिः; ते=त्वयि, अनुग्रहं=कृपां, करिष्यति' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, स्वश्रवणशिखरान्तरात्=स्वकीयकर्णाग्रभागप्रदेशात्, अमन्दस्य=प्रचुरस्य, मकरन्दस्यन्दस्य=पुष्परसप्रवाहस्य, सुन्दरेण=उत्कृष्टेन, आमोदेन=सौरभेण, माद्यतां=मत्ततां गच्छतां, मधुकराणां=मधुपानां, रवेण=कलगुञ्जनेन, रमणीयां==मनोज्ञां, पारिजातस्य=पारिजातनाम्नो देवतरोः, मञ्जरीम्, अदात्=दत्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—समस्त देव-दानवों के मस्तकों के भूषणस्वरूप चरणकमलों वाले, कमल पर निवास करने वाले ब्रह्मा और लक्ष्मी में निवास करनेवाले विष्णु द्वारा रुचिकर स्तुति किये जाने वाले, अग्निस्वरूप ललाट पर स्थित नयन एवं अनुरूप—निरन्तर अपने से सम्बद्ध कृश चन्द्रमा से देदीप्यमान, कानों पर विकसित नीलकमल तथा हाथों में कच—केशरहित कपाल को धारण करने वाले, मन में अहिंसा का आवेश एवं मस्तक पर स्पन्दन करते हुए सर्प को धारण करने वाले, दीप्यमान (तृतीय) नेत्र की कान्ति एवं अत्यन्त उज्ज्वल चिता के भस्म को धारण करने वाले, कन्धे पर लिये हुए कङ्काल तथा आधे गले में कालकूट विष से शोभायमान, साल वृक्ष के समान बाहुओं एवं सालस—विलासपूर्ण नयनों वाली पार्वती को धारण करने वाले, समस्त दैत्यों का निवारण करने वाले त्रिशूल और सदा-सर्वदा नूतन जल वाली मन्दाकिनी को धारण करने वाले, अहंकारयुक्त दानववीरों की निद्रा को दूर करने वाले भगवान् शंकर चन्द्रमण्डल से उतर कर "पुत्रि प्रियंगुमंजरि ! इस मंजरी को ग्रहण करो। डरो मत। प्रातःकाल हमारे आदेश से दमनक नाम के महर्षि (तुम्हारे पास) आयेंगे, वे तुम्हारे ऊपर कृपा करेंगे।"—इस प्रकार कहकर अपने कान के ऊपर से प्रचुर मकरन्द-प्रवाह के कारण उत्कृष्ट सुगन्ध से मत्त भ्रमरों के कलरव से रमणीय पारिजात नामक देववृक्ष की मंजरी को दिया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सापि 'प्रसादोऽयम्' इत्यभिधाय स्वप्न एव प्रणामपर्यस्तमस्तका स्तुतिमकरोत् ॥

कल्याणी—सापीति। सा अपि=प्रियङ्गुमञ्जर्यपि, 'प्रसादोऽयम्=एष भगवतः प्रसादोऽस्ति' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, स्वप्न एव=निद्रायामेव, प्रणामेन=नमस्कारेण, पर्यस्तम्=अवनमितं, मस्तकं=शिरो यया सा, स्तुतिं=प्रार्थनाम्, अकरोत्=कृतवान् ॥

ज्योत्स्ना—उस प्रियंगुमञ्जरी ने भी "यह (भगवन् का) प्रसाद है"—इस प्रकार कहकर स्वप्नावस्था में ही प्रणाम के द्वारा नत मस्तक वाली होकर स्तुति की ॥

तुभ्यं नमो नमल्लोकशोकसंतापहारिणे।
व्यर्थीकृतान्धकारातिदम्भारम्भाय शम्भवे ॥१॥

अन्वयः—नमल्लोकशोकसन्तापहारिणे व्यर्थीकृतान्धकारातिदम्भारम्भाय शम्भवे तुभ्यं नमः (अस्तु) ॥१॥

कल्याणी—तुभ्यमिति। नमल्लोकशोकसंतापहारिणे—नमतां=प्रणामं कुर्वतां, लोकानां=जनानां, शोकजनितसन्तापं=क्लेशं, हरति=नाशयतीत्येवंशीलाय। व्यर्थीकृतान्धकारातिदम्भारम्भाय—व्यर्थीकृतः=निष्फलीकृतः, अन्धकस्य=अन्धकनाम्नः अरातेः=वैरिणः, दम्भारम्भः=अहंकारपूर्णप्रयासः येन तस्मै, शम्भवे=शङ्कराय, तुभ्यं=ते, नमः=प्रणामः (अस्तु)। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१॥

ज्योत्स्ना—प्रणाम करते हुए लोगों के शोकजनित सन्ताप का हरण (विनाश) करने वाले, अन्धकनामक शत्रु के अहंकारपूर्ण प्रयास को निष्फल करने वाले आप (भगवान्) शिव के लिए नमस्कार है ॥१॥

विभो विभूतिसम्पन्न पन्नगेन्द्रविभूषण।
नमो नमोघसंकल्प तुभ्यमभ्यन्तरात्मने ॥२॥

अन्वयः—विभो! विभूतिभूषणसम्पन्न! पन्नगेन्द्रविभूषण! नमोघसङ्कल्प! अभ्यन्तरात्मने तुभ्यं नमः ॥२॥

कल्याणी—विभो इति। विभो=सर्वव्यापिन्! विभूतिभूषणसम्पन्न—विशेषेण भूत्या=भस्मना, यद्वा चतुर्दशभुवनाधिपत्यरूपया विभूत्या सम्पन्न! पन्नगेन्द्रः=सर्पराजो वासुकिः विभूषणं यस्य तत्सम्बुद्धौ तथोक्त!, नमोघसङ्कल्प—मोघः=निष्फलः, सङ्कल्पः=प्रतिज्ञा यस्य स मोघसङ्कल्पः, न मोघसंकल्प!, अभ्यन्तरात्मने=अन्तरात्मस्वरूपाय, तुभ्यं=भवते, नमः=प्रणामः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—हे सर्वव्यापिन् ! हे भस्म से सम्पन्न ! अथवा हे चतुर्दश भुवनों के आधिपत्यरूपी विभूति से सम्पन्न ! हे सर्पराज वासुकिरूप भूषण वाले ! हे अमोघ संकल्प वाले ! अर्थात् अपनी प्रतिज्ञा को निष्फल न होने देने वाले ! अन्तरात्मास्वरूप आपको नमस्कार है ॥२॥

अत्रान्तरे तरणिकोमलकान्तिभिन्न-
भास्वत्सरोजदलदीर्घविलोचनायाः ।
तस्याः प्रबोधमकरोद्रजनीविराम-
यामावसानमृदुमङ्गलतूर्यनादः ॥३॥

अन्वयः—अत्रान्तरे रजनीविरामयामावसानमृदुमङ्गलतूर्यनादः तरणिकोमलकान्तिभिन्नभास्वत्सरोजदलदीर्घविलोचनायाः तस्याः प्रबोधम् अकरोत् ॥३॥

कल्याणी—अत्रान्तर इति । अत्रान्तरे=एतस्मिन्नेवान्तरे, रजनीविरामयामावसानमृदुमङ्गलतूर्यनादः—रजन्याः=निशायाः, विरामः—समाप्तिः, तस्य यः यामः=प्रहरः, तस्य अवसाने=अन्ते, मृदुलः=मधुरः, मङ्गलतूर्यनादः=मङ्गलसूचकतूर्यस्य वाद्यविशेषस्य ध्वनिः, निशावसानबोधकतूर्यध्वनिरिति भावः । तरणिकोमलकान्तिभिन्नभास्वत्सरोजदलदीर्घविलोचनायाः—तरणेः=सूर्यस्य, कोमलया=मृदुलया, उषःकालसत्त्वादिति भावः । कान्त्या=प्रभया, भिन्नस्य=विकसितस्य, भास्वतः=कान्तिमतः, सरोजस्य=कमलस्य, दले=पत्रे इव दीर्घे=आयते, विलोचने=नेत्रे यस्यास्तथोक्तायाः, तस्याः, प्रियङ्गुमञ्जर्याः, प्रबोधं=जागरणम्, अकरोत्=चकार । कर्णागतेन निशावसानसूचकमङ्गलतूर्यनादेन सा प्रियङ्गुमञ्जरी प्रबोधितेति भावः । वसन्ततिलकं वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः' । इति ॥३॥

ज्योत्स्ना—इसी बीच रात्रि की समाप्ति वाले प्रहर अर्थात् अन्तिम प्रहर के अन्त में मङ्गलसूचक मधुर वाद्यध्वनि ने सूर्य की (प्रातःकालीन) कोमल कान्ति से विकसित दीप्तिमान कमलदल के समान बड़ी-बड़ी आँखों वाली उस प्रियंगुमञ्जरी को प्रबुद्ध कर दिया अर्थात् जगा दिया ।

आशय यह है कि प्रियंगुमञ्जरी का स्वप्न रात्रि के अन्तिम प्रहर का था और जैसे ही उसके स्वप्न की समाप्ति हुई वैसे ही निद्रा के आगोश में निमग्न राजकुलों को प्रातःकाल होने की सूचना देने वाली तुरही बज उठी; जिसको सुनकर वह स्वप्न की समाप्ति के साथ ही जाग पड़ी ॥३॥

क्रमेण च प्राच्यां सिच्यमानायामिव बहलकुसुम्भाम्भःकुम्भैः ककुभि, प्रभवति तारकोच्छेदनाय सुकुमारे रश्मिजाले, पूर्वाचलस्थलीमधिरोहति जगत्प्रबोधप्रारम्भमङ्गलकलशेंऽशुमालिमण्डले, ताण्डवाडम्बरिणि पुण्डरीक-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खण्डे, हिण्डमानासु दीर्घिकामण्डनमुण्डमालासु कारण्डवमण्डलीषु, विश्राम्यत्सु श्रवणपुटेषु हृदयानन्दिनि वन्दिवृन्दारकवृन्दवन्दनारम्भरवे, रणयत्सु वीणावेणुकोणान्वैणिकवैणविकेषु, कण्ठकुहरप्रेङ्खोलनालङ्कारकुशले तारतरं गायति ग्रामरागं गायनजने, जाते जरज्जपाप्रसूनभिन्नस्फुटस्फाटिककान्तिसमप्रभे प्रभातसमये, सा समुत्थाय भूत्वा शुचिर्विकचनवनलिनगर्भमर्घाञ्जलिमवकीर्य भगवतः सवितुः स्तुतिमकरोत् ॥

कल्याणी—क्रमेणेति । क्रमेण=क्रमशः, च=तथा बहलकुसुमाम्भकुम्भैः—बहलं=प्रचुरं, कुसुमाम्भः=केसरजलं येषु तादृशैः कुम्भैः=घटैः, प्राच्यां=पूर्वस्यां, ककुभि=दिशि, सिच्यमानायामिव=आर्द्रीक्रियमाणायामिव, उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । सुकुमारे=कोमले, पक्षे—कुमारे=कार्त्तिकेये, रश्मिजाले=किरणसमूहे, तारकोच्छेदनाय—तारकाणां=नक्षत्राणाम्, उच्छेदनाय=विलोपाय, पक्षे—तारकासुरविनाशाय, प्रभवति=प्रकटति, यथा कुमारस्तारकासुरोच्छेदनाय प्राकटत्तथैव नक्षत्राणामुच्छित्तये रश्मिजाले प्रकटति सतीति भावः । शब्दश्लेषमूलकं रूपकम् । जगतः=लोकस्य, प्रबोधप्रारम्भः=जागरणारम्भ एव मङ्गलं=मङ्गलकार्यं, तदर्थं कलशे=कलशरूपे, अंशुमालिमण्डले=सूर्यमण्डले, पूर्वाचलस्थलीम्=उदयगिरिप्रदेशम्, अधिरोहति=आरोहणं कुर्वति सति, पुण्डरीकखण्डे=कमलवने, ताण्डवाडम्बरिणि—ताण्डवस्य=उद्धतनृत्यस्य, आडम्बरः=प्रदर्शनमस्त्यस्येति तस्मिन्, ताण्डवमिव कुर्वति सतीति भावः । दीर्घिका=वापी, तस्य मण्डने=मण्डनविधौ, मुण्डमालासु=मुण्डमालारूपासु, कारण्डवाः=जलपक्षिविशेषाः तेषां मण्डलीषु=समूहेषु, हिण्डमानासु=दोलयमानासु, हृदयानन्दिनि=हृदयानन्ददायिनि, वन्दिवृन्दारकवृन्दस्य=वैतालिकश्रेष्ठसमूहस्य, वन्दनारम्भरवे=स्तुतिपाठध्वनौ, श्रवणपुटेषु=कर्णपुटेषु, विश्राम्यत्सु=विश्रामं कुर्वत्सु, वैणिकाः=वीणावादकाः, वैणविकाः=वेणुवादकाश्च, तेषु वीणावेणुकोणान्=वीणानां वेणूनां चैकदेशान्, रणयत्सु=वादयत्सु, कण्ठकुहरस्य=गलविवरस्य, प्रेङ्खोलने=स्वरारोहावरोहे, अलंकारेषु=मुद्रितविवृतानुनासिकादिषु च, कुशले=निपुणे, गायनजने=गायकवृन्दे, ग्रामरागं=पञ्चमं, तारतरम्=अत्युच्चैः, गायति=गानं कुर्वति सति, जरत्=जीर्णं, यज्जपाप्रसूनं=जपाकुसुमं, तेन भिन्ना=प्रतिबिम्बिता, स्फुटा=विकसिता, या स्फाटिककान्तिः=स्फटिकस्याभा, तत्समा=तत्सदृशी, प्रभा=कान्तिः,यस्य तादृशे प्रभातसमये=प्रत्यूषकाले, जाते=सञ्जाते, उपमाऽलङ्कारः । सा=प्रियङ्गुमञ्जरी, उत्थाय शयनादिति भावः । शुचिः=पवित्रा भूत्वा, विकचं=विकसितं, नवं=नूतनं नलिनं=कमलं, गर्भे=मध्यभागे यस्य तादृशम्, अर्घाञ्जलिम्, अवकीर्य=समर्प्य, दत्त्वेत्यर्थः । भगवतः=देवस्य, सवितुः=सूर्यस्य, स्तुतिं=वन्दनाम्, अकरोत्=कृतवती ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और क्रमशः प्रचुर केसरमिश्रित जलवाले घड़ों से पूर्व दिशा को सिञ्चित करते हुए के समान, तारकासुर के उच्छेदनहेतु प्रकट हुए कुमार कार्तिकेय के समान ही (आकाशस्थित) तारागणों के उच्छेदन—समाप्ति के लिए अत्यन्त कोमल किरणों के प्रवृत्त हो जाने पर, संसार को जागृत करने रूपी मंगलकार्य को प्रारम्भ करने के लिए कलश-रूपधारी भगवान् अंशुमालि—सूर्य के उदयगिरि पर आरोहित हो जाने (चढ़ जाने) पर, कमलवनों द्वारा उद्धत नृत्य की स्थिति प्रदर्शित किये जाने पर, दीर्घिकाओं (सरोवरों) को अलंकृत करने हेतु मुण्डमालारूप कारण्डव पक्षि-समूहों के दोलायमान होने पर, हृदय को आनन्द प्रदान करने वाली श्रेष्ठ वैतालिकों द्वारा की जा रही स्तुतिपाठरूपी ध्वनि के कर्णपुटकों में जाकर विश्रान्त हो जाने पर अर्थात् वैतालिकों द्वारा की जा रही आनन्ददायिनी स्तुतिध्वनि कान में सुनाई देनी बन्द हो जाने पर, वीणा तथा वेणु—वंशीवादकों द्वारा वीणा और वंशी को बजाये जाने पर, (स्वरों के आरोहावरोह के कारण) कण्ठकुहर—गले को कम्पायनमान करते हुए अलंकारों (मुद्रित-विवृत-अनुनासिकादि) को निकालने में निपुण गायकों द्वारा पञ्चम राग का उच्च स्वर से गान करने पर, जीर्ण (पुराने) जपापुष्प (अड़हुल-पुष्प) से प्रतिबिम्बित स्फुटित हो रही स्फटिक मणि की कान्ति के समान कान्ति वाले प्रभात—प्रातःकाल के हो जाने पर उस प्रियंगुमञ्जरी ने उठकर (स्नानादि के द्वारा) पवित्र होकर नूतन विकसित कमलों की अर्घ्यरूपी अञ्जलि समर्पित करते हुए भगवान् सूर्यदेव की स्तुति की ॥

वासरश्रीमहावल्लीपल्लवाकारधारिणः ।
जयन्ति प्रथमारम्भसंभवा भास्वदंशवः ॥४॥

अन्वयः—वासरश्रीमहावल्लीपल्लवाकारधारिणः प्रथमारम्भसम्भवा भास्वदंशवः जयन्ति ॥४॥

कल्याणी—वासरेति। वासरश्रीमहावल्लीपल्लवाकारधारिणः—वासरश्रीः=दिवसलक्ष्मीरेव, महावल्ली=प्रशस्तलता, तस्याः पल्लवाकारधारिणः=किसलयरूपा इत्यर्थः। प्रथमारम्भसम्भवा—प्रथमस्य=प्रथमप्रहरस्य, आरम्भे=प्रारम्भे, सम्भवः=उदयः यासां ताः, भास्वदंशवः—भास्वतः=सूर्यस्य या अंशवः=किरणाः, जयन्ति=सर्वोत्कर्षेण वर्तन्ते। रूपकालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४॥

ज्योत्स्ना—दिवस-लक्ष्मीरूपी प्रशस्त लता के पल्लव का आकार धारण करने वाले प्रथम प्रहर के प्रारम्भ में उदित होने वाले भगवान् सूर्य की किरणें, जो कि सर्वोत्कृष्ट लगती हैं, की जय हो ॥४॥

जयत्यम्भोजिनीखण्डखण्डितालस्यसंचयम् ।
कौङ्कुमं पूर्वदिग्गण्डमण्डनं मण्डलं रवेः ॥५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—अम्भोजिनीखण्डखण्डितालस्यसञ्चयं कौङ्कुमं पूर्वदिग्गण्डमण्डनं रवेः मण्डलं जयति ॥५॥

कल्याणी—जयतिति । अम्भोजिनीखण्डखण्डितालस्यसञ्चयं—अम्भोजिनीखण्डस्य=कमलिनीवृन्दस्य, खण्डितः=विनाशितः, आलस्यसञ्चयः=आलस्यराशिनिमीलनभाव इत्यर्थः, येन तादृशम्, कौङ्कुमं=कुङ्कुमेन निर्वृत्तं, पूर्वदिग्गण्डमण्डनं—पूर्वा या दिक् तस्याः गण्डयोः=कपोलयोः; मण्डनं=भूषणभूतम्, रवेः=सूर्यस्य, मण्डलं=वृत्तं, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । रूपकम् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—कमलिनीवृन्दों की आलस्यराशि अर्थात् निमीलन-भाव को विनष्ट कर देने वाले, कुंकुम से बनी हुई पूर्व दिशा के कपोलों के आभूषणस्वरूप सूर्यमण्डल, जो कि सर्वोत्कृष्ट लगता है, की जय हो ॥५॥

राजापि प्रथमप्रबुद्धप्रगीतगीतध्वनिनिरस्तनिद्रः, सान्द्रविद्रुमप्रभाभासि संध्यावसरे, विधाय सान्ध्यं विधिम्, अधिकृतेन धर्मकर्मणि तत्कालपुरःसरेण पुरोधसा सह तामेवान्वेष्टुमन्तःपुरमाजगाम ॥

कल्याणी—राजेति । राजा=भीमोऽपि; प्रथमं=पूर्वं, प्रबुद्धाः=जागरिताः, तैरर्थाद् बन्दिजनैः । प्रगीतगीतध्वनिनिरस्तनिद्रः—प्रकर्षेण गीतानि यानि गीतानि=स्तुतिगानानि, तेषां ध्वनिभिः=शब्दैः, निरस्ता=अपगता, निद्रा यस्य सः, सान्द्रा=प्रगाढा, या विद्रुमप्रभा=प्रवालकान्तिः, तद्वत् भाः=कान्तिः यस्य तादृशे; उपमालङ्कारः । सन्ध्यावसरे=उषःसन्ध्याकाले, सान्ध्यं विधिं=सन्ध्याकालिकं सन्ध्योपासनादिकं कर्म, विधाय=कृत्वा, धर्मकर्मणि अधिकृतेन=धर्मकार्याधिकारिणा, तत्कालपुरःसरेण=तत्कालाग्रगामिना, पुरोधसा=पुरोहितेन, सह=साकं, तामेव=राज्ञीं प्रियङ्गुमञ्जरीमेव, अन्वेष्टुम्=द्रष्टुम्, अन्तःपुरम्=राजसदनान्तर्भागम्, आजगाम = समागतः ॥

ज्योत्स्ना—राजा भीम भी पूर्व में जगे हुए अर्थात् वैतालिकों के उत्कृष्ट स्तुतिगान की ध्वनि से निद्रा का त्याग कर प्रगाढ़ विद्रुम मणि की कान्ति के समान कान्ति वाले उषःसन्ध्या अर्थात् प्रातःकाल में की जाने वाली सान्ध्य विधियों—सन्ध्योपासनादि कर्मों को सम्पन्न कर तत्काल सामने आये हुए धर्मकार्यों के अधिकारी पुरोहित के साथ उसी रानी प्रियंगुमञ्जरी की खोज करने के लिए अर्थात् देखने के लिए अन्तःपुर को आ गये ॥

दृष्ट्वा च विस्मयमानः स्फुरदरविन्दसुन्दराननाम् 'अनुगृहीतेयमिन्दुमौलिना' इत्यवधारयन्, अतिहर्षोत्कर्षमन्थरगिरा तां बभाषे ॥

कल्याणी—दृष्ट्वेति । स्फुरद् = विकसद्, अरविन्दं = कमलमिव, सुन्दरं=मनोज्ञम्, आननं=मुखं यस्याः तां=प्रियङ्गुमञ्जरीं, दृष्ट्वा=वीक्ष्य च,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विस्मयमानः=विस्मयमाप्नुवन्, अनुगृहीतेयम् इन्दुमौलिना=चन्द्रशेखरेण, इति=एवम्, अवधारयन्=विनिश्चिन्वानः, अतिहर्षस्य=समधिकानन्दस्य, उत्कर्षेण=अतिरेकेण, मन्थरया=शिथिलया, गिरा=वाचा, तां=प्रियां, बभाषे=उवाद ॥

ज्योत्स्ना—और खिले हुए कमल के समान सुन्दर मुख वाली उस प्रियंगुमञ्जरी को देखकर आश्चर्यचकित होकर "यह भगवान् इन्दुमौलि—शिव के द्वारा अनुगृहीत हुई है" ऐसा निश्चित करते हुए आनन्दातिरेक के कारण मन्थर—शिथिल वाणी से अपनी उस प्रियतमा से बोले ॥

मुग्धस्निग्धनिरुद्धशब्दहसितस्फारीभवल्लोचनं
तिर्यक्कान्तिकपोलपालिपुलकस्पष्टीकृतान्तर्धृति ।
एतत्ते करभोरु पङ्कजसदृग्दृष्ट्वा मुखं मे बला-
दुच्चैः किंचिदचिन्त्यचर्चितचमत्कारं मनो हृष्यति ॥६॥

अन्वयः—मुग्धस्निग्धनिरुद्धशब्दहसितस्फारीभवल्लोचनं तिर्यक् कान्तिकपोलपालिपुलकस्पष्टीकृतान्तर्धृतिः करभोरु एतत् ते पङ्कजसदृक् मुखं दृष्ट्वा अचिन्त्यचर्चितचमत्कारं मे मनः बलात् किञ्चित् उच्चैः हृष्यति ॥६॥

कल्याणी—मुग्धेति । मुग्धस्निग्धरुनिद्धशब्दहसितस्फारीभवल्लोचनं—मुग्धं=मनोहरं, स्निग्धं=स्नेहपूर्णं च, निरुद्धाः=नियन्त्रिताः, शब्दाः=ध्वनयः यस्मिंस्तादृशं च, यद्धसितं=हासः तेन स्फारीभवती=विस्तारं गच्छती, लोचने=नयने यस्य तत् । तिर्यक्कान्तिकपोलपालिपुलकस्पष्टीकृतान्तर्धृतिः—तिरश्ची=वक्रा, कान्तिः=प्रभा, यस्यां तादृशी या कपोलपालिः=गण्डप्रान्तः, तत्र यः पुलकः=रोमोद्गमः, तेन स्पष्टीकृता=प्रकटिता, अन्तर्धृतिः=आन्तरिकं धैर्यं यस्य तत् । एतत्=इदम्, ते=तव, पंकजसदृक्=कमलोपमं, मुखम्=आननं, दृष्ट्वा=विलोक्य, करभोरु—मणिबन्धकनिष्ठिकयोर्मध्यं करभस्तद्वदूरू यस्यास्तत्सम्बुद्धौ हे करभोरु ! बहुव्रीहौ कृते स्त्रियाम् 'ऊङुतः' इत्यूङ्, सम्बुद्धौ च 'अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' इति ह्रस्वः । अचिन्त्यचर्चितचमत्कारं—न चिन्त्यः=चिन्तनीयः, चर्चितः=विमृष्टश्च, चमत्कारः=विस्मयः यस्य तादृशं, मे=मम, मनः=चित्तं, बलात्=हठात्, किंचित् उच्चैः=अत्यन्तं, हृष्यति=हर्षमनुभवति। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६॥

ज्योत्स्ना—मनोहर और स्निग्ध तथा निःशब्द हास्य के कारण विस्तृत अर्थात् प्रसन्न नयनों वाली, तिर्यक् कान्ति से पूर्ण कपोल के रोमाञ्च के द्वारा आन्तरिक धैर्य को प्रकट करने वाली हे करभोरु ! अर्थात् हाथों के तलवे के समान सुकोमल जाँघों वाली ! तुम्हारे कमल के समान इस मुख को देखकर किसी ऐसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्कृष्ट चमत्कार, जिसके बारे में पूर्व में न तो मैंने कभी सोचा था और न ही कभी चर्चा की थी, से चमत्कृत मेरा मन हठात्—अचानक कुछ और ही प्रकार से अतिशय प्रसन्नता का अनुभव कर रहा है ।।६।।

तत्कथय शप्तासि ममाज्ञया हर्षवृत्तान्तम्' इत्यभिहिता सा स्मितसुधानुविद्धमुग्धमुखवीणाक्वणकोमलालापेन सर्वमादितः स्वप्नदर्शनमाचचक्षे ।।

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, मम=भीमस्य, आज्ञया=आदेशेन, शप्ता=शपथबद्धा असि, हर्षवृत्तान्तं=हर्षवार्तां, कथय=निवेदया इति=एवम्, अभिहिता=उक्ता, सा=राज्ञी प्रियङ्गुमञ्जरी, स्मितम्=ईषद्धास्यमेव सुधा=अमृतं तया अनुविद्धं=व्याप्तं, मुग्धं=सुन्दरं, मुखमेव=आननमेव वीणा, तस्याः क्वणेन=ध्वनिनेव, कोमलालापेन=कोमलवाण्या, सर्वं=समस्तम्, आदितः=प्रारम्भतः, स्वप्नदर्शनम्=स्वप्नावलोकनं, तद्वृत्तान्तमिति भावः । आचचक्षे=निवेदयाञ्चकार ।।

ज्योत्स्ना—"इसलिए मेरे आदेश से तुम शपथ से बँधी हुई हो (अतः) प्रसन्नतासूचक समाचार को (मुझसे) कहो ।" इस प्रकार कहने पर उस रानी प्रियंगुमञ्जरी ने किञ्चित् हास्यरूपी अमृत से परिपूर्ण सुन्दर मुखरूपी वीणा की ध्वनि-जैसी कोमल वाणी से आरम्भ से लेकर स्वप्न देखने का समस्त वृत्तान्त निवेदित कर दिया ।।

क्षितिपतिस्तु तदाकर्ण्य 'प्रिये ! मयापि स भगवान् आत्मानुहारिणा विनायकेन स्वामिना च शक्तिमता पुत्रेणानुगम्यमानो, दग्धकामः पूरितकामश्च, एककपर्दक ईश्वरश्च, ससोमश्चासोमः, सविभवश्चाविभूतिश्च, पिनाकी चापिनाकी, दृष्टः स्वप्नान्तरे तरुणार्कमण्डलमध्यवर्ती प्राणतप्रियङ्करः शङ्करः । तदेष ब्राह्मणः करोतु संवादिनोरनयोः स्वप्नयोरर्थपरामर्शम्' इत्यभिधाय तां, तमवस्थितं पुरः पुरोहितमभाषयत् ।।

कल्याणी—क्षितिपतिरिति । क्षितिपतिः=भूपालो भीमस्तु, तत्=राज्ञीवचः, आकर्ण्य=श्रुत्वा, मया=भीमेनापि, स्वप्नान्तरे=स्वप्नमध्ये, आत्मानुहारिणा=आत्मसदृशेन, शक्तिमता=सामर्थ्यशालिना, विनायकेन=गणेशेन, शक्तिमता=शक्त्याख्यास्त्रधारिणा, स्वामिना=स्कन्देन च, अनुगम्यमानः=अनुस्रियमाणः, शिवोऽपि विनायकः=विगतनायकः, सकललोकस्वामी शक्तिमांश्च—शक्तिः=शिवा तत्संश्लिष्टः इत्यात्मसादृश्यं बोध्यम् । दग्धकामः पूरितकामश्चेति विरोधः, दग्धः=भस्मीकृतः, कामः=कन्दर्पः येन सः, पूरितः कामः=कामना येन स तादृशश्चेति परिहारः । एकः कपर्दकः=वराटः यस्य सः, ईश्वरः=धनवांश्चेति विरोधः, एकः कपर्दकः=जटाजूटः यस्य सः, ईश्वरः=सकललोकस्वामीति परिहारः । ससोमः=चन्द्रसहितः, असोमः=चन्द्र-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहितश्चेति विरोधः, असोमः—उमया सह वर्तत इति सोमः, न हि सोम इति असोमः स्वप्नकाले उमारहितत्वादिति परिहारः। सविभवः=ऐश्वर्यसम्पन्नः, अविभूतिः=ऐश्वर्यहीनश्चेति विरोधः, विगतः भवः=संसारः येभ्यस्ते विभवाः=मुक्तात्मानः, तैः सह, विगता भूतिः=ऐश्वर्यं भस्म वा यस्य स विभूतिः, न विभूतिरित्यविभूतिरिति परिहारः। पिनाकं=धनुरस्यास्तीति पिनाकी च अपिनाकीति विरोधः, अपीति भिन्नम्, नाकी=स्वर्गी इति परिहारः। तरुणार्कमण्डलमध्यवर्ती=पूर्णताप्राप्तसूर्यमण्डलमध्ये विद्यमानः, प्रणतप्रियंकरः—प्रणतानां=भक्तानां, प्रियंकरः=अभीष्टसिद्धिदः, स भगवान् शंकरः=शिवः, दृष्टः=अवलोकितः। तत्=तस्मात्, एषः=पुरः वर्तमानः, ब्राह्मणः=पुरोहितः, संवादिनोः=परस्परतुल्ययोः स्वप्नयोः अर्थपरामर्शं=फलविचारं, करोतु=विदधातु, इति=एवम्, तां=प्रियाम्, अभिधाय=कथयित्वा, पुरः=अग्रे, अवस्थितं=विद्यमानं, तं पुरोहितं=पुरोधसम्, अभाषयत्=अकथयत्, स्वप्नफलं भाषितुं प्रेरयत्तेनैवात्मवचनेनेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—राजा तो उस प्रियंगुमंजरी द्वारा निवेदित वृत्तान्त को सुनकर "हे प्रिये ! मेरे द्वारा भी स्वप्न के मध्य में अपने अनुरूप ही सामर्थ्यशाली गणेश तथा शक्तिनामक अस्त्रधारी कुमार कार्तिकेय के द्वारा अनुगम्यमान, कामदेव को जलाने वाले होते हुए भी समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले, (एक कपर्दक—कौड़ी वाले होते हुए भी ईश्वर—धनवान्) एक कपर्दक—जटाजूट वाले होते हुए भी ईश्वर—समस्त लोकों के स्वामी, (ससोम—चन्द्रसहित होते हुए भी असोम—चन्द्ररहित) ससोम—चन्द्रमा से युक्त होते हुए भी असोम—उमा से रहित; (सविभव—वैभव से सम्पन्न होते हुए भी अविभूति—ऐश्वर्य से हीन) सविभव—विभवों (मुक्तात्माओं) से समन्वित होते हुए भी अविभूति—भूति (ऐश्वर्य अथवा भस्म) से वि—विगत (रहित) नहीं अर्थात् ऐश्वर्य या भस्म से सम्पन्न, पिनाकी होते हुए भी अपिनाकी—(अपि+नाकी)—स्वर्ग में रहने वाले, पूर्णताप्राप्त सूर्यमण्डल के मध्य में स्थित, भक्तों का प्रिय करनेवाले भगवान् शंकर देखे गये हैं। इसलिए यह ब्राह्मण—पुरोहित परस्पर समान इन दोनों स्वप्नों का फल विचार करें।" इस प्रकार उस रानी प्रियंगुमंजरी से कहकर सामने ही स्थित पुरोहित से बोले ॥

सोऽपि 'देव ! दिष्ट्या वर्धसे। अनल्पपुण्यप्राप्यमेतत्तरुणेन्दुमौलेरालोकनम्, अवश्यमवाप्स्यति देवी सकलराजचक्रचूडामणिकल्पमशेषभुवनभ्रान्तशुभ्रयशःपिण्डडिण्डिममपत्यम्' इत्यनेकधा तयोराशंसयाञ्चकार ॥

कल्याणी—सोऽपीति। सोऽपि=पुरोहितोऽपि, देव !=महाराज !, दिष्ट्या=भाग्येन, वर्धसे=एधसे। एतत्=इदं, तरुणेन्दुमौलेः—तरुणः=नवोदितः, इन्दुः=बालविधुरि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्यर्थः । मौलौ=भाले यस्य तस्य=शङ्करस्य, आलोकनं=दर्शनम्, अनल्पेन=समधिकेन, पुण्येन प्राप्यं=प्राप्तुं शक्यं, भवति । अवश्यं=निश्चयेन, देवी=राज्ञी, सकलराजचक्रचूडामणिकल्पम्=समस्तनृपमण्डलचूडामणिसदृशम्, अशेषभुवने = समस्तलोके, भ्रान्तः=भ्रमणशीलः, उद्घोषणाप्रसङ्गेनेति भावः । शुभ्रयशःपिण्डस्य=उज्ज्वलकीर्तिसमुदयस्य, डिण्डिमः=दुन्दुभिः यस्य तादृशम्, अखिलभुवने स्वनिर्मलयशसामुद्घोषकमिति भावः । अपत्यं=सन्ततिम्, अवाप्स्यति=लप्स्यते, इति=एवम्, अनेकधा=बहुधा, तयोः=दम्पत्योः, आशंसयाञ्चकार=प्रशंसयामास, विवृण्वन् मङ्गलकामनयाऽऽशिषं ददाविति भावः । आशंसयाञ्चकारेत्यत्राशंसाशब्दादाचष्ट इत्यर्थे 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिच्, आकारस्य णाविष्ठवत्त्वाट्टिलोपे, णिजन्ताल्लिडिति बोध्यम् ॥

ज्योत्स्ना—वह पुरोहित भी "हे राजन् ! भाग्य से (आप) वृद्धि को प्राप्त हो रहे हैं । नवोदित चन्द्रमा को मस्तक परधारण करने वाले भगवान् शंकर का यह दर्शन बड़े ही पुण्य से प्राप्त होने वाला है । (इसके फलस्वरूप) समस्त राजसमूहों के चूडामणि के समान, समस्त लोकों में घूमने वाली समुज्ज्वल कीर्ति की दुन्दुभि वाली सन्तति को देवी निश्चय ही प्राप्त करेंगी । इस प्रकार (कहते हुए) अनेकों प्रकार से उनकी प्रशंसा करने लगा ।

आशय यह है कि स्वप्नफल की विवेचना करते हुए उनकी मंगल कामना से उस राजपुरोहित ने उन्हें अनेक प्रकार से अपने आशीर्वादों से सिञ्चित किया ॥

एवंविधे च व्यतिकरे कोऽपि कान्तकार्तस्वरस्वरूपमुत्फुल्लपाण्डुपुष्पमालया मेरुशिखरमिव प्रदक्षिणाक्षीणलग्नया नक्षत्रराज्या जनितशोभं जटाभारमुद्वहन्, अतिबहलमलयजरसरचितविचित्रपुण्ड्रकमण्डनाममरशैलशिलामिव रङ्गत्त्रिस्रोतसं ललाटपट्टिकां कलयन्, प्लवमान इवोज्जृम्भपङ्कजकिञ्जल्ककपिलकायकान्तिकल्लोलेषु, करुणारसपूर्णवक्षःस्थलदीर्घिकायामन्तस्तरन्तीं बालकलहंसपक्षिपङ्क्तिमिव स्फारस्फाटिकाक्षमालिकां बिभ्राणः, कुशकौपीनवासाः, करकलितकुशकांडकमण्डलुमण्डलैः, तरुभिरिव विविधशाखैर्विधृतजटावल्कलैश्च, पर्वतैरिव समेखलैः सरुद्राक्षाक्षमालैश्च, नक्षत्रैरिव समृगकृत्तिकाश्लेषैः सज्येष्ठाषाढैश्च, ससंमदैरपि समदाकारमाकलयद्भिः अक्रीडैरपि चक्रीडापरैः, रोमशैरपि विप्रवालकैः मुनिभिः परिवृतः, सेवितपुराणपुरुषोऽप्यजनार्दनप्रियः, प्रसन्नशङ्करोऽप्यनाश्रितभवः, प्रबुद्धोऽप्यबन्दीकृतजनः, श्रमणोऽप्यजिनपरिग्रहः, ग्रहगण इव नवधात्मको लोकानाम्, धनुर्धर इव नालीकसंघः, हंस इव नदाम्भस्थानकप्रियः, पन्नग इव नाकु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लीनः, सरस्वतीसंनिवासस्य मुखमन्दिरस्य वन्दनमालयेव प्रथमोद्भेदभासिन्या दंष्ट्रिकारोमराजिरेखया श्यामलितोत्तरोष्ठपृष्ठः कलिकालकलङ्कशङ्का शरणागतैस्त्रिभिः पुण्ययुगैरिव सुसूत्रीभूय देहलग्नैः, त्रिपुष्करस्नानावसरविलग्नसरसबिसकाण्डकुण्डलैरिव भक्त्याराधितत्रिपुरुषरचितरक्षासूक्ष्मरेखानुकारिभिः सितयज्ञोपवीततन्तुभिर्भूषितदेहः, शमी विद्रुमाभाधरश्च, प्रजापो विप्रजापश्च, सुतपाः कुतपश्श्लाघी च, विकलत्रः, सकलत्रश्च, यमान्तानुसारी सकुशलश्च, विकचनवनलिनशङ्कया मिलन्मुक्तमुग्धमधुपमण्डलेनेव रुद्राक्षवलयेन विराजितवामपाणिपल्लवः, न स्मृतः स्मरापस्मारेण, नाङ्गीकृतः कृतघ्नतया, नालोकितः कितववृत्तेन; नाकलितः कलिना, न निरुद्धो विरुद्धक्रियाभिः, अतितेजस्तया द्वितीय इव परब्रह्मणः, तृतीय इव सूर्याचन्द्रमसोः, चतुर्थ इव गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्नीनाम्, पञ्चम इव दिक्पतीनाम्, षष्ठ इव महाभूताधिदेवतानाम्, सप्तम इव मूर्तर्तूनाम्, अष्टम इव सप्तर्षीणाम्, नवम इव वसूनाम्, दशम इव ग्रहाणाम्, अनवरतहृदयकमलकर्णिकान्तःस्फुरज्ज्योतीरूपपरमब्रह्मकान्तिकलापेनेव बहिर्निर्गच्छताच्छभस्मानुलेपेन कनकगिरिरिव विरलचन्द्रातपेनापाण्डुरितदेहः, दीर्घसरसबिसकाण्डपाण्डुना प्रचण्डपवनेनोर्ध्वमुल्लासितेन जटाजूटबन्धनषटप्रान्तपल्लवेन शिरःपतद्गगनगलद्गङ्गाम्बुधाराहारिणो हरस्य स्वामिभक्त्या कृतानुकरणव्रतचर्यामिव कलयन्, कोमले महसि तरुणे वयसि वृद्धे तपसि पृथुनि यशसि गुरुणि श्रेयसि वर्तमानः, सदः सदाचाराणाम्, आश्रयः श्रुतीनाम्, मही महिम्नः, प्रपा कृपारसस्य, क्षेत्रं क्षमाङ्कुराणाम्, पात्रं मैत्रीसुधायाः प्रासादः प्रसादस्य, सिन्धुः साधुतायाः, तरुणार्कमण्डलमध्यान्मुनिरवातरत् ॥

कल्याणी—एवंविध इति। एवंविधे च व्यतिकरे=तथा घटिते च, कोऽपि=कश्चित्, मेरुशिखरमिव=काञ्चनाद्रिशृङ्गमिव, कान्तकार्तस्वरस्वरूपम्=उद्दीप्तकाञ्चनाभं, पक्षे—उद्दीप्तकाञ्चनमयं, प्रदक्षिणाक्षीणलग्नया—प्रदक्षिणया=मण्डलरेखाक्रमेण, क्षीणं=शिथिलं यथा तथा, लग्नया=सम्बद्धया, उत्फुल्लपाण्डुपुष्पमालया=विकसितश्वेतकुसुमस्रजा, पक्षे—प्रदक्षिणया=परितः परिभ्रमेण, क्षीणानि लग्नानि=मेषादिद्वादशराशीनामाकृतयः यस्यास्तादृश्या नक्षत्रराज्या=नक्षत्रश्रेण्या, जनिता=समुत्पादिता, शोभा=सौन्दर्यं, यस्य तं जटाभारं=जटाजूटम्, उद्वहन्=धारयन्, [उपमाऽलंकारः, कनकाभजटाभारस्य मेरुशिखरं पुष्पमालायाश्च नक्षत्रराजिरुपमानमिति बोध्यम्]। अमरशैलशिलामिव=हिमालयशिलामिव, अतिबहलमलयजरसरचितः=समधिकचन्दनद्रवकृतः, पुण्ड्रकः=सम्प्रदायद्योतकस्तिलकः त एव मण्डनं=भूषणं यस्यास्तां, रङ्गत्त्रिस्रोतसं=शोभमानभिरेखाम्, पक्षे—प्रवहद्गङ्गां, ललाटपट्टिकां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भालफलकं, कलयन्=धारयन् [उपमाऽलङ्कारः, ललाटपट्टिकायाः शिला पुण्ड्रकानां च गङ्गोपमानमिति बोध्यम्]। उज्जृम्भपङ्कजस्य=विकचकमलस्य, किञ्जल्कः=केसर इव कपिलः=स्वर्णाभः, यः कायः=तनुः, तस्य कान्तिकल्लोलेषु=दीप्तितरङ्गेषु, प्लवमान इव=तरन्निव [उत्प्रेक्षा]। करुणाया=दयाया, रसेन=भावनया, पक्षे—जलेन च, पूर्णं=भरितं, वक्षःस्थलं, दीर्घिका=वापीव, तस्याम्, अन्तः=मध्ये, तरन्तीं=दोलयन्तीं, पक्षे—प्लवमानां, बालकलहंसपक्षिपङ्क्तिमिव=मनोज्ञबालमरालपक्षिश्रेणिमिव स्फारस्फाटिकाक्षमालिकां=महतीं स्फटिकमणिरचिताक्षमालिकां, बिभ्राणः=धारयन् [उपमाऽलङ्कारः, वक्षःस्थलस्य दीर्घिका, स्फाटिकाक्षमालिकायाश्च बालहंसपंक्तिरुपमानमिति बोध्यम्]। कुशकौपीनं=दर्भनिर्मितकौपीनमेव वासः=वसनं यस्य स तथोक्तः, करकलितकुशकाण्डकमण्डलुमण्डलैः=हस्तगृहीतकुशकमण्डलुचक्रवालैः, तरुभिरिव=वृक्षैरिव, विविधशाखैः—विविधा शाखाः=कठबर्हृचादयः, पक्षे=विटपा येषां तैः, विधृतजटावल्कलैश्च—विधृता जटा=केशरचना, पक्षे—मूलं बल्कलं=वृक्षत्वक् यैस्तैश्च [तरवो बल्कलं सहजभावेन मुनयश्चाहार्यत्वेन धारयन्तीति विवेकः]। पर्वतैरिव=अगैरिव, समेखलैः—मेखला=मौञ्जी, पक्षे—पर्वतान्तदेशः. तया सहितैः, सरुद्राक्षाक्षमालैः=रुद्राक्षजपमालासहितैः, पक्षे—रुद्राक्षैरक्षैश्च वृक्षविशेषैः तेन सहितैः, नक्षत्रैरिव समृगकृत्तिकाश्लेषैः—मृगकृत्तिकायाः=मृगचर्मणः, आश्लेषः=धारणं, तेन सहितैः, सज्येष्ठाषाढैश्च—ज्येष्ठः=उत्तमः, आषाढः=व्रतदण्डः तेन सहितैश्च, पक्षे—मृगः=मृगशिराः, कृत्तिका, अश्लेषा, ज्येष्ठा आषाढः=पूर्वाषाढ उत्तराषाढश्चेति नक्षत्राणि, तत्सहितैः [श्लिष्टोपमा]। ससंमदैरपि=सगर्वैरपि, न मदाकरं=गर्वाकारम्, आकलयद्भिः=धारयद्भिरिति विरोधः, ससंमदैः=सानन्दैः, तृष्णाक्षयादिति भावः, इति परिहारः। अक्रीडैः—न क्रीडा=सांसारिकविषयविलासः येषां तैस्तादृशैरपि च—क्रीडापरैः=सांसारिकविलासलीनैरिति विरोधः, चक्रीडापरैः—चक्री=विष्णुः, तस्य इडा=स्तुतिः, तत्परैरिति परिहारः। रोमशैः=समधिकरोमयुक्तैरपि, विप्रवालकैः—विशेषेण प्रगताः=विनष्टाः बालाः=केशाः येषां तैरिति विरोधः; विप्रवालकैः—विप्राणां=ब्राह्मणानां बालकैः=पुत्रैरिति परिहारः। [श्लेषोत्थो विरोधाभासः] तादृशैः मुनिभिः=ऋषिभिः, परिवृतः=युक्तः, सेवितपुराणपुरुषः=सेवितविष्णुरपि, अजनार्दनप्रियः=न विष्णुप्रिय इति विरोधः, अजनार्दनप्रियः—न जनानां=लोकानाम्, अर्दनं=पीडा, प्रियं=रुचिरं यस्य स तथोक्त इति परिहारः। प्रसन्नशंकरः=प्रसन्नः शङ्करो यस्मिन् स तथोक्तोऽपि, अनाश्रितभवः—न आश्रितः=आश्रयत्वेन स्वीकृतः, भवः=शङ्करः येन स तथोक्त इति विरोधः, न आश्रितः भवः=संसारः येन स इति परिहारः। प्रबुद्धः=सुगतोऽपि, अबन्दीकृतजनः—वन्दन्त इति वन्दाः, शिष्या इति यावत्, [वदिधातोरच्] न वन्दीकृताः=शिष्यत्वेन स्वीकृता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जना येन स तथोक्त इति विरोधः, प्रबुद्धः=विद्वान्, तथा न वन्दीकृता=हठेन गृहीता जना येन स इति परिहारः। श्रमणः=क्षपणोऽपि, अजिनपरिग्रहः—जिनः=अर्हन्, न जिनस्य परिग्रहः=अनुसेवीति विरोधः, श्रमणः=तपस्वी, अजिनपरिग्रहः—अजिनं=मृगादिचर्म, तत्परिग्रह इति परिहारः, [श्लेषोत्थो विरोधाभासः]। ग्रहगण इव=सूर्यादिग्रहसमूह इव, लोकानां=जनानां, न-वधात्मकः=न हिंसात्मकः, पक्षे—नवधात्मकः=नवसंख्यस्वरूपः, धनुर्धर इव=धानुष्क इव, न+अलीकसन्धः=न मिथ्याप्रतिज्ञः, पक्षे—नालीकसन्धः [धनुषि] नालीकस्य=शरस्य, सन्धा=सन्धानं यस्य सः, हंसः=मराल इव, न-दाम्भस्थानकप्रियः—न दाम्भानां=मायिकानां, स्थानकं=वासस्थानं, प्रियं=रुचिकरं, यस्य स तथोक्तः, हंसपक्षे—नदानां=सरिताम्, अम्भांसि=जलानि यत्र तादृशं स्थानकं प्रियं यस्य सः; अम्भः+स्थानक=अम्भस्थानक 'खपरे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः' इति विसर्गलोपो ज्ञेयः। पन्नग इव=सर्प इव, न+अकुलीनः—अकुलीनः=असद्वंशोद्भवो नास्ति, पक्षे—नाकु-लीनः नाकुः=वल्मीकः तत्र लीनः=निलीनः। सरस्वतीसंनिवासस्य=सरस्वत्या निवासस्थानभूतस्य, मुखमेव मन्दिरं=वदनमेवावासस्थानं, तस्य वन्दनमालयेव=तोरणस्रजेव, प्रथमोद्भेदभासिन्या-प्रथमोद्भेदेन=प्रथमोद्गमेन, भासिन्या=दीप्तिमत्या, दंष्ट्रिकारोमराजिरेखया=श्मश्रुरेखया, श्यामलितं=श्यामलीकृतम्, उत्तरोष्ठपृष्ठम्=ऊर्ध्वोष्ठतलं यस्य सः, कलिकाले=कलियुगे, कलङ्कशङ्कया=गर्हाभीत्या; शरणागतैः=शरणस्थितैः, त्रिभिः=त्रिसंख्याकैः, पुण्ययुगैः=कृतयुगादिभिरिव, सुसूत्रीभूय=शोभनसूत्ररूपं धृत्वा, देहलग्नैः=शरीरसंसक्तैः, त्रिषु पुष्करेषु=सरोवरेषु, [पृथक्-पृथक्] स्नानावसरे=मज्जनसमये, विलग्नानां=देहसंसक्तानां, सरसानां=स्निग्धानां, बिसकाण्डानां=कमलतन्तुमयदण्डानां, कुण्डलैरिव [उत्प्रेक्षा], भक्त्या=श्रद्धया, आराधितैः=पूजितैः, त्रिपुरुषैः=हरिहर-ब्रह्मभिः, रचिताः=कृताः, रक्षायै याः सूक्ष्मरेखास्तदनुकारिभिः=तत्तुल्यैरित्यर्थः। सितयज्ञोपवीततन्तुभिः=शुभ्रयज्ञोपवीतसूत्रैः, अलंकृतशरीरः=भूषितदेहः, शमी=शमीनामा तरुः, विद्रुमाभाधरश्च [विर्नञर्थे]=न वृक्षकान्तिधरश्चेति विरोधः, शमोऽस्त्यस्येति शमी=शान्तः, विद्रुमाभाधरः—विद्रुमं=प्रवालं, तत्तुल्यः अधरः=ओष्ठ इति परिहारः। प्रजापः विप्रजापः=न प्रजापश्चेति विरोधः, प्रजाः पाति=रक्षतीति प्रजापः तथा विप्रान् जापयति=जपं प्रापयतीति परिहारः। सुतपाः—सुष्ठु तपः=व्रतमस्य, कुत्सितं तपःश्लाघते=प्रशंसतीत्येवंशीलश्चेति विरोधः, कुतपःश्लाघी—कौ=पृथिव्यां, तपसा=लोकोत्तरेण धर्मेण श्लाघनशील इति परिहारः। विकलत्रः=कलत्ररहितः, सकलत्रः=कलत्रसहितश्चेति विरोधः, सकलं त्रायते=रक्षतीति सकलत्र इति परिहारः। यमान्तानुसारी—यमः=अन्तकः, तस्य अन्तं=समीपमनुसरति, सकुशलश्च—सह कुशलेन=क्षेमेणेति विरोधः, यमाः=अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः, तेषाम् अन्तः=पारमनुसरतीति तथोक्तः, कुशलाः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दक्षास्तैः सहेति परिहारः। [विरोधाभासः] विकचनवनलिनशङ्कया=विकसित-नवकमलभ्रान्त्या, न हि पाणिरयमपि तु प्रफुल्लनवकमलमिदमिति भ्रान्त्येति भावः। मिलन्तः=संगच्छमाना, मुक्ताः=आनन्दमग्नाः, मुग्धाः=सरलाः, ये मधुपाः=भ्रमराः, तेषां मण्डलेनेव=चक्रवालेनेव, रुद्राक्षवलयेन=रुद्राक्षकङ्कणेन, अर्थाद्रुद्राक्षमालिकया; विराजितः=सुशोभितः, वामपाणिपल्लवः=वामकरदलः यस्य सः, [पाणौ मधुपानां कमलभ्रान्त्या भ्रान्तिमदलङ्कारः, मधुपमण्डलेनेवेत्युत्प्रेक्षा च, तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः]। स्मरः=कन्दर्पः, स एवापस्मारः=रोगविशेषः, तेन न स्मृतः=स्मृतिपथे नैव नीतः; कामजयीति भावः। कृतघ्नतया=कृतघ्नभावेन, नाङ्गीकृतः=न स्वीकृतः, अकृतघ्न इति भावः। कितववृत्तेन=धूर्तचरित्रेण, नावलोकितः=न दृष्टः, धूर्तता-रहित इति भावः। कलिना=कलियुगेन, नाकलितः=नाक्रान्तः, विरुद्धक्रियाभिः=धर्मविरुद्धव्यापारैः न निरुद्धः=न निगडितः, अतितेजस्तया=समधिकतेजस्वितया, अद्वितीयः=अपरः, परब्रह्मणः=परमात्मनः, द्वितीयः इव, सूर्याचन्द्रमसोः=रविचन्द्रयोः, तृतीय इव=तदतिरिक्तस्तृतीयस्तेजस्वीति भावः। गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्नीनां चतुर्थः इव=गार्हपत्यादिभ्यस्त्रिभ्योऽग्निभ्योऽतिरिक्तः कोऽपि चतुर्थोऽग्निरिव, दिक्पतीनां पञ्चम इव=पूर्वादिदिशां ये चत्वार इन्द्रादयः स्वामिनस्तेभ्यो भिन्नोऽपरः कोऽपि पञ्चमो दिक्पतिरिवेति भावः। महाभूताधिदेवतानां=पञ्च महाभूताधिदेवताः, ताभ्यः भिन्नाऽपरा कापि षष्ठी महाभूताधिदेवतेव, सप्तम इव मूर्तर्तूनाम्=मूर्तिमन्तः ये वसन्तादयः षड्ऋतवस्तेभ्यो भिन्नोऽपरो मूर्तः सप्तम ऋतुरिव, सप्तर्षीणामष्टम इव=मरीच्यादयः प्रसिद्धाः सप्तर्षयस्तेभ्यः भिन्नोऽपरः कोऽप्यष्टम ऋषिरिव, नवम इव वसूनाम्=अष्टाभ्यो वसुभ्यो भिन्नः नवमः वसुरिव, दशम इव ग्रहाणां=नवग्रहेभ्यो भिन्नो दशमो ग्रह इव, अनवरतं=सततं, हृदयमेव कमलकर्णिका=कमल-कोषः तस्य अन्तः=अभ्यन्तरे, स्फुरद्=दीप्यमानं, यत् ज्योतिः=तद्रूपं यत्परमब्रह्म, तस्य कान्तिकलापेनेव=दीप्तिपुञ्जेनेव, बहिर्निर्गच्छता=बाह्ये निःसरता, अच्छभस्मा-नुलेपेन—अच्छं=शुभ्रं, यद् भस्म तस्य अनुलेपेन, विरलेन=विलक्षणेन, चन्द्रातपेन=इन्दुप्रकाशेन, पाण्डुरितदेहः=शुभ्रतनुः, कनकगिरिरिव=मेरुपर्वत इव। अयं भावः—भस्मभूषिततनुं मुनिं दृष्ट्वा मनस्येषा प्रतीतिर्जरीजागर्तिस्म यत्तस्य हृदयाभ्यन्तरे ज्योतीरूपपरमब्रह्मणः या कान्तिः स्फुरति सैव शुभ्रभस्मरूपेण बहिर्निर्गच्छति, तदनु-लेपेन शुभ्रतनुर्मुनिर्विरलचन्द्रकिरणैः युक्तः मेरुगिरिरिव विराजत इति। उपमो-त्प्रेक्षयोः संकरः। दीर्घः=प्रलम्बः, सरसः=स्निग्धश्च यः बिसकाण्डः=कमलतन्तुमयो दण्डः, तद्वत् पाण्डुना=शुभ्रेण, प्रचण्डपवनेन=प्रखरवायुना, ऊर्ध्वम्=उपरि, उल्ला-सितेन=उत्थापितेन, जटाजूटबन्धनस्य यः पटी=वस्त्रं, तस्य प्रान्तः=अञ्चलः, पल्लव इव=किसलय इव, तेन। शिरसि पतन्ती गगनाद्=आकाशाद्, गलन्ती=प्रस्रवन्ती,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

या गङ्गाम्बुधारा=गङ्गाजलप्रवाहः, तया हारिणः=मनोज्ञस्य, हरस्य=शिवस्य, स्वामिभक्त्या=प्रभुश्रद्धया, कृतमनुकरणं=विहितानुसरणं यस्या तादृशी या व्रतचर्या=व्रतपद्धतिः, तां कलयन्निव=धारयन्निव [उत्प्रेक्षा]; अयं भावः—मुनेः जटाजूट-बन्धनवस्त्रं दीर्घसरसबिसकाण्डसदृशं शुभ्रमासीत्, तस्य प्रान्तभाग ऊर्ध्वं गगने वायुवेगवशादुल्लसितः गगनाद्गलद्गङ्गाम्बुरेव शुशोभते स्म, तदेवं मन्ये शिरसि गङ्गां दधानः स मुनिः स्वस्वामिभक्त्या गङ्गाधरस्य शिवस्यानुकरणं करोति स्म इति। उपमोत्प्रेक्षयोः संकरः। कोमले=मृदुले, महसि=तेजसि, तरुणे वयसि=नवयौवने, वृद्धे=वृद्धिगते, तपसि=तपस्यायां, पृथुनि=विस्तृते, यशसि=कीर्तौ, गुरुणि=महति, श्रेयसि=मङ्गलकर्मणि, वर्तमानः=अवस्थितः, सदाचाराणां=उत्कृष्टाचरणानां, सदः=आवासः, श्रुतीनां=वेदानाम्, आश्रयः=आश्रयस्थानम्, महिम्नः=माहात्म्यस्य, मही=भूमिः, कृपारसस्य=दयाजलस्य, प्रपा=पयःशाला, क्षमाङ्कुराणां=क्षमोत्पत्तीनां, क्षेत्रम्=उत्पत्तिभूमिः, मैत्रीसुधायाः—मैत्री=मित्रभाव एव सुधा=अमृतं, तस्य पात्रं=भाजनं, प्रसादस्य=अनुग्रहस्य, प्रासादः=हर्म्यम्, साधुतायाः=सौजन्यस्य, सिन्धुः=समुद्रः, मुनिः=ऋषिः; तरुणार्कमण्डलमध्यात्=नवोदितसूर्य-मण्डलमध्यात्, अवातरत्=भूमावाजगाम। 'सदः सदाचाराणामि'त्यादिषु सर्वत्र रूपकम्॥

ज्योत्स्ना—ऐसे ही समय पर प्रदीप्त सुवर्णमय मेरु पर्वत के शिखर के समान उद्दीप्त स्वर्णिम आभा वाले; चारो ओर घूमने के कारण क्षीण लग्न वाली नक्षत्रपंक्ति के समान चारो ओर से लपेटे होने के कारण शिथिल, फिर भी सम्बद्ध विकसित श्वेत पुष्पों की माला से अलंकृत होने के कारण अत्यन्त सुशोभित जटाभार को धारण किये हुए; हिमालय शिला पर प्रवाहित होती हुई त्रिस्रोतस्—गंगा के समान ललाटपट्टिका पर प्रचुर चन्दन-रस से किये गये पुण्ड्रक—तिलकरूपी भूषण वाली शोभायमान तीन रेखाओं—त्रिपुण्ड्र को धारण किये हुए, पूर्णरूपेण विकसित कमल के पराग के समान गौर शरीर की कान्तिरूपी तरङ्गों में तैरते हुए-से; जल से परिपूर्ण दीर्घिका—सरोवर के मध्य में तैरते हुए छोटे-छोटे हंसों की रमणीय पंक्ति के समान करुण रस से परिपूर्ण वक्षःस्थल के मध्य में विशाल स्फटिक मणियों से बनाई गई अक्षमाला को धारण किये हुए; कुशनिर्मित कौपीनरूपी वस्त्र को धारण किये हुए, कुशाओं और कमण्डलु को हाथ में ग्रहण किये हुए; विभिन्न शाखाओं, जटाओं एवं बल्कलों—छालों से युक्त वृक्ष के समान ही कठ-बह्वृच आदि विभिन्न वैदिक शाखाओं, जटा एवं वल्कल वस्त्र को धारण किये हुए; मेखलायुक्त—तटीय भाग से युक्त एवं रुद्राक्ष के वृक्षों से सम्पन्न पर्वत के समान ही मेखला—मौञ्जी के साथ-साथ रुद्राक्षों की माला से समन्वित; मृगशिरा, कृत्तिका, अश्लेषा, ज्येष्ठा तथा अषाढ़—पूर्वाषाढ़ एवं उत्तराषाढ़ से युक्त नक्षत्र-समूहों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के समान ही मृगकृत्तिका—मृगचर्म को आश्लेष—धारण किये हुए एवं ज्येष्ठ—उत्तम अषाढ़—व्रतदण्ड को लिए हुए; ससम्मद—गर्वयुक्त होते हुए भी अथवा सानन्द होते हुए भी अभिमान से रहित एवं क्रीडा—सांसारिक विषय-वासनारूपी क्रीड़ा से रहित होते हुए भी चक्री—भगवान् विष्णु की ईड़ा—स्तुति में तत्पर; रोमश—लम्बे-लम्बे बालों से युक्त होते हुए भी ब्राह्मणपुत्रस्वरूप मुनियों से घिरे हुए; पुराणपुरुष—भगवान् विष्णु की सेवा करने वाले होते हुए भी अजर्नादन-प्रिय—लोगों की पीड़ा को पसन्द न करने वाले; भगवान् शंकर को प्रसन्न किये होते हुए भी अनाश्रितभव—संसार पर आश्रित नहीं रहने वाले; प्रबुद्ध—विद्वान् होते हुए भी किसी व्यक्ति को बन्दी नहीं बनाने वाले; श्रमण—आत्मज्ञान के लिए समाधि-योग आदि कठिन श्रम करने वाले तपस्वी होते हुए भी अजिन—मृगचर्म को धारण करने वाले; नव संख्या वाले सूर्यादि ग्रहों के समान न+वधात्मक—हिंसा की आकांक्षा न रखने वाले; नालीक—शर का सन्ध—सन्धान करने वाले धनुर्धारी के समान न+अलीकसन्ध—झूठी प्रतिज्ञा न करने बाले; नदाम्भकस्थानप्रिय—नदियों के जलस्थान को पसन्द करने वाले हंसों के समान न+दाम्भक+स्थान प्रिय—मायावियों (धूर्तों) के निवासस्थान को पसन्द न करने वाले, नाकु—बाँबी (बिल) में लीन—छिपे रहने वाले पन्नग—सर्प के समान न+अकुलीन—निन्दित कुल में उत्पन्न नहीं होने वाले अर्थात् अत्यन्त कुलीन; विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती के निवासस्थानभूत मुखरूपी मन्दिर की तोरणमाला के समान प्रथमतः उगने वाली कान्तिमान मूछों की रेखा से श्याम वर्ण के ऊपरी ओष्ठ वाले, कलियुग में कलङ्क के भय से शरण में आये हुए कृतयुग, त्रेता, द्वापररूप तीनों पवित्र युग ही मानों सुन्दर सूत्रों का रूप धारण कर शरीर से संसक्त (अतएव) तीनों पुष्कर तीर्थों में (अलग-अलग) स्नान के समय शरीर से संलग्न सरस कमलतन्तुओं के कुण्डल के समान भक्तिपूर्वक पूजित त्रिपुरुष—ब्रह्मा-विष्णु-महेश द्वारा निर्मित (उनकी) रक्षा हेतु सूक्ष्म रेखाओं के समान शुभ्र यज्ञोपवीत के तन्तुओं—सूत्रों से अलंकृत शरीर वाले; शमी—शान्त और विद्रुम—प्रवाल की कान्ति के समान कान्तियुक्त ओष्ठों वाले; प्रजाप—प्रजा की रक्षा करने वाले और विप्रजाप—ब्राह्मणों को जप कराने वाले; सुतपा—सुन्दर तप (व्रत) वाले और कुतपश्लाघी—कु (पृथिवी) पर अपनी लोकोत्तर तपस्या के लिए श्लाघनीय; विकलत्र—पत्नीरहित होते हुए भी सकलत्र—सबकी रक्षा करने वाले; यमों—अहिंसा-सत्य-अस्तेय-ब्रह्मचर्य-अपरिग्रह का अनुसरण करने वाले निपुण लोगों से युक्त; विकसित नूतन कमल की भ्रान्ति से आये हुए आनन्दमग्न सीधे-सादे भ्रमरसमूह के समान रुद्राक्षनिर्मित कङ्कण अर्थात् रुद्राक्ष की छोटी माला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से सुशोभित बाँयें हाथ वाले; कामरूपी अपस्मार रोग के द्वारा याद नहीं किये गये अर्थात् कामजयी; कृतघ्नता के द्वारा अस्वीकृत अर्थात् कृतघ्नता न करने वाले; धूर्त चरित्र द्वारा नहीं देखे गये अर्थात् धूर्तता से रहित; कलियुग से अनाक्रान्त; धर्मविरुद्ध व्यापारों के द्वारा कभी भी निरुद्ध नहीं किये गये; अत्यधिक तेजस्विता के कारण दूसरे परब्रह्म के समान; सूर्य और चन्द्र के अतिरिक्त तीसरे (तेजस्वी) के समान; गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निरूपी तीन अग्नियों से अतिरिक्त किसी चौथी अग्नि के समान; पूर्वादि चारो दिशाओं के स्वामियों अर्थात् दिक्पालों के अतिरिक्त किसी पाँचवें दिक्पाल के समान; पाँच महाभूताधिदेवताओं अर्थात् पृथ्वी-अप-तेज-वायु-आकाशरूप पाँच महाभूतों के अधिपतियों के अतिरिक्त किसी छठे महाभूताधिदेवता के समान; मूर्तिमान वसन्तादि छः ऋतुओं के अतिरिक्त किसी सातवें मूर्त ऋतु के समान; मरीचि आदि प्रसिद्ध सप्तर्षियों के अतिरिक्त किसी आठवें ऋषि के समान; प्रसिद्ध आठ वसुओं के अतिरिक्त किसी नौवें वसु के समान; प्रसिद्ध सूर्यादि नव ग्रहों के अतिरिक्त किसी दसवें ग्रह के समान; हृदयरूपी कमलकोष के भीतर से निरन्तर देदीप्यमान ज्योतिरूप परब्रह्म की कान्तिपुञ्ज के समान बाहर निकलते हुए शुभ्र भस्म के अनुलेप से विलक्षण चन्द्रकिरणों से युक्त मेरु पर्वत के समान शुभ्र शरीर वाले; लम्बे और स्निग्ध कमलतन्तुमय दण्ड के समान शुभ्र एवं प्रचण्ड वायु से ऊपर को उठे हुए जटाजूट को बाँधने वाले वस्त्र के अञ्चलरूपी पल्लव से मस्तक पर गिरती हुई आकाश से प्रस्रवित गंगा की जलधारा के कारण मनोज्ञ भगवान् शिव की स्वामिभक्ति के कारण उनका अनुकरण करते हुए के समान व्रतपद्धति को धारण करते हुए, कोमल तेजवाले, युवावस्था वाले, बढ़ी हुई तपस्या वाले, प्रशस्त कीर्ति वाले, गुरुतर मंगलकार्यों में लगे हुए, सदाचरणों के आवासस्वरूप, वेदों के आश्रयस्थानस्वरूप, माहात्म्य की भूमि के समान, कृपारस की पयःशाला के समान, क्षमारूपी अंकुरों की उत्पत्ति के लिए क्षेत्रस्वरूप, मैत्रीरूपी अमृत के लिए पात्रस्वरूप, अनुग्रह के भवनस्वरूप, साधुता अर्थात् सौजन्य के समुद्रस्वरूप कोई मुनि नवोदित सूर्यमण्डल के बीच से (पृथ्वी पर) अवतरित हुए ॥

राजा तु दूरत एव तमायान्तमवलोक्य विस्मयविस्फारितविलोचनो हर्षवर्षविनिःसरद्धहलपुलकोत्तम्भितोत्तरीयवासाः ससंभ्रममासनादुत्थाय कियन्त्यपि पदान्यभिमुखं समेत्य क्षितितलमिलन्मौलिमण्डलः प्रणाममकरोत् ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=भीमस्तु, दूरतः=दूरादेव, तं=मुनिम्, आयान्तम्=आगच्छन्तम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्फारित=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विस्तृते, विलोचने=नयने यस्य स तथाविधः, हर्षस्य=आनन्दस्य, वर्षेण=वृष्ट्या, विनिःसरन्=उद्गच्छन्, यः बहुलः=समधिकः, पुलकः=रोमाञ्चः, तेन उत्तम्भितम्=ऊर्ध्वमुत्थितम्, उत्तरीयवासः=उत्तरीयवस्त्रं यस्य स तथाभूतः, ससंभ्रमं=सत्वरम्, आसनात्=स्थानात्, उत्थाय=उत्थित्वा, कियन्त्यपि=कतिचिदपि, पदानि अभिमुखं=सम्मुखं; समेत्य=प्रत्युद्गम्य; क्षितितलेन=भूतलेन, मिलत्=संगच्छमानं, मौलिमण्डलं=शिरश्चक्रवालं यस्य स तथाविधः, प्रणामं=प्रणतिम्, अकरोत्=व्यधत्त ॥

ज्योत्स्ना—दूर से ही उन मुनि को आते हुए देखकर आश्चर्य के कारण विस्फारित—फैली हुई आँखों वाले, आनन्द की वृष्टि के कारण अत्यधिक रोमाञ्च निकल आने से ऊपर की ओर उठे हुए उत्तरीय वस्त्रों वाले राजा भीम ने भी शीघ्रता के साथ आसन से उठकर कुछ कदम सामने चलकर भूतल से मिलते हुए शिर से (उन्हें) प्रणाम किया ॥

मुनिरपि सदारुणान्तयापि सौम्यया दृशा विद्रुमप्रभाभिन्नया सुधासिन्धुतरङ्गमालयेव प्लावयन्नाशिषमवादीत् ॥

कल्याणी—मुनिरिति । मुनिरपि=ऋषिरपि, सः+दारुणान्तयापि—स इति मुनिविशेषणम्, दारुणः=रौद्रः, अन्तः=तटभागः यस्यास्तादृश्यापि, सौम्यया=शान्तयेति विरोधः, सदा+अरुणान्तया—सदा=नित्यम्, अरुणान्तया=रक्तप्रान्तया, सौम्यया=स्निग्धया, दृशा=दृष्ट्येति परिहारः; रक्तान्तनेत्रत्वं तु शुभलक्षणमेवेति ज्ञेयम् । विद्रुमप्रभाभिन्नया=प्रवालकान्तिक्षुरितया, सुधासिन्धुतरङ्गमालयेव=अमृतसमुद्रोर्मिश्रेण्येव (इत्युत्प्रेक्षा), प्लावयन्=स्नपयन्, आशिषम्=आशीर्वचनम्, अवादीत्=अवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—वे मुनि भी निरन्तर रक्त प्रान्त—भाग वाली होती हुई भी सौम्य-स्निग्ध दृष्टि के द्वारा (राजा भीम को) प्रवाल-कान्ति से अनुविद्ध सुधासिन्धु की तरङ्गों से नहलाते हुए के समान आशीर्वचन बोले ॥

'सिन्दूरस्पृहया स्पृशन्ति करिणां कुम्भस्थमाधोरणा
भिल्ली पल्लवशङ्कया विचिनुते सान्द्रद्रुमद्रोणिषु ।
कान्ताः कुङ्कुमकाङ्क्षया करतले मृद्नन्ति लग्नं च यत्
तत्तेजः प्रथमोद्भवं भ्रमकरं सौरं चिरं पातु वः' ॥७॥

अन्वयः—करिणां कुम्भस्थं यत् तेजः आधोरणाः सिन्दूरस्पृहया स्पृशन्ति, भिल्ली सान्द्रद्रुमद्रोणिषु पल्लवशङ्कया विचिनुते, कान्ताः करतले लग्नं च कुंकुमकांक्षया मृद्नन्ति, तत् प्रथमोद्भवं भ्रमकरं तेजः वः चिरं पातु ॥७॥

कल्याणी—मुनिनोक्तं तदेवाशीर्वचनं कविराह—सिन्दूरेति । करिणां=गजानां, कुम्भस्थं=गण्डपतितं, यत्तेजः=कान्तिम्, आधोरणाः=हस्तिपकाः, सिन्दूर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्पृहया=सिन्दूराकाङ्क्षया, मण्डनत्वेन लग्नसिन्दूरभ्रान्त्येति भावः। स्पृशन्ति=परामृशन्ति, भिल्ली=किरातस्त्री, सान्द्रद्रुमद्रोणिषु—सान्द्राः=निविडाः, ये द्रुमाः=वृक्षाः; तेषां द्रोणिषु=आलवालेषु, पल्लवशङ्कया=किसलयभ्रान्त्या, विचिनुते=संगृह्णाति, कान्ताः=रमण्यः, करतले=पाणितले, लग्नं च=संलग्नञ्च, कुङ्कुमकाङ्क्षया=कुङ्कुमभ्रान्त्येति भावः, मृद्नन्ति=मृजन्ति। तत् प्रथमोद्भवं = प्रथमोद्गतं, भ्रमकरं=भ्रान्तिजनकं, सौरं=सूर्यसम्बन्धि, तेजः=ज्योतिः, वः=युष्मान्, चिरं=दीर्घकालं यावत्, सदेति भावः। पातु=रक्षतु। सूर्यतेजसि सिन्दूरादिभ्रान्त्या भ्रान्तिमदलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७॥

ज्योत्स्ना—हाथियों के गण्डस्थल पर पड़े हुए जिस तेज का आधोरण—पीलवान लोग सिन्दूर की कामना से अर्थात् उस तेज को सिन्दूर समझ कर स्पर्श करते हैं; किरातों की स्त्रियाँ सघन वृक्षों की द्रोणियों—क्यारियों में पल्लव होने की शंका करते हुए चयन करती हैं और रमणियाँ (अपने) हाथों पर पड़ते हुए जिस तेज को कुंकुम समझकर पोंछने लगती हैं वह प्रथमतः निकला हुआ भ्रम को उत्पन्न करने वाला भगवान् सूर्य का तेज चिर काल तक अर्थात् सदा-सर्वदा आपकी रक्षा करे ॥७॥

दत्ताशीश्च प्रणामपर्यस्तकर्णपूरपल्लवपरामृष्टपादपांसुरवनिपालेन स्वयमादरेणोपनीतमुच्चकञ्चनासनमध्यतिष्ठत् ॥

कल्याणी—दत्ताशीरिति। दत्ताऽऽशीः=प्रदत्ताशीर्वादः येन सः = मुनिश्च, प्रणामेन=नृपकृतप्रणत्या, पर्यस्तेन=विकीर्णेन, अधोनमितेनेति यावत्। कर्णपूरपल्लवेन=कर्णावतंसकिसलयेन, परामृष्टपादपांसुः=मृदितचरणरजाः सन्, अवनिपालेन=भूपतिना भीमेन, स्वयम् = आत्मनैव; आदरेण=श्रद्धया, उपनीतम्=आनीतम्, उच्चकञ्चनासनम्=उत्तुङ्गस्वर्णासनम्, अध्यतिष्ठत्=अध्यास्त, 'अधिशीङ्स्थासां कर्म' इत्याधारस्य कर्मसंज्ञकतया कर्मणि द्वितीया ॥

ज्योत्स्ना—और आशीर्वाद प्रदान किये हुए वे मुनि प्रणाम करने के द्वारा (नीचे झुकने के कारण) कानों के आभूषणस्वरूप पल्लवों से साफ की गई चरणधूलि वाले होकर राजा भीम द्वारा स्वयं आदरपूर्वक लाये गये ऊँचे स्वर्ण-निर्मित आसन पर आसीन हो गये ॥

अथ नरपतिदत्ते प्राप्तसौन्दर्यनिर्य-
न्मणिमहसि स तस्मिन्नासने संनिविष्टः।
रुचिररुचि सुमेरोः संगतः शृङ्गभागे
कमलज इव कान्ति काञ्चिदुच्चैर्बभार ॥८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—अथ नरपतिदत्ते प्राप्तसौन्दर्यनिर्यन्मणिमहसि तस्मिन् आसने सन्निविष्टः सः रुचिररुचि सुमेरोः शृङ्गभागे संगतः कमलज इव काञ्चित् उच्चैः कान्ति बभार ॥८॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरम्, नरपतिदत्ते—नरपतिना=राज्ञा भीमेन, दत्ते=उपनीते, प्राप्तसौन्दर्यनिर्यन्मणिमहसि—प्राप्तसौन्दर्यं=रम्यं, निर्यत्=निर्गच्छत्, मणीनां=रत्नानां, महः=तेजः यस्मात् तादृशे; तस्मिन्=तत्र; आसने=विष्टरे, संनिविष्टः=समासीनः, सः=मुनिः, रुचिररुचि—रुचिरा=रम्या, रुक्=कान्तिः यस्य तस्मिन्, सुमेरोः=काञ्चनाद्रेः, शृङ्गभागे=शिखरप्रान्ते, संगतः=संनिविष्टः, कमलज इव=ब्रह्मेव, कांचित्=अपूर्वाम्, उच्चैः=अत्यन्तं, कान्ति=शोभां, बभार=दधौ। उपमाऽलङ्कारः। मालिनी वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—उच्च स्वर्णासन पर आसीन होने के पश्चात् राजा भीम द्वारा प्रदत्त मणियों से निकलते हुए तेज के कारण रमणीयता को प्राप्त उस आसन पर विराजमान वे मुनि मनोहर कान्ति से सम्पन्न सुमेरु पर्वत के शिखरभाग (चोटी) पर स्थित ब्रह्मा के समान किसी अपूर्व कान्ति को धारण किये।

आशय यह है कि राजा भीम द्वारा प्रदत्त स्वर्णनिर्मित आसन, जिस पर मुनि विराजमान थे, में उत्तम मणियाँ जड़ी हुई थीं, जिनसे एक प्रकार का अलौकिक तेज निकल रहा था; इसीलिए उस पर आसीन होने के कारण वे मुनि भी अलौकिक कान्ति वाले दिखाई देने लगे।

यहाँ मुनि को अलौकिक तेज से सम्पन्न न दर्शा कर कवि द्वारा राजा भीम के आसन को अलौकिक तेज से सम्पन्न बताया गया है। इस प्रकार यहाँ आसन की श्रेष्ठता सिद्ध की गई है, न कि मुनि की ॥८॥

दत्त्वार्घमर्हणीयाय तस्मै सोऽपि महीपतिः।
स्वहस्तधौतयोर्भक्त्या ववन्दे पादयोर्जलम् ॥९॥

अन्वयः—सः महीपतिः अपि अर्हणीयाय तस्मै अर्घं दत्वा भक्त्या स्वहस्तधौतयोः पादयोः जलं ववन्दे ॥९॥

कल्याणी—दत्त्वेति। सः=असौ, महीपतिः=भूपः भीमोऽपि, अर्हणीयाय=पूज्याय, तस्मै=मुनये, अर्घम्='आपः क्षीरं कुशाग्रं च दधि सर्पिः सतण्डुलम्। यवः सिद्धार्थकश्चैव अष्टाङ्गोऽर्घः प्रकीर्तितः॥' इति धर्मशास्त्रोक्तां पूजोपहारसामग्रीं, दत्वा=उपहृत्य, भक्त्या=श्रद्धया, स्वहस्तधौतयोः—स्वहस्तेन=निजकरेण, धौतयोः=प्रक्षालितयोः, पादयोः=मुनिचरणयोः, जलं=नीरं, ववन्दे=पावनत्वेन प्रणनाम। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—वे राजा भीम भी पूजा करने योग्य उन मुनि को अर्घ प्रदान कर भक्तिपूर्वक स्वयं अपने हाथों से धोये गये चरणों के जल को (अत्यन्त पवित्र होने के कारण) प्रणाम किये ॥९॥

कृत्वातिथ्यक्रियां सम्यग्विनयं च प्रकाशयन् ।
तस्याग्रे भूतलं भेजे नोपविष्टः स विष्टरे ॥१०॥

अन्वयः—सम्यक् आतिथ्यक्रियां कृत्वा विनयं च प्रकाशयन् सः तस्य अग्रे भूतलं भेजे, विष्टरे न उपविष्टः ॥१०॥

कल्याणी—कृत्वेति । सम्यक्=यथाविधि, आतिथ्यक्रियाम्=अतिथि-सत्कारं, कृत्वा=सम्पाद्य, विनयं च=विनम्रतां च, प्रकाशयन्=प्रकटयन्, सः=राजा भीमः, तस्य=मुनेः, अग्रे=पुरतः, भूतलं=पृथ्वीतलं, भेजे=अधितस्थौ, विष्टरे=आसने, नोपविष्टः=न संनिविष्टः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१०॥

ज्योत्स्ना—विधियों के अनुसार भली प्रकार से अतिथि-सत्कार करके विनम्रता को व्यक्त करते हुए वे राजा भीम उन मुनि के समक्ष भूमि पर ही बैठ गये, आसन पर आसीन नहीं हुए ।

आशय यह है कि अलौकिक आसन पर आसीन मुनि का यथोचित आतिथ्य सत्कार करने के पश्चात् राजा भीम अपने राजसिंहासन पर आसीन न होकर विनम्रता को दर्शाते हुए मुनि के सामने पृथ्वी पर ही बैठ गये ॥१०॥

ललाटपट्टविन्यस्तपाणिसंपुटकुड्मलः ।
नीचैरुवाच वाचं च चञ्चद्दशनदीधितिः ॥११॥

अन्वयः—ललाटपट्टविन्यस्तपाणिसम्पुटकुड्मलः चञ्चद्दशनदीधितिः (स नृपः) नीचैः वाचं च उवाच ॥११॥

कल्याणी—ललाटेति । ललाटपट्टविन्यस्तपाणिसम्पुटकुड्मलः—ललाटपट्टे=भालफलके, विन्यस्तः=धृतः, पाणिसंपुटः=अञ्जलिः, कुड्मलः=कलिका इव येन स तथोक्तः, चञ्चद्दशनदीधितिः—चञ्चन्त्यः=स्फुरन्त्यः, दशनानां=दन्तानां, दीधितयः=किरणाः यस्य स नृपः, नीचैः=सविनयं, वाचं=वाणीं च, उवाच=उक्तवान् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—और हाथों के सम्पुट—अञ्जलिरूपी कुड्मल—कलि को ललाटपट्टिका—अपने चौड़े माथे पर रखे हुए तथा स्फुरित होती हुई दन्तकान्ति वाले वे राजा भीम धीमे स्वर से बोले ॥११॥

'अद्य मे सुबहोः कालाच्छ्लाघनीयमभूदिदम् ।
त्वत्पादपद्मसंस्पर्शसम्पन्नानुग्रहं गृहम् ॥१२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—अद्य सुबहोः कालात् त्वत्पादपद्मसंस्पर्शसम्पन्नानुग्रहम् इदं मे गृहं श्लाघनीयम् अभूत् ॥१२॥

कल्याणी—अद्येति। अद्य=अस्मिन् दिने, सुबहोः कालात्=चिरकालाद् अनन्तरमित्यर्थः। त्वत्पादपद्मसंस्पर्शसम्पन्नानुग्रहं—तव=भवतः, पादपद्मयोः=चरणकमलयोः, संस्पर्शेन=स्पर्शेन, सम्पन्नः=संजातः, अनुग्रहः=प्रसादः यस्मिंस्तादृशम्, इदं=एतत्, मे=मम, गृहं=मन्दिरं, श्लाघनीयं=पूतत्वेन प्रशंसनीयं, धन्यमिति यावत्। अभूत्=संजातम्। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१२॥

ज्योत्स्ना—बहुत समय के पश्चात् आज आपके चरणकमलों के स्पर्शरूपी अनुग्रह से सम्पन्न मेरा यह घर श्लाघनीय हो गया अर्थात् धन्य हो गया ॥१२॥

यतः समस्तमुनिमनुजवृन्दारकवृन्दवन्दनीयपादारविन्दाः, परमानन्दपरिस्पन्दभाजः पांसूनिव पार्थिवान्, तृणमिव स्त्रैणम्, निधनमिव धनम्, रोगानिव भोगान्, राजयक्ष्माणमिव लक्ष्मीम्, आकलयन्तः सकलसंसारसुखविमुखाः कस्य भवादृशा भवनमवतरन्ति ॥

कल्याणी—यत इति। यतः=यस्मात्, समस्तमुनिमनुजवृन्दारकवृन्देन=सकलमुनिनरसुरसमुदायेन, वन्दनीये=प्रणम्ये, पादारविन्दे=चरणकमले येषां ते, परमानन्दपरिस्पन्दं=परमानन्दपरिस्फुरणं, भजन्ते=प्राप्नुवन्तीति ते तथोक्ताः, परमानन्दनिमग्ना इत्यर्थः। पार्थिवान्=नृपान्, पांसूनिव=पृथिव्याः धूलिकणानिव, स्त्रैणं=स्त्रीवृन्दं, तृणमिव=तुच्छमिव, धनं=सम्पत्तिं, निधनं=मृत्युमिव, भोगान्=सांसारिकविषयभोगविलासान्, रोगानिव=आमयानीव, लक्ष्मीं=श्रियं, राजयक्ष्माणमिव—राजयक्ष्मा=क्षयरोगः तमिव, आकलयन्तः=मन्यमानाः; सकलसंसारसुखविमुखाः—सकलेभ्यः=समस्तेभ्यः, संसारस्य=जगतः, सुखेभ्यः=आनन्देभ्यः, विमुखाः=पराङ्मुखाः, विरक्ता इति यावत्। भवादृशाः=भवल्लक्षणाः महापुरुषाः, कस्य=जनस्य, भवनं=गृहम्, अवतरन्ति=समायान्ति, न कस्यापीति भावः ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि समस्त मुनियों तथा मानवों से वन्दनीय चरणकमलों वाले; चरम (अलौकिक) आनन्द को प्राप्त अर्थात् परमानन्द में निमग्न; राजाओं को धूलि-कण के समान, स्त्रियों को तृण के समान, सम्पत्ति को मृत्यु के समान, भोगों—सांसारिक विषयभोग-विलासों को रोग के समान एवं लक्ष्मी को राजयक्ष्मा—क्षयरोग के समान मानते हुए समस्त सांसारिक सुखों से पराङ्मुख अर्थात् विरक्त आप जैसे महापुरुष किसके घर पधारते हैं ? ॥

तदहमद्यानवद्यस्य भगवन्नभूवं भूम्नो यशोराशेर्भाजनम्, आरूढः पदं श्लाघार्हम्, आगतो गुणिषु गौरवम्, उपलब्धवान्धन्यताम्, संपन्नः पुण्यवतामग्रणीः, जातो जनस्य वन्दनीयः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, हे भगवन् !=हे ऐश्वर्यशालिन् !, अद्य=सम्प्रति, अहं=भीमः, अनवद्यस्य=अनिन्द्यस्य, प्रशस्यस्येत्यर्थः। भूम्नः=महतः, यशोराशेः=कीर्तिसमुदयस्य, भाजनं=पात्रम्, अभूवं=जातः। श्लाघार्हं=प्रशंसायोग्यं, पदं=स्थितिम्, आरूढः=प्राप्तः, गुणिषु=प्रशस्तगुणयुक्तेषु जनेषु, गौरवं=महत्त्वम्, आगतः=प्राप्तः, धन्यतां=धन्यभावम्, उपलब्धवान्=प्राप्तवान्, धन्यो जात इति भावः। पुण्यवतां=पुण्यशालिनाम्, अग्रणीः=अग्रगण्यः, सम्पन्नः=जातः, जनस्य=लोकस्य, वन्दनीयः=स्तुत्यः, जातः=भूतः॥

ज्योत्स्ना—इसलिए हे भगवन् ! आज मैं विशाल अनिन्द्य कीर्तिराशि का पात्र हो गया, प्रशंसायोग्य स्थिति को प्राप्त हो गया, प्रशस्त गुणों से युक्त लोगों में गौरव को प्राप्त कर लिया, धन्यभाव को प्राप्त हो गया, पुण्यशाली लोगों में अग्रगण्य हो गया और लोगों के लिए वन्दनीय हो गया॥

तदित्थमनेकप्रकारोपकारिणां किं ब्रवीमि, किङ्करोऽस्मीति पौनरुक्त्यं सर्वस्वामिनाम्। केनार्थित्वमित्यनुचितादरो निःस्पृहाणाम्। इदं मे सर्वस्वमात्मीक्रियतामिति स्वल्पोपचारः स्वाधीनाष्टगुणैश्वर्याणां भवताम्। तथापि प्रणयेन भक्त्या च मुखरितः किञ्चिद्विज्ञापयामि॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, इत्थम्=अनेन प्रकारेण, अनेकप्रकारेण=बहुधा, उपकारिणाम्=उपकारकारकाणां भवतां, किं ब्रवीमि=किं कथयामि, किङ्करः=दासः अस्मि, इति=एवं कथनं, पौनरुक्त्यं=पुनरुक्तत्वं, सर्वस्वामिनाम्=समस्तप्रभूणां; भवन्तः सर्वेषां स्वामिनः, सर्वे च भवतां किङ्कराः, तदहमपि किङ्करोऽस्म्येव, किङ्करोऽस्मीति पुनः कथनं पुनरुक्तिरेवेति भावः। केनार्थित्वम्=केन वस्तुना भवतामर्थिता, किं प्रार्थयन्ते भवन्त इति भावः। इति=एवं, निःस्पृहाणां=त्यागिनां भवतां, न उचितादरः=अनुपयुक्तसम्मानः, भवन्तो निःस्पृहास्तत् किं प्रार्थयन्त इति प्रश्नेन भवतामनादर एवेति भावः। इदं=एतत्, मे=मम, सर्वस्वमात्मीक्रियतां=सम्पूर्णं स्वीक्रियताम्, इति=एवं कथनेन, स्वाधीनाष्टगुणैश्वर्याणां=स्वायत्तीकृताष्टगुणैश्वर्याणां, भवतां=श्रीमतां, स्वल्पोपचारः=सामान्यसत्कारः, भवत्सदृशाम् अष्टगुणैश्वर्यशालिनामिदं स्वल्पसत्कारः, यतो हि मे सर्वस्वं भवदैश्वर्याणां पुरतः कियदिति भावः। तथापि=एवं सत्यपि, प्रणयेन=प्रेम्णा, भक्त्या च=श्रद्धया च, मुखरितः=मुखरीकृतः, तत्प्रेरित इति भावः। किञ्चित्=किमपि। विज्ञापयामि=निवेदयामि॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस प्रकार के अनेकों उपकारों को करने वाले आपसे (और) क्या कहूँ ? "(आपका) दास हूँ" यह कहना तो पुनरुक्ति ही होगी, क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(आप तो स्वयं) सबके स्वामी हैं अर्थात् आप सबके स्वामी हैं और सभी आपके दास हैं, इस कारण मैं भी आपका दास तो हूँ ही; फिर 'आपका दास हूँ' यह कहना पुनरुक्ति मात्र ही होगा।

'आप किस वस्तु के याचक हैं अर्थात् आप क्या चाहते हैं''—इस प्रकार कहना आप जैसे निःस्पृह लोगों का अनादर करना है। अर्थात् आप निःस्पृह लोग हैं, अतः ''क्या चाहते हैं'' इस प्रकार का प्रश्न करने पर भी आपका अनादर ही होगा।

''मेरे इस सर्वस्व को आप स्वीकार करें'' —इस प्रकार कहना भी अपने अधीन किये हुए अष्टसिद्धियों के ऐश्वर्य वाले आपका सामान्य सत्कार ही होगा अर्थात् आपके समान अष्टसिद्धियों के ऐश्वर्य से सम्पन्न लोगों के लिए यह अपनी समस्त सम्पत्ति देना भी सामान्य सत्कार ही होगा; क्योंकि मेरा सर्वस्व भी आपके ऐश्वर्य के सामने कुछ नहीं हैं।

फिर भी प्रेम एवं भक्ति से मुखरित अर्थात् प्रेरित होकर मैं कुछ निवेदन कर रहा हूँ॥

इदं राज्यमियं लक्ष्मीरिमे दारा इमे गृहाः।
एते वयं विधेया वः कथ्यतां यदिहेप्सितम् ॥१३॥

अन्वयः—इदं राज्यम् इयं लक्ष्मीः इमे दाराः इमे गृहाः एते वयं वः विधेयाः, इह यत् ईप्सितं (तत्) कथ्यताम् ॥१३॥

कल्याणी—इदमिति। इदं=एतत्, राज्यम्=साम्राज्यम्, इयं=एषा, लक्ष्मीः=राज्यश्रीः, इमे=अमी, दाराः=स्त्रियः, इमे=एते, गृहाः=भवनानि, बहुत्वे गृहशब्दस्य पुंस्त्वम्। एते=इमे, वयं=सर्वे एव, वः=युष्माकं, विधेयाः=किङ्कराः, इह=अत्र, यत्=यद्वस्तु, ईप्सितम्=अभिलषितं, तत्कथ्यतां=विज्ञाप्यताम्। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—''यह साम्राज्य, यह लक्ष्मी, ये स्त्रियाँ, ये भवन और ये हम सब आपके दास हैं; ऐसी स्थिति में आपका जो कुछ भी अभीष्ट हो, उसे कहें'' ॥१३॥

मुनिरप्यवनीशस्य विनयमभिनन्द्य स्निग्धमुग्धस्मितसुधाधवलिताधरपल्लवमब्रवीत्-'उचितमेतद्भवादृशां वक्तुं कर्तुं वा' ॥

कल्याणी—मुनिरिति। मुनिरपि=तापसोऽपि, अवनीशस्य=भूपतेर्भीमस्य, विनयं=विनम्रभावम्, अभिनन्द्य=अभिष्टुत्य, स्निग्धं=स्नेहनिर्भरं, मुग्धं=सुन्दरं, स्मितम्=ईषद्धास्यमेव सुधा=अमृतं, तया धवलितः=शुभ्रीकृतः, अधरपल्लवः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधरोष्ठकिसलयः यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, अब्रवीत्=अवदत्—भवादृशां=भवल्लक्षणानां जनानाम्, एतद् वक्तुं=कथयितुं, कर्तुं वा=विधातुं वा, उचितमेव=उपयुक्तमेव ॥

ज्योत्स्ना—मुनि भी राजा भीम की विनम्रता का अभिनन्दन करके स्नेहयुक्त मुग्ध मन्द मुस्कानरूपी सुधा से अधर-किसलय को शुभ्र बनाते हुए बोले—"आप जैसे लोगों के लिए इस प्रकार कहना या करना उचित ही है ॥

उपकर्तुं प्रियं वक्तुं कर्तुं स्नेहमकृत्रिमम् ।
सज्जनानां स्वभावोऽयं केनेन्दुः शिशिरीकृतः ॥१४॥

अन्वयः—उपकर्तुं प्रियं वक्तुं अकृत्रिमं स्नेहं कर्तुम् अयं सज्जनानां स्वभावः, केन इन्दुः शिशिरीकृतः ? ॥१४॥

कल्याणी—उपकर्तुमिति । उपकर्तुं=उपकारं विधातुं, प्रियं=रुचिरं, वक्तुं=कथयितुम्, अकृत्रिमं=निर्व्याजं, स्नेहं=प्रेम, कर्तुं=विधातुं, अयम्=एषः, सज्जनानां=सत्पुरुषाणां, स्वभावः=प्रकृतिः, सज्जनाः स्वभावेनोपकारिणः प्रियकारकाः प्रियवक्तारः शुचिस्नेहशीलाश्च भवन्तीति भावः । केन=पुरुषेण, इन्दुः=चन्द्रः, शिशिरीकृतः=शीतलीकृतः, चन्द्रस्तु स्वभावादेव शीतल इत्यर्थः । अर्थान्तरन्यासोऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१४॥

ज्योत्स्ना—उपकार करना, प्रिय (रुचिकर वचन) बोलना, स्वाभाविक निश्छल प्रेम करना—यह सज्जनों का स्वभाव होता है, (जैसे) चन्द्रमा किसके द्वारा शीतल किया गया है ?

आशय यह है कि सज्जन लोग स्वभाव से ही परोपकारी, सदा लोगों का प्रिय करने वाले, प्रिय वचन बोलने वाले और स्नेह से परिपूर्ण होते हैं, जैसे चन्द्रमा स्वभावतः ही शीतल होता है; किसी के द्वारा बनाया नहीं जाता ॥१४॥

अपि च—

यथा चित्तं तथा वाचो यथा वाचस्तथा क्रिया ।
चित्ते वाचि क्रियायां च साधूनामेकरूपता ॥१५॥

अन्वयः—यथा चितं तथा वाचः यथा वाचः तथा क्रिया, चित्ते वाचि क्रियायां च साधूनाम् एकरूपता (भवति) ॥१५॥

कल्याणी—यथेति । यथा=यत्प्रकारकं, चित्तं=मनः, तथा=तत्प्रकारकं, वाचः=वचांसि, यथा=यत्प्रकारकं, वाचः=वचांसि, तथा=तत्प्रकारकं, क्रिया=कार्यम्, चित्ते=मनसि, वाचि=वाण्याम्, क्रियायां=कर्मणि च, साधूनां=सज्जनानाम्, एकरूपता=समानता, भवतीति । चित्ते यथा विद्यते वाग्भिस्तथैव प्रकाशयन्ति, वाग्भिर्यथा प्रकाशयन्ति तथैव कार्येण प्रदर्शयन्ति, तत्साधवो मनसा वाचा कर्मणा चैकरूपा भवन्तीत्याशयः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी; जिस प्रकार का मन वैसी ही वाणी, जिस प्रकार की वाणी वैसी ही क्रिया अर्थात् कार्य। सज्जनों के मन, वाणी और क्रिया में एकरूपता होती है।

आशय यह है कि सज्जनों के मन में जैसा रहता है उसी प्रकार वे बोलते हैं और जैसा बोलते हैं वैसा ही अपने कार्यों द्वारा प्रदर्शित भी करते हैं। उनके मन, वचन और कार्यों में भिन्नता नहीं होती, बल्कि एकरूपता रहती है ॥१५॥

अपि च—

विवेकः सह संपत्त्या विनयो विद्यया सह।
प्रभुत्वं प्रश्रयोपेतं चिह्नमेतन्महात्मनाम् ॥१६॥

अन्वयः—सम्पत्त्या सह विवेकः, विद्ययासह विनयः, प्रश्रयोपेतं प्रभुत्वम्, एतत् महात्मनां चिह्नम् ॥१६॥

कल्याणी—विवेक इति। संपत्त्या=धनेन, सह=साकं, विवेकः=कर्तव्याकर्तव्यज्ञानम्, विद्यया सह=विद्यासम्पन्ने सति, विनयः=विनीतभावः, प्रश्रयोपेतं—प्रश्रयेण=स्नेहेन, उपेतं=युक्तं, प्रभुत्वं=स्वामित्वं, प्रभुत्वेन सह स्नेह इति भावः। एतत्=इदं, महात्मनां=सत्पुरुषाणां, चिह्नं=लक्षणं, भवतीति शेषः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१६॥

ज्योत्स्ना—और भी; सम्पत्ति से सम्पन्न होने पर भी विवेक—कर्तव्याकर्तव्य-ज्ञान रहना, विद्या से सम्पन्न होने पर भी विनीत बने रहना और स्नेह से युक्त प्रभुत्व अर्थात् प्रभुत्व से सम्पन्न होने पर भी स्नेह करना – ये सब महात्माओं के—सत्पुरुषों के लक्षण होते हैं ॥१६॥

तदेतत्समस्तमस्ति त्वयि दीर्घायुषि ! श्रूयतामिदानीं प्रस्तुतम्। अनवरतसुरासुरचक्रचूडामणिकृतचरणरजसश्चन्द्रचूडामणेर्देवस्यादेशेनागता वयम्। अवाप्स्यसि सकलजलधिजलकल्लोलमालालङ्कारभाजो भुवो भर्तुरुचितमतिमान्यं धन्यमसामान्यं कन्यारत्नम्' इति ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, हे दीर्घायुषि=चिरंजीविन् ! एतत्=पूर्वोक्तं, समस्तं=सकलं, त्वयि=भवति, अस्ति=विद्यते। इदानीं=सम्प्रति, प्रस्तुतं=प्राकरणिकं, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम्। अनवरतं=सततं, सुरासुरचक्रेण=देवदानवमण्डलेन, चूडामणौ=शिरोमणौ, कृतं=धृतं, चरणरजः=पादधूलिः यस्य तस्य, चन्द्रचूडामणेः=इन्दुशेखरस्य, देवस्य=शिवस्य, आदेशेन=आज्ञया, वयम् आगताः=आयाताः। सकलाः=समस्ताः, चत्वारोऽपीत्यर्थः। ये जलधयः=समुद्राः, तेषां जलकल्लोलमालाः—जलस्य=नीरस्य, कल्लोलमालाः=महातरङ्गश्रेणयः, त एव अलंकाराः=भूषणानि, तान् भजते=धारयति या तस्याः, चतुःसमुद्रपरिवेष्टिताया इति भावः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भुवः=पृथिव्याः, यः भर्ता=स्वामी, तस्य=नरेन्द्रस्य, उचितम्=अनुकूलम्, अतिमान्यं=सकललोकादरणीयं, धन्यं=प्रशंसनीयम्, असामान्यं=लोकोत्तरं, कन्यारत्नं=पुत्रीरत्नम्, अवाप्स्यसि=लप्स्यसे, इति=एवम्, अब्रवीदिति पूर्वक्रियया सह सम्बन्धः ॥

ज्योत्स्ना—हे चिरजीविन् ! पूर्वकथित ये सभी चीजें आप में हैं। अतः इस समय जो प्राकरणिक है, उसे सुनिये। निरन्तर देवों तथा दैत्यों के द्वारा चूडामणि में धारित किये गये चरणधूलि वाले, मस्तक पर चन्द्रमा को धारण करने वाले भगवान् शिव के आदेश से हम सब (यहाँ आपके पास) आये हैं। समस्त समुद्रों के जल की तरङ्गमालारूपी अलंकार को धारण करने वाली अर्थात् चारो समुद्रों से परिवेष्टित पृथिवी के स्वामी अर्थात् राजा के अनुकूल, अतिमान्य अर्थात् समस्त लोगों के लिए आदरणीय, धन्य अर्थात् प्रशंसनीय और असामान्य अर्थात् लोकोत्तर कन्यारत्न को (आप) प्राप्त करेंगे"—इस प्रकार (बोले) ॥

एवमुक्तवति तस्मिंस्तपस्विनि पुत्रार्थिनी कन्यालाभं मन्यमाना विप्रियं प्रियंगुमञ्जरी जरन्मञ्जीररवजर्जरविलक्षाक्षरया गिरा कुर्वाणेव क्रोधपरिस्पन्दं निन्दास्तुतिधर्मेण नर्मलीलाकलहमकरोत् ॥

कल्याणी—एवमिति। तस्मिन् तपस्विनि=तत् मुनौ, एवम्=उक्तप्रकारेण, उक्तवति=कथयति सति, पुत्रार्थिनी=पुत्रकामा, प्रियङ्गुमञ्जरी=भीमनृपपत्नी, कन्यालाभं=पुत्रीप्राप्तिं, विप्रियम्=इष्टविरुद्धं, मन्यमाना=अवबुध्यमाना, जरत्=जीर्णं, यत् मञ्जीरं=नूपुरं, तस्य रवः=ध्वनिरिव जर्जराणि=क्षीणानि, विलक्षाणि=विह्वलानि, विह्वलताव्यञ्जकानीत्यर्थः। अक्षराणि यस्यां तया गिरा=वाण्या, क्रोधपरिस्पन्दं=क्रोधस्फुरणं, कुर्वाणेव=विदधानेव [इत्युत्प्रेक्षा]; निन्दास्तुतिधर्मेण=निन्दाप्रशंसायुक्तेनेत्यर्थः। नर्मलीलया=परिहासपूर्णसरसविनोदेन, कलहं=वादविवादम्, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—उन मुनि के इस प्रकार कहने पर पुत्र की कामना करने वाली प्रियंगुमञ्जरी ने होने वाली कन्या-प्राप्ति को (अपने लिए) अप्रिय—इच्छाविरुद्ध जानकर जीर्ण पुराने नूपुर की ध्वनि के समान जर्जर (क्षीण) एवं विलक्ष—विह्वलता को प्रदर्शित करने वाले अर्थात् अस्फुट अक्षरों वाली वाणी से क्रोध को अभिव्यञ्जित करती हुई निन्दा और प्रशंसा से युक्त परिहासपूर्ण मधुर विनोद के द्वारा (उनके साथ) कलह प्रारम्भ किया ॥

'नयशोभाजन ! कृतकुटीककुशास्त्रग्राहिन्नवेदनोद्गारं कृतवानसि क्वापि। सर्वदानादेयेषु प्रतिकूलवर्तिषु जलेषु रतिं कुर्वाणः पाठीनहिंसको धीवर इवोपलक्ष्यसे। कुरङ्गेषु प्रीतिं बध्नासि। कदम्बैः कुरबकैर्बहुकदलीकैः पलाशप्रायैः कुजन्मभिः सह संवससि ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—नयेति। निन्दापक्षे—नयशोभाजन=हे न यशोभाजन !, अयन्—शस्विन्नित्यर्थः। कृतकुटीककुशास्त्रग्राहिन कृतानि=कृत्रिमाणि, न हि वेदवदपौरुषेयाणि; कुटीकानि=कुत्सिता टीका येषां तानि, कुशास्त्राणि=कुत्सितानि शास्त्राणि गृह्णासि इत्येवंशील ! हे अवेद !=वेदपाठरहित !, क्वापि=कुत्रापि, उद्गारम्=उच्चारणं, न कृतवानसि, तस्माद् वक्तुमपि न जानासीति भावः।

स्तुतिपक्षे—नय-शोभा-जन—नयश्च=नीतिश्च शोभा च ते नयशोभे, जनयसि इति नयशोभाजनस्तत्सम्बुद्धौ तथोक्त ! [जनयतेरच्] अत्रागमनेन भवताऽस्माकं नयस्य शोभायाश्च वृद्धिः कृतेति भावः। हे कृतकुटीक !—कृता=विहिताः, कौ=पृथिव्यां, टीका=गमनं येन तत्सम्बुद्धौ तथोक्त !; स्वर्गात्पृथिव्यां भवत अवतरणेन वयमनुगृहीताः स्म इति भावः। कुशः=दर्भः, त एवास्त्रं गृह्णासि इत्येवंशील ! कुशास्त्रेणैवादृश्यानामपि शत्रूणां विघातोक्त्या मुनेरलौकिकत्वं व्यज्यते। क्वापि=कुत्रचिदपि वेदनोद्गारं—वेदना=व्यथा, तदर्थम् उद्गारम्=उच्चारणं, न कृतवानसि, प्रियंवदोऽसि सर्वदा सर्वत्रेति भावः।

निन्दापक्षे—सर्वदा=सदा, अनादेयेषु=अश्रद्धेयेषु, प्रतिकूलवर्तिषु=विपरीतवर्तिषु, जडेषु [डलयोरभेदात्]=अज्ञेषु, रतिं=प्रेम, कुर्वाणः=विदधानः, पाठीनहिंसकः=पाठीनाममत्स्यविशेषघातुकः, धीवर इव उपलक्ष्यसे=अवगम्यसे, धीवरोऽपि किल पाठीनाहारत्वात् कूलं=कच्छं प्रति वर्तमानेषु नादेयपयःसु रतिं कुरुते।

स्तुतिपक्षे—सर्वदा=सर्वकालमेव, प्रतिकूलवर्तिषु=कूलं कूलं प्रति वर्तमानेषु; नादेयेषु=नदीभवेषु, जलेषु=पयःसु, [तीर्थस्थास्नुतया] रतिम्=आसक्तिं, कुर्वाणः=विदधानः, पाठी=वेदपाठीत्यर्थः, न हिंसकः=न हिंसाशीलः, धीवरः—धिया=बुद्ध्या, वरः=श्रेष्ठ, इव उपलक्ष्यसे=अवगम्यसे।

निन्दापक्षे—कुरङ्गेषु—कुत्सितो रङ्गः=वासना येषां तेषु, प्रीतिम्=आसक्तिं, बध्नासि, कदम्बैः=कुमातृकैः, अत्रेदमवधेयम्—कुत्सिता अम्बा येषां ते इति बहुव्रीहिसमासोऽत्र न कार्यः, तथा कृते कोः कद्भावो न स्यात्, तदियं प्रक्रियाऽत्र स्वीकार्या—कुत्सिता अम्बाः कदम्बाः, ताश्च दुश्चेष्टितैः कुर्वन्ति आचक्षते वा इति णिजन्तादच्। अथवा कुत्सिता अम्बा भाषका इति अविशब्दे इति धातोरच्। कुरवकैः—कुत्सितो रवः=ध्वनिः येषां तैः, बहुकदलीकैः—कुत्सितमलीकमिति कदलीकं, बहुकदलीकं येषां तैः, पलाशप्रायैः—पलं=मांसम्, अश्नन्ति=खादन्तीति पलाशाः=राक्षसाः, तत्प्रायैः=तत्सदृशैः, कुजन्मभिः—कुत्सितं जन्म येषां तैः, सह=साकं, संवससि=वासं विधत्से।

स्तुतिपक्षे—मुनयो हि वनवासित्वान्मृगवृक्षादिप्रिया भवन्ति, तदेवाह—**कुरङ्गेष्विति**। कुरङ्गेषु=मृगेषु, प्रीतिं=स्नेहं, बध्नासि, कदम्ब-कुरबक-कदलीपलाशा ये कुजन्मानः—कौ=पृथिव्यां, जन्म येषां ते कुजन्मानः=वृक्षाः तैः सह संवससि। श्लेषाऽलङ्कारः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—(निन्दापक्ष में) हे न+यशोभाजन ! (अयशस्विन् !), हे कृत-कुटिककुशास्त्रग्राहिन् ! (कृत्रिम, कुत्सित—निन्दनीय टीकाओं से युक्त कुशास्त्र—निन्दनीय शास्त्रों को ग्रहण करने वाले !), हे अवेद ! (वेदपाठरहित अथवा कुछ भी न जानने वाले !) (तुम) कहीं भी उद्गार अर्थात् अपने विचारों को व्यक्त नहीं किये हो (अतः तुम बोलना भी नहीं जानते) । हर समय अश्रद्धेय एवं विपरीत चलने वाले अथवा आचरण करने वाले जड़ (मूर्ख) लोगों से प्रेम करते हुए पाठीन नामक विशेष प्रकार की मछलियों की हिंसा करने वाले धीवर—मल्लाह की तरह जान पड़ते हो । कुरङ्गों—निन्दित वासना वाले लोगों से प्रेम करते हो । कदम्बों—निन्दित (आचरण वाली) माताओं, कुरवकों—निन्दित (वचन) बोलने वालों, बहुकदलीकों—बहुत ज्यादा गर्हित झूठ बोलने वालों, प्राय मांस खाने वालों एवं कुजन्मों - निन्दित (कुल में) जन्म लेने वालों के साथ निवास करते हो, रहते हो ॥

(प्रशंसापक्ष में) हे नय-शोभाजन ! (नीति एवं शोभा के जनक !, हे कृत-कुटीक ! (पृथ्वी पर आगमन करने वाले !), हे कुशास्त्रग्राहिन् ! (कुशरूपी अस्त्र को ग्रहण करने वाले !) (आप) कहीं भी पीड़ादायक उच्चारण नहीं करते अर्थात् कभी भी किसी के प्रति अप्रिय वचन नहीं बोलते । (आप) हर समय प्रत्येक कूलों—तटों पर वर्तमान नादेय—नदी के जल में आसक्ति करते हुए (वेद के) पाठक, अहिंसक (एवं) बुद्धि से श्रेष्ठ जान पड़ते हो । (आप) मृगों से स्नेह रखते हो (और) पृथ्वी पर जन्म लेने वाले कदम्ब, कुरवक, कदली तथा पलाशबहुल वृक्षों के साथ निवास करते हो ॥

किमन्यद् ब्रूमो वयम् ॥

कल्याणी—किमिति । भवद्विषये, अन्यत्=अपरं, वयं किं ब्रूमः=वदामः ॥

ज्योत्स्ना—(आपके विषय में) हम और क्या कहें ॥

यस्य ते सदाचारविरुद्धः पुष्पवत्कान्तारागः एव प्रियः ॥

कल्याणी—यस्येति । निन्दापक्षे—यस्य, ते=तव, सदाचारविरुद्धः—सदा=सर्वदा, आचारविरुद्धः=आचरणविपरीतः, पुष्पवतीषु=रजस्वलासु, कान्तासु=प्रियासु, रागः=आसक्तिरेव प्रियः=प्रीतिकरः ।

स्तुतिपक्षे—हे सदाचार—सन्=शोभनः, आचारः यस्य तत्सम्बुद्धौ तथोक्त ! यस्य, ते=तव, विरुद्धः—विभिः=पक्षिभिः, रुद्धः=सङ्कुलः, पुष्पवान्=प्रशस्तकुसुमयुक्तः, कान्तारस्य=अरण्यस्य, अगः=वृक्षः, स एव प्रियः=रुचिकरः, वनवासित्वादिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—(निन्दापक्ष में)—जिस तुमको हर समय आचारविरुद्ध रजस्वला स्त्रियों में आसक्ति ही अभीष्ट है।

(स्तुतिपक्ष में) हे सत् आचरण वाले ! जिन आपको वि—पक्षियों से रुद्ध—व्याप्त, पुष्पों से समन्वित जंगली वृक्ष ही रुचिकर हैं (क्योंकि आप वनवासी हैं) ॥

तदलमनेन तापसहितेन कन्यावरप्रदानेन' इति ॥

कल्याणी—तदिति। निन्दापक्षे—तत्=तस्मात्, अनेन=एतेन, तापसहितेन—तापेन=सन्तापेन, सहितं तेन, खेदयुक्तेनेति भावः। कन्यावरप्रदानेन=पुत्रिकावरदानेन, अलं=किञ्चित्साध्यं नास्ति, यतोऽहं पुत्रार्थिनीति भावः।

प्रशंसापक्षे—हे तापस ! तापस-हि-ते-न—हि=निश्चयेन, ते=तव, अनेन=एतेन, कन्यावरप्रदानेन=पुत्रिकावरदानेन, अलं=किञ्चित्साध्यं नास्तीति न, कन्यावरप्रदानमेव बहु मन्यामह इति भावः ॥

ज्योत्स्ना—(निन्दापक्ष में) इसलिए इस तापसहित अर्थात् सन्तापदायक कन्या-प्राप्ति का वरदान देना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि मैं पुत्र-प्राप्ति की अभिलाषा रखने वाली हूँ।

(प्रशंसापक्ष में) इसलिए हे तपस्विन् ! निश्चय ही आपका यह कन्याप्राप्तिरूपी वरदान देना पर्याप्त नहीं है—ऐसी बात नहीं है; क्योंकि आपके द्वारा दिये गये कन्याप्राप्तिरूपी वरदान को भी मैं बहुत मानती हूँ ॥

एवमभिहितः सोऽपि तां बभाषे ॥

कल्याणी—एवमिति। एवं=पूर्वोक्तप्रकारेण, अभिहितः=प्रियङ्गुमञ्जर्योक्तः, सः=मुनिः, अपि तां=राज्ञीं, [वक्ष्यमाणप्रकारेण] बभाषे=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—(उस प्रियंगुमञ्जरी के) इस प्रकार कहने पर वे मुनि भी उससे (इस प्रकार) बोले ॥

'दोषाकरमुखि ! किं मामुपालभसे। प्रायः प्राणिनामीशः शंभुरेव शुभाशुभं कर्मालोक्य तुलाधर इव तुलितं फलमुपकल्पयति ॥

कल्याणी—दोषेति। निन्दापक्षे—दोषाणामाकरः=मुखं यस्यास्तत्सम्बुद्धौ हे दोषाकरमुखि !, स्तुतिपक्षे—दोषाकरः=रजनिकरः चन्द्रमा इव मुखं यस्यास्तत्संबुद्धौ, हे चन्द्रमुखीत्यर्थः। किं=किमर्थं, मां=मुनिम्, उपालभसे=दुर्वचनैर्निन्दसि, प्रायः=बहुधा, प्राणिनां=जीवधारिणाम्, ईशः=प्रभुः, शंभुः=शिव एव, शुभाशुभं=सदसत्, कर्म=कृतं कार्यम्, आलोक्य=विचार्येत्यर्थः, तुलाधर इव=तोलक इव, तुलितं=तुलया संमितं, फलं=परिणामम्, उपकल्पयति=प्रयच्छति ॥

ज्योत्स्ना—(निन्दापक्ष में) हे दोषों के आकर—भाण्डाररूपी मुखवाली ! अपने दुर्वचनों द्वारा मुझ मुनि की निन्दा क्यों कर रही हो ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(प्रशंसापक्ष में) [दोषाकर=चन्द्रमा] हे चन्द्रमुखि ! मुझ मुनि को क्यों उलाहना दे रही हो ? प्रायः सभी प्राणियों के स्वामी भगवान् शंकर ही (उन प्राणियों के) अच्छे-बुरे कर्मों को देखकर अर्थात् विचार कर तौलने वालों के समान तुलित—न ज्यादा न कम अर्थात् समुचित फल प्रदान करते हैं ॥

तथाहि—

यद्यावद्यादृशं येन कृतं कर्म शुभाशुभम् ।
तत्तावत्तादृशं तस्य फलमीशः प्रयच्छति ॥१७॥

अन्वयः—येन यत् यावत् यादृशं शुभाशुभं कर्म कृतम्, ईशः तस्य तत् तावत् तादृशं फलं प्रयच्छति ॥१७॥

कल्याणी—यदिति । येन=प्राणिना, यत् यावत्=यावन्मात्रं, यादृशं=यद्विधं, शुभाशुभं=सदसत्, कर्म=कार्यं, कृतं=विहितम्, ईशः=शिवः, तस्य=कर्मणः, तत् तावत्=तावन्मात्रं, तादृशं=तद्विधं, फलं=परिणामं, प्रयच्छति=ददाति । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१७॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; जिस (प्राणी) के द्वारा जो, जितनी मात्रा में और जिस प्रकार का अच्छा या बुरा कर्म किया गया है, उसे उतनी ही मात्रा में और उसी प्रकार का फल ईश्वर अर्थात् भगवान् शंकर प्रदान करते हैं ॥१७॥

अथवा,

मत्तमातङ्गगामिनि ! यस्यास्तवाप्रमाणालोचनश्रीः सा त्वं बलिसंश्रयावलग्ना कस्य नाधिक्षेपं जनयसि ॥

कल्याणी—मत्तेति । निन्दापक्षे—मत्तः=क्षीबः, मातङ्गः=शबरः, तद्वद् गच्छसि=चेष्टसे इत्येवंशीले ! यस्यास्तव=भवत्याः, आलोचनश्रीः=विवेकसंपद्, अप्रमाणा=प्रत्यक्षादिप्रमाणरहिता, सा त्वं=तादृशी त्वम्, बलिनः=बलवतः राज्ञः, संश्रये=आश्रये, अवलग्ना=अवष्टब्धा, कस्य=पूज्यस्यापूज्यस्य वा, अधिक्षेपं=तिरस्कारं, न जनयसि=न करोषि, सर्वस्यापि करोष्येवेति भावः ।

स्तुतिपक्षे—मत्तः=मदयुक्तः, मातङ्गः=गज इव गच्छसि इत्येवंशीले !, मदगजगामिनीति भावः । यस्यास्तव=प्रियंगुमञ्जर्याः, लोचनश्रीः=नेत्रशोभा, अप्रमाणा=अपरिमिता; सा त्वं=तादृशी त्वं, बलिसंश्रयावलग्ना=त्रिवलिसंयुक्तमध्यमा, कस्य=जनस्य, न+आधिक्षेपम्—आधिः=मनोव्यथा, तस्य क्षेपम्=अपनोदं, न जनयसि=न करोषि, सर्वस्यापि करोष्येवेति भावः । श्लेषालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—अथवा;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(निन्दापक्ष में) हे मत्तमातङ्गिनि ! (मतवाले किरात के समान चलने वाली !) जिस तुम्हारी आलोचनश्री—विवेकसम्पति अप्रमाणा—प्रत्यक्षादि प्रमाणों से रहित है, वह तुम बलिसंश्रय—बलवान राजा के आश्रय को प्राप्त कर किसका तिरस्कार नहीं करती हो ?

आशय यह है कि तुम्हारी विचारशक्ति यद्यपि प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों को मानने वाली नहीं है, फिर भी शक्तिशाली राजा का आश्रय प्राप्त होने के कारण पूज्य-अपूज्य सभी लोगों का तिरस्कर करने में तुम सक्षम हो ।

(प्रशंसापक्ष में) हे मत्तमातङ्गिनि ! (मदयुक्त हाथी के समान चलने वाली !) जिस तुम्हारी लोचनश्री—आँखों की शोभा अप्रमाणा—अपरिमित है वह बलिसंश्रय—त्रिवली से संयुक्त अवलग्न—मध्य भाग (कमर) वाली तुम किसकी आधि—मनोव्यथा का क्षेप—विनाश नहीं करती हो ?

आशय यह है कि तुम्हारी आँखें अपरिमित रूप से शोभा-सम्पन्न हैं और तुम्हारा कमर भी त्रिवली से समन्वित है, इसलिए तुम्हारा अपूर्व सौन्दर्य किसी की भी मानसिक व्यथा को दूर करने में समर्थ है ॥

तदलमनेनालापालसत्प्रपञ्चेन । गतो भूयिष्ठो दिवसः । समासन्नोऽस्माकमाह्निकसमयः । सीदत्येषा ब्रह्मपरिषद् । गगनमण्डलमध्यमारोहति भगवानशेषकल्याणचिन्तामणिस्तरणिः । अरविन्दारुणवदने न नक्तं समयमनुपालयन्त्यमी मुनयः । अनुमन्यस्व । यामो वयम् ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, आलापे=संभाषे, आलस्य=अभव्यस्य, सतः=भव्यस्य च, प्रपञ्चेन=विस्तारेण अलं, निरर्थकत्वादिति भावः । गतः=व्यतीतः, भूयिष्ठः=महदंशः, दिवसः=अहः, दिवसभाग इत्यर्थः । अस्माकं=मुनीनाम्, आह्निकसमयः=मध्याह्नकालिकसन्ध्योपासनकालः, समासन्नः=सन्निकृष्टः वर्तते । एषा=इयं, ब्रह्मपरिषद्=ब्राह्मणमण्डली, सीदति=कष्टमनुभवति; चिरकालसमुपवेशनादिति भावः । अशेषकल्याणचिन्तामणिः—अशेषाणि=समस्तानि; यानि कल्याणानि=मङ्गलानि, तेषां चिन्तामणिः=तद्रूपः, प्रपूरक इति भावः । भगवान्=देवः, तरणिः=सूर्यः, गगनमण्डलमध्यम्=आकाशमध्यभागम्, आरोहति=आसीदति; अरविम्+दारुणवदने—दारुणं=रौद्रं; न यशोभाजनपाठीनहिंसकेत्यादिकस्य मुनीनां प्रतिपादनादिति भावः । वदनं=मुखं यस्यास्तत्सम्बुद्धौ—हे दारुणवदने ! न अरविं=सूर्यशून्यं, नक्तं=समयम्, अनुपालयन्ति । अमी=एते, मुनयः=तापसाः, अपितु सरविं सन्ध्यासमयं मुनयोऽप्यनुपालयन्तीत्यर्थः [इति अर्थापत्तिरलंकारः] । यथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुनयः सन्ध्याकालिकसन्ध्योपासनमनुतिष्ठन्ति तथैव मध्याह्नकालिकमप्यनुतिष्ठन्ति। वयमपि मुनयस्ततोऽस्माकं सन्ध्यावसरोऽयमिति मुनेराशयः। स्तुतिपक्षे—अरविन्दारुणवदने=कमलारुणमुखि ! न अमी मुनयः नक्तं समयं=सन्ध्याकालम्, अनु=पश्चात्, पालयन्ति; अवश्यविधेयत्वात्तत्कालमेवेत्यर्थः। अनुमन्यस्व=तदनुजानीहि अस्मान्। वयं यामः=गच्छामः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए वार्तालाप के इस आल—अभव्य तथा सत्—भव्य प्रपञ्च को बन्द किया जाय अर्थात् यह वार्तालाप ही निरर्थक है। दिन का बड़ा भाग व्यतीत हो गया है। हम मुनियों का आह्निकसमय अर्थात् मध्याह्नकालिक सन्ध्योपासन का समय समीप है। यह ब्राह्मणों की मण्डली (बहुत देर से बैठी रहने के कारण) कष्ट का अनुभव कर रही है। समस्त कल्याणों के चिन्तामणिस्वरूप अर्थात् समस्त कल्याणों को देने वाले भगवान् सूर्य आकाशमण्डल के मध्य भाग में आरूढ़ हो रहे हैं।

(निन्दापक्ष में)—(मुनियों को अयशस्विन्, पाठीनहिंसक इत्यादि कहने के कारण) हे दारुणवदने ! सूर्य से रहित सायंकालीन सन्ध्या का अनुष्ठान ये मुनि लोग नहीं करते।

आशय यह है कि मुनि लोग जिस प्रकार सायंकालिक सन्ध्या का अनुष्ठान करते हैं उसी प्रकार मध्याह्नकालिक सन्ध्या का भी अनुष्ठान करते हैं और हम सब भी मुनि हैं, इसलिए यह समय हमारे सन्ध्या करने का है।

(प्रशंसापक्ष में) हे अरविन्दारुणवदने ! (कमल के समान लाल मुखवाली !) हम मुनि लोग समय के पश्चात् सन्ध्या का अनुष्ठान नहीं करते (क्योंकि आवश्यक कर्तव्य होने के कारण निश्चित समय पर ही इसका अनुष्ठन किया जाता है)।

इसलिए हमलोगों को अनुमति दीजिये। हमलोग जा रहे हैं ॥

इत्यभिहिता सा प्रियंगुमञ्जरी 'महर्षे ! मर्षणीयोऽयमेकस्त्यक्तकुलवधूधर्मो नर्मापराधः। स्वीक्रियन्तामेतानि विविधान्युल्लसन्मयूखमञ्जरीरचितेन्द्रचापचक्राण्याभरणानि। गृह्यतामिदमिन्दुद्युतिधवलमनलशौचं चीनांशुकपट्टपरिधानयुगलमियं च कुसुममालिका' इत्यभिधायास्यान्यदप्यतिथिसत्कारोचितमुपढौक्य प्रसादनाय प्रणाममकरोत् ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्, अभिहिता=मुनिनोक्ता, सा=पूर्ववर्णिता, प्रियङ्गुमञ्जरी=तन्नामा राज्ञी, हे महर्षे !=मुने !, अयम्=एषः, एकः=प्रथमः, त्यक्तः=विस्मृत इत्यर्थः। कूलवधूधर्मः=कुलाङ्गनोचितकर्तव्यं यस्मिंस्तथाविधः नर्मापराधः=परिहासजनितापराधः, मर्षणीयः=क्षन्तव्यः। स्वीक्रियन्ताम्=आत्मीक्रियन्ताम्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतानि=इमानि, विविधानि=बहुप्रकाराणि, उल्लसन्तीभिः=दीप्यमानाभिः, मयूखमञ्जरीभिः=किरणरेखाभिः, रचितं=कृतम्, इन्द्रचापक्रम्=इन्द्रधनुर्मण्डलं येषु तादृशानि आभरणानि=भूषणानि, गृह्यतां=स्वीक्रियताम्, इदम्=एतत्, इन्दुद्युतिः=चन्द्रकान्तिरिव, धवलं=शुभ्रम् [उपमा]। अनलस्य=वह्नेः, शौचं=पवित्रतेव शौचं यस्य तत्, अग्नितुल्यपूतमित्यर्थः [इत्युपमा]। चीनांशुकपट्टपरिधानयुगलं=परिधानार्थं क्षौमदुकूलयुग्मम्, इयं च=एषा च, कुसुममालिका=पुष्पस्रक्' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, अस्य=मुनेः, अन्यदपि=तदतिरिक्तमपि, अतिथिसत्कारोचितं=आतिथ्यसत्कारयोग्यं वस्तुराशिम्, उपढौक्य=उपहृत्य, प्रसादनाय=प्रसन्नतायै, प्रणामं=प्रणतिम्. अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार (मुनि के द्वारा) कहे जाने पर वह प्रियंगुमञ्जरी "हे महर्षे ! कुलाङ्गनाओं के धर्म का परित्याग करने वाला यह परिहासजनित एक (प्रथम) अपराध क्षमा करने योग्य है। बहुत प्रकार से छिटकती हुई किरणमञ्जरियों से इन्द्रधनुर्मण्डल के समान बने हुए इन आभूषणों को स्वीकार करें। चन्द्रकान्ति के समान शुभ्र और अग्नि की पवित्रता के समान पवित्र इन दो शिल्कवस्त्रों तथा पुष्पों की इस माला को ग्रहण करें।" इस प्रकार कहकर इससे अतिरिक्त भी अतिथि-सत्कारोचित वस्तुओं को लाकर उन मुनि को प्रसन्न करने के लिए (उनको) प्रणाम किया ॥

मुनिस्तु 'गौरवमुखि ! वृत्तमुक्तोऽयं हारः, दोषालयमङ्गदम्, जघन्यपदाश्रयं काञ्चीदाम, सदापदाधिष्ठानं नूपुरम्, अलङ्कारो भवद्विधानामेव राजते नास्माकम्। इयं च परिमलवाहिनी माला निबद्धमधुकरालापाचीनं वासश्च तवैवोचितम्' इत्यनेकधा श्लिष्टालापलीलयातिवाह्य काश्चित्कालकलाः करकलितकमण्डलुर्मण्डलेश्वरमापृच्छ्यतां च प्रियंगुमञ्जरीं जरठतमालनीलमम्बरतलमुदपतत् ॥

कल्याणी—मुनिरिति। स्तुतिपक्षे—मुनिस्तु=ऋषिस्तु, हे गौरवमुखि !=प्रभावमुखि ! वृत्तमुक्तः—वृत्ता=वर्तुला, मुक्ता=मौक्तिकानि यस्मिन् सः, अयम्=एषः, हारः=गलहारः, दोषालयम्—दोषे=बाहू, आलयः यस्य तत्, अङ्गदं=केयूरम्, 'दोषा रात्रौ भुजेऽपि च' इति विश्वः। जघने भवं जघन्यं पदं=स्थानम्, आश्रयः यस्य तत्, काञ्चीदाम=रशनामाला, सदा-पदाधिष्ठानम्—सदा=शश्वत्, पदे=पादौ, अधिष्ठानम्=आश्रयः यस्य तन्नूपुरम्', अलङ्कारः=भूषणं, भवद्विधानामेव=भवादृशीनां राजपत्नीनामेव, राजते=शोभते, नास्माकं मामकानां वनवासिनामिति भावः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निन्दापक्षे—हे गौः+अवमुखि—गौः=पशुतुल्ये ! इति भावः, अवनतं=कुलवधूधर्मविरुद्धाचरणेन लोकनिन्दाभरात् मुखं यस्यास्तत्सम्बुद्धौ— हे अवमुखि !, वृत्तेन=शीलेन, मुक्तः=रहितः अयं हारः=व्यवहारः, वनवृत्तिभ्योऽलङ्कारादिप्रदानं तथाऽस्माभिस्तदादानं च धर्मशास्त्रविरुद्धत्वादिति भावः । दोषाः=अवद्यानि तेषाम् आलयम्=आयतनम्, अङ्गदं=केयूरकम्, जघन्यं=गर्हितं, पदम् आश्रयः यस्य तत् काञ्चीदाम=मेखला, सतां=सज्जनानामपि, आपदां= विपत्तिम्, आधेश्च=व्याधेश्च, अधिष्ठानं=स्थानं, सुषामादित्वात्षत्वम् । नुपुरम्, तस्मादेवं दोषयुक्तः अलङ्कारः=भूषणम्, अलम्=अत्यर्थं, कारः=राजग्राह्यभागश्च त्वादृशीनामेव सङ्गच्छते, नास्माकमपरिग्रहशालिनां लोकोपकारिणां च ।

स्तुतिपक्षे—इयं च=एषा च, परिमलवाहिनी=सुगन्धिप्रवाहिनी, निबद्धः=संलग्नः, मधुकराणां=भ्रमराणाम्, आलापः=गुञ्जारवः यत्र तादृशी माला=पुष्पस्रक्, चीनं वाससश्च=क्षौमांशुकं च, तवैव=तुभ्यमेव, उचितं=युक्तं, नास्माकम् ।

निन्दापक्षे—इयं च=एषा च, परितः=सर्वतः, मलवाहिनी=रजोमलप्रवाहिनी, तथा निबद्धमधुना=समवेतसुरया, कराला=भीषणा, माला=पुष्पस्रक्, अपाचीनं=निकृष्टं, वासः=वस्त्रं च तवैव योग्यं नास्माकम् । इति=एवम्, अनेकधा=बहुधा, श्लिष्टालापलीलया=श्लिष्टोक्तिविनोदेन, काश्चित्काल-कलाः=काश्चित्कालांशम्, अतिवाह्य=यापयित्वा, करेण=हस्तेन, कलितः=गृहीतः, कमण्डलुर्येन स मुनिः, मण्डलेश्वरं=नृपं भीमं, तां प्रियंगुमञ्जरीं=राज्ञीं च, आपृच्छ्य=आमन्त्र्य, जरठतमालनीलं=प्रवृद्धतापिच्छपादपवन्नीलं [उपमा], अम्बरतलं=गगनम्, उदपतत्=उदगात् । श्लेषाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—(प्रशंसापक्ष में) मुनि भी "हे गौरवपूर्ण मुखवाली ! वृत्त—वर्तुलाकार (गोल) मणियों का यह हार, भुजारूपी आवास वाला यह अङ्गद (केयूर); जघनस्थलरूपी आश्रय वाली यह करधनी (और) सदा पैरों में ही अधिष्ठित रहने वाला यह नूपुर—ये सभी आभूषण आप जैसी राजपत्नियों को ही अच्छे लगते हैं, हम जैसे वनवासियों को नहीं और सुगन्ध को ढोने वाली भ्रमरों के कलरव से समन्वित यह माला एवं ये शिल्कवस्त्र भी आपके लिए ही उचित हैं ।

(निन्दापक्ष में) हे गौरवमुखि ! (कुलवधुओं के धर्म के विरुद्ध आचरण के कारण लोकनिन्दा के भय से गौ के समान नत मुख वाली ! वनवासियों को अलंकार प्रदान करना और हमारे जैसे मुनियों के लिए उसका लेना धर्मशास्त्र-विरुद्ध है, इसलिए) वृत्त—शील से रहित यह व्यवहार, दोषों का आलय यह केयूर, निन्दित स्थान का आश्रयण करने वाली यह करधनी तथा सत्पुरुषों के लिए आपत्तियों का स्थान यह नूपुर है । इसलिए दोषयुक्त ये अलंकार अथवा व्यर्थ के कार—राजग्राह्य भाग आप जैसों को ही अच्छे लगते हैं, हम जैसे अपरिग्रह-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शालियों और लोकोपकारियों को नहीं। और यह चारो ओर से रजःपूर्ण मल को ढोने वाली एवं मद्य से समन्वित भीषण माला तथा ये अपाचीन—निकृष्ट वस्त्र भी आपके लिए ही उचित हैं, हमारे लिए नहीं।

इस प्रकार बहुविध श्लिष्ट आलापपूर्ण विनोद के द्वारा कुछ समय व्यतीत कर हाथों में कमण्डलु लिये हुए वे मुनि राजा भीम और रानी प्रियंगुमञ्जरी से पूछ कर अत्यन्त प्राचीन तमाल वृक्ष के समान नीले आकाश को उड़ गये ॥

वियति विशदविद्युल्लोललीलायमाने
स्फुरदुरुपरिवेषाकारकान्तौ मुनीन्द्रे।
अथ गतवति तस्मिन्विस्मयोत्तानिताक्षः
क्षितिपतिरवतस्थे स्थाणुसंस्थां दधानः ॥१८।

अन्वयः—वियति विशदविद्युल्लोललीलायमाने स्फुरदुरुपरिवेषाकारकान्तौ मुनीन्द्रे गतवति अथ विस्मयोत्तानिताक्षः क्षितिपतिः स्थाणुसंस्थां दधानः अवतस्थे ॥१८॥

कल्याणी—वियतीति। वियति = आकाशे, विशदविद्युल्लोललीलायमाने—विशदा=उद्दीप्ता, या विद्युत्=तडित्, तस्या लोलालीला=छविरिव आचरति [इति क्यङ्गतोपमा], स्फुरदुरुपरिवेषाकारकान्तौ—स्फुरन्ती=दीप्यमाना, उरुपरिवेषाकारा=बृहन्मण्डलाकारा, कान्तिः=प्रभा यस्य तस्मिन् मुनीन्द्रे=मुनिश्रेष्ठे, गतवति=याते सति, अथ=अनन्तरं, विस्मयेन=आश्चर्येण, उत्तानिते=गगनमभ्युत्थापिते, अक्षिणी=नेत्रे येन सः, क्षितिपतिः=भूपालो भीमः, स्थाणुसंस्थां—स्थाणुः=स्तम्भः, तस्य संस्थां=स्थितिं, दधानः=धारयन्, स्थाणुवत् स्तब्ध इति भावः। अवतस्थे=अवस्थितो बभूव, 'समवप्रविभ्यः स्थः' इत्यात्मनेपदम्। अत्रान्यस्य धर्मं कथमन्यो वहत्विति स्थाणोः संस्थायाः क्षितिपतेर्धारणमसम्भवात्तत्संस्थासदृशीं संस्थामवगमयत् क्षितिपतेः स्थाणोश्च बिम्बप्रतिबिम्बभावं बोधयतीति निदर्शनाऽलङ्कारः। 'विद्युल्लोललीलायमाने' इत्यत्र क्यङ्गतोपमा च। तयोः संसृष्टिः। मालिनी वृत्तम् ॥ १८ ॥

ज्योत्स्ना—उद्दीप्त बिजली की छवि के समान छवि वाले, दीप्यमान (चमकते हुए) विशाल मण्डलाकार कान्तिवाले उन मुनिश्रेष्ठ के आकाश में चले जाने के पश्चात् आश्चर्य के कारण आकाश की ओर नजरें उठाये हुए राजा भीम स्तम्भ की स्थिति को धारण करते हुए अर्थात् स्तब्ध होकर खड़े ही रह गये ॥१८॥

स्थित्वा च तत्कथावस्थया काश्चित्कालकलाः कलापिकुलोत्कण्ठाकारिणि रणति नवजलधररवरमणीये मध्याह्नगम्भीरभेरीसखे शङ्खयुगलके; विशति बिसकाण्डकवलनमपहाय तीव्रतरतपनतापताम्यत्तनुनि नवनलिनी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छदच्छायामण्डलमुपवनदीर्घिकावतंसे हंसकुले, कुमुदकुवलयाम्भोजपत्रपुञ्ज-पञ्जरान्तरमनुसरति परिहृतोष्णमधुनि मुकुलितपक्षपुटे षट्चरणचक्रवाले, चटुलाग्रिमखुरशिखरोल्लिखितधरणिमण्डलेषु खण्डितखर्वदूर्वानालनीलघुर-घुरायमाणघोणाकोणेषु विमुच्यमानेषु पिपासातुरतुरङ्गेषु, घर्मविघूर्णितेषु ससूत्कारकरविमुक्तसीकरासारवर्षेणार्द्रिताङ्गणेषु मज्जनाय सज्जितेषु सेवा-गतराजकुञ्जरेषु, क्रीडागिरिसरितमवतार्यमाणेषु लीलामृगमिथुनेषु, पयोभिः पूर्यमाणासु पञ्जरपक्षिपयःपानपात्रीषु उद्यानारघट्टतटीं टीकमानासु कोय-ष्टिमयूरमण्डलीषु, क्रीडासरः सरत्सु संगीतश्रमस्विन्नखिन्नकिंनरेषु, कूपकूल-कुलायकोणकूणितेष्वातपाततङ्काकुलकलविङ्केषु, भवनवनवापीपुलिनपालि-पांसुपटलमुत्तप्तमपहाय शीतलशैवलावलिं श्रयति तरलितनक्रे, क्रेङ्कारयति क्रौञ्चचकोरचक्रवाकचक्रे, क्रीडाप्ररोपितप्राङ्गणप्रान्ततरुशिखरमध्ये मध्याह्न-बलिपिण्डाय पिण्डिते क्रेङ्कारयति काकवयसां कर्णकटु कुटुम्बके, बकवलय-वलक्षान्क्षिपति दिक्षु दीप्रान्दीप्तिदण्डांश्चण्डरोचिषि, विसर्ज्य परिजनं राजा मज्जनभवनायोदचलत् ॥

कल्याणी—स्थित्वेति । तत्कथावस्थया—तस्यः=मुनेः, कथाभिरिति भावः । काश्चित्=कतिपयाः, कालकलाः=समयं, स्थित्वा, कंचित्कालमतिवाह्येत्यर्थः । कलापिकुलस्य = मयूरवृन्दस्य, उत्कण्ठाकारिणि=औत्सुक्यजनने, घनगर्जित-भ्रान्त्येति भावः । नवजलधररवरमणीये=नूतनमेघगर्जिततुल्यमनोज्ञे, मध्याह्नगम्भीर-भेरीसखे=मध्याह्नकालिकगम्भीरदुन्दुभिना सहेत्यर्थः । शङ्खयुगलके=शङ्खयुग्मके, रणति=शब्दायमाने, बिसकाण्डकवलनमपहाय=कमलतन्तुभक्षणं परित्यज्य, तीव्रत-रेण=समधिकतीक्ष्णेन, तपनतापेन=सूर्यातपेन, ताम्यन्ती = तप्यमाना, तनुः=शरीरं यस्य तस्मिन्, उपवनदीर्घिकावतंसे=उद्यानवापीभूषणे, हंसकुले=मरालवृन्दे, नवनलिनीछदच्छायां=नूतनकमलिनीपत्रच्छायां, विशति=प्रविशति, परिहृतं=त्यक्तम्, उष्णं=शीतरहितं, मधु=पुष्परसः येन तस्मिन्, मुकुलितं=संहृतं, पक्षपुटं=पुंखपुटं येन तस्मिन्, षट्चरणचक्रवाले=भृङ्गसमूहे, कुमुदस्य, कुवलयस्य, अम्भोजस्य च पत्रपुञ्ज एव पंजरं तस्य अन्तरं=मध्यभागम्, अनुसरति=प्रविशतीत्यर्थः । खण्डितैः=खण्डशः कृतैः, खर्वैः=अतिह्रस्वैः, दूर्वानालैः=दूर्वाकाण्डैः, नीलाः=नीलवर्णाः, दूर्वाकाण्डाना-मन्तःप्रविष्टत्वादिति भावः । अतएव घुरघुरायमाणा=घुरघुरेत्यव्यक्तं ध्वनिं कुर्वाणा, घोणाकोणा = नासिकाविवरप्रान्ता येषां तेषु । पिपासया=तृषा, आतुरा=आकुला, ये तुरंगाः=अश्वाः तेषु विमुच्यमानेषु=त्याज्यमानेषु; अतएव चटुलैः=चञ्चलैः, अग्रिमैः= अग्रपादभवैः, खुरशिखरैः=खुराग्रभागैः, उल्लिखितं=क्षुण्णं, धरणिमण्डलं=पृथ्वीमण्डलं यैस्तेषु । घर्मेण=आतपेन, विघूर्णितेषु=विह्वलेषु, ससूत्कारैः='सूत्' इत्याकारकशब्द-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहितैः, करैः=शुण्डाभिः, विमुक्तानां=प्रक्षिप्तानां, सीकराणां=जलबिन्दूनाम्, आसारवर्षेण=धारासारवृष्ट्या, आर्द्रितम्=आर्द्रीकृतम्, अङ्गणं=अजिरं यैस्तेषु। मज्जनाय=स्नानाय, सज्जितेषु=उद्योजितेषु, सेवागतराजकुञ्जरेषु=सेवायै आगतेषु नृपकुञ्जरेषु। लीलामृगमिथुनेषु=क्रीडाहरिणयुग्मेषु, क्रीडागिरिसरितं=क्रीडाशैलनदीम्; अवतार्यमाणेषु=प्रवेश्यमानेषु, पञ्जरेषु, ये पक्षिणः तेषां पयःपानाय=जलपानाय, याः पात्र्यः=लघुपात्राणि, तेषु पयोभिः=जलैः, पूर्यमाणासु=भ्रियमाणासु। कोयष्टयः=कुररपक्षिणः, मयूराः=कलापिनश्च, तेषां मण्डलीषु=वृन्देषु; उद्यानारघट्टतटीम्—उद्याने=उपवने; यः अरघट्टः=यन्त्रविशेषः; येन कूपाज्जलं निःसार्यते, तस्य तटीं=तटप्रान्तं, टीकमानाषु=गच्छन्तीषु। संगीताश्रमे=संगीतालये, स्विन्नाः=स्वेदयुक्ताः, खिन्नाः=श्रान्ताश्च, ये किंनरास्तेषु क्रीडासरः=क्रीडासरोवरं, सरत्सु=गच्छत्सु, आतपात्=घर्मात्, आतङ्केन=भयेन, आकुला=विह्वला, ये कलविङ्काः=पक्षिणः, तेषु कूपकूले=कूपतटप्रान्ते, यानि कुलायानि=नीडानि, तेषां कोणेषु=एकदेशेषु, कूणितेषु=कृतशब्देषु, तरलितः=विचेष्टितः यः नक्रः=मकरः तस्मिन्, उत्तप्तं=तापयुक्तं, भवनस्य वनस्य वा या वापी=दीर्घिका, तस्याः पुलिनपालेः=तटश्रेण्याः, पांसुपटलं=धूलिपुञ्जम्, अपहाय=त्यक्त्वा, शीतलशैवलावलिं=शिशिरशैवालपंक्तिं, श्रयति=सेवमाने। क्रौञ्चानां, चकोराणां चक्रवाकानां च चक्रे=समूहे, क्रेंकारयति=क्रेंकारं कुर्वंति, कूजतीति भावः। क्रीडायै=खेलनार्थं, प्ररोपिताः=आरोपिताः, प्राङ्गणप्रान्ते=अजिरभागे, ये तरवः=वृक्षाः तेषां शिखरमध्ये=अग्रभागान्तरे, मध्याह्नबलिपिण्डाय=मध्याह्नकालिकवलिपिण्डं ग्रहीतुम्; 'क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः' इति चतुर्थी। पिण्डिते=समवेते, काकवयसां=वायसपक्षिणां, कुटुम्बके=परिवारे, कर्णकटु=श्रोत्राप्रियं यथा स्यात्तथा, क्रेंकारयति=रटति सति, चण्डरोचिषि=सूर्ये, बकवलयवलक्षान्—बकवलयं=बकपक्षिमण्डलं, तद्वद् बलक्षान्=शुभ्रान्, दीप्रान्=दीप्यमानान्, दीप्तिदण्डान्=दण्डानिव प्रलम्बानित्यर्थः। किरणान् दिक्षु=सर्वासु दिक्षु, क्षिपति=प्रहरति सति, परिजनं=भृत्यवर्गं, विसर्ज्य=विसर्जितं कृत्वा; मज्जनभवनाय=स्नानागाराय, उदचलत्=उच्चलितः। 'गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनिः' इति मज्जनभवनायेत्यत्र चतुर्थी॥

ज्योत्स्ना—उन्हीं की कथा-वार्ता में कुछ समय बिताकर मयूरों को उत्कण्ठित करने वाले नूतन मेघों की ध्वनि (गर्जना) के समान रमणीय मध्याह्नकालिक गम्भीर नगाड़े के साथ दो शंखों के बजने पर; बिसकाण्ड—कमलनाल का खाना त्याग कर अत्यधिक तीक्ष्ण सूर्य-किरणों से तप्त होते हुए शरीर वाले उपवन-सरोवर के भूषणस्वरूप राजहंसों के नूतन कमलिनी-पत्रों की छाया में प्रवेश कर जाने पर; उष्ण पुष्परस का परित्याग कर (अपने) पंखों को सिकोड लेने वाले भ्रमर-समूहों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमुदों, कुवलयों तथा अम्भोजों—श्वेतकमलों के पत्रसमूहरूपी पिंजड़ों के मध्यभाग का अनुसरण करने पर अर्थात् पिंजड़े में प्रविष्ट हो जाने पर, खण्डित किये गये छोटे-छोटे दूर्वाकाण्डों (के प्रविष्ट होने) से नीलवर्ण, अतएव 'घुर-घुर' ध्वनि करते हुए नासिका-विवर वाले प्यास से व्याकुल घोड़ों के खोल दिये जाने के कारण (उनके द्वारा अपने) चञ्चल अगले पैरों के खुरों के अग्रभाग से पृथ्वीमण्डल को उल्लिखित किये जाने पर अर्थात् खोदे जाने पर; गर्मी से व्याकुल होकर 'सूं-सूं' शब्द के साथ सूँड़ों से फेंके जाते हुए जलकणों की वर्षा से अपने अंगों को गीला करने वाले सेवा के लिए आये हुए राजकुञ्जरों (राजकीय हाथियों) के स्नान के लिए सज्जित हो जाने पर; लीलामृगों द्वारा क्रीडाशैल की नदी में प्रवेश करने पर; पिञ्जरों में स्थित पक्षियोंको जल पीने के लिए रखे गये छोटे-छोटे पात्रों को जल से भर दिये जाने पर;सारसों तथा मयूर-समूहों के उपवनस्थित अरघट्ट– रहट (कुएँ से पानी निकालने वाला एक विशेष प्रकार का प्राचीन यंत्र) के तट पर चले जाने पर; संगीतघरों में पसीने से तर थके हुए किन्नरों के क्रीड़ासरोवर के प्रति चल देने पर, धूप के आतंक से व्याकुल पक्षियों के कुओं के तीर में बने हुए घोंसलों के कोने में (स्थित होकर) शब्द करने पर; चेष्टाविहीन मकरों द्वारा घरों अथवा जंगलों में स्थित सरोवरों के तटभाग की उत्तप्त (गरम) धूलिपुञ्जों का परित्याग कर शीतल शैवाल पंक्ति का आश्रयण कर लेने पर; क्रौञ्चों, चकोरों तथा चक्रवाकसमूहों द्वारा क्रेंकार शब्द करने पर अर्थात् कूजन करने पर; क्रीड़ा (खेलने) के लिए आँगन में रोपे गये वृक्षों के शिखरों के मध्य में मध्याह्नकालिक अर्थात् दोपहर के बलिपिण्ड को प्राप्त करने के लिए इकट्ठे हुए काकपक्षियों के परिवारों द्वारा कानों के लिए अप्रिय क्रेङ्कार करने पर अर्थात् काँव-काँव शब्द करने पर और सूर्य द्वारा बकपक्षियों (बगुलों) के समान श्वेत दीप्तिमान दण्डों के समान लम्बी किरणों को सभी दिशाओं में फेंके जाने पर (अपने) परिजनों का परित्याग कर अथवा परिजनों को जाने के लिए कहकर राजा भी उठकर स्नानागार के लिए चल दिये ॥

गत्वा च पृथ्वीवलयमिव पयःपूर्णसमुद्रद्रोणीकम्, केदारोदरमिव सकलशालिस्थानम्, श्रोत्रियद्विजजनभवनमिव सकलधौतपट्टम्, अतिरमणीयं मज्जनभवनमवतारिताभरणः स्नानपीठे निषसाद ॥

कल्याणी—गत्वेति। पृथिवीवलयमिव=भूमण्डलमिव, पयसा=जलेन, पूर्णा=युक्ता, समुद्रा=मुद्राङ्किता, द्रोणी=जलपात्री कुण्डिका यत्र तत्, स्नानीय-जलादिषु मुद्रादानं राजधर्म इति ज्ञेयम्। पक्षे—पयः पूर्णः समुद्रः=जलधिः, द्रोणी=देशविशेषश्च यत्र तत्, 'द्रोणी स्यान्नीवृदन्तरे' इति विश्वः, नीवृद्देशः। केदारोदरमिव=धान्यक्षेत्रमध्यभाग इव, कलशानां=कुम्भानाम्, आलिः=पङ्क्तिः, तथा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सह स्थानानि=प्रदेशाः यत्र तत्, पक्षे—समग्रशालिस्थानम्। श्रोत्रियद्विजजनभवनमिव=वैदिकब्राह्मणगृहमिव, कलधौतस्य=सुवर्णस्य, पट्टः=आसनं तेन सह, पक्षे—सकलाः=सर्वे, धौताः=क्षालिताः, पट्टाः=आसनानि यत्र तत् [श्लेषमूलोपमा]। अतिरमणीयं=परमरम्यं, मज्जनभवनं=स्नानागारं, गत्वा च=यात्वा च, अवतारितानि=विमुक्तानि, आभरणानि=भूषणानि येन सोऽवनीशः, स्नानपीठे—स्नानाय यत् पीठम्=आसनं तत्र, निषसाद=उपविवेश ॥

और जल से पूर्ण समुद्र एवं द्रोणी नामक देश से युक्त भूमण्डल के समान जल से युक्त एवं मुद्रासहित द्रोणी—जलकुण्डिका वाले, समस्त धान्यों के (उत्पत्ति) स्थान केदारक्षेत्र (धान के खेत) के समान कलशों की पंक्तियों सहित स्थान वाले, समस्त धुले हुए पट्टों—आसनों वाले वैदिक ब्राह्मण के घर के समान कलधौत—सुवर्ण से निर्मित आसनों वाले अत्यन्त रमणीय स्नानागार में जाकर (अपने) आभूषणों को उतार कर (वे राजा भीम) स्नान करने वाले आसन पर बैठ गये ॥

आसन्नस्थितश्चास्यावसरपाठकः पपाठ—

कल्याणी—आसन्नेति। अस्य=नृपस्य, आसन्नस्थितः=समीपवर्ती च, अवसरपाठकः=वैतालिकः, पपाठ=पठितवान् ॥

ज्योत्स्ना—और राजा के समीप ही स्थित समयानुसार पाठ करने वाले (वैतालिक) ने पढा ॥

वररजनीकरकान्ते चित्राभरणे निशानभःसदृशे।
तव नृप मज्जनभवने सवितानाभाति परमश्रीः ॥१९॥

अन्वयः—हे नृप! निशानभःसदृशे तव वररजनीकरकान्ते चित्राभरणे मज्जनभवने सवितानः परमश्रीः भाति ॥१९॥

कल्याणी—वरेति। हे वर=श्रेष्ठ!, रजनीकरकान्ते—रजनीकरस्य=चन्द्रस्य, कान्तिरिव कान्तिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ तथोक्त! [चित्राभ-रणे] रणे=युद्धे, हे चित्राभ—चित्रस्य=व्याघ्रस्य आभा इव आभा यस्य तत्सम्बुद्धौ तथोक्त! निशानभः—निशानं=निर्मलं नभस्तीति निशानभास्तत्सम्बुद्धौ तथोक्त! दीप्त्यर्थकभस् धातोः क्विप्। सदृश इः=कामः यस्य स सदृशेस्तस्य सम्बुद्धौ हे सदृशे!=कन्दर्पप्रतिम,! 'एङ्ह्रस्वात्' इति सम्बुद्धेः सुलोपः। हे नृप!=राजन्! निशानभःसदृशे—निशायां यत् नभः=गगनं, तत्तुल्ये, तव=राज्ञः, वररजनीकरकान्ते=वरा—श्रेष्ठा, रजनी=हरिद्रा, तां कुर्वन्तीति रजनीकराः=हरिद्रादिगन्धकारकाः तैः कान्ते=रमणीये, निशानभःपक्षे—वरः=दीप्तिमान्, सूर्याभावादिति भावः। यः रजनीकरः=चन्द्रः तेन कान्ते=रमणीये, चित्राभरणे—चित्राणि=विलक्षणानि, आभरणानि=भूषणानि यत्र तादृशे, पक्षे—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्रा नाम नक्षत्रमाभरणं यत्र तस्मिन्, मज्जनभवने=स्नानागारे, सविताना=सोल्लोचा, परमश्रीः=उत्कृष्टलक्ष्मीः, भाति=द्योतते, [सविता·न-आभाति, परम्-अश्रीः] अथ च तदुत्कृष्टलक्ष्म्यपेक्षया मज्जनभवने सविता=सूर्यः, नाभाति=परं केवलम्; अश्रीः=अनिष्प्रभ एव प्रतीयते। निशायां नभस्यपि सूर्यः निष्प्रभो भवन् नाभाति। आर्याजातेर्भेदविशेषः। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥१९॥

ज्योत्स्ना—(प्रथम पक्ष) हे श्रेष्ठ चन्द्रकान्ति के समान कान्ति वाले !, हे (युद्ध में) व्याघ्र के समान कान्ति वाले !, हे तीक्ष्ण तेज वाले !, हे कामदेव के प्रतिरूप ! हे राजन् ! आपके (इस) स्नानागार में पूर्ण रूप से फैली हुई उत्कृष्ट लक्ष्मी द्योतित हो रही है।

(द्वितीय पक्ष) हे राजन् ! रात्रि के आकाश के समान अर्थात् नीलवर्ण वाले अथवा निर्मल शोभा के समान उत्कृष्ट रजनी (हरिद्रादि लेपन द्रव्य) को बनाने वाले लोगों से मनोरम (बनाये गये), विलक्षण आभरणों वाले आपके (इस) अत्यन्त विस्तृत स्नानगृह में सर्वोत्कृष्ट लक्ष्मी सुशोभित हो रही है।

(निहितार्थ) हे राजन् ! चित्रा नामक नक्षत्ररूपी आभूषण एवं दीप्तिमान चन्द्रमा के कारण रमणीय रात्रिकालीन आकाश में जिस प्रकार तीक्ष्ण किरणों वाला सूर्य नहीं चमकता उसी प्रकार आपके इस स्नानगृह में किसी विशेष प्रकार की तीक्ष्णता नहीं है ॥१९॥

अनन्तरमुत्तुङ्गकनककुम्भशोभास्पर्धिकुचमण्डलार्धबद्धोत्तरीयांशुकपरिकराः, सस्मरस्मितविकारकारिण्यः दर्शितसीत्काराङ्गमलनविन्यासाः, काश्चित्समुद्रवेला इव समकरोत्क्षिप्तामलकाः; काश्चित्तरुणतरुमञ्जरीराजय इव भृङ्गारभरभुग्नदेहाः, काश्चिदन्यायकारिण्य इव सभाजनोद्धूलनकराः, काश्चिन्मलयाचलभूमय इवोत्कृष्टगन्धधारितैलाः, काश्चिद्देवलोकवसतय इव चामरधारिण्यः, काश्चित्पुरंदरपुरन्ध्रिका इव सविभ्रमकङ्कतिकोपान्तेनाकेशप्रसादनमाचरन्त्यः, काश्चिद्विन्ध्याटव्य इव दर्शितविविधपादपालिकाः, काश्चिद्राघवसेना इव कृतप्रहस्तमलनाः, काश्चिद्व्याकरणवृत्तय इव बाहुलतां संवाहयन्त्यः मज्जननियुक्ताः कामिन्यो राजानं स्नपयामासुः ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरम्, उत्तुङ्गस्य=उन्नतस्य, कनककुम्भस्य=हेमकलशस्य, शोभया स्पर्धते इत्येवंशीलस्य कुचमण्डलस्य अर्धे=अर्द्धभागे, बद्धम् उत्तरीयांशुकमेव परिकरः=कटिबन्धः यासां ताः, उत्तरीयवस्त्रेण तादृशं कुचमण्डलं कटिप्रदेशं चाबध्येति भावः। सस्मरं=सकामं यत् स्मितम्=ईषद्धास्यं, तेन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकारं=मनोविकृतिं, कुर्वन्ति=जनयन्तीत्येवंशीलाः । दर्शितः=प्रकाशितः, सीत्कारः= 'सीत्' इत्याकारकोऽव्यक्तध्वनिः, अङ्गमलनविन्यासे=अवयवमर्दनक्रमे याभिस्ताः । काश्चित् समुद्रवेलाः=सागरलहर्य इव, समेन=अविषमेण, करेण=पाणिना; उत्क्षिप्तानि=शरीरे पातितानि, आमलकानि=स्नानीयान्यामलकचूर्णानि याभिस्ताः । पक्षे—मकरैः=जलजन्तुविशेषैः; सह उत्क्षिप्तम्=ऊर्ध्वं प्रेषितम्, अमलं=निर्मलं, कं= जलं याभिस्ताः । काश्चित् तरुणतरूणां=पूर्णताप्राप्तवृक्षाणां, याः मञ्जर्यः, तेषां राजयः=पंक्तय इव, भृङ्गारः=विशिष्टाकारः सुवर्णकलशः, तस्य भरेण=भारेण, भुग्नः= वक्रः, देहः=शरीरं यासां ताः, पक्षे—भृङ्गाणां = मधुपानाम्, आरः=आगमनं, तद्भरेण भुग्नदेहाः । काश्चिदन्यायकारिण्य इव—अन्यायम्=अनुचितं कुर्वन्तीत्येवं-शीलाइव, सभाजनोद्धूलनकराः—भाजनं=पात्रं, तत्र उद्धूलनं=चूर्णविशेषः, भाजनो-द्धूलनेन सह करः=पाणिः यासां ताः, सभाजनोद्वलनपाठे तु उद्वलनमुद्वर्तनं सुगन्धित-लेप इति यावत् । पक्षे—सभा-जनस्य=सभासदाम्, उद्धूलनं=मालिन्यं कुर्वन्तीति तथोक्ताः, उद्वलनपाठे तु सभा-जनाद् उद्वलनम्=अपसरणं कुर्वन्ति इति तथोक्ताः । काश्चित् मलयाचलभूमय इव, उत्कृष्टगन्धधारितैलाः—उत्कृष्टानि=उद्धृतानि; गन्धधारीणि=सुगन्धीनि, तैलानि याभिस्ताः, पक्षे—उत्कृष्टः गन्धः यासां तास्तथा धारिता एला=ओषधिविशेषः याभिस्ताः । काश्चिद् देवलोकवसतय इव=देवलो-कनगर्य इव, चामरं=प्रकीर्णकं धारयन्तीत्येवंशीलाः । पक्षे—[चेति भिन्नम्] अमर-धारिण्यः=देवधारिण्यः । काश्चित् पुरन्दरपुरंध्रिका इव=इन्द्राङ्गना इव, विभ्रमः— विशिष्टः भ्रमः=चलनं तेन सह या कङ्कतिका=केशमार्जनी, तस्या उपान्तेन=अग्रभागेन, आ समन्तात् केशानां प्रसादनं=व्यवस्थापनं, प्रसाधनमिति यावत् । आचरन्त्यः= कुर्वन्त्यः, पक्षे—सविभ्रमं=सविलासं, कं=सुखं, यत्र तद्यथा स्यात्तथा । कतिकोपान्ते= कियत्क्रोधापगमे, नाकेशस्य=स्वर्गाधिपतेरिन्द्रस्य, प्रसादनमारचयन्त्यः । काश्चिद्, विन्ध्याटव्य इव=विन्ध्यवनानीव, दर्शिता विविधा पादपालिः=पादमर्दनावसरः याभिस्ताः; पक्षे—दर्शिता विविधाः पादपानां=वृक्षाणाम्, आलयः=पङ्क्तयः याभिस्ताः । काश्चित्, राघवसेना इव=रामचन्द्रसेना इव, कृतं प्रकर्षेण हस्तमलनं=भुजमर्दनं याभिस्ताः, पक्षे—कृतं प्रहस्तो नाम रावणप्रतिहारः, तस्य मलनं=विनाशः याभिस्ताः । काश्चिद्, व्याकरणवृत्तय इव=व्याकरणनियमा इव, बाहु-लतां=भुज-वल्लरीं, संवाहयन्ति=मर्दयन्ति, पक्षे—बाहुलतां=बाहुलकं, संवाहयन्ति=उपयुञ्जते । तादृशा मज्जने=मज्जनकर्मणि, नियुक्ताः कामिन्यः=रमण्यः, राजानं=नृपं भीमं, स्नपयामासुः । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् सुवर्ण-कलशों की शोभा से स्पर्धा करने वाले उन्नत स्तनमण्डल के आधे भाग को एवं कटि (कमर) प्रदेश को उत्तरीय (चादर—लोक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में 'ओढ़नी' के नाम से विख्यात स्त्रियों द्वारा लिया जाने वाला दुपट्टा) से आबद्ध की हुई, काम (वासना) से समन्वित मन्द हास्य से मनोविकृति को उत्पन्न करने वाली, अंगों को मलने के क्रम में सीत्कार की ध्वनि को प्रकट करने वाली, मकरों (ग्राहों) के साथ ऊपर की ओर उछाले गये निर्मल जल से युक्त समुद्र की कतिपय लहरों के समान सम अर्थात् बराबर हाथों से उछाले गये (अपने शरीर पर छिड़के गये स्नानार्थ) आमलकी चूर्ण वाली, भ्रमरों के आगमनरूपी भार से तिरछे अर्थात् झुके हुए देह (डालियों) वाले कतिपय नूतन वृक्षों की मञ्जरी-पंक्तियों के समान विशिष्ट आकार वाले सुवर्णकलश के भार से टेढ़ी (झुकी हुई) शरीर वाली, सभासदों को अथवा सभ्य लोगों को (अपने दुर्व्यवहारों से) मलिन करने अथवा भगाने रूप अनुचित कर्म करने वाली स्त्रियों के समान विशेष प्रकार के चूर्ण से युक्त पात्रों को लिये हुए हाथों वाली, उत्कृष्ट गन्ध को धारण करने वाले इलायची से समन्वित मलय पर्वत की भूमि के समान उत्तम सुगन्ध से परिपूर्ण तेल को धारण करने वाली (लगाने वाली), देवताओं को धारण करने वाली देवनगरियों के समान प्रकीर्णकों को धारण करने वाली, सविभ्रमकङ्कतिकोपान्तेनाकेशप्रसादन-विलासपूर्वक सुख को उत्पन्न करती हुई किञ्चित् क्रोध की समाप्ति पर नाकेश अर्थात् इन्द्र को मनाती रहने वाली इन्द्रांगनाओं के समान विलासपूर्वक कङ्कतिका अर्थात् कंघी के अग्रभाग से केशों को व्यवस्थित करने वाली, अनेक प्रकार के वृक्षों की पंक्तियों को प्रदर्शित करने वाले विन्ध्यवनों के समान अनेक प्रकार की पाद-पालन (चरणमर्दन) विधियाँ प्रदर्शित करने वाली, प्रहस्त नामधारी रावण के दूत का मर्दन (विनाश) करने वाली राघवसेना के समान विशिष्ट रूप से भुजाओं का मर्दन करने वाली, बहुलता से प्रवृत्त होने वाले व्याकरण शास्त्र के नियमों के समान बाहुरूपी लताओं का संवाहन अर्थात् मर्दन करने वाली, स्नान कराने के लिए अधिकृत कामिनियों ने राजा भीम को स्नान कराया ॥

किं बहुना—

तास्तास्तं स्नपयामासुरङ्गनाः कुम्भवारिणा ।
एत्य याः स्युः प्रसन्नेन द्युलोकात्कुम्भवारिणा ॥२०॥

अन्वयः—(किं बहुना) भवारिणा प्रसन्नेन द्युलोकात् कुम् एत्य याः स्युः ताः ताः अङ्गनाः तं कुम्भवारिणा स्नपयामासुः ॥२०॥

कल्याणी—ता इति । भवस्य=भवबन्धनस्य, अरिः=उच्छेदकः अर्थाच्छिवः, तेन प्रसन्नेन हेतुना, द्युलोकात्=स्वर्गलोकात्, कुं=पृथ्वीम्, एत्य=आगत्य, याः स्युः=भवेयुः, तास्ता अङ्गनाः=स्त्रियः,तं=नृपं भीमं, कुम्भवारिणा=कलशोदकेन, स्नपयामासुः । 'कुम्भवारिणा—कुं-भवारिणा' इति यमकम् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना— (अधिक कहने से क्या लाभ) भवबन्धन के विनाशक अर्थात् भगवान् शंकर को प्रसन्न करने के लिए स्वर्गलोक से पृथ्वी पर जो-जो सुन्दरियाँ आयी थीं अर्थात् जन्म ग्रहण किया था, उन-उन सुन्दरियों ने उन राजा भीम को कलश के जल से स्नान कराया ॥

अथ विमलदुकूलप्रान्तनिर्नीरिताङ्गः
परिहितसितवासाः स्वल्पमाङ्गल्यभूषः ।
शुचिरुचितविधिज्ञः स स्वयं स्वस्थचित्तः
कुशकुसुमकरः सन्कर्म धर्म्यं चकार ॥२१॥

अन्वयः—अथ विमलदुकूलप्रान्तनिर्नीरिताङ्गः परिहितसितवासाः स्वल्पमाङ्गल्यभूषः शुचिः उचितविधिज्ञः स्वस्थचित्तः सः स्वयं कुशकुसुमकरः सन् धर्म्यं कर्म चकार ॥२१॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरं, विमलदुकूलप्रान्तेन=स्वच्छवस्त्राञ्चलेन, निर्नीरितं=निर्जलीकृम्, अङ्गं=शरीरं येन सः, स्वच्छवस्त्रेण प्रोञ्छितशरीरजल इत्यर्थः । परिहितसितवासाः—परिहितं=धृतं, सितं=शुभ्रं, वासः=वसनं येन सः, स्वल्पमाङ्गल्यभूषः—स्वल्पा माङ्गल्यभूषा यस्य सः, धृतकतिपयस्वल्पमाङ्गलिकभूषण इत्यर्थः । शुचिः=पवित्रः,उचितविधिज्ञः— उचितविधि=शास्त्रोक्तविधानं जानानीति तथोक्तः । स्वस्थचित्तः=समाहितमनाः, सः=नृपः, स्वयम्=आत्मना, कुशकुसुमकरः—कुशाः कुसुमानि च करे यस्य तथाविधः सन् धर्मादनपेतं धर्म्यं=धर्मसङ्गतं, कर्म=धार्मिक कृत्यं, चकार=अनुष्ठितवान् । मालिनी वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् स्वच्छ वस्त्र के अञ्चल से अंगों को जलरहित कर शुभ्र वस्त्रों एवं कतिपय माङ्गलिक आभूषणों को धारण कर पवित्र होकर शास्त्रोक्त विधियों को जानने वाले प्रसन्नचित्त राजा ने स्वयं कुशों और पुष्पों को हाथों में लेकर धार्मिक कृत्यों अर्थात् देवपूजनादि कार्यों को सम्पन्न किया ॥२१॥

अनन्तरमावर्तितानेकस्वर्णवल्लभो वल्लभो जनस्य भोजनस्य समये स मयेन निर्मितया तया स्वधर्माणं धर्मसुतसभया सभयागतजनजनितारम्भोऽरं भोजनस्थानवेदीं जनस्थानवेदीं गतवान् ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति । आवर्तिता=बहुशः प्रयुक्ता, अनेके ये स्वर्णस्य वल्लाः=तौल्यमानविशेषाः, तद्वद् भाः=कान्तिः यस्य सः, जनस्य=लोकस्य, वल्लभः=दयितः, सभयानां=भीतानाम्, आगतानां=शरणं प्रपन्नानां जनानां, जनितः=कृतः;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आरम्भः=रक्षोपक्रमः येन स भीमः, अरम्=अत्यर्थं, जनस्थानवेदीं – जनानां स्थान, वेदीम् उचितासनज्ञां, मयेन=देवशिल्पिना, निर्मितया=रचितया, तया धर्मसुतसभया— धर्मसुतस्य=युधिष्ठिरस्य, सभया=सभाभवनेन, सधर्माणं=सदृशीं, भोजनस्थानवेदी= भोजनस्थानस्य वेदीं, भोजनस्य समये=काले, गतवान्=प्राप्तवान् । 'वल्लभो-वल्लभो, भोजनस्य-भोजनस्य, समये-समये, तया-तया, सभया-सभया, जनस्थानवेदीं-जनस्थानवेदीं' इति यमकानि । जनस्थानवेदीमित्यस्य स्थाने 'जनस्थानवेदी' इति पाठं मत्वा राज्ञो विशेषणत्वेन तद्व्याख्या कृता चण्डपालेन । अस्मन्मतेऽत्र 'वेदीम्' इति ईकारान्तस्त्रीलिङ्गवेदीशब्दस्य द्वितीयैकवचने रूपम् । अस्य पद्यस्य भोजनस्थान-वेदीविशेषणत्वमुपयुक्तं, तत्रैव कस्मिन् स्थाने को जन उपवेशितव्य इति ज्ञानस्या-वश्यकत्वात्तथैवं यमकत्वहानिरपि न भवति ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् आवर्तित अर्थात् बहुधा प्रयुक्त स्वर्णवल्लों अर्थात् सामानों को तौलने वाले बटखारों की कान्ति के समान कान्ति वाले, लोगों के प्रिय, भय के साथ शरण में आये हुए लोगों की रक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्नशील, जनस्थानवेदी अर्थात् योग्यतानुसार लोगों को समुचित स्थान देना जानने वाले वे राजा भीम देवशिल्पी मयनामक दानव द्वारा निर्मित युधिष्ठिर की सभा के समान अर्थात आश्चर्यजनक भोजनस्थान की वेदी पर भोजन के समय गये ॥

तस्यां च बहुविस्तीर्णस्वर्णभोजनपात्रपत्त्रशङ्खशुक्तिसनाथायामुपविष्टस्यास्य क्रमेण परिकरमावध्य गाढमाढौकन्त स्वस्य स्वस्यानुहारिणोऽन्नविशेषानादाय सूपकाराः सूपकाराङ्गनाश्च ॥

कल्याणी—तस्यामिति । बहुभिः=समधिकैः, विस्तीर्णैः=क्रमेण स्थापितैः, स्वर्णभोजनपात्रैः, पत्त्रैः शङ्खशुक्तिभिश्च सनाथायां=युक्तायां, तस्यां भोजनस्थानवेद्याम्, उपविष्टस्य=आसनस्थस्य, अस्य=राज्ञो भीमस्य, क्रमेण गाढं=दृढं, परिकरं=कटि-भागम्,आबध्य=समन्ताद् बद्ध्वा, स्वस्य स्वस्य अनुहारिणः=अनुरूपान्, अन्नविशेषान्= भोज्यपदार्थविशेषान्, आदाय=गृहीत्वा, सूपकाराः=पाचकाः, सुष्ठूपकारकाश्च, सूपकाराङ्गनाश्च=सूपकारस्त्रियश्च,आढौकन्त=उपास्थापयन्त ॥

ज्योत्स्ना—और अत्यधिक विस्तृत अर्थात् क्रम से स्थापित सुवर्ण से बने हुए भोजन-पात्रों के पत्रों एवं शंखशुक्तियों से युक्त उस भोजनस्थान वेदी पर बैठे हुए उन राजा भीम के (समक्ष) कटिभाग को दृढ़तापूर्वक बाँध कर अपने-अपने अनुरूप विशिष्ट भोज्य पदार्थों को सूपकार लोग अर्थात् रसोइये लोग और उनकी पत्नियाँ भी लेकर क्रमशः रखने लगीं अर्थात् भोजन करने हेतु राजा के आगे परोसने लगीं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाहि—

भक्तास्तस्य भक्तम्, मुद्गा मुद्गान्, मोदका मोदकान्, अशोकवर्तिन्योऽशोकवर्तीः, समांसा मांसम्, नानाशाकाः शाकानि, व्यञ्जना व्यञ्जनम्, अपरास्तु काश्चिदक्षीरा अपि क्षीरम्, अघारिका अपि घारिकाः परिवेषयामासुः ॥

कल्याणी—भक्ता इति। भक्ताः=प्रसादकाः पाचकाः, तस्य=राज्ञः भीमस्य, भक्तम्=ओदनम्, मुदं=हर्षं गच्छन्ती मुद्गाः=प्रहृष्टाः पाचकाः, मुद्गान्—मुद्गो नाम अन्नविशेषः, तत्कृतमिष्टानि, मोदयन्तीति मोदकाः=पाचकाः, मोदकान्=लड्डुकान्, न शोके वर्तन्ते यास्ता अशोकवर्तिन्यः=शोकरहिता इत्यर्थः। यद्वा न शोकेन=औदासीन्येन, वर्तन्ते=व्यवहरन्तीति तथोक्ताः पाचिकाः, अशोकवर्तीः=भोज्यविशेषान्, समः अंस.=स्कन्धप्रदेशः यासां ताः पाचिकाः मांसम्, नाना=अनेकप्रकारा, आशा यासां ताः, 'शेषाद्विभाषा' इति कप्। शाकानि, व्यञ्जनाः—विशिष्टमञ्जनं=नेत्रकज्जलं यासां ताः, व्यञ्जनम्, अपरा=अन्यास्तु काश्चित्, अक्षीरा अपि क्षीरम् इति विरोधः, अक्षीणि ईरयन्ति=विभ्रमात् कम्पयन्ति इति अक्षीरा, नेत्रविभ्रमवत्य इति यावदिति परिहारः। अघारिका अपि घारिका इति विरोधः, अघारिकाः—अघस्य=पापस्य, अरिकाः=शत्रुरूपा इति परिहारः। घारिकाः=भोज्यविशेषान्, परिवेषयामासुः=वितेरुः। अक्षीरा अपि क्षीरम्, अघारिका अपि घारिका इति विरोधाभासः ॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि, भक्तों अर्थात् प्रसन्न कर देने वाले रसोइयों ने उन राजा भीम के (सामने) भात, प्रसन्न मन वाले रसोइयों ने मूंगनामक अन्न से बनायी गई मिठाइयाँ, आनन्दित करने वाले रसोइयों ने मोदक, शोकरहित अथवा उदासीनता को प्रदर्शित न करने वाली पाचिकाओं ने अशोकवर्ती नामक विशिष्ट प्रकार का भोज्य पदार्थ, समान अंस अर्थात् कन्धे वालों ने मांस, अनेक प्रकार की आशाओं वाली पाचिकाओं ने शाक, विशिष्ट प्रकार के नेत्राञ्जनों को लगाई हुई पाचिकाओं ने व्यञ्जन, और भी अन्य किन्हीं अक्षीरा—कटाक्षविक्षेप वाली स्त्रियों ने दूध, अघारिका—पापों की शत्रुस्वरूपा पाचिकाओं ने घारिकानामक विशिष्ट भोज्य पदार्थ को परोसा ॥

सोऽप्यधीशो भूभुजां भुञ्जानो भोज्यम्, लिहँल्लेह्यम्, आस्वादयन्स्वादुः चूषयञ्चूष्याणि, पिबन्पेयानि आहारमकरोत् ॥

कल्याणी—स इति। भूभुजां=नृपाणाम्, अधीशः=अधिपतिः, सः=भीमोऽपि, भोज्यं=भोज्यपदार्थं, भुञ्जानः, लेह्यं वस्तु लिहन्, स्वादु = आस्वादयुक्तं पदार्थमास्वादयन्, चूष्याणि चूषयन्, पेयानि=पातुं योग्यानि पिबन्, आहारं=भोजनम्, अकरोत्=चकार ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—राजाओं के स्वामी उन राजा भीम ने भी भोज्य पदार्थों को खाते हुए, लेह्य अर्थात् चाटने योग्य पदार्थों को चाटते हुए, स्वादयुक्त पदार्थों का आस्वादन करते हुए, चूसने योग्य पदार्थों को चूसते हुए (और) पीने योग्य पदार्थों को पीते हुए भोजन किया ।।

अनन्तरमाचम्य चन्दनेनोद्वर्तितपाणिपल्लवः शीघ्रमाघ्राय धूपधूमम्, आस्ये निक्षिप्य कस्तूरिकाकुङ्कुमकर्पूरकर्बुराणि क्रमुकफलशकलानि, आदाय च वित्रस्तमृगतर्णकर्णकम्राणि शुक्तिशुक्लानि ताम्बूलीदलानि, तस्मात्प्रदेशादपरमवकीर्णकुसुमहारि विस्तीर्णास्तीर्णस्वर्णमयवैदूर्यपर्यन्तपर्यङ्काङ्कमाप्तैः सह विनोदास्थायिकास्थानमगात् ।।

कल्याणी—अनन्तरमिति । अनन्तरम्=आहारानन्तरम्, आचम्य=आचमनं कृत्वा, चन्दनेन=चन्दनचूर्णैः, उद्वर्तितौ=मलितौ, पाणिपल्लवौ=करकिसलयौ येन स नृपो भीमः, शीघ्रं=झटिति, धूपधूममाघ्राय, आस्ये=मुखे, कस्तूरिकया कुङ्कुमेन=केसरेण, कर्पूरेण च कर्बुराणि=शबलानि, क्रमुकफलशकलानि=पूगीफलखण्डकान्, निक्षिप्य=प्रक्षिप्य, आदाय=गृहीत्वा च, वित्रस्तस्य=समधिकभीतस्य, मृगतर्णस्य=हरिणशावकस्य, कर्णौ=श्रवणाविव, कम्राणि=मनोहराणि, शुक्तिरिव शुक्लानि=शुभ्राणि, ताम्बूलीदलानि=ताम्बूलपत्राणि, तस्मात् प्रदेशात्=ततः स्थानात्, अपरम्=अन्यत्, अवकीर्णैः=प्रक्षिप्तैः, कुसुमैः हारि=मनोज्ञम् । विस्तीर्णः=विस्तृतः, आस्तीर्णः=आस्तरणयुक्तः, स्वर्णमयः=स्वर्णेन निर्वृत्तः, वैदूर्यपर्यन्तः=वैदूर्यमणिभिः खचितः, पर्यङ्कः अङ्के यस्य तत् विनोदस्थायिकास्थानं=विनोदगोष्ठीस्थानम्, आप्तैः=विश्वस्तजनैर्मित्रैश्च, सह=साकम्, अगात्=अगमत् ।।

ज्योत्स्ना—भोजन के पश्चात् आचमन करके चन्दन (चूर्णों) से करपल्लवों को मलकर, धूप-धूम को शीघ्रतापूर्वक सूँघकर; मुख में कस्तूरी; केसर और कपूर से कर्बुरित अर्थात् चितकबरे बनाये गये पूगीफल के टुकड़ों को डालकर तथा अत्यधिक भयभीत हरिण-शावक के कानों के समान मनोहर एवं शुक्ति के समान सफेद पान के पत्तों को लेकर (राजा) उस स्थान से अन्य (स्थान पर) बिखरे हुए फूलों के कारण मनोहारी, विस्तृत आस्तरणयुक्त; सुवर्ण से निर्मित, वैदूर्य मणियों से खचित पलंग को गोद में रखे हुए विनोदगोष्ठी के स्थान को (अपने) विश्वस्त जनों और मित्रों के साथ गये ।।

तत्र च सकामकामिनीकमलकोमलकरपुटपीड्यमानपादपल्लवो नर्तयन्नाट्यपरिपाटीपटून्नटान्, भावयन्नमृतस्रुतः कविवाचः, वाचयंश्चिरंतनकविकथाः, शृण्वन्वीणाप्रवीणकिन्नरमिथुनगीतानि, आलोकयँल्लोचनोत्स-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वकरान्विलासिनीलास्यविलासान्, वादयन्मृदुवाद्यविशेषान्, अवधारयन्वांशिकवाद्यवेणुनिक्वाणान्, कलगिरः पाठयन्पञ्जरशुकान्, कान्ताकुचकुम्भमण्डलावष्टम्भलीलयापराह्णसमयमतिवाहितवान् ॥

कल्याणी—तत्रेति । तत्र=विनोदस्थायिकास्थाने च, सकामानां=कामपूर्णानां, कामिनीनां=रमणीनां, कमलवत् कोमलैः=मृदुलैः, करपुटैः=पाणिपुटैः, पीड्यमानौ=संवाह्यमानौ, पादपल्लवौ=चरणकिसलयौ यस्य सः, नाट्यपरिपाट्यां=नाट्यपद्धत्यां, पटून्=निपुणान्, नटान्=अभिनेतॄन्, नर्तयन्, अमृतस्रुतः=सुधावर्षिणीः, कविवाचः=कविवाणीः, भावयन्=विमृशन्, चिरन्तनकविकथाः=पुरातनकविकथाः, वाचयन्, वीणायां=वीणावादने, प्रवीणानां=कुशलानां, किंनरमिथुनानां=किंनरयुगलानां, गीतानि=गानानि, शृण्वन्=आकर्णयन्, लोचनोत्सवकरान्=नेत्रानन्दकरान्, विलासिनीलास्यविलासान्=वाराङ्गनानृत्यविलासान्, अवलोकयन्=वीक्षमाणः; मृदुवाद्यविशेषान् वादयन्, वांशिकवाद्यवेणुनिक्वाणान्=वंशीवेणुदण्डनिःसरद्ध्वनीन्, अवधारयन्=विचारयन्, कलगिरः=मधुरवाचः, पञ्जरशुकान्=पञ्जरस्थकीरान्; पाठयन्, कान्तानां=रमणीनां, कुचकुम्भमण्डलं=स्तनकलशचक्रवालं, तस्य अवष्टम्भलीलया=संश्लेषविलासेन, अपराह्णसमयम्=अपराह्णकालम्, अतिवाहितवान्=यापितवान् ॥

ज्योत्स्ना—उस विनोदगोष्ठी स्थान पर भी कामनापूर्ण कामिनियों के कमल के समान कोमल हाथों से दबाये जाते हुए चरणकमलों वाले (राजा) ने नाट्य-पद्धति में निपुण नटों (अभिनेताओं) को नचाते हुए, अमृत की वर्षा करने वाली कवियों की वाणी पर विचार करते हुए, पुरातन कवियों की कथाओं को पढ़ते हुए, वीणा (बजाने) में प्रवीण किन्नरयुगलों के गीतों को सुनते हुए, नयनों को आनन्दित करने वाली वाराङ्गनाओं के नृत्य-विलासों को देखते हुए, मधुर (आवाज वाले) वाद्यविशेषों को बजाते हुए, वंशी के वेणुदण्ड से निःसृत होती हुई ध्वनियों पर विचार करते हुए, पिंजड़ों में स्थित मधुर वाणी वाले शुकों (तोतों) को पढ़ाते हुए और कामिनियों के स्तनकलशों की संश्लेष-क्रीड़ा के द्वारा दोपहर के समय को व्यतीत किया ॥

क्रमेण च चषकायमाणविकचकमलमध्यमधुपानमत्त इव पुनर्वारुण्याशयाभिभूतभासि मदादिव लोहितायमाने निपतति मुक्तांशुकेंऽशुमालिनि, वनान्तरतरुशिरःश्रितशाखाशिखरेषु गलद्वहलकिञ्जल्कपुञ्जपिञ्जरासु मञ्जरीष्विव विलम्बमानासु दिनकरदीधितिषु, विस्तीर्णशिलावकाशजघनायामुल्लसल्लोहिताधरपल्लवायामस्ताचलवनराजिरेखायामुपरि पतितमवलोक्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रागिणमहर्पतिमीर्ष्यारोषभरादिव जाते जपापुष्पनिचयरुचि पश्चिमाशामुखे, मुखरयति नभो निजनीडनिलयनाकूतकूजितजरदण्डजव्रजे, व्रजति सरः सन्ध्याविधिविधित्सया द्विजन्मजनमुनिनिकाये, कालागुरुरसाञ्जनराग इव श्यामलयति गगनलक्ष्मीमभिसारिकाबन्धावन्धकारे, राज्ञः सन्ध्यावसरमावेदयन्किन्नरमिथुनमिदमगायत् ॥

कल्याणी—क्रमेणेति । क्रमेण च, चषकं=मधुपानपात्रमिवाचरतीति चषकायमाणं=चषकोपमं, क्यङ्गतोपमा । यद् विकचं=विकसितं, कमलं तस्य मध्ये यत् मधु=मकरन्दः मद्यं च, तस्य पानेन मत्तः=क्षीब इव, [इत्युत्प्रेक्षा] । पुनः वारुण्याशया=पश्चिमया दिशा, अथ च वारुणी=मदिरा, तस्या आशया=वाञ्छया, अभिभूतभासि=निष्प्रभे, मदादिव [इत्युत्प्रेक्षा] । लोहितायमाने=आरक्ते, मुक्ताः=परित्यक्ताः, अंशवः=किरणाः येन तस्मिन् निर्वस्त्रे च, अंशुमालिनि=सूर्ये, निपतति, अन्योऽपि मधुपानेन माद्यति, पुनः पुनर्मधुवाञ्छया निष्प्रभो जायते, मदाच्चारक्तमुखो निर्वस्त्रो भूमौ पतति इति सूर्ये मद्यपव्यवहारसमारोपात् समासोक्तिः । मञ्जरीष्विव वनान्तरतरुशिरःश्रितशाखाशिखरेषु=विभिन्नवनपादपशाखाग्रभागेषु, गलद्बहलकिञ्जल्कपुञ्जपिञ्जरासु=निष्पतत्प्रचुरपरागराशिवत्पिञ्जरितासु, पक्षे—गलता=निष्पतता, बहलकिञ्जल्कपुञ्जेन=प्रचुरपरागराशिना, पिञ्जरासु=रक्तपीतासु, दिनकरदीधितिषु=सूर्यकिरणेषु, बिलम्बमानासु=तिष्ठन्तीषु, विस्तीर्णः=विस्तृतः, शिलावकाशः=शिलाप्रान्त एव जघनं=श्रोणी यस्यास्तस्याम्, उल्लसन्=देदीप्यमानः, लोहितः=रक्तः, अधरपल्लवः=अधरोपमकिसलयः यस्यास्तस्याम्, अस्ताचलस्य=पश्चिमगिरेः, वनराजिरेखायामुपरि=वनपंक्तिरेखायामुपरि, रागिणं=रक्तमनुरागपूर्णं च, अहर्पतिं=सूर्यं पतितमवलोक्य, ईर्ष्यारोषभरादिव=ईर्ष्याजन्यकोपातिरेकादिव [इति हेतूत्प्रेक्षा] । पश्चिमाशामुखे—पश्चिमा या आशा=दिक्, तस्याः मुखे=अग्रभागे आनने च, जपापुष्पनिचयरुचि=जपाकुसुमपुञ्जवद्रक्ते, जाते=संपन्ने, अन्यस्या अपि नायिकायाः मुखे तादृश्यामपरकान्तायामुपरि अनुरागिणं स्वप्रियं पतितमवलोक्येर्ष्याकोपवशाद्रक्तं जायते इति पश्चिमाशायां नायिकाव्यवहारसमारोपादत्रापि समासोक्तिरलङ्कारः । निजनीडेषु=स्वकुलायेषु, निलयनम्=अवतरणं, तस्य आकूतेन=अभिप्रायेण, कूजितानां=कृतशब्दानां, जरतां=जीर्णानाम्, अण्डजानां=पक्षिणां, व्रजे=समूहे, नभः=गगनं, मुखरयति=मुखरीकुर्वति, द्विजन्मानः=ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याश्च ते जनाः मुनयश्च, तेषां निकाये=समूहे, सन्ध्याविधिविधित्सया=सायंकालिकसन्ध्योपासनविधानेच्छया, सरः=सरोवरं, व्रजति=गच्छति, कालागुरुरसाञ्जनराग इव—कालागुरुरसः=कालागुरुद्रव इव योऽञ्जनरागस्तस्मिन्निव, अभिसारिकाबन्धौ=अभिसारि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कागां सहायके, अन्धकारे=तमसि, गगनलक्ष्मीम्=आकाशश्रियं, श्यामलयति=श्यामलीकुर्वति सति, राज्ञः=नृपस्य, सन्ध्यावसरं=सन्ध्यासमयम्, आवेदयन्=विज्ञापयन्, किंनरमिथुनं=किंनरयुगलम्, इदं=वक्ष्यमाणम्, अगायत्=गीतवान् ॥

ज्योत्स्ना—क्रमशः चषक (मधु-पान करने वाले पात्र अर्थात् प्याले) के रूप में विकसित कमलों के मध्य स्थित मकरन्द और मधु के पान से मत्त के समान, पुनः पश्चिम दिशा से अथवा मदिरा-पान करने की कामना से निष्प्रभ, मद के समान रक्त होते हुए परित्यक्त किरणों वाले भगवान् सूर्य के नीचे जाने पर; विभिन्न वनों के वृक्षों की शाखाओं के अग्रभाग पर गिरते हुए प्रचुर परागपुञ्ज की तरह पिञ्जरित (रक्त-पीत मिश्रित वर्ण वाली) मञ्जरियों के समान विभिन्न वनवृक्षों की शाखाओं के अग्रभाग पर गिरते हुए प्रचुर परागपुञ्ज के कारण रक्त-पीत वर्ण वाली सूर्य-किरणों के अत्यन्त लम्बायमान हो जाने पर अथवा ठहर जाने पर; विस्तृत शिलाप्रान्तरूपी जंघाओं वाली देदीप्यमान लाल रंग के अधररूपी पल्लवों वालीअस्ताचलपर्वत की वनपंक्ति-रेखा के ऊपर रक्तवर्ण एवं अनुरागपूर्ण सूर्य को गिरा हुआ देखकर ईर्ष्या के कारण उत्पन्न क्रोध के भार से पश्चिम दिशा के अग्रभाग अथवा मुख के जपापुष्पपुञ्ज के समान रक्तवर्ण के हो जाने पर; अपने-अपने घोंसलों में छिपने अथवा जाने के अभिप्राय से कूजन (शब्द) करते हुए वृद्ध पक्षिसमूहों द्वारा आकाश को मुखरित कर दिये जाने पर; ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यरूपी द्विजसमूहों के द्वारा सायंकालीन सन्ध्योपासना करने की इच्छा से तालाब की ओर चल देने पर; कालागुरुसदृश अञ्जन से किये गये अंगराग के समान अभिसारिकाओं के सहायक अन्धकार के द्वारा आकाशलक्ष्मी को काला बना दिये जाने पर 'सन्ध्यावन्दन का यह समय है' इस प्रकार राजा को सूचित करते हुए किन्नरयुगल ने निम्न प्रकार से गायन किया ॥

'भोगान्भो गाङ्गवीचीविमलितशिरसः प्राप्य शम्भोः प्रसादा-
न्मोहान्मोहानभिज्ञाः क्वचिदपि भवत प्राणिनो दर्पभाजः ।
यस्माद्यः स्मार्तविप्रप्रणतिनुतपदः सर्वसम्पन्नभोगो
भास्वान्भाः स्वाङ्गभूता अपि स परिहरन्नस्तमेष प्रयाति' ॥२२॥

अन्वयः—भोः दर्पभाजः प्राणिनः ! गाङ्गवीचिविमलितशिरसः शम्भोः प्रसादात् भोगान् प्राप्य मोहात् ऊहानभिज्ञाः क्वचिदपि मा भवत, यस्मात् यः स्मार्तविप्रप्रणतिनुतपदः (अथ च) सर्वसम्पन्नभोगः भास्वान् अपि सः एषः स्वाङ्गभूताः भाः परिहरन् अस्तं प्रयाति ॥२२॥

कल्याणी—भोगानिति । भो दर्पभाजः=गर्वोपेताः प्राणिनः !, गाङ्गवीचीविमलितशिरसः—गङ्गाया इमा गाङ्ग्यः, 'तस्येदम्' इत्यण् । गाङ्गीभिर्वीचीभिः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

=गङ्गालहरीभिः, विमलितं=निर्मलीकृतं, शिरः=मूर्धा यस्य तस्य; शम्भोः=शिवस्य, प्रसादात्=अनुग्रहात्, भोगान्=विविधविषयसुखानि, प्राप्य=लब्ध्वा, मोहात्=अज्ञानवशात्, ऊहानभिज्ञाः=अविमर्शकाः, क्वचिदपि=कुत्रापि विषये, मा भवत। यस्मात्=हेतोः, यः=सूर्यः, स्मार्तविप्रैः=धार्मिकब्राह्मणैः, प्रणतौ=प्रणामावसरे, नुतपदः=स्तुतचरणः, तथा सर्वसम्पत्=सकलश्रीकः, नभोगामी=वियद्गामी, अथ च सर्वसम्पन्नभोगः=सकलप्राप्तभोगः, भास्वान्=दीप्तिमान् सूर्यः, एवंविधोऽपि स एषः=महात्मा सूर्यः, स्वाङ्गभूताः भाः=किरणान्, परिहरन्=परित्यजन्, अस्तं=अस्ताचलं प्रयाति=गच्छति। 'भोगान् प्राप्य क्वचिदपि ऊहानभिज्ञा मा भवत' इति सामान्यार्थस्य 'स्मार्तविप्रप्रणतिनुतपदः सर्वसम्पन्नभोगो भास्वानप्यस्तं प्रयाति' इति विशेषार्थेन समर्थनादर्थान्तरन्यासः; भोगान्-भोगानित्यादिषु यमकमपि; तयोः संसृष्टिः। स्रग्धरा वृत्तम्—'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्' इति तल्लक्षणात् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—हे अभिमानी प्राणियों! गंगा की लहरों के द्वारा स्वच्छ किये गये शिर वाले भगवान् शंकर के अनुग्रह से भोगों अर्थात् नाना प्रकार के विषयसुखों को प्राप्त कर तज्जनित मोह (अज्ञान) के कारण कभी भी ऊहानभिज्ञ अर्थात् विवेचनात्मिका बुद्धि से (आप सब) रहित न हो जायें; क्योंकि स्मार्त ब्राह्मणों द्वारा प्रणाम के अवसर पर जिनके चरणों की वन्दना की जाती है और जो समस्त श्री से समन्वित होते हुए भी आकाशगामी हैं अथवा समस्त भोगों को प्राप्त किये हुए हैं, इस प्रकार के कान्तिमान् ये सूर्य भी अपने अंगभूत किरणों का परित्याग करते हुए (इस समय) अस्ताचल की ओर प्रस्थान कर रहे हैं ॥

आशय यह है कि सूर्य के अस्त-समय को देखकर समस्त सांसारिक प्राणियों को सायंकालीन अवश्यकर्तृक अनुष्ठानों को करने में तत्पर हो जाना चाहिए; इसमें किसी भी प्रकार का प्रमाद नहीं करना चाहिए ॥२२॥

एतदाकर्ण्य नरपतिः सान्ध्यं विधिमन्वतिष्ठत्।

कल्याणी—एतदिति। एतत्=किंनरमिथुनगीतम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, नरपतिः=भीमः, सान्ध्यं विधिं=सन्ध्याकालिकं कृत्यम्, अन्वतिष्ठत्=निरवर्तयत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार के किन्नरयुगल के गीत को सुनकर राजा भीम ने सायंकालिक कृत्यों का अनुष्ठान किया ॥

क्रमेण प्रचुरचलच्चाषकुलकालकान्तिकाशिभिर्बहलतमःकल्लोलैरालोडिते लोके लोकेश्वरो विहितविकालवेलाव्यापारः पारसीकोपनीतपारावारपारीणपारावतपतत्त्रिपञ्जरसनाथे विकीर्णवासधूलिनि धूपधूममुचि विचित्रचित्रशालिनि प्रान्तप्रदीपितदीपदीप्तिदण्डखण्डितमसि सज्जितशय्ये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शय्यागृहे गृहीतस्पृहणीयाङ्गरागो रागसागरकल्लोललोचनयानया प्रियया प्रियंगुमञ्जर्या अलीककलहकोपकुटिलभ्रमद्भ्रूकोणतर्जनजनितस्मितः स्मरविकारकारिकरिकलभकुम्भविभ्रमायमाणोत्तुङ्गपीवरकुचकुम्भपीठमारोपितो रजनीमनैषीत् ॥

कल्याणी—क्रमेणेति । प्रचुराः=समधिकाः, चलन्तः=भ्रमन्तः, ये चाषाः=नीलकण्ठपक्षिणः, तेषां कुलस्य=समूहस्य, या कालकान्तिः=कालिमा, तद्वत् काशिभिः=दृश्यमानैः, बहलतमःकल्लोलैः=प्रचुरतिमिरतरङ्गैः, लोके=जगति, आलोडिते=मथिते, लोकेश्वरः=नरेन्द्रो भीमः, विहिताः=कृताः, विकालवेलायाः=संध्याकालस्य, व्यापाराः=कार्याणि येन सः, पारसीकैः=पारसिकजनैः, उपनीताः=उपहृताः, पारावारपारीणाः=समुद्रपारोद्भवाः, ये पारावतपतत्रिणः=कपोतपक्षिणः, तेषां पञ्जरैः सनाथे=युक्ते, विकीर्णाः=प्रक्षिप्ताः, वासधूलयः=सुगन्धिद्रव्यचूर्णाः यत्र तस्मिन्, धूपधूमं मुञ्चतीति तस्मिन्, विचित्रैः=विलक्षणैः, चित्रैः शालते=शोभत इति तस्मिन्, प्रान्ते=एकदेशे, प्रदीपितः=प्रज्वालितः, यः दीपः, तस्य दीप्तिदण्डेन=किरणदण्डेन, खण्डितं=विनाशितं, तमः=तिमिरं यत्र तस्मिन्, सज्जिता शय्या यत्र तस्मिन् शय्यागृहे=शयनागारे, गृहीतः=धृतः, स्पृहणीयः=अभिलषणीयः, अङ्गरागः येन सः [नृपः] रागः=प्रेम, स एव सागरः; तस्य कल्लोलः=तरङ्गः, तद्रूपे लोचने=नयने यस्यास्तया अनया प्रियया प्रियंगुमञ्जर्या, अलीककलहकोपेन=कृत्रिमकलहजन्यरोषेण, कुटिले=वक्रे, भ्रमन्ती च ये भ्रुवौ तयोः कोणेन=एकभागेन, यत् तर्जनं=भर्त्सनम्, तेन जनितं स्मितम्=ईषद्धास्यं यस्य सः, स्मरविकारकारिणौ=कामविकारोत्पादकौ, करिकलभकुम्भस्य=गजशावककुम्भस्थलस्य, विभ्रमः=सौन्दर्यं, स इवाचरन्तौ उत्तुङ्गौ=उन्नतौ, पीवरौ=स्थूलौ, यौ कुचकुम्भौ=कुम्भोपमौ स्तनौ, तावेव पीठम्=आसनं, तद् आरोपितः=अध्यारूढः, रजनीं=रात्रिम्, अनैषीत्=यापितवान् ॥

ज्योत्स्ना—क्रमशः प्रचुर रूप में भ्रमण करते हुए चाष (नीलकण्ठ) नामक पक्षिसमूहों की कृष्णवर्णीय कान्ति के समान दिखाई देने वाले प्रचुर तिमिर-(अन्धकार)-तरंगों के द्वारा संसार के मथित हो जाने पर जगदीश्वर भीम ने सायंकालीन कार्यों को सम्पन्न कर पारसियों द्वारा उपहार में दिये गये समुद्र के उस पार उत्पन्न हुए कपोत पक्षियों के पञ्जरों से युक्त, सुगन्धित द्रव्य-चूर्णों को बिखेरे हुए, विलक्षण चित्रों से शोभायमान, एक भाग में अर्थात् कोने में जलते हुए दीपक के प्रकाशदण्ड से विनष्ट किये गये अन्धकार वाले, शय्या से सुसज्जित शयनागार में स्पृहणीय अंगराग को धारण किये हुए (राजा भीम ने) प्रेमरूपी समुद्र की तरंगों के समान नयनों वाली प्रिया प्रियंगुमञ्जरी के साथ कृत्रिम अर्थात् झूठे कलह के द्वारा उत्पन्न रोष के कारण कुटिल एवं चलायमान भौहों के एक कोने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा की जा रही तर्जना (भर्त्सना) से उत्पन्न मन्द हास्य वाले (होकर) कामसम्बन्धी विकार को उत्पन्न करने वाले, हाथियों के बच्चों के कुम्भस्थल-सदृश सौन्दर्यशाली, उन्नत एवं स्थूल स्तनरूपी कलशसदृश आसन पर आरोपित होकर रात्रि को व्यतीत किया ॥

एवमस्य सकलसंसारसुखपरम्परामनुभवतो यान्ति दिवसाः ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन क्रमेण, सकलानि=समस्तानि, संसारस्य=लोकस्य, यानि सुखानि=आनन्दानि, तेषां परम्परां=पंक्तिम्, अनुभवतः=भुञ्जानस्य, अस्य=नृपस्य, दिवसाः=दिनानि, यान्ति=व्यतियन्ति ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार समस्त सांसारिक सुखों की परम्परा का अनुभव अर्थात् उपभोग करते हुए इन (राजा भीम) के दिन व्यतीत होने लगे ॥

कदाचिच्चारुचामीकराचलचलद्देहाधिदेवतेव बहुधानन्दने सुरुचिरवायौवनारम्भे सुरतोत्सवमनुभवन्ती पत्युः प्राणप्रिया प्रियंगुमञ्जरी गर्भं बभार ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्=कस्मिन्नपि समये, चारुचामीकराचलस्य=रम्यमेरुपर्वतस्य, चलद्देहा=सञ्चरणशीलशरीरा, अधिदेवता=अधिष्ठातृदेवता इव, बहुधा नन्दयति=हर्षयति तस्मिन्, यौवनारम्भे=युवावस्थारम्भे, सुरुचिरवा—सुष्ठु रुचिः=इच्छा, रवः=ध्वनिश्च यस्याः सा, अर्थात् शोभनाभिलाषा कलभाषिणी च, पत्युः=भर्तुः, प्राणप्रिया=प्राणेभ्योऽपि समधिकप्रिया, प्रियङ्गुमञ्जरी, सुरतोत्सवं=पतिसंगमजनितानन्दम्,अनुभवन्ती=अनुभवं कुर्वन्ती, गर्भं बभार=दधे। मेरुगिरेरधिष्ठातृदेवतापि बहुधा=अनेकधा, नन्दने=नन्दनाख्ये, सुरुचिरवायौवनारम्भे—सुष्ठु=अतिशयेन, रुचिरः=रम्यः वायुर्यत्र तादृशे वनारम्भे—वनानाम्, आरम्भः=आदिः, प्रधानमित्यर्थः। तस्मिन् सुरतोत्सवम्—सुरस्य=देवस्य भावः सुरता=देवत्वं, तस्याः उत्सवम्=आनन्दम्, अनुभवति। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—किसी समय रमणीय सुमेरु पर्वत के चलायमान शरीर के अधिष्ठातृ देवता के समान बहुधा आनन्द प्रदान करने वाले यौवन के प्रारम्भ में सुन्दर अभिलाषाओं वाली और सुन्दर वचन बोलने वाली, पति के लिए प्राणों से भी अधिक प्रिया प्रियंगुमञ्जरी ने सुरतोत्सव अर्थात् पति के साथ सम्भोगजनित आनन्द का अनुभव करती हुई गर्भ को धारण किया ॥

तेन च विकचचूतमञ्जरीव कोमलफलबन्धेन बन्धुररमणीयाकृतिः, चन्द्रकलेव कलाप्रवेशेनोपचीयमानप्रभा, प्रभातवेलेवोन्मीलदंशुमालिमण्डलेनानन्द्यमाना, रत्नाकरतरङ्गमालेवान्तःस्फुरन्माणिक्यकान्तिकलापेनोद्भासमाना, गर्भसंदर्भितेन लावण्यपरमाणुपुञ्जेन व्यराजत राजमहिषी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तेनेति । कोमलफलबन्धेन—कुसुमान्तर्गूढः फलारम्भकरसकणिकारूपो बन्धः कोमलफलबन्धः तेन, वन्धुरा=विनता, रमणीया=रम्या च, आकृतिर्यस्यास्तादृशी, विकचचूतमञ्जरीव=विकसिताम्रमञ्जरीव, कलाप्रवेशेन=कान्तिप्रवेशेन, उपचीयमाना=वर्द्धमाना, प्रभा=कान्तिः यस्यास्तादृशी चन्द्रकलेव=चन्द्रकान्तिरिव, उन्मीलता=उद्गच्छता, अंशुमालिनः=सूर्यस्य, मण्डलेन=बिम्बेन, आनन्द्यमाना=प्रहर्षं नीयमाना, प्रभातवेलेव=सूर्योदयसमयेव, अन्तः=मध्ये; स्फुरता=दीप्यमानेन, माणिक्यकान्तिकलापेन=रत्नप्रभानिचयेन, उद्भासमाना=उद्दीप्यमाना, रत्नाकरतरङ्गमालेव=समुद्रोर्मिश्रेणिरिव, राजमहिषी=राजपत्नी प्रियङ्गुमञ्जरी, तेन च गर्भसंदर्भितेन=गर्भसंरचितेन, लावण्यपरमाणुपुञ्जेन=सौन्दर्यपरमाणुराशिना, व्यराजत=नितरामशोभत । उपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—कोमल फलबन्ध अर्थात् पुष्पों के अन्तर्गत छिपे फलारम्भक रसकणिकारूप बन्ध (गाँठ) के कारण झुकी हुई एवं रमणीय आकृति वाली विकसित आम्रमञ्जरी के समान, कला अर्थात् कान्ति के प्रवेश से बढ़ती हुई कान्ति वाली चन्द्रकान्ति के समान, उगते हुए सूर्यमण्डल के द्वारा आनन्दित करने वाली प्रभातवेला के समान, अन्तः में देदीप्यमान रत्नों की किरणों से उद्भासित (चमकती हुई) समुद्र की तरंगमाला के समान ही राजमहिषी प्रियंगुमञ्जरी भी अपने ही द्वारा गर्भ में संरचित सौन्दर्यजनित परमाणुपुञ्जों के कारण अत्यधिक सुशोभित हुई ॥

गच्छत्सु च केषुचिद्दिवसेषु सुवृत्ततुहिनाचलगण्डशैलयुगलमिव बालमयूरिकाक्रान्तम्, अनङ्गसौधशिखरद्वयमिव शेखरीकृतेन्द्रनीलकलशम्, उज्ज्वलरौप्यनिधानकुम्भयुग्ममिव भुजगसङ्गतमुखम्, उल्लासिहंसमिथुनमिव चञ्चूत्खातपङ्किलकमलकन्दम्, ऐरावतमस्तकपिण्डपाण्डुरमुच्चचूचुकश्यामलिम्नाऽलंकृतमापूर्यमाणमन्तःक्षीरेण क्षणं क्षणमखिद्यत पयोधरद्वन्द्वमुद्वहन्ती ॥

कल्याणी—गच्छत्स्विति । गच्छत्सु च केषुचिद्दिवसेषु=व्यतिक्रामत्सु कतिपयदिवसेषु, बालमयूरिकाक्रान्तम्—बालमयूरिकाभ्याम् आक्रान्तम्=आच्छन्नम्, सुवृत्तं=वर्तुलाकारं, तुहिनाचलस्य=हिमाचलस्य, गण्डशैलयुगलमिव=प्रस्तरखण्डद्वयमिव; शेखरीकृतः=शिरोभूषणीकृतः, इन्द्रनीलकलशः=इन्द्रनीलमणिभिर्निर्वृत्तः कलशः येन तत्, अनङ्गस्य=कामस्य, यत् सौधं=प्रासादः, तस्य शिखरद्वयमिव=श्रेणियुगलमिव, भुजगेन=सर्पेण; सङ्गतम्=अवरुद्धं, मुखं=आननं यस्य तत्, उज्ज्वलरौप्यम्=उज्ज्वलं रजतनिर्मितं च, निधानाय=अवस्थापनाय, मुद्रादीनामिति भावः । कुम्भयुग्ममिव=कलशयुगलमिव, चञ्च्वा उत्खातम्=उत्पाटितं, पङ्किलं=पङ्कयुक्तं, कमलकन्दं=कमलमूलं, येन तद् उल्लासि=दीप्तिमत्, हंसमिथुनमिव=हंसयुगलमिव, ऐरावतो नाम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रगजः, तस्य मस्तकपिण्डमिव=कुम्भस्थलमिव, पाण्डुरं=शुभ्रम्; उच्चचूचुकस्य=उन्नतचूचुकस्य; [चूचुकं स्तनस्य शिरोभागः] श्यामलिम्ना=श्यामलतया, अलङ्कृतं=मण्डितम्, अन्तःक्षीरेण—अन्तः=अभ्यन्तरे, क्षीरेण=दुग्धेन, आपूर्यमाणं=भरितं, पयोधरद्वन्द्वं=स्तनद्वयम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, क्षणं क्षणं=प्रतिक्षणम्, अखिद्यत=खेदमनुभवति स्म। उत्प्रेक्षोपमयोः संसृष्टिः ॥

ज्योत्स्ना—कुछ दिनों के व्यतीत होने पर बाल मयूरिका (छोटी मयूरिनी) से आक्रान्त वर्तुलाकार (गोल) हिमालय के दो प्रस्तरखण्डों के समान, शिखरों पर बनाये गये इन्द्रनीलमणि से निर्मित कलशसदृश कामदेव के प्रासाद (महल) के दो शिखरों के समान, सर्प से अवरुद्ध मुख वाले उज्ज्वल रजतनिर्मित (मुद्राओं को) रखने के लिए दो कलशों के समान, चोंच से उत्पाटित (उखाड़ें गए) कीचड़ से समन्वित कन्दमूल (कमलनाल) के कारण दीप्तिमान हंस के जोड़े के समान, ऐरावतनामक (इन्द्र के) हाथी के मस्तकपिण्ड (कुम्भस्थल) के समान शुभ्र; उन्नत चूचुक की श्यामलता से अलंकृत, अन्दर में दूध से परिपूर्ण दोनों स्तनों को ढोती हुई अर्थात् धारण करती हुई पल-पल खेद कर अनुभव कर रही थी ।

बबन्ध च चन्द्रकलाङ्कुरकवलने स्पृहाम् ॥

कल्याणी—बबन्धेति। चन्द्रकलाङ्कुरकवलने=चन्द्रकिरणोपभोगे, स्पृहाम्=अभिलाषं च बबन्ध=अबध्नात्, चन्द्रकिरणाय स्पृहयाञ्चकारेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—और (उसने) चन्द्रकला के किरणों के उपभोग की कामना (प्रकट) की ।

अभिलाषमकरोच्च चञ्चलचञ्चरीककुलकलरवरमणीयविकचचूतवनविहारेषु ॥

कल्याणी—अभिलाषमिति। चञ्चलचञ्चरीककुलस्य=चञ्चलमधुपवृन्दस्य, कलरवेण=मधुरध्वनिना, रमणीयं=रम्यं, विकचं=विकसितं, यत् चूतवनं=रसालोद्यानं, तत्र विहाराः=सञ्चरणानि, तेषु अभिलाषम्=इच्छाम्, अकरोच्च। अनुप्रासोऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—साथ ही चञ्चल भ्रमरसमूह के कलरव से रमणीय (एवं) विकसित आम्रवनों में विहार करने की कामना की ॥

स्पर्शममन्यत बहु बहलमभ्यर्णविकीर्णविकसितकमलवननिष्यन्दिमकरन्दबिन्दोर्मन्दतरतरङ्गसङ्गशीतलमलयमारुतस्य ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी —स्पर्शमिति। अभ्यर्णे=समीप एव, बहुलं=गहनं यथा स्यात्तथा। अवकीर्णं=विस्तीर्णं, विकसितं=विकचं, यत् कमलवनम्=उत्पलकाननं, तस्य निष्यन्दी=च्यवमानः, मकरन्दबिन्दुः=पुष्परसकणः, तस्य मन्दतरतरङ्गस्य सङ्गेन=सम्पर्केण, शीतलस्य मलयमारुतस्य=मलयाचलपवनस्य, स्पर्शं=आलिङ्गनं, बहु अमन्यत ॥

ज्योत्स्ना—समीप ही गहन रूप में फैले हुए विकसित कमलवन से प्रस्रवित (टपक रहे) पुष्परसकणों के अत्यन्त मन्द तरंगों के संसर्ग से शीतल मलय-पवन के स्पर्श को अत्यन्त अच्छा मानने लगी ॥

चिन्तयाञ्चकार च चतुरुदधिलावण्यरसमास्वादयितुम् ॥

कल्याणी —चिन्तयाञ्चकारेति। चतुर्णां=चतुःसंख्यकानाम्, उदधीनां=समुद्राणां, लावण्यरसं=सौन्दर्यरसम्, अथ च लावण्यं=लवणभावः, तस्य रसम् आस्वादयितुम् =आस्वादनं कर्तुम्, चिन्तयाञ्चकार=विचारयामास ॥

ज्योत्स्ना—और चारो समुद्रों के सौन्दर्य-रस अथवा लावण्य-(नमकीन)-रस के आस्वादन का विचार किया ॥

अभ्यवाञ्छदतुच्छमच्छमशेषममन्दमन्दरमन्थानमन्थोत्पन्नममृतमातृप्ति पातुम् ॥

कल्याणी —अभीति। मन्दरः=मन्दराचल एव, मन्थानः=मन्थनसाधनं, तेन अमन्दः=अधिकः यः मन्थः=मन्थनं, तस्मात् उत्पन्नं=जातं, यद् अतुच्छम्=उत्कृष्टम्, अच्छं=निर्मलम्, अशेषं=समस्तम्, अमृतं=सुधारसं, तस्य आतृप्ति=यथेच्छं पातुम्, अभ्यवाञ्छत्=ऐच्छत् ॥

ज्योत्स्ना—मन्दराचलरूपी मथानी के द्वारा तीव्र मन्थन से उत्पन्न अत्यन्त उत्कृष्ट एवं निर्मल समस्त अमृत को तृप्तिपर्यन्त अर्थात् इच्छानुसार पान करने की इच्छा की ॥

इत्यनेकधोत्पन्नगर्भप्रभावादनुरूपदोहदसम्पत्तिसम्पन्नाधिककमनीयकान्तिरुल्लसद्बहलमृगमदजललिखितविचित्रपत्रभङ्गभव्यविपुलकपोलमण्डलेन मुखेन शशाङ्कमन्तःस्फुरत्कलङ्कमुपहसन्ती द्विगुणमवनिपतेस्तस्य प्रिया प्रियंगुमञ्जरी बभूव ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवंप्रकारेण, अनेकधा=बहुधा, उत्पन्नः=जातः, यः गर्भस्य प्रभावस्तस्मात् अनुरूपः=अनुकूलः, यः दोहदः=गर्भवत्याः प्रबलरुचिः, तस्य सम्पत्त्या=सम्पन्नतया, सम्पन्ना=समृद्धा, अधिककमनीया=अत्यन्तमनोहरा, कान्तिर्यस्याः सा, उल्लसन्=दीप्यमानः, बहलमृगमदजलेन=समधिककस्तूरिकाद्रवेण, लिखितः=विरचितः, यः पत्रभङ्गः=पत्ररचना, तेन भव्यं=रमणीयं, विपुलकपोल-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मण्डलं=विस्तृतकपोलचक्रवालं यस्य तथाविधेन मुखेन=मुखमण्डलेन, अन्तः=मध्ये, स्फुरन्=प्रकाशमानः, कलङ्कः=मलः यस्य तं शशाङ्कं=चन्द्रम्, उपहसन्ती=तिरस्कुर्वन्ती, प्रियङ्गुमञ्जरी तस्य अवनिपतेः=भूपालस्य, द्विगुणं प्रिया बभूव। चन्द्रान्मुखस्याधिक्यवर्णनाद् व्यतिरेकालङ्कारः। तत्र मृगमदजललिखित—इत्यादिपदार्थस्य अन्तः-स्फुरत्कलङ्कमिति पदार्थस्य च हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम्। द्वयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार गर्भ के प्रभाव के कारण बहुधा उत्पन्न (अपने) अनुरूप दोहद (गर्भवती की प्रबल कामना) रूपी सम्पत्ति से समृद्ध होने से अत्यन्त कमनीय कान्ति वाली, देदीप्यमान गाढ़े कस्तूरिका लेप से बनाई गई विचित्र पत्ररचना के कारण रमणीय विस्तृत कपोलमण्डल वाले मुख से मध्य में प्रकाशमान कलंकयुक्त चन्द्रमा का उपहास करती हुई प्रियंगुमञ्जरी उस राजा के लिए दुगुनी प्रिया हो गई अर्थात् गर्भवती होने के कारण राजा भीम उससे दुगुना प्यार करने लगा॥

तथाहि—

सा समीपस्थितज्येष्ठा पयःपूर्णपयोधरा।
अग्रप्रावृडिवाह्लादमकरोत्तस्य भूपतेः॥ २३॥

अन्वयः—(तथाहि) सा अग्रप्रावृड् इव समीपस्थितज्येष्ठा पयःपूर्णपयोधरा तस्य भूपतेः आह्लादम् अकरोत्॥२३॥

कल्याणी—सेति। सा=प्रियङ्गुमञ्जरी, अग्रं प्रावृषोऽग्रप्रावृट्=आषाढवर्षा इव, समीपे=निकटे, स्थिता=अवस्थिता, ज्येष्ठा=वृद्धस्त्रियः, गर्भवती-परिचर्याकुशला यस्याः सा तथोक्ता, पक्षे—समीपे स्थितो ज्येष्ठो मासो यस्याः सा, पयःपूर्णपयोधरा—पयसा=क्षीरेण, पूर्णौ=परिपूर्णौ, पयोधरौ=स्तनौ यस्याः सा, पक्षे—पयसा=जलेन पूर्णः पयोधरः=मेघः यत्र सा, तस्य भूपतेः=भीमस्य, आह्लादं=परमामोदम्, अकरोत्=चकार। प्रावृडपि राज्ये सुभिक्षकारणतया भूपतिमानन्दयति। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम्॥२३॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि, समीप में ही स्थित ज्येष्ठा अर्थात् गर्भवती स्त्रियों की परिचर्या में कुशल वृद्धा स्त्रियों वाली एवं दुग्ध से भरे हुए स्तनों वाली उस प्रियंगुमञ्जरी ने आषाढ़ मास की प्रथम वर्षा के समान उन राजा भीम को आनन्दित किया।

अथवा—समीप में ही स्थित ज्येष्ठ मास वाले एवं जल से परिपूर्ण मेघों वाले आषाढ़ मास की प्रथम वर्षा के समान उस (रानी प्रियंगुमञ्जरी) ने उन राजा भीम को आनन्दित किया॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है कि आषाढ मास की प्रथम वर्षा राज्य के लिए सुभिक्षकारिणी होने के कारण राजा के लिए आनन्ददायिनी होती है। ठीक इसी प्रकार रानी प्रियंगुमञ्जरी भी प्रथम वार गर्भवती होने के कारण वंशवृद्धि की राजा भीम की आकांक्षा को साकार रूप देने से उसके लिए आनन्ददायिनी हुई ॥ २३ ॥

एवमविरतविविधवाञ्छोत्सवाविच्छेदकर्तरि भर्तरि, संज्ञयैवाज्ञाकारिण्यपारे परिवारे, बहुभङ्गिभाग्योपभोगक्रमेणातिक्रामति कुत्रचित्काले, कालकलाकुशलश्लाघनीये पूर्णप्राये प्रसवसमये, विलीनजात्यशातकुम्भभासि भास्वत्युदयमारोहति, हततिमिरासु दिक्षु क्षणमेकं सा प्रसववेदनाव्यतिकरमन्वभूत् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, अविरतं=सततं, विविधानां=विभिन्नानां, वाञ्छानाम्=अभिलाषाणां, यः उत्सवः=आमोदः, तस्य अविच्छेदः=परिपूर्णता, तत्कर्तरि भर्तरि=स्वामिनि नृपे, संज्ञयैव=संकेतमात्रेणैव, आज्ञाकारिणि=आदेशपालके, अपारे=विशाले, परिवारे=परिजने, बहुभङ्गिभाग्योपभोगक्रमेण—भक्तुं=सेवितुमुपभोक्तुं वा योग्या इति भाग्याः, भज्धातोः 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्, 'अत उपधाया' इत्युपधावृद्धिः, 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' इति जकारस्य कुत्वम्। बहुभङ्गयः=अनेकप्रकाराः, ये भाग्याः=भोग्यपदार्थाः, तेषाम् उपभोगक्रमेण कुत्रचित्काले=कस्मिंश्चित् समये, अतिक्रामति=व्यपगच्छति सति, कालकलाकुशलश्लाघनीये—कालकलाकुशलाः=कालज्ञाः, दैवज्ञा इति यावत्। तैः श्लाघनीये=प्रशंसनीये, पूर्णप्राये प्रसवसमये=दोहदकाले, विलीनं=द्रवितं, जात्यम्=उत्तमं यत् शातकुम्भं=सुवर्णं, तद्वद् भाः=कान्तिः यस्य तस्मिन् भास्वति=सूर्ये, उदयम्=उदयाचलम्, आरोहति=आरोहणं कुर्वति, हततिमिरासु—हतं=विनष्टं, तिमिरं=तमः यत्र तासु दिक्षु=ककुभासु, क्षणमेकं=स्वल्पकालं, सा=राज्ञी, प्रसववेदनाव्यतिकरं=प्रसवपीडासंभूतिम्, अन्वभूत्=अनुभूतवती ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार (अपनी) विभिन्न प्रकार की अभिलाषाओं को निरन्तर उत्सवों के द्वारा राजा द्वारा पूर्ण करते रहने पर, संकेतमात्र होते ही बहुसंख्यक परिजनवर्गों के आज्ञा-पालन में तत्पर रहने पर, अनेकों प्रकार के भोग्य पदार्थों का उपभोग करने के क्रम में कुछ समय व्यतीत होने पर, कालकला कुशल—काल की कलाओं को जानने में कुशल अर्थात् दैवज्ञों के द्वारा प्रशंसनीय प्रसवकाल के लगभग पूर्ण होने पर; पिघले हुए उत्कृष्ट सुवर्ण की कान्ति के समान कान्ति वाले भगवान् सूर्य के उदयाचल पर आरोहित होने पर, दिशाओं में (व्याप्त) अन्धकार के विनष्ट हो जाने पर कुछ समय के लिए उस रानी प्रियंगुमञ्जरी ने प्रसववेदना का अनुभव किया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ततश्च—

प्रभासंयोगिविख्यातं योग्यं नालस्यकर्मणः।
पृथ्वीव पुण्यतीर्थं सा कन्यारत्नमजीजनत् ॥ २४ ॥

अन्वयः—पृथ्वी प्रभासंयोगिविख्यातं नालस्यकर्मणः योग्यं पुण्यतीर्थमिव सा (प्रभासंयोगि-विख्यातं नालस्य-कर्मणः योग्यं) कन्यारत्नम् अजीजनत् ॥२४॥

कल्याणी—प्रभेति। पृथ्वी=भूमिः, [प्रभासं-योगिविख्यातं] प्रभासं=प्रभासेति नाम्ना प्रसिद्धं, योगिभिः=योगपरायणैः, विख्यातम्। [न+आलस्यकर्मणः] आलस्यं=शैथिल्यात्मकं यत्कर्म, तस्य न योग्यम्=उचितम्. अथ च आलस्यं कर्म यस्य स आलस्यकर्मा तस्य न योग्यम्=उचितम्, प्रमादिभिरगम्यमिति भावः। पुण्यतीर्थमिव =पवित्रतीर्थमिव, सा=राज्ञी, [प्रभासंयोगि–विख्यातम्] प्रभासंयोगि=कान्तिमत्, विख्यातं=प्रसिद्धं, नालस्यकर्मणः—नलस्येदं नालं, तस्य कर्मणः योग्यम्=उचितं, नलकर्मानुरूपमिति यावत्। कन्यारत्नं=पुत्रीरत्नम्, अजीजनत्=असविष्ट। श्लेषमूलोपमा। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद जिस प्रकार पृथ्वी ने 'प्रभास' नाम से प्रसिद्ध, योगियों के द्वारा विख्यात, आलस्य कर्म के अयोग्य अर्थात् प्रमादियों के द्वारा अगम्य पवित्र तीर्थ को उत्पन्न किया था, उसी प्रकार उस रानी प्रियंगुमञ्जरी ने कान्ति से समन्वित, प्रसिद्ध राजा नल के द्वारा किये जाने वाले पवित्र कर्मों के योग्य अर्थात् राजा नल के कर्मों के अनुरूप कन्यारत्न को उत्पन्न किया ॥२४॥

तत्र च दिवसे 'विकसितकुमुदकुन्दकान्तकीर्तनीयकीर्तिसुधया धवलानि करिष्यत्येषा प्रवर्धमानास्मन्मुखानि' इति प्रियादिव प्रसन्नाः समपद्यन्त दश दिशः। 'मा स्म पुनरस्मद्गुणानेषापहार्षीत्' इत्यपहृतैकैकसारगुणाः सभया नमस्यन्त इव तस्यै कुसुमाञ्जलिममुञ्चँश्चन्द्रादयो देवाः। स्वकान्तिसर्वस्वापहारभयादिव दिवि ननृतुरप्सरसः। 'किमस्याः समं समुत्पन्नमन्यदपि कन्यारत्नम्' इत्यन्विष्यन्त इव परितः परिबभ्रमुः सुरभयः समाः समीरणाः ॥

कल्याणी—तत्रेति। तत्र=तस्मिन्, दिवसे=दिने च; 'प्रवर्धमाना=प्रवृद्धिं गच्छन्ती, एषा=इयं कन्या, विकसितं=विकचं, यत् कुमुदं=श्वेतकमलं, कुन्दं=माध्वपुष्पं च, तद्वत् कान्ता=रम्या, कीर्तनीया=वर्णनीया च कीर्तिरेव सुधा तया, अस्माकं=दिशां, मुखानि=अग्रभागान् आननानि च, धवलानि=शुभ्राणि, करिष्यति=विधास्यति' इति प्रियादिव=सुखादिव [हेतूत्प्रेक्षा]। दश दिशाः=दशसंख्याकाः ककुभाः, प्रसन्नाः=प्रसादिताः, समपद्यन्त=संजाताः। 'एषा=कन्या, पुनः=भूयः, अस्माकं गुणान् मा स्म अपहार्षीत्=आच्छिदत्' इति विचिन्त्य=सञ्चिन्त्य, अपहृतः=आच्छिन्नः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकैकः=प्रत्येकः, सारः=उत्कृष्टः गुणः येषां ते, अतएव सभयाः=भयग्रस्ताः, नमस्यन्त इव=नमस्कुर्वाणा इव, चन्द्रादयः देवाः तस्यै=कन्यकायै, कुसुमाञ्जलिं=पुष्पाञ्जलिम्, अमुञ्चन्=अत्यजन्, पुष्पाञ्जलित्वेन पुष्पवृष्टिमकुर्वन्निति भावः [हेतूत्प्रेक्षा]। स्वकान्तिसर्वस्वापहारभयादिव=मा स्मास्माकं कान्तिसर्वस्वमेषापहार्षीदिति भयादिव, दिवि=स्वर्गे, अप्सरसः=देवाङ्गनाः, ननृतुः=नृत्यमकुर्वन्, चकम्पिरे इति भावः। किम्, अस्याः=एतस्याः; समं=सदृशम्, अन्यदपि=अपरमपि, कन्यारत्नं=पुत्रीरत्नं, [लोके] समुत्पन्नं=जातम्, इति=एवम्, अन्विष्यन्तः=अन्वेषणं कुर्वन्त इव [उत्प्रेक्षा], सुरभयः=सुगन्धयः, समाः=नातिमन्दाः नातितराश्च, अनुकूला इत्यर्थः। समीरणाः=वायवः, परितः=समन्ततः, परिबभ्रमुः=परिभ्रमणमकुर्वन्। अन्येऽपि कन्यारत्नान्वेषिणो हि सुरभयः मनोहराः समाः सद्गुणसम्पन्नाश्च भवन्ति ॥

ज्योत्स्ना—और उस दिन "वृद्धि को प्राप्त करती हुई अर्थात् बढ़ती हुई यह कन्या विकसित कुमुद (श्वेत कमल) एवं कुन्दपुष्प के समान रमणीय एवं वर्णनीय कीर्तिरूपी सुधा से हम सब दिशाओं के मुख को धवल करेगी" इस प्रकार के हर्ष से मानों दशो दिशायें प्रसन्नता को प्राप्त हुईं। "यह कन्या बार-बार हम लोगों के गुणों का अपहरण न कर ले" यह सोचकर एक-एक उत्कृष्ट गुणों को धारण किये हुए चन्द्र आदि देवताओं ने भयभीत होकर मानो (उसे) नमस्कार करते हुए पुष्पाञ्जलि का परित्याग किया अर्थात् पुष्पाञ्जलि के रूप में उसके ऊपर पुष्पों की वर्षा की। अपनी कान्ति के सर्वस्व अपहरण के भय से मानों स्वर्ग में अप्सरायें नृत्य करने लगीं अर्थात् कम्पायमान होने लगीं। "क्या इसके समान कोई अन्य कन्यारत्न भी उत्पन्न हुआ है?" इसी का अन्वेषण (खोज) करते हुए सुगन्धित एवं अनुकूल वायु मानों चारो ओर भ्रमण करने लगे ॥

किं बहुना—

अमन्दानन्दनिष्यन्दमपास्तान्यक्रियाक्रमम्।
जगज्जन्मोत्सवे तस्याः पीतामृतमिवाभवत् ॥ २५ ॥

अन्वयः—(किं बहुना) तस्याः जन्मोत्सवे अमन्दानन्दनिष्यन्दम् अपास्तान्यक्रियाक्रमं जगत् पीतामृतमिव अभवत् ॥२५॥

कल्याणी—अमन्देति—तस्याः=कन्यकायाः, जन्मोत्सवे=जन्मोत्सवसमये, अमन्दानन्दनिष्यन्दम्—अमन्दः=प्रबलः, आनन्दस्य=हर्षस्य, निष्यन्दः=प्रवाहः यत्र तत्, अपास्तान्यक्रियाक्रमम्—अपास्ताः=परित्यक्ताः, अन्यक्रियाक्रमाः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपरकार्यक्रमाः येन तत्, जगत्=लोकः, पीतामृतमिव=पीतममृतं येन तदिव, अभवत्=अभूत्, आनन्दमग्नं संजातमिति भावः। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—(अधिक कहने से क्या लाभ) उस कन्या के जन्मसम्बन्धी उत्सव पर प्रबल आनन्द के प्रवाह के कारण अन्य (समस्त) कार्यक्रमों का परित्याग कर संसार अमृत का पान किये हुए के समान (आनन्द से सराबोर) हो गया ॥२५॥

अथ बहोः कालादनुरूपप्रौढप्रहरणप्राप्तिप्रीतहृदयेनास्फोटितमिव सकलजगद्विजयव्यवसायसाहसिकेन कुसुमसायकेन, चिरादुचिताश्रयलाभमुदितमनसा स्फूर्जितमिव शृङ्गाररसेन, शुचिकाशकुसुमहास्येन योग्यसहकारिकारणोपलम्भपूर्णमनोरथेन बल्गितमिव वसन्तमासेन, निजकर्मणः सफलतां मन्यमानेनोच्छ्वसितमिव मलयानिलेन, चिरकालोपलब्धश्लाघ्याधारतया हसितमिव रूपसम्पदा, विकसितमिव लावण्यलक्ष्म्या, प्रनृत्तमिव समस्तस्त्रीलक्षणाधिदेवतया, कलकलितमिव कान्तिकलापश्रिया ॥

कल्याणी—अथेति। अथेति वाक्यारम्भे। बहोः कालात्=बहुकालादनन्तरम्, अनुरूपप्रौढप्रहरणप्राप्तिप्रीतहृदयेन—अनुरूपस्य=अनुकूलस्य, प्रौढस्य=सुदृढस्य च, प्रहरणस्य=शस्त्रस्य, प्राप्त्या=लाभेन, प्रीतं=प्रसन्नं, हृदयं=मनः यस्य तेन; सकलजगद्विजयव्यवसायसाहसिकेन—सकलजगतां=समस्तलोकानां, विजये=जये, यः व्यवसायः=उद्योगः, तत्र साहसिकः=साहसयुक्तः तेन, कुसुमसायकेन=कामदेवेन, आस्फोटितं=हर्षाद्विकसितमिव, चिरादुचिताश्रयलाभमुदितमनसा—चिरात्=बहुकालादनन्तरम्, उचिताश्रयलाभाद्=योग्याधारप्राप्तेः, मुदितं=हृष्टं, मनः=चित्तं यस्य तेन, शृङ्गाररसेन स्फूर्जितमिव=प्रदीप्तमिव, शुचिकाशकुसुमहास्येन—शुचि=शुभ्रं, काशकुसुमं—काशो नाम तृणविशेषः, तस्य कुसुमं=पुष्पं, तद्वद् हास्यं=हसितं यस्य तेन [उपमा, नात्र काशकुसुममेव हास्यमिति रूपकं, वसन्तमासे तदनस्तित्वत्वात्]। योग्यसहकारिकारणोपलम्भपूर्णमनोरथेन—योग्यसहकारि=उचितसहायकं, कारणं=तत्कन्यारूपं, तस्य उपलम्भेन=अवाप्त्या, पूर्णः=सम्पन्नः, मनोरथः=अभिलाषः यस्य तेन वसन्तमासेन, बल्गितं=हर्षादुच्छलितमिव, निजकर्मणः=कामदेवसाहाय्यरूपस्य स्वकीयकार्यस्य, सफलतां=साफल्यं, मन्यमानेन=अवगच्छता, मलयानिलेन=मलयाचलवायुना, उच्छ्वसितमिव=उज्जीवितमिव, चिरकालोपलब्धश्लाघ्याधारतया—चिरकालेन=बहुकालेन, उपलब्धः=अवाप्तः, श्लाघ्यः=प्रशस्यः, आधारः=आश्रयः यया तस्या भावस्तत्ता तया, रूपसंपदा=रूपसम्पत्त्या, हसितमिव=उपहसितमिव, लावण्यलक्ष्म्या=सौन्दर्यश्रिया, विकसितमिव=प्रफुल्लितमिव, समस्तस्त्रीलक्षणाधिदेवतया—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समस्तानां=सकलानां, स्त्रीलक्षणानां=नारीचिह्नानाम्, अधिदेवतया=अधिष्ठातृदेव्या, प्रनृत्तमिव=प्रकर्षेण नृत्तमिव, कान्तिकलापश्रिया--कान्तिकलापः=प्रभाराशिः, तस्य श्रिया=लक्ष्म्या, कलकलितमिव=कलकलरवयुक्तमिव, कलकलः अस्पष्ट-मधुरध्वनिः, तं करोतीत्यर्थे णिच्, तदन्ताद्भावे क्तः ॥

ज्योत्स्ना—बहुत समय के बाद (अपने) अनुकूल एवं सुदृढ़ शस्त्र की प्राप्ति से प्रसन्न हृदय वाले, समस्त लोकों पर विजयरूपी अभियान में साहसयुक्त कामदेव के हर्ष से उतावले होने के समान; बहुत समय के पश्चात् (अपने लिए) उचित आधार की प्राप्ति के कारण प्रमुदित चित्तवाले शृंगार रस के प्रदीप्त होने के समान, शुभ्र काशनामक पुष्प के समान उल्लसित अनुकूल (उस कन्यारूप) सहायक कारण की प्राप्ति से पूर्ण मनोरथ वाले वसन्त मास के द्वारा हर्ष से उछाले गये के समान, (कामदेव की सहायतारूप) अपने कार्य की सफलता को मानने वाले मलय-पवन द्वारा उच्छ्वसित के समान, बहुत समय बाद प्राप्त प्रशंसनीय आधार वाली रूपसम्पत्ति के द्वारा प्रमुदित हुए के समान, सौन्दर्यश्री के प्रफुल्लित के समान, समस्त स्त्रीलक्षणों (स्त्री में रहने वाले समुचित चिह्नों) के अधिष्ठातृ देवता द्वारा उत्कृष्ट नृत्य के समान, कान्तिपुञ्ज की लक्ष्मी द्वारा कलकलरूपी अस्पष्ट मधुर ध्वनि के समान (मधुर ध्वनि हो उठी) ॥

किं बहुना—

सर्गव्यापारखिन्नस्य बहोः कालाद्विधेरपि ।
आसीदिमां विनिर्माय श्लाघ्यः शिल्पपरिश्रमः ॥ २६ ॥

अन्वयः—(किं बहुना) बहोः कालात् सर्गव्यापारखिन्नस्य विधे अपि इमां विनिर्माय शिल्पपरिश्रमः श्लाघ्यः आसीत् ॥२६॥

कल्याणी—सर्गेति । बहोः कालात्=समधिकसमयात्, सर्गव्यापार-खिन्नस्य—सर्गव्यापारेण=सृष्टिकर्मणा, खिन्नस्य=श्रान्तस्य, विधेः=विधातुरपि, इमां=एतां कन्यां, विनिर्माय=विरचय्य, शिल्पपरिश्रमः=सृष्टिकौशलायासः, श्लाघ्यः=प्रशंसनीयः, सफल इति यावत् । आसीत्=अभूत् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; अत्यधिक समय से सर्ग-व्यापार (सृष्टि-निर्माणरूप कार्य) से थके हुए ब्रह्मा का शिल्प-परिश्रम भी इस कन्या को बनाकर प्रशंसनीय हो गया ।

आशय यह है कि प्रियंगुमञ्जरी द्वारा प्रसूत इस कन्या के निर्माण से सृष्टिकर्ता ब्रह्मा का शिल्पपरिश्रम सफल हो गया ॥२६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवमस्याः सततविस्तीर्णस्वर्णपूर्णपात्रपूजितपूज्यद्विजन्मनि सम्पन्ने नामकर्मसमये सम्मान्य मान्यजनं जनेश्वरो वरप्रदानमनुस्मृत्य दमनकमुनेः 'दमयन्ती' इति नाम प्रतिष्ठितवान् ।

कल्याणी—एवमिति । एवम्=इत्थम्; सततविस्तीर्णस्वर्णपूर्णपात्रपूजितपूज्यद्विजन्मनि—सततं=निरन्तरं, विस्तीर्णैः=विशालैः, स्वर्णपूर्णपात्रैः=कनकमयपूर्णपात्रैः, पूजिताः=अर्चिताः द्विजन्मानः=विप्राः यत्र तादृशे; उत्सवविशेषावसरे महार्हवस्तुभिः पूर्णं पात्रं दानीयजनेभ्यो वितीर्यते तत्पूर्णपात्रमुच्यते, राज्ञा भीमेन स्वर्णपूर्णपात्राणि प्रदाय विप्राः पूजिता इति तद्ब्राह्मणभक्तिः कन्यारत्नलाभजनितहर्षश्च सूच्यते । सम्पन्ने=प्राप्ते, नामकर्मसमये=नामकरणकाले, मान्यजनं=समादरणीयलोकं, संमान्य=समादृत्य, जनेश्वरः=राजा, दमनकमुनेः=दमनकनामतपस्विनः, वरप्रदानं=वरदानविषयकवार्ताम्, अनुस्मृत्य=स्मरणं कृत्वा, अस्याः=कन्यायाः, 'दमयन्ती' इति, नाम प्रतिष्ठितवान्=निश्चितवान् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार निरन्तर फैले हुए स्वर्णमय पूर्णपात्रों के द्वारा (की जा रही) पूज्य ब्राह्मणों की पूजा के सम्पन्न हो जाने पर नामकरण समय (के उपस्थित होने) पर समादरणीय लोगों का सम्मान कर नरपति (राजा भीम) ने दमनक मुनि द्वारा दिये गये वर को स्मरण कर इस कन्या का "दमयन्ती" यह नाम प्रतिष्ठित किया अर्थात् रखा ॥

क्रमेण च प्रचुरामृतसंसिक्ता इव सुकुमाराः प्रसर्तुमारभन्ताङ्गावयवपल्लवाः, चकार च चञ्चच्चामीकररुचिरुचिराङ्गणमणिवेदिकासुकैश्चिद्दिवसैरनुच्चचरणप्रचारचारुचापल्यलीलाः, सहासमकरोत्परिजनं जनयन्ती बालकेलीः, स्वच्छन्दमानन्दयाञ्चकार पितरं तरङ्गभङ्गिरङ्गितेन, जननीमजीजनज्जातविस्मयां स्मितमुग्धदर्शितदन्तकान्तिकुन्दपुष्पमनिष्पन्नाक्षरमल्पाल्पं जल्पन्ती ॥

कल्याणी—क्रमेणेति । क्रमेण च=क्रमशश्च, प्रचुरामृतसंसिक्ता—प्रचुरेण=समधिकेन, अमृतेन=सुधया, संसिक्ता इव=सिञ्चिता इव [इत्युत्प्रेक्षा]। सुकुमाराः=सुकोमलाः, [तस्याः] अङ्गावयवपल्लवाः=देहाङ्गकिसलयाः, प्रसर्तुं=वर्धितुम्, आरभन्त=प्रारेभिरे । चञ्चच्चामीकररुचिरुचिराङ्गमणिवेदिकासु—चञ्चतः=उद्दीप्यमानस्य, चामीकरस्य=सुवर्णस्य, रुच्या=कान्त्या, रुचिरा=रम्या, या अङ्गणमणिवेदिका=मणिजटिताङ्गणचतुरस्रभूमयः, तासु कैश्चिद् दिवसैः=कतिपयदिनैः, अनुच्चचरणप्रचारचारुचापल्यलीलाः—अनुच्चचरणाभ्यां=निम्नपादाभ्यां, यः प्रचारः=प्रचलनं, तेन चार्वी=मनोरमा, चापल्यलीलाः=चाञ्चल्यक्रियाः च, चकार=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकरोत् । बालकेलीः=शिशुलीला, जनयन्ती=प्रकाशयन्ती, परिजनं=बन्धुवर्गं, सहासं=हासयुक्तम्, अकरोत्=चकार । तरङ्गभङ्गिरङ्गितेन—तरङ्गभङ्ग्या=तरङ्गवत्पदविन्यासेन, यद् रङ्गितं=चलनं, तेन पितरं=जनकं, स्वच्छन्दं=निर्बाधम्, आनन्दयाञ्चकार=आनन्दयामास । स्मितमुग्धदर्शितदन्तकान्तिकुन्दपुष्पं—स्मितेन=ईषद्धास्येन, मुग्धा=मनोज्ञा, दर्शिता=प्रदर्शिता, दन्तकान्तिरेव कुन्दपुष्पं यत्र तद्यथा स्यात्तथा, अनिष्पन्नानि=अस्पष्टानि, अक्षराणि यत्र तद्यथा स्यात्तथा, अल्पाल्पम्=ईषदीषत्; जल्पन्ती=ब्रुवन्ती, जननीं=मातरं, जातविस्मयां—जातः=सञ्जातः, विस्मयः=आश्चर्यं यस्याः तथाविधाम्, अजीजनत्=अकरोत् ॥

ज्योत्स्ना—और क्रमशः पर्याप्त अमृत से सिञ्चित के समान (उसके) सुकुमार शरीर के अवयवरूपी पल्लवों ने बढ़ना प्रारम्भ किया; देदीप्यमान सुवर्ण की कान्ति से रमणीय आंगन की मणिखचित वेदिकाओं (चबूतरों) पर कतिपय दिनों तक (अपने) छोटे-छोटे पैरों (अथवा घुटनों के बल) से चलकर (उसने) मनोरम चञ्चल क्रियायें कीं; बाल्यकालोचित क्रीड़ाओं को करते हुए (अपने) परिजनों (पारिवारिक लोगों) को प्रसन्नता से युक्त किया; लहरों के समान पैरों को उठा-उठाकर चलने से (अपने) पिता को निर्बाध रूप से आनन्दित किया; मन्द-मन्द मुस्कान से प्रदर्शित मनोहारी दन्तकान्तिरूपी कुन्दपुष्पों से (निकलते हुए) अस्पष्ट अर्थात् टूटे-फूटे अक्षरों से थोड़ी-थोड़ी अर्थात् रुक-रुककर बोलती हुई (अपनी) माता को आश्चर्य में डालने लगी ॥

किं बहुना—

अपि रेणुकृतक्रीडं नरेऽणुक्रीडयान्वितम् ।
तस्याः प्रौढं शिशुत्वेऽपि वयो वैचित्र्यमावहत् ॥ २७ ॥

अन्वयः—रेणुकृतक्रीडं (अपि च) नरे अणुक्रीड़यान्वितं शिशुत्वे अपि तस्याः प्रौढं वयः वैचित्र्यम् आवहत् ॥२७॥

कल्याणी—अपीति । रेणुना=धूलिना, कृता=विहिता, क्रीडा=लीला यत्र तदपि, न-रेणुक्रीडयान्वितम्=न रेणुक्रीडया युक्तं, शिशुत्वेऽपि=शैशवकालेऽपि; तस्याः=दमयन्त्याः, प्रौढं वयः=प्रौढावस्था, वैचित्र्यमावहत्=आश्चर्यमावहति स्मेति विरोधः । रेणुकृतक्रीडमपि च [त्वां कः परिणेष्यतीत्युक्त्या] नरे=पुंसि विषये; अणुक्रीडयान्वितम्=अल्पक्रीडाकरं, तस्याः सम्बन्धि वयः=अवस्था, शैशवेऽपि=बाल्येऽपि, प्रौढं=प्रबलं, वैचित्र्यं=विचित्रताम्, आवहत्=दधाविति विरोधपरिहारः । श्लेषमूलको विरोधाभासः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; धूलि के साथ क्रीड़ा करती हुई पुरुषों की क्रीडाओं से कुछ-कुछ समानता रखने वाली उसकी अवस्था ने छोटी होते हुए भी प्रबल विचित्रता को धारण किया ॥२७॥

एवमियमनवरतस्वैरविहाराहारिणि क्रमेणातिक्रामति शैशवे वयसि पितुर्नियोगात् गुरूपदेशात्साधुवृद्धसंवासाद् बुद्धिविकासाच्च नातिचिरेण, प्राप्ता नैपुण्यं पुण्यकर्मारम्भेषु, जाता प्रवीणा वीणासु, निराकुला कुलाचारेषु, कुशला शलाकालेख्येषु, विशारदा शारिदायेषु, प्रबुद्धा प्रबन्धालोचनेषु, चतुरा चातुरानाथजनचिकित्सासु ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थं, क्रमेण=क्रमशः, अनवरतस्वैरविहाराहारिणि—अनवरतं=सततं, स्वैरं=स्वच्छन्दं; विहाराहारिणि=विहाराहारशीले, शैशवे वयसि=बाल्यावस्थायाम्, अतिक्रामति=व्यतिगच्छति सति, इयं=एषा दमयन्ती, पितुः जनकस्य, नियोगात्=आदेशात्, गुरूपदेशात्—गुरूणाम्=आचार्याणाम्, उपदेशात्=अनुशासनात्, साधुवृद्धसंवासात्—साधूनां=सज्जनानां, वृद्धानां च संवासात्=सङ्गात्, बुद्धिविकासाच्च=बुद्धेः विकासाच्च, नातिचिरेण=स्वल्पेनैव कालेन, पुण्यकर्मारम्भेषु=पवित्रकार्यप्रयत्नेषु, नैपुण्यं=कौशलं, प्राप्ता=अधिगता, वीणासु=वीणावादनकर्मसु, प्रवीणा=कुशला, जाता=सञ्जाता, कुलाचारेषु=कुलोचिताचरणेषु, निराकुला=अनुद्विग्ना, शलाकालेख्येषु—शलाका=तूलिका, तदपेक्षीनि यानि आलेख्यानि=चित्रकर्माणि तेषु, चित्रकलास्वित्यर्थः। कुशला=निपुणा, शारिदायेषु—शारीणां=शारिकाणां, दायेषु=आहारवितरणकर्मसु, विशारदा=निपुणा, प्रबन्धालोचनेषु=काव्यालोचनेषु, प्रबुद्धा=बुद्धिमती, आतुराणां=रुग्णजनानाम्, अनाथानां=असहायानां च जनानां=लोकानां, चिकित्सासु=औषधोपचारेषु; चतुरा=निपुणा जाता। 'वीणा-वीणा, कुला-कुला, शला-शला' इति यमकानि। हारा-हारि, नैपुण्यं-पुण्य, शारदा-शारिदा, चतुरा-चातुरा इत्यादिषु च द्रष्टव्याश्छेकानुप्रासाः ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार क्रमशः निरन्तर स्वच्छन्द विहार करने वाली बाल्यावस्था के व्यतीत होते जाने पर इस दमयन्ती ने पिता के आदेश से, गुरुओं के उपदेश से, सज्जनों एवं वृद्धों की सङ्गति से और बुद्धि के विकास से थोड़े ही समय में पुण्यमय कार्यों को करने में निपुणता प्राप्त कर ली, वीणाओं को बजाने में प्रवीण हो गई। (इसके साथ-साथ यह) कुलानुरूप आचरण करने में व्याकुल न होने वाली, शलाका अर्थात् तूलिका से चित्र बनाने में कुशल; शारिकाओं को भोजन देने के कार्यों में प्रवीण, काव्यों की आलोचना करने में बुद्धिमती और आतुर अर्थात् रोगी एवं अनाथ लोगों की चिकित्सा करने में चतुर हो गई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं चान्यत्—

अकरोदनालस्यं लास्ये, प्राप प्राधान्यं धन्योचितव्यवहारेषु, वैचित्र्यं चित्रेषु, चातुर्यं तौर्यत्रिके, कौशलं शल्योद्धारे, पाटवं पटहवादने, वैमल्यं नवमाल्यग्रथने, प्रागीत्यं गीत्याम्, प्राकाम्यं कामकथासु ॥

कल्याणी—अकरोदिति। लास्ये=नर्तने, अनालस्यम्=अशैथिल्यम्, अकरोत्=चकार। धन्योचितव्यवहारेषु=उत्तमजनयोग्यकर्मसु, प्राधान्यं=श्रेष्ठत्वम्; चित्रेषु=चित्रकर्मसु, वैचित्र्यं=मनोज्ञत्वम्; तौर्यत्रिके=नृत्यगायनवाद्यकलायां; तौर्यत्रिकं नाम नृत्यस्य, गानस्य वाद्यस्य च समेकता, सङ्गीतमित्यर्थः, 'गीतं वाद्यं च नृत्यं च त्रयं सङ्गीतमुच्यते' इत्युक्तेः। तत्र चातुर्यं=नैपुण्यम्; शल्योद्धारे=शल्यचिकित्सायां, कौशलं=कुशलताम्; पटहवादने=दुन्दुभिवादने, पाटवं=पटुतां; नवमाल्यग्रथने=नूतनस्रग्निर्माणे, वैमल्यं=विमलतां; गीत्यां=गाने, प्रागीत्यं—प्रगीता=प्रसिद्धा तस्या भावं, वैशिष्ट्यमित्यर्थः। कामकथासु=कामसम्बन्धिकथासु, प्राकाम्यं=प्रकृष्टत्वं, प्राप=प्राप्तवती ॥

ज्योत्स्ना—और क्या ? अर्थात् अधिक क्या कहा जाय, (उसने) नृत्य में आलस्य नहीं किया, विशिष्ट लोगों के लिए उपयुक्त व्यवहारों अर्थात् कार्यों में श्रेष्ठता, चित्रकला में विचित्रता, तौर्यत्रिक अर्थात् नृत्य-गायन और वाद्य से समन्वित संगीत में निपुणता, शल्य क्रिया अर्थात् शल्यचिकित्सा में कुशलता, पटह अर्थात् दुन्दुभि बजाने में पटुता, नई-नई मालाओं को गूँथने में विमलता अर्थात् स्वच्छता, गान में विशिष्टता और कामकथाओं में प्रकृष्टता को प्राप्त किया ॥

किं बहुना—

न तत्काव्यं न तन्नाट्यं न सा विद्या न सा कला।
यत्र तस्याः प्रबुद्धाया बुद्धिर्नैव व्यजृम्भत ॥ २८ ॥

अन्वयः—न तत् काव्यं, न तत् नाट्यं, न सा विद्या, न सा कला (आसीत्) यत्र प्रबुद्धायाः तस्याः बुद्धिः नैव व्यजृम्भत ॥२८॥

कल्याणी—नेति। न तत्काव्यं=न तादृक्किमपि काव्यं; न तन्नाट्यं=न तादृक्किमपि दृश्यमभिनयं वा, न सा विद्या=न तादृग्ज्ञानं, न सा कला=न तादृक् शिल्पम्, आसीत् यत्र=यस्मिन् काव्ये, नाट्ये, विद्यायां कलायाञ्च, प्रबुद्धायाः=प्रकृष्टबुद्धियुक्तायाः, तस्याः=दमयन्त्याः, बुद्धिः=प्रज्ञा, नैव व्यजृम्भत=न प्रास्फुरत्; सा सकलकाव्यनाट्यविद्याकलानिपुणा जातेति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; न कोई इस प्रकार का काव्य था, न इस प्रकार का कोई नाट्य अर्थात् नाटक था, न कोई इस प्रकार की विद्या थी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और न ही ऐसी कोई कला थी जिसमें प्रखर बुद्धि वाली उस दमयन्ती की बुद्धि स्फुरित न हुई हो।

आशय यह है कि वह दमयन्ती समस्त काव्यों, नाटचों, विद्याओं और कलाओं में प्रवीण हो गई ।।२८।।

एवमस्याः शैशव एव निजजरठप्रज्ञाप्रज्ञातव्यवस्तुविस्तारायाः क्रमेण तिलकभूतं नूतनचूतवनमिव वसन्तप्रवेशप्रथमपल्लवोल्लासेन, प्रत्यग्रघन-समयमहीमण्डलमिवामन्दविदलत्कन्दलकलापेन, केशरिकिशोरकण्ठपीठमिव नवकेसराङ्कुरोद्गारेण, करिकलभकपोलस्थलमिव प्रथममदोद्भेदेन, निशा-वसाननभस्तलमिव प्रभातप्रारम्भप्रभाप्रभावेण, सरःसलिलमिव विदलित-कोमलकमलकान्तिसन्तानेन, मनोहारिणा संसारसारभूतेनाभूष्यत वपुः कान्ततरतारुण्यावतारप्राक्प्रारम्भेण ।।

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, शैशवे एव=बाल्यकाल एव, निजजरठप्रज्ञाप्रज्ञातव्यवस्तुविस्तारायाः—निजजरठप्रज्ञया=स्वप्रवृद्धबुद्ध्या, प्रज्ञातव्यः=प्रकर्षेण ज्ञातव्यः, वस्तुविस्तारः=वस्तुप्रसारः यया तस्याः, अस्याः=दमयन्त्याः, तिलकभूतं=वरेण्यं, वपुः=शरीरं, क्रमेण=क्रमशः, संसारसारभूतेन=जगत्तत्वभूतेन, कान्ततरतारुण्यावतारप्रारम्भेण—कान्ततरम्=अतिशयमनोरमं, यत् तारुण्यं=यौवनं, तस्य अवतारः=आगमः, तस्य प्राक्प्रारम्भेण=प्रथमप्रारम्भेण, तथैव अभूष्यत=अलङ्कृतं जातं, मनोहारिणा=मनोरमेण, वसन्तप्रवेशप्रथमपल्लवोल्लासेन—वसन्तप्रवेशे=वसन्तागमे, प्रथमपल्लवोल्लासेन=प्रथमकिसलयोद्भेदेन, नूतन-चूतवनमिव=नवरसालवनं यथा, अमन्दविदलत्कन्दलकलापेन—अमन्देन=अनल्पेन, विदलता=उत्पद्यमानेन, कन्दलकलापेन=नवाङ्कुरसमूहेन, प्रत्यग्रघनसमयमहीमण्डल-मिव—प्रत्यग्रघनसमये=नूतनमेघकाले, महीमण्डलमिव=धराचक्रवालं यथा, नवके-सराङ्कुरोद्गारेण=नूतनग्रीवारोमाङ्कुराविर्भावेन, केसरिकिशोरकण्ठपीठमिव=सिंहकिशोरस्य कण्ठप्रदेशो यथा, प्रथममदोद्भेदेन—प्रथमो यो मदोद्भेदः=मदज-लोद्गमः तेन करिकलभकपोलस्थलमिव—करिकलभस्य=तरुणगजस्य, कपोलस्थ-लमिव=गण्डप्रान्तो यथा, प्रभातप्रारम्भप्रभाप्रभावेण—प्रभातप्रारम्भे=प्रत्यूषारम्भे; यः प्रभाप्रभावः=कान्तिप्रोद्गमस्तेन, निशावसाननभस्तलमिव—निशावसाने=रजनीसमाप्तौ, नभस्तलमिव=गगनतलं यथा, विदलितकोमलकमलकान्तिसन्तानेन=विकसितमृदुलपङ्कजकान्तिप्रसारेण, सरःसलिलमिव=तडागजलं यथा, भूष्यते। अत्र दमयन्तीशरीररूपैकस्यैवोपमेयस्य बहूपमानदर्शनान्मालोपमाऽलङ्कारः ।।

ज्योत्स्ना—इस प्रकार बाल्यावस्था में ही अपनी प्रौढ़ बुद्धि से कठिनता से जानने योग्य वस्तुओं के विस्तार को जानने वाली इस दमयन्ती का तिलकभूत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् वरणीय शरीर क्रमशः संसार के तत्त्वभूत अत्यन्त मनोरम यौवन के आगमन का प्रारम्भ होने से उसी प्रकार सुशोभित हुआ, जिस प्रकार मनोहारी वसन्त ऋतु के प्रथम प्रवेश के अवसर पर प्रथम फ्लवों के निकलने से नूतन आम्रवन; शीघ्रता से अंकुरित होने वाले नवीन अंकुरों से समन्वित प्रथमतः (दर्शित) वादलों के समय भूमण्डल; गर्दन पर नूतन केसराङ्कुरों अर्थात् रोम के अंकुरों के आविर्भाव वाले सिंहशावक का गर्दन; प्रथमतः उद्भूत मदजल वाले तरुण हाथी का गण्डस्थल; प्रातःकाल की प्रारम्भिक कान्ति के प्रभाव से रात्रि की समाप्ति वाला आकाशतल और विकसित कोमल कमलकान्ति के प्रसार से अलंकृत सरोवर का जल सुशोभित होता है ॥

ततश्च—

परिहरति वयो यथा यथाऽस्याः
स्फुरदुरुकन्दलशालि बालभावम् ।
द्रढयति धनुषस्तथा तथा ज्यां
स्पृशति शरानपि सज्जयन्मनोभूः ॥ २९ ॥

अन्वयः—अस्याः स्फुरदुरुकन्दलशालि वयः यथा-यथा बालभावं परिहरति तथा तथा मनोभूः धनुषः ज्यां द्रढयति, शरानपि सज्जयन् स्पृशति ॥२९॥

कल्याणी—परिहरतीति । अस्याः=दमयन्त्याः, स्फुरदुरुकन्दलशालि—स्फुरद्=दीप्यमानं, उरु=प्रशस्तं, यत् कन्दलं=नवाङ्कुरः तद्वत् शालते=शोभते इति तथोक्तं वयः=नूतनावस्था, यथा-यथा=येन-येन प्रकारेण, बालभावं=शैशवं, परिहरति=परित्यजति, तथा-तथा=तेन-तेन प्रकारेण, मनोभूः=कन्दर्पः, धनुषः=कार्मुकस्य, ज्यां=मौर्वीं, द्रढयति=दृढां करोति, शरानपि=बाणानपि, सज्जयन्=सज्जितान् कुर्वन्, स्पृशति=सन्धानाय गृह्णाति ॥ पुष्पिताग्रा वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'अयुजि न युगरेफतो यकारो युजि तु नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ।' इति ॥२९॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात्; इस दमयन्ती की देदीप्यमान प्रशस्त नवांकुरों के समान शोभायमान अवस्था (तारुण्यावस्था) जैसे-जैसे बालभाव का परित्याग करने लगी वैसे-वैसे कामदेव (अपने) धनुष की प्रत्यञ्चा को दृढ़ करने लगा और (उस पर) बाणों को सजाकर (सन्धान करने हेतु उसका) स्पर्श करने लगा अर्थात् हाथ में लेकर तैयार होने लगा ॥२९॥

अपि च—

मुञ्चन्त्याः शिशुतां भरादवतरत्तारुण्यमुद्राङ्कित-
स्फारीभूतनितान्तकान्तवपुषस्तस्याः कुरङ्गीदृशः ।
उन्मीलत्कुचकाञ्चनाब्जमुकुलं यूनां मुहुः पश्यतां
बाह्वोरन्तरमन्तरायसदृशा मन्ये निमेषा अपि ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—शिशुतां मुञ्चन्त्याः भरात् अवतरत्तारुण्यमुद्राङ्कितस्फारीभूतनितान्तकान्तवपुषः कुरङ्गीदृशः तस्याः बाह्वोः अन्तरम् उन्मीलन् कुचकाञ्चनाब्जमुकुलं मुहुः पश्यतां यूनां निमेषा अपि मन्ये अन्तरायसदृशाः (अभूवन्) ॥३०॥

कल्याणी—मुञ्चन्त्या इति। शिशुतां=शैशवं, मुञ्चन्त्याः=परित्यजन्त्याः, भरात्=अतिरेकात्, अवतरत्तारुण्यमुद्राङ्कितस्फारीभूतनितान्तकान्तवपुषः—अवतरत्=प्रादुर्भवद्, यत् तारुण्यं=यौवनं, तस्य मुद्रया=लक्षणेन, अङ्कितं=चिह्नितमर्थाद्युक्तं, स्फारीभूतं=विकसितं, नितान्तं=समधिकं, कान्तं=सुन्दरं, वपुः=शरीरं यस्यास्तस्याः कुरङ्गीदृशः—कुरङ्गी=मृगी, तस्याः दृशौ=नयने इव दृशौ यस्याः, तस्याः=दमयन्त्याः, बाह्वोः=भुजयोः, अन्तरं=मध्यवर्तिनम्, उन्मीलन्=उद्गच्छन्, कुचकाञ्चनाब्जमुकुलं—कुचः=स्तन एव काञ्चनाब्जमुकुलः=स्वर्णकमलकुड्मलः तं, मुहुः=भूयोभूयः, पश्यतां=वीक्षमाणानां, यूनां=तरुणनराणां, निमेषा=नयनच्छदपाता, अपि मन्ये अन्तरायसदृशा=विघ्ना इव [अभूवन्]। तत्कुचकाञ्चनकमलमुकुलं भूयोभूयः पश्यन्तो युवानस्तदानीं निमेषानपि तत्प्रकामदर्शने बाधकानिवामन्यन्तेति भावः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३०॥

ज्योत्स्ना—और भी; शिशुता का परित्याग कर तीव्रता से अवतरित होते हुए यौवन के लक्षणों से समन्वित विकासशील अत्यन्त मनोरम शरीर वाली, हिरणी की आँखों के समान आँखों वाली उस दमयन्ती की भुजाओं के मध्य निकलते हुए स्तनरूपी स्वर्णकमल की कली को बार-बार देखते हुए युवकों के लिए पलक भी मानों विघ्न के समान हो गये।

आशय यह है कि यौवन को प्राप्त करने वाली उस अपूर्व सुन्दरी दमयन्ती को युवकगण अपलक देखते ही रहना चाहते थे। उसे देखने के क्रम में आँखों की पलकों का झपकना भी उनके लिए असह्य था ॥३०॥

ततश्च—

तत्तस्याः कमनीयकान्तिविजितत्रैलोक्यनारीवपुः
शृङ्गारस्य निकेतनं समभवत्संसारसारं वयः।
यस्मिन्विस्मृतपक्ष्मपालिचलनाः कामालसा दृष्टयो
नो यूनां पुनरुत्पतन्ति पतिताः पाशे शकुन्ता इव ॥३१॥

अन्वयः—कमनीयकान्तिविजितत्रैलोक्यनारीवपुः संसारसारं तस्याः तत् वयः शृंगारस्य निकेतनं समभवत्, यस्मिन् विस्मृतपक्ष्मपालिचलनाः कामालसाः यूनां दृष्टयः पाशे शकुन्ता इव पतिताः पुनः नो उत्पतन्ति ॥३१॥

कल्याणी—तदिति। कमनीयकान्तिविजितत्रैलोक्यनारीवपुः—कमनीया=स्पृहणीया, या कान्तिः=छटा, तया विजितं—परास्तं, त्रैलोक्यस्य=त्रिभुवनस्य,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारीणां=रमणीनां, वपुः=शरीरं येन तत्, संसारसारं=जगत्तत्वभूतं, तस्याः=दमयन्त्याः, तत्=प्रतीतं, वयः=नवयौवनं, शृङ्गारस्य=रतिस्थायिभावात्मकस्य शृङ्गाररसस्य, निकेतनम्=आश्रयः, समभवत्=सञ्जातम्। यस्मिन्=नवयौवने; विस्मृतपक्ष्मपालिचलनाः—विस्मृतं=त्यक्तम्, पक्ष्मपालिचलनं=निमेषः याभिस्ताः, कामालसाः=कामशिथिलाः, यूनां=तरुणानां, दृष्टयः=अवलोकानानि, पाशे=जाले, शकुन्ताः=पक्षिण इव, पतिताः=च्युताः, पुनः=भूयः, नो उत्पतन्ति=नापसरन्ति। उपमाऽलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३१॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात्; कमनीय अर्थात् स्पृहणीय कान्ति से तीनों लोकों की स्त्रियों के शरीर को विजित कर लेने वाली, संसार की तत्त्वभूता अर्थात् सर्वश्रेष्ठा उस दमयन्ती का वह यौवन शृंगार रस का निवास-स्थान बन गया, जिसमें निमेषों का परित्याग की हुई और काम के कारण आलस्ययुक्त युवकों की दृष्टियाँ जाल में (गिरे हुए) पक्षियों के समान गिर कर पुनः हट नहीं पातीं।

आशय यह है कि जिस प्रकार पक्षी एक बार जल में फँस जाने के बाद पुनः उड़ नहीं पाता, उसी प्रकार एक बार जिस युवक की नजरें उस अनुपम सुन्दरी दमयन्ती पर पड़ जाती थी तो वह चाहकर भी फिर अपनी नजरों को उसकी ओर से हटा नहीं पाता था; बल्कि निर्निमेष रूप से उसे देखता ही रहता था ॥३१॥

अपि च—

आबध्नत्परिवेषमण्डलमलं वक्त्रेन्दुबिम्बाद्बहिः
कुर्वंश्चम्पकजृम्भमाणकलिकाकर्णावतंसक्रियाम्।
तन्वङ्ग्याः परिनृत्यतीव हसतीवोत्सर्पतीवोल्बणं
लावण्यं ललतीव काञ्चनशिलाकान्ते कपोलस्थले ॥३२॥

अन्वयः—वक्त्रेन्दुबिम्बाद् बहिः अलं परिवेषमण्डलम् आबध्नत् चम्पकजृम्भमाणकलिकाकर्णावतंसक्रियां कुर्वत् तन्वङ्ग्याः उल्बणं लावण्यं काञ्चनशिलाकान्ते कपोलस्थले परिनृत्यतीव, हसतीव, उत्सर्पतीव, ललतीव ॥३२॥

कल्याणी—आबध्नदिति। वक्त्रेन्दुबिम्बाद् बहिः=मुखचन्द्रमण्डलाद् बहिः, अलम्=अत्यर्थं, परिवेषमण्डलं=वृत्ताकारमण्डलम्, आबध्नत्=विरचयत्, चम्पकजृम्भमाणकलिकाकर्णावतंसक्रियाम्—चम्पकस्य=चम्पकपुष्पस्य, जृम्भमाणा=विकसन्ती, या कलिका तद्वत्, कर्णावतंसस्य=कर्णाभरणस्य, क्रियां=कार्यं, कुर्वत्=विदधत्, तन्वङ्ग्याः=कृशाङ्ग्याः दमयन्त्याः, उल्बणं=समुत्कृष्टं, लावण्यं=सौन्दर्यं, काञ्चनशिलाकान्ते=सुवर्णशिलेव रमणीये अर्थाद् गौरवर्णे कपोलस्थले=गण्डप्रदेशे,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिनृत्यतीव=परितो नृत्यतीव, हसतीव=हासं कुर्वतीव, उत्सर्पतीव=प्रोन्नमतीव, ललतीव=क्रीडतीव। परिनर्तनादीनामनेकक्रियाणां लावण्यरूपैककारकसत्त्वाद् दीपकालङ्कारः, उत्प्रेक्षा च तदङ्गम् ॥३२॥

ज्योत्स्ना—और भी; मुखरूपी चन्द्रमण्डल से बाहर पर्याप्त गोलाकार मण्डल बनाया हुआ, चम्पकपुष्प की विकसित कली के समान कानों के आभूषणरूप कार्य को करता हुआ कृशाङ्गी दमयन्ती का अत्यन्त उत्कृष्ट सौन्दर्य सुवर्णशिला के समान रमणीय अर्थात् गौर वर्ण वाले कपोलस्थल पर चारो ओर नृत्य करते हुए के समान, हँसते हुए के समान, नजदीक आते हुए के समान और खेलते हुए के समान (दिखाई दे रहा है) ॥३२॥

एतदाकर्ण्य राजा रञ्जितस्तत्कथया पुनरुदञ्चदुच्चरोमाञ्चकञ्चुकितकायस्तत्कालमेवान्तःस्फुरन्मन्मथमनोरथभरभज्यमानमानसस्तं हंसमपृच्छत्—

"पक्षिराज राजीववनावतंस हंस ! पुनः कथ्यतां तस्याः संप्रति वयोवृत्तवृत्तान्तव्यतिकरः॥"

कल्याणी—एतदिति। एतत्=इदम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, राजा=नलः, तत्कथया=दमयन्तीतारुण्यकथया, रञ्जितः=मुग्धीकृतः, पुनः=भूयः, उदञ्चदुच्चरोमाञ्चकञ्चुकितकायः—उदञ्चता=उद्गच्छता, उच्चेन=उन्नतेन, रोमाञ्चेन कञ्चुकितः=आच्छादितः, कायः=शरीरं यस्य स तथाविधः, तत्कालमेव=तत्क्षणमेव, अन्तः=हृदये, स्फुरन्मन्मथमनोरथभरभज्यमानमानसः—स्फुरन्=उद्दीप्यमानः, यः मन्मथः=कामदेवः, तस्य मनोरथभरेण=अभिलाषभारेण, भज्यमानं=खण्ड्यमानं, मानसं=चित्तं यस्य स तथाविधः सन्, तं हंसं=मरालम्, अपृच्छत्=अकथयत्, प्रार्थयतेति भावः।

"हे पक्षिराज=पक्षिश्रेष्ठ, राजीववनावतंस=कमलवनभूषण, हंस ! =कलहंस !, पुनः=भूयः, सम्प्रति=इदानीं, तस्याः=दमयन्त्याः, वयोवृत्तवृत्तान्तव्यतिकरः—वयसः=नवयौवनस्य, यद् वृत्तं=प्रवर्तनं, तस्य वृत्तान्तः=अवसरः, तत्र यः व्यतिकरः=घटना, तत् कथ्यतां=विज्ञाप्यताम्। 'पक्षिराज' इति 'राजीववनावतंस' इति च विशेषणद्वयस्य साभिप्रायत्वात्परिकरालङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—यह सुनकर राजा नल उस दमयन्ती-कथा से प्रसन्न होकर निकलते हुए अत्यन्त तीव्र रोमाञ्च से आच्छादित शरीर वाला होकर तत्काल ही हृदय में उमड़ती हुई काम की अभिलाषा के भार से खण्डित अर्थात् व्यथित चित्त वाला होकर उस हंस से पूछा अर्थात् प्रार्थना किया कि हे पक्षियों में श्रेष्ठ (एवं) कमलवन के भूषणस्वरूप हंस ! इस समय फिर से उस दमयन्ती की बढ़ती हुई अवस्था के समय की घटनाओं को (मुझसे) कहो॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्युक्तः पुनरेष तं बभाषे—

"देव ! किमेकोऽस्मद्विधः पक्षी क्षीरतरङ्गधवललोचनां तां वर्णयेत् यस्याः सर्वदेवमय इवाकारो लक्ष्यते ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवम्, उक्तः=प्रार्थितः, एषः=हंसः, पुनः=भूयः, तं=राजानं नलं, बभाषे=उक्तवान्—

देव !=महाराज !, अस्मद्विधः=मल्लक्षणः, एकः=तुच्छ इति भावः । पक्षी=खगः, क्षीरतरङ्गवद्=दुग्धतरङ्गवद्, धवले=शुभ्रे, लोचने=नयने यस्यास्तथाविधां, तां=दमयन्तीं, किं वर्णयेत्=किं कथयेत्, मया तद्वर्णनमशक्यमिति भावः । यस्याः=दमयन्त्याः, आकारः=आकृतिः, सर्वदेवमय इव=सकलदेवयुक्त इव, लक्ष्यते=प्रतीयते [इत्युत्प्रेक्षा] ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहे जाने पर उस हंस ने पुनः उस राजा नल से कहा—हे राजन् ! हमारे समान एक (तुच्छ) पक्षी दुग्ध की तरंगों के समान धवल अर्थात् शुभ्र नयनों वाली उस दमयन्ती का क्या वर्णन कर सकता है, जिसकी आकृति सर्वदेवमयी प्रतीत होती है अर्थात् जो समस्त देवताओं के मिले-जुले प्रतिरूप के समान दिखाई देती है ॥

तथाहि—

सुतारा दृष्टिः, सकामाः कटाक्षाः, सुकुमाराश्चरणपाणिपल्लवाः, सुधाकान्ति स्मितम्, अरुणो दन्तच्छदः, भास्वन्तो दन्ताः, सुकृष्णाः केशाः, प्रबुद्धा वाणी, गौरी कान्तिः, गुरुः स्तनाभोगः, पृथ्वी जघनस्थली, सुरभिर्निःश्वासः, सुगन्धवाहः प्रस्वेदः, सश्रीकः सकलाङ्गभोगः ॥

कल्याणी—तदेव आकारस्य सर्वदेवमयत्वमुपपादयन्नाह—सुतारेति । [तस्याः] दृष्टिः=नयने, सुतारा=शोभनकनीनिकायुक्ता तारादेवीयुक्ता च, कटाक्षाः=नेत्रप्रान्तभागाः, सकामाः=साभिलाषाः कामदेवयुक्ताश्च, चरणपाणिपल्लवाः=पादकरकिसलयाः, सुकुमाराः=मृदुलाः कार्तिकेयाश्च, स्मितम्=ईषद्धास्यं, सुधाकान्ति=सुधायाः कान्तिरिव कान्तिर्यस्य तत्तथोक्तं, पक्षे—सुधाकान्तिः=चन्द्रः । दन्तच्छदः=ओष्ठः, अरुणः=रक्तः, पक्षे—अरुणः=सूर्यसारथिः । दन्ताः=रदाः, भास्वन्तः=प्रभायुक्ताः, पक्षे—भास्वन्तः=सूर्यः । केशाः=कचाः, सुकृष्णाः=सुष्ठु श्यामलाः, पक्षे—सुकृष्णाः=विष्णवः । वाणी=वाक्, प्रबुद्धा=व्युत्पन्ना, पक्षे—प्रबुद्धः=महात्मा बुद्धः । कान्तिः=शोभा, गौरी=गौरवर्णा, गौरी=पार्वती च; स्तनाभोगः=कुचमण्डलं, गुरुः=विशालः बृहस्पतिश्च, जघनस्थली=जघनभागः; पृथ्वी=पृथुला भूश्च, निःश्वासः=श्वसनं, सुरभिः=सुगन्धिर्वसन्तश्च, प्रस्वेदः=स्वेदः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुगन्धे बहतीति सुगन्धवाहः=सुगन्धयुक्तः वायुश्च, सकलाङ्गभोगः=सकलावयवसमष्टिः, सश्रीकः—श्रीः=कान्तिर्लक्ष्मीश्च, तया सह वर्तमानः। तदेवमाकारः सर्वदेवमय इव लक्ष्यते इत्युत्प्रेक्षा श्लेषमूलेति वैचित्र्यविशेषः ॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि (उसकी) दृष्टि सुतारा अर्थात् सुन्दर कनीनिका वाली, कटाक्ष सकाम अर्थात् कामनायुक्त, पैर और हाथ सुकुमार अर्थात् अत्यन्त कोमल, मन्द मुस्कान सुधा-कान्ति अर्थात् अमृत के समान कान्तियुक्त, ओष्ठ अरुण अर्थात् लाल रंग वाले, दाँत अत्यन्त चमकीले, केश पूर्ण रूप से काले, वाणी प्रबुद्ध अर्थात् व्युत्पन्न, कान्ति गौर वर्ण वाली, जघनस्थली पृथ्वी अर्थात् विस्तृत, निःश्वास सुरभि अर्थात् सुगन्धित, पसीना सुगन्ध को धारण करने वाला और समस्त शरीर सश्रीक अर्थात् शोभासम्पन्न है।

विमर्श—यहाँ पर अवयवों के वर्णन के क्रम में उनका वैशिष्ट्य दर्शाने के के लिए प्रयुक्त किये गये समस्त विशेषण विभिन्न देवताओं के भी वाचक हैं; जैसे सुतारा अर्थात् बालिपत्नी, काम अर्थात् कामदेव, सुकुमार अर्थात् कार्तिकेय, सुधाकान्ति अर्थात् चन्द्रकान्ति, अरुण अर्थात् सूर्यसारथि, भास्वान् अर्थात् सूर्य, सुकृष्ण अर्थात् भगवान् कृष्ण, प्रबुद्ध अर्थात् महात्मा बुद्ध, गौरी अर्थात् पार्वती, गुरु अर्थात् बृहस्पति, पृथ्वी, सुरभि अर्थात् वसन्त, सुगन्धवाह अर्थात् वायुदेव और सश्रीक अर्थात् लक्ष्मीयुक्त।

इस प्रकार ये सभी विशेषण विभिन्न देवताओं के भी वाचक हैं, इसीलिए ग्रन्थकार द्वारा यहाँ दमयन्ती को 'सर्वदेवमयी' कहा गया है ॥

किं चान्यत्—

नक्षत्रमयीव निर्मिता विधिना। तथाहि—भद्रपदा ज्येष्ठा सुहस्ता पूर्वोत्तरा सार्द्रहृदया मूलं कन्दर्पस्य ॥

कल्याणी—नक्षत्रेति। विधिना=विधात्रा, सा दमयन्ती—नक्षत्रमयीव निर्मिता=रचिता। तथाहि—भद्रपदा—भद्रं पदं=पादन्यासः यस्यास्तादृशी, पक्षे—भद्रपदानक्षत्रम्। ज्येष्ठा=प्रथमापत्यम्, पक्षे—ज्येष्ठानक्षत्रम्। सुहस्ता—सुष्ठु हस्तौ यस्याः सा, पक्षे—हस्तो नक्षत्रम्। पूर्वोत्तरा—पूर्वम्=उत्कृष्टम्, उत्तरं=वचः यस्या सा, पक्षे—पूर्वा उत्तरा च नक्षत्रे। सार्द्रहृदया—सार्द्रम्=अनिष्ठुरम्, आर्द्रानक्षत्रेण च सहितं हृदयं यस्याः सा, कन्दर्पस्य=कामस्य, मूलं=कारणं, मूलं नक्षत्रं च। श्लेषमूलोत्प्रेक्षा ॥

ज्योत्स्ना—अन्य क्या (कहा जाय); ब्रह्मा के द्वारा उसे नक्षत्रमयी के समान बनाया गया गया है, जैसे कि वह भद्रपदा अर्थात् सुन्दर पदविन्यास वाली, ज्येष्ठा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् प्रथम सन्तति, सुहस्ता अर्थात् सुन्दर हाथों वाली, पूर्वोत्तरा अर्थात् उत्कृष्ट वचनों वाली, सार्द्रहृदया अर्थात् सुकोमल हृदय वाली तथा कन्दर्प अर्थात् कामदेव की मूल अर्थात् जड़ है।

विमर्श—यहाँ प्रयुक्त भद्रपदा, ज्येष्ठा, हस्त, पूर्वा, उत्तरा, आर्द्रा और मूल शब्द नक्षत्रों के भी वाचक है, जिनसे उसकी समानता प्रदर्शित की गई है। इसीलिए दमयन्ती को 'नक्षत्रमयी' कहा गया है॥

किं बहुना--

लावण्यातिशयः स कोऽपि मधुरास्ते केऽपि दृग्विभ्रमाः
सा काचिन्नवकन्दलीमृदुतनोस्तारुण्यलक्ष्मीरपि।
सौभाग्यस्य च विश्वविस्मयकृतः सा कापि संपद्यया
लग्नानङ्गमहाग्रहा इव कृताः सर्वे युवानो जनाः' ॥३३॥

अन्वयः—सः कोऽपि लावण्यातिशयः, ते केऽपि मधुराः दृग्विभ्रमाः, नवकन्दली मृदुतनोः सा काचित् तारुण्यलक्ष्मीः विश्वविस्मयकृतः सौभाग्यस्य च सा सम्पत् कापि, यया सर्वे युवानः जनाः लग्नानङ्गमहाग्रहा इव कृताः ॥३३॥

कल्याणी—लावण्येति। सः=असौ, कोऽपि=अनिर्वचनीयः, लावण्यातिशयः=सौन्दर्यातिरेकः; ते केऽपि=अनिर्वचनीया अर्थादलौकिकाः, मधुराः=आकर्षकाः; दृग्विभ्रमाः=नेत्रविलासाः, नवकन्दली=नूतनाङ्कुर इव, मृदुतनोः—मृद्वी=कोमला; तनुः=शरीरं यस्यास्तस्याः दमयन्त्याः, सा=एषा, काचित्=लोकोत्तरा, तारुण्यलक्ष्मीः=यौवनश्रीरपि, विश्वविस्मयकृतः=जगदाश्चर्यकरस्य, सौभाग्यस्य च=शोभनादृष्टस्य च, सा सम्पत्=सम्पत्तिः, कापि=अनिर्वचनीया, अस्तीति शेषः। यया=यत्सम्पत्त्या, सर्वे=समस्ताः, युवानः=तरुणाः, जनाः=नराः, लग्नानङ्गमहाग्रहा इव—लग्नः=अनिष्टकरणे संसक्तः, अनङ्गः=कामदेव एव महाग्रहो येषां ते तथाभूता इव अर्थात् कामसन्तप्ताः कृताः। आद्ये पादत्रये अभेदे भेदरूपातिशयोक्तिर्यतो वर्ण्यदमयन्त्या लावण्यादीनि वैशिष्ट्यानि नारीसुलभान्येव सन्ति, सत्यप्येवं कविना तेष्वसाधारणतायाः कल्पनयाऽभेदेऽपि भेदाध्यवसानं कृतम्। अन्त्ये पादे यूनां लग्नानङ्गमहाग्रहत्वसंभावनयोत्प्रेक्षालङ्कारः। तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३३॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; वह (दमयन्ती) किसी अलौकिक सौन्दर्यातिरेक की स्वामिनी है। अनिर्वचनीय अलौकिक उसके वे नेत्र-विलास भी मधुर हैं। नवीन अंकुरों के समान शरीर वाली उस (दमयन्ती) की वह यौवनश्री भी लोकोत्तर है और समस्त संसार को आश्चर्यचकित कर देने वाली सौभाग्यरूपी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्पत्ति भी अनिर्वचनीय है। जिस सौभाग्य-सम्पत्ति के कारण समस्त युवक अनङ्ग-रूपी महाग्रह के कारण ग्रस्त से हो जाते हैं अर्थात् काम से संतप्त हो जाते हैं।

विमर्श—ग्रन्थकार का तात्पर्य यह है कि अत्यधिक अनिष्टकारक शनि, राहु आदि महाग्रहों के समान ही काम भी युवकों के लिए महान् अनिष्टकारक होता है ॥३३॥

राजा—'ततस्ततः'।

कल्याणी—राजेति। ततः=तदनन्तरम्, एतदग्रे पुनः किमभूदिति राज्ञा पृष्टमिति भावः। औत्सुक्ये द्विरुक्तिः॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात्? अर्थात् इसके आगे पुनः क्या हुआ—यह अत्यन्त उत्सुकता के साथ राजा ने पूछा॥

हंसः—'ततस्तस्याः पुनरिदानीं—

दूराभोगभरेण भुग्नगतिना श्लिष्टा नितम्बस्थली
धत्ते स्वर्णसरोजकुड्मलकलां मुग्धं स्तनद्वन्द्वकम्।
आलापाः स्मितसुन्दराः परिचितभ्रूविभ्रमा दृष्टय-
स्तस्यास्तर्जितशैशवव्यतिकरं रम्यं वयो वर्तते ॥३४॥

अन्वयः—इदानीं तस्याः नितम्बस्थली भुग्नगतिना दूराभोगभरेण श्लिष्टा, (तस्याः) मुग्धं स्तनद्वन्द्वकं स्वर्णसरोजकुड्मलकलां धत्ते, आलापाः स्मितसुन्दराः दृष्टयः परिचितभ्रूविभ्रमाः (वर्तन्ते), तर्जितशैशवव्यतिकरं रम्यं वयः वर्तते ॥३४॥

कल्याणी—राज्ञा पृष्टो हंसः पुनराह—दूरेति। इदानीं=सम्प्रति, तस्याः=दमयन्त्याः, नितम्बस्थली=नितम्बप्रान्तः, भुग्नगतिना—भुग्ना=भग्नेत्यर्थः, गतिः=गमनं येन तेन, सञ्चरणबाधकेनेति भावः। दूराभोगभरेण=समधिकविस्तारभारेण, श्लिष्टा=आलिङ्गिता, तस्याः नितम्बः समधिकविस्तारं गुरुतां च दधानस्तत्स्वच्छन्द-सञ्चरणमवरुणद्धीति भावः। तस्याः मुग्धं=मनोहरं, स्तनद्वन्द्वकं=कुचयुगलं, स्वर्ण-सरोजकुड्मलकलां=स्वर्णकमलकलिकाशोभां, धत्ते=धारयति। आलापाः=संभाषणानि, स्मितसुन्दराः—स्मितेन=ईषद्धास्येन, सुन्दराः दृष्टयः, परिचितभ्रूविभ्रमाः—परिचितः भ्रूविभ्रमः=भ्रूविलासः यासां तादृश्यः [वर्तन्ते], तर्जितशैशवव्यतिकरं—तर्जितः=भर्त्सितः, शैशवस्य=बाल्यावस्थायाः, व्यतिकरः=सम्पर्कः येन तत्, तर्जनापसारितशैशवमित्यर्थः। रम्यं=रमणीयं, वयः=नवयौवनं, वर्तते=अस्ति। द्वितीयपादे 'कुड्मलकलां धत्ते' इत्यस्य तत्कलासदृशीं कलां धत्ते इति सादृश्यार्थे प्रयवसानादसम्भवद्वस्तुसम्बन्धनिदर्शनाऽलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—फिर उसके बाद इस समय उसके नितम्बभाग अत्यधिक विस्तार के भार के कारण परस्पर एक-दूसरे से जुड़कर उसकी गति में बाधक बन गये हैं, मनोहर स्तनयुगल स्वर्णकमल के कलिका की शोभा को धारण करते हैं। उसके आलाप (बोलना) मन्द हास्य के कारण सुन्दर हैं, उसकी दृष्टियाँ भ्रूविलासों से परिचित हैं। (इस प्रकार) तर्जनापूर्वक अपसारित शैशव से सम्पृक्त उसकी यौवन की अवस्था रमणीय हो गई है ॥३४॥

तदेष तस्याः सकलयुवजनमनोमयूरवासयष्टेः समस्तसंसारसौन्दर्याधिदेवतायाः कथितो वृत्तान्तः ॥

कल्याणी – तदिति। तत्=तस्मात्, समस्तयुवजनमनोमयूरवासयष्टेः—सकलानां=समस्तानां, युवजनानां=तरुणानां, मनांसि=चित्तान्येव मयूराः तेषां वासयष्टिः=अवस्थानदण्डिकारूपा तस्याः, समस्तसंसारसौन्दर्याधिदेवतायाः—समस्तसंसारसौन्दर्यस्य=सम्पूर्णलोकलावण्यस्य, अधिदेवता=अधिष्ठातृदेवता, तस्याः, तस्याः=दमयन्त्याः, एषः=अयं, वृत्तान्तः=उदन्तः, कथितः=वर्णितः ॥ मनोमयूरवासयष्टेरिति परम्परितरूपकम् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार समस्त युवजनों के चित्तरूपी मयूरों के लिए निवासस्थानस्वरूप एवं समस्त संसार के सौन्दर्य की अधिष्ठात्री उस (दमयन्ती) का यह वृत्तान्त (मैंने आपसे) कह सुनाया ॥

किमन्यत्—

हरचरणसरोजाराधनावाप्तपुण्यः
परमसुकृतकन्दो वन्दनीयः स कोऽपि।
अपि जयतु स यस्तां दुर्लभां लप्स्यतेऽस्मि-
न्निति कथितकथः सन्सोऽपि हंसो व्यरंसीत् ॥३५॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टस्य कृतौ दमयन्तीकथायां हरचरणसरोजाङ्कायां तृतीय उच्छ्वासः समाप्तः ॥

अन्वयः—हरचरणसरोजाराधनावाप्तपुण्यः परमसुकृतकन्दः कोऽपि सः वन्दनीयः (अस्ति)। सोऽपि जयतु, यः अस्मिन् दुर्लभां तां लप्स्यते इति कथितकथः सन् सः हंसः अपि व्यरंसीत् ॥३५॥

कल्याणी—हरचरणेति। हरचरणसरोजाराधनावाप्तपुण्यः—हरस्य=भगवतः शंकरस्य, चरणसरोजयोः=पादपद्मयोः, आराधनेन=उपासनया, अवाप्तम्=अधिगतं, पुण्यं येन स तथोक्तः, परमसुकृतकन्दः—परमसुकृतानाम्=उत्कृष्टपुण्यानां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कन्दः=मूलम्, कोऽपि=लोकोत्तरः, सः=नरः, वन्दनीयः=प्रणम्यः अस्ति । सोऽपि=स च, जयतु=सर्वोत्कर्षेण वर्तताम्, योऽस्मिन्=लोके, दुर्लभां=दुष्प्राप्यां, तां=दमयन्तीं, लप्स्यते=अवाप्स्यति, इति=एवं, कथितकथः—कथिता=वर्णिता, कथा=आख्या येन स तथोक्तः सन्, सः हंसोऽपि=असौ कलहंसोऽपि, व्यरंसीत्=विरतोऽभूत्, तूष्णींभावमभजदिति भावः । मालिनी वृत्तम् ॥३५॥

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां
तृतीय उच्छ्वासः समाप्तः ॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या (कहें); भगवान् शंकर के चरणकमलों की उपासना से पुण्य को प्राप्त किया हुआ (एवं) उत्कृष्ट पुण्यों का मूल वह अनुपम पुरुष प्रणम्य है। (साथ ही) उसकी भी जय है, जो इस लोक में दुष्प्राप्य उस (दमयन्ती) को प्राप्त करेगा। इस प्रकार (दमयन्तीसम्बन्धी समस्त) कथा को कहकर वह हंस भी विरत हो गया अर्थात् चुप हो गया ॥३५॥

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टप्रणीत दमयन्तीकथात्मक नलचम्पूनामक चम्पूकाव्य के तृतीय उच्छ्वास की श्रीनिवासशर्माकृत 'ज्योत्स्ना' हिन्दी व्याख्या पूर्णता को प्राप्त हुई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चतुर्थ उच्छ्वासः

एवमेतदाकर्ण्य राजा तत्कालमाघूर्णितमाश्चर्येण, आकुलितमौत्सुक्येन, आमन्त्रितमुत्कण्ठया, कटाक्षितं कन्दर्पेण, अभिवादितं रणरणकेन, ज्योक्कारितमाग्रहग्रहेण, पृष्ठकुशलमकालतरलतया, स्वीकृतमस्वास्थ्येन, अवलोकितं चिन्तया चेतः स्वं स्वयमेव स्वस्थीकृत्य वितर्कितवान् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=ईदृशम्, एतत्=इदम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, तत्कालं=सद्यः, राजा=नलः, आश्चर्येण=विस्मयेन, आघूर्णितं=भ्रामितम्, औत्सुक्येन=उत्सुकतया, आकुलितं=व्याप्तम्, उत्कण्ठया=उत्साहेन, आमन्त्रितम्=आहूतम्, कन्दर्पेण=मन्मथेन, कटाक्षितं=कटाक्षविषयीकृतम्, रणरणकेन=अनिर्वृत्या, अभिवादितं=नमस्कृतम्, आग्रहग्रहेण—आग्रह =दृढसंकल्पः, तस्य ग्रहः=ग्रहणं तेन, ज्योक्कारितम्,—'ज्योक्' इति स्वरादिगणे पठितमव्ययं शीघ्रार्थे; ज्योक् कालभूयस्त्वे, प्रश्ने, शीघ्रार्थे, सम्प्रति, इत्यर्थे चेति सिद्धान्तकौमुदीबालमनोरमाटीकायाम्। ज्योक्कारितं=त्वरां कर्तुं प्रेरितमित्यर्थः। ज्योत्कारितमिति पाठस्तु न समीचीनः प्रतीयते। अकालतरलतया—अकाले=असमये, तरलता=चाञ्चल्यं, तेन हेतुना, पृष्ठकुशलम्—पृष्ठे=पश्चात्। कुशलं=कल्याणं यस्य तत्, उपेक्षितकुशलमित्यर्थः। अस्वास्थ्येन=अस्वस्थतया, स्वीकृतम्=आत्मीकृतम्, चिन्तया=चिन्तनेन, अवलोकितं=दृष्टिपथमानीतं, स्वं=स्वकीयं, चेतः=मनः, स्वयमेव=आत्मनैव, स्वस्थीकृत्य=स्थिरीकृत्य, वितर्कितवान्=विचारमकरोत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार यह सुनकर तत्काल ही राजा नल आश्चर्य से भ्रमित होने के कारण उत्सुकता से व्याप्त होकर उत्कण्ठा से सराबोर हो गया, कामदेव के कटाक्षों से युक्त हो गया, चिन्ता के द्वारा नमस्कार किया गया, आग्रह अर्थात् दृढ़ संकल्परूपी ग्रह—ग्रहण के कारण शीघ्रता करने को प्रेरित हो गया अर्थात् उसकी चित्तवृत्ति अति चलायमान हो उठी, असामयिक चञ्चलता के कारण कुशलता उपेक्षित हो गई, अस्वस्थता के द्वारा स्वीकृत कर लिया गया अर्थात् अस्वस्थ हो गया, चिन्ता के द्वारा देखा गया अर्थात् चिन्तित हो गया। (फिर) अपने मन को स्वयं ही स्वस्थ करके अर्थात् स्थिर करके (उसने) विचार किया ॥

प्रायः सैव भवेदेषा पान्थादश्रावि या मया।
युगायितं विनिद्रस्य यत्कृते मे त्रियामया ॥१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—प्रायः यत्कृते मे विनिद्रस्य त्रियामया युगायितं, या (च) पान्थात् मया अश्रावि, सा एव एषा भवेत् ॥१॥

कल्याणी—प्राय इति। प्रायः इति वितर्के, बहुधा इति भावः। यत्कृते=यदर्थं, मे=मम, विनिद्रस्य=विगतनिद्रस्य, त्रियामया=रात्र्या, युगायितं—युगं=कृतयुगादि तेनेवाचरितम्, या च पान्थात्=पथिकात्, मया=नलेन, अश्रावि=श्रुतं, सा एव एषा=इयं हंसेनापि वर्णिता, प्रायो भवेत्=स्यात्। त्रियामयेति पदस्य त्रिसंख्यामितप्रहररात्रिवाचकत्वेन साभिप्रायत्वात् परिकरालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१॥

ज्योत्स्ना—प्रायः जिसके कारण निद्रारहित मेरे लिए तीन प्रहरों वाली रात्रि (सतयुग-त्रेता-द्वापरनामक) तीन युगों के समान हो गई और जिसको मैंने पथिक के द्वारा सुना था, वह सुन्दरी यही हो सकती है ॥१॥

तदेतन्मे—

तद्वार्तामृतपानार्थि भूयोऽपि श्रवणेन्द्रियम्।
तृप्यते केन वानन्दकन्दे कान्ताकथानके ॥२॥

अन्वयः—तत् एतत् मे श्रवणेन्द्रियं भूयः अपि तद्वार्तामृतपानार्थि, वा आनन्दकन्दे कान्ताकथानके केन तृप्यते ॥२॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्; एतत् मे=मम, श्रवणेन्द्रियं=कर्णेन्द्रियं, भूयोऽपि=पुनरपि, तद्वार्तामृतपानार्थि—तस्याः=प्रियायाः, वार्ता=वृत्तान्तः; स एव अमृतं=सुधाः तत्पानम् अर्थयते=कामयते इति तथोक्तम्, प्रियाया अमृतोपमं वृत्तान्तं श्रोतुमभिलाषुकमित्यर्थः। वा=अथवा, आनन्दकन्दे=सुखमूले, कान्ताकथानके—कान्तायाः=प्रियायाः, कथानके=कथायां, केन=केन पुरुषेण, तृप्यते=तृप्तिं प्राप्यते, न केनापि तृप्यत इति भावः। विशेषस्य सामान्येन समर्थनादर्थान्तरन्यासः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—अतः मेरे ये कान फिर से उस (दमयन्ती) की कथारूपी अमृत का पान करने के लिए लालायित हो रहे हैं अथवा आनन्द के स्रोत (अपनी) प्रियतमा की कथा से (भला) कौन तृप्त हो सकता है? अर्थात् अपनी प्रियाविषयक कथा को बार-बार सुनकर भी कोई तृप्त नहीं होता ॥२॥

तत्किमेनं पुनः पृच्छामि? नेदं नायकस्थानम् ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, किम् एनं=हंसं, पुनः=भूयः; पृच्छामि। इदम्=ईदृशं, नायकस्थानं—नायकस्य=धैर्यप्रधानस्य जनश्रेष्ठस्य, स्थानं=स्थितिः, न=न प्रशस्यते, तस्मात् पुनः प्रष्टुं नोत्सह इति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इसलिए क्या इस राजहंस से पुनः (प्रियतमा दमयन्ती के विषय में) पूछूं ? (लेकिन) नायक का यह स्थान नहीं है अर्थात् इस प्रकार उत्सुकता को प्रदर्शित करना नायक के लिए उपयुक्त नहीं है; (क्योंकि धैर्यशाली होना नायक का प्रथम गुण होता है) ॥

अतः संप्रति

मण्डलकीकृतकोदण्डः कामः कामं विचेष्टताम् ।
न व्यथिष्ये स्थितः स्थैर्ये धैर्यं धामवतां धनम्' ॥३॥

अन्वयः—(अतः सम्प्रति) मण्डलकीकृतकोदण्डः कामः कामं विचेष्टताम् । स्थैर्ये स्थितः (अहं) न व्यथिष्ये, (यतः) धैर्यं धामवतां धनं (भवति) ॥३॥

कल्याणी मण्डलेति । अतः=अस्मात्कारणात्, सम्प्रति=इदानीं, मौर्व्या श्रवणपर्यन्ताकर्षणेनेति भावः । मण्डलकीकृतकोदण्डः—मण्डलकीकृतं=वर्तुलीकृतं, कोदण्डं=धनुः येन सः, कामः=मदनः, कामं=यथेच्छं, विचेष्टताम्=प्रयतताम् । स्थैर्ये=सहनशीलतायां, स्थितः=अवस्थितः, अहं न व्यथिष्ये=न काञ्चित्पीडामनुभविष्यामि, [यतः] धैर्यं=धीरता, धामवतां=तेजस्विनां, धनं=वैभवं, भवतीति शेषः । विशेषस्य सामान्येन समर्थनादर्थान्तरन्यासः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३॥

ज्योत्स्ना—इस कारण इस समय (प्रत्यञ्चा को कर्णपर्यन्त आकर्षित कर) मण्डलाकार धनुष (को धारण करने) वाला कामदेव इच्छानुसार प्रयत्नशील हो ले, स्थिरता में स्थित मैं व्यथित नहीं होऊँगा अर्थात् काम के यथेच्छ आक्रमण से भी मैं विचलित नहीं होऊँगा; क्योंकि धैर्य ही तेजस्वियों का धन होता है ॥३॥

इति वितर्क्य विहसन्हंसमाबभाषे—'साधु भोः सुभाषितामृतमहोदधे ! साधु । श्रुतं श्रोतव्यम् । इदानीं भद्रभूयिष्ठो दिवसः । तद्वयं वयस्य, समासन्नाह्निकसमयाः समुचितव्यापारं साधयामः ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवं, वितर्क्य=विचार्य, विहसन्=प्रहसन्, हंसं=कलहंसम्, आबभाषे=उक्तवान्, साधु=अतिप्रशस्तम्, भोः सुभाषितामृतमहोदधे—सुभाषितं=सूक्तिः, तदेव अमृतं=सुधा, महोदधे=महासिन्धो ! साधु=अतिप्रशस्तम् । श्रोतव्यं=श्रोतुं योग्यं, श्रुतम्=आकर्णितम् । इदानीं=सम्प्रति, भद्रभूयिष्ठः=समधिकमङ्गलमयः, दिवसः=दिनम्, अयं दिवसोऽतिशुभावह आसीदिति भावः । तत्=तस्मात्, वयस्य=सखे ! समासन्नाह्निकसमयाः—समासन्नः=समीपस्थः, आह्निकस्य=दैनिककृत्यस्य, समयः=कालः येषां ते, वयं समुचितव्यापारं=समयोचितकार्यं, साधयामः=निर्वर्तयामः । 'सुभाषितामृतमहोदधे' इति विशेषणस्य साभिप्रायत्वादत्र परिकरालङ्कारः । सुभाषितमेवामृतमित्यारोपो हंसे महोदधित्वारोपे निमित्तमिति परम्परितरूपकम् । तयोरेकाश्रयत्वात्सङ्करः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार विचार कर हँसते हुए (राजा उस) हंस से बोले—बस करो, सूक्तिरूपी सुधा के सागर ! बस करो । (मैंने) सुनने योग्य (बातों) को सुन लिया । आज का यह दिन अत्यन्त मंगलमय है । इसलिए हे मित्र ! दैनिक कृत्य का समय समीप होने वाले हमलोग (इस समय) समयोचित कार्य को सम्पादित करें ॥

भवतापि—

एताः सान्द्रद्रुमतलचलच्चक्रवाकीचकोराः
क्रीडावापीपरिसरभुवः स्थीयतां स्वेच्छयेति ।
यत्रोन्मीलत्कमलमुकुलान्याश्रयन्त्याः कुरङ्ग्यो
भृङ्गश्रेण्याः श्रवणसुभगं गीतमाकर्णयन्ति ॥४॥

अन्वयः—सान्द्रद्रुमतलचलच्चक्रवाकीचकोराः एताः क्रीडावापीपरिसरभुवः इति (भवता) स्वेच्छया स्थीयताम् । यत्र कुरङ्ग्यः उन्मीलत्कमलमुकुलान्याश्रयन्त्याः भृङ्गश्रेण्याः श्रवणसुभगं गीतम् आकर्णयन्ति ॥४॥

कल्याणी—एता इति । सान्द्रद्रुमतलचलच्चक्रवाकीचकोराः—सान्द्रद्रुमाणां=घनतरूणां, तले=तलप्रदेशे, चलन्तः=भ्रमन्तः, चक्रवाकीचकोराः=चक्रवाक्याश्चकोराश्च यत्र ताः, एताः=इमाः, क्रीडावापीपरिसरभुवः—क्रीडावाप्याः=क्रीडादीर्घिकायाः, परिसरभुवः=पर्यन्तभूमयः, सन्तीति शेषः । इति=तस्मादत्र, भवता स्वेच्छया=यथेच्छं, स्थीयतां=विहारः क्रियताम्, यत्र कुरङ्ग्यः=मृग्यः, उन्मीलत्कमलमुकुलान्याश्रयन्त्याः—उन्मीलन्ति=विकसन्ति, कमलमुकुलानि=पङ्कजकलिका, आश्रयन्त्याः=अधितिष्ठन्त्याः; भृंगश्रेण्याः=मधुपावल्याः, श्रवणसुभगं=कर्णप्रियं, गीतं=मधुरगानम्, आकर्णयन्ति=शृण्वन्ति । मन्दाक्रान्ता वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम् ॥' इति ॥४॥

ज्योत्स्ना—आप भी; घने वृक्षों के नीचे सञ्चरण करते हुए चक्रवाकयुगल वाले इस क्रीडासरोवर की तटीय भूमि में स्वेच्छया विहार करें; जहाँ पर हरिणियाँ विकसित कमल-कलिकाओं के समीप बैठ कर भ्रमरों के कर्णसुखद अर्थात् कानों को सुख देने वाले मधुर गीतों का श्रवण कर रही हैं ॥४॥

अपि च—

अतिललिततरं तरङ्गभङ्गैरिदमपि तृड्भरवारि वारि वाप्याः ।
भ्रमदलिनिवहं वहन्ति यस्मिन्महिमकरं मकरन्दमम्बुजानि ॥५॥

अन्वयः—इदं तृड्भरवारि वाप्याः वारि अपि तरङ्गभङ्गैः अतिललिततरं (वर्तते), यस्मिन् अम्बुजानि भ्रमत् अलिनिवहं महिमकरं मकरन्दं वहन्ति ॥५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अतिललितेति। इदम्=एतत्, तृड्भरवारि—तृषां=तृष्णानां, भरम्=अतिशयं, वारयति=छिनत्तीति तादृशम्, वाप्याः=दीर्घिकायाः, वारि=जलम्, अपीति समुच्चये। तरङ्गभङ्गैः=ऊर्म्मिवक्रिमभिः, अतिललिततरम्=अतिचारुतरं [वर्तते], यस्मिन्=वारिणि, अम्बुजानि=कमलानि, भ्रमन्=सञ्चरन्, अलिनिवहम्—अलीनां=मधुपानां, निवहः=समूहः यत्र तम्, महिमकरं=गौरवप्रदं, मकरन्दं=पुष्परसं, वहन्ति=धारयन्ति। पुष्पिताग्रावृत्तम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—प्यास के भार अर्थात् कष्ट को दूर करनेवाला सरोवर का यह जल तरंगों की वक्रता के कारण अत्यन्त सुन्दर लग रहा है; जिस (जल) में घूमते हुए कमल भ्रमरों को गौरवान्वित करने वाले मकरन्द को धारण कर रहे हैं ॥५॥

'त्वमपि भद्रे वनपालिके! कृतकमलमालानितम्बकक्रीडमिममादाय भुक्तावसानास्थानगोष्ठीस्थितस्य मम समीपमेष्यसि' इत्यभिधाय राजा राजभवनमयासीत् ॥

कल्याणी—त्वमिति। भद्रे वनपालिके!=कल्याणि वनरक्षिके!, त्वमपि=भवत्यपि, कृतकमलमालानितम्बकक्रीडं—कृता=विहिता, कमलमालायाः=कमलश्रेण्याः, नितम्बके=पार्श्वभागे क्रीडा=विलासः येन तम्, इमं=हंसम्, आदाय=गृहीत्वा, भुक्तावसानास्थानगोष्ठीस्थितस्य—भुक्तावसाने=भोजनान्ते, आस्थानगोष्ठ्यां=विश्रामगोष्ठ्यां, स्थितस्य=अवस्थितस्य, मम=मे, समीपं=पार्श्वम्, एष्यसि=आगमिष्यसि, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, राजा=नलः, राजभवनं=प्रासादम्, अयासीत्=अगमत् ॥

ज्योत्स्ना—"हे कल्याणी वनरक्षिके! तुम भी कमलों के नीचे क्रीड़ा कर लेने वाले इस हंस को लेकर भोजन के पश्चात् विश्राम गोष्ठी में बैठे हुए मेरे समीप आओगी।" इस प्रकार कहकर राजा नल राजभवन को चले गये ॥

गते च राजनि राजीविनीनां जीवितसमाः समास्वादयन्स्वादुकोमलमृणालकन्दलीः, दलयन्दलानि, कवलयन्बहलमधुरस्निग्धमुकुलानि, अनुशीलयञ्शीतलशैवलावलीः, विलासेन स हंसस्तरंस्तरङ्गान्तरेषु चिरं चिक्रीड ॥

कल्याणी—गते चेति। गते च=प्रयाते च, राजनि=नले, सः=पूर्वोक्तः; हंसः=मरालः, राजीविनीनां=कमलिनीनां, जीवितसमाः=प्राणसदृशीः, स्वादुकोमलमृणालकन्दलीः=रुचिकरकोमलमृणालमूलानि, समास्वादयन्=कवलयन्, दलानि=पुष्पपत्राणि, दलयन्=छिन्दन्, बहलमधुरस्निग्धमुकुलानि=समधिकमधुरस्निग्धकुड्मलान्, कवलयन्=भक्षयन्, शीतलशैवलावलीः=शिशिरशैवालपंक्तीः, अनुशीलयन्=अनुसेवमानः, विलासेन=लीलया, तरङ्गान्तरेषु=विभिन्नतरङ्गेषु, चिरं=बहुकालपर्यन्तं; चिक्रीड=क्रीडां कृतवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और राजा नल के चले जाने पर वह हंस भी कमलों के प्राण के समान स्वादिष्ट एवं सुकोमल कमलनालों का आस्वाद लेता हुआ, पुष्पों एवं पत्रों को छिन्न-भिन्न करता हुआ, अत्यन्त मधुर एवं स्निग्ध (चिकनी) कलियों का भक्षण करता हुआ, शीतल शैवाल (सेवार)-पंक्तियों का सेवन (स्पर्श) करता हुआ विलासपूर्वक तरंगों के मध्य बहुत देर तक क्रीड़ा करता रहा अर्थात् तैरता रहा ॥

चिन्तितवांश्च तेन राज्ञा 'कृतकमलमालानितम्बकक्रीडमिममादाय मत्समीपमेष्यसि' इति श्लिष्टार्थमिवादिष्टा वनपालिका। 'तन्न युक्तमिह चिरं स्थातुमिति' ॥

कल्याणी—चिन्तितवानिति। तेन=पूर्वोक्तेन, राज्ञा=नलेन, (कृतकमलेत्यादिवाक्यं) श्लिष्टार्थमिव=श्लेषगर्भमिव, आदिष्टा=आज्ञप्ता, वनपालिका=वनरक्षिका, तथाहि—कृतकमलमालानितम्बकक्रीडं—कृता=विहिता, कमलमालाया=पद्मपंक्त्या, नितम्बके=घनप्राये मध्यप्रदेशे, क्रीडा=लीला येनेति राजाभिप्रायः। मालाशब्दगतस्त्रीत्वेन कमलमालायाः साक्षात्स्त्रीत्वाध्यवसायान्नितम्बशब्दः स्त्र्यवयवोऽपि तदर्थमात्रे प्रयुक्तः। हंसेन त्वेवं प्रतीतम्। यथा कृतकं कापटिकं वा, तथा अलम्=अत्यर्थम्, आलानितं=बद्धं, तथा वकवत् क्रीडा यस्य तादृशमिमं हंसम् आदाय=गृहीत्वा, मत्समीपं=मत्सकाशम्, एष्यसि=आयास्यसीति। तन्न युक्तम्=तन्नोचितम्, इह=अत्र, चिरं=बहुकालं, स्थातुम्=अवस्थितुम्, इति=एवं, स हंसः चिन्तितवान्=विचारितवान् ॥

ज्योत्स्ना—और उसने विचार किया कि इस राजा ने 'कृतकमल०' इत्यादि श्लेषबहुल वाक्य के द्वारा वनरक्षिका को आदिष्ट किया है अर्थात् कृतक (छद्म वेषधारी) को अलम् (पूर्णरूप) से आलानित (आबद्ध) कर वकक्रीड (बगुले के समान क्रीड़ा करने वाले अर्थात् छटपटाते हुए) इस हंस को मेरे पास ले आओगे—इस प्रकार कहा है। इसलिए यहाँ पर बहुत देर तक ठहरना उचित नहीं है ॥

इत्यस्थान एवाशङ्कमानः सह तेन राजहंसकदम्बकेनाम्बरतलमुदपतत्।

तत्र च व्यतिकरे दिवापि स्फारस्फुरत्तारामण्डलमिव, विकचनवकुवलयवनगहनमिव, अन्तरान्तरोन्निद्रकुमुदखण्डमुड्डीनास्ते क्षणमशोभयन्त नभस्तलम् ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्, अस्थाने=अनुचितप्रकारेणैव, आशङ्कमानः=सन्देहं कुर्वाणः, स हंसः तेन=पूर्वोक्तेन, राजहंसकदम्बकेन=राजहंससमूहेन, सह=साकं, गगनतलम्=आकाशम्, उदपतत्=उड्डीयामास।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्र च व्यतिकरे=तथा घटिते च, उड्डीनाः=उत्पतिताः, ते=राजहंसाः, क्षणं=कियन्तं कालं यावत्, नभस्तलं=गगनतलं, दिवापि=दिवसकालेऽपि, स्फारस्फुरत्तारामण्डलमिव—स्फारं=समधिकं, स्फुरन्ति=दृश्यमानानि, तारामण्डलानि=नक्षत्रचक्रवालानि यत्र तादृशमिव, विकचनवकुवलयवनगहनमिव—विकचानि=विकसितानि, नवानि=नूतनानि, कुवलयानि=नीलोत्पलानि, तेषां वनेन=समूहेन, गहनं=सान्द्रमिव, [तथापि] अन्तरान्तरा=मध्ये-मध्ये, उन्निद्रकुमुदखण्डम्—उन्निद्राः=विकसिताः, कुमुदखण्डाः=कुमुदसमूहाः यत्र तादृशं कुर्वाणा, अशोभयन्त=अलमकुर्वन्। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार से अनुचित रूप से ही शंका करता हुआ वह हंस उन राजहंसों के साथ आकाश में उड़ गया।

और उस समय उड़ते हुए वे राजहंस क्षणमात्र में ही आकाश को दिन में भी भी स्पष्टतः दृश्यमान नक्षत्रों के समान, विकसित नूतन कमलों के कारण अत्यन्त गहन के समान होते हुए भी बीच-बीच में विकसित कुमुदखण्ड की भाँति शोभायमान किये।

आशय यह है कि उड़ती हुई वह हंसपक्ति आकाश में जहाँ घनी हो जाती थी वहाँ कमलवन का दृश्य उपस्थित हो जाता था और उड़ते हुए जब वे एक-दूसरे से थोडे अलग हो जाते थे उस समय वे बीच-बीच में खिले हुए कुमुदों का दृश्य उपस्थित कर देते थे। साथ ही नीले आकाश में उड़ते हुए वे सफेद हंस ऐसे प्रतीत होते थे, मानों आकाश में स्फुरित नक्षत्र हों॥

अविलम्बिताश्च न चिरादवापुर्वैदर्भमण्डलमण्डनं कुण्डिनपुरम्॥

कल्याणी—अविलम्बिता इति। अविलम्बिताश्च=न कुत्राप्यवस्थिताश्च, ते राजहंसाः, न चिरात्=अचिरादेव, कियता कालेनैवेत्यर्थः। वैदर्भमण्डलमण्डनं—विदर्भस्येदं वैदर्भं=वैदर्भराज्यं, तस्य मण्डलं=समूहं, तस्य मण्डनम्=अलङ्कारभूतं, कुण्डिनपुरं=कुण्डिनपुरनामकं नगरम्, अवापुः=आसेदुः॥

ज्योत्स्ना—कहीं भी न ठहरते हुए वे हंस शीघ्र ही अर्थात् कुछ ही समय में विदर्भस्थित राज्यों के लिए अलंकारस्वरूप कुण्डिनपुर को पहुँच गये॥

अवतेरुश्च चकितचलच्चक्रवाकालोक्यमानकृतान्धकारविभ्रमभ्रमद्भ्रमरभरभज्यमानाम्भोजभाजि राजभवनासन्नकन्यान्तःपुरोद्यानक्रीडासरसि॥

कल्याणी—अवतेरुश्चेति। चलद्भिः=सञ्चरणं कुर्वद्भिः, चक्रवाकैः चकितं=सविस्मयम्, आलोक्यमानाः=दृश्यमानाः; तथा कृतः=समुत्पादितः, अन्धकारस्य=तिमिरस्य, विभ्रमः=संशयः यैस्तादृशाः, भ्रमन्तः=चंक्रमन्तः, ये भ्रमराः=मधुपाः;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेषां भरेण=अतिशयेन, भज्यमानानि=खण्ड्यमानानि, यानि अम्भोजानि=कमलानि, तानि भजते=स्वीकरोतीति तादृशे, राजभवनासन्नकन्यान्तःपुरोद्यानक्रीडासरसि—राजभवनस्य=नृपसदनस्य, आसन्नं=निकटवर्ति, यत् कन्यान्तःपुरं=कन्यावासगृहं, तस्य उद्याने=वाटिकायां, यत्क्रीडासरस्तस्मिन्, अवतेरुः=अवतरणं कृतवन्तः। भ्रमरकालिम्नि रात्रिबुद्ध्या भ्रान्तिमानलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और भ्रमण करते हुए चक्रवाकों के द्वारा आश्चर्य के साथ देखे जाते हुए एवं अन्धकार का भ्रम उत्पन्न करने वाले सञ्चरण करते भ्रमरों के भार से टूटते हुए कमलों को धारण करने वाले राजभवन के निकटवर्ती कन्याओं के अन्तःपुर के उपवन-स्थित क्रीड़ा सरोवर में उतर गये ॥

सरसभसप्रधावितेन सरस्तीरविहारव्यसनिना कन्यकाजनेन निवेदितांस्तानवलोकयितुमतिकौतुकेन दमयन्ती कन्यान्तःपुरात्पुराणमदिरारुणायताक्षी क्षिप्रमाजगाम ॥

कल्याणी—सरभसेति। सरभसं=सवेगं सहर्षं वा, रभसो वेगहर्षयोरिति कोशः। प्रधावितेन=प्रधाव्य गतेन, सरस्तीरविहारव्यसनिना—सरसः=सरोवरस्य, तीरे=तटे, यः विहारः=विचरणं, तस्य व्यसनमस्त्यस्येति तेन, कन्यकाजनेन=कन्यकावृन्देन, निवेदितान्=विज्ञापितान्, तान्=हंसान्, अवलोकयितुं=द्रष्टुम्, अतिकौतुकेन=अत्यौत्सुक्येन, दमयन्ती=भीमनृपस्य कन्या, पुराणमदिरारुणायताक्षी—पुराणमदिरेव=पुरातनमद्यमिव, अरुणे=रक्ते, आयते=विशाले च, अक्षिणी=नेत्रे यस्याः सा तादृशी, कन्यान्तःपुरात्=कन्यावासगृहात्, क्षिप्रं=झटिति, आजगाम=आगता ॥

ज्योत्स्ना—अत्यन्त तेजी के साथ दौड़कर गई हुई सरोवर के तट पर विहार करने की व्यसनी कन्याओं के द्वारा निवेदित किये जाने पर अर्थात् बतलाये जाने पर उन हंसों को देखने हेतु अत्यन्त उत्सुक होने के कारण पुरानी मदिरा के समान लाल एवं बड़ी-बड़ी आँखों वाली दमयन्ती शीघ्र ही कन्याओं के अन्तःपुर से (निकलकर वहाँ) आ गई ॥

आगत्य च चटुलतरचरणचञ्चुप्रहारविदलितारविन्दकन्दलानुत्तालबालनलिनीवनविहारिणस्तान्ग्रहीतुमेकैकशः सखीजनमादिदेश ॥

कल्याणी—आगत्येति। आगत्य च चटुलतराणाम्=अतिचञ्चलानां, चरणानां, चञ्चूनां च प्रहारैः, विदलितानि=खण्डितानि, कमलकन्दलानि=कमलनवाङ्कुराः, यैस्तान्, उत्तालाः=दुर्धर्षाः, तथा बालनलिनीवने=बालकमलिनीनां वने, विहारिणः=विहारपरायणाः, तान्=हंसान्, ग्रहीतुमेकैकशः सखीजनम् आदिदेश=आदिष्टवती ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और आकर अत्यन्त चञ्चल चरणों तथा चञ्चुओं के प्रहार से कमलकन्दलों को खण्डित कर देने वाले, दुर्धर्ष एवं छोटी-छोटी कमलिनियों के वन में विहार करने वाले उन हंसों को पकड़ने के लिए एक-एक अर्थात् सभी सखियों को आदेश दिया ॥

स्वयं च चलवलयचारुरववाचालितप्रकोष्ठेन सविलासं विस्मयकरं करपल्लवेन तं राजपुत्री राजहंसमुच्चिक्षेप ॥

कल्याणी—स्वयमिति । स्वयं च राजपुत्री=दमयन्ती, चलवलयचारुरववाचालितप्रकोष्ठेन—चलस्य=चञ्चलस्य, वलयस्य=कङ्कणस्य, चारुणा=मधुरेण, रवेण=ध्वनिना, वाचालितः=शब्दायमानः, प्रकोष्ठः=मणिबन्धभाग यस्य तेन, करपल्लवेन=पाणिकिसलयेन, विस्मयकरम्=आश्चर्यजनकं, तं=पूर्वोक्तं राजहंसं, सविलासं=सलीलम्, उच्चिक्षेप=जग्राह ।

ज्योत्स्ना—और स्वयं दमयन्ती ने चञ्चल कङ्कण की मधुर ध्वनि से शब्दायमान मणिबन्ध वाले करपल्लव से उस आश्चर्यजनक राजहंस को लीलापूर्वक उठा लिया अर्थात् पकड़ लिया ॥

पाणिपङ्कजस्थित एव सोऽप्यभिमुखीभूय विभाव्य च चेतश्चमत्कारकारिणमस्याः कान्तिविशेषमाशिषमदात् ॥

कल्याणी—पाणीति । पाणिपङ्कजे=दमयन्त्याः करकमले, स्थित एव=अवस्थित एव, सः=हंसोऽपि, अभिमुखीभूय=दमयन्तीमभि मुखं कृत्वा, अस्याः=दमयन्त्याः, चेतश्चमत्कारकारिणं=मनोविमुग्धकारिणं, कान्तिविशेषं=विशिष्टकान्ति च, विभाव्य=परिज्ञाय, आशिषमदात्=आशीर्वचनमवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—दमयन्ती के हाथों में स्थित होकर वह हंस भी उसकी ओर मुख कर और उसकी (दमयन्ती के) चित्त को चमत्कृत करने वाली विशिष्ट प्रकार की कान्ति को पहचान कर (उसे इस प्रकार) आशीर्वाद प्रदान किया ॥

'कन्दर्पस्य जगज्जैत्रशस्त्रेणाश्चर्यकारिणा ।
रूपेणानेन रम्भोरु दीर्घायुः सुखिनी भव ॥६॥

अन्वयः—रम्भोरु ! आश्चर्यकारिणा कन्दर्पस्य जगज्जैत्रशस्त्रेण अनेन रूपेण दीर्घायुः सुखिनी भव ॥६॥

कल्याणी—कन्दर्पेति । रम्भोरु—रम्भावदूरू यस्यास्तत्सम्बुद्धौ हे रम्भोरू !, 'ऊरूत्तरपदादौपम्ये' इत्यूङ्, सम्बुद्धौ 'अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' इति ह्रस्वत्वम् । आश्चर्यकारिणा=विस्मयजनकेन, कन्दर्पस्य=कामदेवस्य, जगज्जैत्रशस्त्रेण—जगज्जैत्रेण=जगद्विजयिना, शस्त्रेण=आयुधेन, तद्रूपेणेत्यर्थः । अनेन=एतेन, रूपेण=सौन्दर्येण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[उपलक्षणे तृतीया], उपलक्षिता त्वं दीर्घायुः=चिरञ्जीविनी, सुखिनी=सुखोपेता च; भव=स्याः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥६॥

ज्योत्स्ना—हे रम्भोरु ! अर्थात् कदली के समान जाँघों वाली ! आश्चर्य के समुत्पादक कामदेव के विश्वविजयी शस्त्रस्वरूप इस सौन्दर्य से (समन्वित तुम) चिरकाल तक सुखपूर्वक जीने वाली होओ ॥६॥

अपि च —

निर्माय स्वयमेव विस्मितमनाः सौन्दर्यसारेण यं
स्वव्यापारपरिश्रमस्य कलशं वेधाः समारोपयत् ।
कन्दर्पं पुरुषाः स्त्रियोऽपि दधते दृष्टे च यस्मिन्सति
द्रष्टव्यावधिरूपमाप्नुहि पतिं तं दीर्घनेत्रं नलम् ॥७॥

अन्वयः—यं निर्माय वेधा स्वयमेव सौन्दर्यसारेण विस्मितमनाः (यं) स्वव्यापारपरिश्रमस्य कलशं समारोपयत्, यस्मिन् दृष्टे सति पुरुषाः कं दर्पं दधते; स्त्रियोऽपि कन्दर्पं दधते, द्रष्टव्यावधिरूपं तं दीर्घनेत्रं नलं (त्वं) पतिम् आप्नुहि ॥७॥

कल्याणी—निर्मायेति । यं=यं पुरुषं, निर्माय=विरचय्य, वेधा=विधाता, स्वयमेव=आत्मनैव, सौन्दर्यसारेण=सौन्दर्योत्कर्षेण, विस्मितमनाः—विस्मितं=आश्चर्यचकितं, मनः=चित्तं यस्य स तथा भूत्वा यं नलं, स्वव्यापारपरिश्रमस्य—स्वव्यापारे=स्वकीये सृष्टिनिर्माणक्रियायां, यः परिश्रमः=आयासः, तस्य कलशं=घटं, समारोपयत्=अधिष्ठापितवान् । जगति नलनिर्माणानन्तरं तस्मादुत्कृष्टतरं कमपि जनं निर्मातुमशक्तो विधाता तमेव कलशत्वेन संस्थाप्य जगन्मन्दिरनिर्माणेऽन्यत्किमपि कार्यं नावशिष्टमिति व्यजिज्ञपत्, नल एव विधातुः सकलकौशलप्रयोगेण तत्कलायाः सर्वोत्कृष्टनिदर्शनमिति भावः । यस्मिन्=नले, दृष्टे सति, पुरुषाः=नराः, कं=किंलक्षणं, दर्पम्=अहङ्कारं, दधते=धारयन्ति, न कमपीत्यर्थः । ते दर्पहीनाः जायन्त इति भावः । स्त्रियोऽपि=नार्यश्च, अपीति समुच्चये । नले दृष्टे कन्दर्पं=कामं, दधते, कामविह्वला भवन्तीति भावः । द्रष्टव्यावधिरूपं—द्रष्टव्यानां=दर्शनीयानाम्, अवधिः=सीमा, रूपं=सौन्दर्यं, यस्य तं=पूर्वोक्तं, दीर्घनेत्रं=विशालाक्षं नलं त्वं पतिं=भर्तारम्, आप्नुहि=लभस्व । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७॥

ज्योत्स्ना—जिसकी रचना कर ब्रह्मा ने स्वयं ही सौन्दर्य के चरमोत्कर्ष से विस्मित मन वाले होकर (जिस नल के ऊपर) सृष्टिनिर्माणरूप व्यापार (में किये गये) परिश्रम के कलश को समारोपित किया, जिस नल को देखते ही पुरुषवर्ग गर्वहीन एवं स्त्रियाँ काम से युक्त हो जाती हैं, दर्शनीय सौन्दर्य के सीमास्वरूप उस विशाल आँखों वाले नल को तुम पति के रूप में प्राप्त करो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—रचनाकार द्वारा अपनी रचना को बनाकर उसके ऊपर कलश स्थापित करने का मतलब होता है कि वह अपनी रचना की पूर्णता एवं सर्वोत्कृष्टता से पूर्णतया सन्तुष्ट हो गया है। ब्रह्मा ने भी अपने सृष्टिनिर्माणकौशल का पूर्णतः प्रयोग कर नल का निर्माण किया था और नलनिर्माणरूप कार्य को अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना मानकर उसके ऊपर कलश को समारोपित कर दिया था। वह राजा नल इस प्रकार के अलौकिक सौन्दर्य से सम्पन्न था कि विश्व में अपने को सर्वाधिक सुन्दर मानने वाले लोगों का गर्व भी उस नल की सुन्दरता के समक्ष क्षीण हो जाता था और समस्त स्त्रियाँ उसे देखते ही काम से व्याकुल हो जाती थीं। उसी नल को पति के रूप में दमयन्ती को प्राप्त करने के लिए राजहंस ने आशीर्वाद दिया ॥७॥

दमयन्ती तु तस्मिन्क्षणे 'क्व संस्कृतवाचः पक्षिणो विवक्षितवाचश्च' इति मनसि विस्मयं भयं च, 'नामाप्याह्लादजननं नलस्य' इति वपुषि वेपथुं रोमाञ्चं च हृदयेऽनुरागमौत्सुक्यं च, समकालमुल्लोलायमानमुद्वहन्ती चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—दमयन्तीति। दमयन्ती तु=भीमपुत्री तु, तस्मिन् क्षणे=तदवसरे, क्व=कुत्र, संस्कृतवाचः=संस्कृतभाषिणः, विवक्षितवाचश्च=अभिप्रेतवक्तारश्च, पक्षिणः=खगाः, इति=हेतुना, मनसि=चित्ते, विस्मयम्=आश्चर्यं, भयं=भीतिः च 'नलस्य नामापि=अभिधानमपि, आह्लादजननं=सुखकरम्, इति=इत्थम्, वपुषि=शरीरे, वेपथुं=कम्पनं; रोमाञ्चं=पुलकं च, हृदये=अन्तःकरणे, अनुरागं=प्रेम; औत्सुक्यम्=औत्कण्ठ्यं च, समकालं=युगपत्, उल्लोलायमानं=तरङ्गायमाणम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, चिन्तयाञ्चकार=विचारयामास ॥

ज्योत्स्ना—दमयन्ती तो उसी समय "कहाँ संस्कृत बोलने वाला और विवक्षित बातों को कहने वाला पक्षी?" अर्थात् संस्कृतभाषी एवं अभीष्ट को कहने वाला यह पक्षीरूपी हंस कहाँ से आ गया? इस प्रकार मन में आश्चर्य एवं भय के साथ "नल का नाम भी आनन्द का उत्पादक है" अतः शरीर में कम्पन और रोमाञ्च तथा हृदय में प्रेम और उत्सुकता के कारण तरंगित होने वाली स्थिति को धारण करती हुई विचार करने लगी ॥

'सोऽयं यस्तेन पान्थेन यान्त्या गौरीमहोत्सवे।
नलोऽप्यनल एवासीद्वर्णितो मे पुरः पुरा' ॥८॥

अन्वयः—पुरा गौरीमहोत्सवे यान्त्याः मे पुनः तेन पान्थेन (यः) वर्णितः सोऽयं नलः (अपि) अनलः आसीत् ॥८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—स इति। पुरा=पूर्वस्मिन् काले, गौरीमहोत्सवे=गौरीदेव्याः महोत्सवे, यान्त्याः=गच्छन्त्याः, मे=मम, पुरः=अग्रे, तेन=पूर्वकथितेन, पान्थेन=पथिकेन, यः वर्णितः=कीर्तितः, सोऽयं=तदेष, नलोऽपि अनलः=न नल इति विरोधः, अनलः=वह्निरेव, स्मरसन्तापहेतुत्वादिति भावः। आसीत्=अभवत्। विरोधाभासोऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—प्राचीन काल में अर्थात् पूर्व में गौरी महोत्सव में जाते समय मेरे समक्ष उस पथिक ने जिसका वर्णन किया था वह यह नल अनल ही था।

आशय यह है कि सुन्दरता का प्रतिरूप बना हुआ राजा नल, जिसके बारे में दमयन्ती पहले भी पथिक के मुख से सुन चुकी थी, इस समय उसकी अलौकिक सुन्दरता को हंस के मुख से सुनकर इतनी मुग्ध हो गई कि वह नल नामधारी होते हुए भी दमयन्ती के लिए कामसन्तापदायक होने के कारण अनल अर्थात् अग्नि के समान हो गया ॥८॥

अथास्याः सखी परिहासशीला नाम नाम्नैव नलस्योद्भिन्नबहलपुलकाङ्कुरामिमामवलोक्य नर्मालापमकरोत् ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरम्, अस्याः=दमयन्त्याः, परिहासशीला नाम सखी=तन्नाम्नी वयस्या, नलस्य नाम्नैव=नामश्रवणेनैव, किमुत दर्शनेनेति भावः [अर्थापत्तिरलङ्कारः]। उद्भिन्नबहलपुलकाङ्कुराम्—उद्भिन्नः=उद्गतः, बहलः=प्रचुरः, पुलकाङ्कुरः=रोमाञ्चाङ्कुरः यस्यास्ताम्, इमां=दमयन्तीम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, नर्मालापं=विनोदपूर्णसम्भाषम्, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् दमयन्ती की परिहासशीला नाम की सखी ने उसे (दमयन्ती को) नल के नाम से ही अत्यन्त रोमाञ्चित हुई देखकर मधुर आलाप करने लगी अर्थात् हँसी-मजाक करने लगी ॥

कोष्णं किं नु निषिच्यते तव बलातैलं सखि श्रोत्रयो-
रन्तस्तित्तिरिपक्षि पत्रमथवा मन्दं मृदु भ्राम्यति।
येनाङ्गेषु निखातमन्मथशरप्रस्फारपिच्छच्छवि-
र्नीलीमेचकितोच्चकञ्चुकरुचं रोम्णां वहत्युद्गमः ॥९॥

अन्वयः—सखि! किं नु तव श्रोत्रयोः अन्तः कोष्णं बलातैलं निषिच्यते अथवा मृदु तित्तिरिपक्षिपत्रं मन्दं भ्राम्यति? येन अङ्गेषु निखातमन्मथशरप्रस्फारपिच्छच्छविः रोम्णाम् उद्गमः नीलीमेचकितोच्चकञ्चुकरुचं वहति ॥९॥

कल्याणी—कोष्णमिति। हे सखि! किं नु=किमिति प्रश्ने, नु इति वितर्के, तव=ते, श्रोत्रयोः=कर्णयोः, अन्तः=मध्ये, ईषदुष्णं कोष्णं=अनत्युष्णम्, 'कवं चोष्णे' इति ईषदर्थस्य कोः का-भावः। बलातैलं—बला नाम ओषधिविशेषः, तस्य तैलं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निषिच्यते=निक्षिप्यते, अथवा मृदु=कोमलं, तित्तिरिपक्षिपत्रं—तित्तिरिपक्षिणः पत्रं=पिच्छं, मन्दं=शनैः शनैः, भ्राम्यति=भ्रमदस्ति ? येन=हेतुना, अङ्गेषु=देहावयवेषु, निखातमन्मथशरप्रस्फारपिच्छच्छविः—निखाताः=निमग्नाः, ये मन्मथस्य=कन्दर्पस्य, शराः=बाणाः, तेषां प्रस्फाराणि=स्पष्टदृश्यमानानि, पिच्छानि=पुंखानि, तद्वत् छविः=कान्तिः यस्य सः तथोक्तः, रोम्णामुद्गमः=रोमाञ्चः, नीलीमेचकितोच्चकञ्चुकरुचं=नीली नाम ओषधिविशेषः तया, तद्रसेनेत्यर्थः। मेचकितस्य=श्यामलितस्य, उच्चकञ्चुकस्य=उत्कृष्टकञ्चुकस्य, रुचं=कान्ति, वहति=धारयति। शरप्रस्फारपिच्छच्छविरित्यत्रोपमा। उच्चकञ्चुकरुचं वहतीत्यत्रोच्चकञ्चुकरुचा सदृशं रुचमिति सादृश्यार्थे पर्यवसानान्निदर्शना। तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—हे सखि ! क्या तुम्हारे कानों के भीतर कुछ-कुछ गर्म बला-नामक औषधि का तेल डाला गया है ? अथवा तित्तिर पक्षी के कोमल पंख को धीरे-धीरे घुमाया जा रहा है, जिस कारण (तुम्हारे) अंगों में निमग्न अर्थात् घुसे हुए कामबाण के स्पष्टतः दृश्यमान पंखों के समान कान्ति वाला उठा हुआ रोमाञ्च नीली नामक विशेष प्रकार की ओषधि के रस से श्यामल बनाये गये उत्कृष्ट कञ्चुक की कान्ति को धारण कर रहा है ॥९॥

दमयन्ती तु तस्याः सवैलक्ष्यस्मितमेवोत्तरं कल्पयन्ती शनैः शिरःकम्पतरलितावतंसोत्पला सलज्जा चलद्विलोचनान्तेन तामतर्जयत्। अवादीच्च तं राजहंसम् 'अहो महानुभाव ! सर्वथाश्चर्यहेतुरसि ॥

कल्याणी—दमयन्तीति। दमयन्ती तु=भैमी तु, वैलक्ष्यस्मितमेव=कृत्रिममीषद्धासमेव, तस्याः=सख्याः, उत्तरं कल्पयन्ती=संरचयन्ती, शनैः=मन्दं, शिरःकम्पतरलितावतंसोत्पला—शिरःकम्पेन तरलितं=कम्पितम्, अवतंसोत्पलं=कर्णभूषणकमलं यस्यास्तथाविधा, सलज्जा=लज्जासहिता च, चलद्विलोचनान्तेन=चञ्चलनेत्रप्रान्तेन, तां=सखीम्, अतर्जयत्=अत्रासयत्। अत्रोत्तररूपारोप्यमाणस्य स्मितरूपारोपविषयात्मतया प्रकृतार्थोपयोगित्वात्परिणामाऽलङ्कारः। तं राजहंसं=पूर्वोक्तं हंसपक्षिणम्, अवादीच्च=अकथयच्च, अहो महानुभाव !=महाप्रभाव ! अहो इत्याश्चर्ये, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, आश्चर्यहेतुरसि=विस्मयकारणमसि, त्वमिति शेषः ॥

ज्योत्स्ना— कृत्रिम मन्द मुस्कान वाली अर्थात् धीरे-धीरे मुस्कुराती हुई दमयन्ती उस सखी के उत्तर की संरचना करती हुई धीरे-धीरे शिर के कम्पन से काँपते हुए कर्णाभूषणों वाली होती हुई लज्जा के साथ चञ्चल नेत्रों के कोने से अर्थात् कटाक्षों से उस सखी को (हास-परिहास) से रोका और उस राजहंस से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोली—"हे महानुभाव ! (तुम) सब प्रकार से आश्चर्य के कारण हो।" अर्थात् आश्चर्योत्पादक हो ॥

तथाहि—

द्रष्टव्यानुरूपं रूपम्, महाश्चर्यगर्भाः प्रपञ्चितवाच्या वाचः; सूचितसंस्कारातिरेको विवेकः, सौजन्याश्रयः प्रश्रयः, निष्कारणोपकारधात्री मैत्री ॥

कल्याणी—द्रष्टव्येति। द्रष्टव्यानुरूपं—द्रष्टव्यानाम् अनुरूपम्=उचितं; सर्वथा दर्शनीयमित्यर्थः। रूपं=सौन्दर्यम्, महाश्चर्यगर्भाः=समधिकविस्मयपूर्णाः; प्रपञ्चितवाच्याः=विस्तृतविशिष्टार्थसम्पन्नाः, वाचः=वचनानि, सूचितसंस्कारातिरेकः—सूचितः=प्रकटितः, संस्कारातिरेकः=संस्कारोत्कर्षः येन तादृशः, विवेकः=विचारशक्तिः, सौजन्याश्रयः=सज्जनताया आधारः, प्रश्रयः=विनयः, निष्कारणोपकारधात्री=अहेतुकोपकारविधायिनी, मैत्री=मित्रभावः ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; देखने योग्य अर्थात् दर्शनीय रूप (सौन्दर्य), अत्यन्त आश्चर्यपूर्ण एवं विस्तृत विशिष्ट अर्थों से समन्वित वाणी, संस्कार की उत्कर्षता को सूचित करने वाली विचारशक्ति, विनयाधारित सज्जनता (और) अकारण उपकार करने वाली मित्रता (से तुम सम्पन्न हो) ॥

तत्त्वमनेकधा जनितविस्मयो बहु प्रष्टव्योऽसि ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, त्वं=राजहंसः, अनेकधा=विविधप्रकारेण, जनितविस्मयः—जनितः=समुत्पादितः; विस्मयः=आश्चर्यं येन तादृशः, बहु प्रष्टव्योऽसि=बहु प्रष्टुं योग्योऽसि ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए अनेक प्रकार के आश्चर्यों के जनक (होने के कारण) तुम बहुत कुछ पूछने योग्य हो ॥

किं तु प्रस्तुतं पृच्छामः। कथय। 'कोऽयमात्मरूपसम्भावितकन्दर्पदर्पदावानलो नाम। यस्यैतानि मन्दरमथनक्षणक्षुभितक्षीरसागरतरङ्गभ्रमभ्रान्तिभाञ्जि भ्रमन्ति यशांसि' ॥

कल्याणी—किन्त्विति। किन्तु=अन्यान्यप्रस्तुतानि परित्यज्य, विस्तारभयादिति भावः। प्रस्तुतं=प्रकृतं; पृच्छामः।

कथय=विज्ञापय। आत्मरूपसम्भावितकन्दर्पदर्पदावानलः—आत्मरूपेण=स्वकीयसौन्दर्येण, सम्भावितः=संमानितः, प्रवर्धित इत्यर्थः। अथवा संभावितः=समुत्पादितः, कन्दर्पस्य=कामदेवस्य, दर्पः=अहङ्कार एव दावानलः=वनवह्निः येन सः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अयं=एषः, नलो नाम=नलाभिधेयः, कः=किंपरिचयः, यस्य=नलस्य, एतानि=इमानि, मन्दरमथनक्षणक्षुभितक्षीरसागरतरङ्गभ्रमभ्रान्तिभाञ्जि—मन्दरेण=मन्दराचलेन, मथनक्षणे=आलोडनावसरे, क्षुभितस्य=आन्दोलितस्य, क्षीरसागरस्य=समुद्रस्य, ये तरङ्गाः=कल्लोलाः, तेषां भ्रमः=भ्रमणं, तस्य भ्रान्ति=शङ्कां, भजन्ते इति तादृशानि, यशांसि=कीर्तयः, भ्रमन्ति=सर्वत्र भ्रमणं कुर्वन्ति ॥

ज्योत्स्ना—किन्तु प्राकरणिक बात ही पूछ रही हूँ। कहो; अपने सौन्दर्य से सम्मानित अथवा समुत्पादित कामदेव के अहंकाररूप दावानल वाला यह नल कौन है? जिसके मन्दराचल द्वारा मन्थन के समय में आन्दोलित क्षीरसागर की तरंगों के घूमने (चक्कर काटने) की भ्रान्ति उत्पन्न करने वाले यश (सर्वत्र) घूम रहे हैं।

आशय यह है कि तुम्हारे द्वारा प्रशंसित अलौकिक सौन्दर्य का स्वामी वह राजा नल कौन है, जिसकी कीर्ति समस्त संसार में अनवरत प्रतिध्वनित होती रहती है ॥

इत्येवमुक्तः सोऽपि 'सुन्दरि! यद्येवमुपविश्यताम्। अवधीयतां मनः। श्रूयतां सविश्रब्धम्' इत्यभिधाय कथयितुमारब्धवान् ॥

कल्याणी—इतीति। इत्येवम्=अनेन प्रकारेण, उक्तः=कथितः, सः=हंसोऽपि हे सुन्दरि!, यदि एवं [कौतूहलं वर्तते, तर्हि] उपविश्यताम्=आस्यताम्, मनः=चित्तम्, अवधीयतां=समाहितं क्रियताम्, सविश्रब्धं=निश्चिन्तभावेन निःसङ्कोचभावेन वा; श्रूयताम्=आकर्ण्यताम्, इत्यभिधाय=एवमुक्त्वा, कथयितुं=भणितुम्, आरब्धवान्=प्रारेभे ॥

ज्योत्स्ना—(दमयन्ती द्वारा) इस प्रकार कहे जाने पर वह हंस भी "हे सुन्दरि! यदि ऐसा है अर्थात् नल को जानने के बारे में तुम्हारी इतनी ही उत्कट इच्छा है तो बैठो, मन को एकाग्र करो (और) निश्चिन्तता के साथ सुनो।" इस प्रकार कहकर कहना प्रारम्भ किया ॥

'अस्ति समस्तसुरासुरलोककर्णपूरीकृतकान्तकीर्तिकुन्दकुसुमः, कुसुमायुधरूपरमणीयदेहप्रभः, प्रभावयुक्तो विप्रभावश्च, शुचिरनुपतापकारी च; घनागमसमयो न वारिबहुलश्च, शिशिरस्वभावो न जाड्ययुक्तश्च, रामः कुशलवयोरामणीयकेन जनको वैदेहभागेन, नैषधः प्रजानां पतिः, विरञ्च इव नाभिभूतः समरे, वीरो वीरसेनो नाम ॥

कल्याणी—अस्तीति। समस्तसुरासुरालोककर्णपूरीकृतकान्तकीर्तिकुन्दकुसुमः—समस्ताः=सकलाः, ये सुरासुरलोकाः=देवदानवसमूहाः, तैः कर्णपूरीकृतं=कर्णावतंसत्वेन धृतं, कान्तकीर्तिः=निर्मलयशः, त एव कुन्दकुसुमं=माध्यपुष्पं यस्य स

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथोक्तः, सकलसुरासुरश्रुतयशा इत्यर्थः। कुसुमायुधस्य=कन्दर्पस्य, रूपं=सौन्दर्यमिव, रमणीया=रम्या, देहस्य=शरीरस्य, प्रभा=कान्तिः यस्य स तथोक्तः, प्रभावयुक्तः=माहात्म्यसम्पन्नः, विप्रभावः—विगतः प्रभावो यस्य तादृशश्चेति विरोधः, प्रभावयुक्तः=तेजोयुक्तः, विप्रभावः—विप्रेषु=ब्राह्मणेषु, भावः=भक्तिर्यस्य तादृशश्चेति परिहारः। शुचिः=ग्रीष्मः, नोपतापकारी—नं सन्तापं करोतीति चेति विरोधः; शुचिः=पवित्रः, 'शुचिः शुद्धेऽनुपहते शृङ्गाराषाढयोः' इति 'ग्रीष्मे हुतवहेऽपि च' इति च कोषः। न कस्याप्युपतापकारी चेति परिहारः। घनागमसमयः=वर्षाकालः, न वारिबहुलः=न जलबहुल इति विरोधः, घनाः=प्रचुराः, ये आगमाः=सिद्धान्ताः, तेषां समयः=सीमा, प्रचुरसिद्धान्तसम्पन्न इति भावः। न वा-अरिबहुलः—'वा' इति समुच्चये, न अरिबहुलः=न शत्रुबहुल इति परिहारः। शिशिरस्वभावः=शिशिरो नाम ऋतुविशेषः, तत्स्वभावः, न जाड्ययुक्तः=न हिमयुक्तश्चेति विरोधः, शिशिरस्वभावः, न जाड्येन=मौर्ख्येन, युक्तश्चेति परिहारः। कुशलवयोरामणीयकेन—कुशलेन=चतुरेण, वयोरामणीयकेन=नवयौवनसौन्दर्येण, रामः=चारुः, वैदेहभागेन=विदेहराज्यभागेन, जनकः=जनकाख्यनृपतिप्रतिमः, अथ च [वै-देहभागेन रामणीयकेन कुशलवयोर्जनकः राम इत्येवमन्वयेन] वै इति वितर्के, देहस्य भां=कान्ति गच्छतीति देहभागं, तेन शरीरकान्त्यनुहारिणेत्यर्थः। रामणीयकेन=सौन्दर्येण, कुशलवयोः जनकः=पिता, रामः=दाशरथिः, नैषधः=निषधदेशीयः, प्रजानां पतिः=नरेन्द्रः, विरञ्च इव=ब्रह्मेव, समरे=युद्धे, नाभिभूतः=न कदाचित्पराजितः, पक्षे—नाभेर्भूतः=जातः, वीरसेनो नाम वीरोऽस्ति ॥

ज्योत्स्ना—समस्त देवताओं और दानवों के द्वारा कर्णाभूषण के रूप में धारित किये गये निर्मल यशरूप कुन्दपुष्प वाले, कुसुमरूप शस्त्र वाले अर्थात् कामदेव के सौन्दर्य के समान रमणीय शरीरकान्ति वाले, प्रभावयुक्त अर्थात् प्रभावशाली और विप्र-भाव अर्थात् ब्राह्मणों में भक्ति रखने वाले, पवित्र एवं किसी को सन्तप्त न करने वाले, प्रचुर सिद्धान्तों की सीमा अर्थात् अत्यधिक सिद्धान्तों से सम्पन्न और शत्रुओं के बाहुल्य से रहित, शीतल अर्थात् ठंढे स्वभाव वाले और जड़ता अर्थात् मूर्खता से रहित, विदेह राज्य के कारण (प्रख्यात) राजा जनक के समान कुशल नवयौवन-सौन्दर्य से अप्रतिम अथवा कुश और लव के जनक राम के समान शरीर की कान्ति के कारण अप्रतिम, निषधदेशीय प्रजा के स्वामी, नाभि से उत्पन्न ब्रह्मा के समान, युद्ध में कभी भी पराजित न होने वाले वीरसेन नाम के वीर (राजा) हैं ॥

यस्य च बहुशोभयाङ्गप्रभया सह स्फुरत्युदारा मनोवृत्तिः, अखण्डनयाङ्गया सदृशी राजते राज्यस्थितिः, सज्जया सेनया सह श्लाघनीया कृपाणयष्टिः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—यस्य चेति। यस्य=वीरसेनस्य च, [बहुशः+अभया] बहुशः अभया=भयरहिता, उदारा=सौम्या, मनोवृत्तिः=चेतोवृत्तिः, [बहुशोभया+अङ्ग-प्रभया] समधिकसौन्दर्यसम्पन्नया शरीरकान्त्या, सह स्फुरति=प्रकटति। [इति सहोक्तिः] अखण्डनया=अनुल्लङ्घनीयया, आज्ञया सदृशी अखण्डो नयः=नीतिः यस्याः सा राज्यस्थितिः, राजते=शोभते [इत्युपमा] सज्जया=प्रवणया, सेनया सह [सत्+जया] सन्=शोभनः, जयः यस्याः सा श्लाघनीया=प्रशंसनीया, कृपाणयष्टिः=खड्गदण्डिका, राजते=शोभते [इति सहोक्तिः] 'बहुशोभया, अखण्डनया, सज्जया, चेत्यत्र प्रथमातृतीययोर्विभक्त्योः श्लेषः ॥

ज्योत्स्ना—जिन वीरसेन की बहुशः अभया अर्थात् पूर्णतया भयरहित उदार (सौम्य) मनोवृत्ति, बहुशोभया अंगप्रभया अर्थात् अत्यधिक सौन्दर्यसम्पन्न शरीर की कान्ति के साथ-साथ प्रकट हो रही है, अनुल्लंघनीय आज्ञा के समान अखण्ड नीति से समन्वित राज्य-स्थिति सुशोभित हो रही है (और) सज्जित सेना के साथ-साथ सुन्दर विजय वाली प्रशंसनीय कृपाणयष्टि सुशोभित हो रही है।

विमर्श—यहाँ 'बहुशोभया, अखण्डनया और सज्जया' में प्रथमा एवं तृतीया विभक्ति का श्लेष है ॥

यश्च सशृङ्गारो नारीषु, वीरो वैरिषु, बीभत्सः परदारेषु, रौद्रो द्रोहिषु; सहास्यो नर्मालापेषु; भयानकः संग्रामाङ्गणेषु, सकरुणः शरणागतेषु ॥

कल्याणी—यश्चेति। यश्च=वीरसेनः, नारीषु=स्त्रीषु, सशृङ्गारः=शृङ्गारवान्, वैरिषु=अरिषु, वीरः=शौर्यसम्पन्नः, परदारेषु=परकीयनारीषु, बीभत्सः=घृणाकारकः, द्रोहिषु=द्वेषिषु, रौद्रः=क्रोधोपेतः, नर्मालापेषु=विनोदसंभाषेषु, सहास्यः=हास्ययुक्तः, संग्रामाङ्गणेषु=रणाजिरेषु, भयानकः=भयङ्करः, शरणागतेषु सकरुणः=दयालुर्वर्तते। वीरसेनस्यानेकधावर्णनादुल्लेखाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और जो वीरसेन स्त्रियों में शृङ्गारयुक्त रहता है, शत्रुओं में शौर्यसम्पन्न रहता है, दूसरे की स्त्रियों से घृणा करता है अर्थात् परनारी-गमन को घृणित समझता है, द्वेष करने वालों के साथ क्रोधयुक्त रहता है, विनोदपूर्ण (हास-परिहासपूर्ण) वार्तालापों में हास्ययुक्त रहता है, युद्ध के प्रांगण में भयानक बन जाता है (और) शरणागतों के प्रति करुणा से सम्पन्न रहता है अर्थात् दयावान् रहता है ॥

यस्य च चतुरुदधितटीटीकमानशरच्चन्द्रविशदयशोराशिराजहंसस्य, निस्त्रिंशता कृपाणेषु, कुचातुर्यं कलत्रेषु, कूपदेशसेवा पार्पाधिकेषु, लुब्धकपर्यायः कैवर्तकेषु, तीक्ष्णता शस्त्रेषु, धर्मच्छेदो धनुर्विद्यायाम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—यस्येति। चतुरुदधितटीटीकमानशरच्चन्द्रविशदयशोराशिराजहंसस्य—चतुरुदधितटीषु=चतुःसमुद्रतटप्रान्तेषु, टीकमानः=सञ्चरन्तः, शरच्चन्द्रधवलयशःपुञ्ज एव राजहंसो यस्य तस्य [इत्युपमारूपकयोः संकरः] कृपाणेषु=खड्गेषु, निस्त्रिंशता=खड्गत्वम् [न प्रजासु निस्त्रिंशता=क्रूरकर्मत्वम्]। कलत्रेषु=स्त्रीषु कुचातुर्यं—कुचाभ्याम् अर्थात्तद्भारस्य दुर्वहत्वात् आतुर्यम्=आतुरता [न प्रजासु कुचातुर्यं=कुत्सितं चातुर्यम्]। पार्द्धिकेषु=मृगयुषु, कूपदेशसेवा—कूपप्रदेशस्य=कूपभागस्य, सेवा=सेवनं, मृगयाभ्यासेष्विति भावः [न प्रजासु कूपदेशसेवा—कुत्सितस्य उपदेशस्य सेवा=ग्रहणम्]। कैवर्तकेषु=मत्स्यजीविषु, लुब्धकपर्यायः—लुब्धक इत्येकार्थकं शब्दान्तरं [न प्रजासु लुब्धकपर्यायः—कुत्सितो लुब्धो लुब्धकः तस्य पर्यायः=परिपाकः]। शस्त्रेषु=आयुधेषु, तीक्ष्णता [न प्रजासु तीक्ष्णता=कठोरता]। धनुर्विद्यायां=धनुर्वेदे, धर्मच्छेदः—धर्मो नामा द्रुमो यन्मयं धनुर्विधीयते, तस्य च्छेदः=कर्तनम् [न प्रजासु धर्मस्य=पुण्यस्य, च्छेदः=विनाशः]। परिसंख्याऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और चारो समुद्रों के तट पर सञ्चरण करते हुए शरत्कालीन चन्द्रमा की धवल यशःपुञ्जरूपी राजहंसों वाले जिस वीरसेन की क्रूरता तलवारों में ही है, प्रजाओं में नहीं है। आतुरता कुचों (स्तनों) के भार से (दुर्वह होने के कारण) स्त्रियों में ही दिखाई देती है। प्रजाओं में निन्दित चतुरता नहीं पाई जाती। कूपदेशसेवा अर्थात् कूयें के भाग का सेवन शिकार का अभ्यास करने वाले व्याधों में ही दिखाई देता है, प्रजाओं में निन्दित उपदेशों का सेवन करना नहीं देखा जाता। 'लुब्धक' शब्द का पर्याय केवल कैवर्त में ही दिखाई देता है, निन्दित लोभ का परिपाक प्रजाओं में दिखाई नहीं देता। तीक्ष्णता शस्त्रों में ही दिखाई देती है, प्रजाओं में तीक्ष्णता (कठोरता) नहीं देखी जाती। धर्मच्छेद (धर्मनामक वृक्षविशेष, जिससे धनुष का निर्माण किया जाता है, उसको काटना) केवल धनुर्विद्या में ही दृष्टिगोचर होता है, प्रजाओं में धर्मच्छेद (धर्म का विनाश) होते नहीं देखा जाता ॥

विमर्श—मछलियों को आधार बनाकर अपनी जीविका चलाने वाले लोगों को कैवर्त कहा जाता है; इन्हें ही लोकभाषा में केवट या मल्लाह के नाम से जाना जाता है ॥

एवमस्य हरस्येव करस्थं कृत्वाशेषमण्डलमनवरतविख्यातविजयाभिनन्दिनः, सुन्दरकैलासनाभिरम्यवनान्तरेषु विहरतः, मदननिरुद्धनैषधीपीनोच्चकुचकुम्भावष्टम्भमसृणितवक्षःस्थलस्य सुखेनाभिरामन्ति दिवसाः ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, हरस्येव=शिवस्येव [कृत्वा+अशेष]—अशेषमण्डलम्=समस्तदेशं, करस्थं—करे=राजभागे, स्थितं कृत्वा, पक्षे—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[कृत्वा–शेष]—शेषाख्यो नागः, तस्य मण्डलं=कुण्डलाकार वपुः, करस्थ=करे ककणत्वेन स्थितम् । अनवरतं=सततं, विख्यातैः—प्रथितैः, विजयैः अभिनन्दिन.=प्रहृष्टस्य. पक्षे विजया=पार्वती, विजयाख्या पार्वतीसखी वा, अथवा विजया नाम औषधिविशेषस्तया अभिनन्दिनः । सुन्दरं कं=जलम्, एला=तदाख्या लता, असनः=पीतसालः नाम तरुः तैः, अभिरम्येषु=नितान्तरमणीयेषु, वनान्तरेषु=विपिनमध्यभागेषु. विहरतः=विहारं कुर्वतः, पक्षे—सुन्दरो यः कैलासो नाम गिरिर्नाभिर्मुख्यो यत्र तादृशेषु रम्यवनान्तरेषु । मदनेन=कामेन, निरुद्धाः=परवशीकृताः अर्थात्सकामाः, तासां नैषधीनां=निषधदेशरमणीनां, पीनोच्चकुचकुम्भयोः=स्थूलोन्नतपयोधरकलशयोः, अवष्टम्भेन=संसक्त्या, आलिङ्गनादिति भावः । मसृणितं=दीपितमित्यर्थः । वक्षःस्थलं यस्य तस्य वीरसेनस्य दिवसा=दिनानि, सुखेन=आनन्देन, अभिक्रामन्ति=व्यतियान्ति । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार शेषनाग के कुण्डलाकार शरीर को कंकण के रूप में हाथ में धारण करने वाले और निरन्तर विजया अर्थात् पार्वती अथवा विजया नाम वाली पार्वती की सखी अथवा विजया (भांग) से प्रसन्न रहने वाले तथा सुन्दर कैलास पर्वत के रम्य वनों में विचरण करने वाले भगवान् शंकर के समान समस्त देश को राजभाग में स्थित कर सुन्दर जल, एला (इलायची) तथा असन (पीतसाल) नामक वृक्षों से रमणीय वनों में विहार करते हुए कामदेव के द्वारा निरुद्ध अर्थात् परवश निषध देश की अंगनाओं के स्थूल एवं उन्नत स्तनरूपी कलशों के संस्पर्श से उद्दीप्त वक्षःस्थल वाले उस वीरसेन के दिन सुख से व्यतीत हो रहे हैं ॥

कदाचिच्चतुरुदधिवेलावलयितवसुंधराविख्यातमपत्यमभिलषन्ननादरचरणाङ्गुष्ठनिष्ठ्यूतकैलासोन्मूलनागतपतद्दशवदनविरसविरुतविहसितामरमण्डलीमहितमहिमानमनवरतविरञ्चिरचितविचित्रनामसामवस्तुस्तुतिमनवरतसकललोककल्याणकामधेनुमनुपमवर्चसमर्चयाञ्चकार भगवन्तमम्बिकापतिम् ॥

कल्याणी—कदाचिदिति । कदाचित्=कस्मिंश्चित् समये, चतुरुदधिवेलावलयितवसुन्धराविख्यातम्—चतुःसमुद्रसीमया, वलयिता=परिवृता, या वसुन्धरा=पृथिवी, तत्र विख्यातं=प्रथितम्, अपत्यं=सन्तानम्, अभिलषन्=वाञ्छन्, [स वीरसेनः] अनादरचरणांगुष्ठनिष्ठ्यूतकैलासोन्मूलनागतपतद्दशवदनविरसविरुतविहसितामरमण्डलीमहितमहिमानम्—अनादरेण=उपेक्षया, लीलयैवेत्यर्थः । चरणाङ्गुष्ठेन=पादांगुष्ठेन, निष्ठ्यूतः=निरस्तः, कैलासोन्मूलनाय=कैलासोत्पाटनाय, आगतः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पतन् दशवदनः=रावणः, तस्य विरसविरुतेन=करुणचीत्कारेण, विहसिता=कृतहासा, अमरमण्डली=देवपरिषत्, तया महितः=पूजितः, महिमा=माहात्म्यं यस्य तम्, अनवरतं=सततं, विरञ्चिना=ब्रह्मणा, विरचिता=कृता, विचित्रनामभिः=भर्गभगवत्त्रिनेत्रादिभिः, सामवस्तुभिश्च=सामवेदार्थैश्च, स्तुतिर्यस्य तम्, अनवरतसकललोककल्याणकामधेनुम्—अनवरतं=सततं, सकललोकल्याणाय कामधेनुरूपम्, अनुपमवर्चसम्=अनुपमेयतेजसं, भगवन्तम् अम्बिकापतिं=शिवम्, अर्चयाञ्चकार=पूजयामास ॥

ज्योत्स्ना—किसी समय चारो समुद्ररूपी सीमाओं से घिरी हुई पृथ्वी में प्रख्यात पुत्र की कामना करते हुए (उस वीरसेन ने) उपेक्षापूर्वक पैर के अँगूठे से दबाये हुए, कैलास पर्वत को उखाड़ने के लिए आये हुए गिर रहे रावण के करुण चीत्कार से हँसती हुई देवमण्डली के द्वारा पूजित महिमा वाले, ब्रह्मा के द्वारा निरन्तर की जा रही स्तुति वाले, समस्त लोक के कल्याणार्थ निरन्तर कामधेनु-स्वरूप अनुपम तेज वाले भगवान् शिव का पूजन किया ॥

अतिभक्तितोषितहरलब्धवरश्च निरुपमरूपयानुरूपया रूपवत्यभिधानयाप्रधानया प्रियया सह मकरकेतनकेलिफलमनुभवन्नतिचिरमासाञ्चक्रे ॥

कल्याणी—अतीति। अतिभक्तितोषितहरलब्धवरश्च—अतिभक्त्या=महद्भक्त्या, तोषितः=प्रसादितः, यः हरः=शिवः, तस्मात् लब्धः=प्राप्तः वरो येन स वीरसेनश्च, निरुपमरूपया=अनुपमसुन्दर्या, अनुरूपया=अनुकूलया, रूपवत्यभिधानया=रूपवतीनाम्न्या प्रधानया, प्रियया=पत्न्या सह, अतिचिरं=बहुकालं, मकरकेतनकेलिफलं=कामक्रीडानन्दम्, अनुभवन्=अनुभवं कुर्वन्, आसाञ्चक्रे=सुखमुवास ॥

ज्योत्स्ना—और अतिशय भक्ति के द्वारा प्रसन्न भगवान् शिव से वरदान प्राप्त कर (वे वीरसेन) अनुपम सुन्दरी (एवं) सदा अनुकूल रहने वाली रूपवती नामक प्रधान पत्नी के साथ कामक्रीड़ा के आनन्द का अनुभव करते हुए बहुत दिनों तक सुखपूर्वक निवास किये।

अतिक्रामति तु कियत्यपि समये संपन्नसत्त्वा समपद्यत रूपवती ॥

कल्याणी—अतीति। अतिक्रामति=अतिगच्छति तु, कियत्यपि समये=किञ्चिदपि काले, रूपवती=वीरसेनपत्नी, संपन्नसत्त्वा=गर्भवती, समपद्यत=समजायत ॥

ज्योत्स्ना—कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात् रानी रूपवती गर्भवती हुई ॥

तेन च समस्तसंसारवस्तूद्धृतकान्तिकणकलितगर्भारम्भेण, नारायणनाभिरिव विरञ्चोत्पत्तिकमलकन्दबन्धेन, कल्पपादपलतेव पल्लवारम्भोच्छ्वासेन, मनाङ्मेदुरितोदरा रराज राजीवनयना राजपत्नी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तेनेति । तेन च=पूर्वोक्तेन च, समस्तसंसारवस्तूद्धृतकान्तिकणकलितगर्भारम्भेण —समस्तसंसारवस्तुभ्यः=सकलजगत्पदार्थेभ्यः, उद्धृताः=उद्गृहीताः, ये कान्तिकणाः=कान्त्यणवः, तैः कलितः=निर्मितः, यः गर्भः=सत्त्वः, तस्य आरम्भेण=प्रारम्भेण, विरञ्चोत्पत्तिकमलकन्दबन्धेन=ब्रह्मोत्पत्तिकमलमूलबन्धेन, नारायणनाभिरिव=विष्णुनाभिरिव, पल्लवारम्भोच्छ्वासेन=किसलयारम्भोच्छ्वासेन, कल्पपादपलतेव=कल्पतरुलतेव, राजीवनयना=कमलाक्षी, राजपत्नी=रूपवती, मनाग्=ईषत्, मेदुरितं=स्थूलम्, उदरं=जठरं यस्या सा तादृशी, रराज=शुशुभे ॥

ज्योत्स्ना—समस्त सांसारिक वस्तुओं से निकले हुए कान्तिकणों से निर्मित उस गर्भ के प्रारम्भ से ब्रह्मा को उत्पन्न करने वाले कमलमूल से सम्पृक्त भगवान् नारायण के नाभिप्रदेश के समान एवं नूतन पल्लवों के अविर्भावरूपी उच्छ्वास से युक्त कल्पवृक्ष की लता के समान कुछ-कुछ बढ़े हुए उदर (पेट) वाली कमललोचनी राजमहिषी रूपवती सुशोभित हुई ॥

क्रमेण च मेचकोच्चचूचुककुचकुम्भकपोलपाण्डिम्ना निम्नयन्ती मृगलाञ्छनच्छायमवाञ्छदच्छामृतपयःपिष्टमूर्तिमन्मधुसमयमदनमृगाङ्कमण्डलरसेनात्मानमालेप्तुम् ॥

कल्याणी—क्रमेण चेति । क्रमेण=क्रमशः, मेचकोच्चचूचुककुचकुम्भकपोलपाण्डिम्ना —मेचके=श्यामले, उच्चे चूचके ययोस्तयोः कुचकुम्भयोः=स्तनकलशयोः, कपोलयोश्च=गण्डस्थलयोश्च, पाण्डिम्ना=शुभ्रतया, मृगलाञ्छनच्छायं=चन्द्रकान्तिं, निम्नयन्ती=तिरस्कुर्वन्ती, अच्छं=स्वच्छम्, अमृतमेव पयः=नीरं, तेन पिष्टानि=घृष्टानि, मूर्तिमन्ति मधुसमयमदनमृङ्गाकमण्डलानि=वसन्तकामदेवचन्द्रमण्डलानि, तेषां रसेन=द्रवेण, आत्मानं=स्वम्, आलेप्तुम्=आलेपनं कर्तुं, वाञ्छत्=ऐच्छत् । कुचकुम्भकपोलपाण्डिम्नो मृगलाञ्छनापेक्षयाऽऽधिक्यवर्णनाद्व्यतिरेकालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—क्रमशः श्याम वर्ण वाले उन्नत (उठे हुए) चूचुकों से युक्त स्तनरूपी कलशों एवं कलोपों की शुभ्रता से चन्द्रमा की कान्ति को भी तिरस्कृत करती हुई (वह रानी) स्वच्छ अमृतरूपी जल से पिष्ट मूर्तिमान् वसन्त, कामदेव तथा चन्द्रमण्डल के रस से स्वयं को लिप्त करने की कामना करने लगी ॥

अग्रतः सखीजनविधृतमपास्य मणिमयमुकुरमण्डलमनवरतनिशानिर्मलकरवालतलेष्वात्ममुखकमलमवलोकयाञ्चकार ॥

कल्याणी—अग्रत इति । अग्रतः=पुरतः, सखीजनेन विधृतं=स्थापितं, मणिमयमुकुरमण्डलं=रत्नमयदर्पणम्, अपास्य=परित्यज्य, अनवरतं=सततं, निशानिर्मलकरवालतलेषु=शाणोज्ज्वलखड्गतलेषु, आत्ममुखकमलं=स्वपद्माननम्, अवलोकयाञ्चकार=ददर्श ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—सामने ही सखियों द्वारा स्थापित किये गये मणिमय दर्पण का परित्याग कर शाण चढ़ाने के कारण चमकती हुई तलवार की धारों में ही हर समय अपने मुखकमल को देखा करती थी ॥

निरस्य नीलोत्पलमजरठकण्ठीरवकण्ठकेसरस्तबकमकरोत्कर्णावतंसम् ॥

कल्याणी—निरस्येति। नीलोत्पलं=नीलकमलं, निरस्य=परित्यज्य; अजरठकण्ठीरवकण्ठकेसरस्तबकम्=तरुणसिंहकण्ठकेशगुच्छं, कर्णावतंसं=कर्णभूषणम्, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—नीलकमल को दूर हटा कर तरुण सिंह के गलकेश के गुच्छों से कर्णाभूषण बनाया करती थी ॥

अतिबहलकुङ्कुमाङ्ककस्तूरिकापङ्कमपहाय मत्तमातङ्गमदकर्दमेन निजभुजशिखरयोर्विरयाञ्चकार विचित्रपत्त्रभङ्गान् ॥

कल्याणी—अतीति। अतिबहलकुङ्कुमाङ्ककस्तूरिकापङ्कम्—अतिबहलं=समधिकसान्द्रं, कुङ्कुमाङ्ककस्तूरिकापङ्कं=कुङ्कुममिश्रितमृगमदलेपम्, अपहाय=परित्यज्य, मत्तमातङ्गमदकर्दमेन=मत्तगजेन्द्रमदपङ्केन, निजभुजशिखरयोः=स्वस्कन्धयोः, विचित्रपत्त्रभङ्गान्=सुन्दरपत्त्ररचनाः, विरचयाञ्चकार=रचयामास ॥

ज्योत्स्ना—अत्यन्त गाढ़े कुंकुममिश्रित कस्तूरी के लेप को हटाकर अर्थात् परित्याग कर मतवाले हाथी के मदपङ्क से अपने भुजशिखरों अर्थात् कन्धों पर सुन्दर पत्त्ररचना अर्थात् चित्र बनाती रहती थी ॥

एवमन्तःस्फुरद्गर्भानुरूपदोहदसुखमनुभवन्ती कदाचिदुच्चस्थानस्थिते सौम्यग्रहग्रामे, महाराजजन्मोचितेऽह्नि शुभसंभारकारणायां कालवेलायां जातप्राये प्रभाते प्रभाप्रतानजनितपरिवेषशेषमतेजस्वितेजःपुञ्जापहारिणमालोहितपादपल्लवोल्लसितपङ्कजच्छायम्, द्यौरिव रविमण्डलम्, उन्नमन्मेघमालेव विद्युल्लोलम्, अरणिरिव वितानवैश्वानरम्, नरपालप्रिया प्रीणितगोत्रं पुत्त्रमजीजनत् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, अन्तःस्फुरद्गर्भानुरूपदोहदसुखमनुभवन्ती—अन्तः=उदरे, स्फुरन्=स्पन्दमानः, यः गर्भः=गर्भस्थशिशुः, तस्य अनुरूपः यः दोहदः=गर्भवत्याः प्रबलरुचिः, तस्य सुखमनुभवन्ती=आनन्दमनुभवन्ती, कदाचिदुच्चस्थानस्थिते=कदाप्युत्तमस्थानगते, सौम्यग्रहग्रामे=शुभग्रहसमूहे, महाराजजन्मोचिते=महाराजजन्मानुकूले, अह्नि=दिवसे, सुखसंभारकारणायां=सुखसमूहस्य कारणीभूतायां, कालवेलायां=मुहूर्ते, जातप्राये प्रभाते=प्रत्यूषप्रायसञ्जाते, द्यौः=आकाश इव, रविमण्डलं=सूर्यमण्डलं, प्रभाप्रतानजनितपरिवेषम्—प्रभाप्रतानैः=दीप्तिततिभिः, जनितः=कृतः, परिवेषः=मण्डलं येन तम्, अशेषतेजस्वितेजः पुञ्जाप-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हारिणम्=समस्तदीपप्रभृतितेजस्वितेजोमुषम्, आलोहितपादपल्लवोल्लसितपङ्कज-च्छायम्—आलोहितौ=आरक्तौ, पादपल्लवौ=चरणदलौ, तयोरुल्लसितपङ्कजवत् छाया=कान्तिः यस्य तम्, सूर्यपक्षे—आलोहिताः पादपल्लवाः=किरणपल्लवाः, तैः उल्लसिता=विकसिता, पङ्कजच्छाया=कमलकान्ति यस्य तम्। उन्नमन्मेघमालेव—उन्नमन्ती=उद्गच्छन्ती, मेघमालेव=घनावलिरिव, विद्युल्लोलम्—विद्युतां, लोलनं लोलः=विलासः तम्, अरणिरिव=शमीकाष्ठमिव, वितानवैश्वानरम्=यज्ञाग्निम्, नरपालप्रिया=वीरसेननृपप्रिया रूपवती, प्रीणितगोत्रं=कुलतृप्तिदायकं, पुत्रं=सुतम्, अजीजनत्=असूत ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार (अपने) उदर में स्पन्दन करते हुए गर्भ के अनुरूप दोहदसुख अर्थात् गर्भवती की इच्छाविशेष के सुख का अनुभव करती हुई किसी समय उच्च स्थान पर सौम्य ग्रहसमूहों के स्थित होने पर; महाराज के जन्मानुकूल दिन में, सुखों के कारणीभूत अर्थात् आनन्ददायक मुहूर्त में, लगभग प्रातःकाल में, अपनी कान्ति के प्रसार से मण्डल का निर्माण किये हुए, समस्त तेजस्वियों के तेजःपुञ्ज का अपहरण करने वाले रक्तिम चरणदलों से विकसित कमल के समान कान्ति वाले, वंश को तृप्ति प्रदान करने वाले पुत्र को राजा वीरसेन की प्रिया रूपवती ने उसी प्रकार उत्पन्न किया जिस प्रकार रक्तिम किरण-पल्लवों से कमलकान्ति को उल्लसित करने वाले सूर्यबिम्ब को आकाश ने, विद्युद्विलास को उमड़ती हुई मेघमाला ने और यज्ञाग्नि को अरणि ने जन्म दिया था ॥

तत्र च दिवसे—

सांशुकोन्नतवंशस्य तस्य राज्ञः पुरस्य च।
बभूव लक्ष्मीः सा कापि यया स्वर्गोऽपि निर्जितः ॥१०॥

अन्वयः—सांशुकोन्नतवंशस्य तस्य राज्ञः पुरस्य च सा कापि लक्ष्मीः बभूव यया स्वर्गः अपि निर्जितः ॥१०॥

कल्याणी—सांशुकेति। तत्र च दिवसे, अंशुः=रविः, तेन सह सांशुक उन्नतो वंशो यस्य, सूर्यवंशस्येत्यर्थः। तस्य=पूर्वोक्तस्य, राज्ञः=नृपस्य, सूर्योदयेन सहैव नववंशाङ्कुरस्य पुत्रस्य जातत्वादिति भावः। अथ च सांशुकाः=सपताकाः, उन्नताः=उच्छ्रिताः, वंशाः=वेणवः यस्मिन् तस्य, पुरस्य=नगरस्य, सा कापि=लोकोत्तरा, लक्ष्मीः=शोभा, बभूव=अभवत्, यया=शोभया, स्वर्गच्छतीति स्वर्गः=देवः स्वर्गलक्षणो लोकश्च, निर्जितः=पराभूतः। अत्र राज्ञा पुरेण च देवस्य स्वर्गलोकस्य च शोभातिवहनात्तयोर्निष्फलत्वप्रतिपादनेन प्रतीपाऽलङ्कारः। सांशुकोन्नतवंशस्येति पदस्य राज्ञः पुरस्य च लोकोत्तरलक्ष्म्या हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गं, तत्रैव श्लेषोऽपीति त्रयाणां संकरः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और उस दिन वहाँ पर सूर्यसहित उन्नत वंश वाले अर्थात् सूर्यवंशी उस राजा की एवं पताकासहित उन्नत बाँस वाले नगर की ऐसी अवर्णनीय शोभा हुई कि जिससे देवगण एवं स्वर्गलोक दोनों ही विजित कर लिये गये।

विमर्श—आशय यह है कि राजा वीरसेन सूर्यवंशी राजा थे। पुत्र की उत्पत्ति से वे राजा वीरसेन देवताओं की अपेक्षा अधिक महिमामण्डित हुए, जिससे देवताओं की महिमा भी उनके समक्ष धूमिल पड़ गई। साथ ही राजकुमार के जन्म की खुशी को व्यक्त करने के लिए समस्त नगर में ऊँची-ऊँची ध्वजायें फहराने लगीं, जिससे नगर इतना अधिक अलौकिक शोभा से सम्पन्न हुआ कि उसके समक्ष स्वर्ग की शोभा भी फीकी पड़ गई ॥१०॥

अपि च—

सवृद्धबालाः कालेऽस्मिन्मुक्ताहारविभूषणाः।
प्राप्ताः प्रीतिं पुरे पौरा वनेषु च तपस्विनः ॥११॥

अन्वयः—अस्मिन् काले पुरे सवृद्धबालाः मुक्ताहारविभूषणाः पौराः वनेषु (सवृद्धबालाः मुक्ताहारविभूषणाः) च तपस्विनः प्रीतिं प्राप्ताः ॥११॥

कल्याणी—सवृद्धेति। अस्मिन्=एतस्मिन्, काले=समये, पुरे=नगरे, सवृद्धबालाः—वृद्धः=पितामहादिः, बालः=पुत्रादिः, ताभ्यां सह, मुक्ताहारविभूषणाः=मौक्तिकहारालङ्करणाः, पौराः=पुरवासिनः, वनेषु=अरण्येषु, च सवृद्धबालाः=सवृद्धकेशाः, कूर्चादिरसंस्कारादिति भावः। मुक्ताहाविभूषणाः—मुक्ताः=त्यक्ताः, आहाराः यैस्ते; तथा विभूषणाः=व्यपगतभूषाश्च, तपस्विनः=मुनयः, प्रीतिं=मुदं, प्राप्ताः=प्रसन्ना जाताः। श्लेषालङ्कारः। पुत्रजन्मवर्णनप्रसङ्गे प्रस्तुतयोः पौरतपस्विनोः प्रीतिप्रापणरूपैकधर्माभिसम्बन्धात्तुल्ययोगिता च। तयोः सङ्करः ॥११॥

ज्योत्स्ना—और उस समय नगर में बालक वृद्ध सभी नागरिकों ने मौक्तिक हारों से अलंकृत होकर तथा वनों में बढ़े हुए केशों वाले, आहार का त्याग किये हुए एवं आभूषणों से रहित तपस्वियों ने भी प्रसन्नता को प्राप्त किया।

विमर्श—आशय यह है कि पुत्रजन्म के उपलक्ष्य में वीरसेन ने इतना अधिक दान किया कि समस्त नागरिक मुक्ताहारों से अलंकृत हो गये, जिससे वे अत्यन्त प्रसन्न हो गए। साथ ही वनों में निराहार रहने वाले तपस्विगण भी राजकुमार के जन्म के कारण राज्य की भावी उन्नति को दिव्यदृष्टि से ज्ञात कर अत्यधिक प्रसन्न हुए ॥११॥

सूतीगृहे च—

अलंकृतनिशान्तेन तरुणारुणरोचिषा।
प्रदीपानां प्रभा तेन प्रभातेन यथा जिता ॥१२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः— यथा अलंकृतनिशान्तेन तरुणारुणरोचिषा प्रभातेन (प्रदीपानां प्रभा अलं जिता तथैव) तेन प्रदीपानां प्रभा जिता ॥१२॥

कल्याणी—अलमिति । यथा [अलम्-निशान्तेन] निशाया अन्तो येन तेन, प्रभातेन=प्रातःकालेन, तरुणारुणरोचिषा—तरुणेन अरुणस्य=सूर्यसारथेः, रोचिषा=प्रभया. यद्वा [तरुणा+अरुणरोचिषा] अरुणरोचिषा=लोहितकान्तिना. तरुणोपलक्षितेनेति प्रभातविशेषणम् । प्रदीपानां=दीपकानां, प्रभा=दीप्तिः, अलम्=अत्यर्थं, जिता=जिग्ये, तथैव अलंकृतं निशान्तं=गृहं येन तेन, तरुणारुणः=मध्याह्नार्कः, तद्वत् रोचिः=प्रभा यस्य तेन, तेन=नवजातशिशुना, प्रदीपानां=दीपकानां, प्रभा=दीप्तिः, जिता=विजिता । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१२॥

ज्योत्स्ना और सूतिकागृह में, रात्रि का अन्त करने वाले प्रभात के द्वारा तरुण सूर्यसारथि की प्रभा से जिस प्रकार दीपकों की कान्ति पूर्णरूपेण जीत ली जाती है उसी प्रकार गृह को अलंकृत करने वाले तथा मध्याह्नकालीन सूर्य के समान कान्ति वाले उस नवजाव शिशु ने (अपनी कान्ति से गृहस्थित) दीपकों की कान्ति को जीत लिया ॥१२॥

चिरात्पल्लवितं राजवंशेन, समुच्छ्वसितं राज्यश्रिया, प्रीतं प्रणयिभिः, प्रनृत्तं पौरैः, प्रमुदितं बान्धवैः, विद्राणं द्रोहिजनैः, उन्नदितं वियत्यदृष्टमङ्गलवादित्रैः, चित्रायितमतिबहलपरिमलपतत्पुष्पवृष्ट्या, विकसितं दिग्वधूवदनारविन्दैः, विलसितमतिसुरभिसुखस्पर्शसमीरणेन, स्वच्छन्दायितं बन्दीकृतारातिरमणीभिः, आढ्यायितमर्थिलोकेन ॥

कल्याणी—चिरादिति । चिरात्=चिरकालादनन्तरम्, राजवंशेन=नृपकुलेन, पल्लवितं=पुत्ररूपो नवाङ्कुरो धृतः, राज्यश्रिया=राजलक्ष्या, समुच्छ्वसितं—सम्यक्=सुखेन, श्वसितम् । प्रणयिभिः=स्नेहिजनैः, प्रीतम्=अतृप्यत । पौरैः=पुरवासिभिः, प्रनृत्तं=प्रकर्षेण नृत्यमक्रियत । बान्धवैः=बन्धुजनैः, प्रमुदितम्=प्राहृष्यत । द्रोहिजनैः=द्वेषिजनैः, विद्राणं=भाविपराभवादुद्बुद्धम् । वियति=गगने, अदृष्टमङ्गलवादित्रैः=अदृष्टमङ्गलवाद्यैः, उन्नदितं=शब्दायितम् । अतिबहलपरिमलपतत्पुष्पवृष्ट्या—अतिबहलः=समधिकः, परिमलः=सुगन्धः येषां तानि पतन्ति यानि पुष्पाणि=कुसुमानि, तेषां वृष्ट्या=वर्षणेन, चित्रायितं=भक्तिविशेषविन्यासायितम्, दिग्वधूवदनारविन्दैः=दिगङ्गनामुखकमलैः, विकसितं=विकासः दर्शितः । अतिसुरभिसुखस्पर्शसमीरणेन—अतिसुरभिणा=अतिसुगन्धिना, सुखस्पर्शेण समीरणेन=पवनेन, विलसितं=विलासः प्रदर्शितः । बन्दीकृतारातिरमणीभिः—बन्दीकृता या अरातिरमण्यः=शत्रुवनिताः, ताभिः स्वच्छन्दायितं=स्वच्छन्दाभिरिवाचरितम् । अर्थिलोकेन=याचकसमूहेन, आढ्यायितम्—आढ्येन=समृद्धेनेवाचरितम् । व्यङ्गतोपमा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—बहुत समय के पश्चात् राजकुल ने पुत्ररूप नवीन अंकुर को धारण किया, राज्यलक्ष्मी ने सुखपूर्वक श्वास लिया, स्नेही लोग प्रसन्न हो उठे; पुरवासी-गण नाचने लगे, बान्धव-गण हर्षित हो गये, द्वेष रखने वाले लोग (भावी पराभव के डर से) विदीर्ण हो गये, आकाश अदृष्ट मंगलवाद्यों से शब्दायमान हो गया, अत्यधिक सुगन्ध को बिखेरने वाले पुष्पों की वर्षा से (आकाश) चित्रित के समान हो गया, दिगङ्गनाओं का मुखकमल विकसित हो गया, अत्यन्त सुगन्धित एवं स्पर्श में सुखद वायु ने विलास प्रदर्शित किया, बन्दी बनाई गई शत्रुओं की पत्नियों ने स्वच्छन्दता का अनुभव किया (अर्थात् शत्रुओं को बन्दीगृह से मुक्त कर दिये जाने के कारण उनकी पत्नियाँ प्रसन्न होकर स्वच्छन्द हो गईं) और याचक लोग समृद्ध के समान हो गये ॥

किं बहुना—

अवृष्टिनष्टधूलीकमशरन्निर्मलाम्बरम् ।
अपीतमत्तलोकं च जगज्जन्मोत्सवेऽभवत् ॥१३॥

अन्वयः—(किं बहुना, तत्पुत्रस्य) जन्मोत्सवे जगत् अवृष्टिनष्टधूलीकम् अशरन्निर्मलाम्बरम् अपीतमत्तलोकं च अभवत् ॥१३॥

कल्याणी—अवृष्टीति । [तत्पुत्रस्य] जन्मोत्सवे=जन्मोत्सवसमये, जगत्=लोकः, अवृष्टिनष्टधूलीकम्—अवृष्ट्या=वर्षणाभावेनापि नष्टा=प्रनष्टा. धूली=पांसवः यत्र तादृशम्, अशरन्निर्मलाम्बरम् - अशरदा=शरदभावेनापि, निर्मलं=स्वच्छम्, अम्बरम्=आकाशः यत्र तादृशम्, अपीतमत्तलोकम्—अपीतेन=मदिरापानाभावेनापि, मत्ताः=क्षीबाः, लोकाः=जनाः यत्र तादृशं, च अभवत्=जातम् । वृष्ट्यादीनां कारणानामभावेऽपि धूलिनाशादिकार्योत्पत्त्या विभावनाऽलङ्कारः । सा च जन्मोत्सवरूपकारणान्तरस्योक्तत्वादुक्तनिमित्ता । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; (उस पुत्र के) जन्मोत्सव में संसार वर्षा न होने पर भी धूलि से रहित हो गया, शरत् काल के बिना ही आकाश स्वच्छ हो गया और लोग मदिरापान के बिना ही मत्त (मदयुक्त) हो गये ॥१३॥

भूते च विभवभूयिष्ठे षष्ठीजागरणव्यतिकरे, अतिक्रान्तेषु च सूतकदिवसेषु नामकरणोचितेऽह्नि 'न लास्यति धर्मधनान्येष साधुभ्यः' इति ब्राह्मणाः, प्रविश्य तस्य 'नलः' इति नाम प्रतिष्ठापयामासुः ॥

कल्याणी—भूत इति । विभवभूयिष्ठे—विभवः=ऐश्वर्यं, भूयिष्ठः=अतिप्रचुरः यत्र तादृशे, षष्ठीजागरणव्यतिकरे—षष्ठी=पुत्रजन्मदिवसात् षष्ठे दिने या षष्ठीदेवीपूजा, तत्र यत् जागरणं=नवजातशिशोः सूतिकागृहस्य च रक्षार्थं जागरः; तद् व्यतिकरे=तत्कृत्ये, भूते=निर्वृत्ते, सूतकदिवसेषु=जननाशौचदिनेषु, दशस्विति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावः। च अतिक्रान्तेषु=व्यतीतेषु, नामकरणोचिते=नामकरणयोग्ये, अह्नि=दिवसे, ब्राह्मणाः=विप्राः, प्रविश्य=आगत्य, 'न एष=अयमर्भकः, साधुभ्यः=सत्पुरुषेभ्यः, धर्मधनानि=धर्मसम्पत्ती, लास्यति=ग्रहीष्यति' इति सामुद्रिकलक्षणाज्जन्मलग्नाद्वा विज्ञाय तस्य=पुत्रस्य, 'नलः' इति नाम=अभिधानं, प्रतिष्ठापयामासुः=निश्चिक्युः ॥

ज्योत्स्ना—ऐश्वर्य से समन्वित षष्ठी (पुत्रजन्म के छठे दिन होने वाली षष्ठी देवी की पूजा में नवजात शिशु और सूतिकागृह के रक्षार्थ किया जाने वाला) जागरण समाप्त हो जाने पर एवं सूतकदिनों के व्यतीत हो जाने पर नामकरण के लिए उपयुक्त दिन में ब्राह्मणों ने आकर "सत्पुरुषों के धर्म और सम्पत्ति का ग्रहण यह नहीं करेगा" इस प्रकार (सामुद्रिक लक्षणों अथवा उसके जन्मलग्नों से जानकर) उसका "नल" नाम निश्चित किया अर्थात् रखा ॥

क्रमेण च चतुरुदधिवेलावनविकासोचितकीर्तिकुन्दकन्दलैर्विश्वविश्वंभराभिलम्भलम्पाकैः कुमारसेवकैरिव सकलचक्रवर्तिचिह्नैरलंकृतावयवो विस्तरजटालवाल, कल्पपादपाङ्कुर इव वर्धितुमारभत ॥

कल्याणी—क्रमेणेति। क्रमेण च=क्रमशश्च, चतुरुदधिवेलावनविकासोचितकीर्तिकुन्दकन्दलः—चतुरुदधिवेलासु=चतुःसमुद्रतटभूमिषु, यानि वनानि=काननानि, तेषां विकासोचिता=विकासयोग्या, याः कीर्तयः=यशांसि, तदेव कुन्दाः=कुन्दलताः, तेषां कन्दलैः=मूलैः, इति परम्परितरूपकम्। विश्वविश्वम्भराभिलम्भलम्पाकैः—विश्वविश्वम्भराभिलम्भः=समस्तपृथिवीप्राप्तिः, तस्य लम्पाकैः=सूचकैरित्यर्थः, पक्षे—लोलुपैः, कुमारसेवकैरिव=युवराजानुचरैरिव, सकलचक्रवर्तिचिह्नैः=रेखाकृतैश्चक्रचापकुलिशादिरूपैः राजचिह्नैः, अलंकृतावयवः=भूषिताङ्गः, विस्तरजटालवालः—विस्तरेण जटालाः=स्वभावजटाबन्धाः, वालाः=कचाः यस्य सः, पक्षे—विस्तरेण जटाः=मूलानि, आलवाले यस्य सः, कल्पपादपाङ्कुर इव=कल्पवृक्षाङ्कुर इव, वर्धितुमारभत। उपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और क्रमशः चारो समुद्रों की तटभूमि पर स्थित वनों के विकासयोग्य कीर्तिरूपी कुन्दलता के कन्दलों से सम्पूर्ण पृथ्वी की प्राप्ति के सूचक युवराज के लोलुप अनुचरों के समान चक्रवर्तित्व के समस्त (चक्र, चाप, कुलिश आदि) राजचिह्नों से अलंकृत शरीर वाले, स्वाभाविक रूप से जटाओं में बद्ध केशों वाले (उस बालक ने) कल्पवृक्ष के अंकुर के समान बढ़ना प्रारम्भ किया।

आशय यह है कि चक्रवर्ती सम्राट के लिए उपयुक्त समस्त राचचिह्नों से परिपूर्ण वह बालक धीरे-धीरे बड़ा होने लगा ॥

विरचितचूडाकरणादिसंस्कारक्रमश्च प्राप्ते विद्याग्रहणकाले निमित्तमात्रीकृतोपाध्यायः स्वयमेव समस्तानवद्यविद्याम्भोनिधेः परं पारमवाप ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—विरचितेति। विरचितचूड़ाकरणादिसंस्कारक्रमः—विरचितः=सम्पादितः, चूड़ाकरणादिसंस्कारक्रमः यस्य स तथोक्तः, विद्याग्रहणकाले=विद्याऽध्ययनसमये, प्राप्ते=समायाते, निमित्तमात्रीकृतोपाध्यायः—निमित्तमात्रीकृत उपाध्यायः=आचार्यः यस्य सः, स्वयमेव=आत्मनैव, समस्तानवद्यविद्याम्भोनिधेः=सकलप्रशस्तविद्यासिन्धोः, परं=सर्वथा, पारमवाप=पारंगतो बभूव ॥

ज्योत्स्ना—चूड़ाकरणादि संस्कारों के क्रमशः सम्पादित हो जाने के पश्चात् विद्याध्ययन का अवसर उपस्थित होने पर निमित्त मात्र के लिए आचार्य का अवलम्बन लेकर (वह) स्वयं ही समस्त पवित्र विद्याओं के समुद्र को पूर्ण रूप से पार कर लिया अर्थात् समस्त विद्याओं में पूर्णतया पारंगत हो गया ॥

तथाहि—

प्रबुद्धबुद्धिर्बौद्धे, सविशेषशेमुषीको वैशेषिके, विख्यातः सांख्ये, रञ्जितलोको लोकायते, प्राप्तप्रभ प्राभाकरे, प्रतिच्छन्दकश्छन्दसि, अनल्पविकल्पः कल्पज्ञाने, शिक्षाक्षमः शिक्षायाम्, अकृतापशब्दः शब्दशास्त्रे, अभियुक्तो निरुक्ते, सज्जो ज्योतिषि, तत्त्ववेदी वेदान्ते, प्रसिद्धः सिद्धान्तेषु, स्वतन्त्रस्तन्त्रीवाद्येषु, पटुः पटहे, अप्रतिमल्लो झल्लरीषु, निपुणः पवणेषु, प्रवीणो वेणुषु, चित्रकृच्चित्रविद्यायाम्, उद्दामः कामतन्त्रे, कुशलः शालिहोत्रे, श्रेष्ठः काष्ठकर्मणि' सावलेपो लेप्ये, पण्डितः कोदण्डे, शौण्डः शारिषु, गुणवान्गणिते, बहुलो बाहुयुद्धेषु, चतुरश्चतुरङ्गद्यूतक्रीडायाम्, उपदेशको देशभाषासु, अलौकिको लोकज्ञाने ॥

कल्याणी—प्रबुद्धेति। बौद्धे=बौद्धदर्शने, प्रबुद्धबुद्धिः—प्रबुद्धा बुद्धिर्यस्य स तथोक्तः, वैशेषिके=वैशेषिकदर्शने, सविशेषशेमुषीकः—सविशेषा=विशिष्टा, शेमुषी=बुद्धिः यस्य स तथोक्तः, सांख्ये=सांख्यदर्शने, विख्यातः=प्रसिद्धः, लोकायते=चार्वाकदर्शने, रञ्जितलोकः—रञ्जितः=सन्तोषितः लोको येन स तथोक्तः, प्राभाकरे=प्रभाकरनाम्ना विदुषा प्रवर्तिते मीमांसादर्शनस्य विचारधाराविशेषे, प्राप्तप्रभः—प्राप्ता प्रभा=प्रतिभा येन स तथोक्तः, छन्दसि=छन्दःशास्त्रे, प्रतिच्छन्दकः—प्रतिच्छन्दयति=सर्वथा नूतनविधच्छन्दांसि कल्पयतीति तथोक्तः, प्रबुद्धप्रतिभ इति यावत्। कल्पज्ञाने—कल्पः=पितृदेवताद्याराधनविधिशास्त्रं, तस्य ज्ञाने, अनल्पविकल्पः—नाल्प इत्यनल्पः=महान्, विकल्पः—विशेषेण कल्पः=समर्थः, शिक्षायां=वर्णोच्चारणविधिबोधिका शिक्षा तस्यां, शिक्षाक्षमः=अध्यापनसमर्थः, शब्दशास्त्रे=व्याकरणे, अकृतापशब्दः—न कृतः=नोच्चारितः, अपशब्दः=व्याकरणनियमविरुद्धोऽशुद्धशब्दो येन स तथोक्तः, व्याकरणनियमानुकूलशुद्धशब्दोच्चारक इत्यर्थः। व्याकरणशास्त्रे निष्णातो जात इति भावः। निरुक्ते—वेदगतविषमशब्दानां निर्वचनपरा व्याख्या निरुक्तं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मिन्, अभियुक्तः=सुविज्ञः, ज्योतिषि=ज्योतिःशास्त्रे, सज्जः=पूर्णतां गतः, वेदान्ते, तत्त्ववेदी=यथार्थसिद्धान्तवेत्ता, सिद्धान्तेषु सिद्धः=निष्पन्नः, अन्तः=निर्णयः येषां ते सिद्धान्तास्तेषु, तज्ज्ञानेष्वित्यर्थः। प्रसिद्धः=विख्यातः, तन्त्रीवाद्येषु=वीणावाद्येषु, तद्-वादन इत्यर्थः। स्वतन्त्रः=पूर्णतो निष्णात इत्यर्थः, पटहे=दुन्दुभौ, तद्वादन इत्यर्थः। पटुः=निपुणः, झल्लरीषु=झर्झरेषु वाद्यविशेषेषु, अप्रतिमल्लः=अनुपमः, पणवेषु=पण-वाख्यवाद्यविशेषेषु, निपुणः=कुशलः, वेणुषु=वंशीषु, प्रवीणः=पटुः, चित्रविद्यायां चित्रकृत्=आश्चर्यकरः, कामतन्त्रे=कामशास्त्रे, उद्दामः=प्रकाण्डः, शालिहोत्रे=अश्वविद्यायां, कुशलः, काष्ठकर्मणि=काष्ठकलायां श्रेष्ठः, लेप्ये=रञ्जनकलायां, सावलेपः=साहंकारः, प्राज्ञतां गत इति यावत्। कोदण्डे=धनुर्विद्यायां, पण्डितः, शारिषु=द्यूतक्रीडासु, शौण्डः=प्रवीणः, गणिते=गणितविद्यायां, गुणवान्, बाहुयुद्धेषु बहुलः=समर्थः, चतुरङ्गद्यूतक्रीडायां—चतुरङ्गद्यूतंद्यूत विशेषः, तस्य क्रीडायां चतुरः=कुशलः, देशभाषासु=विभिन्नदेशानां भाषासु, उपदेशकः=शिक्षकः, लोकज्ञाने=लौकिकज्ञाने, अलौकिकः=लोकोत्तरः जातः॥

ज्योत्स्ना जैसे कि, (वह नल) बौद्ध दर्शन में प्रबुद्ध बुद्धि वाला, वैशेषिक-दर्शन में विशिष्ट बुद्धि रखने वाला, सांख्य दर्शन में विशिष्ट ख्याति वाला, लोकायत (चार्वाक) दर्शन में लोगों को प्रभावित करने वाला, प्राभाकर (मीमांसा) दर्शन में प्राप्त प्रतिभा वाला, छन्दःशास्त्र में सर्वथा नवीन प्रकार के छन्दों की कल्पना करने वाला, कल्पशास्त्र अर्थात् पितरों-देवताओं आदि के आराधन-विधान से सम्बन्धित शास्त्र के ज्ञान में पूर्णतया समर्थ, शिक्षा (वर्णों की उच्चारणविधि को बताने वाले) शास्त्र के अध्यापन में समर्थ, शब्दशास्त्र (व्याकरण शास्त्र) में अपशब्दों अर्थात् व्याकरणविरुद्ध शब्दों का उच्चारण न करने वाला, निरुक्त (वेदगत विषम शब्दों की निर्वचनपरक व्याख्या करने वाले) शास्त्र का पूर्ण जानकार, ज्योतिष शास्त्र में सज्जित अर्थात् पूर्णता को प्राप्त करने वाला, वेदान्त शास्त्र के तत्त्वों (यथार्थ सिद्धान्तों) को जानने वाला; सिद्धान्तों के ज्ञान में विख्यात, वीणावादन में स्वतन्त्र अर्थात् पूर्णतया निष्णात, पटह (दुन्दुभि) बजाने में निपुण, झल्लरीनामक वाद्यविशेष के वादन में अनुपम, पणव बजाने में कुशल, वेणु (वंशी) बजाने में पटु, चित्रविद्या में आश्चर्यकारक, कामशास्त्र में प्रकाण्ड, अश्वविद्या में कुशल, काष्ठ-कला में श्रेष्ठ, रञ्जन (रंगने की) कला में अभिमानी, धनुर्विद्या में पण्डित, द्यूत-विद्या (जुआ खेलने) में दक्ष, गणितविद्या में गुणवान, बाहुयुद्ध में समर्थ, चतुरङ्ग-नामक विशेष प्रकार की द्यूतक्रीड़ा में चतुर, विभिन्न देशों की भाषाओं का शिक्षक (और) लौकिक ज्ञान में अलौकिक हो गया॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं बहुना—

रसे रसायने ग्रन्थे शस्त्रे शास्त्रे कलास्वपि ।
नले न लेभिरे लोकाः प्रमाणं निपुणा अपि ॥१४॥

अन्वयः—(किं बहुना) रसे रसायने ग्रन्थे शस्त्रे शास्त्रे कलासु अपि निपुणाः अपि लोकाः नले प्रमाणं न लेभिरे ॥१४॥

कल्याणी—रस इति । रसे—रसः पारदादिस्तत्र, रसायने—रसायनं जरामरणापह औषधयोगस्तत्र, ग्रन्थे—ग्रन्थः काव्यशास्त्रादिरचना तत्र, शस्त्रे—शस्त्रं खड्गादि तत्र, शास्त्रे—शास्त्रं व्याकरणतर्कादि तत्र, कलासु अपि—कला गीतनृत्यादयः तत्रापि च, निपुणाः=पारङ्गताः, अपि लोकाः=जनाः, नले=राज्ञि, प्रमाणं=तत्तद्विषयाणामियत्तां, न लेभिरे=न प्रापुः । तेष्वेकैकस्यापि विषयस्य विशेषज्ञास्तत्तद्विषयाणां नले कियज्ज्ञानं वर्तत इति प्रमातुं न पारयन्तीति भावः । सम्बन्धेऽसम्बन्धरूपातिशयोक्तिः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१४॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; रस (पारदादि), रसायन (रोगनाशक औषध आदि), ग्रन्थ (काव्यशास्त्रादि रचना), शस्त्र (खड्ग आदि), शास्त्र (व्याकरण-तर्क आदि) एवं कलाओं (गीत-नृत्य आदि) में पारंगत लोग भी नल में प्रमाण (तत्तत् विषयक ज्ञान की सीमा) को नहीं पा सके ॥

क्रमेण शैशवमतिक्रामतोऽस्य सेवकैरिवाङ्गावयवैरप्यनुवृत्तिः कृता ॥

कल्याणी- क्रमेणेति । क्रमेण=क्रमशः, शैशवं=बालभावम्, अतिक्रामतः=व्यपगमयतः, अस्य=नलस्य, सेवकैरिव=अनुचरैरिव, अङ्गावयवैः=देहाङ्गैरपि, अनुवृत्तिः=अनुवर्तनं, कृता=विहिता, शैशवमतिक्रम्य तारुण्यमभिगच्छतो नलस्य शरीराङ्गान्यपि तारुण्यं भेजिर इति भावः । सेवकैरिवेत्यत्रोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—क्रमशः ! बाल्यावस्था को पार करते हुए इस नल के शरीरावयवों ने भी अनुचरों के समान ही उसका अनुगमन किया ।

आशय यह है कि बाल्यावस्था का परित्याग कर तरुण होते नल के शरीर के विभिन्न अङ्ग भी तरुण हो गये ॥

तथाहि—

श्रवणासक्तस्य लोचनद्वयमपि श्रवणसङ्गतिमकरोत् ॥

कल्याणी—श्रवणेति । श्रवणासक्तस्य—श्रवणे=शास्त्राकर्णने, आसक्तस्य=अनुरक्तस्य नलस्य, लोचनद्वयमपि=नेत्रयुगलमपि, श्रवणसङ्गतिं=कर्णसङ्गतिम्, अकरोत्=चकार । नेत्रद्वयं कर्णपर्यन्तविस्तृतं बभूवेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि; शास्त्रों को सुनने में आसक्त उस नल के दोनों नेत्रों ने कानों की संगति की अर्थात् दोनों नेत्र कर्णपर्यन्त विस्तृत हो गये ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्नतस्वभावस्य नासावंशोऽप्युन्नतिं जगाम ॥

कल्याणी—उन्नतेति । उन्नतस्वभावस्य—उन्नत.=उच्चः, स्वभावः=प्रकृति यस्य तस्य नलस्य, नासावंशोऽपि=नासिकाग्रभागोऽपि, उन्नतिं जगाम=उच्चो बभूव ॥

ज्योत्स्ना—उच्च स्वभाव वाले उसके नासिका का अग्रभाग भी ऊँचा हो गया ॥

वक्रोक्तिकुशलस्य केशकलापोऽपि वक्रतां भेजे ॥

कल्याणी—वक्रोक्तीति । वक्रोक्तिकुशलस्य—वक्रोक्तौ कुशलः=निपुणः तस्य नलस्य, केशकलापोऽपि=कचसमूहोऽपि, वक्रतां=कौटिल्यं, भेजे=अवाप ॥

ज्योत्स्ना—वक्रोक्ति में कुशल उसके केशकलाप भी वक्र अर्थात् घुंघुराले हो गये ॥

शङ्खनिर्मलगुणस्य कण्ठोऽपि शङ्खाकारमधारयत् ॥

कल्याणी—शंखेति । शंखनिर्मलगुणस्य—शङ्खवत् निर्मला=उज्ज्वला, गुणा यस्य तस्य नलस्य, कण्ठः=ग्रीवाऽपि, शङ्खाकारं=शङ्खाकृतिम्, अधारयत्=धृतवान् ॥

ज्योत्स्ना—शंख के समान निर्मल गुणों वाले उसका कण्ठ भी शंख की आकृति वाला हो गया ॥

पृथुलमतेरंसकूटद्वयमपि पृथुलमभूत् ।

कल्याणी—पृथुलेति । पृथुला=विस्तृता, मतिः=बुद्धिः यस्य तस्य नलस्य, अंसकूटद्वयमपि=स्कन्धशिखरद्वयमपि, पृथुलं=विस्तृतम्, अभूत्=जातम् ॥

ज्योत्स्ना—विस्तृत बुद्धि वाले उस नल के दोनों कन्धों का शिखरभाग भी विस्तृत हो गया अर्थात् उसके कन्धे चौड़े हो गये ॥

प्रमाणवेदिनो वक्षःस्थलमपि सुप्रमाणमजायत ॥

कल्याणी प्रमाणेति । प्रमाणवेदिनः—प्रमाणं=तर्कशास्त्रं वेत्तीति प्रमाणवेदी, तस्य नलस्य, वक्षःस्थलमपि=उरःस्थलमपि, सुप्रमाणं—सुष्ठु प्रमाणं=विस्तारः यस्य तादृशं, विशालमित्यर्थः । अजायत=अभवत् ॥

ज्योत्स्ना—तर्कशास्त्र को जानने वाले उस नल का वक्षःस्थल भी सुप्रमाण अर्थात् अत्यन्त विशाल हो गया ॥

मध्यस्थस्य तस्य रोमराजिरपि मध्ये स्थिता शुशुभे ॥

कल्याणी—मध्येति । मध्यस्थः=अकृतपक्षपातः तस्य नलस्य, रोमराजिरपि=रोमश्रेणिरपि, मध्ये=उदरे, स्थिता शुशुभे=शोभामवाप ॥

ज्योत्स्ना—मध्यस्थ अर्थात् पक्षपात न करने वाले उस नल की रोमराजि भी उदर के मध्य में शोभायमान हो उठी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुवृत्तस्य बाहूरुयुगलमपि सुवृत्तमभवत् ॥

कल्याणी—सुवृत्तस्य—सुष्ठु वृत्तम्=आचारः यस्य तस्य नलस्य, बाहूरुयुगलं=भुजयुगलमूरुयुगलं चापि, सुवृत्तं=सुवर्तुलम्, अभवत्=जातम् ॥

ज्योत्स्ना—सुन्दर वृत्त (आचरण) वाले उस नल की दोनों भुजायें तथा दोनों ऊरुयें (जंघायें) भी सुवृत्त (पूर्णतया वर्तुलाकार) अर्थात् सुडौल हो गईं ॥

गम्भीरप्रकृतेर्नाभिरपि गम्भीरा व्यराजत ॥

कल्याणी—गम्भीरेति। गम्भीरप्रकृतेः—गम्भीरा प्रकृतिर्यस्य तस्य, अलक्ष्यकोपप्रसादस्येत्यर्थः। नलस्य नाभिरपि गम्भीरा=निम्ना, व्यराजत=अशोभत ॥

ज्योत्स्ना—गम्भीर प्रकृति (स्वभाव) वाले उस नल की नाभि भी गम्भीर अर्थात् गहरी हो गयी ॥

पल्लवसुकुमारहृदयस्य हस्तचरणैरपि पल्लवसौकुमार्यमङ्गीकृतम् ॥

कल्याणी—पल्लवेति। पल्लवसुकुमारहृदयस्य—पल्लववत्=किसलयवत्, सुकुमारं=कोमलं, हृदयं=चेतः यस्य तस्य नलस्य, हस्तचरणैरपि=करपादैरपि, पल्लवसौकुमार्यं—पल्लववत् सौकुमार्यं=कोमलत्वम्, अङ्गीकृतं=स्वीकृतम् ॥

ज्योत्स्ना—पल्लवों के समान कोमल हृदय वाले उस नल के हाथों तथा पैरों ने भी पल्लवसदृश कोमलता को अंगीकार कर लिया अर्थात् अत्यन्त कोमल हो गये ॥

अथ किं बहुना—

सोष्णीषमूर्धा ध्वजचक्रपाणिरूर्णाङ्कविस्तीर्णललाटपट्टः।
सुस्निग्धमूर्तिः ककुदुन्नतांसः कस्यैष न स्यान्नयनाभिरामः ॥१५॥

अन्वयः—सोष्णीषमूर्धा ध्वजचक्रपाणिः ऊर्णाङ्कविस्तीर्णललाटपट्टः सुस्निग्धमूर्तिः ककुदुन्नतांसः एषः कस्य नयनाभिरामः न स्यात् ॥१५॥

कल्याणी—सोष्णीषेति। सोष्णीषमूर्धा—उष्णीषम्=उष्णीषाकारः शारीरिकलक्षणविशेषः, तेन सह वर्तत इति सोष्णीषः मूर्धा=शिरः यस्य स तथोक्तः, ध्वजचक्रपाणिः—ध्वजः=ध्वजाकारं रेखाकृतं लक्षणम्, चक्रं=चक्राकारं रेखाकृतं लक्षणं च पाणौ=करे यस्य स तथोक्तः; ऊर्णाङ्कविस्तीर्णललापट्टः—ऊर्णा=भ्रूमध्ये आवर्ताकारं रोममयं चिह्नम्, 'ऊर्णा मेषादिलोम्नि स्यादावर्ते चान्तरा भ्रुवोः' इत्यमरः। ऊर्णारूपोऽङ्कः=चिह्नं यत्र तादृशं विस्तीर्णं च ललाटपट्टं=भालफलकं यस्य स तथोक्तः, सुस्निग्धमूर्तिः—सुष्ठु स्निग्धा=सौम्या, मूर्तिः=आकृतिः यस्य स तथोक्तः, ककुदुन्नतांसः—ककुद्=वृषभस्कन्धः, तद्वत् उन्नतौ=उच्चौ, अंसौ=स्कन्धौ यस्य स

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाविधः, एषः=अयं नलः, कस्य=कस्य जनस्य, नयनभिरामः=नेत्रानन्दकरः, न स्याद्=न भवेत्, अर्थात् सर्वस्यापि नयनाभिरामः। 'ककुदुन्नतांसः' इत्यत्रोपमा। इन्द्रवज्रा वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।' इति ॥१५॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; पगड़ी से युक्त शिर, ध्वज तथा चक्र के चिह्न से चिह्नित हाथ, ऊर्णा (भौंहों के मध्य की भ्रमरी) से चिह्नित विशाल भालपट्ट अर्थात् ललाट, सुस्निग्ध अर्थात् सुन्दर आकृति तथा ककुद अर्थात् बैलों के कन्धों के समान उन्नत कन्धों वाला यह नल किसकी आँखों के लिए आनन्ददायक नहीं है ? अर्थात् सबकी आँखों के लिए आनन्ददायक है ॥१५॥

अपि च—

आस्यश्रीः संनिभेन्दोः समदवृषककुद्बन्धुरः स्कन्धसंधिः
स्निग्धा रुक्कुन्तलानामनुहरति दृशोर्द्वन्द्वमिन्दीवरस्य।
स्थानं वक्षोऽपि लक्ष्म्याः स्पृशति भुजयुगं जानुनी वृत्तरम्ये
जङ्घे, क्षामोऽवलग्नः, किमु निषधपतेः श्लाघनीयं न तस्य ॥१६॥

अन्वयः आस्यश्रीः इन्दोः सन्निभा, स्कन्धसन्धिः समदवृषककुद्बन्धुरः कुन्तलानां रुक् स्निग्धा, दृशोः द्वन्द्वम् इन्दीवरस्य अनुहरति, वक्षः अपि लक्ष्म्याः स्थानम्, भुजयुगं जानुनी स्पृशति, जंघे वृत्तरम्ये, अवलग्नः क्षामः, तस्य निषधपतेः किमु न श्लाघनीयम् ॥१६॥

कल्याणी—आस्यश्रीरिति। आस्यश्रीः=मुखशोभा, इन्दोः=चन्द्रस्य, संनिभा=सदृशी, स्कन्धसन्धिः—स्कन्धयोः सन्धिः=सन्धानम्, समदवृषककुद्बन्धुरः—समदः=मत्तः, यः वृषः=वृषभः, तस्य ककुद्=अंसकूटः, तद्वद् बन्धुरः=मनोहरः, कुन्तलानां=केशानां, रुक्=कान्तिः, स्निग्धा=मसृणा, दृशोः=नयनयोः, द्वन्द्वं=युगलम्, इन्दीवरस्य=कमलस्य, रुक्, अनुहरति=अनुकरोति, तत्सदृशमित्यर्थः। वक्षः=वक्षःस्थलमपि, लक्ष्म्याः=कमलायाः, स्थानम्=आवासस्थलम्, भुजयुगं=बाहुयुगलं, जानुनी स्पृशति, आजानुबाहुर्नल इत्यर्थः। जङ्घे वृत्तरम्ये—वृत्ते=वर्तुले, रम्ये=मनोहरे च, अवलग्नः=कटिप्रदेशः, क्षामः=कृशः, तस्य निषधपतेः=निषधाधीश्वरस्य नलस्य, किमु न श्लाघनीयं=प्रशंसनीयम्, अर्थात् सर्वं श्लाघनीयम्। उपमाऽलङ्कारः। स्रग्धरा वृत्तम् ॥१६॥

ज्योत्स्ना—और भी; (उसके) मुख की शोभा चन्द्रमा के समान है, कन्धों की सन्धियाँ (जोड़) मतवाले साँड़ के ककुद के समान मनोहर हैं, केशों की कान्ति सुन्दर है, दोनों आंखें नीलकमलों की कान्ति का अनुकरण करने वाली हैं, वक्षःस्थल लक्ष्मी का आवासस्थान है, भुजायें घुटनों का स्पर्श करती हैं अर्थात् वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आजानुबाहु है, जङ्घायें गोल एवं मनोहर हैं और मध्यभाग अर्थात् कमर का भाग भी कृश (पतला) है। उस निषधनरेश का क्या प्रशंसनीय नहीं है? अर्थात् उसके शरीर के समस्त अंग अत्यन्त ही प्रशंसनीय हैं ॥१६॥

अस्ति च तस्य नरपतिसूनोः समानशीलवयोविद्यालङ्कारकान्तिकलापपरिपूर्णदेहः शरीरमात्रद्वितीयोऽप्यद्वितीयहृदयमेकं जीवितमपर उच्छ्वासः सालङ्कायनसूनुः श्रुतशीलो नाम मन्त्री मित्रं च ॥

कल्याणी—अस्तीति। नरपतिसूनोः—नरपतिः=वीरसेनः, तस्य सूनोः=पुत्रस्य, तस्य=नलस्य च, समानशीलवयोविद्यालङ्कारकान्तिकलापपरिपूर्णदेहः—समानेन=अनुकूलेन, शीलवयोविद्यालङ्कारकान्तिकलापेन=स्वभावावस्थाविद्याभूषणकान्तिनिचयेन, परिपूर्णः=सम्पन्नः, देहः=कायः यस्य सः, शरीरमात्रद्वितीयः=शरीरमात्रेण भिन्नोऽपि, अद्वितीयहृदयम्=अभिन्नहृदयम्, एकं जीवितं=जीवनमस्तित्वं वा, अपरः—न परो यस्मादित्यपरः=उत्कृष्टः, उच्छ्वासः=प्राणः, सालङ्कायनस्य सूनुः=पुत्रः, श्रुतशीलो नाम मन्त्री=सचिवः, मित्रं=सखा, चास्ति ॥

ज्योत्स्ना—राजा वीरसेन के उस पुत्र के समान ही शील (स्वभाव), अवस्था, विद्या, आभूषण तथा कान्तिकलाप से सम्पन्न शरीर वाला, शरीरमात्र से अलग होते हुए भी अभिन्न हृदय वाला अर्थात् हृदय से एक, प्राण से एक होने के साथ-साथ ही श्वास से भी अभिन्न सालंकायन का श्रुतशीलनामक पुत्र (उसका) मन्त्री तथा मित्र है ॥

एकदा तु पूर्वदिग्वधूकुङ्कुमपङ्कपल्लवितवदनायमाने निरुद्धान्धतमसे सौगन्धिकबन्धुनि बन्धूककुसुमारुणे वियति तरतीव तरुणतरे तरणिमण्डले, मण्डयति कुसुम्भकुसुमकेसरप्रकरायमाणे गगनाङ्गणमम्भोजमुकुलनिद्रामुषि रोचिषां चये, चलिते च विचरितुमुपवनतरुराजिकर्णोत्पले निद्राविरामविधुतपक्षे पक्षिकुले, कृतप्राभातिककर्मणः सभाङ्गणमण्डपमध्यवर्तिनो दत्तसेवावसरस्य राज्ञः प्रविष्टे मन्त्रिणि सालङ्कायने प्रणामपर्यस्तकर्णोत्पलधवलितसभाङ्गणे यथासनमुपविष्टप्रस्तुतसेवालापरञ्जितराजनि राजन्यचक्रे प्रक्रान्ते शास्त्रीयविनोदे, श्रुतशीलेन सममन्यैश्च क्रीडासहायैरनुचरैरनुगम्यमानो नलः सेवासुखमनुभवितुमागतवान् ॥

कल्याणी—एकदेति। 'सौगन्धिकबन्धुनि' इति पदमत्र सप्तम्यन्तं नपुंसके प्रयुक्तं वियद्विशेषणमिति बोध्यम्। एकदा=एकस्मिन् काले तु, पूर्वदिग्वधूकुंकुमपंकपल्लवितवदनायमाने—पूर्वा दिगेव वधूः=अङ्गना, तस्या यत् कुङ्कुमपङ्केन=केसरद्रवेण, पल्लवितं=रञ्जितं, वदनं=मुखं, तद्वदाचरतीति तस्मिन्, निरुद्धान्धतमसे—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निरुद्धम्=अवबाधितम्, अन्धतमसं=प्रगाढं तमः येन तस्मिन्, बन्धूककुसुमारुणे—बन्धूककुसुमवत् अरुणे=रक्ते, तरुणतरे=नवोदिते, तरणिमण्डले=सूर्यमण्डले, सौगन्धिकबन्धूनि—सौगन्धिकानि=नीलकमलानि, बन्धवः=मित्राणि यस्य तादृशे, तद्वन्नील इत्यर्थः। वियति=गगने, तरतीव=प्लवमान इव [इत्युत्प्रेक्षा], तरुणारुणरविमण्डलं नीलगगनरूपे नीलकमलाकुलसरोवरे आकण्ठमग्नायाः पूर्वदिगङ्गनायाः कुङ्कुमपङ्कपल्लवितं प्लवमानं मुखमिव प्रतीयते स्मेति भावः। कुसुम्भकुसुमकेसरप्रकरायमाणे—कुसुम्भकुसुमानां केसरप्रकरः=केसरपुञ्ज इवाचरतीति तस्मिन्, अम्भोजमुकुलनिद्रामुषि—अम्भोजमुकुलानां=कमलकलिकानां, निद्रां मुष्णाति=अपहरतीति तस्मिन्; रोचिषां चये=किरणानां समूहे, गगनाङ्गणं=वियत्प्राङ्गणं, मण्डयति=अलंकुर्वति, उपवनतरुराजिकर्णोत्पले—उपवने=उद्याने, याः तरुराजयः=पादपश्रेणयः, तासां कर्णोत्पले=अवतंसत्वेन कर्णारोपितकमलभूते, निद्राविरामविधुतपक्षे—निद्रायाः विरामेन=अवसानेन, विधुता—विशेषेण धुताः=संक्षुब्धाः, पक्षाः=पुंखाः येन तस्मिन्, पक्षिकुले=खगवृन्दे, विचरितुं=विहर्तुं, चलिते=प्रस्थिते च, कृतप्राभातिककर्मणः—कृतं=निर्वृत्तं, प्राभातिकं कर्म=प्रभातसम्बन्धि नित्यकृत्यं येन तस्य, सभाङ्गणमण्डपमध्यवर्तिनः=सभाङ्गणमध्ये स्थितस्य, दत्तसेवावसरस्य=दत्तः सेवायाः अवसरो येन तस्य, राज्ञः=वीरसेनस्य, सालङ्कायने=तदाख्ये, मन्त्रिणि=अमात्ये, प्रविष्टे=समागते, प्रणामपर्यस्तकर्णोत्पलधवलितसभाङ्गणे—प्रणामे=प्रणामावसरे, पर्यस्तैः=इतस्ततो विकीर्णैः, कर्णोत्पलैः=श्रवणश्वेतकमलैः, धवलितं=शुभ्रीकृतं, सभाङ्गणं=सभाप्राङ्गणं येन तस्मिन्, यथासनमुपविष्टप्रस्तुतसेवालापरञ्जितराजनि—आसनस्यानतिक्रमेण यथासनमुपविष्टे, प्रस्तुतसेवालापेन=प्रासङ्गिकसेवाविषयकवार्तालापेन, रञ्जितः=प्रसादितः राजा येन तस्मिन्, राजन्यचक्रे=आश्रितनृपवृन्दे, शास्त्रीयविनोदे=शास्त्रविषयकमनोविनोदे, प्रक्रान्ते=प्रारब्धे, श्रुतिशीलेन=श्रुतिशीलनाम्ना मित्रेण मन्त्रिणा च, समं=सह, अन्यैश्च=अपरैश्च, क्रीडासहायैः=क्रीडासहयोगिभिः, अनुचरैः=परिजनैः, अनुगम्यमानः=अनुनीयमानः, नलः सेवासुखम्—सेवा=सान्निध्यं, पितुरिति भावः। तस्याः सुखम्, पितृसान्निध्यजन्यानन्दमित्यर्थः। अनुभवितुम्=आस्वादयितुम्, आगतवान्=आगच्छत्॥

ज्योत्स्ना—एक समय पूर्व दिशारूपी वधू के कुंकुमलेप से रञ्जित मुख के समान प्रतीत होने वाले, अन्धकार को विनष्ट करने वाले, बन्धूकपुष्प के समान रक्त वर्ण वाले और नीलकमलों के मित्र नवोदित सूर्यमण्डल के आकाश में तैरते-से रहने पर; कुसुम्भपुष्पों के प्रसरित होते हुए केसरपुञ्ज के समान कमलकलिकाओं की निद्रा का अपहरण करने वाली किरणों से आकाशाङ्गण के अलंकृत हो जाने पर,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपवनस्थित वृक्षों की पंक्तिरूप कर्णाभूषणों के हिलते-से रहने पर तथा निद्रा की समाप्ति के कारण अत्यन्त संक्षुब्ध पंखवाले पक्षियों के विहार के लिए प्रस्थान कर जाने पर; प्रातःकालीन कृत्यों को सम्पन्न कर सभामण्डप के मध्य में स्थित हो सेवा का अवसर प्रदान किये हुये राजा के समक्ष मन्त्री सालंकायन के प्रविष्ट हो जाने पर; आश्रित राजाओं द्वारा प्रणाम के अवसर पर इधर-उधर बिखरे हुए (अपने) कर्णाभूषणों के द्वारा उज्ज्वल बनाये गये सभाभवन में समुचित आसन पर आसीन होकर महाराज (वीरसेन) को प्रासङ्गिक सेवाविषयक वार्त्तालापों से प्रसन्न कर दिये जाने पर; शास्त्रीय चर्चाविषयक मनोविनोद के प्रारम्भ हो जाने पर श्रुतशील के साथ-साथ अन्य क्रीडा-सहायकों एवं परिजनों से अनुगमन किया जाता हुआ नल (पिता के) सेवासुख (पितृसान्निध्य से उत्पन्न आनन्द) का अनुभव करने के लिए (वहाँ) आया ॥

आगत्य च क्षितितलमिलन्मौलिमण्डलः प्रणम्य पितुः पादारविन्द-द्वयमदूरदत्तमासनं भेजे ॥

कल्याणी—आगत्येति । आगत्य च, क्षितितलमिलन्मौलिमण्डलः— क्षितितलेन=भूतलेन, मिलत्=स्पृशत्, मौलिमण्डलं=शिरश्चक्रवालं यस्य स नलः, पितुः=जनकस्य, वीरसेनस्येत्यर्थः । पादारविन्दद्वयं=चरणकमलयुगलं, प्रणम्य=नमस्कृत्य, अदूरे=समीपे, दत्तमासनं भेजे=जग्राह, समीप एव दत्ते आसने उपविवेश इति भावः ॥

ज्योत्स्ना—और आकर भूतल को स्पर्श करते हुए शिर से पिता के चरणकमलों में प्रणाम कर समीप में ही दिये गये आसन पर बैठ गया ॥

उपविष्टे च तस्मिन्ननभिवादनादुत्पन्नमन्युरीषत्कोपकम्पितकरपरामृष्टकूर्चाग्रिमग्रन्थिरग्रणीर्मन्त्रिमण्डलस्य भ्रूभङ्गभीषणया शोणकोणान्तरतरत्तरलतारया दृशाऽभिमुखमस्य सालङ्कायनः प्रणयपरुषाक्षरमभाषत ॥

कल्याणी—उपविष्ट इति । उपविष्टे च=आसनस्थिते च, तस्मिन्=नले, अनभिवादनात्=आत्मनोऽप्रणामाद्धेतोः, उत्पन्नमन्युः=सञ्जातक्रोधः, ईषत्कोपकम्पितकरपरामृष्टकूर्चाग्रिमग्रन्थिः—ईषत्कोपकम्पितेन करेण=पाणिना, परामृष्टः=स्पृष्टः, कूर्चाग्रिमग्रन्थिः=श्मश्रुणोऽग्रभागगतगुच्छः येन सः, मन्त्रिमण्डलस्य=सचिवसमूहस्य, अग्रणीः=प्रमुखः, सालङ्कायनः, भ्रूभङ्गभीषणया—भ्रूभङ्गेन=भ्रूवक्रिम्ना, भीषणया=प्रचण्डया, शोणकोणान्तरतरत्तरलतारया—शोणकोणान्तरे=लोहितकोणमध्ये, तरन्ती=चलन्ती, तरला=चञ्चला, तारा=कनीनिका यस्यास्तादृश्या, दृशा=दृष्टया, अस्य=नलस्य, अभिमुखं=पुरतः, प्रणयपरुषाक्षरं—प्रणयेन=प्रीत्या, परुषाणि=रूक्षाणि, अक्षराणि यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, अभाषत=अवदत्, प्रीतिभाक् पैतृको मन्त्री सालङ्कायनः शिक्षाबुद्ध्या विदिताविनयं नलं परुषवर्णमवादीदिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और उसके बैठ जाने पर अभिवादन न करने के कारण उत्पन्न क्रोध वाले, क्रोध के कारण थोड़े काँपते हुए हाथ से अपनी मूँछ के अग्रभागस्थित गुच्छ को स्पर्श करने वाले मन्त्रियों में श्रेष्ठ सालंकायन ने भौंहों की वक्रता के कारण भयंकर एवं लाल कोणों के मध्य तैरती हुई चञ्चल कनीनिका (पुतलियों) वाली दृष्टि से (देखते हुए) उस नल के समक्ष प्रेमपूर्वक कठोर वचन कहा ॥

कुमार ! राजहंसोऽपि 'अहंसरूपः' इति मा स्म मोहवान्भूः ॥

कल्याणी—कुमारेति । कुमारेत्यामन्त्रणे । हे कुमार ! राजहंसोऽपि अहंसरूप इति विरोधः, राजसु=नृपेषु, हंसः=मुख्यः त्वं [अहं-सरूपः]—सरूपः=रूपवान् अहम् इति परिहारः । इति=अनेन प्रकारेण, मोहवान् मास्म भूः—मोहं=मूर्च्छामहङ्कारं वा मा गाः ॥

ज्योत्स्ना—हे राजकुमार ! राजहंस (राजाओं में श्रेष्ठ) होते हुए भी "मैं सरूप (सुन्दर रूप वाला) हूँ"—इस प्रकार से मुग्ध या अभिमानी मत बनो ॥

अनुभवति चमूढः शस्त्रसंघात इव कोशशून्यताम् ॥

कल्याणी—नृपे मूढे सति दोषं प्रतिपादयन्नाह—अनुभवतीति । चकारो यौगपद्ये । यदैव मूढः कुतश्चित्कारणान्मुह्यति तदैवेति तस्याशयः । कोशशून्यतां—कोशेन=गञ्जेन, शून्यतां=राहित्यम्, अनुभवति=अनुभवं करोति । शस्त्रसंघात इव=यथा शस्त्रनिचयः, चमूढः—चम्वा=स्वसेनया, ऊढः=धृतः सन्, कोशशून्यताम्—कोशस्य=प्रत्याकारस्य, शून्यतां=रिक्तताम्, अनुभवति=याति । यथा सेनया धृतस्य शस्त्रनिचयस्य प्रत्याकारः शून्यतां याति तथैव मोहेन ग्रस्तस्य नृपस्य केशः सद्य एव रिक्ततां भजत इति भावः । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—(क्योंकि) मोह से आवृत्त मूर्ख (राजा उसी प्रकार) कोशशून्यता का अनुभव करता है जैसे सेना द्वारा शस्त्रों के उठा लेने पर शस्त्रसमूह कोशशून्यता का अनुभव करता है ॥

आशय यह है कि मोहग्रस्त मूर्ख राजा का खजाना तत्काल ही खाली हो जाता है ॥

अविभवः पुरुषो मेष इव कम्बलस्योपयोगं गच्छति ॥

कल्याणी—रिक्ते कोशे का हानिरित्याह—अविभव इति । अविभवः—न विभवः=ऐश्वर्यं यस्य सः, निर्धनेत्यर्थः । पुरुषः=पुमान्, अविः=मेढ्रः; तस्माद् भवतीति अविभवः=मेष इव, [कम्-बलस्य]—बलस्य=सैन्यस्य शक्तेर्वा, कम् उपयोगं गच्छति, न कमपीत्यर्थः । पक्षे—[कम्बलस्य] कम्बलस्य=आच्छादनविशेषस्य, उपयोगं गच्छति=याति । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—वैभव से रहित पुरुष बल (सेना अथवा शक्ति) के किस उपयोग में आ सकता है ? (जैसे कि) अवि अर्थात् भेंड़ से उत्पन्न हुआ मेढ़ा (सिर्फ) कम्बल के ही उपयोग में आता है ।

आशय यह है वैभव से हीन राजा किसी काम का नहीं होता ।।

प्रद्युम्नजातोऽपि बाणयुद्धव्यतिकरकारिण्या सदोषया यौवनावस्थया निरुद्धोऽनिरुद्ध इव को नाम न क्लेशमनुभवति ।।

कल्याणी—यौवनमदमत्तः सामर्थ्यवानपि क्लेशं भजते कैव कथाऽबलस्येत्याह—प्रद्युम्नेति । प्रद्युम्नजातः—प्रकृष्टं द्युम्नजातं=बलवैभवसमूहः यस्य तथाविधोऽपि, बाणयुद्धव्यतिकरकारिण्या—बाणयुद्धं=शब्दकलहः, तद् व्यतिकरकारिण्या=तत्सम्पर्ककारिण्या, शब्दार्थकाद्वणधातोर्घञ् बाण इति । सदोषया=दोषयुक्तया, यौवनावस्थया=तारुण्यावस्थया, निरुद्धः=आत्मवशीकृतः, प्रद्युम्नः=श्रीकृष्णपुत्रः कामः, तस्मात् जातः=समुत्पन्नः अनिरुद्धो यथा बाणेन=बाणाख्येन दैत्येन सह युद्धव्यतिकरकारिण्या=संग्रामसम्बन्धविधायिन्या, यौवने अवतिष्ठत इति यौवनावस्थया=तारुण्ये स्थिता तया, [सदा–उषया=सदोषया] उषाख्यया पत्न्या सदा निरुद्धः=आत्मीकृतः, क्लेशमनुभूतवान् तथैव को नाम [नामेत्यभ्युपगमे] क्लेशं=दुःखं, नानुभवति, सर्वोऽप्यनुभत्येवेत्यर्थः । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ।।

ज्योत्स्ना—प्रकृष्ट बल-वैभवों से सम्पन्न होते हुए भी बाणयुद्ध अर्थात् शब्दों से कलह करने का असर देने वाली दोषपूर्ण युवावस्था के द्वारा अपने वश में किया गया कौन पुरुष अनिरुद्ध के समान क्लेश का अनुभव नहीं करता ? अर्थात् सभी करते हैं ।।

(अनिरुद्ध पक्ष में) प्रद्युम्न (श्रीकृष्णपुत्र काम) से उत्पन्न होते हुए भी अनिरुद्ध ने बाणनामक दैत्य के साथ संग्राम-सम्बन्ध करांने वाली यौवनावस्था में स्थित (बाणपुत्री) उषानामक प्रिया द्वारा सदा वश में किये जाने के कारण कष्ट का अनुभव किया ।।

विमर्श—भगवान् श्रीकृष्णपुत्र प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध के प्रेम में उन्मत्त होकर बाणासुर की पुत्री उषा ने अपनी सखी के द्वारा उन्हें उनके महल से उठवाकर अपने महल में मँगवा लिया था और अपने प्रणय निवेदन से उन्हें वश में कर लिया था, जिसके परिणामस्वरूप पुरुषों के लिए निषिद्ध बाण के अन्तःपुर में ही वे रहने लगे थे । सेवकों द्वारा इस वृत्तान्त से अवगत होने पर बाण ने उनसे घोर युद्ध किया था और अन्ततः उनको बन्दी बना लिया था । इस प्रकार श्रीकृष्ण का पौत्र होते हुए भी अनिरुद्ध को स्त्री के वशीभूत होने के कारण महान् कष्ट उठाना पड़ा था ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्तात ! सुविषमेघवर्त्तिनि विद्युद्विलास इवास्थिरे स्थितस्तारुण्ये मा स्म विस्मर स्मयेन विनयम् ॥

कल्याणी—तत्तातेति। तदित्युपसंहारे। तातेति प्रणयपूर्वामन्त्रणे। तत्=तस्मात्, हे तात=वत्स ! सुविषमे+अघवर्तिनि—सुष्ठु=अतिशयेन, विषमे=दारुणे, अघवर्तिनि=पापकारिणि, तथा विशेषेण द्योतन्त इति विद्युतः=दीप्यमानाः, विलासाः=शृङ्गारादयः यस्मिन् तथाविधे, तथा सुविष-मेघ-वर्तिनि—सुष्ठु विषं=जलं, यत्र तादृशे मेघे वर्तते इत्येवंशीले विद्युद्विलास इव अस्थिरे=चञ्चले, तारुण्ये=यौवने स्थितः सन्, स्मयेन=गर्वेण, विनयं=विनम्रतां, मा स्म विस्मर=मा स्म विस्मार्षीः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए हे वत्स ! अतिशय जलपूर्ण मेघ में रहने वाले नितान्त चञ्चल विद्युद् विलास के समान अत्यन्त दारुण पापों को करने वाली तथा दीप्यमान विलासों (शृङ्गार आदि) से समन्वित चञ्चल युवावस्था में अवस्थित होकर अभिमान के कारण विनम्रता को विस्मृत मत करो।

विमर्श—यहाँ पर "सुविषमेघवर्तिनि" एवं "विद्युद्विलास" शब्द के विद्युत एवं यौवन दोनों ही पक्षों में अर्थ निकलते हैं। विद्युत्पक्ष में सुविष (सुन्दर जल वाले) मेघ (बादल) में वर्तिनि (रहने वाला) और यौवन पक्ष में सुविषमे (अत्यन्त दारुण) अघवर्तिनि (पापों को करने वाली)। इसी प्रकार 'विद्युद्विलास" का विद्युत् पक्ष में बिजली का विलास और यौवन पक्ष में विद्युत (दीप्यमान) विलास (शृंगार आदि) अर्थ होता है ॥

अविनीतोऽग्निरिव दहति ॥

कल्याणी—विनयविस्मरणे दूषणमाह—अविनीत इति। अविनीतः=विनयरहितः पुमान्, अविः=ऊर्णमयं कम्बलं, तेन नीतः अग्निरिव दहति=भस्मीकरोति। यथा ऊर्णमयकम्बलेन नीतोऽग्निः तत्कम्बलं तु दहत्येव, सहैव नेतारमपि दहति तथैव अविनीतो पुमान् आत्मानं तु सन्तापयत्येव, स्वजनानपि सन्तापयतीति भावः। उपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—विनम्रता को विस्मृत करने पर होने वाले दोष को बताते हुए कहते हैं कि—विनय से रहित पुरुष अवि अर्थात् कम्बल के द्वारा नीत (गृहीत) अग्नि के समान जलता है।

आशय यह है कि जिस प्रकार कम्बल में लगी हुई अग्नि कम्बल के साथ-साथ ओढ़ने वाले को भी जला डालती है उसी प्रकार अविनयी पुरुष स्वयं के साथ-साथ अपने स्वजनों को भी सन्तप्त करता रहता है ॥

अजातनयश्छाग इव नाभिनन्द्यते जनेन ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अजातेति । अजातनयः—न जातः नयः=नीतिः यस्य स जनः, [अजा-तनयः]—अजायाः तनयः=सुतः, छाग इव जनेन=लोकेन, नाभिनन्द्यते=न स्तूयते, स्तुतिमपि न प्राप्नोतीत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—अजात-नय अर्थात् नीति से रहित पुरुष अजा-तनय अर्थात् बकरी के बच्चे (बकरे) के समान ही लोगों द्वारा अभिनन्दित नहीं किया जाता ।

आशय यह है कि जिस प्रकार बकरे का सभी लोग परित्याग ही करते हैं उसी प्रकार नीतिरहित व्यक्ति भी सभी के द्वारा त्याज्य ही होता है, प्रशंसा का पात्र नहीं होता ॥

किं च ब्रूमः—

सुसहायशून्यस्य भवतो यस्यामीमांसाभियोगा राक्षसा इव; अन्यायाः पारदारिका इव, अयोगक्रिया लोहकारा इव, अश्रुतागमाः शोकवेगा इव सहायाः ॥

कल्याणी—ननु स्वामी यादृक् तादृग्वा भवत चेत्सुसहायः । त्वयि तु तदपि नास्तीत्याविष्कुर्वन्नाह—सुसहायेति । सुसहायशून्यस्य—सुसहायैः=सद्गुणसम्पन्न-सहायैः, शून्यस्य=विरहितस्य, यस्य भवतः सहायाः राक्षसा इव, यथा [अमीमांसा-भियोगाः]—अमी=राक्षसाः, मांसे=मांस भक्षणे, अभियोगः=आसक्तिः येषां तादृशा भवन्ति तथैव ते सहायकाः न मीमांसाभियोगः=विचारोत्साहः येषां तादृशाः सन्ति । यथा पारदारिकाः=व्यभिचारिणः पुमांसः, अन्यायाः—अन्यां=परकीयाम्, अयन्ते=गच्छन्तीति तादृशा भवन्ति, तथैवैतेऽपि न विद्यते न्यायो येषामिति अन्यायाः=न्याय-रहिताः सन्ति, यथा लोहकाराः अयोगक्रिया—अयः=लोहं, गच्छतीत्ययोगा क्रिया येषां ते अयोगक्रियाः=लोहकर्मणि तत्परा भवन्ति तथैतेऽपि अयोगक्रियाः=असंबद्ध-कर्माणः सन्ति, यथा शोकवेगाः अश्रुतागमाः—अश्रुणो भावः अश्रुता, तस्या आगमो येषु तादृशा भवन्ति, तथैतेऽपि न श्रुत आगमः=शास्त्रं यैस्ते अश्रुतागमाः सन्ति । अत्रैकस्यैवोपमेयस्यानेकोपमानदर्शनान्मालोपमा । सा च श्लेषानुप्राणिता ॥

ज्योत्स्ना—फिर भी कह देता हूँ; सुसहायक अर्थात् सद्गुणों से रहित आपके ये सहायक मांसभक्षण में आसक्ति रखने वाले राक्षसों की तरह मीमांसाभियोग अर्थात् विचारोत्साह से रहित हैं, अन्याय (अन्य+अय) अर्थात् परकीया के साथ गमन करने वाले पारदारिकों (व्यभिचारी पुरुषों) की तरह अन्याय (अनीति) को करने वाले हैं, अयोगक्रिया अर्थात् लोहकर्म करने वाले लोहकारों (लोहारों) की तरह अयोगक्रिया अर्थात् असम्बद्ध (अप्रासङ्गिक एवं प्रयोजनरहित) कार्यों को करने वाले हैं, अश्रुता अर्थात् अश्रुभाव के आगम वाले शोकवेग के समान अश्रुतागम अर्थात् अश्रुत (नहीं सुने हुए) आगमों (शास्त्रों) वाले हैं अर्थात् शास्त्रज्ञान से रहित हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न च ते दुःशिक्षितनृपकलभव्याकरणमार्गेषु निपुणा नर्तकीव मित्रमण्डली ॥

कल्याणी—अथ तन्मित्रमण्डलीं निन्दन्नाह—न चेति। हे दुःशिक्षित ! नृपकलभ=नृपशिशो !, ते=तव, मित्रमण्डली=मित्रसमुदायः, नर्तकीव=वाराङ्गनेव; न च व्याकरणमार्गेषु=शब्दतत्त्वज्ञानमार्गेषु, निपुणा=कुशला। शब्दतत्त्वावबोधे हि नीतिशास्त्राधिगमः। नीत्यवगमे हि कृत्याकृत्यविवेकः। तस्मात्सम्पदः। न च ते मित्रमण्डल्यां तन्नैपुण्यमिति भावः।

नर्तकीपक्षे—'दुःशिक्षितनृपकल' इत्येकं समस्तपदमामन्त्रणे। दुःशिक्षिता=अनधीता, नृपकला=राजनीतिः येन तत्सम्बुद्धौ तथोक्त ! भव्याकरणमार्गेषु=सम्यगनुकरणे हाव-भावप्रदर्शने च निपुणा। अथवा भव्येति नर्तकीविशेषणम्। सा च भरतोक्तेषु करणमार्गेषु निपुणा भव्या=प्रशस्ता गण्यते ॥

ज्योत्स्ना—नल की मित्रमण्डली की निन्दा करते हुए सालंकायन कहता है कि—

हे दुःशिक्षित राजकुमार ! तुम्हारी मित्रमण्डली नर्तकी के समान व्याकरण मार्ग में निपुण नहीं है।

(नर्तकी पक्ष में) हे दुःशिक्षितनृपकल ! (राजनीति-ज्ञान से रहित) तुम्हारी मित्रमण्डली भव्यकरण-मार्ग अर्थात् सम्यकतया अनुकरण करने एवं हाव भाव प्रदर्शित करने में निपुण अनुपमा नर्तकी के समान निपुण नहीं है।

विमर्श—सालंकायन का निहितार्थ यह है कि व्याकरणमार्ग अर्थात् शब्दतत्त्वों का ज्ञान होने पर ही नीतिशास्त्र का ज्ञान होता है और नीतिशास्त्र का ज्ञान होने पर ही व्यक्ति को उचित-अनुचित का विवेक होता है तथा उचित-अनुचित विवेक से सम्पन्न होने पर ही व्यक्ति धनसम्पन्न होता है; लेकिन हे राजकुमार ! तुम्हारी मित्रमण्डली में वैसी कुशलता नहीं है ॥

तदायुष्मन्नहितया प्रकृत्या भुजङ्ग इव भयाय लोकस्य ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, हे आयुष्मन् !=चिरजीविन् !; [त्वम्] भुजङ्गः=सर्पः, इव अहितया=अहिकारिण्या, पक्षे—अहिः=सर्पः, तस्य भावः अहिता तया, प्रकृत्या=अविनयादिस्वभावेन अयुक्तसहायमित्रलक्षणया चामात्यादिकया, पक्षे—दशनलक्षणया प्रकृत्या, लोकस्य=जनस्य, भयाय=भयहेतुरसि ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए हे आयुष्मन् ! (तुम) अपनी अहितकारिणी प्रकृति (स्वभाव) के कारण सर्प भी भाँति लोगों के लिए भयदायक ही हो।

आशय यह है कि जिस प्रकार सर्प अपने जातिगत स्वभाववश डसने वाला होने के कारण लोगों के लिए भयदायक होता है उसी प्रकार हे राजकुमार ! अवि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नयी, नीति से रहित, अशिक्षित एवं लोगों के लिए अहितकर स्वभाव तथा उद्धत सहायकों के कारण तुम भी लोगों के लिए भयदायक ही हो ॥

उग्रसेनः कंसानुरागं जनयेत् ॥

कल्याणी—उग्रेति। उग्रसेनः—उग्रा=क्रूरा, सेना यस्य सः, कंसानुरागं [कम्+सानुरागम्]—कं=प्राणिनं, सानुरागं=सप्रेम, जनयेत्=कुर्यात्, न कमपीत्यर्थः। स विरागायैव जायत इति भावः। जनानुरागाय उचितपरिवारेण भाव्यम्, यतोहि परिवार एव लोकमुपद्रवति रक्षति च। उग्रसेननामकः दैत्यः कंसस्य=कंसासुरस्य, अनुरागं जनयतीति सर्वविदितमेव ॥

ज्योत्स्ना—उग्रसेन अर्थात् क्रूर सेना वाला शासक किसको अपने प्रति सानुराग कर सकता है ? अर्थात् क्रूर शासक सबके लिए अप्रिय ही होता है।

अथवा—उग्रसेन नामक दैत्य कंस (नामक अपने पुत्र) में ही अनुराग उत्पन्न कर सकता है ॥

अमृतमथनोद्यतहरिबाहुपञ्जर इव मन्दरसानुगतः को न घृष्यते ॥

कल्याणी—अमृतेति। अमृतमथनोद्यतहरिबाहुपञ्जरः—अमृताय=सुधायै, मथनं, समुद्रस्येति भावः, तदर्थम् उद्यतः=उद्युक्तः, यः हरिबाहुपञ्जरः=विष्णुभुजपञ्जरः, स इव [मन्दरस+अनुगतः]—मन्दः रसः=प्रीतिः येषां तैः अमन्दानुरागैर्जनैः, अथ च मन्दा=मन्दानुरागेत्यर्थः, रसा=पृथिवी, तया अनुगतः=संयुक्तः, पक्षे—मन्दरस्य=मन्दरनाम्नो मन्थानभूतस्य गिरेः, सानूनि=शृङ्गाणि, गतः=प्राप्तः, को न घृष्यते=दुर्गतिमनुभवति। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः। पुरा सुरासुरैरमृताय क्षीरसागरो ममन्थे। तदा मन्थानभूतस्य मन्दरगिरेः सानुगतो विष्णुभुजपञ्जरो घृष्ट इति पौराणिकी कथाऽत्रानुसन्धेया ॥

ज्योत्स्ना—अमृतमन्थन अर्थात् समुद्रमन्थन के लिए उद्यत भगवान् विष्णु के बाहुपञ्जर के समान मन्दराचल पर्वत के शिखर को प्राप्त किया हुआ कौन व्यक्ति घर्षित (रगड़ा) नहीं किया जाता ?

अथवा—अमृतमन्थन के लिए उद्यत विष्णु के भुजपञ्जर के समान मन्दरसानुगत अर्थात् मन्द प्रीति वाले लोगों से अनुगत कौन व्यक्ति रगड़ा नहीं जाता ॥

आशय यह है कि समुद्र-मथन के लिए तत्पर भगवान् विष्णु की भुजायें जिस प्रकार मन्दराचल के शिखर से घर्षित होकर दुर्गति को प्राप्त हुई थीं उसी प्रकार थोड़ी प्रीति करने वाले लोगों के साथ रहने वाला व्यक्ति भी दुर्गति को प्राप्त होता है ॥

शुनीमिवास्थिरतां परिहर ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—शुनीमिति। शुनीमिव=कुक्कुरीमिव, अस्थिरतां=चाञ्चल्यं, पक्षे [अस्थि-रताम्] —अस्थिषु=तद्रसास्वादनेषु, रतां=संलग्नाम्, परिहर=परित्यज। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—अस्थि अर्थात् हड्डी के रसास्वादन में संलग्न चञ्चल शुनी (कुक्कुरी अर्थात् कुतिया) के समान (तुम अपनी) अस्थिरता अर्थात् चञ्चलता का परित्याग कर दो ॥

कुशीलताग्राही मा स्म तैलिक इव केवलं खलोपभोगाय भूः ॥

कल्याणी—कुशीलतेति। कुशीलताग्राही—कुत्सितं=निन्दितं, शीलं=लौल्यादिलक्षणं यस्य स कुशीलः, तस्य भावः कुशीलता, तां गृह्णातीत्येवंशीलस्त्वं; तैलिक इव केवलं खलोपभोगाय—खलानां=दुर्जनानाम्, उपभोगाय मा स्म भूः। कुशीलो हि दुर्जनानामेवोपयोगी न साधूनां, तत्त्वं कुशीलो मा भूरिति भावः। तैलिकोऽपि कुशी=तैलकल्कजः, तां लाति =आदत्ते इति कुशीलः, तस्य भावं कुशीलतां गृह्णाति, अत एव खलः=पिण्याकः तैलकल्कजो वा तस्यैवोपभोगाय भवति। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—केवल खल के उपयोग में आने वाले कुशी-लता-ग्राही अर्थात् कुशीनामक लता को ग्रहण करने वाले तैलिक (तेली) के समान (तुम भी) कुशीलता-ग्राही अर्थात् निन्दित स्वभाव को ग्रहण करने वाला बनकर केवल दुष्टों के उपयोग में आनेवाले मत बनो ॥

आवर्जय गुणान् ॥

कल्याणी—आवर्जयेति। गुणान्=दयादाक्षिण्यादीन्, आवर्जय=संगृह्णीष्व। लौल्यादीन् दोषांश्च परिवर्जयेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—(उपर्युक्त दुर्गुणों का परित्याग कर) गुणों को अर्जित करो ॥

निर्गुणे धनुषीव सुवंश्येऽपि कस्याग्रहो भवति ॥

कल्याणी—सद्वंशजातस्य गुणार्जनेन किमिति विचारं निराकुर्वन्नाह-निर्गुण इति। सुवंश्येऽपि=सत्कुलजातेऽपि, निर्गुणे=दयादाक्षिण्यादिगुणैः शून्ये जने, कस्य=कस्य जनस्य, आग्रहः=आदरः भवति, न कस्यापीत्यर्थः। गुणिष्वेव लोकस्यादरो न केवलं कुलीनेष्विति भावः। यथा सुवंश्येऽपि=सद्वेणुसंभूतेऽपि, निर्गुणे=ज्यारहिते, धनुषि=कोदण्डे, कस्यापि आ=आभिमुख्येन बाणाकर्षणाय ग्रहः=आग्रहः न भवति। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार उत्कृष्ट कोटि के बाँस से निर्मित होने पर भी निर्गुण अर्थात् प्रत्यञ्चा से रहित धनुष का कोई भी सम्मान नहीं करता उसी प्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम कुल में उत्पन्न होने पर भी निर्गुण अर्थात् गुणहीन व्यक्ति को कोई भी सम्मान नहीं देता अर्थात् गुणी लोगों को ही सम्मान प्राप्त होता है, केवल कुलीन होने से सम्मान नहीं मिलता ॥

अभ्यस्य कलाः ॥

कल्याणी—अभ्यस्येति । कलाः=विद्वत्तादिकाः, ताः अपि अभ्यस्य=तासामप्यभ्यासं कुरु । अभिपूर्वकाद् दिवादिगणपठिताऽस्धातोर्लोट्कारे मध्यमपुरुषैकवचनस्य रूपमभ्यस्येति ॥

ज्योत्स्ना—कला (विद्वत्ता आदि) का अभ्यास करो ॥

निष्कलो वीणाध्वनिरिव प्रशस्यते न पुरुषः ॥

कल्याणी—निष्कल इति । निष्कलः=सङ्गीतशास्त्रोक्तस्वरोत्थानप्रकारेण रहितः, वीणाध्वनिरिव=विपञ्चीरव इव, निष्कलः=वैदुष्य-शौर्यादिकलाविहीनः, पुरुषः=जनः, न प्रशस्यते=प्रशंसापात्रं न भवति । उपमाऽलंकारः ॥

ज्योत्स्ना—निष्कल अर्थात् संगीतशास्त्रोक्त स्वरों के आरोहावरोह क्रम से रहित वीणा की ध्वनि के समान निष्कल अर्थात् विद्वत्ता-शूरता आदि कलाओं से रहित व्यक्ति प्रशंसा का पात्र नहीं होता ॥

त्यज जाड्यम् ॥

कल्याणी—निष्क्रियस्य सकलशौर्यादिगुणाः सकलगृहीतकलाश्च वैयर्थ्यं यान्तीत्याह—त्यजेति । जाड्यं=निष्क्रियभावं, त्यज=जहीहि ॥

ज्योत्स्ना—जड़ता अर्थात् निष्क्रियता का परित्याग करो ॥

जाड्ययोगेन हिमानी दूष्यतां याति ॥

कल्याणी—जाड्यदोषमाह—जाड्येति । [हि-मानी]—हि=निश्चयेन, मानी=अहङ्कारी पुमान्, जाड्ययोगेन=निष्क्रियत्वयोगेन, दूष्यतां याति=गर्हणीयतामाप्नोति । पक्षान्तरे—महद्धिमं हिमानी=हिमसंहतिरपि, जाड्ययोगेन=अत्यधिकशैत्ययोगेन, दूष्यतां याति=निन्दनीया गण्यते ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि जड़ता के कारण निश्चय ही मानी पुरुष भी (उसी प्रकार) दूष्यता (अप्रशंसनीयता) को प्राप्त हो जाता है (जैसे) हिमानी अर्थात् हिम (बर्फ) का ढ़ेर अत्यधिक शीतलता के कारण दूष्यता को प्राप्त हो जाता है ॥

मा स्म मुखरो भूः ॥

कल्याणी—मास्मेति । मुखरः=वाचालः, मा स्म भूः ॥

ज्योत्स्ना—वाचाल (बातूनी) मत बनो ॥

कर्णाटचेटीमिव मुखरतां न शंसन्ति साधवः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—कर्णाटेति। कर्णाटचेटीमिव—कर्णाटदेशस्य चेटीं=दासीमिव, मुखरतां=वाचालतां, पक्षे—मुखे रतं=सुरतं यस्यास्तादृशीं, साधवः=सज्जनाः, न शंसन्ति=न स्तुवन्ति ॥

ज्योत्स्ना—मुखरता अर्थात् मुख-मात्र में ही सौन्दर्य रखने वाली (और हृदय से कठोर) कर्णाट देश की दासियों के समान वाचालता की सज्जन लोग प्रशंसा नहीं करते ॥

भज माधुर्यम् ॥

कल्याणी—भजेति। माधुर्यं=मधुरभावं, भज=गृह्णीष्व ॥

ज्योत्स्ना—मधुरता को ग्रहण करो अर्थात् स्वभाव से मधुर बनो ॥

धवलबलीवर्दपङ्क्तिरिव समाधुर्या वाणी मनो हरति ॥

कल्याणी—धवलेति। [समा-धुर्या]—समा=अविषमा, धुर्या=धूर्वाहिनी, धुरं वहतीत्यर्थे 'धुरो यड्ढकौ' इति यत्। धवलबलीवर्दपंक्तिरिव=शुभ्रवृषभश्रेणिरिव, समाधुर्या=माधुर्यगुणोपेता; वाणी=वाक्, मनो हरति। वाचालतायां वाङ्माधुर्यं कुतः ? तस्माद्वाचालतां परित्यज्य मधुरभाषी भवेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—समा-धुर्या अर्थात् समान (बराबर) धुरी वाली गाड़ी को ढोने वाली उज्ज्वल (सफेद) बैलों की जोड़ी के समान ही समाधुर्या अर्थात् मधुरता से युक्त वाणी भी मन को आकर्षित कर लेती है, मोह लेती है ॥

वर्जय वैपरीत्यम् ॥

कल्याणी—वर्जयेति। वैपरीत्यम्=अस्मदुपदेशादन्यथाभावं, वर्जय=त्यज ॥

ज्योत्स्ना—विपरीत आचरण को छोड़ दो।

विपरीतं शवमिव को न परिहरति ॥

कल्याणी—विपरीतमिति। शवमिव=मृतशरीरमिव, विपरीतं=विरुद्धाचारं, पक्षे—विभिः=पक्षिभिः, परीतं=व्याप्तं; को न परिहरति=वर्जयति, सर्वोऽपि वर्जयतीत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—वि अर्थात् पक्षियों से परीत अर्थात् घिरे हुए मृत शरीर के समान विपरीत आचरण करने वाले का कौन नहीं परित्याग कर देता ? अर्थात् विपरीत आचरण करने वाले का सभी परित्याग कर देते हैं ॥

कमलदीर्घाक्ष ! शिक्षाक्रमेऽस्मिन्नपरमप्यभिधीयसे ॥

कल्याणी—कमलेति। हे कमलदीर्घाक्ष=पङ्कजायतनयन ! अस्मिन्=एतस्मिन्, शिक्षाक्रमे=उपदेशप्रसङ्गे, अपरमपि=पूर्वोक्तादतिरिक्तमपि, अभिधीयसे=उच्यसे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—हे कमल के समान सुन्दर एवं विशाल नेत्रों वाले ! उपदेश के इसी क्रम में (मुझे तुमसे) और भी कुछ कहना है ।।

मा गाः स्त्रियाः श्रियो वा विश्वासम् ।।

कल्याणी—मा गा इति । स्त्रियाः=अबलायाः, दुर्विनीताया इत्यर्थः । श्रियः=लक्ष्याः वा, विश्वासं मा गाः=मा यासीः ।।

ज्योत्स्ना—स्त्री और लक्ष्मी का विश्वास मत करो ।

विमर्श—आच्छादन अर्थ में स्तृञ् धातु से सम्पन्न स्त्री शब्द का अर्थ होता है—१. अपने तथा दूसरे के गुणों को छिपाने वाली, २. कल्याण-परम्पराओं से स्वयं के तथा पिता के कुल को आच्छादित करने वाली एवं ३. अपनी आकर्षण शक्ति से सज्जनों को भी कर्तव्यच्युत करने वाली । इनमें से प्रथम एवं तृतीय कोटि की स्त्रियों पर अविश्वास करना ही मन्त्री सालंकायन के कथन का अभीष्ट है, दूसरी से नहीं ।

श्री शब्द के साथ विश्वास का विच्छेद है—विश्व + आस अर्थात् लक्ष्मी का सबके साथ स्थापन नहीं करना चाहिए । योग्य-अयोग्य का विचार अवश्य करना चाहिए; अन्यथा लक्ष्मी के कारण ही आत्मीयजनों से भी द्वेष हो जाता है । अतः मन्त्री का आशय है कि व्यक्ति की योग्यता का विचार करने के पश्चात् योग्य होने पर ही उसके साथ लक्ष्मी का व्यवहार करना चाहिए ।।

अधिकमलवसतिरनार्यसङ्गता स्त्री श्रीश्च कं न प्रतारयति ।।

कल्याणी—अधीति । [अधिक-मल-वसतिः]—अधिको योऽसौ मलः=पापं, तस्य वसतिः=आस्पदम् । तथा अनार्यसंगता—अनार्यैः=असाधुभिः, संगता=कृतमैत्रीका स्त्री, कं=कं पुरुषं, न प्रतारयति=वञ्चयति, सर्वमपीत्यर्थः । श्रीश्च=लक्ष्मीश्च, अधिकमलं=कमले वसतिर्यस्याः सा, कमलासनेत्यर्थः । अधिकमलमित्यत्र विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः । कमलरूपासनस्य तरणशीलतया श्रीरपि कं पुरुषं न प्रतारयति=प्रकर्षेण तारयति । सापि अनार्यसंगता [अनारी + असंगता]—न नारी अनारी=अमानुषी, तथा अः=विष्णुः, तत्संगता असंगता । उपदेशप्रसङ्गे प्रस्तुतयोः स्त्रीश्रियोरेकधर्माभिधानात्तुल्ययोगिता ।।

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) अत्यधिक पापों का निवासस्थान एवं अनार्यों (दुष्टों) के साथ संगता अर्थात् मैत्री रखने वाली स्त्री किसे प्रतारित (वञ्चित) नहीं करती ? अर्थात् सभी को धोखा देती है ।

(श्रीपक्ष में) अधिकमल वसति अर्थात् कमल के ऊपर निवास करने वाली एवं अनारी अर्थात् अमानुसी तथा अ-संगता—अ अर्थात् विष्णु से संगता (संयुक्त) रहनेवाली लक्ष्मी किसे प्रतारित (वञ्चित) नहीं करती ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—लक्ष्मी का निवासस्थान कमल है, जो कि पानी के नाम-मात्र के झोंके से भी कम्पायमान होता रहता है, ऐसी स्थिति में उस पर रहने वाली लक्ष्मी भी सदा कम्पायमान या तरणशील रहती है और लक्ष्मी जब स्वयं ही तरणशील है तो उस पर विश्वास करने वाले का ठगा जाना स्वाभाविक ही है। साथ ही भगवान् विष्णु समस्त जगत् को स्वयं पर मुग्ध कर वञ्चित करते रहते हैं, इसलिए उनके साथ रहने के कारण लक्ष्मी भी लोगों को वंचित करने में ही लगी रहती है। अतः उस पर विश्वास करना कष्टदायक ही है॥

या कालकूटद्वितीया नीरोषितापि नार्द्रहृदया भवति। स्वीकृतापि विवाहेन कंसानलङ्घनचापलेनोद्वेजयति॥

कल्याणी—या कालेति। स्त्रीपक्षे—[या+अकाल=याकाल]—या=स्त्री, अकालकूटद्वितीया—अकाले=अकस्मात्, यत् कूटं=कपटं, द्वितीयं=अपरं; यस्याः सा, नीरोषितापि—नीरोष्यते स्मेति नीरोषिता=प्रसादितापि, आर्द्रहृदया=स्निग्धहृदया, न भवति=न जायते। यथा विवाहेन=उद्वाहेन, स्वीकृता=अङ्गीकृतापि; कं=कं पुरुषं, सा=स्त्री, लंघनचापलेन=अवमाननालौल्येन, नोद्वेजयति=नोद्विग्नं करोति, सर्वमपीत्यर्थः।

श्रीपक्षे—[या-कालकूट]—या=श्रीः, कालकूटं=विषं, द्वितीयम्=अपरम् अस्याः, तदनन्तरमुत्पन्नत्वात्। तथा [नीरोषिता=नीर+उषिता]—नीरे=जले, उषिता=कृतवासा, जलधिपुत्रीत्वात्, परं नार्द्रहृदया=किन्तु निर्जलवक्षाः, दैवतानुभावाज्जलेन तद्वक्षो वैसादृश्यं न नीतमिति भावः। तथा [स्वीकृता—अपि-विवाहेन, कंस-अनलङ्घनचापलेन]—आप्नोतीत्येवंशीलः आपी=स्मृतमात्रागामुक इत्यर्थः। आपी चासौ विश्च=पक्षी गरुडलक्षणश्चेति आपिविः, स वाहः=वाहनं यस्य तेन। तथा कंसस्य=कंसासुरस्य, न अलङ्घनमनलंघनम्, लंघनमिति यावत्, तच्च मारणात्मकम्। तथाभूतं चापलं यस्य तेनार्थाद्विष्णुना स्वीकृता=कलत्रत्वेनाङ्गीकृता, [उद्वे-जयति]—उश्च अश्च वौ=शिवविष्णू, उत्कृष्टौ=प्रसन्नौ, वौ=शिवविष्णू यस्य स उद्वः, तादृशे पुरुषान्तरे, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते, रमते इति भावः॥

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) जो समय-समय पर अचानक कूट अर्थात् कपट को सहयोगी बनाने वाली स्त्री (कभी) प्रसन्न होने पर भी स्निग्धहृदया नहीं हो पाती अर्थात् उसका हृदय द्रवित नहीं होता, साथ ही विवाह के द्वारा स्वीकार किये जाने पर भी अपनी लंघनचपलता अर्थात् अवहेलनामूलक चपलता से स्त्री किसे उद्विग्न नहीं करती ? सभी को उद्विग्न कर ही देती है।

(श्रीपक्ष में) कालकूट नामक विष (के पश्चात् समुद्र से ही उत्पन्न होने के कारण) की बहन होने के कारण जल में निवास करने वाली होती हुई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी जो स्निग्धहृदया नहीं है। स्मरणमात्र से चलने वाले गरुड़रूपी वाहन वाले तथा कंसनामक असुररूपी अग्नि का लंघन करने में अर्थात् मारने में चपलता प्रदर्शित करने वाले भगवान् विष्णु द्वारा अङ्गीकृत होकर भी उद्व (उ=शिव, अ=विष्णु) जयति (सर्वोत्कृष्ट) अर्थात् शिव और विष्णु जिनके लिए उत्कृष्ट हों, ऐसे अन्य पुरुषों के सुशोभित होती है, रमण करती है ॥

अस्याः कारणेऽभ्रान्तः समस्तोमन्दरागः सदालोकः, लोलनेत्रीकृता धृष्टा भुजङ्गमण्डली, प्राप्तो जलधी राजकुमारपराभवम् ॥

कल्याणी—अस्या इति। स्त्रीपक्षे—[कारणे-भ्रान्तः, समस्तः+अमन्दरागः, सदा-लोकः, जलधी+राज-कु-मार पराभवमिति विच्छेदः] अस्याः=स्त्रियाः, कारणे=निमित्ते, समस्तः=सकलः लोकः, अमन्दरागः=दृढानुरागः सन्, सदा=सर्वदा, भ्रान्तः=भ्रान्तिमापन्नः। तथा भुजङ्गानां=विटानां, मण्डली=वृन्दम्, लोलनेत्रीकृता=चपलाक्षीकृता सती, धृष्टा=प्रवञ्चितेत्यर्थः। जडधीः [डलयोरभेदात्]=जडबुद्धिः, राजकुमारपराभवम्—राजा चासौ कुत्सितश्च मारः=कामदेव, तस्मात् पराभवं=पराजयं, प्राप्तः=नीतः।

श्रीपक्षे—[कारणे+अभ्रान्तः, समस्तः+मन्दर+अगः, सत्+आलोकः, जलधिः+राजकुमारपराभवम् इति विच्छेदः] अस्याः=श्रियः, कारणे=निमित्ते, अभ्रम्=आकाशम् अन्तोऽस्येति अभ्रान्तः, गगनचुम्बीत्यर्थः। सन्=शोभनः, आलोकः=कान्तिः यस्य सः, तादृशः सन्नपि मन्दरागः=मन्दराचलः, समस्तः—सम्यक्, अस्तः=क्षिप्तः, समुद्रे इति भावः। सम् असुक्षेपणे+क्तः कर्मणि। लोलनेत्रीकृता=चञ्चलाक्षीकृता, यद्वा नेत्रं=मन्थानरज्जुः, मन्थानरज्जुत्वेन प्रयुक्ता, भुजंगमण्डली=सर्पमण्डली, धृष्टा=प्राप्तघर्षणा, हे राजकुमार! जलधिः=समुद्रः [अपि], पराभवं=मन्थनलक्षणं प्राप्तः ॥

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) इसी स्त्री के कारण समस्त लोक दृढ़ानुरागी होकर सदा भ्रम में पड़ा रहता है, भुजंगमण्डली अर्थात् धूर्तों का समुदाय चञ्चल नेत्रों वाला होते हुए धोखा खा जाता है तथा जड़बुद्धि का व्यक्ति भी कुत्सित स्वभाव वाले राजा कामदेव से पराजय को प्राप्त करता है।

(लक्ष्मीपक्ष में) हे राजकुमार! इसी लक्ष्मी के कारण आकाशपर्यन्त विस्तृत अर्थात् गगनचुम्बी होने के साथ-साथ सुन्दर कान्ति से समन्वित होते हुए भी मन्दराचल पर्वत पूर्ण रूप से समुद्र में फेंक दिया गया, चलायमान आँखों वाली अथवा मथने की रस्सी के रूप में प्रयुक्त की गई सर्पमण्डली भी घर्षित की गई एवं समुद्र भी (मन्थनरूप) पराभव को प्राप्त हुआ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—'डलयोरभेदात्' नियम के अनुसार प्रयुक्त 'जलधी' शब्द का अर्थ स्त्रीपक्ष में ल को ड़ मानकर जड़धी अर्थात् जड़ बुद्धि वाला किया जाता है एवं लक्ष्मीपक्ष में जलधी का शाब्दिक अर्थ 'समुद्र' ही समझना चाहिए। इसी प्रकार 'लोलनेत्रीकृता' शब्द भी दो अर्थों का वाचक है। प्रथम पक्ष में अर्थ होता है—'जिनकी आँखें चञ्चल बना दी गई हों' और दूसरे पक्ष में 'नेत्र' का अर्थ 'मथने वाली रस्सी' करने पर 'मन्थन की रस्सी के रूप में प्रयुक्त' अर्थ समझना चाहिए॥

अनयावष्टब्धः को न गुरुवारणयोग्यो भवति, को न वाजिपृष्ठमारोहति कङ्कणन्नवञ्चनातः प्रकटयति, कः कण्ठे हारावमोचनं न कुरुते, को न काञ्चनशृङ्खलामनुभवति। कुरङ्ग इवान्धीभूतः को वागुरावञ्चनं करोति, कः कार्मुकनिर्मुक्तशिलीमुख इव न वैलक्षमागच्छति॥

कल्याणी—अनयेति। स्त्रीपक्षे—अनया=स्त्रिया, अवष्टब्धः=आश्रितः, को न गुरुवारणयोग्यः—गुरुणा=आचार्येण, वारणयोग्यः=निवारणीयः न भवति, सर्वोऽपि भवत्येवेत्यर्थः। [वाजि=वा+आजि]—को न वा आजिपृष्ठं=कलहभूमिम्, आरोहति=आरूढ़ो भवति, वञ्चनातः=प्रतारणात्, पञ्चम्यास्तसिल्। कणन्=शब्दायमानः, कं=सुखं, न प्रकटयति=प्रदर्शयति, [हा+आरावमोचनन्] कः=कः नरः, कण्ठे=गलान्तः 'हा' इति खेदव्यञ्जकस्य आरावस्य=ध्वनेः, मोचनम्=उच्चारणं न कुरुते, को न काञ्चन=कामप्यपूर्वां, शृङ्खलां=बन्धनम्, अनुभवति=अनुभवं करोति, कुरङ्गः=मृग इव, अन्धीभूतः=निर्विवेकः सन् [को वा-गुरौ+अञ्चनम्]—को वा गुरौ=गुरुविषये, अञ्चनं=पूज्यभावं करोति, न कोऽपीत्यर्थः। कुरङ्गोऽप्यन्धीभूतः सन् वागुरायां=मृगजालिकायां, वञ्चनं=दूरत एवापसरणचेष्टां न करोति। कार्मुकनिर्मुक्तशिलीमुख इव=धनुर्मुक्तशर इव, को न वैलक्षम्=कान्तिराहित्यम्, आगच्छति=अवाप्नोति। धनुर्मुक्तशरोऽपि वै=निश्चयेन, लक्षं=वेध्यम्, आगच्छति=आयाति।

श्रीपक्षे—अनया=श्रिया, अवष्टब्धः=आश्रितः, को न गुरुः=महान्, वारणः=गजः, तद्योग्यो भवति, को न वाजिपृष्ठम्=अश्वपृष्ठम्, आरोहति=आरोहणं करोति, [कंकणम्+नवञ्च-न+आतः]—आ=लक्ष्मी—तस्या इति आतः, 'आ' शब्दात् पञ्चम्यास्तसिल्। नवं=नूतनं, कंकणं=हस्तसूत्रं च न प्रकटयति, च इति समुच्चयार्थे। कः कण्ठे हारस्य=मौलिकसरस्य, अवमोचनं=बन्धनं कुरुते, को न काञ्चनशृङ्खलां=सुवर्णनिर्मिताभरणविशेषम्, अनुभवति, धारयतीति भावः। कुरङ्ग इवान्धीभूतः=निर्विवेकः सन् [कः+वा+अगुरौ+अञ्चनम्]—को वा अगुरौ=पूज्येऽप्यैश्वर्यहीन इत्यर्थः, अञ्चनं=पूज्यभावं करोति, न कोऽपीत्यर्थः। अपि तु अगौरवार्हे=नीचेऽप्यैश्वर्ययुक्ते, अञ्चनं करोति। को न वै लक्षं—वै=स्फुटं, लक्षं=शतसहस्रं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवाप्नोति । श्लेषाऽलङ्कारः । 'कुरङ्ग इव' इत्यत्र, 'कार्मुकनिर्मुक्तशिलीमुख इव' इत्यत्र चोपमाऽलङ्कारः ।।

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) इस स्त्री के आश्रित होकर कौन व्यक्ति गुरुओं के द्वारा निवारणीय (निषिद्ध करने योग्य) नहीं होता ? अथवा कौन कलह की भूमि पर नहीं सवार होता ? अथवा वञ्चना अर्थात् छलपूर्वक बोलता हुआ सुख को कौन नहीं प्रकट करता ? कौन व्यक्ति अपने गले से हा-हा (खेद व्यक्त करने का शब्द) की ध्वनि नहीं निकालता ? (और) कौन व्यक्ति किसी अपूर्व बन्धन का अनुभव नहीं करता ? मृग के समान (वासना से) अन्धा होकर कौन व्यक्ति गुरु की पूजा करता है ? अथवा कौन व्यक्ति मोहान्ध मृग की भाँति (स्त्रीविषयक) जाल से मुक्त हो पाता है ? धनुष से छोड़े गये तीर के समान कौन व्यक्ति कान्तिहीनता को नहीं प्राप्त करता ? आशय यह है कि जिस प्रकार धनुष से छूटने पर तीर अपने लक्ष्य का निश्चित रूप से भेदन कर उसकी कान्ति को नष्ट कर देता है उसी प्रकार स्त्रियों के प्रति रागपूर्ण होकर व्यक्ति भी कान्ति से रहित हो जाता है ।

(लक्ष्मीपक्ष में) इस लक्ष्मी पर आश्रित होकर कौन व्यक्ति उत्कृष्ट हाथी-घोड़ों के पीठ पर आसीन नहीं होता ? लक्ष्मी की कृपा प्राप्त होने पर कौन व्यक्ति कंकण नहीं प्रकट करता (पहनता) ? किसके गले में हार का बन्धन नहीं होता ? सुवर्णनिर्मित विशेष प्रकार के आभूषणों को कौन नहीं धारण करता ?; कौन व्यक्ति अपूज्यों (पूज्य होते हुए भी ऐश्वर्यहीन) की पूजा करता है ? अर्थात् कोई नहीं करता, बल्कि अपूज्य होने पर भी ऐश्वर्यसम्पन्न की ही पूजा करता है । कामयुक्त पुष्प से बहिर्गत भ्रमरों के समान कौन व्यक्ति पुनः कामुकत्व को नहीं प्राप्त होता अथवा कौन व्यक्ति लाखों नहीं प्राप्त कर लेता ? आशय यह है कि लक्ष्मी की कृपा होने पर संसार में सभी कुछ होना सम्भव है ।।

कस्य न पराभूतिर्भवति । कस्य नापूर्वं यशः समुच्छलति ।।

कल्याणी— कस्येति । स्त्रीपक्षे—कस्य=स्त्रीवशीभूतस्य, पराभूतिः= पराभवः न भवति, कस्य अपूर्वं यशः— अप्राशस्त्यार्थकः 'अ' इति शब्दो पूर्वं यस्मात् तत् अपूर्वं यशोऽयश इत्यर्थः, न समुच्छलति=प्रसरति, सर्वस्यापीति भावः ।

लक्ष्मीपक्षे-लक्ष्म्या आश्रितस्य कस्य न परा=उत्कृष्टा, भूतिः=ऐश्वर्यं भवति, कस्य अपूर्वम्=असामान्यं, यशः=कीर्तिः, न समुच्छलति=न दिशि-दिशि प्रसरति ।।

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष मे) स्त्री के वशीभूत होने पर किसकी पराजय नहीं होती ? और किसकी अपकीर्ति नहीं फैलती ? अर्थात् सभी की पराजय होती है और सभी की अपकीर्ति होती है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(लक्ष्मीपक्ष में) लक्ष्मी के आश्रित होने पर किसको ऐश्वर्य नहीं प्राप्त होता ? और किसकी अलौकिक अपूर्व कीर्ति सभी दिशाओं में नहीं फैलती ? अर्थात् सभी ऐश्वर्यसम्पन्न होते हैं और सभी की कीर्ति चारो दिशाओं में फैलती है ।।

किमतोऽप्यस्याः परमुच्यते ।।

कल्याणी—किमिति । अस्या=स्त्रियाः श्रियो वा, अतोऽपि परम्=अस्मादप्यधिकं, किमुच्यते ।।

ज्योत्स्ना—इस स्त्री अथवा लक्ष्मी के बारे में इससे अधिक और क्या कहा जाय ?

यादवप्रियं शार्दूलमिव शूरं महत्तरं भयान्नोपसर्पति। सुनयनादेवरं सिंहमिव बलभद्रं दृष्ट्वा प्रपलायते । न वसुदेवेऽपि चक्षुः पातयति ।।

कल्याणी—यादवेति । स्त्रीपक्षे—[या–दवप्रियम्]—या=या स्त्री, शार्दूलमिव=सिंहमिव, दवप्रियः—दुनोतीति दवः=कुतश्चिद्वैगुण्यादुपतापजनकः, यः प्रियः=कान्तः, तं शूरं=पराक्रमशालिनं, महत्तरं=वृद्धं, भयात्=त्रासात्, नोपसर्पति=नोपगच्छति, अत्र प्रियसमीपगमनाभावे तद्वृद्धत्वं तथा भये तच्छूरत्वं हेतुरिति बोध्यम् । लोकोऽपि दवो वनं प्रियो यस्य तं शूरं=विक्रमशालिनं, महत्तरं=विशालं, शार्दूलं=सिंहं नोपसर्पति । [सुनय–नादेवरम्]—शोभनः नयः नीतिः यस्य तत्सम्बुद्धौ हे सुनय !, नादे=गर्जने, वरं=श्रेष्ठं, बलेन=शक्त्या, भद्रं=श्लाघ्यं, सिंहमिव नादे=शब्दे, वरं=श्रेष्ठं, प्रियंवदमिति यावत् । बलेन भद्रं=कल्याणकरं [प्रियं] दृष्ट्वा प्रपलायते=प्रणश्यति, लोकोऽपि तादृशं सिंहं दृष्ट्वा भयात्प्रपलायते । [वसुदे + अवे + अपि । अथवा वसुदे–वेपि]—तथा वसुदे=धनप्रदे अवतीति अवः=रक्षकः तादृशेऽपि न चक्षुः=नेत्रं, पातयति=प्रक्षिपति । अथवा वेपते=कम्पते इत्येवंशीलं वेपि=कम्पमानं, चञ्चलमिति यावत्, तादृशं नेत्रं न पातयति ।

श्रीपक्षे—[यादव-प्रियम्]—यादवानां=यदुवंश्यानां, प्रियं, शूरं=शूरनामानमाद्यपुरुषं, महत्तरं=श्वशुरपितरमित्यर्थः, भयात्=मर्यादालङ्घनलक्षणात्, नोपसर्पति=नोपगच्छति । शोभने नयने यस्याः सा लक्ष्मीः देवरं=गदनामानं, कृष्णस्य गदाग्रजत्वात् । तथा बलभद्रं=ज्येष्ठम्, दृष्ट्वा प्रकर्षेण पलायते स्पर्शभयात् । वसुदेवः=कृष्णस्य पिता, तस्मिन्नपि, चक्षुर्न पातयति=प्रक्षिपति । श्लेषानुप्राणितोपमा ।।

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) सिंह के समान उपतापजनक (कष्ट देने वाले) पराक्रमी होते हुए भी महत्तर अर्थात् वृद्ध प्रिय के पास भय के कारण उसी प्रकार स्त्री नहीं जाती है जिस प्रकार दवप्रिय अर्थात् जंगल ही प्रिय है जिसको, ऐसे पराक्रमी विशाल सिंह के पास भयवश कोई नहीं जाता । हे सुनय! (सुन्दर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीति वाले !) बोलने में श्रेष्ठ एवं शक्ति के कारण कल्याणकर प्रिय को देखकर भी स्त्री उसी प्रकार भाग जाती है जिस प्रकार गर्जन में श्रेष्ठ और शक्ति से श्लाघनीय अर्थात् अत्यन्त बलिष्ठ सिंह को देखकर लोग भाग जाते हैं। धन प्रदान करने वाले और रक्षक पुरुष पर भी वह दृष्टिपात नहीं करती ॥

(लक्ष्मीपक्ष में) यदुवंशियों के प्रिय शूरनामक अत्यन्त पूज्य (श्वसुरतुल्य) व्यक्ति के पास (मर्यादालंघन के) भय से लक्ष्मी नहीं जाती है। सुन्दर नयनों वाली वह लक्ष्मी सिंह के समान अपने देवर (कृष्ण के छोटे भाई गद) और (बड़े भाई) बलभद्र को देखकर शीघ्रतापूर्वक भाग जाती है। वह वसुदेव (कृष्ण के पिता) की ओर दृष्टिपात तक नहीं करती।

विमर्श—लक्ष्मीपक्ष के अर्थ में लक्ष्मी का अपने देवर को देखकर पलायित होने का तात्पर्य यह है कि वह अपने देवर के प्रति वासनात्मक रूप से नहीं देखना चाहती, इसीलिए पलायित हो जाती है और अपने जेठ बलभद्र को देखकर पलायित होना तो लोकाचारसम्मत है ही; क्योंकि न भागने पर उनके शरीर से स्पर्श का भय होता है, जो कि लोकाचार के विरुद्ध है ॥

केवलमनवरतशिक्षितवैदग्ध्यकलापराधात्मिकात्रपापरा परिहृत्य गुणिनो गुरून्परपुरुषे मायाविनि कृतकेशिवधे धृतमन्दरागे रागं बध्नाति ॥

कल्याणी—केवलमिति। स्त्रीपक्षे—केवलम् अनवरतशिक्षितवैदग्ध्यकला—अनवम्=अप्रशस्यं, रतं=प्रेम यस्याः सा अनवरता, सा चासौ शिक्षितवैदग्ध्यकला चेति कर्मधारयः, विशेषेण दग्ध इति विदग्धः तस्य भावः वैदग्ध्यं=सन्तापः, शिक्षिता वैदग्ध्यस्य=सन्तापस्य कला यया सा तथोक्ता, अपराधात्मिका—अपराध एवा आत्मा=स्वरूपं यस्याः साऽपराधात्मिका, [अपराधात्मिका + अत्रपापरा]—न त्रायते नरकादित्यत्रं, तथाभूतं पापं राति=ददातीति तथोक्ता। गुरून्=गौरवार्हान्, गुणिनः=गुणशीलान् ग्राम्यपुरुषान्, परिहृत्य=परित्यज्य, मायाविनि=प्रवञ्चके, [कृतके + अशिवधे]—कृतके=कृत्रिमे, अशिवम्=अल्याणं दधातीति तस्मिन्, [धृत-मन्द-रागे]—धृतः मन्दः=क्षीणः, रागः=स्नेहः येन तस्मिन्, परपुरुषे—परस्याः=अन्यस्याः, पुरुषे=कान्ते, अत्र परशब्दस्य सर्वनामतया 'सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः' इति वचनात् पुंवद्भावो ज्ञेयः। रागं=स्नेहम्, आबध्नाति=स्थापयति।

श्रीपक्षे—अनवरतं=सततं, शिक्षितः वैदग्ध्यकलापः=दक्षतातिशयः, यया सा चासौ राधात्मिका च=श्रीकृष्णप्रियात्मिका च, तस्या अपि श्रिय एव भेदत्वात्। तथा त्रपापरा=लज्जाशीला, गुणिनो गुरून्=शूरादीन् यदूनामादिपुरुषान्, परिहृत्य=परित्यज्य, मायाविनि—माया=त्रिलोकीनिर्माणरूपाऽथवा वामनादिविविधरूपधारणलक्षणा विद्यते यस्य तस्मिन्, कृतकेशिवधे—कृतः=विहितः, केशिवधः=केशि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नोऽश्वरूपस्य दैत्यस्य वधः येन तस्मिन्, धृतमन्दरागे—धृतः मन्दरागः—मन्दरः नाम अगः=गिरिः येन तस्मिन्, परपुरुषे=परमात्मनि, श्रीकृष्ण इति यावत् । रागं=प्रीतिम्, आबध्नाति=दृढमारोपयति । श्लेषाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) केवल अप्रशंसनीय रत अर्थात् प्रेम वाली, सन्ताप देने की कला में शिक्षिता, अपराधस्वरूपा, नरक से रक्षा न करने वाले पापों को प्रदान करने वाली स्त्रियाँ गुरु अर्थात् गौरव के योग्य गुणी पुरुषों का त्याग कर मायावी, कृत्रिम, अकल्याणकर तथा निम्न कोटि के प्रेम के रखने वाले अन्य पुरुषों अर्थात् दूसरी स्त्रियों के पुरुषों से प्रेम स्थापित करती हैं ।

(लक्ष्मीपक्ष में) निरन्तर केवल वैदग्ध्यकलाप (विविध प्रकार के ज्ञान में दक्षता) की शिक्षा ली हुई, राधा अर्थात् कृष्ण की प्रेयसीस्वरूपा और लज्जाशीला लक्ष्मी गुणवान् शूर (यदुवंशियों के प्रथम पुरुष) आदि को छोड़कर मायावी (त्रिलोक का निर्माण करने वाले अथवा वामनादि विविध रूप धारण करने वाले), केशिनामक अश्वरूपी दैत्य का वध करने वाले तथा मन्दरनामक पर्वत को धारण करने वाले परपुरुष (परमात्मा श्रीकृष्ण) में (अपने) प्रेमको दृढ़ करती है ॥

तदायुष्मन्नतिगम्भीरगुहा गिरीन्द्रभूरिव हृदयहराश्रेयोऽर्थिनां शरणं न स्त्री श्रीर्वा ॥

कल्याणी—तदिति । तदित्युपसंहारे । तत्=तस्मात्, आयुष्मन् ! स्त्रीपक्षे—गिरीन्द्रभूरिव=हिमालयभूमिरिव, [अतिगम् + भीः + अगुहा] — अतिगम्=अतिशयेन, भीः=भयहेतुरित्यर्थः, तथा अगुहा—न गौः=वाक् कपटपूर्णमाधुर्योपेतलक्षणा यस्य सोऽगुः, तं जहातीति तथोक्ता, मायामयं वक्तुमसमर्थं नाश्रयतीति भावः । यद्वा नतौ=नम्रतायां, गम्भीरा गौः=वाक् यस्य तमपि जहातीति सा तथोक्ता, हृदयहरा=मनोहरा, स्त्री श्रेयोऽर्थिनां=कल्याणकामानां जनानां, न शरणं= न रक्षयित्री ।

श्रीपक्षे—गिरीन्द्रभूरिव=हिमालयजाता पार्वतीव, हृदयहरा=मनोहरा, पक्षे—हृदये हरः=शिवः यस्याः सा । अतिगम्भीरा गौः=वाक्, यस्य सोऽतिगम्भीरगुः, तं जहातीति सा तथोक्ता, पार्वतीपक्षे—नतिगम्भीरगुहा—नतौ गम्भीरः=प्रणामप्रगल्भः, गुहः=पार्वतीपुत्रः स्कन्दः यस्याः सा । श्रीः=लक्ष्मीः, अश्रेयोऽर्थिनाम्=अकल्याणकामानां, न शरणं=न रक्षयित्री । श्लेषाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—(स्त्रीपक्ष में) अतः हे आयुष्मन् ! हिमालय की भूमि के समान अत्यधिक भय को देने वाले तथा कपटपूर्ण माधुर्ययुक्त वचन न बोलने वालों को त्याग देने वाली अथवा नम्रतापूर्वक गम्भीर वाणी बोलने वालों को त्याग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देने वाली तथा हृदयहरा अर्थात् मन का हरण करने वाली स्त्री कल्याण चाहने वाले लोगों की शरणस्थली (रक्षा करने वाली) नहीं होती।

(लक्ष्मीपक्ष में) हिमालयपुत्री पार्वती के समान मनोहारिणी अथवा हृदय में शिव को धारण करने वाली और प्रणाम करने में प्रवीण गुह (स्कन्द) नामक पुत्र वाली लक्ष्मी अकल्याण चाहने वाले लोगों की शरणस्थली (रक्षा करने वाली) नहीं होती ॥

शृङ्गारप्रधानास्तात ! गाव इव विचारिताः सरसा भवन्ति न स्त्रियः ॥

कल्याणी— शृङ्गारेति। हे तात ! गाव इव=धेनव इव, शृङ्गार-प्रधानाः—शृङ्गारः=मण्डनं प्रधानं यासां ताः, गोपक्षे—शृंगस्य=विषाणस्य, अग्रम्=अग्रं प्रधानं यासां ताः। विचारिताः—तृणन्ति=आच्छादयन्ति गुणगणं दुःशीलतयेति तत्त्वतो विमृष्टाः, धेनुपक्षे—विचारिताः—विशेषेण चारिताः=दत्तास्वादवत्तृणकवलाः; स्त्रियः=नार्यः, सरसाः=प्रीतिहेतवः, गोपक्षे—सरसाः=सदुग्धाः, न भवन्तिः ॥

ज्योत्स्ना—हे तात ! गायों के समान शृंगारप्रधान अर्थात् शृंगार को प्रधानता देने वाली और तत्त्वतः विचार करने वाली स्त्रियाँ सरस अर्थात् प्रेम का कारण नहीं होती।

(धेनुपक्ष में) हे तात ! शृंग (सींग) के अग्रभाग प्रधान वाली और विशेषतया स्वाद को प्रदान करने वाले घासों को ग्रास बनाने वाली गायें सरस अर्थात् दुग्ध से परिपूर्ण नहीं होतीं ॥

तदेताः कन्दर्पकण्डूकषणविनोदमात्रोपकारिण्यो नात्यन्तविश्वासयोग्याः सर्वथा विश्वस्तं विश्वासमिव नरं कुर्वन्ति स्त्रियः ॥

कल्याणी – तदिति। तत्=तस्मात्, एताः=इमाः, कन्दर्पकण्डूकषणविनोदमात्रोपकारिण्यः=कामजन्यकण्ड्वपनयन एवोपयोगिन्यः, स्त्रियः=नार्यः, नात्यन्तविश्वासयोग्याः=नात्यन्तं विश्रम्भार्हाः, कियदेवेत्यर्थः। तत्र हेतुमाह – सर्वथा=सर्वप्रकारेण, विश्वस्तं=विश्रब्धं, नरं=पुरुषं, स्त्रियः=नार्यः, विश्वासमिव=विगतश्वासमर्थान्मृतमिव, कुर्वन्ति [इत्युत्प्रेक्षा] ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए कामजन्य खुजलाहट को दूर करने मात्र में ही उपयोगिनी ये स्त्रियाँ अत्यधिक विश्वास करने योग्य नहीं होतीं; क्योंकि (अपने ऊपर) पूर्ण रूप से विश्वास करने वाले पुरुषों को ये स्त्रियाँ विगत श्वास अर्थात् मृत के समान बना देती हैं ॥

श्रियोऽपि दानोपभोगाभ्यामुपयोगं नयेत्। न लोभं कुर्यात्। बहुलोभानुगतः किरणकलापोऽपि संतापयति जनम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—श्रियोऽपीति। श्रियोऽपि=लक्ष्म्या अपि, दानोपभोगाभ्यामुपयोगं नयेत्। उक्तञ्च—'दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य। यो न ददाति न भुंक्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥' इति। न लोभं कुर्यात्। तत्र दूषणमाह-बह्विति। बहुलोभानुगतः—बहुलोभेन अनुगतः=युक्तः, जनं=लोकं, सन्तापयति=पीड़यति, [बहुलः+भानुगतः]—बहुलः=प्रचुरः, तथा भानुं=रविं गतः, भानवीय इत्यर्थः। किरणकलापः=रश्मिसमूहोऽपि, जनं सन्तापयति। एतेन बहुलोभानुगतजनस्य भानुकिरणकलापस्य चोपमानोपमेयभावो व्यज्यते॥

ज्योत्स्ना—लक्ष्मी का भी उपयोग दान और उपभोग में ही करना चाहिए। लोभ नहीं करना चाहिए; क्योंकि अधिक लोभ से युक्त व्यक्ति लोगों को उसी प्रकार सन्तप्त (पीड़ित) करता है जिस प्रकार सूर्य की प्रचुर किरणें लोगों को सन्तप्त करती हैं॥

अतः पुत्र ! प्राप्स्यसि नचिरान्निजकुलकमलराजहंसीं राज्यश्रियम्। अनवरतं कृतयशोदानन्देहि नारायण इव त्वयि चिरं रंस्यते खल्वियं लक्ष्मीः॥

कल्याणी—अत इति। हे पुत्र ! अतः=एतादृगाचरणात्, न चिरात्=शीघ्रमेव, निजकुलकमलराजहंसीं—निजकुलमेव कमलं तस्य राजहंसीम् [इति परम्परितरूपकम्] राज्यश्रियं=राज्यलक्ष्मीं, त्वं प्राप्स्यसि। अनवरतं=निरन्तरं; कृतयशोदानं—कृतं यशो येन तथाविधं दानं, देहि=धर्मादिपात्रेषु श्रियं नियुङ्क्ष्वेति भावः। खलु=निश्चितम्, इयं=लक्ष्मीः, कृतयशोदानन्दे हि—कृतः यशोदाख्यायाः जनन्याः आनन्दो येन तस्मिन्। हि=स्फुटम्। तथाविधे नारायणे=विष्णाविव। त्वयि=कृतयशोदानपरायणे नले, चिरं रंस्यते=सदा निवत्स्यतीति भावः। श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—हे पुत्र ! पूर्वोक्त रूप से आचरण करने पर शीघ्र ही अपने कुलरूपी कमल की राजहंसीस्वरूपा राज्यलक्ष्मी को (तुम) प्राप्त करोगे। निरन्तर यश प्रदान करने लायक दान दो। (ऐसा करने से) माता यशोदा को आनन्द प्रदान करने वाले नारायण के समान ही यह लक्ष्मी निश्चित रूप से यश प्रदान करने वाले दान देने में रत तुम्हारे साथ चिरकाल तक रमण करती रहेगी अर्थात् सदा तुम्हारे ही पास निवास करेगी॥

पाहि प्रजाः। प्रजापो ब्राह्मण इव क्षत्रियोऽपि न लिप्यते पातकैः॥

कल्याणी—पाहीति। प्रजाः पाहि=पालय। प्रजाः पाति=रक्षतीति प्रजापः क्षत्रियोऽपि, प्रजापः—प्रकृष्टः जापः=जपनं यस्य तादृशः, ब्राह्मण इव=विप्र इव; पातकैः=पापैः, न लिप्यते=न दुष्यते। श्लेषानुप्राणितोपमा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—प्रजा का पालन करो। प्रजाप (प्रजा का पालन करने वाला) क्षत्रिय भी प्रजाप अर्थात् प्रकृष्ट जप करने वाले ब्राह्मण के समान पापों से लिप्त नहीं होता ॥

मा च वृद्धिं प्राप्य गुणेषु द्वेषं कार्षीः। व्याकरणे हि वृद्धिर्गुणं बाधते, न सत्पुरुषेषु ॥

कल्याणी—मा चेति। वृद्धिं=राज्यादिसमृद्धिं, प्राप्य च=अवाप्य च, गुणेषु=पाण्डित्यादिषु, द्वेषं मा कार्षीः=विरोधं मा कुर्याः। हि=यतः, व्याकरणे=व्याकरणशास्त्र एव, वृद्धिः='वृद्धिरेचि' इत्यादि-सूत्रविहित आदेशः, गुणम्='आद्गुणः' इति सूत्रविहितादेशं, बाधते=विरुणद्धि, न=नहि, सत्पुरुषेषु वृद्धिः=प्रगतिः, गुणं=पाण्डित्यादिं, बाधते=अवरुणद्धि। परिसंख्यालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—वृद्धि अर्थात् राज्य आदि समृद्धि को प्राप्त कर पाण्डित्यादि गुणों से द्वेष मत करो; क्योंकि केवल व्याकरण शास्त्र में ही वृद्धि गुण को बाधित करती है, सज्जनों की (होने वाली) वृद्धि (प्रगति) पाण्डित्यादि गुणों से विद्रोह नहीं करती अर्थात् सज्जनों की प्रगति उनके गुणों की रुकावट नहीं होती ॥

वत्स! मा चैवं चेतसि कृथाश्छान्दसोऽयम्। छान्दसश्च गुरुर्वक्रस्वभाव एव भवति तत्किमनेनेति। यस्माच्चतुरानन्दिपदः पुण्यश्लोको भवान्। अतोऽङ्गभावं यान्ति ते वक्रोक्तयोऽपि गुरवः। सरलतया लघवोऽप्यन्तरङ्गा भवन्ति। किन्तु ते ह्यवसाने कुटिलतामपि दर्शयन्ति ॥

कल्याणी—वत्सेति। वत्स!=वात्सल्यभाजन! अयं=मदुपदेशः, छान्दसः=कपटोक्तिरेव, छान्दसः—छन्दः=वेदः तद्वेत्तीति छान्दसः=वेदवेत्ता च, गुरुः=तत्त्वोपदेष्टा, अथ च छन्दः=छन्दःशास्त्रं, तस्यायं छान्दसः, गुरुः=छन्दोदृष्टो वक्राकारो (ऽ) दीर्घं आकारादिः। स वक्रस्वभावः=कुटिलरूप एव भवति, तत्त्वोपदेष्टा गुरू रूक्षभाषी भवति; अथ च छन्दोदृष्टो गुरुर्वक्राकारो लक्ष्यते, तत्किमनेन—तत्=तस्मात्, अनेन=गुरूपदेशेन किम्? न ग्राह्योऽयमुपदेश इति भावः। इति=एवं, चेतसि=मनसि, मा कृथाः=मा चिचिन्तः। यस्मात्=यतो हि, चतुरानन्दिपदः—चतुरानानन्दयतीति तादृशं पदं=राज्यं यस्य स भवान्, पुण्यश्लोकः=पवित्रयशाः। अथ च चत्वारि आनन्दीनि, पदानि=पादाः यस्य स तथोक्तः, पुण्यः=श्रेयान्, श्लोकः=पद्यम्। अतः=अस्मात् कारणात्, ते=पुण्यश्लोकस्य, वक्रोक्तयोऽपि=रूक्षभाषिणोऽपि, गुरवः=तत्त्वोपदेष्टारः, अङ्गभावम्=आत्मीयतां, यान्ति, अथ च वक्रोक्तयः=वक्राकारत्वेन प्रसिद्धाः गुरवः, श्लोकस्य=पद्यस्य, अङ्गभावम्=अवयवत्वं, यान्ति। सरलतया=एकमार्गतया, लघवः=लघुबुद्धयस्तुच्छा अपि, अन्तरङ्गाः=आत्मीयाः, भवन्ति किन्तु ते=लघवः, अवसाने=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्ते, कुटिलतामपि=कुटिलभावमपि, दर्शयन्ति=प्रकटयन्ति। अथ च सरलतया=ऋजुतया, लघवः=लेखाकृतयः, श्लोकस्य अन्तरङ्गा=मध्यगता भवन्ति, किन्तु ते अवसाने=पादान्ते, कुटिलतामपि दर्शयन्ति=कुटिला अपि भवन्ति, 'वा पादान्ते त्वसौ ग्वक्रः' इति वचनादिति भावः। एतेन छन्दःशास्त्रोक्तविधिना निर्मितस्य श्लोकस्य पुण्यश्लोकनलस्य चोपमानोपमेयभावो व्यज्यते ॥

ज्योत्स्ना—हे वत्स ! मेरा यह (उपदेश) छान्दस अर्थात् केवल कपटपूर्ण उक्तिमात्र है—इस प्रकार का विचार अपने मन में मत करना। छान्दस अर्थात् तत्त्वों का उपदेश करने वाला अथवा छान्दस (छन्दःशास्त्रसम्बन्धी) गुरु (ऽ) टेढ़े स्वभाव का ही होता है (गुरुपक्ष में—रूक्षभाषी ही होता है), इसलिए इससे क्या ? अर्थात् यह गुरूपदेश ग्रहण करने योग्य नहीं है—ऐसा विचार मत करना। क्योंकि चतुर लोगों को आनन्द प्रदान करने वाले राज्य से युक्त आप पुण्य कीर्ति वाले हैं अथवा—चार आनन्ददायक पादों वाला यह छन्दःशास्त्र कल्याणकारी श्लोक है। अतः वक्रोक्ति वाले (रूक्षभाषी) होते हुए भी गुरुजन आत्मीय ही होते हैं अथवा वक्र (टेढ़ी) आकृति के रूप में प्रसिद्ध गुरु (ऽ) भी उस पवित्र श्लोक का अङ्ग ही होता है। सरलतया अर्थात् सीधे मार्ग पर चलने पर लघु अर्थात् छोटी बुद्धि वाले भी अन्तरंग हो जाते हैं, किन्तु अन्त में वे भी अपनी कुटिलता को प्रदर्शित कर ही देते हैं। अथवा—सरल (सीधे) होने के कारण लघु (।) भी श्लोक के अन्तरङ्ग तो हो जाते है लेकिन अवसान अर्थात् चरण की समाप्ति पर वे भी कुटिल (गुरु – ऽ) हो जाते हैं ॥

विमर्श—लघु (।) एवं गुरु (ऽ) के रूप में दो प्रकार के वर्ण छन्दः-शास्त्र में होते हैं, लेकिन पाद की समाप्ति पर विकल्प से लघु भी गुरु हो हो जाता है ॥

तत्किं बहुना—

तथा भव यथा तात त्रैलोक्योदरदर्पणे।
विशेषैर्भूषितस्तैस्तैर्नित्यमात्मानमीक्षसे ॥१७॥

अन्वयः—हे तात ! तथा भव यथा तैः तैः विशेषैः आत्मानं भूषितः त्रैलोक्योदरदर्पणे नित्यम् ईक्षसे ॥१७॥

कल्याणी—तथेति। हे तात ! तथा=तेन प्रकारेण, भव यथा तैस्तैः=अस्मदुपदिष्टैः, विशेषैः=प्रजात्राणादिभिर्विशेषैः, उपलक्षितम् आत्मानं=स्वं, भूषितः—भुवि=पृथिव्याम्, उषितः=स्थित एव त्रैलोक्योदरदर्पणे—त्रैलोक्योदरं=त्रैलोक्यमध्यभाग एव दर्पणः तत्र [इति रूपकम्], नित्यम्=अविनश्वरम्, ईक्षसे=पश्यसि। अन्योऽपि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तैस्तैर्मण्डनविशेषैर्मण्डितमात्मानं दर्पणे पश्यतीति। सर्वथा यशसे प्रयतितव्यमिति भावः ॥ अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१७॥

ज्योत्स्ना—इसलिए अधिक कहने से क्या लाभ; हे तात ! ऐसा बनो; जिससे (मेरे द्वारा पूर्वोपदिष्ट) उन-उन प्रजारक्षण आदि विशेषताओं से स्वयं को त्रैलोक्य के मध्यभाग (आँगन) रूप दर्पण में नित्य ही (स्वयं) देख सको।

आशय यह है कि यदि तुम सदा-सर्वदा कीर्तिवर्धक कार्यों को करते रहोगे तो समस्त त्रैलोक्य में तुम्हारी ख्याति होगी; फलस्वरूप त्रैलोक्य के उदर अर्थात् पृथ्वी पर तुम स्वयं ही अपनी कीर्तिरूपी आत्मा को देख सकोगे ॥१७॥

किं चान्यत्—

बिभर्ति यो ह्यर्जुनवारि पौरुषं करोति नम्रे च न वा रिपौ रुषम्।
न तेन राज्ञा सहसागराजिता भवेन्मही किं सहसागरा जिता ॥१८॥

अन्वयः—हि यः अर्जुनवारिपौरुषं बिभर्ति, वा नम्रे रिपौ रुषं न च करोति, तेन राज्ञा सहसागराजिता सहसागरा मही किं जिता न भवेत् ॥१८॥

कल्याणी—बिभर्तीति। यः=यः नृपः, अर्जुनवारिपौरुषम्—अर्जुनं=कुन्तीपुत्रं, वृणोति=आच्छादयतीत्येवंशीलम् अर्जुनपराक्रमातिशायि, पौरुषं=पराक्रमं, बिभर्ति=धत्ते, वा=अथवा, नम्रे=विनीते, रिपौ=शत्रावपि, रुषं=कोपं, न च=नैव, करोति=विदधाति, तेन=तथाविधेन, राज्ञा=नृपेण, [सहसा-अगराजिता]—सहसा=शीघ्रमेव, अगैः=अष्टसंख्यकुलपर्वतैः, राजिता=अलंकृता, सहसागरा=ससमुद्रा, मही=पृथ्वी, किं, जिता=स्वायत्तीकृता, न भवेत्=न स्यात्, जितैवेति भावः। 'सहागराजिता–सहसागरा जिता' इति पादान्तयमकम्। वंशस्थं वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ'। इति ॥१८॥

ज्योत्स्ना—बल्कि और भी; क्योंकि जो अर्जुन (की कीर्ति) को आच्छादित करने वाले पराक्रम को धारण करता है अथवा विनीत शत्रु पर कभी भी क्रोध नहीं करता है— ऐसे राजा के द्वारा पर्वतों से सुशोभित समुद्र सहित पृथ्वी को (क्या) शीघ्र ही विजित नहीं कर लिया जाता ? अर्थात् अवश्य ही विजित कर लिया जाता है (समस्त पृथ्वी को अपने अधिकार में कर लिया जाता है) ॥१८॥

अपि च—

'किं तेन जातु जातेन मातुर्यौवनहारिणा।
आरोहति न यः स्वस्य वंशस्याग्रं ध्वजो यथा' ॥१९॥

अन्वयः—मातुः यौवनहारिणा तेन जातेन किम् ? यः जातु स्वस्य वंशस्य अग्रं ध्वजः यथा न आरोहति ॥१९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—किमिति। मातुः=जनन्याः, यौवनहारिणा—यौवनं=तारुण्यं, हरति=मुष्णातीत्येवंशीलेन, तेन जातेन=सुतेन, किम्, किमपि नेत्यर्थः। यः=जातः, जातु=कदाचिदपि, स्वस्य=आत्मनः, वंशस्य=कुलस्य, अग्रम्=समक्षम्, अथ च वंशस्य=वेणुदण्डस्याग्रं, ध्वजो यथा=ध्वज इव, नारोहति=आरोहणं न करोति, अग्रगण्यतां न यातीत्यर्थः। उपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१९॥

ज्योत्स्ना—और भी; माता के यौवन को विनष्ट करने वाले उस पुत्र से क्या लाभ? जो बाँस के अग्रभाग पर सुशोभित होने वाली ध्वजा के समान कभी भी स्वयं अपने कुल के समक्ष अग्रगण्यता को न प्राप्त कर ले।

आशय यह है कि जो पुत्र अपने वंश में अग्रगण्य न हो वह मात्र अपनी माता के यौवन का विनाशक ही होता है, उससे माता को कोई आनन्द नहीं प्राप्त होता, उसे जन्म देकर माता अपने-आपको गौरवान्वित नहीं महसूस करती ॥१९॥

एवमुक्त्वा विश्रान्तवाचि वाचस्पतिसमे मन्त्रिणि राजपि प्रेमार्द्रया दृशा नलमवलोक्य वक्तुमारभत॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, उक्त्वा=कथयित्वा, वाचस्पतिसमे=बृहस्पतितुल्ये, मन्त्रिणि=अमात्ये सालङ्कायने, विश्रान्तवाचि—विश्रान्ता वाक् यस्य तस्मिन्, विरतवचसीत्यर्थः। राजा=वीरसेनोऽपि, प्रेमार्द्रया=स्नेहपूर्णया, दृशा=दृष्टया, नलं=पुत्रम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, वक्तुमारभत=कथयितुमारब्धवान् ॥

ज्योत्स्ना—ऐसा कहकर बृहस्पतितुल्य मन्त्री सालंकायन के चुप हो जाने पर राजा वीरसेन ने भी स्नेहपूर्ण दृष्टि से नल को देखकर बोलना प्रारम्भ किया।

'तात! युक्तमुक्तोऽसि सालङ्कायनेन। कस्यान्यस्य निर्यान्ति वदनारविन्दादेवंविधाः पदे पदेऽर्थसमर्था मृद्वयो मृष्टाः श्लिष्टाश्च वाचः॥

तद्दर्शितस्तवानेन निर्वापितदेहः स्नेहः। स्वीकृतस्त्वं मनसा समस्तसाम्राज्यभारोद्वहनधुर्यतां प्रति। तेनायमनुशास्ति।

कल्याणी—तातेति। हे तात=वत्स! सालङ्कायनेन=मन्त्रिणा, युक्तम्=उचितम्; उक्तोऽसि=कथितोऽसि। अन्यस्य=सालङ्कायनादतिरिक्तस्य, कस्य=कस्य पुरुषस्य, वदनारविन्दात्—वदनं=मुखम्, अरविन्दं=कमलमिव तस्मात् [नात्र रूपकसमासोऽपि तूपमितसमासः; अन्यथाऽरविन्दस्य प्रधानतया तस्माद् वाङ्निर्गमनासम्भवः]। एवंविधाः=ईदृश्यः, पदे पदे=प्रतिपदे, अर्थसमर्थाः=अर्थव्यञ्जनसमर्थाः, मृद्वयः=कोमलाः, मृष्टाः=शुद्धाः, श्लिष्टाः=श्लेषयुक्ताः, च वाचः=वचांसि, निर्यान्ति=निःसरन्ति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्=तस्मात्, अनेन=मन्त्रिणा, तव=नलस्य, निर्वापितदेहः—निर्वापितः=शीतलीकृतः, देहः=शरीरं येन तादृशः, स्नेहः=वात्सल्यं, दर्शितः=प्रदर्शितः। त्वं मनसा=चित्तेन; समस्तसाम्राज्यभारोद्वहनधुर्यतां प्रति=सकलसाम्राज्यभारोद्वहनवोढृत्वविषये, स्वीकृतः=अङ्गीकृतः असि, तेन=तेन हेतुना, अयं=मन्त्री, अनुशास्ति=एवमुपदिशति ॥

ज्योत्स्ना—हे तात ! (पुत्र !) मन्त्री सालंकायन ने (तुमसे) ठीक ही कहा है। (सालंकायन से) अन्य किसके मुखारविन्द से इस प्रकार की प्रत्येक पद के द्वारा गम्भीर अर्थ को व्यञ्जित करने में समर्थ, कोमल, शुद्ध और श्लेषयुक्त वाणी निकल सकती है ? (अर्थात् ऐसा सालंकायन ही बोल सकते हैं, अन्य कोई नहीं)।

अतः इन्होंने तुम्हारे शरीर को शीतल करने वाले स्नेह को प्रदर्शित किया है। तुम समस्त राज्यभार को वहन करने वाले धुरे के रूप में हृदय से स्वीकृत किये गये हो, इसीलिए ये तुम्हें अनुशासित कर रहे हैं अर्थात् (इस प्रकार का) उपदेश दे रहे हैं ॥

युज्यते चैतत्।

कल्याणी—युज्यत इति। युज्यते च=उचितमपि, एतत्=अनुशासनम् ॥

ज्योत्स्ना—और यह अनुशासन उचित भी है ॥

तथाहि—

संग्रहं नाकुलीनस्य सर्पस्येव करोति यः।
स एव श्लाघ्यते मन्त्री सम्यग्गारुडिको यथा ॥२०॥

अन्वयः—गारुडिकः यथा (नाकु-लीनस्य) सर्पस्य संग्रहं करोति (तथैव) यः मन्त्री अकुलीनस्य (संग्रहं) न (करोति) स एव सम्यक् श्लाघते ॥२०॥

कल्याणी—संग्रहमिति। गारुड़िकः=गारुडमन्त्रवेत्ताऽऽहितुण्डिकः, यथा=येन प्रकारेण, नाकुलीनस्य—नाकुः=वल्मीकः, तत्र लीनस्य=प्रच्छन्नस्य, सर्पस्य=अहेः, संग्रहं=बन्धनं, करोति=विदधाति, तथा करणेन च श्लाघ्यते=प्रशंसापात्रं भवति, तथैव यः मन्त्री=योऽमात्यः, [न + अकुलीनस्य]—अकुलीनस्य=अनभिजातस्य पुरुषस्य, संग्रहं=स्वीकरणं, न करोति स एव मन्त्री सम्यक्=सर्वथा, श्लाघ्यते=प्रशस्यते। उपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२०॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि, गारुड़िक (गरुड़ के मन्त्र को जानने वाला अर्थात् सर्प को पकड़ने वाला) जिस प्रकार नाकु (बाँबी) में छिपे हुए सर्प का संग्रह कर (पकड़कर) सब प्रकार से प्रशंसा का भाजन होता है उसी प्रकार जो अकुलीन पुरुष का संग्रह नहीं करता अर्थात् स्वीकार नहीं करता वही मन्त्री सब प्रकार से प्रशंसनीय होता है, प्रशंसा प्राप्त करने का अधिकारी होता है ॥२०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं च —

न पश्यसि सांप्रतमिदमस्माकमतिभीरुभूपालमण्डलमिव बलिभिराक्रान्तम्, अशेषमङ्गम्, अतिजीर्णशीर्णकर्पटमिवावरीतुं न शक्यते। क्वाप्युपरिपतितभ्रूचक्रा भीरुभटपेटीव नष्टा दृष्टिः ॥

कल्याणी—नेति। न पश्यसि=नावलोकयसि, पश्यस्येवेत्यर्थः इति काक्वा प्रतीयते। साम्प्रतम्=अधुना, इदम्=एतत्, अस्माकमतिभीरुभूपालमण्डलमिव बलिभिः—बलयः=त्वक्शैथिल्यानि, ताभिः आक्रान्तं=व्याप्तं, पक्षे—बलिनः=बलवन्तः, तैः आक्रान्तं=पराभूतम्, अशेषं=समस्तम्, अङ्गं=शरीरम्, अतिजीर्णशीर्णकर्पटं—अतिजीर्णं शीर्णं च यत् कर्पटं=वस्त्रं, तदिव आवरीतुं=संवरीतुं, पक्षे—उत्तरीयवस्त्रत्वेन परिधातुं, न शक्यते, निःसौष्ठवादिति भावः। क्वापि भीरुभटपेटीव=त्रस्तभटसंघात इव, उपरिपतितं=शैथिल्यात् स्रस्तं, भ्रूचक्रं=भ्रूमण्डलं यस्यां सा, दृष्टिः, नष्टा=क्षीणत्वं गता, पक्षे—उपरिपतितं [प्रतिभटानां] भ्रूचक्रं यस्यां सा। शत्रौ विलोकयत्येव भीरवो नश्यन्ति पलायन्ते। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—(तुम) देख ही रहे हो कि अब हमारे ये समस्त अंग शक्तिशाली लोगों से आक्रान्त अत्यन्त भयभीत राजाओं के समान बलियों अर्थात् त्वचा की शिथिलता से आक्रान्त होकर उत्तरीय के रूप में धारण के अयोग्य अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण वस्त्र के समान शरीर के संवरण में समर्थ नहीं हैं। ऊपर से पड़ रही दृष्टियों (से ही नष्ट हो जाने) वाली डरपोक वीरमण्डली के समान (त्वचा की शिथिलता के कारण) ऊपर से लटक रहे भौंहों वाली दृष्टि भी नष्ट हो गई है अर्थात् क्षीण हो गई है।

आशय यह है कि वृद्धावस्था के प्रभाव से हमारा शरीर शिथिल हो गया है और दृष्टि भी कमजोर हो गई है, इसलिए राज्यभार को वहन करना मेरे लिए दुष्कर हो गया है ॥

ये हितवर्गोपदेशिनो मुख्यास्तेऽपि सालङ्कायनप्रभृतयो मन्त्रिण इव विरलीभूता दन्ताः। शब्दशास्त्रे हि राजादीनामदन्तता श्लाघ्यते, नान्यत्र ॥

कल्याणी—य इति। ये=इमे, हितवर्गोपदेशिनः—हितवर्गं=हितसमूहम् उपदिशन्ति तथा, मुख्याः=प्रधानभूताः, तेऽपि सालङ्कायनप्रभृतयो मन्त्रिण इव=अमात्यो यथा, विरलीभूताः=केचित्, न सर्वे तथाविधाः। तथा ये दन्ताः=रदाः, हि-तवर्गोपदेशिनः—हि=स्फुटं, तवर्गं=तवर्गगताक्षराणि, उपदिशन्ति=उच्चारयन्ति, तवर्गस्य दन्त्यत्वादिति भावः। मुख्याः=मुखे भवाः, तेऽपि विरलीभूताः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वार्धक्येन मांसमुक्तत्वाद् दन्ता विरला भवन्तीति भावः। शब्दशास्त्रे हि=व्याकरण-शास्त्र एव, राजादीनां='राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति सूत्रोक्तानां राजादिशब्दानाम्, अदन्तता=ह्रस्वाकारान्तता, श्लाघ्यते=प्रशस्यते, नान्यत्र, लोके राजादीनाम् अदन्तता=दन्तहीनता न प्रशस्यत इति भावः। परिसंख्याऽलङ्कारः; श्लेषमूलोपमा च; तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः॥

ज्योत्स्ना—जिस प्रकार हितों (हितकारक वचनों) का उपदेश देने वाले सालंकायन आदि प्रमुख मन्त्री विरले ही हैं उसी प्रकार स्फुट रूप से तवर्ग (त थ द ध न) का उच्चारण करने में समर्थ मुख में होने वाले दाँत भी थोड़े ही रह गये हैं। शब्दशास्त्र (व्याकरणशास्त्र) में ही ('राजाहःसखिभ्यष्टच्' सूत्रकथित) राजा आदि शब्दों की अदन्तता (ह्रस्व अकारान्तता) प्रशंसनीय होती है, अन्यत्र नहीं अर्थात् लोक में राजाओं की अदन्तता (दन्तहीनता) प्रशंसनीय नहीं होती॥

तदिदानीं मम वन्यश्वापदमिव विषयविमुखं मनो वनाय धावति। कृतं च यन्मनुष्यजन्मनि क्रियते॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, इदानीं=सम्प्रति, मम=मे, वन्यश्वापदमिव=वन्यप्राणीव, विषयविमुखं=इन्द्रियार्थेभ्यः पराङ्मुखं, पक्षे—जनपदेभ्यः विमुखं, मनः=चेतः, वनाय=वनं गन्तुं, धावति=त्वरते। मनुष्यजन्मनि=मानवजीवने, यत्=यत्कर्म, क्रियते, कृतं च तत्॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस समय सांसारिक विषयों से विमुख मेरा मन विषयों (जनपदों) से विमुख जंगली प्राणियों के समान वन की ओर भाग रहा है। मानव जीवन में जो (कार्य) किया जाता है वह मैंने कर लिया है॥

तथाहि—

एताः प्राप्य परोपकारविधिना नीताः श्रियः श्लाघ्यता-
मापूर्वापरसिन्धुसीम्नि च नृपाः स्वाज्ञां चिरं ग्राहिताः।
भूभारक्षमदोर्युगेन भवता जाता वयं पुत्रिण-
स्तत्संप्रत्युचितं यदस्य वयसस्तत्कर्म कुर्मो वने॥२१॥

अन्वयः—एताः श्रियः प्राप्य परोपकारविधिना श्लाघ्यतां नीताः, च आपूर्वापरसिन्धुसीम्नि नृपाः स्वाज्ञां चिरं ग्राहिताः, भूभारक्षमदोर्युगेन भवता वयं पुत्रिणः, तत् सम्प्रति अस्य वयसः यत् उचितं तत् कर्म (वयं) वने कुर्मः॥२१॥

कल्याणी—एता इति। एताः=इमाः, श्रियः=लक्ष्म्यः, प्राप्य=अवाप्य, परोपकारविधिना=परोपकारकर्मणि प्रयुज्य चेत्यर्थः। श्रियः=लक्ष्म्यः, श्लाघ्यतां=प्रशंसनीयतां, नीताः=प्रापिताः। आपूर्वापरसिन्धुसीम्नि=पूर्वसमुद्रादारभ्य पश्चिमसमुद्रपर्यन्तं;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नृपाः=राजानः, स्वाज्ञां=स्वकीयमादेशं, चिरं=चिरकालपर्यन्तं, ग्राहिताः=स्वीकृताः, णिजन्तग्रहधातोः प्रयोज्यकर्मणि क्तः। भूभारक्षमदोर्युगेन – भूभारे=राज्यभारोद्वहने, क्षमं=समर्थं, दोर्युगं=भुजयुगलं यस्य तादृशेन, भवता=नलेन, वयं, पुत्रिणः=प्रशस्त-पुत्रयुक्ताः, जाताः=सम्भूताः, तत्=तस्मात्, सम्प्रति=इदानीम्, अस्य वयसः=वार्धक्यस्य, यदुचितं=योग्यं तत्कर्म वयं, वने=अरण्ये, कुर्मः=विदध्मे। वर्तमानसामीप्ये लट्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि, इन सम्पत्तियों को प्राप्त कर और परोपकार के कार्यों में प्रयुक्त कर (मैंने) उन्हें प्रशंसनीय बना दिया है तथा समुद्र के पूर्वी छोर से लेकर पश्चिमी छोर तक के राजाओं से अपनी आज्ञाओं का बहुत समय तक पालन भी कराया है। पृथ्वी के भार को धारण करने में समर्थ बाहुओं वाले आपके द्वारा हम पुत्रवान भी हो गये हैं। इसलिए अब इस वृद्धावस्था के लिए उपयुक्त जो कर्म हैं उन्हें (हम) वन में करेंगे।

आशय यह है कि समस्त सांसारिक कार्यों को करने के साथ-साथ राज्य का सफल भोग भी मैं कर चुका हूँ, जिससे हमारी इच्छा तृप्त हो गई है और मानवजीवन में जो भी प्राप्तव्य होता है, उसे मैंने प्राप्त भी कर लिया है, इसलिए अब मैं आश्रमव्यवस्थानुसार वन में जाकर ईश्वर का चिन्तन करना चाहता हूँ ॥२१॥

इत्यभिधाय तत्कालमेव मौहूर्त्तिकानाहूयादिदेश—'कथ्यतां यौवराज्याभिषेकोत्सवाय दिवसः' इति ॥

कल्याणी इतिति। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तत्कालमेव=तत्क्षणमेव, मौहूर्तिकान्=दैवज्ञान्, आहूय=आकार्य, आदिदेश=आज्ञापयामास—यौवराज्याभिषेकोत्सवाय=यौवराज्याभिषेकोत्सवं कर्तुमित्यर्थः, दिवसः=दिनं, शुभमुहूर्तं इति यावत्। कथ्यतां=विज्ञाप्यताम्, इति=एवम्, आदिदेशेति क्रियापदेनान्वयः ॥

ज्योत्स्ना – इस प्रकार कहकर तत्काल ही ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाताओं को बुलाकर आदेश दिया—यौवराज्याभिषेक का उत्सव करने के लिए दिन अर्थात् शुभ मुहूर्त बतायें ॥

अथ कथयामासुस्तेऽपि— देव ! श्रूयतामद्यतनमेव राज्याभिषेकयोग्यमहः। केन्द्रस्थानवर्त्तिनः सर्वेऽप्युच्चग्रहाः, पुण्यो मासः, पूर्णा तिथिः श्लाघ्यो योगः, प्रशस्तो वारः, शुभं नक्षत्रम्, कल्याणी वेला, विधीयतां यद्विधेयम्' इत्यभिधाय स्थितेषु तेष्वनन्तरमेव 'सुश्रोणि ! श्रूयतां यदस्माभिः श्रुतमाश्चर्यम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, ते=मौहूर्तिका अपि, कथयामासुः=निवेदयाञ्चक्रुः—देव=महाराज !, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम्, अद्यतनमेव=अद्यसम्बन्ध्येव, अहः=दिनं, राज्याभिषेकयोग्यं=राज्याभिषेकोचितम्। सर्वेऽप्युच्चग्रहाः केन्द्रस्थानवर्तिनः—केन्द्रस्थानेषु=प्रथम-सप्तम दशमस्थानेषु वर्त्तन्ते, पुण्यः=पवित्रः मासः, पूर्णा तिथिः। पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमा चेति पूर्णास्तिथयः कथ्यन्ते। श्लाघ्यः योगः=प्रशंसनीयः योगः, योगः समयविभागविशेषः, ते च सप्तविंशतिसंख्याः प्रसिद्धाः। प्रशस्तः=शुभः, वारः=दिनम्, शुभं नक्षत्रम्, कल्याणी=कल्याणप्रदा, वेला, विधीयतां=क्रियतां, यद् विधेयं=कृत्यम्। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तेषु=मौहूर्तिकेषु, स्थितेषु=अवस्थितेषु, अनन्तरमेव=तत एव, हे सुश्रोणि !=सुजघने !, श्रूयताम्=आकर्ण्यतां, यदस्माभिः आश्चर्यं=कुतूहलं, श्रुतम्=आकर्णितम्॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् ही उन मौहूर्तिकों ने भी कहा—"हे राजन् ! सुनिये, आज का दिन ही राज्याभिषेक के लिए उपयुक्त है। (क्योंकि) सभी उच्च ग्रहकेन्द्र स्थान अर्थात् चतुर्थ, दशम एवं सप्तम स्थान में स्थित हैं, पवित्र महीना है, पूर्णा तिथि है, (पञ्चमी, दशमी और पूर्णिमा तिथियाँ पूर्णा कहलाती हैं) प्रशंशनीय योग है (योग सत्ताइस होते हैं), शुभ दिन है, शुभ नक्षत्र है और समय भी कल्याणप्रद है, (अतः) जो कृत्य (करना) हो वह करें।" इस प्रकार कहकर उन मौहूर्तिकों के बैठते ही (हंस ने कहा—) "हे सुमध्ये ! (अब वह) सुनो, जो आश्चर्य (उस समय) हम सबने सुना"॥

उचितमुचितमेतद्धैर्यधाम्नां नृपाणां
वयसि कटुनि कान्तालोचनानां तृतीये।
इति रभसमिवास्य प्रस्तुतं श्लाघमानो
वियति पटुरकस्मादुत्थितस्तूर्यनादः॥२२॥

अन्वयः—कान्तालोचनानां कटुनि तृतीये वयसि धैर्यधाम्नां नृपाणाम् उचितमुचितम् एतत् इति रभसम् इव अस्य प्रस्तुतं श्लाघमानः वियति अकस्मात् पटुः तूर्यनादः उत्थितः॥२२॥

कल्याणी—उचितेति। कान्तालोचनानां=रमणीनेत्राणां, कटुनि=अप्रिये, तृतीये वयसि=तृतीयावस्थायां, धैर्यधाम्नां=धैर्यशालिनां, नृपाणां=नरपतीनाम्, उचितमुचितमेतत्, संभ्रमे द्विरुक्तिः। अत्युचितमित्यर्थः। इति=एवं, रभसमिव=सवेगं सहर्षं वेव, 'रभसो वेगहर्षयो, रिति कोशः। अस्य=पुत्रस्य नलस्य, प्रस्तुतं=विचाराधीनं; राज्याभिषेकोत्सवं, श्लाघमानः=प्रशंसन्, वियति=आकाशे, अकस्मात्=सहसा, पटुः=सुश्राव्यः, तूर्यनादः=माङ्गलिकवाद्यध्वनिः, उत्थितः=उद्गतः, प्रसृत इति यावत्। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। मालिनी वृत्तम्॥२२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना –"रमणियों के नयनों के लिए कटु (अप्रिय) तृतीय अर्थात् वानप्रस्थ अवस्था में धैर्यरूपी तेज को धारण करने वाले राजाओं के लिए यह सर्वथा ही उचित है।" इस प्रकार से इस पुत्र नल के राज्याभिषेकोत्सवरूपी प्रस्तुत कार्य की प्रशंसा करती हुई आकाश में अचानक ही श्रवणरुचिकर मंगल वाद्यध्वनि गुंजायमान हो उठी ॥२२॥

अपि च—

उपरि परिमलान्धैः सस्वनं संचरद्भिः
मधुकरनिकुरम्बैश्चुम्ब्यमाना भरेण।
अविरलमधुधारासारसंसिक्तभूमिः
सदसि सुरविमुक्ता प्रापतत्पुष्पवृष्टिः ॥२३॥

अन्वयः—उपरि परिमलान्धैः सस्वनं सञ्चरद्भिः मधुकरनिकुरम्बैः भरेण चुम्ब्यमाना अविरलमधुधारासारसंसिक्तभूमिः सुरविमुक्ता पुष्पवृष्टिः सदसि प्रापतत् ॥२३॥

कल्याणी—उपरीति। उपरि=ऊर्ध्वं, पुष्पाणामिति भावः। परिमलान्धैः—परिमलेन=सौरभेण,अन्धैः=मत्तैरित्यर्थः। सस्वनं=सरावं, सञ्चरद्भिः=भ्रमद्भिः, मधुकरनिकुरम्बैः=मधुपसमूहैः,भरेण=आधिक्येन, पूर्णरूपेणेति यावत्। चुम्ब्यमाना=आच्छाद्यमाना, अविरलमधुधारासारसंसिक्तभूमिः—अविरलं=निरन्तरं, मधुधारासारेण=मकरन्दस्य प्रचुरवर्षणेन, संसिक्ता=आर्द्रीकृता, भूमिः=पृथिवी यया सा तथोक्ता, सुरविमुक्ता=देवकृता, पुष्पवृष्टिः=प्रसूनवर्षा, सदसि=सभाप्राङ्गणे, प्रापतत्=प्रकर्षेण समपद्यत। मालिनी वृत्तम् ॥२३॥

ज्योत्स्ना—और भी; (पुष्पों के) ऊपर सुगन्ध से मत्त, आवाज के साथ घूमते हुए भ्रमरों के द्वारा पूर्ण रूप से चुम्बित; मधुधारा (मकरन्द रस) की प्रचुर वर्षा से निरन्तर भूमि को सिञ्चित करती हुई देवताओं द्वारा की गई पुष्पवृष्टि राजसभा में उल्लसित हुई ॥२३॥

अवतेरुश्च तत्कालमेवाम्बरतलादुल्लसद्ब्रह्मकान्तिकलापपवित्रीकृताष्टदिग्भागभूमयः सकलसागरसरित्तीर्थाम्बुपूर्णकमण्डलुमृत्कुशकुसुमौषधिरुद्धपाणयो दर्शनादेवापनीतसमस्तकलिकल्मषाः केऽपि कुतोऽपि ब्रह्मर्षयः ॥

कल्याणी—अवतेरुरिति। तत्कालमेव=तत्क्षणमेव, कुतोऽपि=कुतश्चिद्देशादागताः, केऽपि=केचिद्, उल्लसद्ब्रह्मकान्तिकलापपवित्रीकृताष्टदिग्भागभूमयः—उल्लसता=प्रदीप्यमानेन, ब्रह्मकान्तिकलापेन=ब्रह्मतेजःपुञ्जेन, पवित्रीकृता=शुद्धीकृता, अष्टदिग्भागानां भूमिः यैस्ते, सकलसागरसरित्तीर्थाम्बुपूर्णकमण्डलुमृत्कु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शकुसुमौषधिरुद्धपाणयः—सकलानां=समस्तानां, सागराणां=समुद्राणां, सरिता=नदीनां च तीर्थानां च अम्बुभिः=जलैः पूर्णा ये कमण्डलवस्तैस्तथा, मृदा=मृत्तिकया; कुशैश्च कुसुमैश्चौषधिभिश्च रुद्धा=युक्ताः, पाणयः=कराः येषां ते, दर्शनादेव अपनीतसमस्तकलिकल्मषाः—अपनीतः=दूरीकृतः, समस्तः=सकलः, कलिकल्मषः=कलेः पापं यैस्ते, तथाविधा ब्रह्मर्षयश्च अम्बरतलाद्=गगनप्रदेशात्, अवतेरुः=भूमावाजग्मुः ॥

ज्योत्स्ना—और तत्काल ही कहीं से आते हुए, देदीप्यमान ब्रह्मतेजोराशि से आठो दिशाओं की भूमि को पवित्र करते हुए, समस्त सागरों, सरिताओं और तीर्थों के जलों से पूर्ण कमण्डलु तथा (उन-उन स्थानों की) मिट्टी, कुशों, पुष्पों और औषधियों को हाथों में लिये हुए, दर्शनमात्र से ही कलि के समस्त पापों को दूर करने वाले कुछ ब्रह्मर्षि आकाश से (भूमि पर) अवतरित हुए ॥

सहर्षेण सविनयेन सपरिवारेण च चलत्कर्णोत्पलगलद्बहलरजःपुञ्जपिञ्जरितकपोलपालिना पृथ्वीपालेन प्रणम्य कृतातिथेयाः समुचितान्यलञ्चक्रुरासनानि ॥

कल्याणी—सहर्षेणेति । सहर्षेण—हर्षेण=आनन्देन सहितस्तेन, सविनयेन—विनयेन सहितस्तेन, सपरिवारेण—परिवारेण=परिजनेन सहितस्तेन, चलत्कर्णोत्पलगलद्बहलरजःपुञ्जपिञ्जरितकपोलपालिना—चलद्भ्यां=चञ्चलाभ्यां, कर्णोत्पलाभ्याम्=अवतंसत्वेन कर्णयोर्धृताभ्यां, गलता=पतता, बहलरजःपुञ्जेन=समधिकपरागसमूहेन, पिञ्जरिता=पीतवर्णकान्ति गता, कपालपालिः=गण्डस्थली यस्य तेन, पृथ्वीपालेन=भूपतिना वीरसेनेन, प्रणम्य=प्रणामं कृत्वा, कृतातिथेयाः—कृतमातिथेयम्=अतिथिसत्कारः येषां ते तथोक्ताः ब्रह्मर्षयः, समुचितान्यासनानि अलञ्चक्रिरे=समुचितेष्वासनेषूपविविशुरिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—प्रसन्नता और नम्रता के साथ सपरिवार चञ्चल कर्णपुष्पों से गिरते हुए प्रचुर पराग-पुञ्ज से पिञ्जरित (पीत वर्ण की कान्ति से युक्त) गण्डस्थल (कपोलप्रदेश) वाले राजा वीरसेन द्वारा प्रणाम के पश्चात् अतिथिसत्कार किये गये (ब्रह्मर्षियों ने) अपने-अपने योग्य (प्रदत्त) आसनों को अलंकृत किया अर्थात् आसनों पर आसीन हुए ॥

कृतकुशलप्रश्नालापाश्च प्रस्तुतकुमाराभिषेकस्य नरपतेः स्वस्वकमण्डलुवारीणि दर्शयामासुः ॥

कल्याणी—कृतेति । कृतकुशलप्रश्नालापश्च—कृतः=सम्पादितः, कुशलप्रश्नालापः=कुशलप्रश्नवार्ता यैस्ते च [ब्रह्मर्षयः] प्रस्तुतकुमाराभिषेकस्य—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रस्तुतः=विज्ञापितः, कुमारस्य=नलस्य, अभिषेकः=राज्याभिषेकः येन तस्य, नरपतेः=राज्ञः वीरसेनस्य, स्वस्वकमण्डलुवारीणि=स्वस्वकमण्डलुगतजलानि, दर्शयामासुः=दर्शितवन्तः ॥

ज्योत्स्ना—कुशल-प्रश्नविषयक वार्ता किये गये (ब्रह्मर्षियों ने) राजकुमार नल के राज्याभिषेक के लिए प्रस्तुत राजा वीरसेन को अपने-अपने कमण्डलु के तीर्थजल को दिखलाया ॥

इदं मन्दाकिन्याः सलिलमवगाहागतमरुत्
पुरन्ध्रीणां पीनस्तनशिखरभुग्नोर्मिवलयम् ।
इदं कालिन्द्याश्च प्रविकसिततीरद्रुमलता-
पतत्पुष्पैरन्तःसुरभिततरङ्गं नृप पयः ॥२४॥

अन्वयः—नृप ! अवगाहागतमरुत्पुरन्ध्रीणां पीनस्तनशिखरभुग्नोर्मिवलयम् इदं मन्दाकिन्याः सलिलं, प्रविकसिततीरद्रुमलतापतत्पुष्पैः अन्तःसुरभिततरङ्गम् इदं कालिन्द्याः च पयः (अस्ति) ॥२४॥

कल्याणी—इदमिति । हे नृप !=राजन् !, अवगाहागतमरुत्पुरन्ध्रीणाम्—अवगाहाय=स्नानाय, आगतायाः=समायातायाः, मरुतां=देवानां, पुरन्ध्रयः=रमण्यः; तासां, पीनस्तनशिखरभुग्नोर्मिवलयं—पीनस्तनशिखरैः=स्थूलकुचाग्रभागैः, भुग्नः=भग्नः, ऊर्मिवलयः=तरङ्गचक्रवालं यस्य तत्, इदम्=एतत्, मन्दाकिन्याः=स्वर्गङ्गायाः, सलिलं=जलम् । प्रविकसिततीरद्रुमलतापतत्पुष्पैः—प्रविकसितानां=प्रकर्षेण विकचितानां, तीरद्रुमलतानां=तटस्थितवृक्षवल्लरीणां, पतद्भिः=स्खलद्भिः, पुष्पैः अन्तः=मध्ये, सुरभिताः=सुगन्धयः, तरङ्गाः=ऊर्मयः यस्य तत्, इदम्=एतत्, कालिन्द्याः=यमुनायाश्च, पयः=जलम्, अस्तीति शेषः । शिखरिणी वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी ।' इति ॥२४॥

ज्योत्स्ना—हे राजन् ! स्नान के लिए आई हुई देवताओं की रमणियों (देवांगनाओं) के स्थूल स्तनों से टूटी हुई तरंगपंक्ति वाला यह मन्दाकिनी (गंगा) का जल है और पूर्णरूप से विकसित तटस्थित वृक्षों एवं लताओं से झरते हुए पुष्पों से पूर्णतया सुगन्धित तरंगों से समन्वित यह जल कालिन्दी (यमुना) का है ॥२४॥

इदं गोदावर्यास्त्रिनयनजटाखण्डगलितं
महाराष्ट्रीनेत्रैः कृतकुवलयं मज्जनविधौ ।
इदं चापि प्रेङ्खन्मुनिजनविकीर्णार्घकमलं
पयो विन्ध्यस्कन्धस्थलविलुलितं नार्मदमपि ॥२५॥ युग्मम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—इदं त्रिनयनजटाखण्डगलितं मज्जनविधौ महाराष्ट्रीनेत्रैः कृतकुवलयं गोदावर्याः पयः, इदं चापि प्रेङ्खन्मुनिजनविकीर्णार्घकमलं विन्ध्यस्कन्धस्थलविलुलितं नार्मदमपि (पयः अस्ति) ॥२५॥

कल्याणी—इदमिति। इदम्=एतत्, त्रिनयनजटाखण्डगलितं—त्रिनयनस्य=शङ्करस्य, जटाखण्डात्=जटाजूटात्, गलितं=स्रुतं, तथा मज्जनविधौ=स्नानकर्मणि, तदवसर इति भावः। महाराष्ट्रीनेत्रैः—महाराष्ट्रीणां=महाराष्ट्रदेशस्य रमणीनां, नेत्रैः=नयनैः, कृतकुवलयं—कृतानि=जनितानि, कुवलयानि=नीलोत्पलानि यत्र तत्तादृशम्, गोदावर्याः=गोदावरीनद्याः, पयः=जलम्। इदं चापि प्रेङ्खन्मुनिजनविकीर्णार्घकमलं—प्रेङ्खन्ति=प्लवमानानि, मुनिजनैः विकीर्णानि=वितीर्णानि, अर्घकमलानि=सूर्यपूजोपहारभूतपङ्कजानि यत्र तादृशं, विन्ध्यस्कन्धस्थलविलुलितं—विन्ध्यस्य=विन्ध्यनामकस्य गिरेः, स्कन्धस्थलात्=स्कन्धभूखण्डात्, विलुलितम्=आविर्भूतं, नार्मदमपि=नर्मदासम्बन्धि च, पयः=जलमस्ति। नर्मदायां स्नानपराणां महाराष्ट्रीणां नेत्रैस्तज्जलं कुवलयाकुलं जातमिति नेत्रकुवलयोर्भेदेऽप्यभेदप्रतिपत्त्या भेदेऽभेदरूपातिशयोक्तिः। शिखरिणी वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—भगवान् शंकर के जटाजूट से स्रवित हुआ तथा स्नान के समय महाराष्ट्रदेशीय कामिनियों के नयनों से नीलकमल-सा बना हुआ यह जल गोदावरी का है और यह जल तैरते (भ्रमण करते) हुए मुनियों द्वारा बिखेरे गये अर्घकमलों वाले विन्ध्य पर्वत के स्कन्धभाग (चोटी) से आविर्भूत नर्मदा का है ॥२५॥

इतश्च—

तदेतत्पुण्यानां परममवधिं प्राप्तमुदधेः
पयः प्रक्षाल्याङ्घ्री शयनसमये शार्ङ्गधनुषः।
विहारायोन्मज्जद्वरुणवनितावृन्दवदनैः
क्षणं यत्रोत्फुल्लन्नवकमलखण्डश्रियमधात् ॥२६॥

अन्वयः—शयनसमये शार्ङ्गधनुषः अङ्घ्री प्रक्षाल्य पुण्यानां परमम् अवधिं प्राप्तम् उदधेः तत् एतत् पयः यत्र विहाराय उन्मज्जद्वरुणवनितावृन्दवदनैः (एतज्जलं) क्षणम् उत्फुल्लन्नवकमलखण्डश्रियम् अधात् ॥२६॥

कल्याणी—तदिति। शयनसमये=शयनावसरे, शार्ङ्गधनुषः—शार्ङ्गं धनुर्यस्य तस्य=विष्णोः, अङ्घ्री=चरणौ, प्रक्षाल्य=प्रक्षालनं कृत्वा, पुण्यानां=सुकृतानां, परममवधिं=परमसीमानं, प्राप्तं=गतम्; उदधेः=समुद्रस्य, तत् एतत्=इदं, पयः=जलं वर्तते, यत्र=यस्मिन्, विहाराय=क्रीडार्थम्, उन्मज्जद्वरुणवनितावृन्दवदनैः—उन्मज्जद्भिः=जलादूर्ध्वं दृश्यमानैः, वरुणवनितावृन्दस्य=वरुणवधूजनस्य, वदनैः=मुखैः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतज्जलं क्षणं=कश्चित्कालम्, उत्फुल्लन्नवकमलखण्डश्रियम्—उत्फुल्लतः=विकसतः, नवकमलखण्डस्य=नूतनकमलसमूहस्य, श्रियं=शोभाम्, अधात्=अभार्षीत्। नवकमलखण्डश्रियमिति पदस्य नवकमलखण्डश्रियमिव श्रियमिति सादृश्यार्थे पर्यवसानदसंभवद्वस्तुसम्बन्धनिदर्शनाऽलङ्कारः। शिखरिणी वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—और इधर; शयन के समय शार्ङ्ग नामक धनुष वाले भगवान् विष्णु के चरणों को धोकर पुष्पों की सर्वोच्च सीमा को प्राप्त किया हुआ यह जल समुद्र का है, जिस समुद्र में (इस जल ने) विहार के प्रसंग में स्नान करती हुई वरुणपत्नियों के मुखों से खिलते हुए नूतन कमलों की शोभा को धारण किया था ॥२६॥

राजा तु तत्कालमुन्मीलद्बहलपुलकाङ्कुरकोरकितदेहः किमप्यद्भुतरसेनावेशित इव विधूय शिरश्चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=वीरसेनस्तु, तत्कालं=तत्क्षणम्, उन्मीलद्बहलपुलकाङ्कुरकोरकितदेहः—उन्मीलद्भिः=उद्गच्छद्भिः, बहलपुलकाङ्कुरैः=समधिकरोमाञ्चाङ्कुरैः, कोरकितः=कुड्मलितः, देहः=शरीरं यस्य स तथाभूतः सन्, किमपि=किञ्चित्, अद्भुतरसेन=विस्मयस्थायिभावात्मकेनाद्भुतरसेन, आवेशित इव=स्ववशीकृत इव, शिरः=मूर्धानं, विधूय=विशेषेण कम्पयित्वा, चिन्तयाञ्चकार=वितर्कयामास ॥

ज्योत्स्ना—तत्काल ही अत्यधिक रोमाञ्चित शरीर वाले राजा ने कुछ अद्भुत रस के द्वारा अपने को वशवर्ती बनाये गये के समान शिर को हिलाते हुए विचार किया ॥

'नूनमयमस्मद्गृहे हरिहरब्रह्मणामन्यतमः कोऽप्यवतीर्णो भविष्यति। यतः क्वायं शिक्षाक्रमः, क्वेयमस्माकमाकस्मिकी यूनोऽस्याभिषेकाय बुद्धिः, क्व चानुकूलकालसंपत्तिः, क्व चामी समस्ताभिषेकोपकरणपाणयो महामुनयः ॥

कल्याणी—नूनमिति। नूनं=निश्चितम्, अयं=नलः, अस्माकं गृहे=भवने, हरिहरब्रह्मणां=विष्णुशिवविरञ्चीनाम्, अन्यतमः कोऽपि=कश्चिदेकतमः, अवतीर्णो भविष्यति, यतः=यस्मात्, क्व=कुत्र, अयं=एषः, शिक्षाक्रमः=उपदेशक्रमः, क्व=कुत्र इयमस्माकम् आकस्मिकी=अकस्मादागता, अस्य यूनः=नलस्य, अभिषेकाय=राजतिलकाय, बुद्धिः=विचारः, क्व=कुत्र च, अनुकूलकालसम्पत्तिः=अनुकूलमुहूर्तश्रेष्ठता, क्व=कुत्र चामी=एते, समस्ताभिषेकोपकरणपाणयः—समस्तानि=सकलानि, अभिषेकस्योपकरणानि=राजतिलकसामग्र्यः, पाणिषु=करेषु येषां तादृशाः महामुनयः=ब्रह्मर्षयः ॥

ज्योत्स्ना—निश्चित रूप से यह नल हमारे घर में विष्णु, शिव या ब्रह्मा में से कोई एक अवतीर्ण होकर (पुत्ररूप में) आया होगा; क्योंकि कहाँ यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपदेशक्रम, कहाँ इसके अभिषेक के लिए उत्पन्न हुआ हमलोगों का आकस्मिक विचार, कहाँ यह (अभिषेक के) अनुकूल मुहूर्त और कहाँ ये समस्त अभिषेक-योग्य सामग्रियों को हाथों में लिए हुए ब्रह्मर्षिगण ॥

सर्वथा नमोऽस्तु घटितदुर्घटाय वेधसे। यस्यायमेवमद्भुतो व्यापारः; इत्यवधारयन्नुत्थाय गृहीत्वा तानि तीर्थोदकानि कृत्वा कनककुम्भेषु तात्कालिकास्फालितमृदङ्गझल्लरीरवरभसोल्लास्यविलासिनीवृन्दैरानन्द्यमानो मङ्गलोद्गारमुखरपरिवृतः सह सालङ्कायनेन 'सहस्रं समास्तात एवानुपालयतुराज्यम्' इत्यभिदधानमनिच्छन्तमपि नलं बलान्निवेश्याभिषेकपट्टे स्वयमेवाभिषेकमकरोत् ॥

कल्याणी—सर्वथेति। सर्वथा=सर्वप्रकारेण, घटितदुर्घटाय—घटितं=योजितं, दुर्घटं=शिक्षाक्रमादिलक्षणं येन तस्मै, वेधसे=विधात्रे, नमः=प्रणामः, 'नमः-स्वस्ति'—इत्यादिना चतुर्थी। यस्य=यस्य वेधसः, अयम् एवम्=ईदृशः, व्यापारः=विधानम्, इति=एवम्, अवधारयन्=विनिश्चिन्वानः; उत्थाय तानि=ब्रह्मर्षिभिरानीतानि, तीर्थोदकानि=तीर्थवारीणि, गृहीत्वा=आदाय, कनककुम्भेषु=सुवर्णकलशेषु, कृत्वा=निधाय, तात्कालिकास्फालितमृदङ्गझल्लरीरवरभसोल्लास्यविलासिनीवृन्दैः—तात्कालिकः=तत्कालसञ्जातः, आस्फालितः=समुत्थितः, मृदङ्गानां=मुरजानां, झल्लरीणां च=झर्झराणां च वाद्यविशेषाणां, यः रवः=ध्वनिः, तेन रभसं=सवेगमुद्गतं, लास्यं=नर्तनं येषां तैः विलासिनीवृन्दैः=वाराङ्गनासमूहैः, आनन्द्यमानः=अभिनन्द्यमानः, मङ्गलोद्गारमुखरपरिवृतः—मङ्गलोद्गारे=शुभाशंसने, मुखराः=वाचालाः, शुभाशंसनपरायणा इति यावत्। तैः परिवृतः, सालङ्कायनेन=तन्नाम्ना मन्त्रिणा सह, राजा वीरसेनः, 'सहस्रं समाः=वर्षाणि, तातः=जनक एव, राज्यं परिपालयतु=परिरक्षतु' इति=एवम्, अभिदधानं=वदन्तम्, अनिच्छन्तमपि=अनभिलषन्तमपि, नलं बलात्=हठात्, अभिषेकपट्टे=अभिषेकासने, निवेश्य=उपवेश्य, स्वयमेव=आत्मनैव, अभिषेकं=राजतिलकं, नलस्येति भावः। अकरोत्=कृतवान् ॥

ज्योत्स्ना—सब तरह से (शिक्षाक्रमादिरूप) असम्भव कार्य को भी सम्भव कर देने वाले विधाता के लिए नमस्कार है, जिसका यह अद्भुत व्यापार है अर्थात् जो इस प्रकार का असम्भव कार्य किया करता है। इस प्रकार निश्चित करते हुए (राजा ने) उठकर (ब्रह्मर्षियों द्वारा लाये गये) उन तीर्थजलों को लेकर (उन्हें) सुवर्णकलशों में रखकर तत्काल उठने वाले मुरजों एवं झालों की ध्वनियों के साथ ही तीव्रता से नृत्य करती हुई वारांगनाओं से अभिनन्दित होते हुए; मंगलोद्गारों से घिरे हुए अर्थात् मांगलिक शब्दों का उच्चारण करते परिजनों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से घिरे हुए राजा वीरसेन ने मन्त्री सालंकायन के साथ "हजारों वर्ष तक पिता ही राज्य का पालन करें।" इस प्रकार कहकर अनिच्छा प्रकट करने वाले नल को बलात् अभिषेकपट्ट पर बैठाकर स्वयं ही उसका अभिषेक कर दिया ॥

परिधाप्य च मङ्गलाभरणवाससी सिंहासनमारोप्य पुत्रप्रेम्णा पुरः स्थित्वा कनकदण्डपाणिः क्षणं प्रातिहार्यमन्वतिष्ठत् ॥

कल्याणी—परिधाप्येति। मङ्गलाभरणवाससी=मङ्गलाभरणं वस्त्रं च, परिधाप्य=धारणं कारयित्वा, सिंहासनं=राज्यासनम्, आरोप्य=अधिष्ठाप्य च; पुत्रप्रेम्णा=पुत्रस्नेहेन, पुरः=अग्रे, स्थित्वा=अवस्थाय, कनकदण्डपाणिः—कनकदण्डः=सुवर्णयष्टिः, पाणौ=करे यस्य सः तथाभूतः सन्, क्षणं=कञ्चित्कालं, प्रातिहार्यं=प्रतिहारकर्म, अन्वतिष्ठत्=अकरोत् ॥

ज्योत्स्ना—और मांगलिक आभूषणों तथा वस्त्रों को पहनाकर सिंहासन पर अधिष्ठित कर पुत्रप्रेम के कारण (उसके) सामने स्थित (खड़े) होकर सुवर्णदण्ड को हाथ में लेकर कुछ काल तक प्रतिहारी के कार्य को सम्पन्न किया ॥

सालङ्कायनोऽप्यतिस्नेहेनास्योपरि लम्बितमुक्ताकलापमास्रवत्सुधाधारमिन्दुमण्डलमिव कनकदण्डमापाण्डुरमातपत्रमधारयत् ॥

कल्याणी—सालङ्कायन इति। सालङ्कायनोऽपि=तन्नामाऽमात्योऽपि; अतिस्नेहेन=समधिकप्रेम्णा, अस्य=नलस्य उपरि; लम्बितमुक्ताकलापम्—लम्बिता मुक्ताकलापा=मौक्तिकमाला यत्र तत्तथाविधम्, अतएव आस्रवत्सुधाधारम्—आस्रवन्ती=गलन्ती, सुधाधारा=अमृतप्रवाहः यस्मात्तादृशम्, इन्दुमण्डलं=चन्द्रमण्डलमिव, [इत्युपमा, चन्द्रमण्डलं छत्रस्य, सुधाधारा च मुक्ताकलापस्योपमानं बोध्यम्] कनकदण्डं—कनकस्य=सुवर्णस्य, दण्डः=यष्टिः यत्र तत्, आपाण्डुरं=शुभ्रम्, आतपत्रं=छत्रम्, अधारयत्=धृतवान् ॥

ज्योत्स्ना—सालंकायन ने भी अत्यधिक प्रेम से उसके (नल के) ऊपर मुक्तामणियों से खचित, अतएव अमृतधारा को बरसाते हुए चन्द्रमण्डल के समान सुवर्ण दण्ड वाले अत्यन्त शुभ्र छत्र को धारण कर लिया ॥

सामन्तचक्रं च चलच्चामीकरचारुचामरकलापव्यापृतकरपल्लवमस्याग्रे विनयमदर्शयत् ॥

कल्याणी—सामन्तेति। सामन्तचक्रञ्च=आश्रितराजसमूहश्च, चलच्चामीकरचारुचामरकलापव्यापृतकरपल्लवं—चलन्=कम्पमानः, चामीकरस्य=सुवर्णस्य, चारुः=रम्यः, यः चामरकलापः=चामरसमूहः, तत्र व्यापृतः=तत्परः, करपल्लवः=पाणिकिसलयः, यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, अस्य=नलस्य, अग्रे=पुरतः; विनयं=नम्रताम्, अदर्शयत्=दर्शितवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और सामन्तवर्गों ने भी कम्पायमान सुन्दर सुवर्ण के चामर-समूहों में अपने करपल्लवों को तत्पर कर इस नल के आगे नम्रता को प्रदर्शित किया ॥

मुनयोऽप्युच्चारयाञ्चक्रुश्चतुर्वेदप्रशस्तमन्त्रान् । उत्थाय च गृहीत्वाक्षताञ्शिरसि विकिरन्तोऽस्य पुनरिदमवोचन् ॥

कल्याणी—मुनय इति । मुनयोऽपि=ब्रह्मर्षयोऽपि, चतुर्वेदप्रशस्तमन्त्रान्—चतुर्णामपि वेदानां प्रशस्तमन्त्रान्=उत्तमोत्तममन्त्रान्, उच्चारयाञ्चक्रुः=उच्चारयामासुः । उत्थाय अक्षतान् च गृहीत्वा=आदाय, अस्य=नलस्य, शिरसि=मौलौ, विकिरन्तः=प्रक्षिपन्तः, पुनः=भूयः, इदम्=एतत्, अवोचत्=अकथयत् ॥

ज्योत्स्ना—मुनियों ने भी चारो वेदों के प्रशस्त अर्थात् उत्तमोत्तम मन्त्रों का उच्चारण किया और उठकर अक्षतों को लेकर उसके मस्तक पर छिड़कते हुए पुनः इस प्रकार कहा—

'यः स्कन्दस्य जगाद तारकजये देवः स्वयंभूः स्वयं
स्वःसाम्राज्यमहोत्सवेऽपि च शचीकान्तस्य वाचस्पतिः ।
ताभिस्तेऽद्य विरञ्चिवक्त्रसरसीहंसीभिराशास्महे
वैदीभिर्वसुधाविवाहसमये मन्त्रोक्तिभिर्मङ्गलम् ॥२७॥

अन्वयः—तारकजये स्वयं स्वयम्भूः देवः याः स्कन्दस्य स्वःसाम्राज्यमहोत्सवेऽपि च वाचस्पतिः शचीकान्तस्य (याः) जगाद ताभिः वैदीभिः विरञ्चिवक्त्रसरसीहंसीभिः मन्त्रोक्तिभिः अद्य वसुधाविवाहसमये ते मङ्गलम् आशास्महे ॥२७॥

कल्याणी—या इति । तारकजये=तारकासुरविजयकाले, स्वयम्=आत्मनैव, स्वयंभूः=ब्रह्मा, देवः=सुरः, या=मन्त्रोक्तीः, स्कन्दस्य=कार्तिकेयस्य, स्वःसाम्राज्यमहोत्सवेऽपि च=स्वर्गसाम्राज्यप्राप्तिमहोत्सवावसरेऽपि च; वाचस्पतिः=बृहस्पतिः, शचीकान्तस्य=इन्द्रस्य, च या मन्त्रोक्तीः, जगाद=उच्चारयामास, ताभिः वैदीभिः=वेदसम्बन्धिनीभिः, विरञ्चिवक्त्रसरसीहंसीभिः—विरञ्चेः=ब्रह्मणः, वक्त्रं=मुखमेव, सरसी=वापी, तत्र हंसीभिः=हंसीरूपाभिः, मन्त्रोक्तिभिः अद्य=सम्प्रति, वसुधाविवाहसमये—वसुधायाः=पृथिव्याः, विवाहः=यौवराज्याभिषेक इत्यर्थः, तत्समये ते=तव नलस्य, मङ्गलमाशास्महे=मङ्गलकामनां कुर्मः । 'विरञ्चिवक्त्रसरसीहंसीभिः' इत्यत्र परम्परितरूपकम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२७॥

ज्योत्स्ना—तारकासुर को विजित करने के अवसर पर स्वयं ब्रह्मदेव ने स्कन्द के लिए और स्वर्गसाम्राज्य की प्राप्ति (के उपलक्ष्य में) महोत्सव के अवसर पर साक्षात् बृहस्पति ने इन्द्र के लिए जिन मंत्रोक्तियों का उच्चारण किया था

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्हीं वेदसम्बन्धी ब्रह्मा के मुखरूपी वापी में हंसीरूप मन्त्रोक्तियों के द्वारा आज पृथ्वी के विवाह अर्थात् राज्याभिषेक के समय (हम लोग) तुम्हारे मंगल की कामना करते हैं ॥२७॥

अन्यदपि तत्र दिवसे सुभ्रु समाकर्ण्यतां यदद्भुतमभूत् ॥

कल्याणी—अन्यदपीति। हे सुभ्रु !=दमयन्ति !, तत्र दिवसे=नलस्य राज्याभिषेकदिने, अन्यदपि=अपरमपि, यत् अद्भुतम्=आश्चर्यम्, अभूत्=अभवत्, तत् समाकर्ण्यतां=श्रूयताम् ॥

ज्योत्स्ना—हे सुभ्रु ! (दमयन्ती !) उस दिन अर्थात् नल के राज्याभिषेक के दिन अन्य भी जो आश्चर्य हुए (उन्हें) सुनो ॥

दिशः प्रसेदुः सुरभिर्ववौ मरुद्दिवो निपेतुः सुरपुष्पवृष्टयः।
कृताभिषेकस्य नलस्य निस्वनाननाहता दुन्दुभयोऽपि चक्रिरे ॥२८॥

अन्वयः—नलस्य कृताभिषेकस्य दिशः प्रसेदुः, सुरभिः मरुत् ववौ, दिवः सुरपुष्पवृष्टयः निपेतुः, अनाहता अपि दुन्दुभयः निःस्वनान् चक्रिरे ॥२८॥

कल्याणी दिश इति। नलस्य=वीरसेनपुत्रस्य, कृताभिषेकस्य—कृतः=विहितः, अभिषेकः=राजतिलकं यस्य तथाभूतस्य सतः, दिशः=पूर्वादिसकलाशाः, प्रसेदुः=प्रसन्ना बभूवुः, अथ च निर्मलतां ययुः। सुरभिः=सुगन्धिः, मरुत्=वायुः, ववौ=वहति स्म, दिवः=स्वर्गात, सुरपुष्पवृष्टयः=देवप्रसूनवृष्टयश्च, निपेतुः=अपतन्, अनाहताऽपि=अताडिता अपि, दुन्दुभयः=भेर्यः, निस्वनान्=शब्दान्, चक्रिरे=अकुर्वन्। वंशस्थं वृत्तम् ॥२८॥

ज्योत्स्ना—नल के राज्याभिषिक्त हो जाने पर दिशायें प्रसन्न (निर्मल) हो गईं, सुगन्धित वायु बहने लगी, आकाश से देवताओं के द्वारा पुष्पवृष्टि की गई और बजाये न जाने पर भी दुन्दुभियों ने शब्द किया अर्थात् दुन्दुभियाँ स्वयं ही बज उठीं ॥२८॥

अन्तरिक्षे च कोऽप्यदृश्यमान एवाशीःश्लोकद्वयमपठत् ॥

कल्याणी अन्तरिक्ष इति। अन्तरिक्षे=आकाशे च, कोऽपि=कश्चिदपि, अदृश्यमान एव=अलक्ष्यमाण एव, आशीःश्लोकद्वयम्=आशीर्वादात्मकं श्लोकयुग्मम्, अपठत्=उच्चारयतिस्म ॥

ज्योत्स्ना—और अन्तरिक्ष में भी अदृश्य होते हुए ही किसी ने निम्न दो श्लोक पढ़ा—

'अहीनां मालिकां बिभ्रत्तथापीताम्बरं वपुः।
हरो हरिश्च भूपेन्द्र ! करोतु तव मङ्गलम् ॥२९॥

अन्वयः—अहीनां मालिकां तथापीताम्बरं वपुः बिभ्रत् हरः हरिः च हे भूपेन्द्र ! तव मङ्गलं करोतु ॥२९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अहीनामिति । हरपक्षे—अहीनां=सर्पाणां, मालिकां=स्रजं, तथापीताम्बरम्—तथा+अपि+इताम्बरम्—तथा=तेन प्रकारेण, इतं=व्याप्तम्, अम्बरं=गगनं येन तत्तादृशमथवा इताम्बरं=गतवस्त्रं, दिगम्बरत्वात् । यदि वा [तथा+आ—पीताम्बरम्] आ=समन्तात् पीतं=ग्रस्तं, छन्नमिति यावत् । अम्बरं=गगनं येन तद्, वपुः=शरीरं, बिभ्रत्=धारयत्, हरः=शिवः, हे भूपेन्द्र=राजाधिराज !, तव=ते, मङ्गलं=कल्याणं, करोतु=विदधातु । न केवलं व्याप्तपृथ्वीकं वपुरपि तु इताम्बरं व्याप्ताकाशमपीत्यपिशब्दार्थोऽवधेयः ।

हरिपक्षे—अहीनां—न हीनां=पूर्णां प्रलम्बां च, मालिकां=स्रजं तथा पीताम्बरं—पीतम् अम्बरं=वस्त्रं यस्य तत्तादृशं, वपुः=शरीरं, बिभ्रत्=दधानः, हरिः=विष्णुश्च, हे भूपेन्द्र ! तव मङ्गलं करोतु । श्लेषालङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२९॥

ज्योत्स्ना—(शिवपक्ष में) हे राजाधिराज ! सर्पों की माला तथा आकाश को व्याप्त करने वाले अथवा (दिगम्बर होने के कारण) वस्त्रहीन अथवा आकाश को पूर्णतया पान करने वाले शरीर को धारण करने वाले भगवान् शिव तुम्हारा मंगल करें ।

(विष्णुपक्ष में) हे राजाधिराज ! अत्यधिक लम्बी माला तथा पीताम्बर-युक्त शरीर को धारण करने वाले भगवान् विष्णु तुम्हारा मंगल करें ॥२९॥

अपि च—

लीलया मण्डलीकृत्य भुजङ्गान्धारयन्हरः ।
देयाद्देवो वराहश्च तुभ्यमभ्यधिकां श्रियम् ॥३०॥

अन्वयः—लीलया भुजङ्गान् मण्डलीकृत्य धारयन् हरः देवः वराहः च तुभ्यं अभ्यधिकां श्रियं देयात् ॥३०॥

कल्याणी—लीलयेति । लीलया=अनायासेन, भुजंगान्=सर्पान्, मण्डलीकृत्य=वर्तुलाकारान् कृत्वा, धारयन्=दधानः, हरः=शिवः, [भुजं+गाम्]—भुजं=बाहुं, मण्डलीकृत्य गां=पृथिवीं, धारयन्=दधानः, देवः वराहश्च=वराहस्वरूपो भगवांश्च, तुभ्यं=नलाय, अभ्यधिकां=समधिकां, श्रियं=लक्ष्मीं, देयात्=दद्यात्, आशिषि लिङ् । अत्र भुजमण्डलीकरणोक्त्या वराहो नरवराहमूर्तिर्ज्ञेयो नरसिंहवत् । श्लेषाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३०॥

ज्योत्स्ना—और भी; अनायास ही सर्पों को वर्तुलाकार (गोल आकृति का) बनाकर धारण करने वाले भगवान् शिव तथा (अपनी) भुजाओं को वर्तुलाकार बनाकर पृथ्वी को धारण करने वाले भगवान् वराह तुम्हारे लिए समधिक लक्ष्मी प्रदान करें अर्थात् तुम्हें अत्यन्त समृद्धिपूर्ण बनावें ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्याशास्य विश्रान्तायां वियद्वाचि स्थित्वा च किञ्चित्कृतोचितापचितिषु गतेषु क्षणादन्तर्धानं मुनिषु 'समुच्छ्रीयन्तां वैजयन्त्यः, बध्यन्तां तोरणानि, सिच्यन्तां चन्दनाम्भोभिः पन्थानः, मण्ड्यन्तां मसृणमुक्ताफलक्षोदरङ्गावलीभिः प्राङ्गणानि, कुसुमप्रभाञ्जि चत्वराणि, पूज्यन्तां द्विजन्मानो देवताश्च, दीयन्तां दानानि, गीयन्तां मङ्गलानि, विसृज्यन्तां वैरिवन्द्यः, मुच्यन्तां पक्षिणोऽपि पञ्जरेभ्यः' इति श्रूयमाणेषु परितः परिजनालापेषु लास्योन्मादिनि मृदुमङ्गलोद्गारमुखरे संचरति पुरपथेषु पौरनारीजने स दिवसः संप्राप्तस्वर्गसुखस्येव भुक्ताशेषभुवनस्येवास्वादितामृतरसस्येवानुभूतपरमानन्दस्येव राज्ञः कृतकृत्यतां मन्यमानस्यातिक्रान्तवान् ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्, आशास्य=आशिषं दत्त्वा, वियद्वाचि=आकाशवाण्यां, विश्रान्तायां=विरतायां सत्याम्, किंचित्=कञ्चित्कालं, स्थित्वा=अवस्थाय, कृतोचितापचितिषु—कृता=विहिता, उचिता=योग्या, अपचितिः=आदरप्रदर्शनं यैस्तेषु, मुनिषु=ब्रह्मर्षिषु, क्षणात्=केनचित्कालेन, अन्तर्धानं गतेषु=अन्तर्हितेषु सत्सु [भावे सप्तमी], वैजयन्त्यः=पताकाः, समुच्छ्रीयन्तां=उद्धूयन्ताम्, ध्वजारोहणं क्रियन्तामित्यर्थः। तोरणानि=वन्दनमालिकाः, बध्यन्ताम्=स्थिरीक्रियन्ताम्, चन्दनाम्भोभिः=चन्दनमिश्रितजलैः, पन्थानः=राजमार्गाः, सिच्यन्ताम्=आर्द्रीक्रियन्ताम्, प्राङ्गणानि=अजिराणि, मसृणमुक्ताफलक्षोदरङ्गावलीभिः=उज्ज्वलमौक्तिकचूर्णमिश्रितरङ्गैः, मण्ड्यन्ताम्=अलंक्रियन्ताम्, चत्वराणि=चतुष्पथानि, कुसुमप्रभाञ्जि=पुष्पालङ्कृतानि [क्रियन्ताम्], द्विजन्मानः=विप्राः, देवताश्च=सुराश्च, पूज्यन्तां=सत्क्रियन्ताम्, दानानि दीयन्ताम्, मङ्गलानि=मङ्गलगीतानि, गीयन्ताम्, वैरिवन्द्यः=वैरिणां बन्दीकृताः स्त्रियः, विसृज्यन्तां=विमुच्यन्ताम्, पक्षिणोऽपि=शुकादयः खगा अपि, पञ्जरेभ्यो मुच्यन्तां=त्यज्यन्ताम्, इति=एवं, परितः=समन्तात्, परिजनालापेषु=भृत्यजनसंभाषेषु, श्रूयमाणेषु=आकर्ण्यमाणेषु सत्सु, पुरपथेषु=नगरमार्गेषु, लास्योन्मादिनि—लास्येन=नृत्येन, उन्मादिनि=उन्मत्तकारिणि, मृदुमङ्गलोद्गारमुखरे=मधुरमङ्गलगानवाचाले, पौरनारीजने=पौररमणीवृन्दे, संचरति=सञ्चरणं कुर्वति सति, सम्प्राप्तस्वर्गसुखस्येव=सम्प्राप्तं स्वर्गस्य सुखं येन तस्येव, भुक्ताशेषभुवनस्येव—भुक्तानि=उपभोगविषयीकृतानि, अशेषभुवनानि=समस्तलोका येन तस्येव, आस्वादितामृतरसस्येव—आस्वादितः अमृतरसः=सुधारसः येन तस्येव, अनुभूतपरमानन्दस्येव—अनुभूतः परमानन्दः=परमसुखं येन तस्येव [उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः], कृतकृत्यतां=कृतार्थतां, मन्यमानस्य=स्वीकुर्वाणस्य, राज्ञः=वीरसेनस्य, स दिवसः=नलराज्याभिषेकोत्सवदिनम्, अतिक्रान्तवान्=व्यतीतवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार से आशीर्वाद देकर आकाशवाणी के शान्त हो जाने पर, कुछ समय ठहरकर समुचित आदर का प्रदर्शन किये हुए ब्रह्मर्षियों के क्षणमात्र में ही अन्तर्धान हो जाने पर, "पताकायें फहराईं जायें (ध्वजारोहण किया जाय), चन्दनमालायें बाँधी जायें, चन्दनमिश्रित जल से राजामार्गों को सिञ्चित किया जाय, आँगनों को उज्ज्वल मौक्तिकचूर्णमिश्रित रंगों से अलंकृत किया जाय, चतुष्पथों (चौराहों) को पुष्पों से सजाया जाय, ब्राह्मणों और देवताओं की पूजा की जाय, दान दिये जायें, मङ्गलगीत गाये जायें, बन्दी बनाई गईं शत्रु-स्त्रियों को मुक्त किया जाय और पक्षियों को भी पिंजडों से मुक्त कर दिया जाय।" इस प्रकार से चारो ओर परिजनों की आवाजें सुनाई देने पर, नगरमार्गों पर (अपने) नृत्य से उन्मत करने वाली मधुर मंगलगानों से मुखरित नगरवनिताओं के निकल पड़ने पर, स्वर्गसुख को प्राप्त किये हुए के समान, समस्त लोकों का उपभोग किये हुए के समान, अमृतरस का आस्वादन किये हुए के समान तथा परमानन्द का अनुभव किये हुए के समान (अपने को) कृतकृत्य मानते हुए राजा ने (नलराज्याभिषेक का) वह दिन व्यतीत किया ॥

एवमतिक्रामत्सु केषुचिद्दिवसेषु, जरठीभूते महोत्सवव्यतिकरे, गतवति यथायथमामन्त्रितायाते समस्तसामन्तलोके, यौवराज्यरञ्जिते च परितः परिजने जनेश्वरो रिपुपयोधिवडवानलं नलमाबभाषे ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, केषुचिद्दिवसेषु=कतिपय-दिवसेषु, अतिक्रामत्सु=अपगच्छत्सु, महोत्सवव्यतिकरे=राज्याभिषेकमहोत्सववृत्तान्ते, जरठीभूते=जीर्णतां गते, आमन्त्रितायाते=आमन्त्रितत्वेनागते, समस्तसामन्तलोके=सकलसामन्तचक्रे, यथायथम्=एकैकशः, गतवति=प्रयाते सति, परितः=समन्तात्, परिजने=अनुचरवर्गे च, यौवराज्यरञ्जिते=यौवराज्याभिषेकेनानन्दिते सति, जनेश्वरः=राजा वीरसेनः, रिपुपयोधिवड़वानलं—रिपुरेव=शत्रुरेव, पयोधिः=समुद्रः, तस्य वडवानलं=वड़वाग्निरूपस्तं, नलं=राजकुमारम्, आबभाषे=जगाद। रिपुपयो-धिवडवानलमित्यत्र परम्परितरूपकम् ॥

ज्योत्स्ना इसी प्रकार से कुछ दिनों के व्यतीत हो जाने पर, राज्याभिषे-कमहोत्सवसम्बन्धी वृत्तान्त के पुराने पड़ जाने पर, आमन्त्रित के रूप में आये हुए समस्त सामन्तों के एक-एक कर चले जाने पर और यौवराज्य (के उत्सव से) से चारो ओर प्रजाजनों के आनन्दित हो जाने पर राजा वीरसेन शत्रुरूप समुद्र के लिए वडवाग्निसदृश नल से बोले ॥

तात! किमपि ब्रूमो यदि न खिद्यसे। संप्रति प्रियं सख्यं श्रेयस्क-रमस्माकमैणम्, न स्त्रैणम्। आभरणाय योग्या जटाभाराः, न हाराः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साहाय्याय साधवो बुधाः, न बान्धवाः। शयनायोचिता कुशपूलिका, न तूलिका। क्रीडायै वरा वेगवन्तो निर्झरप्रवाहाः, न वाहाः। प्रार्थनीयाश्च हरप्रसादा न प्रासादाः ॥

कल्याणी—तातेति। हे तात=वत्स! किमपि=किञ्चिदपि, ब्रूमः=वदामः, यदि न खिद्यसे=यदि त्वं न खिद्यसे, खेदं नानुभवसि। सम्प्रति=इदानीम्, अस्माकम् ऐणम्—एणानां=मृगाणामिदमित्यैणं=मृगसम्बन्धि, सख्युर्भावः सख्यं=मैत्री, प्रियं=रुचिकरं, श्रेयस्करं=कल्याणकरं, न तु स्त्रैणम्—स्त्रीणामिदमिति स्त्रैणं=स्त्रीसम्बन्धि सख्यम्। 'स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ' इति नञ् प्रत्ययः। जटाभाराः=जटाजूटाः, आभरणाय=अलङ्काराय, योग्या=उचिताः, न हाराः=मालाः। साधवः=सत्पुरुषाः, बुधाः=विद्वांसः, साहाय्याय=सहायताकरणीयाय, न बान्धवाः=बन्धुजनाः, शयनाय कुशपूलिका=कुशमयकटः, न तूलिका=तूलम्, उचिता=योग्या। क्रीडायै=क्रीडाकरणाय, वेगवन्तः=वेगशालिनः, निर्झरप्रवाहाः=स्रोतःप्रवाहाः, वराः=योग्याः, न वाहाः=अश्वाः। प्रार्थनीया=अभिलषणीयाश्च, हरप्रसादाः=शिवानुग्रहाः, न प्रासादाः=हर्म्याणि। परिसंख्याऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—हे वत्स! यदि (तुम) खेद का अनुभव न करो तो (मैं) कुछ कहना चाहता हूँ। इस समय हमलोगों के लिए मृगसम्बन्धी मित्रता ही कल्याणकर है, न कि स्त्रीसम्बन्धी मित्रता। जराजूट ही अलंकार के लिए उचित है, न कि हार। सहायता के लिए सज्जन विद्वान् ही उचित हैं, न कि बान्धव। शयन के लिए कुशों से निर्मित चटाई ही उचित है, न कि तूलिका (रुई का गद्दा)। क्रीडा के लिए वेगपूर्वक प्रवहमान झरनों का प्रवाह ही श्रेष्ठ है, न कि अश्व और भगवान् शंकर की कृपा ही प्रार्थनीय है, न कि प्रासाद (महल) ॥

तदायुष्मन्नेष दृष्टोऽस्यापृष्टोऽस्याश्लिष्टोऽसि क्षमितोऽसि दुरुक्तमुक्तः इत्यभिधायोत्सङ्गमारोप्य च तत्कालगलद्बहलबाष्पाम्बुप्लाविते वक्षसि निधाय परिष्वज्य च पुनः पुनः पुलकोरकितभुजलताभ्यामन्तर्मन्युभरनिरुध्यमानोत्तरमजस्रमास्रवदश्रुक्लिन्नकपोलमाविर्भवन्मोहमूर्छान्धकारकुञ्चितलोचनमिममाघ्राय मूर्धनि वनाय वनितासहायः प्रतस्थे ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, हे आयुष्मन्=चिरजीविन्! एषः=अयं, त्वं दृष्टोऽसि=अवलोकितोऽसि, आपृष्टोऽसि=आकथितोऽसि, आश्लिष्टोऽसि=आलिङ्गितोऽसि, क्षमितोऽसि=क्षमाकृतोऽसि, दुरुक्तम्=अभद्रम्, उक्तः=कथितः, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, उत्सङ्गम्=अङ्कम्, आरोप्य=अधिष्ठाप्य च, तत्कालगलद्बहलबाष्पाम्बुप्लाविते—तत्कालं=तत्क्षणं, गलद्भिः=स्रवद्भिः, बहलैः=समधिकैः, बाष्पाम्बुभिः=अश्रुजलैः, प्लाविते=आर्द्रीकृते, वक्षसि=वक्षःस्थले, निधाय= स्थापः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यित्वा, पुनः पुनः=भूयोभूयः, परिष्वज्य=आलिङ्ग्य च, पुलककोरकितभुजलताभ्यां—पुलकैः=रोमाञ्चैः, कोरकिताभ्यां=कुड्मलिताभ्यां, भुजलताभ्यां=बाहुलताभ्याम्, अन्तः=हृदये, मन्युभरेण=शोकातिशयेन, निरुध्यमानमुत्तरं=अवरुध्यमानकथनं यस्य तम्, अजस्रं=निरन्तरम्, आस्रवद्भिः=गलद्भिः, अश्रुभिः=बाष्पजलैः, क्लिन्नौ=प्लावितौ, कपोलौ=गण्डस्थलौ यस्य तम्, आविर्भवन्=प्रकटयन्, मोहाद्यो मूर्च्छान्धकारस्तेन कुञ्चिते=ईषन्निमीलिते, लोचने=नेत्रे यस्य तम्, इमं=एतं सुतं, मूर्धनि=शिरसि, आघ्राय=आघ्राणं कृत्वा, वनितासहायः=सपत्नीकः, वनाय=अरण्याय, प्रतस्थे=प्रस्थानमकरोत्। 'प्रतस्थे' इति 'समवप्रविभ्यः स्थः' इत्यात्मनेपदम् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए "हे आयुष्मन् ! (मैंने) तुम्हें देखा, पूछा, अलिङ्गित किया, क्षमा किया और अभद्र बातों को भी कहा" इस प्रकार कहकर और गोद में बैठा कर, तत्क्षण (अपनी आँखों से) गिरते हुए आँसुओं से भीगे वक्षःस्थल पर रखकर और बार-बार रोमाञ्च के कारण कण्टकित भुजाओं से आलिङ्गित कर आन्तरिक शोकाधिक्य के कारण उत्तर न देने वाले, निरन्तर अश्रुप्रवाह से क्लिन्न (गीले) कपोल वाले, प्रकट होते मोह के कारण मूर्च्छारूपी अन्धकार से बन्द किये हुए नेत्रों वाले नल के शिर की सूँघकर पत्नी के साथ वन के लिए प्रस्थान किये ॥

प्रस्थिते च तस्मिन्परिहृतराज्ये राजनि, रजनीवियुज्यमानचलच्चक्रवाकीष्विव कृतकरुणाक्रन्दासु प्रजासु, प्रतिभवनमुच्चलितेषु जरत्पौरजनेषु, 'कल्याणिन् ! एष पितृप्रणयप्रणामाञ्जलिरस्य क्रमागतकर्मकारिणः श्रुतशीलस्य कृतापराधस्यापि त्वया सहनीयाः कतिपयेऽप्यस्मदनुकम्पयाऽपराधाः। पश्य, पयोराशेर्नोद्वेगाय मृगाङ्कस्य मीलयन्तोऽपि कमलाकरान्कराः। किं न सहन्ते सुमनसोऽपि भ्रमरभरभञ्जनानि' इत्यभिधाय समर्प्य च स्वसुतमुच्चलिते च प्रेम्णानुगतभूभुजि भुजायामनिर्जितसाले सालङ्कायने, बालमत्स्य इव शुष्यत्सरःसलिलसन्तापवेपिताङ्गः, करिकलभ इव वियुज्यमानयूथपतिः, पतद्बहलबाष्पबिन्दुसंदोहैर्वक्षसि विधीयमानहारः 'हा तात' इति ब्रुवन्नलो न लोचने तं दिवसं समुदमीलयत् ॥

कल्याणी—प्रस्थित इति। परिहृतराज्ये—परिहृतं=परित्यक्तं राज्यं येन तादृशि, तस्मिन् राजनि=वीरसेने, [वनाय] प्रस्थिते=गते च, रजनीवियुज्यमानचलच्चक्रवाकीष्विव—रजन्या=रात्रौ, वियुज्यमानाः=पतिवियोगं लभमानाः, अतएव चलत्यः=विचेष्टमानाः, याश्चक्रवाक्यस्तास्विव [इत्युपमा], प्रजासु, कृतकरुणाक्रन्दासु—कृतः करुणाक्रन्दः=चीत्कारः, याभिस्तादृशीषु सतीषु, भवने भवने इति प्रतिभवनं, जरत्पौरजनेषु=वृद्धपुरवासिजनेषु, उच्चलितेषु=उद्गच्छत्सु सत्सु, हे कल्याणिन् !=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सौभाग्यशालिन् ! एषः=अयं, पितृप्रणयप्रणामाञ्जलिः=पितृस्नेहप्रणामाञ्जलिः, क्रमागतकर्मकारिणः=वंशपरम्परया सेवाकार्यपरायणस्य, कृतापराधस्यापि=कृतः अपराधो येन तस्यापि, अस्य श्रुतशीलस्य, कतिपयेऽपि=केऽपि, अपराधाः=अपराध-व्यवहाराः, अस्मासु या अनुकम्पा=दया, तया त्वया=नलेन, सहनीयाः=क्षन्तव्याः। पश्य=विलोकय। मृगाङ्कस्य=चन्द्रमसः, कमलाकरान्=कमलसमूहान्, मीलयन्तोऽपि=मुकुलयन्तोऽपि, कराः=किरणाः, पयोराशेः=जलाशयस्य, उद्वेगाय=प्रपीडनाय, [भवन्ति]। सुमनसोऽपि=पुष्पाण्यपि, भ्रमरभरभञ्जनानि—भ्रमराणां=मधुपानां, भराद्=भाराद्, भञ्जनानि=विदलनानि, न सहन्ते किम् ? सहन्त एवेत्यर्थः। इति=एवम्; अभिधाय=उक्त्वा, स्वसुतं=स्वपुत्रं श्रुतशीलं, समर्प्य च, प्रेम्णा=स्नेहेन, अनुगतभूभुजि—अनुगतः भूभुक्=नृपः वीरसेनः येन तस्मिन्, भुजायामनिर्जितसाले—भुजयोः=बाह्वोः, आयामेन=दैर्घ्येण, निर्जितः=पराभूतः, सालः=सर्जतरुर्येन तस्मिन्, सालङ्कायने=तन्नाममन्त्रिणि; उच्चलिते=उद्गते च, शुष्यत्सरःसलिलसन्तापवेपिताङ्गः—शुष्यतः=शोषं गच्छतः, सरःसलिलस्यः=जलाशयजलस्य, सन्तापेन=वियोग-क्लेशेन, वेपिताङ्गः=कम्पितदेहः, बालमत्स्य इव=मत्स्यशिशुरिव, वियुज्यमानयूथपतिः—वियुज्यमानः=पृथक्कृतः, यूथपतिः=यूथपगजः यस्मात्तादृशः, करिकलभ इव=गजशावक इव, पतद्बहलबाष्पबिन्दुसन्दोहैः=स्रवत्समधिकाश्रुबिन्दुप्रवाहैः, वक्षसि=वक्षःस्थले, विधीयमानः=विरच्यमानः, हारः=मुक्तमाला येन सः, 'हा तात' इति ब्रुवन्=प्रलपन्, नलस्तं दिवसं लोचने=नेत्रे, न समुदमीलयत्=उन्मीलनं न चकार। नेत्रे निमील्य तं दिवसमत्यवाहयदिति भावः। 'बालमत्स्य इवेत्यत्र करिकलभ इव' इत्यत्र चोपमा। 'नलो—नलो' इति यमकम् ॥

ज्योत्स्ना—और राज्य का परित्याग कर उन राजा वीरसेन के प्रस्थान कर जाने पर रात्रि में पति-वियोग को प्राप्त करने के कारण व्याकुल चक्रवाकी के समान प्रजाओं के करुण-क्रन्दन करने पर, वृद्ध पुरवासियों के अपने-अपने भवन में चले जाने पर, हे सौभाग्यशालिन् ! वंशपरम्परा से सेवाकार्य में तत्पर इस श्रुतशील की पितृस्नेह से (आपके लिए) प्रणामाञ्जलि है अर्थात् यह श्रुतशील आपसे पितृवत् स्नेह करते हुए आपको प्रणाम करता है। अपराध करने पर भी इस श्रुतशील के कुछ अपराध हमारे ऊपर दया करते हुए आपके द्वारा क्षमा कर देने चाहिए। देखें, कमलों को मुकुलित करती हुई भी चन्द्रमा की किरणें क्या समुद्र को उद्विग्न अर्थात् तरंगित नहीं करतीं ? क्या पुष्प भी भ्रमरों के भार के कारण (होने वाले अपनी पंखुड़ियों के) टूटन को सहन नहीं करते ?" इस प्रकार कहकर अपने पुत्र को समर्पित कर (अपनी) भुजाओं की विशालता से साल वृक्ष को पराजित करने वाले सालंकायन द्वारा भी प्रेम के कारण राजा का अनुगमन करते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुए चले जाने पर; सूखते हुए जलाशय के सन्ताप से कम्पायमान शरीर वाली छोटी मछलियों के समान, यूथपति से वियुक्त हाथी के बच्चे के समान, गिरते हुए समधिक अश्रुबिन्दुओं से वक्षःस्थल पर मोतियों की माला (अश्रुलड़ियाँ) बनाते हुए 'हा तात' इस प्रकार प्रलाप करते हुए राजा नल उस दिन (अपनी) आँखें नहीं खोल सके ॥

केवलममन्दमन्यूद्गारगद्गदया गिरा पुनः पुनरिमं श्लोकमपठत्—

कल्याणी—केवलमिति। केवलं=मात्रम्, अमन्दमन्यूद्गारगद्गदया—अमन्दः=समधिकः, यः मन्युः=शोकः, तस्य उद्गारेण=निष्कासनेन, गद्गदया=विह्वलया, गिरा=वाण्या, पुनः पुनः=मुहुर्मुहुः, इमं=वक्ष्यमाणं, श्लोकं=पद्यम्, अपठत्=पपाठ ॥

ज्योत्स्ना—केवल अत्यधिक शोक को व्यक्त करते हुए विह्वल वाणी से बार-बार इस श्लोक को पढ़ने लगे—

तत्तातस्य कृतादरस्य रभसादावाहनं दूरत-
स्तच्चाङ्के विनिवेश्य बाहुयुगलेनाश्लिष्य संभाषणम्।
ताम्बूलं च तदर्धचर्वितमतिप्रेम्णा मुखेनार्पितं
पाषाणोपम हा कृतघ्न हृदय स्मृत्वा न किं दीर्यसे ॥३१॥

अन्वयः—कृतादरस्य तातस्य रभसाद् दूरतः तत् आवाहनम् अङ्के विनिवेश्य बाहुयुगलेन आश्लिष्य तत् च सम्भाषणम्, अतिप्रेम्णा मुखेन अर्धचर्वितं तत् ताम्बूलम् अर्पितं स्मृत्वा हा पाषाणोपम ! कृतघ्नहृदयः किं न दीर्यसे ॥३१॥

कल्याणी—तदिति। कृतादरस्य—कृतः=विहितः, आदरः=सम्मानं येन तस्य, वत्सलस्येत्यर्थः। तातस्य=पितुः, रभसाद्=वेगाद् हर्षाद्वा, 'रभसो वेगहर्षयोः' इति कोशः। दूरतः=दूरादेव, तद् आवाहनम्=आमन्त्रणम्, अङ्के=क्रोडे, विनिवेश्य=समुपस्थाप्य, बाहुयुगलेन=भुजद्वयेन, आश्लिष्य=आलिङ्ग्य, तच्च सम्भाषणं=वार्तालापः, अतिप्रेम्णा=समधिकस्नेहेन, मुखेन=आननेन, अर्धचर्वितं तत् ताम्बूलमर्पितमित्येतत्सर्वं स्मृत्वा=संस्मृत्य, हा पाषाणोपम=प्रस्तरतुल्य ! कृतघ्न ! हृदय ! किं=कथं, न दीर्यसे=शतधा भिन्नं न भवसि ? शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३१॥

ज्योत्स्ना—वात्सल्य से परिपूर्ण पिता का जल्दी-जल्दी अथवा हर्ष के कारण दूर से ही वह बुलाना, गोद में बैठाकर दोनों बाहों से आलिङ्गन करते हुए उनका बोलना (बातें करना), अत्यधिक प्रेम के कारण आधे चबाये हुए पान को (अपने) मुख से (निकाल कर) देना—इन सब को स्मरण करके भी हे पत्थर के समान कठोर, कृतघ्न हृदय ! (तुम) विदीर्ण क्यों नहीं हो जाते ॥३१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतच्चाकर्ण्य दमयन्ती चिन्तितवती—'अहो, स्नेहवानार्द्रहृदयः खल्वसौ महानुभावः। तत्सर्वथास्मत्प्रीतिपात्रं भवितुमर्हति' इत्यवधारयन्ती पुनः पप्रच्छ—

कल्याणी—एतदिति। एतच्च आकर्ण्य=श्रुत्वा, दमयन्ती=भीमपुत्री, चिन्तितवती=चिन्तयामास—'अहो, स्नेहवान्=प्रशस्तः स्नेहोऽस्त्यस्येति तादृशः, आर्द्रहृदयः=स्निग्धचित्तः, खलु=निश्चयेन, असौ=नलः, महानुभावः=महाशयः। तत्=तस्मात्, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, अस्मत्=अस्माकं, प्रीतिपात्रं=स्नेहभाजनं, भवितुमर्हति'—इति=एवम्, अवधारयन्ती=विनिश्चिन्वन्ती, पुनः=भूयः, पप्रच्छ=पृष्टवती॥

ज्योत्स्ना—और इसे सुनकर दमयन्ती ने विचार किया—'अहो, यह महानुभाव (नल) तो अत्यन्त स्नेहयुक्त और कोमल हृदय वाले हैं। इसलिए सब प्रकार से हमारे प्रेमपात्र होने के योग्य हैं।' इस प्रकार निश्चय करती हुई पुनः पूछी—

'हुं हंस! ततस्ततः'॥

कल्याणी—हुं हंसेति। हुमित्यव्ययं प्रश्ने। हंस! ततस्ततः=तदनन्तरं, किं भूतमिति भावः॥

ज्योत्स्ना—हाँ, हे राजहंस! इसके बाद क्या हुआ?

सोऽपि राजहंसः कथामुपसंहर्तुमिच्छन्निमं श्लोकमुच्चारयाञ्चकार—

कल्याणी—सोऽपीति। स राजहंसोऽपि, कथामुपसंहर्तुमिच्छन्=कथोपसंहारं कर्तुमिच्छन्, इमं=वक्ष्यमाणं, श्लोकम्, उच्चारयाञ्चकार=पपाठ॥

ज्योत्स्ना—उस राजहंस ने भी कथा का उपसंहार (समाप्ति) करने की इच्छा करते हुए इस श्लोक का उच्चारण किया—

सुन्दरि! ततश्च—

किमपि परिजनेन स्वेन तैस्तैर्विनोदैः
पितृविरहविषादं सोऽथ विस्मार्यमाणः।
गमयति परिवर्त्तं वासराणामिदानीं
हरचरणसरोजद्वन्द्वदत्तावधानः ॥३२॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां हरचरणसरोजाङ्कायां चतुर्थ उच्छ्वासः समाप्तः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः— अथ सः स्वेन परिजननेन तैः तैः विनोदैः पितृविरहविषादं विस्मार्यमाणः इदानीं हरचरणसरोजद्वन्द्वदत्तावधानः वासराणां परिवर्तं गमयति ॥३२॥

कल्याणी— किमपीति । अथ=अनन्तरं, स=नलः, स्वेन=स्वकीयेन, परिजनेन=अनुचरवर्गेण, तैस्तैः=विविधैः, विनोदैः, पितृविरहविषादं=पितृवियोगजनितव्यथां, विस्मार्यमाणः=विस्मृतिपथं नीयमानः, इदानीं=सम्प्रति, हरचरणसरोजद्वन्द्वदत्तावधानः—हरचरणसरोजद्वन्द्वे=शिवपादपद्मयुगले, दत्तं=समर्पितम्, अवधानं=मनः येन स तादृशः, वासराणां=दिवसानां, परिवर्तं=परिक्रमणं, गमयति=व्यतियापयति। मालिनी वृत्तम् ॥३२॥

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां
चतुर्थ उच्छ्वासः समाप्तः ॥

ज्योत्स्ना— हे सुन्दरि ! इसके पश्चात्;

इसके पश्चात् वे नल अपने परिजनों के साथ नाना प्रकार के मनोविनोदों द्वारा पिता के वियोग से उत्पन्न व्यथा (कष्ट) को विस्मृत करते हुए इस समय भगवान् शंकर के चरणकमलों में (अपने) मन को लगाकर दिनों को व्यतीत कर रहे हैं ॥३२॥

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टप्रणीत दमयन्तीकथात्मक नलचम्पू
काव्य की श्रीनिवासशर्माकृत सविमर्श 'ज्योत्स्ना'
हिन्दी व्याख्या में चतुर्थ उच्छ्वास पूर्ण हुआ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पञ्चम उच्छ्वासः

अथ विश्रान्तवाचि वाचस्पताविवोच्चारितानष्टविस्पष्टवर्णे वर्णित-निषधराजे राजहंसे 'अहं सेवार्थी' इत्यभिधायोपरुध्यमाना कृतोत्तरासङ्गेन द्विजन्मना श्रुतानुरागेण। 'वत्से ! चिरान्मिलितासि' इत्युक्त्वेवाश्लिष्टा हृदये प्रवृद्धया चिन्तया। 'पुत्रि ! कथंकथमपि दृष्टासि' इति संभाष्येवालिङ्गिता सर्वाङ्गेषूत्कम्पजनन्या रोमाञ्चावस्थया। 'तरुणि ! त्यज्यतामिदानीं शैशवव्यवहारः' इत्यभिधायेव मुग्धे स्पृष्टा प्रमुखेण मुखे वैवर्ण्येन। 'मुग्धे ! मुच्यतां स्वच्छन्दभावः' इत्यनुशास्येव ग्राहिता निजाज्ञां गुरुणा मकरध्वजेन दमयन्ती। तथापि क्षणमिव महानुभावतामवलम्ब्यानुपलक्षितावस्थमवतस्थे ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, वाचस्पताविव=बृहस्पताविव [इत्युपमा]; उच्चारितानष्टविस्पष्टवर्णे—उच्चारिता=कथिता, अनष्टम्=अभ्रष्टं, विस्पष्टं च यथा स्यात्तथा वर्णाः=अक्षराणि येन तस्मिन्, वर्णितः=स्तुतः, निषधराजः=नलः येन तस्मिन्, राजहंसे=मराले, विश्रान्तवाचि—विश्रान्ता=विरता, वाक्=वाणी यस्य तस्मिन् तथाभूते सति, द्विजन्मना—द्वाभ्यां=पथिकहंसाभ्यां, जन्म=उत्पत्तिः यस्य तेन, प्रथममुदीच्यपथिकेन, सम्प्रति राजहंसेनापि नलस्य वर्णितत्वादनुरागोऽयं द्विजन्मेति भावः। कृतोत्तरासङ्गे—कृतः=जनितः, उत्तरे=उत्तरस्यां दिशि विषये; आसङ्गः=आसक्तिः येन तेन, नलस्योदीच्यत्वादिति भावः। श्रुतानुरागेण—श्रुतात्=आकर्णनात्, यः अनुरागः=प्रेमबन्धः, तेन 'अहं सेवार्थी'=सेवितुकामोऽहम्, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वेव; उपरुध्यमाना=व्याप्यमाना, अथ च कृतोत्तरासङ्गेन=धृतोत्तरीयवस्त्रेण, श्रुते=अध्ययने अनुरागो यस्य तेन द्विजन्मना=विप्रेण, सेवितुकामोऽहमित्यभिधाय उपरुध्यमाना=दाक्षिण्यं नीयमाना [एतेन विप्रानुरागयोरुपमानोपमेयभावो व्यज्यते, एवमग्रेऽपि] एवंभूता दमयन्ती, प्रवृद्धया=प्रकर्षेण वृद्धिं गतया, अथ च जरत्या चिन्तया 'वत्से=पुत्रि ! चिराद्=बहुकालादनन्तरं मिलिताऽसि' इत्येवमुक्त्वेव हृदये=चेतसि, आश्लिष्टा=चित्तेऽवष्टब्धेत्यर्थः। तथा उत्कम्पजनन्या—उत्कम्पं जनयतीति तया उत्कम्पजनन्या, अथ च उद्गतः कम्पः यस्यास्तादृश्या जनन्या=मात्रा, रोमाञ्चावस्थया=रोमाञ्चदशया, 'पुत्रि ! कथंकथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रादिति भावः। दृष्टासि=दृष्टिपथमागतासि' इति=एवं, संभाष्येव=उक्त्वेव, सर्वाङ्गेषु=सकलावयवेषु, आलिङ्गिता=आश्लिष्टा। प्रमुखेण=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रधानेन, अथ च प्रकृष्टं मुखं यस्य तेन, वैवर्ण्येन=निष्प्रभत्वेन, 'तरुणि ! त्यज्यतां=परिहीयताम्, इदानीं=सम्प्रति, शैशवव्यवहारः=शैशवोचितक्रियाकलापः' इति=एवम्, अनुशास्येव=अभिधायेव, मुग्धे=मनोज्ञे, मुखे=आनने, स्पृष्टा, गुरुणा=दुर्वहभारेण, अथ च—आचार्येण, मकरध्वजेन=कामदेवेन, मुग्धे=सरले !, मुच्यतां=त्यज्यतां, स्वच्छन्दभावः=स्वच्छन्दता' इति=एवम्, अनुशास्येव=उपदिश्येव, निजाज्ञां=स्वकीयमादेशं, ग्राहिता=अङ्गीकारिता [सर्वत्रोत्प्रेक्षालङ्कारः] । तथापि=एवंभूताऽपि दमयन्ती; क्षणमिव=कञ्चित्कालं, महानुभावतामवलम्ब्य=गम्भीरधैर्यभावमाश्रित्य, अनुपलक्षितावस्थम्—नोपलक्षिता=न प्रकाशं नीताऽवस्था तादृशी दशा यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा अवतस्थे=अवस्थिता बभूव । धैर्यमवलम्ब्य दमयन्ती तथा प्रायतत यथा कोऽपि तस्यास्तामवस्थां परिलक्षितुं न प्राभवदिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर बृहस्पति के समान उच्चारित सुस्पष्ट अक्षरों वाले, निषधाधिपति का वर्णन करने वाले राजहंस के बोलने से विरत हो जाने अर्थात् चुप हो जाने पर उत्तर दिशा में आसक्ति रखने वाले द्विजन्मा अर्थात् पथिक और राजहंस के द्वारा वर्णित किये गये नल-सम्बन्धी वर्णन को सुनने से उत्पन्न अनुराग ने "मैं सेवक हूँ" इस प्रकार कहकर उसे (दमयन्ती को) घेर लिया । "पुत्रि ! बहुत समय बाद मिली हो ।" यह कहकर बढ़ी हुई चिन्ता के द्वारा मानो वह हृदय से लगा ली गई । 'पुत्रि ! किसी-किसी प्रकार से दिखलाई पड़ी हो ।' यह कहकर समस्त अंगों में कम्पन उत्पन्न करने वाली रोमाञ्चावस्था द्वारा मानो वह आलिङ्गित कर ली गई । 'तरुणि ! बाल्यावस्था के व्यवहार का अब त्याग कर दो ।' यह कहते हुए अत्यधिक विवर्णता (उदासी) ने मानो उसके सुन्दर मुख का स्पर्श कर लिया । 'मुग्धे ! स्वच्छन्दता का त्याग कर दो ।' इस प्रकार अनुशासित करते हुए दुर्वह कामदेव ने मानो अपने आदेश को दमयन्ती से अंगीकार करा लिया । फिर भी कुछ समय तक गम्भीर धैर्यशीलता का आश्रयण कर (अपनी) उस अवस्था को प्रकट न करती हुई वह (दमयन्ती) बैठी रही अर्थात् अपनी पूर्ववर्णित अवस्थाओं को उसने प्रकट नहीं होने दिया ॥

तां च तथा बलात्सरलीभवन्निश्वाससूचितान्तर्मन्मथव्यथावेगाम्, अकाण्डकुण्ठितधैर्यासिधारां, हृत्पुण्डरीके मनोरथानीतनलावलोकनार्थमिवान्तर्मुखीभूतचक्षुर्व्यापाराम्, आकस्मिकस्मरापस्मारेण दाम्यन्तीं दमयन्तीमवलोक्य तदिङ्गिताकारकुशला परिहासव्यसनिनी परिहासशीला नाम सखी 'महानुभाव ! नास्माकमद्यापि तद्गुणश्रवणाय श्राम्यति श्रोत्रेन्द्रियम् । न तृप्यति प्रश्नरसायनाय जिह्वा । न सन्तुष्यति विशेषज्ञानाय शेमुषी । नानुरागायोपरमते मनः । तत्कथं कृतवानसि गीतस्येव विस्वरम्, वाद्यस्येव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वितालम्; लास्यस्येवान्यथापदप्रचारम्, अत्यन्तरसविच्छेदकारिणं कथाप्रक्रमस्य विरामम्; एतत्परमपि पिपासया पयः पातुमुद्यतस्येवाविरतायां तृषि वारिधारानिवारणम्। इयं सा भुञ्जानस्यार्धतृप्तिः, सोऽयमप्राप्तरतस्य रिरंसाव्याघातः। तन्न युक्तमिवान्तरे विरन्तुम्। निष्कारणोपकारिन्! प्रवर्त्यतां पुण्यराशेस्तस्य स्वरूपाख्यानामृतप्रपामण्डपो; निर्वान्तु च चिरकालमनङ्गग्रीष्मोपतप्ता एवंविधकन्यकाः प्रसारितश्रवणाञ्जलयः' इति दमयन्तीमर्धेक्षणेन कटाक्षयन्ती तं राजहंसमालापयाञ्चकार॥

कल्याणी—तां चेति। बलात्=हठात्, सरलीभवन्निःश्वाससूचितान्तर्मन्मथव्यथावेगां—सरलीभवद्भिः=दीर्घैरित्यर्थः, निश्वासैः सूचितः=प्रकटितः, अन्तः=हृदि, मन्मथव्यथावेगः=कामपीडातिशयः यस्यास्ताम्, अकाण्डकुण्ठितधैर्यासिधाराम्—अकाण्डे=अनवसरे, कुण्ठितः=मन्थरीकृतः, धैर्य एव असिः=कृपाणः, तस्य धारः=अग्रभागः यस्यास्ताम्, हृत्पुण्डरीके=हृदयकमले, मनोरथानीतनलावलोकनार्थमन्तर्मुखीभूतचक्षुर्व्यापारां—मन एव रथः, तेनानीतस्य नलस्यावलोकनार्थमिवान्तर्मुखीभूतश्चक्षुर्व्यापारः, यस्यास्ताम्, आकस्मिकस्मरापस्मारेण—आकस्मिकः=अकस्मादागतः, यः स्मरः=कामः, स एव अपस्मारः=मूर्च्छारोगः, तेन दाम्यन्तीं=गृह्यमाणां, स्मरपरवशामित्यर्थः। तां च दमयन्तीम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, तदिङ्गिताकारकुशला—तस्याः=दमयन्त्याः, इङ्गितं=चेष्टितम्, आकारः=मुखरागादिः, तत्र कुशला=निपुणा, परिहासव्यसनिनी—परिहास एव व्यसनमस्त्यस्या इति तथोक्ता, परिहासशीला=परिहासशीला नाम सखी, दमयन्तीं=भैमीम्, अर्धेक्षणेन=अपाङ्गदृष्ट्या, कटाक्षयन्ती=कटाक्षं कुर्वाणा, तं राजहंसम्, आलापयाञ्चकार=बभाषे—हे महानुभाव=महाशय! अद्यापि=इदानीमपि, तद्गुणश्रवणाय—तस्य=नलस्य, गुणानां=दयादाक्षिण्यादीनां, श्रवणाय=आकर्णनाय, अस्माकं श्रोत्रेन्द्रियं=नेत्रेन्द्रियं, न श्राम्यति=श्रान्ति न याति। प्रश्नरसायनाय—प्रश्नः=तद्विषयकपृच्छैव, रसायनम्=अमृतं, तस्मै जिह्वा=रसना, न तृप्यति=तृप्तिं न याति। शेमुषी=बुद्धिः, विशेषज्ञानाय=नलविषये समधिकज्ञानाय, न संतुष्यति=सन्तोषं नानुभवति। मनः=चित्तम् अनुरागाय=प्रेम्णे, नोपरमते=उपरतं न भवति। तत्कथं=तत्केन कारणेन, गीतस्य=गानस्य, विस्वरं=विरुद्धस्वरमिव, वाद्यस्य=वादनयन्त्रस्य, वितालं=विपरीततालमिव, लास्यस्य=नृत्यस्य, अन्यथापदप्रचारमिव—अन्यथा=अन्यप्रकारेण, शास्त्रविधिविरुद्धमिति भावः। पदप्रचारं=चरणसञ्चालनमिव, अत्यन्तरसविच्छेदकारिणं=समधिकरसभङ्गजनकं, कथाप्रक्रमस्य=कथाप्रसङ्गस्य, विरामम्=अवसानं, कृतवानसि=विहितवानसि। अयं भावः—यथा विपरीतस्वरो गीतस्य, विपरीततालो वाद्यस्य, अनुचितपदप्रचारो नृत्यस्य च रसभङ्गं करोति तथैवाकाण्डे त्वत्कृतः कथाविरामो रसविच्छेदं कृतवान्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न तवैतत्कर्तव्यमासीदित्युपमालङ्कारः। एतत्परमपि=एतदतिरिक्तमपि, पिपासया=तृषया, पयः=जलं, पातुमुद्यतस्येव अविरतायां=तृषि अशमितायां पिपासायां; वारिधारानिवारणं=जलधारानिरोधः। इयं सा भुञ्जानस्य=भोजनं कुर्वाणस्य; अर्धतृप्तिः=अपूर्णतृप्तिः, सोऽयम् अप्राप्तरतस्य—न प्राप्तं रतं=सुरतं येन तथोक्तस्य; रिरंसाव्याघातः—रन्तुमिच्छा रिरंसा, तस्यां व्याघातः=अन्तरायः। अयं भावः—अयमकाण्डे त्वत्कृतः कथाप्रक्रमस्य विरामः पिपासितस्य पयः पातुमुद्यतस्याकाण्ड एव जलधारानिवारणमिव, अथवा भोजनं कुर्वाणस्यार्धतृप्तिरिव, यद्वाऽप्राप्तसंभोगस्य रिरंसाव्याघात इव इति बिम्बप्रतिबिम्बभावे पर्यवसानान्निदर्शना, सा च मालारूपा। तत्=तस्मात्, अन्तरे=मध्ये, विरन्तुं=विरामं कर्तुं, न युक्तमिव=नोचितमिव; हे निष्कारणोपकारिन्=अकारणोपकारक! पुण्यराशेः=सुकृतसमूहस्य, तस्य=नलस्य, स्वरूपाख्यानं=सौन्दर्यवर्णनमेव अमृतप्रपामण्डपः=अमृतकुण्डकक्षः, प्रवर्त्यताम्=उद्घाट्यताम्, चिरकालं=बहुकालम्, अनङ्गग्रीष्मोपतप्ताः—अनङ्गः=कामः, स एव ग्रीष्मः तेन उपतप्ताः=सन्तप्ताः, एवंविधकन्यकाः=अनुकम्पनीया ईदृश्यः कन्याः, प्रसारितश्रवणाञ्जलयः—प्रसारिता=विस्तारिता, श्रवणाञ्जलिः=कर्णाञ्जलिर्याभिस्तथाविधाः सत्यः, निर्वान्तु=उपतापापगमेन तृप्तिमनुभवन्तु॥

ज्योत्स्ना—हठात् निकलते हुए दीर्घ निःश्वासों से हृदयस्थित समधिक कामपीड़ा प्रकट हो रही थी, धैर्यरूपी कृपाण (तलवार) की धार असमय ही कुण्ठित हो रही थी, हृदयकमल में मनरूपी रथ के द्वारा लाया गया नल को देखने के लिए आँखों का व्यापार कुछ अन्तर्मुख-सा हो गया था अर्थात् छिप-सा गया था, अकस्मात् आये हुए कामरूपी अपस्मार (मूर्च्छा रोग) से पकड़ी गई उस दमयन्ती को देखकर उसके (दमयन्ती के) संकेत आदि को पहचानने में निपुण हास-परिहासरूप व्यसन वाली अर्थात् विनोदी स्वभाव वाली परिहासशीला नाम की सखी तिरछी नजरों से दमयन्ती पर कटाक्ष करती हुई उस राजहंस से इस प्रकार बोली—"हे महानुभाव! इस समय भी उस (नल) के गुणों को सुनने के लिए हमारे श्रोत्रेन्द्रिय (कान) थकते नहीं हैं। प्रश्नविषयक पृच्छारूपी रसायन (अमृत) से जिह्वा भी तृप्त नहीं हो रही है। बुद्धि उसके विषय में विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए सन्तुष्ट नहीं हो रही है। मन भी उसके अनुराग से विरत नहीं हो रहा है। अतः गीत के विरुद्ध स्वर के समान; वाद्य के विपरीत ताल के समान, नृत्य के विरुद्ध पदसञ्चालन के समान (इस) कथाप्रसङ्ग के रस (आनन्द) को पूर्णतया भङ्ग करने वाला अवसान (समाप्ति) क्यों कर रहे हो? इससे अतिरिक्त भी (तुम्हारे द्वारा प्रकृत कथाप्रसङ्ग की समाप्ति के बारे में यह कहा जा सकता है कि) प्यास से जलपान करने को उद्यत व्यक्ति को जिस प्रकार प्यास के शान्त होने के पूर्व ही जलधारा को निरुद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर दिया जाय (उसी प्रकार का तुम्हारा यह व्यापार है)। यह कथाप्रसङ्ग की समाप्ति भोजन करते हुए व्यक्ति की आधी तृप्ति के समान है, इसी प्रकार यह सुरत (सम्भोग) को प्राप्त किये बिना रमण करने की इच्छा में ही विघ्न के समान है। इसलिए (कथा के) मध्य में ही इस प्रकार का विराम करना उचित नहीं है। हे निष्कारण उपकार करने वाले! पुण्य के समूह उस नल के सौन्दर्यवर्णनरूपी अमृतकुण्ड के कक्ष को उद्घाटित (विस्तृत) करो, जिससे बहुत समय से कामरूपी गर्मी से सन्तप्त होकर अपनी श्रवणाञ्जलि अर्थात् कानरूपी दोने को फैलाई हुई इस प्रकार की कन्यायें (सन्ताप के दूर होने से) तृप्ति का अनुभव कर सकें।।"

सोऽपि 'सुन्दरि! किमन्यत्तस्य समस्तस्त्रीहृदयप्रासादप्रतिष्ठापित-प्रतिमस्याद्यापि प्रशस्यते ॥

कल्याणी—सोऽपीति। सः=राजहंसोऽपि, अद्यापि=सम्प्रत्यपि, समस्तस्त्री-हृदयप्रासादप्रतिष्ठापितप्रतिमस्य—समस्ताः=निखिलाः, याः स्त्रियः=रमण्यः, तासां हृदयप्रसादेषु=हृदयभुवनेषु, प्रतिष्ठापिता=स्थापिता, प्रतिमा=मूर्तिः यस्य तस्य, अन्यत्=अपरं, किं प्रशस्यते ?

ज्योत्स्ना—उस राजहंस ने भी "हे सुन्दरि! आज भी समस्त रमणियों के हृदयरूपी प्रासाद (भवन) में प्रतिष्ठापित मूर्ति वाले उस (नल) की और क्या प्रशंसा की जाय ?

यत्र श्रूयमाणे न मधुरो वेणुवीणाक्वणः, दृष्टे नाभिरामः कामः। संभाषिते न सारा सरस्वती, परिचिते न श्लाघ्यममृतम्, अभ्यस्ते नानन्दीन्दुः; प्रसादिते न प्रशंसास्पदं धनदः ॥

कल्याणी—यत्रेति। यत्र=यस्मिन् नले, श्रूयमाणे=आकर्ण्यमाने, वेणुवीणा-क्वणः=वंशीवीणाध्वनिः, न मधुरः=मृदुलः [प्रतीयते], दृष्टे=यस्मिन्नले दृष्टे, कामः=कन्दर्पः, नाभिरामः=न मनोज्ञः प्रतीयते, संभाषिते=कृतसंभाषणे, सरस्वती=वाणी, न सारा=नोत्कृष्टा प्रतीयते, परिचिते=प्राप्तपरिचये, अमृतं=सुधारसं, न श्लाघ्यं=प्रशंसनीयं न प्रतीयते, अभ्यस्ते=समीपस्थे, इन्दुः=चन्द्रः, न आनन्दी=आनन्द-प्रदः न प्रतीयते, प्रसादिते=प्रसन्नीकृते, धनदः=कुबेरः, न प्रशंसास्पदं=न प्रशंसा-पात्रं प्रतीयते। अत्र वेणुवीणाक्वणादीनां प्रसिद्धोपमानानां निष्फलत्वाभिधानात्प्र-तीपाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—जिस नल के विषय में सुनते समय वंशी और वीणा की ध्वनि भी मधुर नहीं लगती, देख लेने पर काम भी सुन्दर नहीं लगता, वार्तालाप कर लेने पर सरस्वती भी उत्कृष्ट नहीं प्रतीत होती, परिचय प्राप्त कर लेने पर अमृत भी प्रशंसनीय नहीं रह जाता। जिसका सामीप्य प्राप्त हो जाने पर चन्द्रमा भ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनन्ददायक नहीं रह जाता और जिसको प्रसन्न कर लेने पर कुबेर भी प्रशंसा का पात्र नहीं रह जाता ॥

किं बहुना—

भवति यदि सहस्रं वाक्पटूनां मुखानां
निरुपममवधानं जीवितं चापि दीर्घम् ।
कमलमुखि तथापि क्ष्मापतेस्तस्य कर्तुं
सकलगुणविचारः शक्यते वा न वेति ॥१॥

अन्वयः—कमलमुखि ! यदि वाक्पटूनां मुखानां सहस्रं अपि च निरुपमम् अवधानं दीर्घं जीवितं भवति तथापि तस्य क्ष्मापतेः सकलगुणविचारः कर्तुं शक्यते वा न वा इति ॥१॥

कल्याणी—भवतीति । हे कमलमुखि !=सरसिजवदने, यदि=चेत्; वाक्पटूनां=वाक्कुशलानां जनानां, मुखानां=वदनानां, सहस्रं=सहस्रसंख्याकं, च=तथा, निरुपमं=लोकोत्तरम्, अवधानं=मनोयोगः, दीर्घं=चिरं, जीवितं=जीवनं च भवति, तथापि तस्य क्ष्मापतेः=भूपस्य नलस्य, सकलगुणविचारः—सकलानां=समस्तानां, गुणानां=शौर्यादीनां, विचारः=निर्धारणं, कर्तुं=विधातुं, शक्यते वा, न कर्तुं शक्यते वेति कथनं दुष्करमिति भावः । असम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्तिः ॥ मालिनी वृत्तम् ॥१॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; हे कमलानने ! यदि बोलने में कुशल लोगों के हजारों मुख हो जायँ, लोकोत्तर रूप से (उसके) वर्णन में वे दत्तचित्त हो जायँ और उनका जीवन भी लम्बा (चिरकालिक) हो जाय फिर भी उस पृथ्वीपति नल के समस्त गुणों का विचार अर्थात् उसके समस्त उत्कृष्ट गुणों का निर्धारण करने में वे समर्थ हो पायेंगे या नहीं—यह कहना अत्यन्त कठिन ही है ॥

अपि च—

संसाराम्बुनिधौ तदेतदजनि स्त्रीपुंसरत्नद्वयं
नारीणां भवती नृणां पुनरसौ सौभाग्यसीमा नलः ।
सा त्वं तस्य कुरङ्गशावनयने योग्यासि पृथ्वीपते-
रेतत्ते कथितं किमन्यदधुना यामो वयं स्वस्ति ते ॥२॥

अन्वयः—संसाराम्बुनिधौ तत् एतत् स्त्रीपुंसरत्नद्वयम् अजनि । नारीणां भवती नृणां पुनः असौ सौभाग्यसीमा नलः । कुरङ्गशावनयने ! सा त्वं तस्य पृथ्वीपतेः योग्या असि, एतत् ते कथितम्, अन्यत् किम् ? अधुना वयं यामः, ते स्वस्ति ॥२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—संसारेति। संसाराम्बुनिधौ=संसारसागरे, तत्=प्रसिद्धम्, एतत् स्त्रीपुंसरत्नद्वयम्-नारीनररत्नयुग्मम्, अजनि=जातम्। तद्रत्नद्वयमाह—नारीणामिति। नारीणां=स्त्रीणां, भवती=दमयन्ती, नृणां=पुरुषाणां; पुनरसौ सौभाग्यसीमा=सौभाग्यस्य सीमा, परमोत्कृष्टसौन्दर्यं इत्यर्थः। नलः=निषधाधिपः। हे कुरङ्गशावनयने=मृगशावकाक्षि !, सा=एषा, त्वं=भवती, तस्य पृथ्वीपतेः=भूपस्य नलस्य, योग्या=उचिताऽसि। एतत्=इदम्, ते=तुभ्यं, कथितम्=उक्तम्, अन्यत्=अपरं, किं कथनीयम्, अधुना=सम्प्रति, वयं यामः=गच्छामः, ते=तुभ्यं, स्वस्त्यस्तु। स्वस्तियोगे 'ते' इति चतुर्थ्यन्तम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—और भी; संसार-सागर में प्रसिद्ध ये दो ही स्त्री एवं पुरुष रत्न उत्पन्न हुए; स्त्रियों में आप अर्थात् दमयन्ती और फिर पुरुषों में सौभाग्य के सीमास्वरूप अर्थात् अत्यन्त उत्कृष्ट सौन्दर्य का स्वामी वह नल। हे मृगशावकाक्षि ! अर्थात् मृगशिशु के समान आँखों वाली ! स्त्रियों में रत्नस्वरूपा वह तुम उस राजा नल के सर्वथा योग्य हो अर्थात् उसकी जीवनसंगिनी बनने के लिए सबसे उपयुक्त हो—यह तुमसे कह दिया, और क्या कहना बाकी रहा ? इस समय हमलोग जा रहे हैं, तुम्हारा कल्याण हो ॥२॥

अन्यच्च—

चन्द्रमुखि ! महानाम्नि सुसंधिकृति सुसमासाख्याततद्धिते सत्कारके परिभाषाकुशले बलाबलविचारिणि विचार्यमाणे व्याकरणे प्रेष्यमाणे च दूते नापशब्दसम्बन्धो भवति। तत्प्रेष्यतां तथाविधस्तस्यान्तिकं कोऽपि दूतः ॥

कल्याणी—चन्द्रेति। हे चन्द्रमुखि !=चन्द्रानने !, महानाम्नि—महत् नाम प्रातिपदिकं तद्विषयकं, प्रकरणमप्युचारान्नाम यस्मिंस्तस्मिन्, सुसन्धिकृति—सुष्ठु सन्धिः=वर्णसंश्लेषः कृच्च=कृत्संज्ञकप्रत्ययश्च यत्र तस्मिन्, सुसमासाख्यातः तद्धिते—सुष्ठु समासः=तत्पुरुषादिः, आख्यातः=क्रिया, तद्धितः=अणादिः यत्र तस्मिन्, सत्कारके—सत्=शोभनं, कारकम्=अपादानादि यत्र तस्मिन्, परिभाषाकुशले—परिभाषाः='असिद्धं बहिरङ्गमन्तरङ्गे' इत्यादयः, ताभिः कुशले=प्रवीणे; बलाबलविचारिणि—बलाबलं=पूर्वापरविधीनां बाधस्थितिः, तद्विचारिणि=तद्विचारपूर्णे, विचार्यमाणे=विचारं क्रियमाणे, व्याकरणे=व्याकरणशास्त्रे, न अपशब्दसम्बन्धो भवति—अपशब्दः=असाधुशब्दः, तेन सम्बन्धो न भवति। अथ च—महत् नाम संज्ञा यस्य तस्मिन्, सुष्ठु सन्धिं=मैत्रीं, करोतीति तस्मिन्, सुष्ठु समासेन=संक्षेपेण, आख्यातं=कथितं तस्मै प्रेषकाय हितं येन तस्मिन्, सत्कारके=सत्क्रियाजनके, परितः भाषासु=विविधभाषासु, कुशलाः=दक्षाः, बलाबलं=शक्त्यशक्ती, तद्विचारिणि=तद्विचारपूर्णे, तादृशे दूते=संदेशवाहके च प्रेष्यमाणे=प्रहिते, नापशब्द-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्बन्धो भवति=नापवादशङ्का जायते। तत्=तस्मात्, तथाविधः=पूर्वोक्त-गुणसम्पन्नः, कोऽपि=कश्चिदपि, दूतः=सन्देशहरः, तस्य=नलस्य, अन्तिकं=सकाशं, प्रेष्यताम्। श्लेषाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और भी; (दूतपक्ष में) हे चन्द्रमुखि! महान् अर्थात् यशस्वी, सुन्दर मैत्री कराने वाले, अत्यन्त संक्षेप में भेजने वाले का हित कहने वाले, शुभ कार्यों को करने वाले, अनेक भाषाओं में प्रवीण और बलाबल अर्थात् शक्तिमान और शक्तिहीन का विचार करने वाले दूत को प्रेषित करने (भेजने) पर किसी प्रकार के अपवाद की शंका नहीं होती। इसलिए पूर्वोक्त गुणों से सम्पन्न किसी दूत को उस राजा नल के समीप भेजो।

(व्याकरणपक्ष में) महत् नामक प्रातिपदिक वाले, सुन्दर सन्धि (वर्ण-संश्लेष) और कृदन्तसंज्ञक प्रत्ययों वाले, सुन्दर समास, क्रिया और तद्धित वाले, उत्तम कारक वाले, (असिद्धं बहिरङ्गमन्तरङ्गे इत्यादि) पारिभाषाओं के कारण कुशल, पूर्व और अपर विधियों की बाधस्थिति के विचार से परिपूर्ण विचार्यमाण व्याकरण शास्त्र में अपशब्दों का सम्बन्ध नहीं होता॥

'न च बृहत्यासंपदान्विते जगत्याख्याते सत्कृतगुरुगणे शार्दूलविक्रीडिताडम्बरिणि पुण्यश्लोके पर्यालोच्यमाने छन्दसि प्रार्थ्यमाने च तस्मिन्निषधेश्वरे वृत्तभङ्गो भवति' इत्यभिधाय गन्तुमुदचलत्॥

कल्याणी—दूतप्रेषणेन स्वाच्छन्द्यं नाम दोषो हि जायते, येन मम शील-भङ्गो भविष्यतीत्याशङ्क्याह—न चेति। [बृहत्या-सम्पदान्विते। जगत्या-ख्याते] बृहत्या जगत्या च=बृहती नाम छन्दः जगती नाम छन्दश्च, ताभ्यां या संपद् तयाऽन्विते=संयुक्ते, ख्याते=प्रसिद्धे च, सत्कृतगुरुगणे—सत्कृतः=वैशिष्ट्येन स्वीकृतः, गुरुगणः==गुरुवर्णसमुदायः येन तस्मिन्, शार्दूलविक्रीडिताम्बरिणि—शार्दूलविक्रीडितं नाम छन्दस्तेन आडम्बरिणि=समृद्धे, पुण्यश्लोके—पुण्याः=उत्तमोत्तमाः, श्लोकाः=पद्यानि यस्मिँस्तस्मिन्। यद्यपि श्लोकशब्दोऽनुष्टुप्छन्दोवाचकत्वेन लोके प्रसिद्धस्तथापि सामान्यतोऽयं सर्वविधपद्यबोधकत्वेनापि प्रयुज्यते इति बोध्यम्। छन्दसि=छन्दःशास्त्रे, पर्यालोच्यमाने=विचार्यमाणे, वृत्तभङ्गः=छन्दोभङ्गः नाम दोषः, न भवति=न हि जायते। अथ च बृहत्या=गुर्व्या, सम्पदाऽन्विते—संपदा=श्रिया, अन्विते=युक्ते, [जगति+आख्याते] जगति=लोके, आख्याते=प्रसिद्धे, सत्कृतगुरुगणे—सत्कृतः=पूजितः, गुरुगणः=आचार्यसमुदायः येन तस्मिन्, शार्दूल-विक्रीड़िताडम्बरिणि—शार्दूलविक्रीडितं=सिंहविलसितं, तेन आडम्बरिणि=शोभाशालिनि, पुण्यश्लोके—पुण्यः श्लोकः=यशः यस्य तस्मिन्, पवित्रयशसीत्यर्थः। तस्मिन्=प्रसिद्धे, निषधेश्वरे=निषधाधिपतौ, प्रार्थ्यमाने=स्तूयमाने, वृत्तभङ्गः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शीलविच्छेदः, न भवति, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, गन्तुमुदचलत्=गन्तुमुद्यतो बभूव। श्लेषाऽलङ्कारः। छन्दःशास्त्रे नले च श्लेषाधारेणोपमानोपमेयभावो व्यज्यते ॥

ज्योत्स्ना—(नलपक्ष में)—"अकूत सम्पदा से समन्वित, संसार में विख्यात, गुरुजनों का सत्कार करने वाले, सिंह के समान पराक्रमी होने के कारण शोभायमान और पवित्र यश वाले उस निषधनरेश नल की अभ्यर्थना करने पर किसी प्रकार से भी शीलभङ्ग नहीं होता।"

(वेदपक्ष में) "बृहती तथा जगती नामक छन्दरूपी सम्पदा से समन्वित तथा प्रसिद्ध; गुरु वर्णों को विशेष रूप से स्वीकार करने वाले, शार्दूलविक्रीड़ित-नामक छन्द के समान गरिमापूर्ण पवित्र (उत्तमोत्तम) श्लोकों (मन्त्ररूपी पद्यों) से समन्वित छन्दःशास्त्र (वेद) के पर्यालोचन अर्थात् विचार करते समय छन्दोभङ्ग दोष नहीं होता।"

इस प्रकार कहकर (वह हंस) चलने के लिए उठ खड़ा हुआ।

विमर्श—प्रयुक्त शब्द 'पुण्यश्लोक'-गत 'श्लोक' शब्द यद्यपि अनुष्टुप् छन्द के वाचक के रूप में लोक एवं छन्दोग्रन्थों में प्रसिद्ध है, फिर भी सामान्यतया समस्त संस्कृतपद्यों के बोधक के रूप में भी यह प्रयुक्त होता है।

इसी प्रकार प्रयुक्त 'वृत्तभंग' शब्द छन्दोभंग और शीलभंगरूप दोनों ही अर्थों का वाचक है; क्योंकि 'वृत्त' शब्द छन्द एवं व्यवहार दोनों ही अर्थों को धारण करने वाला है।

प्रकृत पद्य में निषधेश्वर की अभ्यर्थना एवं छन्दःशास्त्र (वेद) के पर्यालोचन में मात्र शब्दगत साम्य है, अर्थगत साम्य नहीं है ॥

उच्चलितं च तं परिहासशीला पुनर्बभाषे—

'महानुभाव ! यथेयमनुरागकन्दलैरालापैस्त्वयोक्ता, तथा सोऽपि स्पृहणीयोक्तिभिरभिधातव्यः। यतो न ह्येकहस्ततलेन तालिका वाद्यते; न चैकं तप्तमतप्तेनापरेण लोहं लोहेन संधीयते; नाप्येकं रक्तमरक्तेनान्येन वस्त्रमपि वाससा संयोजितं शोभां लभते। केवलं वियुगलमेव भवति' इति ॥

कल्याणी—उच्चलितमिति। उच्चलितं=गन्तुमुद्यतं च, तं=राजहंसं, परिहासशीला=तन्नाम्नी दमयन्त्याः सखी, पुनः=भूयः, बभाषे=उक्तवती। तदेवाह—महानुभावेति। महानुभाव=महाशय ! त्वया=भवता, यथा=येन प्रकारेण, अनुराग-कन्दलैः=प्रेमाङ्कुरैः; अनुरागोत्पादकैरित्यर्थः। आलापैः=संभाषणैः, इयं=मे सखी दमयन्ती, उक्ता=अभिहिता, तथा=तेन प्रकारेण, सोऽपि=राजा नलोऽपि, स्पृहणीयो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्तिभिः=मनोरमवचनैः, अभिधातव्यः=वक्तव्यः। यतः=यस्मात्, न हि एकहस्ततलेन=एककरतलेन, तालिका वाद्यते, न चैकं तप्तम्=उष्णं, लोहम्=अयोभागम्, अतप्तेन=अनुष्णेन, अपरेण=अन्येन, लोहेन=अयःखण्डेन, संधीयते=संयुज्यते, नाप्येकं रक्तं=लोहितं, वस्त्रं=वासम्, अरक्तेन=अलोहितेन, अन्येन=अपरेण, वाससा=वस्त्रेण, संयोजितं=लब्धयोगं, शोभां लभते=प्राप्नोति। केवलं वियुगलमेव=असमञ्जसमेव भवति। इति=एवं बभाषे इति पूर्वोक्तक्रिययाऽन्वयः॥

ज्योत्स्ना—जाने के लिए तत्पर उस राजहंस से परिहासशीला (दमयन्ती की प्रिय सखी) ने पुनः कहा—हे महानुभाव ! आपने जिस प्रकार अनुराग को अंकुरित अर्थात् उत्पन्न करने वाली बातों को मेरी इस सखी (दमयन्ती) से कहा है उसी प्रकार उस राजा नल से भी स्पृहा करने योग्य बातों को (आपको) कहना चाहिए, क्योंकि एक हाथ से ताली नहीं बजती, एक तप्त अर्थात् गर्म लोहा दूसरे ठंढे लोहे के साथ जोड़ा नहीं जाता और न ही एक लाल वस्त्र दूसरे अरक्त अर्थात् लाल से अतिरिक्त रंग वाले अथवा रंगहीन वस्त्र के साथ जोड़ने पर शोभा को ही प्राप्त कर पाता है। (बल्कि ऐसा करने पर) केवल असमञ्जस ही उत्पन्न होता है।

आशय यह है कि तुमने अपने वाक्कौशल से उस पुरुषरत्न नल के प्रति स्त्रीरत्न दमयन्ती के मन में तो अनुराग उत्पन्न कर दिया, अब तुम्हें नल के मन में दमयन्ती के प्रति भी अनुराग को उत्पन्न करना चाहिए। ऐसा करने पर ही पूर्व में दमयन्ती से तुम्हारा यह कहना कि 'तुम उस नल के लिए सर्वथा उचित हो।' सार्थक हो सकता है। ऐसा न करने पर दमयन्ती के मन में नल के प्रति तुम्हारे द्वारा उत्पन्न किया गया प्रेम एकपक्षीय होकर व्यर्थ हो जायेगा॥

एवंवादिनीं दमयन्ती परिहासशीलामलपत्—

सखि ! किमस्य निष्कारणवत्सलस्यैवमभ्यर्थ्यते।

यस्यास्मासु निरपेक्षः पक्षपातः, स्वभावजं सौजन्यम्, अकृत्रिमः स्नेहभावः, अनुपचरितमुपकारित्वम्; अपरिचया प्रीतिः, अनभ्यासं सौहार्दम्, अदृष्टपूर्वा मैत्री॥

कल्याणी—एवंवादिनीमिति। एवम्=ईदृशं, वादिनीं=भाषमाणां, परिहासशीलां=तन्नाम्नीं सखीं, दमयन्ती=भीमपुत्री, अलपत्=उक्तवती—

सखि ! किं=किमर्थं, निष्कारणवत्सलस्य=अकारणस्नेहशीलस्य, अस्य=राजहंसस्य, एवम्=ईदृशम्, अभ्यर्थ्यते=निवेद्यते।

यस्य=राजहंसस्य, अस्मासु=अस्मद्विधासु, निरपेक्षः=निष्प्रयोजनः, पक्षपातः=सहानुभूतिः, स्वभावजं=स्वाभाविकं, सौजन्यम्=औदार्यम्, अकृत्रिमः=निर्व्याजः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्नेहभावः=प्रेमभावः, अनुपचरितम्=आडम्बरहीनम्, उपकारित्वम्=उपकारभावना, अपरिचया—न परिचयो यत्र तादृश्यपि, प्रीतिः=प्रेम, अनभ्यासं—न अभ्यासः=सामीप्यं यत्र तादृशमपि, सौहार्दं=सुहृद्भावः, अदृष्टपूर्वा—न पूर्वं दृष्टेत्यदृष्टपूर्वा, मैत्री=सख्यम् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहती हुई परिहासशीला से दमयन्ती ने कहा—

"हे सखि ! अकारण स्नेह प्रकट करने वाले इस (राजहंस) की इस प्रकार अभ्यर्थना क्यों कर रही हो। (क्योंकि) जिसका हमलोगों के प्रति अकारण पक्षपात अर्थात् सहानुभूति है, स्वाभाविक सौजन्य अर्थात् उदारता है, अकृत्रिम अर्थात् निःश्छल प्रेमभाव है, आडम्बररहित उपकार-भावना है, परिचय न होते हुए भी प्रेम है, सामीप्य न होते हुए भी सुहृद्भाव है और पूर्व में कहीं भी जो न देखी गई हो—ऐसी मैत्री है ॥

तदेवंविधो निर्निमित्तबन्धुः किमभ्यर्थ्यते। केन याच्यन्ते चन्द्रचन्दनसज्जनाः परोपकाराय। किन्तु कतिपयमुहूर्त्तमैत्रीरञ्जितास्मन्मनसो दुस्त्यजस्याकाण्ड एवास्य गन्तुमुत्सहमानस्य किं ब्रूमः। मा गा इत्यशकुनम्, गच्छेति निष्ठुरता, यदिष्टं तद्विधीयतामित्यौदासीन्यम्, आदर्शनात्प्रियोऽसीति क्रियाशून्यालापः, कस्त्वमेवंविधो दिव्यवाक्पक्षिरत्नमित्यप्रस्तुतप्रश्नः, केनार्थीत्यप्रक्रान्तम्, किं ते प्रियमाचरामीत्युपचारवचनम्, कृतोपकारोऽसीति प्रत्यक्षस्तुतिः ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, एवंविधः=ईदृशः; निर्निमित्तबन्धुः=निष्कारणस्वजनः, किं=किमर्थम्, अभ्यर्थ्यते=याच्यते, निर्मित्तबन्धुत्वादयमनभ्यर्थित एव यथाशक्ति मम मनोरथं पूरयितुं स्वयं प्रयतिष्यत इति तदुक्तेराशयः। केन=केन जनेन, चन्द्रचन्दनसज्जनाः परोपकाराय याच्यन्ते, न केनापीत्यर्थः। तेऽनभ्यर्थिता एव स्वभावेन परोपकारपरायणा भवन्तीति भावः। [अत्राभ्यर्थना याञ्चा च क्रियैकैव पौनरुक्त्यनिरासाय भिन्नवाचकतया निर्दिष्टा, तत्प्रतिवस्तूपमाऽलङ्कारः।] किन्तु कतिपयमुहूर्तान्=कतिपयक्षणान्, मैत्र्या रञ्जितम्=अनुरक्तीकृतम्, अस्माकं मनः=चित्तं येन तस्य [अतएव] दुस्त्यजस्य=दुःखेन त्यक्तुं योग्यस्य, अकाण्डे=अनवसर एव, गन्तुमुत्सहमानस्य=गन्तुमुच्चलतः; अस्य=राजहंसस्य, किं ब्रूमः=किं कथयामः, इत्यवगन्तुं न पारयाम इति भावः। मा गाः=मा यासीः, इति=एवं कथनम्, अशकुनम्=अमङ्गलम्, 'गच्छ' इति [कथनं] निष्ठुरता=क्रूरत्वम्, यत् इष्टं=प्रियं, तद्विधीयतां=क्रियतामिति कथनम् औदासीन्यम्=उदासीनता, आदर्शनात्=दर्शनात्प्रभृति; प्रियोऽसीति कथनं क्रियाशून्यालापः=व्यापारशून्यसंभाषणम्, कः=किं परिचयः, त्वमेवंविधः दिव्या=अलौकिका, वाक्=वाणी यस्य स तथोक्तः, पक्षिरत्नं=खगश्रेष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इति, अप्रस्तुतप्रश्नः=अप्राकरणिकप्रश्नः, केनार्थी=किं वस्तु प्रार्थयसे, इति अप्रक्रान्तम्=प्रकमराहित्यम्, किं ते=तव, प्रियम् आचरामि=करोमि, इत्युपचारवचनम्=औपचारिकवचनमात्रम्, कृत उपकारो येन तादृशोऽसि इति प्रत्यक्षस्तुतिः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस प्रकार के अकारण बन्धु से क्या निवेदन कर रही हो। चन्द्रमा, चन्दन और सज्जनों से परोपकार के लिए कौन याचना करता है? किन्तु कुछ क्षणों की मित्रता से ही हम लोगों के मन को प्रसन्न कर देने वाले; अत एव दुस्त्याज्य (दुःखपूर्वक छोड़ने योग्य) असमय में ही जाने के लिए तत्पर इस हंस से हम क्या कहें। 'मत जाओ' यह कहना असगुन (अमंगलकारक) है, 'जाओ' यह कहना निष्ठुरता है, 'जो प्रिय हो वह करो' इस प्रकार कहना उदासीनता है, है, 'जब से देखा-है तभी से अच्छे लगते हो' यह कहना क्रियाशून्य आलाप अर्थात् बिना मतलब का बकवास है, 'इस प्रकार अलौकिक वाणी वाले पक्षियों में रत्नभूत तुम कौन हो?' इस प्रकार पूछना अप्रासङ्गिक है, 'क्या चाहते हो' यह पूछना अप्राकरणिक है अर्थात् यह पूछने का कोई प्रकरण नहीं है, 'तुम्हारा क्या प्रिय करूँ?' इस प्रकार पूछना औपचारिकता-मात्र है, 'तुमने बहुत उपकार किया है' इस प्रकार कहना तो प्रत्यक्ष स्तुति ही है ॥

तन्न जानीमः कल्याणबन्धो! किमुच्यसे। वरमदर्शनमेव भवादृशाम्, न तु लूयमानाङ्गावयवदुःसहो दर्शनव्याघातः। वरमनास्वादितमेवामृतम्, न तु सकृत्पीत्वा पुनरलाभदुःखम् ॥

कल्याणी—तदिति। हे कल्याणबन्धो!=कल्याणकारिन्!, मित्र!, तत्=तस्मात्, त्वं किमुच्यसे=किमभिधीयसे इति, न जानीमः=न विद्मः। भवादृशां=भवल्लक्षणानां जनानाम्, अदर्शनं=दर्शनाभाव एव, वरं=शोभनम्, न तु लूयमानाङ्गवयवदुःसहः—लूयमानानां=विच्छिद्यमानानां, अङ्गावयवानां=देहावयवानामपि, अपेक्षया दुःसहः=समधिकदुःखदः, दर्शनव्याघातः=दर्शनविच्छेदः। अनास्वादितमेवामृतं=अपीतमेव पीयूषं, वरं=शोभनम्, न तु सकृत्=एकवारं, पीत्वा=पानं कृत्वा, पुनः=भूयः, अलाभात्=अप्राप्तेः, दुःखं=कष्टम् ॥

ज्योत्स्ना—अतः हे कल्याण करने वाले मित्र! तुम क्या कह रहे हो, यह हम नहीं जानते। आप जैसे लोगों का दर्शन न होना ही श्रेष्ठ है, लेकिन काटे जाने वाले अंगों की अपेक्षा अधिक दुःखदायी दर्शन का विच्छेद होना अच्छा नहीं है। अमृत का पान न करना ही श्रेष्ठ है, लेकिन एक बार पान कर पुनः उसकी प्राप्ति न होने का दुःख अच्छा नहीं है ॥

अतः प्रार्थ्यसे भूयो दर्शनार्थम्, इयं भविष्यति भवत्प्रियस्य कस्याप्युपायनमात्रमस्मदनुस्मरणनाटकसूत्रधारी हारलता' इत्यभिधाय नलमुररी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृत्य 'महानुभाव ! द्वाभ्यां श्रुतोऽसि पान्थादस्माद्राजहंसाच्च, द्वाभ्यामुह्यसे वाचा हृदयेन च, द्विकालं स्मर्यसे दिवा नक्तं च, द्वयी गतिरस्माकमिदानीं त्वं वा मृत्युर्वा' इति द्विसंख्यसंदेशार्थमिव द्विगुणीकृत्योन्मुच्य च स्वकण्ठकन्दलादुत्कण्ठामिव स्वां मूर्त्तिमतीं तस्य मुक्तावलीं गले व्यलम्बयत् ॥

कल्याणी—अतः प्रार्थ्यस इति । अतः=अस्मात्कारणात्, भूयः=पुनः, दर्शनार्थं=दर्शनहेतवे, प्रार्थ्यसे=निवेद्यसे, पुनर्दर्शनं दास्यसीति त्वां प्रार्थय इति भावः । इयमस्माकमनुस्मरणमेव नाटकं, तत्र सूत्रधारी=सूत्रधारत्वविशिष्टा स्त्री, हारलता=मुक्तावली, भवत्प्रियस्य—भवतः यः प्रियः तस्य, कस्यापि=नलस्येति भावः, उपायनमात्रम्=उपहारमात्रं भविष्यति, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा; नलम् उररीकृत्य=स्वीकृत्य, नलमुद्दिश्येति भावः । 'हे महानुभाव !=महाप्रभाव !, द्वाभ्यां श्रुतः=आकर्णितोऽसि, पान्थादेकस्मात्=उदीच्यपथिकात्, अन्यस्माच्च अस्माद्राजहंसात्, द्वाभ्याम् उह्यसे=धार्यसे, वाचा=वाण्या, हृदयेन च, द्विकालं स्मर्यसे दिवा=दिने, नक्तं=रात्रौ च, द्वयी गतिः=शरणम्, अस्माकमिदानीं त्वं वा मृत्युर्वा, इति द्विसंख्यसन्देशार्थमिव—इति=एवं, सन्देशद्वयार्थमिव [इत्युत्प्रेक्षा] । द्विगुणीकृत्य—द्वौ गुणौ=द्वे आवृत्ती यस्याः सा द्विगुणा, अद्विगुणा द्विगुणां कृत्वा इति द्विगुणीकृत्य, स्वकण्ठकन्दलात्=स्वकण्ठाङ्कुरात्, स्वकण्ठप्रदेशादिति भावः । उन्मुच्य=अवतार्य च, मूर्तिमतीं स्वामुत्कण्ठामिव [इत्युत्प्रेक्षा], मुक्तावलीं=मुक्तामालां, तस्य=राजहंसस्य, गले=कण्ठे, व्यलम्बयत्=निक्षिप्तवती ॥

ज्योत्स्ना—"इस कारण पुनः दर्शन देने के लिए तुमसे प्रार्थना कर रही हूँ ! हमारी स्मृतिरूपी नाटक के लिए सूत्रधारस्वरूपा यह हारलता आपके किसी प्रिय (नल) के लिए उपहार-मात्र होगी ।" यह कहकर नल को हृदय से लगाकर अर्थात् नल को उद्देश्य बनाकर "हे महानुभाव ! हमारे द्वारा दो लोगों से सुने जा चुके हो—पथिक के द्वारा और राजहंस के द्वारा; दो से धारण किये जा चुके हो—वाणी के द्वारा और हृदय के द्वारा; दो समय में स्मरण किये जा चुके हो—दिन में और रात्रि में; इस समय हमारी दो ही गतियाँ है—तुम या मृत्यु ।" इस प्रकार दो सन्देश (भेजने) के लिए अपने कण्ठप्रदेश से निकाल कर (नल से मिलने के लिए हृदय में उठ रही) अपनी उत्कण्ठा की प्रतिमूर्ति के समान उस मुक्तामाला को दोहरा करके उस राजहंस के गले में लटका दिया ॥

सोऽपि "सुन्दरि ! सोऽयं स्कन्धीकृतो मया मुक्तावलीच्छलेन तस्य पुरो भवद्वर्णनाभारः" इत्यभिधाय सह तेन विहङ्गमगणेनोत्पपात ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सः=राजहंसोऽपि, 'सुन्दरि !=सुवदने !, सोऽयं तस्य=नलस्य, पुरः=अग्रे, भवद्वर्णनाभारः—भवत्याः वर्णना=स्वरूपाख्यानं, तस्य भारः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुक्तावलीच्छलेन=मुक्तामालाव्याजेन, मया=राजहंसेन; स्कन्धीकृतः=अङ्गीकृतः। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तेन विहंगमगणेन=हंससमुदयेन सह उत्पपात=उड्डिडये। 'मुक्तावलीच्छलेन' इत्यत्र कैतवापह्नुतिः॥

ज्योत्स्ना—वह राजहंस भी "हे सुन्दरि! उस नल के सामने आपके (स्वरूप को) वर्णन करने का भार इस मुक्तामाला के बहाने से मैंने अङ्गीकार कर लिया।" इस प्रकार कहकर उस पक्षिसमुदाय (हंसमुदाय) के साथ उड़ गया॥

उत्पतिते च नभस्तलम् 'आगच्छत, संपद्यन्तां सफललोचनाः, पश्यतापूर्वं स्त्रीरत्नम्' इति चलत्पक्षपल्लवव्याजेन दूराद्दिक्पालानिवाह्वयति तीव्रघ्नमयूखसंतप्तां दिवमिवोपवीजयति, दिक्कुञ्जरनिरुद्धावकाशा आशा इवाश्वासयति, पक्षिमण्डले तस्मिन्विस्मयोन्मुखी सा भूपालपुत्री निर्निमेषं निक्षिप्य चक्षुश्चिरमूर्ध्वैवावतस्थे॥

कल्याणी—उत्पतित इति। नभस्तलं=गगनतलम्, उत्पतिते=उड्डीने च, 'आगच्छत, सम्पद्यन्तां=जायन्तां, सफललोचनाः=सार्थकनयनाः, लोचनानि सफलीक्रियन्तामिति भावः। अपूर्वं=लोकोत्तरं, स्त्रीरत्नं=नारीरत्नं, दमयन्तीमिति भावः। पश्यत=अवलोकयत, इति=एवं, चलत्पक्षपल्लवव्याजेन—चलतां=चञ्चलानां, पक्षपल्लवानां व्याजेन=कैतवेन [इति कैतवापह्नुतिः]। दूरात्=दूरत एव, दिक्पालान्='इन्द्रो वह्निः पितृपतिः (यमः) नैर्ऋतो वरुणो मरुत्। कुवेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात्॥' इतीन्द्रादीनष्टदिक्पालानिव, आह्वयति=आमन्त्रयमाणे सति [उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः, एतेन भाविदिक्पालागमनं सूच्यते], तीव्रैः=तीक्ष्णैः, घ्रघ्नमयूखैः=सूर्यकिरणैः, संतप्तां=तप्तां, दिवम्=आकाशम्, उपवीजयतीव=व्यजनं कुर्वतीव, [इत्युत्प्रेक्षा], दिक्कुञ्जरैः='ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः। पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः।' इत्यैरावतादिभिरष्टदिग्गजैः, निरुद्धः=व्याप्तः, अवकाशः=अन्तरालभागः यासां ताः, आशा=दिशः, आश्वासयतीव [इत्युत्प्रेक्षा] तस्मिन्, पक्षिमण्डले=राजहंससमूहे, विस्मयेन=आश्चर्येण, उन्मुखी=उदूर्ध्वं मुखं यस्याः तथाविधा, सा भूपालपुत्री=दमयन्ती, निर्निमेषं=निमेषरहितं, चक्षुः=नेत्रं, निक्षिप्य=निपात्य, चिरं=बहुकालं यावत्, ऊर्ध्वैव=ऊर्ध्वमुखैवेत्यर्थः, अवतस्थे=अवस्थिता बभूव॥

ज्योत्स्ना—आकाश में उड़ जाने के पश्चात् "आओ, अपने नेत्रों को सफल करो, अलौकिक कन्यारत्न को देखो।" इस प्रकार अपने चञ्चल पल्लवसदृश पंखों (को फड़फड़ाने के) बहाने से दूर से ही मानों इन्द्रादि आठो दिक्पालों को बुलाते हुए, तीक्ष्ण सूर्यकिरणों से सन्तप्त आकाश को मानो पंखा-सा झलते हुए, दिग्गजों से व्याप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मध्यभाग वाली दिशाओं को आश्वस्त-सा करते हुए पक्षिसमूह को आश्चर्य के कारण ऊपर की ओर मुख कर वह राजकुमारी दमयन्ती अपलक आँखों से बहुत समय तक देखती हुई ऊपर की ओर मुँह किये ही खड़ी रही ॥

चिन्तितवती च—

'तात तावन्ममाप्येवं न विधत्से प्रजापते ।
पक्षौ पक्षिवदुड्डीय येन पश्यामि तन्मुखम् ॥३॥

अन्वयः—तात प्रजापते ! तावत् मम अपि एवं पक्षौ न विधत्से येन पक्षिवत् उड्डीय तन्मुखं पश्यामि ॥३॥

कल्याणी—तातेति । हे तात प्रजापते !=पितः विधातः !, तावत्, ममापि एवम्=इत्थं, पक्षौ=पुंखौ, न विधत्से=न करोषि, येन पक्षिवद्=विहङ्गमवद्, उड्डीय=उत्पत्य, तन्मुखं—तस्य=नलस्य, मुखं=वदनं, पश्यामि=विलोकयामि । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३॥

ज्योत्स्ना—और सोचने लगी कि—

"हे तात प्रजापते ! मुझे भी इसी प्रकार के पंख क्यों नहीं बना देते, जिससे पक्षियों के समान ही उड़कर उन (नल) का मुख देख सकूँ ॥३॥

अपि च—

उड्डीय वाञ्छितं यान्तो वरमेते विहङ्गमाः ।
न पुनः पक्षहीनत्वात्पङ्गुप्रायं कुमानुषम् ॥४॥

अन्वयः—उड्डीय वाञ्छितं यान्तः एते विहङ्गमाः वरं, न पुनः पक्षहीनत्वात् पङ्गुप्रायं कुमानुषम् ॥४॥

कल्याणी—उड्डीयेति । उड्डीय=उत्पत्य, वाञ्छितम्=अभीष्टं स्थानं, यान्तः=गच्छन्तः, एते=इमे, विहङ्गमाः=पक्षिणः, वरं=श्रेष्ठं, न पुनः=न तु, पक्षहीनत्वात्=पक्षराहित्यात्, पङ्गुप्रायं=पङ्गुसदृशं, कुमानुषं=कुत्सितं मनुष्यत्वम् । मानुष इति जातिशब्दः, मनुशब्दात् समुदायार्थजातौ 'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' इति सूत्रेण अञ्, मनुशब्दस्य षुगागमश्च । मानुषस्य भावः कर्म वेति मानुषम्, मानुष शब्दादण् । चण्डपालस्तु यद्यपि मनोरपत्यं स्त्री मानुषी पुमान् मानुष इति 'स्त्रीपुंसयोरपत्यान्ता द्विचतुःषट्पदोरगाः' इति लिङ्गिवचनान्मानुषशब्दस्य स्त्रीपुंसस्य वृत्तिता तथापि नपुंसकत्वमपि, लिङ्गस्य लोकाश्रयत्वादित्याह । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४॥

ज्योत्स्ना—और भी,

उड़कर अपने अभीष्ट स्थान को जाते हुए ये पक्षी ही श्रेष्ठ हैं, न कि पंख से हीन लंगड़े के समान निन्दित यह मानव जीवन ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आशय यह है कि पक्षी मानव से इसलिए श्रेष्ठ है कि पंख होने के कारण वह उड़कर अपने अभीष्ट स्थान को जा तो सकता है। लेकिन मानव जीवन तो पंख न होने के कारण लंगड़े के समान है, जो चाहते हुए भी अपने अभीष्ट सभी स्थानों पर नहीं जा सकता। इसीलिए कवि ने मानव जीवन को कुत्सित कहा है ॥४॥

इति चिन्तयन्ती गतेष्वपि तेषून्मुखी तां दिशमनुविस्मयविस्फारित-विलोचना निस्पन्दतया काष्ठकल्पामवस्थां दधाना चिरात्सखीभिः सम्बोध्य स्वगृहमनीयत ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवं, चिन्तयन्ती=विचारयन्ती, तेषु=राजहंसेषु; गतेष्वपि=प्रयातेष्वपि, उन्मुखी=ऊर्ध्वानना, तां दिशमनु=तामेव दिशं प्रति, विस्मयविस्फारितविलोचना—विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्फारिते=विस्तारिते, विलोचने=नेत्रे यस्या सा, निस्पन्दतया=निश्चलतया, काष्ठकल्पां=काष्ठसदृशीम्; अवस्थां=दशां; दधाना=धारयन्ती, चिरात्=बहुकालं यावत्, सखीभिः सम्बोध्य=प्रकर्षेण बोधयित्वा; स्वगृहं=निजभवनम्, अनीयत=प्रापिता ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार विचार करती हुई, उन पक्षियों के चले जाने पर भी ऊपर की ओर मुख किये हुए उसी दिशा की ओर आश्चर्य के साथ आँखें फैलाई हुई निश्चलता के कारण काष्ठ के समान अवस्था को धारण करती हुई (वह दमयन्ती) बहुत समय तक सखियों के द्वारा बुलाये जाने पर रपने घर को गई।

आशय यह है कि हंसों के जाने की दिशा की ओर देखती हुई दमयन्ती इतना तन्मय हो गई थी कि उसे अन्य बातों का ज्ञान ही नहीं रह गया था। ऐसी स्थिति में सखियों द्वारा बुलाये जाने की आवाज भी उसे सुनाई नहीं पड़ रही थी। इसीलिए, सखियों ने जब बहुत देर तक बार-बार उसे पुकारा तो उसका ध्यान भंग हुआ और चैतन्य होकर वह अपने आवास में गई ॥

ततःप्रभृति च तस्याः सरलीभवन्ति निश्वासा न हासाः, स्खलन्ति वाचो न शुचः, वर्धते तन्द्रा न निद्रा; द्रवति स्वेदाम्भो न स्तम्भः, मन्दायते स्वरो न स्मरः, वाञ्छा चन्दनाय न स्पन्दनाय, सन्तापशान्तये तद्गुणादानं न स्नानम्, प्रीयते हारो नाहारः, सुखायाङ्गे लगन्नुद्यानप्रभञ्जनो न जनः ॥

कल्याणी—तत इति। ततःप्रभृति=तस्मादारभ्य च, तस्याः=दमयन्त्याः; निश्वासाः=उच्छ्वासाः, सरलीभवन्ति=अवक्रीभवन्ति, तेषां दीर्घत्वादिति भावः। हासाः=परिहासाः तु न सरलीभवन्ति=न सुकरीभवन्ति, अपगतहासा सा सततं दीर्घं निश्वसित्येवेति भावः। वाचः=वाण्यः, स्खलन्ति=मुखाद् बाष्पगद्गदं निःसरन्ति, न शुचः [स्खलन्ति]—शुचः=शोकाः, न स्खलन्ति=नापगच्छन्ति। तन्द्रा=क्लान्तिः, वर्धते=वृद्धिं याति, न निद्रा [वर्धते], निद्रा नायातीत्यर्थः। स्वेदाम्भः=प्रस्वेदजलं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्रवति=प्रवहति, न स्तम्भो द्रवति—स्तम्भः=जाड्यं, न द्रवति=नापसरति। स्वरः=ध्वनिः, मन्दायते=मन्द इवाचरति, क्षीणतां गच्छतीत्यर्थः। स्मरः=कामः, न मन्दायते=न मन्दो भवतीत्यर्थः। चन्दनाय=चन्दनप्राप्त्यै, वाञ्छा=अभिलाषः, तस्य शैत्यप्रदत्वादिति भावः। न स्पन्दनाय=न स्फुरणाय। सन्तापशान्तये=वेदनाशान्तये, तस्य=नलस्य, गुणानाम् आदानं=ग्रहणं, श्रवणमिति यावत्। न स्नानम्, नलगुण-श्रवणेनैव तस्याः सन्तापः शाम्यन्ति, न तु स्नानेनेति भावः। प्रीयते=प्रीतिकरो भवति, हारः=मुक्तामाला, तस्य शीतलत्वादिति भावः। आहारः=अशनं, न प्रीयते=न रोचते, आहारो न रोचत इत्यर्थः। अङ्गे=शरीरे, लगन्=संसक्तम्, उद्यानप्रभञ्जनः=उद्यानवायुरेव, सुखाय=आनन्दाय, न जनः=परिजनः। परिसंख्याऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना— और उसी दिन से उस (दमयन्ती) के लिए (दीर्घ होने के कारण) निःश्वास तो सरल हो गये, लेकिन हास (हँसना) सरल नहीं हुआ अर्थात् उसका हँसना समाप्त हो गया और केवल लम्बी-लम्बी सांसे ही चलने लगी। वाणी स्खलित हो गई, लेकिन शोक दूर नहीं हुआ। तन्द्रा (आलस्य, जम्भाई लेना) बढ़ गया, लेकिन निद्रा नहीं बढ़ी। पसीना निकलने लगा, लेकिन जड़ता (अकड़न) नहीं गई। आवाज धीमी हो गई, लेकिन काम-सन्ताप धीमा नहीं हुआ। (शीतल होने के कारण) चन्दन की ही इच्छा रह गई, स्पन्दन (चलने-फिरने) की इच्छा नहीं रही। (कामजनित) सन्ताप की शान्ति के लिए उस (नल) के गुणों का ग्रहण अर्थात् सुनना ही उचित लगता था, स्नान करना नहीं अर्थात् उसके सन्ताप नल के गुणों को सुनने से ही शान्त होते थे, न कि स्नान करने से। (शीतल होने के कारण) हार ही (उसे) अच्छे लगते थे, भोजन अच्छा नहीं लगता था। (शरीर के) अंगों को स्पर्श करता हुआ उपवन का पवन ही सुखकर लगता था, परिजन सुखकर नहीं लगते थे॥

पठति च मुहुर्मुहुरिमं श्लोकम्—

विश्राम्यन्ति न कुत्रचिन्न च पुनर्मुह्यन्ति मार्गेष्वपि
प्रोत्तुङ्गे विलगन्ति नान्तरतरुश्रेणीशिखापञ्जरे।
खिद्यन्ते न मनोरथाः कथममी तं देशमुत्कण्ठया
धावन्तः पथि न स्खलन्ति विषमेऽप्यास्ते स यस्मिन्प्रियः॥५॥

अन्वयः—अमी मनोरथाः यस्मिन् सः प्रियः आस्ते तं देशम् उत्कण्ठया धावन्तः कुत्रचित् न विश्राम्यन्ति, न च पुनः मार्गेषु अपि मुह्यन्ति, प्रोत्तुङ्गे अन्तरतरुश्रेणी-शिखापञ्जरे न विलगन्ति, कथं न खिद्यन्ते, विषमे अपि पथि न स्खलन्ति॥५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—विश्राम्यन्तीति । अमी=एते, मनोरथाः—मनसो रथा इव [मे] मनोरथाः=सङ्कल्पाः, यस्मिन् स प्रियः=नलः; आस्ते=वसति, तं देशं=तत्स्थानं, प्रति उत्कण्ठया=औत्सुक्येन, धावन्तः=अभिद्रवन्तः, कुत्रचित्=क्वापि, न विश्राम्यन्ति=श्रमापनोदाय न तिष्ठन्ति, न च पुनः मार्गेष्वपि=पथिष्वपि, मुह्यन्ति=श्रान्ता भूत्वा मूर्च्छां प्राप्नुवन्ति, प्रोत्तुङ्गे=प्रकर्षेणोन्नते, अन्तरे=मध्ये, तरुश्रेणीनां=पादपपङ्क्तीनां शिखा=अग्रभागः, पञ्जरमिव=जालमिव तस्मिन्, न विलगन्ति=न बध्यन्ते, कथं=केन हेतुना, न खिद्यन्ते=खेदं नानुभवन्ति, विषमे=उच्चावचेऽपि, पथि=मार्गे, न स्खलन्ति=न प्रतिहतगतयो भवन्ति । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—और बार-बार इसी श्लोक को पढ़ती थी—मन के रथ के समान (मेरे) ये मनोरथ (संकल्प), जिस दिशा में वह प्रियतम (नल) रहता है उसी दिशा की ओर, उत्सुकता से दौड़ते हुए कहीं भी विश्राम नहीं लेते और न ही (थककर) मार्ग में कहीं मूर्च्छित ही होते हैं । अत्यन्त ऊँचे-ऊँचे वृक्षों के शिखररूपी पञ्जरों (जालों) के मध्य ये उलझते भी नहीं हैं और खिन्न भी नहीं होते । उस टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर (जाते हुए ये) स्खलित भी नहीं होते अर्थात् अत्यन्त कठिन मार्ग पर भी इनकी गति अवरुद्ध नहीं होती ॥५॥

तेऽपि राजहंसाः शशाङ्कधरेषु, सप्रपञ्चपञ्चाननेषु, शिवरूपेषु, वनेषु, सुशोभां कौमुदीं दधत्सु, शश्वदनुकृतसामुद्रवृद्धिषु, चन्द्रमण्डलरूपेषु सरःसलिलेषु विहरन्तस्तुहिनाद्रिकुञ्जानिव सत्त्रिपथगान्नगनगरग्रामाग्रहारपत्तनप्रदेशानुल्लङ्घयन्तः कतिपयदिवसैरासेदुरुद्यानं निषधायाः ॥

कल्याणी—तेऽपीति । ते राजहंसा अपि शिवरूपेषु=शिवसदृशेषु, शशाङ्कधरेषु—शशाः=शशकाः, अङ्के=क्रोडे, यस्यास्तादृशी धरा=भूमिः येषु तेषु, पक्षे—शशाङ्कं=चन्द्रं धरन्तीति तेषु, सप्रपञ्चाननेषु—प्रपञ्चेन भक्ष्यप्राणिनं ग्रहीतुं छलना सह विद्यन्त इति सप्रपञ्चाः=सच्छलानः, पञ्चाननाः=सिंहाः येषु तेषु, पक्षे—सह प्रपञ्चैः=पृथङ्मार्गागमोपदेशरूपैः वर्त्तन्ते तथाभूतानि पञ्चसंख्यानि आननानि=मुखानि येषां तेषु, वनेषु=काननेषु, चन्द्रमण्डलरूपेषु=चन्द्रमण्डलसदृशेषु, कुमुदस्येयं कौमुदी तां सुशोभां=कुमुदसम्बन्धिनीं प्रकृष्टशोभां, दधत्सु=धारयत्सु, पक्षे—सुष्ठु शोभा यस्यास्तादृशीं कौमुदीं=चद्रिकां दधत्सु, शश्वदनुकृतसामुद्रवृद्धिषु—शश्वत्=निरन्तरम्, अनुकृता=अनुहृता, सामुद्री=समुद्रसम्बन्धिनी, वृद्धिर्येस्तेषु, समुद्रवद्वृद्धिगतेष्विति भावः । पक्षे—अनु=पश्चात् कृता=विहीता, सामुद्री=समुद्रसम्बन्धिनी, वृद्धिर्येस्तेषु, चन्द्रोद्गमस्य समुद्रवृद्धिकरत्वादिति भावः । सरःसलिलेषु=जलाशयनीरेषु, विहरन्तः=विहारं कुर्वन्तः, तुहिनाद्रिकुञ्जानिव=हिमगिरिकुञ्जानिव, सत्त्रिपथगान्—सत्त्राणि=ब्राह्मणादीनां भोजनानि यज्ञा वा विद्यन्त एषामिति सत्त्रिणः, ते च ते पन्थानश्च सत्त्रिपथाः, तान् गच्छन्ति=प्राप्नुवन्तीति सत्त्रिपथ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गास्तान्; पक्षे—त्रिपथगा=गङ्गा, तया सह वर्तन्ते इति सत्रिपथगास्तान्, ['अवचि च' इति तकारस्य द्वित्वम्]। नगनगरग्रामाग्रहारपत्तनप्रदेशान्—नगानां=पर्वतानां, नगराणां, ग्रामाणाम्, अग्रहाराणां=राजभिर्ब्राह्मणेभ्यो जीवननिर्वाहार्थं प्रदत्तानां भूमीनां, पत्तनानां=नगरविशेषाणां प्रदेशान्, उल्लङ्घयन्तः=व्यतिक्रामन्तः, निषधायाः=नलराजधान्याः, उद्यानम्=उपवनं, कतिपयैः दिवसैः=कतिचिद्दिनैः, आसेदुः=आजग्मुः। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—वे राजहंस भी चन्द्रमा को धारण करने वाले एवं सांगोपांग वेदों से युक्त पाँच मुखवाले भगवान् शिव के समान खरगोशों को गोद में धारण की हुई भूमिवाले एवं (शिकार को पकड़ने के लिए) कपटपूर्ण सिंहों वाले, कल्याणरूप वनों में उत्कृष्ट कान्ति से समन्वित चन्द्रिका को धारण करने वाले एवं समुद्र को बढ़ाने वाले चन्द्रमण्डल के समान कुमुदों से समन्वित उत्कृष्ट शोभा को धारण करने वाले एवं निरन्तर समुद्र की वृद्धि का अनुकरण करने वाले, जलाशयों के जल में विहार करते हुए, गंगा से समन्वित हिमालय के कुञ्जों के समान ब्राह्मणों के भोजनादि अथवा यज्ञों से समन्वित मार्ग वाले पर्वतों, नगरों, ग्रामों, दानभूमियों एवं नगरक्षेत्रों को लाँघते हुए (पार करते हुए) कुछ ही दिनों में निषध नगरी के उद्यान में पहुँच गये।

विमर्श—प्रकृत अनुच्छेद में प्रायः सभी पद श्लिष्ट हैं। 'शशांकधर' और 'सप्रपञ्चानन' दोनों ही शब्द वन एवं भगवान् शिव—दोनों के विशेषणरूप में प्रयुक्त हैं। 'कौमुदीशोभा' जलाशय और चन्द्रमण्डल दोनों के विशेषणरूप में प्रयुक्त है। 'सत्रिपथगा' हिमालय-कुञ्ज एवं मार्ग दोनों के विशेषणरूप में प्रयुक्त है।

राजाओं द्वारा ब्राह्मणों के जीवन-निर्वाह के लिए दान दी गई भूमि अथवा खेत में उत्पन्न अन्न में से प्रथमतः निकालकर ब्राह्मण के लिए जो अन्न अलग कर दिया जाता है वह अग्रहार कहलाता है और ग्रास-विशेष का भेद भी अग्रहार कहलाता है। वाचस्पत्यम् में तारानाथ ने कहा भी है—'क्षेत्रोत्पन्नशस्यादुद्धृत्य ब्राह्मणोद्देश्येन स्थाप्यं धान्यादिः, गुरुकुलावृत्तब्रह्मचारिणे देयः क्षेत्रादिः, ग्रासभेदश्च ॥"

क्रीडितुमारभन्त च स्वच्छन्दम् ॥

कल्याणी—क्रीडितुमिति। स्वच्छन्दं=यथेच्छं, क्रीडितुं=विहर्तुं, च आरभन्त=प्रारब्धवन्तः ॥

ज्योत्स्ना—और (उन राजहंसों ने) स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करना आरम्भ कर दिया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ तेषामन्यतमामवलोक्य क्रीडातडागपङ्कजपञ्जरे राजहंसीमागत्य त्वरया हंसदर्शनोत्सुकं सरोरक्षिका राजानं व्यजिज्ञपत्—

कल्याणी—अथेति । [अथ=अनन्तरं, तेषां=राजहंसानाम्, अन्यतमाम्=एकतमां राजहंसीं, क्रीडातडागपङ्कजपञ्जरे=क्रीडासरोवरपङ्कजजाले, अवलोक्य=दृष्ट्वा, सरोरक्षिका=सरोवरपालिका, त्वरया=वेगेन, आगत्य=एत्य, हंसदर्शनोत्सुकं=हंसावलोकनोत्कण्ठितं, राजानं=नलं, व्यजिज्ञपयत्=विज्ञापितवती ॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर उनमें से एक राजहंसी को क्रीडासरोवर के कमलों के जाल में (स्थित) देखकर सरोवरों की रक्षिका ने शीघ्रता से आकर हंसों का दर्शन करने के लिए उत्सुक राजा (नल) को सूचित किया कि—

'देव ! हंसवार्त्तामनुदिनं पृच्छति देवस्तदद्य काचित्—

कुरुते नालकवलनं दूरं विक्षिपति गर्भजम्बालम् ।
त्वदरिवधूरिव राजन्नुद्यानसरोगता हंसि ॥६॥

अन्वयः—राजन् ! त्वदरिवधूरिव उद्यानसरोगता हंसी नालकवलनं कुरुते गर्भजम्बालं दूरं विक्षिपति ॥१६॥

कल्याणी—देवेति । देव !=महाराज !, अनुदिनं=प्रतिदिनं, हंसवार्तां=हंसप्रवृत्तिं, देवः=भवान्, पृच्छति, मामिति शेषः । तत्=तस्मात्, अद्य=अस्मिन् दिने; काचित्=एका—

कुरुत इति । राजन्=नृप !, त्वदरिवधूरिव=त्वच्छत्रुरमणीव, उद्यानसरोगता=उद्यानतडागगता, हंसी=राजहंसी, अरिवधूपक्षे—उद्यानेन=पलायनेन, सरोगता=रोगवत्ता यस्याः सा । नालकवलनं कुरुते—नालस्य=बिसकाण्डस्य, कवलनं=ग्रासं, कुरुते, पक्षे [न+अलक-वलनम्]—न अलकस्य=कचस्य, वलनं=बन्धनं कुरुते । गर्भजम्बालं—गर्भे=मध्ये, यः जम्बालः=कर्दमः, तं दूरं निक्षिपति=दूरे परिक्षिपति । पक्षे—[गर्भजम्+बालम्]—गर्भजं=गर्भजातं, बालं=बालकं, दूरे क्षिपति । [भीत्या हि गर्भपातः स्वाभाविकः] । आर्या जातिः । श्लेषानुप्राणितोपमाऽलङ्कारः ॥६॥

ज्योत्स्ना—हे स्वामिन् ! आप प्रतिदिन (मुझसे) हंसों की बातें पूछते रहते हैं; तो आज कोई—

हे राजन् ! भय के चलते तीव्रता से भागने के कारण सरोगता अर्थात् रोग की अवस्था को प्राप्त कर बालों को भी न बाँधने वाली एवं गर्भस्थ शिशु को भी दूर फेंक देने वाली (जोर से भागने के कारण गर्भस्राव हो जाने वाली) आपके शत्रु की पत्नी के समान ही (आपके) उपवन के सरोवर में आई हुई हंसी कमलनालों को ग्रास बना रही है अर्थात् खा रही है और गर्भस्थ (बीच में स्थित) कीचड़ को दूर फेंक रही है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—श्लिष्ट होने के कारण प्रकृत पद्य का शत्रुपत्नी और हंसी दोनों पक्षों में अर्थ स्फुटित होता है। 'उद्यानसरोगता' 'नालकवलन' और 'गर्भजम्बाल' का दोनों ही पक्षों में अर्थ घटित होता है ॥६॥

अपि च—

अभिलषति नालमशनं स्वपिति नवाम्भोजपत्रशयनेऽपि ।
नीरागमना नृपते तव रिपुवनितायते हंसी ॥७॥

अन्वयः—नृपते ! नीरागमना हंसी नालम् अशनम् अभिलषति नवाम्भोजपत्रशयने स्वपिति अपि, (एवं) तव रिपुवनितायते ॥७॥

कल्याणी—अभिलषतीति । हे नृपते=राजन् !, नीरागमना—नीरे=जले, आगमनं यस्याः सा, जलागतेत्यर्थः । हंसी=राजहंसी; नालं=कमलकाण्डम्, अशनम्=आहारम्, अभिलषति=वाञ्छति, नवाम्भोजपत्रशयने=नूतनकमलदलशय्यायां, स्वपिति=शेतेऽपि । एवं तव=ते, रिपुवनितायते=शत्रुवनितेवाचरति । तव रिपुवनिताऽपि [न+अलम्+अशनम्]—न अलम्=अत्यर्थम्, अशनम्=आहारमभिलषति, [न वा+अम्भोजपत्रशयने]—न वा=नापि, अम्भोजपत्रशयने=कमलदलतल्पे, स्वपति=शेते । सा सदा [नीराग-मनाः]—नीरागं=वैराग्योपेतं, मनः=चित्तं यस्यास्तथाभूता वर्तते । अत्र व्यङ्गतोपमा । आर्या जातिः ॥७॥

ज्योत्स्ना—और भी;

हे राजन् ! जल में आई हुई हंसी कमलनाल का आहार करना चाहती है और नवीन कमलदलों की शय्या पर शयन भी करती है। (इस प्रकार वह) शत्रुओं की पत्नियों के समान आचरण कर रही है।

(शत्रुपत्नीपक्ष) तुम्हारे शत्रुओं की पत्नियाँ न तो पूर्ण भोजन की कामना करती हैं और न ही कमलदलों की शय्या पर शयन करती हैं, बल्कि वे तो सदा वैराग्य से समन्वित चित्त वाली हुई रहती हैं ॥७॥

राजापि तस्याः श्लिष्टार्थमिदमार्यायुगलमवधारयन्स्तोकस्मितसुधाधवलिताधरपल्लवः 'लवङ्गिके ! यथा कथयसि तथा तेऽप्यागता हंसाः कथमन्यथा तस्याः खल्वेकाकिन्याः सम्भवः' इति तद्वार्त्तया यावदास्ते ।

तावन्नीलोत्पलदलदीर्घलोचना चन्द्रमुखी बन्धूककुसुमकान्तदन्तच्छदा नीलांशुकपटीं परिदधाना पक्वकलममञ्जरीगौराङ्गी प्रकाशहासा हंसैरनुगम्यमाना मूर्त्तिमती शरदिव वनपालिका प्रविश्य—

कल्याणी—राजापीति । राजा=नलोऽपि, तस्याः=सरोरक्षिकायाः, श्लिष्टार्थं—श्लिष्टोऽर्थो यस्य तत्, इदम्=एतत्, आर्यायुगलम्=आर्याद्वयम्, अवधा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रयन्=विचारयन्, स्तोकस्मितसुधाधवलिताधरपल्लवः—स्तोकस्मितम्=ईषद्धास एव, सुधा=अमृतं, तया धवलितः=शुभ्रीकृतः, अधरपल्लवः=अधरकिसलयः यस्य तथाभूतः सन्, लवङ्गिके ! यथा=येन प्रकारेण, कथयसि=निवेदयसि, तथा=तेन प्रकारेण, ते हंसाः अपि=हंसपक्षिणोऽपि, आगताः=आयाताः, अन्यथा कथं=केन प्रकारेण, तस्याः=हंस्याः, खलु=निश्चयेन, एकाकिन्याः संभवः, इति=एवं, यावत् तद्वार्तया=हंसीकथया, आस्ते=वर्तते, तावत् नीलोत्पलदलदीर्घलोचना—नीलोत्पलदले=नीलकमलपत्रे, इव दीर्घे=आयते, लोचने=नयने यस्याः सा, पक्षे—नीलोत्पलदल एव दीर्घे लोचने यस्याः सा। चन्द्रमुखी—चन्द्र इव मुखं यस्याः सा, चन्द्राननेत्यर्थः; पक्षे—चन्द्र एव मुखं यस्याः सा। बन्धूककुसुमकान्तदन्तच्छदा—बन्धूककुसुममिव=बन्धूकाख्यपुष्पमिव, कान्तः=रक्त इत्यर्थः, दन्तच्छदः=ओष्ठः यस्याः सा, पक्षे—बन्धूककुसुममेव कान्तो दन्तच्छदो यस्याः सा। नीलांशुकपटीं—नीलम् अंशुकं=वासः, तस्य पटीम्=उत्तरीयं, परिदधाना=बिभ्राणा, पक्षे—नीलांशुकः=नीलकान्तिरेव पटी=उत्तरीयं, तां परिदधाना। पक्वकलममञ्जरीगौराङ्गी—पक्वकमलममञ्जरी=पक्वशालिमञ्जरी, तद्वद्गौरमङ्गं यस्याः सा, पक्षे—पक्वकलममञ्जरीभिर्गौरमङ्गं यस्याः सा। प्रकाशहासा—प्रकाशाः—प्रवृद्धाः, काशाः=काशपुष्पाणि, तद्वद्धासो यस्याः सा, पक्षे—प्रवृद्धकाशपुष्पाण्येव हासो यस्याः सा। हंसैः=हंसपक्षिभिः, अनुगम्यमाना=अनुयाता, मूर्तिमती=साकारा, शरदिव=शरदृतुरिव [इत्युत्प्रेक्षा] वनपालिका=वनरक्षिका, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा—'प्रणाममकरोत्' इति वक्ष्यमाणेनान्वयः ॥

ज्योत्स्ना—राजा भी उस सरोवर-रक्षिका के श्लिष्ट अर्थों वाले इन दो आर्या-श्लोकों पर विचार करता हुआ मन्द मुस्कानरूप सुधा से धवलित अधर-पल्लवों वाला होकर 'हे लवङ्गिके ! जिस प्रकार से (तुम) बता रही हो, उस प्रकार से अर्थात् तुम्हारे कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि वे हंस भी आ ही गये हैं, अन्यथा अकेली उस हंसी की सम्भावना कैसे की जा सकती है ?" इस प्रकार से जब उसके साथ बात कर ही रहा था कि तभी नीलकमलरूप आँखों एवं चन्द्ररूपी मुख वाली, बन्धूकपुष्परूपी मनोरम दन्तच्छद वाली, नीलकान्तिरूपी उत्तरीय को धारण करने वाली, पके हुए धानों की बालियों से गौर वर्ण वाली, खिले हुए काश-पुष्परूप हँसी वाली शरद् ऋतु की प्रतिमूर्ति के समान, नीलकमलपत्र के समान विशाल नयनों वाली, चन्द्रमा के समान मुख वाली, बन्धूकपुष्प के समान मनोहर दन्तच्छद (ओष्ठ) वाली, नीले वस्त्र की उत्तरीय धारण की हुई, पके हुए धान की मञ्जरी के समान गौर वर्ण वाली, विकसित काशपुष्प के समान हास से युक्त, हँसों से अनुगत वनपालिका ने प्रवेश कर—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'देव ! सोऽयं कथमप्यागतो रणरणककारणमपराधी विहङ्गः' इत्यभिधाय तं राजहंसमुभयकरकमलाञ्जलिगतमुत्फुल्लपाण्डुपङ्कजार्धमिव पुरः पादारविन्दयोर्निधाय राज्ञः प्रणाममकरोत् ॥

कल्याणी—देवेति । देव !=महाराज !, 'सोऽयं=स एषः, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः । आगतः=गृहीतः; रणरणककारणम्=उत्कण्ठाहेतुः, अपराधी=अपराधशीलः । विहंगः=हंसः' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, उभयकरकमलाञ्जलिगतम्=उभयहस्तपद्माञ्जलिधृतम्, उत्फुल्लपाण्डुपङ्कजार्धमिव=अर्धविकसितश्वेतकमलमिव, अरुणाञ्जली शुभ्रो राजहंसो रक्तकमलस्तबके विकसितश्वेतकमलार्धभाग इव सुशोभते स्मेति भावः । तादृशं तं राजहंसं=हंसपक्षिणं, राज्ञः=नलस्य, पादारविन्दयोः=चरणकमलयोः, पुरः=अग्रे, निधाय=स्थापयित्वा, प्रणाममकरोत्=नृपस्य प्रणामं कृतवती ॥

ज्योत्स्ना—"महाराज ! उत्सुकता उत्पन्न करने वाला यह वही अपराधी हंस है, (जो) किसी-किसी प्रकार से पकड़ा गया है ।" इस प्रकार कहकर दोनों (लाल) करकमलों की अञ्जुली में धारण किये गये विकसित श्वेत कमल के अर्ध भाग के समान उस राजहंस को राजा के चरणकमलों के आगे रखकर प्रणाम किया ॥

राजापि 'सारसिके ! साधु कृतम् । तत्क्रियतामशून्यः स्वाधिकारः । गम्यतामिदानीं 'यथास्थानम्' इत्यभिधाय तुष्टिप्रदानपरितोषितां तां लवङ्गिकासहितां विसृज्य, विरलीकृतपरिजनः प्रत्युज्जीवनौषधमिव प्राणरक्षाक्षरमिव स्वस्थीकरणमणिमिवाश्वासनाभेषजमिवाह्लादनकन्दमिव तमग्रेस्थितमानन्दनिःस्पन्दपक्ष्मपालिना चिरं चक्षुषाऽवलोक्य बहुमानयन्मुग्धस्मितेन स्वागतमपृच्छत् ।

सोऽपि 'देव ! दर्शनामृतमनुभवतो ममाद्य स्वागतम्' इत्यभिधायोपश्लोकयाञ्चकार ॥

कल्याणी—राजाऽपीति । राजा=नलोऽपि, 'हे सारसिके ! साधु=शोभनं; कृतं=विहितम् । तत्=तस्मात्, स्वाधिकारोऽशून्यः क्रियताम्=स्वाधिकारः परिपाल्यताम् । गम्यतां=प्रस्थानं क्रियताम्, इदानीं=सम्प्रति, यथास्थानं=अभीष्टस्थानम्' इति=एवम्; अभिधाय=उक्त्वा, तुष्टिप्रदानपरितोषितां—तुष्टये=सन्तुष्टये, प्रकृष्टेन दानेन, आभूषणादेरिति भावः । परितोषितां=प्रसादितां, तां=सारसिकां, लवङ्गिकासहितां=लवङ्गिकानाम्नीपरिचारिकासमन्वितां, विसृज्य=परित्यज्य, विरलीकृतपरिजनः—विरलीकृतः=दूरीकृतः, परिजनः=सेवकः येन स तथाविधः, प्रत्युज्जीवनौषधमिव=पुनर्जीवनप्रदौषधमिव; प्राणरक्षाक्षरमिव=जीवनरक्षावर्णमिव, स्वस्थीकरण-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मणिमिव=स्वास्थ्यकारकरत्नमिव, आश्वासनाभेषजमिव=धैर्यौषधमिव, आह्लादनकन्दमिव=आनन्दमूलमिव, [सर्वत्रोत्प्रेक्षा] अग्रे=पुरः, स्थितं=अवस्थितं, तं=राजहंसम्, आनन्दनिःस्पन्दपक्ष्मपालिना—आनन्देन=हर्षेण, निःस्पन्दाः=निश्चलाः पक्ष्मपालिः=पक्ष्माग्रभागः यस्य तथाविधेन, चक्षुषा=नेत्रेण, चिरं=दीर्घकालम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, बहुमानयन्=समधिकसंमानयन्, मुग्धस्मितेन=मनोज्ञेनेषद्धासेन; स्वागतमपृच्छत्=कुशलप्रश्नादिना तस्य स्वागतमकरोदित्यर्थः ।

सः=हंसोऽपि, 'देव !=महाराज ! दर्शनामृतं—दर्शनमेवामृतं=सुधारसम्, अनुभवतः=आस्वादयतः, मम=राजहंसस्य, अद्य=अस्मिन् दिने, स्वागतम्' इति=एवम् अभिधाय=उक्त्वा, उपश्लोकयाञ्चकार=वक्ष्यमाणेन श्लोकद्वयेन तुष्टाव ॥

ज्योत्स्ना—राजा भी "हे सारसिके ! (तुमने) ठीक किया। इसलिए अपने अधिकार का पालन करो और इस समय अपने निश्चित स्थान पर जाओ।" इस प्रकार कहकर सन्तुष्ट करने लायक (पुरस्कारस्वरूप भूषणादि) दान देते हुए उस सारसिका को लवङ्गिका के साथ विदा कर, परिजनों (अनुचरों) को भी वहाँ से दूर कर अर्थात् हटाकर पुनर्जीवन प्रदान करने वाली औषधि के समान, प्राणरक्षा करने वाले अक्षरों के समान, स्वस्थ करने वाली मणि के समान, आश्वासन प्रदान करने वाले भेषज के समान और आनन्द के मूल के समान सामने स्थित उस राजहंस को आनन्द के कारण निश्चल पक्ष्मपालि अर्थात् निर्निमेष नयनों से बहुत देर तक देखकर (उसे) अत्यधिक सम्मान प्रदान करते हुए मनोहारी मुस्कान के साथ (उसका) स्वागत पूछा अर्थात् कुशल-क्षेम पूछकर उसका सत्कार किया।

उस हंस ने भी "हे महाराज ! (आपके) दर्शनरूपी अमृत का अनुभव (आस्वादन) करने से ही आज मेरा स्वागत हो गया।" इस प्रकार कहकर (वक्ष्यमाण दो श्लोकों से उनकी) स्तुति की ॥

देव !

प्रसृतकमलगन्धं नीरसंसक्तकण्ठं
धृतकुवलयमालं जातभङ्गोर्मिकं च ।
त्वयि कृतरुषि भीतास्तावदास्तां तडागं
निजमपि च कलत्रं शत्रवो नाद्रियन्ते ॥८॥

अन्वयः—देव ! त्वयि कृतरुषि भीताः शत्रवः प्रसृतकमलगन्धं नीरसंसक्तकण्ठं धृतकुवलयमालं जातभङ्गोर्मिकं च तडागं नाद्रियन्ते, आस्तां तावत्, (ते तु) निजम् अपि (प्रसृतकमलगन्धं नीरसं सक्तकण्ठं धृतकुवलयमालं जातभङ्गोर्मिकं) कलत्रं (नाद्रियन्ते) ॥८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—प्रसृतेति । हे देव !=महाराज !, त्वयि=भवति, कृतरुषि—कृता=विहिता, रुट्=क्रोधः येन तथाविधे, रुष्टे सतीत्यर्थः । भीताः=प्रजातभयाः, शत्रवः=रिपवः, प्रसृतकमलगन्धं—प्रसृतः कमलानां गन्धो यत्र तम्, नीरसंसक्तकण्ठं—नीरेण=जलेन, संसक्तः=युक्तः, कण्ठः=तटप्रान्तः यस्य तम्, तथा धृतकुवलयमालं—धृता कुवलयानां=नीलोत्पलानां, माला=पंक्तिः येन तम्, तथा जातभङ्गोर्मिकं—जाता=उत्पन्ना, भङ्गाः=तरङ्गाः, ऊर्मयः=कल्लोलाश्च यत्र तथाविधं, च [त्वदुल्लास-व्यञ्जकं त्वदीयं] तडागं=सरोवरं, नाद्रियन्ते=न सत्कुर्वन्ति, इत्यास्तां तावत्=एतत्तु दूरे तिष्ठतु [यतः परस्योल्लासो न द्रष्टव्यो भवति] ते तु निजमपि=स्वकीयमपि, प्रसृतकमलगन्धम्—प्रसृतः के=मूर्ध्नि, मलगन्धो यस्य [स्नानाभावात्] तथाविधम्; नीरसम्—निर्गतः रसः=शृङ्गारादिविलासचेष्टा यस्मात्तादृशम्, सक्तकण्ठं—सक्तः=अन्तर्लग्नः कण्ठः यस्य तत्, समधिकक्षीणमित्यर्थः । तथा [धनाभावात्] धृतकुवलय-मालं—धृतः कुत्सितः=काचादिनिर्मितः, वलयः=कङ्कणः माला च येन तथाविधम्; तथा जातः भङ्गः यस्यास्तथाविधा, भग्नेत्यर्थः, ऊर्मिका=अङ्गुलीयकं यस्य तथा-विधं च, कलत्रं=भार्यां, नाद्रियन्ते=न हि सादरं पश्यन्तीत्यर्थः । अत्र तडागस्य कल-त्रस्य च सत्यप्यादरहेतौ तयोः शत्रुकृतानादरकथनाद् विशेषोक्तिरलङ्कारः । भीतत्वं च निमित्तमुक्तम्, तदुक्तनिमित्ता विशेषोक्तिः । सा च श्लेषानुप्राणिता । मालिनी वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—हे महाराज ! आपके क्रुद्ध हो जाने पर भयभीत शत्रुगण प्रसरित कमलों के गन्ध वाले, तटभाग तक जल से भरे हुए, नीलकमलों की पंक्तियों को धारण किये हुए, तरङ्गों एवं लहरों से समन्वित (आपके उल्लास को व्यक्त करने वाले आपके इस) सरोवर को भी आदर के साथ नहीं देखते । यह तो दूर रहा, वे तो (स्नानाभाव के कारण) शिर में व्याप्त दुर्गन्ध वाली; शृङ्गारादि विलास-चेष्टाओं से हीन, दुर्बल कण्ठ वाली, (धनाभाव के कारण) काँच आदि से निर्मित कंकण को धारण करने वाली और भग्न अर्थात् टूटी हुई ऊर्मिका (अँगूठी) वाली अपनी पत्नी का भी आदर नहीं करते अर्थात् पत्नी को भी आदर से नहीं देखते ॥८॥

किं चान्यत्—

असमहरिततीरं विस्रजम्बालशेषं
स्फुटकुमुदपरागोल्लाससम्पद्वियुक्तम् ।
वयमिह बहुशोकं दृष्टवन्तो वनान्ते
त्वदरियुवतिलोकं ग्रीष्ममासे सरश्च' ॥९॥

अन्वयः—असमहरिततीरं विस्रजं बालशेषं स्फुटकुमुदपरागोल्लाससंपद्वि-युक्तं बहुशोकं त्वदरियुवतिलोकं सरः च इह वनान्ते ग्रीष्ममासे वयं दृष्टवन्तः ॥९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—असमेति। अरियुवतिलोकपक्षे—असमहरिततीरम्—असमा=भीषणेत्यर्थः, या हरीणां=सिंहानां, ततिः=पंक्तिः, तत्सकाशात् ईरः=त्रासः यस्य तं, विस्रजं=विगतमालं, वैधव्यादिति भावः। बालशेषं—बालाः=शिशव एव शेषाः=अवशिष्टाः यस्य तं, हतभर्तृकत्वादिति भावः। स्फुटकुमुदपरागोल्लाससम्पद्वियुक्तं—स्फुटा=अभिव्यक्ता, कुत्सिता=उदरभरणमात्रजा, मुद्=आनन्दः यस्य सः स्फुटकुमुत्, तथा अपगतः रागोल्लासः=प्रणयोन्मादातिरेकः यस्य सोऽपरागोल्लासः, स्फुटकुमुच्चासावपरागोल्लासश्च संपद्वियुक्तश्चेति तम्, बहुशोकं—बहुः=समधिकः, शोकः=पतिमरणादिजः यस्य तं, त्वदरियुवतिलोकं=भवच्छत्रुरमणीवृन्दम्, इह=अस्मिन्, वनान्ते=वनप्रदेशे, वयं दृष्टवन्तः=अपश्याम:॥

सरःपक्षे—असमहरिततीरं—समं हरितं च तीरं यस्य तत्समहरिततीरं, न समहरिततीरमिति असमहरिततीरं=विषमशुष्कतीरमित्यर्थः, विस्रजम्बालशेषं—विस्रः=दुर्गन्धपूर्णः, जम्बालः=कर्दमः, शेषः=अवशिष्टः यत्र तत्, स्फुटकुमुदपरागोल्लाससंपद्वियुक्तं—स्फुटानां=विकसितानां, कुमुदानां या परागोल्लाससंपत्=परागातिरेकसमृद्धिः, तया वियुक्तं=रहितम्, [बहुशः+अकम्] अकं—न कं=जलं यत्र तथाविधं, सरः=तडागं च इह ग्रीष्ममासे वयं बहुशः दृष्टवन्तः=अपश्यामः। श्लेषाऽलङ्कारः। एतेनारियुवतिलोकस्य सरसश्चोपमानोपमेयभावो व्यज्यते। मालिनी वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—अपितु और भी—भीषण सिंहों के सान्निध्य से भयभीत, (वैधव्य के कारण) मालाओं का परित्याग की हुई, बालक-मात्र के ही शेष रहने वाली, उदरभरण-मात्र से ही प्रसन्न रहने वाली, प्रणयोन्माद को छोड़ देने वाली, सम्पत्तियों से रहित एवं अत्यन्त शोकसंतप्त स्थिति में आपके शत्रु-रमणियों को वन-प्रदेश में हमने देखा है। साथ ही ऊँचे-नीचे शुष्क तटभाग वाले, दुर्गन्धयुक्त कीचड़-मात्र अवशिष्ट रहने वाले, विकसित कुमुदों के पराग की अधिकतारूपी सम्पत्ति से रहित, बहुधा जल से हीन तालाब को भी इस ग्रीष्म मास में हमने बहुत बार देखा है ॥९॥

राजापि 'श्लेषोक्तिनिधे! तथा गृहीत्वास्मन्मनो गतवानसि, यथा सुखसंवित्तिशून्याः संतापारम्भिणो रणरणकाङ्कुरप्ररोहकाः कथमप्यस्माकमेतेऽतिक्रान्ता दिवसाः॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलोऽपि; हे श्लेषोक्तिनिधे!=श्लिष्टवचननिधान!, अस्मन्मनः—अस्माकं मनः=चित्तं, तथा=तेन प्रकारेण, गृहीत्वा=आदाय, त्वं गतवानसि=प्रयातवानसि, यथा एते=इमे, सुखसंवित्तिशून्याः=सुखानुभूतिरहिताः, सन्तापारम्भिणः=सन्तापोत्पादकाः, रणरणकाङ्कुरप्ररोहकाः=उत्कण्ठावर्धका इत्यर्थः। अस्माकं दिवसाः=दिनानि, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। अतिक्रान्ताः=व्यतिगताः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना – राजा भी "हे श्लिष्ट वचनों के सागर ! हमारे मन को लेकर तुम इस प्रकार चले गये थे कि सुखानुभूति से रहित, सन्ताप को उत्पन्न करने वाले एवं उत्सुकता को बढ़ाने वाले हमारे ये दिन किसी-किसी प्रकार अर्थात् बहुत कष्ट के साथ व्यतीत हुए ॥

तत्कथय। का नामाभिनन्दनीया सा दिक्, यस्यां विहारमकरोः। के ते सफलचक्षुषो जनाः, यैश्चिरमालोकितोऽसि । के लब्धसुभाषितामृतरसास्वादाः, यैः संभाषितोऽसि। के प्राप्तप्राणितव्यफलाः, यैः सह गोष्ठीमनुष्ठितवानसि ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, कथय=निवेदय, का नाम सा अभिनन्दनीया=स्तुत्या, दिक्=दिशा, यस्यां=यद्दिशि, विहारं=विचरणम्, अकरोः=कृतवानसि, के ते सफलचक्षुषः=सफललोचनाः, जनाः=लोकाः, यैः=जनैः, चिरं=बहुकालम्, आलोकितोऽसि=दृष्टोऽसि । लब्धसुभाषितामृतरसास्वादाः—लब्धः=प्राप्तः, सुभाषितामृतरसस्य=सूक्तिसुधारसस्य, आस्वादः=आनन्दः यैस्ते के=जनाः, यैः संभाषितोऽसि, प्राप्तप्राणितव्यफलाः—प्राप्तम्=अधिगतं, प्राणितव्यस्य=जीवितव्यस्य, फलं यैस्ते के=जनाः, यैः सह=साकं, गोष्ठीं=सभाम्, अनुष्ठितवान्=कृतवान् असि ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए कहो; वह कौन-सी प्रशंसनीय दिशा है, जिसमें तुमने विहार किया । सफल नयनों वाले वे कौन लोग हैं, जिनके द्वारा तुम बहुत समय तक देखे गये । सुक्तिसुधा-रस के आस्वादन को प्राप्त करने वाले वे कौन लोग हैं, जिनके साथ तुमने बातचीत किया । जीवन के फल को प्राप्त करने वाले वे कौन लोग हैं, जिनके साथ तुमने गोष्ठी की ॥

स्पृहणीयसङ्गम ! गते त्वयि तर्कशास्त्रमिव प्रस्तुतपरमोहम्, व्याकरणमिव भूतनिष्ठमिदमस्माकमासीन्मनः ॥

कल्याणी—स्पृहणीयेति । स्पृहणीयसङ्गम !—स्पृहणीयः=अभिलषणीयः, सङ्गमः=सङ्गतिः यस्य तत्सम्बुद्धौ तथोक्त ! त्वयि गते=त्वत्प्रयाते सति, अस्माकं मनः=चित्तं, तर्कशास्त्रमिव प्रस्तुतपरमोहं—प्रस्तुतः=प्रकृतः, परः=उत्कृष्टः, मोहः=उद्वेगः येन तादृशम्, पक्षे—प्रस्तुतः परमः ऊहः=वितर्कः यत्र तत् । तथा व्याकरणमिव=व्याकरणशास्त्रमिव, भूतनिष्ठं—भूता=संजाता, निष्ठा=क्लेशः यत्र तादृशं चासीत् । पक्षे—भूते=अतीतकाले, निष्ठा=निष्ठासंज्ञः प्रत्ययः [क्तः क्तवतुश्च] यत्र तत् । श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—हे वाञ्छनीय सङ्गति वाले हंस ! तुम्हारे प्रस्थान कर जाने पर हमारा मन उत्कृष्ट विचारों को प्रस्तुत करने वाले तर्कशास्त्र की भाँति उत्कृष्ट

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मोह अर्थात् उद्वेग को प्रस्तुत करने वाला एवं भूतनिष्ठ (अतीत अर्थ के व्यवहार में निष्ठा प्रत्यय (क्त-क्तवतु) से संयुक्त) व्याकरणशास्त्र के समान भूतनिष्ठ अर्थात् क्लेशयुक्त हो गया ॥

तदेहयेहि' इत्यभिधाय स्वयं करकमलतलेनोत्क्षिप्य सस्नेहं परामृशत् ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, एहि एहि=आगच्छ आगच्छ [संभ्रमे द्विरुक्तिः], इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, स्वयं=आत्मना, करकमलतलेन=पाणिपद्मतलेन, उत्क्षिप्य=उत्थाप्य, सस्नेहं=सानुरागं, परामृशत्=अस्पृशत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए आओ, आओ।" इस प्रकार कहकर स्वयं अपने करकमलों से (उसे) उठाकर अत्यन्त स्नेह के साथ (उसका) स्पर्श किया ॥

सोऽपि 'एष महान्प्रसादो यदेवमनुकम्पतेऽस्मान्देवः' इत्यभिधाय गमनादारभ्य दमयन्तीदर्शनालापव्यतिकरमशेषं हारलतार्पणपर्यन्तमाचचक्षे ॥

कल्याणी—सोऽपीति। सः=हंसोऽपि, 'एषः=अयं, महान् प्रसादः=अनुग्रहः, यद् देवः=महाराजः, अस्मान् एवम्=इत्थम्, अनुकम्पते=दयते' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, गमनादारभ्य=प्रस्थानादारभ्य, हारलतार्पणपर्यन्तं=दमयन्त्याः हारप्रदानपर्यन्तम्, अशेषं=सकलं, दमयन्तीदर्शनालापव्यतिकरं—दमयन्त्याः=भैम्याः, दर्शनम्=अवलोकनम्, आलापः=संभाषणं, तत्प्रभृतिवृत्तान्तम्, आचचक्षे=विज्ञापितवान् ॥

ज्योत्स्ना—वह हंस भी "यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि महाराज हम पर इस प्रकार अनुकम्पा रखते हैं" इस प्रकार कहकर (अपने) जाने से लेकर हारलता समर्पण करने तक का दमयन्ती-दर्शन और वार्तालाप-विषयक समस्त वृत्तान्त (उनसे) निवेदित कर दिया ॥

आख्याय च चरणेनैकेन ग्रीवाग्रादाकृष्य तां तथास्थितामेव मुक्तावलीमिदमवादीत् ॥

कल्याणी—आख्यायेति। [तत्सकलवृत्तान्तम्] आख्याय=विनिवेद्य, च एकेन चरणेन=एकेन पादेन, तथास्थितामेव=तथाविधामवस्थितामेव, तां मुक्तावलीं=हारलतां, ग्रीवाग्रात्=कण्ठाग्रभागात्, आकृष्य=अवतार्य, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=अवोचत ॥

ज्योत्स्ना—और (उस समस्त वृत्तान्त को) निवेदित कर अपने गर्दन में उसी प्रकार से रक्खी गई मुक्तामाला को एक चरण से उतार कर इस प्रकार बोला—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'उन्मादिनी मदनकार्मुकमण्डलज्या
सौभाग्यभाग्यपरवैभववैजयन्ती ।
मुक्तावली कुलधनं नरनाथ सैषा
कण्ठग्रहं तव करोतु भुजेव तस्याः ॥१०॥

अन्वयः—उन्मादिनी मदनकार्मुकमण्डलज्या सौभाग्यभाग्यपरवैभववैजयन्ती कुलधनं नरनाथ ! सा एषा मुक्तावली तस्याः भुजा इव तव कण्ठग्रहं करोतु ॥१०॥

कल्याणी—उन्मादिनीति । उन्मादिनी=प्रणयोन्मादकारिणी, मदनकार्मुकमण्डलज्या—मदनस्य=कामदेवस्य, यत् कार्मुकमण्डलं=धनुश्चक्रवालं, तस्य ज्या=प्रत्यञ्चारूपा, सौभाग्यभाग्यपरवैभववैजयन्ती—सौभाग्यस्य=ऐश्वर्यस्य, भाग्यस्य=दैवस्य च, यत् परम्=उत्कृष्टं, वैभवं=महिमा, तस्य वैजयन्ती=पताकारूपा, कुलधनं—कुलस्य=वंशस्य, धनरूपं, हे नरनाथ=राजन् ! सैषा=सेयम्, मुक्तावली=हारलता, तस्याः=दमयन्त्याः, भुजेव=बाहुयष्टिरिव, तव=ते, कण्ठग्रहं=कण्ठालिङ्गनं, करोतु=विदधातु, त्वां कण्ठे आश्लिष्यत्विति भावः । मुक्तावल्यास्तद्भुजात्मना संभावनयोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥१०॥

ज्योत्स्ना—(अपने) कुल के धनरूप हे नरपते ! प्रणयोन्माद को उत्पन्न करने वाली, कामदेव के धनुर्मण्डल की प्रत्यञ्चास्वरूपा, ऐश्वर्य और भाग्य के उत्कृष्ट वैभव की पताकास्वरूपा यह मुक्तामाला उस दमयन्ती की बाहुलता के समान ही आपके कण्ठ का आलिङ्गन करे ॥१०॥

अपि च—

प्रेमप्रपञ्चनवनाटकसूत्रधारी मूर्त्ता मनोभवनृपस्य नियन्त्रणाज्ञा ।
तस्याः स्वयंवरपरिग्रहहेतुरेषा हारावली हृदि पदं भवतः करोतु ॥११॥

अन्वयः—प्रेमप्रपञ्चनवनाटकसूत्रधारी मनोभवनृपस्य मूर्त्ता नियन्त्रणाज्ञा तस्याः स्वयम्वरपरिग्रहहेतुः एषा हारावली भवतः हृदि पदं करोतु ॥११॥

कल्याणी—प्रेमेति । प्रेमप्रपञ्चनवनाटकसूत्रधारी—प्रेम्णः, प्रपञ्चः=विस्तारः यस्मिंस्तादृशं नवं=नूतनं, यन्नाटकं तस्य सूत्रधारी=सूत्रधारस्त्री, प्रेमप्रसारिकेत्यर्थः । मनोभवनृपस्य—मनोभवस्य=कामदेवस्य नृपस्य, मूर्त्ता=मूर्तिमती, नियन्त्रणाज्ञा=शासनादेश इव, तस्याः=दमयन्त्याः, स्वयम्वरपरिग्रहहेतुः—स्वयंवरे परिग्रहः=अवाप्तिः, तस्य हेतुः=निमित्तभूता, एषा=दमयन्तीप्रदत्ता, हारावली=मुक्तावली, भवतः=नलस्य, हृदि=वक्षसि, पदं=स्थानं, करोतु=अवाप्नोतु । 'प्रेमप्रपञ्चनवनाटकसूत्रधारी' इत्यत्र परम्परितरूपकम् । 'मनोभवनृपस्य मूर्त्ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'नियन्त्रणाज्ञा' इत्यत्र प्रतीयमानोत्प्रेक्षा। तयोः परस्परनैरपेक्ष्येण संसृष्टिः। वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—और भी, प्रेम के विस्ताररूपी नवीन नाटक की सूत्रधारस्वरूपा, राजा कामदेव की मूर्तिमती निरोधाज्ञास्वरूपा, उस दमयन्ती को स्वयम्वर में प्राप्त करने के लिए निमित्तभूता यह (दमयन्तीप्रदत्त) मुक्तावली आपके वक्षःस्थल पर स्थान प्राप्त करे ॥११॥

राजा तु तामादाय निरूप्य च चिरं चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, तां=मुक्तावलीम्, आदाय=गृहीत्वा, निरूप्य=सम्यगवलोक्य च, चिरं=बहुकालं, चिन्तयाञ्चकार=चिन्तितवान् ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल भी उस मुक्तावली को लेकर और उसे अच्छी प्रकार देखकर बहुत देर तक सोचता रहा ॥

'आनन्दिसुन्दरगुणामलकोपमान-
मुक्ताफलप्रचयमद्भुतमुद्वहन्ती।
एषा च सा च नयनोत्सवकारिकान्ति-
श्चेतोहरा हृदि पदं न करोति कस्य' ॥१२॥

अन्वयः—अद्भुतम् आनन्दिसुन्दरगुणामलकोपमानमुक्ताफलप्रचयं उद्वहन्ति नयनोत्सवकारिकान्तिः चेतोहरा एषा सा च कस्य हृदि पदं न करोति ॥१२॥

कल्याणी—आनन्दीति। अद्भुतम्=अलौकिकम्, आनन्दिसुन्दरगुणामलकोपमानमुक्ताफलप्रचयम्—आनन्दिसुन्दरगुणा—आनन्दिनी=सुखदायिनी, सुन्दरः=उत्कृष्टः, गुणः=तन्तुः यस्यां तादृशी च, आमलकोपमानानाम्=आमलकफलतुल्यानां, मुक्ताफलानां=मौक्तिकानां, प्रचयं=समवायम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, नयनोत्सवकारिकान्तिः—नयनोत्सवकारिणी=नेत्रानन्ददायिनी, कान्तिः=छविः यस्यास्तथाविधा, चेतोहरा=मनोहरा, एषा=मुक्तावली, अथ च आनन्दिनी चासौ सुन्दरगुणा=सौन्दर्यादिप्रशस्तगुणयुक्ता, [सुन्दरगुणा-मलकोपमानमुक्ता]—मलात्=कुत्सितभावात्, कोपात्=प्रणयकोपादित्यर्थः, मानाद्=गर्वात्, सादृश्याद्वा मुक्ता=रहिता; अद्भुतम्=आश्चर्यकरं, फलप्रचयं=परिणेतुः फलसमूहम्, उद्वहन्ती, नयनोत्सवकारिकाकान्तिः, चेतोहरा—चेतसि=मनसि, हरः=शिवः यस्यास्तथाविधा, सा=दमयन्ती च, कस्य=कस्य जनस्य, हृदिः=वक्षसि हृदये च, पदम्=अवस्थानं, न करोति, सर्वस्यापि करोत्येवेत्यर्थः। श्लेषाऽलङ्कारः ॥ वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥१२॥

ज्योत्स्ना—आश्चर्यजनक आनन्द को देने वाली, उत्कृष्ट गुणों (तन्तुओं) वाली, आँवले के फलों के समान मुक्ताफलों (मोतियों) को धारण करने वाली,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नयनों को आनन्द प्रदान करने वाली कान्ति से समन्वित यह मनोहर मुक्तावली तथा आनन्द प्रदान करने वाली, सौन्दर्य आदि प्रशस्त गुणों से समन्वित, कुमल (कुत्सित भावना), कोप (प्रणयकोप) एवं मान (अहंकार) से रहित, (परिणेता के के लिए) आश्चर्यजनक फलों को धारण करने वाली, नेत्रों के लिए आनन्ददायिनी, कान्ति से समन्वित, हृदय में शंकर को धारण करने वाली वह दमयन्ती किसके वक्षःस्थल पर अथवा हृदय में अपना स्थान नहीं बना लेती, अर्थात् यह माला सबके वक्षःस्थल पर और वह दमयन्ती सबके हृदय में स्थान बना ही लेती है ॥१२॥

इति चिन्तयन्द्विगुणामेकगुणीकृत्य पुनः सस्पृहमैक्षत । हंसस्तु विहस्य परिहासमकरोत् ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवं, चिन्तयन्=अवधारयन्, द्विगुणाम्=आवृत्तिद्वययुक्तां कृतां मुक्तावलीम्, एकगुणीकृत्य=एकावृत्तियुक्तां कृत्वा, सम्यग् द्रष्टुं प्रसार्येति भावः । पुनः=भूयः, सस्पृहं=सोत्कण्ठम्, ऐक्षत=दृष्टवान् । हंसस्तु विहस्य=विशेषेण हासं कृत्वा, परिहासमकरोत्=नर्मपूर्णवचनमवदत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार से विचार करते हुए द्विगुणित अर्थात् दोहरी की हुई मुक्तावली को एकगुणित अर्थात् एकहरा कर पुनः अत्यन्त उत्सुकता के साथ उसे देखने लगा । हंस ने भी हँसकर परिहास किया—

'तया दत्ता मयानीता स्वयमाह्लादिनी त्वया ।
इत्यनेकगुणाप्येषा कथमेकगुणीकृता' ॥१३॥

अन्वयः—तया दत्ता मया आनीता स्वयम् आह्लादिनी इति अनेकगुणा अपि एषा त्वया कथम् एकगुणीकृता ॥१३॥

कल्याणी—तयेति । तया=दमयन्त्या, दत्ता=समर्पिता, मया=हंसेन, आनीता=प्रापिता, स्वयम्=आत्मना, आह्लादिनी=आनन्ददायिनी, इति=एवम्, अनेकगुणापि=द्विरावृत्तिर्यस्यास्तथाभूतापि, अथ चानेकगुणोपेतापि, एषा=मुक्तावली, त्वया=भवता, कथं=केन कारणेन, एकगुणीकृता—एकावृत्तियुक्ता, अथ च एकगुणेनैव युक्ता, कृता=विहिता । श्लेषाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—उस (दमयन्ती) के द्वारा समर्पित की गई और मेरे (हंस के) द्वारा लाई गई, स्वयं में ही आनन्ददायिनी—इस प्रकार अनेक गुणों से समन्वित इस मुक्तावली को आपने एक गुण वाला क्यों बना दिया ॥१३॥

राजापि परिहासेनान्तःसूत्रं दर्शयन् 'पक्षिपुङ्गव ! किं न पश्यस्येकगुणैवेयम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—राजेति। राजा=नलोऽपि, परिहासेन=नर्मोद्देश्येन, अन्तः-सूत्रम्=अन्तस्तन्तुं, दर्शयन=प्रदर्शयन्, पक्षिपुङ्गव=पक्षिश्रेष्ठ!, किं न पश्यसि=किं नावलोकयसि, एकगुणैव=एकतन्तुयुक्तैव, इयम्=एषा मुक्तावली, वर्तते इति शेषः॥

ज्योत्स्ना—राजा भी परिहास से ही (उसके) भीतर के तन्तु को दिखलाता हुआ (बोला) पक्षिश्रेष्ठ! क्या देखते नहीं हो कि यह एक गुण (तन्तु) वाली ही है॥

अथवा—

कः करोति गुणवान्गुणसंख्यां श्लाघ्यजन्ममहसः स्फुटमस्याः।
कुम्भिकुम्भपरिणाहिनि तस्याः स्वैरमास्यत यया कुचयुग्मे' ॥१४॥

अन्वयः—श्लाघ्यजन्ममहसः अस्याः स्फुटं गुणसंख्यां कः गुणवान् करोति, यया तस्याः कुम्भिकुम्भपरिणाहिनि कुचयुग्मे स्वैरम् आस्यत ॥१४॥

कल्याणी—क इति। श्लाघ्यं=प्रशंसनीयं, जन्मतः=उत्पत्तिकालतः, महः=कान्तिः यस्यास्तथाभूतायाः, अस्याः=एतस्याः, स्फुटं=सुव्यक्तं यथा तथा, गुणसंख्यां=गुणगणनां, को गुणवान्=को गुणी पुरुषः, करोति=विदधाति, कर्तुं पारयतीति भावः। यया=यया मुक्तावल्या, तस्याः=दमयन्त्याः, कुम्भिकुम्भपरिणाहिनि=गजकुम्भोपम-विशाले, कुचयुग्मे=स्तनयुगले, स्वैरं=स्वच्छन्दम्, आस्यत=पुरा पदं कृतम्। स्वागता वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'स्वागता रनभगैर्गुरुणा च।' इति ॥१४॥

ज्योत्स्ना—अथवा—जन्मकाल से ही प्रशंसनीय कान्तिवाली इस मुक्तावली के पूर्णतया प्रकटित गुणों की संख्या का वर्णन करने में कौन गुणी पुरुष समर्थ हो सकता है, जिस मुक्तावली के द्वारा पूर्व में ही उस दमयन्ती के हाथी के कुम्भस्थल के समान विशाल स्तनयुगल पर स्वच्छन्दतापूर्वक स्थान बनाया जा चुका है।" ॥१४॥

इत्यभिधाय नीत्वा च निजकण्ठकन्दलम्, 'इहास्ते सा तव पूर्वप्रणयिनी' इत्यन्तःस्थितां दमयन्तीं दर्शयितुमिव हृन्मध्यवर्तिनीं तामकरोत् ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्; अभिधाय=उक्त्वा, तां=मुक्तावलीं, निजकण्ठकन्दलं=स्वग्रीवाङ्कुरं, नीत्वा=प्रापय्य, 'इह=अत्र, तव=ते, सा पूर्वप्रणयिनी=पूर्वपरिचिता प्रेमिणी' इति=एवम्, अन्तःस्थितां=हृदयनिविष्टां, दमयन्तीं=भैमीं दर्शयितुमिव=प्रकटयितुमिव, [इत्युत्प्रेक्षा] हृन्मध्यवर्तिनीमकरोत्=वक्षःस्थले सुशोभितामकरोत्॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहकर और उस मुक्तावली को अपने कण्ठमूल के आगे ले जाकर 'यह यहाँ पर तुम्हारी वह पूर्वपरिचिता प्रेमिका स्थित है।" इस प्रकार कहते हुए मानो अपने हृदय में अवस्थित दमयन्ती को दिखलाने के लिए, हृदय के मध्य में अर्थात् वक्षःस्थल पर धारण कर लिया॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृत्वा च किञ्चिदनुच्चस्मितं मधुरमधुरया वाचा 'विहङ्गपुङ्गव ! पुनः कथ्यतां कीदृशी सा, कीदृग्रूपा, किं च वयः, कीदृशी लावण्यसंपत्, को विनोदः, कीदृशं वाग्वैदग्ध्यम्, किं प्रियम्, का गोष्ठी' इति श्रुतामप्यपूर्वामिव तद्वार्तामादरेण पृच्छन्नागच्छंश्च चटुलकरकृतशरसंधानस्यानवरतविरचिताद्भुतभ्रमणकर्मकार्मुकवलयस्य लक्ष्यतां मकरकेतोरविदितापक्रमानतिबहून्वेलालवानवतस्थे ॥

कल्याणी—कृत्वेति । किञ्चित्=स्तोकम्, अनुच्चस्मितं=मन्दस्मितं, कृत्वा=विधाय, मधुरमधुरया=अतिमधुरया, वाचा=वाण्या, 'विहंगपुंगव !=पक्षिवर ! पुनः=भूयः, कथ्यतां=निवेद्यतां, सा=दमयन्ती, कीदृशी=कथंविधा, कीदृग्रूपा=तस्याः रूपं च कीदृक्, किं च वयः=अवस्था, लावण्यसंपत्=सौन्दर्यश्रीः कीदृशी, कः=कीदृशः विनोदः, कीदृशं वाग्वैदग्ध्यं=वाग्विलासः, किं प्रियम्=अभीष्टम्, का=कीदृशी, गोष्ठी=सखीमण्डली, इति=एवं, श्रुतामपि=आकर्णितामपि, अपूर्वामिव=अज्ञातामिव, तद्वार्तां=तस्याः वृत्तान्तम्, आदरेण=प्रेम्णा, पृच्छन्, चटुलकरेण=चञ्चलहस्तेन, कृतं=विहितं, शरसन्धानं=बाणचालनं येन तस्य, अनवरतं=सततं, विरचितं=कृतं, भ्रमणकर्म=परितः सञ्चरणव्यापारः येन तादृशः, कार्मुकवलयः=धनुर्मण्डलं यस्य तस्य, मकरकेतोः=कन्दर्पस्य, लक्ष्यतां=लक्ष्यभावम्, आगच्छंश्च=प्राप्नुवंश्च, अविदितापक्रमान्—न विदितः=ज्ञातः, अपक्रमः=व्यपायः येषां तान्, बहून्=समधिकान्, वेलालवान्=कालांशान् [अत्यन्तसंयोगे द्वितीया], अवतस्थे=अवस्थितो बभूव, 'समवप्रविभ्यः स्थः' इत्यात्मनेपदम् ॥

ज्योत्स्ना—और थोड़ा मुस्कुराते हुए अत्यन्त मधुर वाणी से "हे पक्षिश्रेष्ठ ! फिर कहिये—वह दमयन्ती कैसी है, उसका रूप कैसा है, उसकी अवस्था क्या है, उसकी सौन्दर्यसम्पत्ति किस प्रकार की है, उसका विनोद कैसा है; वाग्विलास कैसा है, उसे प्रिय क्या है, उसकी गोष्ठी कैसी है ?" इस प्रकार (पूर्व में) सुना होने पर भी अज्ञात (न सुना हुआ) होने के समान उसके वृत्तान्त को आदर के साथ पूछते हुऐ चञ्चल हाथों से शरसन्धान किये हुए निरन्तर चारो ओर सञ्चरण करने वाले धनुर्मण्डल से युक्त कामदेव का लक्ष्य बने हुए अविदित कालक्षेप वाले होकर बहुत समय तक बैठे रहे ।

आशय यह है कि कामाधिक्य के कारण राजा नल की उस समय ऐसी अवस्था हो गई थी कि समय के बीतने का उसे ज्ञान ही न रहा और दमयन्ती के विषय में ही सोचता हुआ वह बहुत समय तक बैठा रह गया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थिते च विभूष्य मध्यमं नभोभागं भगवति भासुरभासि भास्वति, श्रवणपुटपथमवतरति च प्रहरावसानप्रहारभाङ्कारिभेरीरवे, 'वयस्य ! विश्रम्यतामिदानीममन्दमन्दारतरुपरिकरितरोधसि मन्दिरोद्यानारविन्ददीर्घिकायामेवं प्रार्थ्यसे च न गन्तव्यमविसर्जितेन त्वया पूर्ववत्' इति नियम्य तं राजहंसं स्वयमप्याह्निकायोदतिष्ठत् ॥

कल्याणी—स्थित इति। भगवति=देवे, भासुरभासि=उद्दीप्तकिरणे, भास्वति=सूर्ये, मध्यमं=मध्यभवं, नभोभागं=गगनभागं, विभूष्य=अलङ्कृत्य, स्थिते च=अवस्थिते च, प्रहरावसानप्रहारभाङ्कारिभेरीरवे—प्रहरस्य=यामस्य, द्वितीयप्रहरस्येति भावः। अवसाने=समाप्तौ, प्रहारेण=वादनेन, भाङ्कारि=भामिति ध्वनिं करोतीति तादृशी, या भेरी=दुन्दुभिः, तस्याः रवे=शब्दे, श्रवणपुटपथमवतरति च=श्रूयमाणे च, 'वयस्य !=सखे ! इदानीं=सम्प्रति, अमन्दमन्दारतरुपरिकरितरोधसि—अमन्दैः=समधिकैः, मन्दारतरुभिः=मन्दारवृक्षैः, परिकरितं=व्याप्तं, रोधः=तटं यस्यास्तस्यां; मन्दिरोद्यानारविन्ददीर्घिकायां=गृहोद्यानस्थितकमलाकीर्णवाप्यां, विश्रम्यतां=विश्रामं क्रियताम्, एवं=इत्थं, प्रार्थ्यसे=निवेद्यसे, च—पूर्ववत् अविसर्जितेन=अपरित्यक्तेन, अननुज्ञातेनेत्यर्थः। त्वया=भवता, न गन्तव्यं=न यातव्यम्, इति=एवं; नियम्य=नियन्त्रितं कृत्वा, तं राजहंसम्, स्वयमपि=आत्मनाऽपि, आह्निकाय=मध्याह्नोचितं कृत्यमनुष्ठातुम्, उदतिष्ठत्=उदचलत् ॥

ज्योत्स्ना—और उद्दीप्त किरणों वाले भगवान् भास्कर के मध्य भाग को अलंकृत कर स्थित हो जाने पर तथा (द्वितीय) प्रहर की समाप्ति पर प्रहार से अर्थात्—बजाये जाने से 'भाँ' इस प्रकार शब्द करने वाले नगाड़े की ध्वनि के कानों में सुनाई देने पर "हे मित्र ! इस समय अत्यधिक मन्दार वृक्षों से व्याप्त तट वाले गृहोद्यानस्थित कमलों से व्याप्त दीर्घिका (बावली) में विश्राम करो; यही मेरी प्रार्थना है। पूर्व के समान विना (मुझसे) आज्ञा प्राप्त किये चले मत जाना।" इस प्रकार उस राजहंस को नियन्त्रित कर स्वयं भी दैनिक मध्याह्नोचित कार्य को करने के लिए उठ खड़ा हुआ ॥

एवं च—

शिथिलितसकलान्यव्यापृतेस्तस्य राज्ञः
परिहृतनिजबन्धोर्यान्ति हंसेन सार्धम्।
दिनमनु दमयन्तीवृत्तवार्ताविनोदै-
रविदितपरिवर्त्ता वासराः शारदीनाः ॥१५॥

अन्वयः—दिनमनु शिथिलितसकलान्यव्यापृतेः परिहृतनिजबन्धोः तस्य राज्ञः हंसेन सार्धं दमयन्तीवृत्तवार्ताविनोदैः शारदीनाः वासराः अविदितपरिवर्ताः यान्ति ॥१५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—शिथिलितेति। दिनमनु=दिनं लक्षीकृत्य, एतेन रात्रिनिषेधः, पक्षिणां हि रात्रौ नीडे निलीनत्वादिति भावः। शिथिलितसकलान्यव्यापृतेः—शिथिलिताः=उपेक्षिताः, सकलाः=समस्ताः, अन्यव्यापृतयः=अन्यव्यापाराः येन तस्य, परिहृतनिजबन्धोः—परिहृता=विसृष्टा, निजबन्धवः येन तस्य राज्ञः=नृपस्य, हंसेन=हंसपक्षिणा, सार्धं=साकं, दमयन्तीवृत्तवार्ताविनोदैः—दमयन्त्याः वृत्तवार्ता=वर्णनालापः, तस्याः विनोदैः=मनोरञ्जनैः, शारदीनाः—शरदि भवं शारदमुष्णत्वातिशयादि, तदस्त्यस्येति शारदी [मत्वर्थीय इनिः], शारदी इनः=सूर्यः येषु ते शारदीनाः=शरत्कालीनाः, तापहेतव इति भावः। तादृशा अपि वासराः=दिवसाः, अविदितपरिवर्ताः—न विदितः=ज्ञातः, परिवर्तः=अपक्रमः येषां तथाविधाः, यान्ति=गच्छन्ति ॥ मालिनी वृत्तम् ॥१५॥

ज्योत्स्ना—और इस प्रकार दिन-दिन समस्त अन्य व्यापारों को उपेक्षित किये हुए एवं अपने बन्धुजनों का भी त्याग किये हुए उस राजा का हंस के साथ दमयन्तीविषयक वार्तालाप के विनोद से ही शरत्कालीन दिन इस प्रकार व्यतीत होने लगे कि यह पता ही नहीं चलता था कि दिन कब निकला और कब समाप्त हो गया ॥१५॥

एकदा प्रस्फुरत्प्रभातारम्भप्रभया प्रभिद्यमाने नवनीलाञ्जनिकाकुसुमकान्तिनि तमसि, विलीनलाक्षाम्भोभिरिव सिच्यमानायां शनैः शचीदयितदिशि मन्दमुन्मिषत्कमलमुकुलोच्छलच्चटुलालिचक्रवालकलकलेनोन्निद्रितेन तन्द्रामुद्रितोन्मिषच्चक्षुषा चलच्चञ्चूकोटिकण्डूयनविरामधुतपक्षरोमराजिना राजहंसकदम्बकेनानुगम्यमानो विहाय विहङ्गमः सरस्तीरम्, उपसृत्य किंनरमधुरगीतध्वनिविनिद्रितमावश्यकावसाने राजानम्, इदमवदीत् ॥

कल्याणी—एकदेति। एकदा=कस्मिंश्चित्समये, प्रस्फुरत्प्रभातारम्भप्रभया—प्रस्फुरन्त्या=विकीर्यमाणया, प्रभातारम्भस्य प्रभया=कान्त्या, नवनीलाञ्जनिकाकुसुमकान्तिनि—नवस्य=नूतनस्य, नीलाञ्जनिकाकुसुमस्य=तमालपुष्पस्य, कान्तिरिव कान्तिर्यस्य तस्मिन्, तमसि=तिमिरे, प्रभिद्यमाने=प्रकर्षेण विदीर्यमाणे सति, [इत्युपमा] शचीदयितदिशि—शचीदयितः=इन्द्रः, तस्य दिशि=प्राच्यां, विलीनलाक्षाम्भोभिः=विद्रुतलाक्षावारिभिः, शनैः=मन्दं, सिच्यमानायामिव= आर्द्रीक्रियमाणायामिव, [इत्युत्प्रेक्षा] मन्दं=शनैः; उन्मिषत्कमलमुकुलोच्छलच्चटुलालिचक्रवालकलकलेन—उन्मिषद्भ्यः=विकसद्भ्यः, कमलमुकुलेभ्यः=कमलकुड्मलेभ्यः, उच्छलतः=उद्गच्छतः, चटुलस्य=चपलस्य, अलिचक्रवालस्य=मधुपमण्डलस्य, कलकलेन=गुञ्जनेन हेतुना, उन्निद्रितेन=प्रबुद्धेन, तन्द्रामुद्रितोन्मिषच्चक्षुषा—आदौ तन्द्रया=आलस्येन, मुद्रितं=निमीलितं, पश्चाद् उन्मिषत्=उन्मील्यमानं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चक्षुः=नेत्रं यस्य तेन; चलच्चञ्चूकोटिकण्डूयनविरामधुतपक्षरोमराजिना—चलन्त्या=चञ्चलया, चञ्चूकोट्या=चञ्च्वग्रभागेन, यत् कण्डूयनं=कण्डूविनयनं; तस्य विरामे=समाप्तौ; धुता=कम्पिता, पक्षरोमराजिः=पक्षलोमपंक्तिः येन तेन; राजहंसकदम्बकेन=राजहंससमूहेन, अनुगम्यमानः=अनुस्रियमाणः, विहङ्गमः=स राजहंसः, सरस्तीरं=सरोवरतटं, विहाय=त्यक्त्वा, किन्नरमधुरगीतध्वनिविनिद्रितं—किनरमधुरगीतध्वनिना=किंनरस्य मधुरगानशब्देन, विनिद्रितं=प्रबुद्धम्, आवश्यकावसाने—आवश्यकस्य=प्रभातोचितनित्यक्रियायाः, अवसाने=समाप्तौ, राजानं=नलम्, उपसृत्य=उपगम्य, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—किसी समय प्रस्फुटित होती हुई प्रातःकालीन कान्ति से नूतन तापिच्छ (तमाल) पुष्प की कान्ति के समान कान्ति वाले अन्धकार के समाप्त हो जाने पर, इन्द्र की दिशा (पूर्व दिशा) को गले हुए लाक्षारस से धीरे-धीरे सिञ्चित किये जाने पर, विकसित होते हुए कमल-कुड्मलों से उछलकर निकलते हुए चपल भ्रमरों के गुञ्जार के कारण जगा हुआ, प्रथमतः आलस्य के कारण मुँदे हुए और बाद में खुलते हुए नेत्रों वाले, चञ्चल चञ्चू (चोंच) के अग्रभाग से (शरीर को) खुजला लेने के पश्चात् कम्पित पंख-रोमों वाले, राजहंसों के द्वारा अनुगमन किये जाने वाले उस राजहंस ने सरोवरतट का त्याग कर किन्नरों की मधुर गीतध्वनि से जगे हुए राजा के पास, (उसके) प्रातःकालीन आवश्यक क्रियाओं के सम्पन्न कर लेने पर, जाकर इस प्रकार बोला—

'देव ! विज्ञापयामो देवस्य दर्शनम्, अनालेप्यं चन्दनम्, अस्पर्शं कर्पूरपांसुपटलोद्धूलनम्, अपातव्यममृतम् । अनास्वाद्यं रसायनम्, अलेह्यं मधु । कुतः किलैतदनुभवतामस्माकमपि वर्षसहस्रेणापि परितोषः । किं तु तिरयति स्वातन्त्र्यं प्राणिनां परपरिग्रहो दुस्त्यजाश्च जलजन्मनोऽपि जन्मभूमयो भवन्ति । अवगमिष्यति च विश्रब्धमेतत्सर्वमपि देवो यादृशा येन च जन्मान्तराराधनोपरोधेन प्रेषिता वयम् । अनवसरः खल्वयमस्य कथाप्रक्रमस्य । तदादिशतु देवोऽस्मान्गमनाय । न च प्रस्तुतानुचरालापेषु वयं विस्मरणीयाः । किमन्यज्जन्म च जीवितं च तदेव श्लाघ्यं मन्यामहे, यत्र प्रसङ्गेन भवादृशा अनुस्मृतिं कुर्वन्ति । तदेष प्रस्थानप्रार्थनाप्रणामः' इत्युक्तवन्तमिममवनिपालः कथमपि विसर्जयामास ॥

कल्याणी—देवेति । देव !=महाराज !, विज्ञापयामः=वयं निवेदयामः, यद् देवस्य दर्शनं=भवतः महाराजस्य दर्शनम्, अनालेप्यं चन्दनम्, अस्पर्शं=स्पर्शरहितं, कर्पूरपांसुपटलोद्धूलनम्=कर्पूरचूर्णोद्धूलनम्; अपातव्यम्=अपेयम्, अमृतम्=सुधारसम्, अनास्वाद्यं=अखाद्यं, रसायनम्=औषधम्, अलेह्यं=लेह्यगुणरहितं, मधु=मधुरसम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतत्=दर्शनं, तत्सुखमिति भावः। अनुभवतामस्माकं वर्षसहस्रेणापि [अपवर्गे तृतीया]। कुतः=कस्मात्, परितोषः=तृप्तिः, किन्तु परपरिग्रहः=परदेशाश्रयणं, प्राणिनां=जीवानां, स्वातन्त्र्यं=स्वच्छन्दतां, तिरयति=आच्छिनत्ति। जलजन्मनोऽपि=मल्लक्षणस्य जलचरस्यापि, जन्मभूमयः=उत्पत्तिभूमयः, दुस्त्यजाः=दुःखेन त्यक्तुं शक्याः भवन्ति। यादृशा=येन प्रकारेण, येन च जन्मान्तराराधनोपरोधेन=पूर्वजन्मकृतपुण्यजनितानुग्रहणेन, वयं प्रेषिताः=प्रहिताः, एतत्सर्वमपि=सम्पूर्णमिदमपि, देवः=भवान्; विश्रब्धं=सुस्थिरं यथा स्यात्तथा, [स्वयमेव] अवगमिष्यसि=ज्ञास्यसि। अस्य=एतस्य; कथाप्रक्रमस्य=वार्त्ताक्रमस्य, अनवसरः खलु=निश्चयेन, एतत्सर्वमाख्यातुं नायमवसर इत्यर्थः। तत्=तस्मात्, देवः=भवान्, गमनाय=प्रयातुम्, अस्मान्=नः; आदिशतु=अनुजानातु। प्रस्तुतानुचरालापेषु=भृत्यानां प्रासङ्गिकचर्चासु, न च वयं, विस्मरणीयाः=विस्मर्त्तव्याः। किं च तदेवान्यज्जन्म जीवितं च श्लाघ्यं=प्रशंसनीयं, मन्यामहे यत्र=यस्मिन्, प्रसङ्गेन=प्रसङ्गवशात्, भवादृशाः=भवत्सदृशाः जनाः; अनुस्मृतिम्=अनुस्मरणं कुर्वन्ति। तत्=तस्मात्, एषः=अयं, प्रस्थानप्रार्थनाप्रणामः=प्रस्थानकालस्य प्रार्थनाद्योतको मत्प्रणामः। इति=एवम्, उक्तवन्तम्=अभिदधानम्, इमं=हंसम्, अवनिपालः=नृपः नलः, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। विसर्जयामास=विसृष्टवान्॥

ज्योत्स्ना—"हे महाराज! हम लोग यह निवेदन करना चाहते हैं कि श्रीमान् का दर्शन एक प्रकार का लेप न करने योग्य चन्दन है, बिना स्पर्श किये ही कर्पूरचूर्णों के द्वारा किया गया स्नान है, पान न करने लायक अमृत है, आस्वाद न लेने लायक रसायन (औषधि) है, न चाटने लायक मधु है। इस (आपके दर्शन-सुख) का अनुभव करते हुए हमलोगों को हजारों वर्ष बीत जाने पर भी तृप्ति कहाँ हो सकती है? किन्तु परपरिग्रह (परदेश का आश्रयण) प्राणियों की स्वतन्त्रता को तिरोहित कर देता है और जल में जन्म लेने वालों अर्थात् हमारे जैसे जलचरों के लिए भी जन्मभूमि का त्याग करना अत्यन्त ही दुष्कर होता है। जिस प्रकार से और पूर्व जन्म में किये गये जिस पुण्यजनित अनुग्रहण के कारण हमलोग आपके द्वारा प्रेषित किये गये—यह सब भी सुस्थिर होने पर महाराज स्वयं ही जान जायेंगे। निश्चित रूप से इन सब कथाओं को कहने का यह समय नहीं है, इसलिए महाराज हम लोगों को जाने की आज्ञा दें। अनुचरों के साथ प्रासङ्गिक वार्तालापों में हम लोगों का विस्मरण तो (श्रीमान्) नहीं ही करेंगे। अन्य जन्म और जीवन से क्या (लाभ), हम तो उसी (जन्म और जीवन) को प्रशंसनीय मानते हैं, जिसमें प्रसङ्गवश भी आप जैसे लोग (हमलोगों को) याद कर लिया करते हैं। इसलिए चलते समय प्रार्थनाद्योतक यह मेरा प्रणाम है।" इस प्रकार कहते हुए उस राजहंस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को राजा ने किसी-किसी प्रकार अर्थात् अत्यन्त दुःख के साथ विसर्जित किया, जाने दिया ॥

गते च तस्मिन्नविस्मरणीयोपकारे कादम्बकदम्बकेश्वरे, श्रवणप्रणालिकया प्रविश्य मानसं सरस्तरलयन्त्यां विदर्भराजहंससुतायां, प्रहरति प्रत्यङ्गमनङ्गधानुष्के, समीपवनविकासिकुन्दमकरन्दास्वादमदमेदुरगिरां गच्छति श्रवणपथमतिमधुरे मधुलिहां झङ्कारे, आकर्णपूरीकृतकार्मुकगुणे रणरणकारम्भिणि तत्रावसरे ॥

कल्याणी – गते चेति । अविस्मयोपकारे—न विस्मरणीयः उपकारः यस्य तस्मिन्, कादम्बकदम्बकेश्वरे=हंससमूहाधिपतौ, गते च=प्रयाते च, श्रवणप्रणालिकया—श्रवणं=कर्णः, स एव प्रणाली=जलमार्गः तया, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, विदर्भराजहंससुतायां—विदर्भराजः=भीमः, स एव हंसः, तस्य सुतायां=दमयन्त्यां, मानसं=चेतः, स एव मानसं सरः=मानसाख्यं देवतडागं, तरलयन्त्यां=विक्षुब्धं कुर्वत्यां सत्याम् [इति रूपकम्], आकर्णपूरीकृतकार्मुकगुणे=प्रवणीकृतधनुर्गुणे, अनङ्गधानुष्के=कामदेवधनुर्धरे, प्रत्यङ्गं=अङ्गमङ्गं, प्रहरति=विमुक्तशरैः पीडयति सति, समीपवनविकासिकुन्दमकरन्दास्वादमदमेदुरगिरां—समीपवने=उपवने, विकासिनां=विकसितानां, कुन्दानां=माध्यकुसुमानां, मकरन्दास्वादमदमेदुरगिरां—मकरन्दास्वादमदः=मधुपानजन्यमत्तता, तेन मेदुरा=परिपूर्णा, गीः=ध्वनिः येषां तेषां, मधुलिहां=भ्रमराणामु, अतिमधुरे=मधुरतमे, झङ्कारे=गुञ्जितध्वनौ, श्रवणपथं गच्छति=श्रूयमाणे सति, रणरणकारम्भिणि=उत्कण्ठाकारिणि, तत्र=तस्मिन्, अवसरे=काले सति ॥

ज्योत्स्ना—और न भूलने योग्य उपकारों को करने वाले उन हंससमूहों के स्वामी के चले जाने पर, श्रवणरूपी नालिका द्वारा प्रवेश करके भीमरूपी हंस की पुत्री दमयन्ती द्वारा (अपने) मनरूपी सरोवर को विक्षुब्ध करने पर, कर्णपर्यन्त खींचे गये प्रत्यञ्चायुक्त धनुष को धारण करने वाले कामदेव के द्वारा प्रत्येक अंगों के ऊपर प्रहार करने पर, समीपवर्ती वन में विकसित कुन्दपुष्पों के मकरन्द-पान से उत्पन्न मद के कारण गम्भीर ध्वनिवाले भ्रमरों की अत्यन्त मधुर झंकार के कानों में सुनाई देने पर उत्सुकता को उत्पन्न करने वाले उस समय में—

आविर्भूतविषादकन्दमसमव्यामोहमीलन्मन-
श्चिन्तोत्तानितनिर्निमेषनयनं निःश्वासदग्धाधरम् ।
जातं स्थानकमुत्सुकस्य नृपतेस्तत्तस्य यस्मिन्नभूत्
प्रेयान्पञ्चमराग एव रिपवः शेषास्तु सर्वे रसाः ॥१६॥

अन्वयः—उत्सुकस्य तस्य नृपतेः आविर्भूतविषादकन्दम् असमव्यामोहमीलन्मनः चिन्तोत्तानितनिर्निमेषनयनं निःश्वासदग्धाधरं स्थानकं जातं, यस्मिन् पञ्चमराग एव प्रेयान् अभूत्, शेषास्तु सर्वे रसाः रिपवः (जाताः) ॥१६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—आविर्भूतेति। उत्सुकस्य=उत्कण्ठितस्य, तस्य=पूर्वोक्तस्य, नृपतेः=नलस्य, आविर्भूतविषादकन्दम्—आविर्भूतः=समुत्पन्नः, विषादकन्दः=खेदाङ्कुरः यत्र तत्, असमव्यामोहमीलन्मनः—असमव्यामोहेन=विषमप्रणयोन्मादेन, मीलत्=व्यथमानं, मनः=चित्तं यत्र तत्, चिन्तोत्तानितनिर्निमेषनयने—चिन्तोत्तानिते=विस्फारिते, निर्निमेषे=निमेषरहिते, नयने=नेत्रे यत्र तत्, निःश्वास दग्धाधरं—निश्वासैः=उच्छ्वासैः, दग्धः=शुष्कः अधरः=ओष्ठः यत्र तत्, स्थानकम्=अवस्थान्तरं, जातं=सम्भूतम्। यस्मिन्=यत्र स्थानके, पञ्चमराग एव—पञ्चमे=पञ्चमाख्ये रागविशेषे, रागः=रसवत्ता, स एव प्रेयान्=प्रीतिकरः, अभूत्=जातः, शेषास्तु सर्वे रसाः=विषयानुरागाः, रिपवः=शत्रवः, जाताः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१६॥

ज्योत्स्ना—उत्कठिण्त उस राजा नल के (मन में) विषाद का अंकुर निकल आया, विषम व्यामोह (प्रणयरूपी उन्माद) से मन व्यथित हो गया, चिन्ता के कारण नेत्र फैलकर पलकशून्य हो गये और निःश्वासों के कारण ओष्ठ सूख गये—इस प्रकार की उसकी एक दूसरी ही अवस्था हो गई, जिस अवस्था में (उसे) पञ्चमनामक रागविशेष अर्थात् कोयल के स्वर ही केवल प्रिय लगते थे, बाकी सभी रस शत्रु के समान ही प्रतीत होते थे ॥१६॥

ततश्च वृश्चिकदंशदुःसहव्यथामवस्थामनुभवन्निव, कण्टकैश्चरणमर्मणि विध्यमान इव, मुहुर्मुहुर्मुमुरपुञ्जराजीवाङ्गानि धारयन्नुग्रग्रीष्मानिलोल्लोलैरालिङ्ग्यमानो, मनागपि न क्वापि शर्म लेभे ॥

कल्याणी—ततश्चेति। ततः=तदनन्तरं च, वृश्चिकदंशदुःसहव्यथां—वृश्चिकदंशस्येव दुःसहा व्यथा=पीडा यस्यां तथाविधाम्, अवस्थां=दशाम्, अनुभवन्निव=अनुभवं कुर्वन्निव, चरणमर्मणि=पादमर्मस्थले, कण्टकैर्विध्यमान इव=शूलैर्वेधयुत इव, मुहुर्मुहुः=भूयोभूयः, मुमुरपुञ्जराजीवाङ्गानि—मुमुरपुञ्जाः=तुषाग्निराशय इव, तापातिरेकादिति भावः। राजीवाङ्गानि—राजीवानि=कमलानि येषु तथाविधानि अङ्गानि, धारयन्=दधानः, उग्रग्रीष्मानिलोल्लोलैः=प्रचण्डोष्णपवनावेगैः, आलिङ्ग्यमानः=स्पृश्यमानः, मनागपि=ईषदपि, क्वापि=कुत्रापि, शर्म=निर्वृतिं, न लेभे=न प्राप ॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद वृश्चिकदंक (बिच्छू के डंक मारने) के समान असह्य पीड़ा को अनुभव करते हुए के समान, पैरों के कोमल भाग में काँटों से विंधे हुए के समान, बार-बार भूसी की आग के ढेर के समान कमलसदृश कोमल अंगों को धारण करते हुए ग्रीष्मकालीन प्रचण्ड वायुवेग से आलिङ्गित किया जाता हुआ (वह नल) कहीं पर भी नाममात्र के लिए भी आराम नहीं प्राप्त कर पा रहा था ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथापि—

श्च्योतच्चन्द्रमणिप्रणालशिशिराः सौगन्ध्यरुद्धाम्बरै-
र्निर्गच्छन्नवधूपधूमपटलैः संभिन्नवातायनाः ।
सौधोत्सङ्गभुवो विकीर्णकुसुमाः पूर्णेन्दुरश्मिश्रिया
रम्यायां निशि नो हरन्ति हृदयं हृद्यं किमुद्वेगिनाम् ॥१७॥

अन्वयः—श्च्योतच्चन्द्रमणिप्रणालशिशिराः सौगन्ध्यरुद्धाम्बरैः निर्गच्छन्नवधूपधूमपटलैः सम्भिन्नवातायनाः विकीर्णकुसुमाः सौधोत्सङ्गभुवः पूर्णेन्दुरश्मिश्रिया रम्यायां निशि हृदयं न हरन्ति, उद्वेगिनां किं हृद्यम् ॥१७॥

कल्याणी—श्च्योतदिति । श्च्योतच्चन्द्रमणिप्रणालशिशिराः—श्च्योततः=क्षरतः, चन्द्रमणेः=चन्द्रकान्तमणेः, प्रणालेन=जलप्रवाहेण, शिशिराः=शीतलाः, सौगन्ध्यरुद्धाम्बरैः—सौगन्ध्येन=सुवासेन, रुद्धं=व्याप्तम्, अम्बरं=गगनं येषां तथाविधैः, निर्गच्छन्नवधूपधूमपटलैः—निर्गच्छतां=निःसरतां, नवधूपधूमानां=नूतनधर्मधूमानां, पटलैः=राशिभिः, सम्भिन्नवातायनाः—संभिन्नानि=संश्लिष्टानि, वातायनानि=गवाक्षाः यासां ताः, विकीर्णकुसुमाः—विकीर्णानि=प्रसृतानि, कुसुमानि=पुष्पाणि यासु ताश्च, सौधोत्सङ्गभुवः=प्रासादभूमयः, पूर्णेन्दुरश्मिश्रिया=पूर्णचन्द्रकिरणलक्ष्म्या, रम्यायां=रमणीयायां, निशि=रात्रौ, हृदयं=चेतः, न हरन्ति=न प्रसादयन्ति, अपि तूद्वेगायैव भवन्तीति भावः । एतस्य युक्तत्वं चाह—हृद्यमिति । उद्वेगिनां=दुःखितजनानां, किं हृद्यं=किं प्रीतिकरम् ? न किमपीत्यर्थः । सामान्येन विशेषसमर्थनरूपोऽर्थान्तरन्यासोऽलङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१७॥

ज्योत्स्ना—झरते हुए चन्द्रकान्त मणि के जलप्रवाह से शीतल; सुगन्ध से आकाश को व्याप्त किये हुए, निकलती हुई धूपरूपी धूमों से भरी हुई खिड़कियों वाले, फैली हुई पुष्पों वाली भव्य भवनों की भूमि पूर्ण चन्द्रमा के किरणों की कान्ति से रमणीय रात्रि में भी चित्त को प्रसन्न नहीं करती (अपितु उद्वेग को बढ़ाने वाली ही होती है), क्योंकि उद्विग्न पुरुषों के लिए कोई भी वस्तु हृद्य अर्थात् प्रीतिदायक नहीं होती ॥१७॥

अपि च—

हृद्योद्यानसरस्तरङ्गशिखरप्रेङ्खोलनायासिताः
संभोगश्रमखिन्नकिंनरवधूस्वेदोदबिन्दुच्छिदः ।
सायं सान्द्रविनिद्रकैरववनान्यान्दोलयन्तः शनै-
रङ्गेऽङ्गारसमाः पतन्ति पवनाः प्रालेयशीता अपि ॥१८॥

अन्वयः—हृद्योद्यानसरस्तरङ्गशिखरप्रेङ्खोलनायासिताः सम्भोगश्रमखिन्नकिन्नरवधूस्वेदोदबिन्दुच्छिदः सायं सान्द्रविनिद्रकैरववनानि आन्दोलयन्तः प्रालेयशीताः अपि पवनाः अङ्गे शनैः अङ्गारसमाः पतन्ति ॥१८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—हृद्योद्यानेति । हृद्योद्यानसरस्तरङ्गशिखरप्रेङ्खोलनायासिताः—हृद्यं=रम्यं, यत् उद्यानसरः=उद्यानतडागः, तस्य तरङ्गशिखराणां=तरङ्गाग्रभागानां; प्रेङ्खोलनेन=तरलनेन, आयासिताः=खेदिताः, तथा सम्भोगश्रमखिन्नकिन्नरवधूस्वेदोदबिन्दुच्छिदः—संभोगश्रमेण=सुरतजन्यक्लान्त्या, खिन्नानां=श्रान्तानां, किंनरवधूनां=किंनररमणीनां, स्वेदोदबिन्दून्=स्वेदजलकणान्, छिन्दन्ति=मुष्णन्तीति तथोक्ताः; सायं=सायंकाले, सान्द्रविनिद्रकैरववनानि—सान्द्राणि=घनानि, विनिद्राणि=विकसितानि, कैरववनानि=कुमुदचक्रवालानि, आन्दोलयन्तः=कम्पयन्तः, प्रालेयशीताः=हिमवच्छीतलाः, अपि पवनाः=वायवः, अङ्गे=शरीरे, शनैः=मन्दं; [लगन्तः] अङ्गारसमाः=अङ्गारा इव, पतन्ति । 'प्रालेयशीताः' इत्युपमा । प्रालेयशीतपवनस्याङ्गारात्मना सम्भावनयोत्प्रेक्षा । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१८॥

ज्योत्स्ना—और भी; रमणीय उद्यान-सरोवर की लहरियों के अग्रभाग से टकराने के कारण थका हुआ, सम्भोगजन्य परिश्रम से श्रान्त किन्नर-सुन्दरियों के पसीने की बूंदों को हरण करने वाला, सायंकाल में गहन रूप से विकसित कमलवनों को आन्दोलित (कम्पायमान) करता हुआ बर्फ के समान शीतल पवन भी शरीर पर धीरे-धीरे लगते हुए अंगार के समान गिरता है ।

आशय यह है कि बर्फ के समान शीतल हवा भी धीरे-धीरे शरीर से लगती हुई ऐसी प्रतीत होती है, मानों आग बरस रही हो ॥१८॥

तदाप्रभृति चास्य प्रायः प्रीतिरभूद्दाक्षिणात्यजनेष्वेव, पुलकमकरोन्नामापि विदर्भदेशस्य, श्रुतापि श्रवणयोः सुखमजीजनद्दक्षिणा दिक् ॥

कल्याणी—तदेति । तदाप्रभृति च=तत्कालादेव च, दमयन्तीपूर्वानुरागोत्पत्तिक्षणात्मकपूर्वावधिकोत्तरकालादेव चेत्यर्थः । अस्य=नलस्य, प्रायः=बाहुल्येन, दाक्षिणात्यजनेष्वेव—दक्षिणस्यां भवाः दाक्षिणात्याः तेष्वेव जनेषु, प्रीतिः=स्नेहः, अभूत्=बभूव । विदर्भदेशस्य नामापि=विदर्भनगरस्याभिधानमपि, पुलकं=रोमाञ्चम्, अकरोत्=चकार, श्रुतापि=कर्णपथमागतापि, दक्षिणा दिक्=अवाची दिशा, सुखमजीजनत्=सुखं जनयति स्म ॥

ज्योत्स्ना—उसी समय से इस नल का स्नेह प्रायः दक्षिण दिशा के लोगों के प्रति ही (केन्द्रित) हो गया, विदर्भ देश का नाम भी (इसे) रोमाञ्चित करने लगा और सुनाई पड़ने मात्र से ही दक्षिण दिशा कानों को सुख प्रदान करने लगी ॥

किं बहुना—

लिप्तेवामृतपङ्केन स्पृष्टेवानन्दकन्दलैः ।
आसीद्दिग्दक्षिणा तस्य कर्णयोर्मनसो दृशोः ॥१९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—दक्षिणा दिक् तस्य कर्णयोः मनसः दृशोः अमृतपङ्केन लिप्ता इव आनन्दकन्दलैः स्पृष्टा इव आसीत् ॥१९॥

कल्याणी—लिप्तेति। दक्षिणा दिक्=अवाची दिशा, तस्य=नलस्य; कर्णयोः=श्रोत्रयोः, मनसः=चित्तस्य तथा दृशोः=नयनयोः, अमृतपङ्केन=सुधालेपेन; लिप्तेव=लेपयुतेव, आनन्दकन्दलैः=आनन्दनवाङ्कुरैः, स्पृष्टेव=स्पृशंकृतेव, आसीत्=अभूत्, दक्षिणदिङ्नामश्रवणमात्रेणापि स कामप्यपूर्वां तृप्तिमनुभवति स्मेति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१९॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; दक्षिण दिशा उसके कान, मन तथा नयनों में अमृतलेप से लिपी हुई-सी एवं आनन्द के नवांकुरों से स्पर्श की गई-सी लगती थी ॥१९॥

दमयन्त्यपि हंसदर्शनदिवसादारभ्य भ्रमद्भृङ्गकुलकलकलोन्नादितपर्यन्तेषु, प्रत्यग्रोल्लूनपुष्पपल्लवास्तरणेषु, विचलद्विनोदविहङ्गेषु विहरति नासन्नोद्यानलतामण्डपेषु, न च विकचकुवलयकह्लारकुशेशयसारवारिणि रणच्चटुलचञ्चरीकचक्रवाकचक्रे क्रीडति क्रीडासरसि न च स्पृशति पाणिनापि माणिक्यमालामण्डनानि, न च रचयति रुचिरालकवल्लरीभङ्गान्तरालेषून्मिषत्कुसुमविन्यासान्, न च क्वचिदुच्चहंसतूलिकातल्पेऽपि कोमलकपोलावष्टम्भभाजि निद्रासुखमनुभवति, केवलमधिपाण्डुगण्डस्थलस्थापितपाणिपल्लवा प्रेषयन्ती प्रतिक्षणमुत्तरस्यां दिशि दृशं तद्देशागतान्गगने पक्षिणोऽपि सस्पृहं पश्यन्ती, तत्रत्यानध्वगानपि बन्धुबुद्ध्यालापयन्ती, तन्मण्डलागताय मरुतेऽप्यपनीतोत्तरीयांशुका हृदयमर्पयन्ती दिनं दिनमनङ्गेनाभ्यभूयत ॥

कल्याणी—दमयन्तीति। दमयन्ती अपि=भीमपुत्री अपि, हंसदर्शनदिवसादारभ्य=यदा हंसदर्शनमभूत्ततः प्रभृति, भ्रमद्भृङ्गकुलकलकलोन्नादितपर्यन्तेषु—भ्रमतां=सञ्चरतां, भृङ्गकुलानां=भ्रमरसमुदयानां, कलकलेन=गुञ्जितेन, उन्नादितः=मुखरितः, पर्यन्तः=परिधिः येषां तेषु, प्रत्यग्रोल्लूनपुष्पपल्लवास्तरणेषु—प्रत्यग्रैः=अभिनवैः, उल्लूनैः=अवचितैः, पुष्पैः पल्लवैश्च कृतमास्तरणं=विस्तरणं येषु तेषु, तथा विचलद्विनोदविहङ्गेषु—विचलन्तः=विहरन्तः, विनोदविहंगाः=क्रीडापक्षिणः यत्र तथाविधेषु, आसन्नोद्यानलतामण्डपेषु—आसन्नं=समीपवर्ति, यत् उद्यानम्=उपवनं, तस्य लतामण्डपेषु=लताकुञ्जेषु, न विहरति=विहारं न करोति, न च विकचकुवलयकह्लारकुशेशयसारवारिणि—विकचानि=विकसितानि, कुवलयानि=नीलोत्पलानि, कह्लाराणि=श्वेतकमलानि, कुशेशयानि=रक्तकमलानि, सारः=उत्कृष्टोंऽशः, यत्र तादृशं वारि=जलं यस्मिन् तथाविधे, रणच्चटुलचञ्चरीकचक्रवाकचक्रे—रणत्=शब्दायमानं, चटुलं=चपलं, चञ्चरीकचक्रवाकचक्रं=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ्रमराणां चक्रवाकपक्षिणां च मण्डलं यत्र तथाविधे, क्रीडासरसि=क्रीडातटाके, क्रीडति=क्रीडां करोति, न च पाणिनापि=करेणापि, माणिक्यमालामण्डनानि=माणिक्यमालादीनि भूषणानि, स्पृशति=स्पर्शं करोति, न च रुचिरालकवल्लरीभृङ्गान्तरालेषु=रम्यालकलतारिक्तस्थानमध्येषु, उन्मिषत्कुसुमविन्यासान्=विकसत्पुष्पसज्जनाः रचयति=करोति। न च क्वचित्=कस्मिंश्चित्, कोमलकपोलावष्टम्भभाजि-कोमलकपोलस्य=मृदुगण्डस्थलस्य, अवष्टम्भम्=आधारभावं, भजते=प्राप्नोतीति तथाविधे, उच्चहंसतूलिकातल्पेऽपि=उत्कृष्टहंसपक्षतुल्यकोमलतूलिकाशयनीयेऽपि, निद्रासुखमनुभवति, सुखेन शेत इत्यर्थः। केवलमधिपाण्डुगण्डस्थलस्थापितपाणि-पल्लवा—केवलमधिपाण्डुगण्डस्थलं=पीततां गते कपोले, [विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः] स्थापितः=निहितः, पाणिपल्लवः=करकिसलयः यया सा तथाविधा, प्रतिक्षणं=क्षणे क्षणे, उत्तरस्यां दिशि=उदीची दिशायां; निषधायाः दिशीति भावः। दृशं=दृष्टिं, प्रेषयन्ती=क्षिपन्ती, तद्देशागतान्—तस्य=नलस्य, देशात्=प्रदेशात्, उत्तरस्याः दिश इति भावः। आगतान्=आयातान्, गगने=आकाशे, पक्षिणोऽपि=विहङ्गानपि, सस्पृहं=सोत्कण्ठं, पश्यन्ती=विलोकयन्ती, तत्रत्यान्=तद्देशसम्बन्धिनः, अध्वगान्=पथिकानपि, बन्धुबुद्ध्या=बन्धुभावनया, आलापयन्ती=वार्तालापं कुर्वन्ती, तन्मण्डलागताय—तस्य=नलस्य, मण्डलात्=प्रदेशात्, आगताय=आयाताय, मरुते=पवनायापि, अपनीतम्=अपसारितम्, उत्तरीयांशुकम्=उत्तरीयवस्त्रं यया तथाभूता सती हृदयमर्पयन्ती, दिनं दिनम्=अनुदिनम्, अनङ्गेन=कामदेवेन, अभ्यभूयत=अपीड्यत ॥

ज्योत्स्ना—दमयन्ती भी हंस को देखने के दिन से ही सञ्चरण करते हुए भ्रमरों की कलकल ध्वनि से मुखरित सीमा वाले, तत्काल तोड़े गये पुष्पों एवं पल्लवों से बनाये गये बिस्तर वाले तथा विहार करते हुए क्रीडापक्षियों वाले समीपवर्ती उद्यानस्थित लतामण्डप में न तो विहार करती थी और न ही विकसित नील, श्वेत एवं रक्त कमलों के सत्त्व से युक्त जल वाले, गुञ्जार करते हुए चञ्चल भ्रमरों एवं चक्रवाकों वाले क्रीडासरोवर में क्रीड़ा करती थी। न तो अपने हाथ से माणिक्य माला आदि आभूषणों का स्पर्श करती थी, न ही रमणीय केशों की वेणी की वक्रता के कारण उनके मध्यवर्ती रिक्त स्थान में विकसित पुष्पों का विन्यास करती थी और न ही किसी भी समय कोमल कपोलों को रखने के स्थानस्वरूप उत्कृष्ट हंस पक्षी के समान कोमल रुई वाले गद्दे पर निद्रासुख का अनुभव कर पाती थी। केवल पीले पड़ गये कपोलों पर अपने हाथों को रखकर हर समय उत्तर दिशा की ओर देखती हुई, आकाश में उस दिशा से आये हुए पक्षियों को भी उत्सुकता के साथ देखती हुई, उस देश से सम्बन्धित यात्रियों से भी बन्धुभावना से बातें करती हुई, उस प्रदेश से आई हुई वायु के लिए भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तरीय वस्त्र को हटाकर (अपना) हृदय अर्पण करती हुई दिन-प्रतिदिन काम के द्वारा पीड़ित हो रही थी ॥

तथाहि—

लास्यं पांसुकणायते नयनयोः, शल्यं श्रुतेर्वल्लकी,
नाराचाः कुचयोः सचन्दनरसाः कर्पूरवारिच्छटाः ।
तस्याः काप्यरविन्दसुन्दरदृशः सा नाम जज्ञे दशा
प्राणत्राणनिबन्धनं प्रियकथा यस्यामभूत्केवलम् ॥२०॥

अन्वयः—लास्यं नयनयोः पांसुकणायते, वल्लकी श्रुतेः शल्यम्, सचन्दनरसाः कर्पूरवारिच्छटाः कुचयोः नाराचाः, अरविन्दसुन्दरदृशः तस्याः सा नाम कापि दशा जज्ञे यस्यां केवलं प्रियकथा प्राणत्राणनिबन्धनम् अभूत् ॥२०॥

कल्याणी—लास्यमिति । लास्यं=नृत्यं, नयनयोः=नेत्रयोः, पांसुकणायते—पांसुकण=धूलिलव इवाचरति, तद्वत्पीडाकरमिति भावः । वल्लकी=वीणा, श्रुतेः=श्रवणस्य, शल्यं=कण्टकम्, सचन्दनरसाः=चन्दनरसयुक्ताः, कर्पूरवारिच्छटाः=कर्पूरजलधाराः, कुचयोः=स्तनयोः, नाराचाः=शराः, अरविन्दसुन्दरदृशः—अरविन्दे=कमले इव सुन्दर्यौ दृशौ=नेत्रे यस्याः तस्यास्तथोक्तायाः, तस्याः=दमयन्त्याः, सा नाम कापि=अपूर्वा, दशा=अवस्था, जज्ञे=जाता, यस्यां=यस्यां दशायां, केवलं प्रियकथा—प्रियस्य=प्रियतमस्य नलस्य, कथा=वार्ता, एव प्राणत्राणनिबन्धनं—प्राणत्राणस्य=प्राणरक्षायाः, निबन्धनम्=अवष्टम्भनम्, अभूत्=अभवत् । पुरा सुखकारिणः सकलपदार्थाः सम्प्रति मदनपीडितायाः दमयन्त्याः दुःखकारिणः सञ्जाता इति भावः । अत्र लास्यादीनां पांसुकणादिभिरन्योन्यं विरोध आपाततः प्रतीयते कामजन्यापूर्वदशारूपहेतुस्तद्विरोधं परिहरतीति विरोधाभासोऽलङ्कारः । आद्यपादद्वयगतवाक्यार्थस्य कामदशाऽपूर्वत्वोपपादनाय निष्पादकहेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२०॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि, नृत्य उसकी आँखों में धूलिकण के समान लगने लगा, वीणा (का स्वर) कानों में शूल की तरह प्रतीत होने लगा, चन्दनरस से समन्वित कर्पूरजल की धारा स्तनों पर बाणों की तरह चुभने लगी, (इस प्रकार) कमल के समान सुन्दर नेत्रों वाली उस दमयन्ती की वह कोई ऐसी अपूर्व दशा हो गई जिसमें केवल प्रियतम नल की कथा ही उसके प्राणों की रक्षा के लिए आधार के रूप में रह गई ॥२०॥

एवमनयोरन्योन्यप्रेषितप्रच्छन्नदूतोक्तिवर्धितानुरागयोः चलन्त्यङ्गानि च मनोरथाः, परिवर्त्तते चक्षुर्नं हृदयम्, कृशतामेत्यङ्गयष्टिर्नोत्कण्ठा, मन्दतां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यात्युत्साहो नाभिलाषः; स्फारीभवति निःसहता न निद्रा, वर्धते चिन्ता न रतिः, शुष्यत्यधरपल्लवो नाग्रहरसः ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, अन्योन्यं प्रेषितः=प्रहितः, यः प्रच्छन्नदूतः=गुप्तसन्देशवाहकः, तस्य उक्त्या=वचनेन, वर्धितानुरागयोः—वर्धितः=वृद्धिं नीतः, अनुरागः=प्रेम ययोस्तयोः, अनयोः=नलदमयन्त्योः, अङ्गानि=शरीरावयवानि, चलन्ति=कम्पन्ते, मनोरथाः=अभिलाषाः, न चलन्ति=न कम्पन्ते, पूर्ववत्सुदृढा एव वर्त्तन्त इति भावः । चक्षुः=नेत्रं, परिवर्तते=इतस्ततः परिभ्रमति, हृदयं=चेतः, न परिवर्तते, न विपरीतभावं गृह्णातीति भावः । अङ्गयष्टिः=देहलताः; कृशतां=दौर्बल्यम्, एति=प्राप्नोति; नोत्कण्ठा—उत्कण्ठा कृशतां=क्षीणतां न यातीति भावः । उत्साहः मन्दताम्=अल्पतां, याति=प्राप्नोति, नाभिलाषः—अभिलाषः नाल्पतां याति । निःसहता=असह्यभावः, स्फारीभवति=वर्द्धते, न निद्रा=निद्रा न वर्धते; नायातीति भावः । चिन्ता वर्धते=वृद्धिं याति, न रतिः—रतिः=आन्दानुभूतिः, न वर्धते, अधरपल्लवः=ओष्ठकिसलयः, शुष्यति=शुष्को भवति, नाग्रहरसः=आग्रहस्य रसो न शोषं व्रजति ॥

ज्योत्स्ना - इस प्रकार एक-दूसरे के द्वारा प्रेषित किये गये गुप्त दूतों की बातों से बढ़े हुए प्रेम वाले इन दोनों (नल-दमयन्ती) के अङ्ग तो कम्पित हो रहे थे, लेकिन मनोरथ कम्पित नहीं होते थे; आँखें तो इधर-उधर घूम रही थीं, लेकिन हृदय भ्रमित नहीं होता था; देहरूपी लता तो दुर्बल हो रही थी, लेकिन उत्कण्ठा दुर्बल नहीं होती थीं; उत्साह तो कम हो रहा था, लेकिन चाह कम नहीं होती थी; असह्यभाव तो बढ़ रहा था, लेकिन निद्रा नहीं बढ़ती थी; चिन्ता तो बढ़ रही थी, लेकिन आनन्दानुभूति नहीं बढ़ती थी; अधरपल्लव तो शुष्क हो रहे थे, लेकिन आग्रह का रस नहीं सूख रहा था ॥

किं बहुना—

कर्पूराम्बुनिषेकभाजि सरसैरम्भोजिनीनां दलै-
रास्तीर्णेऽपि विवर्त्तमानवपुषोः स्रस्तस्रजि स्रस्तरे ।
मन्दोन्मेषदृशोः किमन्यदभवत्सा काप्यवस्था तयो-
र्यस्यां चन्दनचन्द्रचम्पकदलश्रेण्यादि वह्नीयते ॥२१॥

अन्वयः—कर्पूराम्बुनिषेकभाजि सरसैः अम्भोजिनीनां दलैः आस्तीर्णे अपि स्रस्तस्रजि स्रस्तरे विवर्तमानवपुषोः मन्दोन्मेषदृशोः किमन्यत्, तयोः सा कापि अवस्था अभवत् यस्यां चन्दनचन्द्रचम्पकदलश्रेण्यादि वह्नीयते ॥२१॥

कल्याणी—कर्पूरेति । कर्पूराम्बुभिः=कर्पूरजलैः, निषेकः=सेचनं, तं भजते=प्राप्नोतीति तस्मिन्, कर्पूरजलसिक्ते इत्यर्थः । सरसैः=स्निग्धैः, अम्भोजिनीनां=कम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिनीनां, दलैः=पत्रैः, आस्तीर्णेऽपि=आच्छादितेऽपि, स्रस्तस्रजि—स्रस्ताः=विकीर्णाः, स्रजः=पुष्पमाला यत्र तथाविधे, स्रस्तरे=शयनीयेऽपि, विवर्तमानवपुषोः—विवर्तमाने=विलुठन्ती, वपुषी=शरीरे ययोस्तयोः, मन्दोन्मेषदृशोः—मन्दः उन्मेषः=पक्ष्मपातः ययोस्तथाविधे दृशौ=नेत्रे ययोस्तयोः, निर्निमेषलोचनयोरित्यर्थः। तयोः=नलदमयन्त्योः, किमन्यत्=अन्यत् किं वर्णनीयं, तयोः सा कापि=अपूर्वा, अवस्था=दशा, अभवत्=जाता, यस्यां=यस्यामवस्थायां, चन्दनचन्द्रचम्पकदलश्रेण्यादि—चन्दनं=चन्दनलेप इत्यर्थः। चन्द्रः=सुधांशुः, चम्पकदलश्रेणी=चम्पकपुष्पपत्रपंक्तिश्च आदौ यस्य तत्, वह्नीयते=वह्निरिवाचरति,'वह्निशब्दात् 'कर्तुः क्यङ्सलोपश्च' इति क्यङि, 'अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः' इति दीर्घः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; कर्पूरजल से सिञ्चित, स्निग्ध कमलिनी के पत्रों से आच्छादित होते हुए भी बिखरी हुई पुष्पमालाओं वाली शय्या पर करवटें बदलते हुए शरीर वाले एवं निर्निमेष नयनों वाले उन दोनों (नल दमयन्ती) का और क्या वर्णन किया जाय, उनकी दशा कुछ इस प्रकार की हो गई थी जिसमें चन्दन, चन्द्रमा और चम्पक पुष्प की पत्र-पंक्तियाँ आदि भी अग्नि के समान (उन्हें) ही प्रतीत होती थीं ॥२१॥

आसीच्च तयोः कृतान्योन्यगुणप्रश्नालापजपयोः पुनरुक्तावर्त्तितनामधेयस्वाध्याययोः सङ्कल्पसमागमाबद्धध्यानयोः स्मरानले स्वं हृदयं जुह्वतोस्तप्यमानयोरङ्गीकृतमौनव्रतयोरपि वियोग एव, न योगः ॥

कल्याणी—आसीच्चेति। कृतान्योन्यगुणप्रश्नालापजपयोः—कृतोऽन्योन्यगुणप्रश्नालाप एव=विहितपारस्परिकगुणप्रश्नवार्ता एव, जपः=जाप्यं याभ्यां तयोः, पुनरुक्तावर्तितनामधेयस्वाध्याययोः—पुनरुक्तावर्तितं नामधेयं=भूयो भूयोऽन्योन्यनामग्रहणमित्यर्थः, तदेव स्वाध्यायो ययोस्तथाविधयोः, सङ्कल्पसमागमाबद्धध्यानयोः—संकल्पे=चिन्तने, यः समागमः=परस्परमिलनं, तत्राबद्धं ध्यानं याभ्यां तयोः, स्मरानले=कामाग्नौ, कामाग्निरूपे यज्ञाग्नावित्यर्थः। स्वम्=आत्मानं, हृदयं=चेतः, जुह्वतोः=होमयतोः; तप्यमानयोः=सन्तप्यमानयोः तपस्यारतयोश्च, अङ्गीकृतं=धारितं, मौनव्रतं=मौनसङ्कल्पं याभ्यां तयोर्मौनिनोरप्यनयोः, वियोगः=विरह एव आसीत्, न योगः=सङ्गमः आध्यात्मिकचिन्तनं च। लोके जपं स्वाध्यायं ध्यानं होमं तपो मौनं व्रतं च कुर्वतो जनस्य परमपदावाप्तिरूपयोगलाभो भवति, किन्तु तत्सर्वं कुर्वतोरपि नलदमयन्त्योः परस्परसमागमलाभो नाभूदिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—एक-दूसरे के गुणविषयक प्रश्नसम्बन्धी वार्तारूप जप वाले, बार-बार एक-दूसरे के नामग्रहणरूपी स्वाध्याय वाले, चिन्तन में भी एक-दूसरे से मिलन में आबद्ध ध्यान वाले, कामाग्निरूपी यज्ञाग्नि में अपने-अपने हृदय का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हवन कर सन्तप्त होने वाले और मौन व्रत धारण किये हुए उन दोनों के लिए मौन वाली दशा भी वियोग की ही दशा थी, योग अर्थात् मिलन की दशा नहीं थी ॥

कदाचित्तु तरुणजननयनकुरङ्गवागुरामनङ्गगजेन्द्रमदप्रवाहढक्काम-पहसितसुरासुरसुन्दरीरूपश्रियं शृङ्गाररसराजधानीमवलोक्य यौवनावस्थां दमयन्त्याः 'कोऽस्याः किलानुरूपः पतिर्भवेत्' इति, चिरं चिन्ताकुलो विदर्भेश्वरः स्वयं स्वयंवरधर्मप्रारम्भाय समं मन्त्रिभिर्मन्त्रनिश्चयं चकार ॥

कल्याणी—कदाचिदिति। कदाचित्=एकदा तु, तरुणजननयनकुरङ्ग-वागुरां—तरुणजनानां=तरुणपुरुषाणां, नयनान्येव कुरङ्गाः=मृगा, तेषां वागुरां=जालं; तद्रूपामित्यर्थः [इति परम्परितरूपकम्]। अनङ्गगजेन्द्रमदप्रवाहढक्काम्—अनङ्गः=कामः, स एव गजेन्द्रः=मत्तगजः, तस्य यो मदप्रवाहः तस्य ढक्कां=मृदङ्गम्, अनङ्गगजेन्द्रमदप्रवाहस्य ढक्कारध्वनिरूपामिति भावः। अपहसितसुरासुरसुन्दरी-रूपश्रियम्—अपहसिता=तिरस्कृता, सुरासुरसुन्दरीणां=देवदानवरमणीनां, रूपश्रीः=सौन्दर्यलक्ष्मीः यया ताम्, शृङ्गाररसराजधानीम्—शृङ्गाररसस्य राजधानीरूपां दमयन्त्याः यौवनावस्थाम् अवलोक्य=वीक्ष्य, कः=कः पुरुषः, अस्या=दमयन्त्याः, अनु-रूपः=योग्यः, पतिः=भर्ता भवेत्, किलेति संभावनायाम्, इति=एवं, चिरं=दीर्घकालं; चिन्ताकुलः=चिन्ताग्रस्तः, विदर्भेश्वरः=विदर्भाधिपतिर्भीमः, स्वयम्=आत्मना; स्वयंवरधर्मप्रारम्भाय=स्वयंवरधर्मं कर्तुं, मन्त्रिभिः=अमात्यैः, समं=साकं, मन्त्र-निश्चयं=मन्त्रणां, चकार=अकरोत्, मन्त्रिभिः सह दृढसंकल्पमकरोदिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—किसी समय नवयुवकों के नेत्ररूपी मृगों के लिए जालस्वरूपा, कामरूपी गजेन्द्र के मदप्रवाह की ध्वनिस्वरूपा, देव और दानव-रमणियों की सौन्दर्यलक्ष्मी को तिरस्कृत करने वाली, शृंगार रस की राजधानीस्वरूपा दमयन्ती की युवावस्था को देखकर "कौन पुरुष उसके (लिए) अनुरूप पति होगा" इस प्रकार बहुत देर तक चिन्ता से व्याकुल विदर्भनरेश ने स्वयं ही स्वयंवर धर्म का प्रारम्भ करने के लिए मन्त्रियों के साथ दृढ़ निश्चय किया ॥

न चिराच्च प्राच्यप्रतीच्योदीच्यदाक्षिणात्यनरपतिनिमन्त्रणे सप्राभृ-तान्प्रगल्भप्रायान्प्रधानप्रेष्यान्प्रेषयामास ॥

कल्याणी—नेति। न चिराच्च=क्षिप्रमेवेति भावः। प्राच्यप्रतीच्योदी-च्यदाक्षिणात्यनरपतिनिमन्त्रणे—प्राच्यानां=पूर्वदिक्सम्बन्धिनां, प्रतीच्यानां=पश्चिम-दिक्सम्बन्धिनाम्, उदीच्यानाम्=उत्तरदिक्सम्बन्धिनां, दाक्षिणात्यानां=दक्षिण-दिक्सम्बन्धिनां च, नरपतीनां=राज्ञां, निमन्त्रणे=आवाहने, सप्राभृतान्=उपाय-नसहितान्, प्रगल्भप्रायान्=वाक्पटुप्रायान्, प्रधानप्रेष्यान्=मुख्यदूतान्, प्रेषया-मास=विससर्ज ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और तत्काल ही पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशा से सम्बन्धित (रहने वाले) राजाओं को निमन्त्रित करने के लिए बोलने में चतुर मुख्य-मुख्य दूतों को उपहारों के साथ भेज दिया ॥

प्रस्थितं कञ्चिदुदीच्यनरपतिनिमन्त्रणाय प्रबुद्धवृद्धब्राह्मणमाप्तसखीमुखेन दमयन्ती श्लिष्टार्थमिदमवादीत् ॥

कल्याणी—प्रस्थितमिति । उदीच्यनरपतिनिमन्त्रणाय—उदीच्यानाम्=उत्तरदिक्सम्बन्धिनां, नरपतीनां=राज्ञां, निमन्त्रणाय=आवाहनाय, प्रस्थितम्=उच्चलितं, कञ्चित्=कमपि, प्रबुद्धवृद्धब्राह्मणं—प्रबुद्धं=विद्वांसं वृद्धं च, ब्राह्मणं=विप्रं, दमयन्ती=भैमी, आप्तसखीमुखेन=विश्वसनीयसखीद्वारेण, श्लिष्टार्थं=श्लेषपूर्णवाचेत्यर्थः । इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=उक्तवती ॥

ज्योत्स्ना—उत्तर दिशा से सम्बन्धित राजाओं को निमन्त्रित करने हेतु जाने के लिए तत्पर किसी विद्वान् वृद्ध ब्राह्मण से दमयन्ती ने (अपनी) विश्वसनीय सखी के माध्यम से श्लेषमयी भाषा में इस प्रकार कहा—

'भूपालामन्त्रणे तात तथा सञ्चार्यतां यथा ।
नलोप्यागमबुद्धिः स्यात्प्रार्थ्यसे किमतः परम्' ॥२२॥

अन्वयः—तात ! भूपालामन्त्रणे तथा सञ्चार्यतां यथा नलोपागमबुद्धिः स्यात् । अतः परं किं प्रार्थ्यसे ॥२२॥

कल्याणी—भूपालेति । हे तात !=पूज्य ! भूपालामन्त्रणे—भूपालानां=राज्ञाम्, आमन्त्रणे=निमन्त्रणे, तथा=तेन प्रकारेण, सञ्चार्यताम्=अनुष्ठीयतां, यथा=येन प्रकारेण, आगमबुद्धिः=शास्त्रप्रतीतिः, न लोप्या स्यात्=लुप्ता न भवेदिति बाह्यार्थः । इष्टार्थस्तु—नलोऽपि=नलनामा नृपोऽपि, आगमबुद्धिः—आगमे=आगमने, बुद्धिः=धारणा यस्य तथाविधो भवेदिति । अतः परम्=अस्मादधिकं, किं प्रार्थ्यसे=किन्निवेद्यसे ? अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—हे तात ! राजाओं को निमन्त्रित करते समय ऐसा कीजियेगा कि जिससे आगमबुद्धि अर्थात् शास्त्रीय पद्धति का लोप न हो । इतनी ही प्रार्थना है, इससे अधिक और क्या कहूँ ? (इष्टार्थ)—हे तात ! राजाओं को निमन्त्रित करने के क्रम में ऐसा कीजियेगा; जिससे राजा 'नल भी आने की धारणा बना सकें—यही प्रार्थना है, इससे अधिक और क्या कहूँ ॥२२॥

सोऽप्यवगतश्लोकार्थस्तथाविधमेव प्रत्युत्तरमदात् ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सः अपि=वृद्धविद्वान् ब्राह्मणोऽपि, अवगतश्लोकार्थः—अवगतं=ज्ञातं, श्लोकस्य=पद्यस्य अर्थं येन सः, तथाविधमेव=तत्प्रकारकमेव, प्रत्युत्तरं=प्रतिवचनम्, अदात्=दत्तवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—(उत्तर दिशा को जाने के लिए तत्पर) उस वृद्ध विद्वान् ब्राह्मण ने भी श्लोक के अर्थ को समझकर उसी प्रकार उत्तर दिया—

'केनापि व्यवहारेण कयापि प्रौढलीलया ।
करिष्याम्यागमस्यार्थे रभसेन नलङ्घनम् ॥२३॥

अन्वयः—केनापि व्यवहारेण कयापि प्रौढ़लीलया रभसेन आगमस्य अर्थे न लंघनं (नलं-घनं) करिष्यामि ॥२३॥

कल्याणी—केनेति । केनापि=येन केनापि, व्यवहारेण=युक्त्या, कयापि =यया कयापि, प्रौढलीलया=प्रौढकलया, रभसेन=संभ्रमेण, आगमस्य=शास्त्रस्य, अर्थे=विषये, लङ्घनं=उल्लंघनं, न करिष्यामीति बाह्यार्थः । इष्टार्थस्तु—आगमस्य= आगमनस्य, अर्थे=विषये, नलं=नलाख्यं नृपं, रभसेन=औत्सुक्येन, घनं=निविडं, करिष्यामि=विधास्यामीति । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२३॥

ज्योत्स्ना—किसी भी व्यवहार के द्वारा एवं किसी भी विशेष कला के द्वारा (मैं) भ्रमवश भी आगम (शास्त्रीय) पद्धति का लोप नहीं करूँगा ।

(इष्टार्थ)—(अपने) किसी भी व्यवहार अथवा किसी भी प्रौढ़ कला के द्वारा राजा नल को आने हेतु उत्सुक बनाने के लिए सघन प्रयास करूँगा ॥२३॥

तदायुष्मति सुखमास्ताम्' इत्यभिधाय गतवान् ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, आयुष्मति=चिरञ्जीविनि !, 'सुख-मास्ताम्=सुखपूर्वकं स्थीयताम्' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, गतवान्=अगमत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए 'हे आयुष्मति ! आप सानन्द रहें' इस प्रकार कहकर प्रस्थान कर गया ॥

अथ नातिचिरेणागतस्तया रहः समाहूय स ब्राह्मणः सोमशर्मा नर्मा-लापलीलया दमयन्त्या बभाषे ॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरं, नातिचिरेण=कतिपयैरेव दिवसैः आगतः=प्रतिनिवृत्तः, सः सोमशर्मा ब्राह्मणः=सोमशर्माख्यो विप्रः, दमयन्त्या= भीमपुत्र्या, रहः=एकान्ते, समाहूय=आकार्य, नर्मालापलीलया=परिहासपूर्णसरसा-लापक्रीडया, बभाषे=उक्तः ॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् कुछ ही दिनों में लौटे हुए उस सोमशर्मा नामक ब्राह्मण को एकान्त में बुलाकर परिहासपूर्ण सरस बार्तालाप के द्वारा दमयन्ती ने (इस प्रकार) कहा—

'आहूतोदीच्यभूपेन तातादेशविधायिना ।
नालीकापि त्वया वार्ता विद्वन्नावेदिता मम' ॥२४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—हे विद्वन् ! आहूतोदीच्यभूपेन तातादेशविधायिना त्वया नालीका (न-अलीका) अपि वार्ता मम निवेदिता ॥२४॥

कल्याणी—आहूतेति । हे विद्वन् !=धीमन् !, आहूतोदीच्यभूपेन—आहूताः=आकारिताः, उदीच्याः=उत्तरदिग्भवाः, भूपाः=राजानः येन तादृशेन, तातादेशविधायिना—तातस्य=पितुः, आदेशं=निदेशं, विधत्ते=करोति इत्येवंशीलेन, त्वया=भवता, अलीकापि=मिथ्यापि [न+अलिकापि] वार्ता मम=मे, न आवेदिता=न कथितेति बाह्यार्थः । इष्टार्थस्तु—[नाली-कापि], नलस्येयं नाली=नलसम्बन्धिनी, कापि वार्ता=कथा, त्वया=भवता मम=मे, न आवेदिता=नाभ्यधायि । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—हे विद्वन् ! उत्तर दिशा के राजाओं को निमन्त्रित करने रूप पिता के आदेश का पालन करने वाले आपने झूठी बात भी मुझसे नहीं कहीं ।

(इष्टार्थ)—हे विद्वन् ! उत्तर दिशा के राजाओं को निमन्त्रण देने रूप पिता की आज्ञा का पालन करने वाले आपने नलसम्बन्धी कोई समाचार मुझसे नहीं कहा ॥२४॥

सोऽपि 'एष कथयामि श्लेषोक्तिकुशले ! श्रूयताम्' इत्यभिधाय विहसन्नाख्यातुमारब्धवान् ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सोऽपि=स ब्राह्मणोऽपि; 'श्लेषोक्तिकुशले=श्लेषवचननिपुणे !, एषः=अयमहं, कथयामि=ब्रवीमि, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम्' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, विहसन्=ईषद्धसन्, आख्यातुं=कथयितुम्, आरब्धवान्=आरेभे ॥

ज्योत्स्ना—उस ब्राह्मण ने भी "हे श्लिष्ट वचन बोलने में चतुरे ! सुनो, यह मैं कह रहा हूँ ।" इस प्रकार कह कर हँसते हुए (उसने) कहना प्रारम्भ किया ॥

इतो निर्गत्य मया मण्डलेश्वरामन्त्रणक्रमेण परिभ्रमताऽभ्रङ्कषानेककूटकोटिस्थपुटितकटकस्य निषधनाम्नो महीध्रस्य दक्षिणारण्यस्थलीषु मृगयासक्तः ॥

कल्याणी—इत इति । इतः=अस्मान्नगरात्, निर्गत्य=चलित्वा, मण्डलेश्वरामन्त्रणक्रमेण=मण्डलाधिपतीनां निमन्त्रणप्रसङ्गेन, परिभ्रमता=विचरता, मया=सोमशर्मणा, अभ्रङ्कषानेककूटकोटिस्थपुटितकटकस्य—अभ्रङ्कषाणि=गगनचुम्बीनि, यानि अनेककूटानि=अनेकशिखराणि, तेषां कोटौ=अत्युच्चभागे, तिष्ठतीति तत्स्थः, पुटितः=अनुस्यूतः, कटकः=अधित्यकाभागः यस्य तथाविधस्य, निषधनाम्नः=निषधाख्यस्य, महीध्रस्य=पर्वतस्य, दक्षिणारण्यस्थलीषु=दक्षिणवनभूमिषु, मृगयासक्तः=आखेटतत्परः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस नगर से निकल कर राजाओं को निमन्त्रित करने के प्रसङ्ग में भ्रमण करते हुए मैंने आकाश को स्पर्श करने वाले अनेक शिखरों से समन्वित अधित्यकाओं वाले निषधनामक पर्वत के दक्षिण की ओर स्थित जंगल में शिकार खेलने में तत्पर—

माद्यन्मांसलतुङ्गपुङ्गवककुत्कूटोन्नतांसस्थलः
कालिन्दीजलकान्तिकुन्तलशिराः पूर्णेन्दुबिम्बाननः ।
एकः कोऽपि मनोहरः पथि युवा दृष्टः स यस्मिन्सकृद्-
दृष्टे नष्टनिमेषया मम दृशा लब्धं फलं जन्मनः ॥२५॥

अन्वयः—माद्यन्मांसलतुङ्गपुङ्गवककुत्कूटोन्नतांसस्थलः कालिन्दीजलकान्ति-कुन्तलशिराः पूर्णेन्दुबिम्बाननः एकः कः अपि मनोहरः सः युवा पथि दृष्टः, यस्मिन् सकृत् नष्टनिमेषया मम दृशा दृष्टे जन्मनः फलं लब्धम् ॥२५॥

कल्याणी—माद्यदिति । माद्यन्मांसलतुङ्गपुङ्गवककुत्कूटोन्नतांसस्थलः—माद्यन्=मत्तः, मांसलः=पुष्टः, तुङ्गः=उच्चः, यः पुङ्गवः=वृषभः, तस्य ककुदिव=कुम्भमिव तथा कूटं=पर्वतशृङ्गमिव, उन्नतम्=उच्चम्, अंसस्थलं=स्कन्धप्रदेशः यस्य स तथाविधः, कालिन्दीजलकान्तिकुन्तलशिराः—कालिन्दी=यमुना, तस्याः जलस्य=नीरस्य, कान्तिरिव कान्तिर्यस्य तादृशः कुन्तलः=केशपाशः, शिरसि=मूर्ध्नि यस्य सः, पूर्णेन्दुबिम्बाननः—पूर्णेन्दुबिम्बमिव=पूर्णचन्द्रमण्डलमिव, आननं=मुखं यस्य सः, एकः=अन्यतमः, कोऽपि=कश्चिदपि, मनोहरः=मनोरमः, सः युवा=तरुणपुरुषः, मया=सोमशर्मणा, पथि=मार्गे, दृष्टः=वीक्षितः, यस्मिन्=मनोहरे युवके, सकृत्=एकवारमेव, नष्टनिमेषया=निर्निमेषया, मम=मे, दृशा=दृष्ट्या, दृष्टे=विलोकिते, जन्मनः=जीवनस्य, फलं=साफल्यं, लब्धं=प्राप्तम् । उपमाऽलङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—मत्त, मांसल ऊँचे बैल के ककुद के समान तथा उन्नत पर्वत-शिखर के समान कन्धों वाले, यमुना-जल की कान्ति के समान कान्तिपूर्ण अर्थात् श्यामल केशों से समन्वित शिर वाले, पूर्ण चन्द्रमण्डल के समान मुख वाले एक किसी मनोहर युवक को रास्ते में देखा, जिस युवक को एक बार ही अपलक दृष्टि से देख लेने के कारण मैंने (अपने) जीवन का फल प्राप्त कर लिया अर्थात् उसको देख लेने मात्र से ही मेरा जीवन सफल हो गया ॥२५॥

तेनापि 'दाक्षिणात्योऽयम्' इति निश्चित्य साभिलाषमाभाषितोऽस्मि मयापि कृतोचितालापेनोक्तम् ॥

कल्याणी—तेनापीति । तेन=यूना पुरुषेणापि, 'दाक्षिणात्यः=दक्षिण-दिग्वासी, अयम्=एषः, इति=एवं, निश्चित्य=अवधार्य, साभिलाषं=सोत्कण्ठम्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आभाषितोऽस्मि=कथितोऽस्मि, कृतोचितालापेन—कृतः=विहितः, उचित=युक्तः; आलापः=वार्तालापः यस्य तथाविधेन, मया अपि=मामकेनापि, उक्तम्=कथितम् ॥

ज्योत्स्ना—उस युवक ने भी "यह दक्षिण दिशा का रहने वाला है" इस प्रकार निश्चित कर उत्सुकता के साथ (मुझसे) बातें की। (उसके) समुचित रीति से बातें कर लेने के पश्चात् मैंने भी (उससे) कहा—

'यथेयमाकृतिर्लोकलोचनानन्ददायिनी ।
तव भद्र तथा सत्यं सत्त्यागोऽसि नलोभवान्' ॥२६॥

अन्वयः—भद्र ! यथा लोकलोचनानन्ददायिनी तव इयं आकृतिः तथा सत्त्यागः (अतः) सत्यं (त्वं) नलोभवान् असि ॥२६॥

कल्याणी—यथेति । हे भद्र !=हे सभ्य !, यथा=येन प्रकारेण, लोकलोचनानन्ददायिनी=सकलजननेत्रसुखकरी, तव=ते, इयं=एषा दृश्यमाना, आकृतिः=स्वरूपं तथा सत्त्यागः—सन्=शोभनः, त्यागः यस्य तथाविधः, अतः सत्यं=अवितथं, यत् त्वं [न-लोभवान्]—न हि लोभवान्=लोभयुक्तः । असीति युष्मदर्थे विभक्तिप्रतिरूपकमव्ययम् । अथ च सत्त्यागस्त्वम् । तथा नलो भवान् । तदित्थमत्र पृथग् वाक्यद्वयम्, एकवाक्यतायां भवानसीति मध्यमपुरुषस्य दुर्लभत्वादिति ज्ञेयम् । श्लेषाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—हे श्रीमन् ! समस्त लोगों के नयनों को आनन्द प्रदान करने वाली जिस प्रकार की आपकी यह आकृति (स्वरूप) है तथा जिस प्रकार का उत्कृष्ट त्याग करने वाले आप हैं, उससे प्रतीत होता है कि निश्चय ही आप लोभयुक्त नहीं हैं ।

विमर्श—'नलोभवान्' का 'नलो+भवान्' इस प्रकार अन्वय करने से 'आप नल हैं' यह श्लिष्ट अर्थ भी स्फुटित होता है । इस अर्थ को स्फुटित करने हेतु 'सत्त्यागः' को कर्ता मानकर 'त्वं' पद का अध्याहार कर 'असि' क्रिया का उपपादन करना पड़ेगा । ऐसा नहीं करने पर 'असि' क्रिया का मध्यमपुरुषीय होने के कारण 'भवान्' के पद साथ अन्वय उपपन्न नहीं होगा ॥२६॥

एवमुक्तः सोऽपि मनाङ्मुग्धस्मितमेवोत्तरं कल्पितवान् ॥

कल्याणी—एवमुक्त इति । एवम्=अनेन प्रकारेण, मया उक्तः=कथितः, सः=युवा पुरुषोऽपि, मनाक्=ईषत्, मुग्धस्मितं—मुग्धं=मनोज्ञं, स्मितं=हास्यमेवोत्तरं, कल्पितवान्=सम्पादितवान् । मधुरस्मितात्मकमेवोत्तरं दत्तवानिति भावः । इहारोप्यमाणस्योत्तरस्यारोपविषयेण स्मितेन तादात्म्यं प्रकृतार्थोपयोगित्वं च तदत्र परिणामालङ्कारः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार से (मेरे द्वारा) कहने पर वह युवक भी थोड़े मनोहारी मुस्कान के साथ प्रत्युत्तर में बोला।

अथ प्रथमवयोविभूषिताङ्गस्तुङ्गतुरङ्गमारूढो गाढग्रथितपरिकरः करेण कोदण्डमाकलयंस्तद्द्वितीयो युवा तमेव देशमागतवान् ॥

कल्याणी—अथ=अनन्तरं, प्रथमवयोविभूषिताङ्गः—प्रथमवयसा=यौवनेन, विभूषितम्=अलङ्कृतम्, अङ्गं=शरीरं यस्य सः, तरुण इत्यर्थः। तुङ्गतुरङ्गं—तुङ्गम्=उच्चं, तुरङ्गम्=अश्वम् आरूढः, गाढग्रथितपरिकरः—गाढं=दृढं यथा स्यात्तथा, ग्रथितः=बद्धः, परिकरः=कटिवस्त्रं येन स तथोक्तः, करेण=हस्तेन, कोदण्डं=धनुः, आकलयन्=गृह्णन्, तद्द्वितीयः=तदपरः, तत्सहचर इति भावः। युवा=तरुणः, तमेव देशमागतवान्=तत्रैवागत इत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् यौवन से विभूषित अंग वाले अर्थात् तरुण, उन्नत अश्व पर आरूढ़, दृढ़तापूर्वक कटिवस्त्र को बाँधा हुआ और हाथ में धनुष लिया हुआ एक दूसरा युवक अथवा उसका सहचर भी उसी स्थान पर आ गया ॥

आगत्य च बालनीलनलशालिनि शिलोच्चयस्थलीप्रदेशे काञ्चित्काञ्चनकुम्भकान्तिकुचकण्ठलुठितकुसुममालिकामवलोकयन्निदमवादीत् ॥

कल्याणी—आगत्येति। आगत्य च=आगम्य च, बालनीलनशालिनि—बालः=नवप्ररूढः, नीलः=श्यामलश्च, यः नलः=नलाख्यः तृणविशेषः, तेन शालते=शोभत इत्येवंशीले, शिलोच्चयस्थलीप्रदेशे=पर्वतीयप्रान्ते, कांचित्=कामपि; काञ्चनकुम्भकान्तिकुचकण्ठलुठितकुसुममालिकां—काञ्चनकुम्भयोः=स्वर्णनिर्मितघटयोः; कान्तिरिव कान्तिर्ययोस्तयोः कुचयोः=स्तनयोः, कण्ठे=अग्रभागे, लुठिता=लम्बिता, कुसुममालिका=पुष्पस्रक् यस्यास्तथाविधां [नायिकाम्], अवलोकयन्=पश्यन्, इदम्=एतत्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—और आकर नवीन उगे हुए नील वर्ण के नलनामक घास से सुशोभित पर्वतीय उच्च भाग पर स्वर्णनिर्मित कुम्भ की कान्ति के समान कान्ति वाले स्तनों के अग्रभाग में धारण की हुई पुष्पों की माला वाली किसी नायिका को देखता हुआ इस प्रकार बोला—

'युवराज ! पश्य—

नद्यास्तीरे विदर्भायाः कापि गोपालबालिका।
गाः समुच्चारयत्येषा क्षेत्रीकृत्य नलं वरम्' ॥२७॥

अन्वयः—विदर्भायाः नद्याः तीरे एषा कापि गोपालबालिका वरं नलं क्षेत्रीकृत्य गाः समुत् चारयति ॥२७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—नद्या इति। विदर्भायाः—विशिष्टः दर्भः=कुशः यत्र तथाविधायाः, नद्याः=सरितः, तीरे=तटप्रदेशे, एषा=इयं, कापि=काचिदनिर्ज्ञाताभिधाना, गोपालबालिका=गोपपुत्री, वरं=श्रेष्ठं, नलं=तृणविशेषं, क्षेत्रीकृत्य=केदारीकृत्य, [समुत्+चारयति] समुत्=सहर्षा, गाः=धेनूः, चारयति=चारणं करोति। श्लेषवक्रोक्त्या तु विदर्भायाः=विदर्भाभिधानायाः, नद्याः=सरितः, तीरे=तटे, एषा=इयं, कापि=गौरवशालिनी, गोपालबालिका—गां=पृथिवीं, पालयतीति गोपालः=भूपः, तस्य बालिका=कन्या, नलं=नलनामानं राजानं, वरं=वरयितारं, क्षेत्रीकृत्य=आश्रयीकृत्य, गाः=गिरः, समुच्चारयति=आनन्दपूर्वकमुच्चारयति। श्लेषाऽलङ्कारः अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२७॥

ज्योत्स्ना—हे युवराज! देखें, विशेष रूप से कुशों से समन्वित नदी के तट पर यह कोई गोप-बालिका उत्कृष्ट नलनामक घास (से युक्त स्थान) को (अपना) खेत मान कर अत्यन्त प्रसन्नता के साथ गायों को चरा रही है।

(नलपक्ष में) हे युवराज! देखें, विदर्भा नदी के तट पर यह कोई गोपालबालिका अर्थात् राजकुमारी नलनामक वर को विषय बनाकर प्रसन्नता के साथ वाणी का उच्चारण कर रही है अर्थात् बोल रही है ॥२७॥

एतदाकर्ण्य मयाप्युक्तम्—महानुभाव! न केवलमियमन्यापि क्वापि कापि' इति ॥

इत्युक्तवन्तं मामवलोक्य भावितार्थः स पुनः सस्मितमवोचत् ॥

कल्याणी—एतदिति। एतत्=तद्द्वितीयपुरुषोक्तं वचः, आकर्ण्य=श्रुत्वा, मयाप्युक्तम्—महानुभाव!=महाप्रभाव! न केवलमियं=एषा गोपालबालिका, (अपितु) अन्यापि=अपरापि, क्वापि=कुत्रापि, कापि=काचिदपि, इति=एवम्, उक्तवन्तं=कथयन्तं, माम् अवलोक्य=दृष्ट्वा, भावितार्थः—भावितः=चिन्तितः, अर्थः=तात्पर्यं येन सः, पुनः=भूयः, सस्मितम्=ईषद्धास्यपूर्वकम्, अवोचत्=अवादीत् ॥

ज्योत्स्ना—इस (दूसरे युवक द्वारा कही गई बात) को सुनकर मैंने भी इस प्रकार कहा—'हे महानुभाव! न केवल यही, (बल्कि) कहीं कोई दूसरी भी है।"

इस प्रकार कहते हुए मुझे देखकर (मेरे कथन के) होने वाले अर्थ को समझकर मुस्कुराते हुए उसने पुनः कहा—

'इयं च सा च—

अनुभवतु चिराय चञ्चलाक्षीरसपरिणामफलानि गोपपुत्री।
अपसरति महोद्यमेन यस्याः कथमपि संप्रति नैषधेऽनुरागः' ॥२८॥

अन्वयः—चञ्चला गोपपुत्री क्षीरसपरिणामफलानि चिराय अनुभवतु, यस्याः सम्प्रति नैषधे अनुरागः महोद्यमेन कथमपि अपसरति ॥२८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अनुभवत्विति। इयं च [चञ्चला—क्षीरसपरिणामफलानि]—चञ्चला=चपला, गोपपुत्री=गोपपुत्रिका, क्षीरसपरिणामफलानि—क्षीरस्य=दुग्धस्य, सपरिणामानि यानि फलानि=दधिघृतप्रभृतीनि तानि, चिराय=बहुकालं यावत्, सदेत्यर्थः। अनुभवतु=आस्वादयतु, यस्याः संप्रति=इदानीं, [न+एषः+धेनुरागः]—एष धेनुरागः=धेनुचारणासक्तिः, महोद्यमेन हेतुना, कथमपि=केनापि प्रकारेण, नापसरति=न निवर्तते। अथ सा च [चञ्चलाक्षी—रसपरिणामफलानि] चञ्चलाक्षी=चपलनेत्रा, गोपपुत्री=भूपकन्या, दमयन्तीत्यर्थः। रसपरिणामफलानि=शृङ्गारादिरसपरिपाकफलानि, चिराय=बहुकालाय, अनुभवतु=उपभुङ्क्ताम्, यस्याः सम्प्रति [नैषधे+अनुरागः]—नैषधे=नले, अनुरागः=प्रेमबन्धः, [महोद्यमे—न] महोद्यमे=बहुप्रयत्ने, [कृतेऽपि] नापसरति=न ह्रसतीत्यर्थः। समङ्गदश्लेषः। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥२८॥

ज्योत्स्ना—यह चंचल गोप-बालिका भी दुग्ध के फलस्वरूप होने वाले दधि-घृत आदि फलों का बहुत समय तक अनुभव करे, जिस बालिका का इस समय यह गो-चारणसम्बन्धी अनुराग-(आसक्ति) रूपी महान् उद्यम किसी भी प्रकार से कम नहीं हो रहा है।

अथवा वह चञ्चल नयनों वाली राजकुमारी (दमयन्ती) भी शृंगारादि रसों के परिपाक से होने वाले फलों का बहुत समय तक अनुभव करे, जिस राजकुमारी का नलविषयक प्रेम बहुत प्रयत्न करने पर भी इस समय किसी प्रकार से कम नहीं हो रहा है ॥२८॥

आस्तां तावदन्यत्। अध्वन्य! कथय, कुतः प्रष्टोव्योऽसि, किं च कियद्वाद्यापि वर्त्मातिक्रमितव्यम्' इति ॥

कल्याणी—आस्तामिति। आस्तां तावदन्यत्=त्यज्यतां तावदन्यद्वृत्तम्। अध्वन्य!=पान्थ!, अध्वानमलं गच्छतीति विग्रहे 'अध्वनो यत्खौ' इति यति प्रत्यये, 'ये चाभावकर्मणोः' इत्यनः प्रकृतिभावे 'अध्वन्यः' इति। खे प्रत्यये तस्येनादेशे 'आत्माध्वानौ खे' इति प्रकृतिभावे 'अध्वनीनः' इत्यपि भवति। प्रष्टव्योऽसि=प्रष्टुं योग्योऽसि, गौणे कर्मणि कृत्यप्रत्ययः। अहं त्वां पृच्छामीति भावः। कथय=भण, कुतः=कस्मात्स्थानादागतोऽसि, किंच च=अपि च, अद्यापि=सम्प्रत्यपि, कियद् वा वर्त्म=मार्गः, अतिक्रमितव्यम्=अतिक्रमणीयं वर्तते। इति=एवम्, अवोचदिति पूर्वक्रिययाऽन्वयः ॥

ज्योत्स्ना—(इसलिए) इस समय छोड़िये अन्य बातों को। हे पथिक! (आप) पूछने लायक हैं (अतः) कहिये, कहाँ से आ रहे हैं? और अभी इस समय कितनी दूर और जाना है? ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ कथितस्ववृत्तान्तेन मयापि 'कोऽयमशेषमनुष्यमस्तकमणिः, कश्च भवानपि स्वप्रज्ञाप्राग्भारपराङ्मुखीकृतपुरन्दरगुरुः' इति पर्यनुयुक्तः स पुनरुक्तवान् ॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरं, कथितस्ववृत्तान्तेन—कथितः=उक्तः; स्ववृत्तान्तः=स्वोदन्तः येन तथाविधेन मयाऽपि 'कोऽयम् अशेषमनुष्यमस्तकमणिः= समस्तजनशिरोमणिः, सकलमनुजश्रेष्ठ इत्यर्थः । स्वप्रज्ञाप्राग्भारपराङ्मुखीकृतपुरन्दर-गुरुः— स्वप्रज्ञाप्राग्भारेण=स्वबुद्धिसमुदयेन, पराङ्मुखीकृतः=अभिभूतः, पुरन्दरस्य= इन्द्रस्य, गुरुः=बृहस्पतिः येन सः तथाविधः भवांश्च कः=किंपरिचयः' इति=एवं, पर्यनुयुक्तः=पृष्टः, सः=अपरः युवकः, पुनः=भूयः, उक्तवान्=अवादीत् ॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् अपना समस्त वृत्तान्त कह चुकने पर मेरे द्वारा भी "समस्त मनुष्यों में श्रेष्ठ यह कौन है ? और अपने बुद्धिवैभव से देवराज इन्द्र के गुरु बृहस्पति को भी अभिभूत करने वाले आप भी कौन हैं ?" इस प्रकार पूछने पर उसने पुनः कहा—

'अयमसौ सौम्य ! समस्तशस्त्रशास्त्रकोविदो विदारितवैरी वैरसेनिर्नलः । किमन्यदहमपि श्रुतशीलो नामास्यैवाज्ञाकारी, इत्यभिधाय विश्रान्तवान् ॥

कल्याणी—अयमिति । सौम्य !=भद्र ! अयमसौ=एषः सः, समस्तशस्त्र-शास्त्रकोविदः—सकलशस्त्राणां=निखिलायुधानां, शास्त्राणां=व्याकरणादिशास्त्राणां च कोविदः=पण्डितः, विदारितवैरी—विदारिताः=विनाशिताः, वैरिणः=रिपवः येनासौ, वीरसेनस्यापत्यं पुमान् वैरसेनिः=नलः, 'अत इञ्' इत्यपत्यार्थे इञ् । किमन्यत्=किमपरम्, अन्यच्च किं कथयामीति भावः । अहमपि श्रुतशीलो नाम= श्रुतशीलाभिधः, अस्यैव=नलस्य एव, आज्ञाकारी=सेवकः, इति=एवम्, अभिधाय= उक्त्वा, विश्रान्तवान्=विरतवचा अभवत् ॥

ज्योत्स्ना—"हे सौम्य ! समस्त शस्त्रों तथा शास्त्रों के ज्ञाता (और) शत्रुओं का विनाश करने वाले ये वीरसेन के पुत्र नल हैं । और अधिक क्या कहूँ, मैं भी श्रुतशील नाम का इन्हीं का आज्ञाकारी (सेवक) हूँ ।" इस प्रकार कहकर चुप हो गया ॥

नलोऽपि कृत्वा त्वदाश्रयास्तास्ताः प्रकटितप्रेमकन्दलाः कथाः, समर्थ्य च स्वयंवरामन्त्रणमुत्सुकतया तत्कालमेवोड्डीय गन्तुमीहमानः संभाषितेन स्मितेनालोकितेन च माममृतवर्षेणेवाह्लादयन्ननिच्छन्तमपि प्रतिग्राह्य च बलादनर्घ्याणि स्वाङ्गाभरणानि चिरादेव व्यसर्जयत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—नलोऽपीति । नलोऽपि=वीरसेनपुत्रोऽपि, त्वदाश्रयाः—त्वमाश्रयो यासां तास्त्वदाश्रयाः, त्वत्सम्बन्धिन्य इत्यर्थः । तास्ताः=विविधा इत्यर्थः । प्रकटितप्रेमकन्दलाः—प्रकटिताः=व्यक्ताः, प्रेमकन्दलाः=प्रेमाङ्कुराः याभिस्ताः; प्रेमाभिव्यञ्जिका इत्यर्थः । कथाः=वार्तालापान्, कृत्वा=सम्पाद्य, स्वयंवरामन्त्रणं—स्वयंवरस्य आमन्त्रणं=निमन्त्रणं, समर्थ्य=स्वीकृत्य च. उत्सुकतया=उत्कण्ठया, तत्कालमेव=तत्क्षणमेव, उड्डीय=उत्पत्य, गन्तुं=प्रस्थितुम्, ईहमानः=विचेष्टमानः, संभाषितेन=संभाषणेन [भावे क्तः], स्मितेन=ईषन्मधुरहासेन; आलोकितेन=दर्शनेन च, माम् अमृतवर्षेणेव=सुधावृष्टयेव [इत्युत्प्रेक्षा], आह्लादयन्=आनन्दयन्; अनिच्छन्तमपि=अनभिलषन्तमपि, बलात्=हठात्, अनर्घ्याणि=बहुमूल्यानि, स्वाङ्गाभरणानि=स्वशरीरभूषणानि, प्रतिग्राह्य=उपहारत्वेन स्वीकार्य, चिरादेव=बहुकालादनन्तरमेव, व्यसर्जयत्=प्रस्थानायानुज्ञां दत्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—नल ने भी तुमसे सम्बन्धित प्रेम को अभिव्यक्त करने वाली विभिन्न कथाओं को कहकर, स्वयम्वर में आगमन-हेतु निमन्त्रण का उत्सुकतापूर्वक समर्थन कर, उसी समय मानों उड़कर पहुँच जाने की चेष्टा करते हुए सम्भाषण से, थोड़े मधुर मुस्कान से और देखने से अमृतवर्षा के समान मुझे आनन्दित करते हुए (मेरे) न चाहते हुए भी अपने अंगों के बहुमूल्य आभूषणों को जबर्दस्ती उपहार के रूप में (मुझसे) स्वीकार कराकर बहुत देर बाद ही विसर्जित किया अर्थात् मुझे प्रस्थान करने हेतु आज्ञा प्रदान किया ॥

स्वयं च मृगयाव्यसनितया मृगयालुभिः सह—

धीरं रङ्गन्तमारुह्य सारं रंहसि वाजिनम् ।
हारं रम्यं गले बिभ्रत्स्वैरं रन्तुमगात्पुनः ॥२९॥

अन्वयः—धीरं रङ्गन्तं रंहसि सारं वाजिनम् आरुह्य गले रम्यं हारं बिभ्रत् स्वैरं रन्तुं पुनः अगात् ॥२९॥

कल्याणी—स्वयमिति । स्वयं च मृगयाव्यसनितया—मृगयायाः=आखेटस्य व्यसनी, तस्य भावस्तत्ता तया, मृगयालुभिः सह=आखेटकैः सह—

धीरमिति । धीरं=गम्भीरं, रङ्गन्तं=वल्गन्तं, रंहसि=वेगे, सारम्=उत्कृष्टं, वाजिनम्=अश्वम्, आरुह्य=आरोहणं कृत्वा, गले=कण्ठे, रम्यं=मनोज्ञं, हारं=मुक्तामालां, बिभ्रत्=धारयन्, स्वैरं=स्वच्छन्दं, रन्तुं=क्रीडितं, पुनः=भूयः; अगात्=अगमत् ॥ अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२९॥

ज्योत्स्ना—और स्वयं भी शिकार का शौक होने के कारण शिकारियों के साथ—गम्भीर, उछाल मारकर चलने वाले, दौड़ने में श्रेष्ठ घोड़े पर सवार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होकर गले में सुन्दर हार को धारण किये हुए स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करने के लिए पुनः चला गया ॥२९॥

तदायुष्मति स्वामिसुते ! यथा मया तत्कथाप्रश्नानुराग उपलक्षितस्तथा निश्चितमचिरादयमेष्यति' इत्यभिधाय स ब्राह्मणः स्वगृहमगात् ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, आयुष्मति !=चिरञ्जीविनि !; स्वामिसुते=भर्तृदारिके !, यथा=येन प्रकारेण, मया=विप्रेण सोमशर्मणा, तत्कथाप्रश्नानुरागः—तस्य=नलस्य, कथायां=वार्तालापे, प्रश्ने च अनुरागः=प्रेम, उपलक्षितः=अनुबुद्धः, तथा=तेन प्रकारेण, निश्चितम्=असन्दिग्धम्, अचिरात्=शीघ्रमेव, अयं=नलः, एष्यति=आगमिष्यति' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, स ब्राह्मणः=विप्रः, स्वगृहं=निजमन्दिरम्, अगात्=अयासीत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए हे चिरजीविनि राजकुमारी ! वार्तालाप एवं प्रश्नों के क्रम में जिस प्रकार से (तुम्हारे प्रति) उसके प्रेम-प्रदर्शन को मैंने देखा, उससे निश्चित है कि वह बहुत जल्द ही आयेगा।" इस प्रकार कहकर वह ब्राह्मण अपने घर चला गया ॥

गते च तस्मिन्दमयन्ती 'श्लाघ्यः स कः कालः, धन्यः स कतमो वासरः, सलक्षणा सा का नाम वेला, यस्यामिदमिन्दुदर्शनेनेव कुमुदमस्मच्चक्षुस्तदालोकनेन कमप्यानन्दमनुभविष्यति' इति चिन्तयन्ती कान्यपि दिनानि कयाप्यवस्थया व्यनैषीत् ॥

कल्याणी—गते चेति । गते च=प्रस्थिते च, तस्मिन्=ब्राह्मणे, दमयन्ती=भीमपुत्री, स कः श्लाघ्यः=प्रशस्यः, कालः=समयः, स कतमः=कः, धन्यः=उत्तमः, वासरः=दिवसः, सा का नाम सलक्षणा=शोभना, प्रख्यातगुणेत्यर्थः । वेला=घटी, सुयोग इति यावत् । यस्यां=यस्यां घटयां, तदालोकनेन—तस्य=नलस्य, आलोकनेन=दर्शनेन, इदमस्माकं चक्षुः=नेत्रम्, इन्दुदर्शनेन=चन्द्रदर्शनेन कुमुदमिव [इत्युपमा] कमपि=अनिर्वचनीयम्, आनन्दम्=आह्लादम्, अनुभविष्यति=अनुभवं करिष्यति, इति=एवं, चिन्तयन्ती=विचारयन्ती, कान्यपि दिनानि=कतिपयदिनानि, कयाप्यवस्थया=कयापि दशया, येन केनापि प्रकारेणेत्यर्थः । व्यनैषीत्=व्यपगमयत् ॥

ज्योत्स्ना—और उस सोमशर्मा नामक ब्राह्मण के चले जाने पर दमयन्ती ने भी "वह कौन-सा प्रशंसनीय समय होगा ? कौन-सा वह उत्तम दिन होगा ? शुभ लक्षणों से युक्त वह कौन-सी वेला (घड़ी) होगी ? जिसमें उस नल के दर्शन से मेरी ये आँखें चन्द्रदर्शन से कुमुद के समान किसी अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करेंगी।" इस प्रकार विचार करते हुए (स्वयंवर में अवशिष्ट) कतिपय दिनों को किसी-किसी प्रकार से व्यतीत किया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ नलोऽप्यामन्त्रितस्तेन ब्राह्मणेन रणरणकेन च, प्रेरितो मन्त्रिणा मदनेन च, परिवृतः सेनयोत्कण्ठया च, तत्कालमेव विदर्भमण्डलाभिमुखमुदचलत् ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, नलोऽपि=वीरसेनपुत्रोऽपि, तेन ब्राह्मणेन=पूर्ववर्णितेन विप्रेण; रणरणकेन च=औत्सुक्येन च, आमन्त्रितः=निमन्त्रितः, मन्त्रिणा=सचिवेन, मदनेन=कामदेवेन च, प्रेरितः=उत्साहितः, सेनया=वाहिन्या, उत्कण्ठया च=उत्सुकतया च, परिवृतः=परिवेष्टितः, तत्कालं=तत्क्षणमेव, विदर्भमण्डलाभिमुखं=विदर्भनगराशां, उदचलत्=प्रातिष्ठत ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् नल भी उस ब्राह्मण और (अपनी) उत्सुकता के द्वारा आमन्त्रित होकर; मन्त्री और कामदेव के द्वारा प्रेरित होकर, सेना और उत्कण्ठा के द्वारा परिवेष्टित होकर उसी समय विदर्भमण्डल की ओर चल पड़ा ॥

चलिते च चतुरङ्गबलचलनचूर्णितशिलोच्चयचक्रवाले चक्रिचक्रचङ्क्रमणचीत्कारबधिरितककुभि विषमवैरिवृन्दवनवैद्युतानले नले, चलन्तश्चटुलतरचरणप्रहाररणितधरणिमण्डलाः कान्तकाञ्चनरचनारोचिष्णवश्चकासांचक्रुश्चक्रवर्त्तिवाहोचिताः साश्चर्यमपर्यन्तपर्यायाः पर्याणितास्तुरङ्गाः, शृङ्गारिताश्च चलच्चारुचामरावधूननालंकृतकपोलभित्तिभागसंलगितभृङ्गसंगीतमुखरितमुखमण्डलाः कथमप्याधोरणनिरुध्यमानशौर्यविकारस्फुरणाः स्फुरत्कुम्भभित्तिसिन्दूरा दूरापसारितस्यन्दनाः स्यन्दमानामन्दमदकर्दमितमेदिनीकाः कम्पयांबभूवुर्भुवं भूरिभारभुग्नाङ्गपन्नगशिरःशिथिलावष्टम्भामिभेन्द्राः ॥

कल्याणी—चलित इति। चतुरङ्गबलचलनचूर्णितशिलोच्चयचक्रवाले—चतुरङ्गबलस्य=चतुरङ्गसैन्यस्य, चलनेन=प्रयाणेन, चूर्णितं=पिष्टीकृतं, शिलोच्चयचक्रवालं=शिलासङ्घातः यस्य तस्मिन्, चक्रिचक्रचङ्क्रमणचित्कारबधिरितककुभि—चक्रिणः=रथाः, तेषां चक्रचङ्क्रमणेन=चक्रगत्या, यः चीत्कारध्वनिः, तेन बधिरिताः=बधिरभावं गताः, ककुभः=दिशः यस्य तस्मिन्, विषमवैरिवृन्दवनवैद्युतानले—विषमवैरिवृन्दं=दुर्जेयशत्रुसमूहं, स एव वनम्=अरण्यं, तस्य वैद्युतानले=विद्युज्जातवह्नौ, नले=नृपे, चलिते=प्रयाते सति च, चलन्तः=गच्छन्तः, चटुलतरचरणप्रहाररणितधरणिमण्डलाः—चटुलतराणां=चपलतराणां, चरणानां=पादानां, प्रहारेण=आघातेन, रणितं=शब्दायितं, धरणिमण्डलं=पृथिवीमडलं येषां तथाविधाः, कान्तकाञ्चनरचनारोचिष्णवः—कान्तकाञ्चनरचनया=रम्यसुवर्णनिर्मित्या, रोचिष्णवः=देदीप्यमानाः, चक्रवर्तिवाहोचिताः=चक्रवर्तिनः राज्ञः वाहनयोग्याः, अपर्यन्तपर्यायाः=अनन्तसज्जाः, पर्याणिताः=दत्तपर्याणाः, तुरङ्गाः=अश्वाः, साश्चर्यम्=आश्चर्यपूर्वकं, चकमसाञ्चक्रुः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उद्बभासिरे, शृङ्गारिताश्च=मण्डिताश्च, चलच्चारुचामरावधूननालंकृतकपोलभित्तिभागसंलगितभृङ्गसङ्गीतमुखरितमुखमण्डलाः—चलच्चारुचामरयोः = चञ्चलरम्यव्यजनयोः, अवधूननेन=स्पन्दनेन, अलंकृतकपोलभित्तिभागे=सुशोभितगण्डस्थलभागे, संलगितानां=संसक्तानां, भृङ्गाणां=भ्रमराणां, सङ्गीतेन=कलकलनिनादेन, मुखरितं=शब्दायितं, मुखमण्डलं=आननं येषां तथाविधाः, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेति भावः। आधोरणनिरुध्यमानशौर्यविकारस्फुरणाः—आधोरणैः=हस्तिपकैः, निरुध्यमानं=नियन्त्र्यमाणं, शौर्यविकारस्फुरणं=शौर्यसंवेगोद्गमः येषां ते तथाविधाः, स्फुरत्कुम्भभित्तिसिन्दूराः—स्फुरत्=देदीप्यमानं, कुम्भभित्तौ=विस्तृतकुम्भस्थले, सिन्दूरं येषां तथाविधाः। दूरापसारितस्यन्दनाः—दूरमपसारिताः—अपगमिताः, स्यन्दनाः=रथाः यैस्ते, स्यन्दमानामन्दमदकर्दमितमेदिनीकाः—स्यन्दमानेन=प्रवहता, अमन्दमदेन=समधिकमदजलैः, कर्दमिता=पङ्किला, मेदिनी=पृथ्वी यैस्ते; इभेन्द्राः=मत्तगजाः, भूरिभारभुग्नाङ्गपन्नगशिरःशिथिलावष्टम्भां—भूरिभारेण=चतुरङ्गबलस्य समधिकभारेण, भुग्नं=वक्रम्, अङ्गं=शरीरं यस्य तादृशो यः पन्नगः=शेषनागः, तस्य शिरोरूपः शिथिलः=क्लान्तः, अवष्टम्भः=आधारः यस्यास्तां, भुवं=पृथ्वीं, कम्पयांबभूवुः=अकम्पयन् ॥

ज्योत्स्ना—चतुरंगिणी सेना के प्रयाण करने से शिलायें चकनाचूर हो गईं, रथों के वक्रगति से चलने के कारण होने वाली चीत्कार (चीं-चीं) की ध्वनि से दिशायें बधिर हो गईं और विषम अर्थात् दुर्जेय शत्रुसमूहरूपी वन के लिए विद्युत से उत्पन्न अग्निरूपी नल के प्रस्थान करने पर चलते हुए अत्यन्त चपल चरणों के प्रहार से पृथिवी आवाज करने लगी; रमणीय सुवर्ण से निर्मित (अलंकारों से) देदीप्यमान, चक्रवर्ती राजाओं की सवारी के योग्य, पूर्णतः सुसज्जित, लगाम दिये हुए घोड़े आश्चर्यजनक रूप से उद्भासित हो उठे; पूर्णतः अलंकृत, चंचल, सुन्दर चँवरों के स्पन्दन से सुशोभित गण्डस्थल पर संसक्त (चिपके हुए) भ्रमरों के कलकल गुञ्जार से शब्दायित मुखमण्डल वाले, किसी-किसी प्रकार हस्तिपकों (पीलवानों) द्वारा नियन्त्रण में किये जा रहे, शौर्य-शिकार को प्रकट कर रहे चमकते हुए विशाल कुम्भस्थल पर सिन्दूर से समन्वित, रथों को दूर हटा देने वाले, बहते हुए अत्यधिक मदजल से पृथ्वी को पंकयुक्त बना देने वाले हाथियों ने (अपने) अत्यधिक भार के कारण टेढ़े अङ्ग वाले शेषनाग के शिररूप आधारस्तम्भ के शिथिल हो जाने से पृथ्वी को कम्पायमान कर दिया ॥

किं बहुना। तत्रावसरे—

पूर्वापरपयोराशिसीमासंक्रान्तसैनिके ।
तस्मिन्सस्मार भूर्भाराद्वराहवपुषो हरेः ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—पूर्वापरपयोराशिसीमासङ्क्रान्तसैनिके तस्मिन् भूः भारात् वराह-वपुषः हरेः सस्मार ॥३०॥

कल्याणी—पूर्वेति। पूर्वापरपयोराशिसीमासङ्क्रान्तसैनिके—पूर्वापरपयोराशिसीमासंक्रान्ताः=पूर्वपश्चिमसागरावधिप्रसृताः, सैनिकः=भटाः यस्य तस्मिन्, तस्मिन्=नले; भूः=पृथ्वी, भाराद्धेतोः, वराहवपुषः=वराहशरीरधारिणः, हरेः=विष्णोः, सस्मार=स्मरणं कृतवती। नलसैन्यभारस्यासह्यत्वाद् वराहवपुषं हरिं साहाय्यार्थं प्रार्थयामासेति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३०॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; उस अवसर पर—पूर्व और पश्चिम के समुद्रपर्यन्त फैले हुए सैनिकों वाले उस नल के चलने पर भूमि अत्यधिक भार के कारण वराह शरीरधारी भगवान् विष्णु का स्मरण करने लगी ॥

विमर्श—पूर्व काल में अत्यधिक भार के कारण पृथ्वी जब समुद्र में डूब गई थी तो भगवान् विष्णु ने वराह का रूप धारण कर स्वयं पृथ्वी के भार को अपने ऊपर धारण कर पृथ्वी को ऊपर उठा कर अपनी जगह पर सुव्यवस्थित किया था; इसी कारण राजा नल के सैन्यभार से विचलित पृथ्वी ने पुनः उन्हीं का स्मरण किया। आशय यह है कि नल के सैन्यभार को वहन करती हुई पृथ्वी भी विचलित हो गई ॥३०॥

अपि च—

आसीत्पिण्डितपाण्डुपङ्कजवनं श्वेतातपत्रैः क्वचि-
न्मायूरातपवारणैः क्वचिदभूदुन्नालनीलोत्पलम्।
उन्मेघं क्वचिदूर्ध्वधूलिपटलैस्तस्य प्रयाणेऽभव-
त्प्रोद्वीचि क्वचिदम्बरं सर इव प्रेङ्खत्पताकापटैः ॥३१॥

अन्वयः—तस्य प्रयाणे अम्बरं क्वचित् श्वेतातपत्रैः पिण्डितपाण्डुपङ्कजवनम् आसीत्, क्वचित् मायूरातवारणैः उन्नालनीलोत्पलम् अभूत्, क्वचित् ऊर्ध्वधूलिपटलैः उन्मेघं, क्वचित् प्रेङ्खत्पताकापटैः प्रोद्वीचि सरः इव अभवत् ॥३१॥

कल्याणी—आसीदिति। तस्य=नलस्य, प्रयाणे=प्रस्थानकाले, तदवसरे इत्यर्थः। अम्बरं=गगनं, क्वचित्=कुत्रचिद् भागे, श्वेतातपत्रैः=सितच्छत्रैः, पिण्डितपाण्डुपङ्कजवनं—पिण्डितानि=पुञ्जीकृतानि, पाण्डुपङ्कजवनानि=सितकमलवनानि यत्र तादृशम्; क्वचित्=कुत्रचिद् भागे, मायूरातपवारणैः=मयूरपिच्छनिर्मितच्छत्रैः, उन्नालनीलोत्पलम्—उन्नतानि नालानि=दण्डानि येषां तादृशानि नीलोत्पलानि=नीलकमलानि यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, ऊर्ध्वधूलिपटलैः=ऊर्ध्वोत्थरेणुपटलैः, उन्मेघम्—उन्नताः मेघाः=जलदाः यत्र तादृशम्, क्वचित्=कुत्रचित्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रेङ्खत्पताकापटैः=चलद्ध्वजाञ्चलैः, प्रोद्वीचि—प्रवृद्धा उत्=ऊर्ध्वं, वीचयः=तरङ्गाः यत्र तादृशं, सरः=तटाकमिव अभूत्। नलस्य प्रयाणे गगनं सर इव अशोभत। यत्र क्वचित् श्वेतातपत्राण्येव सितपङ्कजानि, कुत्रचिच्च मायूरच्छत्राण्येव नीलोत्पलानि, कुत्रचिच्चोर्ध्वधूलिपटलान्येव उन्नतमेघाः [प्राच्यदेशे महासरःसु मेघा अम्भो ग्रहीतुमुन्नमन्तीति प्रसिद्धिः], क्वचिच्च चलद्ध्वजाञ्चलान्येव प्रवृद्धोर्ध्वतरङ्गा इवाशोभन्तेति भावः। उपमाऽलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३१॥

ज्योत्स्ना—और भी; उस नल के प्रस्थान-काल में आकाश कहीं पर श्वेत छत्रों के समूह के कारण मुकुलित श्वेत कमलों के वन के समान हो गया था, किसी भाग में मयूरपंखों से निर्मित छत्रों के कारण उन्नत नाल वाले नील-कमल बन गये थे, कहीं पर ऊपर की ओर उठी हुई धूलि-राशियों से उन्नत मेघ बन गये थे और कहीं पर लहराते हुए ध्वजाओं के वस्त्रों के कारण बड़े-बड़े उन्नत लहरों वाले सरोवर के समान हो गया था।

विमर्श—यहाँ पर कवि ने आकाश का चित्रण एक विशाल सरोवर के रूप में किया है, जिसमें राजाओं के श्वेत छत्र श्वेत कमल-सदृश, मयूरपंखनिर्मित छत्र उन्नत नाल वाले नीलकमल-सदृश, उठी हुई धूलि मेघ-सदृश और लहराती हुई ध्वजायें उठती हुई तरंगों के समान लग रही थीं ॥३१॥

जाताश्च जङ्घाजघनस्पृशो वक्षःस्थलीलोलनलम्पटा, ग्रीवाग्रहणाग्रहिण्यः, प्रसभं लगन्त्यो वस्त्रेषु, निस्त्रपाः स्त्रिय इव, नखपदाभिघातोद्यताः चुम्बन्त्यश्चिबुककपोलाधरचक्षूंषि सैनिकानाम्, अतिप्रसरेण शिरोऽवलग्नाः, प्रबला धूलयो, वियदावरणाश्च चक्रुरुच्चैरतिप्रसङ्गमासन्नवननिकुञ्जेषु ॥

कल्याणी—जाताश्चेति। निस्त्रपाः=निर्लज्जाः, स्त्रियः=नार्यः इव, प्रबलाः—बलात्=सैन्यात्, प्रवृद्धाः, पक्षे—प्रवृद्धवीर्याः, धूलयः=रजांसि च, जङ्घाजघनस्पृशः—जङ्घे जघनं च स्पृशन्तीति तथोक्ताः, वक्षःस्थलीलोलनलम्पटाः—वक्षस्थल्या लोलने=लुठने, लम्पटाः=लोलुपाः, ग्रीवाग्रहणाग्रहिण्यः—ग्रीवाग्रहणे=कण्ठाश्लेषे, आग्रहिण्यः=आग्रहवत्यः जाताः, वस्त्रेषु=वासःसु, प्रसभं=हठात्, लगन्त्यः=संलगन्त्यः, नखपदाभिघातोद्यताः—नखाः=अश्वादीनां खुराः, पदं=पादविन्यासः, तेषामभिघातात् उद्यताः=उत्थिताः, पक्षे—नखक्षतपदयोश्चाभिघाते उद्यताः=सोद्यमाः। सैनिकानां=भटानां, चिबुककपोलाधरचक्षूंषि—चिबुकं कपोलम् अधरम्=ओष्ठं, चक्षुः=नेत्रं च, चुम्बन्त्यः=चुम्बनं कुर्वन्त्यः, अतिप्रसरेण=समधिकप्रसारेण, शिरोऽवलग्नाः=शिरःसु संलग्नाः, वियदावरणाः=नभश्छादिन्यः; पक्षे—वियद्=विगच्छद्, आवरणं=वस्त्रं यासां ताः, विगतवस्त्रा इत्यर्थः। अत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वि+इण् गतौ+लट्, तस्य शत्रादेशे वियदिति। आसन्नवननिकुञ्जेषु=समीपवर्तिविपिनकुञ्जेषु, उच्चैः=अत्यन्तम्, अतिप्रसङ्गम्=अतिव्याप्ति, पक्षे—सुरतप्रबन्धं, चक्रुः=अकुर्वन्। श्लेषानुप्राणितोपमाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—जंघा तथा जघन का स्पर्श करने वाली, वक्षःस्थल (स्तनों) के मर्दन के लिए लोलुप, ग्रीवाग्रहण (कण्ठालिङ्गन) के लिए आग्रह करने वाली, वस्त्रों में हठात् लिपटी हुई, नखक्षत एवं पैरों के अभिघात से प्रयासरत, सैनिकों के चिबुक, कपोल, अधर और आँखों को चूमने वाली, वस्त्रों से रहित होकर समीपवर्ती वन-निकुञ्जों में सुरत-प्रबन्ध करने वाली निर्लज्ज स्त्रियों के समान प्रबल धूलि ने जंघा एवं जघन का स्पर्श किया, वक्षःस्थल पर पड़ने के कारण लोगों को उसका मर्दन करने के लिए प्रेरित किया, गले का आलिंगन करने लगी, वस्त्रों में लिपट गई, घोड़े आदि के खुर और पैरों के अभिघात से ऊपर उठकर सैनिकों के चिबुक, कपोल, अधर और आँखों का चुम्बन करने लगी; अत्यधिक फैलने के कारण शिर में भी लग गई और आकाश में फैलती हुई समीपवर्ती वन-निकुञ्जों में भी अतिव्याप्ति कर ली।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड में निर्लज्ज स्त्रियों एवं धूलि के आचरण में समानता दर्शायी गई है॥

कूजन्तश्च कोटिशः कोदण्डमण्डलाग्रव्यग्रपाणयः, पाणिनीया इवाधिकरणकर्मकुशलाः समुल्लसन्तो विचेलुर्वलगनपटवो लाम्पट्योल्लुण्ठितरिपुपुरः पुरः पदातयः॥

कल्याणी—कूजन्तश्चेति। कोटिशः=अनेकधा, कूजन्तः=शब्दायमानाः च=तथा, कोदण्डमण्डलाग्रव्यग्रपाणयः—कोदण्डेन=धनुषा, मण्डलाग्रेण=वक्रखड्गेन च, व्यग्राः=व्याकुलाः, पाणयः=कराः येषां ते। पाणिनीयाः=पाणिनेरनुयायिन इव, [अधिक-रणकर्म-कुशलाः]—अधिकं रणकर्मणि=युद्धव्यापारे, कुशलाः=दक्षाः, पक्षे—[अधिकरण-कर्म-कुशलाः] अधिकरणं=तन्नाम कारकं, कर्म=तन्नाम कारकं च, तत्र कुशलाः, समुल्लसन्तः=उल्लासनिर्भराः, वलगनपटवः—वलगनम्=उच्छलनं कूर्दनं च, तत्र पटवः=दक्षाः, लाम्पट्योल्लुण्ठितरिपुपुरः—लाम्पट्येन=धाष्टर्येन, उल्लुण्ठिताः रिपूणां=शत्रूणां, पुरः=नगर्यः यैस्ते, पदातयः—पद्भ्यामतन्ति=चलन्तीति पदातयः=सैनिकाः, पुरः=अग्रे, विचेलुः=व्यचलन्। 'पाणिनीया इवाधिकरणकर्मकुशलाः' इति श्लेषानुप्राणितोपमा॥

ज्योत्स्ना—और बहुत प्रकार से कोलाहल करते हुए, धनुष और तलवार के साथ व्यग्र हाथों वाले, अधिकरण और कर्म कारक में कुशल पाणिनि के अनु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यायियों (वैयाकरणों) के समान युद्धव्यापार में अत्यन्त कुशल, उल्लास से भरे हुए, उछल-कूद में चतुर, धृष्टता के साथ शत्रुओं की नगरियों को लूट लेने वाले पदाति (पैदल सैनिक) आगे बढ़े ॥

तत्र च व्यतिकरे—

मन्दं मन्दरमन्दिरेषु शयितानुन्निद्रयन्किंनरान्
मेरोर्मस्तककन्दरे प्रतिरवानुत्थापयन्नुल्बणः।
आध्वं धावत यात मुञ्चत पुनः पन्थानमेवंविध-
स्त्रैलोक्यं बधिरीचकार बहलः सैन्यस्य कोलाहलः ॥३२॥

अन्वयः—मन्दरमन्दिरेषु शयितान् किन्नरान् मन्दम् उन्निद्रयन्; मेरोः मस्तककन्दरे प्रतिरवान् उत्थापयन् आध्वं धावत यात पन्थानं पुनः मुञ्चत एवंविधः उल्बणः सैन्यस्य बहलः कोलाहलः त्रैलोक्यं बधिरीचकार ॥३२॥

कल्याणी—मन्दमिति। तत्र च व्यतिकरे=तथा च घटिते, मन्दरमन्दिरेषु=मन्दराचलभवनेषु, शयितान्=सुप्तान्, किंनरान्=किम्पुरुषान्; मन्दं=शनैः, उन्निद्रयन्=प्रबोधयन्, मेरोः=मेरुगिरेः, मस्तककन्दरे=शिखरगुहायां, प्रतिरवान्=प्रतिध्वनीन्, उत्थापयन्=कुर्वन्, आध्वम्=उपविशत, धावत, यात=गच्छत, पन्थानं=मार्गं, पुनः=भयः, मुञ्चत=त्यजत, एवंविधः=एवंप्रकारकः, उल्बणः=भीषणः, सैन्यस्य=वाहिन्याः, बहलः=तीव्रः, कोलाहलः=कलकलनिनादः, त्रैलोक्यं=त्रिभुवनं, बधिरीचकार=बधिरीकृतवान्, व्याप्तवानिति भावः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३२॥

ज्योत्स्ना—उस अवसर पर—मन्दराचलस्थित भवनों में सोये हुए किन्नरों को धीरे-धीरे जगाते हुए, सुमेरु पर्वत की शिखरस्थित कन्दराओं में उत्कट प्रतिध्वनि करते हुए "बैठो, दौड़ो, जाओ, फिर इस मार्ग को छोड़ दो" इस प्रकार के सैनिकों के भीषण कोलाहल ने तीनों लोकों को बधिर बना दिया अर्थात् सेना का भीषण कोलाहल तीनों लोकों में सर्वोपरि व्याप्त हो गया ॥३२॥

एवमसौ क्रीडितानेकपामरान् गिरीन् ग्रामांश्च बहुतरङ्गोपशोभिताः सरितः सीम्नश्च व्यूढपत्त्ररथान् पथः पादपांश्च लङ्घयन्, सालसहिताः पुरीर्नारीश्च सेवमानः, पच्यमानगोधूमश्यामलाः क्षेत्रभुवो भिल्लपल्लीश्च परिहरन्, विधवाः शत्रुसीमन्तिनीरटवीश्चातिक्रामन्, परिवारीणि बन्धुकुलानि सरांसि च बहुमानयन्, नातिचिरेण रविरथतुरङ्गपरिहृतविषमशिरःशिखरसहस्रमजस्रममरगणगन्धर्वसिद्धरुद्धस्कन्धमध्यं विन्ध्याचलमनुससार ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, असौ=नलः, क्रीडितानेकपामरान्—क्रीडिताः अनेकपाः=गजाः, अमराः=देवाश्च यत्र तथाविधान्, गिरीन्=पर्वतान् तथा क्रीडिताः अनेकपामराः=बहुग्राम्यजनाः यत्र तथाविधान्, ग्रामांश्च, बहुतरङ्गोपशोभितः—बहुभिः=बहलैः, तरङ्गैः=वीचिभिः, उपशोभिताः=सुशोभिताः, सरिता=नदीः, तथा [बहुतरं-गोपशोभिताः]—बहुतरं=समधिकं, गोपैः=गोपालैः, शोभिताः=अलंकृताः, सीम्नः=सीमाभूमीश्च, तटप्रदेशानिति यावत्। व्यूढपत्ररथान्—विशेषेण ऊढानि=धृतानि, पत्राणि=वाहनानि रथाश्च यैस्तथाविधान्, पथः=मार्गान्, तथा विशेषेण ऊढाः=युक्ताः, पत्ररथाः=पक्षिणः यैस्तथाविधान्, पादपान्=वृक्षांश्च, लङ्घयन्=अतिक्रामन्, सालसहिताः—सालेन=प्राकारेण, सहिताः=परिवृताः, पुरीः=नगरीः तथा [सालस-हिताः]—सालसाः=आलस्ययुक्ताः, हिताः=हितकारिणीश्च, नारीः=रमणीः, अत्र 'अलस'-शब्दो भावप्रधानो ज्ञेयः। सेवमानः, पच्यमानगोधूमश्यामलाः—पच्यमानैः=पचेलिमैः, गोधूमैः=सस्यविशेषैः, श्यामलाः=श्यामवर्णाः, क्षेत्रभुवः=केदारप्रदेशान् तथा पच्यमानैः=परिपाकं गच्छद्भिः बहुलीभवद्भिः, गोषु=सकलदिक्षु, धूमैः=वह्निधूमैः, श्यामलाः=कृष्णायिताः, भिल्लपल्लीः=भिल्लवसतीश्च, परिहरन्=परिवर्जयन्, विधवाः=मृतभर्तृकाः, शत्रुसीमन्तिनीः=रिपुभार्याः तथा विधवाः—विशेषेण धवाः=धवनामानो वृक्षाः यत्र तादृशीः अटवीः=अरण्यप्रदेशांश्च, अतिक्रामन्=लङ्घयन्, परिवारीणि—परिवृण्वन्ति=परिवारीभवन्ति इति परिवारीणि, बन्धुकुलानि=बन्धुवृन्दानि तथा परितः वारि=जलं येषु तथाविधानि सरांसि=तटाकानि च, बहुमानयन्=प्रशंसन्नित्यर्थः। नातिचिरेण=स्वल्पकालेनैव, रविरथतुरंगैः=सूर्यरथाश्वैः, परिहृतं=परिवर्जितं, विषमशिरःशिखरसहस्रम्=अत्युत्तुङ्गशृङ्गाग्रभागसहस्रं यस्य तथाविधं तथा अजस्रं=सततम्, अमरगणैः=देववृन्दैः, गन्धर्वैः, सिद्धैः=देवयोनिविशेषैश्च रुद्धः=व्याप्तः, स्कन्धमध्यः=स्कन्धमध्यभागः यस्य तं विन्ध्याचलं=विन्ध्यगिरिम्, अनु=लक्ष्यीकृत्य, ससार=चचाल। श्लेषाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार से वह नल हाथियों एवं देवताओं के द्वारा क्रीड़ा किये गये पर्वतों एवं अनेक ग्रामीण लोगों द्वारा क्रीड़ा किये गये ग्रामों, अत्यधिक तरंगों से सुशोभित नदियों एवं अत्यधिक गोप-बालकों से सुशोभित तटीय प्रदेशों; विशेषतया पत्रों (वाहनों) और रथों से समन्वित मार्गों एवं पक्षियों से समन्वित वृक्षों को लाँघता हुआ; साल (चहारदीवारी) से समन्वित पुरियों और आलस्ययुक्त हितकारिणी स्त्रियों का सेवन करता हुआ; पकते हुए गोधूमों (गेहूँ के पौधों) के कारण श्याम वर्ण वाले कृषियोग्य खेतों एवं जलती हुई आग के धुएँ से श्याम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(काले) वर्ण के भीलों के गाँवों को छोड़ता हुआ; पतिविहीन शत्रु-स्त्रियों एवं विशेषकर धवनामक वृक्ष वाले वनों को पार करता हुआ; चारो तरफ से घेर कर रहने वाले बन्धुजनों एवं चारो ओर जल से परिपूर्ण सरोवरों की प्रशंसा करता हुआ; थोड़े समय में ही भगवान् सूर्य के रथ को घोड़ों से रहित करने वाले अत्यन्त उन्नत शिखररूपी हजारों शिरों वाले एवं निरन्तर देवताओं, गन्धर्वों और सिद्धों से व्याप्त मध्यभाग वाले विन्ध्य पर्वत को लक्ष्य कर चल दिया ।।

ततश्च—

दिशि दिशि किमिमानि प्रच्यवन्तेऽन्तरिक्षा-
दविरतमुत देवी भूतधात्री प्रसूते ।
इति शबरवधूभिस्तर्क्यमाणान्यवापुः
सपदि विपुलविन्ध्यस्कन्धमध्यं बलानि ।।३३।।

अन्वयः—(ततश्च) अन्तरिक्षात् दिशि-दिशि इमानि किं प्रच्यवन्ते उत भूतधात्री देवी (किमिमानि) अविरतं प्रसूते इति शबरवधूभिः तर्क्यमाणानि बलानि सपदि विपुलविन्ध्यमध्यस्कन्धं अवापुः ।।३३।।

कल्याणी—दिशीति । ततः=तदनन्तरं च, अन्तरिक्षात्=आकाशात्, दिशि-दिशि=प्रतिदिशम्, इमानि=एतानि, किं प्रच्यवन्ते=किं परिश्च्योतन्ति, उत=अथवा, भूतधात्री देवी=पृथ्वी देवी, किमिमानि, अविरतं=सततं, प्रसूते=जनयति, इति=एवं, शबरवधूभिः=किराताङ्गनाभिः, तर्क्यमाणानि=विचिन्त्यमानानि, बलानि=सैन्यानि, सपदि=तत्कालं, विपुलविन्ध्यस्कन्धमध्यं=विशालविन्ध्यगिरिस्कन्धमध्यभागम्, अवापुः=आसेदुः । मालिनी वृत्तम् ।।३३।।

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात्—सभी दिशाओं में आकाश से यह क्या टपक रहा है ? अथवा प्राणियों को धारण करने वाली देवी पृथिवी निरन्तर यह क्या उत्पन्न कर रही है ?—इस प्रकार से किरात-पत्नियों द्वारा तर्क-वितर्क की जाती हुई सेनाओं ने शीघ्र ही विशाल विन्ध्याचल पर्वत के मध्य भाग को प्राप्त कर लिया ।।३३।।

श्रुतशीलस्तु तुङ्गशृङ्गरङ्गत्सारङ्गाङ्गनासु नक्षत्रासन्नाकाशावकाश-विशद्वंशजालजटिलासु चलच्चित्रचित्रककरिकलभकदम्बकसञ्चारशबलासु हारिहरिताङ्कुररमणीयासु वनस्थलीषु निक्षिप्तचक्षुषमवलोक्य राजानमि-दमवादीत् ।।

कल्याणी—श्रुतशील इति । श्रुतशीलस्तु=श्रुतशीलो नाम नलस्य मन्त्री तु, तुङ्गशृङ्गरङ्गत्सारङ्गाङ्गनासु—तुङ्गशृङ्गेषु=उच्चशिखरेषु, रङ्गन्त्यः=विचरन्त्यः, सारङ्गाङ्गनाः=मृगवध्वः यासां तादृशीषु, नक्षत्रासन्नाकाशावकाशविशद्वंशजाल-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जटिलासु—नक्षत्रासन्नं=तारागणसमीपम्, आकाशावकाशः=गगनान्तरालं, विशद्भिः=प्रविशद्भिः, वंशजालैः=वेणुसमूहैः, जटिलासु=दुर्गमासु, चलच्चित्रचित्रककरिकलभकदम्बकसञ्चारशबलासु—चलतां=सञ्चरतां, चित्राणां=कर्बुराणां, चित्रकाणां=हिंस्रजन्तुविशेषाणां, करिकलभानां=गजशावकानां च, कदम्बकं=समूहः, तस्य सञ्चारेण=भ्रमणेन, शबलासु=कर्बुरासु, हारिहरिताङ्कुररमणीयासु—हारिभिः=मनोहरैः, हरिताङ्कुरैः=हरिततृणाङ्कुरैः, रमणीयासु=रम्यासु, वनस्थलीषु=वनभूमिषु, निक्षिप्तचक्षुषं—निक्षिप्तं=दत्तं, चक्षुः=दृष्टिः येन तथाविधं, राजानं=नलम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—श्रुतशील ने उच्च उन्नत शिखरों पर विचरण करती हुई मृगवधुओं वाली, तारागणों के समीप आकाश के रिक्त स्थान में प्रवेश करते हुए बाँसों से दुर्गम, चलते हुए चित्र-विचित्र विशेष प्रकार के हिंसक जन्तुओं एवं हाथियों के बच्चों के झुण्डों के सञ्चरण से विविध रंगों वाले, मनोहर हरे घासों के अंकुरों के कारण रमणीय वनभूमियों को देखते हुए राजा नल को देखकर इस प्रकार बोला —

देव !—

माद्यद्दन्तिकपोलपालिविगलद्दानाम्बुसिक्तद्रुमाः
क्रीडत्क्रोडकुलार्धचर्वितपतन्मुस्तारसामोदिताः ।
अन्तःसुस्थितपान्थमन्थरमरुल्लोलल्लतामण्डपाः
कस्यैता न हरन्ति हन्त हृदयं विन्ध्यस्थलीभूमयः ॥३४॥

अन्वयः—माद्यद्दन्तिकपोलपालिविगलद्दानाम्बुसिक्तद्रुमाः क्रीडत्क्रोड़कुलार्धचर्वितपतन्मुस्तारसामोदिताः अन्तःसुस्थितपान्थमन्थरमरुल्लोलल्लतामण्डपाः एताः विन्ध्यस्थलीभूमयः हन्त कस्य हृदयं न हरन्ति ॥३४॥

कल्याणी—माद्यदिति । माद्यद्दन्तिकपोलपालिविगलद्दानाम्बुसिक्तद्रुमाः—माद्यन्तः=मत्ताः, ये दन्तिनः=गजाः, तेषां कपोलपालिभ्यः=गण्डस्थलेभ्यः, विगलद्भिः=स्रवद्भिः, दानाम्बुभिः=मदजलैः, सिक्ताः=सिञ्चिताः, द्रुमाः=वृक्षाः यत्र तथाविधाः, क्रीडत्क्रोड़कुलार्धचर्वितपतन्मुस्तारसामोदिताः—क्रीडतां=केलिं कुर्वतां, क्रोडकुलानां=वराहवृन्दानाम्, अर्धचर्विताः=ईषत्खादिताः, याः पतन्त्यः=स्रवन्त्यः, मुस्ताः=कन्दविशेषाः, तासां रसैः=निर्यासैः, आमोदिताः=सुवासिताः, अन्तःसुस्थितपान्थमन्थरमरुल्लोलल्लतामण्डपाः—अन्तः=मध्ये, सुखेन स्थिताः=उपविष्टाः, पान्थाः=अध्वगाः-येषां तथाविधा मन्थरमरुता=मन्दपवनेन, लोलन्तः=चलन्तः, लतामण्डपाः=लतागृहाः यत्र तादृश्यः, एताः=दृश्यमानाः, विन्ध्यस्थलीभूमयः=विन्ध्यगिरिभूप्रदेशाः, हन्तेति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हर्षे, 'हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः' इत्यमरः। कस्य हृदयं=चेतः, न हरन्ति=नाकर्षन्ति, सर्वस्यापीत्यर्थः। स्वभावोक्तिरलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३४॥

ज्योत्स्ना--हे देव ! मदमत्त हाथियों के गण्डस्थलों से झरते हुए मदजल से सिञ्चित वृक्षों वाली; क्रीड़ा करते हुए वराहों (सूकरों) के मुख से आधे चबाये, अतएव गिरते हुए मुस्ता (एक प्रकार का कन्द) के रस से सुवासित; मध्य में सुख-पूर्वक बैठे हुए पथिकों वाली और मन्द-मन्द हवा से डोलती हुई लतापमण्डप वाली विन्ध्य पर्वत की यह भूमि किसके हृदय को आकर्षित नहीं कर लेती है ? ॥३४॥

इतश्च पश्यतु देवः—

एषा सा विन्ध्यमध्यस्थलविपुलशिलोत्सङ्गरङ्गत्तरङ्गा
सम्भोगश्रान्ततीराश्रयशबरवधूशर्मदा नर्मदा च।
यस्याः सान्द्रद्रुमालीललिततलमिलत्सुन्दरीसन्निरुद्धैः
सिद्धैः सेव्यन्त एते मृगमृदितदलत्कन्दलाः कूलकच्छाः ॥३५॥

अन्वयः—एषा विन्ध्यमध्यस्थलविपुलशिलोत्सङ्गरङ्गत्तरङ्गाः सम्भोगश्रान्ततीराश्रयशबरवधूशर्मदा सा नर्मदा च (वर्तते) यस्याः मृगमृदितदलत्कन्दलाः एते कूलकच्छाः सान्द्रद्रुमालीललिततलमिलत्सुन्दरीसन्निरुद्धैः सिद्धैः सेव्यन्ते ॥३५॥

कल्याणी—एषेति। एषा=इयं, विन्ध्यमध्यस्थलविपुलशिलोत्सङ्गरङ्गत्तरङ्गाः— विन्ध्यस्य=विन्ध्यगिरेः, मध्यस्थले विपुलानां=विशालानां, शिलानाम् उत्सङ्गेषु=क्रोडेषु, रङ्गन्तः=चलन्तः, तरङ्गाः=लहर्यः यस्याः सा, सम्भोगश्रान्ततीराश्रयशबरवधूशर्मदा—सम्भोगेन=सुरतेन, श्रान्ताः=क्लान्ताः, अतएव तीरं=तटप्रदेशः, स एवाश्रयः=सेव्यः यासां तथाविधाः याः शबरवध्वः=किरातयुवयः, तासां शर्मदा=आनन्दप्रदा, सुरतश्रान्तिहर्तृत्वादिति भावः। सा नर्मदा च=नर्मदाख्या नदी च, (वर्तते) यस्याः=नर्मदायाः, मृगमृदितदलत्कन्दलाः—मृगैः=हरिणैः, मृदितानि=छिन्नानि, दलन्ति=विकसन्ति, कन्दलानि=नवाङ्कुराः यत्र तादृशाः, एते=इमे, कूलकच्छाः=तटप्रदेशाः, सान्द्रद्रुमालीललिततलमिलत्सुन्दरीसन्निरुद्धैः— सान्द्रायाः=निविडायाः, द्रुमाल्याः=तरुश्रेण्याः, ललिततले=रम्यच्छायायां, मिलन्तीभिः=लगन्तीभिः, सुन्दरीभिः=रमणीभिः, सन्निरुद्धैः=अवरुद्धैः, आलिङ्गितैरित्यर्थः। सिद्धैः=देवयोनिविशेषैः, सेव्यन्ते=आश्रीयन्ते। स्रग्धरा वृत्तम् ॥३५॥

ज्योत्स्ना—और इधर भी देखें देव !,

विन्ध्य पर्वत के मध्य भाग में स्थित विशाल शिलाओं की गोद में थिरकती हुई लहरियों वाली, सम्भोगश्रम से क्लान्त (थकी हुई), अतएव तीरप्रदेश का सेवन करती हुई शबर-वधुओं के लिए आनन्ददायक यह वही नर्मदा नदी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, जिसके मृगों के द्वारा छिन्न-भिन्न किये गये उत्पद्यमान नवांकुरों वाले तट प्रदेशों का घनी वृक्षपंक्तियों की रमणीय छाया में बैठी हुई सुन्दरियों के द्वारा आलिङ्गन किये किये जाते हुए सिद्ध लोग सेवन करते हैं ॥३५॥

अपि च। अन्तरेऽप्यस्याः—

मज्जत्कुञ्जरकुम्भमण्डलगलद्दानाम्बुनः सौरभाद्
भ्राम्यद्भृङ्गकुलावलीः कुवलयश्रेणीः समाबिभ्रतः।
कल्लोलाः कलिकालकल्मषमुषः प्रोल्लीललीलाकृतः
स्वःसोपानपरम्परा इव वियद्वीथीमलंकुर्वते ॥३६॥

अन्वयः - (अस्याः अन्तरेऽपि) मज्जत्कुञ्जरकुम्भमण्डलगलद्दानाम्बुनः सौरभात् भ्राम्यद्भृङ्गकुलावलीः कुवलयश्रेणीः समाबिभ्रतः कलिकालकल्मषमुषः प्रोल्लीललीलाकृतः कल्लोलाः स्वःसोपानपरम्परा इव वियद्वीथीम् अलङ्कुर्वते ॥३६॥

कल्याणी—मज्जदिति। अस्याः=नर्मदायाः, अन्तरेऽपि=मध्येऽपि, मज्जत्कुञ्जरकुम्भमण्डलगलद्दानाम्बुनः—मज्जतां=स्नानं कुर्वतां, कुञ्जराणां=गजानां, कुम्भमण्डलेभ्यः=गण्डस्थलेभ्यः, गलतः=स्रवतः, दानाम्बुनः=मदजलस्य सौरभात्=सुगन्धाद्धेतोः, भ्राम्यद्भृङ्गकुलावलीः—भ्राम्यतां=भ्रमणं कुर्वतां, भृङ्गकुलानां=मधुपसमुदयानाम्, अवलीः=पङ्क्तीः, स एव कुवलयश्रेणीः=नीलोत्पलावलीः, समाबिभ्रतः=दधानाः, कलिकालकल्मषमुषः—कलिकालस्य=कलियुगस्य, कल्मषं=पापं, मुष्णन्ति=हरन्तीति तथोक्ताः, प्रोल्लीललीलाकृतः—प्रकर्षेण उद्गता लीला=विलासः यत्र तथाविधां लीलां=क्रीडां कुर्वन्तीति तथोक्ताः, कल्लोलाः=महातरङ्गाः, स्वःसोपानपरम्परा इव=स्वर्गसोपानपङ्क्तय इव, वियद्वीथीम्=आकाशमार्गम्, अलङ्कुर्वन्ति=भूषयन्ति। अत्र कल्लोलानां स्वर्गसोपानपरम्परात्मना संभावनयोत्प्रेक्षालङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३६॥

ज्योत्स्ना—और इस नर्मदा नदी के मध्य में भी;

स्नान करते हुए हाथियों के गण्डस्थल से झरते हुए मदजल के सुगन्ध के कारण भ्रमण करती हुई भ्रमरकुल-पंक्तिरूपी नीलकमलश्रेणियों को धारण करने वाली, कलिकाल के पापों का हरण करने वाली, उत्कृष्ट विलास वाली क्रीड़ा करती लहरें स्वर्ग की सीढ़ियों की पंक्तियों के समान आकाश-मार्ग को अलंकृत कर रही हैं ॥३६॥

इतश्चास्यास्तीरे—

अंसस्रंसिजलार्द्रजर्जरजटाजूटैर्मनाङ्मन्थरा-
स्तिम्यत्तारवतन्तुनिर्मितकुथत्कौपीनमात्रच्छदाः।
शीतोत्कण्टकितास्थिशेषतनवः स्नात्वोत्तरन्तः शनै-
रेते पश्य पतन्ति पिच्छिलशिलाजाले जरत्तापसाः ॥३७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—अंसस्रंसिजलार्द्रजर्जरजटाजूटैः मनाक् मन्थराः तिम्यत्तारवतन्तुनिर्मितकुथत्कौपीनमात्रच्छदाः शीतोत्कण्टकितास्थिशेषतनवः एते जरत्तापसाः स्नात्वा शनैः उत्तरन्तः पिच्छिलशिलाजाले पतन्ति (इति) पश्य ॥३७॥

कल्याणी—अंसेति । अंसस्रंसिजलार्द्रजर्जरजटाजूटैः—अंसस्रंसिभिः=स्कन्धावलम्बिभिः, जलार्द्रैः=जलक्लिन्नैः, जर्जरैः=शिथिलैश्च जटाजूटैः=सटाजालैः, मनाग्=ईषत्, मन्थराः=मन्दगतयः, तिम्यत्तारवतन्तुनिर्मितकुथत्कौपीनमात्रच्छदाः—तिम्यत्=आर्द्रीभवत्, तरुषु जाताः तारवाः=वल्कलाः, ते च ते तन्तवश्च तैः=आर्द्रवल्कलतन्तुभिः, निर्मितं=रचितं, कुथत्=जरत्, कौपीनमात्रं छदः=परिधानं येषां ते, शीतोत्कण्टकितास्थिशेषतनवः—शीतं=शैत्यम् [भावे क्तः], तेन उत्कण्टकिताः=रोमाञ्चिताः, अस्थिशेषाः=अस्थिमात्रावशिष्टाः च तनुः=शरीरं येषां ते, एते=इमे, जरत्तापसाः=वृद्धतपस्विनः, स्नात्वा=स्नानं कृत्वा, नर्मदायामिति भावः । शनैः=मन्दम्, उत्तरन्तः=बहिर्निर्गच्छन्तः, पिच्छिलशिलाजाले—पिच्छिलं=मसृणं कर्दमिलं, शिलाजालं=शिलासङ्घातः यत्र, तत्र पतन्ति । इति पश्य=अवलोकय । स्वभावोक्तिरलङ्कारः । 'पिच्छिलशिलाजाले' इति समस्तपदान्तर्गतपिच्छिलशब्दस्य पतनक्रियायां हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम् । तयोश्च संसृष्टिः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३७॥

ज्योत्स्ना—और इधर इसके तीर पर;

देखें, स्कन्धप्रदेश (कन्धे) पर अवलम्बित जल से भीगी हुई शिथिल जटाओं के कारण थोड़ी मन्द गति वाले, भीगे वल्कल-तन्तुओं से निर्मित जीर्ण कौपीन-मात्र वस्त्र वाले, ठंढ़ के कारण रोमाञ्चित अस्थि-मात्र अवशिष्ट शरीर वाले ये वृद्ध तपस्विगण स्नान करके धीरे-धीरे बाहर निकलते हुए पिच्छिल (चिकने पंकिल, अत एव फिसलनभरे) शिलाओं पर (बार-बार) गिर रहे हैं ॥३७॥

इतोऽपि—

> **पश्यैताः करिकुम्भसन्निभकुचद्वन्द्वोल्लसद्वीचयः**
> **क्रीडन्त्यब्जविकासभासि पयसि स्वैरं पुलिन्दस्त्रियः ।**
> **उन्मीलन्नवनीलनीरजधिया पक्ष्मान्तरे नेत्रयो-**
> **र्यासां हस्तलताहता अपि परिभ्राम्यन्ति भृङ्गाङ्गनाः ॥३८॥**

अन्वयः—पश्य, करिकुम्भसन्निभकुचद्वन्द्वोल्लसद्वीचयः एताः पुलिन्दस्त्रियः अब्जविकासभासि पयसि स्वैरं क्रीडन्ति, यासां नेत्रयोः पक्ष्मान्तरे उन्मीलन्नवनीलनीरजधिया भृङ्गाङ्गनाः हस्तलताहता अपि परिभ्राम्यन्ति ॥३८॥

कल्याणी—पश्येति । पश्य=अवलोकय, किं तदित्याह—एता इति । करिकुम्भसन्निभकुचद्वन्द्वोल्लसद्वीचयः—करिकुम्भसन्निभेन=गजकुम्भसदृशेन, कुचद्वन्द्वेन=स्तनयुग्मेन, उल्लसन्त्यः=उच्छलन्त्यः, वीचयः=लहर्यः यासां ताः, एताः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इमाः, पुलिन्दस्त्रियः=शबरवध्वः; अब्जविकासभासि—अब्जानां=कमलानां, विकासेन=विकचेन, भाः=कान्तिः यस्य तस्मिन्, विकसितकमलकान्त इत्यर्थः। पयसि=जले, स्वैरं=स्वच्छन्दं, क्रीडन्ति=केलिं कुर्वन्ति। यासां=पुलिन्दस्त्रीणां, नेत्रयोः=नयनयोः, पक्ष्मान्तरे=पक्ष्मपंक्तिमध्ये, उन्मीलन्नवनीलनीरजधिया=विकसन्नवनीलकमलबुद्धया, भृङ्गाङ्गनाः=भ्रमर्यः, हस्तलताहता अपि=करलतातादिता अपि, परिभ्राम्यन्ति=परितो भ्रमणं कुर्वन्ति। करिकुम्भसंनिभकुचद्वन्द्वेत्यत्रोपमा। नेत्रयोर्विकसन्नवनीलोत्पलबुद्धिरिति भ्रान्तिमान् अलङ्कारः॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३८॥

ज्योत्स्ना—इधर भी;

देखें, हाथियों के गण्डस्थलसदृश स्तनों के द्वारा लहरों को सुशोभित करती हुई अथवा उछालती हुई ये शबर-वधुयें कमलों के विकास के कारण कान्तिमान जल में स्वच्छन्दतापूर्वक विहार कर रही हैं, जिनके नयनों के पलकों को विकसित हो रहे नूतन नीलकमल समझकर भ्रमरवधुयें हस्तलता से ताडित किये (भगाये जाने) पर भी उसके चारो ओर भ्रमण कर रही हैं अर्थात् मँडरा रही हैं ॥३८॥

इतोऽप्यवलोकयतु देवः—

बालोन्मीलत्कुवलयवनं विस्तरद्गन्धरुद्ध-
भ्राम्यद्भृङ्गैरनुकृतपयःपूर्णमेघान्धकारम्।
हर्षात्पश्यत्ययमतितरां तीरचारी मयूरो
मुग्धः पार्श्वे भ्रमति च भयाच्चक्रवच्चक्रवाकः ॥३९॥

अन्वयः—विस्तरद्गन्धरुद्धभ्राम्यद्भृङ्गैः अनुकृतपयःपूर्णमेघान्धकारं (तथाविधं) बालोन्मीलत्कुवलयवनं तीरचारी मयूरः हर्षात् अतितरां पश्यति, मुग्धः चक्रवाकश्च भयात् पार्श्वे चक्रवत् भ्रमति ॥३९॥

कल्याणी—बालेति। विस्तरद्गन्धरुद्धभ्राम्यद्भृङ्गैः—विस्तरता=प्रसरता, गन्धेन=सौरभेण, रुद्धाः=तत्रैवावरुद्धाः, अतएव भ्राम्यन्तः—तत्रैव भ्रमणं कुर्वन्तः, ये भृङ्गाः=भ्रमराः तैः, अनुकृतपयःपूर्णमेघान्धकारम्—अनुकृतः पयःपूर्णमेघः=सलिलयुक्तजलदः, अन्धकारश्च=तमश्च येन तत्, भृङ्गाणां जलगतप्रतिबिम्बैः जलपूर्णमेघानुकरणम्, ऊर्ध्वं भ्राम्यद्भिर्भृङ्गैश्चान्धकारानुकरणमिति विवेकः। तथाविधं बालोन्मीलत्कुवलयवनं=नवविकसन्नीलकमलवनमयं, तीरचारी=तटे संचरणशीलः, मयूरः=केकी, हर्षात्=आमोदात्, मेघबुद्धिजनितादिति भावः। अतितरां=समधिकं, पश्यति=विलोकयति। मुग्धः=सरलः, विवेकरहित इत्यर्थः। चक्रवाकश्च, [अन्धकारबुद्ध्या] भयात्=प्रियावियोगभयात्, पार्श्वे=तत्समीपे, चक्रवद् भ्रमति=परिक्रमति। भृङ्गेषु मयूरस्य मेघबुद्धिस्तथा चक्रवाकस्यान्धकारबुद्धया रात्रिशङ्का चेति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ्रान्तिमानलङ्कारः। मन्दाक्रान्ता वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम् ॥' इति ॥३९॥

ज्योत्स्ना—महाराज इधर भी देखें,

प्रसरित होती हुई गन्ध के द्वारा अवरुद्ध (रोके गये), अतएव भ्रमण करते हुए भ्रमरों के द्वारा जलपूर्ण मेघ और अन्धकार को प्रतिबिम्बित करने वाले, नूतन विकसित हो रहे कमलवन के तट पर सञ्चरण करने वाला यह मयूर (भ्रमरकृत अन्धकार को मेघ समझने के कारण) हर्ष से बार-बार देख रहा है और मुग्ध (सीधा-सादा) चक्रवाक पक्षी (प्रियावियोग के) भय से उसके समीप ही चक्र के समान घूम रहा है ॥३९॥

इदं च—

कुररभरसहं सहंसमालं मुदितमयूरचकोरचक्रवाकम्।
क इह सुरुचिरं चिरं विलोक्य प्रवरमते रमते नरो न रोधः ॥४०॥

अन्वयः—प्रवरमते ! कुररभरसहं सहंसमालं मुदितमयूरचकोरचक्रवाकं (इदं) सुरुचिरं रोधः विलोक्य कः न इह चिरं रमते ॥४०॥

कल्याणी—कुररेति। प्रवरा=उत्कृष्टा, मतिः=बुद्धिः यस्य तत्सम्बुद्धौ हे प्रवरमते !=श्रेष्ठबुद्धे, कुररभरसहं—कुररा:=क्रौञ्चपक्षिणः, तेषां भरं=भारमतिशयं वा सहत इति तथोक्तम्, कुरराति शयोपेतमित्यर्थः। सहंसमालं=हंसमालया सह विद्यमानं तथा मुदितमयूरचकोरचक्रवाकं—मुदिताः=प्रसन्नाः, मयूराश्चकोराश्चक्रवाकाश्च यत्र तथाविधमिदं सुरुचिरं=सुरम्यं, रोधः=तटं च, विलोक्य=दृष्ट्वा, को नरः=कः जनः, नेह=नात्र, चिरं=बहुकालं यावत्, रमते=क्रीडति, सर्वः क्रीडत्येवेत्यर्थः। अत्र 'सहं-सहं' इति, 'रमते-रमते' इति च 'चिरं-चिरं' इति च 'नरो-नरो' इत्यपि च यमकानि। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥४०॥

ज्योत्स्ना—और यह- हे उत्कृष्ट बुद्धि वाले राजन् ! कुरर (क्रौञ्च) पक्षियों के भार को सहन करने वाले अथवा कुरर पक्षियों की अधिकता वाले, हंसों की पंक्ति से समन्वित एवं प्रमुदित मयूर, चकोर और चक्रवाक पक्षियों से युक्त इस तट को देखकर कौन व्यक्ति चिर काल तक यहाँ रमण (विहार) करना नहीं चाहेगा ? ॥४०॥

इतश्च—

बककृतनिनदं नदं न दम्भात्कृतसवनं सबनं भजन्त एते।
निरुपमविभवं भवं स्मरन्तः प्रशमधना मुनयो नयोपपन्नाः ॥४१॥

अन्वयः—प्रशमधनाः नयोपपन्नाः एते मुनयः न दम्भात् कृतसवनं सवनं बककृतनिनदं नदं निरुपमविभवं भवं स्मरन्तः भजन्ते ॥४१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—बकेति। प्रशमधनाः—प्रशमः=शान्तिरेव, धनं=सम्पत्तिः येषां ते, नयोपपन्नाः=नीतियुक्ताः, एते=इमे, मुनयः=ऋषयः, न दम्भात्=न कपटात्, अपितु धर्मवासनया, कृतसवनं—कृतं=विहितं, सवनं=स्नानं यस्मिंस्तम्, वनैः सहेति सवनं=वनोपेतं, बककृतनिनदं—बकैः=बकपक्षिभिः, कृतः=विहितः, निनदः=ध्वनिः यत्र तथाविधं, नदं=जलाधारविशेषं, निरुपमविभवं—निरुपमः=अनुपमः, विभवः=ऐश्वर्यं यस्य तथाविधं, भवं=शिवं, स्मरन्तः=स्मरणं कुर्वन्तः, भजन्ते=सेवन्ते, अधिवसन्तीत्यर्थः। 'नदं-नदं', 'सवनं-सवनं', 'भवं-भवं', 'नयो-नयो' इति यमकानि। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥४१॥

ज्योत्स्ना—और इधर—शान्तिरूपी सम्पत्ति वाले नीतियों से सम्पन्न ये मुनि लोग दम्भ अथवा छल से नहीं, अपितु धर्म की कामना से (नर्मदा में) स्नान करके वन से समन्वित, बकपक्षियों द्वारा निनादित नदी-तट का, अनुपम ऐश्वर्य वाले भगवान् शिव का स्मरण करते हुए सेवन करते हैं अर्थात् नदी-तट पर ही निवास करते हैं ॥४१॥

विधूतपाप्मानः खल्वमी महानुभावाः; तथाहि—

मुहुरधिवसतां सतां मुनीनामपविपदां विपदाङ्कपङ्कभाञ्जि।
तटनिकटवनानि नर्मदायाः कथमिभवन्ति भवन्ति कल्मषाणि ॥४२॥

अन्वयः—इभवन्ति विपदाङ्कपङ्कभाञ्जि नर्मदायाः तटनिकटवनानि मुहुः अधिवसतां सतां अपविपदां मुनीनां कथं कल्मषाणि भवन्ति ॥४२॥

कल्याणी—विधूतेति। अमी महानुभावाः=एते महाप्रभावाः मुनयः, विधूतपाप्मानः=निष्पापाः, खल्विति निश्चये। तदेव मुनीनां निष्कल्मषत्वमुपपादयन्नाह—मुहुरिति। इभवन्ति—इभाः=गजाः सन्त्येष्विति तानि, गजाकुलानीत्यर्थः। विपदाङ्कपङ्कभाञ्जि—वीनां=पक्षिणां, पदाङ्काः=चरणचिह्नानि यत्र तथाविधं, पङ्कं=कर्दमं, भजन्ते=शोभन्ते इति तानि, नर्मदायाः=नर्मदानद्याः, तटनिकटवनानि=तटसमीपवनानि, मुहुः=भूयः, अधिवसतां=निवसताम्, 'उपान्वध्याङ्वसः' इति तटनिकटवनानां कर्मत्वं, ततः कर्मणि द्वितीया। सतां=विदुषाम्, अपविपदाम्—अपगता विपद्=विपत्तिः येभ्यस्तेषां, मुनीनां=ऋषीणां, कथं=केन हेतुना, कल्मषाणि=पापानि, भवन्ति, न भवन्त्येवेत्यर्थः। 'सतां-सतां', 'विपदां-विपदां', 'भवन्ति-भवन्ति' इति यमकानि। 'विपदाङ्कपङ्के'त्यत्र संयुक्तयोर्वर्णयोः स्वरूपतः क्रमतश्च सकृदावृत्त्या छेकानुप्रासः। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥४२॥

ज्योत्स्ना—ये अतिशय प्रभावशाली मुनि लोग निश्चय ही पापरहित हैं, क्योंकि—हाथियों से समन्वित और पक्षियों के चरणों से चिह्नित पङ्क से शोभायमान नर्मदा नदी के तटवर्ती वनों में बार-बार निवास करने वाले विद्वानों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं विपत्तियों से रहित मुनिजनों को पाप छू भी कैसे सकते हैं ? अर्थात् वे पापयुक्त हो ही नहीं सकते ।।४२।।

इतश्च—

क्वचित्प्रवरगैरिकोपमसमुल्लसत्पल्लवं
लवङ्गलवलीलतातलचलच्चकोरं क्वचित् ।
क्वचिद्गिरिसरित्तटीतरुणविस्फुरत्कन्दलं
दलन्निचुलमञ्जरीमधुनिरुद्धभृङ्गं क्वचित् ।।४३।।
क्वचिच्चटुलकोकिलाकुलितनूतचूताङ्कुरं
कुरङ्गकुलसेवितप्रबलसालमूलं क्वचित् ।
क्वचित्प्रवरसञ्चरत्सुरवधूपदैः पावनं
वनं नयति विक्रियामिह मनो मुनीनामपि ।।४४।। युग्मम् ।।

अन्वयः—क्वचित् प्रवरगैरिकोपमसमुल्लसत्पल्लवं, क्वचित् लवङ्गलवलीलतातलचलच्चकोरं, क्वचित् गिरिसरित्तटीतरुणविस्फुरत्कन्दलं, क्वचित् दलन्निचुलमञ्जरीमधुनिरुद्धभृङ्गं, क्वचित् चटुलकोकिलाकुलितनूतचूताङ्कुरं, क्वचित् कुरङ्गकुलसेवितप्रबलसालमूलं, क्वचित् प्रवरसञ्चरत्सुरवधूपदैः पावनं वनम् इह मुनीनाम् अपि मनः विक्रियां नयति ।।४३-४४।।

कल्याणी—क्वचिदिति । क्वचित्=कुत्रचिद्भागे, प्रवरगैरिकोपमसमुल्लसत्पल्लवं—प्रवरं=प्रकृष्टं, गैरिकमुपमा येषां तानि प्रवरगैरिकोपमानि, तद्वद्रक्तानीत्यर्थः । उल्लसन्ति=विकसन्ति, पल्लवानि=किसलयानि यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, लवङ्गलवलीलतातलचलच्चकोरं—लवङ्गानां लवलीनां च लतानां तले=तच्छायायामित्यर्थः । चलन्तः=विचरन्तः, चकोराः यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, गिरिसरित्तटीतरुणविस्फुत्कन्दलं—गिरिसरितां=पर्वतीयनदीनां, तटीषु=तटेषु, तरुणा=नवा, विस्फुरन्तः=दीप्यमानाः, कन्दलाः=अङ्कुराः यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, दलन्निचुलमञ्जरीमधुनिरुद्धभृङ्गम्—दलन्तीनां=विकसन्तीनां, निचुलमञ्जरीणां=वेतसीमञ्जरीणां, मधुभिः=मकरन्दैः, निरुद्धाः=अवरुद्धाः, तत्रैव बद्धा इति यावत् । भृङ्गाः=भ्रमराः यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, चटुलकोकिलाकुलितनूतचूताङ्कुरं— चटुलैः=चपलैः, कोकिलैः आकुलिताः=व्याप्ताः, नूताः=प्रशस्ताः, चूताङ्कुराः=रसालकलिकाङ्कुराः यत्र तथाविधम्, नूतेत्यत्र तौदादिकः 'णू स्तवने' इत्यस्माद्धातोः कर्मणि क्त इति ज्ञेयम् । क्वचित्=कुत्रचित्, कुरङ्गकुलसेवितप्रबालसालमूलं— कुरङ्गकुलैः=मृगसमूहैः, सेवितं प्रबलसालमूलं=विशालसालतरुच्छायां यत्र तथाविधम्, क्वचित्=कुत्रचित्, प्रवरसञ्चरत्सुरवधूपदैः —प्रवराणाम्=उत्कृष्टानां, सञ्चरन्तीनां=भ्रमणं कुर्वन्तीनां, सुरवधूनां=देवा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ङ्गनानां, पदैः=चरणैः, पावनं=पवित्रीकृतं, वनं=काननम्, इह=अत्र, मुनीनामपि=ऋषीणामपि, मनः=चेतः, विक्रियां=विकारं, नयति=प्रापयति। साधारणजनानां का कथेति भावः। अर्थापत्तिरलङ्कारः। पुष्पिताग्रावृत्तम् ॥४३-४४॥

ज्योत्स्ना—और इधर, कहीं उत्कृष्ट गेरुए रंग के समान (लाल रंग के) चमकते हुए पल्लव हैं, कहीं लवंग और लवली लताओं की छाया में विचरण करते हुए चकोर पक्षी हैं, कहीं पर्वतीय नदियों के तट पर नूतन दीप्यमान अंकुर हैं, कहीं पर विकसित वेतों की मञ्जरियों के मकरन्दों से अवरुद्ध, अतएव उसी में उलझे हुए भ्रमर हैं, कहीं पर कोकिलों (कोयलों) से व्याप्त आम्र वृक्ष के नूतन कलिकांकुर हैं, कहीं पर मृगों से सेवित विशाल सालवृक्षों की छाया है, कहीं पर उत्कृष्ट भ्रमण करती हुई देवांगनाओं के चरणों से पवित्र किया गया यह वन मुनियों के मन में भी विकार उत्पन्न कर देता है अर्थात् मुनियों के चित्त को भी विकृत कर देता है ॥४३-४४॥

तदिदमद्यतनं दिवसमस्य सैन्यस्याध्वश्रमापन्नखेदापनुत्तिनिमित्तमधिवसतु देवः ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, अद्यतनं दिवसम्=अस्मिन् दिने, अस्य सैन्यस्य=एतस्य बलस्य, अध्वश्रमेण=मार्गश्रमेण, आपन्नः=प्राप्तः, खेदः=श्रान्तिः, तस्या अपनुत्तिः=अपनोदः, तस्य निमित्तं=हेतोः, देवः=महाराजः, इदं=समीपवर्तिनं वनम्, अधिवसतु=अधितिष्ठतु ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए आज के दिन इस सेना के मार्गश्रम के कारण प्राप्त थकान को दूर करने के लिए महाराज यहीं पर ठहरें अर्थात् विश्राम के लिए पड़ाव डालें ॥

यत्र—

वायुस्कन्धमवष्टभ्य स्फारितैः पुष्पलोचनैः।
वियद्विस्तारमेते हि वीक्षन्त इव पादपाः ॥४५॥

अन्वयः—हि (यत्र) वायुस्कन्धम् अवष्टभ्य स्फारितैः पुष्पलोचनैः एते पादपाः वियद्विस्तारं वीक्षन्त इव ॥४५॥

कल्याणी—वायुस्कन्धमिति। हि=यतः, यत्र=वने, वायुस्कन्धं—वायोः=पवनस्य, स्कन्धः=संहतिरंसश्च, तम् अवष्टभ्य=आरुह्येत्यर्थः। स्फारितैः=विस्तारितैः, पुष्पलोचनैः—पुष्पैरेव=कुसुमैरेव, लोचनैः=नयनैः, एते=इमे दृश्यमानाः, पादपाः=वृक्षाः, वियद्विस्तारं=गगनविस्तारं, वीक्षन्त इव=अवलोकयन्तीव। एतेनात्रत्यतरूणां पुष्पितत्वं तुङ्गत्वं च व्यज्यते। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—जहाँ पर हवा के कन्धे पर आरूढ़ होकर विस्तारित (खिले हुए) पुष्परूपी नयनों के द्वारा ये वृक्ष मानो आकाश के विस्तार को देख रहे हैं ॥४५॥

अपि च येषाम्—

स्कन्धशाखान्तरालेषु पश्य जीमूतपङ्क्तयः ।
लम्बमाना विलोक्यन्ते चलद्वल्गुलिका इव ॥४६॥

अन्वयः—(येषां) स्कन्धशाखान्तरालेषु लम्बमानाः जीमूतपङ्क्तयः चलद्वल्गुलिकाः इव विलोक्यन्ते (इति) पश्य ॥४६॥

कल्याणी—स्कन्धेति । (येषां=वृक्षाणां) स्कन्धशाखान्तरालेषु=मुख्य-शाखानां मध्यभागेषु, लम्बमानाः=प्रलम्बमानाः, जीमूतपंक्तयः=मेघश्रेणयः, चलद्वल्गुलिकाः=दोलायमानपेटिकाः, इव विलोक्यन्ते=दृश्यन्ते । इति पश्य=अवलोकय । स्कन्धशाखान्तरालम्बमानानां जीमूतपङ्क्तीनां चलद्वल्गुलिकात्मना संभावनयोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ४६ ॥

ज्योत्स्ना—और यह भी देखें कि जिन वृक्षों पर मुख्य शाखाओं के मध्य भाग में लटकती हुई बादलों की पंक्तियाँ रेंगती हुई वल्गुलिका के समान दिखाई पड़ रही हैं ॥४६॥

येषां च—

उच्चैः शाखाग्रसंलग्ना मन्ये नूनं वनौकसाम् ।
कुर्वन्ति पुष्पसन्देहं निशि नक्षत्रपङ्क्तयः ॥४७॥

अन्वयः—उच्चैः शाखाग्रसंलग्नाः नक्षत्रपंक्तयः मन्ये, नूनं निशि वनौकसां पुष्पसन्देहं कुर्वन्ति ॥४७॥

कल्याणी—उच्चैरिति । उच्चैः=उन्नतैः, शाखाग्रसंलग्नाः=शाखाग्रभाग-संसक्ताः, नक्षत्रपंक्तयः=तारकावलीः, मन्ये नूनं=निश्चितं, निशि=रात्रौ, वनौकसां=वनवासिनां, पुष्पसन्देहं=पुष्पशङ्कां, कुर्वन्ति=विदधन्ति । उत्प्रेक्षाभ्रान्तिमतोः संकरः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४७॥

ज्योत्स्ना—और भी जिन (वृक्षों)—के ऊँचे-ऊँचे शाखाओं के ऊपरी भाग से संलग्न नक्षत्रों की पंक्तियाँ रात्रि में निश्चित रूप से वनवासियों के (मन में) पुष्प होने का सन्देह उत्पन्न कर देती हैं ।

विमर्श—विन्ध्य पर्वत के ऊपर स्थित वृक्ष इतने ज्यादा लम्बे हैं कि नीचे से देखने पर वे आकाश को स्पर्श करते हुए-से दिखाई पड़ते हैं । इसीलिए रात्रि में तारे उनकी शाखाओं से संलग्न दिखाई देते हैं, जो कि वनवासियों को वृक्ष के पुष्प के समान जान पड़ते हैं ॥४७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतश्च—

एतेषु प्रचण्डपवनाहततरुतलगलितसुगन्धिविविधविकचकुसुमप्रकरमकरन्दमापीय पुनः शिखरशाखाभिमुखमुत्पतन्त्यो विभान्ति दुरारोहतया कृताः केनापि निःश्रेणय इव श्रेणयो मधुलिहाम् ॥

कल्याणी एतेष्विति । एतेषु=अमीषु वनेषु, मधुलिहां=भ्रमराणां, श्रेणयः=पङ्क्तयः, प्रचण्डपवनाहततरुतलगलितसुगन्धिविविधविकचकुसुमप्रकरमकरन्दमापीय—प्रचण्डपवनेन=तीव्रवायुना, आहताः=प्रकम्पिताः, तरवः=वृक्षाः, तेषां तले=अधोभूमौ, गलितानि=पतितानि, सुगन्धीनि=सुगन्धयुक्तानि, विविधानि=अनेकानि, विकचानि=विकसितानि, कुसुमानि=पुष्पाणि, तेषां प्रकरस्य=पुञ्जस्य, मकरन्दं=पुष्परसम्, आपीय=नितरां पीत्वा, पुनः=भूयः, शिखरशाखाभिमुखम्=उच्चशाखाभिमुखम्, उत्पतन्त्यः=उद्गच्छन्त्यः, दुरारोहतया=कष्टेनारोहणयोग्यतया, वृक्षाणामत्युन्नतत्वादिति भावः । केनापि=येन केनापि पुरुषेण, निःश्रेणय इव=निष्पंक्तिबद्धा इव, कृताः=विहिताः, विभान्ति=शोभन्ते ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—इन वनों में भ्रमरों की पंक्तियाँ प्रचण्ड वायु से आहत (कम्पायमान) वृक्षों के नीचे गिरे हुए विभिन्न प्रकार के सुगन्धयुक्त खिले हुए पुष्पों के मकरन्द (पुष्परस) का पूर्ण रूप से पान कर पुनः (वृक्षों की) ऊँची शाखाओं की ओर उड़ते हुए (वृक्षों के अत्यन्त ऊँचे होने के कारण उन पर) चढ़ना कष्टसाध्य होने के कारण किसी (व्यक्तिविशेष) के द्वारा पंक्तिहीन कर दी गई के समान सुशोभित हो रही हैं ॥

इतश्च —

निश्चलानां सैन्यभयेन तुङ्गतरुशिखरपञ्जरपुञ्जितगोलाङ्गूलमण्डलानां निर्यन्नवप्ररोहाङ्कुराकाराः कुर्वन्ति वनदेवतानां क्रीडान्दोलनदोलारज्जुशङ्कामधोविलम्बिलाङ्गूललतिकाः ॥

कल्याणी—निश्चलानामिति । सैन्यभयेन—सैन्याद् भयं तेन=बलभीत्या; निश्चलानां=निःस्पन्दानां, तुङ्गतरुशिखरपञ्जरपुञ्जितगोलाङ्गूलमण्डलानां—तुङ्गतरुशिखरपञ्जरे=अत्युच्चवृक्षाग्रभागपञ्जरे, पुञ्जितानां=समवेतानां, गोलाङ्गूलानां =लाङ्गूलिनां वानराणां, मण्डलानां=समूहानां, निर्यन्नवप्ररोहाङ्कुराकाराः=निर्गच्छन्नवशाखाङ्कुराकाराः, अधोविलम्बिलाङ्गूललतिकाः—अधोविलम्बिन्यः=निम्नभागलम्बिन्यः, लाङ्गूललतिकाः=पुच्छलतिकाः, वनदेवतानां=अरण्यदेवीनां, क्रीड़ान्दोलनदोलारज्जुशंकां—क्रीडान्दोलनाय=खेलनाय, या दोला=हिण्डोला, तस्याः रज्जुशङ्कां=रज्जुभ्रान्ति, कुर्वन्ति=जनयन्ति । भ्रान्तिमान् अलङ्कारः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इधर—सैनिकों के भय से निश्चल बने हुए अत्यन्त ऊँचे वृक्षों की उन्नत शाखाओं की छाया में एकत्रित हुए लांगूल वानरों (लंगूरों) की निकलती हुई नूतन शाखाओं के अंकुर की आकृति वाली नीचे की ओर लटकती पूंछें वनदेवताओं के क्रीड़ा करने के लिए झूले के रस्सी होने की भ्रान्ति उत्पन्न कर रही हैं ॥

इतश्च—

चकासत्युड्डीयमानास्तरुशिरःशिखरशाखाग्रस्खलनविलग्नग्रहगणविमानपङ्क्तिपताका इव विहगावलयो निश्चलम् ॥

कल्याणी—चकासतीति । उड्डीयमानाः=उत्पतन्त्यः, विहगावलयः=पक्षिश्रेणयः, तरुशिरःशिखरशाखाग्रस्खलनविलग्नग्रहगणविमानपंक्तिपताकाः—तरुशिरःशिखराग्रस्खलनेन=पादपशिखराग्रभागावरोधेन, विलग्नाः=संसक्ताः, ग्रहगणानां=नक्षत्रसमूहानां, या विमानपङ्क्तयः=श्रेणयः, तासां पताकाः=ध्वजाः इव, निश्चलं=अविचलं यथा तथा, चकासति=शोभन्ते । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—उड़ती हुई पक्षियों की पंक्तियाँ वृक्षों की ऊँची शाखाओं के अग्रभाग से टकराने के कारण निश्चल होकर (उन शाखाओं से) सटे हुए नक्षत्रों के विमानों की पताकाओं के समान सुशोभित हो रही हैं ॥

इतश्च—

विजृम्भमाणमञ्जरीजालेषु सर्वर्तुविकासिसहकारवनेषु वनदेवताभिरुद्दामदवदहनप्रतीकारार्थमनागतमेव संगृहीतवारिगर्भाम्भोदपटलमिवालोक्यते कोकिलाकुलकदम्बकम् ॥

कल्याणी—विजृम्भमाणेति । विजृम्भमाणमञ्जरीजालेषु—विजृम्भमाणं=विकसन्, मञ्जरीजालं=मञ्जरीसमूहं यत्र तेषु, सर्वर्तुविकासिसहकारवनेषु—सर्वर्तुविकासिनां सहकाराणाम्=आम्राणां, वनेषु=उद्यानेषु, वनदेवताभिः=वनाधिष्ठातृदेवीभिः, उद्दामदवदहनप्रतीकारार्थम्—उद्दामः=प्रचण्डः, यः दवदहनः=वनाग्निः, तस्य प्रतीकारार्थं=प्रशमनार्थम्, अनागतमेव=अप्राप्तमेव, संगृहीतवारिगर्भाम्भोदपटलमिव—संगृहीतं वारि=जलं, गर्भे=अभ्यन्तरे येन सादृशम्, अम्भोदपटलमिव=घनसमूहमिव, जलनिर्भरपयोदपुञ्ज इवेत्यर्थः । कोकिलाकुलकदम्बकं=पिककुलवृन्दम्, आलोक्यते=वीक्ष्यते । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—खिलती हुई मञ्जरियों वाले, सभी ऋतुओं में विकसित होने वाले आम के वनों (बगीचों) में वनदेवियों के द्वारा प्रचण्ड वनाग्नि (दावानल) को शान्त करने के लिए बिना आये हुए ही जल से भरे हुए मेघों के समान पिकों (कोयल पक्षियों) का समूह देखा जा रहा है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतश्च—

विकसितसितपुष्पपिण्डपाण्डुरशिखराः सुधाधवलितोर्ध्वभूमयो विलासप्रसादा इव कुसुमसायकस्य जराधवलमौलयः कञ्चुकिन इव वनदेवतानाम्, उन्मादयन्ति मनोऽमन्दमुचुकुन्दपादपाः ॥

कल्याणी विकसितेति । विकसितसितपुष्पपिण्डपाण्डुरशिखराः—विकसितानां=विकचितानां, सितपुष्पाणां=श्वेतकुसुमानां, पिण्डेन=समुच्चयेन, पाण्डुरः=श्वेतवर्णः, शिखरः=अग्रभागः येषां ते तथोक्ताः, अतएव सुधाधवलितोर्ध्वभूमयः—सुधया=लेपविशेषेण, धवलिताः=शुभ्रीकृताः, ऊर्ध्वभूमिः=अग्रभागः येषां तादृशाः, कुसुमसायकस्य=कामदेवस्य, विलासप्रासादा इव=विलासभवनानीव, जराधवलमौलयः—जरया=वार्धक्येन, धवलः=शुभ्रः, मौलिः=शिरः, तत्केशपाश इत्यर्थो येषां तथाविधाः, वनदेवतानां=काननाधिष्ठातृदेवीनां, कञ्चुकिन इव=अन्तःपुरचराः वृद्धाः सेवका इव, अमन्दमुचुकुन्दपादपाः—अमन्दाः=अनल्पाः, ये मुचुकुन्दनामानो वृक्षास्ते, मनः=चेतः, उन्मादयन्ति=उन्मत्तं कुर्वन्ति । यद्वा अमन्दमिति पाठः, तदा अमन्दमिति क्रियाविशेषणम् । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—विकसित श्वेत पुष्पों के ढेर के कारण श्वेत वर्ण के शिखर (ऊपरी भाग) वाले, अतएव चूने से (पुती होने के कारण) श्वेत बनाई गई ऊपरी भूमि (छत) वाले कामदेव के विलास-भवन के समान वृद्धावस्था के कारण सफेद शिर (बाल) वाले वनदेवताओं के कञ्चुकी (अन्तःपुर के वृद्ध सेवक) के समान बहुतायत में स्थित मुचुकुन्द के वृक्ष मन को उन्मत्त कर रहे हैं ॥

तदेवंविधेषून्मुकुलविगलितबहलमकरन्दसीकरासारसुरभितभूतलेषु मुग्धमृगपरिहृतदावानलज्वालायमानोन्मदशबरसीमन्तिनीचरणप्रहारविकसिताशोककाननेषु नवजलधरनिकुरम्बकान्तितमालतरुशिरःस्थितशब्दानुमेयमाद्यन्मयूरमण्डलेषु मदनालसपुलिन्दराजसुन्दरीशिक्ष्यमाणवनकपोतकुक्कुटकुक्कुहकुलकुहरितेषु कूजत्कुररपरिवारितसरःपरिसरेषु चलच्चकोरसारसरवरमणीयेषु विहरतु देवः सह सैन्येन नर्मदोर्मिमन्दानिलान्दोलितलतापल्लवेषु वनेषु ॥

कल्याणी—तदेवमिति । तत्=तस्मात्, एवंविधेषु=एतादृशेषु, उन्मुकुलविगलितबहलमकरन्दसीकरासारसुरभितभूतलेषु—उन्मुकुलेभ्यः=विकसितकलिकाभ्यः, विगलितबहलमकरन्दस्य=परिस्रुतप्रचुरपुष्परसस्य, सीकरासारेण=बिन्दुवृष्ट्या, सुरभितं=सुगन्धयुक्तं, भूतलं=पृथ्वीतलं येषां तेषु, मुग्धमृगपरिहृतदावानलज्वालायमानोन्मदशबरसीमन्तिनीचरणप्रहारविकसिताशोककाननेषु—मुग्धैः=अतत्त्वज्ञैः मृगैः=हरिणैः, परिहृतं=परित्यक्तं, दावानलज्वालायमानं=वनवह्निज्वालेवाचरत्, उन्मदा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम्=उन्मत्तानां, शबरसीमन्तिनीनां=शबरवधूनां, चरणप्रहारैः=पादाघातैः, विकसितं=विकचितम्, शोकक्काननं=अशोकवृक्षारण्यं यत्र तेषु, नवजलधरनिकुरम्बकान्तितमालतरुशिरःस्थितशब्दानुमेयमाद्यन्मयूरमण्डलेषु—नवजलधरनिकुरम्बस्य= नूतनमेघपटलस्य, कान्तिरिव कान्तिर्येषां तथाविधानां, तमालतरूणां=तमालाख्यपादपानां, शिरःसु=अग्रभागेषु, स्थिताः=अवस्थिताः [अतएव अविभाव्या इति सामान्याऽलङ्कारः] शब्दैरेव=केकाध्वनिभिरेव, अनुमेयाः=ज्ञातव्याः, तेषाम् उन्माद्यतां=मदोन्मत्तानां, मयूराणां=केकीनां, मण्डलं=चक्रवालं यत्र तेषु, मदनालसपुलिन्दराजसुन्दरीशिक्ष्यमाणवनकपोतकुक्कुटकुक्कुहकुलकुहरितेषु—मदनालसाभिः=कामेनालसाभिः, तन्द्रायुक्ताभिरित्यर्थः। पुलिन्दराजानां=शबरपतीनां, सुन्दरीणां=कामिनीनां, शिक्ष्यमाणाः=पाठ्यमानाः, ये वनस्य=काननस्य, कपोताः कुक्कुटाश्च कुक्कुहाश्च—कुक्कुशब्दं जहत्युच्चारयन्तीति कुक्कुहाः ['आतोऽनुपसर्गे कः' इति कः] यद्वा कुक्शब्देन कुहयन्त आश्चर्यं जनयन्तीति कुक्कुहाः = पक्षिविशेषाः, तेषां कुलेन=समूहेन, तत्कृतध्वनिनेत्यर्थः। कुहरितेषु=मुखरितेषु, कूजत्कुररपरिवारितसरःपरिसरेषु—कूजद्भिः=शब्दायमानैः, कुररैः = पक्षिविशेषैः, परिवारितः=परिवेष्टितः, सरसां=तटाकानां, परिसरः=प्रान्तभूमिः यत्र तेषु, चलच्चकोरसारसरवरमणीयेषु—चलतां=विचरतां, चकोराणां सारसानां च रवैः=ध्वनिभिः, रमणीयेषु=रम्येषु, नर्मदोर्मिमन्दानिलान्दोलितलतापल्लवेषु—नर्मदायाः=नर्मदानद्याः, ऊर्म्मिभिः=तरङ्गैः, मन्देन अनिलेन=पवनेन, आन्दोलिताः=दोलायिता, लतानां=वीरुधानां, पल्लवाः=पत्राणि यत्र तथाविधेषु, वनेषु=विपिनेषु, देवः=भवान्, सैन्येन सह=बलेन समं, विरहतु=विहारं करोतु ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस प्रकार के विकसित कलियों से झरते हुए प्रचुर पुष्परसों के बिन्दुओं की वर्षा के कारण सुगन्धयुक्त भूमि वाले; मुग्ध हरिणों के द्वारा परित्यक्त दावानल की ज्वाला के समान आचरण करती हुई उन्मत्त शबरस्त्रियों के पादप्रहार के कारण विकसित अशोक वन वाले; नूतन मेघ की कान्ति के समान कान्ति वाले तमालवृक्षों के ऊपरी भाग (शिखर) पर बैठे हुए, अतएव शब्द (आवाज) के द्वारा ही पहचाने जाने वाले मदमत्त मयूरों वाले; कामासक्त (अतएव) आलस्ययुक्त शबरस्वामियों की रमणियों के द्वारा शिक्षित किये जाते हुए वनकपोतों (जंगली कबूतरों), कुक्कुटों एवं कुक्कुहों (पिकों) द्वारा की जाती हुई ध्वनियों से मुखरित तथा कूजन करते हुए कुरर पक्षियों से परिवेष्टित (घिरे हुए) सरोवरों के तटभाग वाले; सञ्चरण करते हुए चकोरों एवं सारसों की ध्वनि के कारण रमणीय नर्मदा नदी की तरंगों से बोझिल होने के कारण मन्द वायु से दोलायमान (कांपती हुई) लताओं के पल्लवों वाले वनों में आप सेना के साथ विहार करें ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजापि श्रुतशीलेन दर्शितांस्तांस्तान्देशानवलोक्य चिन्तितवान् ॥

कल्याणी—राजापीति । राजा=नलोऽपि, श्रुतशीलेन=श्रुतशीलाख्येन स्वमन्त्रिणा, दर्शितान्=प्रदर्शितान्, तांस्तान्=विविधान्, देशान्=स्थानानि, अवलोक्य=दृष्ट्वा, चिन्तितवान्=अचिन्तयत् ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल ने भी श्रुतशील के द्वारा दिखाये गये उन-उन देशों (स्थानों) को देखकर विचार किया—

कृतक्रीडाः क्रोडैर्मदकलकुरङ्गीहृतमृगाः
परिभ्राम्यद्भृङ्गाः परभृतकुलाक्रान्ततरवः ।
वनोद्देशाः पौष्पैः सुरभितदिगन्ताः परिमलै-
र्न चेतः कस्यैते विलसितविकारं विदधति ॥४८॥

अन्वयः—क्रोडैः कृतक्रीडाः मदकलकुरङ्गीहृतमृगाः परिभ्राम्यद्भृङ्गाः परभृतकुलाक्रान्ततरवः पौष्पैः परिमलैः सुरभितदिगन्ताः एते वनोद्देशाः कस्य चेतः विलसितविकारं न विदधति ॥४८॥

कल्याणी—कृतक्रीडा इति । क्रोडैः=शूकरैः, कृतक्रीडाः—कृता=विहिता, क्रीडा=केलिः यत्र ते; मदकलकुरङ्गीहृतमृगाः—मदेन कलाभिः=मनोहराभिः, मदोन्मत्ताभिरित्यर्थः । कुरङ्गीभिः=मृगीभिः, हृताः=स्वसमीपमानीताः, मृगाः=हरिणाः यत्र ते, परिभ्राम्यद्भृङ्गाः—परिभ्राम्यन्तः—परि=समन्ताद्, भ्राम्यन्तः=भ्रमणं कुर्वन्तः, भृङ्गाः=मधुपाः यत्र ते, परभृतकुलाक्रान्ततरवः—परभृतकुलेन=पिकसमूहेन, आक्रान्ताः=व्याप्ताः, तरवः=वृक्षाः यत्र ते, पौष्पैः=पुष्पसम्बन्धिभिः, परिमलैः=सुगन्धैः, सुरभितदिगन्ताः—सुरभितः=सुवासितः, दिगन्तः=क्षितिजं यत्र ते, एते=इमे, वनोद्देशाः=विपिनप्रान्ताः, कस्य=कस्य जनस्य, चेतः=मनः, विलसितविकारं— विलसितः=उज्जृम्भितः, विकारः=कामोद्वेगः यत्र तथाविधं, न विदधति=न कुर्वन्ति, सर्वस्यापि मनो विकृतं कुर्वन्त्येवेति भावः । पादत्रयवाक्यार्थानां वनोद्देशविकारविधायकत्वे हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गालङ्कारः । शिखरिणी वृत्तम् ॥४८॥

ज्योत्स्ना—जहाँ शूकर क्रीड़ा कर चुके हैं, मद के कारण मनोहर अर्थात् उन्मत्त हरिणियों के द्वारा हरिण अपने समीप लाये जा चुके हैं, चारो ओर भौंरे भ्रमण कर रहे हैं, कोकिलों के द्वारा वृक्ष आक्रान्त कर लिये गये हैं अर्थात् कोकिलों से वृक्ष व्याप्त हो गये हैं, पुष्पसम्बन्धी (पुष्पों से उठने वाले) सुगन्ध के द्वारा दिगन्त (आकाश) सुवासित कर दिया गया है—इस प्रकार के ये वन-प्रान्त किसके मन को विकार अर्थात् कामोद्वेग से विलसित (युक्त) नहीं कर देते ? अर्थात् सभी के मन को विकृत कर ही देते हैं ॥४८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतश्च—

वीचीनां निचयाः स्पृशन्ति जलदानुद्गन्धिसौगन्धिका
नृत्यत्केकिकदम्बकानि विकसद्वीरुन्धि रोधांसि च ।
धत्ते सैकतमुन्नदन्मदकलक्रौञ्चावलीसारसा-
नस्याः पद्मपरागपिङ्गपयसः सेव्यं च सिन्धोर्न किम् ॥४९॥

अन्वयः—उद्गन्धिसौगन्धिकाः वीचीनां निचयाः जलदान् स्पृशन्ति च रोधांसि नृत्यत्केकिकदम्बकानि विकसद्वीरुन्धि (शोभन्ते) सैकतम् उन्नदन्मदकलक्रौञ्चावलीसारसान् धत्ते । पद्मपरागपिङ्गपयसः अस्याः सिन्धोः किं न सेव्यम् ॥४९॥

कल्याणी—वीचीनामिति । उद्गन्धिसौगन्धिकाः—उत्कृष्टः गन्धः येषां तथाविधानि सौगन्धिकानि=कमलानि यत्र ते तथोक्ताः, वीचीनां=तरङ्गाणां, निचयाः=समूहाः, जलदान्=मेघान्, स्पृशन्ति=स्पर्शं कुर्वन्ति, च=तथा, रोधांसि=तटानि, नृत्यत्केकिकदम्बकानि—नृत्यन्ति=वृत्तिं कुर्वन्ति, केकिकदम्बकानि=मयूरवृन्दानि यत्र तथाविधानि, तथा विकसद्वीरुन्धि—विकसन्त्यः वीरुधः=लताः यत्र तथाविधानि च [शोभन्ते] तथा सैकतं=वालुकामयतटप्रदेशः, उन्नदन्मदकलक्रौञ्चावलीसारसान्—क्रौञ्चावल्यः=क्रौञ्चपक्षिपङ्क्तयश्च सारसाश्च क्रौञ्चावलीसारसाः, उन्नदन्तः=उत्कृष्टशब्दं कुर्वन्तः, मदकलाः=मदोन्मत्ताश्च क्रौञ्चावलीसारसास्तान्, धत्ते=धारयति । पद्मपरागपिङ्गपयसः—पद्मानां=कमलानां, परागैः=मकरन्दैः, पिङ्गं=पिङ्गलवर्णं, पयः=जलं यस्यास्तथाविधा, अस्याः=एतस्याः सिन्धोः=नद्याः, 'देशे नदविशेषेऽब्धौ सिन्धुर्ना सरिति स्त्रियाम्' इत्यमरः । किं न सेव्यं=किं न सेवनीयम्, सर्वमपि सेव्यमेवेत्यर्थः । नद्या वीचीनां जलदस्पर्शसम्बन्धेऽपि तत्सम्बन्धोक्तेरतिशयोक्तिः । पयसश्च स्वश्वेतत्वगुणत्यागपूर्वकं पद्मपरागपिङ्गत्वगुणग्रहणात्तद्गुणालङ्कारः । तयोश्च संसृष्टिः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४९॥

ज्योत्स्ना—और इधर—उत्कृष्ट गन्ध वाले कमलों से समन्वित तरंगों के समूह मेघों को स्पर्श कर रहे हैं, तट पर नृत्य करते हुए मयूरों के समूह और विकसित होती हुई लतायें सुशोभित हो रहीं हैं, बालुकामयी (रेतीली) तटभूमि उत्कृष्ट ध्वनि (कलरव) करती हुई मदमत्त क्रौञ्च पक्षिपंक्तियों एवं सारसों को धारण कर रही है । कमलों के परागों के कारण पिङ्गल (पीले) वर्ण के जल वाली इस नदी का क्या सेवन करने योग्य नहीं हैं ? ॥४९॥

तदुचितमिहाद्य दिवसमावासं कर्तुम्' इति विचिन्त्य भ्रूकोणसंज्ञाज्ञापितसेनासन्निवेशस्तत्कालमेव 'विरचयत तुरङ्गममन्दुराः सरसदीर्घदूर्वानलनीलनिम्नस्थलीषु, कुरुत कायमानानि सरित्सेव्यसैकतेषु, उन्नमयत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पटकुटीः कूलकाननेषु, आलानयत मदमत्तमतङ्गजान् मदकण्डूकपोलकाषसहेषु सरलसालसल्लकीसर्जार्जुनस्कन्धेषु, दूरमुत्सारयत शैवलशिलाजालकाष्ठकूटकण्टकपटलानि, समीकुरुत विषमभूभागान्' इति सेनापतिप्रमुखमुखरलोककलकलमुत्तालमुत्थितमसहमानस्तद्विरामावसरं प्रतिपालयन्नेकान्तेऽन्यतमप्रदेशे तस्याः सरितः सूक्ष्ममुक्ताफलक्षोदधवलबालुकापुलिनपृष्ठ एवास्थानगोष्ठीं बबन्ध ॥

कल्याणी—तदुचितमिति । तत्=तस्मात्, इह=अत्र, अद्यदिवसं=अस्मिन्दिने, 'कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे' इति द्वितीया । आवासं=निवासं कर्तुम्, उचितं=समीचीनम्, इति=एवं, विचिन्त्य=अवधार्य, भ्रूकोणसंज्ञाज्ञापितसेनासन्निवेशः—भ्रूकोणसंज्ञया=भ्रूकोणसंकेतेन, ज्ञापितः=सूचितः, सेनासन्निवेशः=सेनाव्यवस्था येन सोऽवनिपालो नलः, सरसदीर्घदूर्वानलनीलनिम्नस्थलीषु—सरसैः=स्निग्धैः दीर्घैश्च दूर्वानलैः=दूर्वाभिश्च नलैः=नलनामभिस्तृणैश्च, नीलनिम्नस्थलीषु=नीलवर्णासु निम्नभूमिषु, तुरङ्गममन्दुराः=वाजिशालाः, विरचयत=कुरुत, सरित्सेव्यसैकतेषु—सरितः=नद्याः, सेव्येषु=अधिष्ठानयोग्येषु, सैकतेषु=वालुकामयतटप्रदेशेषु, कायमानानि—कायो मात्यत्रेति कायमानं=तृणमयावासविशेषः, तानि कुटीरानित्यर्थः । कुरुत=विरचयत, कूलकाननेषु=तटवर्त्तिवनेषु, पटकुटीः=पटवेश्मानि, उन्नमयत=उत्तानयत, मदकण्डूकपोलकाषसहेषु—मदेन कण्डूः=कण्डूतिः यत्र तादृशानां कपोलानां काषः=घर्षणं, तं सहन्त इति तेषु, सरलसालसल्लकीसर्जार्जुनस्कन्धेषु—सरलानां सालानां सल्लकीनां सर्जानामर्जुनानां च तत्तद्वृक्षविशेषाणां, स्कन्धेषु=स्कन्धभागेषु, मदमत्तमतङ्गजान्=मदकलगजान्, आलानयत=बध्नीत, शैवलशिलाजालकाष्ठकूटकण्टकपटलानि—शैवलान्=शैवालान्, शिलाजालानि=प्रस्तरराशीन्, काष्ठकूटानि=काष्ठसमुदयान्, कण्टकपटलानि=कण्टकसमूहांश्च, दूरमुत्सारयत=दूरमपनयत, विषमभूभागान्=उन्नतावनतभूप्रदेशान्, समीकुरुत=समस्थान् कुरुत, इति=एवम्, उत्थितम्=उद्गतम्, उत्तालं=घोरं, सेनापतिप्रमुखमुखरलोककलकलं=सेनापतिप्रभृतिशब्दायमानजनकृतकोलाहलम्, असहमानः=सहितुमसमर्थः, तद्विरामावसरं—तेषां=सैनिकानां, कोलाहलस्य विरामावसरं=शान्त्यवसरं, प्रतिपालयन्=प्रतीक्षमाणः, एकान्ते=अन्यतमप्रदेशे, तस्याः=पूर्वोक्तायाः, सरितः=नद्याः, नर्मदाया इत्यर्थः । सूक्ष्ममुक्ताफलक्षोदधवलबालुकापुलिनपृष्ठे—सूक्ष्माः मुक्ताफलक्षोदा=मौक्तिकचूर्णा इव धवलबालुकाः=उज्ज्वलसिकताः, तासां पुलिनपृष्ठे=राश्योपरि, सैकततटतल एवेत्यर्थः । आस्थानगोष्ठीं=निवासगोष्ठीं, बबन्ध=व्यरचयत, विश्रामगृहं कृतवानिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अतः आज के दिन यहीं निवास करना उचित है।" यह निश्चित कर कटाक्ष-मात्र के संकेत से सेना के विश्राम की व्यवस्था को सूचित करने वाले उस राजा नल ने उसी समय "सरस और लम्बी-लम्बी दूब एवं नलनामक घास के कारण नीलवर्ण की नीचे की भूमि पर वाजिशालायें (घोड़ों के रहने का स्थान) बनाओ; रहने योग्य नदी के बालुकामय तटप्रदेशों पर घास की कुटीरें (झोपड़ियाँ) बनाओ; तटवर्ती वनों में कपड़े के घरों (तम्बुओं) को तानो; मद के कारण खुजलाहट वाले कपोलों के घर्षण (रगड़) को सहन करने में समर्थ सरल (सीधे) साल, सल्लकी, सर्ज और अर्जुन नामक वृक्षों के स्कन्धभाग (तनों) में मदमत्त हथियों को बाँधो; शैवालों, पत्थरों, काष्ठों एवं काँटों को दूर करो; ऊँची-नीची भूमि को समतल बनाओ।" इस प्रकार सेनापति आदि प्रमुख लोगों के बोलने पर सामान्य जन में उठे हुए भीषण कोलाहल को सहन न करते हुए, उन सैनिकों के कोलाहल के शान्त होने के अवसर की प्रतीक्षा करते हुए उस नर्मदा नदी के एक एकान्त स्थान पर अत्यन्त महीन मुक्ता मणियों के चूर्ण के समान शुभ्र (सफेद) रेतों के ऊपर अर्थात् बालुकामय तट के ऊपर ही (अपना) निवासगोष्ठी अर्थात् विश्रामगृह बनाया॥

अथ नातिदूरे पुरोऽस्य शीतशैवलचक्रवाले चरतश्चक्रवाककदम्बकस्य मध्ये कोऽप्युत्क्षिप्य पक्षपुटम्; उन्नमय्य ग्रीवाग्रम्, अनङ्गपरवशो दूरादुपसर्पन्ननुरागिणीं काञ्चिच्चक्रवाकीं, दर्शितचाटुचातुर्यश्चक्रवाकयुवा दृष्टिपथमवातरत्॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, नातिदूरे=समीप एव, पुरः=अग्रे, अस्य=एतस्य, नलस्येत्यर्थः। शीतशैवलचक्रवाले=शीतलशैवालमण्डले, चरतः=विचरतः, चक्रवाककदम्बकस्य=चक्रवाकाख्यपक्षिसमूहस्य, मध्ये=अभ्यन्तरे; कोऽपि=एकः, पक्षपुटं=पक्ष्मयुगलम्, उत्क्षिप्य=उन्नतं कृत्वा, ग्रीवाग्रं=ग्रीवाया अग्रभागम्, उन्नमय्य=ऊर्ध्वमुत्थाप्य, अनङ्गपरवशः=मदनविह्वलः, अनुरागिणीम्=अनुरागवतीं, काञ्चित्=कामप्येकां, चक्रवाकीं=चक्रवाकस्त्रियम्, उपसर्पन्=उपगच्छन्, दर्शितचाटुचातुर्यः—दर्शितं=प्रदर्शितं, चाटुचातुर्यं=चाटूक्तिकौशलं येन स तथाविधः, चक्रवाकयुवा=चक्रवाकतरुणः, दृष्टिपथमवातरत्=दृष्टिगोचरोऽभूत्॥

ज्योत्स्ना—तदनन्तर उसके (राजा नल के) समीप ही शीतल शैवालपुञ्ज में चारे (भोज्य पदार्थ) का भक्षण करते हुए चक्रवाक पक्षियों के मध्य से कोई एक अपने पंखों को फड़फड़ा कर, गर्दन को ऊपर की ओर उठाकर, कामविह्वल होकर किसी अनुरागिणी चक्रवाकी की ओर जाता हुआ, चाटुकारिता का प्रदर्शन करता हुआ चक्रवाक युवक दिखलाई पड़ा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपरे च चत्वारो राजहंसास्तामेव चक्रवाकीं कामयमानास्तमापतन्तमन्तरान्तरा निपत्य स्खलयाम्बभूवुः ॥

कल्याणी—अपरे चेति। अपरे=अन्ये च, चत्वारः=चतुःसंख्याकाः, राजहंसाः=राजहंसपक्षिणः, तामेव=उपरिनिर्दिष्टामनुरागिणीमेव चक्रवाकीं, कामयमानाः=अभिलषन्तः, आपतन्तं=स्वप्रियाभिमुखमागच्छन्तं, तं=चक्रवाकयुवानम्, अन्तरान्तरा=मध्ये मध्ये, निपत्य=आक्रम्य, स्खलयाम्बभूवुः=अवरुरुधुः। एतेन दमयन्तीमवाप्तुं प्रस्थितस्य नलस्येन्द्रादिलोकपालकृतान्तरायरूपो भाविवृत्तान्तः सूचितः ॥

ज्योत्स्ना—और उसी अनुरागिणी चक्रवाकी के चाहने वाले दूसरे चार राजहंसों ने आते हुए उस युवा चक्रवाक को बीच-बीच में आक्रमण कर रोक दिया ॥

तांश्चावलोक्य राजा विहसन्नासन्नवर्तिनं श्रुतशीलमावभाषे—'वयस्य ! विलोक्यतामिदमसमञ्जसम् ॥

कल्याणी—तांश्चेति। तान्=राजहंसान्, अवलोक्य=दृष्ट्वा च, विहसन् राजा=नलः, आसन्नवर्तिनं=समीपस्थं, श्रुतशीलं=श्रुतशीलाभिधं मित्रम्, आवभाषे=उक्तवान्—'वयस्य=सखे ! विलोक्यतां=दृश्यताम्, इदं=पुरो दृश्यमानम्, असमञ्जसम्=अयुक्तम्' ॥

ज्योत्स्ना—उन (राजहंसों) को देखकर हँसते हुए राजा (नल) ने समीपवर्ती श्रुतशील से कहा—'मित्र ! इस विषमता को तो देखो ॥

अमी राजहंसाः सतीष्वपि स्वजात्युचितानुचरीषु कथमन्यासक्तामपीमां चक्रवाककामिनीं कामयन्ते ? न खल्वेषामियमनङ्गभूमिः ॥

कल्याणी—अमीति। अमी=एते, राजहंसाः=राजहंसपक्षिणः, स्वजात्युचितानुचरीषु=हंसजातियोग्यहंसीषु, सतीष्वपि=वर्तमानास्वपि, कथं=कस्माद्धेतोः, अन्यासक्तामपि=अपरानुरक्तामपि, इमाम्=एताम्, चक्रवाककामिनीं=चक्रवाकीं, कामयन्ते=अभिलषन्ति। न खलु एषां=राजहंसानाम्, इयं=एषा चक्रवाकी, अनङ्गभूमिः=कामपात्रम्। यथा सजातीयत्वाच्चक्रवाकी चक्रवाकोचिता तथैव मनुष्यजातेर्नलस्य कृते मानुषी दमयन्त्युचिता। यथा सा चक्रवाकी विजातीयत्वाद्राजहंसानामनुचिता तथा दमयन्त्यपि लोकपालानामनुचितेति भावः। अप्रस्तुतप्रशंसाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—ये राजहंस अपनी जाति वाली योग्य अनुचरी (अनुसरण करने वाली) राजहंसियों के रहते हुए भी दूसरे पर आसक्त इस चक्रवाक-कामिनी की कामना क्यों कर रहे हैं ? निश्चय ही इन राजहंसों के लिए यह (चक्रवाकी) कामभूमि नहीं है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथवा—

किमु कुवलयनेत्राः सन्ति नो नाकनार्य-
स्त्रिदिवपतिरहल्यां तापसीं यत्सिषेवे ।
हृदयतृणकुटीरे दीप्यमाने स्मराग्ना-
वुचितमनुचितं वा वेत्ति कः पण्डितोऽपि ॥५०॥

अन्वयः—किमु कुवलयनेत्राः नाकनार्यः नो सन्ति, यत् त्रिदिवपतिः तापसीम् अहल्यां सिषेवे । हृदयतृणकुटीरे स्मराग्नौ दीप्यमाने पण्डितः अपि कः उचितम् अनुचितं वा वेत्ति ॥५०॥

कल्याणी—किमु इति । किमु इत्याश्चर्ये प्रश्ने वा । कुवलयनेत्राः—कुवलय इव=नीलोत्पल इव, नेत्रे=नयने यासां तथाविधाः, नाकनार्यः=स्वर्गस्त्रियः, नो=नैव, सन्ति=वर्तन्ते, यत् त्रिदिवपतिः=स्वर्गाधिपतिरिन्द्रः, तापसीं=तपस्विनीम्, अहल्यां=गौतमभार्यां, सिषेवे=उपबुभुजे, हृदयतृणकुटीरे—हृदयमेव तृणकुटीरस्तत्र, हृदयरूपी-पर्णकुटीरे इति भावः । स्मराग्नौ=कामानले, दीप्यमाने=उज्जृम्भमाणे, पण्डितोऽपि=बुधोऽपि, कः=कः जनः, उचितं=कृत्यम्, अनुचितम्=अकृत्यं वा, वेत्ति=जानाति, न कोऽपीत्यर्थः । इत्यप्रस्तुतप्रशंसामूलोऽर्थान्तरन्यासोऽलङ्कारः । मालिनी वृत्तम् ॥५०॥

ज्योत्स्ना—अथवा, क्या नीलकमलसदृश नयनों वाली स्वर्गसुन्दरियाँ नहीं थीं, जो स्वर्ग के स्वामी इन्द्र ने (गौतमपत्नी) अहल्या का सेवन किया अर्थात् अहल्या के साथ रमण किया ? हृदयरूपी तृणकुटीर (घास से निर्मित झोंपड़ी) में कामरूपी अग्नि के उद्दीप्त होने पर क्या विद्वान् व्यक्ति भी उचित अथवा अनुचित को जान पाता है ? अर्थात् कामसन्तप्त कोई भी व्यक्ति उचित-अनुचित का विचार नहीं कर पाता ॥५०॥

एवंवादिनि राजनि, अकस्मात्कोमलकण्ठकुहरप्रेङ्खोलनालङ्कार-सुन्दरोऽमन्दमूर्च्छनावच्छिन्नसरसस्वरस्वरूपः प्रसन्नप्रयुज्यमानतानविशेषा-भिव्यक्तिस्पष्टश्रुतिसुभगो गगने गान्धारग्रामगामी गीतध्वनिरुदचरत् ॥

कल्याणी—एवंवादिनीति । राजनि=नले, एवंवादिनि=एवमुक्तवति सति, अकस्मात्=सहसा, कोमलकण्ठकुहरप्रेङ्खोलनालङ्कारसुन्दरः—कोमलकण्ठ-कुहरस्य=कोमलकण्ठकन्दरस्य, प्रेङ्खोलनेन=प्रदोलनेन, अलङ्कारैः=स्वरोत्थानप्रकारैः, सुन्दरः=मनोहरः, कोमलकण्ठकन्दरेण यथोचितोच्चार्यमाणत्वात्प्रकटितैः स्वरोत्थान-प्रकारैः सुन्दर इत्यर्थः । अमन्दमूर्च्छनावच्छिन्नसरसस्वरस्वरूपः=अमन्दमूर्च्छनाभिः=अनल्पस्वरारोहावरोहप्रकारैः, अवच्छिन्नाः=युक्ताः, अतएव सरसाः=मधुराः, ये स्वराः=सप्तस्वराः, तत्स्वरूपः=तद्विशिष्ट इत्यर्थः । प्रसन्नप्रयुज्यमानतानविशेषा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिव्यक्तिस्पष्टश्रुतिसुभगः—प्रसन्नः=विशुद्धः, प्रयुज्यमानः=उच्चार्यमाणः, तानविशेषः=विलम्बितस्वरविशेषः, तस्य अभिव्यक्त्या=प्रकटनेन, स्पष्टं यथा तथा श्रुतिसुभगः=श्रवणसुखदः, गान्धारग्रामगामी—गान्धारो नाम सप्तसु प्रधानस्वरेषु तृतीयः स्वरः, ग्रामः=स्वरक्रमः, गान्धारग्रामं गच्छतीति तथोक्तः, गान्धारग्रामानुसारीत्यर्थः। गगने=आकाशे, गीतध्वनिः=गायनरवः, उदचरत्=उत्थितोऽभवत् ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल के इस प्रकार कहते ही अचानक कोमल कण्ठरूपी कन्दरा से निकलने के कारण अलंकारों (स्वरों के उठने के प्रकार) से सुन्दर, तीव्र मूर्च्छनाओं (स्वरों के आरोह-अवरोह क्रमों) से समन्वित, अतएव मधुर स्वरों के समान विशिष्ट, सम्यक् प्रकार से प्रयुक्त किये जा रहे तानविशेष (विलम्बित स्वरविशेष) की अभिव्यक्ति के कारण स्पष्टतया कर्णसुखद गान्धारपद्धति (का अनुसरण करने वाली) की गीतध्वनि आकाश में गूंज उठी ॥

अवाहीच्च चलदलिपटलपीयमानापूर्वपरिमलोद्गारिपारिजातमञ्जरीमकरन्दबिन्दुवर्षवाही वायुः ॥

कल्याणी—अवाहीदिति। चलदलिपटलपीयमानापूर्वपरिमलोद्गारिपारिजातमञ्जरीमकरन्दबिन्दुवर्षवाही—चलता=भ्रमता, अलिपटलेन=भ्रमरसमूहेन, पीयमानाः=आस्वाद्यमानाः, ये अपूर्वपरिमलोद्गारिपारिजातमञ्जरीमकरन्दबिन्दवः=विचित्रसुगन्धवर्षिपारिजातमञ्जरीणां पुष्परसकणाः, तद्वर्षवाही=तद्वृष्टिं वहतीत्येवंशीलः, वायुः=पवनश्च, अवाहीत्=वाति स्म ॥

ज्योत्स्ना—और सञ्चरण करते हुए भ्रमरों के समूहों द्वारा पान किये हुए विचित्र सुगन्ध वाले परिजात पुष्प की मञ्जरियों के मकरन्द-बिन्दुओं (परामकणों) की वर्षा करने वाली हवा चलने लगी ॥

अथ कौतुकोत्तानिताननेन नरपतिनाप्यदृश्यत, शातकुम्भभङ्गपिशङ्गप्रभामण्डलमध्यवर्तिनः प्रधानपुरुषस्याग्रे गृहीतजात्यजाम्बूनददीर्घदण्डः कुण्डलालङ्कारवानुन्मिषन्मन्दारमुकुलमालामण्डितमौलिरवतरन्नम्बरान्निर्विमेषः सुवेशः पुरुषः ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, शातकुम्भभङ्गपिशङ्गप्रभामण्डलमध्यवर्तिनः—शातकुम्भभङ्गस्य=स्वर्णखण्डस्य इव या पिशङ्गप्रभा=पीतकान्तिः, तन्मण्डलमध्यवर्तिनः, प्रधानपुरुषस्य=प्रमुखलोकस्य, अग्रे=समक्षं, गृहीतजात्यजाम्बूनददीर्घदण्डः—गृहीतः जात्यस्य=उत्कृष्टस्य, जाम्बूनदस्य=सुवर्णस्य, दीर्घः दण्डः येन स तथोक्तः, कुण्डलालङ्कारवान्=कुण्डलधारी, उन्मिषन्मन्दारमुकुलमालामण्डितमौलिः—उन्मिषतां=विकसतां, मन्दारमुकुलानां=मन्दारकुड्मलानां, मालया=स्रजा, मण्डितः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलङ्कृतः, मौलिः=शिरः यस्य स तथाविधः, निर्निमेषः=निमेषरहितः, सुवेशः—सुष्ठु वेशः=परिधानं यस्य सः, अम्बरात्=आकाशात्, अवतरन्=अधः आगच्छन्, पुरुषः=जनः, कौतुकेन=औत्सुक्येन, औत्तानितम्=ऊर्ध्वीकृतम्, आननं=मुखं येन तेन, नरपतिना=भूपतिना नलेन अपि, अदृश्यत=दृष्टः ॥

ज्योत्स्ना—तदनन्दर स्वर्णखण्ड के समान पीतवर्ण वाले कान्तिपुञ्ज के मध्य स्थित प्रधान पुरुष के आगे उत्कृष्ट सुवर्ण के लम्बे दण्ड को धारण किये हुए, कुण्डल धारण करने वाले, विकसित होती हुई मन्दार-कलियों की माला से शिर को अलंकृत किये हुए, निमेषरहित अर्थात् पलकों से रहित, सुन्दर परिधान वाले, आकाश से उतरते हुए किसी पुरुष को उत्सुकता के कारण ऊपर की ओर मुँह उठाये हुए राजा नल ने भी देखा ॥

अवतीर्य च सोऽतिविस्मयविस्फारितविलोचनमवनिपालमवादीत्—निषधेश्वर ! त्वरितमुत्तिष्ठ । अर्घाय सज्जो भव । किं न पश्यसि—

कल्याणी—अवतीर्येति । अवतीर्य=तत्रागत्य च, सः=पुरुषः, अतिविस्मयविस्फारितविलोचनम्—अतिविस्मयेन=महदाश्चर्येण, विस्फारिते=विस्तारिते, विलोचने=नयने यस्य तम्, अवनिपालं=राजानं नलम्, अवादीत्=अवोचत, हे निषधेश्वर=निषधराज ! त्वरितं=शीघ्रम्, उत्तिष्ठ=उत्थितो भव, प्रत्युद्गच्छेत्यर्थः । अर्घाय=पूजोपहारं दातुं, सज्जः=उद्यतः भव । किं न पश्यसि=किन्न विलोकयसि—

ज्योत्स्ना—और उत्तर कर उस (अलौकिक पुरुष) ने आश्चर्य के कारण फैली हुई आँखों वाले पृथ्वीपालक (राजा नल) से कहा—"हे निषधराज ! शीघ्र उठो । अर्घ्य अर्थात् पूजन के लिए तैयार हो जाओ । क्या देखते नहीं हो कि—

अवतरति घृताचीस्कन्धविन्यस्तहस्तः
श्रुतिसुखकृतगीते किन्नरे दत्तकर्णः ।
किमपि सपरिरम्भं रम्भयारभ्यमाण-
व्यजनविधिरधीशः स्वर्गिणामेष देवः ॥५१॥

अन्वयः—घृताचीस्कन्धविन्यस्तहस्तः श्रुतिसुखकृतगीते किन्नरे दत्तकर्णः किमपि सपरिरम्भं रम्भया आरभ्यमाणव्यजनविधिः स्वर्गिणाम् अधीशः एषः देवः अवतरति ॥५१॥

कल्याणी—अवतरतीति । घृताचीस्कन्धविन्यस्तहस्तः—घृताची=घृताचीनाम्न्या अप्सरसः, स्कन्धे=अंसप्रदेशे, विन्यस्तः=धृतः, हस्तः=करः येन सः, श्रुतिसुखकृतगीते—श्रुतिसुखं=श्रवणसुखदं, कृतं=विहितं, गीतं=गानं येन तस्मिन्, किन्नरे=किम्पुरुषे, दत्तकर्णः—दत्तौ कर्णौ येन सः, किमपि=अनिर्वचनीयं, सपरि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रम्भम्=आलिङ्गनसहितं यथा तथा; रम्भया=रम्भाम्न्याऽप्सरसा, आरभ्यमाण-व्यजनविधिः—आरभ्यमाणः=प्रारभ्यमाणः, व्यजनविधिः=व्यजनक्रिया यस्य सः; स्वर्गिणां=देवानाम्, अधीशः=अधिपतिः, एषः=अयं, देवः=इन्द्रः, अवतरति=अत्रागच्छति । मालिनी वृत्तम् ॥५१॥

ज्योत्स्ना—घृताची नामक अप्सरा के कन्धे पर हाथ रखे हुए, कानों को सुखकर अर्थात् मधुर लगने वाले गीतों को गाने वाले किन्नरों की ओर कान लगाये हुए, अनिर्वचनीय आलिङ्गन के साथ रम्भानामक अप्सरा के द्वारा पंखा झले जाते हुए देवताओं के अधिपति यह इन्द्र (आकाश से) उतर रहे हैं ॥५१॥

अपि च—

विरचितपरिवेषाः स्वाभिरङ्गप्रभाभि-
र्भुवनवहनभारोद्धारधुर्यांसपीठाः ।
उरसि परिविलोलद्दीर्घदामान एते
यमवरुणकुबेराः स्वामिनो लोकपालाः ॥५२॥

अन्वयः—स्वाभिः अङ्गप्रभाभिः विरचितपरिवेषाः भुवनवहनभारोद्धार-धुर्यांसपीठाः उरसि परिविलोलत् दीर्घदामानः एते स्वामिनः यमवरुणकुबेराः लोकपालाः (अवतरन्ति) ॥५२॥

कल्याणी—विरचितेति । स्वाभिः=स्वकीयाभिः, अङ्गप्रभाभिः=देह-कान्तिभिः, विरचितपरिवेषाः—विरचितः=कृतः, परिवेषः=दीप्तिमण्डलं यैस्ते, भुवनवहनभारोद्धारधुर्यांसपीठाः—भुवनानां=लोकानां, वहनभारस्य उद्धारे=धारणे; धुर्यं=समर्थम्, अंसपीठं=स्कन्धप्रदेशः येषां ते, उरसि=वक्षःस्थले, परिविलोलत्=परिलुठद्, दीर्घदामानः—दीर्घं=लम्बमानं, दाम=पुष्पस्रक् येषां ते, एते=इमे, स्वामिनः=देवाः, यमवरुणकुबेराः—यमश्च वरुणश्च कुबेरश्च, लोकपालाः=दिक्पालाः [अपि], तेनैव सहावतरन्तीति भावः । मालिनी वृत्तम् ॥५२॥

ज्योत्स्ना—और भी, अपने अंगों की कान्ति से दीप्तिमण्डल बनाये हुए, भुवनों के भार को धारण करने में समर्थ कन्धे वाले, वक्षःस्थल पर डोलती हुई लम्बी मालाओं वाले ये भिन्न-भिन्न लोकों के पालक यम, वरुण और कुबेर (भी उतर रहे हैं) ॥५२॥

राजा तु तदाकर्ण्य ससम्भ्रमोत्थानवशवल्गितोत्तरीयाञ्चलस्खलत्कन-ककङ्कणरणत्कारमुखरितमाधाय मूर्ध्नि संपुटितपाणिपल्लवयुगलमाश्चर्यर-सरभसवशमुच्छ्वास्यमानसर्वाङ्गपुलकः कतिपयपदान्यभिमुखं सह परिजने-नोच्चलितवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी— राजेति। राजा=नलस्तु, तत्=पुरुषवचः, आकर्ण्य=श्रुत्वा, ससम्भ्रमोत्थानवशवल्गितोत्तरीयाञ्चलस्खलत्कनककङ्कणरणत्कारमुखरितं— ससंभ्रमं=सत्वरम्, उत्थानवशाद् वल्गितेन=उच्छलितेन, उत्तरीयाञ्चलेन=उत्तरीयवस्त्राञ्चलेन, स्खलतः=कम्पमानस्य, कनककङ्कणस्य=सुवर्णनिर्मितकङ्कणाभूषणस्य, रणत्कारेण=ध्वनिना, मुखरितम्=अनुनादितं, संपुटितपाणिपल्लवयुगलं=मुकुलीकृतकरपल्लवद्वयं, मूर्ध्नि=शिरसि, आधाय=स्थापयित्वा, आश्चर्यरसरभसवशम्— आश्चर्यरसेन=कौतुकरसेन, रभसवशं=वेगवशम्, उच्छ्वास्यमानसर्वाङ्गपुलकः— उच्छ्वास्यमानः=उज्जन्यमानः, सर्वाङ्गपुलकः=सकलेष्वङ्गेषु रोमाञ्चः यस्य सः, परिजनेन=अनुचरवर्गेण, सह=साकम्, अभिमुखं=पुरतः, कतिपयपदानि उच्चलितवान्=उच्चचाल, प्रत्युद्गतवानित्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना— राजा नल तो यह सुनकर हड़बड़ा कर उठने के कारण उड़ते हुए उत्तरीय वस्त्र अर्थात् दुपट्टे के आँचल से कम्पमान स्वर्णकङ्कण की ध्वनि से मुखरित जुड़े हुए हाथों को माथे पर रखकर, वेग (शीघ्रता) के कारण सर्वाङ्ग पुलकित परिजनों (सेवकों) के साथ सामने कुछ पग आगे की ओर बढ़ गये ॥

अथ सकलसुरशिरःशेखरायमाणचरणरेणुरनेकनाककामिनीकुचकुम्भकुङ्कुममञ्जरीमुद्राङ्कितविपुलवक्षःस्थलीदृश्यमानमहानीलमणिमण्डननिभभव्यवृत्रशस्त्रव्रणः, श्रवणशिखरारोपितप्रत्यग्रपारिजातमञ्जरीगलद्बहुलकिञ्जल्ककणानुपान्ते गायतस्तुम्बुरोः साक्षादमृतायमानगीतरसतुषारानिव परिपूर्णकर्णोद्गीर्णान् कपोलपालिलग्नानुद्वहन्, अनवरतशचीचुम्बनसंक्रान्ताम्बूललाञ्छनायमानाच्छाच्छहरिचन्दननिरुद्धबन्धुरस्कन्धसन्धिः, अन्धक इव हारयष्ट्यास्फालितवक्षःस्थलः, विन्ध्यगिरिरिव सहस्राक्षः, पन्नगेन्द्र इव कुण्डली पातालमुद्भासमानश्च, कलिकालशापावतीर्णसरस्वतीगीतप्रवाह इव मत्तमातङ्गगामी, दिशि दिशि विकीर्णकनककपिशांशुरंशुमानिवाविकृतपद्मरागारुणप्रभामण्डलमण्डनः, सह लोकपालैर्भगवान्पुरन्दरः पूर्वदिग्भागाम्बरादवातरत् ॥

कल्याणी—अथ सकलेति। अथ=अनन्तरं, सकलसुरशिरःशेखरायमाणचरणरेणुः – सकलसुराणां=समस्तदेवानां, शिरःस=मूर्धसु, शेखरायमाणः=शिरोभूषणमिवाचरन्, चरणरेणुः=पादरजः यस्य सः, अनेकनाककामिनीकुचकुम्भकुंकुममञ्जरीमुद्राङ्कितविपुलवक्षःस्थलीदृश्यमानमहानीलमणिमण्डननिभभव्यवृत्रशस्त्रव्रणः — अनेकासां=विविधानां, नाककामिनीनां = स्वर्गरमणीनां, कुचकुम्भकुङ्कुममञ्जरीभिः=स्तनकलशेषु निर्मितकुङ्कुममञ्जरीभिः, मुद्राङ्किता=चिह्निता, या विपुलवक्षःस्थली = विस्तृतवक्षःप्रदेशः, तस्यां दृश्यमानानि महानीलमणिमण्डन-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निभानि = महानीलमणिनिर्मितालङ्कारसदृशानि, भव्यानि = सुन्दराणि, वृत्रस्य = वृत्रासुरस्य, शस्त्रव्रणानि = शस्त्रकृतक्षतानि यस्य सः, कपोलपालिलग्नान् = गण्डस्थलसंसक्तान्, श्रवणशिखरारोपितप्रत्यग्रपारिजातमञ्जरीगलद्बहलकिञ्जल्ककणान् — श्रवणशिखरे = कर्णाग्रभागे, आरोपिता = धृता, या प्रत्यग्रपारिजातमञ्जरी — प्रत्याग्रा = अभिनवा, पारिजाततरुमञ्जरी, ततः गलतः = पततः, बहलान् = प्रचुरान्, किञ्जल्ककणान् = परागकणान्, उपान्ते = समीपे, गायतः = गानं कुर्वतः, तुम्बुरोः = तुम्बुरुनाम्नोः देवगायकस्य, साक्षादमृतायमानगीतरसतुषारान् — साक्षादमृतमिवाचरद् यद् गीतं, तस्य रसतुषारान् = रसबिन्दून्, परिपूर्णकर्णोद्गीर्णान् — परिपूर्णकर्णाभ्याम्, उदगीर्णान् = बहिःप्रस्तुतान्, इव उद्वहन् = धारयन् [इत्युत्प्रेक्षा]; अनवरतशचीचुम्बनसङ्क्रान्ततांबूललाञ्छनायमानाच्छाच्छहरिचन्दननिरुद्धबन्धुरस्कन्धसन्धिः — अनवरतं = सततं, शच्याः = इन्द्राण्याः, चुम्बनेन संक्रान्तं = न्यस्तं, यत् ताम्बूललाञ्छनं = ताम्बूलचिह्नं, तदिवाचरत् अच्छाच्छम् = अतिभव्यं, हरिचन्दनं = तद्रस इत्यर्थः । तेन निरुद्धः = दिग्धः, बन्धुरः = मनोज्ञः, स्कन्धसन्धिः = स्कन्धसन्धानं यस्य सः, अन्धकः = अन्धकाख्योऽसुरः, स इव हारयष्ट्या = मुक्तामालया आस्फालितवक्षःस्थलः — आस्फालितं = पीडितं, युक्तमिति यावत् । वक्षःस्थलं यस्य सः, अन्धकपक्षे — हरस्येयं हारी = यष्टिः शूललक्षणा तया, आस्फालितं = विदारितं वक्षःस्थलं यस्य सः, विन्ध्यगिरिरिव = विन्ध्यपर्वत इव, सहस्रमक्षीणि यस्य स सहस्राक्षः = सहस्रनेत्रः ['बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्' इति समासान्तः षच्], विन्ध्यगिरिपक्षे — सहस्रशब्दः प्राचुर्यवाचकः, सहस्रम् अक्षाः = विभीतकाः तरुविशेषा यत्र सः । पन्नगेन्द्रः = शेषनाग इव, कुण्डली — कुण्डलं = कर्णालङ्कारः, तद्वानित्यर्थः । तथा [पाता + अलम् + उद्भासमानश्च] — पाता = रक्षिता, अलम् = अत्यर्थम्, उद्भासमानः = रोचमानश्च, पन्नगेन्द्रपक्षे — कुण्डली = कुण्डलाकारः तथा [पातालमुद् + भासमानश्च] — पाताले मोदते इति पातालमुत्, भासमानः = दीप्यमानश्च, कलिकालशापावतीर्णसरस्वतीगीतप्रवाह इव — कलिकाले = कलियुगे, शापात् = दधीचिशापवशात्, अवतीर्णायाः = धृतावतारायाः, सरस्वत्याः = सरस्वतीदेव्याः, गीतप्रवाह इव = गायनगतिरिव, मत्तमातङ्गगामी — मत्तमातङ्गेन = मत्तगजेन, ऐरावतेनेत्यर्थः । गच्छति = चलतीत्येवंशीलः, पक्षे — मत्तमातङ्गः = क्षीबचाण्डालः तं गच्छतीत्येवंशीलः । दिशि दिशि = प्रतिदिशं, विकीर्णकनककपिशांशुरंशुमानिव — विकीर्णाः = प्रसृताः, कनकस्येव कपिशाः = पीताः, अंशवः = किरणाः येन सः, अंशुमानिव = सूर्य इव, अविकृतपद्मरागारुणप्रभामण्डलमण्डनः — अविकृतं = विशुद्धं, पद्मरागस्य = पद्मराग मणेः, यत् अरुणं = लोहितं, प्रभामण्डलं तन्मण्डनं यस्य सः, पक्षे — अविकृतः = विशुद्धः, पद्मानां = कमलानां, रागोऽरुणस्य प्रभामण्डलं = बिम्बम्, एतानि मण्डनं यस्य सः [श्लेषानुप्राणितोपमा] । पुराणादौ किल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रूयते—पुरा सरस्वतीदधीच्योर्देवत्वविषये संवादे जायमाने क्रुद्धेन दधीचिना शप्ता सती सरस्वती कलिकाले चाण्डालकुलेऽवततार। अतएव कलिकाले चाण्डाला एव मधुरं गायन्तीति विवृतिनामकटीका। तथाविधो भगवान्=ऐश्वर्यसमन्वितः, पुरन्दरः=इन्द्रः, लोकपालैः=यमादिभिः, सह=साकं, पूर्वदिग्भागाम्बरात्—पूर्वदिग्भागस्य, अम्बरात्=आकाशात्, अवातरत्=अवतीर्णोऽभवत्॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् समस्त देवताओं के शिरों पर शोभित शिरोभूषणस्वरूप चरणरज वाले; अनेकों स्वर्गसुन्दरियों के स्तनकलशों पर निर्मित कुंकुममञ्जरी के चिह्नों से चिह्नित विशाल वक्षःस्थल पर दिखाई पड़ रहे महानील मणि से निर्मित आभूषणों के समान सुन्दर लग रहे वृत्रासुर के शस्त्रों द्वारा किये गये घाव के चिह्न वाले; गण्डस्थल (कपोल-प्रदेश) पर संसक्त (चिपके हुए) कान के अग्रभाग पर धारण की गई नूतन परिजात-मञ्जरी से झरते हुए परागकणों को समीप में ही गाते हुए तुम्बुरुनामक देवगायक के साक्षात् अमृतस्वरूप गीत के रसबिन्दूओं के कानों में भरकर बाहर निकल कर बहते हुए के समान धारण किये हुए; निरन्तर इन्द्राणी के चुम्बन से लगे हुए ताम्बूल-चिह्न के समान अत्यन्त भव्य हरिचन्दन-रस से भरे हुए सुन्दर स्कन्धसन्धि (कन्धों के जोड़) वाले; हारयष्टि (भगवान् शंकर के त्रिशूल) से विदारित वक्षःस्थल वाले अन्धकासुर के समान हारयष्टि (मुक्तामाला) से समन्वित वक्षःस्थल वाले; प्रचुर अक्ष (रुद्राक्ष-वृक्ष) से समन्वित विन्ध्य पर्वत के समान हजारों अक्षों अर्थात् नेत्रों वाले; कुण्डलाकार, पाताल में प्रसन्न रहने वाले और दीप्तिमान सर्पराज के समान कुण्डलनामक आभूषण धारण किए हुए, पूर्ण रक्षक और भव्य कान्तिमान; (महर्षि दधीचि के) शाप के कारण कलिकाल में अवतार धारण की हुई मत्तमातङ्गगामी (मदमत्त चाण्डालों का संगत करने वाली) सरस्वती देवी के गीतप्रवाह के समान मत्तमातंगगामी (मद से मतवाले) हाथी (ऐरावत) पर बैठकर चलने वाले; सभी दिशाओं में सुवर्ण के समान पीली किरणें बिखेरने (फैलाने) वाले; विशुद्ध कमलों के लाल प्रभामण्डल से अलंकृत सूर्य के समान विशुद्ध पद्मराग मणि के अरुण प्रभामण्डलरूप मण्डल (अलंकार) वाले भगवान् (समस्त ऐश्वर्यों वाले) इन्द्र (यम आदि) लोकपालों के साथ पूर्व दिशा के आकाश से अवतरित हुए।

विमर्श—पुराणों में कहा गया है कि पूर्व में सरस्वती और दधीचि के मध्य देवत्वविषयक वार्ता में क्रुद्ध दधीचि द्वारा शाप देने के फलस्वरूप सरस्वती ने कलिकाल में चाण्डाल के कुल में अवतार लिया, जिसके परिणामस्वरूप यह कहा जाता है कि कलिकाल में मधुर गीतों का प्रवाह केवल चाण्डालों में ही प्राप्त होता है। इसी कथा के आधार पर कवि ने यहाँ गीतप्रवाह को 'मत्तमातङ्गगामी' कहा है॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवतीर्य चक्षुषां सहस्रेणोन्मीलनीरजवनानुकारिणा निरूप्य पादयोः पुरः पतितमष्टाङ्गाश्लिष्टभूतलमिमम्, ऐरावतकुम्भकूटास्फालनकर्कशाङ्गुलिना, दुर्दान्तदैत्यदानववधूवैधव्यदानशालामूलस्तम्भेन, शचीकुचकलशसंस्पर्शसंक्रान्तकुङ्कुमपत्रवल्लीकेन, दक्षिणपाणिना, सहेलमुन्नमय्य मूर्ध्नि पस्पर्श ॥

कल्याणी—अवतीर्येति । अवतीर्य=अवतरणं कृत्वा, उन्मीलन्नीरजवनानुकारिणा—उन्मीलतः=विकसतः, नीरजवनस्य=कमलवनस्य, अनुकरोतीति तेन, तत्सदृशेनेत्यर्थः । चक्षुषां=नेत्राणां, सहस्रेण, पादयोः=चरणयोः, पुरः=अग्रे पतितम्; अष्टाङ्गाश्लिष्टभूतलम्—अष्टाङ्गैः, आश्लिष्टं=संस्पृष्टं, भूतलं=पृथ्वीतलं येन तथाविधम्, इमं=नृपं नलं, निरूप्य=निपुणं निरीक्ष्य, ऐरावतकुम्भकूटास्फालनकर्कशाङ्गुलिना—ऐरावतस्य=इन्द्रगजस्य, यः कुम्भकूटः=कुम्भस्थलाग्रभागः, तस्य आस्फालनेन=संघर्षणेन, कर्कशाः=कठिनाः, अङ्गुलयः यस्य तेन, दुर्दान्तदैत्यदानववधूवैधव्यदानशालामूलस्तम्भेन—दुर्दान्ताः=प्रबलाः, ये दैत्यदानवाः, तेषां वधूवः=स्त्रियः, तासां वैधव्यस्य दानशाला, तस्याः मूलस्तम्भेन=आधारस्तम्भेन, दुर्दान्तदैत्यदानवसंहारकेणेत्यर्थः । शचीकुचकलशसंस्पर्शसंक्रान्तकुंकुमपत्रवल्लीकेन—शच्याः=इन्द्राण्याः, कुचकलशसंस्पर्शेन=पयोधरकुम्भसंश्लेषेन, सङ्क्रान्ता=विन्यस्ता, कुङ्कुमपत्रवल्ली=कुङ्कुमकृतपत्ररचना यत्र तादृशेन, दक्षिणपाणिना=दक्षिणकरेण, सहेलं=सलीलं, शीघ्रमनायासमिति यावत् । उन्नमय्य=उत्थाप्य, मूर्ध्नि=शिरसि, पस्पर्श=स्पृष्टवान् । एवं कृत्वा स्वप्रीतिं प्रदर्शयामासेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—और उतर कर विकसित होते हुए कमलवनों के समान हजारो नेत्रों के द्वारा चरणों के सामने गिर कर आठो अंगों से भूमि का स्पर्श (साष्टांग प्रणाम) किये हुए उस (राजा नल) को सम्यक् प्रकार से देखकर ऐरावत के कठोर कुम्भस्थल के अग्रभाग के घर्षण (स्पर्श) से कठोर अंगुलियों वाले, दुर्दान्त दैत्य-दानवों की स्त्रियों के लिए वैधव्य की दानशाला के आधारस्तम्भ वाले अर्थात् प्रबल दैत्यों एवं राक्षसों की स्त्रियों को वैधव्य प्रदान करने वाले, शची (इन्द्राणी) के स्तनकलशों के स्पर्श से कुंकुमरचित पत्ररचना से चिह्नित दाहिने हाथ से शीघ्र ही उठाकर (उसके) शिर को स्पर्श किया अर्थात् राजा नल के शिर पर इन्द्र ने अपना दाहिना हाथ फेरा ॥

कृत्वा च कुशलप्रश्नालापव्यवहारानुच्चैः काञ्चनासनं समुल्लसन्मणिमयूखमञ्जरीजालजटिलमवनिभुजा स्वभुजोपनीतमध्यतिष्ठत् ॥

कल्याणी—कृत्वेति । च=तथा, कुशलप्रश्नालापव्यवहारान्=कुशलक्षेमवार्ताः, कृत्वा=सम्पाद्य, अवनिभुजा=भूपालेन नलेन, स्वभुजाभ्याम्=आत्मबाहुभ्याम्, उपनीतं=आनीतं, समुल्लसन्मणिमयूखमञ्जरीजालजटिलं—समुल्लसता=विकसता,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मणिमयूखमञ्जरीजालेन=मञ्जरीसदृशेन मणिकिरणपुञ्जेन, जटिलं=युक्तं, व्याप्तमित्यर्थः। उच्चैः=उत्तुङ्गं, काञ्चनासनं=सुवर्णमयासनम्, अध्यतिष्ठत्=अधिष्ठितवान्। 'अधिशीङ्स्थासां कर्म' इत्याधारस्य कर्मत्वम्, कर्मणि च द्वितीया ॥

ज्योत्स्ना—और कुशल-प्रश्नविषयक व्यावहारिक वार्तालाप करने के पश्चात् राजा (नल) द्वारा अपने हाथों से (उठाकर) लाये गये, विकसित हो रही मञ्जरी के समान मणियों की किरणों से समन्वित ऊँचे सुवर्णमय आसन पर अधिष्ठित हुए ॥

उपविष्टेषु यथोचितासन्नमासनेषु यन्मवरुणकुबेरप्रमुखेषु देवेषु क्रमेण कृतोचिताचारः पुरः पृथ्वीपृष्ठ एव विनयान्निषद्य निषधेश्वरः पुरन्दरमवादीत् ॥

कल्याणी—उपविष्टेष्विति। यथोचितासन्नम्—औचित्यस्य=सामीप्यस्य चानतिक्रमेण; यमवरुणकुबेरप्रमुखेषु देवेषु=सुरेषु, आसनेषु=पीठेषु, उपविष्टेषु=आसीनेषु सत्सु, क्रमेण=क्रमशः, कृतोचिताचारः—कृतः=विहितः, उचितः=उपयुक्तः, आचारः=सत्कारादिः येन सः, निषधेश्वरः=निषधाधिपतिः नलः, पुरः=अग्रे; पृथ्वीपृष्ठ एव=भूतल एव, विनयात्=नम्रतया, निषद्य=उपविश्य, पुरन्दरम्=इन्द्रम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—समीप में ही यथोचित रूप से यम, वरुण, कुबेर आदि प्रमुख देवताओं के भी आसनों पर आसीन हो जाने पर क्रमशः उनका उचित सत्कारादि कर निषधाधिपति नल सामने भूमि पर ही नम्रतापूर्वक बैठकर इन्द्र से बोले—

दिष्ट्या दिवौकसां नाथ जातो युष्मत्समागमात्।
आकल्पं कीर्तनीयानां श्रेयसामस्मि भाजनम् ॥५३॥

अन्वयः—हे दिवौकसां नाथ! दिष्ट्या युष्मत्समागमात् (अहम्) आकल्पं कीर्तनीयानां श्रेयसां भाजनं जातः अस्मि ॥ ५३ ॥

कल्याणी—दिष्ट्येति। दिष्ट्या=भाग्येन, हे दिवौकसां=देवानां, नाथ=स्वामिन्! युष्मत्समागमात्—युष्माकं=भवतां, समागमात्=आगमनात्, अहम्=नलः, आकल्पं=कल्पपर्यन्तं, कीर्तनीयानां=स्तुत्यानां, श्रेयसां=मङ्गलानां, भाजनं=पात्रं, जातः=सञ्जातः, अस्मि। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५३॥

ज्योत्स्ना—हे देवताओं के स्वामी! भाग्यवशात् आप लोगों के आगमन से मैं कल्प-पर्यन्त अर्थात् सदा-सर्वदा के लिए प्रशंसनीय मंगलों का पात्र बन गया हूँ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है कि इन्द्रादि देवताओं द्वारा स्वयं चलकर राजा नल के पास आने से वे राजा नल सृष्टि के रहने तक के लिए समग्र रूप से प्रशंसनीय हो गये ॥५३॥

अपि च—

इष्ट्वा क्रतून्युगशतानि तपश्चरित्वा वाञ्छन्ति सङ्गमसुखं मुनयोऽपि येषाम् ।
तेषामनुग्रहकृतां स्वयमेत्य मेऽद्य युष्माकमादिशत किं प्रियमाचरामि ॥५४॥

अन्वयः—क्रतून् इष्ट्वा युगशतानि तपश्चरित्वा मुनयः अपि येषां सङ्गमसुखं वाञ्छन्ति, तेषाम् अद्य स्वयम् एत्य मे अनुग्रहकृतां युष्माकं किं प्रियम् आचरामि, आदिशत, यूयमिति शेषः ॥५४॥

कल्याणी—इष्ट्वेति । क्रतून्=यज्ञान्, इष्ट्वा=यजनं कृत्वा, युगशतानि=युगयुगान्तराणि [नैरन्तर्ये द्वितीया] तपश्चरित्वा=तपस्यां कृत्वा, मुनयोऽपि=ऋषयोऽपि, येषां=देवानां, सङ्गमसुखं=दर्शनजन्यानन्दं, वाञ्छन्ति=अभिलषन्ति, तेषां=तथाविधानाम्, अद्य=अस्मिन् दिने, स्वयम्=आत्मना, एत्य=आगत्य, मे=मयि, अनुग्रहकृतां=कृपालूनां, युष्माकं=भवतां देवानां, किं प्रियं=रुचिरम्, आचरामि=करोमि, आदिशत=आज्ञापयत, यूयमिति शेषः । वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥५४॥

ज्योत्स्ना—और भी—यज्ञों का सम्पादन कर और युगों-युगों तक तपस्या करके मुनि लोग भी जिन देवताओं के संगमसुख अर्थात् दर्शन के कारण होने वाले आनन्द की अभिलाषा करते हैं, उन देवताओं ने आज स्वयं ही आकर मेरे ऊपर अनुग्रह किया है; अतः (मैं) आप लोगों का क्या प्रिय करूँ ? (आपलोग) आज्ञा करें ॥५४॥

इति प्रकाशितप्रश्रयालापे पार्थिवपुङ्गवे पुरन्दरो दरदलितकुन्दकलिकाकान्तदन्तद्युतिद्योतिताधरदलमीषद्विहस्य लीलावलितकन्धरः कुबेरमुखमवलोकयाञ्चकार ।

कल्याणी—इतीति । इति=एवं, प्रकाशितप्रश्रयालापे—प्रकाशितः=कृतः, प्रश्रयालापः=विनयोपेतभाषणं येन तस्मिन्, पार्थिवपुङ्गवे=नृपश्रेष्ठे नले सति, पुरन्दरः=इन्द्रः, दरदलितकुन्दकलिकाकान्तदन्तद्युतिद्योतिताधरदलं—दरदलिता=ईषद्विकसिता, कुन्दकलिका=माध्यकुसुमकलिका, तद्वत् कान्ता=मनोहरा, या दन्तद्युतिः=दन्तकान्तिः, तया द्योतितं=प्रकाशितम्, अधरदलम्=अधरकिसलयं यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, ईषत्=मनाक्, विहस्य=स्मित्वा, लीलावलितकन्धरः—लीलया=विलासेन, वलिता=वक्रीकृता, कन्धरा=ग्रीवा येन सः, तथाविधः सन् कुबेरमुखं—कुबेरस्य=धनदस्य, मुखम्=आननम्, अवलोकयाञ्चकार=अपश्यत्, एवं स्वाभिप्रायं प्रकाशयितुं प्रैरयदिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार राजाओं में श्रेष्ठ राजा नल के विनय से समन्वित वाणी बोलने पर इन्द्र ने किञ्चित् खिली हुई कुन्दकली के समान मनोहर दन्त-कान्ति से प्रकाशित अधरदल वाले (मुख से) थोड़ा मुस्कुरा कर, लीलापूर्वक कन्धे को घुमाकर कुबेर के मुख की ओर देखा अर्थात् अपने आने का अभिप्राय प्रकट करने के लिए कुबेर को प्रेरित किया ॥

सोऽपि "निषधेश्वर ! श्रूयतामस्मदागमनकारणम् ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सः=कुबेरोऽपि, हे निषधेश्वर !=हे निषधाधिप !, अस्मत्=अस्माकम्, आगमनकारणं=अत्रागमनहेतुं, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम् ॥

ज्योत्स्ना—वह कुबेर भी 'हे निषधराज ! हम लोगों के (यहाँ) आने का कारण सुनिये ।

अस्ति विदर्भाधिपतेर्भीमभूमिपालस्य सुता सुतारनयननिर्जितेन्दीवरा वरार्थिनी निजकान्तितिरस्कृतत्रिदिवनारीरूपसंपत्तिः कुन्ददन्ती दमयन्ती नाम ॥

कल्याणी—अस्तीति । विदर्भाधिपतेः=विदर्भेश्वरस्य, भीमभूमिपालस्य=भीमाख्यस्य नृपस्य, सुतारनयननिर्जितेन्दीवरा—सुष्ठु तारे=कनीनिके, ययोस्ताभ्यां नयनाभ्यां=नेत्राभ्यां, निर्जितानि=तिरस्कृतानि, इन्दीवराणि=नीलोत्पलानि यया सा, वरार्थिनी—वरं=पतिम्, अर्थयते=कामयते इति तथोक्ता, निजकान्तितिरस्कृत-त्रिदिवनारीरूपसम्पत्तिः—निजकान्त्या=स्वप्रभया, तिरस्कृता=निर्जिता, त्रिदिवस्य=स्वर्गस्य, नारीणां=रमणीनां, रूपसम्पत्तिः=सौन्दर्यश्रीः यया सा, कुन्ददन्ती—कुन्दानि=माध्यकुसुमानीव, दन्ताः=रदाः यस्याः सा, दमयन्ती नाम सुता=कन्या, अस्ति=वर्तते । इन्दीवरान्नयनस्याधिक्यवर्णनात् व्यतिरेकः । कुन्ददन्तीत्यत्रोपमा ॥

ज्योत्स्ना—विदर्भदेशाधिपति भीम की सुन्दर कनीनिका (पुतलियों) से समन्वित आँखों के द्वारा नीलकमलों को भी तिरस्कृत करने वाली, वर (पति) की कामना करने वाली, अपनी कान्ति के द्वारा स्वर्गसुन्दरियों की सौन्दर्य-सम्पदा को भी तिरस्कृत करने वाली; कुन्दपुष्पों के समान (उज्ज्वल) दाँतों वाली दमयन्ती नाम की पुत्री है ॥

तस्याश्च चम्पकदलावदातदेहायाः किल स्वयंवरमहोत्सवः साम्प्रतं प्रस्तुतः" इति नारदादधिगम्य वयमपि विदर्भाधिपतिपुरं प्रस्थिताः ॥

कल्याणी—तस्या इति । तस्याश्च=पूर्वोक्तायाश्च, चम्पकदलावदात-देहायाः—चम्पकदलवत्=चम्पकपुष्पपत्रवत्, अवदातः=गौरः, देहः=शरीरं यस्या-स्तस्याः दमयन्त्याः, किलेति वार्तायां, स्वयंवरमहोत्सवः=पतिवरणसमारोहः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साम्प्रतम्=इदानीं, प्रस्तुतः=कृतप्रस्तावः वर्तते, इति=एवं, नारदात्=नारदमुखात्, अधिगम्य=विज्ञाय, वयमपि=इन्द्रादयोऽपि, विदर्भाधिपतिपुरं—विदर्भाधिपतेः=विदर्भेश्वरस्य भीमस्य, पुरं=नगरीं, प्रस्थिताः=प्रस्थानमकुर्म ॥

ज्योत्स्ना—और उस चम्पकपुष्प के पत्रसदृश गौर-वर्ण शरीर वाली दमयन्ती का स्वयंवर महोत्सव इस समय होने वाला है।" इस प्रकार नारद के द्वारा जानकर हमलोगों ने भी विदर्भराज की नगरी (कुण्डिनपुर) के लिए प्रस्थान किया है ॥

किन्तु लघयति पुरुषं स्वमुखेनार्थिभावो यतस्तत्र गत्वापि दमयन्तीं किं ब्रूमो वयमिन्द्रादयो लोकपालास्त्वामर्थयामह इत्यसदृशं महिम्नोऽस्मद्विधेषु, स्पृहणीयरूपासि कं नोत्सुकयसीत्यनुचितमपरिचितेषु चाटुचातुर्यम्, अजरसः खल्वमरा वयमिति ग्राम्यः स्वप्रशंसोपक्रमः, प्राप्नुहि त्रयाणामपि लोकानामाधिपत्यमस्मत्सङ्गमादिति महत्प्रागल्भ्यप्रलोभनम्, अल्पायुषो मनुष्यास्तदस्माकं देवानां मध्ये कञ्चिद्वृणीष्वेति पापीयः परदोषोदाहरणद्वारेणाभ्यर्थनम् ॥

कल्याणी—किन्त्विति। किन्तु=परन्तु, यतः=यस्मात्, स्वमुखेन=निजाननेन, अर्थिभावः=याचकताप्रकाशनं, पुरुषं=जनं, लघयति=लघुं करोति ['तत्करोति तदाचष्टे' इति लघुशब्दाण्णिचि, इष्ठवद्भावे 'टेः' इति टिलोपे लघि इति ण्यन्ताल्लटि लघयतीति रूपं सिद्धयति], तत्र=विदर्भपुरं, गत्वापि=यात्वाऽपि, दमयन्तीं=भैमीं, किं ब्रूमः=किं वदाम; इति ज्ञातुं न पारयाम इति भावः। वयमिन्द्रादयो लोकपालाः=लोकरक्षकाः, भवतीम्, अर्थयामहे=कामयामहे, इति=एवं कथनम्, अस्मद्विधेषु=अस्मल्लक्षणेषु, महिम्नः=गौरवस्य, असदृशं=विरुद्धम्, स्पृहणीयरूपासि—स्पृहणीयं=काम्यं, रूपं=सौन्दर्यं यस्याः सा त्वं तथाविधा असि, कं=कं पुरुषं, नोत्सुकयसि=नोत्कण्ठयसि, इति=एवं कथनम्, अपरिचितेषु, चाटुचातुर्यं=चाटूक्तिकौशलम्, अतएव अनुचितम्=अनुपयुक्तम्, नास्ति जरा येषां ते अजरसः=वृद्धत्वरहिताः, वयं खलु अमराश्चेति स्वप्रशंसोपक्रमः ग्राम्यः=असभ्यताद्योतकः, अस्मत्=अस्माकं, सङ्गमात्=साहचर्यात् त्रयाणामपि=स्वर्गमर्त्यपातालानामपि, लोकानां=भुवनानाम्, आधिपत्यं=स्वामित्वं, प्राप्नुहि=लभस्व, इति=एवं कथनं, महत्प्रागल्भ्यप्रलोभनं=समधिकधाष्टर्यपूर्णं प्रलोभनम्, अल्पायुषः=अल्पजीविनो हि मनुष्याः=मानवाः, तत्=तस्मात्, अस्माकं देवानां=अस्मत्सुराणां, मध्ये कञ्चित्=कमपि, वृणीष्व=वरय; इति=एवं, परदोषोदाहरणद्वारेण=अन्यदोषदानेन, परेषु दोषं प्रदर्श्येति भावः। अभ्यर्थनं=याच्ञा, पापीयः=महत्पापपूर्णं कृत्यम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—किन्तु स्वयं अपने मुख से ही याचकता का प्रकाशन करना (माँगना) व्यक्ति को छोटा (हल्का) बना देता है, इसलिए वहाँ (कुण्डिनपुर में) जाकर भी हमलोग दमयन्ती से क्या कहें ? (यह नहीं समझ पा रहे हैं)। "हम इन्द्र आदि लोकपाल तुम्हें चाहते हैं।" इस प्रकार कहना हमलोगों की महिमा (मर्यादा) के विरुद्ध होगा, 'तुम्हारा सौन्दर्य बड़ा ही आकर्षक है, अतः तुम किसे उत्सुक नहीं बना देती हो ?" इस प्रकार कहना अपरिचितों के प्रति चाटुकारिता है, अतएव अनुचित होगा। "वृद्धता से रहित हम देवगण निश्चित रूप से अमर हैं।" इस प्रकार अपनी ही प्रशंसा करना असभ्यता का द्योतक होगा, "हमलोगों के संसर्ग से तीनों लोकों का आधिपत्य प्राप्त करोगी।" इस प्रकार कहना अत्यन्त धृष्टतापूर्ण प्रलोभन होगा; "मनुष्य अल्प आयु वाले होते हैं, इसलिए हम देवताओं में से ही किसी का वरण करो।" इस प्रकार दूसरे के दोषों को प्रदर्शित कर याचना करना महान् पापपूर्ण कार्य होगा ॥

अतो देशकालकार्योक्तिकुशलस्त्वमुच्यसे। 'गच्छाग्रे, भव दूतो देवानामशेषवैदग्ध्यविशेषोक्तिकोविद ! किमन्यदिह शिक्ष्यसे, तैस्तैरुपायैः ताभिस्ताभिः कलाभिः, तैस्तैः प्रलोभनप्रकारैः, क्रियतां देवकार्यम्, आर्याणां प्रायः परोपकारकरणार्थमेव जन्म च जीवितं च, न च भवन्तमस्मदनुभावादन्यः कोऽपि कन्यान्तःपुरे रहस्यपि वर्त्तमानां विदर्भेश्वरसुतामुपसर्पन्तमुपलक्षिष्यते' इत्यभिधाय व्यरंसीत् ॥

कल्याणी—अत इति। अतः=अस्मात् कारणात्, देशकालकार्योक्तिकुशलः—देशे काले कार्ये उक्तौ=संभाषणे च, कुशलः=निपुणः, त्वं=नृपः, उच्यसे=अभिधीयसे, अस्माभिरादिश्यस इति भावः। गच्छाग्रे, देवानां दूतः=सन्देशहरः, भव, अशेषवैदग्ध्यविशेषोक्तिकोविद !=समस्तनैपुण्यपूर्णविशेषोक्तिकुशल !, किमन्यत्=किमपरम्, इह=अस्मिन् विषये, शिक्ष्यसे=उपदिश्यसे, तैस्तैः=विविधैः, उपायैः=प्रयत्नैः, ताभिस्ताभिः कलाभि=चातुर्यैः, तैस्तैः प्रलोभनप्रकारैः, देवकार्यं=सुराणामभीष्टं, क्रियतां=साध्यताम्, आर्याणां="कर्तव्यमाचरन् कार्यमकर्तव्यमनाचरन्। तिष्ठति प्रकृताचारे स वा आर्य इति स्मृतः ॥" इति लक्षणलक्षितानां, जन्म च=उत्पत्तिश्च, जीवितं=जीवनं च, प्रायः=सर्वथा, परोपकारकरणार्थमेव=परहितसाधनार्थमेव, अस्मदनुभावात्=अस्माकं प्रभावात्, कन्यान्तःपुरे=कन्यानामावासस्थाने, रहसि=एकान्ते, वर्तमानां=विद्यमानां, विदर्भेश्वरसुतां=भीमकन्यां दमयन्तीम्, उपसर्पन्तम्=उपगच्छन्तं, भवन्तं=श्रीमन्तं, न कोऽपि=न कश्चिदपि, उपलक्षिष्यते=द्रक्ष्यति, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, व्यरंसीत्=तूष्णीमभूत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इसलिए देश, काल, कार्य और सम्भाषण में चतुर तुमसे कहते हैं कि आगे जाओ (और) देवताओं के दूत बनो। हे समस्त निपुणतापूर्ण विशेष उक्तियों में कुशल ! इस विषय में तुम्हें और क्या शिक्षा दी जाय ! उन-उन उपायों से, उन-उन कलाओं से, उन-उन प्रलोभन-प्रकारों से देवकार्य का साधन करो। आर्यों का जन्म और जीवन प्रायः परोपकार के लिए ही होता है। हम लोगों के प्रभाव से कन्याओं के अन्तःपुर में एकान्त में स्थित विदर्भराजपुत्री (दमयन्ती) के पास जाते हुए आपको कोई भी नहीं देख पायेगा।" इस प्रकार कहकर चुप हो गये ॥

नलोऽप्येतदाकर्ण्य तदिदं सङ्कटम् 'इतो व्याघ्र इतस्तटी, इतो दवाग्निरितो दस्यवः; इतो दुष्टदन्दशूक इतोऽप्यन्धकूपः' इति न्यायात्। इतः कर्णान्तकृष्टशरासनो मर्मप्रहारी प्रहरति मकरध्वज इतश्चायमेतेषामलङ्घनीय आदेशः। तन्न जानीमः किमत्रोत्तरम्। एकत्रार्थेऽस्माकं भवतां च प्रवृत्तिरिति प्रणयप्रार्थनाभङ्गकारिणी विहतविनया प्रतिकूलोक्तिः, अनभिज्ञोऽस्मि दूतोक्तीनामिति शाठ्यम्, असमर्थोऽस्मि संदिग्धक्रियाकारितायामित्याज्ञालङ्घनम्, आज्ञालङ्घनं च सेतुबन्धनमिव स्खलयति श्रेयःस्रोतः, षण्ढमुखदर्शनमिव वर्धयत्यलक्ष्मीम्, रजस्वलाभिगमनमिव हरत्यायुः, इत्यनेकविधमवधार्य 'न नाम दुरधिगमाः केऽपि पदार्थास्तत्रभवतामशेषजगदीश्वराणाम्, न च न जानीथ ममापि प्रसिद्धमध्यवसायम्, एवं स्थितेऽप्येष वः करोम्यादेशम्, आदिष्टपरामर्शो न श्रेयानादेशकारिणः, किंतु बलीयान्परतो विधिः प्रमाणम्' इत्यभिधाय भक्त्या भयेन च देवानां दौत्यादेशं समर्थितवान् ॥

कल्याणी – नलोऽपीति। नलोऽपि=नलाख्यनृपोऽपि, एतत्=इन्द्रकुबेरवचः, आकर्ण्य=निशम्य, तदिदं=तदेतत्, सङ्कटं=दुरवस्था, इतः=एकतः, व्याघ्रः, इतः=अपरतः, तटी=परिखेत्यर्थः, इतः=एकतः, दवाग्निः=वनवह्निः, इतः=अपरतः, दस्यवः=लुण्ठाकाः, इतः=एकतः, दुष्टदन्दशूकः=दुष्टसर्पः, इतोऽपि=अपरतोऽपि, अन्धकूपः=पिहितमुखः कूपः, इति न्यायात्। इतः=एकतः, कर्णान्तकृष्टशरासनः—कर्णान्तं=कर्णप्रदेशं यावत्, कृष्टं शरासनं=धनुर्येन तथाविधः, मर्मप्रहारी=मर्मभेदकः, मकरध्वजः=कन्दर्पः, प्रहरति=प्रहारं करोति, इतश्च=अपरतश्च, एतेषां=दिक्पालानाम्, अयम्=एषः, अलङ्घनीयः=अवश्यकरणीयः, आदेशः=निदेशः। तन्न जानीमः=तस्मान्न विद्मः, अत्र=अस्मिन् विषये, किमुत्तरम्। एकत्रार्थे=एकस्मिन्नेवार्थे दमयन्तीलक्षणे, अस्माकं भवतां=देवानां च, प्रवृत्तिः=प्रवणता, इति=एवम् उत्तरं तु, प्रणयप्रार्थनाभङ्गकारिणी=स्नेहपूर्णप्रार्थनाविनाशिका, विहतविनया—विहतो विनयो यया तादृशी, प्रतिकूलोक्तिः=विरुद्धवचनम्, दूतोक्तीनां=दूतोचितभाषणानाम्, अनभिज्ञोऽस्मि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपरिचितोऽस्मि, इति=एवमुत्तरं, शाठ्यं=शठता [भविष्यति], सन्दिग्धक्रियाकारितायां—सन्दिग्धक्रियां करोतीति सन्दिग्धक्रियाकारी, तस्य भावस्तत्ता तस्याम्, असमर्थोऽस्मि=अशक्तोऽस्मि, इति=एवमुत्तरम्, आज्ञालङ्घनं=अवज्ञाकरणं [भविष्यति], आज्ञालङ्घनं च सेतुबन्धनमिव=सेतुनिर्माणमिव, श्रेयःस्रोतः=कल्याणप्रवाहं, स्खलयति=अवरुणद्धि, षण्ढमुखदर्शनमिव=नपुंसकमुखदर्शनमिव, अलक्ष्मीं=दुर्भाग्यं, वर्धयति=वृद्धिं करोति, रजस्वलाभिगमनमिव=रजस्वलासम्भोग इव, आयुः=वयः, हरति=नाशयति। इति=एवम्, अनेकविधं=बहुविधम्; अवधार्य=विचिन्त्य, 'न नाम दुरधिगमाः=दुर्लभाः, केऽपि पदार्थाः=वस्तूनि, तत्रभवतां=पूज्यपादानाम्, अशेषजगदीश्वराणां=सकललोकाधिपानाम्, न च, न जातीथ=न वेत्थ, मम=नलस्यापि, प्रसिद्धं=सर्वविदितम्, अध्यवसायम्=उद्योगम्, जानीथैवेत्यर्थः। एवं स्थितेऽप्येषोऽहं वः=युष्माकम्, आदेशम्=आज्ञां, करोमि=पालयामि, आदेशकारिणः=आज्ञापालकस्य, आदिष्टपरामर्शः—आदिष्टे=आदेशविषये, परामर्शः=विचारविमर्शः, न श्रेयान्=न कल्याणप्रदो भवति, किन्तु=परञ्च, परतः=महत्तरः, बलीयान्=गुरुतरः, विधिः=दैवं प्रमाणम्' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, भक्त्या=श्रद्धया, भयेन च=भीत्या च, देवानाम्=इन्द्रादीनाम्, आदेशं समर्थितवान्=आदेशं कर्तुमेव निश्चिकाय ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल भी इसे (कुबेर-वचन को) सुनकर "यह तो बहुत बड़ा संकट है।" एक ओर व्याघ्र है तो दूसरी ओर खाई का किनारा है, एक ओर दावानल है तो दूसरी ओर लुटेरे हैं; एक ओर दुष्ट सर्प है तो दूसरी ओर अन्धा कुआँ है।" इस न्याय के अनुसार एक ओर कर्णपर्यन्त धनुष को खींचे हुए मर्म पर आघात करने वाला कामदेव प्रहार कर रहा है तो दूसरी ओर इन इन्द्रादि दिक्पालों की अलंघनीय (अवश्यकरणीय) आज्ञा है। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि इस विषय में क्या उत्तर दूँ। "एक ही (दमयन्तीरूप) प्रयोजन में हमारी और आप देवों की प्रवृत्ति है।" इस प्रकार कहना स्नेहपूर्ण प्रणय-प्रार्थना का विनाश करने वाला विनय से रहित प्रतिकूल कथन होगा, "दूत के लिए उपयुक्त रीति से बोलना (मैं) नहीं जानता।" इस प्रकार का उत्तर देना शठता होगी, "सन्दिग्ध कार्यों को करने में (मैं) असमर्थ हूँ।" इस प्रकार का उत्तर आज्ञा का उल्लंघन करना होगा और आज्ञा का उल्लंघन कल्याण की धारा को सेतुलघंन की तरह से रोक देने वाला होता है, नपुंसक के मुखदर्शन के समान दरिद्रता को बढ़ाने वाला होता है, रजस्वला से सम्भोग के समान आयु का हरण करने वाला होता है—इस तरह बहुत प्रकार से विचार कर "समस्त लोकों के स्वामी आप लोगों के लिए कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं है और ऐसा भी नहीं है कि मेरे प्रसिद्ध उद्यम (प्रेम) को आप लोग नहीं जानते। ऐसी स्थिति में भी मैं आप लोगों की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ। (क्योंकि) आदेशपालकों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए (स्वामी द्वारा) दिये गए आदेश पर सोच-विचार करना कल्याणप्रद नहीं होता; अपितु परतः बलीयान् में भाग्य ही प्रमाण होता है।" इस प्रकार कह कर भक्ति तथा भय के कारण देवताओं के आदेश का समर्थन किया अर्थात् दूत बनने रूप आदेश के पालन करने का निश्चय किया ॥

स्थित्वा च कञ्चित्क्षणमुचितालापलीलया कृत्वा च कांश्चिदन्योन्यप्रस्तुतप्रियव्यवहारान्, आपृच्छ्य, यथागतं गतेष्वथ तेषु देवेषु निषधेश्वरश्चिरं चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—स्थित्वेति । उचितालापलीलया=उचितवार्तालापक्रमेण, कञ्चित्क्षणं=कञ्चित्कालं, स्थित्वा च=अवस्थाय च, कांश्चिदन्योन्यप्रस्तुतप्रियव्यवहारान्=परस्परप्रसङ्गप्राप्तप्रियव्यवहारान्, कृत्वा=सम्पाद्य च, आपृच्छ्य=अनुज्ञां प्राप्य, तेषु=इन्द्रादिषु, देवेषु=सुरेषु, यथागतं=यथायातं, गतेषु=प्रयातेषु, अथ=अनन्तरं, निषधेश्वरः=नलः, चिरं=बहुकालं, चिन्तयाञ्चकार=व्यचिन्तयत् ॥

ज्योत्स्ना—उचित वार्तालाप के बहाने कुछ देर ठहर कर, प्रसङ्गतः प्राप्त कतिपय पारस्परिक व्यवहारों का सम्पादन कर, अनुज्ञा प्राप्त कर, उन देवताओं के आये हुए मार्ग से ही वापस चले जाने के पश्चात् निषधराज (नल) बहुत देर तक विचार करते रहे ॥

तदिदम्, अनुच्छ्वासविरामं मरणम्, अमोहं मूर्च्छनम्, अरोगमङ्गव्यथनम्, अशल्यप्रवेशमन्तःशूलम्, अदारिद्र्यो निद्राविघातः ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, इदं=देवानां दौत्यम्, अनुच्छ्वासविरामं—नोच्छ्वासानां विरामो यस्मिंस्तादृशं, मरणं=मृत्युः, उच्छ्वासविरामं विनैव मृत्युरित्यर्थः । अमोहं—न मोहः=चेतनाराहित्यं यत्र तादृशं, मूर्च्छनम्=अचेतनम्, अरोगं—न रोगः यस्मिंस्तादृशम्, अङ्गव्यथनम्—अङ्गानां=शरीरावयवानां, व्यथनं=पीडा, अशल्यप्रवेशं—न शल्यस्य प्रवेशः यस्मिंस्तादृशम्, अन्तःशूलम्=आन्तरिकतीव्रवेदना, अदारिद्र्यः—न दारिद्र्यं यस्मिंस्तादृशः, निद्राविघातः=निद्राविनाशः ॥

ज्योत्स्ना—यह (देवताओं का दूत बनना) तो उच्छ्वास के रहते हुए ही मरण है, मोह (चेतनाराहित्य) के बिना ही मूर्च्छा है, बिना रोग के ही अंगों की पीड़ा है, शल्य-प्रवेश के बिना ही आन्तरिक तीव्र वेदना है और दरिद्रता के बिना ही निद्रा का विनाश है ॥

किमन्यत्—

तस्यामाकर्णितानुरागायां यन्ममाद्य दीर्घदौर्जन्यदोहदिना दैवेनाकस्मिकमौत्सुक्यानुरागव्यवसायं वन्ध्यमध्यवसितं कर्तुम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी - तस्यामिति । आकर्णितानुरागायाम्—आकर्णितः=श्रुतः, अनुरागः=प्रेम यस्यास्तस्यां, तस्यां=दमयन्त्यां, यत् मम=नलस्य, आकस्मिकम्=अकस्मादागतम्, औत्सुक्यानुरागव्यवसायम्—औत्सुक्यस्य=उत्कण्ठायाः, अनुरागस्य=प्रेम्णः च व्यवसायं=प्रयत्नं, दीर्घदौर्जन्यदोहदिना—दीर्घम्=अत्यन्तं, दौर्जन्यं=दुष्टतैव, दोहदः=उत्कटः अभिलाषः यस्य तेन, परमनोरथविघातिना दुष्टेनेत्यर्थः । दैवेन=भाग्येन, वन्ध्यं=निष्फलं, कर्तुमध्यवसितं=दृढनिश्चयः कृतः ॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; (ऐसा प्रतीत होता है कि) सुनने मात्र से ही प्रेम उत्पन्न कराने वाली उस दमयन्ती में मेरे आकस्मिक उत्कण्ठापूर्ण प्रेमविषयक व्यवसाय (प्रयत्न) को अत्यन्त दुष्टतारूप उत्कट अभिलाषा वाले भाग्य के द्वारा निष्फल करने का दृढ़ निश्चय कर लिया गया है ॥

इदानीं किमत्र श्रेयो यस्माद्, अनुपयोगं गमनम्, श्लाघ्यं निवर्तनम्, अपार्थकमासनम्, असाधीयानध्यवसायः ॥

कल्याणी—इदानीमिति । इदानीं=सम्प्रति, अत्र=अस्मिन् विषये, किं श्रेयः=किं मङ्गलमयं तत्त्वं, यस्मात् गमनं=दमयन्तीसकाशं दौत्येन प्रयाणम्, अनुपयोगं=निरर्थकं [स्यात्], निवर्तनं=प्रत्यागमनं, श्लाघ्यं=प्रशस्यं [भवेत्], आसनम्=उपवेशनम्, अपार्थकं=व्यर्थं [स्यात्], अध्यवसायः=उद्योगः, असाधीयान्=अनिष्पन्नः [भवेत्] ॥

ज्योत्स्ना—इस समय इस विषय में क्या करना मंगलदायक होगा, जिससे (दमयन्ती के समक्ष दूत के रूप में मेरा) जाना अनुपयोगी (निरर्थक); वापस आना प्रशंसनीय, बैठना व्यर्थ तथा (मेरा समस्त) प्रयत्न निष्फल हो जाय ॥

इति चिन्ताकुले नले भयान्मूकीभूतेष्वासन्नवर्तिषु परिजनेषु प्रणयात्प्रावरणप्रान्तप्राच्छादितवदनभागं किमप्यासन्नमुपसृत्य शनैस्तत्कालयोग्यालापैरनुशीलयञ्शीलज्ञः श्रुतशीलो नलमाबभाषे ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवं, नले=निषधाधिपे, चिन्ताकुले—चिन्तया आकुले=उद्विग्ने सति, भयाद्धेतोः आसन्नवर्तिषु=समीपस्थेषु, परिजनेषु=अनुचरवर्गेषु, मूकीभूतेषु=तूष्णीभावं गतेषु, प्रणयात्=स्नेहवशात्, प्रावरणप्रान्तप्राच्छादितवदनभागं—प्रावरणप्रान्तेन=उत्तरीयाञ्चलेन, प्राच्छादितः=प्रकर्षेण पिहितः, वदनभागः=मुखभागः यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, किमपि=किञ्चिदपि, आसन्नं=समीपं, शनैः=मन्दम्, उपसृत्य=उपगम्य, तत्कालयोग्यालापैः=तत्कालोचितभाषणैः, अनुशीलयन्=अनुरञ्जयन्, शीलज्ञः=प्रवृत्तिज्ञः, नृपस्येति भावः । श्रुतशीलः=श्रुतशीलो नाम मन्त्री, नलं=राजानम्, आबभाषे=उक्तवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार राजा नल के चिन्ता से व्याकुल हो जाने पर, भय के कारण निकट-स्थित परिजनों के मौन हो जाने पर, प्रणयवशात् (प्रेम के कारण) दुपट्टे के छोर से मुख को ढके हुए (राजा नल के) कुछ समीप धीरे से आकर पूर्वोक्त परिस्थिति के अनुकूल बातों के द्वारा (उसका) अनुरञ्जन करते हुए (राजा की) प्रवृत्ति को जानने वाले श्रुतशील ने नल से कहा—

'देव ! जानामि देवस्य देहं दहति दहन इव दारु दारुणो दौत्यचिन्ताभारः। को नाम सामान्योऽपि स्वयमभिलषितेऽर्थे दूतत्वदासभावमङ्गीकुर्यात्। विशेषतोऽनुरागिण्यङ्गनाजने। तथापि किं न जानाति देवो, यथा याचको ब्राह्मण इव निर्वेदः कस्य सन्तोषाय, विषवैद्य इव विषादः सन्देहकारी शरीरस्य, भीमाभिमन्युनिरुद्धं कुरुबलमिव मनो महान्तं सन्तापमनुभवति ॥

कल्याणी—देवेति। हे देव=स्वामिन् !, जानामि=अवगच्छामि, दारु=काष्ठं, दहन इव=अग्निरिव, दारुणः=कठिनः, दौत्यचिन्ताभारः=दूतकार्यस्य चिन्तातिरेकः, देवस्य=स्वामिनः भवतः, देहं=शरीरं, दहति=सन्तापयति [इत्युपमा]। सामान्यः अपि=साधारणोऽपि, को नाम=कः जनः, स्वयम्=आत्मना, अभिलषिते=अभीष्टे, अर्थे=प्रयोजने, दूतत्वदासभावं=दूतत्वलक्षणं दासत्वम्, अङ्गीकुर्यात्=स्वीकुर्यात्, विशेषतः=विशेषतया, अनुरागिणि=अनुरागवति, अङ्गनाजने=स्त्रीजने। तथापि=एवं स्थितेऽपि, देवः=महाराजः, न जानाति=नावगच्छति किम् ? यथा याचकः=अर्थी, ब्राह्मण इव=विप्र इव, निर्वेदः=खेदः, पक्षे—वेदरहितः, कस्य=कस्य जनस्य, सन्तोषाय=सन्तुष्टये [भवति], न कस्यापीत्यर्थः। विषवैद्य इव=गरलचिकित्सक इव, विषादः=पश्चात्तापः, पक्षे—विषं=कालकूटम्, आदयति=आशयतीति विषादः, शरीरस्य=देहस्य, सन्देहकारी=संशयकारी, शरीरसंशयाय जायत इत्यर्थः। कुरुबलमिव=कुरुसैन्यमिव, भीमाभिमन्युनिरुद्धं—भीमः=रौद्रोऽभितः मन्युः=दैन्यं, तेन निरुद्धम्=अवरुद्धम्, मनः=चित्तं, पक्षे—भीमेन=मध्यमपाण्डवेन, अभिमन्युना=अर्जुनपुत्रेण, निरुद्धम्=अवरुद्धं, महान्तं=समधिकं, सन्तापं=वेदनाम्, अनुभवति=अनुभवं करोति ॥

ज्योत्स्ना—'महाराज ! (मैं) जानता हूँ कि कठिन दूतकार्य के चिन्ता की अधिकता आपके शरीर को उसी प्रकार जला रही है, जिस प्रकार अग्नि दारु (लकड़ी) को जलाती है। कौन सामान्य व्यक्ति भी अपनी ही अभीष्ट वस्तु के सम्बन्ध में (दूसरे के लिए) दूत बनने जैसे दासकर्म को स्वीकार करेगा, वह भी विशेषकर अनुरागवती कामिनियों के विषय में ? फिर भी क्या श्रीमान् नहीं जानते कि निर्वेद (वेदज्ञानरहित) याचक (भिक्षुक) ब्राह्मण के समान निर्वेद (खेद) किसके लिए सन्तुष्टिदायक होता है ? विषाद (विष को भक्षण करने वाले) विषचिकित्सक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के समान विषाद (पश्चात्ताप) किसके शरीर को सन्देह में डालने वाला नहीं होता ? भीम और अभिमन्यु द्वारा निरुद्ध की गई कौरव-सेना के समान भयंकर दीनता से चारो ओर से निरुद्ध मन अत्यधिक कष्ट का अनुभव करता ही है।

आशय यह है कि खेद को प्राप्त कर कोई भी व्यक्ति सन्तुष्ट नहीं होता, विषाद (पश्चाताप) को प्राप्त हुए किसी भी व्यक्ति का शरीर स्वस्थ नहीं रहता और भयंकर दीनता से घिरा मन घोर वेदना का अनुभव करता ही है॥

तदलमनेन वातूलीभ्रमेणेव मीलयता चक्षुरुद्वेगेन ॥

कल्याणी—तदलमिति। तत्=तस्मात्, चक्षुः=नेत्रं, मीलयता अनेन=एतेन, वातूलीभ्रमेणेव=झंझावातभ्रमेणेव, उद्वेगेन=खेदेन, पक्षे—उत्=ऊर्ध्वं वेगः यस्य तेन, अलं=किञ्चित्साध्यं नास्तीत्यर्थः॥

ज्योत्स्ना—इसलिए ऊपर की ओर वेग वाली वातूली भ्रम (हवा का चक्कर (ववण्डर) के समान उद्वेग के कारण आँखों को बन्द कर लेने से कुछ भी होने वाला नहीं है॥

किं देवेन न श्रुतम्, अमृतमथनावसरे सुरासुरकरपरिवर्त्यमानमन्दरमन्थाननिर्घोषबधिरितसमस्तरोदःकन्दरादिवापि दूरोच्छलितदुग्धतुषारासारतारकितनभसः, समुत्पन्नानेककौस्तुभादिवस्तुविस्तारादुद्गच्छदप्सरोमुखमण्डलैः क्षणमिव विहितविकचनलिनखण्डशोभाद्, अनेकाश्चर्यकुक्षेः क्षीरसागरादजनि जनितजगद्विस्मया स्मरजननी हस्तस्थिततरुणारविन्दा देवी देदीप्यमानपुण्यलक्ष्मा लक्ष्मीः॥

कल्याणी—किमिति। किं, देवेन=भवता स्वामिना, न श्रुतं=नाकर्णितं, परम्परया न ज्ञातमित्यर्थः। अमृतमथनावसरे=सुधायै समुद्रमथनकाले, सुरासुरकरपरिवर्त्यमानमन्दरमन्थाननिर्घोषबधिरितसमस्तरोदःकन्दरादिवापि— सुरासुराणां=देवदानवानां, करैः=हस्तैः. परिवर्त्यमानः=चाल्यमानः, मन्दरः=मन्दराचल एव, मन्थानः=मथनदण्डः, तस्य निर्घोषेण=ध्वनिना, बधिरितः=बधिरीकृतः, स्थगित इति यावत्। समस्तरोदःकन्दरः=सकलाकाशपृथिव्यन्तरालभागः येन तस्मादिवापि; दूरोच्छलितदुग्धतुषारासारतारकितनभसः—दूरम्=अत्यन्तम्, उच्छलितानाम्=ऊर्ध्वं क्षिप्तानां, दुग्धतुषाराणां=क्षीरकणानाम्, आसारैः=धाराभिः; तारकितं=तारायुक्तमिव, नभः=गगनं येन तस्मात्, समुत्पन्नानेककौस्तुभादिवस्तुविस्तारात्—समुत्पन्नः=जातः, अनेकेषां=बहूनां, कौस्तुभादिवस्तूनां=कौस्तुभमण्यादिपदार्थानां, विस्तारः=प्रसारः यस्मात्तस्मात्, उद्गच्छदप्सरोमुखमण्डलैः—उद्गच्छन्तीनाम् अप्सरसां मुखमण्डलैः=आननमण्डलैः, क्षणमिव=किञ्चित्कालमिव, विहितविकचनलिनखण्डशोभात्—विहिता=कृता, विकचनलिनखण्डस्य=विकसितकमलसमूहस्य, शोभा=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुषमा येन तस्मात्, अनेकाश्चर्यकुक्षेः—अनेकानि=विविधानि, आश्चर्याणि=आश्चर्यजनकवस्तूनि, कुक्षौ=गर्भे यस्य तस्मात्, क्षीरसागरात्=अर्णवात्, जनितजगद्विस्मया—जनितः=उत्पादितः, जगतां=लोकानां, विस्मयः=आश्चर्यं यया सा, स्मरजननी=कामदेवस्य माता [कामावतारः प्रद्युम्नः कृष्णपत्न्या रुक्मिणीरूपाया लक्ष्म्या एव पुत्र आसीदित्यत्रावधेयम्]। हस्तस्थिततरुणारविन्दा—हस्ते=करे, स्थितं=अवस्थितं, नवविकसितम्, अरविन्दं=कमलं यस्यास्तथोक्ता, देदीप्यमानपुण्यलक्ष्मा—देदीप्यतरुणं=मानानि=शोभमानानि, पुण्यानि=पवित्राणि, लक्ष्माणि=चिह्नानि यस्यास्तथाविधा, देवी लक्ष्मीः=रमा, अजनि=जाता ॥

ज्योत्स्ना—क्या श्रीमान् ने सुना नहीं है कि अमृत-प्राप्ति के लिए समुद्र-मन्थन के समय देवताओं और दानवों के हाथों द्वारा चलाये जाते हुए मन्दराचलरूप मन्थनदण्ड की ध्वनि से समस्त क्षितिज-कन्दराओं के बधिर-से हो जाने पर भी अत्यधिक ऊपर की ओर उछलने वाले दुग्धकणों की धारा से गगन-मण्डल को तारांकित करने वाले, उत्पन्न हुए अनेकों कौस्तुभमणि आदि पदार्थों के विस्तार वाले, ऊपर की ओर जाती हुई अप्सराओं के मुखमण्डल से कुछ समय में ही मानों विकसित कमलों की शोभा उत्पन्न करने वाले, अनेक आश्चर्यजनक वस्तुओं को गर्भ में धारण करने वाले क्षीरसागर से ही अखिल लोकों में विस्मय उत्पन्न करने वाली, कामदेव की माता, हाथों में नूतन विकसित कमल धारण की हुई, देदीप्यमान पवित्र चिह्नों वाली देवी लक्ष्मी उत्पन्न हुई थी ॥

यस्याः सर्वाङ्गलावण्यमधु विकचलोचनचषकैरापीय पीयूषजुषो मदनमदपरवशाः परस्परमेवेर्ष्यन्तश्चक्रुश्चक्रपाणिना समं सङ्गरम् ॥

कल्याणी—यस्या इति। यस्याः=लक्ष्म्याः, सर्वाङ्गलावण्यमधु—सर्वाङ्गानां=सकलावयवानां, लावण्यं=सौन्दर्यमेव, मधु=मद्यं, विकचविलोचनचषकैः—विकचैः=विकसितैः, लोचनैः=नयनैरेव, चषकैः=पानपात्रैः, आपीय=नितरां पीत्वा, पीयूषजुषः=अमृतसेविनः देवाः, मदनमदपरवशाः=कामोन्मादपराधीनाः, परस्परमेव=अन्योन्यमेव, ईर्ष्यन्तः=ईर्ष्यां कुर्वाणाः, चक्रपाणिना समं=विष्णुना सह, सङ्गरं=युद्धं, चक्रुः=अकुर्वन् ॥

ज्योत्स्ना—जिस लक्ष्मी के समस्त अंगों के सौन्दर्यरूपी मधु को खिले हुए लोचनचषक (नयनरूपी प्याले) से पान कर अमृतसेवी देवताओं ने कामोन्मत्त होकर आपस में ही ईर्ष्या करते हुए चक्रपाणि अर्थात् भगवान् विष्णु के साथ युद्ध किया था ॥

अथ सा सर्वानप्यन्तरान्तरापततस्तानुल्लङ्घ्य मन्दरगिरिशिखरशातकुम्भनिकषोपलायितबाहोर्भगवतश्चिक्षेप क्षेपीयः कण्ठे वैकुण्ठस्य स्वयंवरकुसुममालाम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अथ सेति। अथ=अनन्तरं, सा=लक्ष्मीः, अन्तरान्तरापततः=मध्ये मध्ये आस्खलतः, तान् सर्वान्=समस्तान् देवान्, उल्लङ्घ्य = तिरस्कृत्य, मन्दरगिरिशिखरशातकुम्भनिकषोपलायितबाहोः—मन्दरगिरेः = मन्दराचलस्य, शिखरं = शृङ्गमेव, शातकुम्भं = सुवर्णं, तस्य निकषोपलायितः=निकषोपलसदृशः, बाहुः= भुजः यस्यः तस्य; भगवतः वैकुण्ठस्य=विष्णोः, कण्ठे = गले, स्वयंवरकुसुममालां= स्वयंवरपुष्पस्रजं, क्षेपीयः = अतिशयेन क्षिप्रं ['स्थूलदूर'-इत्यादिना क्षिप्रशब्दादीयसुनि र इत्यस्य लोपे इकारस्य गुणः], चिक्षेप=परिधापितवती ॥

ज्योत्स्ना—इसके बाद उस लक्ष्मी ने बीच-बीच में गिरते हुए (आये हुए) उन समस्त देवताओं को तिरस्कृत कर मन्दराचल के शिखररूप सुवर्ण के लिए कसौटी-पत्थर-सदृश (नीली) भुजाओं वाले भगवान् विष्णु के गले में स्वयंवर की पुष्पमाला को अत्यन्त शीघ्रता के साथ डाल दिया (था)।

आशय यह है कि समस्त देवताओं का परित्याग कर समुद्र से उत्पन्न लक्ष्मी ने भगवान् विष्णु के गले में ही वरमाला पहनाया था ॥

एवं साऽपि कदाचिच्चम्पककलिकाकलापगौराङ्गी रागिणी त्वयि वञ्चयिष्यति देवान्। वञ्चितो यतः पूर्वमात्ममुखमण्डलश्रिया शशी, तिरस्कृतो मदनः सौभाग्येन। सकृत्प्रनृत्तायाश्च किमवगुण्ठनेन। विधेरिव वामभ्रु वामचिन्त्यानि चरितानि भवन्ति ॥

कल्याणी—एवं सेति। एवम्=इत्थं, साऽपि=दमयन्त्यपि, कदाचित् चम्पककलिकाकलापगौराङ्गी—चम्पककलिकाकलापः=चम्पककलिकापुञ्ज इव गौरम् अङ्गं=शरीरं यस्याः सा तथोक्ता, त्वयि=भवति, रागिणी=अनुरागवती, देवान्= इन्द्रादीन्, वञ्चयिष्यति=प्रतारयिष्यति। यतः=यस्मात् [तया दमयन्त्या] पूर्वमात्ममुखमण्डलश्रिया=स्वमुखमण्डलशोभया, शशी=चन्द्रः, वञ्चितः= अपहसितः, सौभाग्येन=सौन्दर्येण, मदनः=कामः, तिरस्कृतः=तर्जितः, सकृत्= एकवारं, प्रनृत्तायाश्च=प्रकर्षेण नर्तितायाश्च, अवगुण्ठनेन=शिरोवेष्टनेन, किं=किं प्रयोजनम्, पूर्वं चन्द्रस्य कामदेवस्य च तिरस्कारस्तया कृत एव तदिन्द्रादीनां तिरस्कारे तस्याः कीदृशी विचिकित्सेति भावः। विधेरिव=विधातुरिव, वामभ्रुवां-वामे=कुटिले मनोहरे वा, भ्रुवौ यासां तासां, सुन्दरीणामित्यर्थः। चरितानि= चरित्राणि, अचिन्त्यानि=कल्पनातीतानि, भवन्ति ॥

ज्योत्स्ना—इसी प्रकार चम्पकपुष्प की कलियों के समान गौर वर्ण शरीर वाली तुममें अनुरक्त वह दमयन्ती भी इन्द्रादि समस्त देवताओं को वञ्चित कर देगी; क्योंकि (उस दमयन्ती ने) पहले भी अपने मुखमण्डल की शोभा से चन्द्रमा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को वञ्चित किया है और अपने सौन्दर्य से कामदेव को भी तिरस्कृत किया है। एक बार नृत्य कर चुकी कामिनी के लिए घूंघट निकालने का कोई मतलब नहीं होता। ब्रह्मा के समान ही सुन्दरियों का चरित्र भी विचार-कल्पना से परे होता है।

विमर्श—आशय यह है कि अपने मुख द्वारा चन्द्रमा को और सौन्दर्य द्वारा कामदेव को तिरस्कृत कर चुकने के बाद देवताओं को तिरस्कृत करने की दमयन्ती की आदत-सी हो गई है। ऐसी स्थिति में इन्द्रादि दिक्पालों को तिरस्कृत करने में उसे क्या कठिनाई हो सकती है ? अतः वह इन्द्रादि देवताओं को भी अवश्य ही तिरस्कृत करदे गी इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिए ॥

किमु न स्मरति देवो दिवि विश्रुतमर्थसारं स्वर्लोकादवतीर्य पुरा गीतं गन्धर्वगायनैर्गीतगोष्ठीस्थितस्याग्रे युगलमिदमार्ययोर्देवस्य ॥

कल्याणी—किमु नेति। किमु देवः=भवान्, न स्मरति—गीतगोष्ठीस्थितस्य— गीतगोष्ठ्यां=सङ्गीतपरिषदि, स्थितस्य=अवस्थितस्य, देवस्य=भवतः, अग्रे=पुरतः, स्वर्लोकात्=स्वर्गात्, अवतीर्य = समागत्य, पुरा=पूर्वं, गन्धर्वगायनैः=गन्धर्वगायकैः, दिवि = स्वर्गे, विश्रुतं=प्रसिद्धम्, अर्थसारम्=अर्थतत्त्वोपेतम्, आर्ययोरिदं युगलम् = इदमार्याद्वयं, गीतम्=अगीयत ॥

ज्योत्स्ना—क्या श्रीमान् को स्मरण नहीं है कि पूर्व में गीतगोष्ठी में बैठे हुए आपके समक्ष स्वर्ग लोक से उतर कर गन्धर्वगायकों द्वारा स्वर्ग में प्रसिद्ध अर्थतत्त्वों वाले दो आर्या छन्दों का गान किया गया था ॥

क्वचिदपि कार्यारम्भेऽकल्पः कल्याणभाजनं भवति।
न तु पुनरधिकविषादान्मन्दीकृतपौरुषः पुरुषः ॥५५॥

अन्वयः—कार्यारम्भे अकल्पः पुरुषः क्वचित् अपि कल्याणभाजनं भवति, न तु पुनः अधिकविषादात् मन्दीकृतपौरुषः पुरुषः (कल्याणभाजनं भवति) ॥५५॥

कल्याणी—तदेवार्याद्वयं प्रस्तौति—क्वचिदिति। कार्यारम्भे=कार्यस्य समारम्भे, अकल्पः=अनिर्विण्णभावेन अध्यवसायशीलः, पुरुषः=जनः, क्वचिदपि=कुत्रापि, कल्याणभाजनं=कृतकार्यतया कल्याणपात्रं, भवति, न तु=न पुनः, अधिकविषादात्=समधिकविषण्णभावेन, मन्दीकृतपौरुषः—मन्दीकृतं पौरुषम्=उद्योगः येन स तथाविधः, पुरुषः=जनः, कल्याणभाजनं=कल्याणपात्रं, भवति, तन्निर्वेदं परित्यज्य देवानां दौत्ये तिष्ठतु देव इति भावः। आर्या जातिः ॥५५॥

ज्योत्स्ना—कार्य के आरम्भ में निर्विण्णभाव से अर्थात् विनम्रतापूर्वक प्रयत्नशील व्यक्ति कहीं भी कल्याण के पात्र बन जाते हैं, लेकिन अत्यधिक विषण्णता (विषाद) के कारण मन्द (अल्प) पुरुषार्थ (उद्योग) करने वाला व्यक्ति कल्याण का पात्र नहीं बन पाता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है कि किसी भी कार्य में व्यक्ति यदि विनम्र होकर प्रयत्नशील होता है तो उसे वाञ्छित फल की प्राप्ति अवश्य ही होती है; लेकिन विषादयुक्त रहने पर व्यक्ति पूर्णतया प्रयत्नशील ही नहीं हो पाता, इसलिए विषादयुक्त होकर किसी कार्य का आरम्भ करने पर उसे वाञ्छित फल की प्राप्ति भी नहीं हो पाती ॥५५॥

अपहस्तितान्तरायानर्थानुररीकृतान्प्रसाधयतः ।
विधिरपि बिभेति तस्मान्निरतिशयं साहसं यस्य ॥ ५६ ॥

अन्वयः—उररीकृतान् अपहस्तितान्तरायान् अर्थान् प्रसाधयतः यस्य निरतिशयं साहसं (विद्यते) तस्मात् विधिरपि बिभेति ॥५६॥

कल्याणी—अपहस्तितेति । उररीकृतान्=अङ्गीकृतान्, अपहस्तितान्तरायान्—अपहस्तिताः=दूरं समुत्सारिताः, अन्तरायाः=विघ्नाः येषां तथाविधान्; अर्थान्=कार्याणि, प्रसाधयतः=सम्पादयतः, यस्य=यस्य पुरुषस्य, निरतिशयं=समधिकं, साहसं [विद्यते], तस्मात्=तथापुरुषात्, विधिरपि=ब्रह्मापि दैवमपि वा, बिभेति=त्रस्यति; तादृशः पुरुषः विधिमप्यन्यथाकर्तुं प्रभवतीति भावः । आर्या जातिः ॥५६॥

ज्योत्स्ना—समस्त विघ्नों को दूर करके अंगीकृत किये गये कार्यों का सम्पादन करने वाले व्यक्ति में साहस की अधिकता होती है, (अतः) उस व्यक्ति से ब्रह्मा भी भयभीत होते हैं ॥५६॥

एवमनेकधा प्रस्तुतपुराणपुरुषाख्यानप्रपञ्चप्रक्रमेणातिक्रान्ते भूम्नि दिवसे मङ्गलोद्गार इव वाञ्छितार्थसिद्धेः, तर्जनहुङ्कार इवान्तरायाणाम्, ओङ्कार इवोत्साहस्मृतेः, पुण्याहध्वनिरिव हृदयप्रसादप्रासादस्य, पुनर्नवीकृतानुरागस्तम्भोत्तम्भनस्य तस्य नरपतेः शिश्राय श्रुतिं श्रुतशीलेन श्रावितमिममेवार्थं समर्थयन्निव मध्याह्नशङ्खध्वनिः ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=इत्थम्, अनेकधा=नानाप्रकारैः, प्रस्तुतपुराणपुरुषाख्यानप्रपञ्चप्रक्रमेण—प्रस्तुतानां=प्रसङ्गप्राप्तानां, पुराणपुरुषाणां=पुरातनपुरुषाणाम्, आख्यानप्रपञ्चप्रक्रमेण=कथानकप्रकटीकरणप्रक्रमेण, भूम्नि दिवसे अतिक्रान्ते=तस्य दिवसस्य विशेषभागे व्यतीते, वाञ्छितार्थसिद्धेः=अभीष्टार्थसिद्धेः, मङ्गलोद्गार इव=शुभाशंसनमिव, अन्तरायाणां=विघ्नानां, तर्जनहुङ्कार इव—तर्जनं=त्रासनं, तस्मै हुङ्कार इव=गर्जनमिव, उत्साहस्मृतेः=उत्साहस्मरणस्य, ओङ्कार इव, उत्साहस्मृतौ प्रथम इवेति यावत् । हृदयप्रसादप्रासादस्य—हृदयस्य प्रसादः=प्रसन्नता, स एव प्रासादः=मन्दिरं, तस्य पुण्याहध्वनिरिव—पुण्याहं=मङ्गलमयो दिवसः, तस्य ध्वनिरिव=शब्द इव, पुण्याहं व्रजतु देव इति ध्वनिरिवेति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावः। श्रुतशीलेन=श्रुतशीलाभिधेन, श्रावितम्, इमं=पूर्वोक्तमेव, अर्थं=भावं, समर्थयन्निव=प्रतिपादयन्निव [इति सर्वत्रोत्प्रेक्षा], मध्याह्नशंखध्वनिः=मध्याह्नवेला-सूचकशङ्खध्वनिः, पुनर्नवीकृतानुरागस्तम्भोत्तम्भनस्य—पुनर्नवीकृतः अनुराग-स्तम्भः=अनुरागस्थैर्यम्, उत्तम्भनम्=आश्रयः यस्य तस्य, तस्य नरपतेः=नलस्य, श्रुतिं=श्रोत्रं, शिश्राय=सिषेवे, श्रवणगोचरो बभूवेति भावः ॥

ज्योत्स्ना—इस तरह नाना प्रकार से प्रसङ्गतः प्राप्त पुराणपुरुष (भगवान् विष्णु) के कथानकों को कहते हुए उस दिन के विशेष भाग के समाप्त हो जाने पर अभीष्ट अर्थ की सिद्धि (प्राप्ति) के लिए मंगलोद्गार (शुभाशंसा) के समान, विघ्नों को भयभीत करने के लिए हुंकार के समान, उत्साह-स्मरण के लिए ओंकार (ललकार) के समान, हृदय की प्रसन्नतारूपी भवन के लिए पुण्याह ध्वनि (मंगलमय दिन की ध्वनि) के समान श्रुतशील द्वारा सुनाये गये पूर्वोक्त अर्थों (भावों) का समर्थन-सी करती हुई मध्याह्नकालिक शंखध्वनि ने फिर से नूतन किये गये अनुरा-गस्तम्भ वाले राजा नल के कानों का सेवन किया अर्थात् राजा नल के कानों में शंखध्वनि सुनाई पड़ी ॥

राजा तु तमाकर्ण्य विसर्जितपरिजनस्तत्रैव पुलिनमध्ये मध्याह्नसमय-समुचितव्यापारमकरोत् ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, तं=मध्याह्नशङ्खध्वनिम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, विसर्जितपरिजनः=त्यक्तस्वानुचरवर्गः, तत्रैव पुलिनमध्ये=तटप्रदेशे, मध्याह्न-समयसमुचितव्यापारं=मध्याह्नवेलोचितं स्नानसन्ध्यावन्दनादिसकलकृत्यम्, अकरोत्=अनुष्ठितवान् ॥

ज्योत्स्ना—और राजा नल ने उस मध्याह्नवेला की सूचक शंखध्वनि को सुनकर अपने परिजनों को विसर्जित कर अर्थात् हटा कर उसी तटप्रदेश पर ही मध्याह्नकालोचित स्नान-सन्ध्यावन्दनादि समस्त कृत्यों का अनुष्ठान किया ॥

अनन्तरमतिक्रान्तेषु केषुचिन्मुहूर्तेषु [गगनमध्यतलाद्विलम्बमाने मनाङ्मार्तण्डमण्डले चण्डवात्याहतशुष्कपत्त्रमिव दण्डप्रान्तप्रचलितकुला-लचक्रमिव तेन पुरन्दरादेशभ्रमेण भ्रान्तमात्मनो मनः क्वाप्येकान्त-कमनीयनर्मदाप्रदेशदर्शनविनोदेन स्वस्थीकर्तुमिच्छन्निच्छानुकूलकतिपयाप्त-परिजनपरिवृतः श्रुतशीलस्कन्धावष्टम्भविहारो विहाय दूरमिव शिविर-सन्निवेशम्, इतस्ततस्तरुणतमालमण्डपमण्डलितमयूरहारिणा चलच्च-कोरचक्रवाकचक्रवालवलयितेन स्नानागततापसपदपंक्तिखचितदूर्वाङ्कुरेणा-पसरत्पयःपूरतरङ्गितवालुकेन पुलिनप्रान्तेन प्राचीं दिशमयासीत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरम्=अथ, केषुचिन्मुहूर्तेष्वतिक्रान्तेषु=कतिपयकालांशेषु व्यतीतेषु, मार्तण्डमण्डले=सूर्यमण्डले, मनाक्=ईषत्, गगनमध्यतलात्=आकाशमध्यदेशात्, विलम्बमाने=अधो गच्छति, चण्डवात्याहतशुष्कपत्रमिव—चण्डवात्यया=भीषणवायुना, आहतम्=आवेगघूर्णितं, शुष्कपत्रमिव, तथा दण्डप्रान्तप्रचलितकुलालचक्रमिव—दण्डप्रान्तेन=दण्डाग्रभागेन, प्रचलितं=भ्रामितं, कुलालस्य=कुम्भकारस्य, चक्रमिवेति मनोविशेषणद्वयम् [इत्युपमा], तेन पुरन्दरादेशभ्रमेण=इन्द्रादेशावर्तेन, भ्रान्तम्=अनस्थिरम्, आत्मनः=स्वकीयस्य, मनः=चित्तं, क्वापि=कुत्रचिदपि, एकान्तकमनीयनर्मदाप्रदेशदर्शनविनोदेन—एकान्तस्य=एकस्थलस्य, कमनीयस्य=मनोहरस्य च, नर्मदाप्रदेशस्य=नर्मदानदीभागस्य, दर्शनेन=अवलोकनेन, यः विनोदः=अनुरञ्जनं, तेन स्वस्थीकर्तुमिच्छन्=शमयितुमिच्छन्, इच्छानुकूलकतिपयाप्तपरिजनपरिवृतः – इच्छानुकूलैः=इच्छानुसारैः, कतिपयैः, आप्तैः=विश्वासपात्रैः, परिजनैः=अनुचरैः, परिवृतः=युक्तः, श्रुतशीलस्कन्धावष्टम्भविहारः—श्रुतशीलस्य स्कन्ध एव=अंसदेश एव, अवष्टम्भविहारः=आधारविहारः यस्य सः, श्रुतशीलस्कन्धे निहितकर इत्यर्थः। शिविरसंनिवेशं=शिविरसामीप्यं, दूरमिव विहाय=त्यक्त्वा, इतस्ततः=परितः, तरुणतमालमण्डपमण्डलितमयूरहारिणा—तरुणतमालमण्डपेषु=नवविकसिततमालतरुकुञ्जेषु, मण्डलितैः=समवेतैः, मयूरैः=केकीभिः, हारिणा=मनोज्ञेन, चलच्चकोरचक्रवाकचक्रवालवलयितेन—चलद्भिः=सञ्चरणशीलैः, चकोरैः चक्रचाकचक्रवालेन च=चक्रवालमण्डलेन च, वलयितेन=युक्तेन, स्नानागततापसपदपंक्तिखर्वितदुर्वांकुरेण—स्नानायागताः=मज्जनायायाताः, ये तापसाः=तपस्विनः, तेषां पदपङ्क्त्या=पद्धत्या, खर्विता=दलिता दूर्वाङ्कुरा यत्र तथाविधेन, अपसरत्पयःपूरतरङ्गितवालुकेन—अपसरता=अपगच्छता, पयःपूरेण=जलप्रवाहेण, तरङ्गिता=नतोन्नता, वालुका यत्र तथाविधेन च, पुलिनप्रान्तेन=तटप्रदेशेन, प्राचीं=पूर्वां, दिशम्, अयासीत्=अगमत्॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् कुछ समय व्यतीत होने पर आकाश के मध्य भाग से सूर्यमण्डल के थोड़ा नीचे खिसक जाने पर प्रचण्ड वायु से आहत होकर घूम रहे सूखे पत्ते के समान तथा दण्ड के अग्रभाग से घुमाये गये कुम्भकार (कुम्हार) के चक्र के समान इन्द्र के उस आदेशरूपी भँवर से भ्रान्त (अस्थिर) अपने मन को कहीं भी एकान्त और मनोहर नर्मदा-प्रदेश के देखने से होनेवाले अनुरञ्जन से स्वस्थ करने की इच्छा करते हुए, (राजा नल) इच्छानुकूल कतिपय विश्वसनीय परिजनों के साथ श्रुतशील के कन्धे पर ही हाथ रख कर शिविर की समीपता को दूर के समान त्याग कर चारो ओर नूतन विकसित तमाल वृक्ष-कुञ्जों के नीचे मण्डलित (एकत्रित) मयूरों के कारण मनोरम, सञ्चरणशील चकोर और चक्रवाक-समूहों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से घिरे हुए, स्नान के लिए आये हुए तपस्वियों की पदपंक्ति से टूटी हुई दुर्वा (दूब) के अंकुरों वाले, खिसकते हुए जलप्रवाह के कारण तरङ्गित (ऊँचे-नीचे) वालुका वाले तटप्रदेश से पूर्व दिशा की ओर गया ॥

तत्र च चटुलचञ्चरीककुलाकुलितविविधवीरुधां तलेषु विचरतोऽस्य रसातलविनिर्गताः पन्नगाङ्गना इव नागमदहारिण्यस्तमालकन्दलीकोमलाङ्ग्यष्टयः श्रोणीभरालसगमनास्त्रिवलीतरङ्गिततनुमध्यलतिकाः, काश्चित्कण्ठकन्दलावलम्बितमातङ्गमौक्तिकलताः स्फुरन्नक्षत्रवलयाः कृष्णपक्षरात्रय इव कृतक्रीडाशरीरपरिग्रहाः, काश्चिदुभयश्रवणावसक्तदन्तिदन्तपत्रप्रभाधवलितमुखमण्डलाः सुरसरित्सलिलसंवलितकालिन्दीजलदेवता इव नर्मदयामन्त्रिताः, काश्चित्परिधानीकृतरक्तपल्लवास्तडिल्लतालेखामेखलाश्चलदम्बुवाहपङ्क्तय इव विन्ध्यस्कन्धानुबन्धिन्यः, काश्चिन्मातङ्गमदमण्डलमिलन्मधुकरकरालिताः सकलनीलोत्पलवनलक्ष्म्य इवान्यजलाशयेभ्यो महानदीमवतरन्त्यः, काश्चिल्लोहिताशोककुसुमस्तबककृतकर्णावतंसोत्तंसास्त्रिपुरपुरन्ध्रय इव हरशरानलज्वालाकुलितशिरसो धूमध्यामलाः सलिलमनुसरन्त्यः, काश्चिल्ललितलीलामृगैरनुगम्यमानाः शरीरवत्योऽञ्जशैलस्थलाधिदेवता इव तीर्थावगाहनानुरागिण्यः, काश्चिज्जराजर्जरशबरकञ्चुकिकरावलम्बलीलागामिन्यः स्फुरदिन्द्रनीलशिलापुत्रिका इवेन्द्रजालिकैः सञ्चार्यमाणाः कृष्णाञ्जनिकाकुसुमकान्तयः, काश्चिच्चिपिटनासाः कुन्दकान्तदन्तपङ्क्तयो मायूरपिच्छगुच्छावनद्धकर्बुरकबरीकलापाश्चलद्वलयमुखरकरतलोत्तालतालिकारम्भरमणीयरसिकरासकक्रीडानिर्भराः कादम्बमधुपानघूर्णितदृशो दृष्टिपथमवतेरुरपराह्णमज्जनागतास्तरुणकिरातकामिन्यः ॥

कल्याणी—तत्र चेति । तत्र च=तत्स्थाने च, चटुलचञ्चरीककुलाकुलितविविधवीरुधां—चटुलैः=चपलैः, चञ्चरीककुलैः=भ्रमरसमूहैः, आकुलितानां=व्याप्तानां, विविधानां=बहुप्रकाराणां, वीरुधां=लतानां, तलेषु=अधोभूमिषु, विचरतः=भ्रमतः, अस्य=नृपतेर्नलस्य, अपराह्णमज्जनागताः=अपराह्णस्नानार्थमागताः, तरुणकिरातकामिन्यः=नवयौवनोपेतकिरातरमण्यः, दृष्टिपथम्=अक्षिमार्गम्, अवतेरुः=अवतीर्णाः । कथम्भूतास्ताः किरातकामिन्य इत्याह—रसातलेति । रसातलात्=पाताललोकात्, विनिर्गता=आगता, पन्नगाङ्गना इव=नागस्त्रिय इव, नागमदहारिण्यः—नागमदेन=गजमदजलेन, हारिण्यः=मनोज्ञाः, तेनालंकृतत्वादिति भावः । पन्नगाङ्गनापक्षे—नागानां=वासुकिप्रभृतीनां, मदं=वीर्यं, हरन्ति=मुष्णन्ति, कामक्रीडयेत्येवंशीलाः । तमालकन्दलीकोमलाङ्ग्यष्टयः—तमालकन्दली=तमालनवाङ्कुर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इव कोमला अङ्गयष्टिर्यासां तथाविधाः, श्रोणीभरालसगमनाः— श्रोणीभरात्= नितम्बगौरवात्, अलसं=मन्दं, गमनं यासां ताः; त्रिवलीतरङ्गिततनुमध्यलतिकाः— त्रिवल्या=उदररेखात्रयेण, तरङ्गिता=तरङ्गयुक्तेव, तनुमध्यलतिकाः=कटिप्रदेशः यासां ताः, काश्चित्—कापि किरातकामिन्यः, कण्ठकन्दलावलम्बितमातङ्गमौक्तिकलताः—कण्ठकन्दले=नवाङ्कुरोपमे, गलप्रदेशे अवलम्बिता=धृतेत्यर्थः, मातङ्गमौक्तिकलता=गजमुक्ताहारः यासां ताः, स्फुरन्नक्षत्रवलयाः—स्फुरद्=देदीप्यमानं, नक्षत्रवलयं=नक्षत्रचक्रवालं यासु तथाविधाः, कृष्णपक्षरात्रय इव, कृतक्रीडाशरीरपरिग्रहाः—कृतः=विहितः, क्रीडाशरीरपरिग्रहः याभिस्ताः, मूर्तिमत्य इत्यर्थः। अत्र गजमुक्तानां नक्षत्राणि, किरातकामिनीनां च कृष्णपक्षरात्रय उपमानमित्यवगन्तव्यम्। काश्चित् उभयश्रवणावसक्तदन्तिदन्तपत्त्रप्रभाधवलितमुखमण्डलाः— उभयश्रवणावसक्तं=कर्णावतंसत्वेन कर्णयुगलधृतं, यद् दन्तिदन्तपत्रं=गजदन्तखण्डः, तस्य प्रभया= कान्त्या, धवलितं=शुभ्रीकृतं, मुखमण्डलं यासां तथाविधाः, अतएव सुरसरित्सलिलसंवलितकालिन्दीजलदेवता इव—सुरसरितः=मन्दाकिन्याः, सलिलेन=जलेन, संवलितं= मिश्रितं, यत् कालिन्दीजलं=यमुनाजलं, तस्य देवता इव=तदधिष्ठातृदेवता इव, नर्मदया=तदाख्यया नद्या, आमन्त्रिताः=आहूताः। अत्र गजदन्तप्रभायाः सुरसरित्; किरातस्त्रीणां च कालिन्द्युपमानमिति बोध्यम्। काश्चित् परिधानीकृतरक्तपल्लवाः— परिधानीकृतानि=परिधानत्वेन धृतानि, रक्तपल्लवानि=लोहितकिसलयानि याभिस्ताः, तडिल्लतालेखामेखलाः=विद्युल्लेखावेष्टिता इत्यर्थः। चलदम्बुवाहपङ्क्तयइव=गतिशीलमेघश्रेणय इव, विन्ध्यस्कन्धानुबन्धिन्यः=विन्ध्यगिरिस्कन्धभागानुषक्ताः। अत्र रक्तपल्लवानां तडिल्लता, किरातस्त्रीणां चाम्बुवाहपङ्क्तिरुपमानमिति बोध्यम्। काश्चित् मातङ्गमदमण्डलमिलन्मधुकरकरालिताः—मातङ्गमदमण्डले=गजमदजलरूपाङ्गरागेण दिग्धे शरीर इत्यर्थः, मिलद्भिः=भ्रमद्भिः, मधुकरैः=भ्रमरैः, करालिताः=कालीकृताः, अतएव भीषणाः, सकलनीलोत्पलवनलक्ष्म्य इव=समस्तनीलकमलश्रिय इव, अन्यजलाशयेभ्यः=अन्यजलाशयान् विहायेत्यर्थः, महानदीं=नर्मदाम्, अवतरन्त्यः=समागच्छन्त्यः, काश्चित् लोहिताशोककुसुमस्तबककृतकर्णावतंसोत्तंसाः—लोहिताशोककुसुमस्तबकेन=रक्ताशोकपुष्पगुच्छेन, कृतः= रचितः, कर्णावतंसः=कर्णभूषणम्, उत्तंसः=शिरोमाल्यं च याभिस्तथाविधाः; स्त्रिपुरपुरन्ध्रय इव=त्रिपुरासुरस्य रमण्य इव, हरशरानलज्वालाकुलितशिरसः—हरशरानलज्वालाभिः=शिवस्य बाणवह्निशिखाभिः, आकुलितानि=व्याप्तानि, शिरांसि= मूर्धानः यासां ताः, धूमश्यामलाः—धूमैः, श्यामलाः=श्यामलाः, सलिलं=जलम्, अनुसरन्त्यः=अवतरन्त्यः। अत्र लोहिताशोककुसुमानां हरशरानलज्वाला तथा किरातकामिनीनां च श्यामत्वेन धूम उपमानमिति विवेकः। काश्चित् ललितलीलामृगैः—ललितैः=सुन्दरैः, लीलामृगैः=क्रीडाहरिणैः, अनुगम्यमानाः=अनुस्रिय-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माणाः, शरीरवत्यः=मूर्तिमत्यः, अञ्जनशैलस्थलाधिदेवता इव=अञ्जनपर्वताधिष्ठातृदेवता इव, तीर्थावगाहनानुरागिण्यः=तीर्थस्नानाभिलाषिण्यः, काश्चित् जराजर्जरशबरकञ्चुकिकरावलम्बलीलागामिन्यः—जराजर्जरागां=समधिकवृद्धानां, शबरकञ्चुकिनां=शबराणामन्तःपुरसेवकानां, करावलम्बेन=हस्तावलम्बेन, लीलया=सविलासं गच्छन्तीत्येवंशीलाः, स्फुरदिन्द्रनीलशिलापुत्रिका इव—स्फुरन्त्यः=दीप्यमानाः, इन्द्रनीलशिलापुत्रिका इव=इन्द्रनीलमणिनिर्मितपुत्तलिका इव, इन्द्रजालिकैः=मायिकैः, सञ्चार्यमाणाः=नर्त्यमानाः, कृष्णाञ्जनिकाकुसुमकान्तयः—कृष्णाञ्जनिका=तमाललता, तस्याः कुसुमानां=पुष्पाणां, कान्तिरिव कान्तिर्यासां तास्तथोक्ताः, काश्चित् चिपिटनासाः—चिपटा नासा=नासिका यासां ताः, कुन्दकान्तदन्तपंक्तयः—कुन्दं=माध्यं कुसुममिव, कान्ता=रम्या, दन्तपङ्क्तिः=दशनावलिः यासां ताः, मायूरपिच्छगुच्छावनद्धकर्बुरकबरीकलापाः—मायूरपिच्छगुच्छेन=मयूरपिच्छपुञ्जेन, अवनद्ध =बद्धः, कर्बुरः=शबलः, कबरीकलापः=केशपाशः यासां ताः, चलद्वलयमुखरकरतलोत्तालतालिकारम्भरमणीयरसिकरासकक्रीडानिर्भराः—चलद्भिः=चञ्चलैः, वलयैः=कङ्कणैः, मुखराः=शब्दायमानाः, करतलाः, तैः उत्तालः=प्रबलः, यः तालिकारम्भः=तालिकावादनव्यापारः, तेन रमणीया, रसिका=सरसा च, या रासकक्रीडा=क्रीडामूलकं नृत्यं, तत्र निर्भराः=उत्सुकाः, कादम्बमधुपानघूर्णितदृशः—कादम्बं=कदम्बपुष्पनिर्मितं, यत् मधु=मद्यं, तस्य पानेन घूर्णिते दृशौ=नयने यासां ताः ॥

ज्योत्स्ना—और वहाँ पर चञ्चल भ्रमरसमूहों से व्याप्त नाना प्रकार की लताओं के नीचे विचरण करते हुए राजा नल के सामने अपराह्णकालिक (दोपहर के बाद का) स्नान करने के लिए आई हुई तरुण किरातकामिनियाँ अवतरित हुईं (दिखलाई पड़ीं)। वे (किरातकामिनियाँ) पाताल लोक से आई हुई नागमदहारिणी (वासुकिप्रभृति नागों के मद (वीर्य) को (कामक्रीडा के द्वारा) हरण करने वाली; नाग-कामिनियों के समान नागमद (हाथियों के मद) का लेप करने से सुशोभित थीं, उनकी अङ्गयष्टि तमाल वृक्ष के अंकुर के समान कोमल थी, वे नितम्ब के भारी होने के कारण धीरे-धीरे चलने वाली थीं, त्रिवली (नाभि की तीन रेखाओं) के कारण उनके शरीर का मध्यभाग (कमर) तरङ्गयुक्त के समान था। गजमौक्तिकों की माला को नूतन अंकुरसदृश अपने कण्ठ में धारण की हुई कोई देदीप्यमान नक्षत्रों से समन्वित क्रीडाशरीर धारण की हुई कृष्णपक्ष की रात्रियों के समान लग रही थी। कोई दोनों कानों में धारण किये हुए हाथीदाँत से बने आभूषणों की कान्ति से धवलित मुखमण्डल वाली होने से ऐसी प्रतीत होती थी मानों गंगाजल से संवलित यमुनाजल की अधिष्ठात्री देवियाँ नर्मदा नदी के द्वारा आमन्त्रित की गई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हों। विद्युल्लतारूप रक्तपल्लवों को परिधान के रूप में धारण कर कोई विन्ध्याचल के स्कन्धभाग से संसक्त विद्युल्लेखा से आवेष्टित चलायमान मेघमाला के समान लग रही थीं। कोई हाथियों के मदजलरूप अङ्गराग से लिप्त (शरीर) पर सञ्चरण करते हुए भ्रमरों के द्वारा काली (कृष्ण वर्ण की) बना दी गई थी, अतएव ऐसी प्रतीत होती थी मानों समस्त नीलकमलों की लक्ष्मियाँ अन्य जलशयों का त्याग कर महानदी नर्मदा में उतर रही हों। कोई रक्ताशोक-पुष्पगुच्छों से निर्मित कर्णाभूषणों और शिरोमाल्यों को धारण कर ऐसी प्रतीत होती थी मानों भगवान् शिव की बाणाग्नि की ज्वाला से आकुल शिर वाली, धूम के कारण श्यामल (नीली) बनी हुई त्रिपुरासुर की रमणियाँ जल में उतर रही हों। कोई सुन्दर लीलामृगों के द्वारा अनुसरण की जाती हुई तीर्थस्थान की अभिलाषिणी अञ्जन पर्वत की शरीरधारिणी अधिष्ठात्री देवियों के समान प्रतीत होती थी। अत्यधिक वृद्ध किरातकञ्चुकियों के हाथों का सहारा लेकर लीलापूर्वक घूमती हुई तमाललता के पुष्प की कान्ति के समान कान्ति वाली कोई ऐन्द्रजालिकों (जादूगरों) द्वारा चलाई (नचाई) जाती हुई दीप्यमान इन्द्रनीलमणि से निर्मित पुत्तलिका के समान मालूम पड़ती थी। कोई चिपटी नाक वाली थी, (जिसकी) दन्तपंक्ति कुन्दपुष्पों के समान रमणीय थी, मयूरपंख के गुच्छों से बँधे हुए (उनके) केशकलाप (वेणियाँ) चितकवरी थीं, चञ्चल कंकणों से शब्दायमान हथेलियों द्वारा जोर-जोर से तालियाँ बजाने से रमणीय और सरस क्रीड़ामूलक नृत्य में उत्सुक होकर कदम्बपुष्प से निर्मित मद्य के पान से चढी हुई आँखों वाली थी॥

ततश्च ताः सूक्ष्ममुक्ताफलधवलवालुकापुलिनपृष्ठे लब्धपदभागाः स्वैरं स्वैरमनुच्चचरणचलनक्रमात्क्रेङ्कारितनूपुररवाकृष्टकलहंसकुलमनाकुलकलगीततरङ्गासन्नरङ्गितकुरङ्गमनङ्गभावभूयिष्ठमनुभूय तीरविहारसुखम्, अनन्तरमक्रूरजलचरमवेगवहत्सलिलमुत्फुल्लविविधविकसिताम्बुजजातिजीवितजीवञ्जीवकमुत्कूजितकुररमारसितसारसमुन्मदहासिहंसावतंसमुरःप्रमाणाच्छोदकमतिरमणीयं ह्रदमवातरन्॥

कल्याणी – ततश्चेति। ततः=तदनन्तरं च, ताः=किरातकामिन्यः, सूक्ष्ममुक्ताफलधवलवालुकापुलिनपृष्ठे—सूक्ष्मैः मुक्ताफलैः=मौक्तिकचूर्णैः यद्वा मौक्तिकचूर्णवद्, धवले=शुभ्रे, वालुकापुलिनपृष्ठे=वालुकातटधरातले, लब्धपदभागाः=कृतचरणविन्यासाः, स्वैरं स्वैरं=मन्दं मन्दम्, अनुच्चचरणचलनक्रमात्=अदीर्घपदविन्यासपूर्वकं चलनक्रमात्, क्रेङ्कारितनूपुररवाकृष्टकलहंसकुलम्—क्रेङ्कारितं=कृतक्रेङ्कारं, क्रेङ्कार इति ध्वनिं कुर्वदित्यर्थः। नूपुररवैः=नूपुरध्वनिभिः, आकृष्टम्=उन्मुखीकृतं, कलहंसकुलं=कलहंसचक्रवालं यत्र तादृशम्। अयं भावः—नर्मदानदी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीरे किरातकामिन्यो मन्दं मन्दं चलन्ति, तन्नूपुरध्वनिमन्यकलहंसानां शब्दं मत्वा कलहंसा क्रेङ्कारध्वनिं कुर्वन्तस्तदभिमुखं समुत्सुका धावन्तीति । अनाकुलकलगीत-तरङ्गासन्नरङ्गितकुरङ्गम्—अनाकुलस्य=धीरस्य प्रशान्तस्य च, कलगीतस्य=मधुर-गानस्य, तरङ्गैः=लहरीभिः, आसन्नरङ्गिताः=समीपमुपागताः, कुरङ्गाः=मृगाः यत्र तादृशम्, अनङ्गभावभूयिष्ठं=समधिककामभावसम्पन्नं, तीरविहारसुखं=तटविहार-जन्यं सुखम्, अनुभूय=आस्वाद्य, अनन्तरं=पश्चात्, अक्रूरजलचरम्—अक्रूराः=न भीषणाः, जलचराः=जलजन्तवः यत्र तथाविधम्, अवेगवहत्सलिलम्—अवेगेन=न वेगेन, वहत्=प्रवहत्, सलिलं=जलं यत्र तादृशम्, उत्फुल्लविविधविकसिताम्बुज-जातिजीवितजीवञ्जीवकम्—उत्फुल्लं=सुखयुक्तं, विविधविकसिताम्बुजजातिभिः=विविधविकचकमलजातिभिः, जीवितं=जीवनं येषां तथाविधा, जीवञ्जीवाः=पक्षिविशेषाः यत्र तादृशम्, उत्कूजितकुररम्—उत्कूजिताः=ध्वनिं कुर्वन्तः, कुररा:=पक्षिविशेषाः यत्र तादृशम्, आरसितसारसम्—आरसिताः=शब्दायमानाः, सारसाः=सारसपक्षिणः यत्र तथाविधम्, उन्मदहासिहंसावतंसम्—उद्गतः मदः येषां त उन्मदाः=मदोन्मत्ताः, हासिनः=प्रसन्नाश्च, हंसाः=हंसपक्षिणः एव अव-तंसाः=भूषणानि यस्य तथाविधम्, उरःप्रमाणाच्छोदकम्—उरःप्रमाणं=वक्षोदघ्नम्, अच्छोदकं=निर्मलजलं यत्र तथाविधम् [एतैर्ह्रदस्य जलक्रीडायोग्यत्वं द्योतितम्], अतिरमणीयं=समधिकरम्यं, ह्रदं=सरोवरम्, अवातरन्=जलक्रीडार्थं प्राविशन् ॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद वे किरातकामिनियाँ मुक्तामणियों के चूर्ण से अथवा मुक्तामणि के चूर्ण के समान धवल बालुकामय तीर पर पैर रख कर धीरे-धीरे थोड़े-थोड़े पैर उठाकर चलने के कारण (अपने) नूपुरों की ध्वनि से क्रेंकार ध्वनि करने वाले कलहंसों को (अपनी ओर) आकृष्ट की हुई, धीर और प्रशान्त मधुर गान के तरंगों से मृगों को समीप लाती हुई, समधिक कामभाव से सम्पन्न तटविहारजन्य सुख का अनुभव करने के पश्चात् क्रूरतारहित जलजन्तुओं वाले, वेगरहित प्रवहमान जल वाले, नाना प्रकार के विकसित कमललताओं के द्वारा जीवित रहने वाले सुखयुक्त जीवंजीव नामक विशेष प्रकार के पक्षी वाले, शब्दायमान कुरर पक्षियों वाले, सारस पक्षियों की मधुर ध्वनि वाले, मदोन्मत और प्रसन्न हंसरूप आभूषण वाले, वक्षःस्थलपर्यन्त निर्मल जल वाले अत्यन्त रमणीय सरोवर में (जलक्रीड़ा करने के लिए) उतर गईं (प्रविष्ट हो गईं) ॥

अवतीर्य च ताः काश्चित्पन्नगपतिपुरन्ध्र्य इवोद्गीर्णविषगण्डूषाः, काश्चिद्राक्षसप्रमदा इव रक्तोत्पलाकृष्टिव्यसनिन्यः, काश्चिद्गोपाङ्गना इव गृहीतपुण्डरीकाक्षाः, काश्चित्कार्तिकेयशरपङ्क्तय इव विश्लेषितक्रौञ्चाः, काश्चित्कुरुसेना इव धार्तराष्ट्रशकुनिमार्गेणानुधावमानाः, काश्चिद्रात्रय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इव विघटितचक्रवाकमिथुनाः; काश्चिच्चकोराङ्गना इव चञ्चूकृतदीर्घकमलनालैः शशधरकरनिर्मलजलमास्वादयन्त्यः, काश्चित्करिण्य इव सरसबिसाग्राणि ग्रसमानाः, काश्चिज्जलयन्त्रपुत्रिका इव सम्पुटितमुखपाणिपल्लवयुगलाग्ररन्ध्रोन्मुक्तसूक्ष्मवारिधाराः, कश्चिद्धीरुनार्य इव प्रियवारितरणाः, स्तनगण्डशैलशिखरास्फालनोल्ललत्तरङ्गान्तरतरत्तरुणतामरसरससुरभिसलिलमवगाहमानाश्चिरं चिक्रीडुः ॥

कल्याणी—अवतीर्येति। अवतीर्य च=नर्मदासलिलं प्रविश्य च, ताः=शबरकामिन्यः, काश्चित्=काऽपि, पन्नगपतिपुरन्ध्रय इव=सर्पराजरमण्य इव, उद्गीर्णविषगण्डूषाः—उद्गीर्णः=मुखाद् बहिरुत्क्षिप्तः, विषस्य=जलस्य, पक्षे—गरलस्य, गण्डूषः याभिस्ताः, काश्चिद् राक्षसप्रमदा इव=राक्षसाङ्गना इव, रक्तोत्पलाकृष्टिव्यसनिन्यः—रक्तोत्पलानां=लोहितकमलानाम्, आकृष्टिः=उत्पाटनं, तत्र व्यसनम्=आसक्तिः अस्त्यासामिति तथोक्ताः, पक्षे—रक्तेन=रुधिरेण, उत्=उत्कृष्टं, यत् पलं=मांसं, तस्य आकृष्टौ=ग्रहणे, व्यसनिन्यः=आसक्तिमत्यः। काश्चिद् गोपालाङ्गना इव=गोपस्त्रिय इव, गृहीतपुण्डरीकाक्षाः—गृहीते=धृते, पुण्डरीके=कमले, इव अक्षिणी=नेत्रे याभिस्ताः, पक्षे—गृहीतः=सादरं स्वीकृतः, पुण्डरीकाक्षः=कृष्णः याभिस्ताः। काश्चित् कार्तिकेयशरपङ्क्तय इव=स्कन्दबाणपङ्क्तय इव, विश्लेषितक्रौञ्चाः—विश्लेषिताः=वियोजिताः, दूरं समुत्सारिता इति यावत्। क्रौञ्चाः=पक्षिविशेषाः याभिस्ताः, पक्षे—विश्लेषितः=विदारितः, क्रौञ्चो नाम गिरिर्याभिस्ताः। काश्चित् कुरुसेना इव=कौरवचम्व इव, धार्तराष्ट्रशकुनिमार्गेण—धार्तराष्ट्राः=हंसाः, ये शकुनयः=पक्षिणः तेषां मार्गेण=पथेन, अनुधावमानाः=अनुस्रियमाणाः, हंसाननुसरन्त्य इत्यर्थः। पक्षे—धार्तराष्ट्रः=धृतराष्ट्रपुत्रो दुर्योधनः, शकुनिः=दुर्योधनमातुलश्च, तयोर्मार्गेणानुधावमानाः। काश्चिद् रात्रय इव=रजन्य इव, विघटितचक्रवाकमिथुनाः—विघटितानि=विश्लेषितानि, चक्रवाकमिथुनानि याभिस्ताः। काश्चित् चकोराङ्गना इव=चकोर्य इव, चञ्चूकृतदीर्घकमलनालैः—अचञ्चूनि चञ्चूनि कृतानीति चञ्चूकृतानि यानि दीर्घकमलनालानि तैः, शशधरकरनिर्मलजलम्—शशधरकरवत्=चन्द्रकिरणवत्, निर्मलं=स्वच्छं, जलं=सलिलम्, आस्वादयन्त्यः=पिबन्त्यः, पक्षे—चञ्च्वां कृतैः=धृतैः, दीर्घकमलनालैः, शशधरकरः=चन्द्रकिरण एव निर्मलं जलम्। चकोर्यो हि चन्द्रकरान् पिबन्ति। काश्चित् करिण्य इव=हस्तिन्य इव, सरसबिसाग्राणि=स्वादुकमलतन्त्वग्रभागान्, ग्रसमानाः=आस्वादयन्त्यः। काश्चित् जलयन्त्रपुत्रिका इव=जलयन्त्रपुत्तलिका इव, सम्पुटितमुखपाणिपल्लवयुगलाग्ररन्ध्रोन्मुक्तसूक्ष्मवारिधाराः—संपुटितं मुखं=वदनं येन तथाविधस्य पाणिपल्लवयुगलस्य=करकिसलयमिथुनस्य, अग्ररन्ध्रेण=अग्रच्छिद्रेण, उन्मुक्ताः=परित्यक्ताः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूक्ष्मवारिधारा याभिस्ताः; जलपूर्णं मुखं करद्वयेन पिधाय करद्वयमध्ये च सामान्यच्छिद्रं कृत्वा तेन जलमुन्मुञ्चन्तीति भावः। काश्चिद् भीरुनार्यः इव=कातरस्त्रिय इव, प्रियवारितरणाः—प्रियं=रुचिकरं, वारिणः=जलस्य, तरणं यासां तास्तथोक्ताः, पक्षे— वारितः=निषिद्धः, रणः=संग्रामः याभिस्ता वारितरणाः, प्रियाणां वारितरणा इति प्रियवारितरणाः [सर्वत्र श्लेषानुप्राणितोपमालङ्कारः]। स्तनगण्डशैलशिखरास्फालनोल्ललत्तरङ्गान्तरतरत्तरुणतामरसरससुरभिसलिलम्—स्तनावेव=पयोधरावेव, गण्डशैलौ=शिलाशिखरौ, तयोः शिखराभ्याम्=अग्रभागाभ्यां, यत् आस्फालनं=सङ्घट्टनं, तेन उल्ललन्तः=उत्तिष्ठन्तः, ये तरङ्गाः=वीचयः, तेषाम् अन्तरे=मध्ये, तरन्ति यानि तरुणानि=नवविकसितानि, तामरसानि=कमलानि तैः, रससुरभिः=मधुरगन्धोपेतं, सलिलं=जलम्, अवगाहमानाः=विक्षुब्धं कुर्वन्त्यः, चिरं=बहुकालं, चिक्रीडुः=जलविहारं चक्रुः ॥

ज्योत्स्ना—और उस नर्मदाजल में प्रविष्ट होकर उन किरातकामिनियों में से कोई जहर को उद्गीर्ण करती सर्पराज की पत्नियों के समान विष (जल) के कुल्ले कर रही थी, कोई रक्तोत्पलाकृष्टिव्यसनिनी (रुधिर से परिपूर्ण उत्कृष्ट मांस को ग्रहण करने में आसक्त रहने वाली) राक्षसपत्नियों के समान रक्तकमलों को उखाड़ने में आसक्ति रखने वाली थी, कोई आदर के साथ कृष्ण को ग्रहण करने वाली गोपांगनाओं के समान कमल के समान सुन्दर आँखों को धारण करने वाली थी, कोई क्रौञ्चनामक पर्वत को विदीर्ण करने वाली कार्तिकेय की बाणपंक्ति के समान क्रौञ्चनामक पक्षी को दूर हटाने वाली थी, कोई धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन और उसके मामा शकुनि के मार्ग का अनुगमन करने वाली कुक्कुटसेना के समान हंसपक्षियों के मार्ग के पीछे दौड़ने वाली थी, कोई चक्रवाकयुगलों को वियुक्त करने वाली रात्रियों के समान (अत्यन्त कृष्ण वर्ण वाली) थी, कोई चोंच से पकड़े हुए लम्बे कमलनालों के द्वारा चन्द्रकिरणरूप निर्मल जल का पान करती हुई चकोरियों के समान चोंच बनाये हुए लम्बे कमलनालों के द्वारा चन्द्रकिरण के समान निर्मल जल का पान कर रही थी, कोई बिसतन्तु के सरस अग्रभाग को खाने वाली हथिनियों के समान कमलनाल के अग्रभाग का आस्वाद ले रही थी, कोई जलयन्त्रपुत्तलिका (जल में बनाये गये पुतली की आकृति के फव्वारे) के समान सम्पुटित मुख वाले (अञ्जलिबद्ध) करकिसलयों के अग्रभागस्थित छिद्रों से जल की महीन धारा गिरा रही थी, कोई युद्ध में जाने से अपने पतियों को रोकने वाली कातर स्त्रियों के समान जल में तैरना पसन्द करने वाली थी। (इस प्रकार) स्तनरूपी गण्डशैलों (प्रस्तरों) के शिखरों से टकराने के कारण उठे हुए तरङ्गों के मध्य तैरते हुए नूतन विकसित कमलों के मधुर गन्ध से सुवासित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जल को विक्षुब्ध करती हुई (जल में स्नान करती हुई) उन किरात-कामिनियों ने बहुत देर तक क्रीड़ा (जलविहार) किया ॥

अवनिपतिरपि विस्मयविस्मृतनिमेषोन्मेषनयनस्ताश्चिरमवलोक्य चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—अवनिपतिरिति । अवनिपतिरपि=भूपालः नलोऽपि, विस्मयविस्मृतनिमेषोन्मेषनयनः—विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्मृतौ निमेषोन्मेषौ याभ्यां तथाविधे नयने=नेत्रे यस्य स तथोक्तः, विस्मयविस्फारितलोचन इत्यर्थः । ताः=किरातकामिनीः, चिरं=बहुकालम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, चिन्तयाञ्चकार=विचारयामास ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल ने भी आश्चर्य के कारण निर्निमेष नयनों से उन किरातकामिनियों को बहुत समय तक देखने के पश्चात् विचार किया ॥

जातिर्यत्र न तत्र रूपरचना नेत्रोत्सवारम्भिणी
रूपश्रीरपि यत्र तत्र सुलभः श्लाघ्यो न जन्मोदयः ।
इत्येकस्थ-समस्तसुन्दरगुण-प्रद्वेषमभ्यस्यतो
धातस्तात वृथाश्रमस्य भवतः सृष्टिक्रमो दह्यताम् ॥५७॥

अन्वयः—यत्र जातिः तत्र न नेत्रोत्सवारम्भिणी रूपरचना, यत्र रूपश्रीः अपि तत्र श्लाघ्यः न जन्मोदयः सुलभः इति एकस्थसमस्तसुन्दरगुणप्रद्वेषम् अभ्यस्यतः (अतएव) वृथाश्रमस्य भवतः हे तात धातः ! सृष्टिक्रमः दह्यताम् ॥५७॥

कल्याणी—जातिरिति । यत्र=यस्मिन्, जातिः=प्रशस्तवंशः, तत्र=तस्मिन्, न=नहि, नेत्रोत्सवारम्भिणी=नयनानन्दकारिणी, रूपरचना=सौन्दर्यनिर्माणम्, यत्र=यस्मिन्, रूपश्रीरपि=सौन्दर्यलक्ष्मीश्च, तत्र=तस्मिन्, श्लाघ्यः=प्रशंसनीयः, न जन्मोदयः=न जातिः, सुलभः=सुप्राप्यः । इति=एवम्, एकस्थसमस्तसुन्दरगुणप्रद्वेषम्—एकस्थानां=एकत्रितानां, समस्तसुन्दरगुणानां प्रद्वेषं=शत्रुभावम्, अभ्यस्यतः=सततं कुर्वतः, अतएव वृथाश्रमस्य—वृथा=वैयर्थ्यं गतः, श्रमः=सृष्टिरचनायासः यस्य तस्य, भवतः=विधातुः, हे तात धातः=ब्रह्मन् ! सृष्टिक्रमः=सृजनव्यापारक्रमः, दह्यतां=दग्धो भवतु, निरर्थकत्वाद् विनश्यदिति भावः । या रमणी सद्वंशप्रसूता तत्र नेत्रानन्दकारिणी रूपरचना नोपलभ्यते, यस्यां रूपश्रीर्लभ्यते सा न सत्कुलोत्पन्ना अतएवानुपभोग्या । हे तात ! ब्रह्मन् ! सत्कुलसौन्दर्यादिसमस्तगुणानामेकत्रावस्थानं तुभ्यं न रोचते तदेष तव सृष्टिरचनाश्रमो व्यर्थ एव । भवतोऽनेन सृष्टिक्रमेण किम् ? एतादृशस्य सृष्टिक्रमस्य दहनमेव वरमिति भावः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५७॥

ज्योत्स्ना—जहाँ पर जाति (उत्तम कुल) मिलती है वहाँ नयनों को आनन्द प्रदान करने वाली रूपरचना (सौन्दर्य-निर्माण) नहीं प्राप्त होती और जहाँ पर सौन्दर्यलक्ष्मी मिलती है वहाँ पर प्रशंसनीय (उत्तम) कुल नहीं मिलता । इस प्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक ही स्थान पर समस्त सुन्दर गुणों के रहने के प्रति सदा द्वेषभाव रखने वाले, अतएव व्यर्थ का (सृष्टिरचनारूपी) परिश्रम करने वाले हे तात ब्रह्मन् ! आपका सृष्टिक्रम दग्ध हो जाय अर्थात् निरर्थक होने के कारण विनष्ट हो जाए ॥५७॥

तथा हि —

ग्रीवालम्बितपद्मनाललतिकाः कर्णावतंसीकृत-
प्रत्यग्रोन्मिषितासितोत्पलदलैः सन्दिग्धनेत्रद्वयाः ।
कस्यैता जलदेवता इव कुचप्राग्भारभुग्नोर्मयः
स्नानासक्तपुलिन्दराजवनिताः कुर्वन्ति नोत्कं मनः ॥५८॥

अन्वयः—ग्रीवालम्बितपद्मनाललतिकाः कर्णावतंसीकृतप्रत्यग्रोन्मिषितासितोत्पलदलैः सन्दिग्धनेत्रद्वयाः कुचप्राग्भारभुग्नोर्मयः जलदेवता इव एताः स्नानासक्तपुलिन्दराजवनिताः कस्य मनः उत्कं न कुर्वन्ति ॥५८॥

कल्याणी—ग्रीवालम्बितेति । ग्रीवालम्बितपद्मनाललतिकाः—ग्रीवायां=कण्ठे, आलम्बिता=लम्बमाना, पद्मनाललतिका=कमलनालमाला यासां ताः, कर्णावतंसीकृतप्रत्यग्रोन्मिषितासितोत्पलदलैः=कर्णभूषणत्वेन धृतनवविकसितनीलकमलपत्रैः, सन्दिग्धनेत्रद्वयाः—संदिग्धं नेत्रद्वयं याभिस्ताः=सन्देहयुक्तद्विनयनाः; कर्णभूषणत्वेन धृताभ्यां प्रत्यग्रनीलकमलाभ्यां नेत्रद्वयस्य भ्रान्तिर्जायत इति भावः । कुचप्राग्भारभुग्नोर्मयः—कुचयोः=स्तनयोः, प्राग्भारेण=अग्रभागेन, भुग्नाः=चूर्णिताः, ऊर्मयः=तरङ्गाः यासां तास्तथोक्ताः, जलदेवता इव=जलाधिष्ठातृदेवता इव, एताः=इमाः, स्नानासक्तपुलिन्दराजवनिताः=स्नानपरायणाः शबरराजपत्न्यः, कस्य=कस्य पुरुषस्य, मनः=चित्तम्, उत्कम्=उत्सुकं, न कुर्वन्ति=न विदधन्ति, सर्वस्यापि मन उत्कण्ठितं कुर्वन्त्येवेत्यर्थः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥५८॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; गले में कमलनाल की मालायें लटकायी हुई, कर्णाभूषण के रूप में धारण की हुई नूतन विकसित नीलकमल के पत्रों से दो नेत्रों का भ्रम उत्पन्न करने वाली, स्तनों के अग्रभाग से तरंगों को भग्न (चूर्ण) करने वाली, जलाधिष्ठात्री देवता के समान स्नान में आसक्त ये किरातराजपत्नियाँ किसके मन को उत्कण्ठित नहीं कर देती ? अर्थात् सबके मन को उत्कण्ठित कर ही देती हैं ॥५८॥

अपि च —

एतस्याः करिकुम्भसन्निभकुचप्राग्भारपृष्ठे लुठद्-
गुञ्जागर्भगजेन्द्रमौक्तिकसरश्रेणी-मनोहारिणि ।
दूरादेत्य तरङ्ग एष पतितो वेगाद्विलीनः कथं
को वान्योऽपि विलीयते न सरसः सीमन्तिनीसङ्गमे ॥५९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—लुठद्गुञ्जागर्भगजेन्द्रमौक्तिकसरश्रेणीमनोहारिणि एतस्याः करिकुम्भसन्निभकुचप्राग्भारपृष्ठे दूरात् एत्य वेगात् पतितः एषः तरङ्गः विलीनः जातः, अन्योऽपि को वा सरसः सीमन्तिनीसङ्गमे कथं न विलीयते ।।५९।।

कल्याणी—एतस्या इति। लुठद्गुञ्जागर्भगजेन्द्रमौक्तिकसरश्रेणीमनोहारिणि—गुञ्जा गर्भे=मध्ये यस्याः सा गुञ्जागर्भाः, लुठन्ती या गुञ्जागर्भाः, गजेन्द्रमौक्तिकसरश्रेणी=गजमुक्तादामपङ्क्तिः, तया मनोहारिणि=रमणीये, एतस्याः=शबरवनितायाः, करिकुम्भसन्निभकुचप्राग्भारपृष्ठे—करिकुम्भसंनिभकुचयोः=गजगण्डस्थलसदृशस्तनयोः; प्राग्भारपृष्ठे=शिखरप्रदेशे, दूरात्=विप्रकृष्टात्, एत्य=आगत्य, वेगात्=रभसात्, पतितः=अधोगतः, एषः=अयं, तरङ्गः=वीचिः, विलीनः=अनुषक्तः, जातः=सञ्जातः। अन्योऽपि=अपरोऽपि, को वा सरसः=स्निग्धः जनः, सीमन्तिनीसङ्गमे=रमणीसङ्गमे, कथं न, विलीयते=विलीनो भवति। तरङ्गोऽपि दूरादेत्य कामिनीकुचशिखरे वेगात्पतितो विलीनो भवति चेत्तर्हि सरसानामन्येषां जनानां स्त्रीसङ्गमे विलीनभावस्य का कथेति भावः। अर्थापत्तिरलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ।।५९।।

ज्योत्स्ना—और भी—बीच-बीच में गुञ्जे से समन्वित गजमुक्ता-माला की पंक्तियों के कारण मनोहर इस शबरवनिता के गज-गण्डस्थल-सदृश स्तनों के शिखरभाग पर दूर से आकर वेगपूर्वक गिरती हुई तरंगें विलीन हो गई हैं। क्या अन्य भी कोई ऐसा सरस व्यक्ति होगा जो कि स्त्रीसंगम की स्थिति में भी विलीन नहीं हो जाता होगा ?

आशय यह है कि कामिनी के स्तनों के अग्रभाग से टकराकर दूर से तीव्र प्रवाहपूर्वक आती हुई जलतरंगें भी यदि विलीन हो जाती हैं तो अन्य सरस लोगों के स्त्रीसंगम में विलीन होने की दशा के बारे में क्या कहा जाय ।।५९।।

इयं तु—

निजप्रियमुखभ्रान्त्या हर्षेणाचुम्बदम्बुजम्।
दष्टाधरा तु भृङ्गेण सीत्कारमकरोन्मृदु ।।६०।।

अन्वयः—(इयं तु) निजप्रियमुखभ्रान्त्या हर्षेण अम्बुजम् अचुम्बत्, तु भृङ्गेण दष्टाधरा मृदु सीत्कारम् अकरोत् ।।६०।।

कल्याणी—इयं तु निजेति। (इयं=किरातवनिता तु), निजप्रियमुखभ्रान्त्या=स्वप्रियस्य मुखं मत्वा, हर्षेण=सहर्षम्, अम्बुजं=कमलम्, अचुम्बत्=चुचुम्ब, तु=किन्तु, भृङ्गेण=कमललीनेन भ्रमरेण, दष्टाधरा—दष्टः अधरः=ओष्ठः यस्यास्तथाभूता सती, मृदु=मन्दं, सीत्कारं=दंशजनितपीडया सीत्कारध्वनिम्, अकरोत्=चकार। कमले प्रियमुखभ्रान्त्या भ्रान्तिमान् अलङ्कारः। नायिका स्वप्रियमुख-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ्रान्त्याऽम्बुजचुम्बनमकरोत् । तत्र चुम्बनजनितानन्दस्तु दूरे तिष्ठतु, भृङ्गेणाधरो दष्ट इति प्रारब्धकार्यवैफल्येऽनर्थोत्पत्तिरूपो विषमोऽलङ्कारः । द्वयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥६०॥

ज्योत्स्ना—इस किराती ने तो अपने प्रियतम के मुख की भ्रान्ति से प्रसन्नता के साथ कमल का चुम्बन ले लिया, किन्तु (कमल में छिपे हुए) भ्रमर के द्वारा अधरोष्ठ को काट लेने के कारण (दंशजनित पीड़ा से) धीरे-धीरे सीत्कार-(सी-सी)-ध्वनि करने लगी ॥६०॥

अनयापि—

अविरतमिदमम्भः स्वेच्छयोच्छालयन्त्या
विकच-कमल-कान्तोत्तान-हस्तद्वयेन ।
परिकलित इवार्घः कामबाणातिथिभ्यः
सलिलमिव वितीर्णं बाल्यलीलासुखाय ॥६१॥

अन्वयः—(अनयाऽपि) विकचकमलकान्तोत्तानहस्तद्वयेन स्वेच्छया अविरतम् इदम् अम्भः उच्छालयन्त्या कामबाणातिथिभ्यः अर्घः परिकलित इव (अथ च) बाल्यलीलासुखाय सलिलम् इव वितीर्णम् ॥६१॥

कल्याणी—अविरतमिति । (अनया=किरातरमण्यापि) विकचकमल-कान्तोत्तानहस्तद्वयेन—विकचं=विकसितं, कमलमिव=पद्ममिव, कान्तं=रम्यम्, उत्तानं=प्रसारितं, यद् हस्तद्वयं=पाणियुगलं तेन करणेन, स्वेच्छया=यथेच्छम्, अविरतं=निरन्तरम्, इदम्=एतत्, अम्भः=जलम्, उच्छालयन्त्या=उत्क्षिपन्त्या, कामबाणातिथिभ्यः—कामबाणाः=मदनशराः; एव अतिथयः=प्रीतिकरत्वात्स्वागतार्हा अभ्यागताः, तेभ्यः अर्घः=पूजोपहारः, परिकल्पितः=सम्पादित इव, अथ च बाल्य-लीलासुखाय=बाल्योचितक्रीडाजनितसुखाय, सलिलमिव=तिलाञ्जलिरिव, वितीर्णं=दत्तम् । विकचकमलकान्तेत्यत्रोपमा । उत्तरार्द्धे तूत्प्रेक्षाद्वयम् । मालिनी वृत्तम् ॥६१॥

ज्योत्स्ना—यह किरातरमणी भी विकसित कमल के समान रमणीय फैलाये हुए दोनों हाथों से इच्छानुसार निरन्तर इस जल को उछालती हुई ऐसी प्रतीत हो रही है, मानों (प्रीतिकर होने के कारण स्वागतयोग्य) कामबाणरूप अतिथियों के लिए अर्घ दे रही हो और शैशवोचित क्रीडाजनित सुख के लिए मानों तिलाञ्जलि दे रही हो ॥६१॥

अस्याश्च—

कर्णमूलविषये मृदु गुञ्जन्पाणिपल्लवहतोऽपि हठेन ।
एष षट्पदयुवा हरिणाक्ष्याश्चुम्बति प्रिय इवास्यसरोजम् ॥६२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—पाणिपल्लवहतः अपि हठेन कर्णमूलविषये मृदु गुञ्जन् प्रियः इव हरिणाक्ष्याः आस्यसरोजम एषः षट्पदयुवा चुम्बति ॥६२॥

कल्याणी—कर्णमूलेति। पाणिपल्लवहतः—पाणिपल्लवेन=किसलयोपमकरेण, हतः=निवारितोऽपि, हठेन=आग्रहेण, कर्णमूलविषये=कर्णसमीपप्रदेशे. मृदु=मधुरं, गुञ्जन्=गुञ्जारवं कुर्वन्, गुञ्जितव्याजेन चाटुं प्रकुर्वन्नित्यर्थः। प्रिय इव=प्रियतम इव, अस्याः हरिणाक्ष्याः=मृगाक्ष्याः, आस्यसरोजं=मुखकमलम्, एषः=अयं, षट्पदयुवा=मधुपयुवा, चुम्बति=चुम्बनं करोति। उपमाऽलङ्कारः। आर्यागीतिः। तल्लक्षणं यथा—'आर्या प्राग्दलमन्तेऽधिकगुरुतादृक् परार्धमार्यागीतिः।' अर्थात् प्रथमे पादे तृतीयेऽपि द्वादशमात्राः, द्वितीये तथा चतुर्थके मात्राणां विंशतिः। इति ॥६२॥

ज्योत्स्ना—और किसलयसदृश हाथों के द्वारा दूर किये जाने पर भी आग्रहपूर्वक कानों के समीप मधुर गुञ्जार करता हुआ (चाटुकारिता करने वाले) प्रियतम के समान इस मृगनयनी के मुखकमल को यह भ्रमरयुवक चूम रहा है ॥६२॥

इतोऽप्येषा—

भ्रमकरं मकरं मकरन्दिनीं कमलिनीमलिनीमलिनीकृताम्।
तरलयन्तमवेक्ष्य महाभयादुदतरत्सरितस्त्वरितैः पदैः ॥६३॥

अन्वयः—अलिनीमलिनीकृतां मकरन्दिनीं कमलिनीं तरलयन्तं भ्रमकरं मकरम् अवेक्ष्य महाभयात् त्वरितैः पदैः (एषा) सरितः उदतरत् ॥६३॥

कल्याणी—भ्रमकरमिति। अलिनीमलिनीकृताम्—अलिनीभिः=भृङ्गीभिः, मलिनीकृताम्=आच्छाद्य श्यामीकृतां, मकरन्दिनीं—मकरन्दः=पुष्परसः अस्त्यस्यामिति मकरन्दिनी, तां मकरन्दनिर्भरामित्यर्थः। कमलिनीं=नलिनीं, तरलयन्तम्=उद्वेल्लयन्तं, [तथा जले] भ्रमकरम्=आवर्तोत्पादकं, मकरं=जलजन्तुविशेषम्, अवेक्ष्य=विलोक्य, यदुत्पन्नं महाभयं तस्मात्, त्वरितैः=त्वरायुक्तैः, पदैः=पादक्रमैः, (एषा=शबरसुन्दरी) सरितः=नदीतः, उदतरत्=बहिर्निर्गता। द्रुतविलम्बितं वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ।' इति। 'मकरं-मकरं' 'मलिनी-मलिनी' इति यमकद्वयम् ॥६३॥

ज्योत्स्ना—इधर—भ्रमरियों के द्वारा (आच्छादित कर) मलिन (श्यामल) बनाई गई मकरन्दनिर्भर कमलिनी को उद्वेलित करते हुए (और जल में) आवर्त (भँवर) को उत्पन्न करने वाले मकर को देखकर अत्यन्त भय के कारण तेज-तेज कदमों से यह शबरसुन्दरी भी नदी से बाहर निकल गई ॥६३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एताश्च—

मन्दायते दिनमिदं मदनोऽपि सज्ज-
स्तत्किं न गच्छत गृहानिति पद्मिनीभिः ।
मीलत्सरोज-गत-भृङ्ग-रुतैरिवोक्ताः
स्नात्वा शनैरनुसरन्ति तटं तरुण्यः ॥६४॥

अन्वयः—'इदं दिनं मन्दायते, मदनः अपि सज्जः, तत् (यूयं) गृहान् किं न गच्छथ' इति पद्मिनीभिः मीलत्सरोजगतभृङ्गरुतैः उक्ताः इव (एताः) तरुण्यः स्नात्वा शनैः तटम् अनुसरन्ति ॥६४॥

कल्याणी—मन्दायत इति । 'इदं दिनं=एतद् दिवसं, मन्दायते=मन्दमिवाचरति, सम्प्रति दिवसावसानं सन्निहितं वर्तत इति भावः। मदनः अपि=कामदेवोऽपि, सज्जः=शरान्मोक्तुमुद्युक्तो वर्तते, तत्=तस्मात्, यूयं गृहान्=भवनानि, किं=किमर्थं, न गच्छथ' इति=एवं, पद्मिनीभिः=कमलिनीभिः, मीलत्सरोजगतभृङ्गरुतैः=सङ्कुचत्कमलगतमधुपगुञ्जितैः, उक्ताः=उपदिष्टाः इव एताः तरुण्यः=किरातपत्न्यः, स्नात्वा शनैः=मन्दं मन्दं, तटं=कूलम्, अनुसरन्ति=अनुसरणं कुर्वन्ति, गृहगमनाय सरित उत्तरन्तीत्यर्थः । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । वसन्ततिलकं वृत्तम् ।.६४॥

ज्योत्स्ना—"यह दिन मन्द हो रहा है अर्थात् इस समय दिन की समाप्ति नजदीक है, कामदेव भी सज्जित हो चुका है (बाणों को छोड़ने के लिए तैयार है), इसलिए तुम लोग घर क्यों नहीं जा रही हो ?" इस प्रकार कमलिनियों द्वारा संकुचित होते हुए कमलों के मध्य भ्रमरों के गुञ्जारों के माध्यम से मानों उपदिष्ट की गई ये किरातपत्नियाँ भी स्नान करके धीरे-धीरे तट का अनुसरण कर रही हैं अर्थात् घर जाने के लिए नदी से बाहर निकल रही हैं ॥६४॥

एवमनेकविधविलासासक्तशबरसुन्दरीदर्शनाह्लादपुलकिते विविधवितर्ककारिणि पङ्कनिमग्नजरत्करेणुकायमाननिःस्पन्ददृशि तत्कालमुत्पन्नया मनाङ्मन्मथव्यथया धीरतया च स्पृहया च विचिकित्सया च जिघृक्षया च जिहासया च समकालमाकुलिते हृदये सङ्कीर्णभावभाजि राजनि, राजीववनविराजिते तस्मिन्नर्मदाह्रदे सलिलक्रीडासुखमतिचिरमनुभूय तीरभुवि सेव्यसितसैकतस्थलीमलंकुर्वाणासु च तासु शबरराजसुन्दरीषु श्रुतशीलश्चिन्तितवान्—

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, अनेकविधविलासासक्तशबरसुन्दरीदर्शनाह्लादपुलकिते—अनेकविधविलासेषु=विविधक्रीडासु, आसक्तानां=संलग्नानां, शबरसुन्दरीणां=किरातवनितानां, दर्शनेन=विलोकनेन, सञ्जातो य आह्लादः=आनन्दः, तेन पुलकिते=रोमाञ्चिते, विविधवितर्ककारिणि—विविधान्=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेकविधान्, वितर्कान्=चिन्तनानि करोतीत्येवंशीले, पङ्कनिमग्नजरत्करेणुकायमाननिष्पन्ददृशि—पङ्के=कर्दमे, निमग्नः यः जरत्करेणुकः=वृद्धगजः, स इव आचरन्, अतएव निःस्पन्दे=निश्चले, दृशौ=नयने यस्य सः पङ्कनिमग्नजरत्करेणुकायमाननिःस्पन्ददृक् तस्मिन्, तत्कालं=तत्क्षणम्, उत्पन्नया=सञ्जातया, मनाङ्मन्मथव्यथया=ईषत्कामपीडया, धीरतया च=धीरभावेन च, स्पृहया च=आकर्षणेन च, विचिकित्सया च=संशयेन च, जिघृक्षया च=ग्रहणेच्छया च, जिहासया च=परित्यागेच्छया च, समकालं=युगपद्, हृदये=मनसि, आकुलिते=व्याप्ते, राजनि=नृपे नले, संकीर्णभावभाजि=विविधाव्यवस्थितभावापन्ने सति, तासु=पूर्वोक्तासु, शबरराजसुन्दरीषु=किरातराजकामिनीषु, राजीववनविराजिते=कमलवनसुशोभिते, तस्मिन्=एतस्मिन्, नर्मदाह्रदे=नर्मदाजलाशये, सलिलक्रीडासुखं=जलक्रीडाजन्यमानन्दम्, अतिचिरं=समधिककालम्, अनुभूय=अनुभवं कृत्वा, तीरभुवि=तटप्रदेशे सेव्यसितसैकतस्थलीम्=उपभोग्यश्वेतबालुकामयभूमिम्, अलंकुर्वाणासु सतीषु, श्रुतशीलः=तदाख्यो नलामात्यः, चिन्तितवान्=चिन्तयाञ्चकार।।

ज्योत्स्ना - इस प्रकार विविध विलासों (क्रीड़ाओं) में संलग्न शबरसुन्दरियों को देखने से उत्पन्न आनन्द के कारण रोमाञ्चित, बहुविध तर्क-वितर्क (चिन्तन) करने वाले, पङ्क (कीचड़) में निमग्न (फँसे हुए) वृद्ध हाथी के समान निर्निमेष आँखों वाले, तत्काल उत्पन्न हुई थोड़ी कामपीड़ा, धीरता, स्पृहा (आकर्षण), विचिकित्सा (संशय), जिघृक्षा (ग्रहण करने की इच्छा) और जिहासा (परित्याग करने की इच्छा) से एक ही साथ व्याप्त हृदय वाले राजा नल के विविध अव्यवस्थित भावों से युक्त हो जाने पर, उन शबरसुन्दरियों के द्वारा कमलवन से सुशोभित उस नर्मदा-सरोवर में जलविहारजन्य आनन्द का बहुत समय तक अनुभव कर सेवन करने योग्य शुभ्र बालुकामय तटभूमि को अलंकृत करने पर श्रुतशील ने विचार किया—

'उन्मादि यौवनमिदं शबराङ्गनानां
देवोऽप्ययं नववयाः कमनीयकान्तिः।
रेवातटं चलचकोरमयूरहारि
किं स्यान्न वेद्मि जयिनी च मनोभवाज्ञा ॥६५॥

अन्वयः—शबराङ्गनानाम् इदम् उन्मादि यौवनम्, अयं देवः अपि नववयाः कमनीयकान्तिः, चलचकोरमयूरहारि रेवातटं जयिनि मनोभवाज्ञा च। (तत्) किं स्यात्, न वेद्मि ॥६५॥

कल्याणी—उन्मादीति। शबराङ्गनानां=किरातसुन्दरीणाम्, इदम्=एतत्, उन्मादि=उन्मादकं, यौवनं=तारुण्यम्। अयं=एषः, देवः अपि=महाराजः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नलोऽपि नववयाः—नवं=नूतनं, वयः=अवस्था यस्य स तथाविधः, यौवनोपेत इत्यर्थः। तथा कमनीयकान्तिभिः—कमनीया=रमणीया, कान्तिः=सौन्दर्यं यस्य स तथोक्तः, अपूर्वसौन्दर्यविशिष्ट इत्यर्थः। चलचकोरमयूरहारि—चलैः=चञ्चलैः, चकोरैः=चकोरपक्षिभिः, मयूरैः=केकीभिश्च हारि=मनोहरं, रेवातटं=नर्मदातीर-भूमिः, जयिनी=सर्वोत्कृष्टा, मनोभवाज्ञा=मदनाज्ञा च। (तत्=ईदृश्यां स्थितौ) किं स्यात्=किं भवेदिति न वेद्मि=न जानामि। वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥६५॥

ज्योत्स्ना—"शबरसुन्दरियों का यह यौवन उन्मादक है। यह महाराज भी युवावस्था वाले (नवयुवक) और कमनीय कान्ति वाले हैं। चञ्चल चकोरों एवं मयूरों से रेवातट मनोहर है और कामदेव की सर्वोत्कृष्ट आज्ञा भी है; अतः ऐसी स्थिति में क्या होगा, यह (मैं) समझ नहीं पा रहा हूँ।. ६५ ॥

तथाहि—

विकलयति कलाकुशलं, हसति शुचिं, पण्डितं विडम्बयति।
अधरयति धीरपुरुषं, क्षणेन मकरध्वजो देवः॥ ६६ ॥

अन्वयः—देवः मकरध्वजः क्षणेन कलाकुशलं विकलयति, शुचिं हसति, पण्डितं विडम्बयति, धीरपुरुषम् अधरयति ॥६६॥

कल्याणी—विकलयतीति। देवः=महाराजः, मकरध्वजः=कामदेवः, क्षणेन=स्वल्पेन कालेनैव, सपदीति यावत्। कलाकुशलं=कलानिपुणं, मेधाविनमित्यर्थः। विकलयति=विकलं करोति, शुचिं=पवित्रात्मानं, हसति=हास्यास्पदं करोति, पण्डितं=विद्वांसं, विडम्बयति=प्रवञ्चयते; धीरपुरुषं=धैर्यशालिनं जनम्, अधरयति=तिरस्करोति। आर्या जातिः ॥६६॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—महाराज कामदेव बहुत थोड़े समय में ही कलाकुशल व्यक्ति को भी व्याकुल कर देते हैं, पवित्रात्माओं को भी हास्यास्पद बना देते हैं, पण्डितों को भी धोखे में डाल देते हैं और धैर्यशाली पुरुषों को भी (समाज में) तिरस्कृत करा देते हैं ॥६६॥

अपि च—

मध्ये त्रिवलीत्रिपथे पीवरकुचचत्वरे च चपलदृशाम्।
छलयति मदनपिशाचः पुरुषं हि मनागपि स्खलितम् ॥६७॥

अन्वयः—चपलदृशां मध्ये त्रिवलीत्रिपथे पीवरकुचचत्वरे च मनाक् अपि स्खलितं पुरुषं हि मदनपिशाचः छलयति ॥६७॥

कल्याणी—मध्य इति। चपले=चञ्चले, दृशौ=नेत्रे यासां सुन्दरीणां, मध्ये=कटिप्रदेशे, त्रिवलीत्रिपथे=त्रिवलीरूपत्रिपथे, पीवरकुचचत्वरे=पीनस्तनरूपचतुष्पथे च,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनाक् अपि=ईषदपि, स्खलितं=विचलितं, पुरुषं=जनं, हि=निश्चयेन, मदनपिशाचः=कामरूपः पिशाचः, छलयति=प्रवञ्चयते; बहुधा पीडयतीत्यर्थः। क्रूरकर्मतया मदने पिशाचत्वारोपः। त्रिपथे चतुष्पथे वा पिशाचा निवसन्ति। ते तेन मार्गेण गच्छन्तं जनं बहुधा पीडयन्तीति लोकप्रसिद्धिः। रूपकालङ्कारः। आर्या जातिः ॥६७॥

ज्योत्स्ना—और भी—चञ्चल नेत्रों वाली सुन्दरियों के कटिप्रदेश (कमर), त्रिपलीरूप तिराहे और स्थूल स्तनरूप चौराहे पर थोड़े भी विचलित हुए पुरुष को निश्चय ही कामरूप पिशाच छलने लगता है अर्थात् पीड़ित करने लगता है ॥६७॥

तदस्तु प्रस्तुतरसानुनयेनैव प्रभूणां मतयो निवर्त्यन्ते निषिद्धनिषेवणात्, न प्रतिकूलतया' इत्यवधारयन्नवनिपतिमवादीत् ॥

कल्याणी—तदस्त्विति। तदस्तु=तद्भवतु, निषिद्धनिषेवणात्—निषिद्धस्य=अकुलीनसङ्गमादेः, निषेवणात्=आग्रहात्, प्रस्तुतरसानुनयेनैव=प्रकृतरसानुमत्यैव, प्रभोरभिमतं प्राक् पुरस्कृत्य पश्चाद् दोषं च दर्शयित्वेति भावः। प्रभूणां=स्वामिनां, मतयः=बुद्धयः, निवर्त्यन्ते=व्यावर्त्यन्ते, न प्रतिकूलतया=न विपरीततया, यतः सहसा निवार्यमाणः प्रभुः पराभवमिव मन्येतेति भावः। इति=एवम्, अवधारयन्=विचारयन्, स श्रुतशीलः, अवनिपतिं=राजानं नलम्, अवादीत्=अकथयत् ॥

ज्योत्स्ना—अतः ठीक है, (अकुलीन के साथ संगम आदि) निषिद्ध पदार्थों के सेवन से प्रकृत रसानुकूल चर्चा के द्वारा ही स्वामियों की बुद्धि को निवर्तित किया जा सकता है, न कि प्रतिकूल चर्चा के द्वारा।" इस प्रकार निश्चय (विचार) करता हुआ (वह श्रुतशील) राजा नल से बोला—

देव ! रमणीयः खल्वयं प्रदेशः ॥

कल्याणी - देवेति। हे देव !=महाराज ! खलु=निश्चयेन, अयम्=एषः, प्रदेशः=भूभागः, रमणीयः=रम्यः, अस्तीति शेषः ॥

ज्योत्स्ना—महाराज ! निश्चय ही यह प्रदेश (स्थान) रमणीय है ॥

तथा ह्यत्र—

आह्लादयन्ति मृदवो मृदितारविन्द-
निष्यन्दिमन्दमकरन्दकणान्किरन्तः।
एते किरातवनितास्तनशैलगण्ड-
संघट्टजर्जररुचः सरितः समीराः ॥६८॥

अन्वयः—मृदितारविन्दनिष्यन्दिमन्दमकरन्दकणान् किरन्तः किरातवनितास्तनशैलगण्डसंघट्टजर्जररुचः सरितः एते मृदवः समीराः आह्लादयन्ति ॥६८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—आह्लादयन्तीति । मृदितारविन्दनिष्यन्दिमन्दमकरन्दकणान्—मृदितानि=किरातसुन्दरीभिर्जलविहारप्रसङ्गेन परामृष्टानि, यानि अरविन्दानि=कमलानि, तेभ्यः निष्यन्दिनः=स्रवन्तः, मन्दाः=मृदवः, ये मकरन्दकणाः=मधुबिन्दवः तान्, किरन्तः=परितो विक्षिपन्तः, किरातवनितास्तनशैलगण्डसंघट्टजर्जररुचः—किरातवनितानां=शबराङ्गनानां, स्तनशैलगण्डसंघट्टेन=कुचगिरितटसंघर्षेण, जर्जरा=छिन्ना, रुक्=कान्तिः यस्यास्तथाविधायाः, सरितः=नद्याः, नर्मदाया इत्यर्थः । एते=इमे, मृदवः=मन्दाः, समीराः=वायवः, आह्लादयन्ति=आनन्दयन्ति । वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥६८॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि यहाँ पर—(किरातसुन्दरियों के जलविहार-प्रसंग में) परामृष्ट (कुचले हुए) कमलों से टपकते हुए मृदु मकरन्दकणों को चारो ओर बिखेरती हुई शबराङ्गनाओं के स्तनरूपी पर्वततट से टकराने के कारण छिन्न कान्ति वाली नर्मदा नदी की ये मृदुल (मन्द) हवायें आनन्द प्रदान कर रही हैं ॥६८॥

एताश्च—

उपनदि पुलिने पुलिन्दवध्वः स्तनपरिणाहविनिर्जितेभकुम्भाः ।
शिथिलितसलिलार्द्रकेशबन्धाः किमपि मनोभववैभवं वहन्ति ॥६९॥

अन्वयः—(एताश्च) स्तनपरिणाहविनिर्जितेभकुम्भाः शिथिलितसलिलार्द्रकेशबन्धाः पुलिन्दवध्वः उपनदि पुलिने किमपि मनोभववैभवं वहन्ति ॥६९॥

कल्याणी—उपनदीति । (एताश्च) स्तनपरिणाहविनिर्जितेभकुम्भाः—स्तनयोः=कुचयोः, परिणाहेन=विशालतया, निर्जितौ=तिरस्कृतौ, इभकुम्भौ=गजललाटप्रदेशौ याभिस्तादृश्यः, शिथिलितसलिलार्द्रकेशबन्धाः—शिथिलितः=शिथिलीकृतः, कृतविमोचन इत्यर्थः । सलिलेन=जलेन, आर्द्रः=क्लिन्नं, केशबन्धः= वेणीबन्धनं याभिस्ताः, पुलिन्दवध्वः=शबरसुन्दर्यः, उपनदि—नद्याः समीपमित्युपनदि, समीपार्थेऽव्ययीभावः । पुलिने=तटप्रदेशे, किमपि=अपूर्वं, मनोभववैभवं=कामदेवस्यैश्वर्यं, वहन्ति=धारयन्ति । पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥ ६९ ॥

ज्योत्स्ना—और ये—स्तनों की विशालता से हाथियों के कुम्भस्थल को तिरस्कृत करने वाली, जल से आर्द्र (भीगी हुई) वेणीबन्धनों को शिथिल (बन्धनमुक्त) की हुई शबरवधुयें भी नदी के समीपवर्ती तटप्रदेश पर कामदेव के अपूर्व ऐश्वर्य को धारण कर रही हैं ॥६९॥

इतश्चावलोकयतु देवः—

सरसिज-मकरन्दामोद-मत्तालि-गीत-
श्रवणसुखनिमीलच्चक्षुषः किञ्चिदेते ।
अपि दिवसमशेषं निश्चलाङ्गाः कुरङ्गाः
पुलिनभुवि विहाराहारबन्ध्या वसन्ति ॥७०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—सरसिजमकरन्दामोदमत्तालिगीतश्रवणसुखनिमीलच्चक्षुषः निश्चलाङ्गाः एते कुरङ्गाः विहाराहारबन्ध्याः अशेषं दिवसम् अपि पुलिनभुवि वसन्ति ॥७०॥

कल्याणी—सरसिजेति । सरसिजमकरन्दामोदमत्तालिगीतश्रवणसुखनिमीलच्चक्षुषः—सरसिजानां=कमलानां, मकरन्दामोदेन=मधुमयसुगन्धेन, मत्ताः=क्षीबाः, ये अलयः=भृङ्गाः, तेषां गीतश्रवणसुखेन=गुञ्जिताकर्णनजन्यानन्देन, किञ्चिन्निमीलती चक्षुषी=नेत्रे येषां ते, अतएव निश्चलाङ्गाः=स्तब्धदेहाः, एते=इमे, कुरङ्गाः=मृगाः, विहाराहारबन्ध्याः=भ्रमणभोजनविहीनाः सन्तः, अशेषं=समस्तं, दिवसमपि=दिनमपि, पुलिनभुवि=तटप्रदेशे, वसन्ति=निवासं कुर्वन्ति । मालिनी वृत्तम् ॥७०॥

ज्योत्स्ना—इधर भी देखें महाराज,

कमलों के मधुमय सुगन्ध से मत्त भ्रमरों के गीत (गुञ्जार) को सुनने से प्राप्त आनन्द के कारण आँखों को थोड़ा-थोड़ा बन्द किये हुए, अतएव निश्चल अंगों वाले ये मृग भ्रमण और भोजन का त्याग कर पूरे दिन इस तट पर ही पड़े रहते हैं ॥७०॥

इतोऽपि—

पद्मान्यातपवारणानि नलिनीपत्राणि पर्यङ्किका
दोलान्दोलनदोहदोऽपि च चलद्वीचीचयैः पूर्यते ।
आहारो बिसपल्लवं पुलिनभूर्लीलाविहारास्पदं
रेवावारिणि राजहंसशिशवस्तिष्ठन्ति धन्याः सुखम् ॥७१॥

अन्वयः—पद्मानि आतपवारणानि, नलिनीपत्राणि पर्यङ्किका, दोलान्दोलनदोहदः अपि च चलद्वीचीचयैः पूर्यते, आहारः बिसपल्लवं पुलिनभूः लीलाविहारास्पदं रेवावारिणि धन्याः राजहंसशिशवः सुखं तिष्ठन्ति ॥७१॥

कल्याणी—पद्मानीति । पद्मानि=कमलानि, आतपवारणानि=छत्राणि, नलिनीपत्राणि=कमलिनीपत्राणि, पर्यङ्किका=शय्या, दोलान्दोलनदोहदोऽपि च=दोलान्दोलनाभिलाषोऽपि च, चलद्वीचीचयैः=चञ्चलतरङ्गसमूहैः, पूर्यते=सम्पाद्यते । आहारः=भोजनं, बिसपल्लवं=मृणालपल्लवम्, पुलिनभूः=तटभूमिः, लीलाविहारास्पदं—लीलया=विलासेन, यो विहारः=सञ्चरणं, तस्य आस्पदं=स्थानम् । ईदृशे रेवावारिणि=नर्मदाजले, धन्याः=सौभाग्यशालिनः, राजहंसशिशवः—राजहंसानां=राजहंसपक्षिणां, शिशवः=शावकाः, सुखं=आनन्दं, तिष्ठन्ति=वसन्ति । अत्रातपवारणादीनां पद्माद्यात्मतया प्रकृतार्थोपयोगित्वात्परिणामालङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इधर कमल धूप के निवारण हेतु छाते का कार्य कर रहे हैं, कमलिनी-पत्र शय्याओं (पलंगों) का कार्य कर रहे हैं और चञ्चल तरङ्गसमूहों के द्वारा झूला झूलने की इच्छा भी पूर्ण की जा रही है। मृणालपल्लव भोजन हैं, तटप्रदेश (तीरभूमि) लीलापूर्वक विहार करने का स्थान है। इस प्रकार की रेवा (नर्मदा) नदी के जल में सौभाग्यशाली राजहंस पक्षियों के बच्चे सुखपूर्वक निवास करते हैं ॥७१॥

इहापि—

चिरविरचितचाटुश्चन्द्ररेखायमाणः
प्रथमरस-बिसाग्रग्रास-लीलार्पणेन।
इह रमयति हंसीं राजहंसो रिरंसुः
पुलकयति च चञ्चूकोटिकण्डूयनेन ॥७२॥

अन्वयः—इह चिरविरचितचाटुः चन्द्ररेखायमाणः रिरंसुः राजहंसः प्रथमरसबिसाग्रग्रासलीलार्पणेन हंसीं रमयति चञ्चूकोटिकण्डूयनेन पुलकयति च ॥७२॥

कल्याणी—चिरविरचितेति। इह=अत्र, चिरविरचितचाटुः—चिरं=बहुकालं, विरचितः=कृतः, चाटुः=अनुरोधः येन सः, चन्द्ररेखायमाणः=चन्द्ररेखेवाचरन्, रिरंसुः=रन्तुमिच्छुः, राजहंसः=राजहंसपक्षी, प्रथमरसबिसाग्रग्रासलीलार्पणेन—प्रथमरसेन=उत्कृष्टस्नेहेन, बिसाग्रग्रासस्य=मृणालाग्रभागकवलस्य, लीलया=क्रीडया, अर्पणेन=प्रदानेन, हंसीं=स्वप्रियां, रमयति=प्रसादयति, चञ्चूकोटिकण्डूयनेन—चञ्चुकोट्या=चञ्चवग्रभागेन, कण्डूयनं=कण्डूविनयनं तेन, पुलकयति च=पुलकितां करोति च। मालिनी वृत्तम् ॥७२॥

ज्योत्स्ना—इधर भी—यहाँ पर बहुत देर तक चाटुकारिता (अनुरोध) करता हुआ, चन्द्ररेखा के समान आचरण करता हुआ, रमण करने का इच्छुक राजहंस प्रथम रस अर्थात् उत्कृष्ट स्नेह से मृणाल के अग्रभागरूप कवल (ग्रास) को लीलापूर्वक समर्पण करते हुए अपनी प्रिया हंसी को प्रसन्न कर रहा है और चोंच के अग्रभाग से (उसे) खुजलाकर पुलकित भी कर रहा है ॥७२॥

अपि च—

इह चरति चकोरः कोरकं पङ्कजाना-
मिह चलदलिचक्राच्चक्रवाको बिभेति।
इह रमयति जीवञ्जीवको जीवितेशा-
मिह वहति विकारं हारिहारीतकोऽपि ॥७३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—इह चकोरः पङ्कजानां कोरकं चरति, इह चलदलिचक्रात् चक्रवाकः बिभेति, इह जीवञ्जीवकः जीवितेशां रमयति, इह हारिहारीतकः अपि विकारं वहति ॥७३॥

कल्याणी—इहेति। इह=अत्र, चकोरः=चकोरपक्षी, पङ्कजानां=कमलानां, कोरकं=कलिकां बिसतन्तुं वा, चरति=भक्षयति। इह=अत्र, चलदलिचक्रात्=प्रतिष्ठमानभृङ्गवृन्दात्, चक्रवाकः=चक्रवाकपक्षी, बिभेति=भयं करोति, रात्रिभ्रान्त्येति भावः। इह=अत्र, जीवंजीवकः=पक्षिविशेषः, जीवितेशां=प्राणप्रियां, रमयति=अनुरञ्जयति। इह=अत्र, हारिहारितकोऽपि—हारी चासौ हारीतकश्चेति हारिहारीतकः=मनोहरः हारीतको नाम पक्षिविशेषोऽपि, विकारं=विकृतिं, कामोद्वेगमित्यर्थः। वहति=धारयति। मालिनी वृत्तम् ॥७३॥

ज्योत्स्ना—और भी—यहाँ चकोर कमल की कलियों अथवा बिसतन्तुओं को चर (खा) रहा है, यहाँ चञ्चल भ्रमरसमूह से (रात्रि का भ्रम होने के कारण) चक्रवाक भयभीत हो रहा है, यहाँ जीवंजीवक अपनी प्रियतमा का अनुरञ्जन कर रहा है और यहाँ मनोहर हारीतक नामक पक्षी भी (कामजन्य) विकृति को धारण कर रहा है ॥७३॥

एवमसौ निषधेश्वरः श्रुतशीलेन प्रज्ञापूर्वमपररमणीयप्रदेशान्तरदर्शनव्याजेनान्तरितशबरसुन्दरीदिदृक्षाग्रहो गृहान्प्रति प्रत्यावृत्तः ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, श्रुतशीलेन=तदाख्यमन्त्रिणा, प्रज्ञापूर्वं=बुद्धिपूर्वकम्, अपररमणीयप्रदेशान्तरदर्शनव्याजेन—अपररमणीयप्रदेशान्तरस्य=अन्यरम्यप्रदेशमध्यभागस्य, दर्शनव्याजेन=विलोकनच्छलेन, अन्तरितशबरसुन्दरीदिदृक्षाग्रहः—अन्तरितः=बाधितः, शबरसुन्दरीणां=किरातकामिनीनां, दिदृक्षाग्रहः=दर्शनेच्छादृढसङ्कल्पः यस्य सः, असौ निषधेश्वरः=निषधाधिपतिर्नलः, गृहान् प्रति=भवनान्प्रति, प्रत्यावृत्तः=प्रत्यागतः ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार श्रुतशील के द्वारा बुद्धिपूर्वक अन्य रमणीय प्रदेशों के भीतरी भाग को दिखाने के बहाने से (प्रकृत प्रकरण से) बाधित किया गया शबरसुन्दरियों को देखने की इच्छारूपी दृढ़ संकल्प वाला वह निषधाधिपति नल घर (निवास स्थान) की ओर लौट आया ॥

चिन्तितवांश्च—

'कथं नु सा दमयन्ती पुरन्दरप्रमुखेषु लोकपालेष्वर्थिषु मया मनुष्यजन्मना लब्धव्येति। निवारयिष्यन्ति च तां खलु दिव्यसम्बन्धार्थिनो बान्धवाः। तत्किमिह शरणम्' इति विमुक्तदीर्घनिःसहनिःश्वासमसकृच्चिन्तयति राजनि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'राजन् ! रामाजनः पद्म इव वारितः सुतरां प्रवर्तते। नालमस्य दीर्घमनुरक्तस्य जायतेऽपरागो नाप्यलीकाभिनिवेशोऽस्य हीयते। किञ्चान्यदन्यपरिग्रहवर्तिनीनामपि स्त्रीणामन्यत्रापि रागाग्रहो भवति। यतः पश्य वरुणप्रतिग्रहेऽपि प्रतीचीयं मयि रागिणी भविष्यति' इत्येवमिममाश्वासयन्निव भगवान्भानुरुत्तुङ्गतरुशिखराणि करैः पतनभयादिवावलम्बमानः शनैर्गगनतलादवतीर्य प्रतीचीं दिशमयासीत् ॥

कल्याणी—चिन्तितवानिति। चिन्तितवांश्च=नलोऽचिन्तयच्च—कथं=केन प्रकारेण, नु इति वितर्के, पुरन्दरप्रमुखेषु=इन्द्रादिषु, लोकपालेषु=दिक्पालेषु, अर्थिषु=याचकेषु, वरेष्वित्यर्थः। सत्सु मया=नलेन, मनुष्यजन्मना=मनुष्ययोनौ जातेन, सा दमयन्ती=भीमपुत्री, लब्धव्या=प्राप्तव्या; सत्सु पुरन्दरादिवरेषु मया मनुष्येण सा दमयन्ती लब्धुमशक्यैवेति भावः। दिव्यसम्बन्धार्थिनः=देवैः सह विवाहसम्बन्धं कामयमानाः, तस्याः बान्धवाः=बन्धुजनाः, खलु=निश्चयेन, तां=दमयन्तीं, निवारयिष्यन्ति च=अवरोत्स्यन्त्यपि; तस्याः बन्धवोऽपि दिव्यसम्बन्धार्थित्वात् तामिन्द्रादिष्वेव प्रोत्साहयिष्यन्ति, न तु मयि मनुष्य इति भावः। तत्=तस्मात्, किमिह शरणम्=अत्र क उपायः? इति=एवं, विमुक्तदीर्घनिःसहनिःश्वासं—विमुक्ताः=त्यक्ताः, दीर्घाः निःसहाः=असह्याः निःश्वासाः यस्मिन् कर्मणि तद्यथा स्यात्तथा, असकृत्=अनेकशः, राजनि=नले, चिन्तयति=विचारयति सति, हे राजन्=हे नृप!, पद्म इव=जलज इव, रामाजनः=रमणीजनः, वारितः=निषिद्धः, सुतराम्=अतीव, प्रवर्तते। तथा अस्य=रमणीजनस्य, दीर्घमनुरक्तस्य=बहुकालं सानुरागस्य, सतः अलम्=अत्यर्थं, नापरागः=न रागापायः; जायते, तथास्य=एतस्य, अलीकोऽपि=मिथ्यापि, अभिनिवेशः=दृढप्रवृत्तिः,न हीयते=न निवारयितुं शक्यते; किं पुनर्यादृक् त्वय्यभिनिवेश इति भावः। पद्मपक्षे—पद्मः=अब्जम् [पद्मशब्द उभयलिङ्गः] वारितः=जलात्, सुतराम्=अतीव प्रवर्तते। तथास्य [दीर्घमनु-रक्तस्य] रक्तस्य सतो नालं=काण्डं, दीर्घमनु सह [जायते-परागः] परागः=मकरन्दः स्यात्। तथा आली=भृङ्गः, कं=जलं, तयोः अभिनिवेशः=प्रवेशः, सोऽप्यस्य न हीयते=न हीनः स्यात्। किं चान्यद् [उच्यते] अन्यपरिग्रहवर्तिनीनामपि=अन्यपुरुषस्वीकृतानामपि, स्त्रीणां=नारीणाम्, अन्यत्रापि=पुरुषान्तरेऽपि, रागाग्रहः=रागानुबन्धः, भवति। यतः=यस्मात् [संप्रत्यपि], पश्य=अवलोकय त्वं, वरुणप्रतिग्रहेऽपि प्रतीचीयं=वरुणस्वीकृतापीयं पश्चिमाशा, मयि=सूर्ये, रागिणी=सानुरागा, भविष्यति' इति=एवम्, इमम्=एतं नलम्, आश्वासयन्निव=धैर्यं धारयन्निव, भगवान्=देवः, भानुः=सूर्यः, पतनभयादिव=स्खलनभियेव, करैः=किरणैर्हस्तैश्च, उत्तुङ्गतरुशिखराणि=उन्नतवृक्षाग्रभागान्, अवलम्बमानः=अवलम्बनं क्रियमाणः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शनैः=मन्दं, गगनतलात्=नभस्तलात्, अवतीर्य=अवतरणं कृत्वा, प्रतीचीं=पश्चिमां, दिशं=काष्ठाम्, अयासीत्=अगमत्। रामाजनः पद्म इव वारित इत्यादौ श्लेषानुप्राणितोपमा। उत्तुङ्गतरुशिखराणि करैः पतनभयादिवावलम्बमान इत्यत्रोत्प्रेक्षा॥

ज्योत्स्ना—और विचार करने लगा कि "इन्द्रादि लोकपालों के याचक होते हुए भी मनुष्य योनि में उत्पन्न मेरे द्वारा वह दमयन्ती किस प्रकार से प्राप्त की जा सकती है और देवताओं के साथ विवाह-सम्बन्ध को चाहने वाले उसके बान्धवगण भी (मेरे साथ सम्बन्ध करने से) निश्चित ही उसे रोकेंगे। इसलिए ऐसी स्थिति में क्या उपाय है?" इस प्रकार बार-बार अत्यन्त लम्बी असह्य सांसे भरते हुए राजा नल के चिन्तित होने पर "हे राजन्! कमल के समान वारित किये जाने पर रमणियाँ और भी प्रवृत्त होती हैं और पूर्णतया अनुरक्त हो जाने पर इनके अनुराग का अपाय (विनाश) सम्भव नहीं होता और न ही इनकी झूठी प्रवृत्ति को निवारित (दूर) ही किया जा सकता है। अधिक क्या कहा जाय, अन्य पुरुष द्वारा स्वीकार की गई स्त्रियों का भी दूसरे पुरुषों में प्रेम का आग्रह (हठ) देखा जाता है। क्योंकि देखो, वरुणदेव के द्वारा परिगृहीत की गई भी यह प्रतीची (पश्चिम) दिशा (इस समय भी) मुझमें अनुराग रखती है।" इस प्रकार इस नल को आश्वासन-सा देते हुए भगवान् सूर्य गिरने के भय से मानों किरणरूपी हाथों से उन्नत वृक्षों के शिखरों का सहारा लेते हुए धीरे-धीरे गगनतल से उतर कर पश्चिम दिशा की ओर चले गये।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड में स्त्रियों की कमलों से समानता प्रदर्शित की गई है॥

अम्बरान्तःप्रसारितकरे रागिणि रक्तया परियुक्ते तु पश्चिमककुभाऽम्भोजिनीजीवितेश्वरे॥

कल्याणी—अम्बरान्तरिति। अम्बरान्तःप्रसारितकरे—अम्बरान्तः=नभोऽन्तः वस्त्रान्तश्च, प्रसारितः करः=अंशुः पाणिश्च येन तस्मिन्, रागिणि=लोहिते सानुरागे च, अम्भोजिनीजीवितेश्वरे=कमलिनीप्राणप्रिये सूर्ये; रक्तया=लोहितवर्णया सानुरागया च, पश्चिमककुभा=पश्चिमाशया, परियुक्ते=परिसङ्गते सति तु; प्राची ककुप् ईर्ष्यारोषविषादिनी जातेति वक्ष्यमाणेनान्वयः। सूर्ये नायकस्य प्रतीच्यां च नायिकाया व्यवहारसमारोपात् समासोक्तिरलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—अम्बर (आकाश और वस्त्र) के भीतर फैलाये कर (किरण और हाथ) वाले रागी (लाल और अनुरागयुक्त) कमलिनी के प्राणप्रिय सूर्य के रक्त (लोहित वर्ण और सानुराग) पश्चिम से युक्त हो जाने पर अर्थात् पश्चिम दिशा की ओर चले जाने पर—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—यहाँ सूर्य का नायक के रूप में और पश्चिम दिशा का नायिका के रूप में चित्रण किया गया है ।।

पूर्वाहं विहितोदयाहमसकृत्तन्मां विहायाधुना
यस्यामस्तमुपैति तां कथमयं रागी जघन्यामगात् ।
इत्येवं श्लथितांशुके दिनपतौ याते दिशं पश्चिमा-
मीर्ष्यारोषविषादिनीव तमसा प्राची ककुब्लक्ष्यते ।।७४।।

अन्वयः—अहं पूर्वा असकृत् विहितोदया तत् यस्याम् अस्तम् उपैति जघन्यां तां रागी अयं मां विहाय अधुना कथम् अगात् इति एवं श्लथितांशुके दिनपतौ पश्चिमां दिशं याते तमसा ईर्ष्यारोषविषादिनी इव प्राची ककुप् लक्ष्यते ।।७४।।

कल्याणी—पूर्वेति । अहं=प्राची, पूर्वा=आद्या । असकृत्=अनेकशः, विहितोदया—विहितः=कृतः, उदयोऽस्य उदयः उत्कर्षश्च यया साऽहम्, तत्=तस्मात्, यस्याम्, अस्तं=समाप्तिम्, उपैति, जघन्यां=निकृष्टां, ताम्=इमां प्रतीचीं; रागी=आरक्तः सन्, अयं=रविः, मां=पूर्वां, विहाय=त्यक्त्वा, अधुना=सम्प्रति, कथं=केन प्रकारेण, अगात्=अगमत्, इत्येवं श्लथितांशुके=शिथिलकिरणे शिथिलवस्त्रे च, दिनपतौ=रवौ, पश्चिमां दिशं याते सति, तमसा=अन्धकारेण तमोभावेन च, ईर्ष्यारोषविषादिनी इव—ईर्ष्यारोषः=असूयाकोपः, तस्माद् विषादिनी=विषादयुक्तेव, प्राची=पूर्वा, ककुप्=दिशा, लक्ष्यते=दृश्यते । लोकेऽपि प्रथमां कृतोदयां प्रियां विहाय निकृष्टामस्तंकारिणीमन्यां रागी यदा याति तदा तस्मिन् शिथिलितवसने पूर्वा प्रिया तमोभावेनामूयाकोपजन्यविषादं प्राप्नोति । समासोक्तिरलङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ।।६४।।

ज्योत्स्ना—"मैं पहली हूँ, अनेकों बार (मैंने उसका) उदय किया है, फिर भी जिसमें अस्त को प्राप्त हो रहा है, उस पापिनी (प्रतीची) में अनुरक्त होकर मुझे छोड़कर इस समय यह कैसे चला गया ।" इस प्रकार शिथिल किरणों (वस्त्रों) वाले दिनपति (सूर्य) के पश्चिम दिशा के प्रति चले जाने पर अन्धकार (तमोभाव) से ईर्ष्या और क्रोध के कारण विषादयुक्त के समान पूर्व दिशा दिखाई देती है ।।७४।।

विश्लेषाकुल-चक्रवाकमिथुनैरुत्पीडमाक्रन्दिते
कारुण्यादिव मीलितासु नलिनीष्वस्तञ्च मित्रे गते ।
शोकेनेव दिगङ्गनाभिरभितः श्यामायमानैर्मुखै-
र्निःश्वासानलधूमवर्तय इवोद्गीर्णस्तमोराजयः ।।७५।।

अन्वयः—मित्रे च अस्तंगते विश्लेषाकुलचक्रवाकमिथुनैः उत्पीडम् आक्रन्दिते कारुण्यात् इव नलिनीषु मीलितासु दिगङ्गनाभिः शोकेन इव अभितः श्यामायमानैः निःश्वासानलधूमवर्तय इव तमोराजयः उद्गीर्णाः ।।७५।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—विश्लेषेति। मित्रे=सूर्ये च, अस्तंगते=अस्ताचलप्रस्थिते, विश्लेषाकुलचक्रवाकमिथुनैः—विश्लेषेण=पारस्परिकवियोगेन, आकुलैः=उद्विग्नैः, चक्रवाकमिथुनैः=चक्रवाकदम्पतिभिः, उत्पीडम्—उत्कृष्टा पीडा यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, आक्रन्दिते=आक्रन्दने कृते, कारुण्यादिव=करुणाभावादिव, नलिनीषु=कमलिनीषु, मीलितासु=सङ्कोचं गतासु, दिगङ्गनाभिः=दिग्वधूभिः, शोकेनेव=दुःखेनेव, अभितः=समन्तात्, श्यामायमानैः=श्यामैरिवाचरद्भिः, मुखैः=वदनैः, निःश्वासानल-धूमवर्तय इव—निःश्वास एवा अनलः=वह्निः, तस्य धूमवर्तय इव=धूमपटलानीव, तमोराजयः=अन्धकारश्रेणयः, उद्गीर्णाः=उत्सृष्टाः। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७५॥

ज्योत्स्ना—और सूर्य के अस्त हो जाने पर (पारस्परिक) वियोग के भय से उद्विग्न चक्रवाकदम्पति (चकवा-चकई) के द्वारा उत्कृष्ट पीडा के साथ क्रन्दन करने पर, कारुण्यभाव से कमलिनियों के संकुचित हो जाने पर, शोक से मानों चारो ओर दिशारूपी अंगनाओं के काले हो गये मुख से निःश्वासरूप अग्नि के धूमपटल के समान अन्धकार-श्रेणियाँ फैल गईं ॥ ७५ ॥

तथाविधे च वेलाव्यतिकरे राज्ञः सन्ध्यावसरमावेदयितुमस्यासन्नविहारि हारि लीलाकिन्नरमिथुनमिदमगायत्—

कल्याणी—तथेति। तथाविधे=तादृशे च, वेलाव्यतिकरे=समयसन्धिकाले, राज्ञः=नृपस्य नलस्य, सन्ध्यावसरं=सान्ध्यविधिम्, आवेदयितुं=सूचयितुम्, अस्य=नृपस्य, आसन्नविहारि=समीपवर्ति, हारि=मनोहरं, लीलाकिन्नरमिथुनं—लीलायै=मनोरञ्जनाय, यत् किंनरमिथुनं=किंनरदम्पती, इदं=वक्ष्यमाणम्, अगायत्=गायनमकरोत् ॥

ज्योत्स्ना—और इस प्रकार के समय-सन्धिकाल में राजा के सायंकालिक विधि (सन्ध्यावन्दनादि) को सूचित करने के लिए उसके समीप में ही विहार करने वाले, मनोहर, मनोरञ्जन के लिए स्थित किन्नरदम्पति ने इस प्रकार गान किया—

'रक्तेनाक्तं विनिहितमधोवक्त्रमेतत्कपालं
तारामुद्राः किमु कलयता कालकापालिकेन।
सन्ध्यावध्वाः किमु विलुठिता कौङ्कुमी शुक्तिरेवं
शङ्कां कुर्वञ्जयति जलधावर्धमग्नार्कबिम्बम्' ॥७६॥

अन्वयः—अधोवक्त्रं रक्तेन आक्तम् एतत् कपालं तारामुद्राः कलयता कालकापालिकेन विनिहतं किमु? (अथवा) सन्ध्यावध्वाः कौङ्कुमी शुक्तिः विलुठिता किमु? एवं शङ्कां कुर्वन् जलधौ अर्धमग्नार्कबिम्बं जयति ॥ ७६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—रक्तेनेति। अधोवक्त्रम्—अधस्तात्, वक्त्रं=मुखं यस्य तदधोवक्त्रम्=अधोमुखमित्यर्थः। तथा रक्तेन=रुधिरेण, आक्तं=लिप्तं तथाभूतम्, एतत्कपालम्=इदं पानपात्रं, तारामुद्राः—तारा=नक्षत्राण्येव, मुद्रा=हस्तपादादीनामस्थ्याभरणानि, कलयता=धारयता, कालकापालिकेन—काल एव कापालिकस्तेन, विनिहितं=स्थापितं किमु ? किम्विति वितर्के। अथवा सन्ध्यावध्वाः—सन्ध्यैव वधूस्तस्याः=सन्ध्यासुन्दर्याः, सम्बन्धिनी कौङ्कुमी=कुङ्कुमपूर्णा, शुक्तिः, विलुठिता—विपरीतम्=अधोमुखी, लुठिता किमु। एवम्=इत्थं, शङ्कां=सन्देहं, कुर्वन्=उत्पादयन्, जलधौ=पश्चिमसमुद्रे, अर्धमग्नार्कबिम्बम्—अधर्मग्नम्, अर्कबिम्बं=सूर्यमण्डलं, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। रूपकसन्देहयोः सङ्करः। मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥७६॥

ज्योत्स्ना—नीचे की ओर मुख वाला और रुधिर से लिप्त यह कपाल तारारूपी मुद्राओं को धारण करने वाले कालरूपी कापालिक के द्वारा स्थापित किया गया है क्या ? अथवा सन्ध्यारूपी वधू की कुंकुम से परिपूर्ण शुक्ति उलट गई है क्या ? इस प्रकार की शंका को उत्पन्न करता हुआ समुद्र में अधर्मग्न सूर्यबिम्ब सर्वोत्कृष्ट है।

विमर्श—प्रकृत पद्य द्वारा अस्त समय में समुद्र में अर्द्धनिमग्न सूर्यबिम्ब की तुलना कापालिक के रक्त-लिप्त कपाल से और सन्ध्यारूपी वधू की कुंकुम रखने वाली उलटी हुई शुक्ति से की गई है ॥७६॥

अथ क्रमेण गगनमन्दाकिनीतीरतापसैर्विकीर्यमाणेषु संध्यार्घाञ्जलिजलबिन्दुबुद्बुदेष्विव किञ्चिदुन्मीलत्सु विरलतरतारास्तबकेषु, वासरविरामवादितवाद्येष्वमरसदनेषु, दह्यमानबहलधूपधूममञ्जरीष्विव वियति विहरन्तीषु तनुतिमिरवल्लरीषु, स्वपत्पतत्रिकुलकोलाहलेन वासार्थिश्रान्तागताध्वगस्वागतालापमिव कुर्वाणासु वनराजिषु, अन्यत्र परिभ्रमणपरिहारार्थमिव पद्मिनीमां कोशपानमाचरत्सु चञ्चलचञ्चरीकेषु, रत्युत्सवोत्साहावेशमहामन्त्राक्षरेष्विव श्रूयमाणेषु महासरित्कूलकुलायनिलीनजलकुक्कुहकुहरितेषु, रामायणव्यतिकरेष्विव मन्दोदरीप्रहस्तप्रबोधितोत्सिक्तदशाननेषु सन्ध्याप्रदीपेषु जाते जरत्कुम्भकारकुक्कुटकुटुम्बपक्षपिच्छविच्छाये मनाक्तमोनुविद्धे सन्ध्यारागे राजा विषादविस्मृतसन्ध्याह्निकः परिजनानुबन्धात्सन्ध्यां ववन्दे ॥

कल्याणी—अथेति। अथ=अनन्तरं, क्रमेण=क्रमशः, गगनमन्दाकिनीतीरतापसैः—गगनमन्दाकिन्याः=आकाशगङ्गायाः, तीरे=तटे, ये तापसाः=तपस्विनः तैः, विकीर्यमाणेषु=प्रसार्यमाणेषु, सन्ध्यार्घाञ्जलिजलबिन्दुबुद्बुदेष्विव=सायंकालिक-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूर्यार्घाञ्जलीनां जलबिन्दुबुद्बुदेष्विव, विरलतरतारास्तबकेषु=अतिविरलनक्षत्र-पुञ्जेषु, किञ्चित्=ईषत्, उन्मीलत्सु=उदयं गच्छत्सु सत्सु, अमरसदनेषु=देवमन्दिरेषु, वासरविरामवादितवाद्येषु—वासरविरामे=दिवसावसानावसरे, वादितानि वाद्यानि यत्र तथाभूतेषु सत्सु, दह्यमानबहलधूपधूममञ्जरीष्विव=प्रज्वाल्यमानपर्याप्तधूपस्य धूममञ्जरीष्विव, वियति=आकाशे, तनुतिमिरवल्लरीषु=सूक्ष्मान्धकारलतासु, विहरन्तीषु=प्रसरन्तीषु सतीषु, वनराजिषु=वनपङ्क्तिषु, स्वपत्पतत्रिकुलकोलाहलेन—स्वपत्=शयनार्थं स्वकुलायमागच्छदित्यर्थः। यत् पतत्रिकुलं=खगवृन्दं, तस्य कोलाहलेन=कलकलध्वनिव्याजेन, वासार्थिश्रान्तागताध्वगस्वागतालापमिव—वासार्थिनः=निवासाभिलाषुकाः, श्रान्ताः=क्लान्ताः, आगताः=आयताः, ये अध्वगाः=पान्थाः, तेषां स्वागतालापमिव=स्वागतवचनमिव, कुर्वाणासु=वदन्तीषु सतीषु, चञ्चलचञ्चरीकेषु=विलासिभृङ्गेषु पद्मिनीनां=कमलिनीनां, कोशपानं—कोशस्य=कर्णिकायाः; तद्गतमकरन्दस्येत्यर्थः। पानम्, आचरत्सु=कुर्वत्सु, अन्यत्र परिभ्रमणपरिहारार्थमिव=वयमन्यत्र न यास्याम इत्यर्थमिव, पद्मिनीनां समीपे कोशपानमाचरत्सु=शपथग्रहणं कुर्वत्सु सत्सु, महासरित्कूलकुलायनिलीनजलकुक्कुहकुहरितेषु—महासरितः=महानद्याः, कूले=तटे, कुलायनिलीनाः=नीडनिभृतस्थिताः, ये जलकुक्कुहाः=जलपक्षिविशेषाः, तेषां कुहरितेषु=ध्वनिषु, रत्युत्सवोत्साहावेशमहामन्त्राक्षरेष्विव—रत्युत्सवः=सुरतप्रमोदः, तत्र य उत्साहस्तस्य आवेशः=अतिरेकः, तदर्थं महामन्त्राक्षरेष्विव, श्रूयमाणेषु=आकर्ण्यमानेषु सत्सु, रामायणव्यतिकरेष्विव=रामायणप्रसङ्गेष्विव, सन्ध्याप्रदीपेषु=सायंकालिकदीपेषु, मन्दोदरीप्रहस्तप्रबोधितोत्सिक्तदशाननेषु—मन्दोदरीणां=कृशोदरीणां रमणीनां, प्रहस्तैः=प्रकृष्टपाणिभिः, प्रबोधितानि=ज्वलितानि, उत्सिक्तानि=तैलसिक्तानि, दशाननानि=वर्तिमुखानि येषां तथाभूतेषु सत्सु, रामायणव्यतिकरपक्षे—मन्दोदरीनाम्न्या पत्न्या प्रहस्तनाम्ना सेनान्या च प्रकर्षेण बोधित उत्सिक्तः=उद्रिक्तः सन् दशाननः=रावणः येषु तथाभूतेषु। जरत्कुम्भकारकुक्कुटकुटुम्बपक्षपिच्छविच्छाये—जरन्तः=वृद्धाः, ये कुम्भकाराः=कुम्भकारसंज्ञकाः, कुक्कुटाः=पक्षिविशेषाः, तेषां कुटुम्बस्य=वृन्दस्य, पक्षपिच्छवत्=पक्षवत् पुच्छवच्च, विच्छाये=धूमले, मनाक्=ईषत्, तमोनुविद्धे=तिमिरमिश्रिते, सन्ध्यारागे=सान्ध्यारुणे जाते सति, विषादविस्मृतसन्ध्याह्निकः—विषादेन=खेदेन, विस्मृतं सन्ध्याह्निकं=सायंकालिकनित्यकृत्यं येन तथाभूतः, राजा=नलः, परिजनानुबन्धात्=अनुचराग्रहात्, परिजनैः स्मारणादित्यर्थः। सन्ध्यां वन्दे=सन्ध्यावन्दनं चकार॥

ज्योत्स्ना—इसके पश्चात् क्रमशः आकाशगंगा के तट पर तपस्वियों द्वारा सायंकालिक सूर्य को दी गई अर्घ्यरूपी अञ्जली से बिखरे हुए जलबिन्दुओं के समान कहीं-कहीं नक्षत्रपुञ्जों के थोड़े-थोड़े उदित होने पर, देवमन्दिरों में दिन की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाप्ति के समय वाद्यों के बजाये जाने पर, जलते हुए पर्याप्त धूप की धूममञ्जरी के बुलबुलों के समान आकाश में सूक्ष्म अन्धकार-लताओं के फैल जाने पर, वनपंक्तियों द्वारा शयन करने के लिए अपने घोसलों में आये हुए पक्षियों के कोलाहल के बहाने से निवास करने की कामना से आये हुए श्रान्त (थके हुए) पथिकों के लिए स्वागत वाणी के बोलते रहने पर, चञ्चल भ्रमरों द्वारा कमलिनियों के कोशगत मकरन्द का पान करते हुए 'हमलोग अन्यत्र नहीं जायेंगे' इस प्रकार मानो कमलिनियों के समक्ष कोशपान (शपथग्रहण) करते रहने पर, महानदी के तट पर नीड़ में स्थित जल-कुक्कुहनामक पक्षियों की आवाजों के मदनोत्सव के उत्साहातिरेक के लिए महा-मन्त्राक्षरों के समान सुनाई देते रहने पर, मन्दोदरी नामक पत्नी और प्रहस्तनामक सेनापति द्वारा प्रबोधित होकर उत्सिक्त (घमण्डी) रावण से सम्बन्धित रामायण के प्रसंगों के समान मन्दोदरियों (कृशोदरी रमणियों) के उत्कृष्ट हाथों से जलाये गये सायंकालिक दीपों के तैलसिक्त वर्तिमुखों के दिखाई देने लगने पर, वृद्ध कुम्भकारसंज्ञक विशेष प्रकार के कुक्कुट पक्षियों के पंख और पुच्छ के समान धूमल सान्ध्यलालिमा के थोड़े-थोड़े अन्धकारमिश्रित हो जाने पर विषाद के कारण सायंकालीन नित्य कृत्यों (सन्ध्यावन्दनादि कार्यों) को भूले हुए राजा नल ने परिजनों द्वारा आग्रहपूर्वक निवेदन किये जाने पर अर्थात् स्मरण कराये जाने पर सन्ध्यावन्दन किया ॥

ततश्च क्रमेण—

रजनिमवनिनाथः सान्ध्यकर्मावसाने
हरचरणसरोजद्वन्द्वसेवां विधाय ।
मृदुकलित-विपञ्ची-पञ्चम-प्राय-गीत-
श्रवणसुखविनोदैस्तां स तस्मिन्ननैषीत् ॥७७॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां हरचरण-सरोजाङ्कायां पञ्चम उच्छ्वासः समाप्तः ॥

अन्वयः—सः अवनिनाथः सान्ध्यकर्मावसाने हरचरणसरोजद्वन्द्वसेवां विधाय तां रजनीं तस्मिन् मृदुकलितविपञ्चीपञ्चमप्रायगीतश्रवणसुखविनोदैः अनैषीत् ॥७७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—रजनिमिति । सः=पूर्वोक्तः, अवनिनाथः=भूपतिर्नलः, सान्ध्यकर्मावसाने=सान्ध्यविधिसमाप्तौ, हरचरणसरोजद्वन्द्वसेवां – हरस्य=शिवस्य, यत् चरणसरोजद्वन्द्वं=पादपद्मयुगलं, तस्य सेवाम्=अर्चां, विधाय=कृत्वा, तां=पूर्ववर्णितां, रजनिं=रात्रिं, तस्मिन्=तत्रैव, मृदुकलितविपञ्चीपञ्चमप्रायगीतश्रवणसुखविनोदैः—मृदुकलितं=मधुरस्वरोपेतं, विपञ्च्याः=वीणायाः, यत् पञ्चमप्रायगीतं=प्रायेण पञ्चमस्वरानुगतं गीतं, तस्य श्रवणसुखविनोदैः—श्रवणेन=आकर्णनेन, यत् सुखम्=आनन्दः, तद्रूपविनोदैः, अनैषीत्=अयापयत् । मालिनी वृत्तम् ।।७७।।

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां
पञ्चम उच्छ्वासः समाप्तः ।।

ज्योत्स्ना – तदनन्तर क्रमशः—उस राजा नल ने सान्ध्यकालीन सन्ध्यावन्दनादि कार्यों के समाप्त हो जाने पर भगवान् शंकर के चरणकमलों की सेवा कर उस रात्रि को उसी स्थान पर मधुर स्वरयुक्त वीणा के प्रायः पञ्चम स्वर से अनुगत गीत को सुनते हुए आनन्दरूप विनोदों के साथ व्यतीत किया ।।७७।।

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टप्रणीत दमयन्तीकथात्मक नलचम्पू
काव्य की श्रीनिवासशर्माकृत सविमर्श 'ज्योत्स्ना'
हिन्दी व्याख्या में पञ्चम उच्छ्वास पूर्ण हुआ ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

षष्ठ उच्छ्वासः

अथ द्विजजननिकायकीर्णसन्ध्याञ्जलिजलैरिव क्षाल्यमाने मनाग्विमलतां व्रजति तिमिरमलिनेऽम्बरे, मालाकारेणेव प्रभातप्रभोद्भेदेनावचीयमानेषु गगनपुष्पवाटिकाकुसुमेष्विव नक्षत्रेषु, निद्रापहारहुङ्कार इवोत्थिते प्रभातभेरीध्वनौ, नरपतेः प्रबोधनार्थमदूरे वैतालिकः पपाठ ॥

कल्याणी—अथ द्विजेति । अथ=निशायापनानन्तरं, द्विजजननिकायकीर्णसन्ध्याञ्जलिजलैरिव—द्विजजननिकायेन=द्विजातिवर्गेण, कीर्णानि=प्रदत्तानि, यानि सन्ध्याञ्जलिजलानि=प्रातःकालिकसन्ध्योपासने सूर्यार्घाञ्जलिजलानि तैरिव, क्षाल्यमाने=परिधाव्यमाने, मनाक्=ईषत्, विमलतां=नैर्मल्यं, व्रजति=गच्छति, तिमिरमलिने—तिमिरेण=अन्धकारेण, मलिने, अम्बरे=आकाशे, अथ च तिमिरवन्मलिने अम्बरे=वस्त्रे, मालाकारेणेव=मालिकेनेव, प्रभातप्रभोद्भेदेन=प्रातःकालिकप्रभाविकासेन, गगनपुष्पवाटिकाकुसुमेष्विव—गगनं=व्योम, तदेव पुष्पवाटिका=पुष्पोद्यानं, तस्याः कुसुमेष्विव=पुष्पेष्विव, नक्षत्रेषु=तारकासु, अवचीयमानेषु=सञ्चीयमानेषु सत्सु, निद्रापहारहुङ्कार इव—निद्रापहारे=निद्रापनयने, हुङ्कार इव=हुङ्कारसदृशे, प्रभातभेरीध्वनौ=प्रातःकालिकदुन्दुभिशब्दे, उत्थिते=समुपजाते सति, अदूरे=समीप एव, वैतालिकः—विविधेन तालेन व्यवहरतीति वैतालिकः=चारणः, नरपतेः=नृपस्य, प्रबोधनार्थं=जागरणार्थं, पपाठ=जगौ ॥

ज्योत्स्ना—इसके (रात्रि की समाप्ति के) पश्चात् द्विजाति वर्ग के द्वारा प्रातःकालीन सन्ध्योपासना के समय दिये जा रहे जलाञ्जलि के द्वारा आकाश को मानों धोये जाने के कारण उसके (आकाश के) निर्मल होते जाने पर, मलिन वस्त्रधारी माली के समान प्रातःकालीन कान्ति के द्वारा अन्धकार के कारण थोड़े-थोड़े मलिन आकाशरूपी पुष्पवाटिका के पुष्पसदृश नक्षत्रों को मानों चुने जाने पर, निद्रा का अपहरण करने वाले हुंकार के समान प्रातःकालिक (बजने वाले) नगाड़े की ध्वनि के उत्पन्न होने (सुनाई देने) पर समीप में ही वैतालिक ने राजा नल को जगाने के लिए (निम्न श्लोक) पढ़ा ॥

उदयगिरिगतायां प्राक्प्रभापाण्डुतायामनुसरति निशीथे शृङ्गमस्ताचलस्य ।
जयति किमपि तेजः साम्प्रतं व्योममध्ये
सलिलमिव विभिन्नं जाह्नवं यामुनं च ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—प्राक्प्रभापाण्डुतायाम् उदयगिरिगतायां निशीथे च अस्ताचलस्य शृङ्गम् अनुसरति साम्प्रतं व्योममध्ये जाह्नवं यामुनं च विभिन्नं सलिलम् इव किम् अपि तेजः जयति ॥१॥

कल्याणी—उदयेति। प्राक्प्रभापाण्डुतायां—प्राक्प्रभाः=प्रथमकिरणाः, तत्कृता या पाण्डुता=प्रकाशः तस्याम्, उदयगिरिगतायाम्=उदयाचलगतायां सत्यां, निशीथे=अन्धकारे च, अस्ताचलस्य=अस्तगिरेः, शृङ्गं=शिखरम्, अनुसरति=गन्तुं प्रवृत्ते सति, साम्प्रतम्=इदानीं, व्योममध्ये=गगनमध्ये, जाह्नवं=गङ्गा-सम्बन्धि, यामुनं=यमुनासम्बन्धि च, विभिन्नं=सङ्गतं, सलिलमिव=जलमिव, किमपि=अनिर्वचनीयमलौकिकं, तेजः=ओजः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते, सुशोभत इत्यर्थः। व्योम्नि जाह्नव्येवासीत्, साम्प्रतं यमुनायाः संभेदोऽपि तत्र जातः। अत-एवास्मिन् वृत्ते कविर्यामुनत्रिविक्रम इति नामावापत्। तथा च—'प्राच्याद्विष्णुपदी हेतोरपूर्वोऽयं त्रिविक्रमः। निर्ममे विमलं व्योम्नि यत्पदं यमुनामपि ॥' उत्प्रेक्षा-ऽलङ्कारः। मालिनीवृत्तम् ॥१॥

ज्योत्स्ना—प्रातःकालीन किरणों द्वारा किये गये प्रकाश के उदयाचल पर्वत पर पड़ने पर अर्थात् उदयाचल के प्रकाशित होने पर और अन्धकार (रात्रि) द्वारा अस्ताचल के शिखर का अनुसरण करने पर इस समय आकाश के मध्य में गंगा और यमुना के मिश्रित जल के समान कोई अलौकिक अनिर्वचनीय तेज सुशोभित हो रहा है।

विमर्श—प्रकृत श्लोक में महाकवि द्वारा प्रातःकालीन सूर्यकिरणों से उद्भूत प्रकाश को गंगा की धवल धारा के और समाप्त होते अन्धकार को यमुना की श्यामल धारा के प्रतिनिधि के रूप में चित्रित किया गया है। इस प्रकार कवि द्वारा उदयाचल की ओर प्रकाश की और अस्ताचल की ओर अन्धकार की स्थिति प्रदर्शित कर आकाश में गंगा और यमुना का संगम दिखाया गया है। त्रिविक्रम भट्ट की इन्हीं अलौकिक-अनिर्वचनीय कल्पनाओं के कारण इन्हें 'यामुन-त्रिविक्रम' की उपाधि से साहित्य-जगत् में विभूषित किया गया है ॥१॥

अपि च—

यात्यस्ताचलमन्धकारपटले जातेऽरुणस्योदये
तापिच्छच्छदपद्मरागमहसोर्मध्यं ककुब्भागयोः।
अन्तर्विष्णुविरञ्चयोरिव मनाग्लिङ्गोद्भवभ्रान्तिकृत्
तेजः पाण्डुरपिञ्जरं च किमपि श्यामं च तद्वोऽवतात् ॥२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—अन्धकारपटले अस्ताचलं याति, अरुणस्य उदये जाते तापिच्छच्छदपद्मरागमहसोः ककुब्भागयोः मध्यं विष्णुविरञ्चयोः अन्तः मनाक् लिङ्गोद्भवभ्रान्तिकृत् इव पाण्डुरपिञ्जरं श्यामं च किमपि तेजः तत् वः अवतात् ॥२॥

कल्याणी—यातीति। अन्धकारपटले=तमःसमूहे, अस्ताचलं=अस्तगिरिं, याति=गच्छति सति, तथा [पूर्वस्याम्] अरुणस्य=सूर्यस्य, उदये=उदयस्थले, जाते=व्रजति सति; तदेवं तापिच्छच्छदपद्मरागमहसोः—तापिच्छच्छदस्येव=तमालपर्णस्येव, पद्मरागस्येव=पद्मरागमणेरिव च, महः=कान्तिः ययोस्तयोः, ककुब्भागयोः=कृष्णायाः पश्चिमायाः लोहितायाः पूर्वस्याश्च दिशोः, मध्ये [प्रकाशारुणोदयतमःशेषरूपत्वात्] पाण्डुरपिञ्जरं—पाण्डुरं पिञ्जरं, श्यामं च किमपि=दुर्लक्षं, मनाक्=स्तोकोदयं तेजः=ओजः, प्रकाशात्मकमिति भावः। तत् वः=युष्मान्, अवतात्=रक्षतु। तत्रोपमानमाह—अन्तरित्यादि। विष्णुविरञ्चयोः=हरिवेधसोः, अन्तः=मध्ये, मनाक=ईषत्, लिङ्गोद्भवभ्रान्तिकृदिव=लिङ्गोत्पत्तिविषयकभ्रमकारकमिव। अत्र दिग्भागयोर्विष्णुविरञ्चौ, प्रकाशात्मनश्च तेजसो लिङ्गोद्भव उपमानमिति विवेकः। अथवा सत्त्वं पाण्डु तदेव विष्णुः, रजः पिञ्जरं तदेव ब्रह्मा, तमः श्यामं तदेव च हरः, एतत्त्रयीमयश्च भानुः। तदुक्तम्—

'सत्त्वं शुभ्रं स हरिर्लोहितपीतं रजः स जगत्कर्ता।
कृष्णं तु तमः स भवो भानुश्चैतत्त्रयीमूर्तिः॥'

ततश्च तमोऽन्वितायाः प्रतीच्याः अरुणान्वितायाश्च प्राच्याः मध्ये मनाक्=ईषल्लक्ष्यं किमप्यद्भुतं सत्त्वरजस्तमस्त्रयीमयं पाण्डु पिञ्जरं श्यामं च तेजो युष्मान् रक्षत्वित्यर्थः। तदेवोक्तं यथा—

नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतस्थितिनाशहेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरञ्चिनारायणशङ्करात्मने॥' इति।

पुरा स्वमाहात्म्यार्थं विवदमानयोर्विरञ्चिनारायणयोः शिवेन स्वस्य लिङ्गोद्भवस्योर्ध्वाधोमानविज्ञानं पण उक्तः इति पौराणिकी कथाऽत्रानुसन्धेया। तस्मिन् विवादकाले तेषां त्रयाणां देवानामुपस्थित्या तदानीं यादृशं दृश्यं जज्ञे तादृशमेव दृश्यं सूर्योदयेऽपि जायते। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—और भी—अन्धकारसमूह के अस्ताचल की ओर चले जाने पर एवं (पूर्व दिशा में) सूर्योदय हो जाने पर दोनों (पश्चिम और पूर्व) दिशाओं के मध्य में तापिच्छ (तमालपर्ण) एवं पद्मराग मणि की कान्तियों के समान विष्णु और ब्रह्मा के मध्य लिङ्गोत्पत्तिविषयक भ्रान्ति उत्पन्न करने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाले के समान (स्थित) वह पाण्डुर (सफेद), पिञ्जर (केसरिया) और श्याम रंग वाला थोड़ा-थोड़ा उदित होता हुआ अनिर्वचनीय तेज आप सबकी रक्षा करे।

विमर्श—हिन्दू मान्यता के अनुसार भगवान् सूर्य त्रिदेव के प्रतीक माने जाते हैं, इसीलिए उन्हें 'त्रयीतनु' के नाम से भी जाना जाता है। ऐसी स्थिति में तीनों देवताओं के रंगों का उनमें समावेश होना आवश्यक है। उन त्रिदेवों में से सत्त्व गुणप्रधान होने के कारण विष्णु को शुभ्र (सफेद), रजोगुणप्रधान होने के कारण ब्रह्मा को पिञ्जर (केसरिया) और तमोगुण-प्रधान होने के कारण शिव को श्याम रंग का कहा गया है। इन तीनों ही गुणों के प्रतिपादक रंगों का समावेश समवेत रूप में उदित होते भगवान् सूर्य में देखा जाता है। इसीलिए त्रिदेवों के समन्वित रूप भगवान् सूर्य से लोगों के रक्षा की कामना कवि द्वारा यहाँ की गई है ॥२॥

अनन्तरमुत्तिष्ठतोत्तिष्ठतानयत गजवाजिवेगसरीः, संयोजयत शकटानि, वेष्टयत पटकुटीः, मुकुलयत मण्डपिकाः, संवृणुत काण्डपटान्, उन्मूलयत कीलकान्, उद्वहत वेगाद्वहनीयभाण्डम्, भारयत करभकलभान्, उत्क्षिपत क्षीणोक्षकान्, उत्तरत सरितम्, अपसरत पुरतः, कुरुत संचारसहं मार्गम्, इत्यनेकविधप्रयाणाकुललोककोलाहले समुच्छलति, नदत्सु प्रस्थानवादित्रेषु, समुत्थाय नरपतिरावश्यकशौचावसाने नर्मदाम्भोभिषेकपूततनुरनुबन्ध्य सान्ध्यविधिम्, अधिकृत्य भगवन्तमुदयगिरिशिरःशिखरभाजं भास्करम्, इमं श्लोकमपठत् ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरं=तत्पश्चात्, उत्तिष्ठतोत्तिष्ठत=उत्थानं कुरुत, गजवाजिवेगसरिः—गजाश्च=वारणाश्च, वाजिनः=अश्वाश्च, वेगसर्यः=वेसर्यश्चेति गजवाजिवेगसर्यस्ताः, आनयत=प्रापयत, शकटानि=वाहनानि, संयोजयत=संनद्धानि कुरुत, पटकुटीः=पटवेश्मानि, वेष्टयत=आकुञ्चितानि कुरुत, मण्डपिकाः=पटमण्डपानि, 'तम्बू' इति भाषायाम्। मुकुलयत=वेष्टयत, काण्डपटान्=जवनिकाः, 'कनात' इति भाषायाम्। संवृणुत=संहरत, कीलकान् उन्मूलयत=उत्पाटयत, वहनीयभाण्डं=नेतव्यपात्रम्, वेगात्=द्रुतम्, उद्वहत=नयत, करभकलभान्—करभाः=उष्ट्राः, कलभाश्च=गजाश्च तान्, भारयत=भारयुक्तान् कुरुत। क्षीणोक्षकान्=निर्बलवृषभान्, उत्क्षिपत=उत्थापयत, सत्वरं गमने प्रवर्तयतेत्यर्थः। सरितं=नदीम्, उत्तरत=तीर्त्वा पारं गच्छत, पुरतः=अग्रतः, अपसरत=अन्यत्र गच्छत, मार्गं=पन्थानं, सञ्चारसहं=सञ्चारयोग्यं, कुरुत=विधत्त, मार्गावरोधं मा कुरुतेति भावः। इति=एवम्, अनेकविधे=बहुविधे, प्रयाणाकुललोककोलाहले— प्रयाणाकुललोकानां=प्रयाणातुरजनानां,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोलाहले=कलकलध्वनौ, समुच्छलति=व्याप्नुवति सति, प्रस्थानवादित्रेषु=प्रस्थान-वाद्येषु, नदत्सु=शब्दायमानेषु, नरपतिः=नरेन्द्रो नलः, समुत्थाय=उत्थित्वा, आवश्यकशौचावसाने=आवश्यकशौचादिकर्मसमाप्तौ, नर्मदाम्भोभिषेकपूततनुः—नर्मदायाः अम्भसि=जले, अभिषेकः=स्नानं, तेन पूता=पवित्रा, तनुः=शरीरं यस्य स तथाविधः सन्, सान्ध्यविधिं=सन्ध्योपासनम्, अनुबन्ध्य=अनुष्ठाय, उदय-गिरिशिरःशिखरभाजम्=उदयाचलोत्तुङ्गशिखरस्थं, भगवन्तं=देवं, भास्करं=सूर्यम्, अधिकृत्य=उद्दिश्य, इमं=वक्ष्यमाणं, श्लोकं=पद्यम्, अपठत्=पपाठ ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् "उठो-उठो; हाथियों, घोड़ों और ऊँटनियों को ले आओ; गाडियों को जोड़ो; पटकुटीरों (राउटियों) को लपेटो; तम्बुओं को समेटो, कनातों को एकत्र करो; कीलों (खूँटियों) को उखाड़ो; ले जाने योग्य वर्तनों को शीघ्र ले आओ; ऊँटों और हाथियों को भारयुक्त करो (ऊँटों और हाथियों पर सामानों को लादो); निर्बल बैलों को उठाओ (शीघ्र चलने के लिए प्रेरित करो); नदी को पार करो; सामने से दूर हटो; रास्ते को चलने योग्य बनाओ अर्थात् मार्ग अवरुद्ध मत करो।" इस प्रकार प्रस्थान करने के लिए आतुर लोगों के (द्वारा किये जा रहे) बहुत प्रकार के कोलाहल के व्याप्त हो जाने पर, प्रस्थानसूचक वाद्य (नगाड़े) के बजाये जाने पर राजा नल ने उठकर आवश्यक शौच आदि कर्म (कर लेने) के पश्चात् नर्मदा के जल में स्नान द्वारा पवित्र शरीर वाला होकर, सन्ध्योपासन का अनुष्ठान करके उदयाचल के उत्तुंग शिखर पर स्थित भगवान् सूर्य को उद्देश्य कर इस श्लोक को पढ़ा—

'जयत्यम्भोजिनीबन्धुर्बन्धूकारुणरश्मिकः ।
वैद्रुमो वासरारम्भकुम्भः पल्लववानिव' ॥३॥

अन्वयः—बन्धूकारुणरश्मिकः अम्भोजिनीबन्धुः वैद्रुमः पल्लववान् वासरार-म्भकुम्भः इव जयति ॥३॥

कल्याणी—जयतीति । बन्धूकारुणरश्मिकः—बन्धूकं=जपाकुसुमं, तद्वत् अरुणाः=रक्ताः, रश्मयः=किरणाः यस्य सः, अम्भोजिनीबन्धुः=कमलिनीप्रियो भगवान् सूर्यः, वैद्रुमः=विद्रुममणिनिर्मितः, पल्लववान्=किसलयोपेतः, वासरारम्भ-कुम्भः—वासरारम्भे=दिवसस्य प्रारम्भे, कुम्भः=घट इव, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । उपमाऽलङ्कारः । सूर्यरक्तबिम्बस्य वैद्रुमकुम्भो रश्मीनां च पल्लवा उपमानमिति विवेकः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३॥

ज्योत्स्ना—बन्धूक-(जपा)-पुष्प के समान अरुण किरणों वाले, कमलिनियों के प्रिय भगवान् सूर्य दिन के प्रारम्भ में विद्रुम मणि से निर्मित पल्लवों से समन्वित घड़े के समान सुशोभित हो रहे हैं ॥३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभ्यर्च्य च पञ्चोपचारैः सुरासुरगुरुं गौरीपतिं तत्प्रियस्य भगवतो नारायणस्यापि वाञ्छितार्थसिद्धये स्तुतिमकरोत् ॥

कल्याणी—अभ्यर्च्येति। [राजा नलः] सुरासुरगुरुं=देवानां दानवानां च पूज्यं, गौरीपतिं=शिवं च, पञ्चोपचारैः=पञ्चोपचारविधिना, अभ्यर्च्य=सम्पूज्य, तत्प्रियस्य—तस्य=शिवस्य, प्रियः=श्रद्धेयः तस्य, भगवतः=देवस्य, नारायणस्य अपि=विष्णोरपि, वाञ्छितार्थसिद्धये=स्वाभीष्टसिद्धयर्थं, स्तुतिमकरोत्=स्तवनं चकार ॥

ज्योत्स्ना—और (राजा नल ने) देवताओं और दानवों के गुरु अर्थात् पूज्य भगवान् भवानीपति महादेव की पञ्चोपचार विधि के द्वारा पूजन कर उन (भगवान् महादेव) के प्रिय भगवान् नारायण की भी अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए स्तुति की ॥

जयत्युदधिनिर्गतस्मरविलोललक्ष्मीलस-
द्विलास-रसमन्थर-स्फुटकटाक्ष-लक्षीकृतः ।
अमन्दरय-मन्दर-भ्रमण-घृष्ट-हेमाङ्गदः
सुरारिवधनाटकप्रथमसूत्रधारो हरिः ॥४॥

अन्वयः—उदधिनिर्गतस्मरविलोललक्ष्मीलसद्विलासरसमन्थरस्फुटकटाक्षलक्षीकृतः अमन्दरयमन्दरभ्रमणघृष्टहेमाङ्गदः सुरारिवधनाटकप्रथमसूत्रधारः हरिः जयति ॥४॥

कल्याणी—जयतीति। उदधिनिर्गतस्मरविलोललक्ष्मीलसद्विलासरसमन्थरस्फुटकटाक्षलक्षीकृतः—उदधेः=क्षीरसागरात्, निर्गता=संभूता, या स्मरविलोला=कामचञ्चला, लक्ष्मी=रमा, तया लसद्=दीप्यमानस्य, विलासेन=रमणीयविलासेन' रसेन= अनुरागेण च, तद्भरेणेत्यर्थः। मन्थरस्य=मन्दस्य, स्फुटस्य=विकीर्णस्य, कटाक्षस्य=तिर्यग्दृष्टेः; लक्षीकृतः=विषयीकृतः, उदधिनिर्गतया लक्ष्म्या सविलासं सानुरागमवलोकित इति भावः। [समुद्रमन्थनावसरे] अमन्दरयमन्दरभ्रमणघृष्टहेमाङ्गदः—अमन्दरयेण=समधिकवेगेन, मन्दरस्य=मन्थानभूतस्य मन्दराचलस्य; यद् भ्रमणं=चंक्रमणं, तस्माद् घृष्टं=घर्षितं, हेमाङ्गदं=स्वर्णकेयूरं यस्य स तथोक्तः, सुरारिवधनाटकप्रथमसूत्रधारः—सुरारीणाम्=असुराणां, वधः=विनाश एव नाटकं, तस्य प्रथमः=आदिमः, सूत्रधारः='नाट्योपकरणादीनि सूत्रमित्यभिधीयते। सूत्रं धारयतीत्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ॥' इति लक्षणलक्षितः प्रधाननटः, हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। 'सुरारिवधनाटकप्रथमसूत्रधारः' इत्यत्र परम्परितरूपकम्। पृथ्वी वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः।' इति ॥४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—समुद्र से निःसृत (उत्पन्न) कामचञ्चला लक्ष्मी के दीप्यमान रमणीय विलास और अनुराग से परिपूर्ण मन्द एवं विकसित कटाक्षों के विषय (लक्ष्य) बने हुए, (समुद्रमन्थन के समय) अत्यधिक तीव्रता से मन्दराचल को घुमाने के कारण घर्षित (घिसे हुए) स्वर्णकंकण वाले; देवताओं के शत्रुओं अर्थात् दानवों के वधरूपी नाटक के आदि सूत्रधार भगवान् विष्णु की जय हो ॥४॥

जयत्यमलकौस्तुभद्युतिविराजितोरःस्थलः
सहेलहतदानवो नवतमालनीलद्युतिः ।
विनम्रसुरमस्तकच्युतविकासिपुष्पावली-
विकीर्णमधुसीकरस्नपितपादपीठो हरिः ॥५॥

अन्वयः—अमलकौस्तुभद्युतिविराजितोरःस्थलः सहेलहतदानवः नवतमालनीलद्युतिः विनम्रसुरमस्तकच्युतविकासिपुष्पावलीविकीर्णमधुसीकरस्नपितपादपीठः हरिः जयति ॥५॥

कल्याणी—जयतीति । अमलकौस्तुभद्युतिविराजितोरःस्थलः—अमला=स्वच्छा, या कौस्तुभस्य=कौस्तुभाख्यस्य समुद्रनिर्गतमणिविशेषस्य, द्युतिः=कान्तिः, तया विराजितं=सुशोभितम्, उरःस्थलं=वक्षःस्थलं यस्य स तथोक्तः, सहेलहतदानवः—सहेलं=सलीलम्, अनायासेनेति भावः । हताः=विनाशिताः, दानवाः=दैत्याः येन स तथोक्तः, नवतमालनीलद्युतिः—नवतमालवत्=तरुणतमालवत्, नीला=नीलवर्णा, द्युतिः=शरीरकान्तिः यस्य स तथाविधः, विनम्रसुरमस्तकच्युतविकासिपुष्पावलीविकीर्णमधुसीकरस्नपितपादपीठः—विनम्राणां=प्रणतानां, सुराणां=देवानां, मस्तकेभ्यः=शिरोभ्यः, च्युता=पतिता, या विकासिपुष्पावली=विकसितपारिजातादिकुसुमश्रेणिः, तस्याः विकीर्णाः=च्युताः, ये मधुसीकराः=मकरन्दकणाः, तैः स्नपितं=प्रक्षालितं, पादपीठं=चरणस्थानं यस्य सः, हरिः=नारायणः; जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । पृथ्वी वृत्तम् ॥५॥

ज्योत्स्ना—स्वच्छ कौस्तुभ मणि की कान्ति से सुशोभित वक्षःस्थल वाले, अनायास ही अर्थात् विना किसी विशेष प्रयत्न के ही दानवों का संहार करने वाले, नूतन तमाल वृक्ष के समान नील वर्ण की कान्ति (युक्त शरीर) वाले, प्रणत (झुके हुए) देवताओं के मस्तकों से गिरी हुई विकसित (पारिजात आदि) पुष्पपंक्ति के बिखरे (झरते) हुए मकरन्दकणों से प्रक्षालित पादपीठ (खड़ाऊँ) वाले भगवान् विष्णु की जय हो ॥५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जयत्युदरनिःसरद्वरसरोजपीठीपठ-
च्चतुर्मुखमुखावलीविहितरम्यसामस्तुतिः ।
अलब्धमहिमावधिर्मधुवधूविलासान्तकृ-
ज्जगत्त्रितयसम्भवो भवभयापहारी हरिः ॥६॥

अन्वयः—उदरनिःसरद्वरसरोजपीठीपठच्चतुर्मुखमुखावलीविहितरम्यसामस्तुतिः अलब्धमहिमावधिः मधुवधूविलासान्तकृत् जगत्त्रितयसम्भवः भवभयापहारी हरिः जयति ॥६॥

कल्याणी—जयतीति । उदरनिःसद्वरसरोजपीठीपठच्चतुर्मुखमुखावलीविहितरम्यसामस्तुतिः—उदरात्=जरठभागात्, नाभित इत्यर्थः । निःसरत्=निर्गच्छत्, यत् वरम्=उत्तमं, सरोजं=कमलं, तदेव पीठी=आसनं, तत्र पठन्=पाठं कुर्वन्, यः चतुर्मुखः=ब्रह्मा, तस्य मुखावल्या=मुखपङ्क्त्या, चतुर्भिर्मुखैरित्यर्थः । विहिता=कृता, रम्या=मनोहरा, सामस्तुतिः=साममन्त्रात्मकस्तुतिः यस्य स तथोक्तः, अलब्धमहिमावधिः—अलब्धः=अप्राप्तः, ज्ञातुमशक्य इत्यर्थः । महिम्नः=माहात्म्यस्य, अवधि=सीमा यस्य स तथाविधः, मधुवधूविलासान्तकृत्—मधुनाम दैत्यः, तस्य या वधूः=पत्नी, तस्याः विलासस्य=अङ्गनोचितरतिद्योतकहावभावस्य, अन्तकृत्=नाशकः, मधुदैत्यविदारणादिति भावः । जगत्त्रितयसम्भवः—जगत्त्रितयस्य=त्रैलोक्यस्य, संभवः=जननात्मककारणभूतः, भवभयापहारी—भवः=जन्ममरणात्मकः संसारः, तस्माद् भयं=भीतिं, तस्य अपहारी=विनाशकः, जन्ममरणबन्धनान्मोचयितेत्यर्थः, मुक्तिप्रदातेति भावः । हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । पृथ्वी वृत्तम् । तल्लक्षणं प्रागेवोक्तम् ॥६॥

ज्योत्स्ना—उदर (नाभि) से निकले हुए कमलरूप आसन पर (आसीन होकर) पाठ करते हुए ब्रह्मा के चारो मुखों द्वारा की जा रही मनोहर सामवेद-मन्त्रात्मक स्तुति वाले, अज्ञात महिमा की सीमा अर्थात् निस्सीम महिमा वाले, मधुनामक दैत्य की पत्नी के विलासों (स्त्रियोचित रतिद्योतक हाव-भावादि) का अन्त करने वाले, तीनों लोकों की उत्पत्ति के कारणस्वरूप, उत्पत्ति-विनाशशील संसार से होने वाले भय का विनाश करने वाले अर्थात् मुक्ति प्रदान करने वाले भगवान् विष्णु की जय हो ॥६॥

जयत्यसुरसुन्दरीनयनवारिसंवर्धित-
प्रतापतरुरुल्लसत्तरुणकेकिकण्ठच्छविः ।
दलत्कनककेतकीकुसुमपत्त्रपीताम्बरः
सुराधिपनमस्कृतः सकललोकनाथो हरिः ॥७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—असुरसुन्दरीनयनवारिसंवर्धितप्रतापतरुः उल्लसत्तरुणकेकिकण्ठच्छविः दलत्कनककेतकीकुसुमपत्रपीताम्बरः सुराधिपनमस्कृतः सकललोकनाथः हरिः जयति ॥७॥

कल्याणी—जयतीति। असुरसुन्दरीनयनवारिसंवर्धितप्रतापतरुः—असुरसुन्दरीणाम्=असुराङ्गनानां, नयनवारिभिः=अश्रुभिः, [सिक्तत्वात्] संवर्धितः=सम्यग्वृद्धिं गमितः, प्रतापं=तेजः, स एव तरुः=वृक्षः यस्य सः, उल्लसत्तरुणकेकिकण्ठच्छविः—उल्लसन्ती=देदीप्यमाना, तरुणकेकिनः=नवमयूरस्य, कण्ठवत् छविः=कान्तिः यस्य सः, मयूरकण्ठाभ इत्यर्थः, तद्वन्नील इति भावः। दलत्कनककेतकीकुसुमपत्रपीताम्बरः—दलत्=विकसद्, यत् कनककेतकीकुसुमं=स्वर्णकेतकीपुष्पं, तस्य पत्रवत्=दलवत्, पीतं=पीतवर्णम्, अम्बरं=वस्त्रं यस्य सः, सुराधिपनमस्कृतः—सुराधिपेन=इन्द्रेण, नमस्कृतः=कृतप्रणामः, सकललोकनाथः—सकललोकानां=निखिलभुवनानां, नाथः=स्वामी, हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। पृथ्वी वृत्तम् ॥७॥

ज्योत्स्ना—असुर-सुन्दरियों के नयनाश्रु से (सिक्त होने के कारण) सम्यक् रूप से वृद्धि को प्राप्त तेजरूपी वृक्ष वाले, देदीप्यमान तरुण मयूर की कण्ठच्छवि के समान कान्तिवाले अर्थात् मयूरकण्ठ के समान नील वर्ण वाले, विकसित होते हुए स्वर्णकेतकी-पुष्पों के पत्र के समान पीले वस्त्र वाले, देवताओं के स्वामी इन्द्र के द्वारा नमस्कृत (प्रणाम) किये जाने वाले, समस्त लोकों के स्वामी भगवान् विष्णु की जय हो ॥७॥

जयत्यखिललोकजिन्नरककालकेतूद्गमो
मदान्ध-दशकन्धर-द्विरद-दुष्ट-पञ्चाननः।
हिरण्यकशिपुप्रियामुखसरोजचन्द्रोदयः
सुरेन्द्ररिपुसिंहिकासुतशिरःकुठारो हरिः ॥८॥

अन्वयः—अखिललोकजिन्नरककालकेतूद्गमः मदान्धदशकन्धरद्विरददुष्टपञ्चाननः हिरण्यकशिपुप्रियामुखसरोजचन्द्रोदयः सुरेन्द्ररिपुसिंहिकासुतशिरःकुठारः हरिः जयति ॥८॥

कल्याणी—जयतीति। अखिललोकजिन्नरककालकेतूद्गमः—अखिललोकजित्=अखिललोकान् जयतीति तथोक्तः; त्रिभुवनविजयीति भावः। नरकः=नरकासुरः; तस्य कालकेतूद्गमः=संहारार्थं धूमकेतूदयरूपः, नरकासुरहन्तृत्वादिति भावः। मदान्धदशकन्धरद्विरददुष्टपञ्चाननः—मदान्धः—मदेन=अहङ्कारेण, अन्धः=विवेकशून्यः, दशकन्धरः=रावणः, स एव द्विरदः=गजः, तस्य दुष्टः=दुर्धर्षः, पञ्चाननः=सिंहरूपः, हिरण्यकशिपुप्रियामुखसरोजचन्द्रोदयः—हिरण्यकशिपुः=तदाख्यो दैत्यः, तस्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रियायाः=पत्न्याः, यत् मुखसरोजं=मुखकमलं, तस्य चन्द्रोदयरूपः, हिरण्यकशिपुं हत्वा तत्प्रियामुखकमलकान्त्यपहारक इति भावः। सुरेन्द्ररिपुसिंहिकासुतशिरः-कुठारः—सुरेन्द्रस्य=देवाधिपस्येन्द्रस्य, रिपुः=शत्रुः, यः सिंहिकासुतः=राहुः, तस्य शिरसः=मस्तकस्य, कुठाररूपः=परशुसमः, तद्विच्छेदकारीत्यर्थः। हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। रूपकालङ्कारः। पृथ्वी वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—समस्त लोकों पर विजय प्राप्त करने वाले नरकासुर के संहार के लिए उदित धूमकेतु के समान, मद अर्थात् अहंकार से विवेकशून्य रावणरूपी हाथी के लिए दुर्धर्ष सिंह के समान, हिरण्यकशिपु की पत्नी के मुखकमल के लिए चन्द्रोदयस्वरूप अर्थात् हिरण्यकशिपु का वध कर उसकी प्रिया के मुखरूपी कमल की कान्ति का अपहरण करने वाले, देवताओं के स्वामी इन्द्र के शत्रु राहु के शिर के लिए कुठारस्वरूप भगवान् विष्णु की जय हो ॥८॥

जयत्यमरसारथिर्मदनतप्तलक्ष्मीलसत्-
पयोधरयुगस्थलीसरसचन्दनस्थासकः।
अचिन्त्यगुणविस्तरः सकलकेशिकंसाङ्गना-
कपोलफलकोल्लसत्तिलकभङ्गहारी हरिः ॥९॥

अन्वयः—अमरसारथिः मदनतप्तलक्ष्मीलसत्पयोधरयुगस्थलीसरसचन्दनस्थासकः अचिन्त्यगुणविस्तरः सकलकेशिकंसाङ्गनाकपोलफलकोल्लसत्तिलकभङ्गहारी हरिः जयति ॥९॥

कल्याणी—जयतीति। अमरसारथिः—अमराणां=देवानां, सारथिः=नेता, अग्रणीरिति यावत्। मदनतप्तलक्ष्मीलसत्पयोधरयुगस्थलीसरसचन्दनस्थासकः—मदनतप्ताः=कामसन्तप्ताः, लक्ष्म्याः=रमायाः, या लसत्पयोधरयुगस्थली=देदीप्यमानकुचयुगलभूमिः, तस्याः सरसः=आर्द्रः, चन्दनस्थासकः=चन्दनलेपरूपः, लक्ष्मीकामसन्तापापहारक इत्यर्थः। अचिन्त्यगुणविस्तरः—अचिन्त्यः=अकल्पनीयः, गुणानां विस्तरः=परिमाणं यस्य सः, सकलकेशिकंसाङ्गनाकपोलफलकोल्लसत्तिलकभृङ्गहारी—सकलाः=समस्ताः, याः केशिनः=तदाख्यराक्षसस्य, कंसस्य च अङ्गनाः=वध्वः, तासां कपोलफलके=गण्डस्थले, उल्लसन्=देदीप्यमानः, यः तिलकभङ्गः=पत्रविशेषकः, तं हरति=मुष्णातीति तथोक्तः, केशिकंसवधेन तयोरङ्गनानां शृङ्गारप्रसङ्गसमापक इत्यर्थः। हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। पृथ्वी वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—देवताओं के नेता अर्थात् अग्रणी, काम से सन्तप्त लक्ष्मी के देदीप्यमान स्तनयुगलरूप भूमि के लिए सरस चन्दन-लेपस्वरूप अर्थात् लक्ष्मी के कामसन्ताप को हरण करने वाले; अकल्पनीय गुणों के विस्तार वाले, केशी और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कंसनामक राक्षसों की समस्त पत्नियों के कपोल-फलकों पर देदीप्यमान तिलक-रचनाओं को समाप्त करने वाले अर्थात् केशी और कंस का वध कर उनकी समस्त स्त्रियों के शृंगार-प्रसंगों को समाप्त करने वाले भगवान् विष्णु की जाय हो ।।९।।

जयत्यसमसाहसः सकललोकशोकान्तकृत्
सहस्रकर-भासुर-स्फुरित-चारु-चक्रायुधः ।
विहङ्गपतिवाहनः कलुषकन्दनिर्मूलनः
समस्तभुवनावलीभवनशिल्पधारी हरिः ।।१०।।

अन्वयः—असमसाहसः सकललोकशोकान्तकृत् सहस्रकरभासुरस्फुरितचारुचक्रायुधः विहङ्गपतिवाहनः कलुषकन्दनिर्मूलनः समस्तभुवनावलीभवनशिल्पधारी हरिः जयति ।।१०।।

कल्याणी—जयतीति । असमसाहसः—असमम्=अनुपमं, साहसं यस्य सः, सकललोकशोकान्तकृत्=सकलप्राणिनां दुःखनिवारकः, सहस्रकरभासुरस्फुरितचारुचक्रायुधः—सहस्रकरः=सूर्यः, तद्वत् भासुरं=दीप्तिमत्, स्फुरितं=चञ्चलं, चारु=रम्यं, चक्रम् आयुधं=शस्त्रं यस्य सः, विहङ्गपतिवाहनः—विहङ्गपतिः=गरुडः वाहनं यस्य सः, कलुषकन्दनिर्मूलनः—कलुषं=पापं, तस्य कन्दानि=मूलानि, पापिन इत्यर्थः । तेषां निर्मूलनः=संहारकः, समस्तभुवनावलीभवनशिल्पधारी—समस्तभुवनावल्येव भवनं, तस्य शिल्पधारी=शिल्पी, सकलभुवनस्रष्टेत्यर्थः । हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । पृथ्वी वृत्तम् ।।१०।।

ज्योत्स्ना—अनुपम साहस वाले, समस्त प्राणियों के कष्टों का निवारण करने वाले, भगवान् सूर्य के समान दीप्तिमान चञ्चल और रमणीय चक्रनामक अस्त्र वाले, पक्षिराज गरुड़रूपी वाहन वाले, पाप के मूल (जड़) अर्थात् पापियों को निर्मूल (जड़सहित समाप्त) करने वाले, समस्त भुवनावलीरूप भवन के शिल्पी अर्थात् समस्त भुवनों का निर्माण करने वाले भगवान् विष्णु की जय हो ।।१०।।

जयत्यमलभावनावनतलोककल्पद्रुमः
पुरन्दरपुरःसरत्रिदशवृन्दचूडामणिः ।
अरातिकुलकन्दलीवनविनाशदावानलः
समस्तमुनिमानसप्रवरराजहंसो हरिः ।।११।।

अन्वयः—अमलभावनावनतलोककल्पद्रुमः पुरन्दरपुरःसरत्रिदशवृन्दचूडामणिः अरातिकुलकन्दलीवनविनाशदावानलः समस्तमुनिमानसप्रवरराजहंसः हरिः जयति ।।११।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—जयतीति । अमलभावनावनतलोककल्पद्रुमः—अमलभावनया=निर्मलभावनया, अवनतलोकस्य=प्रणतजनस्य, कल्पद्रुमः=देवतरुः, सकलाभीष्टार्थदः इत्यर्थः । पुरन्दरपुरःसरत्रिदशवृन्दचूडामणिः—पुरन्दरपुरःसरत्रिदशवृन्दस्य=इन्द्रादिदेववर्गस्य, चूडामणिः=शिरोमणिः, अरातिकुलकन्दलीवनविनाशदवानलः—अरातिकुलं=रिपुकुलमेव कन्दलीवनं=कदलीवनं, तस्य विनाशाय=उन्मूलनाय, दावानलः=वनवह्निः, समस्तमुनिमानसप्रवरराजहंसः—समस्तमुनीनां मानसं=हृदयमेव मानसं=सरः, तत्र प्रवरः=मुख्यः, राजहंसः=राजहंससदृशः, हरिः=नारायणः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । रूपकालङ्कारः । पृथ्वी वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—निर्मल भावना से प्रणत लोगों के लिए कल्पवृक्ष के समान अर्थात् निश्छल हृदय से शरणागत लोगों के लिए उनके समस्त अभीष्टों को प्रदान करने वाले, इन्द्र आदि समस्त देवताओं के लिए शिरोभूषणस्वरूप, शत्रुसमूहरूपी कदली-वन का विनाश करने के लिए दावानलस्वरूप, समस्त मुनियों के हृदयरूपी मानसरोवर के लिए सर्वश्रेष्ठ राजहंसस्वरूप भगवान् विष्णु की जय हो ॥११॥

एवमभिवन्द्य देवदेवम्, समारुह्य विजयिवारणेन्द्रस्कन्धम्, अग्रतः प्रधावितानेककरितुरगपरिजनः, पुरः पुरोधसा निवर्त्तिते महानदीयागे, युगसहस्रपरिवर्त्तवृत्तान्तसाक्षिणीम्, अनवरततपस्यद्ब्रह्मर्षिप्रतिष्ठितशिवलिङ्गरुद्धरोधसम्; अनेकसुरसुन्दरीसेवितीरसङ्केतलतामण्डपाम्, अनवरतमज्जद्वनगजमदामोदसुरभिततरङ्गाम्; अपरगङ्गाम्, अपरसागरराजमहिषीम्, अपरमार्कण्डेयतपःसिद्धिसखीम्, समुत्तीर्य भगवतीं मेकलकन्याम्, उत्फुल्लपल्लविताङ्कोल्लसल्लकीसरलसालसर्जार्जुननिम्बकदम्बजम्बूस्तम्बोदुम्बरखदिरकरञ्जाञ्जनाशोकसौभाञ्जनकप्रायैस्तरुभिराकीर्णम्, अभिमतं मतङ्गजानाम्, अनुभूतसारं सारङ्गैः, शिशिरतरं तरङ्गानिलैः, स्वर्गवनसमं समञ्जरीकैर्लताजालकैरुल्लङ्घ्य दक्षिणं नर्मदातीरपुण्यारण्यम्, अग्रतो गगनवीथिमिव सिंहराशिराजितामुत्पतङ्गामुत्थितवृश्चिकामाविर्भूतसार्द्रारोहिणीमूलां च, छन्दोजातिमिव शार्दूलविक्रीडितमनोहरां हारिहरिणीमन्दाक्रान्तामनवरतवसन्ततिलकोद्भासितामतिविचित्रचम्पकमालां च, सीतामिव बहुकोटरावणवृतामुत्पन्नकुशलवां च, लङ्कामिव सञ्चरद्द्विगुणपञ्चाननविभीषणां चारुपुष्पकामकाण्डाडम्बरितमेघनादां च, गीतविद्यामिव ततावनद्धघनसुषिरवंशस्वनमनोहरामनेकतालभेदां निषादऋषभमध्यमग्रामयुक्तां च, चित्रविद्यामिवानेककण्टकपत्रलतास्थानकविषमामृज्वागततापसां च, कलियुगशिवशासनस्थितिमिव महाव्रतिकान्तःपातिभिः कालमुखैर्वानरैः संकुलामनेकधाभिन्नस्रोतसं च, कापालिकखट्वाङ्गयष्टिमिव समुद्रो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पकण्ठलग्नाम्, मायामिव शम्बराधिष्ठिताम्, मरुभूमिमिव करीरैः केसरिप्रसवैरसञ्चाराम्, अतिचारुचन्दनैः कृतगोरोचनाविशेषकैरक्षतदूर्वाबाहिभिरारब्धमङ्गलाचारैरिव तृणस्थलैरलङ्कृताम्, विविधव्याधां विन्ध्याटवीमवगाहमानो मेषमिथुनयुजः सधनुषः सकुम्भकन्यानेकत्र राशीभूतान् गिरिग्रामपामरलोकानालोकयन्, 'इयं गगनवीथीव चित्रशिखण्डिमण्डिता सरित्तीरभूमिः, इयं सरिदिव बहुतरङ्गोपशोभिता गोष्ठवसतिः; इयं च नक्षत्रमध्यगतापि न विशाखा तरुपङ्क्तिः, इयं पुष्पवत्यपि न दूषितस्पर्शा वीरुत्, इयं सन्निहितमधुदानवापि हरिप्रिया वंशजालिः, इयं कृतमातङ्गसङ्गापि न परिहृता द्विजैः सल्लकीसन्ततिः, इमे च केचित्सशिखण्डिनो महाद्रुपदाः, केऽपि विच्छिन्नकीचकवंशा वृकोदराः, केचित्सपुण्डरीकाक्षाः पाण्डुसन्तानकाः, केऽप्युद्धृतभुवो महावराहाः, केप्युत्कृष्टसुरभिश्रीद्रुमावलिहरिकराकृष्टपन्नगनेत्राः स्फुरन्मणिभित्तयोऽमन्दरागाः, केऽपि सस्थाणवो दुर्गाश्रयाः श्रूयमाणगजवदनचीत्काराः सगुहाः कैलासकूटायमानाः सेव्याः खल्वमी विन्ध्यस्कन्धसन्धिसानवः' इति मन्त्रिसूनुना श्रुतशीलेन सह विहितविदग्धालापः, कयापि वेलया कमप्यध्वानमतिक्रम्य क्वाप्यपरिमितपतन्निर्झरजलतुषारस्पर्शमञ्जरितपादपपुष्पपरिमलमिलन्मधुकरझङ्कारहारिणि रममाणशबरमिथुनसम्मर्दमृदितामन्दमृदुशाद्वले जलस्थलीप्रदेशे श्रान्तसैनिकानुकम्पया प्रयाणविच्छेदमकरोत् ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, देवदेवं=हरिम्, अभिवन्द्य=प्रणम्य, विजयिवारणेन्द्रस्कन्धं—विजयी=जयशीलः, यः वारणेन्द्रः=गजेन्द्रः, तस्य स्कन्धं=स्कन्धदेशं, समारुह्य=आरोहणं कृत्वा, अग्रतः=पुरतः, प्रधावितानेककरितुरगपरिजनः—प्रधाविताः=द्रुतं प्रस्थिताः, अनेके=बहवः, करिणः=गजाः, तुरगाः=अश्वाः, परिजनाः=सेवकाश्च यस्य स तथोक्तः, पुरः=अग्रे, पुरोधसा=पुरोहितेन, महानदीयागे=महानदीनामके यज्ञे, निर्वर्त्तिते=सम्पादिते, युगसहस्रपरिवर्त्तवृत्तान्तसाक्षिणीं=युगसहस्रपरिवर्तनप्रवृत्तिसाक्षिणीम्, अनवरततपस्यद्ब्रह्मर्षिप्रतिष्ठितशिवलिङ्गरुद्धरोधसम्—अनवरतं=सततं, तपस्यद्भिः=तपस्यां कुर्वद्भिः, ब्रह्मर्षिभिः=ऋषिभिः, प्रतिष्ठितैः=संस्थापितैः, शिवलिङ्गैः रुद्धं=परिवृतं, रोधः=तटस्थली यस्यास्ताम्, अनेकसुरसुन्दरीसेवितीरसङ्केतलतामण्डपाम्—अनेकाभिः=बह्वीभिः, सुरसुन्दरीभिः=देवाङ्गनाभिः, सेविताः=अधिष्ठिताः, तीरे=तटे, संकेतलतामण्डपाः=प्रियसमागमार्थं निर्दिष्टस्थानभूताः लताकुञ्जाः यस्यास्ताम्, अनवरतमज्जद्वनगजमदामोदसुरभिततरङ्गाम्—अनवरतं=सततं, मज्जतां=स्नानं कुर्वतां, वनगजानां=वन्यकरिणां, मदामोदेन=मदजलसौरभेण, सुरभिताः=सुगन्धयुक्ताः, तरङ्गाः=लहर्यः यस्यास्ताम्; अपरगङ्गां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वितीयां गङ्गाम्, अपरसागरराजमहिषीं=सागरस्य द्वितीयां राजपत्नीम्, अपरमार्कण्डेयतपःसिद्धिसखीम्—मार्कण्डेयो नाम चिरजीवी मुनिः; तस्य तपःसिद्धेः अपरां सखीं=सहचरीं, तत्तपःसिद्धिसाक्षिणीमिति भावः। भगवतीं=देवीं, मेकलकन्यां=मेकलगिरिसुतां नर्मदां, समुत्तीर्य=तीर्त्वा, उत्फुल्लपल्लविताङ्कोल्लसल्लकीसरलसालसर्जार्जुननिम्बकदम्बजम्बूस्तम्बोदुम्बरखदिरकरञ्जाञ्जनाशोकसौभाञ्जनकप्रायैः—उत्फुल्लः=विकसितः, पल्लवितश्च=पल्लवयुक्तश्च, अङ्कोल्लः=वृक्षविशेषः 'पिस्ता' इति भाषायाम्। अत्रेदमवधेयम्—उत्फुल्लेत्यादौ लकारानुप्रासानुरोधेन 'अङ्कोल्ल' इति पाठः प्राकृत एव, संस्कृते त्वङ्कोठ इति। सल्लकी=गजप्रिया, सरलः वृक्षविशेषः, सालः, सर्जः, अर्जुनः, कदम्बः, जम्बूस्तम्बः=जम्बूसमूहः, उदुम्बरः, खदिरः, करञ्जः, अञ्जनः, अशोकः, सौभाञ्जनकः='शोभाञ्जनः' इत्यपराभिधानो वृक्षः; 'सहिजन' इति भाषायाम्। तत्प्रायैः, तरुभिः=वृक्षैः, आकीर्णं=व्याप्तम्, मतङ्गजानां=गजानाम्, अभिमतं=प्रियम्, सारङ्गैः=मृगैः, अनुभूतसारम्—अनुभूतं सारम्=उत्कृष्टोंऽशः यस्य तत्, तरङ्गानिलैः=तरङ्गस्पर्शिभिर्वायुभिः, शिशिरतरम्=अतिशयशीतलम्, समञ्जरीकैः=मञ्जरीसहितैः, लताजालकैः=वल्लरीपुञ्जैः, स्वर्गवनसमं—स्वर्गस्य वनं=नन्दनवनं, तत्तुल्यम्; दक्षिणं=दक्षिणभागस्थितं, नर्मदातीरपुण्यारण्यम्=नर्मदातीरे स्थितमतएव पवित्रं वनम्, उल्लङ्घ्य=अतिक्रम्य, गगनवीथिमिव=आकाशमार्गमिव, सिंहराशिराजितां=सिंहसमूहेन शोभिताम्, पक्षे—सिंहराशिः=ज्योतिषोक्तः पञ्चमो राशिः, तेन राजिताम्, उत्पतङ्गाम्—उत्कृष्टाः पतङ्गाः=पक्षिणः यस्यां ताम्, पक्षे—उत्कृष्टः पतङ्गः=सूर्यः यत्र ताम्, उत्थितवृश्चिकाम्—उत्थिताः=उद्गताः, वृश्चिकाः=अलिनः यत्र तां तथाभूताम्, पक्षे—उत्थितः=सीमाबद्धः, वृश्चिकः=अष्टमराशिः यत्र तथाभूताम्, आविर्भूतसार्द्ररोहिणीमूलां च—आविर्भूता=समुत्पन्ना, आर्द्रेण=शृङ्गवेरेण, 'अदरक' इति भाषायाम्। रोहिणी=ओषधिविशेषः, मूलः=मूलकश्च यस्यां ताम्, पक्षे—आर्द्ररोहिणीमूलानि ताराः। छन्दोजातिमिव=छन्दोवर्गमिव, शार्दूलविक्रीडितमनोहरां—शार्दूलविक्रीडितेन=सिंहविलसितेन, पक्षे—शार्दूलविक्रीडितनाम्ना छन्दोविशेषेण, मनोहरां=रमणीयाम्, हारिहारिणीमन्दाक्रान्ताम्—हारिण्यः=मनोहराः, याः हरिण्यः=मृग्यः, ताभिर्मन्दम् आक्रान्ताम्=व्याप्ताम्, पक्षे—हारिण्यौ हरिणी मन्दाक्रान्ता च छन्दसी यत्र ताम्, अनवरतवसन्ततिलकोद्भासिताम्—अनवरतं=सततं, वसन्तैः तिलकैश्च=तरुविशेषैश्च, उद्भासितां=सुशोभिताम्, पक्षे—वसन्ततिका नाम छन्दस्तद्भूषिताम्, अतिविचित्रचम्पकमालां च—अतिविचित्रा चम्पकानां माला=श्रेणी, पक्षे—चम्पकमाला नाम छन्दो यत्र ताम्, सीतां=जनकराजपुत्रीं रामपत्नीमिव, बहुकोटरावणावृताम्—बहुभिः=अनेकैः, कोटरावणैः=कोटरोपेतवनैः, आवृताम्=आच्छादितां, पक्षे—बहुः=अधिकः, कोटः=कौटिल्यं यस्मिन्, तथाविधेन रावणेन, आवृतां=प्रार्थिताम्। कुट कौटिल्ये इति धातोर्भावे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि 'कोट' इति ज्ञेयम्। कोटरावणमित्यत्र कोटराणां वनमिति कृत्वा 'वनगिर्योः संज्ञायाम्'—इति सूत्रेण पूर्वपदस्य दीर्घः। 'वनं पुरगा'—इति सूत्रेण णत्वम्। तथा उत्पन्नकुशलवां – उत्पन्नः=सञ्जातः, कुशानां=दर्भाणां, लवः=लेशः यत्र ताम्, पक्षे—उत्पन्नौ कुशलवौ सुतौ यस्यां ताम्; लङ्कामिव सञ्चरद्विगुणपञ्चाननविभीषणां—सञ्चरद्भिः=भ्रमद्भिः, विगुणैः=विरज्जुभिः, स्वच्छन्दैरित्यर्थः। पञ्चाननैः=सिंहैः, विभीषणां=विशेषेण भीषणाम्, अपि च चारुपुष्पकां—चारूणि=सुन्दराणि, पुष्पकाणि=कुसुमानि यत्र तां तथोक्ताम्, अकाण्डाडम्बरितमेघनादाम्—अकाण्डे=अनवसरेऽपि, आडम्बरितः=विस्तृतः, मेघानां=जलदानां, नादः=ध्वनिः यत्र तां तथोक्ताम्, लङ्कापक्षे—द्वौ गुणौ येषां पञ्चानां ते द्विगुणाः; दशेत्यर्थः, तत्संख्यानि आननानि यस्य सः दशाननः=रावणः, सञ्चरन्तौ दशाननो विभीषणश्च=तद्भ्राता यस्यां ताम्, चारु=मनोहरं; पुष्पकं विमानं यत्र ताम्, अकाण्ड आडम्बरितो मेघनादो नाम रावणात्मजो यत्र ताम्, गीतविद्यामिव=सङ्गीतविद्यामिव, तताबनद्धघनसुषिरवंशस्वनमनोहरां—तता=विस्तीर्णा, अवनद्धाः=सुश्लिष्टाः, घनसुषिराः=बहुविवराः, ये वंशाः=वेणवः, तेषां स्वनेन=ध्वनिना, मनोहरां=रम्याम्; अनेकतालभेदाम्—अनेके=बहवः, तालानां=तरुविशेषाणां, भेदाः=प्रकाराः यत्र ताम्, निषादऋषभमध्यमग्रामयुक्तां—निषादानामृषभा इति निषादऋषभाः=शबरश्रेष्ठाः, 'ऋत्यकः' इतिसूत्रेण प्रकृतिभावः। 'न समासे' इति वार्तिकेन प्रकृतिभावनिषेधो न शङ्क्यः, यतो हि 'न समासे' इति निषेधवार्तिकं हि 'इकोऽसवर्णे—'इति सूत्र एव, न तु 'ऋत्यकः' इत्यत्रेति सिद्धान्तः। मध्ये भवाः मध्यमाः, ग्रामाश्च=ग्रामटिकाश्च, तैः युक्ताम्, गीतविद्यापक्षे—ततेन=वीणागतेन, अवनद्धेन=पौष्करेण, पुष्करवाद्यविशेषगतेन, घनेन=कांस्यकृतेन, सुषिरवंशस्वनेन=सुषिरसंज्ञकवेणुस्वनेन च मनोहराम्,

'ततं तन्त्रीगतं ज्ञेयमवनद्धं तु पौष्करम्।
घनं कांस्यकृतं प्रोक्तं सुषिरं वांश्यमेव च॥'

इति भरतोक्तेः। अत्र सुषिरपदेनैव वंशस्वनत्वबोधेऽपि वंशस्वनोपादानं स्पष्टार्थमिति बोध्यम्। अनेकतालभेदाश्चञ्चत्पुटादयो यस्यां ताम्। निषाद ऋषभो मध्यमश्चेति ग्रामैः=स्वरक्रमविशेषैः युक्ताम्,

'निषादर्षभगान्धार षड्जमध्यमधैवताः।
पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्री कण्ठोत्थितास्स्वराः॥'

इत्यमरोक्तेः॥ चित्रविद्यामिव अनेकपत्रकण्टकलतास्थानकविषमाम्—अनेकैः=बहुभिः कण्टकैः, पत्रैः=पर्णैः, लताभिः=वल्लीभिः, स्थानकैः=आलवालैश्च, विषमां=दुर्गमाम्; तथा ऋज्वागततापसाम्—ऋजवः=अकुटिलाः, आगताः=आयाताः, तापसाः=तपस्विनः यस्यां ताम्। चित्रविद्यापक्षे—कण्टकाः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लताः शाखाश्चेति पत्रावयवविशेषाः। कलिका-कण्टक-शाखा-त्रिभङ्गिसंज्ञाभिश्चत्वारः पत्रावयवाः। एतैर्मिलित्वा शिशु-सकल-स्वस्तिक-वर्धमान-सर्वतोभद्राख्याणि पञ्चपत्राणि निष्पद्यन्त इति सिद्धान्तः। तथा स्थानकानि=पार्श्वागत-ऋजु-ऋज्वागत-द्व्यर्धाक्ष-अर्धऋजु-गमनालीढ-त्वरित-त्रिभङ्गिसंज्ञानिः, तैः विषमाम्=अनुपमामित्यर्थः। तथा ऋज्वागततापसाम्—ऋज्वागते=स्थानकविशेषे, तापसानि=मयूरासनोष्ट्रासनादीनि करणानि यस्यां ताम्, यद्वा ऋज्वागतेन तापं स्यति=विनाशयतीति ऋज्वागततापसा ताम्, ऋज्वागतेन दुःखापहारिणीमित्यर्थः। अत्रेदमवधेयम्—पूर्वोक्तविशेषणपदोक्तस्थानकशब्देनैव ऋज्वागतस्य गतार्थत्वेऽपि प्रायो हि चित्रे ऋज्वागतस्यैव प्रयोगेण तद्व्यापकत्वात् पृथगुक्तिरिति। कलियुगशिवशासनस्थितिमिव—कलियुगे शिवशासनस्य=शिवोपासनस्य, स्थितिमिव=पद्धतिमिव, महाव्रतिकान्तःपातिभिः—अप्सुरतिरित्यव्रतिः, महती अव्रतिः=जलानुरागः येषां ते महाव्रतिकाः=वृक्षाः, श्लेषचित्रादिषु बवयोरभेदादत्र बकारप्रयोगे न काचिद्धानिरिति ज्ञेयम्। तेषां वृक्षाणाम् अन्तः=मध्ये, पतन्त्यभीक्ष्णं तैः, कालमुखैः=कृष्णमुखैः, वानरैः=मर्कटैः; संकुलां=व्याप्ताम्, तथाऽनेकधाभिन्नस्रोतसम्—अनेकधा=नानाप्रकारैः, भिन्नानि=प्रस्फुटितानि, स्रोतांसि=प्रस्रवणानि यत्र ताम्, पक्षे—महाव्रतिकाः=कापालिकाः, तेषाम् अन्तःपातिभिः=तत्समीपवर्तिभिर्जनैः, [कालमुखैः+वा—नरैः] वेत्यथवार्थे। कालमुखैः=शिवोपासकैः, नरैः=लोकैः, संकुलाम्=आचिताम्, तथा अनेकधा=बहुधा, भिन्नस्रोतसं=भिन्नप्रवाहां; विविधसम्प्रदायामिति यावत्। स्रोतोऽत्र लक्षणया प्रवाहः, सम्प्रदाय इति यावत्। कृतयुगे ह्येकमेव शिवशासनमभूत्, कलौ तु बहुसम्प्रदायमिति भावः। कापालिकखट्वाङ्गयष्टिमिव—खट्वाङ्गयष्टिः=वक्राकारो लघुदण्डः, शिवस्यास्त्रत्वेन तत्प्रसिद्धिः। कापालिका अपि शिवस्यानुकुर्वन्तः खट्वाङ्गयष्टिं धारयन्ति, तामेव कापालिकखट्वाङ्गयष्टिमिव, समुद्रोपकण्ठलग्नां—समुद्रस्य=सिन्धोः,उपकण्ठे=तटे, लग्नां=संसक्ताम्, समुद्रतटपर्यन्तविस्तीर्णामित्यर्थः। यष्टिपक्षे—मुद्रा=भूषणास्थिग्रन्थिः, तया सहितम् उपकण्ठं=गलसमीपं, तत्र लग्नाम्=अवष्टम्भत्वेन प्रयुक्तामित्यर्थः। मायामिव शम्बराधिष्ठितां—शम्बरैः=मृगभेदविशेषैः, अधिष्ठितां=सनाथितां, मायापक्षे—शम्बरेण=दानवविशेषेण, अधिष्ठिताम्। शम्बरेण हि माया निर्मिता, अतएव शाम्बरीत्युच्यते। मरुभूमिमिव=मरुस्थलीमिव, करीरैः—करिणं=गजम् ईरयन्ति=क्षुब्धं कुर्वन्ति तैः, केसरिप्रसवैः—केसरिणां=सिंहानां, प्रसवैः=पोतैः, पक्षे—केसरिणः=किञ्जल्कोपेताः, प्रसवाः=पुष्पाणि यत्र तथाविधैः, करीरैः=कण्टकबहुलतरुविशेषैः, असंचारां—न संचारः=गतिः यत्र तथाविधाम्, आरब्धमङ्गलाचारैरिव—आरब्धाः=प्रारब्धाः, मङ्गलाचाराः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मङ्गलकारीणि कृत्यानि तैरिव, अतिचारुचन्दनैः—अतिचारुः=समधिकसुखदः, चन्दनः=चन्दनतरुः यत्र तैः, पक्षे—अतिचारुश्चन्दनस्तद्रसो यत्र तैः, कृतगोरोचनाविशेषकैः—कृतः=विहितः, गवां=धेनूनां, रोचनाविशेषः=अभिलाषातिशयः यैस्तथाविधैः, पक्षे—कृतः=सम्पादितः, गोरोचनायाः=मङ्गलप्रदगन्धद्रव्यविशेषस्य, विशेषकः=तिलकं यत्र तैः, अक्षतदूर्वावाहिभिः—अक्षताम्=अलूनां, दूर्वां वहन्ति=धारयन्तीत्येवंशीलैः, पक्षे—अक्षतान्=तण्डुलान्, दूर्वां च वहन्तीति तैः, तृणस्थलैः=तृणभूमिभिः, अलंकृतां=विभूषिताम्, विविधव्याधां=विविधा व्याधा यत्र तथाविधां, बहुव्याधाकुलामित्यर्थः। विन्ध्याटवीं=विन्ध्यवनम्, अवगाहमान=प्रविशन्, मेषवृषमिथुनयुजः—मेषाणां वृषाणां च मिथुनानि युञ्जन्ति=धारयन्ति तान्, सधनुषः—धनुषा=कोदण्डेन, सह विद्यमानान्, तथा सकुम्भकन्यान्—सकुम्भाः=मङ्गलार्थं मस्तकन्यस्तकलशाः, कन्या येषु तान्, राशीभूतान्=एकत्र समवेतान्, अथ च ज्यौतिषोक्तमेषवृषमिथुनकुम्भकन्याख्यराशीभूतान्, गिरिग्रामपामरलोकान्—गिरिग्रामाः=पर्वतोपत्यकावर्तिनः ये ग्रामाः, तेषां पामरजनान्=प्राकृतजनान्, आलोकयन्=अवलोकयन्, 'इयं गगनवीथीव=आकाशमार्ग इव, चित्रशिखण्डिमण्डिता—चित्रशिखण्डिभिः=चित्रवर्णमयूरैः, पक्षे—सप्तर्षिभिः, मण्डिता=भूषिता, सरित्तीरभूमिः=नदीतटप्रदेशः, इयं सरिदिव=नदीव, [बहुतरम्+गोपशोभिता]—बहुतरमिति क्रियाविशेषणम्, गोपैः=बल्लवैः, शोभिता=अलंकृता, पक्षे—[बहु-तरंगोपशोभिता]—बहुभिः तरङ्गैः=जललहरीभिः, उपशोभिता, गोष्ठवसतिः=गोशालाबहुलग्रामः, इयं च तरुपङ्क्तिः=वृक्षाणां श्रेणी, नक्षत्राणां मध्यंगतापि, न विशाखा=विशाखानाम नक्षत्रमिति विरोधः; विगताः शाखा यस्या सा तथोक्तेति परिहारः। एतेन तरूणामुच्चता साभोगता चोक्ता। इयं वीरुत्=लता, पुष्पवती अपि=रजस्वलाऽपि, न दूषितस्पर्शा—दूषितः स्पर्शः यस्याः सा तथाविधेति विरोधः, पुष्पवती=कुसुमिता, अतएव मृदुत्वात्कोमलस्पर्शेति परिहारः। इयं वंशजालिः=नववंशपंक्तिः, सन्निहितमधुदानवापि—संनिहितः=पार्श्वस्थः, मधुर्नाम दानवः यस्यास्तथाविधापि, हरिप्रिया=विष्णुप्रियेति विरोधः, [संनिहितमधुदा-नवा]—संनिहितेभ्यः=समीपवर्तिभ्यः, मधुदा=क्षौद्रप्रदा, मधुच्छत्रोपेतेति भावः। नवा=अविच्छाया च, हरीणां=सिंहानां च, प्रिया=रुचिकरा, तदनुकूलावासत्वादिति परिहारः। इयं सल्लकीसंततिः=सल्लकीतरुश्रेणिः, कृतमातङ्गसङ्गोऽपि—कृतः=विहितः, मातङ्गस्य=श्वपचस्य, सङ्गः=सम्पर्कः यया तथाविधापि, द्विजैः=विप्रैः, न परिहृता=न परिवर्जितेति विरोधः; मातङ्गः=गजः, द्विजाः=पक्षिणश्च, ततो गजस्पृष्टा पक्षिभिर्युक्ता चेति परिहारः। [श्लेषमूलको विरोधाभासोऽलङ्कारः] इमे च केचित् [विन्ध्यगिरिशिखराः] सशिखण्डिनः=मयूरसङ्कुलाः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महाद्रुपदाः—महद् द्रुपदं=वृक्षस्थानं येषु ते तथोक्ताः। पूर्वमटव्यां मयूरसद्भाव उक्तः, संप्रति विन्ध्यगिरिशिखरेष्विति न पौनरुक्त्यमित्यवगन्तव्यम्। अथ च सशिखण्डिनः—शिखण्डि=द्रुपदतनयः, तेन सहिताः महाद्रुपदाः=क्षत्रविशेषाः। केऽपि विच्छिन्नकीचकवंशाः—विच्छिन्नाः=पृथग्भूताः, कीचका=सच्छिद्राः वंशाश्च निश्छिद्रा येषु ते तथोक्ता, तथा वृकोदराः—वृकाः=श्वापदविशेषाः, उदरे=मध्ये येषु ते तथाविधाः। अथ च विच्छिन्नकीचकवंशाः—विशेषेण छिन्नः=नाशितः, कीचकवंशः=कीचकाख्यराजान्वयः, यैस्ते वृकोदराः=मध्यमपाण्डवा भीमाः। केचित् [शिखराः] सपुण्डरीकाक्षाः—पुण्डरीकैः=श्वेतकमलैः, अक्षैः=विभीतकैर्वृक्षविशेषैः सहिताः, तथा पाण्डुसन्तानकाः—पाण्डुः=पीतवर्णाः, सन्तानकाः=वृक्षविशेषाः येषु ते पाण्डुसन्तानकाः। अथ च पुण्डरीकाक्षः=कृष्णः, तेन सहिताः पाण्डोः सन्ताना एव सन्तानकाः=तनयाः, युधिष्ठिरादयः पाण्डवाः। केऽपि [शिखराः] उद्धृतभुवः—उत्कर्षेण=विस्तारेण, हृता=रुद्धा, भूः=पृथ्वी यैस्ते तथाविधाः, तथा महावराहाः—महान्तः वराहाः=शूकराः येषु ते तथाविधाः। अथ च उद्धृता=उत्क्षिप्ता, भूः=पृथ्वी यैस्ते तथोक्ता महावराहाः=भगवन्तः विष्णवः। केऽपि [शिखराः] उत्कृष्टसुरभिश्रीद्रुमावलिहरिकराकृष्टपन्नगनेत्राः—उत्कृष्टाः=मनोज्ञाः, सुरभयः=चम्पकाः, श्रीद्रुमाश्च=पिप्पलाश्च; तेषाम् अवलिः=पङ्क्तिः, तत्र ये हरयः=कपयः तेषां करैः=हस्तैः आकृष्टानि पन्नगनेत्राणि=सर्पाणां नयनानि येषु ते तथोक्ताः, तथा स्फुरन्मणिभित्तयः—स्फुरन्त्यः=देदीप्यमानाः, मणिभित्तयः येषु ते तथोक्ताः। अतएव अमन्दरागाः—न मन्दः रागः=कान्तिः येषां ते तथोक्ताः। पक्षे [उत्कृष्टसुरभिश्रीद्रुमाः + वलिहरिकराकृष्टपन्नगनेत्राः]—उत्कृष्टा=उद्धृता, सुरभिः=कामधेनुः, श्रीः=लक्ष्मीः, द्रुमः=परिजातश्च यैस्ते तथोक्ता, तथा बलेः=दैत्यस्य, हरेः=विष्णोश्च, करैः=हस्तैः, आकृष्टं=भ्रामितं, पन्नगः=वासुकिलक्षणं, नेत्रं=मन्थानाकर्षणरज्जुः यत्र ते तथोक्ताः, [स्फुरन् मणिभित्तयः + मन्दराऽगाः]—स्फुरन्त्यः मणिभित्तयः यत्र ते मन्दराख्या अगाः=पर्वताः। 'सुरभिश्चम्पके स्वर्णजातीफलवसन्तयोः। सन्धौ पले सौरभेय्याम्' इति विश्वः। केऽपि [शिखराः] कैलासकूटायमानाः=कैलासकूट इवाचरन्तः, क्यङ्गतोपमा। सस्थाणवः—स्थाणवः=स्थिरपदार्थाः, तैः सहिताः, पक्षे—स्थाणुः=शिवः, तत्सहिताः, दुर्गाश्रयाः—दुर्गा=विन्ध्यवासिनी देवी, तदाश्रयाः, पक्षे—दुर्गा=गौरी, तदाश्रयाः, श्रूयमाणगजवदनचीत्काराः—श्रूयमाणा=आकर्ण्यमाना, गजानां=हस्तीनां, वदनचीत्काराः=मुखबृंहितानि यत्र ते तथोक्ताः, पक्षे—श्रूयमाणा गजवदनस्य=गणेशस्य, चीत्काराः यत्र ते। सगुहाः—गुहाः=कन्दराः, ताभिः सहिताः, पक्षे—गुहः=कार्त्तिकेयः, तेन सहिताः, अमी=एते, विन्ध्यस्कन्धसन्धिसानवः=विन्ध्यस्कन्धमूलगतशिखराः, खलु=निश्चयेन, सेव्या=वासयोग्या, इति=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं, मन्त्रिसूनुना=अमात्यपुत्रेण, श्रुतशीलेन=श्रुतशीलाभिधेन, सह=साकं, विहित-विदग्धालापः -- विहितः=कृतः, विदग्धालापः=वैदग्ध्यपूर्णः सम्भाषः येन स नलः, कयापि वेलया=केनचित्कालेन, अपवर्गे तृतीया। कमप्यध्वानं=कञ्चिन्मार्गम्, अति-क्रम्य=उल्लङ्घ्य, क्वापि=कुत्रचिदपि, अपरिमितपतन्निर्झरजलतुषारस्पर्शमञ्जरि-तपादपपुष्पपरिमलमिलन्मधुकरझङ्कारहारिणि—अपरिमितं=समधिकं, पतद् यत् निर्झरजलं=प्रवहज्जलं, तस्य तुषारस्पर्शेन=शीतलस्पर्शेन, मञ्जरिताः=मञ्जरीस्तब-कयुक्ताः, पादपाः=वृक्षाः, तेषां पुष्पपरिमलाय=कुसुमसौरभाय, मिलतां=समवेतानां, मधुकराणां=भ्रमराणां, झङ्कारेण=गुञ्जितेन, हारिणि=मनोज्ञे, रममाणशबरमिथुन-सम्मर्दमृदितामन्दमृदुशाद्वले—रममाणानि=रतिक्रीडापराणि, यानि शबरमिथुनानि; तेषां संमर्देन=घर्षणेन, मृदितममन्दमृदुशाद्वलं=समधिककोमलहरिततृणयुक्तं तथाविधे, जलस्थलीप्रदेशे=जलाशयतटवर्तिप्रदेशे, श्रान्तसैनिकानुकम्पया—श्रान्तेषु=क्लान्तेषु, सैनिकेषु=भटेषु, अनुकम्पया=दयया, श्रान्ता एते सैनिकाः कञ्चित्कालं विश्राम्य-न्त्विति दययेति भावः। प्रयाणविच्छेदं=यात्राक्रमभङ्गम्, अकरोत=चकार; तत्र वासमकरोदिति भावः॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार देवाधिदेव भगवान् विष्णु को प्रणाम कर विजयी गजराज के कन्धे पर सवार होकर आगे-आगे शीघ्रतापूर्वक चलते हुए अनेकों हाथियों, घोड़ों और परिजनों (सेवकों) वाले (राजा ने) सर्वप्रथम पुरोहित के द्वारा महानदी याग सम्पादित कर लेने पर, हजारों युगों के परिवर्तनविषयक वृत्तान्तों की साक्षी, अनवरत तपस्या करते हुए ब्रह्मर्षियों द्वारा स्थापित शिवलिंगों से परिवृत्त (घिरी हुई) तटभाग वाली, अनेकों देवांगनाओं से सेवित तट पर प्रियसमागमनार्थ निर्दिष्ट स्थानस्वरूप लताकुञ्जों वाली; निरन्तर स्नान करते हुए वन्य गजों के मदजल के सुगन्ध से सुगन्धयुक्त लहरों वाली, दूसरी गंगा के समान, समुद्र की दूसरी राजपत्नी के समान, मार्कण्डेय मुनि की दूसरी तपःसिद्ध सहचरी के समान मेकलनाकक पर्वत की कन्या भगवती नर्मदा नदी को पार कर विकसित एवं पल्लवित अंकोल (पिस्ता), सल्लकी, सरल, साल, सर्ज, अर्जुन, कदम्ब, जामुनसमूह, उदुम्बर (गूलर), खदिर (खैर), करञ्ज, अञ्जन, अशोक और शोभाञ्जन-(सहिजन)-बहुल वृक्षों से व्याप्त, हाथियों के प्रिय, मृगों द्वारा उत्कृष्ट अंशों का उपभोग किये गये, तरङ्गों का स्पर्श करने वाले वायु के कारण अत्यन्त शीतल, मञ्जरीयुक्त लताजालों के कारण स्वर्ग के नन्दनवनसदृश नर्मदा नदी के दक्षिण भागस्थित पवित्र वन को पार कर आगे (विन्ध्यवन को देखा, जो कि) सिंह राशि से सुशोभित, उत्कृष्ट पतङ्ग; (सूर्य) से युक्त, उत्थित वृश्चिक राशि वाले तथा आर्द्रा, रोहिणी और मूलसंज्ञक नक्षत्रों से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समन्वित आकाश-मार्ग के समान ही वह विन्ध्य वन भी सिंहों से सुशोभित, उत्कृष्ट पतंगों (पक्षियों) से युक्त; ऊपर की ओर डंक उठाये हुए वृश्चिकों (बिच्छुओं) और आर्द्र (अदरक), रोहिणी तथा मूलनामक समुत्पन्न वृक्षों से सुशोभित था।

शार्दूलविक्रीडित, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका और चम्पकमाला छन्दों से विभूषित, अतएव रमणीय छन्दोवर्ग के समान (वह विन्ध्यवन भी) शार्दूलों (सिंहों) के विलास से रमणीय, मनोहर हरिणियों द्वारा मन्दतापूर्वक आक्रान्त; निरन्तर वसन्त एवं तिलकनामक वृक्षविशेष से सुशोभित तथा अत्यन्त विचित्र चम्पक-पंक्तियों से मण्डित था।

अत्यन्त कुटिल रावण द्वारा प्रार्थित एवं कुश तथा लव (नामक पुत्रों) को उत्पन्न करने वाली सीता के समान (वह विन्ध्यवन भी) अनेकों कोटरों (खोंखलों) से आच्छादित एवं कुशों के अंश को उत्पन्न करने वाला था।

सञ्चरण करते हुए द्विगुण पञ्चानन अर्थात् दश मुख वाले रावण और बिभीषण से समन्वित, सुन्दर पुष्पक विमान से सम्पन्न एवं असमय में ही आडम्बरयुक्त (रावणपुत्र) मेघनाद के गर्जन से व्याप्त लंकापुरी के समान (वह विन्ध्याटवी भी) बिना बन्धन के अर्थात् स्वच्छन्द रूप से विचरण करते हुए पञ्चाननों (सिंहों) के कारण विशेष रूप से भयंकर, सुन्दर पुष्पों से अलंकृत एवं असमय में ही फैले हुए मेघों के गर्जन से समन्वित थी।

तत (वीणा की ध्वनि), अवनद्ध (पौष्कर (मृदङ्ग) की ध्वनि), घन (झाल की ध्वनि) और सुषिर (सुषिरनामक वेणु की ध्वनि) से मनोहर तथा अनेक प्रकार के ताल एवं निषाद, मध्यम, ग्राम आदि स्वरों से युक्त गीतविद्या के समान (वह विन्ध्यवन भी) तत (फैले हुए), अवनद्ध (अत्यन्त घने, अतएव एक-दूसरे से सटे हुए) घनसुषिर (बहुत से विवरों अर्थात् छिद्रों से युक्त), वंशस्वन (बाँसों की ध्वनि) से रमणीय तथा अनेकों तालवृक्षों से समन्वित निषादऋषभों (शबरश्रेष्ठों) एवं मध्यवर्ती ग्रामों से युक्त था।

कलिका, कण्टक, शाखा (लता) और त्रिभङ्गीनामक चार पत्त्रावयवों; पार्श्वगत, ऋजु, ऋज्वागत, द्वयर्धाक्ष, अर्धऋजु, गमनालीढ़, त्वरित और त्रिभङ्गी नामक स्थानकों तथा ऋज्वागत में मयूरासन, उष्ट्रासन आदि तापस करणों से समन्वित चित्रविद्या के समान (वह विन्ध्यवन भी) अनेकों कण्टकों (काँटों), पत्रों (पत्तों), लताओं और स्थानकों (आलवालों) के कारण विषम अर्थात् दुर्गम तथा कुटिलतारहित तपस्वियों के आगमन से युक्त था।

महाव्रतिकों (कापालिकों) के समीप रहने वाले लोगों अथवा कालमुखों (शिव की उपासना करने वाले) मनुष्यों से व्याप्त तथा अनेकविध सम्प्रदायों से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समन्वित कलियुग की शिवोपासना पद्धति के समान (वह विन्ध्यवन भी) महाव्रतिकों (जल से अनुराग रखने वाले बड़े-बड़े वृक्षों) के मध्य में रहने वाले कालमुख (कृष्ण वर्ण के मुख वाले) वानरों से व्याप्त एवं अनेक प्रकार के प्रस्फुटित स्रोतों (झरनों) से समन्वित था।

समुद्रोपकण्ठलग्ना (मूठ के पास अलंकार के रूप में लगी हुई हड्डी) से सुशोभित कापालिक की खट्वाङ्गयष्टि (शिवास्त्र के रूप में प्रसिद्ध वक्र आकार के छोटे दण्ड) के समान (वह विन्ध्यवन भी) समुद्र के तट (किनारे) से लगा हुआ था अर्थात् समुद्र के तट तक फैला हुआ था। शम्बराधिष्ठित शाम्बरी माया के समान शम्बरनामक विशेष प्रकार के मृगों से अधिष्ठित था। काँटों से समन्वित पुष्प वाले करीर वृक्ष के कारण असञ्चरणीय अर्थात् अगम्य मरुभूमि के समान करीर (हाथियों को क्षुब्ध करने वाले) केसरिप्रसवों (सिंहशावकों) के कारण असञ्चरणीय था।

अत्यन्त सुन्दर चन्दन के लेप से निर्मित गोरोचना के तिलक, अक्षत और दूर्वा घासयुक्त स्थल पर प्रारब्ध मंगलकारी कृत्यों की भूमि के समान (वह विन्ध्यवन भी) अत्यन्त सुन्दर चन्दन वृक्ष, गोरोचना (गायों के लिए अत्यधिक प्रिय), अक्षत (न काटे गये) दूर्वायुक्त भूमि तथा तृणस्थलियों से अलंकृत था।

(इस प्रकार) अनेकों व्याधों से व्याप्त विन्ध्यवन में प्रवेश करते हुए (उस राजा ने) मेषों (भेड़ों) और बैलों के जोड़ों को लिए हुए, धनुष के साथ विद्यमान तथा कलशों को ली हुई कन्यायों के साथ समूहों में एकत्रित हुए गिरिग्रामों (पर्वतीय उपत्यकाओं में स्थित ग्रामों) के निवासियों को देखते हुए चित्रशिखण्डियों (सप्तर्षियों) से मण्डित आकाश मार्ग के समान चित्रशिखण्डियों (चित्र-विचित्र वर्ण के मयूरों) से अलंकृत यह नदीतट की भूमि, बहुविध तरंगों से सुशोभित नदी के समान अधिकांश ग्वालों से सुशोभित यह गोशाला-बहुल ग्राम, नक्षत्रों के मध्य तक पहुँची हुई होकर भी शाखा से रहित न दिखाई देने वाली यह वृक्षपंक्ति, पुष्पवती (फूलों से परिपूर्ण) होती हुई भी रजस्वला के समान दूषित स्पर्श से रहित यह लता, समीपवर्ती मधुदा (मधु प्रदान करने वाले) छत्तों से युक्त और नूतन (तरुण) हरियों (सिंहों) के लिए (उनके रहने हेतु अनुकूल होने के कारण) प्रिय यह बाँसों की पंक्ति (झुरमुट); मातङ्गों (मदमत्त हाथियों) से स्पृष्ट और द्विजों (पक्षियों) से भी रहित न रहने वाली यह सल्लकी वृक्षों की पंक्ति; शिखण्डी (द्रुपदपुत्र) से युक्त महाद्रुपद (क्षत्रियविशेष) के समान ये कोई (पर्वतशिखर) शिखण्डियों (मयूरों) से व्याप्त महाद्रुपद (बड़े-बड़े वृक्ष) तथा कीचकनामक राजा के वंश को समाप्त करने वाले वृकोदर (भीम) की तरह ही ये कोई (शिखर)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विच्छिन्न (कटे हुए) कीचकों (सच्छिद्र तथा निश्छिद्र बाँसों) एवं वृकोदरों (भेड़ियों) को अपनी गुफाओं में छिपाये हुए; पुण्डरीकाक्ष (भगवान् विष्णु) के साथ स्थित पाण्डुसन्ताकों (राजा पाण्डु के युधिष्ठिर आदि पुत्रों) के समान ये कोई पुण्डरीकाक्षों (पुण्डरीक=श्वेत कमल तथा अक्ष=रुद्राक्ष के वृक्षों) से समन्वित और पाण्डु (पीले रंग के) सन्तानकनामक विशेष प्रकार के वृक्षों से समन्वित (शिखर); भूमि का उद्धार करने वाले महावराह (वराहावतारधारी भगवान् विष्णु) के समान कोई महावराहों (विशाल शूकरों) से समन्वित और पृथ्वी के बहुत बड़े भाग में फैले हुए; उत्कृष्ट सुरभि (कामधेनु), श्री (लक्ष्मी) और द्रुम (पारिजात वृक्ष) को प्रकट करने वाले तथा बलिनामक दैत्य और भगवान् विष्णु के हाथों द्वारा वासुकि सर्परूप मन्थन-रस्सी से खींचे जाने वाले मन्दराचल पर्वत के समान ये कोई उत्कृष्ट कोटि के सुरभि (चम्पा) और श्रीद्रुम (पीपल) वृक्ष की पंक्तियों में स्थित हरि (वानरों) के हाथों द्वारा सर्पों के नेत्रों को आकृष्ट करने वाले तथा दीप्यमान (चमकते हुए) मणिभित्तियों के कारण अमन्द (समधिक) राग (कान्ति) वाले; स्थाणु (भगवान् शिव) से युक्त तथा दुर्गा (पार्वती) के आश्रयस्वरूप और गजवदन (गणेश) की चित्कार सुनाई देने वाले एवं गुह (कार्तिकेय) से युक्त कैलासशिखर के समान आचरण करते हुए ये कोई सस्थाणु (स्थिर पदार्थों—वृक्षों) से युक्त और दुर्गा (देवी विन्ध्यवासनी) के आश्रयस्वरूप, हाथियों के चित्कार सुनाई देने वाले तथा गुफाओं से समन्वित विन्ध्य पर्वत के स्कन्धभाग पर स्थित चोटियाँ निश्चय ही सेवनीय हैं।

इस प्रकार मन्त्रिपुत्र श्रुतशील के साथ वैदग्ध्यपूर्ण वार्तालाप करते हुए (राजा ने) थोड़े समय में ही कुछ रास्ते को पार कर गिरते हुए समधिक झरनों के जल के शीतल स्पर्श से उद्भूत मञ्जरी-गुच्छों वाले वृक्षों के पुष्प-परागों का पान करने के लिए एकत्रित भ्रमरों के झङ्कार से मनोहारी एवं रमण करते हुए शबरयुगलों के घर्षण से दलित अत्यन्त कोमल हरे घासों वाले जलाशय के तटस्थित किसी स्थान पर थके हुए सैनिकों पर कृपा करते हुए (ये सैनिक कुछ देर तक विश्राम कर लें, इसलिए अपनी) यात्रा को स्थगित कर दिया ॥

तैस्तैश्चिरन्तनवासरव्यापारैरहःशेषसहितामतिवाह्य तामपि निशामनन्तरमुन्मिषत्पक्ष्मपक्षिपक्षावधूनितपवनैरिवापनीयमानेषु गगनचत्वरचर्चाप्रकरपाण्डुपुष्पपुञ्जकेषु नक्षत्रेषु, स्वविरहोत्पन्नतमःकलङ्ककलुषितानि मनाक्कुङ्कुमपङ्कपिञ्जरैः करैः परामृश्य प्रसादयति दिननाथे दिङ्मुखानि, पुनः पूर्वक्रमेण प्रस्थानमकरोत् ॥

कल्याणी—तैरिति। तैस्तैः=तथाविधैः, चिरन्तनवासरव्यापारैः=पुरातनदैनिकक्रियाभिः, अहःशेषसहिताम्=अवशिष्टवासरसहितां, तामपि निशां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रात्रिं, अतिवाह्य=नीत्वा, अनन्तरं=पश्चात्, प्रातःकाल इत्यर्थः। उन्मिषत्पक्ष्मपक्षिपक्षावधूनितपवनैः—उन्मिषन्ती=उन्मीलयमाने, पक्ष्मणी येषां तथाविधानां पक्षिणां=खगानां, पक्षैः=पुखैः, अवधूनिताः=सञ्चालिताः, पवनाः=वाताः तैरिव; गगनचत्वरचर्चाप्रकरपाण्डुपुष्पपुञ्जकेषु=गगनप्राङ्गणस्य प्रसाधनसामग्रीभूतशुभकुसुमसमूहेषु, नक्षत्रेषु=तारकागणेषु, अपनीयमानेषु=दूरीक्रियमाणेषु, दिननाथे=सूर्ये, स्वविरहोत्पन्नतमःकलङ्ककलुषितानि—स्वविरहात्=स्ववियोगात्, उत्पन्नं=सञ्जातं, यत् तमः=अन्धकारः, तदेव कलङ्कः, तेन कलुषितानि=मलिनानि, दिङ्मुखानि=दिग्वधूमुखानि, मनाक्=ईषत्, कुङ्कुमपङ्कपिञ्जरैः=कुङ्कुमपङ्कवत् पिञ्जरैः, करैः=किरणैः, अथ च कुङ्कुमपङ्केन पिञ्जरैः हस्तैः, परामृश्य=स्पृष्ट्वा परिमृज्य च, प्रसादयति=निर्मलीकुर्वति प्रसन्नतां नयति च सति, समासोक्तिरलङ्कारः। पुनः=भूयः, पूर्वक्रमेण=पूर्वानुसारं, प्रस्थानं=प्रयाणम्, अकरोत्=चकार॥

ज्योत्स्ना—उन-उन पुरातन दैनिक क्रिया-व्यापारों से अवशिष्ट दिन के साथ-साथ उस रात्रि को भी व्यतीत करने के पश्चात् प्रातःकाल आँखों को खोलते हुए पक्षियों के पंखों द्वारा किये जा रहे हवा से मानों आकाश के प्राङ्गण में स्थित प्रसाधन–सामग्रीभूत श्वेत पुष्पसमूहरूपी नक्षत्रों को दूर किये जाने पर, अपने विरह से समुद्भूत अन्धकाररूप कलंक से कलुषित दिशाओं के मुखों को कुंकुमलेप के समान पिञ्जर (पीतवर्ण) किरणों और कुंकुमलेप से पिञ्जरित हाथों से भगवान् सूर्य के द्वारा स्पर्श करते हुए परिमार्जित किये जाने और निर्मल करते हुए प्रसन्न किये जाने पर पुनः पूर्वक्रमानुसार ही (राजा नल ने अपने समस्त परिजनों के साथ यात्रा के लिए) प्रस्थान किया॥

एवमपसरन्मार्गान्मार्गान्नीवारीणि वारीणि सहंसनिनदान् नदान् सकरेणुरेणुस्थलमाच्छादितदिशि खराणि शिखराणि लङ्घयन् सुनीरागान् गिरिगहनग्रामांस्तपस्विनश्च मानयन्नेकदा नातिदूर इवोत्ककादम्बकदम्बचुम्ब्यमानाम्बुजराजिरजोरञ्जिताम्भसि सरित्तीरे तरुतलोपविष्टमेकमध्वश्रान्तमध्वनीनमिदं चारुश्लोकयुगलमतिमधुरगीततरङ्गरङ्गिताक्षरं गायन्तमद्राक्षीत्॥

कल्याणी—एवमिति। एवं=इत्थम्, अपसरद्=भयात्पलायमानं; मार्गान्मार्गान्—मार्गं=मृगसमूहः, येभ्यस्तथाविधान्, मार्गान्=पथः, नीवारोऽस्त्येष्विति नीवारीणि=नीवारयुक्तानि, वारीणि=जलानि, सहंसनिनदान्—हंसनिनदैः=हंसध्वनिभिः सहेति सहंसनिनदान्=हंसध्वनियुक्तान्, नदान्=जलधारान्, सकरेणुरेणुस्थलं—करेणुभिः=गजैः सहेति सकरेणु, रेणुस्थलं=धूलिबहुलस्थानम्; आच्छादिता दिशः येभ्यस्तानि आच्छादितदिशि, खराणि=तीक्ष्णानि, शिखराणि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर्वतशृङ्गाणि; लङ्घयन्=अतिक्रामन्, ['मार्गान्–मार्गान्', 'वारीणि–वारीणि,' 'नदान्–नदान्,' 'रेणु–रेणु,' 'शिखराणि–शिखराणि' इति यमकानि] । सुनीरागान्–सुष्ठु नीरं=जलम्, अगाः=वृक्षाश्च येषु तथाविधान्, गिरिगहनग्रामान्=पर्वतीय-घनग्रामान्, तथा सुनीरागान्—सुष्ठु नीरागान्=निर्गतरागान्, तपस्विनश्च=तापसांश्च, मानयन्=सम्मानयन्, ग्रामानुपभुञ्जानस्तपस्विनश्च पूजयन्नित्यर्थः। उपभोगार्थकस्य मानेः प्रयोगो यथा—'मानयिष्यन्ति सिद्धाः, सोत्कण्ठानि प्रियसहचरीसम्भ्रमालिङ्गितानि ।' इति । स नलः एकदा=एकस्मिन् समये, तस्मिन्नेव समय इति भावः । नातिदूर इव=समीप एव, उत्ककादम्बकदम्बचुम्ब्यमानाम्बुजराजिरजोरञ्जिताम्भसि—उत्ककादम्बकदम्बेन=उत्सुकहंससमूहेन, चुम्ब्यमाना या अम्बुजराजिः=कमलश्रेणिः, तस्याः रजोभिः=परागैः, रञ्जितं=शोभितम्, अम्भः=जलं यस्य तथाविधे; सरित्तीरे=नदीतटे, तरुतलोपविष्टं—तरुतले=वृक्षच्छायायाम्, उपविष्टम्, एकं=कमपि, अध्वश्रान्तं=मार्गश्रान्तन्, अध्वनीनं=पान्थम्, इदं=वक्ष्यमाणं, चारुश्लोकयुगलं=मनोज्ञश्लोकद्वयम्, अतिमधुरगीततरङ्गरङ्गिताक्षरम्—अतिमधुरं यद् गीतं=गानं, तस्य तरङ्गैः=लहरीभिः, रङ्गितानि=दोलितानि, अक्षराणि यस्मिंस्तत्तथा स्यात्तथा, गायन्तम्=आलपन्तम्, अद्राक्षीत्=अपश्यत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार (भय के कारण) दूर भागते मृगसमूहों वाले मार्गों को, नीवार-(धान्य)-युक्त जलों को, हंसों की ध्वनियों से युक्त नदों को, हाथियों से युक्त धूलिबहुल स्थानों को तथा दिशाओं को आच्छादित किये हुए तीक्ष्ण पर्वतशिखरों को पार करते हुए, सुन्दर नीर (जल) तथा अगों (वृक्षों) वाले पर्वतीय घने गाँवों एवं सुनीराग अर्थात् पूर्णरूपेण रागरहित (वैराग्य-समन्वित) तपस्वियों को सम्मानित करते हुए (उस नल ने) उसी समय समीप में ही उत्सुक हंससमूह के द्वारा चूमे जा रहे कमलों के परागों से रञ्जित जल वाले नदी-तट पर वृक्ष की छाया में बैठे हुए, मार्ग में (चलने के कारण) श्रान्त अर्थात् थके हुए किसी पथिक को अत्यन्त मधुर गीत की तरंगों से दोलायित (तैरते हुए के समान) अक्षरों वाले अत्यन्त सुन्दर इन दो श्लोकों का गान करते हुए देखा ॥

तव सुहृदुपभुक्तश्रीफलः कामकेलिं
जनयति वनितानां कुङ्कुमालोहितानाम् ।
श्रयति स च समूहो मेखलाभूषितः सन्
जनयति वनितानां कुङ्कुमालोऽहितानाम् ॥१२॥

अन्वयः—तव सुहृद उपभुक्तश्रीफलः कुंकुमालोहितानां वनितानां कामकेलिं जनयति, (तथा) कुमालः मेखलाभूषितः सन् वनितानां कुं श्रयति, अहितानां च समूहः कुमालः जनयति ॥१२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तवेति। तव=त्वत्सम्बन्धी, सुहृत्=मित्रजनः, उपभुक्तश्रीफलः=भुक्तलक्ष्मीफलः, कुङ्कुमालोहितानां—कुङ्कुमेन=कुङ्कुमरागेण, आ=ईषत्, लोहितानां=रञ्जितानां, वनितानां=जनितात्यर्थरागाणां योषिताम्, 'वनिता जनितात्यर्थरागयोषिति' इति विश्वः। कामकेलिं=कामलीलां, जनयति=समुत्पादयति। तथा कुमालः=कुः=पृथ्वी, सैव माला यस्य तथाभूतः, मेखलाभूषितः—मेखलया=कटिपट्टिकया, भूषितः=अलंकृतः सन्, वनितानां=कान्तानां, कुं=भूमिकां, श्रयति=धारयति। अहितानां=शत्रूणां च, समूहः=यूथः, उपभुक्तश्रीफलः=उपभुक्तबिल्वफलः, [मेखलाभू+उषितः]—मेखलाभुवि=गिरिमध्यप्रदेशे, उषितः सन् कुमालः=कुत्सितस्रक्, [सत्+जन+यति+वनितानां कुम्]—सज्जनश्च यतिश्च वनी च वनवासीति सज्जनयतिवनिनतस्तेषां भावास्तत्तास्तासां, [वैरत्यागात्] सज्जनतायाः [ब्रह्मचर्यादियोगात्] यतितायाः [दर्भपत्रादिवसनाद्वन्यफलाद्यशनाच्च] वनित्वभावस्य च कुं=भूमिकां, श्रयति=धारयति। अत्र तृतीयपादे स चेति चकारात्तृतीयचतुर्थपादस्थितविशेषणाभ्यां सुहृद्वर्गस्याहितसमूहस्य च द्वयोरपि सम्बन्ध इत्यवधेयम्। अत्र प्रथमतृतीयपादयोः श्लेषालङ्कारः; द्वितीयचतुर्थपादयोश्च पादावृत्तिरूपयमकम्। मालिनी वृत्तम् ॥ १२ ॥

ज्योत्स्ना—(मित्रपक्ष में)—तुम्हारी मित्रमण्डली लक्ष्मी के फल का उपभोग करती हुई कुंकुम के रंग से थोड़ी-थोड़ी रंगी हुई रमणियों की कामलीला को उत्पन्न कर रही है एवं पृथ्वीरूपी माला वाली मेखला (करधनी) से अलंकृत होती हुई स्त्रियों की भूमिका को भी धारण करती है।

(शत्रुपक्ष में)—तुम्हारे शत्रुओं का समूह बिल्व-फल का उपभोग करता हुआ पर्वत की मध्यवर्ती भूमि में निवास करते हुए कुत्सित (निन्दित) मालाओं को धारण कर सत् (सज्जन), यति (संन्यासी) और वनी (वनवासी) की भूमिका को धारण करता है॥

विमर्श—आशय यह है कि तुम्हारा मित्रवर्ग समस्त ऐश्वर्यों का उपभोग करने के साथ-साथ पूर्णतया शृंगारों से सज्जित स्त्रियों में कामक्रीडा को उत्पन्न कर उनके साथ विहार करते हुए कभी-कभी स्वयं भी स्त्रीवेष को धारण कर नृत्य आदि आमोद-प्रमोद में व्यस्त रहता है; लेकिन तुम्हारे शत्रुवर्ग ने तुमसे पराजित होकर तुम्हारे भय से पर्वतों का आश्रय ग्रहण कर लिया है। अतः श्रीफलों (बेल के फलों) का भक्षण कर किसी-किसी प्रकार जीवन-निर्वाह करता है और तुमसे शत्रुता का त्याग कर वहीं पर सज्जन, संन्यासी एवं वनवासी के धर्म का पालन करता रहता है। लेकिन तुम्हारे सामने आने का साहस नहीं कर पाता ॥१२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—

त्वत्तो भयेन नृप पश्य जनो वनेषु
कान्त्या जितस्मर तिरोहितवानरीणाम् ।
शाखामृगश्चपल एष गिरेरुपत्य-
कां त्याजितः स्मरति रोहितवानरीणाम् ॥१३॥

अन्वयः—नृप ! कान्त्या जितस्मर ! पश्य, अरीणां वर्गः त्वत्तः भयेन वनेषु तिरोहितवान्, गिरेः उपत्यकां त्याजितः एषः चपलः शाखामृगः रोहितवानरीणां स्मरति ॥१३॥

कल्याणी—त्वत्त इति । हे नृप !=राजन् ! कान्त्या=सौन्दर्येण, जितस्मर !—जितः=विजितः, स्मरः=कामदेवः येन तत्सम्बुद्धौ—हे जितस्मर ! पश्येत्याभिमुख्यकरणे । अरीणां=शत्रूणां, जनः=वर्गः, त्वत्तो भयेन=त्वद्भयेन, वनेषु=काननेषु, तिरोहितवान्=न्यलीयन्त । [तेनैवारण्यनिलीनवैरिजनेन] गिरेः=पर्वतस्य, उपत्यकाम्=अधोभूमिं; त्याजितः=वियोजितः, ततोऽपसारित इत्यर्थः । एषः=पुरोदृश्यमानः, चपलः=लोलः, शाखामृगः=वानरः, रोहितवानरीणां=रक्तानमर्कटीनां, स्मरति=स्मरणं करोति । वानरीणामिति 'अधीगर्थदयेशां कर्मणि' इति कर्मणि शेषे षष्ठी । पादावृत्तिरूपयमकम् । वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—और भी—(अपनी) कान्ति से कामदेव को भी विजित कर लेने वाले हे राजन् ! देखिये, आपके भय से (आपके) शत्रुओं का वर्ग जंगलों में तिरोहित हो गया है अर्थात् छिप गया है । (उन्हीं जंगलों में छिपे हुए शत्रुओं द्वारा) पर्वत की उपत्यकाओं (घाटियों) से भगाये गये ये चञ्चल शाखामृग (वानर) लाल मुख वाली वानरियों का स्मरण कर रहे हैं ॥१३॥

'अहो नु खल्वयमनल्पशास्त्रीयसंस्कारामृतसम्पर्कपल्लवितप्रज्ञाङ्कुरः कोऽपि कुशलः काव्यवक्रोक्तिषु पथिकयुवा योग्यः, सम्भाषणस्य' इत्यवधारयति राजनि ससम्भ्रममुत्थाय स्थित्वा च पुरः स पान्थः सप्रणाममिमं श्लोकमपाठीत् ॥

कल्याणी—अहो इति । अहो नु खल्विति रोचके साधारणाश्चर्ये । अनल्पशास्त्रीयसंस्कारामृतसम्पर्कपल्लवितप्रज्ञाङ्कुरः — अनल्पशास्त्रीयसंस्कारामृतस्य—अनल्पः=समधिकः, यः शास्त्रीयसंस्कारः स एव अमृतः=सुधा, तस्य सम्पर्केण=सेकेन, पल्लवितः=वृद्धिगतः, प्रज्ञाङ्कुरः=बुद्धिरूपाङ्कुरः यस्य स तथोक्तः, काव्यवक्रोक्तिषु=व्यङ्ग्यात्मककथनेषु, कुशलः=निपुणः अयं, कोऽपि=कश्चित्, पथिकयुवा=तरुणपान्थः, सम्भाषणस्य=वार्तालापस्य, योग्यः=अनुकूलः, इति=एवं, राजनि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नृपे नले, अवधारयति=चिन्तयति, स पान्थः=पथिकः, ससम्भ्रमं=सत्वरम्, उत्थाय=उत्थित्वा, पुरः=अग्रे, स्थित्वा च=अवस्थाय च, सप्रणामं=साभिवादनम्, इमं=वक्ष्यमाणं, श्लोकं=पद्यम्, अपाठीत्=पपाठ ॥

ज्योत्स्ना—अहा, निश्चय ही यह पर्याप्त शस्त्रीय संस्काररूपी अमृत के सम्पर्क से पल्लवित अर्थात् वृद्धि को प्राप्त बुद्धिरूपी अंकुरों वाला काव्य-वक्रोक्ति में कुशल कोई युवा पथिक (है, जो) बातचीत करने के योग्य है (अतः इसके साथ बात करनी चाहिए)।" राजा नल के इस प्रकार निश्चय करते ही वह पथिक अत्यन्त शीघ्रता से उठकर (उसके) सामने आकर, खड़ा हो निम्न श्लोक पढ़ा—

'वेधा वेदनयाश्लिष्टो गोविन्दश्च गदाधरः।
शम्भुः शूली विषादी च देव केनोपमीयसे' ॥१४॥

अन्वयः—वेधा वेदनया आश्लिष्टः, गोविन्दः च गदाधरः, शम्भुः शूली विषादी च, हे देव ! (मया त्वं) केन उपमीयसे ॥१४॥

कल्याणी—**वेधा इति।** वेधा=ब्रह्मा, [वेदनया+आश्लिष्टः]—वेदना=पीडा, तया आश्लिष्टः=सम्बद्धः, अथ च [वेदनय+आश्लिष्टः]—वेदानां नयेन=ज्ञानेन, आश्लिष्टः=सम्पन्नः, गोविन्दश्च=विष्णुश्च, गदाधरः [गद+अधरः]—गदेन=रोगेण, अधरः=पीडितः। अथ च [गदा-धरः]—गदा=कौमोदकी, तद्धरः। अथवा गदः=तन्नामा भ्राता, अधरः=अनुजः यस्य सः। शम्भुः=शिवः, शूलं=रोगविशेषोऽस्त्यस्येति शूली=रोगविशेषयुक्तः, विषादी=विषादयुक्तश्च। अथ च शूलम्=आयुधमस्त्यस्येति शूली, विषमत्तीति विषादी च। हे देव !=स्वामिन्, मया त्वं केनोपमीयसे=केन देवेन तुलना क्रियसे, त्रिदेवानामुपमानत्वासम्भवादिति भावः। अत्र ब्रह्मादिगतनिकर्षकारणेनोपमेयस्य नलस्य ततो ह्याधिक्याभिधानाद् व्यतिरेकालङ्कारः। स च श्लेषानुप्राणितः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१४॥

ज्योत्स्ना—हे देव ! ब्रह्मा वेदना से व्यथित हैं; विष्णु गदनामक विशेष प्रकार के रोग से पीड़ित हैं और भगवान् शिव शूलनामक रोग और विषाद से आक्रान्त हैं; (ऐसी स्थिति में) आपकी तुलना किससे की जाय ?

(निहितार्थ)—ब्रह्मा वेदों के ज्ञान से सम्पन्न हैं, विष्णु (कौमोदकीनामक) गदा अथवा गदनामक भ्राता को धारण किये हुए हैं और भगवान् शिव शूलनामक अस्त्र को धारण करने वाले और विष का भक्षण करने वाले हैं, अतः आपकी उपमा किससे की जाय ?

विमर्श—कवि का आशय यह है कि संसार के महान् लोगों की उपमा त्रिदेवों में से ही किसी से की जाती है; लेकिन उन त्रिदेवों में जो-जो विशेषतायें हैं, उन सभी विशेषताओं से आप स्वयं भी पूर्णतया अलंकृत हैं, ऐसी स्थिति में मेरे सामने समस्या यह है कि आपका उपमान किसे बनाया जाय ? ॥१४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजा तु तदाकर्ण्य क्षणमाग्रहोपरोधविस्मयहर्षरसैः समकालमाप्लावितमनाः प्रथममुत्फुल्लया दृशा, ततो मुग्धस्मिताघ्र्येण, तदनु सर्वाङ्गीणभूषणप्रदानेन, तमभ्यर्च्य 'पान्थ ! कथय, केयमुत्तुङ्गकल्लोलदोलाधिरूढानुच्चचञ्चूत्क्षिप्तमृणालवलयान्कूजतः कलहंसानक्षसूत्रिणः प्रवर्त्तितब्रह्मयज्ञोद्गारमुखरमुखांस्तीरतापसानिव दिवमारोपयितुमुद्वहन्ती सरित्, तरुणतरुतलमलङ्कुर्वाणः प्रसन्नसरस्वतीकः कश्च भवान्' इति सप्रणयमपृच्छत् ॥

कल्याणी—राजा त्विति । राजा=नलस्तु, तत्=पान्थवचः, आकर्ण्य=श्रुत्वा, क्षणं=कंचित् कालं, समकालं=युगपद्, आग्रहोपरोधविस्मयहर्षरसैः—आग्रहः=दृढभक्तिः, उपरोधः=अनुग्रहः, विस्मयः=आश्चर्यं, हर्षः=आनन्दः तेषां रसैः=भावनाभिरित्यर्थः । आप्लावितमनाः—आप्लावितं=परिवाहितं, सम्भृतमिति यावत् । मनः=चित्तं यस्य स तथाभूतः सन्, प्रथमं=प्राक्, उत्फुल्लया=प्रसन्नया, दृशा=दृष्ट्या, ततः=तदनन्तरं, मुग्धस्मिताघ्र्येण—मुग्धं=मनोज्ञं, मधुरमिति यावद् । यत् स्मितम्=ईषद्धासः, तदेव अर्घ्यं=पूजोपहारः तेन, तदनु=तदनन्तरं, सर्वाङ्गीणभूषणप्रदानेन=सकलाङ्गानां भूषणप्रदानेन, तं=पान्थम्, अभ्यर्च्य=सत्कृत्य, 'पान्थ !=अयि पथिक !, कथय=वद, उत्तुङ्गकल्लोलदोलाधिरूढान्—उत्तुङ्गकल्लोलाः=उन्नतमहातरङ्गाः, एव दोलाः=हिन्दोलाः, तान् अधिरूढाः तान्, उच्चचञ्चूत्क्षिप्तमृणालवलयान्—उच्चचञ्चूभिः=उदग्रचञ्चुभिः, उत्क्षिप्तः=ऊर्द्ध्वं प्रक्षिप्तः, मृणालवलयः=कमलतन्तुचक्रवालः यैस्तान्, कूजतः=शब्दायमानान्, कलहंसान्=राजहंसपक्षिणः, अक्षसूत्रिणः=रुद्राक्षमालाधारिणः, प्रवर्त्तितब्रह्मयज्ञोद्गारमुखरमुखान्—प्रवर्त्तितः=प्रारब्धीकृतः, यः ब्रह्मयज्ञः=वेदाध्ययनं, तस्य उद्गारे=मन्त्रोच्चारणे, मुखराणि=ध्वननशीलानि, मुखानि=वदनानि येषां तान्, तीरतापसानिव=तीरनिवासिनस्तापसानिव, दिवं=स्वर्गम्, आरोपयितुं=प्रापयितुम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, का=किंपरिचया, इयं=प्रत्यक्षवर्तिनी, सरित्=नदी; तरुणतरुतलम्=अभिनवपादपाधोभागम्, अलंकुर्वाणः=अलङ्कृतं कुर्वन्, प्रसन्नसरस्वतीकः—प्रसन्ना=प्रसादगुणोपेता, सरस्वती=वाणी यस्य स तथोक्तः, मधुरभाषीत्यर्थः । कश्च=किंपरिचयः, भवान्=श्रीमान्, इति=एवं, सप्रणयं=सस्नेहम्, अपृच्छत्=अन्वयुङ्क्त । मृणालवलयानामक्षसूत्रम्, उत्कूजनस्य ब्रह्मयज्ञोद्गारः, राजहंसानां तापसाः उपमानम् । इत्युपमाऽलङ्कारः । 'मुग्धस्मिताघ्र्येण' इत्यत्र परिणामालङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—उस (पथिक) के वचन को सुनकर राजा ने कुछ समय तक एक ही साथ दृढ़ भक्ति, अनुग्रह, आश्चर्य तथा हर्ष की भावना से आप्लावित मन वाला होकर प्रथमतः प्रसन्न दृष्टि से, तत्पश्चात् मधुर मन्द मुस्कानरूपी अर्घ्य से, तदनन्तर (अपने) समस्त अंगों के आभूषणों के दान से उस पथिक का सत्कार कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्नेहपूर्वक उससे इस प्रकार पूछा—"हे पथिक ! कहो, उन्नत तरंगरूपी हिण्डोले पर आरूढ़ होकर (अपने) आगे की ओर निकले हुए चोंचों से कमलतन्तुओं को ऊपर की ओर फेंक कर कलरव करते हुए राजहंस पक्षियों को; प्रारम्भ किये गये ब्रह्मयज्ञ (वेदाध्ययन) के मन्त्रोच्चारण की ध्वनि से मुखरित मुख वाले और अक्षसूत्र (रुद्राक्ष की माला) धारण करने वाले तटनिवासी तपस्वियों के समान स्वर्ग को प्राप्त कराने के लिए; धारण करती हुई सामने यह कौन-सी नदी है ? और इस नूतन वृक्ष की छाया को अलंकृत कर प्रसादगुणयुक्त वाणी बोलने वाले अर्थात् अत्यन्त मधुरभाषी आप कौन हैं ?" ॥

सोऽपि 'सभ्रमरया कूलकीचकवेणुलतया सदृशी नावातरणयोग्या किमियमप्रसिद्धा महानदी देवस्य' इत्यभिधाय कथयितुमारब्धवान् ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सः अपि=पान्थोऽपि, कूलकीचकवेणुलतया सदृशी=तटवर्तिच्छिद्रबहुलवंशवल्ल्या सदृशी, सभ्रमरया—भ्रमः=आवर्तः, रयश्च=वेगश्च तत्सहिता, पक्षे—सभ्रमरया—भ्रमरैः सहेति सभ्रमरा, तया । [नावातरणयोग्या]—नावा=नौकया, तरणयोग्या=अवतरणानुकूला, कीचकवेणुलतापि [न—अवात-रण-योग्या]—अवाते=वाय्वभावे, रणस्य=शब्दस्य, योग्या न भवति । इयम्=एषा, महानदी=उत्कृष्टसरित्, देवस्य=भवतः, अप्रसिद्धा=न विदिता किम्, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, कथयितुं=विवरीतुम्, आरब्धवान्=प्रारभत । सभ्रमरया इत्यत्र तृतीयैकवचनप्रथमैकवचनश्लेषाद् विभक्तिश्लेषः ॥

ज्योत्स्ना—वह पथिक भी "तटवर्ती भ्रमरों से युक्त और हवा के अभाव में शब्दरहित छिद्रबहुल बाँस-वल्लरी के समान भ्रम (भँवर) और वेग से समन्वित तथा नौका से पार करने योग्य यह महानदी क्या श्रीमान् के लिए अप्रसिद्ध है ? अर्थात् क्या आप इस प्रसिद्ध नदी को नहीं जानते ?" इस प्रकार कह कर (उस नदी के बारे में) बताना प्रारम्भ किया ॥

'भानोः सुता संवरणस्य भार्या तापी सरित्सेयमघस्य हन्त्री ।
यस्याः कुरुः सूनुरभूत्स यस्य नाम्ना कुरुक्षेत्रमुदाहरन्ति ॥१५॥

अन्वयः—भानोः सुता संवरणस्य भार्या अघस्य हन्त्री सा इयं तापी सरित् यस्याः सूनुः कुरुः अभूत्, यस्य नाम्ना कुरुक्षेत्रम् उदाहरन्ति ॥१५॥

कल्याणी—भानोरिति । भानोः=सूर्यस्य, सुता=पुत्री, संवरणस्य=संवरणनाम्नः भूपस्य, भार्या=पत्नी, अघस्य=पापस्य, हन्त्री=विनाशिका, सा=तथाविधा, इयम्=एषा, तापी=तापीतिनाम्ना प्रसिद्धा, सरित्=नदी, अस्तीति शेषः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यस्याः=तापीसरितः, सूनुः=पुत्रः, कुरुः=कुरुसंज्ञया प्रसिद्धः नृपः, अभूत्=जातं, यस्य=यस्य कुरोः, नाम्ना=अभिधानेन, कुरुक्षेत्रं=कुरुक्षेत्रनामकक्षेत्रविशेषम्, उदाहरन्ति=कथयन्ति ॥१५॥

ज्योत्स्ना—सूर्य की पुत्री, संवरणनामक राजा की पत्नी और पापों का विनाश करने वाली यह वही प्रसिद्ध तापी नदी है, जिसके 'कुरु' नाम से प्रसिद्ध पुत्र हुए थे; जिनके नाम से ही 'कुरुक्षेत्र' कहलाता है ॥१५॥

एतस्याः सलिलावगाहसमये कुर्वन्ति नित्यं नृणां
नीरन्ध्रोन्नत-कर्कश-स्तनतटी-सङ्घट्ट-पिष्टोर्मयः ।
भ्राम्यद्भृङ्गनिभालकैः क्षणमिव व्यालोलनेत्रैर्मुखै-
रुत्फुल्लोत्पलगर्भपङ्कजवनभ्रान्तिं महाराष्ट्रिकाः ॥१६॥

अन्वयः—एतस्याः सलिलावगाहसमये नीरन्ध्रोन्नतकर्कशस्तनतटीसंघट्टपिष्टोर्मयः महाराष्ट्रीकाः भ्राम्यद्भृङ्गनिभालकैः व्यालोलनेत्रैः मुखैः नित्यं नृणाम् उत्फुल्लोत्पलगर्भपङ्कजवनभ्रान्तिं कुर्वन्ति ॥१६॥

कल्याणी—एतस्या इति । एतस्याः=ताप्याः नद्याः, सलिलावगाहसमये—सलिले=जले, अवगाहसमये=स्नानावसरे, नीरन्ध्रोन्नतकर्कशस्तनतटीसङ्घट्टपिष्टोर्मयः—नीरन्ध्रोन्नतकर्कशस्तनतटी=घनोत्तुङ्गपीनकुचतटी, तस्याः संघट्टेन=सङ्घर्षेण, पिष्टाः=चूर्णिताः, ऊर्मयः=तरङ्गाः यासां ताः, महाराष्ट्रिकाः=महाराष्ट्रप्रदेशसम्बन्धिसुन्दर्यः; भ्राम्यद्भृङ्गनिभालकैः—भ्राम्यन्तः=चञ्चलाः, ये भृङ्गाः=भ्रमराः, तन्निभाः=तत्सदृशाः, अलकाः=केशपाशाः येषु तैस्तथा, व्यालोलनेत्रैः—व्यालोलानि=अतिचञ्चलानि, नेत्राणि=नयनानि येषु तथाविधैः, मुखैः=मुखमण्डलैः, नित्यं=सततं, नृणां=नराणाम्, उत्फुल्लोत्पलगर्भपङ्कजवनभ्रान्तिम्—उत्फुल्लानि=विकसितानि, उत्पलानि=नीलकमलानि, गर्भे=मध्ये यस्य तथाविधस्य पङ्कजवनस्य=कमलसमूहस्य, भ्रान्तिं=भ्रमं, कुर्वन्ति=जनयन्ति । स्नानं कुर्वतीनां महाराष्ट्रिकाणां सुन्दरीणां चञ्चलालकाच्छन्नानि व्यालोलनेत्रोपेतानि मुखमण्डलानि पश्यतां नराणां चञ्चलालिकुलकलितनीलोत्पलानां भ्रमो जायत इति भावः । भ्रान्तिमानलङ्कारः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१६॥

ज्योत्स्ना—इस तापी नदी के जल में स्नान करने के समय (अपने) सघन, उन्नत और कठोर स्तनरूप तटों के घर्षण से (इसकी) लहरों को चकनाचूर करने वाली महाराष्ट्र प्रदेशनिवासिनी सुन्दरियाँ चञ्चल भ्रमरों के समान (अपने) अलकों (केशपाशों), अतीव चञ्चल नेत्रों और मुखों से सदा ही लोगों को (जल के) मध्य में विकसित नीलकमल वाले कमलवनों के होने की भ्रान्ति उत्पन्न करती रहती हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है कि तापी नदी के समीपवर्ती महाराष्ट्र प्रदेश की कामिनियाँ अत्यन्त ही सघन, उन्नत एवं कठोर स्तनों की स्वामिनी होती हैं, उनके बाल भ्रमरों के समान काले होते हैं तथा उनके मुख और आँखें विकसित कमलों की समानता करने वाली होती हैं। अतः उन सुन्दरियों को तापी में स्नान करते देख लोगों को जल के मध्य में विकसित कमलवनों के ऊपर मंडराते हुए भ्रमरों की भ्रान्ति हो ही जाती है ॥१६॥

अपि च—

यद्येतस्याः सकृदपि मरुन्नर्तिताम्भोजराजि-
प्रेङ्खत्पत्रव्यजनविधुतं वारि नीहारहारि।
रोधोभाजां पिबति कुसुमैर्वासितं पादपानां
पीयूषाय स्पृहयति ततः किं क्वचिन्नाकिलोकः ॥१७॥

अन्वयः—मरुन्नर्तिताम्भोजराजिप्रेङ्खत्पत्रव्यजनविधुतं रोधोभाजां पादपानां कुसुमैः वासितम् एतस्याः नीहारहारि वारि क्वचित् नाकिलोकः सकृत् अपि पिबति यदि ततः पीयूषाय स्पृहयति किम् ? ॥१७॥

कल्याणी—यदीति। मरुन्नर्तिताम्भोजराजिप्रेङ्खत्पत्रव्यजनविधुतं—मरुता=पवनेन, नर्तिता=प्रकम्पिता इत्यर्थः, या अम्भोजराजिः=कमलश्रेणिः, तस्याः प्रेङ्खन्ति=दोलयन्ति, पत्राण्येव=दलान्येव व्यजनानि=तालवृन्तानि, तैः विधुतं=कम्पितं, रोधोभाजां=तीरवर्तिनां, पादपानां=तरूणां, कुसुमैः=पुष्पैः, वासितं=सुगन्धितम्, एतस्याः=ताप्याः, नीहारहारि=तुषारवन्मनोज्ञं, समधिकशीतलमिति भावः। वारि=जलं [कर्म], क्वचित्=कुत्रचित्, नाकिलोकः=सुरवर्गः, सकृदपि=एकवारमपि, पिबति=पानं करोति, यदि=चेत्, ततः=तर्हि, पीयूषाय=अमृताय, स्पृहयति किम्=अभिलषति किम् ? कदापि न स्पृहयतीत्यर्थः। मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥१७॥

ज्योत्स्ना—और भी—वायु के द्वारा कँपायी जाती हुई कमलपंक्तियों के दोलायमान पत्ररूप व्यजनों (पंखों) द्वारा कम्पित और तटवर्ती वृक्षों के पुष्पों से सुवासित इस तापी नदी के हिमकणों के समान मनोज्ञ अर्थात् अत्यन्त शीतल जल का एक बार भी यदि कहीं स्वर्ग के लोग पान कर लें तो क्या वे (फिर कभी) अमृत की अभिलाषा कर पायेंगे ? अर्थात् इसके जल का स्वाद अमृत से भी बढ़कर है ॥१७॥

मामपि पुष्कराक्षनामानं वार्तिकमवगच्छतु देवः ॥

कल्याणी—मामिति। देवः=महाराजः, मामपि पुष्कराक्षनामानं=पुष्कराक्षाभिधं, वार्तायां नियुक्तः वार्तिकस्तं वार्तिकं=सन्देशहरम्, अवगच्छतु=जानातु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—मुझे भी महाराज पुष्कराक्ष नामक वार्तिक (किसी विशेष वार्तालाप के लिए नियुक्त किया गया व्यक्ति अर्थात् दूत) समझें ॥

तथाहि—

स्थित्वा त्वदागमनमार्गमुखे गवाक्षे
वार्ताविशेषमधिगन्तुमिहायताक्ष्या ।
सम्प्रेषितो निषधनाथ तथास्मि यस्याः
क्रीडागिरिस्त्वमसि मुग्धमनोमृगस्य ॥१८॥

अन्वयः—निषधनाथ ! तथा त्वदागमनमार्गमुखे गवाक्षे स्थित्वा (तया) आयताक्ष्या वार्ताविशेषम् अधिगन्तुम् इह सम्प्रेषितः अस्मि, यस्याः मुग्धमनोमृगस्य त्वं क्रीडागिरिरसि ॥१८॥

कल्याणी—स्थित्वेति । हे निषधनाथ=निषधाधिपते ! तथा त्वदागमनमार्गमुखे—त्वत्=तव, आगमनस्य यः मार्गः=पन्थाः, तस्य मुखे=आनने, दिशि इत्यर्थः । गवाक्षे=वातायने, स्थित्वा=अवस्थाय, [तया] आयताक्ष्या=दीर्घदृशा, दमयन्त्येति भावः । वार्ताविशेषं=त्वदागमनप्रवृत्तिविशेषम्, अधिगन्तुं=ज्ञातुम्, इह=अत्र, संप्रेषितोऽस्मि=प्रहितोऽस्मि, यस्याः=आयताक्ष्याः दमयन्त्याः, मुग्धमनोमृगस्य—मुग्धस्य=सरलस्य, मनोमृगस्य, त्वं=श्रीमान्, क्रीडागिरिरसि=लीलापर्वतोऽसि । यथा मृगमनो गिरौ, तथैव तस्याः दमयन्त्याः मनस्त्वयि रमत इति भावः । वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥१८॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; हे निषधेश्वर ! आपके आने वाले रास्ते के सामने स्थित खिड़की पर बैठी हुई उस विशालाक्षी (दमयन्ती) के द्वारा आपके विशेष समाचार को जानने के लिए (मैं) यहाँ भेजा गया हूँ, जिसके मुग्ध मनरूपी मृग के लिए आप क्रीड़ापर्वत (के समान) हैं ।

आशय यह है कि जिस प्रकार मृग का मन सदा-सर्वदा क्रीड़ा-पर्वत पर ही रमण करता रहता है उसी प्रकार उस विशालाक्षी दमयन्ती का मन भी सदा आप में ही रमता रहता है ॥१८॥

एष्यति च श्वस्तनेऽहनि मार्गश्रमक्लान्तमितो नातिदूर इवोत्तुङ्गसरलसालसर्जार्जुननिचुलनिचयान्तरचलच्चटुलचकोरमयूरहारीतहंसकुलकोलाहलिनि पयोष्णीपुलिनपरिसरे स्थितं तया प्रहितमाप्तं क्रीडाकिन्नरमिथुनम् ॥

कल्याणी—एष्यतीति । मार्गश्रमक्लान्तं—मार्गस्य=वर्त्मनः, श्रमेण=खेदेन, क्लान्तं=परिश्रान्तम्, इतः=अस्मात्स्थानात्, नातिदूर इव=समीप एव,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तुङ्गसरलसालसर्जार्जुननिचुलनिचयान्तरचलच्चटुलचकोरमयूरहारीतहंसकुलकोलाहलिनि—उत्तुङ्गसरलसालसर्जार्जुननिचुलनिचयान्तरे=उच्चसरल-साल-सर्जार्जुन-निचुल-तरुसमूहमध्ये, चलन्तः=विहरन्तः, चटुलाः=चपलाः, ये चकोराः मयूराः हारीताः हंसाश्च, तेषां कुलं=वृन्दं, तेन कोलाहलिनि=तत्प्रशस्तध्वनिमुखरित इत्यर्थः। पयोष्णीपुलिनपरिसरे—पयोष्णी=तदाख्या नदी, तस्याः पुलिनपरिसरे=तटप्रदेशे, स्थितम्=अवस्थितं, तया=दमयन्त्या, प्रहितं=प्रेषितम्, आप्तं=विश्वस्तं, क्रीडा-किन्नरमिथुनं=लीलाकिम्पुरुषयुग्मं, श्वस्तनेऽहनि=आगामिनि दिवसे, एष्यति च=गमिष्यति च, त्वत्सकाशमागमिष्यति चेत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना— मार्ग (में चलने) के श्रम से थक जाने के कारण इस स्थान से थोड़ी ही दूर पर ऊँचे और सीधे साल, सर्ज, अर्जुन तथा निचुल वृक्षों के मध्य में भ्रमण करते हुए चञ्चल चकोर, मयूर, हारीत और हंसों के समूह के कोलाहल से मुखरित पयोष्णी नदी की तटवर्ती भूमि पर स्थित उस दमयन्ती द्वारा प्रेषित (उसका) विश्वस्त क्रीड़ा-किन्नरयुगल कल आपके पास पहुँचेगा ॥

'इयं च वाच्यतां तया स्वहस्तकिसलयलिखिताक्षरगर्भा भूर्जपत्रिका' इत्यभिधाय पुरोऽस्य लेखपत्रिकां व्यसृजत् ॥

कल्याणी—इयमिति । इयं च=एषा च, तया=दमयन्त्या, स्वहस्तकिसलयलिखिताक्षरगर्भा—स्वहस्तकिसलयेन=निजकरकिसलयेन, लिखितानि=अङ्कितानि, अक्षराणि=वर्णानि, गर्भे=अन्तरे यस्याः सा, भूर्जपत्रिका=भूर्जपत्रोपरि लिखिता पत्रिका, वाच्यतां=पठ्यताम्, इति=एवम्; अभिधाय=उक्त्वा, अस्य=नलस्य, पुरः=अग्रे, लेखपत्रिकां=भूर्जपत्रिकां, व्यसृजत्=अक्षिपत् ॥

ज्योत्स्ना—"और यह उस दमयन्ती के द्वारा अपने किसलयसदृश हाथों से लिखे अक्षरों वाली भूर्जपत्रिका (भोजपत्र पर लिखित पत्रिका) पढ़िये।" इस प्रकार कहकर उस निषधाधिपति नल के समक्ष (वार्तिक ने) भूर्जपत्रिका को रख दिया ॥

राजाऽपि पार्श्वपरिजनेनोत्क्षिप्यार्पितां तामतिबहलपुलकाङ्कुरकण्टकितप्रकोष्ठकाण्डेन पाणिना स्वयमुन्मुच्य सादरमवाचयत् ॥

कल्याणी—राजेति । राजाऽपि=नलोऽपि, पार्श्वपरिजनेन=समीपवर्तिसेवकेन, उत्क्षिप्य=उत्थाप्य, अर्पितां=दत्तां, तां=पूर्ववर्णितां लेखपत्रिकाम्, अतिबहलपुलकाङ्कुरकण्टकितप्रकोष्ठकाण्डेन—अतिबहलाः=समधिकाः, ये पुलकाङ्कुराः=अङ्कुरोपमरोमाञ्चाः, तैः कण्टकितः=कण्टकयुक्त इव, रोमाञ्चित इत्यर्थः। प्रकोष्ठकाण्डः—प्रकोष्ठः=मणिबन्धादारभ्य कूर्परपर्यन्तः, काण्डः=अनुभागः यस्य तेन, पाणिना=करेण, स्वयम्=आत्मनैव, उन्मुच्य=उद्घाट्य, सादरम्=आदरपूर्वकम्, अवाचयत्=अपठत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—राजा (नल) ने भी समीपवर्ती परिजन के द्वारा उठाकर समर्पित की गई उस लेखपत्रिका (चिट्ठी) को अत्यधिक रोमाञ्च के कारण कण्टकित कलई वाले हाथों से स्वयं ही खोल कर आदर के साथ पढ़ा ॥

'नलोऽपि मां प्रत्यनलोऽसि यत्तद्भवादृशां नैषध नैष धर्मः ।
तथाबलानां बलवद् ग्रहीतुं न मानसं मानसमुद्रयुक्तम् ॥ १९ ॥

अन्वयः—नैषध ! नलोऽपि यत् (त्वं) मां प्रति अनलः असि तत् अबलानां मानसमुद्रयुक्तं मानसं तथा बलवत् ग्रहीतुं भवादृशां न एष धर्मः ॥१९॥

कल्याणी—नलोऽपीति । हे नैषध=निषधेश्वर !, नलोऽपि=नलाख्योऽपि सन्, यत् त्वं मां प्रति=दमयन्तीं प्रति, अनलः—न नलोऽनल इति विरोधः । अनलः=वह्निः, उत्कण्ठाजनकत्वेन सन्तापक इत्यर्थः इति विरोधपरिहारः । तत् अबलानां=मल्लक्षणानां दुर्बलानां, मानसमुद्रयुक्तं—मानः=स्वाभिमान; स एव समुद्रः=सागरः, तेन युक्तं=सम्पन्नं, मानसं=चित्तं, तथा=तेन प्रकारेण, बलवत्=हठात्, ग्रहीतुं=आकर्षयितुं, भवादृशां=भवल्लक्षणानामुच्चकुलोद्भवानां नराणां, नैष धर्मः=नैतद्युक्तमिति भावः । 'नलोऽपि मां प्रत्यनल' इति विरोधाभासः । 'मानसं-मानसम्' इति यमकम् । मानसमुद्रेति रूपकम् । तेषां संसृष्टिः । उपेन्द्रवज्रा वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ' । इति ॥१९॥

ज्योत्स्ना—हे निषधेश्वर ! नल नामधारी होते हुए भी आप मेरे प्रति जो अनल-सदृश (सन्ताप प्रदान करने वाले) हैं, वह तथा हमारी ऐसी अबलाओं के मानरूपी समुद्र से युक्त मन को इस प्रकार बलपूर्वक ग्रहण करना आप जैसे (उच्चकुलोत्पन्न) लोगों का धर्म नहीं है ।

विमर्श—आशय यह है कि आपका नाम नल है और आपका जन्म भी अत्यन्त उच्च कुल में हुआ है, फिर भी आप मुझ अबला के मन को बलपूर्वक अपनी ओर आकृष्ट कर मुझे सन्तप्त कर रहे हैं, यह आपके लिए किसी भी प्रकार से उचित नहीं है ॥१९॥

अपि च—

निपतति किल दुर्बलेषु दैवं तदवितथं ननु येन कारणेन ।
बलवति न यथा तथाबलानां प्रभवति कृष्टशरासनो मनोभूः ॥२०॥

अन्वयः—दैवं दुर्बलेषु निपतति किल, तत् ननु अवितथम् । येन कारणेन मनोभूः यथा कृष्टशरासनः अबलानां प्रभवति तथा बलवति न (प्रभवति) ॥२०॥

कल्याणी—निपततीति । दैवं=दिष्टं, दुर्बलेषु=अशक्तेषु, निपतति=आक्रमणं करोति, दुर्बलानेव पीड़यतीत्यर्थः । किलेति वार्तायाम् । तत् ननु=निश्चयेन, अवितथं=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्यम् । येन कारणेन मनोभूः=कामदेवः, यथा=येन प्रकारेण, कृष्टशरासनः—कृष्टम् आकृष्टं, शरासनं=धनुः येन तथाविधः सन्, अबलानां=स्त्रीणामशक्तानां च; प्रभवति=शक्ति प्रदर्शयति, तथा=तेन प्रकारेण, बलवति=सशक्ते जने, न=नहि, [प्रभवति]। कामो यथा मां [दमयन्तीं] सन्तापयति न तथा भवन्तमिति भावः। पुष्पिताग्रा वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि तु नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा।' इति ॥२०॥

ज्योत्स्ना—और भी—दैव भी दुर्बलों पर ही प्रहार करता है—यह निश्चय ही सत्य है। इसीलिए कामदेव जिस प्रकार (अपने) धनुष को खींच कर दुर्बलों (स्त्रियों अथवा अशक्तों) पर शक्ति-प्रदर्शन करता है, उस प्रकार बलवानों (सशक्त लोगों) पर प्रभाव नहीं ड़ाल पाता ॥२०॥

अपि च—

कदा किल भविष्यन्ति कुण्डिनोद्यानभूमयः।
उत्फुल्लस्थलपद्माभभवच्चरणभूषिताः ॥२१॥'

अन्वयः—कदा किल कुण्डिनोद्यानभूमयः उत्फुल्लस्थलपद्माभवच्चरण-भूषिताः भविष्यन्ति ॥२१॥

कल्याणी—कदेति। कदा=कस्मिन् समये, किलेति संभावनायाम्। कुण्डिनोद्यानभूमयः—कुण्डिनस्य=कुण्डिननगरस्य, उद्यानभूमयः=उपवनप्रदेशाः, उत्फुल्लस्थलपद्माभवच्चरणभूषिताः—उत्फुल्लानां=विकसितानां, स्थलपद्मानां=स्थलकमलानाम्, आभा इव आभा=कान्तिः, ययोस्ताभ्यां भवच्चरणाभ्यां=त्वच्च-रणाभ्यां, भूषिताः=अलङ्कृताः, भविष्यन्ति=सञ्जायन्ते। स्थलपद्माभेत्यत्रोपमा। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥२१॥

ज्योत्स्ना—और भी—किस समय कुण्डिनपुर के उद्यानों की यह भूमि पूर्ण रूप से विकसित स्थलकमल की कान्ति के समान कान्ति वाले आपके चरणों से अलंकृत हो पायेगी ? ॥२१॥

इति लेखलिखितप्रणयसुभाषितामृतरसप्लवेनाप्लावितहृदयः, 'विधे ! विधेहि मे पक्षिण इव पक्षयुगलमुड्डीय येन तां पश्यामि' इति चिन्तयन्नर-पतिः पुरतः स्थितं तं प्रियावार्तिकमाश्लिष्यन्निवोच्चरोमाञ्चनिचयेन पिबन्निवाभिलाषतृषितया दृशा, स्नपयन्निव मधुरस्मितामृतरसेन, पुनः पुनः सादरमभाषत ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवं, लेखलिखितप्रणयसुभाषितामृतरसप्लवेन—लेखे=पत्रे, लिखितं=अङ्कितं, यत् प्रणयसुभाषितं=प्रणयपूर्णसूक्तिः, तदेव अमृतरसः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पीयूषरसः, तस्य प्लवेन=वर्धमानप्रवाहेण, आप्लावितहृदयः—आप्लावितम्=अतिशयेन निर्भरं, हृदयं=मनः यस्य सः, नरपतिः=नरेन्द्रः नलः, हे विधे=विधातः!, पक्षिण इव=खगस्येव, मे=मम, पक्षयुगलं=पुंखद्वयं, विधेहि=कुरुष्व, येन=पक्षयुगलेन, उड्डीय=उत्पत्य, तां=दमयन्तीं, पश्यामि=विलोकयामि' इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, पुरतः=अग्रे, स्थितम्=उपविष्टं, तं=पूर्वोक्तं, प्रियावार्तिकं—प्रियायाः=दमयन्त्याः, वार्तिकं=सन्देशहरम्, उच्चरोमाञ्चनिचयेन=उद्गतपुलकसमूहेन, आश्लिष्यन्निव=आलिङ्गन्निव, अभिलाषतृषितया=अभिलाषतृषाकुलया, दृशा=दृष्टया, पिबन्निव=पानं कुर्वन्निव, मधुरस्मितामृतरसेन—मधुरं यत् स्मितम्=ईषद्धासः, स एव अमृतरसं=सुधारसं तेन, स्नपयन्निव=स्नातं कुर्वन्निव [उत्प्रेक्षा], पुनः-पुनः=मुहुर्मुहुः, सादरम्=आदरपूर्वकम्, अभाषत=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार पत्र में लिखित प्रणय से परिपूर्ण सूक्तिरूपी अमृत-रस के प्रवाह से आप्लावित हृदय वाले राजा नल ने "हे विधे! पक्षियों के समान मुझे भी पंख बना दो, जिससे उन पंखों के द्वारा उड़कर उस दमयन्ती को (मैं) देख सकूँ।" इस प्रकार विचार करते हुए सामने ही बैठे हुए प्रिया (दमयन्ती) के उस सन्देशवाहक को (अपने) उद्भूत रोमाञ्चों के द्वारा बार-बार आलिङ्गित करते हुए के समान, अभिलाषरूपी प्यास से व्याकुल दृष्टि से पीते हुए के समान और मधुर मन्द मुस्कानरूपी अमृत-रस से स्नान कराते हुए के समान आदरपूर्वक (उससे) बोला ॥

'पुष्कराक्ष! सा सर्वथा विजयते राजपुत्री। यस्याः प्रसन्नमुदारसत्कान्तिश्लिष्टं सुकुमारमनेकालङ्कारभाजनं वयो वचनं च, सप्रश्रयः प्रगल्भो विवेकवान्विदग्धबुद्धिर्भवद्विधः परिजनश्च ॥

कल्याणी—पुष्कराक्षेति। हे पुष्कराक्ष! सा=पूर्वकथिता, राजपुत्री=दमयन्ती, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, नितान्तमिति यावत्। विजयते=सर्वोत्कृष्टा वर्तते, यस्याः=राजपुत्र्याः, वयः=अवस्था, तदाधारभूतं शरीरमित्यर्थः। प्रसन्नं=निर्मलम्, उदारसत्कान्तिश्लिष्टं—उदारं=रमणीयं, सत्कान्ति=तेजस्वि, श्लिष्टं=सुघटितसकलावयवं, सुकुमारं=कोमलम्, अनेकालङ्कारभाजनं=बहुभूषणपात्रम्, वचनं च=वाणी च, प्रसन्नं=प्रसादगुणोपेतं, श्रवणसमकालमेवार्थप्रतीतिकारकमिति यावत्। उदारसत्कान्तिशिलष्टम्—उदारं=गम्भीरं, सत्कान्ति=समुज्ज्वलं, श्लिष्टं=मसृणं, सुकुमारं=मृदु, अनेकालङ्कारभाजनम्=अनुप्रासादिबह्वलङ्कारोपेतं, भवद्विधः=त्वल्लक्षणः, परिजनश्च=अनुचरश्च, सप्रश्रयः=विनीतः, प्रगल्भः=निर्भीकः, विवेकवान्=कर्तव्याकर्तव्यविवेकयुक्तः, विदग्धबुद्धिः—विदग्धाः=परिपक्वा, बुद्धिः=मतिः यस्य तथाविधः, वर्तते। श्लेषालङ्कारः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—"हे पुष्कराक्ष ! वह राजकुमारी दमयन्ती सब प्रकार से उत्कृष्ट है, जिसका शरीर निर्मल, रमणीय, तेजःसम्पन्न, सुघटित अवयवों वाला, सुकुमार एवं बहुविध अलंकारों का पात्र है और वाणी भी प्रसाद गुण से युक्त, गम्भीर, समुज्ज्वल, श्लेषबहुल, मधुर, अनुप्रासादि बहुविध अलंकारों से समन्वित है। साथ ही जिसके आप जैसे विनीत, निर्भीक, कर्तव्याकर्तव्य-विवेक से युक्त और परिपक्व बुद्धि से समन्वित परिजन हैं ॥

तत्कथय 'कथनीयकीर्तिः क्वास्ते कथमास्ते कं विनोदमनुतिष्ठति केन व्यापारेण परिणमयति वासरं वाऽसौ भवत्स्वामिसुता' इत्येवमुक्तः स पुनः पल्लवयन्ननुरागकन्दलं नलमलपत् ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, कथय=भण, कथनीयकीर्तिः—कथनीया=प्रशंसनीया, कीर्तिः=यशः यस्याः सा, असौ=इयं, भवत्स्वामिसुता=भवद्भर्तृदारिका, क्व=कुत्र, आस्ते=वर्तते, कथं=केन प्रकारेण, आस्ते=वर्तते, कं विनोदं=मनोरञ्जनम्, अनुतिष्ठति=करोति, केन व्यापारेण=कार्यक्रमेण, वासरं=दिवसं, परिणमयति=यापयति वा । इति=एवम्, उक्तः=कथितः, सः=पुष्कराक्षः, पुनः=भूयः, अनुरागकन्दलं=स्नेहनवाङ्कुरं, पल्लवयन्=पल्लवितं कुर्वन्, नलं=नैषधम्, अलपत्=अभाषत ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए कहो, प्रशंसनीय कीर्ति वाली आपकी वह राजकुमारी दमयन्ती कहाँ है, किस प्रकार है, किस वस्तु से (अपना) मनोरञ्जन करती है और किस कार्य के द्वारा (अपने) दिन को व्यतीत करती है ?" इस प्रकार कहे (पूछे) जाने पर वह पुष्कराक्ष पुनः (उनके दमयन्तीविषयक) स्नेह के नूतन अंकुर को पल्लवित करते हुए राजा नल से बोला ॥

त्वद्देशागतवायसाय ददती दध्योदनं पिण्डितं
त्वन्नाम्नः सदृशे दृशं निदधती वन्येऽपि मुग्धा नले ।
त्वत्संदेशकथार्थिनी मृगयते तान्राजहंसान्पुनः
क्रीडोद्यानतरङ्गिणीतरुतलच्छायासु वापीषु च ॥२२॥

अन्वयः—त्वद्देशागतवायसाय दध्योदनं पिण्डितं ददती त्वन्नाम्नः सदृशे वन्ये अपि नले मुग्धा दृशं निदधती त्वत्सन्देशकथार्थिनी पुनः क्रीडोद्यानतरङ्गिणीतरुतलच्छायासु वापीषु च तान् राजहंसान् मृगयते ॥२२॥

कल्याणी—त्वद्देशेति । त्वद्देशागतवायसाय—त्वत्=तव, देशात्=प्रदेशात्, आगतः=समागतः, यः वायसः=काकः तस्मै, त्वत्प्राप्तिलक्षणशुभशकुनसूचकत्वात् दध्योदनं=दधिभक्तं, पिण्डितं=ग्रासं, ददती=प्रयच्छती, त्वन्नाम्नः=तवाभिधानात्, सदृशे=समाने, तव नामापि दुर्लभं ततस्तव नामाक्षरयुक्ते इत्यर्थः । वन्येऽपि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वनोद्भवेऽपि, नले=नलनाम्नि तृणविशेषे, मुग्धा=अनुरक्ता, दृशं=दृष्टिं, निदधती=निरन्तरं योजयन्ती, त्वत्सन्देशकथार्थिनी=तव सन्देशकथाया अभिलाषिणी, सा पुनः=मुहुर्मुहुः, क्रीडोद्यानतरङ्गिणीतरुतलच्छायासु—क्रीडोद्यानेषु = विनोदोपवनेषु, तरङ्गिणीषु=सरित्सु, तरुतलच्छायासु=वृक्षाधःछायासु, वापीषु=दीर्घिकासु च, तान्=पूर्वं त्वत्सन्देशमुक्तवतः, राजहंसान्=राजमरालान्, मृगयते=अन्विष्यति । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—आपके देश की ओर से (अपने यहाँ) आये हुए कौवों को दही-भात का ग्रास बनाकर देती हुई, आपके नामाक्षरों से समानता रखने वाले जंगल में उत्पन्न नलनामक घास पर भी अनुरागपूर्ण दृष्टि लगाई हुई आपके सन्देशरूपी वार्ता की अभिलाषिणी वह (दमयन्ती) बार-बार क्रीडोद्यानों, नदियों, वृक्षों की छायाओं और जलाशयों में उन (पूर्व में आपके सन्देश को कहने वाले) राजहंसों को ढूंढ़ती फिरती है ॥२२॥

अपि च । सांप्रतं तथा—

त्वद्देशागतमारुतेन मृदुना सञ्जातरोमाञ्चया
त्वद्रूपाञ्चितचारुचित्रफलके निर्वापयन्त्या दृशम् ।
त्वन्नामामृतसिक्तकर्णपुटया त्वन्मार्गवातायने
नीचैः पञ्चमगीतिगर्भितगिरा नक्तंदिनं स्थीयते ॥२३॥'

अन्वयः—(साम्प्रतं) मृदुना त्वद्देशागतमारुतेन सञ्जातरोमाञ्चया त्वद्रूपाञ्चितचारुचित्रफलके दृशं निर्वापयन्त्या त्वन्नामामृतसिक्तकर्णपुटया त्वन्मार्गवातायने नीचैः पञ्चमगीतिगर्भितगिरा नक्तन्दिनं स्थीयते ॥२३॥

कल्याणी—त्वद्देशेति । (साम्प्रतम्=अधुना) मृदुना=कोमलेन, त्वद्देशागतमारुतेन—त्वद्देशात्=तव प्रदेशात्, आगतेन=आयातेन, मारुतेन=वायुना, सञ्जातरोमाञ्चया—सञ्जातः=उत्पन्नः, रोमाञ्चः=पुलकः यस्यास्तया, त्वदङ्गं स्पृशताऽऽगच्छता वायुना त्वदङ्गस्पर्शसुखमिवानुभवन्त्येति भावः । त्वद्रूपाञ्चितचारुचित्रफलके—त्वद्रूपेण = त्वत्सौन्दर्येण, अञ्चितम्=अलङ्कृतं, यत् चारु=रम्यं, चित्रं=त्वत्प्रतिकृतिः, तस्य फलके=पट्टे, दृशं=दृष्टिं, निर्वापयन्त्या=शीतलयन्त्या, त्वन्नामामृतसिक्तकर्णपुटया—त्वन्नाम एवामृतं तेन सिक्तं कर्णपुटं=श्रोत्रविवरं यस्यास्तथाविधया, त्वन्मार्गवातायने—त्वन्मार्गे=त्वन्मार्गदिशि, यद् वातायनं=गवाक्षः तस्मिन्, नीचैः=मन्दस्वरोपेता; पञ्चमगीतिगर्भितगिरा—पञ्चमगीतिः=पञ्चमरागपूर्णगानं, तद्गर्भिता=तत्पूर्णा, गीः=वाणी यस्यास्तथाविधया, तया नक्तंदिनं=रात्रिन्दिवं, स्थीयते=स्थिरीभूयते । त्वदागमनं प्रतीक्षमाणया तया त्वन्मार्गोऽवलोक्यत इति भावः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इस समय भी—आपके देश की ओर से आने वाली कोमल हवा के द्वारा रोमाञ्चित होती हुई अर्थात् आपके अंगों का स्पर्श कर आने वाली हवा के स्पर्श से साक्षात् आपके अंगों के ही स्पर्शसुख का अनुभव करती हुई; सौन्दर्य से अलंकृत आपके रमणीय चित्रफलक पर (अपनी) आँखों को शीतल करती हुई, आपके नामरूपी अमृत से (अपने) कानों को सींचती हुई, आपके आने वाले मार्ग की खिड़की पर (बैठ कर) मन्द स्वर से पञ्चम राग से परिपूर्ण वाणी से गुनगुनाती हुई रात-दिन स्थित रहती है ॥२३॥

एवमनुगुणमनुरागस्य, सदृशं शृङ्गारस्य, सहोदरमादरस्य, प्रियं प्रेमप्रपञ्चस्य, प्रोत्साहनमनङ्गस्य, अनुकूलमुत्कण्ठायाः, समुचितमभिनिवेशस्य, कौतुकजननं जल्पति पुष्कराक्षे, श्रवणकुतूहलिनि विस्मृतान्यव्यापारे तन्मयतामिवानुभवति भूभुजि, जरठीभवत्सु पूर्वाह्णवेलालवेषु, गगनमध्यासन्नवर्त्तिनि व्रजति तीव्रतां ब्रध्नमण्डले, स्खलयति पथि पथिकानसह्योर्मिणि घर्मजाले, जलाशयाननुसरत्सु पिपासाकूततरलिततारकेषु श्वासिषु श्वापदेषु, पङ्किलकूलकर्दमविमर्दोद्यतेषु सरित्परिसरवनविहारिकरिवराहमहिषमण्डलेषु, विटपिकोटरकुटीरनीडनिलयनिलीयमानेषु संपुटितपक्षेषु पक्षिषु, कूलकुलायकोणकूणितकोकूयमानकुक्कुहेषु गिरिसरित्सुरङ्गाङ्गणेषु रङ्गत्कुरङ्गचर्वितखर्वदूर्वानलनीलनिम्नशाद्वलस्थलस्थितये हिण्डमानासु कारण्डवशिखण्डिमण्डलीषु, शिशिरनिवासवाञ्छया कूजत्सु करञ्जनिकुञ्जपुञ्जितकपिञ्जलकपोतपोतकेषु, वहति मनाङ्म्लानकोमलकुसुमकोशकोष्णामन्दमकरन्दबिन्दूद्गारिणि तापीतीरतरङ्गस्पर्शसेव्ये मध्याह्नमरुति, श्रमवशविलोलमीलन्नयननीलोत्पलासु बहलतरुतलच्छायामाश्रयन्तीषु सीदत्सैनिकनितम्बिनीषु प्रस्तावपाठकः पपाठ ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, पुष्कराक्षे=पुष्कराक्षनाम्नि दमयन्तीप्रेषितवार्तिके, अनुरागस्य=प्रेम्णः, अनुगुणम्=अनुकूलम्, शृङ्गारस्य सदृशं=समुचितम्, आदरस्य=सम्मानस्य, सहोदरं=बन्धुम्, अनुरूपमित्यर्थः। प्रेमप्रपञ्चस्य=प्रेमविस्तारस्य, प्रियम्=अनुकूलम्, अनङ्गस्य=कामस्य, प्रोत्साहनम्=उद्दीपकम्, उत्कण्ठायाः=उत्सुकतायाः, अनुकूलम्=अनुरूपम्, अभिनिवेशस्य=एकनिष्ठतायाः, समुचितं=सदृशम्, कौतुकजननम्=आतुरतोत्पादकं, जल्पति=कथयति सति, भूभुजि=नृपे नले, श्रवणकुतूहलिनि=श्रोतुमुत्सुके, विस्मृतान्यव्यापारे—विस्मृताः=त्यक्ताः; अन्ये=इतरे, व्यापाराः=कार्याणि येन तथाभूते, तन्मयतामिवानुभवति=तल्लीनतामिवानुभूतिं कुर्वति सति, पूर्वाह्णवेलालवेषु=पूर्वाह्णकालांशेषु, जरठीभवत्सु=व्यतीतप्रायेषु,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गगनमध्यासन्नवर्त्तिनि=नभोमध्यभागसमीपगतप्राये, व्रध्नमण्डले=रविमण्डले, तीव्रतां=प्रखरतां, व्रजति=गच्छति सति, असह्योर्मिणि—असह्याः=सोढुमशक्याः, ऊर्मयः=सूर्यकिरणाः यस्मिन् तथाविधे, घर्मजाले=तापसंघाते, पथिकान्=अध्वगान्, पथि=मार्गे, स्खलयति=सन्तापयति सति, पिपासाकूततरलिततारकेषु—पिपासायाः=तृषः, आकूतं=संवेगः, तेन तरलिताः=चञ्चलीकृताः, तारकाः=नेत्रकनीनिकाः येषां तथाविधेषु, श्वासिषु=भ्रमन्दं श्वसत्सु, श्वापदेषु=वन्यजन्तुषु, जलाशयान्=तडागानि, अनुसरत्सु=अनुगच्छत्सु सत्सु, सरित्परिसरवनविहारिकरिवराहमहिषमण्डलेषु—सरितः=नद्याः, परिसरे=तटप्रदेशे, यद् वनं=काननं, तत्र विहारिणः=विहरन्तः, ये करिणः=गजाः, वराहाः=शूकराः, महिषाः=सैरिभाः, तेषां मण्डलेषु=समूहेषु, पङ्किलकूलकर्दमविमर्दोद्यतेषु—पङ्किलं=पङ्कयुक्तं, कूलं=तटं, तत्र यः कर्दमः=पङ्कः, तस्य विमर्दः=सन्तापनोदनाय सकलाङ्गेषु लेपः, तस्मा उद्यतेषु=तत्परेषु सत्सु, सम्पुटितपक्षेषु—सम्पुटिताः=संहृताः, पक्षाः=पुंखाः यैस्तेषु, पक्षिषु=खगेषु, विटपिकोटरकुटीरनीडनिलयनिलीयमानेषु—विटपिनां=वृक्षाणां, कोटराण्येव कुटीराणि, तत्र ये नीडाः=कुलायाः, त एव निलयाः=शरणगृहाणि, तत्र निलीयमानेषु=निभृतं तिष्ठत्सु सत्सु, कूलकुलायकोणकूणितकोकूयमानकुक्कुहेषु—कूले=तटे, ये कुलायाः=नीडाः, तेषां कोणेषु=एकदेशेषु, कूणिताः=सङ्कुचिताः, कोकूयमानाः—पुनःपुनरतिशयेन वा कवमानाः=शब्दायमानाः, यङन्तात् कुङ्घातोर्लट्, तस्य शानजादेशश्च। कुक्कुहाः=कुक्कुटाः यत्र तादृशेषु, गिरिसरित्सुरङ्गाङ्गणेषु—गिरीणां=पर्वतानां, सरितां च=नदीनां च, यद्वा गिरिसरिदित्येकं पदं तर्हि गिरिसरित्=पर्वतात्प्रभूता नदी, तस्याः सुष्ठु रङ्गः=वर्णः, येषां तथाविधानि यानि अङ्गणानि=सञ्चारभूमयः तेषु, रङ्गत्कुरङ्गचर्वितखर्वदूर्वानलनीलनिम्नशाद्वलस्थलस्थितये—रङ्गन्तः=विहरन्तः, ये कुरङ्गाः=मृगाः, तैः चर्विताः=खादिताः, अतएव खर्वाः=लघ्व्यः, दूर्वाः=शाद्वलाः, नलाः=नलाख्यतृणविशेषाश्च, तैः नीलं=नीलवर्णं, निम्नं=नीचं, शाद्वलं=हरिततृणसम्पन्नं, यत् स्थलं=प्रदेशं, तत्र स्थितये=वासाय, कारण्डवशिखण्डिमण्डलीषु—कारण्डवः=पक्षिविशेषः, शिखण्डी=मयूरः, तेषां मण्डलीषु=वृन्देषु, हिण्डमानासु=गच्छन्तीषु, करञ्जनिकुञ्जपुञ्जितकपिञ्जलकपोतपोतकेषु—करञ्जाः=वृक्षविशेषाः, तेषां निकुञ्जे=लतागुल्मे, पुञ्जिताः=समवेताः, ये कपिञ्जलानां=पक्षिविशेषाणां, कपोतानां च पोतकाः=शिशवः तेषु, शिशिरनिवासवाञ्छया—शिशिरनिवासस्य=शैत्यप्रदावासस्य, वाञ्छया=इच्छया, कूजत्सु=शब्दं कुर्वत्सु, मनाक्=ईषत्, म्लानकोमलकुसुमकोशकोष्णामन्दमकरन्दबिन्दूद्गारिणि—म्लानानि=मलिनानि, कोमलानि=मृदूनि, कुसुमानि=पुष्पाणि, तेषां कोशेभ्यः=कुड्मलेभ्यः, कोष्णामन्दमकरन्दबिन्दूद्गारिणि=ईषदुष्णसमधिकमकरन्दबिन्दुवर्षिणि, तापीतीरत-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रङ्गस्पर्शसेव्ये—ताप्याः तीरतरङ्गाणां=तटीयलहरीणां, स्पर्शेन=सम्पर्केण, सेव्ये=सेवितुं योग्ये, मध्याह्नमरुति=मध्याह्नवायौ, वहति=वाति सति, श्रमवशविलोलमीलन्नयननीलोत्पलासु—श्रमवशात्=अध्वखेदवशात्, विलोलानि=अतिचञ्चलानि, मीलन्ति=मुकुलीभवन्ति, नयननीलोत्पलानि=नेत्रेन्दीवराणि यासां तथाविधासु, सीदत्सैनिकनितम्बिनीषु—सीदन्त्यः=म्लायन्त्यः, याः सैनिकानां=भटानां, नितम्बिन्यः=अङ्गनाः तासु, बहलतरुतलच्छायामाश्रयन्तीषु—बहलतरूणां=घनवृक्षाणां, तले=अधोभूमौ, या छाया=अनातपः, ताम् आश्रयन्तीषु=अनुसरन्तीषु, प्रस्तावपाठकः=वैतालिकः, पपाठ=जगौ ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार पुष्कराक्षनामक दमयन्ती द्वारा प्रेषित वार्तिक के द्वारा प्रेम के अनुकूल, शृंगार के सदृश, आदर के अनुरूप, प्रेमप्रपञ्च के अनुकूल, काम लिए उद्दीपक, उत्कण्ठा के अनुरूप, एकनिष्ठ प्रकृति के सदृश, कौतूहल को उत्पन्न करने वाले (बातों को) कहने पर; सुनने में उत्सुक, अतएव अन्य समस्त कार्यों को भूले हुए राजा नल द्वारा तन्मयता का अनुभव करने पर; पूर्वाह्णकालिक समय के लगभग व्यतीत हो जाने पर; करीब-करीब आकाश के मध्य भाग में अत्यन्त प्रखरता के साथ सूर्य के चले जाने पर; असहनीय सूर्यकिरणों के तापों से मार्गस्थित पथिकों के सन्तप्त हो जाने पर; प्यासजन्य व्याकुलता के कारण चञ्चल कनीनिकाओं वाले वन्य जन्तुओं द्वारा लम्बी-लम्बी श्वासें खींचते हुए (हाँफते हुए) जलाशयों का क्षनुसरण करने पर; नदियों के तटवर्ती वन में विहार करने वाले हाथियों, शूकरों तथा भैंसों द्वारा कीचड़युक्त तट-स्थित कीचड़ का विमर्दन करने (सन्ताप के शमन के लिए अपने समस्त अंगों पर कीचड़ का लेप करने अर्थात् लोट-पोट होने) में तत्पर हो जाने पर; समेटे हुए पंखों वाले पक्षियों के द्वारा वृक्षों के कोटररूप कुटीरस्थित नीड़-(घोंसला)-रूप घरों में शान्त होकर बैठ जाने पर; तटस्थित घोंसलों के एक भाग में दुबके हुए कुक्कुट पक्षियों के द्वारा बार-बार कूँ-कूँ की ध्वनि करते हुए पर्वतों और नदियों अथवा पर्वत से उद्भूत नदी की सुन्दर सञ्चरणयोग्य भूमि पर भ्रमण करते हुए मृगों द्वारा चबाये गये, अतएव भग्न (छोटे-छोटे) दूब एवं नलनामक विशेष प्रकार के घासों से नील वर्ण की तलहटी वाली हरी-भरी भूमि पर निवास करने के लिए कारण्डवों (वनकुक्कुटों) और मयूरों के चले पर पर; करञ्जनामक वृक्ष के लताकुञ्जों में एकत्रित हुए कपिञ्जलों और कपोतों के बच्चों द्वारा शीतलता प्रदान करने वाले आवास की आकांक्षा से कूजन करते रहने पर; थोड़े-थोड़े म्लान एवं कोमल पुष्पकुड्मलों से थोड़े उष्ण परागकणों की पर्याप्त वर्षा करने वाली, तापी नदी के तटीय लहरों से सम्पर्क के कारण सेवन करने योग्य मध्याह्नकालीन वायु के बहते रहने पर;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मार्गश्रम के कारण थकी हुई अत्यन्त चञ्चल नयनरूपी नीलकमलों को मुकुलित (बन्द) करती हुई सैनिकों की अंगनाओं के द्वारा घने वृक्षों के नीचे स्थित छाया का आश्रय ग्रहण कर लेने पर प्रस्तावपाठक (वैतालिक) ने पढ़ा—

"विचित्राः पत्त्रालीर्दलयति गलत्स्वेदसलिलै-
रमन्दं मृद्नाति प्रमदकरिकुम्भस्तनतटी।
प्रबन्धेनाक्रामञ्जन-जघन-जङ्घोरु-युगलं
श्रमः सेनाङ्गेषु प्रसरति शनैः कामुक इव ॥२४॥

अन्वयः—श्रमः कामुक इव विचित्राः पत्त्रालीः गलत्स्वेदसलिलैः दलयति, प्रमदकरिकुम्भस्तनतटीः अमन्दं मृद्नाति, प्रबन्धेन जनजघनजङ्घोरुयुगलम् आक्रामन् सेनाङ्गेषु प्रसरति ॥२४॥

कल्याणी—विचित्रा इति। श्रमः=अध्वखेदः, कामुक इव=कामातुरो नर इव, विचित्राः=नानाविधाः, पक्षे—मनोहराः, पत्त्रालीः—पत्त्राणां=वाहनानाम्; आलीः=पङ्क्तीः, पक्षे—पत्त्रालीः=पत्त्रभङ्गान्, गलत्स्वेदसलिलैः=स्रवत्स्वेदजलैः, दलयति=व्यथयति, पक्षे—प्रक्षालयति। प्रमदकरिकुम्भस्तनतटीः—प्रमदानां=प्रमत्तानां, करीणां=गजानां, कुम्भानेव स्तनतटीः, पक्षे—प्रमदकरिकुम्भानिव स्तनतटीः, अमन्दं=सातिशयं, मृद्नाति=म्लायति, पक्षे—परामृशति। प्रबन्धेन=नैरन्तर्येण, पक्षे—प्रकृष्टेन कामक्रीडाविधिविशेषेण, जनजघनजङ्घोरुयुगलं—जनानां=लोकानां, पदातीनामित्यर्थः। पक्षे—अङ्गनानां, [प्रयाणारूढत्वात्पक्षे कन्दर्पभावात्] जघनं च जङ्घे चोरुयुगलं चैतेषां समाहारः जघनजङ्घोरुयुगलम्=जघनजङ्घोरुद्वयम्, प्राण्यङ्गत्वादेकवद्भावः। तत् आक्रामन्=आक्रान्तं कुर्वन्, सेनाङ्गेषु—सेनायाः=बलस्य, अङ्गेषु=भागेषु, हस्त्यश्वादिष्वित्यर्थः। प्रसरति=विस्तारं गच्छति। उपमाऽलङ्कारः। शिखरिणी वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—बहते हुए पसीने के जल के कारण मनोहर पत्त्ररचनाओं को धोने वाले; मदमत्त हाथियों के कुम्भस्थलसदृश स्तनतट का अतिशय मर्दन करने वाले, कामक्रीड़ा की उत्कृष्ट विधियों से अंगनाओं के जघन, जंघा तथा दोनों ऊरुओं पर आक्रमण करने वाले कामातुर व्यक्ति के समान मार्गश्रम भी अनेक प्रकार की पत्त्रावलियों (वाहनों की पंक्तियों) को बहते हुए पसीने की बूंदों से व्यथित करते हुए, मदमत्त हाथियों के कुम्भस्थलरूपी स्तनतटों को मलिन करते हुए, पदाति सैनिकों के जघन, जंघा तथा दोनों ऊरुओं को निरन्तर आक्रान्त करते हुए सेना के विभिन्न (हाथी घोड़े आदि) अंगों में फैल रहा है।

आशय यह है कि मार्गश्रम से व्यथित होकर राजा नल की सेना पदाति, हाथी, घोड़े आदि समस्त अंगों सहित अत्यन्त थक कर पसीने से लथपथ हो चुकी है ॥२४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च

कूजत्क्रौञ्चं चटुलकुररद्वन्द्वमुन्नादिहंसं
क्रीडत्क्रोडं निपतितलतापुष्पकिञ्जल्कहारि ।
अस्याः सान्द्रद्रुमवनतलश्रान्तसुप्ताध्वनीनं
रोधः सिन्धोः स्थगयति भवत्सैनिकानां प्रयाणम्" ॥२५॥

अन्वयः—कूजत्क्रौञ्चं चटुलकुररद्वन्द्वम् उन्नादिहंसं क्रीडत्क्रोडं निपतितलतापुष्पकिञ्जल्कहारि सान्द्रद्रुमवनतलश्रान्तसुप्ताध्वनीनम् अस्याः सिन्धोः रोधः भवत्सैनिकानां प्रयाणं स्थगयति ॥२५॥

कल्याणी— कूजदिति । कूजत्क्रौञ्चं—कूजन्तः=शब्दायमानाः, क्रौञ्चाः=क्रौञ्चपक्षिणः यत्र तत्, चटुलकुररद्वन्द्वं—चटुलानि=विलासेन चपलानि, कुररद्वन्द्वानि=कुररमिथुनानि यत्र तत्, उन्नादिहंसम्—उत्=उच्चैः, तारस्वरेणेत्यर्थः । नादिताः=शब्दं कुर्वंताः, हंसाः=मरालाः यत्र तत्, क्रीडत्क्रोडं—क्रीडन्तः=केलिं कुर्वन्तः, क्रोडाः=शूकराः यत्र तत्, निपतितलतापुष्पकिञ्जल्कहारि—निपतिताः=पतिताः, लतापुष्पाणां=वल्लरीकुसुमानां, ये किञ्जल्काः=परागकेसराः, तैः हारि=मनोहरम्, सान्द्रद्रुमवनतलश्रान्तसुप्ताध्वनीनं—सान्द्रस्य=निबिडस्य, द्रुमवनस्य=तरुसमूहस्य, तले=अधःभागे, श्रान्ताः=क्लान्ताः, सुप्ताः अध्वनीनाः=पान्थाः यत्र तथाविधम्, अस्याः=एतस्याः, सिन्धोः=नद्याः, 'देशे नदविशेषेऽब्धौ सिन्धुर्ना सरिति स्त्रियाम्'—इत्यमरः । रोधः=तटम्, रम्यतया भवत्सैनिकानां—भवतः=श्रीमतः, सैनिकानां=बलानां, प्रयाणं=प्रस्थानं, स्थगयति=स्खलयति । मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—और भी—कलरव करते हुए क्रौञ्च पक्षियों वाले, विलासमग्न चञ्चल कुरर पक्षिमिथुनों वाले, उच्च स्वर से कूजन करते हुए हंसों वाले, क्रीडा करते हुए शूकरों वाले, गिरते हुए लतापुष्पों के परागकणों से मनोहर तथा घने वृक्षों के नीचे थक कर सोये हुए पथिकों वाले इस नदी का किनारा (अपनी रमणीयता के कारण) आपके सैनिकों के प्रयाण को अवरुद्ध कर रहा है अर्थात् आपके सैनिकों को आगे बढ़ने से रोक रहा है ॥२५॥

राजा तु तदाकर्ण्य "बाहुक ! बहूनां बहुमतो बाहुल्यादिहैव वासः, तद्वद सैनिकान्, अवतरत तापीतीरतरुतलाश्रयान्, आश्रयत श्रमच्छिदच्छायाः, कुरुत पटकुटीः, कारयत कायमानानि; मुञ्चतामन्दमृदुशाद्वलेष्वबलान्बलीवर्दकान्, कूर्दयत कर्दमे महिषान्, खादयत वेसरीभिर्वंशकरीराङ्कुरान्, प्रचारयत क्रमेण क्रमेलकान्, अवगाहावसाने पृष्ठावकीर्णपुलिनपङ्कपांसवो विहरन्तु स्ववशं वंशस्तम्बेषु स्तम्बेरमाः, तरुबुध्नेषु बध्नीत तीव्रवेगान्वेग-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सरान्, अवतरन्तु तापीतीरतरङ्गेषु तुरङ्गाः, शिशिरतरङ्गानिलान्दोलितविविधविकचमञ्जरीजालजटिलेषूत्फुल्ललताखण्डमण्डपेषु मध्याह्नसमयमतिवाहयन्तु किन्नरमिथुनानि' इति सेनापतिमादिदेश ॥

कल्याणी—राजेति । राजा=नलस्तु, तत्=प्रस्तावपाठकपठितश्लोकद्वयम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, बाहुक ! बाहुल्यात्=सामान्यतः, इहैव=अत्र एव, वासः=निवासः, बहूनाम्=अधिकानां जनानां, बहुमतः=अत्यन्तप्रियः, तत्=तस्मात्, सैनिकान्=भटान्, वद=विज्ञापय, तापीतीरतरुतलाश्रेयान्—ताप्याः=ताप्यीनद्याः, तीरे=तटे, ये तरवः=वृक्षाः, तेषां ये तलानि=अधोभूमयः, त एव आश्रयाः=विश्रामस्थलानि तान्, अवतरत=प्रासीदत, श्रमच्छिदच्छायाः=अध्वखेदविनाशिच्छायाः, आश्रयत=असेवध्वम्, पटकुटीः=पटवेश्मानि, कुरुत=तनुत, कायमानानि=तृणमयगृहाणि, कारयत=निर्मयत, अमन्दमृदुशाद्वलेषु=समधिककोमलहरितशष्पसम्पन्नक्षेत्रेषु, अबलान्=दुर्बलान्, बलीवर्दकान्=वृषभान्, मुञ्चत=त्यजत, कर्दमे=पङ्के, महिषान्=सैरिभान्, कूर्दयत=प्रवेशयत, वेसरीभिः=अश्वतरीभिः, वंशानां=वेणूनां, करीराङ्कुरान्=करीरवृक्षकन्दलीः, खादयत=आदयत, क्रमेलकान्=उष्ट्रान्, क्रमेण=क्रमशः, तद्भक्ष्याणि तरुपत्रादीनि प्रचारयत=प्रकर्षेण चारयत=भक्षयत, अवगाहावसाने=स्नानान्ते, पृष्ठावकीर्णपुलिपङ्कपांसवः—पृष्ठे=पृष्ठप्रदेशे, अवकीर्णः=प्रक्षिप्तः, पुलिनस्य=तटस्य, पङ्कः=कर्दमः, पांसुश्च=धूलिश्च यैस्ते, स्तम्बेरमाः=गजाः, वंशस्तम्बेषु=वेणुनिकुञ्जेषु, स्ववशं=स्वच्छन्दं, विहरन्तु=विचरन्तु, तीव्रवेगान्—तीव्रः वेगः येषां तान्, द्रुतगतीनित्यर्थः । वेगसरान्=अश्वतरान्, तरुबुध्नेषु=पादपमूलेषु, बध्नीत=बन्धनं प्रापयत, तुरङ्गाः=अश्वाः, तापीतीरतरङ्गेषु- ताप्याः=तापीनद्याः, तीरतरङ्गेषु=तटसम्बन्धिलहरीषु, अवतरन्तु=अवतरणं कुर्वन्तु, शिशिरतरङ्गानिलान्दोलितविविधविकचमञ्जरीजालजटिलेषु—शिशिरतरङ्गानिलेन=शीतलतरङ्गसम्पृक्तवायुना, आन्दोलितानां=कम्पितानां, विविधानां=बहुविधानां, विकचमञ्जरीणां=विकसितमञ्जरीणां, जालेन=समूहेन, जटिलेषु=व्याप्तेषु, उत्फुल्ललताखण्डमण्डपेषु=विकचलतासमूहकुञ्जेषु, किन्नरमिथुनानि=किम्पुरुषयुगलानि, मध्याह्नसमयं=माध्यन्दिनकालम्, अतिवाहयन्तु=व्यतियापयन्तु, इति=एवं, सेनापतिं=बाहुकनामानं बलाधिकृतम्, आदिदेश=आज्ञापयामास ॥

ज्योत्स्ना—राजा ने उस (प्रस्तावपाठक के दो श्लोकों) को सुनकर "हे बाहुक ! अधिकांश लोगों को यहीं पर वास करना अर्थात् पड़ाव डालना ज्यादा प्रिय है । इसलिए सैनिकों को सूचित करो कि "तापी नदी के तटवर्ती वृक्षों के छायारूप विश्रामस्थल में उतरें, श्रम अर्थात् थकावट का विनाश करने वाली छाया का सेवन करें, पटकुटी (राउटियाँ) तानें, तृणमय घरों का निर्माण करें, अतीव कोमल हरे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घासों से सम्पन्न क्षेत्रों में दुर्बल (थके हुए) बैलों को छोड़ दें, भैंसों को कीचड़ में उछलावें अर्थात् लोट-पोट होने दें, खच्चरियों को बांस और करीर के कोपलों को खिलावें, ऊँटों को क्रम से (उनके भोजनस्वरूप वृक्ष-पत्रों को) खिलायें, स्नान कर चुकने के पश्चात् (नदी के) तटस्थित कीचड़ और धूलि को (अपने) पीठ पर फेंकते हुए हाथियों का समूह अपनी इच्छानुसार बांस के निकुञ्जों में विहार करें, तीव्र गति वाले खच्चरों को वृक्षों की जड़ों में बांध दें, तापी नदी के तटीय तरङ्गों में घोड़े उतारें, शीतल तरंगों के सम्पर्क से कम्पायमान और अनेक प्रकार की विकसित मञ्जरियों से व्याप्त प्रफुल्लित लताकुञ्जों में किन्नरों के जोड़े मध्याह्नकालिक समय को व्यतीत करें।" इस प्रकार (बाहुकनामक) सेनापति को आदेश दिया ॥

स्वयमपि पुष्कराक्षसूचितार्धपथश्रमखिन्नकिन्नरमिथुनदिदृक्षया कृतमृगयाविनोदव्यपदेशो दिशि दक्षिणस्यामाप्तस्तोकपरिवारपरिवृतो झरन्निर्झरझात्कारिवारिरमणीयासु विहितविहारहारिहरिणीनेत्रोत्पलस्तबकितासु रममाणपुलिन्दनितम्बिनीवदनचन्द्रबिम्बितासु सान्द्रद्रुमद्रोणीषु विचरितुमारभत ॥

कल्याणी—स्वयमपीति। स्वयमपि=आत्मानाऽपि, पुष्कराक्षसूचितार्धपथश्रमखिन्नकिन्नरमिथुनदिदृक्षया—पुष्कराक्षेण=तन्नामकसन्देशहरेण, दमयन्तीवार्तिकेनेति भावः। सूचितं=विज्ञापितं, यद् अर्धपथे=अर्धमार्गे, एव श्रमेण=मार्गखेदेन, खिन्नं=श्रान्तं, किन्नरमिथुनं=किम्पुरुषयुगलं, तद्दिदृक्षया=तद्द्रष्टुमिच्छया, कृतमृगयाविनोदव्यपदेशः— कृतः=विहितः, मृगयाविनोदः=आखेटामोदः, स एव व्यपदेशः=व्याजः येन स तथोक्तः, झरन्निर्झरझात्कारिवारिरमणीयासु—झरतां=पततां, निर्झराणां=स्रोतानां, झात्कारः='झात्' इति ध्वनिः अस्त्यस्य तथाविधेन, वारिणा=जलेन, रमणीयासु=मनोहरासु, विहितविहारहारिहारिणीनेत्रोत्पलस्तबकितासु—विहितः=कृतः, यः विहारः=क्रीडा, तेन हारिण्य =मनोज्ञाः या हरिण्यः=मृग्यः, तासां नेत्रैः=नयनैः, उत्पलस्तबकितासु=नीलकमलपुञ्जयुक्तासु, रममाणपुलिन्दनितम्बिनीवदनचन्द्रबिम्बितासु—रममाणानां=क्रीडन्तीनां, पुलिन्दनितम्बिनीनां=शबरसुन्दरीणां, वदनैः=मुखैः, चन्द्रबिम्बितासु=चन्द्रमण्डलयुक्तासु, सान्द्रद्रुमद्रोणीषु=निबिडतरुषण्डेषु, दक्षिणस्यां दिशि=अवाचीदिशायाम्, आप्तस्तोकपरिवारैः=विश्वस्तस्वल्पपरिजनैः, परिवृतः=आवृतः सन्, विचरितुं=भ्रमितुम्, आरभत=प्रारेभे ॥

ज्योत्स्ना—स्वयं भी पुष्कराक्षनामक दमयन्तीदूत के द्वारा सूचित आधे रास्ते में ही मार्गश्रम से थके हुए किन्नरयुगल को देखने की इच्छा से आखेट अर्थात् शिकाररूपी मनोरंजन के बहाने झरनों के झर-झर ध्वनियुक्त जल के कारण रमणीय, विहार करने वाले मनमोहक हरिणों के नयनों के कारण नीलकमलों से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युक्त, रमण करती हुई शबरसुन्दरियों के मुखरूपी से चन्द्रमण्डल से युक्त घने वृक्षों के निकुञ्जों वाली दक्षिण दिशा की ओर (अपने) थोड़े से विश्वस्त परिजनों के साथ विचरण करना प्रारम्भ कर दिया ॥

पुरः स्थितश्चास्य वर्त्म दर्शयन् जात्यतरतुरङ्गमारोपितः पुष्कराक्षोऽप्यभाषत ॥

कल्याणी—पुरःस्थित इति । पुरः=अग्रे, स्थितश्च=अवस्थितश्च, अस्य=नृपस्य नलस्य, वर्त्म=मार्गं, दर्शयन्=अवालोकयन्, जात्यतरतुरङ्गमम्—जात्यतरः=उत्कृष्टजात्युद्भवः, यः तुरङ्गमः=अश्वः, तम आरोपितः=राज्ञा नलेन आरुढः कृतः, पुष्कराक्षः=दमयन्तीसन्देशहरः, अभाषत=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—और (राजा नल के द्वारा) एक उत्तम कोटि के घोड़े पर बैठाया गया पुष्कराक्ष भी (उसके) आगे स्थित होकर उसे रास्ता दिखाता हुआ बोला ॥

'देव ! मार्कण्डेयप्रमुखमहामुनिनिवासपवित्रिताः पुण्याः खल्विमाः पयोष्णीपरिसरवनभूमयः ॥

कल्याणी—देवेति । देव=राजन्, मार्कण्डेयप्रमुखमहामुनिनिवासपवित्रिताः—मार्कण्डेयप्रमुखमहामुनीनां=मार्कण्डेयप्रभृतिमहर्षीणां, निवासेन=आवासेन, पवित्रिताः=पवित्रीकृताः, पुण्याः=कल्याणकारिणः, खलु=निश्चयेन, इमाः=एताः, पयोष्णीपरिसरवनभूमयः—पयोष्णी=तदाख्या या सरित्तस्याः परिसरवनभूमयः=तटवर्तिवनप्रान्ताः ॥

ज्योत्स्ना—हे राजन् ! मार्कण्डेय आदि महर्षियों के आवास के कारण पवित्र की गई पयोष्णी नामक नदी की यह तटवर्ती भूमि निश्चय ही पुण्यदायक है ॥

तथाहि—

श्रूयते किलास्मादुद्देशात्पूर्वदिग्भागे भगवतः पुराणपुरुषावतारस्य परशुरामस्य जनयितुर्जमदग्नेराश्रमः । ततोऽपि नातिदूरेण सुरासुरमौलिमालामुकुलमुक्तमकरन्दबिन्दुस्नपितपादारविन्दस्य भगवतः स्वस्वेदप्रसरप्रवर्त्तितपयोष्णीप्रवाहस्य महावराहस्यायतनम् ॥

कल्याणी—श्रूयते इति । श्रूयते किलेति वार्तायाम् । अस्मादुद्देशात्=अस्मात् स्थानात्, पूर्वदिग्भागे=पूर्वस्यां दिशि, भगवतः=षडैश्वर्यसम्पन्नस्य, पुराणपुरुषावतारस्य=विष्णोरवतारभूतस्य, परशुरामस्य=जामदग्न्यस्य, जनयितुः=जनकस्य, जमदग्नेः=जमदग्निमुनेः, आश्रमः=तपोवनम् । ततोऽपि=तस्मादपि, नातिदूरेण=स्वल्पदूरेण, सुरासुरमौलिमालामुकुलमकरन्दबिन्दुस्नपितपादारविन्दस्य—सुरासुराणां=देवदानवानां, मौलिमालामुकुलेभ्यः=शिरोमाल्यपुष्पेभ्यः, मुक्तमकरन्द-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिन्दुभिः=पतितपुष्परसकणैः, स्नपितम्=आर्द्रीकृतं प्रक्षालितं वा, पादारविन्दं=चरणकमलं यस्य तथाविधस्य, भगवतः=देवस्य, स्वस्वेदप्रसरप्रवर्तितपयोष्णीप्रवाहस्य—स्वस्वेदप्रसरेण=निजश्रमजलविस्तारेण, प्रवर्तितः=प्रकटीकृतः, पयोष्णीप्रवाहः=पयोष्णीनदीप्रसरः येन तस्य, महावराहस्य=वराहावतारिणः भगवतः विष्णोः, आयतनं=स्थानम् ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—सुना जाता है कि इस जगह से पूर्व दिशा में भगवान् विष्णु के अवतारस्वरूप परशुराम को जन्म देने वाले (उनके पिता) महर्षि जमदग्नि का आश्रम है। उस स्थान से थोड़ी दूर पर ही देवताओं एवं दानवों के मस्तक-स्थित माला के पुष्पों से गिरते हुए मकरन्द-बिन्दुओं के द्वारा आर्द्र किये गये अथवा धोये गये चरणकमलों वाले, अपने श्रम-जल अर्थात् पसीने के प्रवाह से पयोष्णी नदी के प्रवाह को प्रकट करने वाले भगवान् महावराह का स्थान है ॥

इतोऽप्यवलोकयतु देवः—

सैषा चलच्चन्द्रकिचक्रवाकचञ्चच्चकोराकुलकूलकच्छा ।
स्वःसीमसोपानसदृक्तरङ्गा गङ्गाप्रतिस्पर्धिपयाः पयोष्णी ॥२६॥

अन्वयः—चलच्चन्द्रकिचक्रवाकचञ्चच्चकोराकुलकूलकच्छाः स्वःसीमसोपान-सदृक्तरङ्गाः गङ्गाप्रतिस्पर्धिपयाः सा एषा पयोष्णी (वर्तते) ॥२६॥

कल्याणी—सेति । चलच्चन्द्रकिचक्रवाकचञ्चच्चकोराकुलकूलकच्छाः—चलन्तः=भ्रमन्तः, चन्द्रकिणः=मयूराश्च, चक्रवाकाश्च, चञ्चन्तः=चलन्तः, चकोराश्च, तैः आकुलः=व्याप्तः, कूलकच्छः=तटवर्तिप्रदेशः यस्याः सा तथोक्ता, स्वःसीमसोपान-सदृक्तरङ्गाः—स्वःसीमसोपानसदृशः=स्वर्गपर्यन्तनिर्मितसोपानतुल्याः, तरङ्गाः=वीचयः यस्याः सा तथोक्ताः, गङ्गाप्रतिस्पर्धिपयाः—गङ्गायाः=भागीरथ्याः, प्रतिस्पर्धि=प्रतिद्वन्द्वि, पयः=जलं यस्याः, सा एषा=इयं, पयोष्णी=पयोष्णीनामा नदी [वर्तते] । इन्द्रवज्रा वृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ।' इति ॥२६॥

ज्योत्स्ना—इधर भी देखें महाराज—चञ्चल मयूरों, चक्रवाकों तथा सञ्चरण करते चकोरों से व्याप्त तटवर्ती प्रदेशों वाली, स्वर्ग पर्यन्त निर्मित की गई सीढ़ियों के समान तरंगों वाली, (अपने जल से) गंगा के जल के साथ प्रतिस्पर्धा करने वाली यह वही पयोष्णी नदी है ॥२६॥

यस्याः पश्यैते—

मुक्तास्रैः श्रूयमाणं सिकतिलपुलिनप्रान्तविश्रान्तपान्थै-
रुन्धानं मञ्जुगीतप्रियहरिणकुलान्यम्बुपानागतानि ।
सान्ध्यध्यानावसाने क्षणमिव मुनयः सन्निधौ पङ्कजाना-
मोङ्कारोच्चाररम्यं मधुकरमधुरध्वानमाकर्णयन्ति' ॥२७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—यस्याः सिकतिलपुलिनप्रान्तविश्रान्तपान्थैः मुक्तास्रैः श्रूयमाणम् अम्बुपानागतानि मञ्जुगीतप्रियहरिणकुलानि रुन्धानं पङ्कजानां सन्निधौ मधुकर-मधुरध्वानं सान्ध्यध्यानावसाने मुनयः क्षणमिव ओंकारोच्चाररम्यम् आकर्णयन्ति ॥२७॥

कल्याणी—मुक्तास्रै रिति । यस्याः=पयोष्णीनद्याः, सिकतिलपुलिनप्रान्त-विश्रान्तपान्थैः—सिकताः सन्त्यत्रेति सिकतिलः; 'देशे लुबिलचौ च' इति इलच्, 'सिकताशर्कराभ्यां च' इति विहितस्याणो लुप् च । पुलिनप्रान्तः=तटप्रदेशः, तत्र विश्रान्ताः=विश्रामं गताः, ये पान्थाः=पथिकाः, तैः मुक्तास्रैः—मुक्तानि=पातितानि, अस्राणि=अश्रूणि यैः तथाविधैः सद्भिः, मधुकरध्वानस्योत्कण्ठाजनकत्वादिति भावः । श्रूयमाणम्=आकर्ण्यमानम्, अम्बुपानागतानि—अम्बुपानाय=जलपानाय, आगतानि=आयातानि, मञ्जुगीतप्रियहरिणकुलानि—मञ्जु=मधुरं, गीतं=गानं, प्रियं=रुचिकरं येषां तानि हरिणकुलानि=मृगयूथानि, रुन्धानं=ततो गमनान्निवारयन्तम्, पङ्कजानां=कमलानां, सन्निधौ=सामीप्ये, मधुकरमधुरध्वानं—मधुकराणां=भृङ्गाणां, मधुर-ध्वानं=मधुरध्वनिम्, सान्ध्यध्यानावसाने=सायंकालिकध्यानसमाप्त्यवसरे, मुनयः=ऋषयः, क्षणमिव=कञ्चित्कालम्, ओङ्कारोच्चाररम्यम्—ओङ्कारोच्चारणवत् रम्यं=रमणीयं, मत्वा आकर्णयन्ति=शृण्वन्ति । स्रग्धरावृत्तम् । तल्लक्षणं यथा—'म्रभ्नै-र्यानां त्रयेण त्रिमुनियनियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्' ॥२७॥

ज्योत्स्ना—यह देखिये—जिस पयोष्णी नदी के बालुकामय तटप्रदेश पर विश्राम कर रहे पथिकों द्वारा आँसू गिराते हुए सुनी जाने वाली, जल पीने के लिए आये हुए मधुर गीतों के प्रेमी हरिण-समूहों को (यहाँ से जाने से) रोकने वाली कमलों के समीप-स्थित भ्रमरों की मधुर ध्वनि को सायंकालीन ध्यान की समाप्ति के अवसर पर मुनि लोग भी ओंकार के उच्चारण के समान रमणीय मानकर कुछ समय के लिए सुन रहे हैं ।

विमर्श—आशय यह है कि गुञ्जार करते हुए भ्रमरों की ध्वनि ओंकार की ध्वनि का भ्रम उत्पन्न कर रही थी, जिससे नदी-तट पर सायंकालीन नित्य कर्म आदि समाप्त कर अपने आश्रम को प्रस्थान करने वाले मुनिजन ठिठक कर रुक जाते हैं और ध्यानपूर्वक उस ध्वनि को सुनने लगते हैं ॥२७॥

राजा तु 'नमस्याः खल्वमी महानुभावाः ॥

कल्याणी—राजेति । राजा=नलस्तु, अमी=एते, महानुभावाः=महा-प्रभावाः मुनयः, खलु=निश्चयेन, नमस्याः=अभिवादनार्हाः, इत्यवधारयन्निति वक्ष्यमाणेनान्वयः ॥

ज्योत्स्ना—राजा ने भी—"ये महान् प्रभावशाली मुनि लोग तो निश्चय ही अभिवादन के योग्य हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाहि—

मृगेषु मैत्री मुदितात्मदृष्टौ कृपा मुहुः प्राणिषु दुःखितेषु ।
येषां न ते कस्य भवन्ति वन्द्याः कौशेयकौपीनभृतो मुनीन्द्राः' ॥२८॥

अन्वयः—येषां मृगेषु मैत्री, आत्मदृष्टौ मुदिता, दुःखितेषु प्राणिषु मुहुः कृपा, ते कौशेयकौपीनभृतः मुनीन्द्राः कस्य वन्द्याः न भवन्ति ॥२८॥

कल्याणी—मृगेष्विति । येषां=मुनीन्द्राणां, मृगेषु=हरिणेषु, मैत्री=सख्यम्, आत्मदृष्टौ=आत्मदर्शने, मुदिता=सन्तुष्टिरूपा, दुःखितेषु=कष्टमनुभवत्सु, प्राणिषु=जन्तुषु, मुहुः=वारम्वारं, सततमित्यर्थः । कृपा=करुणा, ते=तथाविधाः, कौशेयकौपीनभृतः—कौशेयं=क्षौमं कुशनिर्मितं वा कौपीनं बिभ्रति=धारयन्तीति तथोक्ताः, मुनीन्द्राः=मुनिश्रेष्ठाः, कस्य=कस्य जनस्य, वन्द्याः=अभिवादनीयाः, न भवन्ति । सर्वस्यापि वन्द्याः सन्तीति भावः । मैत्री मुदिता करुणोपेक्षा चेति चतस्रोऽन्तरात्मप्रसादिन्यो वृत्तयः । तत्र मैत्र्यादयस्तिस्रो वृत्तयः स्फुटमुक्ताः । कौशेयकौपीनभृत इति निःसङ्गत्वोक्त्या पापकारिषूपेक्षाप्यभिहितेत्यवगन्तव्यम् । उपेन्द्रवज्रेन्द्रवज्रयोर्मिश्रणादुपजातिर्वृत्तम् ॥२८॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—जिनकी हरिणों के साथ मित्रता रहती है, आत्मदर्शन में ही प्रसन्नता रहती है अर्थात् आत्म-साक्षात्कार से ही जो सदा सन्तुष्ट रहते हैं, दुःख से पीड़ित प्राणियों पर जिनकी बार-बार कृपा रहती है; इस प्रकार के कौशेय (वल्कल अथवा कुश से निर्मित) कौपीन धारण करने वाले श्रेष्ठ मुनि लोग किसके लिए अभिवादनीय नहीं होते ?" ॥२८॥

इत्यवधारयँस्तान्ववन्दे ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवम्, अवधारयन्=चिन्तयन्, तान्=मुनीन्द्रान्, ववन्दे=प्रणनाम ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार विचार करता हुआ उन्हें प्रणाम किया ॥

मुनयोऽपि 'सोऽयं सोमपीथी निषधनाथः' इत्यनुध्यानादवगम्य प्रयुक्तब्रह्मोक्ताशिषः, अनुगृह्णन्त इवार्द्रार्द्रैर्दृष्टिपातैः, आश्वासयन्त इव प्रियस्वागतप्रश्नालापेन, स्नपयन्त इव दरहसितदन्तज्योत्स्नामृतप्लवेन, आह्लादयन्त इवादरेण, दत्त्वार्घ्यमनन्तरमिदमवोचन् ॥

कल्याणी—मुनय इति । मुनयोऽपि=ऋषयोऽपि, 'सोऽयं=स एषः, सोमपीथी=सोमरसपायी, निषधनाथः=निषधाधिपतिर्नलः' इति=एवम्, अनुध्यानात्=ध्यानबलात्, अवगम्य=विज्ञाय, प्रयुक्तब्रह्मोक्ताशिषः—प्रयुक्ता=प्रदत्ता, ब्रह्मोक्ता=वेदोक्ता, आशीर्यैस्ते तथोक्ताः, आर्द्रार्द्रैः=समधिकस्नेहार्द्रैः, दृष्टिपातैः=चक्षुर्निक्षेपैः, अनुगृह्णन्तः=अनुगृहीतं कुर्वन्त इव, प्रियस्वागतप्रश्नालापेन=मधुरस्वागतप्रश्नात्म-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कसंभाषेण, आश्वासयन्त इव=आश्वस्तं कुर्वन्त इव, दरहसितदन्तज्योत्स्नामृतप्लवेन—दरम्=ईषत्, यत् हसितं=हासः, तेन दन्तज्योत्स्ना=दन्तकान्तिः, सैव अमृतप्लवः=सुधापूरः, तेन स्नपयन्त इव=स्नानं कारयन्त इव, आदरेण=सम्मानेन, आह्लादयन्त इव=मुदितमिव कुर्वन्तः, अर्घ्यं=पूजोपहारं, दत्त्वा=प्रदाय, अनन्तरं=पश्चात्, एतद्भावाभिव्यञ्जनानन्तरमित्यर्थः। इदम्=एतत्, अवोचन्=अभाषन्त ॥

ज्योत्स्ना—मुनियों ने भी "सोमरस का पान करने वाले ये वही निषधनरेश हैं।" यह (अपने) ध्यानबल से जानकर (उन्हें) वेदोक्त आशीर्वाद प्रदान कर, (अपने) अतिशय स्नेह से स्निग्ध दृष्टिपात द्वारा अनुगृहीत-सा करते हुए, स्वागत-प्रश्नरूप मधुर वार्तालाप के द्वारा आश्वासन-सा देते हुए, मन्द मुस्कान के कारण दन्तकान्तिरूपी अमृत-प्रवाह द्वारा स्नान-सा कराते हुए, आदर के द्वारा आनन्दित-सा करते हुए (उन्हें) अर्घ्य प्रदान करने के पश्चात् इस प्रकार कहा ॥

'आयुष्मन् ! अस्मदीयमिह धर्मोपदेशप्रदानमेव प्रथममातिथेयमतिथिजनेष्वतोऽभिधीयसे। पुण्यं पयोऽस्याः सरितः तदेतदवगाह्य कुरु पुण्यमयमात्मानम् ॥

कल्याणी—आयुष्मन्निति। आयुष्मन् !=चिरजीविन् !, इह=अत्र, अतिथिजनेषु=अभ्यागतेषु, अस्मदीयं=अस्माकं, प्रथमम् आतिथेयम्=अतिथिसत्कारः, धर्मोपदेशप्रदानमेव=धार्मिकशिक्षाप्रदानमेव, अतस्त्वम् अभिधीयसे=उच्यसे। अस्याः=पयोष्ण्याः, सरितः=नद्याः, पयः=सलिलं, पुण्यं=पवित्रं [वर्तते], तत्=तस्मात्, एतदवगाह्य=अत्र स्नानं कृत्वा, आत्मानं=स्वम्, पुण्यमयं=सुकृतिनं, कुरु=विधेहि ॥

ज्योत्स्ना—"आयुष्मन् ! यहाँ पर अतिथियों के लिए हम लोगों का प्रथम आतिथ्य सत्कार धर्मोपदेश देना ही होता है; इसलिए हम आपसे निवेदन करते हैं कि इस पयोष्णी नदी का जल अतीव पवित्र है। अतः इसमें स्नान कर अपने-आपको पवित्र कीजिये ॥

तथाहि—

पर्वतभेदिपवित्रं जैत्रं नरकस्य बहुमतङ्गहनम्।
हरिमिव हरिमिव हरिमिव वहति पयः पश्यत पयोष्णी' ॥२९॥

अन्वयः—पश्यत, हरिमिव पर्वतभेदिपवित्रं, हरिम् इव नरकस्य जैत्रं, हरिम् इव बहुमतङ्गहनं पयः पयोष्णी वहति ॥२९॥

कल्याणी—पर्वतेति। पश्यत=यूयमवलोकयत। हरिमिव—हरिः=इन्द्रः, तमिव, पर्वतभेदिपवित्रं—पर्वतभेदि=पर्वतविदारकं, पर्वतं भित्त्वा प्रभूतत्वादिति भावः। पवित्रं=पावनम्, इन्द्रपक्षे—पर्वतभेदिपवित्रम्—पर्वतान्=पर्वतपक्षानित्यर्थः, भिनत्ति=छिनत्तीति पर्वतभेदी, पविः=वज्रः, तं त्रायते=धारयति, यद्वा पविना=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वज्रेण, त्रायते जनानिति पवित्रः, पर्वतभेदी चासौ पवित्रश्चेति तम्। हरिमिव=विष्णुमिव, नरकस्य=दुर्गतेः, जैत्रं=पराभविष्णु, नाशकमिति यावत्। विष्णुपक्षे—नरकस्य=भौमासुरस्य, जैत्रं=विनाशकम्। हरिमिव=सिंहमिव, बहुमतं+गहनम्—बहुभिः मतं=माननीयम्; बहूनां मत इति विग्रहे समासो दुर्लभः 'क्तेन च पूजायाम्' (पा०२-२-१२) इति सूत्रेण षष्ठीसमासनिषेधात्। गहनम्=अगाधम्, सिंहपक्षे [बहुमतङ्ग-हनम्]—बहुमतङ्गान्=बहुगजान्, हन्तीति तं तथोक्तम्, हन्तेरच् क्विब्वा। तथाविधं पयः=जलं [कर्मभूतम्], पयोष्णी=पयोष्णी नदी, वहति=धारयति। पर्वतभेदिपवित्रमित्यादिविशेषणत्रयं क्रमेणेन्द्रविष्णुसिंहार्थस्योपमानभूतस्य हरिशब्दत्रयस्येति बोध्यम्। श्लेषानुप्राणितोपमा। आर्या जातिः ॥२९॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि देखें,

पर्वत को विदीर्ण करने वाले एवं पवित्र, नरक अर्थात् नरकासुर (भौमासुर) का विनाश करने वाले, बहुतों के द्वारा सम्माननीय और दुर्ज्ञेय भगवान् विष्णु के समान; पर्वतपक्षों को काटने वाले, पवि (वज्र) को धारण करने वाले अथवा वज्र से लोगों की रक्षा करने वाले, विजेता, लोगों द्वारा सम्माननीय इन्द्र के समान तथा पर्वतों की गुफाओं में निवास करने वाले एवं (भगवती दुर्गा का वाहन होने के कारण) पवित्र, मनुष्यों को जीत लेने वाले और अनेकों हाथियों का वध करने वाले सिंह के समान पर्वत का भेदन कर निकलने वाले, (वराहवतारधारी भगवान् विष्णु के स्वेदबिन्दु-प्रवाह से निकलने के कारण) पवित्र, नरक अर्थात् दुर्गति का विनाश करने वाले, सबके द्वारा आदरणीय अर्थात् पूजित एवं अगाध जल को यह पयोष्णी नदी धारण करती है" ॥२९॥

राज्ञापि 'एवमेतत्—

महावराहाङ्गविनिर्गतायाः किमन्यदस्याः परतः पवित्रम्।
यदीयमालोकनमप्यघानि निहन्ति पुंसां चिरसञ्चितानि ॥३०॥

अन्वयः—महावराहाङ्गविनिर्गतायाः अस्याः परतः अन्यत् किं पवित्रम्, यदीयम् आलोकनम् अपि पुंसां चिरसञ्चितानि अघानि निहन्ति ॥३०॥

कल्याणी—महावराहेति। महावराहाङ्गविनिर्गतायाः—महावराहस्य=आदिवराहस्य, अङ्गात्=शरीरात्, विनिर्गतायाः=विनिःसृतायाः, अस्याः=पयोष्ण्याः, परतः=परम्, अन्यत्=अपरं, किं पवित्रं=किं पावनं; न किमपीत्यर्थः। यदीयं=यत्सम्बन्धि; आलोकनमपि=दर्शनमपि, पुंसां=नराणां, चिरसञ्चितानि=बहुकालसंगृहीतानि, अघानि=पापानि, निहन्ति=विनाशयति। उपेन्द्रवज्रा वृत्तम् ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—राजा भी—"यह (आपका कहना) ठीक ही है; (क्योंकि) आदिवराह अर्थात् वराहावतारधारी भगवान् विष्णु के शरीर से निःसृत हुई इस पयोष्णी नदी से पवित्र दूसरा और क्या हो सकता है ? जिसका दर्शन भी मनुष्यों के चिरकाल से सञ्चित पापों को विनष्ट कर देता है ॥३०॥

तदेष करोमि भवतामादेशम्' इत्यभिधाय यथाविधि स्नानाय सरिन्मध्यमवातरत् ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, एषः=अयम् अहं, भवतां=श्रीमताम्, आदेशम्=आज्ञां, करोमि=पालयामि, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, यथाविधि-स्नानाय=विधिमनतिक्रम्य स्नातुं, सरिन्मध्यमवातरत्=पयोष्णीं नदीं प्राविशत् ॥

ज्योत्स्ना--इसलिए आपलोगों के आदेश का यह (मैं) पालन कर रहा हूं।" इस प्रकार कह कर विधिपूर्वक स्नान करने के लिए नदी में उतर पड़ा ॥

अवतीर्य च मन्त्रमार्जनप्राणसंयमसन्ध्यासूक्तजपपितृतर्पणादिसमुचिताह्निकावसाने रक्तकमलगर्भमर्घ्याञ्जलिमुत्क्षिप्य भगवतो भास्करस्य स्तुतिमकरोत् ॥

कल्याणी—अवतीर्य चेति। अवतीर्य च=पयोष्णीमध्ये प्रविश्य च, मन्त्रमार्जनप्राणसंयमसन्ध्यासूक्तजपपितृतर्पणादिसमुचिताह्निकावसाने — मन्त्रमार्जनं=मन्त्रस्नानम्, प्राणसंयमः=प्राणायामः, सन्ध्या=सन्ध्यावन्दनं, सूक्तं=पुरुषसूक्तादि, जपः=मन्त्रजापः, पितृतर्पणं=पितृभ्यः जलाञ्जलिप्रदानम्, इत्यादिसमुचिताह्निकावसाने=मन्त्रमार्जनादिसकलदैनिककार्याणां यथाविधि समाप्तौ, रक्तकमलगर्भमर्घ्याञ्जलिं—रक्तकमलगर्भं=रक्तकमलोपेतम्, अर्घ्याञ्जलिम्=अर्घ्यम्, उत्क्षिप्य=दत्त्वा, भगवतः=देवस्य, भास्करस्य=सूर्यस्य, स्तुतिमकरोत्=स्तवनं चकार ॥

ज्योत्स्ना और (पयोष्णी नदी में) उतर कर मन्त्रों को पढ़ते हुए स्नान, प्राणायाम, सन्ध्या, पुरुषसूक्त आदि का पाठ, जप, पितरों का तर्पण इत्यादि दैनिक कार्यों को विधिपूर्वक सम्पन्न कर लेने के पश्चात् लाल कमल से समन्वित अर्घ्य प्रदान करते हुए भगवान् सूर्य की स्तुति किया ॥

जयति जगदेकचक्षुर्विश्वात्मा वेदमन्त्रमयमूर्तिः।
तरणिस्तरणतरण्डकमघपटलपयोनिधौ पुंसाम् ॥३१॥

अन्वयः—जगदेकचक्षुः विश्वात्मा, वेदमन्त्रमयमूर्तिः पुंसाम् अघपटलपयोनिधौ तरणतरण्डकं तरणिः जयति ॥३१॥

कल्याणी—जयतीति। जगदेकचक्षुः=संसारस्यैकमात्रनयनं, 'तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।'—शुक्लयजु० ३६।२४ इति श्रुतेः। विश्वात्मा=जगतो हृदयरूपः 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च'—ऋक् १।०११५।१, यजु०७।४२ इति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रुतेः । वेदमन्त्रमयमूर्तिः=वेदमन्त्रयुक्तस्वरूपः, त्रयीतनुरित्यर्थः । 'यदेतन्मण्डलं तपति तन्महदुक्थं ता ऋचः स ऋचां लोकोऽथ यदेतदर्चिर्दीप्यते तन्महाव्रतं तानि सामानि स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन् मण्डले पुरुषः सोऽग्निस्तानि यजूंषि स यजुषां लोकः'— शत०ब्रा०१०।५।२।१ इति श्रुतेः । पुंसां=नराणाम्, अघपटलपयोनिधौ— अघपटलं=पापपुञ्जः, स एव पयोनिधिः=समुद्रः तस्मिन्, तरणतरण्डकं—तरणाय= पारं गमनाय, तरण्डकं=नौकारूपः, तरणिः=सूर्यः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते । आर्या जातिः ॥३१॥

ज्योत्स्ना—समस्त संसार के एकमात्र नेत्रस्वरूप, अखिल विश्व के हृदय-स्वरूप, वेदमन्त्रों की साक्षात् आकृतिस्वरूप, पापपुञ्जरूपी समुद्र से मनुष्यों को पार करने के लिए नौकास्वरूप भगवान् सूर्य सर्वोत्कृष्ट हैं (अतः उनकी जय हो) ॥

विमर्श—भगवान् सूर्य को वेदमूर्त्ति कहा जाता है, उनका एक नाम 'त्रयीतनु' भी है । इसीलिए वेदों की स्तुति सूर्य को ही लक्ष्य कर की जाती है ॥३१॥

तदनु च चटुलचञ्चरीककुलाकुलितकमलकुड्मलगलद्बहलमकरन्दसुरभिततरङ्गमुत्पतत्कपिञ्जलं जलमवगाह्य चिरमुत्तीर्य तीरमापृच्छ्य मुनिजनमभिवाद्य च पुनः पुलिनपालिपर्यटनाय प्रस्थितः प्रणयादनुव्रजतो मुनन्निवर्तयन्निदमवादीत् ॥

कल्याणी—तदनु चेति । तदनु च=तदनन्तरं च, चटुलचञ्चरीककुलाकुलितकमलकुड्मलगलद्बहलमकरन्दसुरभिततरङ्गं—चटुलेन=चपलेन, चञ्चरीककुलेन= भ्रमरसमूहेन, आकुलितानि=व्याप्तानि, कमलानि=जलजानि, तेषां कुड्मलेभ्यः= कोरकेभ्यः, गलता=च्यवमानेन, बहलमकरन्देन=समधिकपुष्परसेन, सुरभिताः= सुगन्धिताः, तरङ्गाः=लहर्यः यस्य तथाविधम्, उत्पतत्कपिञ्जलम्—उत्पतन्तः= उड्डयन्तः, कपिञ्जलाः=पक्षिविशेषाः यस्मात्तादृशं, जलं=अम्भः, चिरं=बहुकालम्, अवगाह्य=निमज्य, तत्र चिरं स्नात्वेत्यर्थः । तीरमुत्तीर्य=तटमागत्य; मुनिजनं= मुनिवृन्दम्, आपृच्छ्य=पृष्ट्वा, तदनुज्ञां लब्ध्वेत्यर्थः । अभिवाद्य=नमस्कृत्य च, पुनः=भूयः, पुलिनपालिपर्यटनाय=तटप्रदेशे विहाराय, प्रस्थितः=प्रयातः, प्रणयात्= स्नेहात्, अनुव्रजतः=अनुगच्छतः, मुनीन्=तापसान्, निवर्तयन्=परावर्तयन्, इदं= वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=अवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—उसके बाद चञ्चल भ्रमरसमूहों से व्याप्त कमल-कुड्मलों से गिरते (टपकते) हुए समधिक पुष्परस से सुगन्धित लहरों वाले एवं उड़ते हुए कपिञ्जल नामक पक्षियों वाले जल में बहुत देर तक स्नान करने के पश्चात् तट

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर आकर मुनियों की आज्ञा लेकर और उन्हें नमस्कार कर पुनः तटप्रदेश पर विहार करने के लिए प्रयाण करते समय स्नेह के कारण पीछे-पीछे आते हुए मुनियों को वापस लौटाते हुए इस प्रकार बोला—

'चक्रधरं विषमाक्षं कृतमदकलराजहंससञ्चारम् ।
हरिहरविरञ्चिसदृशं भजत पयोष्णीतटं मुनयः' ॥३२॥

अन्वयः—हरिहरविरञ्चिसदृशं चक्रधरं विषमाक्षं कृतमदकलराजहंससञ्चारं पयोष्णीतटं मुनयः भजत ॥३२॥

कल्याणी—चक्रधरमिति । हरिहरविरञ्चिसदृशं=त्रिदेवसमं, चक्रधरं=चक्रवाकधरं, चक्रवाकपक्षिव्याप्तमिति यावत् । हरिपक्षे—चक्रधरं—चक्रं=सुदर्शनं धारयतीति तं तथोक्तम् । विषमाक्षं—विषमाः=अनुपमाः, अक्षाः=विभीतकाः वृक्षविशेषाः यत्र तम्, 'विभीतकः । नाऽक्षस्तुषः कर्षफलो भूतावासः कलिद्रुमः ॥'—इत्यमरः । हरपक्षे—विषमाक्षं—विषमाण्यक्षीणि यस्य स विषमाक्षस्तम्, त्रिनेत्रमित्यर्थः । कृतमदकलराजहंससञ्चारं—कृतः=विहितः, मदकलराजहंसानां=मत्तरम्यराजहंसपक्षिणां, सञ्चारो येन तथाविधम्, विरञ्चिपक्षे—कृतो मदकलराजहंसेन सञ्चारो येन तथाविधं, पयोष्णीतटं=पयोष्णीनदीकूलम्, हे ! मुनयः [यूयं] भजत=सेवध्वम् । श्लेषानुप्राणितोपमा । आर्या जातिः ॥३२॥

ज्योत्स्ना—हे मुनिजनों ! चक्र को धारण करने वाले भगवान् विष्णु के समान चक्रवाक पक्षी को धारण करने वाले अर्थात् चक्रवाक पक्षियों से व्याप्त, विषम नेत्रों वाले अर्थात् त्रिनेत्रधारी भगवान् शिव के समान विभीतक (रुद्राक्ष) नामक अनुपम वृक्षों वाले, प्रौढ़ एवं सुन्दर राजहंस को संचरण का साधन अर्थात् वाहन बनाये हुए भगवान् ब्रह्मा के समान मद से मत्त सुन्दर राजहंसों द्वारा संचरण किये जाते हुए पयोष्णी-तट का (आप लोग) सेवन करें ॥३२॥

एवमुक्तास्तेऽप्यार्द्रहृदयाः स्वल्पपरिचयेनाप्युपचितोचितप्रणयाः प्रियंवदतया प्रियमाशशंसुः ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, उक्ताः=कथिताः, तेऽपि=मुनयोऽपि, आर्द्रहृदयाः=आर्द्रचित्ताः, स्वल्पपरिचयेनापि=न्यूनकालपरिचयेनापि, उपचितोचितप्रणयाः—उपचितः=वृद्धिगतः, उचितः=योग्यः, प्रणयः=स्नेहः येषां ते तथोक्ताः, प्रियंवदतया=मधुरभाषितया, प्रियं=रुचिरम्, आशशंसु=आशिषं ददुः ॥

ज्योत्स्ना—(राजा द्वारा) इस प्रकार कहने पर स्निग्ध-हृदय एवं बहुत थोड़ा परिचय रहने पर भी प्रगाढ़ स्नेह रखने वाले (उन) मुनियों ने भी (अपने) मधुर वचनों द्वारा (राजा के लिए) प्रिय आशीर्वाद दिया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'सुगमस्तवास्तु पन्थाः क्षेमा दिग्देवताः शिवा शकुनाः ।
अभिलषितमर्थमचिरात्साधयतु भवानविघ्नेन' ॥३३॥

अन्वयः—तव पन्थाः सुगमः अस्तु, दिग्देवताः क्षेमाः (सन्तु), शकुनाः शिवाः (सन्तु), भवान् अभिलषितमर्थम् अचिरात् अविघ्नेन साधयतु ॥३३॥

कल्याणी—सुगम इति । तव=नलस्य, पन्थाः=मार्गः, सुगमोऽस्तु=सुकरो भवतु, दिग्देवताः=इन्द्रादयो दिक्पालाः, क्षेमाः=कल्याणकराः [सन्तु], शकुनाः=लक्षणानि, शिवाः=मङ्गलमयाः [सन्तु], भवान्=नलः, अभिलषितमर्थम्=अभीष्टार्थम्, अचिरात्=शीघ्रमेव, अविघ्नेन=विघ्नरहितेन, निर्बाधमित्यर्थः । साधयतु=प्राप्नोतु । आर्या जातिः ॥३३॥

ज्योत्स्ना—(हे राजन् !) आपका मार्ग सुगम हो, इन्द्रादि दिक्पाल (आपके लिए) कल्याणकारक हों, शकुन मंगलदायक हों, अभिलषित वस्तु को आप शीघ्र ही निर्विघ्न रूप से प्राप्त करें ॥३३॥

इत्यभिधाय व्यावृत्तेषु मुनिषु कौतुकादितस्ततः सञ्चरच्चटुलषट्चरणचक्रचुम्बनाकूततरलितपुष्पपरागपटलपांसुलिततरुतलेषु वहत्सुरभिशिशिरकोमलपवनेषु वनेषु, वनेचरमिथुनमन्मथक्रीडानुकूलेषु कूलेषु, पुलिन्दडिम्भकाध्यासितफलितबदरीषु दरीषु, पुञ्जितकुञ्जरेषु, निकुञ्जेषु, दुर्दर्शभानुषु सानुषु, सानुचरश्चरन्नेकस्मिन्नतिनिबिडसन्धिसन्निवेशे शिलान्तरालप्रदेशे, प्रियतममुद्दिश्य पठन्त्याः किन्नर्याः साश्चर्यमार्यागीतिमिममाशृणोत् ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, मुनिषु=मुनिवृन्देषु, व्यावृत्तेषु=निवृत्तेषु सत्सु, कौतुकात्=उत्कण्ठावशात्, इतस्ततः=परितः, सञ्चरच्चटुलषट्चरणचक्रचुम्बनाकूततरलितपुष्पपरागपटलपांसुलिततरुतलेषु—सञ्चरता=भ्रमता, चटुलेन=चपलेन, षट्चरणचक्रेण=मधुपमण्डलेन, चुम्बनाकूतात्=चुम्बनसंवेगात्, तरलितानां=कम्पितानां, पुष्पाणां=कुसुमानां, परागपटलेन=परागपुञ्जेन, पांसुलितं=धूलिधूसरितं, तरूणां=वृक्षाणां, तलानि=अधोभूमयः यत्र तेषु, वहत्सुरभिशिशिरकोमलपवनेषु—वहन्=चलन्, सुरभिः=सुवासितः, शिशिरः=शीतलः, कोमलः=मृदुः, पवनः=वायुः यत्र तेषु, वनेषु=विपिनेषु, वनेचरमिथुनमन्मथक्रीडानुकूलेषु—वनेचरमिथुनानां=शबरदम्पतीनां, मन्मथक्रीडानुकूलेषु=कामक्रीडायोग्येषु, कूलेषु=तटेषु, पुलिन्दडिम्भकाध्यासितफलितबदरीषु—पुलिन्दडिम्भकैः=किरातशिशुभिः, अध्यासिताः=अधिष्ठिताः, फलिता बदर्यः=बदरीवृक्षाः यत्र तथाविधासु, दरीषु=गुहासु, पुञ्जितकुञ्जरेषु—पुञ्जिताः=समवेताः, कुञ्जराः=गजाः यत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाविधेषु, निकुञ्जेषु=तरुपुञ्जेषु, दुर्दर्शभानुषु—दुर्दर्शः=दुःखेन द्रष्टुं शक्यः, भानुः=सूर्यः यत्र तथाविधेषु, सानुषु=पर्वतशिखरेषु, सानुचरः=सपरिजनः, [राजा नलः] चरन्=भ्रमन्, एकस्मिन्=कस्मिंश्चित्, अतिनिबिडसन्धिसन्निवेशे—अतिनिबिडः=अतिसंश्लिष्टः, सन्धिः=सन्धानं यस्य तादृशः, सन्निवेशः=अवस्थानं यस्य तथाविधे, शिलान्तरालप्रदेशे=शिलानां मध्यवर्तिनि स्थाने, प्रियतममुद्दिश्य=स्वप्रियतमं लक्ष्यीकृत्य, पठन्त्याः=गायन्त्याः, किन्नर्याः=किन्नरसुन्दर्याः; इमां=वक्ष्यमाणाम्, आर्यागीतिम्=आर्याभेदविशेषं छन्दः, साश्चर्यम्=आश्चर्येण सह, अशृणोत्=आकर्णयत् । अत्रेदमवधेयम्—····फलिता बदर्यो यास्विति दरीविशेषणम् । न चैवं 'नद्यृतश्च' इति कब् दुर्निवार इति वाच्यम्, समासान्तविधेरनित्यत्वादिति । 'वनेषु-वनेषु', 'कूलेषु-कूलेषु', 'दरीषु-दरीषु' इति यमकानि ।।

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहकर मुनियों के लौट जाने पर उत्कण्ठा के कारण इधर-उधर संचरण करते हुए चंचल भ्रमरसमूह के द्वारा (किये जा रहे) चुम्बन के वेग से कम्पित पुष्पों के पराग-पुंज से धूलि-धूसरित वृक्षतलों वाले; बहते हुए सुगन्धित, शीतल एवं कोमल (मन्द) पवन से समन्वित वनों वाले; शबरयुगलों की काम-क्रीड़ा के अनुकूल तटों वाले; शबर-शिशुओं से अधिष्ठित फलयुक्त बदरी-(बेर)-वृक्षों से समन्वित गुफाओं वाले, एकत्रित हुए हाथियों से युक्त निकुञ्जों वाले; अत्यन्त कष्ट से सूर्य को देखने लायक पर्वत-शिखरों वाले तट-प्रदेश में परिजनों के साथ भ्रमण करता हुआ (राजा नल) एक अत्यन्त सघन पर्वत-सन्धि वाले स्थान से समन्वित शिलाओं के मध्यवर्ती भाग में अपने प्रियतम को लक्ष्य कर पढ़ती (गान करती) हुई किन्नर-सुन्दरी की इस आर्या गीति को आश्चर्य के साथ सुना—

'विपिनोद्देशं सरसं केतकमकरन्दवासितवियत्ककुभम् ।
ग्राममिमं वा सर सङ्केतकमकरन्दवासितवियत्ककुभम्' ।।३४।।

अन्वयः—सरसं केतकमकरन्दवासितवियत्ककुभं विपिनोद्देशं वा सङ्केतकमकरन्दवासितवियत्ककुभम् इमं ग्रामं सर ।।३४।।

कल्याणी—विपिनेति । सरसं=सजलं, हरितमिति यावत् । केतकमकरन्दवासितवियत्ककुभं—केतकानां=केतकपुष्पाणां, मकरन्देन=पुष्परसेन, वासितं=सुगन्धमयं, वियत्=नभः, ककुभः=दिशश्च येन तथाभूतं, विपिनोद्देशं=काननप्रदेशम्, वा=अथवा, इमं=पुरोवर्तिनं, ग्रामं=वसतिं; सर=व्रज । कीदृशं ग्राममिति प्रतिपादयति—सङ्केतकमिति । [संकेतकम्-अकर-दवासितवियत्ककुभम्], संकेतयति=निवासयतीति संकेतकस्तम्, अनुकूलत्वान्निवासयोग्यमित्यर्थः । अकरम्—न विद्यते करः=राजग्राह्योंऽशः यत्रेत्यकरस्तम्, पर्वतीयत्वादनुकम्पावशाद्राज्ञा कराद्विमुक्तमिति भावः । दवासितम्—आसनमासितं सद्भाव इत्यर्थः, दवस्यासितात् वियन्तः=विश्लि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ष्यन्ता, ककुभाः=तरवः यत्र तम्। यद्वा न सिताः [√षिञ् बन्धने+क्तः]=सम्बद्धाः इत्यसिताः=असम्बद्धाः, वयः=पक्षिणः यत्र तथा यद् [√इण गतौ+लट्—शत्रादेशः] वहत्=प्रवहमानं, कं=जलं यस्यां सा चासौ कुश्च=पृथिवी च, तया भातीति तथोक्तम्। यमकालङ्कारः। आर्यागीतिः। तल्लक्षणं यथा—'आर्या प्राग्दलमन्तेऽधिक-गुरु तादृक् परार्धमार्यागीतिः।' अर्थाद्विषमे द्वादश मात्रास्तथा समे मात्राणां विंशतिः। इति ॥ ३४॥

ज्योत्स्ना—"सरस अर्थात् हरे-भरे, केतक (केवड़े) के पुष्परस (मकरन्द) से सुवासित आकाश एवं दिशाओं वाले इस अरण्य-प्रदेश को चलो अथवा निवास करने योग्य, कर (राजा द्वारा जनता से लिये जाने वाले शुल्करूप अंश) से रहित, जंगल से असम्बद्ध वृक्षों अथवा पक्षियों वाले और बहते हुए जल तथा (सुन्दर) भूभाग से सुशोभित इस गाँव को चलो।"

विमर्श—प्रकृत पद्य में कवि द्वारा की गई यमक अलङ्कार की योजना स्पृहणीय है। ३४॥

तदनु पुनस्तप्रतिवादिना किन्नरेण च पठ्यमानामिमामार्यामश्रौषीत् ॥

कल्याणी—तदिति। तदनु=तदनन्तरं, पुनः=भूयः, तत्प्रतिवादिना—तस्याः=किन्नर्याः, प्रतिवादिना=उत्तरवादिना, किन्नरेण=किम्पुरुषेण, पठ्यमानां=गीयमानाम्, इमां=वक्ष्यमाणाम्, आर्याम्, अश्रौषीत्=राजा नल आकर्णयत् ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् पुनः उस किन्नरसुन्दरी के प्रतिवादी किन्नर द्वारा पढ़ी (गायी) जाती हुई इस आर्या को (राजा ने) सुना—

'अजनि रजनिः किमन्यत्तरणिस्तरतीव पश्चिमपयोधौ।
घनतरुणि तरुणि विपिने क्वचिदस्मिन्नेव निवसामः' ॥३५॥

अन्वयः—तरुणि! रजनिः अजनि, किम् अन्यत्, तरणिः पश्चिमपयोधौ तरतीव। अस्मिन्नेव घनतरुणि विपिने क्वचित् निवसामः ॥३५॥

कल्याणी—अजनीति। हे तरुणि!=युवते! रजनिः=निशा, अजनि=जाता। किमन्यत्=किमपरम्, अधिकेन किमिति भावः। तरणिः=सूर्यः, पश्चिम-पयोधौ=पश्चिमसिन्धौ, तरतीव=तरणं करोतीव। अस्मिन्नेव=एतस्मिन्नेव, घन-तरुणि—घनाः=निबिड़ाः, तरवः=पादपाः यत्र तादृशे, विपिने=वने, [वयं] क्वचित्=कस्मिंश्चिद्रम्ये स्थाने, निवसामः=निवासं करिष्यामः। तरुणि-तरुणि' इति यमकम्। आर्या जातिः ॥३५॥

ज्योत्स्ना—हे तरुणि! रात हो चली है। अधिक क्या कहें, सूर्य पश्चिम समुद्र में तैरने-सा लगा है। (इसलिए) इसी घने वृक्षों वाले वन में किसी स्थान पर (हमलोग इस समय) निवास करें ॥३५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवमन्योन्यालापमाकर्ण्य किन्नरमिथुनस्य विस्मितो नरपतिः अहो माननीयमहिमोद्दामा दमयन्ती यस्याः परिचारिणः पक्षिणोऽपि श्रवणस्पृहणीयामेवंविधसुभाषितामृतमुचं वाचमुच्चारयन्ति ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=ईदृशं, किन्नरमिथुनस्य—किञ्चित्पक्ष्यश्वादिरूपमिश्रो नरः किन्नरः, तन्मिथुनस्य, अन्योन्यालापं=परस्परसंभाषम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, विस्मितः=आश्चर्यान्वितः, नरपति=भूपो नलः, अहो=आश्चर्यं, माननीयमहिमोद्दामा—माननीयेन=प्रशंसनीयेन, महिम्ना=माहात्म्येन, उद्दामा=उत्कृष्टा, दमयन्ती=भीमपुत्री, यस्याः=दमयन्त्याः, परिचारिणः=अनुचराः, पक्षिणोऽपि=खगाः अपि, किन्नराः अपीत्यर्थः, पक्षिरूपमिश्रत्वात् । श्रवणस्पृहणीयां=कर्णप्रियाम्, एवंविधसुभाषितामृतमुचम्=ईदृक्सूक्तिसुधावर्षिणीं, वाचं=वाणीम्, उच्चारयन्ति=कथयन्ति ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार की किन्नर-युगल की आपसी बातचीत को सुनकर आश्चर्यचकित राजा नल (विचार करने लगा कि) "अहो ! (अपनी) प्रशंसनीय महिमा के कारण दमयन्ती अत्यन्त उत्कृष्ट है, जिसके परिचारक पक्षीगण अर्थात् किन्नरगण भी कानों को प्रिय लगने वाली इस प्रकार की सूक्तिरूपी सुधा की वर्षा करने वाली वाणी बोलते हैं ॥

प्रथममिह तावदाभिजात्यवित्तविद्याविवेकविभवैरनाकुले कुले जन्म ततोऽप्यनुरूपरूपसम्पत्तिस्तदनु श्लाघानुगुणगुणलाभस्ततोऽपि च शुचिविदग्धस्निग्धपरिजनावाप्तिरिति महती भाग्यपरम्परा' इति चिन्तयन्ननतिदूरवर्त्तिनः पुष्कराक्षकस्य मुखमवलोकयाञ्चकार ॥

कल्याणी – प्रथममिहेति । प्रथमं=प्रथमतः, तावत्, इह=अत्र, आभिजात्यवित्तविद्याविवेकविभवैः—आभिजात्यं=कौलीन्यं, वित्तं=धनं, विद्या=शिक्षा, विवेकः=कर्त्तव्याकर्त्तव्यज्ञानं, विभवश्च=ऐश्वर्यश्च तैः, अनाकुले=आभिजात्यादिहेतुकाहंकारकृतवैक्लव्यरहिते, कुले=अन्वये, जन्म=उत्पत्तिः, दमयन्त्या इति भावः । ततोऽपि=परतोऽपि, अनुरूपरूपसम्पत्तिः=वंशानुकूलरूपसम्पत्तिः, तदनु=ततःपरं, श्लाघानुगुणगुणलाभः=प्रशंसोचितगुणप्राप्तिः, ततोऽपि च=तदनन्तरमपि च, शुचिविदग्धस्निग्धपरिजनावाप्तिः—शुचयः=निश्छलाः, विदग्धाः=बुद्धिमन्तः, स्निग्धाः=स्नेहशीलाः, ये परिजनाः=अनुचराः, तेषाम् अवाप्तिः=लाभः, इति=एवं, महती=विशाला, भाग्यपरम्परा=सौभाग्यशृङ्खला' इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, अनतिदूरवर्त्तिनः=समीपस्थस्य, पुष्कराक्षस्य=दमयन्तीवार्त्तिकस्य, मुखम्=आननम्, अवलोकयाञ्चकार=अपश्यत्, किंनरमिथुनस्याभिमुखीकरणार्थमिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—प्रथमतः तो यहाँ कुलीनता, सम्पत्ति, विद्या, विवेक (कर्त्तव्या-कर्तव्य-ज्ञान) और ऐश्वर्य से समन्वित होते हुए भी अभिमानरहित कुल में जन्म; इसके अतिरिक्त कुल के अनुरूप ही रूपसम्पदा, इसके अतिरिक्त प्रशंसा के योग्य गुणों की प्राप्ति और उसके बाद भी निश्छल, बुद्धिमान एवं स्नेह से परिपूर्ण परिजनों की उपलब्धि—इस प्रकार (दमयन्ती की) यह बहुत बड़ी सौभाग्य-शृंखला है।" इस प्रकार विचार करते हुए समीप में ही स्थित पुष्कराक्ष के मुख की ओर देखा ॥

पुष्कराक्षोऽपि पुरःसृत्य तं किन्नरमभाषत ॥

कल्याणी—पुष्कराक्ष इति । पुष्कराक्षोऽपि=तन्नामकवार्तिकोऽपि, पुरःसृत्य=पुरःसरो भूत्वा, तं=पूर्वोक्तं, किंनरं=किम्पुरुषम्, अभाषत=अवोचत ॥

ज्योत्स्ना—पुष्कराक्ष भी आगे बढ़कर उस किन्नर से बोला—

'सुन्दरक ! कान्तामुखावलोकनासक्तः समीपमागतानप्यस्मान्न पश्यसि । तदितो दत्तदृष्टिर्भव ॥

कल्याणी—सुन्दरकेति । सुन्दरक !—सुन्दरको नाम किन्नरस्तत्सम्बुद्धौ हे सुन्दरक !, कान्तामुखावलोकनासक्तः—कान्तायाः=प्रियायाः, मुखस्य=आननस्य, अवलोकने=दर्शने, आसक्तः=तत्परः, समीपं=पार्श्वम्, आगतानपि=आयातानपि, अस्मान्न पश्यसि=नावलोकयसि, तत्=तस्मात्, इतो दत्तदृष्टिः=प्रदत्तचक्षुः भव, इतः पश्येत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—"हे सुन्दरक ! (अपनी) प्रिया के मुख को देखने में आसक्त (तल्लीन) होकर समीप आये हुए भी हमलोगों (तुम) को नहीं देख रहे हो ? इसलिए थोड़ा इधर देखो—

स एष निषधेश्वरः कुसुमचापचक्रं विना
प्रसादितमहेश्वरः स्मर इवागतो मूर्तिमान् ।
विलोकय विलोचनामृतसमुद्रमेनं नृपं
विधेहि नयनोत्सवं कुरु कृतार्थतामात्मनः ॥३६॥

अन्वयः—सः एषः निषधेश्वरः कुसुमचापचक्रं विना मूर्तिमान् प्रसादित-महेश्वरः स्मरः इव आगतः, विलोचनामृतसमुद्रम् एनं नृपं विलोकय नयनोत्सवं विधेहि, आत्मनः कृतार्थतां कुरु ॥३६॥

कल्याणी—स एष इति । सः=असौः, एषः=अयं, निषधेश्वरः=नलः, कुसुमचापचक्रं विना—कुसुमानि=पुष्पाणि, त एव चापचक्रं=धनुर्मण्डलं, तद्विना, मूर्तिमान्=साकारः, प्रसादितमहेश्वरः—प्रसादितः=प्रसन्नीकृतः, महेश्वरः=शिवः येन सः, स्मरः=काम इव, आगतः=संप्राप्तः । विलोचनामृतसमुद्रं—विलोचनाभ्यां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नेत्राभ्याम्, अमृतसमुद्रं=सुधासागरं, नेत्रानन्दकरमित्यर्थः। एनम्=इमं, नृपं=राजानं, विलोकय=अवलोकय, नयनोत्सवं=नेत्रोत्सवं, विधेहि=कुरु, आत्मनः=स्वस्य, कृतार्थतां=कृतकृत्यतां, कुरु=विधेहि। पूर्वस्मरः कुसुमचापचक्रं धत्ते। न च मूर्तिमान् तथा प्रकोपितमहेश्वरः। तदुपमेयभूतस्य नलस्य उपमानभूतस्मरादाधिक्याभिधानाद् व्यतिरेकालङ्कारः। कुसुमचापचक्रराहित्यं प्रसादितमहेश्वरत्वं मूर्त्तिमत्त्वं चेत्युपमेयगतोत्कर्षे हेतुत्रयमुक्तम्। इवशब्दप्रतिपादनाच्च शाब्दं साम्यमित्यवगन्तव्यम्। पृथ्वी वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः।' इति ॥३६॥

ज्योत्स्ना—पुष्परूपी धनुर्मण्डल के विना ही भगवान् शिव को प्रसन्न करने वाले साकार कामदेव के समान यह वही निषधराज नल आये हैं। आँखों के लिए सुधा-सागर अर्थात् आँखों को आनन्द प्रदान करने वाले इन राजा को देखो, नेत्रोत्सव करो (मनाओ) और अपने-आपको कृतकृत्य करो ॥

विमर्श—यहाँ कामदेव की अपेक्षा राजा नल को उत्कृष्ट बताया गया है ॥३६॥

त्वमपि विहङ्गवागुरे परमरहस्यसखी देव्याः सा हि त्वच्चक्षुषा पश्यति, त्वत्कर्णाभ्यामाकर्णयति, त्वन्मनसा मनुते ॥

कल्याणी—त्वमिति। हे विहङ्गवागुरे !=अयि पक्षिमोहिके !, किन्नर्याः सम्बोधनमिदम्। त्वमपि=भवत्यपि, देव्याः=दमयन्तीजनन्याः, परमरहस्यसखी=अभिन्नहृदया सखीत्यर्थः। सा हि=देवी हि, त्वच्चक्षुषा=त्वन्नेत्रेण, पश्यति=विलोकयति, त्वत्कर्णाभ्यां=तव श्रोत्राभ्याम्, आकर्णयति=शृणोति, त्वन्मनसा=त्वच्चित्तेन, मनुते=अवबुध्यते। त्वद्दृष्टे त्वच्छ्रुते त्वन्मते चैव विश्वसितीति भावः ॥

ज्योत्स्ना—हे पक्षिमोहिके ! तुम देवी (दमयन्ती के माता) की अभिन्नहृदया सखी हो, क्योंकि वह देवी तुम्हारे आँखों के द्वारा ही देखती हैं, तुम्हारे कानों से ही सुनती हैं और तुम्हारे मन से ही जानती हैं।

आशय यह है कि दमयन्ती की माता तुम्हारे द्वारा देखने, तुम्हारे द्वारा सुनने और तुम्हारे द्वारा मानने पर ही विश्वाश करती हैं ॥

तदिह दमयन्तीमनोरथपान्थपिपासाच्छिदि लावण्यपुण्यह्रदेऽस्मिन् राजनि निर्वापय चक्षुः' इति किन्नरमिथुनमभिमुखीकृत्य नरपतिमवादीत् ॥

कल्यवाणी—तदिति। तत्=तस्मात्, इह=अस्मिन्, दमयन्तीमनोरथपान्थपिपासाच्छिदि—दमयन्त्याः=भीमपुत्र्याः, मनोरथ एव पान्थः=पथिकः, तस्य पिपासाच्छिदि=तृष्णाप्रशामके, लावण्यपुण्यह्रदे=सौन्दर्यस्य पवित्रसरोवरे, अस्मिन्=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतस्मिन्, राजनि=नले, चक्षुः=नेत्रं, निर्वापय=तर्पय। इति=एवं; किंनरमिथुनं=किम्पुरुषयुगलम्, अभिमुखीकृत्य=राज्ञः पुरः प्रस्तुत्य, नरपतिं=राजानम्, अवादीत्=अवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए दमयन्ती के मनोरथरूपी पथिक की पिपासा का शमन करने वाले, सौन्दर्य के पवित्र सरोवर-सदृश इस राजा नल में अपनी आँखें तृप्त करो। इस प्रकार (कहते हुए) किन्नरयुगल को (राजा के) सामने प्रस्तुत कर राजा से बोला —

'देव ! तदेतत्किन्नरमिथुनम्, इदं हि द्वितीयमिव हृदयं देव्याः, प्रियं प्राणेभ्योऽपि प्रेम्णा प्राभृतमेतत्प्रहितं तुहिनाचलचक्रवर्तिना देवस्य, देवेन देव्यै दत्तम्। तया च दमयन्त्याः समर्पितं परं पात्रं मन्त्रगीतेः ॥

कल्याणी—देवेति। हे देव !=स्वामिन् ! तत् एतत्=असौ, किन्नरमिथुनं=किम्पुरुषयुगलम्। इदं हि=एतद्धि, देव्याः=दमयन्तीजनन्याः, द्वितीयमिव=अपरमिव, हृदयं=चेतः, प्राणेभ्योऽपि प्रियम्=अतीवप्रियमित्यर्थः। तुहिनाचलचक्रवर्तिना—तुहिनाचलस्य=हिमालयस्य, चक्रवर्तिना=राज्ञा, प्रेम्णा=प्रीत्या, देवस्य=महाराजस्य भीमस्य, एतत्=इदं किंनरमिथुनं, प्राभृतम्=उपढौकनं, प्रहितं=प्रेषितम्, देवेन=महाराजेन भीमेन, देव्यै=दमयन्तीजनन्यै प्रियङ्गुमञ्जर्यै, दत्तम्=अर्पितम्। तया च=प्रियङ्गुमञ्जर्या च, दमयन्त्याः समर्पितम्। मन्त्रगीतेः—मन्त्राः गीयन्तेऽस्यामिति तस्याः मन्त्रगीतेः, परमपात्रं—परमम्=उत्कृष्टं, पात्रं=भाजनं, मन्त्रगीतिविशारदमित्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—हे प्रभो ! यही वह किन्नरयुगल है; यह महारानी (दमयन्तीजननी) के लिए द्वितीय हृदय के समान है। हिमालय के चक्रवर्ती राजा के द्वारा (अपने) प्राणों से भी प्रिय इस किन्नरयुगल को प्रेम के साथ महाराज भीम के लिए उपहार के रूप में भेजा गया था, जो कि महाराज द्वारा यह महारानी प्रियंगुमञ्जरी के लिए दे दिया गया और महारानी ने इसे दमयन्ती के लिए समर्पित कर दिया, ये गुप्त मन्त्रणा के लिए उत्तम पात्र अर्थात् सर्वथा योग्य हैं ॥

तथाहि—जातख्याति जातिषु, गीतयशो गीतकेषु, वर्धितमानं वर्धमानेषु, सारमासारितकेषु, निपुणं पाणिकासु, धाम साम्नाम्, आचार्यकमृचाम्, आलयः कलादिभेदानाम्, रसगीत्यामपि सुस्वरं स्वरालापेषु, अवग्राम्यं ग्रामरागेषु, विचित्रभाषं भाषासु, प्रवर्तकं नर्तनानाम्, कारणं करणमार्गस्य, वाद्येष्वपि प्रवीणं वीणावेणुषु, लब्धपाटवं पटहेषु, अप्रतिमल्लं झल्लरीषु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—जातेति । जातिषु—जातयः=नन्दयन्तीप्रभृतयः तासु, जातख्यातिः—जाता=सञ्जाता, ख्यातिः=प्रसिद्धिः यस्य तत्, गीतकेषु=गीतक्रमेषु, गीतयशः—गीतं=बहुवर्णितं, यशः=कीर्तिः यस्य तत्, वर्धमानेषु=गीतविषयविशेषेषु, वर्धितमानं—वर्धितः=वृद्धिं नीतः, मानः=प्रतिष्ठा येन तत्, आसारितकेषु=गीतविषयविशेषेषु, सारं=सर्वश्रेष्ठम्, पाणिकाषु=गीतविषयविशेषेषु, निपुणं=कुशलम्, साम्नां=सामवेदानां, धाम=गृहम्, ऋचां=मन्त्राणाम्, आचार्यकम्=आचार्यकल्पम्, कलादिभेदानाम् आलयः=सदनम्, रसगीत्यामपि=रसगानप्रसङ्गेऽपि, स्वरालापेषु=मध्यमादिसप्तस्वरकथनेषु, सुस्वरं—सुष्ठु स्वरो यस्य तथाविधम्, ग्रामरागेषु=स्वरक्रमरागेषु, अवग्राम्यं=निपुणम्, भाषासु=षट्त्रिंशद्भाषासु, विचित्रभाषं=लब्धविचित्रवक्तृत्वम्, नर्तनानाम्=अनेकनृत्यप्रकाराणां, प्रवर्तकम्=आविष्कारकं, करणमार्गस्य—करणानि=तलपुष्पपुटादीन्यष्टोत्तरशतसंख्यानि, तेषां मार्गस्य=पद्धतेः, कारणं=जननात्मको हेतुः, वीणावेणुषु वाद्येष्वपि=वादनयन्त्रेष्वपि, प्रवीणं=निपुणं, पटहेषु—पटहाः=आनकाः वाद्यविशेषास्तेषु लब्धपाटवं - लब्धं=प्राप्तं, पाटवं=नैपुण्यं येन तत्तथाभूतम्, झल्लरीषु=झर्झरेषु वाद्यविशेषेषु, अप्रतिमल्लं—न प्रतिमल्लः=प्रतिद्वन्द्वी यस्य तत्, अद्वितीयमित्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—यह किन्नरयुगल नन्दयन्ती आदि जातियों में प्रसिद्धि-प्राप्त, गीत-प्रसङ्ग में बहुचर्चित कीर्ति वाला, वर्धमान में महती प्रतिष्ठा वाला, आसारितक में सर्वश्रेष्ठ, पाणिक में निपुण, साम के धामस्वरूप अर्थात् साम के गायन में प्रशंसनीय स्थान वाला, ऋचाओं के आचार्यस्वरूप, कलादि भेदों के आगारस्वरूप, रसगान के प्रसंग में भी स्वरालाप करने वालों में उत्कृष्ट स्वर वाला, ग्रामरागों में निपुण, नानाविध भाषाओं में विचित्र वक्तृत्व शक्ति से सम्पन्न, नृत्यप्रकारों का प्रवर्तक, (तल-पुष्पपुटी आदि एक सौ आठ)-करण पद्धति का कारण अर्थात् उत्पन्न करने वाला, वीणा-वेणु आदि वाद्यों में प्रवीण, पटहनामक वाद्यविशेष को बजाने में प्राप्त पटुता वाला और झाल बजाने में अद्वितीय है ॥

विमर्श—गीत में वर्धमान, आसारितक, पाणिक, साम, ऋक और कला—ये सात विषय; षड्ज, मध्यम और गान्धार—ये तीन स्वर तथा तल, पुष्प, तटी आदि एक सौ आठ करण होते हैं ॥

किंबहुना—

कालमिव कलाबहुलं सर्वरसानुप्रवेशि लवणमिव ।
तव नृप सेवां कर्तुं किन्नरयुगलं तया प्रहितम् ॥३७॥

अन्वयः—कालम् इव कलाबहुलम्, लवणम् इव सर्वरसानुप्रवेशि, किन्नरयुगलं हे नृप ! तया तव सेवां कर्तुं प्रहितम् ॥३७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—कालमिति । कलाः=गीतवाद्याद्याः मुहूर्तभेदाश्च विदन्ति अधीयते वा काला: कलाविदः ['तदधीते तद्वेद' इत्यण्] कालानां समूहः कालम्, कालशब्दात्समूहेऽर्थे 'तस्य समूहः' इत्यण् । समूहप्रत्ययान्तानां नपुंसकत्वं लोकात् । कालमिव=मुहूर्तविद्यायाः विद्वत्समुदायमिव, कलाबहुलं—कला-पलादिज्ञजनो यथा तच्छास्त्रविषये बहुलं=तन्निष्ठं भवति तथेदमपि सकलकलाप्रवीणम् । समयार्थे तु कालशब्दे पुंस्त्वं दुर्निवारम् । 'काल इव कलाबहुलम्' इति पाठे यथा कालः कलाभिः=निमेषोन्मेषोन्मेषाद्यंशरूपाभिः, बहुलः=व्याप्तः, तथेदं किन्नरमिथुनं कलाभिः=गीतनृत्यादिभिः, बहुलं=व्याप्तमित्यर्थः । लवणमिव सर्वरसानुप्रवेशि—सर्वरसाः=शृङ्गारादयस्तिक्ताद्याश्च, तत्र अनुप्रवेशः=गतिः अस्त्यस्येति तत्तथोक्तम् । किन्नरयुगलं=किन्नरमिथुनं, हे नृप !=राजन् ! तया=दमयन्त्या, तव=ते, सेवां=सपर्यां, कर्त्तुं=विधातुं, प्रहितं=प्रेषितम् । श्लेषानुप्राणितोपमा । आर्या जातिः ॥३७॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; कला-पल आदि को जानने वाले कलाबहुल काल अर्थात् ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाताओं के समान समस्त कलाओं में प्रवीण तथा कटु, अम्ल, तिक्त आदि सभी रसों में अपनी गति रखने वाले लवण के समान यह किन्नरयुगल भी शृंगार आदि समस्त रसों में गति रखने वाला है । हे राजन् ! उस दमयन्ती के द्वारा तुम्हारी सेवा करने के लिए इन्हें भेजा गया है ॥३७॥

'तदेतदात्मपरिग्रहेणानुगृह्यताम्' इत्यभिधाय विश्रान्तवाचि तस्मिन्स किन्नरयुवा किमप्युपसृत्य मृगमदमिलन्मलयजरसोल्लासिलेखालाञ्छितललाटपट्टार्पितकरकमलमुकुलं प्रणतिप्रेङ्खितमणिकर्णावतंसया सह प्रियया प्रणाममकरोत् ॥

कल्याणी—तदेतदिति । तत्=तस्मात्, एतत्=किन्नरमिथुनम्, आत्मपरिग्रहेण=स्वसंरक्षणेन, अनुगृह्यताम्=अनुगृहीतं क्रियताम्, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तस्मिन्=पुष्कराक्षे, विश्रान्तवाचि=विरतवचसि सति, स किन्नरयुवा=किम्पुरुषतरुणः, किमपि=किञ्चिदपि, उपसृत्य=समीपं गत्वा, मृगमदमिलन्मलयजरसोल्लासिलेखालाञ्छितललाटपट्टार्पितकरकमलमुकुलं — मृगमदमिलन्मलयजरसेन=कस्तूरीमिश्रितचन्दनरसेन, उल्लासिनी=मनोहरा, या लेखा=तिलकरेखा, तया लाञ्छिते=अङ्किते, ललाटपट्टे=भालपटले, अर्पितं=न्यस्तं, करकमलमुकुलं=कमलकलिकोपमकराञ्जलिः यत्र तद्यथा स्यात्तथा, प्रणतिप्रेङ्खितमणिकर्णावतंसया—प्रणत्या=नम्रतया, प्रेङ्खितं=दोलितं, मणिकर्णावतंसं=मणिमयकर्णभूषणं यस्यास्तया, प्रियया सह=प्रेयस्याः समं, प्रणाममकरोत्=राजानं प्रणनाम ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस किन्नरयुगल को अपना संरक्षण प्रदान कर (इन्हें) अनुग्रहीत करें ।" इस प्रकार कहकर उस पुष्कराक्ष के मौन हो जाने पर वह किन्नर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युवक कुछ आगे बढ़कर अर्थात् राजा के समीप जाकर कस्तूरीमिश्रित चन्दनरस के कारण मनोहर तिलकरेखा से अंकित ललाटपट्ट पर (अपने) मुकुलित करकमलों को रखकर, नम्रता के कारण दोलायमान (हिलते हुए) मणिमय कर्णाभूषणों से अलंकृत (अपनी) प्रिया के साथ (राजा को) प्रणाम किया ॥

उक्तवांश्च—

लब्धार्धचन्द्र ईशः कृतकंसभयं च पौरुषं विष्णोः ।
ब्रह्मापि नाभिजातः केनोपमिमीमहे नृप भवन्तम् ॥३८॥

अन्वयः—नृप ! ईशः लब्धार्धचन्द्रः । विष्णोः पौरुषं च कृतकंसभयम्, ब्रह्मा अपि नाभिजातः । (तत्) भवन्तं केन उपमिमीमहे ॥३८॥

कल्याणी—लब्धेति । हे नृप !=राजन् !, ईशः=शिवः, लब्धार्धचन्द्रः—लब्धोऽर्धं चन्द्रस्य अर्धचन्द्रो येन स तथाविधः, अथ च लब्धः=प्राप्तः, अर्धचन्द्रः=गलापहस्तनं येन स तथोक्तः [एतेन निन्दा व्यज्यते] । विष्णोः पौरुषं=पराक्रमः, कृतकंसभयं—कृतं कंसस्य भयं येन तत्तथाविधम्, अथ च [कृतकं-सभयं च]-कृतकं=कृत्रिमं, सभयं च=भयान्वितञ्च [एतेन विष्णोर्निन्दा व्यज्यते] । ब्रह्मा अपि=विधातापि, नाभिजातः=विष्णोर्नाभेर्जातः, अथ च न+अभिजातः=न कुलीनः [एतेन ब्रह्मणो निन्दा सूच्यते] । तद् भवन्तं=नृपं नलं, केन=त्रिदेवातिरिक्तेनापरेण केन पुरुषेण, उपमिमीमहे=उपमां ददामहे । अत्रेशादीनामुपमानानामुपमेयान्नलान्निकर्षाभिधानाद् व्यतिरेकालङ्कारः । तत्रार्धचन्द्रत्वादीन्युपमानगतानि निकर्षकारणानि श्लेषमूलकान्युक्तानीत्यवगन्तव्यम् । आर्या जातिः ॥३८॥

ज्योत्स्ना - और बोला—"हे राजन् ! ईश अर्थात् भगवान् शंकर अर्धचन्द्र अर्थात् गलहस्त धारण किये हुए हैं, विष्णु का पराक्रम भी कृतक अर्थात् बनावटी और भय से युक्त है, ब्रह्मा भी नाभिजात अर्थात् अकुलीन हैं, (इस प्रकार तीनों ही निन्दनीय हैं), अतः आपकी उपमा किससे दूँ ?

विमर्श—यहाँ भगवान् शंकर, विष्णु और ब्रह्मा के लिए प्रयुक्त विशेषण अर्थान्तर से उनके निन्दनीय स्वरूप को अभिव्यक्त करते हैं, परन्तु उन विशेषणों के स्वाभाविक अर्थ से उन देवताओं की विशिष्टता को ही वे प्रदर्शित करते हैं; जैसे कि शंकर अर्धचन्द्र अर्थात् चन्द्रमा के अर्धांश को धारण करने वाले हैं; विष्णु कृत-कंसभय अर्थात् कंस में भय उत्पन्न करने वाले हैं और ब्रह्मा भी विष्णु की नाभि से समुद्भूत हैं । लेकिन यहाँ कवि को निन्दित अर्थ का ग्रहण करना ही अभीष्ट है; क्योंकि उसका उद्देश्य त्रिदेवों की अपेक्षा राजा नल को विशिष्ट दर्शाना है ।

कवि का आशय यह है कि गलहस्त (बलात् गले में हाथ लगाकर निकाल दिया जाना) होने के कारण भगवान् शिव अप्रमानित हैं और आप सम्मानित हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विष्णु का पराक्रम कृत्रिम और भययुक्त है, जबकि आपका पराक्रम स्वाभाविक है और आप सर्वथा निर्भीक हैं; साथ ही ब्रह्मा भी निन्दित कुल वाले हैं लेकिन आप अभिजात अर्थात् कुलीन हैं। इस प्रकार त्रिदेवों से भी विशिष्ट होने के कारण आपका उपमान मैं किसे बनाऊँ ? ॥३८॥

इदं च—

अरुणमणिकिरणरञ्जितलिखिताक्षरमङ्गुलीयकाभरणम् ।
तस्याः करकिसलयमिव तव करकमले चिरं लगतु ॥३९॥

अन्वयः—तस्याः करकिसलयमिव अरुणमणिकिरणरञ्जितलिखिताक्षरम् अङ्गुलीयकाभरणं तव करकमलं चिरं लगतु ॥३९॥

कल्याणी—अरुणेति । तस्याः=दमयन्त्याः, करकिसलयमिव=पाणिपल्लवमिव, अरुणमणिकिरणरञ्जितलिखिताक्षरम्—अरुणमणेः=पद्मरागादेः, किरणैः=कान्तिभिः, रञ्जितं=रक्तवर्णीकृतं, तथा लिखितानि=उत्कीर्णानि, अक्षराणि=दमयन्तीति नामाक्षराणि यस्मिंस्तथाविधम्, इदम्=एतत्, अङ्गुलीयकाभरणम्, करकिसलयपक्षे – मणिकिरणैः=आभरणरत्नकान्तिभिः, रञ्जितं=कलितं, तथा विद्याभ्यासकाले लिखितान्यक्षराणि येन तत्तथाविधम्, तव=भवतः, करकमले=पाणिपल्लवे, चिरं=बहुकालं, लगतु=अवलग्नं भवतु। अनयाशिषा पाणिग्रहणं सूचितम् । श्लेषमूलोपमा । आर्या जातिः ॥३९॥

ज्योत्स्ना—और यह—पद्मराग आदि मणियों की किरणों से रञ्जित अर्थात् रक्त वर्ण वाले तथा 'दमयन्ती' इस नाम के उत्कीर्ण (खुदे हुए) अक्षरों वाली अँगूठी से युक्त करकिसलय के समान आभूषणस्वरूप मणियों की कान्ति से रंजित और विद्याभ्यासकाल में असंख्य अक्षरों को लिखने वाला दमयन्ती का करकिसलय चिरकाल तक आपके करकमलों से संलग्न रहे।

आशय यह है कि आप दमयन्ती का पाणिग्रहण कर बहुत समय तक उसके साथ विहार करें ॥३९॥

अनया च—

तव सुभग रम्यदशया तयेव रक्तान्तनेत्रमण्डनया ।
चीनांशुकयुगलिकया क्रियतामङ्गे परिष्वङ्गः ॥४०॥

अन्वयः—सुभग ! तथा इव अनया रम्यदशया रक्तान्तनेत्रमण्डनया चीनांशुकयुगलिकया तव अङ्गे परिष्वङ्गः क्रियताम् ॥४०॥

कल्याणी—तवेति । हे सुभग !=सौभाग्यशालिन् ! तया इव=दमयन्त्येव, अनया=एतया, रम्यदशया—रम्या=रमणीया, दशा=वस्त्रान्तसूत्रं, पक्षे—अवस्था यस्यास्तया, तथा रक्तान्तनेत्रमण्डनया—रक्तान्तं=अरुणप्रान्तम्, नेत्रं=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्रवस्त्रविशेषः, मण्डनं=भूषणं यस्यास्तया, दमयन्तीपक्षे—रक्तान्तं=शोणित-प्रान्तभागं, नेत्रम्=अक्षि, मण्डनं=अलङ्करणं यस्यास्तया, चीनांशुकयुगलिकया=सूक्ष्मवस्त्रयुग्मिकया, तव=भवतः, अङ्गे=शरीरे, परिष्वङ्गः=आलिङ्गनं, क्रियतां=विधीयताम् । श्लेषानुप्राणितोपमा । आर्या जातिः ॥४०॥

ज्योत्स्ना—हे सौभाग्यशालिन् ! रमणीय अवस्था वाली तथा रक्त वर्ण के प्रान्त भाग वाले नेत्रों से अलंकृत उस दमयन्ती के समान ही रमणीय किनारों वाली तथा अन्त में लाल रंग के चित्रवस्त्रों से अलंकृत महीन शिल्क वस्त्रों की यह जोड़ी भी आपके अंगों का आलिङ्गन करे ॥४०॥

अयं च—

उज्ज्वलसुवर्णपदकस्तस्याः संदेशकथनदूत इव ।
रुचिरमणिकर्णपूरः श्रयतु श्रवणान्तिकं भवतः ॥४१॥

अन्वयः - तस्याः सन्देशकथनदूत इव अयम् उज्ज्वलसुवर्णपदकः रुचिरमणि-कर्णपूरः भवतः श्रवणान्तिकं श्रयतु ॥४१॥

कल्याणी—उज्ज्वलेति । तस्याः=दमयन्त्याः, सन्देशकथनदूत इव=सन्देशहर इव, अयम्=एषः, उज्ज्वलसुवर्णपदकः—उज्ज्वलं=कान्तिमत्, सुवर्णं=काञ्चनं, पदं=कारणं यस्य स तथोक्तः, कान्तिमत्सुवर्णनिर्मित इत्यर्थः । दूतपक्षे—उज्ज्वलानि=अग्राम्याणि, सुवर्णानि=शोभनाक्षराणि, पदानि=वचनानि यस्य सः, रुचिरमणि-कर्णपूरः=मनोज्ञमणिखचितकर्णावतंसः, भवतः=तव, श्रवणान्तिकं=कर्णप्रदेशसामीप्यं, श्रयतु=सेवताम्, तव कर्णप्रान्तं भूषयत्विति भावः । सन्देशहरोऽपि कर्णसमीपं गत्वा प्रियशोभनवर्णानि वचनानि वदति । श्लेषानुप्राणितोपमा । आर्या जातिः ॥४१॥

ज्योत्स्ना—उस दमयन्ती के उज्ज्वल अर्थात् सुसंस्कृत सुन्दर वर्णों से समन्वित पदों अर्थात् वचनों को (स्वामी के) कानों के समीप जाकर बोलने वाले सन्देशवाहक के समान ही उज्ज्वल अर्थात् कान्तिमान सुवर्ण से निर्मित और मनोज्ञ मणियों से खचित यह कर्णाभूषण भी आपके कानों की समीपता प्राप्त करे अर्थात् आपके कानों में सुशोभित हो ॥४१॥

किञ्चान्यत् -

आनन्ददायिनस्ते कुण्डिननगरे कदा भविष्यन्ति ।
त्वन्मुखकमलविलोलन्नागरिकानयनषट्पदा दिवसाः ॥४२॥

अन्वयः— कुण्डिननगरे त्वन्मुखकमलविलोलन्नागरिकानयनषट्पदाः आनन्दा-यिनः ते दिवसाः कदा भविष्यन्ति ॥४२॥

कल्याणी—आनन्देति । कुण्डिननगरे=कुण्डिनपुरे, त्वन्मुखकमलविलो-लन्नागरिकानयनषट्पदाः—तव=भवतः, मुखमेव कमलं=पद्मं, तत्र विलोलन्तः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ्रमन्तः, नागरिकाणां — नागर्य एव नागरिकाः=पौराङ्गनाः, तासां नयनानि=नेत्राण्येव षट्पदाः=भ्रमराः येषु तथाविधाः, आनन्ददायिनः=सुखदायिनः, ते दिवसाः=दिनानि, कदा=कस्मिन् काले, भविष्यन्ति । आर्या जातिः ॥४२॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; आपके मुखरूपी कमल पर भ्रमण करते हुए नगरवधुओं के नेत्ररूपी भ्रमर वाले दिन कुण्डिनपुर में कब होंगे ?"

आशय यह है कि हमलोग यह चाहते हैं कि आप शीघ्रातिशीघ्र कुण्डिनपुर में पहुँचकर वहाँ के लोगों; विशेषतया दमयन्ती को आनन्द प्रदान करें ॥४२॥

एवमाविर्भावितप्रश्रयमुज्ज्वलितानुरागमुदीरितादरमाप्यायितप्रणयमभिधाय स्थितवति किन्नरे, नरेश्वरो दमयन्तीप्रहितप्राभृतानि स्वयमादरेण गृहीत्वा, 'सुन्दरक ! तस्याः संदेश एवास्माकं कर्णपूरः, परिकरोऽयं मणिकर्णावतंसः । तस्याः सुगृहीतेन नाम्नैव वयं मुद्रिताः, प्रपञ्चोऽयमङ्गुलीमुद्रालङ्कारः । तदनुरागेणैव वयमाच्छादिताः, पुनरुक्तमाच्छादनयुगलमपरं च युवां प्रेषयन्त्या तया किं न प्रहितमस्माकम्, किमन्यत्त्वत्तोऽपि प्रियं प्राभृतं भविष्यतीति । तदेहि शिविरमनुसरामः' इत्यभिधाय बहु मानयन्किन्नरमिथुनमतिचपलकपिकुलान्दोलिततरुशिखराग्रगलितशिलास्फालनस्फुटत्फलरससुगन्धिना स्रवत्कुसुममकरन्दद्रवार्द्रितपांसुपटलेन वर्त्मना निजावासमुदचलत् ॥

कल्याणी एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, आविर्भावितप्रश्रयम्—आविर्भावितः=प्रकटीकृतः, प्रश्रयः=नम्रता यस्मिन् कर्मणि तद्यथा स्यात्तथा, उज्ज्वलितानुरागम्—उज्ज्वलितः=स्वच्छीकृतः, अनुरागः=स्नेहः यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, उदीरितादरम्—उदीरितः=संवर्धितः, आदरः=औत्सुक्यं यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, आप्यायितप्रणयम्—आप्यायितः=समृद्धिं गमितः, प्रणयः=प्रीतिः येन तद्यथा स्यात्तथा । क्रियाविशेषणान्येतानि । अभिधाय=उक्त्वा, किंनरे=किम्पुरुषे, स्थितवति=विश्रान्तवचसि सति, नरेश्वरः=राजा नलः, दमयन्तीप्रहितप्राभृतानि—दमयन्त्या प्रहितानि=प्रेषितानि, प्राभृतानि=अङ्गुलीयकादीनि प्राभृतानि=सम्मानसूचकोपहारवस्तूनि, स्वयम्=आत्मनैव, आदरेण=सम्मानेन, गृहीत्वा=स्वीकृत्य, 'सुन्दरक !=अयि सुन्दरक !, तस्याः=दमयन्त्याः, यत् सन्देशः=समाचारः, स एव अस्माकं=मत्सदृशानां जनानां, कर्णपूरः=कर्णावतंसः कर्णयोः पूरणं च [परिणामालङ्कारः], अयं=एषः, मणिकर्णावतंसः=दमयन्तीप्रहितः मणिखचितकर्णपूरस्तु परिकरः=तत्सन्देशानुचरः, गौण एवेत्यर्थः । तस्याः=दमयन्त्याः, सुगृहीतेन=पवित्रेन, नाम्नैव=अभिधानमात्रेणैव, वयं मुद्रिताः=अपरस्त्रीनाम्नः दुर्गमीकृताः, अयम्=एषः, अङ्गुलीमुद्रालंकारः=अङ्गुलीयकाभरणं तु, प्रपञ्चः=वञ्चनामात्रम्, निष्प्रयोजन इत्यर्थः । तदनुरागेणैव=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्याः प्रेम्णैव, वयम् आच्छादिताः=आच्छन्नीकृताः, आच्छादनयुगलं=चीनांशुक-युगलं, पुनरुक्तं=पुनर्भाषितं, व्यर्थमिवेत्यर्थः। अपरं च=अन्यच्च, युवां=किन्नर-मिथुनं, प्रेषयन्त्या=प्रहितवत्या, तया=दमयन्त्या, अस्माकं=अस्मदीयं, किं न प्रहितं=किं न प्रेषितम्, सर्वमपि प्रेषितमित्यर्थः। त्वत्तोऽपि=भवतः अपि, प्रियं=प्रीतिकरं, किमन्यत्=किमपरं, प्राभृतम्=उपढौकनं, भविष्यतीति। तत्=तस्मात्, एहि=आगच्छ, शिबिरम्=आवासस्थलम्, अनुसरामः=अनुगच्छामः, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, किंनरमिथुनं=किम्पुरुषयुगलं, बहु=समधिकं, मानयन्=आद्रियमाणः, अतिचपलकपिकुलान्दोलिततरुशिखराग्रगलितशिलास्फालनस्फुटत्फलरससुगन्धिना — अतिचपलेन=महच्चञ्चलेन, कपिकुलेन=वानरसमूहेन, आन्दोलितानां=प्रकम्पितानां, तरुशिखराणां=वृक्षाग्रभागानाम्, अग्रेभ्यः=अग्रभागेभ्यः, गलितानि=पतितानि, तथा शिलानां=प्रस्तराणाम्, आस्फालनेन=आघातेन, स्फुटन्ति=विदीर्यमाणानि, यानि फलानि तेषां रसैः सुगन्धिना=सुवासितेन, स्रवत्कुसुममकरन्दद्रवार्द्रितपांसुपटलेन—स्रवतां=च्यवमानानां, कुसुममकरन्दानां=पुष्परसानां, द्रवेण=प्रवाहेण, आर्द्रितं=क्लिन्नं, पांसुपटलं=धूलिराशिः यत्र तेन, वर्त्मना=मार्गेण, निजावासं=स्वशिबिरम्, उदचलत्=प्रातिष्ठत ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार नम्रता को प्रदर्शित करने वाले, स्वच्छ अनुराग वाले, बढ़ी हुई उत्सुकता वाले और प्रेम को बढ़ाने वाले (प्रेम से सराबोर बातें) कहकर किन्नर के मौन हो जाने पर राजा नल दमयन्ती द्वारा भेजे गये (अंगूठी आदि) उपहारों को आदर के साथ स्वयं ग्रहण कर "हे सुन्दरक ! उस (दमयन्ती) के सन्देश ही हमारे लिए कर्णाभूषण और कानों के लिए तृप्ति प्रदान करने वाले हैं, यह मणिमय कर्णाभूषण तो परिकर अर्थात् उस सन्देश का अनुचर-मात्र है। उसके पवित्र नाम के द्वारा ही हम मुद्रित अर्थात् अन्य स्त्रियों के लिए अप्राप्य हो चुके हैं, यह अंगुलीयक-मुद्रारूपी आभूषण (अंगूठी) तो प्रपञ्चमात्र है अर्थात् निष्प्रयोजन है। उसके अनुराग (प्रेम) से ही हम आच्छादित हो चुके हैं, यह आच्छादनयुगल अर्थात् चीनांशुक वस्त्रयुगल तो पुनरुक्त-मात्र है अर्थात् व्यर्थ ही है। फिर तुम दोनों (किन्नरमिथुन) को भेज कर उसने हमारे लिए क्या नहीं भेज दिया ? क्या तुम लोगों से भी अधिक प्रिय कोई दूसरा उपहार हो सकता है ? इसलिए आओ, शिविर को चलें।" इस प्रकार कह कर किन्नरयुगल को अत्यधिक सम्मान प्रदान करते हुए अत्यन्त चञ्चल वानरों द्वारा हिलाये गये वृक्षों के शिखर-भाग से गिरे एवं पत्थरों के आघात से विदीर्ण (फटे हुए) फलों के रस से सुवासित तथा झरते हुए पुष्परसों (परागों) के प्रवाह से गीली धूलिराशि वाले मार्ग से अपने आवास की ओर चल पड़ा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उच्चलिते च पश्चिमाम्भोनिधिसलिलक्षालितपादपल्लवे वासार्थिनीवास्तगिरिगह्वरं विशति वियद्वीथीपान्थे विवस्वति, क्रमेण तस्यां दिशि दिनकररथचङ्क्रमणचूर्णनोच्चलन्मन्दरगिरिगैरिकाधूलिपटलोल्लोल इवोल्ललास सन्ध्यारागः ॥

कल्याणी—उच्चलित इति। उच्चलिते च=प्रस्थिते च, वियद्वीथीपान्थे—वियद्वीथी=नभोमार्गः, तस्य पान्थे=पथिके, विवस्वति=सूर्ये, वासार्थिनीव=वासं कामयमान इव, पश्चिमाम्भोनिधिसलिलक्षालितपादपल्लवे—पश्चिमाम्भोनिधेः=पश्चिमसमुद्रस्य, सलिलेन=जलेन, क्षालितः=धौतः, पादपल्लवः=चरणपल्लवः किरणपल्लवश्च येन तस्मिन्, अस्तगिरिगह्वरम्=अस्ताचलकन्दरं, विशति=प्रविशति सति। पान्थो हि सलिलेन चरणौ प्रक्षाल्य वासागारं प्रविशतीति लोकक्रमोऽवगन्तव्यः। क्रमेण=क्रमशः, तस्यां=प्रतीच्यां, दिशि=दिशायां, दिनकररथचक्रचङ्क्रमणचूर्णनोच्चलन्मदरगिरिगैरिकाधूलिपटलोल्लोल इव—दिनकररथचक्रस्य=सूर्यरथचक्रस्य, चङ्क्रमणम्=इतस्ततो भ्रमणं, तेन चूर्णनात्=विमर्दात्, उच्चलत्=उत्तिष्ठत्, मन्दरगिरेः=मन्दराचलस्य, गैरी=गैरिकमयीभूमिः सैव गैरिका; अत्र गैरिकशब्दात् स्त्रीत्वविवक्षायां तु टाब् दुर्लभस्तस्य ठबन्तत्वात् ङीपो दुर्वारत्वादिति ज्ञेयम्। तस्या यद् धूलिपटलं=रेणुराजि, तस्य उल्लोल इव=महातरङ्ग इव, सन्ध्यारागः=सान्ध्यरक्तिमा, उल्ललास=दिदीपे ॥

ज्योत्स्ना—और आकाशमार्ग से गमन करने वाले पथिक भगवान् सूर्य के द्वारा मानो निवास की कामना से पश्चिम-पयोनिधि के जल से (अपने) चरण-पल्लव को धोकर अस्ताचल पर्वत की कन्दरा में प्रवेश कर जाने पर क्रमशः उसी (पश्चिम) दिशा में सूर्य-रथ के पहियों के चलने से चूर्ण होने के कारण ऊपर की ओर उठती हुई मन्दराचल पर्वत की गैरिकमयी भूमि के धूलिपटल की तरंगों के समान सायंकालीन लालिमा उद्दीप्त हो उठी।

विमर्श—प्रकृत गद्यखण्ड में सन्ध्या का चित्रण नायिका के रूप में किया गया है। आकाश में सायंकालीन लालिमा को देखकर ऐसा ज्ञात होता है मानो भगवान् सूर्यरूपी नायक को अपनी ओर आते देखकर सन्ध्यारूपी नायिका का राग उद्दीप्त हो उठा हो ॥

तेन च संवलितानि विजृम्भितुमारभन्त जम्भनिसुम्भनककुभि विपिनजरत्कृकवाकुकन्धरारोमरोचींषि तमांसि ॥

कल्याणी—तेन चेति। तेन=सन्ध्यारागेण च, संवलितानि=मिश्रितानि, जम्भनिसुम्भककुभि—जम्भनिसुम्भनः—जम्भासुरशत्रुः इन्द्र इत्यर्थः; तस्य ककुभि=पूर्वस्यां दिशि, विपिनजरत्कृकवाकुकन्धरारोमरोचींषि—विपिने=वने, जरन्=प्रवृद्धः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यः कुक्कुटाकुः=मयूरः, तस्य कन्धरा=ग्रीवा, तस्या रोम्णामिव=लोम्नामिव, रोचिः=कान्तिः येषां तथाविधानि, गहनानीति भावः। तमांसि=तिमिराणि, विजृम्भितुं=प्रसर्तुम्, आरभन्त=प्रारभन्त ॥

ज्योत्स्ना—और उस सन्ध्याराग (सान्ध्यकालीन लालिमा) से मिश्रित जम्भासुर के शत्रु इन्द्र की दिशा अर्थात् पूर्व दिशा में जंगल-स्थित वृद्ध मयूर के गर्दन की रोमावलि के समान कान्ति वाला गहन अन्धकार फैलना आरम्भ हो गया ॥

ततश्च नष्टचर्याक्रीडयेवादर्शनमायान्तीषु दिक्कन्यकासु, वनमुनिहोमधूमगन्धेन सन्तर्प्यमाणासु वनदेवतासु, निद्रान्धसिन्धुरयूथेष्विवोन्नतवप्रस्थलीषु परिणमत्सु शनैस्तिमिरेषु, जाते मनाग्भिन्नाञ्जनपत्त्रस्तबकिते निशामुखे, नरपतिस्तेन किन्नरमिथुनेन सार्धमर्धपथायातप्रज्वलितदीपिकापाणिपरिजनपरिकरितः शरणागतकपोतमुत्पतितोलूककृतशब्दं शिविमिव शिविरसन्निवेशमविशत् ॥

कल्याणी—ततश्चेति। ततः=तदनन्तरं च, नष्टचर्याक्रीड़येव – नष्टचर्या=शिशुक्रीडाविशेषः, तया क्रीडयेव, तदुद्देश्येनेवेत्यर्थः। दिक्कन्यकासु—दिश एव कन्यकास्तासु, अदर्शनमायान्तीषु=दृष्टिपथं नागच्छन्तीषु, वनमुनिहोमधूमगन्धेन—वने=कानने, ये मुनयः=तपस्विनः, तेषां यः होमधूमः, तस्य गन्धेन=सुरभिना, वनदेवतासु=वनाधिष्ठातृदेवतासु, संतर्प्यमाणासु=संतृप्तिं नीयमानासु, निद्रान्धसिन्धुरयूथेष्विव—निद्रान्धानां सिन्धुराणां=गजानां, यूथेष्विव=वृन्देष्विव, तिमिरेषु=अन्धकारेषु, उन्नतवप्रस्थलीषु=उच्छ्रिततटवन्धस्थलीषु, शनैः=मन्दं, परिणमत्सु=वृद्धिं गच्छत्सु, पक्षे—तिर्यक्प्रहारार्थमवनमत्सु; वप्रक्रीडायां गजा दन्तप्रहारार्थमवनमन्ति। निशामुखे=सायंकाले, मनाक्=ईषत्, भिन्नाञ्जनपत्त्रस्तबकिते=विकसिततमालपत्त्रगुच्छवच्छ्यामले जाते, नरपतिः=राजा नलः, तेन=पूर्वकथितेन, किंनरमिथुनेन=किम्पुरुषयुगलेन, सार्धं=सह, अर्धपथायातप्रज्वलितदीपिकापाणिपरिजनपरिकरितः—अर्धपथम्=अर्धमार्गम्, आयाताः=समागताः, प्रज्वलितदीपिकापाणयश्च ये परिजनाः=अनुचराः, तैः परिकरितः=समन्वितः, शिविमिव=शिविनामानं नृपमिव, शरणागतकपोतं—शरणं=नीडम्, आगताः=आयाताः, कपोताः=पारावाताः यत्र तथाविधं, शिविपक्षे—शरणमागतः कपोतो यस्य तं तथोक्तम्। उत्पतितोलूककृतशब्दम्—उत्पतिताः=उड्डीनाः, उलूकाः=धूकाः यस्मात् स उत्पतितोलूकः, तथा कृतः (सैनिकैः) शब्दः यत्र सः कृतशब्दः, उत्पतितोलूकश्चासौ कृतशब्दश्चेति तं तथोक्तम्। रात्रौ हि कपोता नीडमागच्छन्ति, उलूकाश्च उड्डीयन्ते। शिविपक्षे—उत्पतितोलूकबुभुक्षाप्रशमनार्थं कृतप्रतिज्ञम्। शिविरसंनिवेशं=शिविरपरिसरम्, अविशत्=प्राविशत्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारदकृतां शिविप्रशंसां श्रुत्वा सत्त्वं जिज्ञासमानौ कपोतोलूकरूपधारिणौ कपोतश्येनरूपधारिणौ वा अग्नीन्द्रौ शिविनृपमागतौ। स कपोतप्राणरक्षायै तदुलूक-बुभुक्षाशान्त्यर्थं च कपोतभारसमं स्वशरीरमांसमुलूकाय श्येनाय वा ददाविति पौराणिकी कथात्रानुसन्धेया। श्लेषानुप्राणितोपमा ॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद नष्टचर्या अर्थात् बच्चों की एक विशेष प्रकार की क्रीड़ा के (उद्देश्य के) समान दिशारूपी अंगनाओं के नजरों से ओझल होते जाने पर, वन में निवास करने वाले मुनियों के होम से निकले धूम के गन्ध से वनदेवियों के पूर्णतः तृप्त हो जाने पर, निद्रा के आक्रमण से व्याकुल अर्थात् अँगड़ाइयाँ लेते हुए हस्तिसमूहों के समान अन्धकार के उन्नत तटबन्ध-स्थलों पर धीरे-धीरे बढ़ते जाने पर, निशामुख अर्थात् सायंकाल के विकसित तमाल-पत्र के गुच्छों के समान कुछ-कुछ श्यामल हो जाने पर राजा उस किन्नरयुगल के साथ हाथों में जलती मशालें लेकर आधे रास्ते तक आये हुए परिजनों (अनुचरों) से समन्वित होकर शरण में आये हुए कपोत की प्राण-रक्षा तथा उड़ते हुए उलूक की बुभुक्षा का शमन करने के लिए कृत-प्रतिज्ञ राजा शिवि के समान कपोतों द्वारा शरण लिए हुए, उड़े हुए उल्लुओं वाले एवं शब्द कर रहे सैनिकों वाले शिविर-परिसर में प्रवेश किया ॥

विमर्श—अग्नि और देवराज इन्द्र नारद के द्वारा राजा शिवि की प्रशंसा सुनकर उनकी परीक्षा लेने हेतु कपोत और श्येन (उलूक) का रूप धारण कर आये। कपोत ने राजा शिवि से अपनी प्राण-रक्षा की याचना की और उलूक ने अपनी बुभुक्षा शान्त करने की प्रार्थना की। राजा शिवि ने कपोत की प्राणरक्षा और उलूक की भूख शान्त करने के लिए कपोत के भार के बराबर अपने शरीर से मांस काटकर उलूक को दिया। विभिन्न पुराणों में यह कथा देखी जाती है। इसी पौराणिक कथा का यहाँ अनुसरण किया गया है ॥

तत्र च क्रमेण कृतकरणीयस्त्वरमाणपाचकवृन्दोपनीतमुत्पतत्पाकपरिमलस्पृहणीयमत्युष्णमेदुरमांसोपदंशमाज्यप्राज्यमुपभुज्य पुष्कराक्षकिन्नरमिथुनाप्तजनैः सह मधुररससारमाहारम्, अनन्तरमाचान्तः शुचिचन्दनोद्वर्त्तितकरः कर्पूरपारीपरिकरितताम्बूलोज्ज्वलवदनारविन्दः 'सुन्दरक ! कमपि प्रस्तारय विद्याविनोदं त्वयापि विहङ्गवागुरिके गीयतां किमपि मधुरम्' इति मृदुमणिपर्यङ्किकासुखासीनः किन्नरमिथुनमादिदेश ॥

कल्याणी—तत्र चेति। तत्र च=शिविरप्रान्ते च, क्रमेण=क्रमशः; कृतकरणीयः—कृतानि=विहितानि, करणीयानि=नित्यकृत्यानि, त्वरमाणपाचकवृन्दो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पनीतं—त्वरमाणाः=त्वरां कुर्वन्तः, ये पाचकाः=सूपकाराः, तेषां वृन्देन=समूहेन, उपनीतं=परिविष्टम्, उत्पतत्पाकपरिमलस्पृहणीयम्—उत्पतता=प्रसरता, पाकानां=भोज्यानां, परिमलेन=सुगन्धेन, स्पृहणीयम्=अभिलषणीम्, अत्युष्णमेदुरमांसोपदंशम्—अत्युष्णं=समधिकमुष्णम्, मेदुरं=प्रभूतं, मांसं=पललं, तदेव उपदंशः=अवलेहः यस्मिंस्तथाविधम्, आज्यप्राज्यं=घृतप्रचुरं, मधुररससारं=मधुररसश्रेष्ठम्, आहारं=भोजनं, पुष्कराक्षकिन्नरमिथुनाप्तजनैः—पुष्कराक्षश्च किंनरमिथुनं च आप्तजनाश्च=शिष्टविश्वस्तजनाश्च तैः, सह=साकम्, उपभुज्य=भुक्त्वा, अनन्तरं=पश्चात्; आचान्तः=कृताचमनः, शुचिचन्दनोद्वर्तितकरः—शुचिचन्दनेन=पवित्रचन्दनचूर्णेन, उद्वर्तितौ=दिग्धौ, करौ=हस्तौ येन स तथोक्तः, कर्पूरपारीपरिकरिततांबूलोज्ज्वलवदनारविन्दः—कर्पूरस्य पार्यः=शकलानि, तैः परिकरितं=युक्तं ताम्बूलं, तेन उज्ज्वलं=सुशोभितं, वदनारविन्दं=मुखकमलं यस्य तथाभूतः सन्, सुन्दरक !, कमपि=कञ्चिदपि, विद्याविनोदं—विद्यया यः विनोदः=मनोरञ्जनं तं, प्रस्तारय=प्रसारय। हे विहङ्गवागुरिके !=पक्षिसुन्दरि !, त्वयापि=भवत्याऽपि, किमपि=किञ्चिदपि, मधुरं=मनोरमं, गीयताम्' इति=एवं, मृदुमणिपर्यङ्किकासुखासीनः—मृदुमणिपर्यङ्किकायां=मणिमयकोमलपर्यङ्के, सुखेन=आनन्देन, आसीनः=उपविष्टः, किंनरमिथुनं=किम्पुरुषयुगलम्, आदिदेश=आदिष्टवान् ॥

ज्योत्स्ना—और उस शिविरप्रान्त में आवश्यक दैनिक कार्यों को सम्पन्न कर (राजा नल) शीघ्रता कर रहे पाचकों द्वारा लाये गये, फैलते हुए भोज्य पदार्थों के सुगन्ध के कारण स्पृहणीय, अत्यन्त उष्ण (गर्म), पोषक मांस के रस वाले, प्रचुर घृत से परिपूर्ण, मधुर रसमय भोजन का पुष्कराक्ष, किन्नरयुगल और विश्वसनीय सभ्य जनों के साथ उपभोग कर (खा कर) आचमन करने के पश्चात् पवित्र चन्दचूर्ण से हाथों को शुद्ध कर, कर्पूरखण्डों से समन्वित ताम्बूल से मुखकमल को सुशोभित कर "सुन्दरक ! कुछ विद्याविनोद प्रारम्भ करो। पक्षिसुन्दरि ! तुम भी कोई मधुर गीत गाओ।" इस प्रकार कोमल मणिमय पर्यङ्क पर आनन्दपूर्वक आसीन (राजा ने) किन्नरयुगल को आदेश दिया ॥

दर्शिते च वांशिकेन वंशमुखोद्गीर्णगान्धारपञ्चमरागस्थानके स्थिरीकृतमध्यमश्रुतिप्रसन्नप्रेङ्खोलनाप्रयोगमुचितस्थानकृतकांस्यतालमकठोरतारस्वरम्, आकर्षदिव हृदयम्, अभिषिञ्चदिवामृतेन श्रवणेन्द्रियम्, अस्तं नयदिवान्यविषयसन्धानम्, अनुच्चप्रपञ्चितपञ्चमं विपञ्चीस्वरसन्दर्भितमभूत्तत्किमपि गीतम् ॥

कल्याणी—दर्शिते चेति। वांशिकेन=वंशीवादकेन, वंशमुखोद्गीर्णगान्धारपञ्चमरागस्थानके—वंशमुखात्=वेणुमुखात्, उद्गीर्णस्य=निःसृतस्य, गान्धारस्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पञ्चमरागस्य च स्थानकं=स्वरस्थितिः तस्मिन्, दर्शिते=प्रदर्शिते सति, स्थिरीकृत-मध्यमश्रुतिप्रसन्नप्रेङ्खोलनाप्रयोगं – स्थिरीकृतः=निर्धारितः, मध्यमः=मध्यमस्वरः, तस्य श्रुतिः=चतुर्थांशः, तया प्रसन्ना=रम्या, या प्रेङ्खोलना=स्वरारोहावरोहविधिः, तस्याः प्रयोगो यस्मिंस्तत्तथोक्तम्, उचितस्थानकृतकांस्यतालम्—उचितस्थाने=उपयुक्तस्थले, कृतः=विहितः, कांस्येन=झर्झरेण, तालः यत्र तत्तथाविधम्, अकठोरतारस्वरम्—न कठोर इत्यकठोरः=मृदुरित्यर्थः। तारस्वरः=उच्चस्वरः यस्मिंस्तत्तथोक्तम्। हृदयं=चित्तम्, आकर्षदिव=आहरन्निव, अमृतेन=सुधारसेन, श्रवणेन्द्रियं=कर्णेन्द्रियम्, अभिषिञ्चदिव=स्नपयन्निव, अन्यविषयसन्धानम्—अन्यविषयाणां सन्धानं=चिन्तनम्, तं नयदिव=लुम्पदिव, अनुच्चप्रपञ्चितपञ्चमम्—न उच्च इत्यनुच्चः=मन्दः, प्रपञ्चितः=प्रस्तारितः, पञ्चमः=पञ्चमस्वरः यत्र तत्तथोक्तम्, विपञ्चीस्वरसन्दर्भितं—विपञ्ची=वीणा, तस्याः स्वरेण=रागेण, सन्दर्भितम्=अनुगतं संगतं वा, तद् गीतं=गानं, किमपि=किञ्चिदपि, विलक्षणमनिर्वचनीयमिति यावत्, अभूत्=बभूव ॥

ज्योत्स्ना—वंशीवादक के द्वारा बाँसुरी के मुख से निकले हुए गान्धार और पञ्चम राग का स्थानक प्रदर्शित करने पर मध्यम स्वर के चतुर्थांश के कारण रमणीय स्वरों के आरोह-अवरोह क्रम के प्रयोग वाले, उपयुक्त स्थल पर झाल द्वारा ताल दिये जाने वाले, मृदु तारस्वर (उच्च स्वर) वाले, हृदय को आकर्षित करते हुए के समान, अमृत-रस से कानों को सींचते हुए के समान, अन्य विषयों के चिन्तन को समाप्त-सा करते हुए मन्द-मन्द फैल रहे पञ्चम स्वर वाले वीणा के स्वर से अनुगत अथवा संगत विलक्षण गीत (प्रारम्भ) हो उठा ॥

यत्र—

प्रसरति रणरणकरसः कुण्ठयति हठेन चित्तमुत्कण्ठा ।
स्मरति स्मरोऽपि धनुषः प्रगुणीकृतनिशितबाणस्य ॥४३॥

अन्वयः—(यत्र) रणरणकरसः प्रसरति, उत्कण्ठा हठेन चित्तं कुण्ठयति, स्मरः अपि प्रगुणीकृतनिशितबाणस्य धनुषः स्मरति ॥४३॥

कल्याणी—प्रसरतीति। (यत्र=यस्मिन्) रणरणकरसः—रणरणकं=प्रियजनप्रेमजन्यसन्तापः, तस्य रसः=अनुभूतिः, प्रसरति=वृद्धिं याति, उत्कण्ठा=प्रियमिलनोत्सुक्यं, हठेन=बलात्, चित्तं=मनः, कुण्ठयति=विकलं करोति। स्मरः अपि=कामदेवोऽपि, प्रगुणीकृतनिशितबाणस्य—प्रगुणीकृताः=क्रमेण सन्धानिताः, निशिताः=तीक्ष्णाः, बाणाः=शराः यत्र तथाविधस्य, धनुषः=शरासनस्य, स्मरति=स्मरणं करोति। धनुष इत्यत्र 'अधीगर्थदयेशां कर्मणि' इति षष्ठी। आर्या जातिः ॥४३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—जिसमें—रणरणक (प्रिय के प्रति प्रेम के कारण उत्पन्न सन्ताप) का रस फैल रहा था, उत्सुकता बलात् चित्त को कुण्ठित कर रही थी और कामदेव भी क्रमश सन्धान किये गये तीक्ष्ण बाण वाले धनुष का स्मरण करने लगा था।

विमर्श—तात्पर्य यह है कि उस किन्नरी द्वारा गाये जा रहे गीत की यह विशेषता थी कि श्रोतास्वरूप राजा नल को प्रियाविषयक प्रेमजन्य सन्ताप की अनुभूति बढ़ने लगी, प्रिया से मिलने की उत्सुकता उसके चित्त को व्याकुल करने लगी, साथ ही साथ कामदेव भी उसे प्रभावित करने लगा ॥४४॥

एवंविधे च व्यतिकरे वैतालिकः पपाठ—

'सकल-विषय-वृत्तीर्मुद्रयन्निन्द्रियाणां
हृदि विदधदवस्थां काञ्चिदुन्मादिनीं च।
ध्वनिरनुगतवीणानिक्वणः कोमलोऽयं
जयति मदनबाणः पञ्चमः पञ्चमस्य ॥४४॥

अन्वयः—(एवंविधे च व्यतिकरे वैतालिकः पपाठ) इन्द्रियाणां सकलविषयवृत्तीः मुद्रयन् हृदि काञ्चित् उन्मादिनीम् अवस्थां च विदधत् पञ्चमः मदनबाणः अयम् अनुगतवीणानिक्वणः पञ्चमस्य कोमलः ध्वनिः जयति ॥४४॥

कल्याणी—एवंविधे च व्यतिकरे=एवंविधेऽवसरे, वैतालिकः=स्तुतिपाठकः, पपाठ=अपठत् — सकलेति। इन्द्रियाणां=ज्ञानकर्महेत्विन्द्रियाणां, सकलविषयवृत्तीः=समस्तविषयप्रवृत्तीः, मुद्रयन्=अस्तं नयन्, हृदि=मनसि, कांचित्=अपूर्वाम्, उन्मादिनीम्=उन्मादकारिणीम्, अवस्थां च=दशां च, विदधत्=कुर्वन्, पञ्चमः=पञ्चमसंज्ञकः, मदनबाणः=कामशरः, कामदेवस्य पञ्चमशररूप इत्यर्थः। अयं=श्रूयमाणः, अनुगतवीणानिक्वणः—अनुगतः=प्राप्तः, वीणानिक्वणः=वीणास्वरः येन तथाविधः, वीणास्वरमिश्रित इत्यर्थः। पञ्चमस्य=पञ्चमस्वरस्य, कोमलः=सुमधुरः, ध्वनिः=स्वरः, जयति=सर्वोत्कर्षेण वर्तते। कामशरोऽपि हि सकलेन्द्रियविषयवृत्तीर्मुद्रयति, हृदि च काञ्चिदुन्मादिनीमवस्थां विदधाति। अत्रारोप्यमाणस्य मदनपञ्चमबाणस्य पञ्चमस्वरध्वन्यात्मकतया प्रकृतार्थोपयोगित्वात्परिणामालङ्कारः। मालिनी वृत्तम् ॥४४॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार के अवसर पर वैतालिक ने पढ़ा—

"इन्द्रियों की समस्त विषय-प्रवृत्तियों को समाप्त करती हुई एवं हृदय में किसी अपूर्व उन्माद को उत्पन्न करने वाली अवस्था का सृजन करती हुई कामदेव के पञ्चम शररूप वीणा के स्वर से मिश्रित पञ्चम स्वर की यह सुमधुर ध्वनि सर्वोत्कृष्ट है ॥४४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च

प्रियविरहविषादस्यौषधं प्रोषितानां
विविध-विधुर-चिन्ताभ्रान्ति-विश्रान्तिहेतुः ।
अयममृततरङ्गः कर्णयोः केन सृष्टो
मधुररसनिधानं निःस्वनः पञ्चमस्य ॥ ४५ ॥

अन्वयः—(यः) प्रोषितानां प्रियविरहविषादस्य औषधः, (यश्च) विविध-विधुरचिन्ताभ्रान्तिविश्रान्तिहेतुः, कर्णयोः अमृततरङ्गः मधुररसनिधानम् अयं पञ्चमस्य निःस्वनः केन सृष्टः ? ॥४५॥

कल्याणी—प्रियेति । (यः=पञ्चमस्य निःस्वनः) प्रोषितानां=प्रवासिजनानां, स्त्रीणां पुरुषाणां वा । प्रियविरहविषादस्य—प्रियजनस्य=प्रियस्य प्रियाया वा, यः विरहः=वियोग, तद्विषादस्य=तज्जनितसन्तापस्य, औषधम्=औषधस्वरूपः, शामक इत्यर्थः । यश्च विविधविधुरचिन्ताभ्रान्तिविश्रान्तिहेतुः—विविधानाम्=अनेकेषां, विधुरस्य=प्रियवियोगस्य, चिन्तानां भ्रान्तीनां=भ्रमाणां च, विश्रान्तिहेतुः=अवरोधकारणस्वरूपः, कर्णयः=श्रवणयोः, अमृततरङ्गः=सुधालहरीस्वरूपः, मधुररसनिधानं=मधुररसस्याश्रयस्थानम्, अयम्=एषः, पञ्चमस्य=पञ्चमरागस्य, निःस्वनः=ध्वनिः, केन=केन जनेन देवेन वा, सृष्टः=निर्मितः, धन्यो ह्येतत्स्रष्टेत्यर्थः । परिणामाऽलङ्कारः । मालिनीवृत्तम् ॥४५॥

ज्योत्स्ना—और भी—परदेशस्थित प्रियजनों (स्त्री अथवा पुरुष) के लिए प्रियजन (प्रियतम अथवा प्रियतमा) के वियोग-जनित विषाद के लिए औषध-स्वरूप, प्रियवियोगजन्य अनेकों चिन्ताओं एवं भ्रान्तियों को रोकने की कारणस्वरूप, कानों के लिए अमृतलहरीस्वरूप एवं मधुर रस का आश्रयस्थान अर्थात् आवास-स्वरूप पञ्चम राग की यह ध्वनि किसके द्वारा निर्मित की गई है ? अर्थात् पञ्चम-राग की इस ध्वनि को बनाने वाला भी धन्य है, सर्वोत्कृष्ट है ॥४५॥

अपि च —

अयं हि प्रथमो रागः समस्तजनरञ्जने ।
यस्य नास्ति द्वितीयोऽपि स कथं पञ्चमोऽभवत्' ॥४६॥

अन्वयः—हि अयं समस्तजनरञ्जने प्रथमः रागः (वर्तते), यस्य द्वितीयः अपि नास्ति सः कथं पञ्चमः अभवत् ॥४६॥

कल्याणी—अयमिति । हि=यतः, अयम्=एषः, समस्तजनरञ्जने—समस्तजनानां=निखिललोकानां, रञ्जने=प्रसादने, प्रथमः=आद्यः, सर्वोत्कृष्ट इत्यर्थः । रागः [वर्तते], यस्य=पञ्चमरागस्य, द्वितीयोऽपि—द्वयोः पूरणः द्वितीयः=अपरः अपि,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नास्ति, सः=तदसौ, कथं=केन प्रकारेण, पञ्चमः—पञ्चानां पूरणः पञ्चमोऽभवदिति विरोधः, पञ्चम इति संज्ञेति विरोधपरिहारः। अभवत्=बभूव। अनुष्टुब्वृत्तम्। विरोधाभासोऽलङ्कारः ॥४६॥

ज्योत्स्ना—और भी—क्योंकि समस्त लोगों का मनोरञ्जन करने में प्रथम अर्थात् सर्वोत्कृष्ट बना हुआ यह राग है, (अतः) जिसका दूसरा तक नहीं है, वह पञ्चम कैसे हो गया ?"

आशय यह है कि यह सर्वोत्कृष्ट पञ्चम राग अद्वितीय है, इसका कोई विकल्प नहीं है; इसीलिए यह अतुलनीय है ॥४६॥

इति विविधमुदञ्चत्पञ्चमोद्गारगर्भं
पठति मधुरकण्ठे धाम्नि वैतालिकेऽस्मिन्।
अपहरति च चित्तं किन्नरद्वन्द्वगीते
सुखमय इव निद्रानिःस्पृहो लोक आसीत् ॥४७॥

अन्वयः—इति धाम्नि मधुरकण्ठे अस्मिन् वैतालिके विविधम् उदञ्चत् पञ्चमोद्गारगर्भं पठति (तथा) किन्नरद्वन्द्वगीते चित्तम् अपहरति च, लोकः सुखमयः (सन्) निद्रानिःस्पृहः इव आसीत् ॥४७॥

कल्याणी—**इतीति**। इति=एवं, धाम्नि=आवासे, शिबिर इत्यर्थः। मधुरकण्ठे—मधुरः कण्ठः=कण्ठस्वरः यस्य तथाविधे, अस्मिन्=एतस्मिन्, वैतालिके=प्रस्तावपाठके, विविधं=बहुप्रकारकम्, उदञ्चत्=प्रकटत्, पञ्चमोद्गारगर्भं—पञ्चमस्य=पञ्चमाख्यस्य रागस्य, उद्गारः=प्रशंसावाक्यकदम्बकं, गर्भे=मध्ये यस्य तत्, पठति=गायति सति, तथा किन्नरद्वन्द्वगीते—किन्नरद्वन्द्वस्य=किन्नरमिथुनस्य; गीते=गाने, चित्तं=मनः, अपहरति च=आकर्षति सति, लोकः=जनसमूहः, सुखमयः सन् निद्रानिःस्पृहः=निद्रां प्रति कामनाशून्य इव, आसीत्=अभवत्। मालिनीवृत्तम् ॥४७॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार शिविर में मधुर कण्ठ वाले इस वैतालिक के पञ्चम राग का अनेकों प्रकार से प्रशंसापूर्ण गान करने पर तथा किन्नरयुगल द्वारा (अपने) गीत से लोगों के चित्त को आकर्षित कर लिये जाने पर (उपस्थित) लोगों का समूह आनन्द में निमग्न होकर निद्रा के प्रति निःस्पृह-सा हो गया।

आशय यह है कि किन्नरयुगल के पञ्चम राग-गान और वैतालिक के गान को सुनते हुए शिविर में उपस्थित लोग आनन्दसागर में इतने निमग्न हो गये कि शयन करने की उनकी इच्छा ही नहीं रही और वे उस ध्वनि को सदा सुनते ही रहने की कामना करने लगे ॥४७॥

एवमनवरतमारोहावरोहमूर्च्छनाभङ्गितरङ्गिते गीतामृतस्रोतसि निमग्नमनसि कठोरितोत्कण्ठे रणरणकारम्भभाजि राजनि 'रजनि ! किं न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विरमसि । दिवस ! किं नाविर्भवसि । अध्वन् ! किं न 'स्तोकतां व्रजसि । कुण्डिननगर ! किं न नेदीयो भवसि । श्रम ! किमन्तरायोऽसि । विधे ! किमुत्क्षिप्य न मां तत्र नयसि' इत्यनेकधा चिन्तयति स किन्नरयुवा प्रक्रमोचितश्लेषमिदमवादीत् ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, अनवरतं=निरन्तरं, [स्वराणाम्] आरोहावरोहमूर्च्छनाभङ्गितरङ्गिते—आरोहश्चावरोहश्च मूर्च्छनाश्च तासां भङ्गिभिः=कौशलैः, तरङ्गिते=तरङ्गायमाणे, गीतामृतस्रोतसि=गीतामृत-प्रवाहे, निमग्नमनसि—निमग्नं=बूडितं, मनः=चेतः यस्य तस्मिन्, कठोरितोत्कण्ठे—कठोरिता=पूर्णविकासं गमिता, उत्कण्ठा=उत्सुकता यस्य तस्मिंस्तथोक्ते, रणरणका-रम्भभाजि=औत्सुक्यवेगसम्पन्ने, राजनि=नृपे नले, 'हे रजनि !=हे रात्रि !, किं=किमर्थं, न विरमसि=अवसानं न यासि । हे दिवस !=हे अहः, किं नाविर्भवसि=किमर्थं न प्रकटसि । हे अध्वन्=मार्ग ! किं न, स्तोकताम्=अल्पतां, व्रजसि=गच्छसि । हे कुण्डिननगर ! किं न, नेदीयः=अन्तिकतरं भवसि । हे श्रम ! किं=किमर्थम्, अन्तरायः=विघ्नः, असि=भवसि । हे विधे !=दैव ! किं=केन हेतुना, मां=नलं, उत्क्षिप्य=उच्छाल्य, तत्र=कुण्डिनपुरे, न नयसि=न गमयसि । इति=एवम्, अनेकधा=बहुधा, चिन्तयति=विचारयति सति, स किन्नरयुवा=किन्नरतरुणः, प्रक्रमोचि-तश्लेषं—प्रक्रमोचितः=प्रसङ्गानुकूलः, श्लेषः=अनेकार्थशब्दप्रयोगः यस्मिंस्तत्, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=अवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार निरन्तर (स्वरों के) आरोह-अवरोह क्रम (उतार-चढ़ाव) और मूर्च्छनाओं की लहरों में तैरते हुए-से गीत की अमृतधारा में निमग्न मन वाले, पूर्ण विकास को प्राप्त उत्कण्ठा वाले, उत्सुकता के वेग से सम्पन्न राजा नल के "हे रात्रि ! तुम क्यों नहीं समाप्त होती हो ? हे दिन ! तुम क्यों नहीं प्रकट होते हो ? हे पथ ! तुम क्यों नहीं छोटे होते हो ? हे कुण्डिननगर ! तुम क्यों नहीं समीप आते हो ? हे परिश्रम ! तुम क्यों विघ्न बन जाते हो ? हे दैव ! तुम क्यों नहीं उछालकर मुझे उस स्थान पर (कुण्डिनगर में) ले चलते हो ?" इस तरह बहुत प्रकार से विचार करते रहने पर वह किन्नरयुवक श्लेषमय वाणी में प्रसङ्ग के अनुकूल इस प्रकार बोला —

"वर्धमानोल्लसद्रागा सुजातिमृदुपाणिका ।
दमयन्ती च गीतिश्च कस्य नो हृदयङ्गमा ॥४८॥

अन्वयः—वर्धमानोल्लसद्रागा सुजातिमृदुपाणिका दमयन्ती गीतिः च कस्य न हृदयङ्गमा ॥४८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—वर्धमानेति। वर्धमानोल्लसद्रागा—वर्धमानः=वृद्धिं गच्छन्, उल्लसन्=तरङ्गितः, रागः=अनुरागः यस्यां सा, सुजातिमृदुपाणिका—सुष्ठु=शोभना, जातिः=क्षत्रियाख्या यस्यास्तथा मृदुः=कोमलः, पाणिः=करः यस्यास्तथाविधा, दमयन्ती=भीमपुत्री, अथ च वर्धमाने=तालविशेषे, उल्लसन् रागः=श्रीरागादिः यत्र सा, सुष्ठु=शोभना, जातयः=नन्दयन्तीप्रभृतयः यत्र सा, मृदवः पाणयः=समपाण्यादयः यत्र सा तथोक्ता, गीतिश्च=गानञ्च, कस्य=कस्य जनस्य, नो हृदयङ्गमा=न प्रिया ? सर्वस्यापि हृदयङ्गमेत्यर्थः। श्लेषाऽलङ्कारः। एतेन दमयन्तीगीत्योः परस्परोपमानोपमेयभावो व्यज्यते। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४८॥

ज्योत्स्ना—"वृद्धि को प्राप्त होती हुई अनुराग वाली, सुन्दर क्षत्रिय कुल और कोमल हाथों वाली दमयन्ती तथा वर्धमाननामक तालविशेष में उल्लसित राग वाली, सुन्दर नन्दयन्ती आदि जाति वाली एवं कोमल समपाणि आदि पाणियों वाली गीति किसके लिए हृदयंगम करने योग्य नहीं है ?

आशय यह है कि संगीत की विभिन्न विशेषताओं से अलंकृत यह गीति और विभिन्न स्पृहणीय गुणों से अलंकृत दमयन्ती सबके लिए हृदयंगम करने योग्य है ॥४८॥

अपि च—

साप्यनेककलोपेता साप्यलङ्कारधारिणी।
सापि हृद्यस्वरालापा किन्त्वसाधारणा तव ॥४९॥

अन्वयः—सा अपि (गीतिरिव) अनेककलोपेता, साऽपि अलङ्कारधारिणी, सा अपि हृद्यस्वरालापा, किन्तु तव असाधारणा ॥४९॥

कल्याणी—सापीति। सा अपि=दमयन्त्यपि, गीतिरिव अनेककलोपेता=चित्र-विज्ञानादिकलायुक्ता। गीतिपक्षे—आवापादिसप्तकलोपेता। साऽपि=दमयन्त्यपि, अलङ्कारधारिणी=आभरणविभूषिता। गीतिपक्षे—उपमारूपकाद्यलङ्कारोपेता। साऽपि=दमयन्त्यपि, हृद्यस्वरालापा - हृद्यः=मनोज्ञः, स्वरः=शब्दः, आलापः=मिथोभाषणं च यस्याः सा तथाविधा। गीतिपक्षे—हृद्याः स्वराः=षड्जादयः सप्त, आलापः=आलप्तिश्च यत्र सा तथोक्ता। किन्तु=परन्तु, दमयन्ती तव असाधारणा=अनन्यविषयत्वादेकाश्रया। गीतिस्तु साधारणा जातिधारणा चेति द्वयोर्महदन्तरमिति भावः। श्लेषाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४९॥

ज्योत्स्ना - और भी—वह (दमयन्ती) भी (गीति के समान) अनेकों (चित्र-विज्ञान आदि) कलाओं से समन्वित है, वह भी अलंकारों से विभूषित है, वह भी मनोहारी स्वर में वार्तालाप करने वाली है, किन्तु तुम्हारे लिए होने के कारण वह दमयन्ती असाधारण है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—उपर्युक्त अर्थ वाले प्रकृत श्लोक में दमयन्ती के लिए प्रयुक्त समस्त विशेषण अर्थभेद से गीति में भी घटित होते हैं; जैसे—वह (गीति) भी आवाप आदि सात कलाओं से युक्त है, वह भी उपमा-रूपक आदि अलंकारों से अलंकृत है, वह भी हृदयग्राही षड्ज आदि सात स्वरों तथा आलाप से समन्वित है, किन्तु तुम्हारे लिए वह गीति साधारण है।

इस प्रकार श्लोक के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पाद तक की विशेषतायें दमयन्ती तथा गीति दोनों में समान रूप से विद्यमान हैं। अन्तर केवल चतुर्थ पाद में है। वह यह कि गीति सामान्य स्वर एवं सामान्य जाति वाली होने के कारण हे राजन् ! तुम्हारे लिए साधारण है और वह दमयन्ती किसी और के लिए न होकर मात्र तुम्हारे लिए होने कारण असाधारण है। दोनों में नल के लिए मात्र इतना ही अन्तर है ॥४९॥

अपि च—

सङ्गीतका त्वदौत्सुक्यात्त्वां स्मरन्ती समूर्च्छना।
किं तु तस्यास्त्वयि स्वामिंल्लयभङ्गो न दृश्यते" ॥५०॥

अन्वयः—त्वदौत्सुक्यात् संगीतका त्वां स्मरन्ती समूर्च्छना किन्तु स्वामिन् ! तस्याः त्वयि लयभङ्गः न दृश्यते ॥५०॥

कल्याणी—संगीतकेति। [गीतिरिव दमयन्त्यपि] त्वदौत्सुक्यात्—त्वयि औत्सुक्यं त्वदौत्सुक्यं, तस्माद्धेतोः, सङ्गीतका—सम्यग् गीतं प्रख्यातिरस्याः इति संगीतका, त्वय्येव सोत्सुकेति सर्वत्र गीयत इति भावः। तथा त्वां=भवन्तं, स्मरन्ती=स्मरणं कुर्वती सती, समूर्च्छना—सह मूर्च्छनया वर्तत इति समूर्च्छना=समोहा। गीतिपक्षे—संगीतका—सङ्गतं=गीतं स्वरगुणदूषणग्रामश्रुतियतिमूर्च्छनालक्षणं यस्यां सा तथोक्ता। तथा 'स्वरः सन्तर्जितो यत्र रागत्वं प्रतिपद्यते। मूर्च्छनामिति तां प्राहुर्मुनयो ग्रामसम्भवाम्॥' सा चैकविंशतिविधा। यदुक्तम्—"सप्तस्वरास्त्रयो ग्रामा मूर्च्छनास्त्वेकविंशतिः।" मूर्च्छनया सह वर्तत इति समूर्च्छना। किंतु=परं, हे स्वामिन् !=हे राजन् !, तस्याः=दमयन्त्याः, त्वयि=नृपे नले, लयभङ्गः—लयः=तत्परता तल्लीनता वा, तस्याः भङ्गः=नाशः, न दृश्यते=नावलोक्यते, गीतेस्तु लयः=द्रुतमध्यविलम्बितलक्षणः, तद्भङ्गः स्पष्टं दृश्यते। इति द्वयोरन्तरमिति भावः। श्लेषाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५०॥

ज्योत्स्ना—और भी—(गीति के समान दमयन्ती भी) आपके प्रति उत्सुकता के कारण सम्यक् रूप से ख्याति प्राप्त की हुई है अर्थात् वह आपमें ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्सुक है—ऐसा सब जगह कहा जाता है तथा आपका स्मरण करते-करते वह भी मूर्च्छित हो जाती है किन्तु हे प्रभो ! आपमें उसकी तल्लीनता (कभी भी) भग्न नहीं होती ।"

विमर्श—यहाँ भी पूर्ववत् स्थिति है। पूर्वार्ध द्वारा दोनों में समानता प्रदर्शित की गई है और उत्तरार्ध द्वारा असमानता को बताया गया है, जैसे—

गीति भी संगीतका अर्थात् गीत के स्वर-गुण-दूषण-ग्राम-श्रुति-यति और मूर्च्छना नाम लक्षणों वाली है, गीति भी मूर्च्छनाओं से अलंकृत है। किन्तु गीति में द्रुत, मध्य, विलम्बित आदि लयों का भंग यत्र-तत्र दिखाई देता है, जबकि दमयन्ती में लय का भग्न होना नहीं दिखाई देता।

इस प्रकार उपर्युक्त दो श्लोकों में गीति और दमयन्ती में बहुधा समानता को प्रदर्शित करते हुए भी अन्ततः गीति की कतिपय कमियों को दिखा कर उसकी अपेक्षा दमयन्ती की उत्कृष्टता प्रतिपादित की गई है, जो कि कवि का उद्देश्य है।

संगीतशास्त्र में स्वरों के संतर्जित होने से जिसमें राग उत्पन्न होता है उसी को 'मूर्च्छना' नाम से अभिहित किया जाता है; यह मूर्च्छना इक्कीस प्रकार की मानी गई है, जैसा कि नाट्यशास्त्र में कहा भी गया है—

"सप्त स्वरास्त्रयो ग्रामा मूर्च्छनास्त्वेकविंशतिः ।"

एवमुक्तवति किन्नरेश्वरे किमप्यलीककोपकुटिललोलद्भ्रूवलयावलितकन्धरमवलोक्य किन्नरी वक्तुमारभत ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=ईदृशं, किंनरेश्वरे=किन्नरपतौ, तस्मिन् किन्नरयूनि उक्तवति=कथयति सति, किंनरी=किन्नरपत्नी, किमपि=किञ्चिदपि, अलीककोपकुटिललोलद्भ्रूवलयावलितकन्धरम्—अलीककोपात्=मिथ्याकोपात्, कुटिलं=वक्रं, लोलत्=चञ्चलं च, भ्रूवलयं=भ्रूचक्रं, यस्यास्तथाभूता सती वलितः=तिर्यग्भूतः, कन्धरः=ग्रीवा यस्मिन् कर्मणि तद्यथा स्यात्तथा, वक्तुं=कथयितुम्, आरभत=प्रारेभे ॥

ज्योत्स्ना—किन्नरराज के इस प्रकार कहने पर (उस किन्नरयुवक के प्रति) किन्नरी ने मिथ्या कोप के कारण कुछ कुटिल चंचल भ्रूपंक्तियों वाली होकर गर्दन को घुमाकर (उससे) कहना प्रारम्भ किया ॥

'सुन्दरक ! मा मैवं वादीः ॥

कल्याणी—सुन्दरकेति। हे सुन्दरक !=हे किन्नरेश्वर !, एवम्=इत्थं, मा मा वादीः=मा भण, तव कथनं सर्वथा ह्ययुक्तमिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—"नहीं-नहीं सुन्दरक ! इस प्रकार मत कहो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुष्काङ्गी घनचार्वङ्ग्याः सुवाचः काकलीस्वरा ।
दमयन्त्याः कथं गीतिः सादृश्यमवगाहते ॥५१॥

अन्वयः—शुष्काङ्गी काकलीस्वरा गीतिः घनचार्वङ्ग्याः सुवाचः दमयन्त्याः सादृश्यं कथम् अवगाहते ॥५१॥

कल्याणी—शुष्केति । शुष्कम्=अनार्द्रम्, अङ्गम्=अवयवः यस्यास्तथाभूता, अथ च शुष्कम्=अवकृष्टम्, अङ्गम्=अवयवः यस्याः सा, काकलीस्वरा—काकली=श्लेष्मवैगुण्याद् द्विधाभूतः, स्वरः यस्याः सा, अथ च कु=ईषत्, कलोऽस्यामिति काकली [गौरादित्वान् ङीष्]=निषादसंज्ञः स्वरः यस्यास्तादृशी, गीतिः=गानं, घनचार्वङ्ग्या—घनं=सुश्लिष्टं, चारु=मनोरमम्, अङ्गम्=अवयवः यस्या एतादृश्याः, सुवाचः—सुष्ठु=शोभना, वाक्=वाणी यस्या एतादृश्याश्च, दमयन्त्याः=भैम्याः, सादृश्यं=समानतां, कथं=केन प्रकारेण, अवगाहते=अवाप्नोति । गीतिः कथमपि न दमयन्तीसादृश्यमवाप्तुमर्हतीति भावः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५१॥

ज्योत्स्ना—शुष्क अर्थात् नीरस अंगों वाली और काकली अर्थात् श्लेष्म के वैगुण्य से दो प्रकार के स्वर वाली अथवा कुछ खर-खराहट लिये निषादसंज्ञक स्वर वाली गीति सुगठित मनोरम अंगों (अवयवों) एवं सुन्दर वाणी वाली दमयन्ती की समानता किस प्रकार प्राप्त कर सकती है ॥५१॥

अपि च —

गीतेर्ग्रामाः किल द्वित्राः सा तु ग्रामसहस्रभाक् ।
कूटतानघना गीतिः कथं तस्याः समा भवेत् ॥५२॥

अन्वयः—गीतेः द्वित्राः ग्रामाः किल, सा तु ग्रामसहस्रभाक् । गीतिः कूटतानघना, कथं तस्याः समा भवेत् ? ॥५२॥

कल्याणी—गीतेरिति । गीतेः=गानस्य, द्वित्राः=द्वित्रिसंख्यकाः ग्रामाः, किलेति निश्चये । षड्जमध्यमगान्धारा इति त्रयो ग्रामाः, तेषु गान्धारस्य स्वर्गविषयत्वादत्र द्वावेवेति द्वित्राः । सा=दमयन्ती तु, ग्रामसहस्रभाक्—ग्रामाः=खेटकानि, तेषां सहस्रं भजते इति तथोक्ता, तस्या ग्रामसहस्रं विद्यत इति भावः । गीतिः कूटतानाः=पञ्चत्रिंशत्, तैः घना=श्लिष्टा, दमयन्ती तु न हि कूटतानघना=कपटविस्तारबहुलेति गीतिः कथं=केन प्रकारेण, तस्याः=दमयन्त्याः, समाः=सदृशी, भवेत्=स्यात् । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५२॥

ज्योत्स्ना—और भी—गीति के तो निश्चित रूप से दो-तीन ग्राम ही होते हैं, जबकि वह दमयन्ती तो हजारों ग्रामों को रखने वाली है; फिर पैंतीस प्रकार के कूट-तानों से समन्वित गीति उस दमयन्ती के समान कैसे हो सकती है ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—ग्राम को 'द्वित्राः' कहने का तात्पर्य यह है कि गीति में षड्ज, मध्यम और गान्धारनामक तीन ग्राम होते हैं, जिनमें से गान्धार का प्रयोग केवल स्वर्गलोक में किया जाता है। मर्त्यलोक में दो ग्राम ही प्रयुक्त होते हैं, इसीलिए कवि द्वारा यहाँ दो या तीन ग्राम कहा गया है।

गीति में पैंतीस प्रकार के कूट-तान होते हैं; अतएव उनसे समन्वित होने के कारण गीति श्लिष्ट होती है, जबकि दमयन्ती कूट अर्थात् कपट के तान (विस्तार) के घन अर्थात् बहुलता से सर्वथा रहित है। आशय यह है कि छल-छद्म का उसमें नामोनिशान भी नहीं है। ऐसी स्थिति में दमयन्ती की बराबरी गीति कैसे कर सकती है? निहितार्थ यह है कि गीति की समानता दमयन्ती के साथ किसी भी प्रकार करना सम्भव नहीं है ॥५२।

किञ्चान्यत्—

ज्वरितेव बहुलङ्घनप्रयोगप्रकाशितमूर्च्छना बहुलकम्पा च, उन्मत्तेव बहुभाषा बहुताला च, वेश्येव बहुगा बहुदृष्टरागा च, अटवीव बहुककुभभेदा बहुलनिषादस्थानका च गीतिरियम् ॥

कल्याणी—ज्वरितेवेति। इयम्=एषा, गीतिः=गानं, ज्वरितेव=ज्वरग्रस्तेव, बहुलङ्घनप्रयोगप्रकाशितमूर्च्छना—बहुलङ्घनम्=उद्ग्राहितादधिकोच्चारणं, तस्य प्रयोगात् प्रकाशिता=प्रकटिता, मूर्च्छना=उत्तरमन्द्रादिका यस्यां सा तथोक्ता; तथा बहुलकम्पा च—बहुलः=समधिकः, कम्पः=स्वरकृतं चलनं यस्यां सा तथोक्ता। ज्वरितापक्षे—बहुलङ्घनस्य=समधिकोपवासस्य, प्रयोगात् प्रकाशिता मूर्च्छना=मोहः यया सा, तथा बहुलः=समधिकः, कम्पः=अङ्गकृतं चलनं यस्यां सा तथोक्ता। उन्मत्तेव=उन्मादग्रस्तेव, बहुभाषा—बह्वयो भाषा=भैरवीप्रभृतयः षट्त्रिंशद् भाषा यस्यां सा तथोक्ता, तथा बहुताला च—बहुः तालः=चञ्चत्पुटादिः यस्यां सा तथाविधा। उन्मत्ता तु बहुभाषते तालिकाश्च दत्ते। वेश्येव=वाराङ्गनेव, बहुगा—बहुभिर्गीयत इत्यस्मात् कारणाद् गीतिः बहुगा=बहुगामिनी, बहुजनविषयेति भावः। वेश्या तु बहून्=बहुजनसकाशं गच्छतीति बहुगा। बहुदृष्टरागा च—गीतिः बहवो दृष्टा रागाः=श्रीरागप्रभृतयः यस्यां तथाभूता, वेश्या तु—बहुषु दृष्टः रागः=अनुरागः यस्या इति बह्वासक्तिः। अटवीव=अरण्यमिव, बहुककुभभेदाः—ककुभः—कस्य=वायोः, कुः=स्थानं, भाति अस्मादिति ककुभः [कक्+भा+क पृषो०] अथवा कं=वायुं, स्कुभ्नाति=विस्तारयतीति ककुभः [क+√स्कुभ्+कः]। ककुभः=ध्वनिः, बहूनां=विविधानां, ककुभानां=ध्वनीनां, यस्यां सा तथोक्ता तथा बहुलनिषादस्थानका—बहुलः निषादः=स्वरविशेषः, स्थानकं च=मन्द्रमध्यमतारलक्षणं च यस्यां सा तथोक्ता। अटवीपक्षे तु—बहुककुभभेदा=विविधार्जुनवृक्षघनेत्यर्थः। बहुलनिषाद-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थानका च—बहुलाः निषादाः=शबराः, स्थानकानि=आलबालाः कुटीराश्च यस्यां सा तथोक्ता। एवं ज्वरितादुपमानप्रतिपादितदोषा गीतिः कथमिव दमयन्तीसमेति किन्नरीकथनाशयः ॥

ज्योत्स्ना—और क्या कहा जाय; अत्यधिक उपवास के कारण मूर्च्छा को प्रकट करने वाली तथा अत्यधिक काँपते हुए अंगों वाली ज्वराक्रान्त स्त्री के समान यह गीति भी अत्यन्त गहन उच्चारण के द्वारा मूर्च्छनाओं को प्रकाशित करती है तथा स्वर में अत्यधिक कम्पन को व्यक्त करती है। बहुत बोलने (बड़बड़ाने) वाली और ताली-वादन करनेवाली उन्मत्ता (पागल) स्त्री के समान (यह गीति भी) भैरवी आदि छत्तीस प्रकार की भाषाओं वाली तथा चञ्चत्पुट आदि तालों वाली होती है। बहुगा अर्थात् बहुत लोगों के पास गमन करने वाली तथा बहुतों के प्रति अनुराग (आसक्ति) रखने वाली वेश्या के समान (यह गीति भी) बहुगा अर्थात् बहुतों के द्वारा गाई जाने वाली तथा श्री आदि विविध रागों वाली होती है। विविध प्रकार के ककुभ अर्थात् अर्जुन वृक्षों वाली तथा बहुत से निषादों (शबरों) और स्थानकों अर्थात् आलबालों एवं कुटीरों वाली अटवी (जंगल) के समान (यह गीति भी) नानाविध ध्वनियों वाली तथा बहुत से निषाद (स्वर) और मन्द्र, मध्यम तार आदि स्थानकों वाली होती है।

आशय यह है कि जो गीति ज्वरग्रस्ता स्त्री के समान क्षीण अंगों वाली, उन्मत्ता स्त्री के समान निन्दित कार्यों वाली तथा जंगल के समान अव्यवस्थित स्वरूप वाली है वह गीति स्वस्थ-सुघटित अंगों वाली, स्पृहणीय कार्यों वाली तथा पूर्णतया सुव्यवस्थित स्वरूप वाली दमयन्ती की समानता कैसे कर सकती है? ॥

तद्वरमिदमुच्यताम्—

वेदविद्योपमा देवी मनोहरपदक्रमा।
उद्द्योतिता पुराणाङ्गमन्त्रब्राह्मणशिक्षया ॥५३॥

अन्वयः—वेदविद्योपमा देवी मनोहरपदक्रमा पुराणाङ्गमन्त्रब्राह्मणशिक्षया उद्योतिता (वर्तते) ॥५३॥

कल्याणी—वेदेति। वेदविद्योपमा=वेदविद्येव, देवी=दमयन्ती, मनोहर-पदक्रमा—मनोहरः=मनोरमः, पदक्रमः=पदन्यासः यस्यास्तथाविधा, तथा पुराणा-ङ्गमन्त्रब्राह्मणशिक्षया—पुराणं=जीर्णम्, अङ्गं=तनुः येषां ते पुराणाङ्गाः=वृद्धाः, ते च मन्त्रब्राह्मणाश्च=मन्त्रप्रधानाः ब्राह्मणाश्च, तेषां शिक्षया=उपदेशेन, उद्द्योतिता=उद्भासिता, वर्तते। वेदविद्यापि मनोहरपदक्रमा भवति, तत्स्वाध्यायः पदपाठेन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्रमपाठेन च क्रियते। तथा पुराणानां=मार्कण्डेयादीनाम्, अङ्गानां=शिक्षाकल्पप्रभृतीनां, मन्त्रब्राह्मणस्य च=ग्रन्थविशेषस्य च, शिक्षया=अभ्यासेन, उद्द्योतते=विभूष्यते। श्लेषानुप्राणितोपमा। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥५३॥

ज्योत्स्ना—अतः अच्छा हो यदि यह कहा जाय—

मनोहर पद-क्रम वाली अर्थात् पदपाठ और क्रमपाठ के माध्यम से स्वाध्याय की जाने वाली तथा (मार्कण्डेय आदि अट्ठारह) पुराणों, (शिक्षा-कल्पप्रभृति छः) अंगों और मन्त्र-ब्राह्मण ग्रन्थों के शिक्षा अर्थात् अभ्यास से विभूषित वेदविद्या के समान देवी दमयन्ती भी मनोहर पदविन्यास वाली तथा जीर्ण अंगों वाले मन्त्र-प्रधान (मन्त्रणा में कुशल) ब्राह्मणों के उपदेश से उद्भासित है।

विमर्श—वेदों का पाठ ग्यारह प्रकार से किया जाता है, वे हैं—१. संहिता-पाठ, २. पदपाठ, ३ क्रमपाठ, ४. चर्चापाठ, ५. श्रावकपाठ, ६, चर्चकपाठ, ७. श्रवणीपारपाठ, ८. क्रमपारपाठ, ९. चटपाठ, १०. जटापाठ और ११. दण्डपाठ।

पुराण अट्ठारह प्रकार के होते हैं, वे हैं—१. ब्रह्मपुराण, २, पद्मपुराण, ३. विष्णुपुराण, ४. शिवपुराण, ५ कल्किपुराण, ६. नारदपुराण, ७. मार्कण्डेयपुराण, ८. अग्निपुराण, ९ भविष्यपुराण, १०. ब्रह्मवैवर्तपुराण, ११ लिङ्गपुराण, १२. वराहपुराण, १३. स्कन्दपुराण, १४ वामनपुराण, १५. कूर्मपुराण, १६. मत्स्य-पुराण, १७. गरुड़पुराण और १८. ब्रह्माण्डपुराण।

वेद के छः अंग होते हैं, वे हैं—१. शिक्षा, २. कल्प, ३. व्याकरण, ४. निरुक्त, ५. छन्द और ६. ज्योतिष ॥५३॥

किन्त्वियमेकपथा, सा तु दृष्टशतपथा' इत्येवमनेकविधवक्रोक्ति-विशेषैरभिनन्दयति दमयन्तीं किन्नरमिथुने, भूतभूयिष्ठायां विभावर्याम्, सुरसङ्घ इवादृश्यमानमानुषे निशीथे, स्थगितवति भृङ्गभासि तमसि भुवनम्. अनन्तरमवसरपाठकः पपाठ ॥

कल्याणी—किन्त्विवमिति। किन्तु=परम्, इयम्=एषा दमयन्ती, एकपथा=एकमार्गा, नलमार्गैकगामिनीति भावः। सा=वेदविद्या तु, दृष्टशतपथा—दृष्टाः शतं पन्थानो यया सा दृष्टशतपथा=शतपथगामिनी; अथ च दृष्टः शतपथः=तदाख्यो ग्रन्थः यस्याः सा तथोक्ता। श्लेषानुप्राणितो व्यतिरेकालङ्कारः। इति=एवम्, अनेक-विधवक्रोक्तिविशेषैः=बहुविधवचनभङ्गिविशेषैः, किन्नरमिथुने=किन्नरद्वन्द्वे, दमयन्तीम् अभिनन्दयति=प्रशंसति सति, भूतभूयिष्ठं—भूयिष्ठं=समधिकं, भूता=अतिक्रान्तेति भूतभूयिष्ठा, तस्यां विभावर्यां=रात्रौ सत्याम्, सुरसङ्घे=देवसमूह इव, निशीथे=रात्रौ, अदृश्यमानमानुषे—न दृश्यमानाः=विलोक्यमानाः, मानुषाः=मानवाः यत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाभूते सति । सुरसङ्घेऽपि मानुषा न दृश्यन्ते । भृङ्गभासि—भृङ्गाणां=मधुपानां, भाः=कान्तिरिव कान्तिर्यस्य तस्मिन् भृङ्गभासि, अतिकृष्ण इति यावत् । तमसि=अन्धकारे, भुवनं=लोकं, स्थगितवति=आच्छादितवति सति, अनन्तरं=तदनन्तरं, तस्मिन्नेव काल इति भावः । अवसरे पठतीति अवसरपाठकः=वैतालिकः, पपाठ=वक्ष्यमाणं श्लोकद्वयं जगौ ॥

ज्योत्स्ना—परन्तु यह दमयन्ती (नलमार्गरूप) एक ही पथ पर चलने वाली है और वह वेदविद्या दृष्टशतपथा अर्थात् सैकड़ों मार्गों को देख चुकी है अथवा शतपथनामक ब्राह्मण ग्रन्थ के अनुसार देखी गई है।" इस प्रकार नानाविध वक्रोक्तियों के माध्यम से किन्नरयुगल के द्वारा दमयन्ती की प्रशंसा किये जाने पर, बहुत अधिक रात्रि के व्यतीत हो जाने पर, मनुष्यों से रहित देवसमूह के समान रात्रि के भी मनुष्यरहित हो जाने पर, भ्रमरों की कान्ति के समान कान्ति वाले अर्थात् अत्यन्त घने काले अन्धकार के द्वारा संसार के आच्छादित हो जाने पर अवसरपाठक अर्थात् वैतालिक ने (इस प्रकार) पढ़ा—

'उपरम रमणीयात्किन्नरद्वन्द्वगीता-
दभिभवति निशीथो नाथ नेत्राणि पश्य ।
मदन-वश-विलोलल्लोचनाम्भोरुहाणां
मिलतु कुलवधूनां सेवको लोक एषः ॥५४॥

अन्वयः—नाथ ! रमणीयात् किन्नरद्वन्द्वगीतात् उपरम । पश्य, निशीथः नेत्राणि अभिभवति । मदनवशविलोलल्लोचनाम्भोरुहाणां कुलवधूनां सेवकः एषः लोकः मिलतु ॥५४॥

कल्याणी—उपरमेति । नाथ !=स्वामिन् ! रमणीयात्=मनोहरात् किन्नरद्वन्द्वगीतात्—किन्नरद्वन्द्वस्य=किन्नरमिथुनस्य, गीतात्=गानात्, उपरम=विरतो भव । पश्य=अवलोकय, निशिथः=अर्धरात्रः, नेत्राणि=नयनानि, अभिभवति=परास्यति, मदनपरवशविलोलल्लोचनाम्भोरुहाणां—मदनवशात्=कामवशात्, विलोलन्ति=चञ्चलानि, लोचनानि=नयनानि त एव अम्भोरुहाणि=कमलानि यासां तथाविधानां, कुलवधूनां=कुलाङ्गनानां, सेवकः=परिजनः, प्रेमीत्यर्थः । एषः=अयं, लोकः=परिजनवर्गः, मिलतु=मिलने समर्थो भवतु, ताभिः स्वप्रियाभिरिति भावः । मालिनी वृत्तम् ॥५४॥

ज्योत्स्ना—हे स्वामिन् ! किन्नरयुगल के मनोहर गीत से विरत होइये । देखें—निशीथ अर्थात् अर्धरात्रि (हम सभी के) नेत्रों को परास्त कर रही है अर्थात् आँखें बन्द हो रही हैं । (अतः ऐसा कीजिये, जिससे) काम के वशीभूत चञ्चल नेत्ररूपी कमलों वाली कुलवधुओं का सेवक अर्थात् प्रेमी यह परिजनवर्ग अपनी प्रियायों से मिल सके ॥५४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—

शतगुणपरिपाट्या पर्यटन्नन्तराले
कमलकुवलयानामर्धरात्रेऽपि खिन्नः ।
उपनदि दयितायाः क्वापि शब्दं निशम्य
भ्रमति पुलिनपृष्ठे चक्रवच्चक्रवाकः ॥५५॥

अन्वयः—खिन्नः चक्रवाकः अर्धरात्रे अपि कमलकुवलयानाम् अन्तराले शतगुणपरिपाट्या पर्यटन् उपनदि क्वापि दयितायाः शब्दं निशम्य पुलिनपृष्ठे चक्रवत् भ्रमति ॥५५॥

कल्याणी—शतगुणेति । खिन्नः=प्रियाविरहादाकुलः, चक्रवाकः=चक्रवाकपक्षी, अर्धरात्रेऽपि=मध्यनिशीथेऽपि, कमलकुवलयानां=नीलकमलानाम्, अन्तराले=मध्ये, शतगुणपरिपाट्या—शतगुणा या परिपाटी तया, विविधप्रकारेणेत्यर्थः। पर्यटन्=परिभ्रमन्, उपनदि—नद्याः समीपमुपनदि=नदीसमीपे, समीपेऽर्थेऽव्ययीभावः । क्वापि=कुत्रचिदपि, दयितायाः=प्रियायाः, चक्रवाक्या इत्यर्थः । शब्दं=ध्वनिं, निशम्य=आकर्ण्य, पुलिनपृष्ठे=तटप्रदेशे, [अनिर्वृतः सन्] चक्रवद् भ्रमति=पर्यटति। मालिनी वृत्तम् ॥५५॥

ज्योत्स्ना—और भी—खिन्न अर्थात् प्रियाविरह से व्याकुल चक्रवाक पक्षी अर्धरात्रि में भी नीलकमलों के मध्य सैकड़ों प्रकार से अर्थात् विविध प्रकार से परिभ्रमण करता हुआ नदी के समीप किसी स्थान पर प्रियतमा चक्रवाकी का शब्द सुनकर तटप्रदेश पर (व्याकुल होकर) चक्र के समान चारो ओर घूम रहा है ॥५५॥

अथ यथाप्रियं प्रेषितपरिजनो रजनिशेषमतिवाहयितुमनुरूपं निरूप्य किन्नरमिथुनस्य शयनमासन्ननिद्रागृहे हंसपिच्छच्छायाच्छप्रच्छदपटाच्छादितहंसतूलतल्पमभजत् ॥

कल्याणी—अथेति । अथ=अनन्तरं, यथाप्रियं=प्रियस्थानानतिक्रमेण, यथाकांक्षितमित्यर्थः । प्रेषितपरिजनः—प्रेषितः=विसृष्टः, परिजनः=अनुचरवर्गः येन स तथोक्तः नलः, रजनिशेषं=रात्रेरवशिष्टभागम्, अतिवाहयितुं=यापयितुम्, आसन्ननिद्रागृहे=समीपवर्तिनि शयनागारे, किन्नरमिथुनस्य=किम्पुरुषयुगलस्य, अनुरूपम्=अनुकूलं, शयनं=शय्यां, निरूप्य=निर्धार्य, हंसपिच्छच्छायाच्छप्रच्छदपटाच्छादितहंसतूलतल्पं—हंसपिच्छस्य छाया=कान्तिरिव छाया यस्य तथाविधेन अच्छेन=निर्मलेन, प्रच्छदपटेन=आवरणवस्त्रेण, आच्छादितं हंसमिव तूलमिव चोज्ज्वलं मृदु तल्पं=शय्याम्, अभजत्=अध्यशेत ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् परिजनों को उनके द्वारा आकांक्षित स्थानों पर भेज देने वाला (वह राजा नल) रात्रि के अवशिष्ट भाग को व्यतीत करने के लिए समीपवर्ती शयनागार में किन्नरयुगल के लिए उसके अनुरूप शय्या का निर्धारण कर अर्थात् व्यवस्था कर स्वयं भी हंसपंख की कान्ति के समान कान्ति वाले स्वच्छ चादर से आच्छादित (ढँके हुए) हंस के समान उज्ज्वल और रूई के समान कोमल शय्या पर लेट गया ॥

तत्र च दमयन्त्यनुरक्तोऽयमितीर्ष्ययेवानायान्त्यां निद्रायां द्रोणीद्रुमान्तरालसुप्तोत्थितविविधविहङ्गविरुतानि विनिद्रवनदेवतापठ्यमानप्राभातिकपुण्यकीर्तनानीवाकर्णयन्ननेककालप्रणालिकापर्ययेण पर्यस्तेऽस्तगिरिमस्तके मुक्तास्तबकितनीलवितानपट इव तारातिमिरपटले, पट्टांशुकवैजयन्तीष्विव भविष्यति दिनकरोदयोत्सवे नभस्तलमलङ्कुर्वतीषु पूर्वस्यां दिशि प्रभातप्रभावल्लरीषु, वल्लकीक्वाणरमणीये श्रयति श्रवणपथमीषदुन्मिषत्कमलमुकुलमुखमुक्तमधुकरमन्द्रध्वनौ, ध्वस्तनिद्रेण प्रभातोचितषड्जानुविद्धशुद्धभाषामालपतानेन किन्नरमिथुनेन गीयमानमिमं श्लोकमश्रृणोत् ॥

कल्याणी—तत्रेति। तत्र=तल्पे च, अयं=राजा नलः, दमयन्त्यनुरक्तः—दमयन्त्याम्, अनुरक्तः=आसक्तः, [न हि मयि] इति=एवम्, ईर्ष्ययेव=ईर्ष्यां कुर्वन्निव, निद्रायाम् अनायान्त्याम्=अनागच्छन्त्याम् [उत्प्रेक्षा]। द्रोणिद्रुमान्तरालसुप्तोत्थितविविधविहङ्गविरुतानि—द्रोणी=पर्वतश्रेणिद्वयस्यान्तरिको भूभागः, यो मध्ये निम्नत्वात्प्रान्तयोश्चोन्नतत्वान्नौसदृशो दृश्यते; लोके तु द्रोण्येव 'घाटी'त्युच्यते। तत्र ये द्रुमाः=वृक्षाः, तेषाम् अन्तराले=मध्ये, सुप्तोत्थिताः—आदौ सुप्ताः पश्चादुत्थिताः, ये विविधाः=बहुविधाः, विहङ्गाः=पक्षिणः, तेषां विरुतानि=कलरवान्, विनिद्रवनदेवतापठ्यमानप्राभातिकपुण्यकीर्तनानि इव—विनिद्राः=प्रबुद्धाः, याः वनदेवताः=वनाधिष्ठातृदेवताः, तैः पठ्यमानानि=वाच्यमानानि, प्राभातिकानि=प्रातःकालिकानि, पुण्यकीर्तनानीव=पवित्रकीर्तनानीव, आकर्णयन्=शृण्वन्, अनेककालप्रणालिकापर्ययेण—एकः=स्थिरः, न एकः इति अनेकः=अस्थिरः, यः कालः=समयः, तस्य या प्रणालिका=परिवर्तनरूपाऽविच्छिन्नपरम्परा, तस्या। पर्ययेण=नियमितक्रमेण, एकशब्दः स्थिरार्थोऽपीति वामनशिवरामआप्टेमहोदयाः संस्कृत-इङ्गलिशकोशकाराः। अस्तगिरिमस्तके=अस्ताचलशिखरे, मुक्तास्तबकितनीलवितानपट इव=मौक्तिकगुच्छोपेतनीलवितानपट इव, तारातिमिरपटले—ताराणां=नक्षत्राणां च, तिमिरस्य=अन्धकारस्य च, पटले=समुच्चये, पर्यस्ते=विकीर्णे [अत्र ताराणां मुक्ताः, तिमिरपटलस्य नीलवितानपट उपमानम्], पूर्वस्यां दिशि=प्राचीदिशायां, प्रभातप्रभावल्लरीषु—प्रभाते=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रातःकाले, याः प्रभाः=कान्तयः, ता एव वल्लर्यः=लताः तासु, भविष्यति=संपत्स्यमाने, दिनकरोदयोत्सवे=सूर्योदयरूपोत्सवे, पट्टांशुकवैजयन्तीष्विव=रक्तवर्णवस्त्रनिर्मितपताकास्विव, नभस्तलं=गगनतलम्, अलंकुर्वतीषु=शोभयन्तीषु सतीषु, वल्लकीक्वाणरमणीये—वल्लकी=वीणा, तस्य यः क्वाणः=झङ्कृतिः, तद्वत् रमणीये=प्रिये, ईषत्=स्वल्पम्, उन्मिषत्कमलमुकुलमुखमुक्तमधुकरमन्द्रध्वनौ—उन्मिषतां=विकसतां, कमलमुकुलानां=कमलकलिकानां, मुखेभ्यः=अग्रभागेभ्यः, मुक्तः=निर्गतः, यः मधुकराणां=मधुपानां, मन्द्रः=मन्दः गम्भीरश्च; ध्वनिः=निस्वनः तस्मिन्, श्रवणपथं=कर्णमार्गं, श्रयति=आश्रयति, श्रूयमाणे सतीत्यर्थः। ध्वस्तनिद्रेण—ध्वस्ता=विनष्टा, निद्रा=स्वपनं यस्य तेन, प्रभातोचितषड्जानुविद्धशुद्धभाषाम्—प्रभातोचिता=प्रातःकालानुकूला, षड्जानुविद्धा=षड्जस्वरयुक्ता, या विशुद्धभाषा ताम्, आलपता=गायता, अनेन=एतेन, किन्नरमिथुनेन=किन्नरयुगलेन, गीयमानं=पठ्यमानम्, इमं=वक्ष्यमाणं, श्लोकं=पद्यम्, अशृणोत्=आकर्णयत् ॥

ज्योत्स्ना—और उस शय्या पर "यह राजा नल दमयन्ती में अनुरक्त है (मुझमें नहीं)" इस प्रकार की ईर्ष्या से मानों नींद के न आने पर द्रोणी अर्थात् घाटी में स्थित वृक्षों के मध्य में पहले सोये, फिर उठे हुए नाना प्रकार के पक्षियों के कलरवों को जगी हुई वनदेवियों द्वारा पढ़ी जा रही प्रातःकालिक पवित्र कीर्तन के समान सुनते हुए, अस्थिर समय के परिवर्तनरूप अविच्छिन्न परम्परा के नियमित क्रम से अस्ताचल-शिखर पर मोतियों के गुच्छों से समन्वित नीले वितानपट के समान ताराओं और अन्धकार-पटल के पूर्णतया बिखर जाने पर, पूर्व दिशा में प्रातःकालिक कान्तिरूपी लताओं के सम्पन्न होने पर अर्थात् दिखाई देने पर, सूर्योदयरूप उत्सव में पट्टांशुक वैजयन्ती अर्थात् रक्त वर्ण के वस्त्र से निर्मित पताका द्वारा मानों गगनतल को अलंकृत किये जाने पर, थोड़े-थोड़े विकसित कमलकलिकाओं के अग्रभागों (मुखों) से निकलते हुए भ्रमरों के वीणा की झंकृति के समान रमणीय ध्वनि के श्रवणपथ में सुनाई पड़ने पर प्रातःकालोचित षड्ज स्वरयुक्त प्राञ्जल भाषा में आलाप ले रहे नष्ट निद्रा वाले किन्नरयुगल के द्वारा गाये जा रहे इस श्लोक को सुना—

'धुतरजनिविरामोन्मीलदम्भोजराजि-
स्तनु-तुहिन-तुषारानुद्गिरन्गन्धवाहः।
कलित-कलभ-कुम्भ-भ्रान्तिषूद्घाटितेषु
स्खलति निधुवनान्तश्रान्तकान्ताकुचेषु ॥५६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—धुतरजनिविरामोन्मीलदम्भोजराजिः तनुतुहिनतुषारान् उद्गिरन्गन्धवाहः कलितकलभकुम्भभ्रान्तिषु उद्घाटितेषु निधुवनान्तश्रान्तकान्ताकुचेषु स्खलति ॥५६॥

कल्याणी—धुतेति। धुतरजनिविरामोन्मीलदम्भोजराजिः—धुता=कम्पिता, रजनिविरामे=रात्रेरवसाने, उन्मीलन्ती=विकसन्ती, अम्भोजराजिः=कमलश्रेणिः येन स तथोक्तः, तनुतुहिनतुषारान्=सूक्ष्मशीतलहिमकणान्, उद्गिरन्=वर्षन्, गन्धवाहः=पवनः, कलितकलभकुम्भभ्रान्तिषु—कलिता=उत्पादिता, कलभस्य=करिणः, कुम्भयोर्भ्रान्तिः यैस्तथाविधेषु, उद्घाटितेषु=नग्नीकृतेषु, निधुवनान्तश्रान्तकान्ताकुचेषु—निधुवनान्ते=रतिक्रीडावसाने, श्रान्तानां=शिथिलाङ्गानां, कान्तानां=रमणीनां, कुचेषु=स्तनेषु, स्खलति=अवाङ्मुखं पतति सन्मार्गाद् विचलति च। मालिनी वृत्तम् ॥५६॥

ज्योत्स्ना—"रात्रि की समाप्ति में खिलती हुई कमलपंक्तियों को कम्पित कर छोटे-छोटे शीतल हिमकणों (ओस-बिन्दुओं) को बरसाता हुआ पवन रतिक्रीड़ा की समाप्ति में शिथिल अंगों वाली रमणियों के हस्तिशावक के कुम्भस्थलों की भ्रान्ति उत्पन्न करने वाले नग्न स्तनों पर स्खलित हो रहा है; फिसल रहा है ॥५६॥

तदनु पुनः प्रभातप्रहृतप्रयाणभेरीरवविनिद्रितस्यापूरयतः समविषमवनविभागानुत्कल्लोलजलनिधेरिव चलतः सैन्यसमूहस्य कलकलमाकर्णयन्नुत्थाय कृतोचिताचारश्चारुचर्चितचन्द्रचूडचरणश्चटुलखुरचारीप्रचारेणाडम्बरितताण्डवस्य खण्डपरशोः पदलीलामिवाभ्यस्यता स्फुरद्घुरघुरायमाणघोणाग्रस्खलत्खलीनवशविगलितबहुललालाजलप्लवेन वनभुवि फेनिलजलनिधिमिवाकारयता जात्यतरतुरगसैन्येन परिवृतः पूर्वप्रस्थानस्थित्या प्रतस्थे ॥

कल्याणी—तदन्विति। तदनु=तदनन्तरं, प्रभातप्रहृतप्रयाणभेरीरवविनिद्रितस्य—प्रभाते=प्रातःकाले, प्रहृता=वादिता, या प्रयाणभेरी=प्रयाणसूचकदुन्दुभिः, तस्याः रवेण=शब्देन, विनिद्रितस्य=प्रबुद्धस्य, समविषमवनविभागान्=वनस्य समतलोन्नतावनतविभागान्, आपूरयतः=व्याप्नुवतः, उत्कल्लोलजलनिधेरिव—उत्थिताः कल्लोलाः=महातरङ्गाः यस्मिंस्तथाविधेः, जलनिधेः=समुद्रस्येव, चलतः=सञ्चरतः, सैन्यसमूहस्य=चमूवृन्दस्य, कलकलं=कोलाहलम्, आकर्णयन्=शृण्वन्, उत्थाय=उत्थित्वा, कृतोचिताचारः—कृतः=सम्पादितः, उचिताचारः=प्रातःकालोचितनित्यक्रिया येन स तथोक्तः, चारुचर्चितचन्द्रचूडचरणः—चारु=यथाविधि, चर्चितौ=पूजितौ, चन्द्रचूडस्य=भगवतः शिवस्य, चरणौ=पादौ येन स तथोक्तः, चटुलखुरचारीप्रचारेण—चटुलाः=चपलाः, ये खुराः=शफाः, तेषां चारी=गतिविशेषः, तस्याः प्रचारेण=प्रयोगेण, आडम्बरितताण्डवस्य—आडम्बरितः=प्रारब्धः, ताण्डवः=प्रचण्डनृत्यं येन तस्य, खण्डपरशोः=शिवस्य; पदलीलामिव=चरणविलासमिव, अभ्यस्यता=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभ्यासं कुर्वंता, अनुकुर्वंतेत्यर्थः । स्फुरद्धुरघुरायमाणघोणाग्रस्खलत्खलीनवशविगलित-बहललालाजलप्लवेन—स्फुरन्ती=स्पन्दमाना, घुरघुरायमाणा=घुर-घुरध्वनिं कुर्वंती, या घोणा=नासिका, तस्या अग्रात्=अग्रभागात्, स्खलन्=स्रंसमानः, खलीनः=रश्मिः, तद्वशात् विगलितस्य=प्रवहतः, बहलस्य=प्रचुरस्य; लालाजलस्य=ष्ठीवन-जलस्य; प्लवेन=पूरेण, वनभुवि=वनभूमौ, फेनिलजलनिधिमिव=फेनयुक्तसमुद्रमिव, आकारयता=आह्वयमानेन, जात्यतरतुरगसैन्येन—जात्यतराः=उत्कृष्टजात्युद्भवाः, तुरगाः=अश्वाः, तेषां सैन्येन=बलेन, परिवृतः=परितः आवृतः, पूर्वप्रस्थानस्थित्या=पूर्वप्रस्थानानुसारेण, प्रतस्थे=प्रययौ ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् पुनः प्रातःकाल में बजाई गई प्रयाणसूचक दुन्दुभि की आवाज से जगे हुए, वन के समतल और ऊँचे-नीचे भागों को व्याप्त करते हुए, उठते हुए विशाल तरंगों वाले समुद्र के समान चलते हुए सैन्यसमूह के कोलाहल को सुनते हुए(राजा ने) उठकर, प्रातःकालोचित नित्यक्रिया को सम्पन्न कर, भगवान् चन्द्रचूड़ (शिव) के चरणों की विधिपूर्वक अर्चना कर, चञ्चल खुरों की विशिष्ट गति के प्रयोग से ताण्डव नृत्य करने वाले भगवान् शिव की पदलीलाओं का अनुकरण करते हुए, फड़कती हुई, घुर-घुर की ध्वनि करती हुई नासिका के अग्रभाग से खिसकती हुई खलीन (लगाम) के कारण बहते हुए प्रचुर लाला-जल (लार) की धार से वनभूमि पर फेनयुक्त समुद्र का आह्वान-सा करते हुए उत्कृष्ट जाति में उत्पन्न घोड़ों वाले सैन्य से परिवृत होकर पूर्वप्रस्थान क्रम के अनुसार प्रस्थान किया ॥

स्थपुटस्थलीस्थितं स्थूलमेकमव्यग्रमग्रे राजा गजग्रामण्यमवलोक्य पुष्कराक्षमभाषत ॥

कल्याणी—स्थपुटेति । राजा=भूपतिः नलः, अग्रे=पुरतः, स्थपुटस्थली-स्थितम्=उच्चावचभुवि स्थितम्, अव्यग्रं=शान्तं, स्थूलं=पीनम्, एकं=कमपि, गज-ग्रामण्यं=गजयूथपतिम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, पुष्कराक्षं=पुष्कराक्षनामानं दमयन्ती-वार्त्तिकम्, अभाषत=अवोचत ॥

ज्योत्स्ना—राजा (नल) सामने ऊँची-नीची भूमि पर शान्तिपूर्वक स्थित किसी मोटे गजराज को देखकर पुष्कराक्ष से बोला—

'भद्र—

सालानकमनालानमत्युन्नतमनुन्नतम् ।
दन्तवन्तमदन्तं च पश्यैनमगजं गजम् ॥५७॥

अन्वयः—सालानकम् अनालानम् अत्युन्नतं अनुन्नतं दन्तवन्तम् अदन्तं च अगजम् एनं गजं पश्य ॥५७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—सालेति। अत्र 'सालानकमनालानमित्यादिष्वापाततो विरोधः प्रतीयते, तत्परिहारपूर्वकं व्याख्यायते। सालानकम्—अलीनां समूह आलं, तदेव आनकः=पटहः, प्रत्यायकत्वादिति भावः। आलानकेन सह विद्यमानमिति सालानकम्। मदवारिगन्धाकृष्टभ्रमरैर्गजो मत्तः प्रतीयते, तस्मात्तत्समूहे पटहत्वारोपः। अनालानम्—नास्ति आलानं=बन्धनस्तम्भः यस्य तमनालानम्, बन्धनरहितमित्यर्थः। वन्यत्वादिति भावः। अत्युन्नतम्=अतीवोच्चम्, अनुन्नतम्—नास्ति उन्नता [उन्नस्य भावः]=प्रेरणा यस्य तमनुन्नतम्, स्वच्छन्दचारिणमित्यर्थः। दन्तवन्तं=दन्तुरम्, अदन्तं= [तृणादिकं] भक्षयन्तं च; अगजम्—अगे=पर्वते, जायत इत्यगजस्तं; पर्वतीयमित्यर्थः। एनम्=इमं पुरोदृश्यमानं, गजं=करिणं, पश्य=अवलोकय। अथवा—सालानकमित्यत्र सालान्-अकमिति विच्छेदः। सालान् इत्यस्य अदन्तमित्यनेनान्वयः, अकमिति गजविशेषणम्। तथा—सालान्=वृक्षान्, अदन्तं=भक्षयन्तम्, न कमिति अकम्=अकुत्सितं, सर्वलक्षणोपेतमित्यर्थः। अत्र 'किम्' क्षेपे। अनुन्नतमित्यत्र 'अनुन्न-तम्' इति विच्छेदः। अनुन्नेत्यामन्त्रणम्, तमिति च गजविशेषणम्। विरोधाभासोऽलङ्कारः ॥५७॥

ज्योत्स्ना—हे भद्र! भ्रमरसमूहरूप नगाड़े से समन्वित, बन्धन से रहित, अत्यन्त ऊँचे, प्रेरणा से रहित अर्थात् स्वच्छन्द गमन करनेवाले, दाँतों वाले और तृणादि का भक्षण कर रहे उस पर्वतीय हाथी को देखो।

विमर्श—प्रकृत पद्य में 'सालानकम् अनालानम्' आदि विशेषणों में आपाततः विरोध की प्रतीति होती है; अतएव यहाँ विरोधाभास अलंकार है ॥५७॥

अयं हि मन्मथविलासेषु परं वैदग्ध्यमवलम्बते ॥

कल्याणी—अयमिति। अयम्=एषः गजेन्द्रः, हि=निश्चयेन, मन्मथविलासेषु=कामकेलिविनोदेषु, परम्=उत्कृष्टं, वैदग्ध्यं=नैपुण्यम्, अवलम्बते=आश्रयते ॥

ज्योत्स्ना—निश्चय ही यह जंगली हाथी कामक्रीडा के विलासों में अत्यन्त निपुण है ॥

तथाहि—

मृदुकरपरिरम्भारम्भरोमाञ्चितायाः
सरस-किसलयाग्र-ग्रास-शेषार्पणेन ।
मदमुकुलितचक्षुश्चाटुकारी करीन्द्रः
शिथिलयति रिरंसुः केलिकोपं प्रियायाः ॥५८॥

अन्वयः—मदमुकुलितचक्षुः चाटुकारी करीन्द्रः रिरंसुः सरसकिलयाग्रग्रास-शेषार्पणेन मृदुकरपरिरम्भारम्भरोमाञ्चितायाः प्रियायाः केलिकोपं शिथिलयति ॥५८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—मृदुकरेति। मदमुकुलितचक्षुः—मदेन=कामोन्मादेन, मुकुलिते=निमीलिते, चक्षुषी=नेत्रे येन यस्य वा स तथोक्तः, चाटुकारी—चाटुम्=अनुरोधं कर्तुं शीलमस्येति चाटुकारी, करीन्द्रः=गजराजः, रिरंसुः=रन्तुमिच्छुः, सन् सरसकिसलयाग्रग्रासशेषार्पणेन—सरसकिसलयाग्रस्य यो ग्रासशेषस्तस्य—अर्पणेन=समर्पणेन, मृदुकरपरिम्भारम्भरोमाञ्चितायाः—मृदुना=कोमलेन, करेण=निजशुण्डेन, यः परिरम्भारम्भः=आलिङ्गनप्रयासः, तेन रोमाञ्चितायाः=सञ्जातरोमोद्गमायाः, प्रियायाः=करिण्याः, केलिकोपं—केलौ=कामक्रीडायां, यः कोपः=रोषः तं, शिथिलयति=शिथिलं करोति। मालिनी वृत्तम् ॥५८॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—(काम के) मद से मुकुलित (अधखुली) आँखों वाला; चाटुकारिता करने वाला यह गजराज रमण का इच्छुक होकर सरस किसलयों (नूतन पत्तों) के अग्रभाग वाले अवशिष्ट ग्रास (कवल) के अर्पण द्वारा अपने कोमल कर (सूँड़) के द्वारा (किये जा रहे) आलिङ्गन-प्रयास से रोमाञ्चित प्रिया (हथिनी) के कामक्रीड़ाजनित कोप को शिथिल कर रहा है ॥५८॥

अपि च—

उपनयति करे करेणुकायाःकिसलयभङ्गमनङ्गसङ्गताङ्गः।
स्पृशति च चलदक्षिपक्ष्मलेखं मुखमखरेण करेण रेणुदिग्धम् ॥५९॥

अन्वयः—अनङ्गसङ्गताङ्गः करेणुकायाः करे किसलयभङ्गम् उपनयति, अखरेण करेण रेणुदिग्धं चलदक्षिपक्ष्मलेखं मुखं स्पृशयति च ॥५९॥

कल्याणी—उपनयतीति। अनङ्गसङ्गतं=कामयुक्तम्, अङ्गम्=अवयवः यस्य तथाभूतः [गजेन्द्रः], करेणुकायाः=करिण्याः स्वप्रियायाः, करे=शुण्डे, किसलयभङ्गं=कोमलपत्रखण्डम्, उपनयति=समर्पयति, अखरेण—न खरः=तीक्ष्णः इति अखरः=मृदु, तेन करेण=शुण्डेन, रेणुदिग्धं=धूलिधूसरितं, [करेणुकायाः] चलदक्षिपक्ष्मलेखं—चलती=चञ्चले, अक्षिणी=नेत्रे, पक्ष्मलेखे च यस्मिंस्तथाविधं, मुखं=वदनं, स्पृशति च=परामृशति च। पुष्पिताग्रा वृत्तम्। अनुप्रासालङ्कारः, 'करे-करे' इति यमकं च ॥५९॥

ज्योत्स्ना—और भी—कामयुक्त अंगों वाला यह (गजराज) अपनी प्रिया हथिनी के कर (सूँड़) में कोमल पत्रखण्ड समर्पित कर रहा है तथा (अपने) कोमल सूँड़ से चञ्चल आँखों एवं पुतलियों वाले (प्रिया के) धूलिधूसरित मुख को स्पर्श करते हुए चूम रहा है ॥५९॥

अथवा विवेकपूर्वव्यवहारविचारेष्वमी मानुषेभ्यः स्तोकमेवावहीयन्ते ॥

कल्याणी—अथवेति। अथवा अमी=एते गजाः, विवेकपूर्वव्यवहारविचारेषु—विवेकपूर्वव्यवहारेषु विचारेषु च, मानुषेभ्यः=मनुष्यापेक्षया, स्तोकमेव=स्वल्पमेव, अवहीयन्ते=हीनाः भवन्ति ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अथवा (ऐसा प्रतीत होता है कि) ये हाथी विवेकपूर्ण व्यवहारों एवं विचारों में मनुष्य की अपेक्षा थोड़े ही कम होते हैं ॥

तथाहि—

श्रूयते पुरा किल नारायणनाभ्यम्भोरुहकुहरकुटीमधिशयानस्य वेदविद्यां निगदतो भगवतः पितामहस्य बृहद्रथन्तरविकीर्णभासमानानि सामानि गायतः सामस्तोभरसनिष्यन्दादुदपद्यन्तैरावतसुप्रतीककुमुदवामनाञ्जनप्रभृतयोऽष्टौ दिग्गजेन्द्राः ॥

कल्याणी—श्रूयत इति । श्रूयते=आकर्ण्यते, पुरा=प्राचीनकाले, किलेति वार्तायाम्, नाराणनाभ्यम्भोरुहकुहरकुटीं—नारायणस्य=विष्णोः, नाभ्यां यत् अम्भोरुहं=कमलं, तस्य कुहरं=गर्तमेव कुटी=वासस्थानं ताम्, अधिशयानस्य=निवासिनः, कुटीमिति कर्मणि द्वितीया, 'अधिशीङ्स्थासां कर्म' इत्याधारस्य कर्मत्वात् । वेदविद्यां निगदतः=ब्रुवतः, भगवतः=परमैश्वर्यसम्पन्नस्य, पितामहस्य=ब्रह्मणः, बृहद्रथन्तरविकीर्णभासमानानि—बृहद्रथन्तरस्य विकीर्णानि भासमानानि सामानि गायतः=गानं कुर्वतः, सामस्तोभरसनिष्यन्दात्—साम्नां स्तोभः=सामवेदप्रभागविशेषः, तत्र रसः=आसक्तिः, तस्माद्यो निष्यन्दः=स्वेदः, तस्मात् ऐरावतसुप्रतीककुमदवामनप्रभृतयः अष्टौ दिग्गजा उदपद्यन्त ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—सुना जाता है कि प्राचीन काल में भगवान् विष्णु के नाभिस्थित कमल के गर्तरूपी कुटी में लेट कर भगवान् ब्रह्मा के द्वारा वेदविद्या का गान करते हुए बृहद्रथन्तर के विकीर्ण भासमान साममन्त्रों का गान करने पर सामस्तोभ के रसबिन्दुओं से ऐरावत, सुप्रतीक, कुमुद, वामन, अञ्जन आदि आठ दिग्गजेन्द्र उत्पन्न हुए थे ॥

तेभ्योऽभवन्भद्रमन्द्रमृगसङ्कीर्णजातयो गिरिचरनदीचरोभयचारिणः करिणः ॥

कल्याणी—तेभ्य इति । तेभ्यः=अष्टाभ्यः दिग्गजेभ्यः, भद्रमन्द्रमृगसंकीर्णजातयः करिणः=गजाः, अभवन्=समुत्पन्नाः, ये क्रमशः गिरिचरनदीचरोभयचारिणः—[भद्रजातयो गजाः] गिरिचराः, [मन्द्रजातयो गजाः] नदीचराः, [मृगजातयो गजाः] उभयचारिणः, अभूवन्निति शेषः ॥

ज्योत्स्ना—उन आठ दिग्गजेन्द्रों से भद्र, मन्द्र और मृगनामक संकीर्ण जातियाँ उत्पन्न हुईं, जो क्रमशः पर्वतों पर विचरण करने वाली, नदियों में विचरण करने वाली और पर्वत तथा नदी दोनों स्थानों पर विचरण करने वाली हुईं ॥

प्रसिद्धं चैतत्—'सामजा गजाः' इति ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—प्रसिद्धमिति। ब्रह्मणः सामस्तोभ आसक्तिवशात्स्वेदः सञ्जातः, तस्मादष्टौ दिग्गजा उदपद्यन्त। तेभ्यो भद्रमन्द्रमृगसंकीर्णजातयो गजा अभवन्निति गजानामुत्पत्तौ सामवेद एव हेतुस्तस्मात्सामजा गजा इति प्रसिद्धिरित्यर्थः॥

ज्योत्स्ना—यह प्रसिद्ध ही है कि हाथियों की उत्पत्ति सामवेद से हुई है॥

केचित्पुनरन्यथा कथयन्ति—

कल्याणी—केचिदिति। केचित्=पुरातत्त्वविदः, पुनः=किन्तु, अन्यथा=गजोत्पत्तिविषयेऽन्यप्रकारेण, कथयन्ति=वदन्ति॥

ज्योत्स्ना—किन्तु कुछ (पुरातत्त्वविद) लोग (हाथियों की उत्पत्ति के विषय में) अन्य प्रकार से भी कहते हैं॥

किल सकलसुरासुरकरपरिवर्त्यमानमन्दरमन्थानमथितदुग्धाम्भोनिधेरजनि जनितजगद्विस्मयो लक्ष्मीमृगाङ्कसुरभिसुरद्रुमधन्वन्तरिकौस्तुभोच्चैःश्रवसां सहभूः शशधरकरकान्तिरैरावतः। तत्प्रसूतिरियमशेषवनान्यलङ्करोतीति॥

कल्याणी—किलेति। किलेति वार्तायाम्। सकलसुरासुरकरपरिवर्त्यमानमन्दरमन्थानमथितदुग्धाम्भोनिधेः—सकलसुरासुराणां=समस्तदेवदानवानां, करैः=हस्तैः, परिवर्त्यमानः=भ्राम्यमाणः, यः मन्दरः=मन्दराचलरूपः, मन्थानः=मन्थनसाधनं, तेन मथिताद् दुग्धाम्भोनिधेः=क्षीरसागरात्, जनितजगद्विस्मयः—जनितः जगतः विस्मयः येन स तथाविधः, सर्वलोकाश्चर्यकारीत्यर्थः। लक्ष्मीमृगाङ्कसुरभिसुरद्रुमधन्वन्तरिकौस्तुभोच्चैःश्रवसां—लक्ष्मीः=रमा, मृगाङ्कः=चन्द्रमाः, सुरभिः=कामधेनुः, सुरद्रुमः=पारिजातः, धन्वन्तरिः=देववैद्यः, कौस्तुभः=मणिः, उच्चैःश्रवा=अश्वः तेषां, सहभूः=सहजातः सहोदरो भ्राता, शशधरकरकान्तिः=चन्द्रकिरणवच्छुभ्रः, ऐरावतः=एतन्नामकप्रसिद्धः गजः, अजनि=जातः। तदियं=तस्मादियं गजलक्षणा, प्रसूतिः=सन्ततिः, अशेषवनानि=समस्तविपिनम्, अलङ्करोति=विभूषयति। ऐरावतवंशजा गजा इति भावः॥

ज्योत्स्ना—समस्त देवताओं तथा दानवों के हाथों द्वारा घुमाये जाते हुए मन्दराचलरूपी मन्थनदण्ड के द्वारा मथित क्षीरसागर से संसार को आश्चर्यचकित करने वाले लक्ष्मी, चन्द्रमा, कामधेनु, देववृक्ष पारिजात, देववैद्य धन्वन्तरि, कौस्तुभ मणि तथा उच्चैःश्रवा नामक अश्व के साथ ही साथ चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत (वर्ण वाला) उनका सहोदर भाई ऐरावत नामक हाथी भी उत्पन्न हुआ। उसी ऐरावत की हाथीरूपी यह सन्तति समस्त वनों को अलंकृत कर रही है॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेष भद्रजातिर्भविष्यति । तथाहि—

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, एष=पुरोवर्ती गजः, भद्रजातिर्भविष्यति=भद्राख्यविशिष्टजातौ समुत्पन्नो भविष्यति, एतेन गजेन भद्रजातिना भवितव्यमित्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए यह (हाथी) भद्रजाति का ही होगा; क्योंकि—

उच्चैःकुम्भः कपिशदशनो बन्धुरस्कन्धसन्धिः
स्निग्धाताम्र-द्युतिनखमणिर्लम्ब-वृत्तोरुहस्तः ।
शूरः सप्तच्छदपरिमलस्पर्धिदानोदकोऽयं
भद्रः सान्द्रद्रुमगिरिसरित्तीरचारी करीन्द्रः ॥६०॥

अन्वयः—उच्चैःकुम्भः कपिशदशनः बन्धुरस्कन्धसन्धिः स्निग्धाताम्रद्युतिनखमणिः लम्बवृत्तोरुहस्तः शूरः सप्तच्छदपरिमलस्पर्धिदानोदकः सान्द्रद्रुमगिरिसरित्तीरचारी अयं करीन्द्रः भद्रः ॥६०॥

कल्याणी—उच्चैरिति । उच्चैःकुम्भः—उच्चै=उन्नतः, कुम्भः=कुम्भस्थलं यस्य स तथोक्तः, कपिशदशनः—कपिशौ=कपिशवर्णौ, दशनौ=दन्तौ यस्य सः, बन्धुरस्कन्धसन्धिः—बन्धुरः=मनोहरः, स्कन्धस्य=अंसस्य, सन्धिः=सन्धानं यस्य सः, स्निग्धाताम्रद्युतिनखमणिः—स्निग्धा=चिक्कणा, आताम्रा=ईषद्रक्तवर्णा, द्युतिः=कान्तिः, येषां तथाविधाः नखमणयः=मणिसदृशनखाः यस्य स तथोक्तः, लम्बवृत्तोरुहस्तः—लम्बः=दीर्घः, वृत्तः=वर्तुलाकारः, उरुश्च=प्रशस्तश्च, हस्तः=शुण्डः यस्य स तथोक्तः । यद्वा लम्बो वृत्तश्च ऊरु=जङ्घा हस्तश्च यस्य सः । शूरः=शौर्यसम्पन्नः; सप्तच्छदपरिमलस्पर्धिदानोदकः—सप्तच्छदस्य=सप्तपर्णस्य, परिमलेन=सुगन्धेन, स्पर्धते=स्पर्धां कुरुते, इत्येवंशीलं दानोदकं=मदजलं यस्य स तथोक्तः, सान्द्रद्रुमगिरिसरित्तीरचारी—सान्द्रेषु=घनेषु, द्रुमेषु=वृक्षेषु, गिरिषु=पर्वतेषु, सरितां=नदीनां, तीरे च=तटप्रदेशे च चरतीत्येवंशीलः, अयं=पुरोवर्ती, करीन्द्रः=गजराजः, भद्रः=भद्रजातिः । मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥६०॥

ज्योत्स्ना—उन्नत कुम्भस्थल वाला, कपिशवर्ण (पीले) दाँतों वाला, मनोहर स्कन्धसन्धियों (कन्धों के जोड़) वाला, चिकने और थोड़े लाल रंग के मणिसदृश नखों वाला, लम्बे, गोल और प्रशस्त कर (सूँड़) वाला अथवा लम्बे और गोल जाँघों तथा हाथ (सूँड़) वाला, शूरता से समन्वित, सप्तपर्ण वृक्ष के सुगन्ध से स्पर्धा करने वाले मदजल को धारण करने वाला, घने वृक्षों, पर्वतों और नदियों के तट पर विचरण करने वाला यह गजराज भद्र (भद्रजाति का अथवा भव्य) है ॥६०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तन्मोदतामयम्, अनुरागिणोर्दम्पत्योः क्रीडारसविघातः कृतो न श्रेयान्' इत्यभिधाय, हृतहृदयः, स्वैरं रममाणमृगमिथुनविलासैरुल्लासितपुलकः कुसुमितकाननानिलैरुत्कम्प्यमानः, झरन्निर्झरोपान्तपादपतलचलत्केलिकिलकेकिकेकारवैर्विनोद्यमानः, समीपचरसेवकसुभाषितैश्च, सममसमं च, निम्नगात्रमनिम्नगात्रं च, ग्राविषममग्राविषमं च, सश्वापदमश्वापदं च, सपादपमपादपं च, विन्ध्यस्कन्धमुल्लङ्घ्य, 'देव ! विलोक्यतामिह विषमविषाणि पन्नगकुलानि द्रोणीगहनं च, इह शरासनकरम्बाणि वनानि पापर्द्धिकपुलिन्दवृन्दं च, इह बहुसुखानि शबरद्वन्द्वानि रत्नाकरस्थलं च, इह सुमधुराणि फलानि कीचकवनं च, इहामोदितविश्वककुम्भि, कुसुमानि सरित्तीरं च, इह सत्प्रभावन्ध्यानि दवदग्धारण्यानि मुनिमण्डलं च' इति विविधवनप्रदेशान् दर्शयतः पुष्कराक्षस्य विचित्रवचनोक्तीर्भावयन् क्रमेणातिक्रम्य शिखरपरम्परां परैरसह्यः सह्याचलमवततार ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, अयम्=एषः करीन्द्रः, मोदतां=केलिजन्यानन्दमनुभवतु । अनुरागिणोः=प्रेमोपेतयोः, दम्पत्योः=मिथुनस्य, कृतः=विहितः, क्रीडारसविघातः—क्रीडारसे=केलिरसे, विघातः=अवरोधः, न श्रेयान्=न प्रशस्यतरः, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, हृतहृदयः—हृतम्=आकृष्टं, हृदयं=चेतः यस्य स तथोक्तः, स्वैरं=स्वच्छन्दं, रममाणमृगमिथुनविलासैः—रममाणानां=केलिपराणां, मृगमिथुनानां=हरिणयुगलानां, विलासैः=केलिपरकमनोविनोदैः, उल्लासितपुलकः—उल्लासितः=उद्गमितः, पुलकः=रोमाञ्चः यस्य स तथोक्तः, पुलकादिसात्त्विकभावोपेत इत्यर्थः । कुसुमितकाननानिलैः—कुसुमितस्य=पुष्पितस्य, काननस्य=वनस्य, अनिलैः=पवनैः, उत्कम्प्यमानः, झरन्निर्झरोपान्तपादपतलचलत्केलिकिलकेकिकेकारवैः—झरतः=प्रवहतः, निर्झरस्य=स्रोतसः, उपान्ते=समीपे, ये पादपाः=वृक्षाः, तेषां तले=अधोभूमौ, चलन्तः=विचरन्तः, केलये किलन्तीति केलिकिलाः=क्रीडापात्राणि, 'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति कः । केकिनः=मयूराः, तेषां केकारवैः=केकाध्वनिभिः, समीपचरसेवकसुभाषितैश्च—समीपचराणां=समीपवर्तिनां, सेवकानाम्=अनुचराणां, सुभाषितैश्च=सूक्तिभिश्च, विनोद्यमानः, सममसमं चेति विरोधः, मा=श्रीः तया सहेति समः तं समं=सश्रीकम्, असमं=विषमम्, अथवा न समोऽस्येत्यसमस्तमसममिति परिहारः । निम्नगात्रमनिम्नगात्रं चेति विरोधः, निम्नगा=नदीस्त्रायत इति निम्नगात्रस्तं तथोक्तम्, अनिम्नगात्रम्—अनिम्नम्=उच्चं, गात्रं=मूर्तिः यस्य तमनिम्नगात्रमिति परिहारः । ग्राविषममग्राविषमं चेति विरोधः, ग्रावभिः=प्रस्तरैः, विषमं तथा अग्राविषमम्—अग्रे अविषमं=सममिति परिहारः । सश्वापदमश्वापदं चेति विरोधः, श्वापदैः=हिंस्रपशुभिः सह विद्यमानमिति सश्वापदं तथा अश्वापदम्—अश्वानाम् अपदम्=अभूमि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिति परिहारः । सपादपमपादपं चेति विरोधः, सह पादपैः=वृक्षैरिति सपादपं तथा अपादान्=गूढपादपान् अर्थात् सर्पान् पाति=रक्षतीत्यपादपस्तम्, शून्ये हि सर्पादीनां प्राचुर्यादिति भाव इति विरोधपरिहारः । तथाविधं विन्ध्यस्कन्धं=विन्ध्यभूमिम्, उल्लङ्घ्य=अतिक्रम्य, 'देव !=स्वामिन्, विलोक्यतां=दृश्यताम्, इह=अत्र; विषम-विषाणि—विषमं=भयङ्करं, विषं=गरलं येषु तानि, पन्नगकुलानि—पन्नगानां=सर्पाणां, कुलानि=वृन्दानि, अथ च विषमाः विषाणिनः=दन्तिनः (गजाः) शृङ्गिणः (शम्बरादयः) वा यत्र तथाविधं द्रोणीगहनं—पर्वतश्रेणिद्वयस्यान्तरिकः भूभागः द्रोणी, तत्सम्बन्धि गहनं=वनम् । 'गहनं काननं वनम्' इत्यमरः । इह=अत्र, शरासनकरम्बाणि—शरेण=मुञ्जेन, असनेन=बीजकवृक्षेण च, करम्बाणि=शबलानि, वनानि अथ च शरासनकरम् + बाणि— शरासनं=धनुः, करे=हस्ते यस्य तत् तथा बाणाः सन्त्यस्येति बाणि=सशरम्, पापर्द्धिकपुलिन्दवृन्दं—पापर्द्धिकानाम्=आखेटकानां, पुलिन्दानां=शबराणां; वृन्दं=समूहं च । इह=अत्र, बहु सुखं येषां तानि बहुसुखानि, शबरद्वन्द्वानि=पुलिन्दमिथुनानि, अथ च [बहु-सु-खानि] बहु=विपुलं तथा सुष्ठु खानिः=आकरः यत्र तादृशं रत्नाकरस्थलं च । इह=अत्र, सुमधुराणि— सुष्ठु मधुराणि फलानि, अथ च सुमधु-राणि—सुष्ठु मधु यत्र तत् तथा रणन्ति=शब्दं कुर्वन्त्यवश्यमिति राणि, सच्छिद्रा हि वंशा वायुवशाद्रणन्तीति ज्ञेयम् । कीचकवनं च—कीचकानां=सच्छिद्रवंशानां, वनम्=अरण्यञ्च । इह=अत्र, आमोदितविश्वककुम्भि—आमोदिताः=सुरभिताः, विश्वाः=सर्वाः, ककुभः=दिशः यैः, तथाविधानि कुसुमानि=पुष्पाणि, अथ च आमोदित–वि–श्वक–कुम्भि— आमोदिताः=हर्षिताः, वयः=पक्षिणः, श्वकाः=शुनःसंज्ञा वृकाः, कुम्भिनश्च=गजाश्च यत्र, तथाविधं सरित्तीरं=नदीतटं च । 'आमोदो गन्धहर्षयोः' इति विश्वः । इह=अत्र, सत्प्रभा–वन्ध्यानि—सती=शोभना, प्रभा=कान्तिः, तया वन्ध्यानि=रहितानि, दवदग्धारण्यानि—दवेन=वनाग्निना, दग्धानि=भस्मीकृतानि, अरण्यानि=काननानि, अथ च शत्प्रभावम् + ध्यानि—सन्=शोभनः, प्रभावः=अनुभावः यस्य तत् तथा ध्यानमस्यास्तीति ध्यानि, ध्यानमग्नमित्यर्थः । मुनिमण्डलञ्च—मुनीनां मण्डलं=चक्रवालञ्च । सर्वत्र विषमविषाणीति पदादारभ्य वचनश्लेषः । इति=एवं, विविधवनप्रदेशान्=अनेकानेककाननभूगाभान्, दर्शयतः=प्रदर्शयतः, पुष्कराक्षस्य=दमयन्तीप्रेषितवार्त्तिकस्य, विचित्रवचनोक्तीः=श्लेषगर्भोक्तीः, भावयन्=विमृशन्, क्रमेण=क्रमशः, शिखरपरम्परां—शिखराणां=शृङ्गाणां, परम्परा=अविच्छिन्नशृङ्खला ताम्, विविधशिखराणीत्यर्थः । अतिक्रम्य=उल्लङ्घ्य, परैः=शत्रुभिः, असह्यः=सोढुमशक्यः, दुःसह इत्यर्थः । स नलः सह्याचलं=सह्यपर्वतम्, अवततार=अवातरत्, सह्याद्रिमाससादेत्यर्थः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इसलिए यह गजराज (क्रीडाजन्य) आनन्द का अनुभव करे, (क्योंकि) अनुरागी दम्पतियों के क्रीडारस में विघ्न करना उचित नहीं है।" इस प्रकार कह कर आकृष्ट हृदय वाला, स्वच्छन्द रूप से रमण करते हुए मृगदम्पतियों के (केलिपरक) मनोविनोद से रोमाञ्चित होकर पुष्पित वन की हवाओं से काँपता हुआ (राजा) झरते हुए निर्झरों (झरनों) के समीप-स्थित वृक्षों के नीचे विचरण कर रहे क्रीडापात्रों, मयूरों की ध्वनियों तथा समीपवर्ती सेवकों की सूक्तियों द्वारा मनोविनोद करता हुआ सम (शोभा-सम्पन्न) और असम (ऊँच-नीचे), निम्नगात्र (नदियों की रक्षा करने वाले) और अनिम्नगात्र (ऊँची-आकृति वाले), ग्रावविषम (पत्थरों—चट्टानों) के कारण विषम) और अग्राव-विषम (आगे कुछ दूर पर सम भूमि वाले), सश्वापद (हिंसक पशुओं से समन्वित) और अश्वापद (अश्वों के न चलने योग्य भूमि वाले); सपादप (वृक्षों से समन्वित) और अपादप (पादहीन सर्पों की रक्षा करने वाले) विन्ध्य पर्वत के स्कन्धभाग को पार कर "प्रभो ! देखिये, यहाँ भयंकर विष वाले सर्पों के समूहों तथा विषम विषाणी अर्थात् दाँतों अथवा सींगों वाले जानवरों से समन्वित पर्वतीय घाटियों वाले वन हैं। यहाँ शर (मुञ्ज) और असन वृक्षों के कारण चितकबरे रंग के जंगल तथा धनुष और बाण धारण करने वाले व्याधों एवं किरातों के झुण्ड हैं। यहाँ अत्यन्त सुखी किरातों के जोड़े तथा बहुतायत में प्रचुर सुन्दर खानि (खजाने) से युक्त रत्नाकर-स्थल हैं। यहाँ सुन्दर मधुर (मीठे) फल तथा उत्तम मधु और राणि (शब्द करने वाले) कीचकों अर्थात् छिद्रवाले बाँसों के वन हैं। यहाँ सभी दिशाओं को सुगन्धित करने वाले पुष्प तथा हर्षित पक्षियों, भेड़ियों एवं हाथियों वाला नदी-तट है। यहाँ सुन्दर कान्ति से रहित दावाग्नि से भस्मसात किया गया वन तथा उत्तम प्रभाववाले ध्यानमग्न मुनियों का समूह है।" इस प्रकार बहुविध वनप्रदेशों को दिखलाते हुए पुष्कराक्ष की श्लेष से परिपूर्ण बातों पर विचार करता हुआ शिखरों (पर्वतचोटियों) की अनवरत श्रृंखला को क्रमशः पार कर शत्रुओं के लिए असह्य वह राजा नल सह्याचल नामक पर्वत पर उत्तर पड़ा अर्थात् सह्याचल पर्वत पर आ गया ॥

रमणीयतया स्निग्धतया च पुनः परिवर्तितमुखो विलोक्य विन्ध्यदक्षिणमेखलाशिखरश्रेणीपादपान् पुष्कराक्षमभाषत—'भद्र ! दुस्त्यजाः खल्वमी विन्ध्यतटीतरवः ॥

कल्याणी—रमणीयतयेति। रमणीयतया=रम्यतया, स्निग्धतया च=कोमलतया च, पुनः=भूयः, परिवर्तितमुखः—परिवर्तितं मुखं येन स तथोक्तः, पृष्ठतोऽवलोकयन्नित्यर्थः। विन्ध्यदक्षिणमेखलाशिखरश्रेणीपादपान्—विन्ध्यस्य=विन्ध्यगिरेः, दक्षिणमेखलायाः=दक्षिणतटस्य, शिखरश्रेण्याः=शिखरपङ्क्तेः, पादपान्=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तरून्, विलोक्य=दृष्ट्वा, पुष्कराक्षं प्रति अभाषत=अवदत्—हे भद्र !=प्रियमित्र !, दुस्त्यजाः=दुःखेन त्यक्तुं शक्याः, खलु=निश्चयेन, अमी=एते, विन्ध्यतटीतरवः=विन्ध्यगिरितटस्य वृक्षाः ॥

ज्योत्स्ना—रमणीयता और स्निग्धता (कोमलता) के कारण फिर से मुख फेर कर अर्थात् पीछें की ओर देखते हुए विन्ध्य पर्वत के दक्षिण तट-स्थित शिखरपंक्तियों के वृक्षों को देखकर (वह राजा) पुष्कराक्ष से बोला—"हे मित्र ! विन्ध्य पर्वत के तटवर्ती ये वृक्ष निश्चय ही बड़ी कठिनाई से त्यागने लायक हैं ॥

तथाहि—

आवासाः कुसुमायुधस्य शबरीसङ्केतलीलागृहाः
पुष्पामोद-मिलन्मधुव्रत-वधू-झङ्कार-रुद्धाध्वगाः ।
सुस्निग्धाः प्रियबान्धवा इव दृशो दूरीभवन्तश्चिरात्
कस्यैते न दहन्ति हन्त हृदयं विन्ध्याचलस्य द्रुमाः ॥६१॥

अन्वयः—कुसुमायुधस्य आवासाः शबरीसङ्केतलीलागृहाः पुष्पामोदमिलन्मधुव्रतवधूझङ्काररुद्धाध्वगाः चिरात् दृशः दूरीभवन्तः सुस्निग्धाः प्रियबान्धवा इव एते विन्ध्याचलस्य द्रुमाः हन्त ! कस्य हृदयं न दहन्ति ॥६१॥

कल्याणी—आवासा इति । कुसुमायुधस्य=कामदेवस्य, आवासाः=निवासस्थानानि, कामोद्दीपकत्वादिति भावः । शबरीसङ्केतलीलागृहाः—शबरीणां=किरातकान्तानां, संकेताः=अनुरागिणोः प्रिया-प्रेमिणोर्मिलनस्थानानि, लीलागृहाः=क्रीडागृहाश्च, पुष्पामोदमिलन्मधुव्रतवधूझङ्काररुद्धाध्वगाः—पुष्पाणां=कुसुमानाम्, आमोदेन=सौरभेण, मिलन्त्यः या मधुव्रतवध्वः=भ्रमर्याः, तासां झङ्कारेण=गुञ्जितेन; रुद्धाः=अवरुद्धाः; अध्वगाः=पान्थाः यत्र ते तथोक्ताः, चिरात्=चिरकालात्, दृशः=नेत्रात्, दूरीभवन्तः=पृथग्गच्छन्तः, सुस्निग्धाः=स्नेहशीलाः, प्रियबान्धवा इव एते=इमे, विन्ध्याचलस्य=विन्ध्यपर्वतस्य, द्रुमाः=वृक्षाः, कस्य=कस्य जनस्य, हृदयं=चेतः; न दहन्ति=न व्यथयन्ति, सर्वस्यापि हृदयं दहन्त्येवेत्यर्थः । हन्तेति विषादे । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६१॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—(कामोद्दीपक होने के कारण) कामदेव के निवास-स्थानस्वरूप, किरात-कामिनियों के लिए संकेत-स्थानस्वरूप और क्रीड़ागृहस्वरूप; पुष्पों की सुगन्ध से मिलती हुई भ्रमरियों के गुञ्जार के कारण पथिकों को रोक देने वाले, चिरकाल के लिए आँखों से दूर होते स्नेहशील प्रिय बान्धवों के समान विन्ध्य पर्वत के ये वृक्ष किसके हृदय को व्यथित नहीं कर देते ? ॥६१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—

भ्राम्यद्भृङ्ग-भरावनम्रकुसुमश्च्योतन्मधूद्गन्धिषु
च्छायावत्सु तलेषु पान्थनिचया विश्रम्य गेहेष्विव ।
निर्यन्निर्झरवारिवारिततृषस्तृप्यन्ति येषां फलै-
स्ते नन्दन्तु फलन्तु यान्तु च परामभ्युन्नतिं पादपाः ॥६२॥

अन्वयः—भ्राम्यद्भृङ्गभरावनम्रकुसुमश्च्योतन्मधूद्गन्धिषु येषां छायावत्सु तलेषु पान्थनिचयाः गेहेषु इव विश्रम्य निर्यन्निर्झरवारिवारिततृषः फलैः तृप्यन्ति, ते पादपाः नन्दन्तु, फलन्तु, पराम् अभ्युन्नतिं च यान्तु ॥६२॥

कल्याणी—भ्राम्यद्भृङ्गेति । भ्राम्यद्भृङ्गभरावनम्रकुसुमश्च्योतन्मधूद्गन्धिषु—भ्राम्यतां=भ्रमिं कुर्वतां, भृङ्गाणां=भ्रमराणां, भराद्=भारात्, अवनम्राणि=अवनतानि, कुसुमानि=पुष्पाणि, तेभ्यः श्च्योतद्भिः=च्यवमानैः, मधुभिः=मकरन्दैः, उद्गतो गन्ध एषामित्युद्गन्धिनः, तेषु तथोक्तेषु, येषां=वृक्षाणां, छायावत्सु=छायायुक्तेषु, तलेषु=अधोभागेषु, पान्थनिचयाः=पथिकसमूहाः, गेहेष्विव विश्रम्य=विश्रान्तिं कृत्वा, निर्यन्निर्झरवारिवारिततृषः—निर्यन्निर्झरवारिणा=निर्गच्छन्निर्झरजलेन, वारिता=दूरीकृता, तृट्=पिपासा यैस्ते तथाभूताः, फलैः तृप्यन्ति=तृप्तिमनुभवन्ति, ते=तथाविधाः, पादपाः=विन्ध्याचलस्य द्रुमाः, नन्दन्तु=प्रसन्नाः सन्तु, फलन्तु=फलोपेता भवन्तु, पराम्=उत्कृष्टाम्, अभ्युन्नतिं च=समृद्धिमुच्छ्रायं च, यान्तु=लभन्ताम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६२॥

ज्योत्स्ना—और भी—भ्रमण करते (मँडराते) हुए भ्रमरों के भार से झुके हुए पुष्पों से चू रहे मकरन्द से उठते गन्ध वाले जिन छायादार वृक्षों के नीचे पथिकों का समूह (अपने) घरों के समान विश्राम कर बहते हुए झरनों के जल से (अपनी) पिपासा को दूर कर जिनके फलों से तृप्ति का अनुभव करते हैं, वे वृक्ष प्रसन्न रहें, फल से युक्त हों और सर्वोत्कृष्ट अभ्युन्नति को प्राप्त करें अर्थात् खूब बढ़ें ॥६२॥

अपि च—

यत्र न फलितास्तरवो विकसितसरसीरुहाः सरस्यो वा ।
न च सज्जनाः स देशो गच्छतु निधनं श्मशानसमः ॥६३॥

अन्वयः—यत्र न फलिताः तरवः, न वा विकसितसरसीरुहाः सरस्यः, न च सज्जनाः, श्मशानसमः स देशः निधनं गच्छतु ॥६३॥

कल्याणी—यत्रेति । यत्र=यस्मिन् देशे, न फलिताः=न फलसमृद्धाः, तरवः=वृक्षाः, न वा विकसितसरसीरुहाः—विकसितानि सरसीरुहाणि=कमलानि यत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथाविधाः, सरस्यः=वाप्यः; न च सज्जनाः=साधवो जनाः, श्मशानसमः=श्मशान-तुल्यः, अरतिजनक इति भावः। स देशः, निधनं गच्छतु=नाशं यातु। उपमाऽलङ्कारः। आर्या जातिः ॥६३॥

ज्योत्स्ना—और भी—जिस देश में फल से समृद्ध वृक्ष न हों, खिले हुए कमलों वाले तड़ाग न हों और न ही जहाँ सज्जन पुरुषों का निवास हो; श्मशान के समान वह देश नष्ट हो जाय ॥६३॥

तत्कथय कदा पुनरिमां विन्ध्यवनवीथीं विचित्रपत्त्रलकुचां दमयन्तीमिव निर्विघ्नमवलोकयिष्यामः ॥

कल्याणी—तत्कथयेति। तत्=तस्मात्, कथय=भण, कदा=कस्मिन्दिने, पुनः=भूयः, दमयन्तीमिव=भीमपुत्रीमिव, विचित्रपत्त्रलकुचां—विचित्राणि=अद्भुतानि, पत्त्राणि=पर्णानि येषां तथाविधाः लकुचाः=लकुचाख्याः वृक्षाः यस्यां ताम्, दमयन्तीपक्षे—विचित्रपत्त्रलकुचाम्—विचित्रं पत्त्रं=पत्त्रवल्लि, लातः=गृह्णीत इति विचित्रपत्त्रलौ, विचित्रपत्त्ररचनायुक्तावित्यर्थः। तथाविधौ कुचौ=स्तनौ यस्यास्ताम्। इमाम्=एतां, विन्ध्यवनवीथीं=विन्ध्यकाननसरणिं, निर्विघ्नं=निर्बाधम्, अवलोकयिष्यामः=द्रक्ष्यामः ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए कहो, विचित्र पत्त्ररचना से समन्वित स्तनों वाली दमयन्ती के समान विचित्र पत्त्रों से समन्वित लकुच वृक्षों वाले विन्ध्याचल के इस बनमार्ग को निर्विघ्नतापूर्वक पुनः कब (हम) देख पायेंगे ॥

तथाहि—

पीनोन्नमद्घन-पयोधर-भार-भुग्न-
मध्यप्रदेश-रुचि-मल्ल-वली-लतायाः।
उत्कण्ठितोऽस्मि चलदेणदृशः प्रियाया-
स्तस्याश्च पर्वतभुवो वनवीथिकायाः ॥६४॥

अन्वयः—पीनोन्नमद्घनपयोधरभारभुग्नमध्यप्रदेशरुचिमल्लवलीलतायाः चल-देणदृशः तस्याः प्रियायाः पर्वतभुवः वनवीथिकायाः च उत्कण्ठितः अस्मि ॥६४॥

कल्याणी—पीनेति। पीनोन्नमद्घनपयोधरभारभुग्नमध्यप्रदेशरुचिमल्लव-लीलतायाः—पीनौ=मांसलौ, उन्नमन्तौ=उन्नतौ, घनौ=विशालतया परस्परसंहतौ, च यौ पयोधरौ=स्तनौ, तयोः भारेण भुग्ने=नते, मध्यप्रदेशे=उदरे, रुचिं=कान्तिं, मल्लन्ते=धारयन्तीति रुचिमल्ल्यः, कान्तिशीला इत्यर्थः। 'कर्मण्यण्' इति मल्ल-तेरण्' स्त्रियां ङीप्। तथाविधाः वल्यः=उदररेखा, स एव लता यस्यास्तस्यास्तथो-क्तायाः, चलदेणदृशः—चलन्त्यौ=चञ्चले, एणस्य=मृगस्य, इव दृशौ=नेत्रे यस्या-स्तस्याः, तस्याः=तथाविधायाः, प्रियायाः=दमयन्त्याः, तथा पीनानां=विशालानाम्, उन्नमतां=लम्बमानानाम्, आकाशात्समीपमागच्छतामित्यर्थः। पयोधराणां=मेघानां,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारेण भुग्ने मध्यप्रदेशे=मध्यभागे, रुचिमत्+लवलीलतायाः—रुचिमती=कान्तिमती, लवलीलतायाः=लवलीति नाम्ना प्रसिद्धा लता यस्यास्तस्याः, चलतां=विचरताम्, एणानां=मृगाणां, दृग्=दर्शनं यस्यां, तस्याश्च पर्वतभुवः—पर्वते भवतीति पर्वतभूस्तस्याः, यद्वा पर्वतभुवः=विन्ध्यगिरिप्रदेशस्य, वनवीथिकाया उत्कण्ठितोऽस्मि=लालसायुक्तोऽस्मि। श्लेषाऽलङ्कारः। एतेन दमयन्त्या वनवीथिकायाश्च परस्परोपमानोपमेयभावो व्यज्यते। वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥६४॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—मांसल, उन्नत और परस्पर एक-दूसरे के साथ सटे स्तनों के भार के कारण कुछ झुके हुए उदरभाग में कान्तिमती वलीलता (त्रिवली) एवं चञ्चल मृगनयनों के समान नयनों वाली प्रिया के लिए तथा विशाल, ऊँचे, बादलों के भार के कारण झुके हुए मध्यभाग में कान्तिमती लवली लताओं वाली और दिखाई पड़ रहे घूमते हुए मृगों वाली विन्ध्यपर्वत की वनवीथियों के प्रति (मैं) उत्कण्ठित हूँ ॥६४॥

अपि च—

सानूनां सानूनां विलोक्य रमणीयतां च सानूनाम्।
सालवने सालवने विहरिष्यति सह मयाऽत्र कदा ॥६५॥

अन्वयः—सानूनां सानूनां सानूनां रमणीयतां च विलोक्य सा अत्र सालवने सालवने मया सह कदा विहरिष्यति ॥६५॥

कल्याणी—सानूनामिति। सानूनां=शिखराणां सम्बन्धिनः, ये सानवः=मार्गाः, तेषामनूनां [सानूनाम्=सा+अनूमाम्]=परिपूर्णां, रमणीयतां=सौन्दर्यं च, विलोक्य=दृष्ट्वा, सा=दमयन्ती, अत्र=अस्मिन् स्थाने, [सालवने=स+अलवने] लवनं=छेदनम्, न लवनमित्यलवनं, तेन सह वर्तत इति सालवनं, तादृशे सालानां=सर्जतरूणां, वने=कानने, मया=नलेन, सह=साकं, कदा=कस्मिन् काले, विहरिष्यति=विहारं करिष्यति। एतेन दमयन्तीं प्रति नलस्यौत्सुक्यं द्योत्यते। 'पर्वतभुवो वनवीथिकायाः' इति पूर्वश्लोकांशदृष्ट्या प्रस्तुतश्लोके प्रथमसानुशब्दः शृङ्गार्थ एव समीचीनः। 'सानुः शृङ्गे बुधे मार्गे पद्यायां पल्लवे वने' इति विश्वः। यमकालङ्कारः। आर्या जातिः ॥६५॥

ज्योत्स्ना—और भी—तटवर्ती मार्गों की परिपूर्णता तथा रमणीयता को देखकर वह दमयन्ती इन विना कटे हुए साल वृक्षों के वन में मेरे साथ कब विहार करेगी? ॥६५॥

सखे! सखेदा इव वयम्। तत्कथय कियद्दूरेऽद्यापि स विदर्भविषयः, यत्र ब्रह्माण्डशुक्तिसम्पुटमध्यमुक्ताफलगुलिकया तयालङ्कृतं तत्कुण्डिनं नगरम्' इत्यभिदधाने निषधनाथे तैस्तैरालापैरनुवर्त्तितोक्तिः पुष्कराक्षोऽप्यभाषत—'देव! प्राप्ता ननु वयम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—सखे इति । सखे !=मित्र !, वयं सखेदाः=परिश्रान्ता इव । तत्=तस्मात्, कथय=वेदय, अद्यापि=सम्प्रत्यपि, स विदर्भविषयः=विदर्भदेशः, कियद्दूरे [वर्तते] । यत्र=यस्मिन्, ब्रह्माण्डशुक्तिसम्पुटमध्यमुक्ताफलगुलिकया—ब्रह्माण्डमेव शुक्तिसम्पुटः, तन्मध्ये मुक्ताफलगुलिकया=सिद्धमुक्ताफलरूपया, गुलिकाकारत्वादिति भावः । तया=दमयन्त्या, अलङ्कृतं=विभूषितं, तत्=प्रसिद्धं, कुण्डिनं नगरम्=कुण्डिनपुरम्, इति=एवम्, अभिदधाने=वदति, निषधनाथे=निषधेश्वरे नले, तैस्तैरालापैः=प्रेमबहुलप्रासङ्गिकसंभाषैः, अनुवर्तितोक्तिः—अनुवर्तिता=कृतानुवर्तना, उक्तिः=कथनं यस्य सः, पुष्कराक्षोऽपि=दमयन्तीवार्तिकोऽपि, अभाषत=अवोचत—देव !=स्वामिन् !, प्राप्ताः=समागताः, ननु वयम् ॥

ज्योत्स्ना—हे मित्र ! हम लोग थक-से गये हैं । इसलिए कहो, वह विदर्भ देश अभी और कितनी दूर है, जिस देश में ब्रह्माण्डरूपी शुक्तिसम्पुट (सीपी) में शुद्ध मुक्तामणिरूप उस दमयन्ती द्वारा अलंकृत वह प्रसिद्ध कुण्डिननगर है ।" निषधनरेश (नल) के इस प्रकार कहने पर उन-उन (नलकथित प्रेमबहुल प्रासङ्गिक) वार्तालापों से सम्बद्ध बातें करते हुए पुष्कराक्ष भी बोला—देव ! हम लोग पहुँच चुके हैं ॥

इदं हि—

वीरपुरुषं तदेतद्वरदातटनामकं महाराष्ट्रम् ।
दक्षिणसरस्वती सा वहति विदर्भा नदी यत्र ॥६६॥

अन्वयः—तत् एतत् वीरपुरुषं वरदातटनामकं महाराष्ट्रं, यत्र दक्षिणसरस्वती सा विदर्भा नदी वहति ॥६६॥

कल्याणी—वीरेति । तदेतद्=तथाविधमिमं, वीरपुरुषं—वीराः पुरुषाः यत्र तत्तथाविधं, वरदातटनामकं=वरदातटाभिधं, वरदातटवर्त्तीति भावः । महाराष्ट्रं=महाराष्ट्रनामकदेशः, यत्र=यस्मिन्महाराष्ट्रदेशे, दक्षिणसरस्वती—दक्षिणे=दक्षिणापथे, सरस्वती=सरस्वतीनदीरूपा, सा=प्रसिद्धा, विदर्भा नदी वहति=प्रवहति । आर्या जातिः ॥६६॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि यह—वही यह वीर पुरुषों वाला वरदा नदी का तटवर्ती महाराष्ट्र प्रदेश है, जहाँ दक्षिण देश की सरस्वती नदी के समान प्रसिद्ध वह विदर्भा नदी प्रवाहित होती है ॥६६॥

इहाकरभया सिंहलद्वीपभुवा सदृशी, बहुदया त्यागिजनतया तुल्या; समृद्धनया भूनिखातकृपणजननिक्षेपकुम्भिकया समाना, प्रजाः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—इहेति । इह=अत्र, सिंहलद्वीपभुवा=सिंहलद्वीपभूम्या, सदृशी=समाना, अकरभया—न करात्=राजदेयांशात्, भयं=भीतिः यस्यां सा तथोक्ता, पक्षे—न करभाः=गजाः यत्र साऽकरभा, तया । त्यागिजनतया तुल्या—त्यागिजनानां समूहस्तत्ता तया सदृशी, बहुदया—बह्वी दया यस्यां बहुदया, सा पक्षे—बहु ददातीति बहुदा, तया । भूनिखातकृपणजननिक्षेपकुम्भिकया—भूनिखाते=भूगर्ते, कृपणजनस्य निक्षेपकुम्भिकया=न्यासघटिकया समाना, समृद्धनया—समृद्धः नयः=नीतिः यस्यां सा तथोक्ता, कुम्भिकापक्षे [समृत्+धनया] समृत् मृदा=मृत्तिकया सहितं धनं यस्यां सा समृद्धना, तया । तथाविधा प्रजाऽस्ति । अत्र प्रथमातृतीययोर्विभक्तिश्लेषः ॥

ज्योत्स्ना—यहाँ पर करभ अर्थात् हाथियों से रहित सिंहल भूमि के समान कर अर्थात् देय राज्यांश के भय से मुक्त, बहुत दान देने वाले त्यागी व्यक्तियों के समान बहुत दया से समन्वित, भूमि में गड्ढ़ा खोदकर उसमें छिपाकर रक्खी जाने वाली समृद्धना अर्थात् मिट्टी से समन्वित धन से परिपूर्ण कृपण व्यक्ति की कुम्भिका के समान समृद्धनया अर्थात् नीति से समृद्ध प्रजा निवास करती है ।

विमर्श—आशय यह है कि विदर्भ देश में प्रजा के ऊपर राजा द्वारा कोई कर नहीं लगाया गया है । यहाँ की प्रजा अत्यन्त दयालु और पूर्णतया नीति का अनुसरण करने वाली है ॥

इह समकरन्दानि कमलवनानि राजराजन्यचक्रं च, इह बहुधामानि नगराणि लोकहृदयं च, इह सारम्भाणि कृपाणकुलानि दशरूपकप्रेक्षणं च, इह बहुकृपाणि जनमनांसि प्रजापालबलं च, इह महाविप्राणि ग्रामपुरपत्तनानि मेषगोष्ठं च ॥

कल्याणी—इहेति । इह=अत्र, समकरन्दानि—सह मकरन्देनेति समकरन्दानि=पुष्परसोपेतानि, कमलवनानि=पद्मकाननानि, अथ च [सम-करम्, दानि]—समः करः=राजांशः यस्य तत्, तथा दानमस्त्यस्येति दानि, राजराजन्यचक्रं=सामन्तराजमण्डलम् । इह=अत्र, बहुधामानि—बहूनि=अनेकानि, धामानि=गृहाणि यत्र तथाविधानि, नगराणि=पुराणि, अथ च [बहुधा-मानि]—बहुधा=अनेकधा, मानोऽस्त्यस्येति मानि=मानयुक्तं, लोकहृदयं=जनहृदयम् । इह=अत्र, सारम्भाणि—सह आरम्भैः=उपक्रमैरिति सारम्भाणि, कृपाणकुलानि=खड्गचक्राणि, अथ च [सारम्-भाणि]—सारम्=उत्कृष्टं तथा भाणः=रूपकविशेषः सोऽस्त्यस्येति भाणि, दशरूपकप्रेक्षणं=नाटकप्रकरणादिदशरूपकदर्शनम् । इह=अत्र, बहुकृपाणि—बह्वी कृपा येषु तानि, अतिदयायुक्तानीति भावः । जनमनांसि=लोकचेतांसि, अथ च [बहुकृपाणि]—बहु तथा कृपाणः=खड्गः अस्त्यस्येति कृपाणि=कृपाणोपेतं, प्रजापालबलं—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रजापालस्य=नृपस्य, बलं=सेना। इह=अत्र, महाविप्राणि—महान्तः विप्राः=ब्राह्मणाः येषु तथाविधानि, ग्रामपुरपत्तनानि—ग्रामाश्च पुराणि च पत्तनानि=नगराणि चेति तथोक्तानि। अथ च [महा-अवि-प्राणि]—महान्तः अवयः=मेण्ढाः; त एव प्राणिनः= बलवन्तः यत्र तथाविधं मेषगोष्ठम्। अत्र प्रथमैकवचनबहुवचनयोः श्लेषः॥

ज्योत्स्ना—यहाँ पर परागों से समन्वित कमलों का वन एवं एक समान कर (राज्यांश) लगाने वाला तथा दान देने वाला सामन्त-राजवर्ग है। यहाँ अनेकों भवनों वाले नगर तथा बहुधा मान (स्वाभिमान) से समन्वित हृदय वाले लोग हैं। यहाँ हमेशा तैयार तलवारें और उत्कृष्ट भाणनामक रूपक से समन्वित नाटक-प्रकरण आदि दशरूपक देखे जाते हैं। यहाँ समधिक कृपा (दया) से युक्त मन वाले लोग और अत्यधिक कृपाणों (तलवारों) से समन्वित प्रजापालबल अर्थात् राजा की सेना है। यहाँ उत्तम ब्राह्मणों से समन्वित ग्राम, पुर और राजधानियाँ तथा बड़े-बड़े शक्तिशाली भेड़ों से युक्त मेषगोष्ठ (भेड़ों के रहने के स्थान) हैं॥

इयं च गगनवीथीव पूर्वोत्तराफल्गुनीराशिवायूपयुक्ता ब्राह्मणाग्रहारभूमिः॥

कल्याणी—इयमिति। इयं च=एषा च, गगनवीथीव=आकाशमार्ग इव, [पूर्वोत्तर-अफल्गु-नीरा, शिवा, यूपयुक्ता]—पूर्वस्यामुत्तरस्यां च अफल्गु—न फल्गु= सारहीनमित्यफल्गु, समुत्कृष्टमित्यर्थः। नीरं=जलं, यस्यां सा तथा शिवा=मङ्गल-प्रदा, यूपैः=यज्ञस्तम्भैः, युक्ता=समन्विता च, ब्राह्मणानामग्रहारभूमिः=नृपेण ब्राह्मणेभ्यः प्रदत्ता भूमिः। गगनवीथीपक्षे—[पूर्वोत्तराफल्गुनी-राशि-वायु-उपयुक्ता]—पूर्वाफल्गुनी उत्तराफल्गुनी च नक्षत्रे, राशयः=मेषाद्याः, वायुः=पवनः, तैः उपयुक्ता=उपयोगी-कृता। श्लेषमूलोपमाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—पूर्वाफल्गुनी-उत्तराफल्गुनी नक्षत्रों, मेष-वृष आदि द्वादश राशियों एवं वायुओं द्वारा उपयोग की जाने वाली आकाशवीथी के समान राजा के द्वारा ब्राह्मणों के लिए प्रदान की गई यह भूमि पूर्व और उत्तर दिशा में पर्याप्त जल से परिपूर्ण एवं मंगलदायक यूपों अर्थात् यज्ञस्तम्भों से समन्वित है॥

इतश्च—

आरुह्यैताः शिखरिसदृशान्ग्राममध्योच्चकूटा-
नन्योन्यांसप्रणिहितभुजाः सङ्गताः कौतुकेन।
प्रेक्षावेशादविचलदृशो योषितः पामराणां
पश्यन्त्यस्त्वां निभृततनवो लेख्यलीलां वहन्ति॥६७॥

अन्वयः—शिखरिसदृशान् ग्राममध्योच्चकूटान् आरुह्य पामराणां एताः योषितः अन्योन्यांसप्रणिहितभुजाः कौतुकेन सङ्गताः प्रेक्षावेशात् अविचलदृशः त्वां पश्यन्त्यः निभृततनवः लेख्यलीलां वहन्ति॥६७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—आरुह्येति। शिखरिसदृशान्—शिखरिणः=पर्वताः, तैः सदृशान्=समानान्, ग्राममध्योच्चकूटान्—ग्रामस्य मध्ये ये उच्चकूटाः=उत्तुङ्गगृहपटलानि कानिचिदुच्चस्थानानि वा तान्; आरुह्य=आरोहणं कृत्वा, पामराणां=प्राकृतजनानां ग्रामीणानां, एताः=इमाः, योषितः=स्त्रियः, अन्योन्यांसप्रणिहितभुजाः—अन्योन्यांसेषु=परस्परस्कन्धेषु, प्रणिहितः=स्थापितः, भुजः=बाहु याभिस्ताः, कौतुकेन=कौतूहलेन, सङ्गताः=मिलिताः, समवेता इति यावत्। प्रेक्षावेशात्—प्रेक्षायाम्=अवलोकने, आवेशः=आग्रहः तस्मात्, अविचलदृशः—अविचले=निश्चले, दृशौ=नेत्रे यासां ताः, त्वां=नलं, पश्यन्त्यः=अवलोकयन्त्यः, निभृततनवः—निभृतं=निश्चलं, तनुः=शरीरं यासां तास्तथाभूताः, सत्यः लेख्यलीलां—लेख्यस्य=चित्रस्य, लीलां=शोभां, वहन्ति=धारयन्ति, चित्रगता इव दृश्यन्त इत्यर्थः। मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥६७॥

ज्योत्स्ना—और इधर—पर्वतों के समान गाँवों के मध्य में स्थित ऊँचे घरों के छतों अथवा ऊँचे स्थानों पर चढ़कर ग्रामीण लोगों की ये स्त्रियाँ एक-दूसरे के कन्धों पर बाँहें रखकर कौतूहलवश एकत्र होकर देखने की उत्सुकता से निर्निमेष नयनों से आपको देखती हुई निश्चल शरीर वाली होकर चित्र की शोभा को धारण कर रही हैं ॥६७॥

किञ्चान्यत्—

नृप चलसि यथा यथा त्वमस्मिन्नपि वदनानि तथा तथा चलन्ति।
तरलितनयनानि पामरीणां पवनविनर्तितपङ्कजोपमानि ॥६८॥

अन्वयः—नृपः यथा यथा त्वम् अस्मिन् चलसि तथा तथा पामरीणां तरलितनयनानि पवनविनर्तितपङ्कजोपमानि वदनानि अपि चलन्ति ॥६८॥

कल्याणी—नृपेति। हे नृप !=राजन् ! यथा यथा=येन येन प्रकारेण, त्वं=भवान्; अस्मिन्=अत्र प्रदेशे, चलसि=गच्छसि, तासां युवतीनां दृष्टिसमीपं गच्छसीत्यर्थः। तथा तथा=तेन तेन प्रकारेण, पामरीणां=तासां ग्राम्यवधूनां, तरलितनयनानि—तरलितानि=दर्शनौत्सुक्येन चञ्चलीकृतानि, नयनानि=नेत्राणि येषु तथाविधानि, पवनविनर्तितपङ्कजोपमानि—पवनेन=वायुना, विशेषेण नर्तितानि=प्रकम्पनं नीतानि, पङ्कजानि=कमलानि उपमा येषां तानि, वदनानि=मुखान्यपि, चलन्ति=गच्छन्ति, तासां चञ्चलनेत्राणि त्वत्सौन्दर्यं वीक्षन्ते मुखानि च त्वद्रूपवैशिष्ट्यं वर्णयन्तीति भावः। एतेन ग्राम्यवधूनामौत्सुक्यं द्योत्यते। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥६८॥

ज्योत्स्ना—और क्या कहें; हे राजन् ! जैसे-जैसे आप इस स्थान की ओर बढ़ रहे हैं वैसे-वैसे उन ग्राम्य वधुओं के (देखने की उत्सुकता से) चञ्चल नयन और वायु से विशेष रूप से कम्पित कमलसदृश मुख भी चल रहे हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है जैसे-जैसे राजा नल उन ग्राम्य वधुओं की आँखों के नजदीक होते जा रहे हैं वैसे-वैसे ही उन वधुओं के चञ्चल नयन राजा के रूप का अवलोकन कर रहे हैं और उनके मुख उसके सौन्दर्य का वर्णन कर रहे हैं ॥६८॥

अपि च—

उत्कम्पाद्गलितांशुकेषु रभसादत्यन्तमुच्छ्वासिषु
प्रोत्तुङ्गस्तनमण्डलेषु विलुठद्गुञ्जावलीदामसु ।
आसां स्वेदिषु दृश्यते मृगदृशां संक्रान्तबिम्बो भवा-
नाश्लिष्यन्निव गोपिकाः कृतबहुप्राकाम्यरूपो हरिः ॥६९॥

अन्वयः—उत्कम्पात् गलितांशुकेषु रभसात् अत्यन्तम् उच्छ्वासिषु विलुठद्गुञ्जावलीदामसु स्वेदिषु आसां मृगदृशां प्रोत्तुङ्गस्तनमण्डलेषु संक्रान्तबिम्बः भवान् कृतबहुप्राकाम्यरूपः गोपिकाः आश्लिष्यन् हरिः इव दृश्यते ॥६९॥

कल्याणी—उत्कम्पादिति । उत्कम्पात्=उत्कम्पनाद्धेतोः, गलितांशुकेषु—गलितानि=स्रस्तानि, अंशुकानि=वस्त्राणि येभ्यस्तेषु, रभसात्=वेगाद्धेतोः, अत्यन्तम् उच्छ्वासिषु=उच्छ्वासयुक्तेषु, विलुठद्गुञ्जावलीदामसु—विलुठत्=विदोलयत्; गुञ्जावलीदाम=गुञ्जामाला येषु तथाविधेषु, स्वेदिषु=स्वेदयुक्तेषु, आसाम्=एतासां; मृगदृशां=पामरीणां, प्रोत्तुङ्गस्तनमण्डलेषु=समधिकोन्नतकुचचक्रवालेषु, संक्रान्तबिम्बः—संक्रान्तं=पतितं, बिम्बं=प्रतिच्छायं यस्य सः तथाविधः, भवान्=नलः, कृतबहुप्राकाम्यरूपः—कृतानि=विहितानि, बहूनि=अनेकानि, प्राकाम्येण=महासिद्धिविशेषेण, रूपाणि येन सः, गोपिकाः=गोपवधूः, आश्लिष्यन्=आलिङ्गन्, हरिः=कृष्ण इव, दृश्यते=अवलोक्यते । उपमाऽलङ्कारः । स्तनमण्डलानां गलितांशुकत्वं स्वेदित्वं च नृपप्रतिबिम्बस्य संक्रान्तौ हेतुत्वेनोपन्यस्तम्, तत्काव्यलिङ्गमलङ्कारः । स चोपमाया अङ्गमिति द्वयोः सङ्करः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६९॥

ज्योत्स्ना—और भी—कम्पन के कारण गिर गये वस्त्रों वाली, वेग के कारण बहुत (जल्दी-जल्दी) श्वासें लेने वाली, हिलती हुई गुञ्जे की मालाओं वाली और पसीने से सराबोर इन मृगनयनी ग्रामीण स्त्रियों के अत्यन्त उन्नत स्तनमण्डलों पर गिरते (पड़ते) हुए प्रतिबिम्ब वाले आप अनेक प्रकार का रूप धारण कर गोपियों का आलिंगन करने वाले कृष्ण के समान (इस समय) दिखाई पड़ रहे हैं अर्थात् कृष्ण के समान प्रतीत हो रहे हैं ॥६९॥

अहो नु खल्वाश्चर्यमिदमेतासां तथाविधनेपथ्यनिरपेक्षाप्युन्मादयति यूनो मनो युवतीनां यौवनश्रीः ॥

कल्याणी—अहोन्विति । अहो नु खल्विति रोचकाश्चर्ये । आश्चर्यमिदं यत् एतासाम्=अमीषां, युवतीनां=तरुणीनां, यौवनश्रीः=तारुण्यलक्ष्मीः, तथाविधनेपथ्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निरपेक्षापि—तथाविधम्=उदारं, यत् नेपथ्यं=हारकुण्डलादिभूषणं, तन्निरपेक्षापि=अपेक्षारहिताऽपि, यूनः=तरुणस्य, मनः=चित्तम्, उन्मादयति=उन्मत्तं करोति। अत्रोदारनेपथ्यरूपकारणं विनापि यौवनश्रियास्तरुणचित्तोन्मादकारितारूपकार्योत्पत्तिवर्णनाद्विभावनाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—अहो ! आश्चर्य है कि इन युवतियों की यौवनश्री उस प्रकार के विशिष्ट वस्त्रों एवं आभूषणादिकों की अपेक्षा न करती हुई भी युवकों के मन को उन्मत्त कर देती है ॥

तथाहि—

माल्यं मूर्धनि कर्णिकारकलिकाः पिष्टातकं चन्दनं
मुक्तादाम गले च काचमणयो लाक्षामयाः कङ्कणाः ।
रागोऽङ्गेषु हरिद्रया नयनयोरत्युल्बणं कज्जलं
वेषोऽयं विरसस्तथापि हृदयं ग्राम्या हरन्ति स्त्रियः ॥७०॥

अन्वयः—मूर्धनि कर्णिकारकलिकाः माल्यं, चन्दनं पिष्टातकं; गले च काचमणयः मुक्तादाम; कङ्कणाः लाक्षामयाः, अङ्गेषु हरिद्रया रागः, नयनयोः अत्युल्बणं कज्जलम्, अयं वेषः विरसः तथापि ग्राम्याः स्त्रियः हृदयं हरन्ति ॥७०॥

कल्याणी—माल्यमिति । मूर्धनि=शिरसि, कर्णिकारकलिकाः=कर्णिकारपुष्पाणां कलिकाः, स एव माल्यं=शेखरः, चन्दनमेव=मलयजमेव, पिष्टातकं=सुगन्धयुक्तं कुङ्कुमादीनां चूर्णम्, गले=कण्ठे च, काचमणय एव मुक्तादाम=मुक्तामाला, कङ्कणाश्च=कङ्कणाभरणानि तु, लाक्षामयाः=लाक्षानिर्मिताः, न तु सुवर्णमया इति भावः। अङ्गेषु=अवयवेषु, हरिद्रया=पीतरसेन, रागः=रञ्जनम्, नयनयोः=नेत्रयोः, अत्युल्बणं=प्रगाढं, कज्जलम् । अयम्=एषः, वेषः=वेषभूषा, यद्यपि विरसः=अरोचकः, तथापि ग्राम्याः=ग्रामीणाः, स्त्रियः=योषितः, हृदयं=मनः, हरन्ति=आकर्षयन्ति । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७०॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—शिर पर कर्णिकार पुष्प के कलियों की माला, चूर्ण किया गया चन्दनरूपी उबटन, गले में काँच से निर्मित मणिरूपी ही मुक्ता (मोती) की माला, लाख से बने कंकण, अंगों में हल्दी का राग (लेप) और आँखों में ज्यादा काजल—यह वेष (यद्यपि) नीरस (अरोचक) है, फिर भी ग्रामीण स्त्रियाँ हृदय का हरण कर ही लेती हैं अर्थात् उपर्युक्त असुन्दर वेष वाली होती हुई भी ग्रामीण वधुयें निश्चित रूप से चित्त को आकर्षित कर लेती हैं ॥७०॥

इतश्च—

कन्दलितकन्दविशेषाः कर्कशकर्कटिका विशालकालिङ्गाः कूष्माण्डमण्डितमण्डपाः सुवृत्तवृन्ताका सुहस्तितहस्तिकर्णपुनर्नवाः स्थूलमूलकाः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पिण्डितपलाण्डवो वास्तूकवास्तुभूतभूतलाः सञ्जीवितजीवन्तिकाः सर्षपराजिकाराजिराजिताः सरित्सारिणीसारिवारिसेचनसुकुमारपल्लवितविविधशाकाः शाकवाटिकाः ॥

कल्याणी—कन्दलितेति । कन्दलितकन्दविशेषाः—कन्दलितः=अङ्कुरितः, कन्दविशेषः यत्र तास्तथोक्ताः, कर्कशकर्कटिकाः—कर्कशाः=कठोराः, कर्कटिकाः यत्र ताः, विशालकालिङ्गाः—विशालानि=बृहदाकाराणि, कालिङ्गानि=लोके 'तरबूज' इति नाम्ना प्रसिद्धानि फलानि यत्र ताः, कुष्माण्डमण्डितमण्डपाः—कुष्माण्डैः=कूष्माण्डफलैस्तल्लताभिश्च, मण्डिताः=अलंकृताः मण्डपाः यत्र ताः, सुवृत्तवृन्ताकाः—सुवृत्तानि=शोभनवर्तुलानि, वृन्ताकानि=वृन्ताकफलानि यत्र ताः, सुहस्तितहस्तिकर्णपुनर्नवाः—सुहस्तितः—सुष्ठु हस्तितः=अङ्कुरितः, हस्तिकर्णः=एरण्डः, पुनर्नवा च यत्र ताः, स्थूलमूलकाः—स्थूलानि=पीनानि, मूलकानि यत्र ताः, पिण्डितपलाण्डवः—पिण्डितः=घनीभूतः वर्तुलाकारश्च पलाण्डुर्यत्र ताः, वास्तूकवास्तुभूतभूतलाः—वास्तूकेन=शाकविशेषेण, वास्तुभूतं=गणनार्हं, भूतलं यासु ताः, सञ्जीवितजीवन्तिकाः—सञ्जीविताः=हरिताः जीवन्तिकपादपाः यासु ताः; सर्षपराजिकाराजिराजिताः—सर्षपाणां राजिका=लघुक्षेत्राणि, तेषां राजिभिः=पङ्क्तिभिः, राजिताः=सुशोभिताः, सरित्सारिणीसारिवारिसेचनसुकुमारपल्लवितविविधशाकाः—सरिद्भ्यः=नदीभ्यः, सरन्त्यवश्यमिति सारिण्यः=कुल्या इत्यर्थः, तासां सारिभिः—सारवद्भिः=उत्कृष्टैः अथवा सारिभिः=प्रवहद्भिः, वारिभिः=जलैः सेचनं, तेन सुकुमारपल्लवितानि=कोमलपत्रयुक्तानि, विविधानि=अनेकानि, शाकानि यत्र तथाविधाः, शाकवाटिकाः=शाकोद्यानानि [शोभन्ते] ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—अंकुरित हुई विशेष प्रकार के कन्दों वाली, कर्कश अर्थात् कठोर ककड़ियों वाली, बड़े-बड़े कालिंगों (तरबूजों) वाली; कूष्माण्ड (कोहड़े) के फलों तथा लताओं से अलंकृत मण्डपों वाली, सुन्दर गोल-गोल वृन्ताकफलों (भण्टों) वाली, सम्यक् प्रकार से अंकुरित हस्तिकर्ण अर्थात् एरण्ड (रेंड़) एवं पुनर्नवा वाली, मोटी-मोटी मूलियों वाली, अत्यन्त घने गोल-गोल प्याजों वाली, वास्तुक (बथुआ) शाक के कारण महत्त्वपूर्ण भूमि वाली, हरे-हरे जीवन्तिका (गिलोय) वाली, सरसों की छोटी-छोटी क्यारियों की पंक्तियों से सुशोभित, नदियों से निःसृत नहरों के उत्कृष्ट प्रवहमान जल के द्वारा सिञ्चित होने के कारण कोमल पत्तों से समन्वित विविध शाकों वाली शाकवाटिकायें (तरकारियों के बगीचे) हैं ॥

इतश्च—

विकसन्मुचुकुन्दानन्दिनो मकरन्दस्यन्दिसुन्दरसिन्दुवाराः पामरीसङ्केतनिकेतकेतकीवनाः कम्राम्रातकाः कुड्मलितकङ्कोलफलाः कोरकित-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुरण्टकाः पल्लवितवल्लीकाः फुल्लन्मल्लिकोल्लासिनः सुजातजातयो विचित्रशतपत्त्रिकास्ताण्डवितपाण्डुपिण्डितागुरुकरवीरवीरुधो दृश्यमानसर्वर्तुपुष्पाः पुष्पायुधावासा आरामाः ॥

कल्याणी—विकसदिति । विकसन्मुचुकुन्दानन्दिनः—विकसद्भिः=विकचद्भिः, मुचुकुन्दैः=तरुविशेषैः, आनन्दिनः=आनन्दप्रदाः, मकरन्दस्यन्दिसुन्दरसिन्दुवाराः—मकरन्दं=पुष्परसं, स्यन्दते=च्यवतेऽवश्यमिति मकरन्दस्यन्दी, सुन्दरः सिन्दुवारः=वृक्षविशेषः यत्र ते तथोक्ताः, पामरीसङ्केतनिकेतकेतकीवनाः—पामरीणां=ग्राम्यवधूनां. संकेतनिकेतनं=प्रियमिलनस्थानं, केतकीवनं यत्र ते, कम्राम्रातकाः—कम्राः=मनोज्ञाः, आम्रातकाः=आम्रवृक्षाः यत्र ते, कुड्मलितकङ्कोलफलाः—कुड्मलितानि=कोरकितानि, कङ्कोलफलानि यत्र ते, कोरकितकुरण्टकाः—कोरकितः=कुड्मलितः, कुरण्टकः=वृक्षविशेषः यत्र ते, पल्लवितवल्लीकाः—पल्लविताः=किसलयोपेताः, वल्ल्यः=लताः यत्र ते, फुल्लन्मल्लिकोल्लासिनः—फुल्लन्तीभिः=पुष्प्यन्तीभिः, मल्लिकाभिः=मालतीलताभिः, उल्लासिनः=दीप्तिमन्तः, सुजातजातयः—सुष्ठु जाता जातिः=लताविशेषः यत्र ते, विचित्रशतपत्त्रिकाः=विलक्षणशतपत्त्रिवृक्षयुक्ताः, ताण्डवितपाण्डुपिण्डितागुरुकरवीरवीरुधः—ताण्डविताः=कृतनृत्याः, प्रकम्पिता इति यावत्, पाण्डुपिण्डिताः=पीतवर्णाः, अगुरूणाम्=अगुरुवृक्षाणां, करवीराणां च वीरुधः=लताः यत्र ते, दृश्यमानसर्वर्तुपुष्पाः—दृश्यमानानि=द्रष्टव्यानि; सर्वर्तुपुष्पाणि=सर्वकालसम्भवानि कुसुमानि यत्र ते, पुष्पायुधावासाः=कामदेवस्य निकेतनानि, आरामाः=उद्यानानि ॥

ज्योत्स्ना—और इधर—विकसित मुचुकुन्द वृक्षों के कारण आनन्द प्रदान करने वाले, पुष्परस (मकरन्द) चूते हुए सुन्दर सिन्दुवार वृक्ष वाले, ग्रामीण युवतियों के संकेत-निकेतन-(प्रिय-मिलन का स्थान)- स्वरूप केतकी (केवड़े) के जंगल वाले, मनोहारी आम्रातक (आम्रवृक्ष) वाले, कलियों से समन्वित कंकोल-फल वाले, कुड्मलित कुरवक वृक्ष वाले, पल्लवित लताओं वाले, खिलते हुए मल्लिका (मालती) पुष्पों से दीप्तिमान; जातिनामक सुन्दर लतापुष्प वाले, विलक्षण शतपत्त्रि (वचा) के वृक्षों वाले, नृत्य करते अर्थात् काँपते हुए पीले रंग के अगुरु और करवीर के वृक्षों वाले, सभी ऋतुओं में दिखाई देने वाले फूलों से समन्वित, कामदेव के आवासस्वरूप मनोहर उद्यान हैं ॥

इतश्च—

नातिदूरे दक्षिणदिशि दृशं निवेशयतु देवः ॥

कल्याणी—नातिदूर इति । इतश्च=अत्र च, नातिदूरे=ईषद्दूरे, दक्षिणदिशि=दक्षिणस्यां दिशि, देवः=भवान्, दृशं=दृष्टिं, निवेशयतु=उपक्षिपतु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और इधर—थोड़ी दूर पर ही दक्षिण दिशा की ओर महाराज दृष्टि डालें ॥

एतास्ताः परिपक्वशालिकलमाः सुस्वादुदीर्घेक्षवो
वप्रप्रान्त-हरित्तृणस्थल-चलत्पीनाङ्ग-गोमण्डलाः ।
दृश्यन्ते पुरतः सरोरुहवनभ्राजिष्णुनीराशयाः
प्रान्तोन्नादिविचित्रपत्रिनिचयाः सस्यस्थलीभूमयः ॥७१॥

अन्वयः—परिपक्वशालिकलमाः सुस्वादुदीर्घेक्षवः वप्रप्रान्तहरित्तृणस्थल-चलत्पीनाङ्गगोमण्डलाः सरोरुहवनभ्राजिष्णुनीराशयाः प्रान्तोन्नादिविचित्रपत्रिनिचयाः ताः एताः पुरतः सस्यस्थलीभूमयः दृश्यन्ते ॥ ७१ ॥

कल्याणी—एता इति। परिपक्वशालिकलमाः—परिपक्वः=सुपक्वः, शालिः कलमश्च धान्यविशेषः यत्र ताः, सुस्वादुदीर्घेक्षवः—सुस्वादवः=सुमधुराः, दीर्घाः=लम्बायमानाः, इक्षवः=इक्षुदण्डानि यत्र ताः, वप्रप्रान्तहरित्तृणस्थलचलत्पीनाङ्गगोमण्डलाः—वप्रप्रान्ते=तटबन्धे, हरित्तृणस्थले=हरितघासस्थले, चलत्=भ्रमत्; चरदित्यर्थः। पीनाङ्गानां=हृष्ट-पुष्टानां, गवां=धेनूनां, मण्डलं=चक्रवालं यत्र ताः, सरोरुहवनभ्राजिष्णुनीराशयाः—सरोरुहाणां=कमलानां, वनैः=काननैः, भ्राजिष्णवः=देदीप्यमानाः, नीराशयाः=सरोवराः यत्र ताः, प्रान्तोन्नादिविचित्रपत्रिनिचयाः—प्रान्ते=सीम्नि, उन्नादी=शब्दायमानः, विचित्रपत्त्रिनिचयः=विविधपक्षिसमूहः यत्र ताः, ताः एताः=इमाः, पुरतः=अग्रे, सस्यस्थलीभूमयः=सस्यभूप्रदेशाः, दृश्यन्ते=विलोक्यन्ते। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७१॥

ज्योत्स्ना—यह सामने वे पके हुए शालि और कलम धान वाले, सुस्वादु अर्थात् अत्यन्त मधुर लम्बे-लम्बे इक्षुदण्ड (गन्ने) वाले, तटबन्ध-भाग में हरे घासों वाली भूमि पर भ्रमण करती अर्थात् घासें चरती हुई हृष्ट-पुष्ट गौवों के समूह वाले, कमल वनों के कारण सुशोभित जलाशय वाले, किनारे पर शब्द (कूजन) कर रहे विविध प्रकार के पक्षियों से समन्वित धान के खेत वाले भूभाग दिखाई पड़ रहे हैं ॥७१॥

अपि च—

स्वःसौन्दर्यविडम्बि कुण्डिनमिदं सैषा विदर्भा नदी
सा चेयं वरदा स चायमनयोः पुण्याम्भसोः सङ्गमः ।
अस्यैवोन्मदहंसहारिणि तटे सेनास्थितिः कल्प्यतां
यस्मिन्मत्तकरीन्द्रकुम्भकषणक्रीडासहाः पादपाः' ॥७२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—स्वःसौन्दर्यविडम्बि इदं कुण्डिनं, सा एषा विदर्भा नदी, सा च इयं वरदा, स च अयं पुण्याम्भसोः अनयोः सङ्गमः। अस्य एव उन्मदहंसहारिणि तटे सेनास्थितिः कल्प्यताम्। यस्मिन् मत्तकरीन्द्रकुम्भकषणक्रीडासहाः पादपाः (सन्ति) ॥७२॥

कल्याणी—स्वःसौन्दर्येति। स्वःसौन्दर्यविड़म्बि—स्वर्गस्यसौन्दर्यं विडम्बयत्यवश्यमिति तथोक्तमिदं कुण्डिनं नगरम्, सा=प्रसिद्धा, एषा = इयं विदर्भा नदी=विदर्भा सरित्, सा चेयं वरदा [नदी], स च पुण्याम्भसोः—पुण्यं=पवित्रम्, अम्भः=जलं ययोस्तयोः, अनयोः=विदर्भावरदयोः, सङ्गमः। अस्यैव=विदर्भावरदयोः सङ्गमस्यैव, उन्मदहंसहारिणी—उन्मदैः=मदकलैः, हंसैः=राजहंसैः, हारिणि=मनोहरे, तटे=रोधसि, सेनास्थितिः कल्प्यतां=सेनासंनिवेशः क्रियताम्, यस्मिन् = यत्र, मत्तकरीन्द्रकुम्भकषणक्रीडासहाः—मत्तकरीन्द्राणां=मत्तगजेन्द्राणां, कुम्भकषणक्रीड़ां=कुम्भ घर्षणरूपां क्रीडां, सहन्त इति तथोक्ताः, मत्तगजेन्द्रकुम्भघर्षणं सोढुं क्षमा इत्यर्थः। पादपाः=वृक्षाः, (सन्ति)। चतुर्थपादस्य सङ्गमतटे सेनास्थितिकल्पने हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥७२॥

ज्योत्स्ना—और भी—सुन्दरता में स्वर्ग की विडम्बना अर्थात् प्रतिस्पर्धा करने वाला यह कुण्डिननगर है। यही वह प्रसिद्ध विदर्भा नदी है एवं यही वह वरदा नदी है और यही वह पवित्र जल वाले विदर्भा और वरदा नदियों का संगम है। उन्मत्त हंसों से मनोहर इसी संगमतट पर सेना के शिविर की संरचना करें अर्थात् पड़ाव डालें, जहाँ पर मदमत्त गजराजों के कुम्भस्थलों की घर्षण अर्थात् खुजलाहटरूप क्रीड़ा को सहन करने में समर्थ वृक्षों का समूह है ॥ ७२ ॥

एवमनेकधा दर्शनीयप्रदेशप्रकाशनव्याजेन विनोदलीलां पल्लवयति पुष्कराक्षे, 'प्राप्ताः कुण्डिनपुरम्' इत्युच्छ्वसितहृदयो निषधेश्वरः परमपरितोषात्पारितोषिकप्रदानपूर्वमिदमवादीत् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, अनेकधा=विविधप्रकारेण, पुष्कराक्षे=तन्नामकदमयन्तीवार्तिके, दर्शनीयप्रदेशप्रकाशनव्याजेन—द्रष्टुं योग्याः दर्शनीयाः=द्रष्टव्याः, ये प्रदेशाः=स्थानानि, तेषां प्रकाशनं=वर्णनं, तस्य व्याजेन=मिषेण, विनोदलीलां=मनोविनोदक्रीडां, पल्लवयति=वर्धयति सति, 'प्राप्ताः=समागताः, कुण्डिनपुरं=कुण्डिननगरं, वयमिति शेषः। इत्युक्त्या, उच्छ्वसितहृदयः—उच्छ्वसितं=प्रफुल्लं, हृदयं=मनः यस्य सः, निषधेश्वरः=नलः, परमपरितोषात्=समधिकसन्तोषात्, पारितोषिकप्रदानपूर्वं=पुरस्कारदानपूर्वकम्, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस भाँति अनेक प्रकार से दर्शनीय स्थलों का वर्णन करने के बहाने से पुष्कराक्ष द्वारा उत्तम मनोविनोद करते रहने पर (उसके) "हम कुण्डिनपुर आ गये।" इस कथन से प्रफुल्ल हृदय वाले राजा नल ने अत्यधिक सन्तोष के साथ (उसे) पारितोषिक प्रदान करते हुए इस प्रकार कहा—

'भद्र ! भवतः सौकुमार्यमाधुर्यमधुविश्रम्भसंदर्भितभङ्गश्लेषगर्भाभिर्गीर्भिराक्षिप्तमनसामस्माकमविदितखेद इव, अदृष्टसमविषमविभाग इव, अनुत्पादितस्वेदलव इव, अर्धगव्यूतिमात्रशेषोऽतिक्रान्तः क्रीड़ाविहारभूमिसमो महानपि मार्गः। समुचितश्चायं सेनानिवेशस्य सरित्सङ्गमोपकण्ठवनविभागः ॥

कल्याणी—भद्रेति। हे भद्र!=प्रियमित्र!, भवतः=तव, सौकुमार्यमाधुर्यमधुविश्रम्भसन्दर्भितभङ्गश्लेषगर्भाभिः—सौकुमार्येण=कोमलतया, माधुर्येण=मधुरतया, विश्रम्भेण च=सुखदान्तरङ्गत्वेन च, सन्दर्भितः=युक्तः, भङ्गश्लेषः गर्भे=मध्ये यासां तथाविधाभिः, गीर्भिः=वाणीभिः, आक्षिप्तमनसाम्—आक्षिप्तम्=आकृष्टं, मनः=हृदयं येषां तथाविधानाम्, अस्माकं महानपि=अतिदीर्घोऽपि, मार्गः=पन्थाः, अविदितखेदः इव—न विदितः=अनुभूतः, खेदः=श्रान्तिः यत्र स तथाविध इव, अदृष्टसमविषमविभाग इव—न दृष्टः=दृष्टिपथं गतः, समविषमविभागः=उच्चावचविभागः यस्य स तथोक्त इव, अनुत्पादितस्वेदलव इव—नोत्पादितः=न जनितः, स्वेदलवः=स्वेदकणः येन स तथाविध इव, क्रीडाविहारभूमिसमः=खेलस्थल इव, अतिक्रान्तः=लङ्घितः, य इदानीम् अर्धगव्यूतिमात्रशेषः—अर्धगव्यूतिः=एकः क्रोशः, तन्मात्रशेषो वर्तते। अयं=भवन्निर्दिष्टः, सरित्सङ्गमोपकण्ठवनविभागः—सरितोः=विदर्भावरदयोः, सङ्गमः, तस्य उपकण्ठे=समीपे, वनविभागः=वनप्रदेशः, सेनानिवेशस्य=सेनास्थितेः, समुचितः=योग्यः ॥

ज्योत्स्ना—प्रिय मित्र ! तुम्हारी अत्यन्त कोमल, मधुर, आनन्ददायक, प्रसंग से समन्वित, भङ्गश्लेष-गर्भित वाणी के द्वारा आकृष्ट मन वाला मैं अत्यधिक लम्बे मार्ग को भी मानो थकान का अनुभव किये विना, ऊँचे-नीचे स्थलों को देखे विना, पसीने की बूंदों के निकले विना पार कर गया; जो अब केवल एक कोस ही बचा है। (तुम्हारे द्वारा निर्दिष्ट) विदर्भा और वरदा-संगम के समीप-स्थित यह वनप्रदेश ही सेना के पड़ाव के लिए उपयुक्त है ॥

तथाहि—

इह भवतु निवासः सैनिकानामिहापि
श्रमतरलतुरङ्गग्रासयोग्या तृणाली।
इह हि कवलयन्तः पल्लवान्वारणेन्द्रा
विदधतु तरुखण्डे गण्डकण्डूयनानि ॥७३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—सैनिकानाम् इह निवासः भवतु, इह अपि श्रमतरलतुरङ्गग्रासयोग्या तृणाली, इह वारणेन्द्राः हि पल्लवान् कवलयन्तः तरुखण्डे गण्डकण्डूयनानि विदधतु ॥ ७३ ॥

कल्याणी—इहेति । सैनिकानाम्=आरक्षीणम्, इह=अत्र, निवासः=आवासः, भवतु=अस्तु । इहापि=अत्रापि, श्रमतरलतुरङ्गग्रासयोग्या—श्रमेण=परिश्रमेण, तरला=अस्थिरा, अतिश्रान्ता इत्यर्थः । तुरंगानाम्=अश्वानां, ग्रासयोग्या=भक्षणार्हा, तृणाली=शष्पावलिः, शाद्वलभूमिरिति यावत् । इह=अत्र, वारणेन्द्राः=गजाः; हि=निश्चयेन, पल्लवान्=तरुपत्राणि, कवलयन्तः=भक्षयन्तः, तरुखण्डे=पादपकुञ्जे, गण्डकण्डूयनानि विदधतु=कपोलान् कण्डूयन्तु, तरुखण्डे कपोलघर्षणेन तत्कण्डूतिं विनयन्त्विति भावः । तत्र निवासे पादत्रयस्य हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम् । मालिनी वृत्तम् ॥७३॥

ज्योत्स्ना—जैसे कि—सैनिक लोग यहाँ निवास करें, यहाँ पर परिश्रम से अत्यन्त थके हुए घोड़ों के खाने योग्य घासें भी हैं । यहाँ पर पल्लवों अर्थात् वृक्षों के पत्तों को खाते हुए गजराज वृक्षों के तनों में गण्डस्थलों को रगड़कर (अपनी) खुजलाहट को दूर करें ॥ ७३ ॥

इतश्चात्यन्तमनोहरतयास्माकमासनयोग्याः सरित्सङ्गमोत्सङ्गभूमयः ॥

कल्याणी—इत इति । इतः=अस्यां दिशि, अत्रेति यावत् । सरित्सङ्गमस्य=विदर्भावरदासङ्गमस्य, उत्सङ्गभूमयः=मध्यप्रदेशाः, अत्यन्तमनोहरतया=अतिरमणीयतया, अस्माकम् आसनयोग्याः=स्थितियोग्याः ॥

ज्योत्स्ना—और इधर नदियों के संगम का मध्यवर्ती भाग अत्यन्त मनोहर होने के कारण हमलोगों के ठहरने-योग्य है ॥

तथा हि—

अपसृताम्बुतरङ्गितसैकता निचुलमण्डपनृत्तशिखण्डिकाः ।
कुररसारसहंसनिषेविताः पुलकयन्ति न कं पुलिनश्रियः ॥७४॥

अन्वयः—अपसृताम्बुतरङ्गितसैकताः निचुलमण्डपनृत्तशिखण्डिकाः कुररसारसहंसनिषेविताः पुलिनश्रियः कं न पुलकयन्ति ॥ ७४ ॥

कल्याणी—अपसृतेति । अपसृताम्बुतरङ्गितसैकताः—अपसृतम्=अपगतम्, अम्बु=जलम्, अत एव तरङ्गितं=तरङ्गाकृतिरेखाभिर्युक्तं, सैकतं=वालुकामयं तटं यत्राः, निचुलमण्डपनृत्तशिखण्डिकाः—निचुलमण्डपेषु—निचुलः=वेतसविशेषः, तस्य मण्डपेषु=निकुञ्जेषु, नृत्ताः=नृत्यन्तः इत्यर्थः । अत्रः वर्तमाने क्तः । शिखण्डिनः=मयूराः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्र ताः, कुररसारसहंसनिषेविताः—कुररैः सारसैर्हंसैश्च निषेविताः=अध्युषिताः, पुलिनश्रियः=तटशोभाः, कं=कं जनं, न पुलकयन्ति=पुलकितं न कुर्वन्ति, सर्वमपि पुलकयन्तीत्यर्थः। द्रुतविलम्बितं वृत्तम् ॥ ७४ ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—पानी के नीचे चले जाने के कारण तरंगों की आकृति वाली रेखाओं से युक्त वालुकामय तटों वाली, निचुल-(वेंत)-निकुञ्जों में नृत्य करते मयूरों वाली तथा कुरर, सारस और हंसों के द्वारा सेवित तट-शोभा किसे पुलकित नहीं कर देती ? ॥ ७४ ॥

इत्यभिधाय 'भद्र ! यथाक्रममकृतान्योन्यसम्बाधकलहम्, अनुपद्रुततीर्थायतनम्, अलुण्ठितासन्नोद्यानम्, अच्छिन्नचैत्यद्रुमम्, अविच्छिन्नकमलवनं निवेशय सेनाम्' इति सेनापतिमादिदेश। सोऽपि यथादिष्टमनुतिष्ठन्निदमवादीत् ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, भद्रेति सेनापतिसम्बोधने। यथाक्रमम्=क्रमस्यानतिक्रमणेन, अकृतान्योन्यसम्बाधकलहं—न कृतमन्योन्यसंबाधात्=परस्परावरोधात्, कलहं=विवादः यत्र तद्यथा तथा, अनुपद्रुततीर्थायतनम्—अनुपद्रुतानि=अनुत्पीडितानि, तीर्थायतनानि=तीर्थगृहाणि तद्यथा तथा, अलुण्ठितासन्नोद्यानं—न लुण्ठितानि=क्षतिं नीतानि, आसन्नोद्यानानि=समीपस्थोद्यानानि यत्र तद्यथा तथा, अच्छिन्नचैत्यद्रुमम्—न छिन्नाः=कृत्ताः, चैत्यद्रुमाः=रम्यावृक्षाः यत्र तद्यथा तथा, अविच्छिन्नकमलवनं—न विच्छिन्नं=विध्वस्तं, कमलानां=पद्मानां, वनं=काननं यत्र तद्यथा तथा, सेनां=चमूं; निवेशय=व्यवस्थापय' इति=एवं, सेनापतिं=बलाधिकृतम्, आदिदेश=आज्ञापयास। सः=सेनापतिरपि, यथादिष्टमनुतिष्ठन्=आदेशानुसारेण कार्यं कुर्वन्, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=अवोचत; सैनिकान् व्यजिज्ञपदिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहकर (सेनापति को सम्बोधित करते हुए) "भद्र ! क्रमानुसार आपस में विना कलह किये, तीर्थगृहों को विना उत्पीड़ित किये, समीपवर्ती उद्यानों को विना क्षति पहुँचाये, यज्ञस्थलीय वृक्षों को विना काटे और कमलवनों को विना विध्वस्त (नष्ट) किये सेना को व्यवस्थित करो अर्थात् ठहराओ।" इस प्रकार से सेनापति को आदेश दिया। वह (सेनापति) भी आदेशानुसार कार्य करते हुए (सैनिकों से) इस प्रकार बोला—

'भजत बलसमूहाः खर्वदूर्वास्थलानि
स्थविरशुकविशीर्यत्पक्ष-पिच्छच्छवीनि।
उपनदि मृदुवीचीवायुनाऽऽन्दोलितानां
कुसुमित-लतिकानामन्तरालेष्वमूनि ॥७५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—उपनदि मृदुवीचीवायुना आन्दोलितानां कुसुमितलतिकानाम् अन्तरालेषु स्थविरशुकविशीर्यत्पक्षपिच्छच्छवीनि अमूनि खर्वदूर्वास्थलानि, (हे) बलसमूहाः ! (यूयं) भजत ॥७५॥

कल्याणी—भजतेति । उपनदि—नद्याः समीपमित्युपनदि, सरित्तटे इत्यर्थः, समीपार्थेऽव्ययीभावः । मृदुवीचीवायुना=कोमलतरङ्गपवनेन, आन्दोलितानां=कम्पितानां, कुसुमितलतिकानां=विकसितवीरुधाम्; अन्तरालेषु=मध्यप्रदेशेषु, स्थविरशुकविशीर्यत्पक्षपिच्छच्छवीनि—स्थविरशुकस्य=वृद्धकीरस्य, विशीर्यतां=स्रंसमानानां; पक्षपिच्छानां—पक्षौ पक्षतौ तयोः पिच्छानां=तदंशानां, छविरिव छविः=कान्तिःयेषां तथाविधानि, अमूनि=एतानि, खर्वदूर्वास्थलानि=ह्रस्वदूर्वामयस्थलानि, हे बलसमूहाः=सैनिकसमूहाः, !, यूयं भजत=सेवध्वम्, अधितिष्ठतेत्यर्थः । मालिनी वृत्तम् ॥७५॥

ज्योत्स्ना—"नदी के समीप में कोमल तरङ्गयुक्त वायु से आन्दोलित अर्थात् कम्पित विकसित पुष्पों वाली लतिकाओं के मध्य में वृद्ध शुकों के झरते हुए पंखों के अंशों की कान्ति के समान कान्ति वाले एवं छोटे-छोटे दूर्वा घास वाले इन स्थलों का हे सैनिकों ! (आप लोग) सेवन करें अर्थात् यहाँ पर पड़ाव डालें ॥७५॥

अपि च—

स्मरविहरणवेदीं षट्पदापानशालां
तटमनु वनमालां सस्मया मास्म भाङ्क्षुः ।
कमलवनविहारानन्तरं यत्र तैस्तै-
र्मदनमदविनोदैरासते राजहंसाः ॥७६॥

अन्वयः—तटम् अनु सस्मयाः स्मरविहरणवेदीं षट्पदापानशालां वनमालां मास्म भाङ्क्षुः । यत्र कमलवनविहारानन्तरं राजहंसाः तैस्तैः मदनमदविनोदैः आसते ॥७६॥

कल्याणी—स्मरेति । तटमनु=तटं लक्ष्यीकृत्य, सस्मयाः=सगर्वाः भवन्तः, स्मरविहरणवेदीं=कामदेवस्य विहरणभूमिं, षट्पदापानशालां—षट्पदानां=मधुकराणां, पानशालां=मधुपानशालां, वनमालां=वनश्रेणिं, मास्म भाङ्क्षुः=विनष्टां मास्म कार्षुः, यत्र=यस्यां भूमौ, कमलवनविहारानन्तरं—कमलवने=पद्मकानने, यः विहारः, तस्मात् अनन्तरं=पश्चात्, राजहंसाः=कलहंसाः, तैस्तैः=विविधैः, मदनमदविनोदैः=कामोल्लासमूलकक्रीडाभिः, आसते=तिष्ठन्ति । प्रथम-तृतीयचतुर्थपादानां वनभङ्गनिषेधे हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम् । मालिनी वृत्तम् ॥७६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी—तट के किनारे-किनारे स्थित कामदेव की विहरण-भूमिस्वरूपा तथा भ्रमरों की मधुपानशालास्वरूपा इस वनपंक्ति को गर्वित हो आप लोग नष्ट न करें; जहाँ कमलवन में विहार करने के पश्चात् राजहंसों का समूह नाना प्रकार की काममद को बढ़ाने वाली क्रीडाओं के साथ निवास करता है ॥७६॥

अपि च—

सुरसदननिवासं सैनिका मास्म कुर्वन्
सरिति मुनिकुटीनां भङ्गमुल्लुण्ठनं वा ।
इह निषधनृपाज्ञा तस्य यः क्वापि कोऽपि
क्लममुषि तरुखण्डे खण्डनं वा करोति' ॥७७॥

अन्वयः—सैनिकाः सुरसदननिवासं मास्म कुर्वन् यः कोऽपि सरिति मुनिकुटीनां भङ्गम् उल्लुण्ठनं वा (यः कोऽपि) क्वापि क्लममुषि तरुखण्डे खण्डनं वा करोति तस्य इह निषधनृपाज्ञा ॥७७॥

कल्याणी—सुरसदनेति। सैनिकाः सुरसदननिवासं—सुरसदनेषु=देवालयेषु, निवासम्=आवासं, मास्म कुर्वन्, 'स्मोत्तरे लङ् च' इति लङ्। यः कोऽपि सरिति=सरित्तटे, मुनिकुटीनां=मुनेराश्रमाणां, भङ्गं=विध्वंसम्, उल्लुण्ठनं=अपहरणं वा, यः कोऽपि क्वापि=कुत्रापि, क्लममुषि—क्लमं=श्रान्ति, मुष्णातीति तथोक्ते, श्रान्त्यपहारक इत्यर्थः। तरुखण्डे=पादपकुञ्जे, खण्डनं=च्छेदनं वा करोति, तस्येह निषधनृपाज्ञा—निषधनृपस्य=निषधराजस्य, आज्ञा=आदेशः। न कोऽपि तरुखण्डनं मुनिकुटीनां विध्वंसनमुल्लुण्ठनं वा करोत्विति निषधाधिपतेराज्ञेति भावः। मालिनी वृत्तम् ॥७७॥

ज्योत्स्ना—और भी—सैनिकगण देवालयों में निवास न करते हुए नदी के किनारे स्थित मुनियों के जिस किसी भी आश्रम को नष्ट करेंगे या उनमें लूट-पाट करेंगे अथवा जो कोई भी थकावट को दूर करने वाले वृक्षखण्डों का छेदन करेगा (काटेगा), उन सबों के लिए यह निषधराज की आज्ञा है।

विमर्श—आशय यह है कि निषधनरेश की यह आज्ञा है कि सैनिक देवमन्दिरों में निवास न करें, मुनियों के तटवर्ती आश्रमों को हानि न पहुँचायें और उनमें लूट-पाट भी न करें तथा थके हुए यात्रियों को आराम पहुँचाने वाले वृक्षों के तनों को भी न काटें ॥७७॥

एवमनुशासति बलानि बहूनि बहुधा बाहुके; तत्क्षणादुत्तम्भितैः प्रेङ्खत्पताकापटपल्लवविराजितैः प्रयाणयोग्ययन्त्रचित्रशालागृहैः सञ्चारिणि गन्धर्वनगर इव रमणीये, हरितोरणैरुड्डीनशुकावलीमय इव, गैरिकारक्तो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्नमितपटकुटीभिरुत्फुल्लकिंशुकमय इव, श्वेतांशुकमण्डपैश्च ताण्डवितबृहत्पुण्डरीकखण्डमय इव, जाते सरित्सङ्गमोत्सङ्गसङ्गिनि शिविरसन्निवेशे, क्रमेणाक्रान्तसकलदिङ्मुखेषु निषधेश्वरागमनवार्तानिवेदनदूतेष्विव विदर्भराजधानीधामनिर्गतेषु बहलसैन्यधूलिपटलेषु, रसति विपक्षक्षितिपालकर्णपुटीकटुनि नवजलधरध्वनितगम्भीरे तत्कालप्रहतशङ्खसखप्रयाणझल्लरीझांकृते, स्वयंवरायातसमस्तराजन्यचक्रकर्णकर्तरीषु पठ्यमानासु सानन्दवन्दारुवन्दिवृन्दारकवृन्देनोच्चैर्नलनाममालासु, क्षणादेवोत्तम्भितशातकुम्भस्तम्भभवने मृदुमसृणास्तरणभाजि जात्यवैदूर्यपर्यङ्किकायां सुखनिषण्णे राजनि, सुस्थिते च परिजने, नातिदूरवर्त्तिनि कुण्डिने दण्डपाशिकस्योच्चैर्वागुदतिष्ठत्॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्; अनुशासति=नियन्त्रयति, बलानि=सैन्यानि, बहूनि=अनेकानि, बहुधा=विविधप्रकारेण, बाहुके=सेनापतौ, तत्क्षणात्=तत्कालमेव, उत्तम्भितैः=आरोपितैः, उन्नमितैरिति यावत्। प्रेङ्खत्पताकापटपल्लवविराजितैः—प्रेङ्खन्ति=दोलयन्ति, पताकानां=ध्वजानां, पटपल्लवानि=पल्लवोपमवस्त्राणि, तैः विराजितैः=सुशोभितैः, प्रयाणयोग्ययन्त्रचित्रशालागृहैः=जङ्गमयन्त्रनिर्मितचित्रशालागृहैः, सञ्चारिणि=जङ्गमे, गन्धर्वनगर इव—गन्धर्वनगरम्=आकाशस्थं कल्पनिकं नगरं तस्मिन्निव, रमणीये=मनोरमे, हरिततोरणैः=हरितवर्णपताकाभिः, उड्डीना=उत्पतिता, या शुकावली=कीरपङ्क्तिः तन्मय इव, गैरिकारक्तोन्नमितपटकुटीभिः—गैरिकाभिः=गैरिकवर्णाभिः, आरक्ताभिः=ईषद्रक्तवर्णाभिः, उन्नमिताभिः पटकुटीभिः=वासोगृहैः, उत्फुल्लकिंशुकमय इव—उत्फुल्लानि=विकसितानि, किंशुकानि=किंशुकपुष्पाणि, यद्वा उत्फुल्लकिंशुकाः=पुष्पितकिंशुकवृक्षाः, तन्मय इव, श्वेतांतमित्यर्थः। शुकमण्डपैश्च=श्वेतवस्त्रगृहैश्च, ताण्डवितबृहत्पुण्डरीकखण्डमय इव—ताण्डवितं=प्रकम्पिबृहत्पुण्डरीकखण्डं=विशालश्वेतकमलवनं, तन्मय इव, सरित्सङ्गमोत्सङ्गसङ्गिनि=विदर्भावरदासङ्गमतटसक्ते, शिविरसन्निवेशे जाते—शिबिराणां संनिवेशे=अवस्थाने जाते, क्रमेण=क्रमशः, आक्रान्तसकलदिङ्मुखेषु—आक्रान्तानि=आच्छादितानि, सकलदिङ्मुखानि=समस्तदिशाऽऽननानि यैस्तेषु, बहलसैन्यधूलिपटलेषु=पर्याप्तसैनिकपादोत्थधूलिपटलेषु, निषधेश्वरागमनवार्तानिवेदनदूतेष्विव—निषधेश्वरस्य=नलस्य, आगमनवार्ता=आगमनसमाचारः, तस्या निवेदनाय=सूचनाय, दूतेष्विव=सन्देशहरेष्विव [उत्प्रेक्षा]। विदर्भराजधानीधामनिर्गतेषु—विदर्भराजधानीं=कुण्डिननगरं, तत्र यानि धामानि=गृहाणि, तानि प्रति निर्गतेषु=प्रयातेषु, विदर्भराजधानीं व्याप्तवत्सु सत्स्विति भावः। विपक्षक्षितिपालकर्णपुटीकटुनि—विपक्षाः=शत्रवः, ये क्षितिपालाः=भूपतयः, तत्कर्णपुटीनां=श्रवणकुहराणां, कटुनि=अरोचके, सन्तापकारिणीत्यर्थः। नवजलधरध्वनितगम्भीरे=नूतनमेघगर्जितगम्भीरे, तत्कालप्रहतशङ्खसखप्रयाणझल्लरी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झाङ्कृते—तत्कालं=तत्क्षणादेव, प्रहताः=वादिताः, शङ्खसखप्रयाणझल्लर्यः=प्रयाणसूचनार्थं सशङ्खझल्लर्यः, झल्लरी—झर्झरेति नाम्नापि प्रसिद्धो वाद्यविशेषः, तासां झाङ्कृते=झाङ्कारे; रसति=ध्वनति सति, स्वयम्वरायातसमस्तराजन्यचक्रकर्णकर्तरीषु—स्वयंवरे=दमयन्तीस्वयंवरे, आयातम्=आगतं, समस्तराजन्यचक्रं=सकलनृपवृन्दं, तत्कर्णकर्तरीषु—तत्कर्णयोः=श्रोत्रयोः, कर्तर्यः=कर्तन्यः तासु, तत्कर्णोद्वेजिकासु प्रतिद्वन्द्विभावादिति भावः। सानन्दवन्दारुवन्दिवृन्दारकवृन्देन—सानन्दं वन्दन्ते=स्तुन्वन्ति श्रद्धयेति वन्दारवः ये वन्दिनः=स्तुतिपाठकाः, तेषां वृन्दारकेण=समूहेन, उच्चैः=उच्चस्वरेण, नलनाममालासु पठ्यमानासु—नलस्य नाममालाः=संज्ञाशब्दावल्यः, तद्वैशिष्ट्यव्यञ्जकस्तुतय इत्यर्थः, तासु पठ्यमानासु, क्षणादेव=शीघ्रमेव, उत्तम्भितशातकुम्भस्तम्भभवने—उत्तम्भिताः=अवलम्बनार्थमुन्नमिताः; शातकुम्भस्तम्भाः=स्वर्णनिर्मितस्तम्भाः, यत्र तथाविधे भवने=पटगृहे, मृदुमसृणास्तरणभाजि—मृदुमसृणास्तरणं भजते इति तस्मिंस्तथोक्ते, कोमलस्निग्धास्तरणोपेतायामित्यर्थः। जात्यवैदूर्यपर्यन्तपर्यङ्किकायाम्=उत्कृष्टवैदूर्यमणिखचितः, पर्यन्तः=पादाद्यवयवः यस्यास्तथाविधायां पर्यङ्किकायां, राजनि=नले, सुखनिषण्णे—सुखेन=आनन्देन, निषण्णे=उपविष्टे सति, परिजने=अनुचरवर्गे च, सुस्थिते=सुस्थिरे सति, नातिदूरवर्तिनि=समीपवर्तिनि, कुण्डिने=कुण्डिननगरे, दण्डपाशिकस्य [दण्डवासिकस्येति पाठः समीचीनः] दण्डवासिकः=द्वारपालः तस्य, उच्चैर्वाक्=उच्चध्वनिः, उदतिष्ठत्=उदगमत्, उच्चध्वनिरश्रूयतेति भावः। दण्डपाशिकस्येति पाठे दण्डपाशोऽस्त्यस्येति दाण्डपाशिको राजपुरुषविशेषः। 'अत इनिठनौ' इति ठन्, ठस्येकः॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार सेनापति बाहुक द्वारा नाना प्रकार से सेनाओं को अनुशासित किये जाने पर तत्काल ही स्थापित की गई फहराती हुई पताकाओं के पल्लवसदृश वस्त्रों से सुशोभित एवं प्रयाण करने योग्य यन्त्रों से निर्मित चित्रशालागृहों के कारण सञ्चरण करते हुए गन्धर्वनगर के समान रमणीय, हरित तोरणों के कारण उड़ती हुई शुकपंक्ति के समान, गेरुए और थोड़े लाल रंग की ऊँची पटकुटीरों के कारण विकसित किंशुकपुष्पों अथवा पुष्पित किंशुकवृक्षों के समान और श्वेत वस्त्रों से निर्मित मण्डपों के कारण कम्पायमान विशाल श्वेत-कमल-वन के समान विदर्भा और वरदा नदी के संगम की तटवर्ती भूमि पर शिविरों के बनाये जाने पर; क्रमशः समस्त दिशाओं को आक्रान्त करते हुए प्रभूत सैनिकों के पादाघात से उठे हुए धूलिपटलों द्वारा निषधनरेश नल के आगमन की सूचना देने वाले दूतों के समान विदर्भ देश की राजधानी कुण्डिननगर के भवनों में प्रवेश कर जाने पर; शत्रु-राजाओं के कर्णकुहरों के लिए अप्रिय अर्थात् सन्तापदायक;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नवीन मेघ-गर्जन के समान गम्भीर, तत्काल ही बजाये गये शंखों के साथ-साथ प्रयाणसूचक झर्झर-वाद्यों (झालों) की झंकार-ध्वनि होने पर; (दमयन्ती)-स्वयंवर में आये हुए समस्त राजसमूहों के कानों के लिए कैंची की तरह प्रतीत होने वाली आनन्द के साथ स्तुति करते हुए स्तुतिपाठकों द्वारा उच्च स्वर से नल की नाममाला का पाठ किये जाने पर; शीघ्र ही उठाये गये स्वर्ण-निर्मित स्तम्भों वाले भवनों (पटगृहों) में कोमल एवं स्निग्ध बिछौनों से समन्वित, उत्कृष्ट विद्रुम मणि से खचित पाटियों वाले पलंग पर सुखपूर्वक राजा (नल) के बैठ जाने और अनुचरों के सुस्थिर हो जाने पर समीपवर्ती कुण्डिन नगर में दण्डपाशिक (द्वारपाल) की उच्च ध्वनि गूंज उठी ॥

'सिच्यन्तां राजमार्गाः कलशमुखगलच्चन्दनाम्बुच्छटाभिः
स्तम्भाः प्रेङ्खत्पताकाः कुसुमपरिकरास्तोरणाङ्काः क्रियन्ताम् ।
स्थाप्यन्तां पूर्णकुम्भाः प्रतिनगरगृहं प्राङ्गणे धान्यमिश्रैः
सिद्धार्थैः स्वस्तिकालीर्लिखत नरपतिर्नैषधः प्राप्त एषः ॥७८॥

अन्वयः—राजमार्गाः कलशमुखगलच्चन्दनाम्बुच्छाभिः, सिच्यन्ताम् । स्तम्भाः प्रेङ्खत्पताकाः कुसुमपरिकराः तोरणाङ्काः क्रियन्ताम् । प्रतिनगरगृहं पूर्णकुम्भाः स्थाप्यन्ताम्, प्राङ्गणे धान्यमिश्रैः सिद्धार्थैः स्वस्तिमालीः लिखत, (यतः) एषः नरपतिः नैषधः प्राप्तः ॥७८॥

कल्याणी—सिच्यन्तामिति । राजमार्गाः=राजपथाः, कलशमुखगलच्चन्दनाम्बुच्छटाभिः—कमलशानां=घटानां, मुखेभ्यः=कण्ठेभ्यः, गलन्तीभिः=पतन्तीभिः, चन्दनाम्बुच्छटाभिः=चन्दनमिश्रितजलधाराभिः, सिच्यन्ताम्=आर्द्रीक्रियन्ताम्, स्तम्भाः=स्तूपाः, प्रेङ्खत्पताकाः—प्रेङ्खन्त्यः=दोलयन्त्यः, पताका=ध्वजा यासु ते तथाविधाः; कुसुमपरिकराः=पुष्पयुक्ताः, तोरणाङ्काः=बद्धतोरणाः, क्रियन्तां=विधीयन्ताम् । प्रतिनगरगृहं=नगरस्य गृहे-गृहे, पूर्णकुम्भाः=जलपूर्णकलशाः, स्थाप्यन्तां=ध्रियन्ताम्, प्राङ्गणे=चत्वरे, धान्यमिश्रैः=यवाक्षतादिधान्ययुक्तैः, सिद्धार्थैः=श्वेतसर्षपैः, स्वस्तिकाली—स्वस्तिकः=मङ्गलचिह्नविशेषः, तदालीः=तत्पङ्क्तीः, लिखत=अङ्कयत, [यतः] एषः=अयं, नरपतिः=नृपः, नैषधः=नलः, प्राप्तः=आगतः । स्रग्धरा वृत्तम् ॥७८॥

ज्योत्स्ना—कलशों के मुख से गिरते हुए चन्दनमिश्रित जल की धाराओं से राजमार्गों को सिञ्चित किया जाय । स्तम्भों को फहराती हुई पताकाओं तथा पुष्पयुक्त तोरणों से आबद्ध किया जाय । नगर के प्रत्येक घरों में जल से भरे कलश स्थापित किये जायँ । चौराहों पर यव-अक्षत आदि सप्तधान्यों से समन्वित मंगलदायक स्वस्तिक-चिह्नों से पंक्तियाँ बनाई जायँ; क्योंकि ये राजा नल आ गये हैं ॥७८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपि च—

सत्काञ्च्यश्चन्दनार्द्र-स्तनकलशयुगामुक्त-मुक्तावलीकाः
पात्राण्यादाय दूर्वादलदधिकुसुमोन्मिश्रसिद्धार्थभाञ्जि ।
सोत्तंसा हंसपिच्छच्छविवसनभृतो वार्तिताश्चर्यचर्या
नार्यो निर्यान्तु तूर्यध्वनिलयललितं गीतमुच्चारयन्त्यः ॥७९॥

अन्वयः—सत्काञ्च्यः चन्दनार्द्रस्तनकलशयुगामुक्तमुक्तावलीकाः दूर्वादलदधिकुसुमोन्मिश्रसिद्धार्थभाञ्जि पात्राणि आदाय सोत्तंसाः हंसपिच्छच्छविवसनभृतः वर्तिताश्चर्यचर्याः नार्यः तूर्यध्वनिलयललितं गीतम् उच्चारयन्त्यः निर्यान्तु ॥७८॥

कल्याणी—सत्काञ्च्य इति । सत्काञ्च्यः—सती=मनोहरा, काञ्ची=रशना यासां ताः, चन्दनार्द्रस्तनकलशयुगामुक्तानुक्तावलीकाः—चन्दनेन=मलयजेन, आर्द्रे=सिक्ते, स्तनकलशयुगे=घटसदृशस्तनयुग्मे, आमुक्ता=धृता, मुक्तावली=मौक्तिकमाला याभिस्ताः, दूर्वादलदधिकुसुमोन्मिश्रसिद्धार्थभाञ्जि=दूर्वादल-दधि-कुसुममिश्रित-सर्षपपूर्णानि, पात्राणि=भाजनानि, आदाय=गृहीत्वा, सोत्तंसाः—उत्तंसैः=भूषणैः, सह वर्तन्त इति सोत्तंसाः, भूषणभूषिता इत्यर्थः। हंसपिच्छच्छविवसनभृतः—हंसपिच्छस्य=हंसपक्षस्य इव छविः=कान्तिः यस्य तथाविधः वसनं=परिधानं, बिभ्रति=परिदधतीति तथोक्ताः, वर्तिताश्चर्यचर्याः—वर्तितं=सम्पादितम्, आश्चर्यं=कौतूहलं यया तथाविधा, चर्या=गतिः यासां ताः, नार्यः=स्त्रियः, तूर्यध्वनिलयललितं—तूर्यः=वाद्यविशेषः, तस्य ध्वनिः=शब्दः, तस्य लयेन=सङ्गत्या, ललितम्=उत्कृष्टं, गीतं=गानम्; उच्चारयन्त्यः=गायन्त्यः, निर्यान्तु=निर्गच्छन्तु । स्रग्धरा वृत्तम् ॥७९॥

ज्योत्स्ना—और भी—मनोहर करधनी वाली, चन्दनरस से सिक्त कलशसदृश दोनों स्तनों पर मोतियों की माला धारण की हुई, दूर्वादल-दधि और पुष्पों से मिश्रित सरसों से भरे पात्रों को लेकर, आभूषणों से अलंकृत होकर, हंसपंखसदृश कान्ति वाले परिधानों (वस्त्रों) को धारण कर, आश्चर्य उत्पन्न करने वाली गति से समन्वित नारियाँ तुरही नामक वाद्य की ध्वनि की लय के साथ ललित गीतों को गाती हुई निकलें ॥७९॥

अपि च—

अपि भवत कृतार्थाः पौरनार्यश्चिरेण
व्रजतु निषधनाथश्चक्षुषां गोचरं वः ।
ध्रुवमयमवतीर्णः स्वर्गलोकादनङ्गो
हर-चरण-सरोज-द्वन्द्व-लब्ध-प्रसादः ॥८०॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां हरचरणसरोजाङ्कायां षष्ठ उच्छ्वासः समाप्तः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—पौरनार्यः ! (यूयम्) अपि कृतार्थाः भवत । निषधनाथः चिरेण वः चक्षुषां गोचरं व्रजतु । ध्रुवं हरचरणसरोजद्वन्द्वलब्धप्रसादः अयम् अनङ्गः स्वर्गलोकात् अवतीर्णः ॥८०॥

कल्याणी—अपीति । हे पौरनार्यः=पौराङ्गनाः !, यूयमपि [नैषधदर्शनेन] कृतार्थाः=कृतकृत्याः, भवत । निषधनाथः=नलः, चरेण=चिरकालं, वः=युष्माकं, चक्षुषां=नेत्राणां, गोचरं=विषयं, व्रजतु=गच्छतु, चिरं वः नेत्राणां पुरतस्तिष्ठत्वित्यर्थः । ध्रुवं=निश्चयेन, हरचरणसरोजद्वन्द्वलब्धप्रसादः—हरचरणसरोजद्वन्द्वस्य=शिवपादपद्मयुगस्य, लब्ध=प्राप्तः, प्रसादः=अनुग्रहः येन सः, अयम्=एषः, अनङ्गः=कामदेवः, स्वर्गलोकात्=देवलोकात्, अवतीर्णः । प्रकृतस्य नलस्य कामदेवात्मना संभावनयोत्प्रेक्षा, सा च ध्रुवमिति पदोपादानाद् वाच्या । मालिनी वृत्तम् ॥८०॥

इति कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां
षष्ठ उच्छ्वासः समाप्तः ॥

ज्योत्स्ना—और भी—हे पौराङ्गनाओं ! (तुम सब भी) कृतकृत्य हो जाओ। निषधनरेश (नल) चिर काल तक तुम लोगों की आँखों के सामने रहें । निश्चित रूप से भगवान् शंकर के चरणकमलों से आशीर्वाद प्राप्त किये हुए ये कामदेव (बनकर) स्वर्ग से अवतरित हुए हैं ॥८०॥

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टप्रणीत दमयन्तीकथात्मक नलचम्पू काव्य में षष्ठ उच्छ्वास की श्रीनिवास शर्माकृत सविमर्श 'ज्योत्स्ना' हिन्दी व्याख्या पूर्णता को प्राप्त हुई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्तम उच्छ्वासः

एवमविश्रान्तमतितारस्वरेण पुरः पौरपुरंध्रिमण्डलान्युद्दण्डयतो दण्डपाशिकस्य कलकलमाकर्णयत्यास्थानस्थिते राजनि, प्रविश्य प्रणामप्रेङ्खोलितगलकन्दलावलम्बितजाम्बूनदस्थूलशृङ्खलास्फालितवक्षःस्थलः स्थविरवयाः सवेषः प्रतीहारः सविनयमुक्तवान् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, अविश्रान्तं=निरन्तरम्, अतितारस्वरेण=अत्युच्चध्वनिना, पुरः=नगर्याः, पौरपुरंध्रिमण्डलानि=नागरिकवधूचक्रवालानि, उद्दण्डयतः=प्रोत्साहयतः, दण्डपाशिकस्य=दौवारिकस्य, कलकलं=कोलाहलम्, आस्थानस्थिते=सभामण्डपस्थे, राजनि=नले, आकर्णयति=शृण्वति सति, प्रणामप्रेङ्खोलितगलकन्दलावलम्बितजाम्बूनदस्थूलशृङ्खलास्फालितवक्षःस्थलः—प्रणामात्=नमस्कारात्, प्रेङ्खोलितः=चञ्चलः, अवनत इत्यर्थः। यः गलकन्दलः=अङ्कुरोपमकण्ठः, तत्र अवलम्बिता=लम्बमाना, या जाम्बूनदस्य=सुवर्णस्य, स्थूला=पीना, शृङ्खला=आभरणविशेषः (सिकडीति भाषायाम्), तया आस्फालितं=संघृष्टं, वक्षःस्थलं=उरःस्थलं यस्य स तथोक्तः, स्थविरवयाः=वृद्धः, सवेषः=धृतानुकूलवेषः, प्रतीहारः=द्वारपालः, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, सविनयं=विनयेन सहितम्, उक्तवान्=अवदत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार निरन्तर उच्च स्वर से नगर के नागरिक वधुजनों को प्रोत्साहित कर रहे दण्डपाशिक के कोलाहल को सभामण्डप में स्थित राजा द्वारा सुने जाने पर, प्रणाम के कारण चञ्चल ग्रीवांकुर में अवलम्बित सुवर्ण की मोटी शृंखला-(सिकड़ी)-रूप आभूषण से घर्षित वक्षःस्थल वाले अनुकूल वेषधारी वृद्ध प्रतिहारी ने प्रवेश कर सविनय निवेदन किया ॥

देव ! धृतमाङ्गल्यकल्पवेषाः पुष्पफलाक्षतपूर्णस्वर्णपात्रपाणयः पुरःस्थिता अधीयाना ब्राह्मणाः कुण्डिनपुरपौराः पुरंध्रयश्च देवदर्शनार्थितया द्वारि सेवावसरमनुपालयन्ति ॥

कल्याणी—देवेति। देव !=स्वामिन् !, धृतमाङ्गल्यकल्पवेषाः=धृतमङ्गलोचितोदारनेपथ्याः, पुष्पफलाक्षतपूर्णस्वर्णपात्रपाणयः—पुष्पैः फलैश्चाक्षतैश्च पूर्णभूतं, स्वर्णपात्रं=जाम्बूनदभाजनं, पाणौ=करे येषां ते तथोक्ताः, पुरःस्थिता=अग्रे स्थिता, अधीयानाः=स्वस्तिपाठं कुर्वन्तः, ब्राह्मणाः=विप्राः, कुण्डिनपुरपौराः=कुण्डिनपुरस्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नागरिकाः, पुरन्ध्रयश्च=सौभाग्यवत्यः स्त्रियश्च, देवदर्शनार्थितया=भवद्दर्शनकामनया; द्वारि=द्वारदेशे, सेवावसरं—सेवायाः=परिचर्यायाः, अवसरं=समयम्, अनुपालयन्ति=प्रतीक्षन्ते ॥

ज्योत्स्ना—राजन् ! मांगलिक वेषों को धारण कर पुष्प, फल और अक्षतों से परिपूर्ण स्वर्णपात्रों को हाथों में लिये हुए, सामने स्थित होकर स्वस्तिपाठ करते हुए ब्राह्मण, कुण्डिनपुर के नागरिक और नगरवधुयें (सौभाग्यवती स्त्रियाँ) आपके दर्शन की कामना से द्वार पर सेवा के अवसर की प्रतीक्षा कर रही हैं ॥

कथयन्ति चैवमदूरे विदर्भेश्वरोऽपि देवं द्रष्टुमायाति ॥

कल्याणी—कथयन्तीति । कथयन्ति=वदन्ति, चैवं यत् अदूरे=समीपे, विदर्भेश्वरः=विदर्भाधिपतिरपि, देवं=भवन्तं, द्रष्टुम्=अवलोकयितुम्, आयाति=आगच्छति ॥

ज्योत्स्ना—और (वे) कह रहे हैं कि विदर्भनरेश भी आपको देखने के लिए समीप (आपके पास) आ रहे हैं ॥

लग्न इव श्रूयते च शङ्खस्वनविदर्भितो विदर्भोपकण्ठे पठद्वन्दिवृन्दकोलाहलः ॥

कल्याणी—लग्न इवेति । विदर्भोपकण्ठे=विदर्भसमीपे, शङ्खस्वनविदर्भितः=शङ्खध्वनिमिश्रितः, पठद्वन्दिवृन्दकोलाहलः—पठतः=यशोगानं कुर्वतः, वन्दिवृन्दस्य=वन्दिजनसमूहस्य, कोलाहलः=कलकलः, लग्न इव=आसन्न इव, श्रूयते=आकर्ण्यते ॥

ज्योत्स्ना—और विदर्भ के समीप में शंखध्वनि के साथ-साथ यशोगान करते हुए वन्दिजनों (स्तुतिपाठकों) का कोलाहल नजदीक आते हुए के समान सुनाई पड़ रहा है ॥

'तदादिशतु देवो यथाकर्त्तव्यम्' इत्यभिधाय स्थिते तस्मिन् 'भद्रभूते ! त्वरितं प्रवेशय विदर्भाधिपस्य परिजनं स्वयमपि तदर्धपथमनुसर' इति नलो दौवारिकमादिदेश ॥

कल्याणी—तदिति । 'तत्=तस्मात्, देवः=महाराजः, यथाकर्तव्यं=यथाकरणीयम्, आदिशतु=आज्ञापयतु' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तस्मिन्=प्रतिहारिणि, स्थिते=अवस्थिते सति, 'हे भद्रभूते ! भद्रभूतिरिति दौवारिकस्य नाम, तत्सम्बुद्धौ—हे भद्रभूते ! विदर्भाधिपस्य=विदर्भनरेशस्य, परिजनम्=अनुचरं, त्वरितं=शीघ्रं, प्रवेशय=प्रवेशं कारय, स्वयमपि=आत्मना अपि, तदर्धपथं—तस्य=अनुचरस्य, अर्धपथम्=अर्धमार्गम्, अनुसर=अनुगच्छ, अर्धपथे तं प्रत्युद्गच्छेति भावः । इति=एवम्; नलः=निषधनरेशः, दौवारिकं=द्वारपालम्, अदिदेश=आज्ञापयामास ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इसलिए कर्तव्य-मार्ग का महाराज ही आदेश करें।" इस प्रकार कहकर उस (प्रतिहारी) के मौन हो जाने पर "हे भद्रभूति ! विदर्भराज के अनुचर को शीघ्र ही ले आओ और स्वयं भी उनके आधे मार्ग का अनुसरण करो अर्थात् आधे रास्ते तक जाकर उसकी आगवानी करो।' राजा नल ने इस प्रकार दौवारिक (द्वारपाल) को आदेश दिया ॥

सोऽपि—'यथाज्ञापयति देवः' इत्यभिधाय यथादिष्टमकरोत् ॥

कल्याणी—सोऽपीति—सः=दौवारिकोऽपि, 'यथाज्ञापयति=यथादिशति, देवः=स्वामी, इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, यथादिष्टम्=आदेशानतिक्रमेण, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—उस (दौवारिक) ने भी "महाराज की जैसी आज्ञा।" इस प्रकार कहकर आदेशानुसार कार्य किया ॥

अनन्तरमनतिचिरादितस्ततो दोधूयमानचारुचामरकलापपवननर्तितकर्णकुवलयः वल्गुवल्गनोल्ललनलङ्घनलास्यलीलापदैः पथि प्लवमानमिव तरलतुरङ्गमधिरुढः, कनककलशशिखरैरेकदेशस्फुरितविद्युत्स्तबकैरकाण्डाडम्बरितमेघमण्डलैरिव मायूरातपत्रखण्डैराच्छादितगगनान्तरालः; शस्त्रोद्वहनकिणाङ्कितकठोरकण्ठोपकण्ठैः कठिनप्रकोष्ठलुठल्लोहवलयैरूर्ध्वबद्धोद्भटजूटकैरलककरालमौलिभिरर्धोरुकपरिधानैर्निशातकुन्तपाणिभिरभितस्त्वरितपातिभिः पत्तिभिरनुगम्यमानः, मनाङ्मृदुमृदङ्गध्वनिकरम्बिते कोमलकांस्यतालशालिनि वांशिकवाद्यमानवंशनिस्वने दत्तकर्णः, कर्णिकारगौराङ्गोऽङ्गणस्य नातिदूरेऽप्यदृश्यत भीमभूमिपालः ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरं=तत्पश्चात्, अनतिचिरात्=शीघ्रमेव, अङ्गणस्य=अजिरस्य, नातिदूरे=समीपे, इतस्ततः दोधूयमानचारुचामरकलापपवननर्तितकर्णकुवलयः—दोधूयमानस्य=पुनःपुनर्दोल्यमानस्य, चारुचामरकलापस्य=मनोज्ञचामरमण्डलस्य, पवनेन=वायुना, नर्तिते=कारितनृत्ये, प्रकम्पित इति यावत्। कर्णकुवलये=कर्णावतंसत्वेन धृते नीलकमले यस्य स तथोक्तः, वल्गुवल्गनोल्ललनलङ्घनलास्यलीलापदैः—वल्गुना=मनोहरेण, वल्गनेन=गतिविशेषपूर्वं धावनेन, उल्ललनेन=उच्छलनेन, लङ्घनेन=कूर्दनेन च, लास्यलीलापदैः पथि=मार्गे, प्लवमानमिव=तरन्तमिव, तरलतुरंगं=चञ्चलाश्वम्, अधिरूढः, कनककलशशिखरैः=स्वर्णकलशाग्रभागैः, एकदेशस्फुरितविद्युत्स्तबकैः—एकदेशे स्फुरितः=विद्योतितः, विद्युत्स्तबकः=विद्युत्समूहः यस्य तथाविधैः, अकाण्डाडम्बरितमेघमण्डलैः—अकाण्डे=अनवसरे, आडम्बरितैः=समवेतैः, मेघमण्डलैरिव=घनसमूहैरिव, मायूरातपत्रखण्डैः=मयूरपुच्छनिर्मितच्छत्रसमूहैः, आच्छादितगगनान्तरालः—आच्छादितः=आवृत्तः, गगनस्य=नभसः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तरालः=मध्यवर्तिभागः येन यस्य वा सथोक्तः। अत्र मायूरातपत्रखण्डानां मेघमण्डलानि तथा कनककलशशिखरस्य विद्युत्स्तबक उपमानमित्युपमाऽलङ्कारः। शस्त्रोद्वहनकिणाङ्कितकठोरकण्ठोपकण्ठैः—शस्त्रोद्वहनेन=सततशस्त्रधारणेन, [जाताः] ये किणाः=शुष्कमांसग्रन्थयः; तैः अङ्किताः=चिह्नितः, कठोराः=कर्कशाः, कण्ठोपकण्ठाः=स्कन्धप्रदेशाः येषां तथाविधैः, कठिनप्रकोष्ठलुठल्लोहवलयैः—कठिनप्रकोष्ठेषु—कठिनेषु=कठोरेषु, प्रकोष्ठेषु=मणिबन्धादारभ्य कूर्परपर्यन्तभुजभागेषु, लुठन्तः लोहवलयाः=लोहनिर्मितकङ्कणाः येषां तैः, राजपुत्रा हि दाढ़र्याय प्रकोष्ठेषु वलयान् धारयन्तीति ज्ञेयम्। ऊर्ध्वबद्धोद्भटजूटकैः—ऊर्ध्वं=शिरोऽग्रभागे, बद्धः=आबद्धः, उद्भटः=उत्कृष्टः, जूटकः=केशबन्धविशेषः यैस्तथाभूतैः, अलककरालमौलिभिः—अलकैः=केशकलापैः, कराला=भीषणा, मौलयः=शिरांसि येषां तैः, अर्धोरुकपरिधानैः—अर्धे ऊरु प्रमाणमस्य तदर्धोरुकमर्धाद्येन वाससा कटिप्रभृति ऊरुपर्यन्तमाच्छाद्यते तदेव परिधानं येषां तैः, निशातकुन्तपाणिभिः—निशाताः=तीक्ष्णाः, कुन्ताः=शस्त्रविशेषाः, पाणिषु=करेषु येषां तथाविधैः, अभितः=परितः, त्वरितपातिभिः=द्रुतगामिभिः, पत्तिभिः=पदातिभिः, पदगामिसैनिकैरिति यावत्। अनुगम्यमानः=अनुस्रियमाणः, मनाङ्मृदुमृदङ्गध्वनिकरम्बिते=मन्दमधुरमृदङ्गध्वनिसङ्गते, कोमलकांस्यतालशालिनि=मृदुझल्लरीतालसुशोभिते, वांशिकवाद्यमानवंशनिस्वने—वांशिकेन=वेणुवादकेन, वाद्यमानः यः वंशी=वेणुः, तस्य निस्वने=ध्वनौ, दत्तकर्णः—दत्तौ कर्णौ येन स तथोक्तः, कर्णिकारगौराङ्गः—कर्णिकारपुष्पवद् गौराणि अङ्गानि=अवयवाः यस्य सः, भीमः=भीमाख्यः, भूमिपालः=नृपः, अदृश्यत=दृष्टोऽभूत्॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् शीघ्र ही आँगन के थोड़ी ही दूर पर इधर-उधर बार-बार हिलाये जा रहे मनोहर चामरों की हवा से नृत्य करते हुए अर्थात् काँपते हुए कानों में धारण किये आभूषणरूप नीलकमलों वाले; सुन्दर रूप से दौड़ने, उछलने, कूदने के कारण नृत्य-से करते हुए अर्थात् थिरकते हुए कदमों से मार्ग में तैरते हुए-से चञ्चल अश्व पर सवार होकर; स्वर्णकलश के शिखर भाग-से एक भाग में चमकते हुए विद्युद् गुच्छों वाले, असमय में ही आडम्बरित अर्थात् मँडराते हुए मेघमण्डल के समान मयूरपंख से निर्मित छत्रों (छातों) से आच्छादित (ढके हुए) आकाश के मध्यवर्ती भाग वाले; निरन्तर शस्त्र धारण करने से बने शुष्क मांसग्रन्थियों से चिह्नित कठोर कन्धों वाले; कठोर कलाइयों में हिलते हुए लोहे से निर्मित कंकणों वाले; शिर के अग्रभाग में अर्थात् ऊपर की ओर बाँधे गये उत्कृष्ट केशबन्ध वाले; केशपाशों के कारण भीषण शिरों वाले; आधे ऊरु भाग तक ही परिधान (वस्त्र) धारण करने वाले; हाथों में तीखे कुन्त (भाले) लिए हुए, चारों ओर तीव्र गति से चलते हुए सैनिकों द्वारा अनुगमन किये जाते हुए मन्द, मृदु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मृदङ्ग की ध्वनि से मिश्रित, झाल के मधुर तालों से समन्वित वंशीवादक द्वारा बजाई जा रही वंशी की ध्वनि में कान लगाये हुए, कर्णिकार-पुष्प के समान गौर वर्ण के अंगों (शरीर) वाले भीमनामक महाराज दिखाई पड़े ॥

ततश्च चामरग्राहिणीहस्तपल्लवमवलम्बमानः सहेलमुत्थाय प्रथममुत्थितेन संभ्रमवशवल्गितवक्षःस्थलावलम्बितकुसुमदाम्ना विसर्पिकर्पूरकुङ्कुममिलन्मृगमदामोदेन त्वरितसंपातपतत्पटवासपांसुना सामन्तचक्रेण परिकरितः कतिपयपदानि निषधेश्वरस्तदभिमुखमगात् ॥

कल्याणी—ततश्चेति । ततश्च=तदनन्तरञ्च, चामरग्राहिणीहस्तपल्लवं—चामरग्राहिणी=चामरधारिणी सेविका, तस्या हस्तपल्लवं=करकिसलयम्, अवलम्बमानः=आश्रयमाणः, सहेलं=सलीलं, सविलासमिति यावत् । [आसनात्] उत्थाय, प्रथमं=नलोत्थानात्पूर्वमेव, स्वासनात् उत्थितेन, सम्भ्रमवशवल्गितवक्षःस्थलावलम्बितकुसुमदाम्ना—संभ्रमवशात्=त्वरावशात्, वल्गितम्=उच्छलितं, वक्षःस्थलावलम्बितं=वक्षःस्थलोपरि धृतं, कुसुमदाम=पुष्पस्रग् यस्य तेन, विसर्पिकर्पूरकुङ्कुममिलन्मृगमदामोदेन—विसर्पी—विसर्पति=इतस्ततः प्रसरत्यवश्यमिति विसर्पी, परितः प्रसरन्नित्यर्थः । कर्पूरकुङ्कुममिलन्मृगमदामोदः=कर्पूरकुङ्कुममिश्रितकस्तूरिकायाः, आमोदः=सुगन्धः यस्मात् तथाविधेन, त्वरितसम्पातपतत्पटवासपांसुना—त्वरितं=सवेगं, यः संपातः=सहगमनजन्यः संमर्दः, तेन हेतुना पतन्तः पटवासस्य=पिष्टातकस्य, पांसवः=चूर्णकानि यस्य तेन, सामन्तचक्रेण=सामन्तनृपमण्डलेन, परिकरितः=परिवारितः, निषधेश्वरः=राजा नलः, कतिपयपदानि तदभिमुखमगात्—तस्य=भीमनृपस्य, अभिमुखमगात्=भीमं प्रत्युदगमत् ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् चामर धारण करने वाली सेविकाओं के करपल्लव का सहारा लिए हुए आश्चर्य के साथ (आसन से) उठकर; (नल के आसन से उठने के) पूर्व में ही अपने आसन से उठे हुए, शीघ्रता के कारण उछलते हुए वक्षःस्थलों पर अवलम्बित पुष्पमाला वाले, चारो ओर फैलते कर्पूर और कुंकुम से मिश्रित कस्तूरी की गन्ध वाले, जल्दी-जल्दी एक साथ चलने से उत्पन्न भीड़ के कारण झरते हुए पटवास (सुगन्धित द्रव्य-विशेष) के चूर्णों वाले सामन्त राजमण्डलों से घिरे निषधनरेश नल राजा भीम के सम्मुख आगे की ओर कुछ कदम चले ॥

सोऽपि सत्वरोपसृतस्य ताम्बूलप्रसेविकावाहिनः पुरुषस्य स्कन्धमवष्टभ्य दूरादेव तुरङ्गपृष्ठादवातरत् ॥

कल्याणी—सोऽपीति । सः=भीमोऽपि, सत्वरोपसृतस्य=सत्वरमुपगतस्य, ताम्बूलप्रसेविकावाहिनः—ताम्बूलप्रसेविका=ताम्बूलस्थगी, ताम्बूलपात्रमिति यावत् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तां वहत्यवश्यमिति तस्य, ताम्बूलकरङ्कवाहकस्येत्यर्थः । पुरुषस्य=सेवकस्य, स्कन्धम्=अंसस्थलम्, अवष्टभ्य=अवलम्ब्य, दूरादेव=दूरस्थानादेव, तुरङ्गस्य=अश्वस्य, पृष्ठात्=पृष्ठभागात्, अवातरत्=अवारोहत् ॥

ज्योत्स्ना—वे राजा भीम भी (आगे बढ़ते हुए निषधनरेश को देखकर) दौड़कर आगे हुए ताम्बूलपात्र को लेकर चलने वाले सेवक के कन्धे का सहारा लेकर दूर से ही घोड़े की पीठ से उतर गयें ॥

एवमन्योन्यनयनसंपातस्मिताननौ समकालमीषन्नमितमौलिमण्डलौ समसमयप्रसारितभुजौ सरभसमाश्लेषवशविशीर्यमाणहारावलीगलन्मुक्ताफलच्छलेनाङ्गेष्वमान्तमिव प्रथमप्रेमामृतनिष्यन्दिबिन्दुविसरमुद्गिरन्तावन्योन्यमाशिश्लिषतुः ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=अनेन प्रकारेण, अन्योन्यनयनसम्पातस्मिताननौ—अन्योन्यस्मिन् नयनसम्पातेन=समकालमेव दृष्टिपातेन, स्मिते=मन्दहासयुक्ते, प्रसन्ने इति यावत् । आनने=मुखे ययोस्तौ, समकालं=युगपत्, ईषन्नमितमौलिमण्डलौ—ईषत्=अल्पं, नमिते=नम्रीकृते, मौलिमण्डले=शिरोमण्डले याभ्यां तौ तथोक्तौ, समसमयप्रसारितभुजौ—समसमयं=समकालं, प्रसारितौ=विस्तारितौ, भुजौ=बाहू याभ्यां तौ, सरभसं=सवेगं सहर्षं वा, 'रभसो वेगहर्षयोः' इति कोशः । आश्लेषवशविशीर्यमाणहारावलीगलन्मुक्ताफलच्छलेन—आश्लेषः=आलिङ्गनं, तद्वशात् विशीर्यमाणा=भग्नीकृता, या हारावली=मालापंक्तिः, ततः विगलतां=पततां, मुक्ताफलानां=मौक्तिकानां, छलेन=व्याजेन, अङ्गेषु=अवयवेषु, अमान्तमिव=अवकाशमनवाप्नुवन्तमिव, प्रथमप्रेमामृतनिष्यन्दिबिन्दुविसरम्=प्रथमस्नेहामृतस्य प्रवहणशीलबिन्दुराशिम्, उद्गिन्तौ=पातयन्तौ, अन्योन्यं=परस्परम्, आशिश्लिषतुः=आलिलिङ्गतुः ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार परस्पर एक-दूसरे के ऊपर एक साथ ही दोनों की दृष्टि पड़ने से मन्दहासयुक्त (प्रसन्न) मुखों वाले, एक साथ ही थोड़े झुके हुए शिरों वाले, एक साथ ही फैलाये भुजाओं वाले, तीव्रता अथवा हर्षाधिक्य के साथ आलिंगन के कारण टूटी हुई हारों से गिरते हुए मुक्ताफलों (मोतियों) के बहाने अंगों में न अँटते-हुए से प्रथम, अतएव प्रगाढ़ प्रेमरूपी अमृत के झरते हुए बिन्दुओं को उड़ेलते हुए दोनों ने ही एक-दूसरे का आलिंगन किया ॥

तथाविधे च व्यतिकरे, पप्रथे प्रेक्षकाणां दक्षिणोत्तरदिक्पालयोर्धर्मराजधनदयोरिव समागमे महान्नयनोत्सवो हर्षोत्कर्षकलकलश्च ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—तथाविध इति। तथाविधे च व्यतिकरे=एवं घटिते, दक्षिणोत्तरदिक्पालयोः=दक्षिणोत्तरदिशोः स्वामिनोः, धर्मराजधनदयोरिव=धर्मराजकुबेरयोरिव दक्षिणदिशो भूपतिर्भीमस्तथोत्तरदिशश्चक्रवर्ती नलश्च, तयोः समागमे=मिलने, प्रेक्षकाणां=दर्शकानां, महान् नयनोत्सव=नेत्रानन्दः, हर्षोत्कर्षकलकलश्च=हर्षातिरेकात्कलकलध्वनिश्च, पप्रथे=उत्तस्थौ। उपमालंकारः॥

ज्योत्स्ना—उस समय दक्षिण और उत्तर दिशा के स्वामी धर्मराज और कुबेर के समान दक्षिण दिशा के राजा भीम और उत्तर दिशा के राजा नल के समागम से देखने वालों का महान् नयनोत्सव हुआ तथा आनन्दातिरेक के कारण (वहाँ) कलकल ध्वनि (कोलाहल) गूंज उठी॥

तदनु पुनः प्रधावितप्रतीहारोपनीतम्, अतिविचित्रत्रिभङ्गिभङ्गोत्कीर्णकर्णाटिकारूपरमणीयस्तम्भिकावष्टम्भम्, उज्जृम्भमाणमाणिक्यमकरमुखमुक्तमौक्तिकसरविराजितम्, अपूर्वकर्मनिर्मितभव्यव्यालावलीकीर्णमुखालंकृतम्, उच्चकाञ्चनसिंहासनद्वितयमुभौ भेजतुः॥

कल्याणी—तदनु पुनरिति। तदनु=तदनन्तरं, पुनः=भूयः, प्रधावितप्रतीहारोपनीतं—प्रधावितेन प्रतीहारेण=द्वारपालेन, उपनीतम्=आनीतम्, अतिविचित्रत्रिभङ्गिभङ्गोत्कीर्णकर्णाटिकारूपरमणीयस्तम्भिकावष्टम्भम्—अतिविचित्रत्रिभङ्गिभङ्गेन=अतिविचित्रस्थानकविशेषेण, उत्कीर्णानि=उल्लिखितानि, कर्णाटिकानां=कर्णाटदेशसुन्दरीणां, रूपाणि=प्रतिमाः, तैः रमणीयाः=रम्याः, स्तम्भिकावष्टम्भाः=आधारस्तम्भाः, पादा इति यावत्, यस्य तत्, उज्जृम्भमाणमाणिक्यमकरमुखमुक्तमौक्तिकसरविराजितम्—उज्जृम्भमाणा=विवृतवदना इत्यर्थः। ये माणिक्यमकराः=मणिरचितमकराः, तेषां मुखेषु=आननेषु, मुक्ता=योजिता, ये मौक्तिकसरः=मुक्ताहाराः, तैः विराजितं=सुशोभितम्, अपूर्वकर्मनिर्मितभव्यव्यालावलीकीर्णमुखालङ्कृतम्—अपूर्वकर्मणा=विचित्रकौशलेन, निर्मिता=काष्ठहस्तिदन्तादिभिर्विरचिता, या भव्यव्यालावली=सुन्दरसिंहादिहिंस्रप्राणिपङ्क्तिः, तया कीर्णं=व्याप्तं, मुखम्=अग्रभागः, तेन अलङ्कृतं=भूषितम्, उच्चकाञ्चनसिंहासनद्वितयम्=उन्नतस्वर्णसिंहासनयुग्मम्, उभौ=नलभीमौ, भेजतुः=अधितष्ठतुः॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् पुनः द्वारपाल द्वारा दौड़कर लाये गये अत्यन्त विचित्र स्थानकविशेषों और खुदी हुई कर्णाटक प्रदेश के सुन्दरियों की प्रतिमाओं से रमणीय आधारस्तम्भों वाले, जम्भाई लेते हुए अर्थात् खुले मुख वाले मणिनिर्मित मकरों के मुखों में योजित मुक्ताहारों से सुशोभित, अलौकिक कलाकारिता के द्वारा (लकड़ी, हाथी के दाँतों आदि से) बनाई गई सुन्दर व्यालावली (सिंह आदि हिंसक प्राणियों की पंक्ति) से अलंकृत, स्वर्णनिर्मित दो ऊँचे सिंहासनों पर दोनों (विदर्भनरेश तथा निषधनरेश) आसीन हो गये॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्योन्यकुशलप्रश्नसुखालापव्यतिकरविरामे च विदर्भेश्वरो निषधनाथमवादीत् ।

कल्याणी - अन्योन्येति । अन्योन्यकुशलप्रश्नसुखालापव्यतिकरविरामे—अन्योन्यस्य=परस्परस्य, कुशलप्रश्न एव सुखालापव्यतिकरः=आनन्दवार्ताव्यापारः, तद्विरामे=समाप्तौ च, परस्परकुशलप्रश्नविषयकसुखमयवार्तालापानन्तरमिति भावः । विदर्भेश्वरः=भीमः, निषधनाथं=नलम्, अवादीत्=उक्तवान् ।।

ज्योत्स्ना—और परस्पर एक-दूसरे के कुशलप्रश्नविषयक आनन्दमय वार्तालाप के समाप्त हो जाने पर विदर्भनरेश निषधनरेश से बोले ।।

'अद्यास्मत्कुलसन्ततिः सुकृतिनी धन्याद्य दिग्दक्षिणा
पुण्यप्राप्यसमागमातिथिजना जाताः कृतार्थाः श्रियः ।
श्लाघ्यं जन्म च जीवितं च निजमप्यद्यैव मन्यामहे
यत्रास्मत्सुकृतोदयेन बहुना यूयं गृहानागता ।।१।।

अन्वयः—अद्य अस्मत्कुलसन्ततिः सुकृतिनी, अद्य दक्षिणा दिक् धन्या; श्रियः पुण्यप्राप्यसमागमातिथिजनाः कृतार्थाः जाताः । (वयं) निजम् अपि जन्म च जीवितं च अद्यैव श्लाघ्यं मन्यामहे, यत्र बहुना अस्मत्सुकृतोदयेन यूयं गृहान् आगताः ।।१।।

कल्याणी—अद्येति । अद्य=अस्मिन् दिने, अस्मत्कुलसन्ततिः=अस्मद्वंशपरम्परा, सुकृतिनी=पुण्यशालिनी [जाता], अद्य दक्षिणा दिक्=अवाची दिशा, धन्या=प्रशस्या [जाता], श्रियः=राजलक्ष्म्यः, पुण्यप्राप्यसमागमातिथिजनाः—पुण्यैः=सुकृतैः प्राप्यः=लभ्यः, समागमः=आगमनं, येषां तथाविधाः अतिथिजनाः=अभ्यागताः यासु तादृश्यः सत्यः, कृतार्थाः=कृतकृत्याः, जाताः=सञ्जाताः, श्रियां ह्यतिथिसत्कारफलत्वादिति भावः । [वयं] निजं=स्वकीयमपि, जन्म=उत्पत्तिः च, जीवितं=जीवनञ्च, अद्यैव=अस्मिन्नेव दिने; श्लाघ्यं=प्रशंसनीयं, मन्यामहे=अवगच्छामः, यत्र बहुना=समधिकेन, अस्मत्सुकृतोदयेन—अस्माकं सुकृतोदयेन=पुण्योदयेन, यूयं=भवन्तः, अस्माकं गृहान्, आगताः=समायाताः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ।।१।।

ज्योत्स्ना—'आज हमारी वंशपरम्परा पुण्यशालिनी हो गई, आज दक्षिण दिशा धन्य (प्रशंसनीय) हो गई, राज्यलक्ष्मियाँ पुण्यों के कारण प्राप्त अतिथिजनों के समागम से कृतकृत्य हो गईं । हम भी अपने जन्म और जीवन को आज के दिन ही श्लाघनीय समझते हैं, जबकि हमारे अतिशय पुण्योदय के कारण आपलोग हमारे घर पधारे हैं ।।१।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इतः प्रभृति च—

आ ब्रह्मावधिविस्तरत्कविगिरो गीर्वाणकर्णातिथेः
कीर्तेः पूर्णकलेन्दुसुन्दररुचो यास्याम्यहं पात्रताम् ।
किं चान्यज्जनितक्लमोऽप्ययमभूदाकण्ठतृप्तस्य मे
युष्मत्सङ्गसुखामृतेन सफलः संसारचक्रभ्रमः' ॥२॥

अन्वयः—आब्रह्मावधिविस्तरत्कविगिरः गीर्वाणकर्णातिथेः पूर्णकलेन्दुसुन्दररुचः कीर्तेः पात्रताम् अहं यास्यामि । किञ्चान्यत् आकण्ठतृप्तस्य मे जनितक्लमः अपि संसारचक्रभ्रमः युष्मत्सङ्गसुखामृतेन सफलः अभूत् ॥२॥

कल्याणी—आब्रह्मेति । आब्रह्मावधिविस्तरत्कविगिरः—आब्रह्मावधि=ब्रह्मलोकपर्यन्तं, विस्तरन्ती=प्रसरन्ती, कवीनां=काव्यकर्तॄणां, गीः=वाणी यस्यै तादृश्याः, ब्रह्मलोकपर्यन्तप्रसारिण्या इति भावः । गीर्वाणकर्णातिथेः—गीर्वाणानां=देवानां, कर्णाः=श्रोत्रेन्द्रियाः, तेषामतिथेः, स्वर्गपर्यन्तचारिण्या इति भावः । पूर्णकलेन्दुसुन्दररुचः—पूर्णाः कला यस्य तथाविधस्य इन्दोः=चन्द्रस्य इव सुन्दरी=शुभ्रा, रुक्=कान्तिः यस्यास्तथोक्तायाः, कीर्तेः=यशसः, पात्रताम्=अर्हताम्, अहं यास्यामि=गमिष्यामि, पात्रं भविष्यामीति भावः । किं चान्यत्, आकण्ठतृप्तस्य=पूर्णतृप्तस्येति भावः । मे=मम, जनितक्लमः—जनितः=जातः, क्लमः=खेदः येन स तथाविधोऽपि, संसारचक्रभ्रमः—संसारे=जगति, चक्रवद् भ्रमः=भ्रमणं जन्ममरणात्मकं, युष्मत्सङ्गसुखामृतेन – युष्माकं सङ्गः=मिलनमेव सुखामृतं=आनन्दामृतं, तेन सफलः=कृतार्थः, अभूत्=अभवत् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२॥

ज्योत्स्ना—और आज से ही—ब्रह्मलोकपर्यन्त फैलने वाली कवियों की वाणी का विषय बनी, देवताओं के कानों की अतिथि बनी अर्थात् स्वर्गपर्यन्त भ्रमण करने वाली, पूर्ण कलाओं वाले चन्द्रमा के समान शुभ्र कान्ति वाली कीर्ति का भी मैं पात्र हो जाऊँगा । अधिक क्या कहूँ; पूर्ण रूप से तृप्त मेरा जन्मरूपी कष्ट देने वाले संसार में चक्रवत् जन्म-मरणात्मक भ्रमण भी आप लोगों के मिलनरूप आनन्दामृत से सफल हो गया ॥२॥

इत्यभिधाय प्रवणं प्रणयस्य, प्रगुणं गुणानाम्, अनुकूलं कुलक्रमस्य, योग्यं भाग्योदयस्य, सदृशं देशकालस्य, समानं मानोत्सवसन्ततेः, सरूपं रूपसम्पदाम्, उचितमाचारस्यातिथेरातिथेयमगर्वः कुर्वन्, दुर्वारवैरिवारणान्वारणान्, वायुवेगातुरगांस्तुरगान्, समुल्लसितांशुमञ्जरीजालजनितेन्द्रचापचक्रभ्रममप्रमाणं माणिक्यम्, एकत्र ग्रथिततारप्रकरानुकारान्हारान्, उज्ज्वलभांसि वासांसि सलावण्याः पण्यनारीश्च स्वयमुपढौकयाञ्चकार ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—इत्यभिधायेति । इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, (भीमः) अगर्वः=गर्वरहितः सन्, अतिथेः=नलभूपस्य, प्रणयस्य=प्रेम्णः, प्रवणम्=अनुकूलं, गुणानां प्रगुणम्=अनुगुणम्, कुलक्रमस्य=वंशपरम्परायाः, अनुकूलं=योग्यम्, भाग्योदयस्य=सौभाग्यस्य, योग्यम्=उपयुक्तम्, देशकालस्य सदृशं=समानम्, मानोत्सवसन्ततेः—मानस्य=सम्मानस्य, य उत्सवः=समारोहः, तस्य या सन्ततिः=परम्परा तस्याः, समानं=सदृशम्, रूपसम्पदां=लावण्यानां, सरूपम्=अनुरूपम्, आचारस्य उचितं=यथायोग्यम्, आतिथ्यम्=अतिथिसत्कारं, कुर्वन्=विदधन्, दुर्वार-वैरिवारणान्वारणान्—दुर्वाराः=अदम्याः, ये वैरिणः=शत्रवः, तेषां वारणान्=निषेधकान्, वारणान्=गजान्, वायुवेगातुरगान्—वायुवेगेन आतुरं=सत्वरं गच्छन्तीति तथोक्तान्, तुरगान्=अश्वान्, समुल्लसितांशुमञ्जरीजालजनितेन्द्रचापचक्रभ्रमणभ्रमं—समुल्लसितांशुमञ्जरीजालेन=उद्दीप्तकिरणरेखापुञ्जेन, जनितः=कृतः, इन्द्रचाप-चक्रस्य=इन्द्रधनुर्मण्डलस्य, भ्रमः=भ्रान्तिः येन तत्, अप्रमाणम्=अपरिमितं, माणिक्यं=मणिरत्नम्, एकत्र=एकस्मिन् स्थाने, ग्रथिततारापकरानुकारान्—ग्रथितः=गुम्फितः, ताराप्रकरः=तारासमूहः, तदनुकारान्=तत्सरूपान्, हारान्=मुक्तासरान्, उज्ज्वलभांसि—उज्ज्वला भाः=कान्तिः यासां तादृशानि, वासांसि=वस्त्राणि; सलावण्याः=सौन्दर्ययुक्ताः, पण्यनारीश्च=वारविलासिनीश्च, स्वयम्=आत्मना एव, उपढौकयाञ्चकार=उपहारत्वेनोपनिनाय ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहकर (राजा भीम ने) अभिमानरहित होकर अतिथि (नल) का प्रेम के अनुकूल, गुणों के अनुगुण, वंशपरम्परा के योग्य; भाग्योदय के उपयुक्त, देश-काल के समान, सम्मान की उत्सवपरम्परा के समान, रूपसम्पदा के अनुरूप और आचारोचित अतिथि-सत्कार करते हुए अदम्य शत्रुओं को भी रोक देने वाले हाथियों, वायु की गति से शीघ्रतापूर्वक चलने वाले घोड़ों, उद्दीप्त किरणरेखापुञ्जों से इन्द्रधनुष की भ्रान्ति उत्पन्न करने वाली अपरिमित मणियों, एक ही स्थान पर गुम्फित (पिरोये गये) तारासमूह का अनुकरण करने वाले हारों (मुक्तामालाओं), उज्ज्वल कान्ति वाले वस्त्रों तथा लावण्ययुक्त वाराङ्गनाओं को स्वयं ही उपहार के रूप में समर्पित किया ॥

प्रथमसमागमेऽप्यप्रमेयप्रेमारम्भरभसोल्लासितहृदयः पुनः सोत्कर्ष-हर्षोद्भेदगद्गदाक्षरमिदमवादीत्—

कल्याणी—प्रथमेति । प्रथमसमागमे=प्रथममिलनेऽपि, अप्रमेयप्रेमारम्भ-रभसोल्लासितहृदयः—अप्रमेयः=अतुलः, यः प्रेमारम्भः=प्रणयारम्भः, तस्य रभसात्=वेगात्, प्रकर्षादित्यर्थः । उल्लासितहृदयः—उल्लासितं=प्रसादितं, हृदयं=चेतः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यस्य सः [भीमनृपः] पुनः=भूयः, सोत्कर्षहर्षोद्भेदगद्गदाक्षरं—सोत्कर्षः=समधिकः। यः हर्षः, तस्यः उद्भेदेन=विकासेन, गद्गदानि=अस्पष्टानि विपर्यस्तानि च, अक्षराणि यस्मिंस्तद्यथा स्यात्तथा, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—प्रथम मिलन में भी अतुलनीय आरम्भिक प्रेम के उत्कर्ष से प्रसन्न हृदय वाले (राजा भीम) ने पुनः आनन्दातिरेक के कारण गद्गद वाणी से इस प्रकार कहा—

आसेतोः कपिकीर्तनाङ्कशिखरादाराच्च विन्ध्यावधे-
रा पूर्वापरसिन्धुसीमविषयस्त्वन्मुद्रया मुद्र्यताम्।
अद्यास्मद्गृहमागतस्य भवतो जाता विधेया वयं
स्वीकारः क्रियतां किमन्यदपरं प्राणेषु चार्थेषु च ॥३॥

अन्वयः—कपिकीर्तनाङ्कशिखरात् आसेतोः विन्ध्यावधेः आरात् च आपूर्वापरसिन्धुसीमविषयः त्वन्मुद्रया मुद्र्यताम्। अद्य अस्मद्गृहम् आगतस्य भवतः वयं विधेयाः जाताः। किमन्यत् अपरं, प्राणेषु च अर्थेषु च स्वीकारः क्रियताम् ॥३॥

कल्याणी—आसेतोरिति। कपिकीर्तनाङ्कशिखरात्—कपीनां=वानराणां, कीर्तनं=कीर्तिः तस्य अङ्काः=चिह्नभूताः, व्यञ्जका इत्यर्थः। तथाविधाः शिखराः यस्य तथाविधात्, आसेतोः=सेतोः प्रभृति, विन्ध्यावधेः आराच्च=विन्ध्यगिरिसमीपपर्यन्तञ्च, आपूर्वापरसिन्धुसीमविषयः=पूर्वसमुद्रादारभ्य पश्चिमसमुद्रपर्यन्तदेशः, समस्तदक्षिणदेश इति भावः। त्वन्मुद्रया—मुद्रा=मुद्राङ्कनोपकरणम्, तव मुद्रया मुद्र्यतां=तव शासनेन शास्यतामित्यर्थः। उत्तरदेशाधिपो भवान् समस्तदक्षिणदेशमपि शास्त्विति भावः। अद्य=सम्प्रति, अस्मद्गृहम्—अस्माकं गृहं=सदनम्, आगतस्य=आयातस्य, भवतः=श्रीमतः, वयं=नः, विधेयाः=सेवकाः, जाताः=अभूम। किमन्यत् अपरं [कथयामः], प्राणेषु च=जीवितेषु च, अर्थेषु च=धनेषु च, [चकारद्वयं समुच्चयार्थमिति बोध्यम्], स्वीकारः=स्वीकृतिः, क्रियतां=विधीयताम्, अस्मत्प्राणाश्चार्थाश्चात्मीक्रियन्तामिति भावः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३॥

ज्योत्स्ना—कपियों की कीर्ति के चिह्नभूत शिखरों से समन्वित (समुद्र) सेतु से लेकर विन्ध्य पर्वत के समीप तक एवं पूर्वसमुद्र से लेकर पश्चिम-समुद्र तक का भूभाग अर्थात् समस्त दक्षिण देश आपके शासन से शासित हो। आज से ही हमारे घर आये हुए आपके हम सभी आज्ञाकारी (सेवक) हो गये। अधिक क्या कहूँ; हमारे प्राणों तथा धनों से भी हमें (आप) स्वीकार करें अर्थात् हमारे प्राणों और धनों को भी आप अपना बना लें ॥३॥

एवमुपबृंहयति प्रेम, प्रकाशयति प्रियंवदताम्, उद्योदयत्युदारताम्, दर्शयत्यादरम्, आविर्भावयति सर्वभावम् भीमभूभुजि, नलोऽपि 'सरलस्वभावः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वच्छार्द्रहृदयोऽयं महानुभावः' इति चिन्तयन् "अलमलमखिलात्मसर्वस्वोपनयनेन, भवद्दर्शनमेवास्माकमिह सार्णवसुवर्णपूर्णवसुमतीलाभादपि परमो लाभः। न हि प्रियतमदर्शनसुखाद्वित्तलाभसुखमतिरिच्यते। न च भवद्विभवेऽप्यस्माकं परस्वबुद्धिर्नापि भवच्छरीरेऽप्यनात्मभावः। किञ्चान्यदेवंविधसूक्तसूनृतामृतगर्भगीर्भिरानन्दयतास्मन्मनो महानुभावेन किं न कृतमभिहितं वा प्रणयोचितम्" इति ब्रुवाणस्तं बहु मानयामास ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, प्रेम=प्रणयम्, उपबृंहयति=विजृम्भयति, प्रियंवदतां=मधुरभाषितां, प्रकाशयति=प्रकटयति, उदारताम् उद्योतयति=उद्दीपयति, आदरं=सम्मानं, दर्शयति=प्रदर्शयति, सर्वभावं=सर्वत्वं, त्वमेव सर्वं ममेति भावमिति यावत्। आविर्भावयति=प्रकटयति, भीमभूभुजि=भीमनृपे, नलोऽपि 'सरलस्वभावः=ऋजुप्रकृतिः, स्वच्छार्द्रहृदयः—स्वच्छं=निर्मलम्, आर्द्रं=सरसं, हृदयं=चेतः यस्य सः तथोक्तः, अयम्=एषः, महानुभावः=महाप्रभावः' इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, 'अखिलात्मसर्वस्वोपनयनेन=समस्तस्वकीयसर्वस्वसमर्पणेन, अलमलम् [संभ्रमे द्विरुक्तिः], स्वकीयसमस्तसर्वस्वसमर्पणमप्रयोजनमिति भावः। यतो हि भवतः=श्रीमतः, दर्शनमेव=अवलोकनमेव, अस्माकं कृते, इह=अत्र, सार्णवसुवर्णपूर्णवसुमतीलाभादपि=ससिन्धुकाञ्चनपूर्णपृथ्वीप्राप्तेरपि, परमः=उत्कृष्टः, लाभः। न हि प्रियतमदर्शनसुखात्=प्रियतमः यः जनः, तस्य दर्शनेन यत् सुखम्=आनन्दः तस्मात्, वित्तलाभसुखं=धनप्राप्तिजन्यसुखम्, अतिरिच्यते। न च भवतः=श्रीमतः, विभवे=वित्तेऽपि, अस्माकं, परस्वबुद्धिः=भेदभावः, भवद्विभवं स्वकीयमेव मन्यामहे इति भावः। नापि भवच्छरीरेऽपि=श्रीमद्देहेऽपि, अनात्मभावः=परत्वभावः, भवतः शरीरमपि स्वदेहमेव मन्यामहे इति भावः। किंचान्यत्—एवंविधसूक्तसूनृतामृतगर्भगीर्भिः=एवंविधसुभाषितसत्यसुखदमाधुर्योपेतवाणीभिः, अस्मन्मनः—अस्माकं मनः=चित्तम्, आनन्दयता=सानन्दं कुर्वता, महानुभावेन=भवता, किं न प्रणयोचितं=प्रेमयोग्यं; कृतं=विहितम्, अभिहितम्=उक्तं वा, सर्वमपि प्रणयोचितं कृत मभिहितं चेत्यर्थः। इति=एवं, ब्रुवाणः=वदन्, तं=भीमनृपं, बहु=समधिकं, मानयामास=सम्मानितं चकार ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार प्रेम को बढ़ाते, मधुरभाषिता को प्रकाशित करते; उदारता को उद्योतित करते (चमकाते), सम्मान को प्रदर्शित करते और सर्वत्व (तुम ही हमारे लिए सब कुछ हो) को प्रकट करते राजा भीम को देखकर राजा नल ने भी "सरल स्वभाव एवं निर्मल-सरस हृदय वाले ये महानुभाव हैं।" यह सोचते हुए "अपना सर्वस्व समर्पण मत करें, (क्योंकि) आपका दर्शन ही हमारे लिए यहाँ समुद्रसहित सुवर्ण से परिपूर्ण पृथ्वीलाभ से भी बढ़ कर है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतिशय प्रियजन के दर्शन-सुख की अपेक्षा धनप्राप्तिजनित सुख बड़ा नहीं होता। न तो आपकी सम्पत्ति में मेरी परधन-बुद्धि है और न ही आपके शरीर में मेरा अनात्म-भाव है अर्थात् आपके धन तथा शरीर को भी मैं अपना ही मानता हूँ। अधिक क्या कहूँ; इस प्रकार के सुभाषितों एवं सत्य-सुखद-माधुर्य से परिपूर्ण वाणी के द्वारा हमारे मन को आनन्दित करते हुए आपने प्रेम के योग्य क्या नहीं किया अथवा क्या नहीं कहा ?" इस प्रकार कहते हुए उन्हें अत्यधिक सम्मानित किया ॥

एवंविधे च व्यतिकरे वैतालिकः प्रस्तुतमपाठीत् ॥

कल्याणी—एवंविध इति। एवंविधे च व्यतिकरे=एवंघटिते सति, एतादृशे चावसर इत्यर्थः। वैतालिकः=चारणः, प्रस्तुतं=प्रासङ्गिकस्तुतिम्, अपाठीत्=अपठत् ॥

ज्योत्स्ना—और इसी अवसर पर वैतालिक ने भी प्रस्तुत श्लोक पढ़ा—

'आ-पूर्वापर-दक्षिणोत्तर-ककुप्पर्यन्त-बेलावना-
दाज्ञां मौलिषु मालिकामिव नृपाः कुर्वन्तु दीर्घायुषोः।
ब्रह्मस्तम्बविलम्बि-कीर्तिलतयोर्विस्तारिलक्ष्मीकयो-
रन्योन्यस्य दिनानि यान्तु युवयोः स्नेहेन सौख्येन च ॥४॥

अन्वयः—आपूर्वापरदक्षिणोत्तरककुप्पर्यन्तबेलावनात् नृपाः दीर्घायुषोः (युवयोः) आज्ञां मालिकामिव मौलिषु कुर्वन्तु। ब्रह्मस्तम्बविलम्बिकीर्तिलतयोः विस्तारिलक्ष्मीकयोः युवयोः अन्योन्यस्य दिनानि स्नेहेन सौख्येन च यान्तु ॥४॥

कल्याणी—आपूर्वेति। आपूर्वापरदक्षिणोत्तरककुप्पर्यन्तबेलावनात्=पूर्वः पश्चिमदक्षिणोत्तरदिशां समुद्रतटपर्यन्तां भूमिं यावदित्यर्थः। नृपाः=राजानः, दीर्घायुषोः=चिरजीविनोः, युवयोः=भवतोः, आज्ञाम्=अनुज्ञां, मालिकामिव=स्रगिव, मौलिषु=शिरस्सु, कुर्वन्तु = धारयन्तु, युवयोराज्ञां मालिकामिव शिरोधार्यां कुर्वन्त्विति भावः। ब्रह्मस्तम्बविलम्बिकीर्तिलतयोः—ब्रह्मस्तम्बे=ब्रह्माण्डे, विलम्बिनी=प्रसरन्ती; कीर्तिलता ययोस्तथाविधयोः, विस्तारिलक्ष्मीकयोः—विस्तारिणी=विस्तारयुक्ता; लक्ष्मीः ययोस्तयोः, युवयोः=नलभीमयोः, अन्योन्यस्य=परस्परस्य, दिनानि=दिवसाः, स्नेहेन=प्रेम्णा, सौख्येन च=आनन्देन च, यान्तु=व्यतिगच्छन्तु। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४॥

ज्योत्स्ना—पूर्व-पश्चिम-उत्तर और दक्षिण दिशाओं की समुद्रतटपर्यन्त भूमि के राजागण चिरजीवी आप दोनों की आज्ञा को माला की तरह मस्तक पर धारण करें। समस्त ब्रह्माण्ड में फैलती हुई कीर्तिलता और विस्तारयुक्त लक्ष्मी वाले आप दोनों के दिन आपस में प्रेम एवं सुख के साथ व्यतीत हों ॥४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवमुपक्रमाविरुद्धविद्वदालापलीलया परस्परमाश्यानतुहिनशिलाशकलाकारकर्पूरपारीपरिकरितताम्बूलार्पणप्रणयेन च परितुष्टपरिजनपरिहासगोष्ठ्या च किमप्यभिनवम्, किमपि पुरातनम्, किमप्युत्पाद्यम्, किमपि यथावस्थितं जल्पाकजनजल्पितं भावयन्तौ तस्थतुः स्थवीयसीं वेलाम् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, उपक्रमाविरुद्धविद्वदालापलीलया=प्रसङ्गानुकूलवैदग्ध्यपूर्णवाग्विनोदेन, परस्परम्=अन्योन्यम्, आश्यानतुहिनशिलाशकलाकारकर्पूरपारीपरिकरितताम्बूलार्पणप्रणयेन च—आश्यानम्=अविलीनं, यत् तुहिनं=हिमं, तस्य शिलाशकलं=शिलाखण्डं, तदाकारस्य कर्पूरस्य पारी=शकलं, तया परिकरितस्य=युक्तस्य, ताम्बूलस्य अर्पणप्रणयेन च=समर्पणप्रेम्णा च, परितुष्टपरिजनपरिहासगोष्ठ्या च--परितुष्टपरिजनानां=प्रसन्नपरिजनानां परिहासगोष्ठ्या च, किमपि=किञ्चिदपि, अभिनवं=नूतनं, किमपि=किञ्चिदपि, पुरातनं=प्राचीनम्, किमपि=किञ्चिदपि, उत्पाद्यं=कल्पितम्, किमपि=किञ्चिदपि, यथावस्थितं=वास्तविकं, जल्पाकजनजल्पितं—जल्पाकजनैः=प्रलापिजनैः, जल्पितं=प्रलपितं, भावयन्तौ=विचारयन्तौ, स्थवीयसीं=अतिशयेन स्थूलां, समधिकमित्यर्थः। वेलां=कालं, तस्थतुः=अतिष्ठताम् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार प्रसङ्गानुकूल वैदुष्यपूर्ण वाग्विनोद के द्वारा, एक-दूसरे को अविगलित (न गले हुए) हिम-शिलाखण्डसदृश कर्पूरखण्डमिश्रित ताम्बूल-समर्पण के प्रणय द्वारा और प्रसन्न परिजनों की परिहास-गोष्ठी द्वारा की जा रही कुछ नूतन, कुछ पुरातन, कुछ कल्पित एवं कुछ वास्तविक जल्पाकजनों (प्रलाप करने वाले लोगों) की बातचीत पर विचार करते हुए दोनों बहुत देर तक बैठे रहे ॥

अनन्तरमनुसरति मध्यभागमम्बरस्यांशुमालिनि नलः 'स्वगृहानलंकुर्वन्तु भवन्तः' इति प्रश्रयेण विदर्भेश्वरं विससर्ज ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति। अनन्तरं=तत्पश्चात्, अंशुमालिनि=सूर्ये, अम्बरस्य=आकाशस्य, मध्यभागमनुसरति=मध्यभागमभिगच्छति सति, नलः=निषधाधिपः, 'स्वगृहान्=निजावासस्थानानि, अलंकुर्वन्तु=विभूषयन्तु, भवन्तः=श्रीमन्तः' इति=एवं, प्रश्रयेण=विनयेन, विदर्भेश्वरं=विदर्भाधिपतिं भीमं, विससर्ज=विसर्जयामास ॥

ज्योत्स्ना--तत्पश्चात् भगवान् अंशुमाली (सूर्य) के द्वारा आकाश के मध्यभाग का अनुसरण करने पर निषधनरेश नल ने "आप लोग अपने-अपने आवास-स्थानों को अलंकृत करें।" इस तरह कहते हुए अतिशय विनम्रता के साथ विदर्भ-राज को विदा किया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गते च तस्मिन् 'अहो वात्सल्यम्, अहो परमौदार्यम्, अहो लोकवृत्त-कौशलम्, अहो वाग्विभववैदग्ध्यम्, अहो प्रश्रयोऽस्य विदर्भराजस्य' इति तद्गुणप्रवणाः कथाः कुर्वन्नाप्तजनपरिजनेन सह मुहूर्तमिवासाञ्चक्रे ॥

कल्याणी – गते चेति । गते च=प्रस्थिते च, तस्मिन्=भीमनृपे, अहो इति सर्वत्र रोचकाश्चर्ये । अस्य=एतस्य, विदर्भराजस्य=विदर्भाधिपस्य, वात्सल्यं=वत्सलता, अहो परमौदार्यं=परमम्=अत्यन्तम्, औदार्यम्=उदारता, अहो लोकवृत्तकौशलं=लोकव्यवहारनैपुण्यम्, अहो वाग्विभववैदग्ध्यं=वाक्छक्तिप्राचीण्यम्, अहो प्रश्रयः=विनम्रभावः, इति=एवं तद्गुणप्रवणाः=तद्गुणसम्बद्धाः, कथाः=वार्ताः, आप्तजन-परिजनेन=प्रामाणिकपरिजनेन, सह=साकं, कुर्वन्=विदधन्, मुहूर्तमिव=कञ्चित्का-लमिव, आसाञ्चक्रे=तस्थौ ॥

ज्योत्स्ना— और उन राजा भीम के चले जाने पर "अहो ! इन विदर्भराज की कैसी वत्सलता है, कैसी उत्कृष्ट उदारता है, किस प्रकार की लोकव्यवहार में निपुणता है, वाक्शक्ति की कैसी प्रगाढ़ता है, कैसी विनम्रता है (अर्थात् सब कुछ आश्चर्यजनक है ।)" इस प्रकार उनके गुणों से सम्बद्ध वार्तालाप को विश्वस्त परिजनों के साथ करते हुए कुछ समय तक (वहीं) बैठा रहा ॥

चिन्तितवांश्च—

'अनुगुणघटनेन यद्यपीयं भवति हि हस्तगतेव कार्यसिद्धिः ।
भयतरलभुजङ्गवक्रवृत्तेस्तदपि न विश्वसिमो वयं विधातुः ॥५॥

अन्वयः—अनुगुणघटनेन यद्यपि इयं कार्यसिद्धिः हि हस्तगता इव भवति, तदपि भयतरलभुजङ्गवक्रवृत्तेः विधातुः वयं न विश्वसिमः (इति चिन्तितवान्) ॥५॥

कल्याणी – अनुगुणेति । अनुगुणघटनेन—अनुगुणानाम्=अनुकूलानां; घटनेन=संयोजनेन, यद्यपि इयम्=एषा, कार्यसिद्धिः=दमयन्तीलाभलक्षणं कृत्यसा-फल्यं, हि=स्फुटं, हस्तगतेव=सरलतयोपलब्धेव, भवति=प्रतीयते, तदपि=तथापि, भयतरलभुजङ्गवक्रवृत्तेः – भयेन=भीत्या, तरलः=लोलः, यः भुजङ्गः=सर्पः, तस्य वक्रवृत्तिरिव वक्रवृत्तिः=कुटिलव्यापारः यस्य तथाविधस्य, विधातुः=दैवस्य, वयं न विश्वसिमः=विश्वासं न कुर्मः, इति चिन्ततवानिति पूर्वोक्तेन सम्बन्धः । पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥ ५॥

ज्योत्स्ना—और विचार करने लगा—अनुकूल घटनाओं के कारण दमयन्ती-प्राप्तिरूप यह कार्यसिद्धि यद्यपि तत्काल हस्तगत (हाथ में आई हुई) के समान प्रतीत हो रही है, तथापि भय के कारण चञ्चल सर्प की भाँति वक्रवृत्ति अर्थात् कुटिल व्यापार वाले दैव पर हमें विश्वास नहीं होता ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय यह है कि कुण्डिनपुर में आगमन के पश्चात् विदर्भनरेश भीम द्वारा जिस प्रकार नल के साथ अपनत्व का प्रदर्शन एवं उसका आतिथ्य सत्कार किया गया, उससे दमयन्ती की प्राप्ति होने में उसे कोई सन्देह न रहा, फिर भी विधाता का व्यापार बराबर ही अतिशय कुटिलतापूर्ण होता है—इसको ध्यान में रखते हुए राजा नल अपनी अभीष्ट-सिद्धि के प्रति आश्वस्त नहीं हो पा रहा था ॥५॥

तथाहि—

अङ्गाः कङ्गकलिङ्गवङ्गमगधाः सर्वेऽप्यमी पार्थिवा
दिक्पालाश्च मरुत्पतिप्रभृतयः कन्यार्थिनः सङ्गता ।
नो विद्मः कथमेष्यतीह घटनां कार्यं यतस्तत्क्षणा-
न्नानाभङ्गिभिरिन्द्रजालसदृशं दैवं हि चित्रीयते ॥६॥

अन्वयः—अङ्गाः कङ्गकलिङ्गवङ्गमगधाः सर्वेऽपि अमी पार्थिवाः मरुत्पतिप्रभृतयः दिक्पालाश्च कन्यार्थिनः सङ्गताः । इह नो विद्मः कार्यं कथं घटनाम् एष्यति; यतः तत्क्षणात् दैवं हि नानाभङ्गिभिः इन्द्रजालसदृशं चित्रीयते ॥६॥

कल्याणी—अङ्गा इति । अङ्गाः=अङ्गदेशीयाः, कङ्ग-कलिङ्ग-वङ्ग-मगधाः=तत्तद्देशीयाः, सर्वेऽपि=निखिला अपि, अमी=एते, पार्थिवाः=राजानः, मरुत्पतिप्रभृतयः—मरुतां=देवानां, पतिः=स्वामी, इन्द्र इत्यर्थः । तत्प्रभृतयः=इन्द्रप्रमुखाः, दिक्पालाश्च=दिगीशाश्च, कन्यार्थिनः—कन्या=भीमपुत्री दमयन्ती, तदर्थिनः=अभिलाषिणः, दमयन्तीं लब्धुकामाः इत्यर्थः । सङ्गताः=समवेताः । इह=एतादृश्यामवस्थितौ, नो विद्मः=न जानीमहे, कार्यं=दमयन्तीलाभलक्षणं कार्यं, कथं=केन प्रकारेण, घटनां=निष्पन्नताम्, एष्यति=यास्यति, यतः=यस्मात्, तत्क्षणात्=तत्कालमेव, दैवं=विधिः, हि=निश्चयेन, नानाभङ्गिभिः=अनेकवक्रताभिः, इन्द्रजालसदृशं, चित्रीयते=विस्मापयते, विस्मयमुत्पादयतीति यावत् । चित्रीयते विस्मयत इति केचित् । चित्रं [विस्मयं विस्मापनं वा] करोतीति चित्रीयते । चित्रङः 'नमो वरिवश्चित्रङः क्यच्' इति क्यच् । चित्रङो ङित्त्वादात्मनेपदम् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥६॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि (यहाँ) अंग, कंग, कलिंग, वंग तथा मगध देश के ये समस्त राजागण और देवराज इन्द्र आदि समस्त दिक्पाल उस कन्या (दमयन्ती) को प्राप्त करने की इच्छा से एकत्रित हुए हैं । इस अवस्था में (मैं) नहीं जानता कि (मेरा दमयन्ती-प्राप्तिरूप) कार्य किस प्रकार निष्पन्न हो पायेगा; क्योंकि दैव भी विभिन्न प्रकार की भङ्गिमाओं (टेढ़े-मेढ़े व्यापार) के द्वारा निश्चित रूप से ऐन मौके पर ही इन्द्रजाल (जादू) के समान विस्मय उत्पन्न कर देता है ॥६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथवा—

का नाम तत्र चिन्ता प्रभवति पुरुषस्य पौरुषं यत्र।
वाङ्मनसयोरविषये विधौ च चिन्तान्तरं किमिह' ॥७॥

अन्वयः—यत्र पुरुषस्य पौरुषं प्रभवति तत्र का नाम चिन्ता ? वाङ्मनसयोः अविषये इह विधौ च किं चिन्तान्तरम् ॥७॥

कल्याणी—का नामेति। यत्र=यस्मिन् कार्ये, पुरुषस्य=मानवस्य, पौरुषम्=उद्योगः, प्रभवति=सिद्धिमाप्तुं क्षमते, तत्र=तस्मिन् कार्ये, का नाम चिन्ता=नैवेत्यर्थः। वाङ्मनसयोः—वाक् च मनश्चेति वाङ्मनसे ['अचतुरविचतुरेत्यादिनाऽजन्तो निपात्यते], तयोर्वाङ्मनसयोः, अविषये=अगोचरे, इह=अस्मिन्, विधौ=दैवे च, किं चिन्तान्तरं=का नामापरा चिन्ता, तदेव प्रमाणमित्यर्थः। उभयथापि न चिन्ता कार्येति भावः। आर्या जातिः ॥७॥

ज्योत्स्ना—अथवा – जिस कार्य में पुरुष का पौरुष सिद्धि-प्राप्ति में समर्थ होता है, उसमें चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है ? साथ ही वाणी और मन से अगोचर इस दैव के बारे में भी क्या चिन्ता करना ? अर्थात् दोनों ही स्थितियों में चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

विमर्श—विभिन्न प्रकार के तर्क-वितर्कों में निमग्न राजा नल स्वयं को आश्वस्त करते हुए अपने मन को समझा रहा है कि किसी कार्य में अपने पौरुष द्वारा कार्य-सिद्धि प्राप्त करने में यदि व्यक्ति समर्थ हो तो उसे चिन्ताओं का परित्याग कर देना चाहिए। साथ ही भाग्य के विषय में भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए; क्योंकि भाग्यवशात् प्राप्त होने वाली कार्यसिद्धि में पुरुष के पुरुषार्थ का कोई प्रयोजन ही नहीं होता। इसलिए किसी भी परिस्थिति में किसी भी सफलता या असफलता के प्रति व्यक्ति को चिन्तित नहीं होना चाहिए ॥७॥

एवमनेकवितर्कभङ्गभाजि भूभुजि; भुजबलशालिषु विसर्जितेषु सेवकसामन्तेषु, विरलीकृते परितः परिजने, परिहासपेशलालापाप्तजनगोष्ठीप्रक्रमेणातिक्रान्ते स्तोकसमये, भूरिभव्याभरणावरणरमणीयरूपाः, काश्चिदार्द्रक्रमुकफलहस्ताः; काश्चित्कक्षावलम्बिततम्बूलीपत्त्रपिण्डकरण्डकाः, काश्चित्पिहितपट्टांशुकपटलिकापाणयः, काश्चित्काश्मीरकरम्बितकस्तूरिकामोदामन्दचन्दनभाञ्जि भाजनानि भजमानाः, काश्चिदवाननालिकेरजम्बीरबीजपूरकपूरितपात्रीपाणयः काश्चिदसंख्यखण्डखाद्यविशेषानमूल्यमाङ्गल्यमाल्याभरणानि च सकौतुकमादाय दमयन्त्या प्रहिताः प्रथमप्रबोधितप्रतीहारसूचिताः प्रविविशुरन्युब्जाः कुब्जिका वामनिकाश्च ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—एवमिति। एवम्=अनेन प्रकारेण, अनेकवितर्कभङ्गभाजि=विविधतर्क-वितर्क-तरङ्गमग्ने, भूभुजि=नृपे नले सति, भुजबलशालिषु=पराक्रमशीलेषु, सेवकसामन्तेषु=सेवकनृपेषु, विसर्जितेषु=परित्यक्तेषु सत्सु, परितः=समन्तात्, परिजने=अनुचरवर्गे, विरलीकृते=स्वल्पीकृते सति, परिहासपेशलालापाप्तजनगोष्ठी-प्रक्रमेण—परिहासेन=हासविलासेन, पेशलः=मनोहरः, आलापः=वाग्विनोदः, येषां तथाविधानाम् आप्तजनानां=वरिष्ठजनानां, गोष्ठीप्रक्रमेण=गोष्ठीप्रसङ्गेन, स्तोकसमये=ईषत्काले, अतिक्रान्ते=व्यतीते सति, भूरिभव्याभरणावरणरमणीयरूपाः—भूरिभिः=प्रचुरैः, भव्यैः=सुन्दरैः, आभरणैः=भूषणैः, आवरणैश्च=परिधानैश्च, रमणीयं=मनोज्ञं, रूपं=सौन्दर्यं यासां तास्तथोक्ताः, काश्चित्=कतिपयाः, आर्द्राणि=सरसानि, प्रत्यग्राणीति यावत्। क्रमुकफलानि=पूगीफलानि, हस्तेषु=करेषु यासां तास्तथाविधाः, काश्चित् कक्षावलम्बितताम्बूलीपत्रपिण्डकरण्डकाः—कक्षे=पार्श्व-भागे, अवलम्बितः=आधृतः, ताम्बूलीपत्रपिण्डस्य=ताम्बूलपत्रपुञ्जस्य, करण्डकः=वंशनिर्मितपेटिका यासां तास्तथाविधाः, काश्चित् पिहितपट्टांशुकपटलिकापाणयः—पिहिता=आच्छन्नमुखा, पट्टांशुकानां=क्षौमदुकूलानां, पटलिका=पेटिका, पाणौ=हस्ते यासां तास्तथाविधाः, काश्चित् काश्मीरकरम्बितकस्तूरिकामोदामन्दचन्दन-भाञ्जि—कश्मीरे भवं काश्मीरं=केसरं, तेन करम्बिता=मिश्रिता, कस्तूरिका=मृगमदः, तस्या आमोदेन=व्यापकसुगन्धेन, अमन्दम्=उत्कृष्टं, यच्चन्दनं तद् भजन्तीति तथोक्तानि, केसरकस्तूरिकाचन्दनपूर्णानीत्यर्थः। भाजनानि=पात्राणि, भजमानाः=उद्वहन्त्यः, काश्चित् अवाननालिकेरजम्बीरबीजपूरकपूरितपात्रीपाणयः—वानं=शुष्कं फलम्, न वानमवानम्=आर्द्रमित्यर्थः, नालिकेरं=नारिकेलम्, जम्बीरं—जम्बीरो दन्तशठो नाम वृक्षः, तत्फलम्, 'जम्बीरे दन्तशठजम्भजम्भीरजम्भलाः' इत्यमरः। लोके तु 'चकोतरा नींबू' इत्यभिधीयते। बीजपूरकं—बीजपूरकः रुचको नाम वृक्षः तत्फलम्, 'फलपूरो बीजपूरो रुचको मातुलुङ्गके' इत्यमरः। लोके 'बिजौरा नीबू' इत्यभिधीयते। तैर्नालिकेरादिभिः फलैः पूरिता=भरिता, पात्री=लघुपात्रं, पाणौ=करे यासां तास्तथाविधाः; काश्चित् असंख्यखण्डखाद्यविशेषान्=विविधखण्डनिर्मितभोज्यपदार्थविशेषान्, अमूल्यमाङ्गल्यमाल्याभरणानि च=बहुमूल्यमाङ्गलिकमालाभूषणानि च, सकौतुकं=सकुतूहलम्, आदाय=गृहीत्वा, दमयन्त्या=भीमपुत्र्या, प्रहिताः=प्रेषिताः, प्रथमप्रबोधितप्रतीहारसूचिताः—प्रथमं=पूर्वं, प्रबोधितः=ताभिः स्वागमनं विज्ञापितः, यः प्रतीहारः=द्वारपालः, तेन सूचिताः=राज्ञे नलाय निवेदिताः, अन्युब्जाः—न्युब्जाः=अधोमुख्यः, न न्युब्जा इत्य-न्युब्जाः, ऊर्ध्ववदना इत्यर्थः। दिदृक्षारसेनेति भावः। कुब्जिकाः=कुब्जशरीराः, वामनिकाश्च=लघुवदनाश्च, चेटयः=दास्यः, प्रविविशुः=अप्रविशन्, नृपं द्रष्टुं प्रवेशं चक्रुरित्यर्थः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार नानाविध तर्क-वितर्करूपी तरंगों में राजा नल के मग्न हो जाने पर; बाहुबलशाली सामन्त-सेवकों के चले जाने पर, चारो ओर अत्यन्त थोड़े परिजनों के शेष रह जाने पर, परिहासपूर्ण मनोहर वाग्विनोद करने वाले विश्वस्त वरिष्ठ लोगों के साथ गोष्ठी करते हुए कुछ समय व्यतीत हो जाने पर अत्यन्त सुन्दर आभूषणों एवं वस्त्रों के कारण रमणीय सौन्दर्य वाली, कोई सरस पूगीफलों को हाथों में ली हुई, कोई पार्श्वभाग में ताम्बूलपत्रों की पोटली को लटकाई हुई, कोई पट्टांशुकों अर्थात् शिल्कवस्त्रों की बन्द पेटिका को हाथों में ली हुई, कोई कश्मीर में होने वाले केसर से मिश्रित कस्तूरी के व्यापक सुगन्ध के कारण उत्कृष्ट चन्दन से पूर्ण पात्रों को ली हुई, कोई ताजे नारियल, एवं नारंगी (चकोतरा नीबू) और बीजपूरक (बिजोरा नींबू) के फलों से भरे हुए छोटे पात्रों को हाथों में ली हुई, कोई नाना प्रकार के खण्ड (खांड़) से बनाये गये (मधुर) भोज्य पदार्थों तथा बहुमूल्य मांगलिक मालाओं एवं आभूषणों को उत्सुकता के साथ लेकर दमयन्ती द्वारा प्रेषित की गई, पहले ही उनके आगमन की सूचना देने वाले द्वारपाल के द्वारा (राजा नल को) सूचित की गई ऊर्ध्ववदना (ऊपर की ओर मुंख उठाई हुई) कुब्जा (कुबड़ी) तथा वामनिका (बौनी) दूतियाँ (वहाँ) प्रविष्ट हुईं।

प्रविश्य च सविस्मयाः स्मररूपातिशायिनं नरपतिमवलोक्य 'साधु भोः स्वामिनि ! साधु। स्थानेऽभिनिविष्टासि, योग्ये जाताग्रहासि, पात्रे जातस्पृहासि, लप्स्यसे जन्मफलम्, अवाप्स्यसि स्त्रीस्वभावसौभाग्यम्, अनुभविष्यसि यौवनसुखानि, मानयिष्यसि संसारफलमहोत्सवम्। अहो, वन्दनीया सा कापि पुरुषरत्नाकरकुक्षिर्जननी, यस्यां सकलसंसारनरहारावलीमध्यमहानायकोऽयमुत्पन्नः' इत्यवधारयन्त्यो मनाङ्नामितमौलिदोलितसीमन्तमुक्ताफलाः 'स्वामिन्नयमस्मदीयः प्रणामः, अन्यापि क्वापि काचित्प्रणमति' इत्यभिधाय स्मयमानवदनकमलाः सलीलमवनिपालं प्रणेमुः॥

कल्याणी—प्रविश्य चेति। प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा च, सविस्मयाः—विस्मयेन=आश्चर्येण सहेति सविस्मयास्ताः दमयन्तीप्रहिताः दूतिकाः, स्मररूपातिशायिनं—स्मरस्य=कामदेवस्य, रूपं=सौन्दर्यम्, अतिशेतेऽवश्यमिति तथोक्तं, कामदेवादप्युत्कृष्टतररूपमित्यर्थः। नरपतिं=राजानम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, 'साधु=सुष्ठु, स्वामिनि=दमयन्ति !, साधु=सुष्ठु। स्थाने=उचितस्थाने नललक्षणे, अभिनिविष्टाऽसि=प्रवृत्ताऽसि, योग्ये=योग्यवस्तुनि नललक्षणे, जाताग्रहासि—जातः आग्रहो यस्यास्तथोक्ताऽसि, पात्रे=स्नेहयोग्ये नललक्षणे, जातस्पृहाऽसि—जाता=उत्पन्ना, स्पृहा=कामना यस्यास्तथोक्ताऽसि, जन्मफलं—जन्मनः फलं, लप्स्यसे=प्राप्स्यसि;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्रीस्वभावसौभाग्यं—स्त्रियाः यः स्वभावः=प्राकृतिकसंविधानं, स्त्रीत्वमिति यावत्। तस्य सौभाग्यम्=अलौकिकं सुखम्, अवाप्स्यसि=लप्स्यसे, यौवनसुखानि—यौवनस्य=तारुण्यस्य, सुखानि=आनन्दानि, अनुभविष्यसि=भोक्ष्यसे, संसारफलमहोत्सवं—संसारस्य=संसारे जन्मग्रहणस्य, यत् फलं=परिणामः, तस्य महोत्सवं; मानयिष्यसि=करिष्यसि। अहो सा कापि=काचिदपि लोकोत्तरा, पुरुषरत्नाकरकुक्षिः—पुरुषरत्नस्य आकर इव कुक्षिः=गर्भाशयः यस्याः सा, जननी=माता, वन्दनीया=पूजनीया, सा जननी लोकोत्तरा वन्दनीयेति भावः। यस्यां=यस्यां जनन्यां, सकलसंसारनरहारावलीमध्यमहानायकः—सकलसंसारे=समस्तजगति, ये नराः=जनाः, तेषामवल्येव हारावली, तन्मध्ये महानायकः=मध्यमणितुल्यः, अयम्=एषः, महानायकः=महापुरुषः, उत्पन्नः=जन्म लब्धवान्, इति=एवम्, अवधारयन्त्यः=विचारयन्त्यः, मनाङ्नामितमौलिदोलितसीमन्तमुक्ताफलाः—मनाक=ईषत्, नामितः=नतीकृतः, मौलि=शिरः, तेन दोलितानि=कम्पितानि, सीमन्तः=शिरोरेखा, यामुभयतः केशा विभक्ता वर्तन्ते, तन्मुक्ताफलानि=मौक्तिकानि, यासां तास्तथाविधाः, स्वामिन्=देव !, अयम्=एषः, अस्मदीयः=अस्माकं, प्रणामः=नमस्कारः, अन्यापि=अपरापि, काचित्=कापि, दमयन्तीति भावः। क्वापि=कुत्रचित्, कुण्डिननगर इति भावः। देवं प्रणमति=नमस्करोति' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, स्मयमानवदनकमलाः—स्मयमानं=मन्दं हसद्विकसच्च, वदनकमलं=मुखपद्मं यासां ताः, सलीलं=सविलासम्, अवनिपालं=राजानं नलं, प्रणेमुः=नमश्चक्रुः ॥

ज्योत्स्ना—और प्रवेश कर (उन दमयन्तीप्रेषित दूतियों ने) विस्मय के साथ कामदेव के सौन्दर्य को भी तिरस्कृत करने वाले राजा नल को देखकर "धन्य हो स्वामिनि ! धन्य हो। (तुम) उचित स्थान में ही प्रवृत्त हुई हो, योग्य वस्तु में ही आग्रह की हो, स्नेहयोग्य पात्र के प्रति ही कामना उत्पन्न की हो, (अतः तुम) जन्म के फल को प्राप्त करोगी, स्त्रीस्वभाव के सौभाग्य अर्थात् अलौकिक सुख को प्राप्त करोगी, यौवनसुख का भोग करोगी, संसार (में जन्म लेने के) फल (परिणाम) का महान् उत्सव मनाओगी। अहो ! पुरुषरूपी रत्न के खनिरूप कुक्षि (गर्भाशय) वाली वन्दनीया वह कोई अलौकिक ही माता है, जिसमें समस्त संसार के पुरुषों की मालारूप हारावली के मध्य मणितुल्य यह महानायक उत्पन्न हुआ है।" इस प्रकार विचार करती हुई थोड़े झुकाये हुए शिर के कारण कम्पायमान सीमन्तमणियों वाली (दूतियों ने) "देव ! यह हमारा प्रणाम है और दूसरी भी कोई कहीं प्रणाम कर रही है।" इस प्रकार कहकर मन्द हास करती हुई विकसित कमलसदृश मुख वाली सुन्दरियों ने विलासपूर्वक उन राजा नल को प्रणाम किया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्योन्यकृतसंबोधनाश्च सहर्षमिदमवोचन् ॥

कल्याणी—अन्योन्येति । अन्योन्यकृतसम्बोधनाश्च—अन्योन्यं=परस्परं, कृतं=विहितं, सम्बोधनम्=आमन्त्रणं याभिस्ताश्च, सहर्षं=आनन्दपूर्वकम्, इदम्=एतत्, अवोचन्=अब्रुवन् ॥

ज्योत्स्ना—और आपस में एक-दूसरे को सम्बोधित करती हुई खुशी के साथ इस प्रकार बोलीं—

हंहो हंसि चकोरि चन्द्रवदने चन्द्रप्रभे चन्दने
चम्पे चङ्गि लवङ्गि गौरि कलिके कक्कोलिके मालति ।
एत प्राप्नुत जन्मजीवितफलं लावण्यलक्ष्मीनिधौ
सौभाग्यामृतनिर्जरे नरपतौ निर्वान्तु नेत्राणि वः ॥७॥

अन्वयः—हंहो हंसि, चकोरि, चन्द्रवदने, चन्दने, चम्पे, चङ्गि, लवङ्गि, गौरि, कलिके, कक्कोलिके, मालति ! एत, जन्मजीवितफलं प्राप्नुत । लावण्यलक्ष्मीनिधौ सौभाग्यामृतनिर्जरे नरपतौ वः नेत्राणि निर्वान्तु ॥७॥

कल्याणी—हंहो इति । हंहो इति सम्बोधने । हंसि ! चकोरि ! चन्द्रवदने ! चन्द्रप्रभे ! चन्दने ! चम्पे ! चङ्गि ! लवङ्गि ! गौरि ! कलिके ! कक्कोलिके ! मालति ! एत=आगच्छत, [यूयम्] जन्मजीवितफलं—जन्मनः=उत्पत्तेः, जीवितस्य च=जीवनस्य च फलं=परिणामं, प्राप्नुत=लभध्वम्, लावण्यलक्ष्मीनिधौ—लावण्यलक्ष्मीः=सौन्दर्यश्रीः, तस्या निधिः=सागरः तस्मिन्, सौभाग्यामृतनिर्जरे—सौभाग्यमेवामृतं, तस्य निर्जरः=देवः तस्मिन्, सौभाग्येनायं नृपयुवाऽमृतपानेन शाश्वतयुवा देव इव प्रतीयत इति भावः [वस्तुतस्त्वत्र 'लावण्यलक्ष्मीनिधौ' इति 'निर्वान्तु नेत्राणि वः' इति च श्लोकांशानुरोधात् 'सौभाग्यामृतनिर्झरे' इति पाठोऽधिकसमचीनः प्रतीयते] । नरपतौ=राजनि नले, वः=युष्माकं, नेत्राणि=नयनानि, निर्वान्तु=शैत्यमनुभवन्तु । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥८॥

ज्योत्स्ना—ओ हंसि, चकोरि, चन्द्रवदने, चन्द्रप्रभे, चम्पे, चङ्गि, लवङ्गि, गौरि, कलिके, कक्कोलिके, मालति ! आओ, (अपने) जन्म और जीवन का फल प्राप्त करो । सौन्दर्यरूपी सम्पदा के सागरस्वरूप तथा सौभाग्यरूपी अमृत के देवतास्वरूप इन राजा नल में तुम सब की आँखें शान्त हों अर्थात् इन राजा नल को देखकर तुम सब अपनी आँखों को तृप्त करो ॥८॥

अपि च—

कुन्दे सुन्दरि चन्द्रि नन्दनि हले दिष्ट्याद्य वर्धामहे
देव्याः सोऽयमनङ्गसुन्दरवपुः प्राणेश्वरः प्राप्तवान् ।
तस्याः संप्रति यत्कृते कृशतनोः क्रीडावने शाखिनां
दीर्घश्वासमरुद्भिरग्निपरुषैर्म्लायन्ति ते पल्लवाः ॥९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—हले कुन्दे सुन्दरि चन्द्रि नन्दनि ! दिष्टया अद्य वर्धामहे । अयं सः अनङ्गसुन्दरवपुः देव्याः प्राणेश्वरः प्राप्तवान् । यत्कृते सम्प्रति तस्याः कृशतनोः अग्निपरुषैः दीर्घश्वासमरुद्भिः क्रीडावने शाखिनां ते पल्लवाः म्लायन्ति । ९॥

कल्याणी—कुन्द इति । हले=सखि !, कुन्दे ! सुन्दरि ! चन्द्रि ! नन्दनि ! दिष्टया=भाग्येन, अद्य=अस्मिन् दिने, वर्धामहे=वयं वृद्धिं गच्छामः, हर्षातिशयोक्तिरियम् । यतः अयम्=एषः, सः अनङ्गसुन्दरवपुः=कामदेव इव सुन्दरदेहः, देव्याः=दमयन्त्याः, प्राणेश्वरः=प्राणपतिः, प्राप्तवान्=समागतः । यत्कृते=यदर्थं, संप्रति=इदानीं, तस्याः कृशतनोः=कृशाङ्ग्याः, अग्निपरुषैः=अनलादप्युष्णैः, दीर्घश्वासमरुद्भिः—दीर्घश्वासानां मरुद्भिः=पवनैः, क्रीडावने=क्रीडोद्याने, शाखिनां=वृक्षाणां, ते=समधिकस्निग्धाः, पल्लवाः=किसलयाः, म्लायन्ति=म्लाना भवन्ति । दीर्घश्वासमरुतां पल्लवम्लानत्वेऽसम्बन्धेऽपि सम्बन्धाभिनादसम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्तिः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥९॥

ज्योत्स्ना—और भी – ओ सखि कुन्दे, सुन्दरि, चन्द्रि, नन्दनि ! भाग्य के कारण ही आज हम सब बढ़ रही हैं; क्योंकि कामदेव के समान सुन्दर शरीर वाले देवी दमयन्ती के ये प्राणेश्वर (हमें) प्राप्त हो गये हैं; जिनके लिए कृश अंगों वाली उस दमयन्ती के अग्नि से भी उष्ण एवं दीर्घ श्वासों की हवाओं से क्रीडावनस्थित वृक्षों के अतिशय कोमल पल्लव (पत्ते) भी इस समय मलिन हो रहे हैं ॥९॥

अपि च—

यं श्रुत्वैव मनोभवालसदृशा देव्या धृतोन्मादया
नीयन्ते गृहदीर्घिकातटतरुच्छायाश्रये वासराः ।
प्राप्तः शोणसरोजपत्रनयनो निःशेषसीमन्तिनी-
भ्राम्यन्नेत्रपतत्रिविश्रमतरुः सोऽयं नलो नैषधः' ॥१०॥

अन्वयः—यं श्रुत्वा एव मनोभवात् अलसदृशा धृतोन्मादया देव्या गृहदीर्घिकातटतरुच्छायाश्रये वासराः नीयन्ते । सः अयं शोणसरोजपत्रनयनः निःशेषसीमन्तिनीभ्राम्यन्नेत्रपतत्रिविश्रमतरुः नैषधः नलः प्राप्तः ॥१०॥

कल्याणी—यं श्रुत्वैवेति । यं श्रुत्वैव=यस्य श्रवणमात्रेणैव, न तु दर्शनेनेति भावः । मनोभवात्=कामात्, अलसदृशा—अलसे='कथं साक्षान्मनोभुवं कान्तं वीक्षे' इति चिन्ताकुलतया रात्रौ निद्राऽभावादालस्ययुक्ते श्लान्ते च, दृशौ=नेत्रे यस्याः तथाभूतया, एतेन पूर्वरागविप्रलम्भस्य चिन्तादशा द्योतिता । धृतोन्मादया—धृतः=स्थापितः, उन्मादः=अस्थानहासरुदितगीतप्रलपनादिलक्षणश्चित्तव्यामोहः यया तथाभूतया, एतेनोन्माददशा सूचिता । देव्या=दमयन्त्या, गृहदीर्घिकातटतरुच्छायाश्रये—गृहदीर्घिकाया=गृहवाप्याः; तटे=तीरे, ये तरवः=वृक्षाः, तेषां छायाश्रये=अधस्तले,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वासराः=दिवसाः, नीयन्ते=व्यतियाप्यन्ते, सोऽयं=असावेषः, शोणसरोजपत्रनयनः=रक्तः-कमलदलनेत्रः, निःशेषसीमन्तिनीभ्राम्यन्नेत्रपतत्रिविश्रमतरुः—निःशेषसीमन्तिनीनां=समस्तसुन्दरीणां, भ्राम्यन्ति=भ्रमणं कुर्वन्ति, नेत्राण्येव=नयनान्येव, पतत्रिणः=विहङ्गाः, तेषां विश्रमतरुः=विश्रामवृक्षः, नैषधः नलः=निषधेश्वरः नलः, प्राप्तः=समागतः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१०॥

ज्योत्स्ना—और भी—जिन्हें मात्र सुन करके ही (न कि देखकर) काम के कारण आलस्ययुक्त नेत्रों वाली और उन्माद-दशा को प्राप्त होने वाली देवी दमयन्ती के द्वारा (अपने) घर की बावली के तटवर्ती वृक्षों की छाया का आश्रयण कर दिन व्यतीत किये जा रहे हैं, वे ही ये रक्तकमलदलसदृश नेत्रों वाले (और) समस्त सुन्दरियों के घूमते हुए नेत्ररूपी पक्षियों के लिए विश्रामवृक्षस्वरूप निषधाधिपति नल आये हैं ॥११॥

एवमन्योन्यमभिधाय समीपमुपसृतास्ताः क्षितिपतिस्त्वनुरागतरङ्गतरत्तारकेण सादरं दूरोत्क्षिप्तपक्ष्मणा चक्षुषा सन्तोषपुञ्जमञ्जूषिका इव, आनन्दकन्दलीरिव, अमृतपङ्कपुत्रिका इव, मधुमासविकसितसहकारमञ्जरीरिव, दमयन्तीप्रेषिताः सस्पृहमवलोकयन् 'इत एत कुशलं तत्रभवतीनाम्, उपविशत, गृह्णीत ताम्बूलम्, आवेदयत भवत्स्वामिनीसन्देशम्,' इति ससंभ्रमं संभाषयामास ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, अन्योन्यं=परस्परम्, अभिधाय=उक्त्वा, समीपं=नृपसकाशम्, उपसृताः=उपगताः, ताः=पूर्वोक्ताः, दमयन्तीप्रेषिताः=दमयन्त्या प्रहिताः दूतिकाः, क्षितिपतिः=नरनाथः नलस्तु, अनुरागतरङ्गतरत्तारकेण—अनुरागस्य=प्रेम्णः, तरङ्गेषु=ऊर्म्मिषु, तरन्ती=प्लवमाना, तारका=कनीनिका यस्य तेन, तथा दूरोत्क्षिप्तपक्ष्मणा—दूरम्=अत्यन्तम्, उत्क्षिप्तम्=उत्थापितं, पक्ष्म=नेत्ररोमराजिः यस्य तेन, चक्षुषा=नेत्रेण, सन्तोषपुञ्जमञ्जूषिका इव=सन्तोषराशिपेटिका इव, आनन्दकन्दलीरिव=आनन्दाङ्कुरानिव, अमृतपङ्कपुत्रिका इव=अमृतपङ्करचितपुत्तलिका इव, मधुमासविकसितसहकारमञ्जरीरिव—मधुमासेन=वसन्तेन, विकसिताः=विकचिताः, सहकारमञ्जरीरिव=आम्रमञ्जरीरिव; सस्पृहं=सोत्कण्ठम्, अवलोकयन्=पश्यन्, इत=अत्र, एत=आगच्छत, तत्रभवतीनां=श्रीमतीनां, कुशलं=क्षेमम् [अस्तु]; उपविशत=आध्वम्, ताम्बूलं गृह्णीत=आदत्त, भवत्स्वामिनीसन्देशं—भवत्स्वामिनी=दमयन्ती, तस्याः सन्देशं=समाचारम्, आवेदयत=कथयत, इति=एवं, ससंभ्रमं=सरभसं, सादरं=ससम्मानं, संभाषयामास=संलापयाञ्चकार। संभाषं समालापं करोतीत्यर्थे 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिच्, तदन्ताल्लिट् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार आपस में एक-दूसरे से कहकर (राजा नल के) नजदीक आई हुई दमयन्ती-प्रेषित उन दूतियों से राजा नल प्रेमरूपी तरंगों में तैरती हुई कनीनिका तथा ऊपर की ओर अतिशय उठी हुई पलकों वाले नयनों से सन्तोषपुञ्ज की पेटिका के समान, आनन्द के अंकुरों के समान, अमृतपंक से से बनाई गई पुत्तलिका (मिट्टी की गुड़िया) के समान और मधुमास (वसन्त) के कारण विकसित आम्रमञ्जरी के समान उत्कण्ठापूर्वक देखते हुए "इधर आइये, आप सबका कुशल हो, बैठिये, ताम्बूल ग्रहण करें एवं अपनी स्वामिनी (दमयन्ती) का सन्देश कहिए।" इस प्रकार उत्सुकता एवं आदर के साथ वार्तालाप किया ॥

ताश्च "महानयं प्रसादः' इति ब्रुवाणाः समुपविश्य 'राजाधिराज ! राजीवदलदीर्घाक्षी क्षेमवार्त्तां पृच्छति 'न नाम देवस्यापघने धर्मांशुघर्मोर्मिनिर्मितः कोऽपि खेदः समपद्यत, न वा समविषममार्गलङ्घनश्रमेण कापि परिमाथिनी परिजनस्य ग्लानिरभूत्, बहूनि दिनानि देवेनाध्वनि विलम्बितम्। इदं च तया प्राणेश्वरस्य प्रियं प्राभृतं प्रहितम्, इदमुक्तम्, इदमेकान्तसंदिष्टम्, इदं प्रकाशप्रश्रयालापलीलायितम्,' इति राजानमञ्जसा जजल्पुः।

कल्याणी—ताश्चेति। ताः=दमयन्तीप्रेषिताश्च, 'महान् अयम्=एषः, प्रसादः=अनुग्रहः' इति=एवं, ब्रुवाणाः=वदन्त्यः, समुपविश्य=स्वासनान्यधिगृह्य, 'राजाधिराज !=चक्रवर्त्तिन् ! राजीवदलदीर्घाक्षी—राजीवदलं=कमलपत्रमिव, दीर्घे=आयते, अक्षिणी=नेत्रे यस्याः सा, दमयन्तीत्यर्थः। क्षेमवार्तां=कुशलवृत्तान्तं, पृच्छति। न नामेत्यभ्युपगमगर्भायां पृच्छायाम्। देवस्य=भवतः, अपघने=शरीरे, धर्मांशुघर्मोर्मिनिर्मितः—धर्मांशुः=सूर्यः, तस्य घर्मोर्मिनिर्मितः=किरणलहरीकृतः, कोऽपि=कश्चिदपि, खेदः=क्लेशः, समपद्यत=अजायत। न वेति पक्षान्तरगर्भायां पृच्छायाम्। समविषममार्गलङ्घनश्रमेण—समविषममार्गस्य=उच्चावचमार्गस्य, लङ्घने=अतिक्रमणे, श्रमेण=आयासेन, परिजनस्य=अनुचरवर्गस्य, कापि=काचिदपि, परिमाथिनी=सन्तापिनी, ग्लानिरभूत्=क्लेशोऽभूत्। बहूनि=अनेकानि, दिनानि=दिवसाः, देवेन=महाराजेन, अध्वनि=मार्गे, विलम्बितं=विलम्बः कृतः। इदं च=एतच्च, तया=दमयन्त्या, प्राणेश्वरस्य=भवतः नलस्य, प्रियं=रुचिकरं, प्राभृतम्=उपायनं, प्रहितं=प्रेषितम्, इदम्=एतत्, उक्तं=कथितम्, इदम्=एतत्, एकान्तसंदिष्टं—एकान्ते=रहसि, सन्दिष्टं=सन्देशः कथितः, इदम्=एतत्, प्रकाशप्रश्रयालापलीलायितं—प्रकाशः=विशदः, प्रश्रयः=विनयः यस्मिंस्तद्यथा तथा आलापलीलायितं=कृतमालापविलसितम्।' इति=एवम्, अञ्जसा=यथावत्, राजानं=नृपं नलं, जजल्पुः=संलापं चक्रुः ॥

ज्योत्स्ना—वे दमयन्तीप्रेषित दूतियाँ भी "यह बहुत बड़ी कृपा है।" इस प्रकार कहती हुई बैठकर "हे राजाधिराज ! कमलपत्र के समान विशाल नयनों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाली (स्वामिनी दमयन्ती) आपका कुशल समाचार पूछती हैं। (श्रीमान को) सूर्य की किरणलहरियों के कारण कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? ऊँचे-नीचे मार्ग को लाँघने के परिश्रम के कारण परिजनों को कोई अधिक सन्तापदायक क्लेश तो नहीं हुआ ? श्रीमान् ने मार्ग में ही बहुत दिन लगा दिये। और उनके द्वारा अपने प्राणेश्वर के लिए यह प्रिय उपहार भेजा गया है। यह कहा गया है। यह गुप्त सन्देश दिया गया है। यह उनकी प्रकट रूप में नम्रतापूर्ण आलापलीलायें हैं।" इस प्रकार यथावत् रूप से राजा नल से बातें कीं ॥

सोऽपि स्मरव्यापारकोरकिताभिः शृङ्गाररससेकपल्लविताभिर्मुग्धस्मितांशुमञ्जरिताभिरमृतच्छटाभिरिव वाग्भिः किमपि सरलाभिः, किमपि नर्मोक्तिकुटिलाभिः, किमपि कथयन्, किमपि पृच्छन्, किमति संदिशन्, अनुजल्पमनुजल्पितम्; अनुहासमनुहसितम्, अनुसुभाषितमनुसुभाषितम्, अनुप्रियमनुप्रीतम्, प्रसादप्रदानोद्दीपितोद्दामानुरागास्ताः कुर्वन्नतिचिरमिव गोष्ठीलीलयावतस्थे ॥

कल्याणी—सोऽपीति। सः=राजा नलोऽपि, स्मरव्यापारकोरकिताभिः—स्मरस्य=कामस्य, व्यापारेण=प्रभावेण, कोरकिताभिः=कुड्मलिताभिः, शृङ्गाररससेकपल्लविताभिः—शृङ्गाररसस्य सेकेन=सेचनेन, पल्लविताभिः=वर्धिताभिः, मुग्धस्मितांशुमञ्जरिताभिः—मुग्धस्मितस्य=मनोज्ञमृदुहासस्य, अंशुभिः=किरणैः, मञ्जरिताभिः=मञ्जरीयुक्ताभिः, अमृतच्छटाभिरिव=सुधाधाराभिरिव, किमपि=किञ्चिदपि, सरलाभिः=ऋजुभिः, किमपि=किञ्चिदपि, नर्मोक्तिकुटिलाभिः—नर्मोक्तिभिः=विनोदवचनैः, कुटिलाभिः=वक्राभिः, वाग्भिः=वाणीभिः, किमपि=किञ्चिदपि; कथयन्=वदन्, किमपि=किञ्चिदपि, पृच्छन्=पृच्छां कुर्वन्, किमपि=किञ्चिदपि, संन्दिशन्=सन्देशं ददन्, अनुजल्पम्—अनुगतः जल्पः=भाषणं यत्र तद्यथा तथा, अनुजल्पितं=संलापं कुर्वन्, अनुहासम्—अनुगतः हासः यत्र तद्यथा तथा, अनुहसितम्=अनुहासं कुर्वन्, अनुसुभाषितम्—अनुगतं सुभाषितं यत्र तद्यथा तथा, अनुसुभाषितं कुर्वन्, अनुप्रियम्—अनुगतं प्रियं यस्मिंस्तद्यथा तथा, अनुप्रीतम्=अनुप्रियं कुर्वन्, ताः=दमयन्तीप्रहिताः दूतिकाः, प्रसादप्रदानोद्दीपितोद्दामानुरागाः—प्रसादप्रदानेन=प्रसन्नताप्रदानेन, उद्दीपितः=उत्तेजनां गतः, उद्दामः=निर्बन्धः, अनुरागः=प्रेम यासां तास्तथाविधाः, कुर्वन्=विदधन्, अतिचिरमिव=बहुकालमिव, गोष्ठीलीलया=गोष्ठीविनोदेन, अवतस्थे=अवस्थितो बभूव ॥

ज्योत्स्ना—वह राजा नल भी काम के प्रभाव से अंकुरित, शृंगार रस के सिञ्चन से पल्लवित, मुग्ध मन्द मुस्कान की किरणों (छटा) से मञ्जरित, सुधाधारा के समान कुछ सरल वाणी के द्वारा कतिपय विनोदपूर्ण वक्रोक्तियों से कुछ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हुए, कुछ पूछते हुए, कुछ सन्देश देते हुए, बात में बात मिलाते हुए, हँसी में हँसी करते हुए, सूक्तियों पर सूक्तियाँ कहते हुए, प्रियजनों के अनुकूल प्रसन्नता प्रकट करते हुए, प्रसन्नता-प्रदर्शन द्वारा उन दूतियों को अनुराग की अधिकता से उद्दीपित (उत्तेजित) करते हुए, गोष्ठी-विनोद के कारण बहुत समय तक बैठा रहा अर्थात् उन दूतियों के साथ मनोविनोद करता रहा ॥

'अहो नु खल्वस्य नरपतेः, अनश्लीलं शीलम्, अनाहार्यमौदार्यम्, अवञ्चनं वचनम्, अदैन्यं दानम्, अस्मयं स्मितम्, अविचारगोचरं गाम्भीर्यम्' इति भावयन्त्यस्ताश्च काञ्चिदुचितविनोदैरतिवाह्य वेलाम्, अनुभूय किमपि गोष्ठीसुखम्, आख्याय च किञ्चिदिव दमयन्तीविनोदविलासव्यतिकरम् 'आज्ञापयतु देवोऽस्मान्गमनाय, भवद्वार्त्तामृतपानार्थिनी देवी त्वरिताऽस्मत्प्रत्यावृत्तिमवेक्षमाणा तिष्ठति' इत्यभिधायानुमता यथागतमगच्छन् ॥

कल्याणी—अहो न्विति । अहो नु खल्विति रोचकाश्चर्ये । अस्य=एतस्य, नरपतेः=नलस्य, अनश्लीलं=निर्मलं, शीलं=स्वभावः, अनाहार्यम्=अकृत्रिमम्, औदार्यम्=उदारता, अवञ्चनं=वञ्चनाशून्यं, वचनं=कथनम्, अदैन्यं=कार्पण्यरहितं, दानं=वितरणम्, अस्मयम्=अहङ्कारवर्जितं, स्मितं=मृदुहासः, अविचारगोचरं—विचारेण=परीक्षणेन गोचरमिति विचारगोचरं, न विचारगोचरमित्यविचारगोचरम्, अनायासप्रतीयमानमिति यावत् । गाम्भीर्यं=गम्भीरता,, इति=एवं, भावयन्त्यः=विचारयन्त्यः, ताश्च=दमयन्तीप्रेषिताः दूतिकाश्च, उचितविनोदैः=उपयुक्तमनोविनोदैः, काञ्चिद्वेलां=कमपि समयम्, अतिवाह्य=व्यतियाप्य, किमपि=किञ्चिदपि, गोष्ठीसुखं=सभासुखम्, अनुभूय=अनुभवं कृत्वा, किञ्चिदिव दमयन्तीविनोदविलासव्यतिकरं—दमयन्त्याः विनोदानां=मनोरञ्जनानां, विलासानां=आनन्दानां च व्यतिकरं=प्रवृत्तिम्, आख्याय=उक्त्वा च, 'देवः=महाराजः भवान्, अस्मान् गमनाय=प्रस्थानाय, आज्ञापयतु=अनुजानातु, भवद्वार्त्तामृतपानार्थिनी—भवतः या वार्त्ता=वृत्तान्तः, सैव अमृतं=सुधा, तत्पानार्थिनी=तत्पानोत्सुका, देवी=दमयन्ती, त्वरितास्मत्प्रत्यावृत्तिमवेक्षमाणा—त्वरितं=शीघ्रम्, अस्माकं प्रत्यावृत्तिं=परावर्तनम्, अवेक्षमाणा=प्रतीक्षमाणा, तिष्ठति=वर्तते,' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, अनुमता=राज्ञा नलेनानुज्ञाता, यथागतमगच्छन्=यथास्थानं गताः ॥

ज्योत्स्ना—"अहो, इस राजा नल का स्वभाव अश्लीलता से सर्वथा रहित है, (इसकी) उदारता स्वाभाविक है, वाणी वञ्चना (छलप्रपञ्च) से रहित है, मृदु हास अहंकारशून्य है तथा गम्भीरता नितान्त स्पष्ट है ।" इस प्रकार विचार करती हुई वे दमयन्तीप्रेषित दूतियाँ भी उचित मनोविनोदों के द्वारा कुछ समय को बिताकर, कुछ गोष्ठीसुख का अनुभव कर और कुछ दमयन्ती के विनोद और विलास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसंगों को कहकर "महाराज (अब) हम लोगों को जाने की आज्ञा दें; (क्योंकि) श्रीमान् के समाचाररूपी अमृत का पान करने के लिए उत्सुक देवी दमयन्ती हम-लोगों के शीघ्र लौटने की प्रतीक्षा करती हुई बैठी हैं।" इस प्रकार कहकर (राजा से) अनुमति प्राप्त कर यथास्थान चली गईं ॥

गतासु च तासु, प्रगल्भं प्रज्ञायाम्, अचरमं वाचि, कुशलं कलासु, निपुणं नीतौ, सप्रतिभं सभायाम्, आश्चर्यभूतमाहूय पर्वतकनामानं वामन-कमुपायनीकृत्य कर्कशकर्कन्धूफलस्थूलोज्ज्वलमुक्तावलीमुख्यभव्यभूषणांशु-कादिसंमानदानादरपरितोषितेन तेन पुष्कराक्षपुरःसरं किन्नरमिथुनेन सह दमयन्तीं प्रति प्रेषयामास ॥

कल्याणी—गतास्विति। तासु=दूतिकासु, गतासु=प्रस्थितासु च, प्रज्ञायां=बुद्धिमत्तायां, प्रगल्भं=कुशलम्, वाचि=वाण्याम्, अचरमम्=अपश्चिमम्, अग्र्यं श्रेष्ठं वेति यावत्। कलासु कुशलं=निपुणम्, नीतौ=नीतिमार्गे, निपुणं=कुशलम्; सभायां=गोष्ठ्यां, सप्रतिभं=प्रतिभायुक्तम्, आश्चर्यभूतं=विचित्रं, पर्वतकनामानं=पर्वतकाभिधं, वामनकं=वामनरूपं जनम्, आहूय=आकार्य, तमुपायनीकृत्य—अनुपायनमुपायनं कृत्वेत्युपायनीकृत्य=उपहारत्वेन समर्प्य, कर्कशकर्कन्धूफलस्थूलो-ज्ज्वलमुक्तावलीमुख्यभव्यभूषणांशुकादिसम्मानदानादरपरितोषितेन — कर्कशकर्कन्धू-फलवत्=कठोरबदरीफलवत्, स्थूलानां=पीनानां; बदरीफलाकाराणामित्यर्थः। उज्ज्व-लानां=शुभ्राणां दीप्तानां च, मुक्तानां=मौक्तिकानाम्, अवली=हारः, मुख्या=प्रमुखा, येषां तथाविधाभिः, भव्यैः=श्रेष्ठैः, भूषणांशुकादिभिः=आभरणवस्त्रादिभिः, सम्मानेन आदरेण च परितोषितेन=प्रसादितेन, तेन=पूर्वोक्तेन, किंनरमिथुनेन=किम्पुरुषयुग्मेन, सह=साकं, पुष्कराक्षपुरःसरं—पुष्कराक्षः पुरःसरः=अग्रेसरः यत्र तद्यथा तथा, पुष्कराक्षमग्रे कृत्वेति यावत्। तं पर्वतकनामानं वामनकं दमयन्तीं प्रति, प्रेषयामास=प्रजिघाय ॥

ज्योत्स्ना—और उन दूतिकाओं के वापस चले जाने के बाद प्रज्ञा में प्रगल्भ अर्थात् बुद्धिमत्ता में कुशल, बोलने में श्रेष्ठ, कलाओं में कुशल, नीति में निपुण, सभा में प्रतिभा से समन्वित, अत्यन्त आश्चर्यस्वरूप पर्वतकनामक बौने को बुलाकर और उसे उपहार के रूप में समर्पित कर, कठोर कर्कन्धू-(बेर)-फल के समान स्थूल (बड़े-बड़े) उज्ज्वल मोतियों की माला जिनमें प्रमुख थे, ऐसे श्रेष्ठ आभूषणों, वस्त्रों आदि को सम्मानपूर्वक देकर और आदर से उसे सन्तुष्ट कर, उस किन्नर-मिथुन के साथ पुष्कराक्ष को आगे कर दमयन्ती के पास भेज दिया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वयं च शाङ्खिकमुखमरुत्पूर्यमाणशङ्खस्वनविभिन्नभाङ्कारिमध्याह्न-भेरीरवेण निर्यद्वेलाविलासिनीचरच्चरणाभरणरणन्मणिनूपुरझङ्कारेण च निवेद्यमाने मध्याह्नसमये माध्याह्निककरणायोदतिष्ठत् ॥

कल्याणी—स्वयं चेति । स्वयं च=आत्मना च राजा नलः, शाङ्खिकमुख-मरुत्पूर्यमाणशङ्खस्वनविभिन्नभाङ्कारिमध्याह्नभेरीरवेण—शाङ्खिकमुखस्य=शङ्खवादक-मुखस्य, मरुता=वायुना, पूर्यमाणस्य शङ्खस्य स्वनेन=ध्वनिना, विभिन्नः=मिश्रितः, यः भांकारी—भामित्यनुकरणात्मकः शब्दः तत्करोत्यवश्यमिति भांकारी, मध्याह्न-भेरीरवः=मध्याह्नस्य दुन्दुभिध्वनिः तेन, तथा निर्यद्वेलाविलासिनीचरच्चरणाभरण-रणन्मणिनूपुरझङ्कारेण—निर्यतीनां=निर्गच्छन्तीनां, वेलाविलासिनीनां=वाराङ्गनानां, चलतां=विन्यस्यमानानां, चरणानां=पादानाम्, आभरणानि=भूषणानि, यानि रणन्ति=शब्दायमानानि, मणिनूपुराणि, तेषां झंकारेण=झंकृतिना च, निवेद्यमाने=सूच्यमाने, मध्याह्नसमये=मध्याह्नकाले, माध्याह्निककरणाय—माध्याह्निकानि=मध्याह्नकालेऽनुष्ठेयानि, तेषां करणाय=सम्पादनाय, उदतिष्ठत्=उदचलत् ॥

ज्योत्स्ना—और स्वयं राजा नल भी शंखवादक के मुख की वायु से परिपूर्ण शंख की ध्वनि से मिश्रित मध्याह्नकाल में बजने वाले नगाड़े की अत्यन्त गम्भीर ध्वनि एवं बाहर जाती हुई वारांगनाओं के चलते हुए चरणों के मणिनुपूरादि आभूषणों की झङ्कार से मध्याह्न काल सूचित होने पर तत्कालोचित सन्ध्यावन्दनादि कृत्य करने के लिए उठ खड़ा हुआ ॥

क्रमेण च निःसृते समस्तसेवकजने, विश्रान्ततूर्यतालगीतासु निर्यातन-र्तकीविरहखेदादिव मूकीभूतासु नृत्यशालासु, निःशब्दतया सुप्तास्विवार्था-धिकारककुटीषु, शून्यतया मध्याह्नतन्द्रामूर्च्छितेष्विव समस्तमण्डपेषु, संक्रान्तसेवाविलासिनीचरणकुङ्कुमपदपङ्क्तितया विकीर्णविकसितरक्ता-रविन्द इव प्रकाशमाने राजभवनाङ्गणे, घनं ध्वनन्तीषु भोजनावसरशङ्ख-काहलासु, प्रधावमानेषु प्रत्यास्वादकजनेषु, परिमृज्यमानास्वतिथिसत्र-शालासु, सज्जीक्रियमाणेष्वग्राशनब्राह्मणेषु, प्रवेश्यमानासु गोग्रासयोग्यासु कपिलासु पुण्यगवीषु, प्रक्षाल्यमानेषु वायसबलिस्तम्भशिखरफलकेषु, बहिर्दी-यमानेषु दीनानाथभिक्षुकभैक्ष्यपिण्डेषु, समुपलिप्यमानासु भोजनस्थान-वेदीषु, सञ्चार्यमाणेषु चकोरपञ्जरेषु, निवेद्यमाननैवेद्यासु पूज्यराज्याधि-देवतासु, वैश्वदेवाहुतिगन्धवाहिनी वहति विविधान्नपाकपरिमलमनोहरे महानसमरुति, निर्वर्तितमज्जनादिक्रियाकलापे भजति भोजनभुवं भूभुजि, बहिः सूपकारकलकलः समुल्ललास ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—क्रमेणेति । क्रमेण=क्रमशश्च, समस्तसेवकजने=सकलानुचरवर्गे, निःसृते=निर्गते, विश्रान्ततूर्यतालगीतासु—तूर्यश्च वाद्ययन्त्रविशेषः, तालश्च झर्झरो नाम वाद्ययन्त्रविशेषः, गीतं च गानमिति तूर्यतालगीतानि, विश्रान्तानि=विरतानि, तूर्यतालगीतानि यासु तथाविधासु, नृत्यशालासु=रङ्गशालासु, निर्यातनर्तकीविरहखेदादिव—निर्यातानां=निर्गतानां, नर्तकीनां=नृत्याङ्गनानां, विरहखेदात्=वियोगजन्यदुःखादिव [हेतूत्प्रेक्षा], मूकीभूतासु=बद्धमौनासु, निःशब्दतया=शब्दरहिततया, अर्थाधिकारककुटीषु—अर्थाधिकारकाणां=वित्ताधिकारिणां, कुटीषु=कुटीरेषु, सुप्तास्विव=निद्रां गतास्विव [उत्प्रेक्षा], शून्यतया=रिक्ततया, समस्तमण्डपेषु=सकलपटगृहेषु, मध्याह्नतन्द्रीमूर्च्छितेष्विव—मध्याह्नस्य = मध्याह्नकालस्य, तन्द्रया=निद्रालुतया, मूर्च्छितेष्विव=निःसंज्ञेष्विव [उत्प्रेक्षा], संक्रान्तसेवाविलासिनीचरणकुंकुमपदपङ्क्तितया—संक्रान्ता = प्रतिफलिता, सेवाविलासिनीनां=सेवासंलग्नसुन्दरीणां, चरणकुङ्कुमपदपङ्क्तिः=पादकुङ्कुमचिह्नश्रेणिः यस्मिंस्तस्य भावस्तत्ता तया, राजभवनाङ्गणे—राजभवनस्य=राजप्रासादस्य, अङ्गणे=प्राङ्गणे, विकीर्णविकसितरक्तारविन्द इव—विकीर्णानि=प्रसृतानि, विकसितरक्तारविन्दानि यस्मिन् तथाविध इव, प्रकाशमाने=विद्योतमाने सति [उत्प्रेक्षा], भोजनावसरशङ्खकाहलासु—भोजनावसरे=भोजनसमये, शङ्खकाहलासु—शङ्खाश्च काहलाश्च=मुरजाश्च तासु, घनं=सान्द्रं, ध्वनन्तीषु=शब्दायमानासु, प्रत्यास्वादकजनेषु=परिवेषकजनेषु, प्रधावमानेषु=द्रुतं धावितेषु सत्सु, अतिथिसत्त्रशालासु=अतिथिभोजनालयेषु, परिमृज्यमानासु=स्वच्छीक्रियमाणासु, अग्राशनब्राह्मणेषु—अग्रे=सर्वप्रथमम्, अश्नन्ति=भुञ्जन्ति, ते अग्राशनाः=ब्राह्मणाः तेषु, सज्जीक्रियमाणेषु=सन्नद्धतां नीयमानेषु, गोग्रासयोग्यासु=गोग्रासदातव्यासु, कपिलासु=कपिलवर्णासु, पुण्यगवीषु=पवित्रगोषु, प्रवेश्यमानासु=प्रवेशाय नीयमानासु, वासबलिस्तम्भशिखरफलकेषु—वायसेभ्यः = काकेभ्यः, बलिः=भोज्यांशोपहारः, तदर्थं ये स्तम्भाः तेषां शिखरफलकेषु=अग्रभागपट्टेषु, प्रक्षाल्यमानेषु=क्षाल्यमानेषु सत्सु, बहिः=बाह्यस्थाने, दीनानाथभिक्षुकभैक्ष्यपिण्डेषु—दीनेभ्यः अनाथेभ्यो भिक्षुकेभ्यश्च भैक्ष्यपिण्डेषु=भिक्षात्मकभोजनेषु, दीयमानेषु=समर्प्यमाणेषु, भोजनस्थानवेदीषु—भोजनाय यत्स्थानं तस्य वेदीषु=उच्चसमतलभूमिषु, समुपलिप्यमानासु=गोमयाद्युपलेपननिवृत्तासु, चकोरपञ्जरेषु—चकोराणां पञ्जरेषु, संचार्यमाणेषु=प्रचाल्यमानेषु, पूज्यराज्याधिदेवतासु—पूज्या=पूजनीया, या राज्याधिदेवता=राज्याधिष्ठातृदेवी तासु, निवेद्यमाननैवेद्यासु—निवेद्यमानम्=अर्प्यमाणं, नैवेद्यं याभ्यस्तथोक्तासु सतीषु, वैश्वदेवाहुतिगन्धवाहिनि—भोजनात्पूर्वं विश्वदेवयज्ञसम्बन्धिन्यः या दत्ता आहुतयः तासां गन्धं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वहत्यवश्यमिति तथोक्ते, विविधान्नपाकपरिमलमनोहरे—विविधानाम्=अनेकविधानाम्, अन्नानां पाकः, तस्य परिमलेन=सुगन्धेन, मनोहरे=मनोज्ञे, महानसमरुति—महानसं=पाकस्थानं, तस्य मरुति=वायौ, वहति=वाति सति, निर्वर्तितमज्जनादिक्रियाकलापे—निर्वर्तितः=सम्पादितः, मज्जनादिक्रियाकलापः=स्नानादिकार्यव्यापारः येन तस्मिन्, भूभुजि=भूपे नले, भोजनभुवं=भोजनस्थलं, भजति=आगच्छति सति, बहिः=बाह्यस्थाने, सूपकारकलकलः—सूपकाराणां=पाचकानां, कलकलः=कोलाहलः; समुल्ललास=उत्तस्थौ ॥

ज्योत्स्ना—(तत्पश्चात्) क्रमशः समस्त सेवकों के चले जाने पर; तूर्य (तुरही), ताल (झाल) एवं गीत के बन्द हो जाने के कारण नर्तकियों के निकल जाने के कारण उनके विरह-दुःख से नृत्यशालाओं के मानों मौन हो जाने पर; निःशब्दता के कारण वित्ताधिकारियों की कुटीरों के मानों सो जाने पर; शून्यता (खाली होने) के कारण समस्त मण्डपों (पटगृहों) के मध्याह्नकालीन निद्रा से मूर्छित-से हो जाने पर; सेवा में संलग्न सुन्दरियों के पैरों में लगे कुंकुम के कारण उगे पदचिह्नों के कारण राजभवन-प्रांगण के बिखरे हुए विकसित रक्तकमलों से मानों प्रकाशमान हो जाने पर; भोजन के अवसर पर शंख और काहल (मुरज) की गम्भीर ध्वनियों के ध्वनित होने पर; विविध स्वादिष्ट भोज्य पदार्थों को बनाने वाले परिवेषकों द्वारा शीघ्रतापूर्वक इधर-उधर दौड़ते रहने पर; अतिथि-भोजनालयों को धोकर स्वच्छ बनाये जाने पर; प्रथमतः भोजन करनेवाले ब्राह्मणों को सज्जित (तैयार) किये जाने पर; गोग्रास प्रदान योग्य कपिल वर्ण की पवित्र गौवों को प्रविष्ट कराये जाने पर; काकों को बलि प्रदान करने के लिए स्थापित स्तम्भों के शिखरभाग-स्थित फर्श के धोये जाने पर; बाहर दीनों, अनाथों और भिक्षुकों के लिए भोजन-पिण्डों के प्रदान किये जाने पर; भोजन के लिए निर्धारित स्थान की वेदियों को पूर्णतः (गोमयादि से)लिप्त कर दिये जाने पर; चकोर-पक्षियों के पिंजडों को घुमाये जाने पर; राज्य की पूजनीय अधिष्ठात्री देवताओं के लिए नैवेद्य निवेदित (समर्पित) किये जाने पर; भोजन के पूर्व वैश्वदेव के लिए प्रदान की गई आहुति को ढोने वाली विविध पक्वान्नों की सुगन्ध के कारण मनोहर हवा के पाकशाला से प्रवाहित होने पर; स्नानादि समस्त क्रियाकलापों को सम्पन्न कर चुके राजा के भोजनस्थल पर पहुँच जाने पर बाहर सूपकारों (रसोइयों) का कोलाहल गूँज उठा ॥

'आज्यं प्राज्यमभिन्नकुन्दकलिकाकल्पश्च शाल्योदनो
धूपामोदमनोहरा शिखरिणी स्वादूनि शाकानि च ।
पेयास्वाद्यकवल्यलेह्यबहुलं नानाविधं भुज्यतां
भोज्यं भीममहानृपस्य सुतया संप्रेषितं सैनिकाः ॥११॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—सैनिकाः ! भीममहानृपस्य सुतया सम्प्रेषितं प्राज्यम् अभिन्नकुन्दकलिकाकल्पः शाल्योदनः धूपामोदमनोहरा शिखरिणी स्वादूनि शाकानि च पेयास्वाद्यकवल्यलेह्यबहुलं नानाविधं भोज्यं भुज्यताम् ॥११॥

कल्याणी—आज्यमिति । भोः सैनिकाः ! भीममहानृपस्य=विदर्भाधिपतेर्भीमस्य, सुतया=दुहितया दमयन्त्या, संप्रेषितं=प्रहितं, प्राज्यं—प्रभूतम्, आज्यं=घृतम्, अभिन्नकुन्दकलिकाकल्पः—अभिन्नकुन्दकलिका—अविकसिता या कुन्दकलिका, तस्या ईषदून इति तत्कल्पः, तत्सदृश इत्यर्थः । केचित् 'कल्यः' इति पठन्ति, तत्र अभिन्नकुन्दकलिकया, कल्यते=उपमीयते इति अभिन्नकुन्दकलिकाकल्यः, तत्सदृश इति यावद् । कलेरदन्तात् 'अचो यत्' इति सूत्रेण यत् । शाल्योदनः=उत्कृष्टतरं भक्तम्, धूपामोदमनोहरा—धूपस्य आमोदेन=सुवासेन, मनोहरा=मनोज्ञा, शिखरिणी=शर्करामिश्रितमुत्कृष्टं दधि, लोके श्रीखण्डमिति संज्ञया प्रसिद्धम् । स्वादूनि=स्वादिष्टानि, शाकानि च, पेयास्वाद्यकवल्यलेह्यबहुलं—पेयं=पातुं योग्यम्, आस्वाद्यम्=आस्वादयितुं योग्यम्, कवल्यं=कवलयितुं योग्यम्, लेह्यं=लेढुं योग्यं च, तद्बहुलं=तत्प्रचुरं, नानाविधं=बहुप्रकारकं, भोज्यं=भोजनयोग्यपदार्थं, भुज्यतां=खाद्यतां, भवद्भिरिति शेषः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥११॥

ज्योत्स्ना—सैनिकों ! महाराज भीम की पुत्री दमयन्ती द्वारा भेजे गये प्रचुर घृत, अविकसित कुन्दकलिका के समान उत्कृष्ट शाल्योदन (भात), धूप के सुगन्ध से मनोहर शिखरिणी (शर्करामिश्रित दधि) एवं स्वादिष्ट शाक तथा पीने योग्य, स्वाद लेने (चखने) योग्य, कवल (खाने) के योग्य एवं लेह्य (चाटने योग्य) बहुविध भोज्य पदार्थों का आप लोग भक्षण करें ॥११॥

अहो नु खल्वमी मत्स्यमांसैर्विरहितमुदीच्यप्रतीच्यप्राच्यजनाः प्रियसक्तवो भोक्तुमेव न जानन्ति ॥

कल्याणी—अहो न्विति । अहो नु खल्विति रोचकाश्चर्ये । अमी=एते सैनिकाः, उदीच्यप्रतीच्यप्राच्यजनाः—उदीच्याः=उत्तरदिग्वासिनः, प्रतीच्याः=पश्चिमदिग्वासिनः, प्राच्याः=पूर्वदिग्वासिनश्च जनाः=लोकाः, प्रियसक्तवः—प्रियाः सक्तवः येषां ते तथाभूताः, मत्स्यमांसैः—मत्स्यैः=मीनैः, मांसैः=पललैश्च, विरहितं=रहितं, भोज्यं=भोज्यपदार्थं, भोक्तुमेव=अत्तुमेव, न जानन्ति=न विदन्ति ॥

ज्योत्स्ना—अहो ! आश्चर्य है कि सक्तु (सत्तू) को ही सर्वाधिक प्रिय मानने वाले ये उत्तर-पश्चिम और पूर्व दिशा के निवासी लोग मत्स्य (मछली) और मांस से रहित भोजन करना तो जानते ही नहीं ॥

विरलः खलु दाक्षिणात्येषु मांसाशनव्यवहारः । तदाकर्ण्यतां भो नैषधाः ! ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—विरल इति। दाक्षिणात्येषु=दक्षिणदिग्वासिषु जनेषु, खलु=निश्चयेन, विरलः=अतिस्वल्पः, मांसाशनव्यवहारः=मांसभोजनप्रथा, तत्=तस्मात्, भो नैषधाः=निषधनिवासिनः ! आकर्ण्यतां=श्रूयतां, भवद्भिरिति शेषः ॥

ज्योत्स्ना—दक्षिण दिशा के निवासियों में तो मांस खाने का प्रचलन बहुत ही कम है। अतः हे निषधनिवासियों ! सुनें—

'आज्यप्राज्यपरान्नकूरकवलैर्मन्दां विधाय क्षुधां
चातुर्जातकसंस्कृतो नु शनकैरिक्षो रसः पीयताम्।
सम्भारस्पृहणीयतेमनरसानास्वाद्य किञ्चित्ततः
स्निग्धस्तब्धदधिद्रवेण सरसः शाल्योदनो भुज्यताम् ॥१२॥

अन्वयः—आज्यप्राज्यपरान्नकूरकवलैः क्षुधां मन्दां विधाय चातुर्जातकसंस्कृतः इक्षोः रसः शनकैः पीयतां नु। ततः सम्भारस्पृहणीयतेमनरसान् किञ्चित् आस्वाद्य स्निग्धस्तब्धदधिद्रवेण सरसः शाल्योदनः भुज्यताम् ॥१२॥

कल्याणी—आज्येति। आज्यप्राज्यपरान्नकूरकवलैः—आज्यप्राज्यं=घृतप्रचुरं, परम्=उत्कृष्टम्, अन्नं कूरं=भक्तं च, तस्य कवलैः=ग्रासैः, क्षुधां=बुभुक्षां, मन्दां=शिथिलां, विधाय=कृत्वा, चातुर्जातकसंस्कृतः—'त्वगेलापत्रकं चैव त्रिगन्धं च त्रिजातकम्। तदेव मरिचैर्युक्तं चातुर्जातकमुच्यते ॥' तेन संस्कृतः कृतगुणान्तरः चातुर्जातकसंस्कृतः, इक्षोः=इक्षुदण्डस्य, रसः=द्रवः, शनकैः=शनैः, पीयतां=पानं क्रियताम्। न्विति अवश्यार्थकम्। ततः=तदनन्तरं, सम्भारस्पृहणीयतेमनरसान्—संभारैः=अपेक्षितवस्तुभिः, स्पृहणीयं=रुचिकरं, तेमनम्=अवलेहः, तस्य रसान्=द्रवान्, किंचित् किमपि, आस्वाद्य=आस्वादनं कृत्वा, स्निग्धस्तब्धदधिद्रवेण— स्निग्धः=स्नेहयुक्तः, स्तब्धः=प्रगाढः, दधिद्रवः=वस्त्रगालितं दधि, तेन सरसः=स्वादिष्टः। 'सरलः' इति पाठे सरलः=सुनिष्पन्नदीर्घतण्डुलपाकजोऽतिक्लिन्नतादिदोषरहितश्चेत्यर्थो बोध्यः। शाल्योदनः=शालिभक्तः, भुज्यतां=खाद्यताम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१२॥

ज्योत्स्ना—प्रचुर घृत में बने उत्कृष्ट अन्न और कूरनामक चावलों से बने भात के ग्रासों से (अपनी) भूख को शान्त कर इलायची, नागकेसर और मरिच (काली मीर्च) से संस्कृत अर्थात् स्वादिष्ट बनाये गये ईख के रस को धीरे-धीरे जरूर पीजिये। तत्पश्चात् अपेक्षित वस्तुओं अर्थात् मसालों के द्वारा तैयार किये गये स्पृहणीय (रुचिकर) तरकारियों के रसों का थोड़ा-थोड़ा स्वाद लेकर चिकने एवं गाढ़े दधिरस के साथ सरस अर्थात् स्वादिष्ट शाल्योदन (भात) को खाइये ॥१२॥

राजा तु प्रतीहार ! 'विनिश्चीयतां किमयं बहिः कलकलव्यतिकरः' इत्यभिधाय तत्कालयोग्यपरिजनपरिवृतो भोक्तुमुपाविशत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—राजेति । राजा=नलस्तु, 'हे प्रतीहार !=दौवारिक !, विनिश्चीयतां=ज्ञायतां, किमयं बहिः=बहिर्भागे, कलकलव्यतिकरः=कोलाहलसम्भूतिः ।' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, तत्कालयोग्यपरिजनपरिवृतः—तत्कालयोग्यपरिजनैः=तत्क्षणोचितानुचरवर्गैः, परिवृतः भोक्तुं=खादितुम्, उपाविशत्=उपविवेश ॥

ज्योत्स्ना—तत्कालोचित परिजनों से घिरा हुआ राजा भी "प्रतीहार ! पता करो कि बाहर हो रहे इस कोलाहल का क्या कारण है ?" इस प्रकार कहकर भोजन करने के लिए बैठ गया ॥

त्वरितं च गत्वागतश्च स प्रतीहारो विज्ञापयांबभूव । 'देव ! दमयन्त्या प्रहिताः सूपकाराः सैन्यजनम्, आब्राह्मणान्त्यजगोपालकम्, आकरितुरगवाहनम्, आसामन्तनियुक्तकम्' आस्वाद्यैस्तैस्तैरन्नविशेषैर्भोजयन्ति ॥

कल्याणी—त्वरितमिति । त्वरितं=शीघ्रं च, गत्वा=प्रस्थाय, आगतश्च=आयातश्च, प्रतीहारः=दौवारिकः, विज्ञापयांबभूव=निवेदयामास—देवेति । देव !=स्वामिन् !, दमयन्त्या=भीमपुत्र्या, प्रहिताः=प्रेषिताः, सूपकाराः=पाचकाः, सैन्यजनं=सैनिकवृन्दम्, आब्राह्मणान्त्यजगोपालकं=ब्राह्मणेभ्य आरभ्य अन्त्यजगोपालकादिपर्यन्तम्, आकरितुरगवाहनम्=गजादारभ्याश्वादिवाहनपर्यन्तम्, आसामन्तनियुक्तकं=सामन्तादारभ्य नियुक्तकपर्यन्तं, नियुक्तकः साधारणसेवकः । आस्वाद्यैः=आस्वादवद्भिः, तैस्तैः=तथाविधैः विविधैः, अन्नविशेषैः=विशिष्टभोज्यान्नैः, भोजयन्ति=तर्पयन्ति ॥

ज्योत्स्ना—शीघ्र ही जाकर वापस आये उस प्रतीहार ने सूचित किया कि "स्वामिन् ! देवी दमयन्ती द्वारा भेजे गये सूपकार लोग (रसोइये) सैनिकों को, ब्राह्मणों से लेकर अन्त्यजों (शूद्रों) तक समस्त जनों तथा गोपालकों को, हाथी से लेकर घोड़े आदि समस्त वाहनों को और सामन्त से लेकर साधारण सेवकों तक को उन-उन स्वादिष्ट अन्नविशेषों (भोज्य पदार्थों) से भोजन करा रहे हैं ॥

लग्नाः सर्वतो दृश्यन्ते पर्वताः पक्वान्नस्य, राशयः शाल्योदनस्य; स्तूपा सूपस्य, निर्झराः सर्पिषः, सिन्धवो मधुनः; निकराः शर्करायाः, स्रोतांसि दधिदुग्धयोः, शैलाः शाकानाम्, निपानानि पानकानाम्, कुल्याः फलरसानाम्, कूटाः कषायाम्ललवणतिक्तमधुरोपदंशानाम् । एवमकार्पण्यमिच्छया भोजितं सैन्यम् ॥

कल्याणी—लग्ना इति । सर्वतः=परितः, पक्वान्नस्य=पक्वभोज्यपदार्थस्य, पर्वताः=भूधराः, शाल्योदनस्य=शालिभक्तस्य, राशयः=पुञ्जाः, सूपस्य=सूपखाद्यस्य, स्तूपाः=स्तम्भाः, सर्पिषः=घृतस्य, निर्झराः=स्रोतांसि, मधुनः सिन्धवः=सागराः, शर्करायाः निकराः=राशयः, दधिदुग्धयोः स्रोतांसि=निर्झराः, शाकानां शैलाः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर्वताः, पानकानां=पेयपदार्थानां, निपानानि=सरांसि, फलरसानां कुल्याः=कृत्रिमाः सरितः, कषायाम्ललवणतिक्तमधुरोपदंशानां कूटाः=शिखराः, लग्नाः=अनुषक्ताः, दृश्यन्ते=अवलोक्यन्ते। एवम्=इत्थम्, अकार्पण्यम्=कार्पण्यरहितं, औदार्यमित्यर्थः। सैन्यं=बलम्, इच्छया=यथेच्छया, भोजितम् ॥

ज्योत्स्ना—चारो ओर पक्वान्नों के पहाड़, शाल्योदन (भात) के ढेर, दाल के स्तूप, घी के झरने, मधु (शहद) के समुद्र, शर्करा (चीनी) के ढेर, दधि और दूध के स्रोत (धारायें), तरकारियों के पर्वत, पेय पदार्थों के तालाब, फलरसों के नाले एवं कसैले, खट्टे, नमकीन, तीखे और मधुर अचारों के शिखर लगे हुए दिखाई दे रहे हैं। इस तरह सैनिकों को उदारतापूर्वक उनकी इच्छानुसार जीभर कर भोजन करा दिया गया ॥

अपि च—

भुक्तान्ते घृतदिग्धहस्ततलयोरुद्वर्तनं चन्दनं
पश्चान्नागरखण्ड-पाण्डुरदलैस्ताम्बूल-दानक्रमः ।
एकैकस्य मृणालतन्तुमृदुनी दत्ते ततो वाससी
देव्या किञ्चिदचिन्त्यमेव भवतः सैन्यातिथेयं कृतम् ॥१३॥

अन्वयः—भुक्तान्ते घृतदिग्धहस्ततलयोः चन्दनम् उद्वर्तनम्, पश्चात् नागरखण्डपाण्डुरदलैः ताम्बूलदानक्रमः। ततः एकैकस्य मृणालतन्तुमृदुनि वाससी दत्ते, दिव्या किञ्चित् अचिन्त्यमेव भवतः सैन्यातिथेयं कृतम् ॥१३॥

कल्याणी—भुक्तान्त इति। भुक्तान्ते=भोजनान्ते, घृतदिग्धहस्ततलयोः—घृतेन दिग्धयोः=लिप्तयोः, स्निग्धयोरिति यावत्। हस्ततलयोः=करतलयोः; चन्दनं=चन्दनचूर्णम्, उद्वर्तनं, पश्चात् नागरखण्डपाण्डुरदलैः—नागरैः=विदग्धैः, खण्ड्यन्ते=चर्व्यन्ते इति नागरखण्डसंज्ञानि यानि [नागवल्ल्याः] पाण्डुरदलानि=पीतपत्राणि तैः, ताम्बूलदानक्रमः=ताम्बूलानां प्रदानक्रमः। ततः=तदनन्तरं; एकैकस्य=प्रत्येकस्य, मृणालतन्तुमृदुनि—मृणालतन्तुवत्=कमलतन्तुवत्, मृदुनी=कोमले, वाससी=वस्त्रे, दत्ते=समर्पिते। देव्या=दमयन्त्या, किञ्चित्=किमपि, अचिन्त्यमेव=अकल्पनीयमेव, अद्भुतमेवेत्यर्थः। भवतः=तव, सैन्यातिथेयं—सैन्यानां=बलानाम्, आतिथेयम्=अतिथिसत्कारः, कृतं=सम्पादितम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१३॥

ज्योत्स्ना—और भी—भोजन के पश्चात् घी से सनी अर्थात् चिकनी (उनकी) हथेलियों पर चन्दन का उबटन देकर उन्हें नागरखण्डसंज्ञक पीले पत्तों वाले पान को क्रमशः प्रदान करने के बाद प्रत्येक को कमलतन्तु के समान कोमल वस्त्रों का जोड़ा दिया गया। (इस प्रकार) देवी दमयन्ती द्वारा आपके सैनिकों का कुछ अद्भुत अलौकिक आतिथ्यसत्कार किया गया ॥१३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इयं च रसवती देवस्य तया स्वहस्तपल्लवपरिमलनसंस्कृतैः पाकविशेषैरलङ्कृत्य स्वमुद्रया मुद्रिता प्रहिता' इत्यभिधाय व्यरंसीत् ॥

कल्याणी—इयं चेति। इयं च=एषा च, देवस्य=भवतः, रसवती=सरसमुत्कृष्टं च भोज्यं, तया=देव्या दमयन्त्या, स्वहस्तपल्लवपरिमलनसंस्कृतैः—स्वहस्तपल्लवेन=निजकरकिसलयेन, परिमलनैः=विविधसुगन्धितपदार्थैः, संस्कृतैः=कृतगुणान्तरैः, पाकविशेषैः=विशिष्टपक्वान्नैः, अलंकृत्य=सज्जीकृत्य, स्वमुद्रया=स्वनामाङ्कितमुद्रया, मुद्रिता=चिह्निता, प्रहिता=प्रेषिता' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, व्यरंसीत्=मौनमभजत् ॥

ज्योत्स्ना—और आपके लिए यह रसवती (सरस उत्कृष्ट भोज्य पदार्थ) उस देवी दमयन्ती द्वारा अपने करपल्लवों से विविध सुगन्धित पदार्थों से संस्कृत किये गये विशेष प्रकार के पक्वान्नों से अलंकृत करके अपनी मुद्रा द्वारा चिह्नित कर भेजी गई है।" इस प्रकार कहकर (वह प्रतीहार) मौन हो गया ॥

राजा तु मनाक्तरलितशिराः सस्मितम्–'अहो; निरतिशयमुदारगम्भीरमुचितव्यवहारहारि लीलायितं तस्याः, स्पृहणीयपरिमलश्चायमपूर्व इव कोऽपि पाकक्रमः ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, मनाक्=ईषत्, तरलितशिराः—तरलितं=विधुतं, शिरः=मस्तकं येन स तथाभूतः, सस्मितं=मन्दहासपूर्वं, सहर्षमिति यावत्.—'अहो इत्याश्चर्ये, तस्याः=दमयन्त्याः, लीलायितं=विचेष्टितं, निरतिशयं=समधिकम्, उदारगम्भीरम्—उदारं=मनोज्ञं, गम्भीरं=दुर्बोधञ्च, तथा उचितव्यवहारहारि—उचितव्यवहारेण=उपयुक्तवर्तनेन, हारि=मनोहरम्, अयम्=एषः, पाकक्रमश्च=पाकविधिश्च, स्पृहणीयपरिमलः—स्पृहणीयः परिमलः=सौरभं यस्य स तथाभूतः, कोऽपि=कश्चिदपि, अपूर्व इव=लोकोत्तर इव, अस्तीति शेषः ॥

ज्योत्स्ना—राजा ने थोड़ा शिर हिलाकर मन्द मुस्कान के साथ "अहो, उसकी चेष्टायें अत्यधिक उदार, गम्भीर तथा समुचित व्यवहार के कारण मनोहर हैं। स्पृहणीय सुगन्धों से युक्त यह पाकक्रम अर्थात् भोज्य सामग्री भी कुछ अलौकिक ही है ॥

तथाहि—

इदमम्लमप्यनम्लास्वादम्, इदमीषत्कषायमपि मधुरतां नीतम्; इदमेकरसमप्यनेकरसीकृतम्, इदमतिमृष्टतयाऽमृतमप्यतिशेते, रसवत्यामपि रसवती विदर्भराजात्मजा' इति विभावयंस्तांस्तया प्रहितान् पाकविशेषानादरेणास्वादयामास ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—इदमिति । इदम्=एतत्, अम्लमपि=अम्लरसोपेतमपि, अनम्लास्वादम्—नाम्ल आस्वादो यस्य तत्तथोक्तम्, इदम्, ईषत्=मनाक्, कषायमपि=कषायरसोपेतमपि, मधुरतां=माधुर्यं, नीतं=प्रापितम्, इदम्, एकरसमपि=अलौकिकरसमपि, अनेकरसीकृतम्=अनेकरसैः पूर्णं कृतम्, इदम्, अतिमृष्टतया=अतिमधुरतया, अमृतं=सुधामपि, अतिशेते=अमृतादप्यतिरिच्यते इति भावः । विदर्भराजात्मजा=विदर्भराजसुता दमयन्ती, रसवत्यामपि रसवती=रसिका, रागिणीति यावत्' । इति=एवं, विभावयन्=विचारयन्, तया=दमयन्त्या, प्रहितान्=प्रेषितान्, तान्=पूर्वोक्तान्, पाकविशेषान् आदरेण=सादरम्, आस्वदयामास=बुभुजे ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; खट्टा होते हुए भी यह स्वाद में खट्टा नहीं है, थोड़ा-कसैला होते हुए भी मीठापन को लिए हुए है, एक रस वाला होते हुए भी इसे अनेक रसों से परिपूर्ण कर दिया गया है, अत्यधिक मधुरता के कारण यह अमृत को भी मात करने वाला है । विदर्भराज की यह कन्या (दमयन्ती) रसवती में भी रसवती है अर्थात् पाकक्रिया में भी पूर्णतया प्रवीण है ।" इस प्रकार विचार करते हुए उस दमयन्ती द्वारा भेजे गये पाकविशेषों (विशिष्ट भोज्य-सामग्रियों) का (राजा ने) बड़े आदर के साथ आस्वादन किया अर्थात् चखा ॥

चिन्तितवांश्च—

षड्रसाः किल वैद्येषु भरतेऽष्टौ नवापि वा ।
तया तु पद्मपत्राक्ष्या सर्वमेकरसीकृतम् ॥१४॥

अन्वयः—वैद्येषु षड् रसाः किल, भरते अष्टौ नवापि वा तु तया पद्मपत्राक्ष्या सर्वम् एकरसीकृतम् ॥१४॥

कल्याणी—षडिति । वैद्येषु=वैद्यकशास्त्रेषु, आयुर्वेद इति भावः । षड्रसाः=मधुराम्ललवणकटुकषायतिक्ताख्याः षट्संख्यका रसाः, किलेति वार्तायाम् । भरते=भरतीये, भरतनाट्यशास्त्र इत्यर्थः । अष्टौ नवापि वा रसाः [कथिताः], तु=किन्तु, तया पद्मपत्राक्ष्या=कमलदललोचनया दमयन्त्या, सर्वं=सम्पूर्णम्, एकरसीकृतम्—यदनेकरसं तदेकरसीकृतमिति विरोधः । एकरसीकृतम्—एकः=उत्कृष्टः, रसः=आस्वादः यस्य तदेकरसम्, अनेकरसमेकरसं कृतमित्येकरसीकृतम्=उत्कृष्टास्वादीकृतं, चमत्कृतत्वात् । आत्मविषये एकानुरागीकृतं वेति विरोधपरिहारः । विरोधाभासः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१४॥

ज्योत्स्ना—और सोचा कि—"आयुर्वेद शास्त्र में (मधुर-अम्ल-लवण-कटु-कषाय-तिक्त) छः रस और भरतप्रणीत नाट्यशास्त्र में (शृंगार-हास्य-करुण-रौद्र-वीर-भयानक-बीभत्स-अद्भुत) आठ या (शान्त) नौ रस कहे गये हैं, किन्तु कमल-दलनयना उस दमयन्ती ने तो सभी रसों को (मिलाकर) एक ही रस बना दिया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आशय यह है कि सभी रसों से समन्वित भोज्य सामग्री को दमयन्ती ने एक अद्भुत अलौकिक रस वाला बना दिया है ॥१४॥

तथाहि—

अग्रस्थामिव चेतसः पुर इव व्यालम्बमानां दृशो-
र्जल्पन्तीमिव रुन्धतीमिव मनाङ् मुग्धं हसन्तीमिव ।
निद्रामुद्रितलोचना अपि वयं तां विश्वरूपायितां
पश्यमो बहिरन्तरे निशि दिवा मार्गेषु गेहेषु च ॥१५॥

अन्वयः—चेतसः अग्रस्थाम् इव, दृशोः पुरः व्यालम्बमानाम् इव, जल्पन्तीम् इव, रुन्धतीम् इव, मनाक् मुग्धं हसन्तीम् इव, विश्वरूपायितां तां निद्रामुद्रितलोचना अपि वयं बहिः अन्तरे निशि दिवा मार्गेषु गेहेषु च पश्यामः ॥१५॥

कल्याणी—तथाहीति । अनेनात्मानुभवसंभावनाद्वारेणैकरसत्वमेव व्यनक्ति—अग्रस्थामिति । चेतसः=चित्तस्य, अग्रस्थामिव=अग्रे स्थितामिव, दृशोः=नेत्रयोः, पुरः=अग्रे, व्यालम्बमानामिव=अवतिष्ठमानामिव, जल्पन्तीमिव=किमपि प्रवदन्तीमिव, रुन्धतीमिव=अवरुन्धतीमिव, मनाक्=ईषत्, मुग्धं=मधुरं, हसन्तीमिव=विहसन्तीमिव, विश्वरूपायितां—विश्वं रूपं यस्य स विश्वरूपः=हरिः, स इव आचारदिति विश्वरूपायिता, तां=दमयन्तीं, निद्रामुद्रितलोचना अपि—निद्रया=स्वापेन, मुद्रिते=निमीलिते, लोचने=नेत्रे येषां तथोक्ता अपि, वयं बहिः=बाह्यभागे, अन्तरे=अभ्यन्तरे, निशि=रात्रौ, दिवा=दिवसे, मार्गेषु=वर्त्मसु, गेहेषु च=भवनेषु च [सर्वत्र] पश्यामः=अवलोकयामः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१५॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—चित्त के आगे स्थित के समान, आँखों के सामने उपस्थित के समान, कुछ कहती हुई के समान, कुछ-कुछ मृदु हास करती हुई के समान, संसार के रूपों में व्याप्त विष्णु के समान आचरण करने वाली उस दमयन्ती को निद्रा के कारण आँखों के बन्द हो जाने पर भी हम बाहर-भीतर, रात्रि-दिन, मार्ग में घर में—हरजगह देख रहे हैं" ॥१५॥

एवमवधारयन् अतृप्त इव तया प्रहितेषु स्वहस्तपक्वपाकरसविशेषेषु, असन्तुष्टस्तत्कथायाम्, आचम्य, चन्दनागुरुपरिमलेन पाण्डुरितपाणिपल्लवः; लवङ्गकक्कोलकरम्बिततम्बूलमुत्सर्पिकर्पूरपरिमलमादाय, विकीर्णविविधकुसुमप्रकरहारिणि यक्षकर्दमाच्छच्छटोच्छोटितपर्यन्तभित्तिभागे लम्बितप्रलम्बजाम्बूनदपद्मदाम्नि धूपधूमामोदिनि चूर्णितकर्पूररङ्गरेखाभाजि भोजनान्तरमपरेऽपराह्णविनोदमण्डपे मनाग्विश्रम्य रणरणकाक्रान्तहृदयो दूरदिगन्तालोकनकुतूहलितः सरित्तीरोत्तम्भिताभ्रंलिहसौधस्कन्धभूमिमारुह्य च तस्यामूर्ध्व एव ध्रियमाणमायूरातपत्रयुगलः, सलीलालसपदैरि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्ततः परिक्रामन्, नेदीयसि सरित्सङ्गमाम्भसि मध्याह्नमखिलमवगाहनसुखमनुभूय तीरमुत्तीर्णासु तिमिरशङ्कया कृतदूरचङ्क्रमणैश्चक्रवाकचक्रवालैराकुलमवलोक्यमानासु, पुलिनपांसुविहरणविरामे विकसितविविधवीरुन्धि रोधांसि रदन्तीषु दन्तिपंक्तिषु दत्तदृष्टिः, विरलनलिनीपत्रान्तरालसुप्तोत्थितस्य, किञ्चिदवाञ्चितचटुलचञ्चोः, चरतः चटुलचञ्चरीकिणि विकचकमलवने, राजहंसकुलकलापस्य करिकलभदन्तदण्डपाण्डुबिसकाण्डभङ्गटङ्कारानाकर्णयन्, अपराह्णमज्जनागताभिः कुण्डिनपुरपुरन्ध्रिभिराश्चर्यरसोर्मिमुषितनिमेषैर्निष्कम्पनीलोत्पलपलाशलीलायमानैर्नेत्रपुटैरापीयमानमुखेन्दुद्युतिः; दर्शिततरङ्गभ्रूभङ्ग्या, दूरोच्छलद्बालशफरीच्छलेन विस्फारितविलोचनया, सरित्सङ्गमसलिलाधिदेवतयापि विलोक्यमानरूपसम्पत्तिरिव, क्षणमविरलचलच्चञ्चरीकचक्रचुम्बिताम्बुरुहासु क्रीडाकमलसरसीषु, क्षणमुपान्तपङ्क्तीभूतमञ्जरितसहकारराजिषु स्मरवाजिवाह्यालीषु, क्षणमुत्पतत्पताकापटपल्लवराजितासु भीमभूपालान्तः पुरप्रासादपङ्क्तिषु, क्षणमवकीर्णकुसुमरङ्गावली रम्यासु नगरवीथीषु विश्रान्तविलोचनश्चिरमवतस्थे ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=ईदृशम्, अवधारयन्=विचिन्तयन्; तया=दमयन्त्या, प्रहितेषु=प्रेषितेषु, स्वहस्तपक्वपाकरसविशेषेषु—स्वहस्तेन=आत्मकरेण, पक्वा ये पाकाः=भोज्याः, तेषां रसविशेषेषु अतृप्त इव, तत्कथायां—तस्याः=दमयन्त्याः, कथायां=प्रशंसात्मकचर्चायाम्, असन्तुष्ट इव, आचम्य=आचमनं कृत्वा, चन्दनागुरुपरिमलेन=चन्दनागुरुप्रभृतिगन्धद्रव्यचूर्णेन, पाण्डुरितपाणिपल्लवः=पाण्डुरितः=स्वच्छीकृतः, पाणिपल्लवः=करकिसलयः येन स तथोक्तः, उत्सर्पिकर्पूरपरिमलम्—उत्सर्पी—उत्सर्पति=उद्गच्छति, परितः प्रसरतीत्यर्थः, एवंशीलः कर्पूरपरिमलः=कर्पूरसुगन्धः यस्मात्तत्, लवङ्गकक्कोलकरम्बितताम्बूलम्—लवङ्गेन कक्कोलेन=सुगन्धितफलविशेषेण च ['शीतलचीनी' इति लोके प्रसिद्धेन], करम्बितं=मिश्रितं, ताम्बूलम्, आदाय=गृहीत्वा, विकीर्णविविधकुसुमप्रकरहारिणि— विकीर्णानां=विकचितानां, विविधकुसुमानां=विभिन्नपुष्पाणां, प्रकरेण=समूहेन, हारिणि=मनोहरे, यक्षकर्दमाच्छच्छटोच्छोटितपर्यन्तभित्तिभागे —यक्षकर्दमः=कर्पूरागुरुप्रभृतिभिर्निर्मितः सुगन्धितलेपविशेषः । यथोक्तम्—'कर्पूरागुरुकस्तूरीकक्कोलैर्यक्षकर्दमः'—इत्यमरकोशे । केचित् त्वेवं कथयन्ति —"कुङ्कुमागुरुकस्तूरी कर्पूरं चन्दनं तथा । महासुगन्धमित्युक्तं नामतो यक्षकर्दमः ॥" इति तथोक्तस्य यक्षकर्दमस्य अच्छच्छटा=स्वच्छपुञ्जः, तया—उच्छोटितः=लिप्तः, पर्यन्तभित्तिभागः यस्य तस्मिन्, लम्बितप्रलम्बजाम्बूनदपद्मदामनि—लम्बितानि=लम्बमानानि, प्रलम्बानि=दीर्घाणि, जाम्बूनदपद्मानां=स्वर्णकमलानां, दामानि=मालाः यत्र तस्मिन्, धूपधूमामोदिनि—धूपानां धूमैः आमोदिनि=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुगन्धयुक्ते, चूर्णितकर्पूररङ्गरेखाभाजि=चूर्णितकर्पूरेण रचितशुभ्ररेखोपेते, अपरे—न परः=उत्कृष्टः यस्मात् तस्मिन्, अनुत्तम इत्यर्थः। अपराह्णविनोदमण्डपे भोजनानन्तरं मनाक्=ईषत्, विश्रम्य=विश्रामं कृत्वा, रणरणकाक्रान्तहृदयः—रणरणकः=दमयन्ती-विषयोत्कण्ठा, तेन आक्रान्तं=व्याप्तं, हृदयं=मनः यस्य स तथोक्तः, दूरदिगन्तालोकन-कुतूहलितः—दूरदिगन्तालोकने कुतूहलितः=कुतूहलयुक्तः, सरित्तीरोत्तम्भिताभ्रंलिह-सौधस्कन्धभूमिं—सरितः=नद्याः, तीरे=कूले, उत्तम्भितस्य=तत्कालरोपितस्य जङ्गमस्य चित्रकूटाख्यस्य, अभ्रंलिहसौधस्य=गगनचुम्बिप्रासादस्य, स्कन्धभूमिं=शिखरप्रदेशम्, आरुह्य=अधिरुह्य च, तस्यां=भूमौ, ऊर्ध्वं एव=उपर्येव, ध्रियमाणमायूरातपत्रयुगलः—ध्रियमाणं=स्थाप्यमानं, मायूरं=मयूरपिच्छनिर्मितम्, आतपत्रयुगलं=छत्रद्वयं येन स तथोक्तः, सलीलालसपदैः—सलीलं=सविलासम्, अलसपदैः=मन्दचरण-विन्यासैः, इतस्ततः=सर्वतः, परिक्रामन्=परिभ्रमन्, नेदीयसि=निकटतरे, सरित्संग-माम्भसि=नदीसंगमजले, अखिलं=समस्तं, मध्याह्नं ['कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे' इति द्वितीया], अवगाहनसुखं=मज्जनानन्दम्, अनुभूय=अनुभवं कृत्वा, तीरमुत्तीर्णासु=तटं पारङ्गतासु, तिमिरशङ्कया=निशासूचकान्धकारभ्रान्त्या, चक्रवाकानां गजेषु तिमिर-भ्रान्त्या भ्रान्तिमान् अलङ्कारः। कृतदूरचङ्क्रमणैः—कृतं=विहितं, दूरम्=अत्यन्तं, चङ्क्रमणं=वक्रगत्या भ्रमणं यैः तैः, चक्रवाकचक्रवालैः=चक्रवाकमण्डलैः, आकुलं=व्याकुलतापूर्वम्, अवलोक्यमानासु=दृश्यमानासु, पुलिनपांसुविहरणविरामे—पुलिने=तटे, पांसुविहरणं=धूलीस्नानमित्यर्थः, तस्य विरामे=अवसाने, विकसितविविधवी-रुन्धि—विकसिताः=विकचिताः, विविधाः=अनेके, वीरुधः=लताः येषु तथा-विधानि, रोधांसि=तटानि, रदन्तीषु=मृद्नन्तीषु, दन्तिपङ्क्तिषु=गजश्रेणिषु, दत्तदृष्टिः—दत्ता=न्यस्ता, दृष्टिः येन स तथोक्तः, विरलनलिनीपत्रान्तरालसुप्तो-त्थितस्य—विरलाः=नातिघनीभूताः, या नलिन्यः=कमलिन्यः, तासां पत्रान्तराले=पत्रमध्ये, सुप्तोत्थितः=आदौ सुप्तः पश्चादुत्थितः तस्य, किञ्चित्=किमपि, अवाञ्चितचटुलचञ्चोः—अवाञ्चिता=अवनमिता, चटुला=चपला, चञ्चुर्येन तस्य; चटुलचञ्चरीकिणि=चपलभ्रमरयुक्ते, विकचकमलवने=विकसितपद्मकानने, चरतः=सञ्चरतः, राजहंसकुलकलापस्य=राजहंसवृन्दस्य, करिकलभदन्तदण्डपाण्डु-बिसकाण्डभङ्गटङ्कारान्—करिकलभानां=गजशावकानां, दन्तदण्डवत् पाण्डुः=शुभ्र-कान्तिः यः बिसकाण्डः=कमलदण्डः; तस्य भङ्गः=भञ्जनं, तस्य टंकारान्=ध्वनीन्, आकर्णयन्=शृण्वन्, अपराह्णमज्जनागताभिः—अपराह्णे=सायङ्काले, मज्जनाय=स्नानाय, आगताभिः=आयाताभिः, कुण्डिनपुरपुरंध्रिभिः—कुण्डिनपुरस्य=कुण्डिन-नगरस्य, पुरन्ध्रिभिः=सुन्दरीभिः, आश्चर्यरसोर्मिमुषितनिमेषैः—आश्चर्यरसस्य उर्मिभिः=तरङ्गैः, मुषितः=अपहृतः, निमेषः=पक्ष्मं येषां तथाविधैः, निष्कम्पनी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोत्पलपलाशलीलायमानैः=स्थिरनीलकमलदलानां लीलाभिर्विलासैरिवाचरद्भिः, निष्कम्पनीलकमलदलसदृशैरिति यावत्। नेत्रपुटैः–नेत्राण्येव पुटानि=पत्रपुटानि तैः, आपीयमानमुखेन्दुद्युतिः–आपीयमाना मुखेन्दुद्युतिः=मुखचन्द्रकान्तिः यस्य स तथोक्तः, कुण्डिनस्त्रीभिर्निमेषनयनैर्दृश्यमानमुखेन्दुश्रीरिति भावः। दर्शिततरङ्गभ्रूभङ्ग्या—दर्शिता=प्रकाशिता तरङ्ग एव भ्रूभङ्गिर्यया तया, दूरोच्छलद्बालशफरीच्छलेन—दूरम्=अत्यन्तम्, उच्छलन्त्यः या बालशफर्यः=लघुमीनविशेषाः, तासां छलेन=व्याजेन, विस्फारितविलोचनया–विस्फारिते=विस्तारिते, विलोचने=नयने यया तया, सरित्सङ्गमसलिलाधिदेवतयापि=नदीसङ्गमजलाधिष्ठातृदेवतयापि, विलोक्यमानरूपसम्पत्तिरिव—विलोक्यमाना=वीक्ष्यमाणा, रूपसम्पत्तिर्यस्य स तथोक्त इव, क्षणम्=एकम्, अविरलचलच्चञ्चरीकचक्रचुम्बिताम्बुरुहासु—अविरलं=निर्बाधं, चलता=भ्रमता, चञ्चरीकचक्रेण=मधुपमण्डलेन, चुम्बितानि=आलिङ्गितानि, अम्बुरुहाणि=कमलानि यासां तथाविधासु, क्रीडाकमलसरसीषु=क्रीडाकमलवापीषु, क्षणम्=निमिषमेकम्, उपान्तपङ्क्तीभूतमञ्जरितसहकारराजिषु—उपान्ते=नगरसमीपे, पङ्क्तीभूताः=श्रेणीभूताः, मञ्जरिताः=मञ्जरीयुक्ताश्च ये सहकाराः=आम्रतरवः, तेषां राजिषु=श्रेणिषु, स्मरवाजिबाह्यालीषु—स्मरः=कामदेवः, स एव वाजी=अश्वः, तस्य बाह्यालीषु=विहारोपयुक्तस्थलीषु, क्षणं=निमिषमेकम्, उत्पतत्पताकापटपल्लवराजितासु—उत्पतद्भिः पताकानां पटपल्लवैः राजितासु=शोभितासु, भीमभूपालस्य=भीमनृपतेः, अन्तःपुरप्रासादपङ्क्तिषु=अवरोधभवनपङ्क्तिषु, क्षणं=निमिषमेकम्, अवकीर्णकुसुमरङ्गावलीरम्यासु—अवकीर्णानि=परिक्षिप्तानि, कुसुमान्येव रङ्गावली=विचित्रवर्णकुसुमसज्जा, तया रम्यासु=रमणीयासु, कुसुमानां हिङ्गुलहरितालादिविचित्रवर्णकवच्चित्रहेतुत्वादिति भावः। नगरवीथीषु=पुरमार्गेषु, विश्रान्तविलोचनः—विश्रान्ते=दर्शनेन लब्धविश्रमे, विलोचने=नयने यस्य स नलः, चिरं=बहुकालम्, अवतस्थे=अवस्थितो बभूव ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार विचार करते हुए उस दमयन्ती के द्वारा प्रेषित एवं उसी के द्वारा अपने हाथों से पकाये गये भोज्य पदार्थों के अलौकिक रसों से अतृप्त-सा होकर, उस दमयन्ती की प्रशंसात्मक चर्चा से भी असन्तुष्ट सा ही रहकर, आचमन करके, चन्दन-अगुरु आदि सुगन्धित द्रव्यों के चूर्ण द्वारा पल्लवसदृश हाथों को पाण्डुरित अर्थात् स्वच्छ कर, (राजा नल ने) चारो ओर फैलते हुए कर्पूर की सुगन्ध वाले लवंग, शीतलचीनी-मिश्रित ताम्बूल (पान) को ग्रहण किया। तत्पश्चात् यक्षकर्दम की स्वच्छ छटा से लिप्त सम्पूर्ण भित्ति भाग वाले, लटकती हुई स्वर्णकमल की लम्बी मालाओं वाले, धूप के धूमों से सुवासित, चूर्ण किये गये कर्पूर से बनाई गई सफेद रेखाओं वाले, अनुपम मध्याह्नकालीन विनोदमण्डप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में थोड़ा विश्राम कर (दमयन्तीविषयक) उत्कण्ठा से आक्रान्त हृदय वाला (राजा) सुदूर दिशाओं में देखने के कौतूहल से नदीतट पर बने गगनचुम्बी प्रासाद के शिखर भाग पर चढ़कर, जिसके ऊपर ही मयूरपिच्छनिर्मित दो छत्र लगे हुए थे, लीलालपूर्वक धीरे-धीरे इधर-उधर घूमता हुआ; समीप में ही नदियों के संगम-जल में मध्याह्न काल में पूर्ण स्नान के आनन्द का अनुभव कर तट पर निकले हुए, अन्धकार की भ्रान्ति से दूर से ही चक्कर काटते चक्रवाकों द्वारा व्याकुलतापूर्वक देखे जाते हुए, तट पर धूलिस्नान के पश्चात् अनेकों विकसित तटवर्ती लताओं का मर्दन करते हुए हाथियों को एकटक देखता हुआ, कहीं-कहीं स्थित कमलिनी-पत्रों के मध्य में सोकर उठे एवं कुछ झुके हुए चञ्चल चोंच वाले चपल भ्रमरों से युक्त कमलवन में सञ्चरण करते हुए राजहंसों द्वारा हाथियों के बच्चों के दाँतों के समान शुभ्र कान्ति वाले कमलदण्डों को तोड़ने की ध्वनियों को सुनता हुआ, अपराह्न में स्नान के लिए आई हुई कुण्डिनपुर की सुन्दरियों से आश्चर्यरस की लहरियों द्वारा चुराई गयी पलकों वाले, कम्पनरहित नीलकमल-दलसदृश नयनरूपी पत्रपुटों द्वारा मुखचन्द्र की कान्ति का पान किया जाता हुआ; तरंगरूपी भ्रूभङ्गिमा को प्रदर्शित कर दूर उछलती हुई छोटी मछलियों के बहाने से फैलाई हुई नेत्रों वाली नदीसंगम की जलाधिष्ठात्री देवी के द्वारा भी अपनी रूपसम्पदा को मानों देखा जाता हुआ राजा नल क्षण भर के लिए निर्बाध भ्रमण कर रहे भ्रमरों द्वारा चुम्बित कमलों वाले क्रीडाकमलसरोवरों में, क्षण भर के लिए पंक्तिबद्ध और मञ्जरीयुक्त आम्रवृक्षों की कतारों के मध्य कामदेवरूपी अश्व के विहार हेतु उपयुक्त स्थलों में, क्षण भर के लिए बिखेरी गई विभिन्न रंग वाले पुष्पों की सज्जा से मनोहर नगर की गलियों में (अपने) नयनों को विश्राम देता हुआ बहुत देर तक वहीं खड़ा रहा ॥

चिन्तितवांश्च -

'नोद्याने न तरङ्गिणीपरिसरे नो रम्यहर्म्ये न वा
पुष्प्यत्पुष्करगर्भगुञ्जदलिषु क्रीडातडागेष्वपि ।
वात्याघूर्णितशीर्णपर्णतरला दृष्टिर्मदीयाधुना
लुभ्यल्लुब्धकभीषितेव हरिणी श्रान्तापि विश्राम्यति ॥१६॥

अन्वयः—वात्या घूर्णितशीर्णपर्णतरला मदीया दृष्टिः अधुना लुभ्यल्लुब्धकभीषिता हरिणी इव, श्रान्ता अपि न उद्याने, न तरङ्गिणीपरिसरे, नो रम्यहर्म्ये, न वा पुष्प्यत्पुष्करगर्भगुञ्जदलिषु क्रीडातडागेषु अपि विश्राम्यति ॥१६॥

कल्याणी—नोद्यान इति । वात्या=झञ्झा तया, घूर्णितशीर्णपर्णतरला—घूर्णितं=चक्रायितं, शीर्णपर्णमिव=शुष्कपत्रमिव, तरला=चञ्चला, मदीया=मम;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दृष्टिः=दृक्, अधुना=सम्प्रति, लुभ्यल्लुब्धकभीषिता—लुभ्यन्=लोभग्रस्तः, यः लुब्धकः=व्याधः, तस्मात् भीषिता=भीता, हरिणीव=मृगीव, श्रान्तापि=खेदापि, न=नैव, उद्याने=उपवने, न=नैव, तरङ्गिणीपरिसरे=नदीतटे, नो=न हि, रम्यहर्म्ये=रमणीयप्रासादे, न वा=नैव, पुष्प्यत्पुष्करगर्भगुञ्जदलिषु--पुष्प्यतां=विकसतां, पुष्कराणां=कमलानां, गर्भे=कोशे, गुञ्जन्तः=गुञ्जारवं कुर्वन्तः, अलयः=भ्रमराः यत्र तथाविधेषु, क्रीडातडागेष्वपि=विहारसरसीष्वपि, विश्राम्यति=विश्रब्धं तिष्ठति। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्। उपमाऽलङ्कारः ॥१६॥

ज्योत्स्ना—और सोचा कि—झंझावात के द्वारा घुमाये गये सूखे पत्ते के समान चञ्चल मेरी नजरें इस समय लुब्ध व्याध से भयभीत हिरणी के समान थकी हुई होने पर भी न तो उद्यान में, न ही नदी-तट पर, न तो रमणीय प्रासाद में और न ही खिलते हुए कमलों के भीतर गुञ्जार करते भ्रमरों वाले क्रीडा-सरोवरों में ही विश्राम पा रही हैं ॥१६॥

अपि च—

न गम्यो मन्त्राणां न च भवति भैषज्यविषयो
न चापि प्रध्वंसं व्रजति विहितैः शान्तिकशतैः।
भ्रमावेशादङ्गे कमपि विदधद्भङ्गमसमं
स्मरापस्मारोऽयं भ्रमयति दृशं घूर्णयति च ॥१७॥

अन्वयः—अयं स्मरापस्मारः न मन्त्राणां गम्यः, न च भैषज्यविषयः भवति, न च अपि विहितैः शान्तिकशतैः प्रध्वंसं व्रजति। भ्रमावेशात् अङ्गे कमपि असमं भङ्गं विदधत् दृशं भ्रमयति घूर्णयति च ॥१७॥

कल्याणी—न गम्य इति। अयम्=एषः, स्मरापस्मारः—स्मरः=कामः, स एव अपस्मारः=रोगविशेषः, न मन्त्राणां गम्यः=गन्तुं योग्यः, सुगम इत्यर्थः, तत्र मन्त्राणामकिञ्चित्करत्वादिति भावः। न च=न हि, भैषज्यविषयः—भैषज्यस्य=औषधस्य, विषयः भवति, न हि तत्रौषधप्रयोगः किञ्चित्कर इति भावः। न चापि विहितैः=कृतैः, शान्तिकशतैः=परःशतैः शान्तिपाठैः, प्रध्वंसं=विनाशं, व्रजति=गच्छति। भ्रमावेशात्—भ्रमः=दमयन्तीलाभविषयः सन्देहः घूर्णनं च, तस्य आवेशात्=अतिरेकात्, अङ्गे=शरीरे, कमपि=किञ्चिदपि, असमं=विषमम्, असह्यमिति यावत्। भङ्गं=व्यथां, विदधत्=कुर्वन्, दृशं=नेत्रं, भ्रमयति=भ्रान्तं करोति, घूर्णयति च=मूर्च्छयति च। अत्र स्मरापस्मार इति रूपकम्। तत्र स्मरापस्मारस्य साधारणापस्मारापेक्षया मन्त्रागम्यत्वादिवैशिष्ट्यप्रतिपादनाद् व्यतिरेकालङ्कारश्च। तयोरङ्गाङ्गिभावेन संकरः। मन्दाक्रान्ता वृत्तम् ॥१७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी—यह कामरूपी अपस्मार न तो मन्त्रों से समाप्त होने लायक है, न तो औषधि का विषय है और न ही किये गये सैकड़ों शान्तिपाठों से विनष्ट होने वाला है। (दमयन्तीलाभविषयक) भ्रम के अतिरेक से (यह कामरूपी अपस्मार) अंग में अर्थात् शरीर में कुछ असह्य वेदना (उत्पन्न) करते हुए नेत्रों को भ्रमित कर देता है अर्थात् आँखों में चक्कर ला देता है और मूर्च्छित कर देता है।

विमर्श—अपस्मार को जनसामान्य में मिर्गी के नाम से जाना जाता है ॥१७॥

किञ्चान्यदद्भुतम् —

पौष्पाः पञ्चशराः शरासनमपि ज्याशून्यमिक्षोर्लता
जेतव्यं जगतां त्रयं प्रतिदिनं जेताप्यनङ्गः किल।
इत्याश्चर्यपरम्पराघटनया चेतश्चमत्कारयन्
व्यापारः सुतरां विचारपदवीवन्ध्यो विधेर्वन्द्यताम् ॥१८॥

अन्वयः—पौष्पाः पञ्चशराः शरासनम् अपि ज्याशून्यम् इक्षोः लता जेतव्यं जगतां त्रयं प्रतिदिनम् जेता अपि किल अनङ्गः इति आश्चर्यपरम्पराघटनया चेतः चमत्कारयन् विधेः सुतरां विचारपदवीवन्ध्यः व्यापारः वन्द्यताम् ॥१८॥

कल्याणी—पौष्पा इति। पौष्पाः=पुष्पमयाः, पञ्चशराः—पञ्चैव शराः, शरासनं=धनुरपि, ज्याशून्यं=प्रत्यञ्चाविरहितम्, इक्षोर्लता च=इक्षुलतात्मकमित्यर्थः। जेतव्यं=जयनीयं, त्रयं=लोकत्रयं, तदपि न हि कस्मिंश्चिदेकदिने, अपि तु प्रतिदिनम्, जेतापि। किलेति वार्तायाम्, अनङ्गः=अङ्गविरहितः कामदेवश्च। इति=तादृशी, आश्चर्यपरम्पराघटनया—आश्चर्यपरम्परा=आश्चर्यसन्ततिः, तस्या घटनया=योजनया, चेतः=हृदयं, चमत्कारयन्=चमत्कृतं कुर्वन्, विधेः=विधातुः, सुतराम्=अत्यन्तं, विचारपदवीवन्ध्यः—विचारपदवी=विचारपदं, तत्र वन्ध्यः=निष्फलः, अचिन्त्य इति भावः। व्यापारः=कार्यं, वन्द्यतां=नमस्क्रियताम्, कर्मणि लोट्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥१८॥

ज्योत्स्ना—और भी आश्चर्यजनक बात यह है कि—पुष्पमय पाँच ही बाणों वाला धनुष भी ज्या अर्थात् प्रत्यञ्चा से रहित तथा ईक्षुलता—(गन्ने की डंठल)-रूप है। जीतने के लिए तीनों लोक है और जीतने वाला प्रतिदिन अंगरहित (कामदेव) है। इस प्रकार की एक पर एक आश्चर्योत्पादक संघटना से हृदय को चमत्कृत करता हुआ ब्रह्मा का विचार-मार्ग से पूर्णतया शून्य अर्थात् अत्यन्त अचिन्त्य व्यापार नमस्करणीय है ॥१८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवमनेकविधवितर्कतरलितहृदये कुण्डिननगरवीथीविश्रान्तदृशि शनैरुद्वेल्लितमल्लिकाक्षपल्लवस्य मृदुतरतरङ्गितसरितः कमलवनवायोः समर्पितवपुषि निषधभूभुजि, भुजगनिर्मोकधवले वसानो वाससी, रणन्मणिकङ्कणैराकूर्परं पूरितप्रकोष्ठः श्रीखण्डपिण्डपाण्डुरिततनुरपूर्व इव पर्वतकः प्रतीहारसूचितः प्रविवेश ॥

कल्याणी—एवमिति । एवम्=इत्थम्, अनेकविधवितर्कतरलितहृदये—अनेकविधेन=विविधेन, वितर्केण=तर्कवितर्केण, तरलितं=तरङ्गितं, हृदयं=चेतः यस्य तस्मिन्, कुण्डिननगरवीथीविश्रान्तदृशि—कुण्डिननगरस्य वीथीषु=मार्गेषु, विश्रान्ते=लब्धविश्रामे, दृशौ=नेत्रे यस्य तस्मिन्, शनैः=मन्दम्, उद्वेल्लितमल्लिकाक्षपल्लवस्य—उद्वेल्लिताः=कम्पिताः, उद्वेजिता इत्यर्थः । मल्लिकाक्षपल्लवस्य—पल्लवाः स्वेच्छाचारिणश्च ते मल्लिकाक्षाश्च=हंसविशेषाश्च येन तस्य तथोक्तस्य, 'मल्लिकाक्षपल्लवा' इत्यत्र 'मयूरव्यंसकादश्च' इति समासे मल्लिकाक्षशब्दस्य पूर्वनिपातः । मृदुतरतरङ्गितसरितः—मृदुतरं=मन्दतरं, तरङ्गिता=कम्पिता, सरित्=नदी येन तस्य, कमलवनवायोः=अम्भोजवनपवनस्य, समर्पितवपुषि—समर्पितम्=अर्पितं, वपुः=देहः येन तस्मिन्, निषधभूभुजि=निषधेश्वरे नले, भुजगनिर्मोकधवले—भुजगनिर्मोकवद्=सर्पकेचुलवद्, धवले=शुभ्रे, वाससी=वस्त्रे, वसानः=परिदधानः, रणन्मणिकङ्कणैः—रणद्भिः=स्वनद्भिः, मणिकङ्कणैः=मणिवलयैः, आकूर्परं=कूर्परमभिव्याप्य, पूरितप्रकोष्ठः—पूरितः=भरितः, प्रकोष्ठः=मणिबन्धादारभ्य कूर्परपर्यन्तभागः यस्य स तथोक्तः । श्रीखण्डपिण्डपाण्डुरिततनुः—श्रीखण्डपिण्डेन=चन्दनपिण्डलेपेन, पाण्डुरिता=शुभ्रवर्णीकृता, तनुः=शरीरं यस्य स तथोक्तः, अतएव अपूर्व इव=विलक्षण इव, पर्वतकः=तदाख्यः वामनकः, प्रतीहारसूचितः—प्रतीहारेण=दौवारिकेण, सूचितः=विज्ञापितः सन्, प्रविवेश=प्राविशत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार बहुविध तर्क-वितर्कों से तरलित हृदय, कुण्डिनपुर की गलियों में दृष्टि को विश्राम दे रहे निषधराज नल द्वारा मल्लिकाक्षनामक विशिष्ट जाति के हंसों के पंखों को धीरे-धीरे कम्पित करने वाली एवं नदी को अतिशय कोमलतापूर्वक तरंगित करने वाली कमलवन की वायु के लिए (अपने) शरीर को समर्पित कर दिये जाने पर; साँप की केंचुली के समान शुभ्र वस्त्रयुगल धारण किये, बजते हुए मणिजटित कंकणों से प्रकोष्ठ (मणिबन्ध) से लेकर कूर्पर (केहुँनी) तक भरे हुए, चन्दनपिण्ड के लेप से शुभ्रवर्ण शरीर वाले होने के कारण विलक्षण के समान प्रतीत हो रहे पर्वतकनामक बौने ने प्रतिहार से सूचित होकर अर्थात् अनुमति प्राप्त कर प्रवेश किया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रविश्य च प्रकटितप्रणयप्रणामः प्रभुणा सविस्मयस्मितहूङ्कारेणाभिभाषितः स्तोकोन्नमितभ्रूसंज्ञया विज्ञापयितुमारेभे ॥

कल्याणी—प्रविश्य चेति। प्रविश्य च=प्रवेशं कृत्वा च, प्रकटितप्रणयप्रणामः—प्रकटितः=प्रदर्शितः, प्रणयः=प्रेम, येन तादृशो प्रणामः यस्य सः, सविस्मयस्मितहूङ्कारेण—विस्मयेन स्मितेन च सह हूङ्कारः यस्य तेन, प्रभुणा=स्वामिना नलेन, अभिभाषितः=किमप्युक्तः, स्तोकोन्नमितभ्रूसंज्ञया—स्तोकम्=ईषत्, उन्नमिते=उत्थापिते, भ्रुवौ तयोः संज्ञया=सङ्केतेन, विज्ञापयितुं=निवेदयितुम्, आरेभे=प्रारभत ॥

ज्योत्स्ना—और प्रवेश कर प्रेमपूर्वक प्रणाम प्रदर्शित कर, आश्चर्य के साथ-साथ मन्द हासपूर्वक हुंकार के साथ महाराज द्वारा कुछ कहे जाने पर थोड़ी उठी हुई भौंहों के संकेत से निवेदन करना प्रारम्भ किया अर्थात् बोलना शुरु किया ॥

'देव ! श्रूयताम् । इतो गतवानहम् । अनन्तरमतिशयितस्वर्गान्मार्गाननेकविधचर्चाचारूणि चत्वराणि विलङ्घ्य, विहितमनःप्रसादान् प्रासादानवलोकयन्, इतस्ततः सस्मितस्मरालसचलद्वेलाविलासिनीविकारकूणितकोणेक्षणाक्षिप्तहृदयः, सेवाविरामनिःसरत्सामन्तसंकुलम्, अविरलगलन्मधुमञ्जरीपुञ्जपिञ्जरितसरससहकारवननिकुञ्जपुञ्जितपुंस्कोकिलकुलकलरवरमणीयोद्यानमालावलयितम्, उपान्तकृतमणिमन्दुरामन्दिरनिबद्धस्निग्धपोषणोत्कर्षहर्षह्रेषितराजवल्लभतुरङ्गम्, उत्तुङ्गशृङ्गसङ्गतमङ्गलध्वजम्, अङ्गणोत्सङ्गरङ्गत्क्रीडाकुरङ्गविहङ्गम्, अभङ्गाङ्गरक्षिरक्षितकक्षान्तररममाणराजकुमारकम्, अतिसूक्ष्ममुक्ताफलरचिततरङ्गरम्यरङ्गरेखाराजिराजिताजिरं राजभवनमविशम् ॥

कल्याणी—देवेति। देव !=स्वामिन् !, श्रूयताम्=आकर्ण्यताम् । इतः=अस्मात्, स्थानात्, गतवान्=प्रस्थितवान्, अहं=पर्वतकः । अनन्तरं=तस्मात्परतः, अतिशयितस्वर्गात्—अतिशयितः=निराकृतः, स्वर्गः=देवलोकः यैस्तथाविधान्, मार्गान्=वर्त्मनि; अनेकविधचर्चाचारूणि—अनेकविधा=बहुविधा, या चर्चा=गन्धोदकसेचनपुष्पप्रकिरणादिलक्षणा, अथ च प्रस्तावान्नलप्रवेशादिलक्षणा वार्ता, तया चारूणि=मनोहारीणि, चत्वराणि=चतुष्पथानि, विलङ्घ्य=अतिक्रम्य, विहितमनःप्रसादान्—विहिताः=कृतः, मनसः=चित्तस्य, प्रसादः=प्रसन्नता यैस्तथाविधान्, प्रासादान्=अट्टालिकान्, अवलोकयन्=वीक्षमाणः, इतस्ततः सस्मितस्मरालसचलद्वेलाविलासिनीविकारकूणितकोणेक्षणाक्षिप्तहृदयः—सस्मितं=मन्दहासपूर्वं, स्मरालसाः=कामवशादालस्ययुक्ताः;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चलन्त्यः=भ्रमन्त्यः, याः वेलाविलासिन्यः=वाराङ्गनाः, तासां विकारः=कामभावना, तेन कूणितः=मुद्रितः, पूर्णं इत्यर्थः। कोणः=उपान्तभागः येषां तथाविधैः, ईक्षणैः=नेत्रैः, आक्षिप्तं=हृतं, हृदयं=मनः यस्य तथाविधोऽहम्, सेवाविरामनिःसरत्सामन्तसंकुलं—सेवाविरामे=सेवाकार्यसमाप्तौ, निःसरद्भिः=निर्गच्छद्भिः, सामन्तैः=सामन्तजनैः, संकुलं=व्याप्तम्, अविरलगलन्मधुमञ्जरीपुञ्जपिञ्जरितसरससहकारवननिकुञ्जपुञ्जितपुंस्कोकिलकुलकलरवरमणीयोद्यानमालावलयितम्—अविरलं=निरन्तरं, गलत्=च्यवमानं, मधु=मकरन्दः, येभ्यस्तथाविधमञ्जरीपुञ्जैः पिञ्जरितं=मनाग्ररक्तिमोपेतपीतवर्णीकृतं, सरससहकाराणां=सरसरसालानां, यद् वनं=काननं; तस्य निकुञ्जेषु पुञ्जितं=समवेतं, यत् पुंस्कोकिलानां=पिकानां, कुलं=वृन्दं, तस्य कलरवेण=मधुरध्वनिना, रमणीया=मनोज्ञा, या उद्यानमाला=उद्यानश्रेणि, तया वलयितं=परिवृत्तम्, उपान्तकृतमणिमन्दुरामन्दिरनिबद्धस्निग्धपोषणोत्कर्षहर्षह्रेषितराजवल्लभतुरङ्गम्—उपान्ते=समीपप्रदेशे, कृतेषु=विरचितेषु, मणीनां=मणिनिर्मितानां, मन्दुरामन्दिरेषु=अश्वशालाकक्षेषु, निबद्धाः=बद्धाः, स्निग्धाः=मनोहराः, पोषणस्योत्कर्षात् यः हर्षः, तेन ह्रेषिताः=कृतह्रेषारवाः, राजवल्लभाः=नृपप्रियाः, तुरंगाः=अश्वाः यस्य यत्र वा तत्, उत्तुङ्गशृङ्गसङ्गतमङ्गलध्वजम्—उत्तुङ्गशृङ्गैः=उन्नतशिखरैः, संगताः=संलग्नाः, मङ्गलध्वजा यस्य तत्, अङ्गणोत्सङ्गरङ्गत्क्रीडाकुरङ्गविहङ्गम्—अङ्गणस्य=प्राङ्गणस्य, उत्सङ्गे=अङ्के, मध्य इति यावत्। रङ्गन्तः=विहरन्तः, क्रीडाकुरङ्गाः=क्रीडामृगाः, विहङ्गाश्च=पक्षिणश्च यस्य तत्, अभङ्गाङ्गरक्षिरक्षितकक्षान्तररममाणराजकुमारकम्—अभङ्गं=निर्बाधम्, अङ्गरक्षिभिः=अङ्गरक्षकैः, रक्षितः=संरक्षितः, कक्षान्तरे=अन्यस्मिन् कक्षे, रममाणः=क्रीडन्, राजकुमारः यस्य तत्, अतिसूक्ष्ममुक्ताफलरचिततरङ्गरम्यरङ्गरेखाराजिताजिरम्—अतिसूक्ष्मैः मुक्ताफलैः=मौक्तिकैः, रचिताभिः=निर्मिताभिः, तरङ्गवद् रम्याभिः=रमणीयाभिः, रङ्गरेखाराजिभिः—रङ्गरेखाः=चतुरस्राकृतिमङ्गलचिह्नविशेषाः तासां राजिभिः=पङ्क्तिभिः, राजितं=शोभितम्, अजिरं=प्राङ्गणं यस्य तथाविधं, राजभवनं=राजप्रासादम्, अविशं=प्रविष्टोऽभवम्॥

ज्योत्स्ना—हे प्रभो! सुनें, यहाँ से मैं गया। उसके बाद स्वर्ग को भी अतिक्रमित (मात) करने वाले मार्गों एवं अनेक प्रकार के सुगन्धों से सुगन्धित जल द्वारा सिञ्चित और बिखेरे गये पुष्पों अथवा (प्रस्तावित नल-प्रवेशरूप) विविध चर्चाओं के कारण मनोहर चतुष्पथों (चौराहों) को लाँघ कर अर्थात् पार कर मन को प्रसन्न कर देने वाले प्रासादों को देखते हुए, काम के वशीभूत हो आलस्य के साथ मधुर मुस्कानपूर्वक इधर-उधर सञ्चरण करती हुई वारांगनाओं की कामद्योतक तिरछी नजरों से आकृष्ट हृदय वाला (मैं) सेवाकार्य की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाप्ति पर बाहर निकल रहे सामन्तों से व्याप्त (भरे हुए), निरन्तर चू रहे मकरन्द वाले मञ्जरीपुञ्जों के द्वारा पिञ्जरित (थोड़ी लालिमा लिए हुए पीत वर्ण वाले) सरस रसालवन के कुञ्जों में एकत्रित कोकिलों के कलरव (मधुर ध्वनि) के कारण रमणीय उद्यानमालाओं से घिरे, समीप में ही मणियों से निर्मित अश्व-शालाओं (घुड़शालों) में बँधे हुए मनोहर एवं पालन-पोषण की उत्कृष्टता के कारण हिनहिनाते हुए राजाओं के लिए अत्यन्त प्रिय अश्वों, उच्च शिखरों पर लगाये गये मांगलिक ध्वजों, आँगन के मध्य में विचरण करते लीलामृगों एवं पक्षियों, पूर्ण रूप से सुरक्षित एक दूसरे कक्ष में विहार करते हुए राजकुमार और अत्यन्त सूक्ष्म मुक्ताफलों (मौक्तिकों) से निर्मित तरंगाकृतियों के समान रमणीय रंगरेखाओं (चौकोर आकार के मांगलिक चिह्नों) की पंक्तियों से सुशोभित आँगन वाले राज-भवन में प्रविष्ट हुआ ॥

अतिमनोहारिणि यत्र सुपुष्करमालानि क्रीडावापीपपयांसि नागयूथं च, सारवाणि लीलोद्यानसारसमिथुनानि सेवककविवृन्दं च, विलम्बितानि काञ्चनकुङ्कुमदामानि गीतं च, अनलसङ्गानि लक्षप्रदीपवर्तिमुखानि प्रेक्षणकं च ॥

कल्याणी—अतीति। अतिमनोहारिणि=समधिकरमणीये, यत्र=यस्मिन् राजभवने, सुपुष्करमालानि—सुपुष्कराणां=सुपद्मानां, माला=श्रेणयः येषु तथाविधानि, क्रीडावापीपयांसि=क्रीडावापीनां जलानि, अथ च [सुपुष्करम्-आलानि] सुष्ठु पुष्करं=शुण्डाग्रं यस्य तत्तथोक्तम्, आलानम्=अर्गलनस्तम्भोऽस्यास्तीत्यालानि, आलानयुक्तं नागयूथं=करिवृन्दं [वर्तते]। सारवाणि—सह आरवैः=शब्दैरिति सारवाणि, शब्दायमानानीत्यर्थः। लीलोद्यानसारसमिथुनानि—लीलोद्याने=क्रीडोद्याने, सारसमिथुनानि=सारसपक्षियुगलानि, अथ च [सार-वाणि] सारा=उत्कृष्टा, वाणी यस्य तत् सारवाणि, सेवककविवृन्दम्=आश्रितकविमण्डलम्, विलम्बितानि=विशेषेण लम्बायमानीकृतानि, काञ्चनकुङ्कुमदामानि=सुवर्णकुङ्कुममालाः, अथ च [विलम्बि-तानि] विलम्बोऽस्त्यस्मिन्निति विलम्बि=स्वरकृतविलम्बोपेतम्, तानोऽस्त्यस्मिन्निति तानि=तानोपेतं गीतम्, अनलसङ्गानि—अनलेन=ज्वालालक्षणेन, सङ्गः=समन्वितः येषां तानि, लक्षप्रदीपानां=शतसहस्रसंख्यकप्रदीपानां, वर्तिमुखानि, अथ च [अनलसम्-गानि] नालसमित्यनालसम्=ओजस्वि; उच्चैः स्थाने गीयमा-नत्वादिति भावः। गानमस्त्यस्मिन्निति गानि=गीतोपेतम्, प्रेक्षणकं=नाटकम्। लक्ष्यसंख्यद्रव्यपतीनां हि गृहेषु लक्षं दीपाः ज्वाल्यन्त इति प्रसिद्धिः। अत्र प्रथमैक-वचनबहुवचनयोः श्लेषः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—अत्यधिक रमणीय जिस राजभवन में सुन्दर पुष्करों (कमलों) की पंक्तियों से समन्वित क्रीडा-सरोवरों के जल तथा सुन्दर पुष्कर (शुण्डाग्र भाग) और आलान (बन्धन-स्तम्भ) से युक्त हाथियों का समूह है, क्रीडोद्यानों में सारव (शब्दायमान) सारसों की जोडियाँ तथा सार-वाणी (उत्कृष्ट वाणी वाले) राजाश्रित कवियों का समुदाय है, विलम्बित (विशेष प्रकार से लटकाई गई) सुवर्णकुंकुम की मालायें तथा विलम्बि (मन्थर स्वर से समन्वित) एवं तानि (तान से युक्त) गीत हैं, ज्वालामय लाखों दीपकों की वर्त्तियों के प्रकाश तथा ओजस्वी गान से समन्वित प्रेक्षणक (नाटक) हैं ॥

किं बहुना—

सुस्थिततेजोराशेर्लक्ष्मीजनकस्य रत्ननिलयस्य ।
तस्योपरि प्लवन्ते वार्धेरिव वर्णकाः सर्वे ॥१९॥

अन्वयः—वार्धेः इव सुस्थिततेजोराशेः लक्ष्मीजनकस्य रत्ननिलयस्य तस्य उपरि सर्वे वर्णकाः प्लवन्ते ॥१९॥

कल्याणी—सुस्थितेति । वार्धेः=जलधेरिव, सुस्थिततेजोराशेः—सुस्थितः तेजोराशिः=प्रतापचयः यस्मिन् तस्य, पक्षे—सुस्थितः तेजोराशिः=वडवानलः यस्मिंस्तस्य । लक्ष्मीजनकस्य—लक्ष्मीः=शोभा, तस्या जनकः=सम्पादकः तस्य, पक्षे—लक्ष्मीः=विष्णुपत्नी, तस्या जनकस्य=जनयितुः । रत्ननिलयस्य—रत्नानां निलयः=निधिः तस्य; तस्य=सागरोपमस्य भीमनृपस्य, उपरि=ऊर्ध्वं, सर्वे=निखिलाः, वर्णकाः=स्तोतारः, प्लवन्ते=तरन्ति । अपरिच्छिन्नगुणत्वादलब्धमध्या बाह्यमेव वर्णयन्तीति भावः । सागरस्यापि गाम्भीर्यमापकास्तदगाधत्वादलब्धतला उपर्युपर्येव तरन्ति । श्लिष्टोपमा । आर्या जातिः ॥१९॥

ज्योत्स्ना—अधिक कहने से क्या लाभ; सुस्थित तेजोराशि (बडवानल) से युक्त, लक्ष्मी को उत्पन्न करने वाले, रत्नों के खजाने एवं (अगाध होने के कारण) ऊपर ही ऊपर तैरने योग्य सागर के समान ही सुस्थित तेजःपुञ्ज वाले, लक्ष्मी के जनक अर्थात् शोभा को उत्पन्न करने वाले एवं रत्नों से परिपूर्ण उस राजा भीम के ऊपर-ऊपर ही समस्त स्तुतिपाठक तैरते रहते हैं ।

विमर्श—आशय यह है कि राजा भीम के गुणों एवं उसके ऐश्वर्य का वर्णन करने वाले लोगों को उसके गुणों एवं ऐश्वर्य की गहराई का पता ही नहीं होता; वे तो केवल उनके ऊपरी अंशों का ही वर्णन करने में समर्थ हो पाते हैं ॥१९॥

तत्र चलत्कञ्चुकिसंकुलं पातालमिवान्तःपुरमनन्तालयं प्रविश्य विविधकुसुमसम्पत्सम्पन्नपुण्यपादपपरिकरिताङ्गणवापीपरिसरचलच्चक्रवाके चन्द्रशालाशालिनि; शैलूष इवानेकभूमिकाभाजि, धनञ्जय इव सुभद्रान्विते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुरुवंशाख्यान इव चारुचित्रविचित्रभित्तिभाजि, तुहिनाचलोच्चकूटायमाने सुधाधवलस्कन्धे धाम्नि ध्वजावलीविलसत्सप्तसप्तिसप्तौ सप्तमभूमिकायाम् इतो मुखवातायने निविष्टाम्, इतो गतास्ताः कुब्जवामनकन्यकास्त्वद्वार्ताव्यतिकरविनोदारम्भिणीः सम्भाषयन्तीम्, अनवरततरललोचनालोकनैर्नीलोत्पलोपहारमिव त्वदधिष्ठितायै दिशे दिशन्तीम्, उत्तरीयांशुकस्याच्छतया दृश्यमानमदनबाणव्रणकिणानुकारिकस्तूरिकापङ्कपत्रलताङ्कितकुचकलशश्रियम्, अष्टमीशशाङ्कशकलश्रीशोभाभाजि ललाटपट्टे स्मरपरवशत्रिपुरुषैरिव 'ममेयं ममेयं ममेयम्' इति संहर्षात्कृतं स्ववर्णानुकारिस्वीकारचिह्नमिव कुङ्कुममृगमदमलयजरसरचितत्रिपुण्ड्रकरेखात्रितयमुद्वहन्तीम्, आलोहितेन च त्वद्वार्तामृतपानबालप्रवालप्रणालकेनेव कर्णप्रणयिना बालपल्लवेन विराजितवदनाम्, आसन्नमणिभित्तिदर्पणसंक्रान्तप्रतिबिम्बतया त्वत्सङ्गमवाञ्छाकृतसन्तापसंविभागार्थमिव बहून्यात्मरूपाणि सृजन्तीम्, आसन्नवर्तिनीभिर्वीणादिविनोदविदुषीभिः समानवयोवेषाभिः सखीभिः सरस्वतीमिव सकलविद्याधिदेवताभिरुपास्यमानाम्, उन्मिषत्कुसुमाभरणरमणीयाभिश्चामरग्राहिणीभिर्वनदेवताभिरिव शरीरिणीं वसन्तमासश्रियमुपसेव्यमानाम्, अनुलेपनपुष्पपाणिभिः प्रसाधिकाभिर्भवानीमिवानेकनाकनायकनारीभिराराध्यमानाम्, इतस्ततो निपतन्मण्डनमणिमयूखमञ्जरीजालच्छलेनामान्तमिव कान्तिरसविसरमुत्सृजन्तीम्, अशेषाङ्गावयवेषु प्रतिबिम्बितैरासन्नचित्रभित्तिरूपकैर्मायाविभिः सुरासुरैरिव विधीयमानाश्लेषाम्, अग्रस्थिते पद्मरागमणिदर्पणे कन्दर्पातुरे रागिणि शशिनीव करुणयार्पितच्छायाम्, अशेषजगद्विजयास्त्रशालामिव मन्मथस्य, सङ्केतवसतिमिव समस्तसौन्दर्यगुणानाम्, अधिदेवतामिव सौभाग्यस्य, विपणिमिव लावण्यस्य, शिल्पसर्वस्वपरिणामरेखामिव विधातुः, अनन्तसंसाररोहणैकरत्नकन्दलीं दमयन्तीमद्राक्षम् ॥

कल्याणी—तत्रेति । तत्र=राजभवने, पातालमिव=नागलोकमिव, चलत्कञ्चुकिसंकुलं—चलद्भिः=भ्रमद्भिः, कञ्चुकिभिः='अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः । सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते ॥" इति लक्षणलक्षितैरन्तःपुरचारिभिर्नृपसेवकैः, संकुलं=व्याप्तम्, पातालपक्षे—चलद्भिः=प्रसर्पद्भिः, कञ्चुकिभिः=सर्पैः संकुलम्, अनन्तालयम् — अनन्ताः=बहवः, आलयाः=निलयाः यस्मिंस्तत्, पक्षे—अनन्तस्य=शेषनागस्य आलयमिति पातालविशेषणम् । अन्तःपुरं=राजकन्यकान्तःपुरं, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, विविधकुसुमसम्पत्सम्पन्नपुण्यपादपपरिकरिताङ्गणवापीपरिसरचलच्चक्रवाके—विविधकुसुमानां=नानाविधपुष्पाणां, सम्पदा=श्रिया, सम्पन्नैः=परिपूर्णैः, पुण्यपादपैः=मनोज्ञतरुभिः, परिकरिता=परिवारिता, याऽङ्गणवापी तस्याः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिसरे=तटप्रान्ते, चलन्तः=विहरन्तः, चक्रवाकाः=चक्रवाकपक्षिणः यत्र तादृशे, चन्द्रशालाशालिनि—चन्द्रशाला=शिरोगृहं, तया शालते=शोभतेऽवश्यमिति तस्मिन्, शैलूषः=नटः तस्मिन्निव, अनेकभूमिकाभाजि—अनेकभूमिका=अनेकगृहक्षणान्, पक्षे—अनेकवेषान्, भजते=धारयतीति तस्मिन्, धनञ्जयः=अर्जुनः तस्मिन्निव, सुभद्रान्विते—शोभनानि भद्राणि=गृहावयवविशेषाः, तैः अन्विते=युक्ते, पक्षे—[सुभद्रा+अन्विते] सुभद्रा=अर्जुनपत्नी, तयाऽन्विते, कुरुवंशाख्यान इव—कुरुवंशस्य आख्यानं=कथा तस्मिन्निव, चारुचित्रविचित्रभित्तिभाजि—चारुभिः=सुन्दरैः, चित्रैः विचित्रा भित्तीः भजते=धारयतीति तस्मिन्, पक्षे—चारू=सुन्दरौ, चित्रविचित्रौ=शान्तनुसुतौ, भित्ती=भित्तिभूतौ, मूलपुरुषावित्यर्थः। तयोरेव कलत्राभ्यां पाण्डुधृतराष्ट्रयोर्जातत्वात्, तद्भाजि। तुहिनाचलोच्चकूटायमाने—तुहिनाचलस्य=हिमालयस्य, उच्चकूटम्=उत्तुङ्गशिखरं तस्मिन्निवाचरति, तत्सदृश इत्यर्थः। सुधाधवलस्कन्धे—सुधया=शुभ्रलेपविशेषेण, धवलः=शुभ्रः, स्कन्धः=उच्चतमभागः यस्य तथाविधे, धाम्नि=भवने, ध्वजावलिविलसत्सप्तसप्तिसप्तौ—ध्वजावल्या=ध्वजपङ्क्त्या विलसन्तः सप्तसप्तेः=सूर्यस्य, सप्तयः=अश्वाः यस्यास्तथाविधायां, सप्तमभूमिकायां=सप्तमक्षणे, इत एव मुखवातायने—मुखम्=आननं यस्य तादृशे वातायने=गवाक्षे, निविष्टां=प्रविष्टाम्, इतः=अस्मात् स्थानात्, भवतः सकाशादित्यर्थः, गतास्ताः कुब्जवामनकन्यकाः, त्वद्वार्ताव्यतिकरविनोदारम्भिणीः—त्वद्वार्ताव्यतिकरेण=भवत्कथाप्रसङ्गेन, विनोदारम्भिणीः=दमयन्त्याः विनोदं कुर्वतीः, संभाषयन्तीं=समालापयन्तीम्, अनवरततरललोचनालोकनैः—अनवरतं=सततं, तरललोचनाभ्यां=चञ्चलनेत्राभ्यां, यानि आलोकनानि=वीक्षणानि तैः, नीलोत्पलोपहारमिव—नीलोत्पलानां=नीलकमलानाम्, उपहारम्=उपायनमिव, त्वदधिष्ठितायै—त्वया अधिष्ठितायै=सनाथितायै, दिशे=काष्ठायै, दिशन्तीं=ददतीम्, उत्तरीयांशुकस्य=उत्तरीयवस्त्रस्य, अच्छतया=निर्मलतया, पारदर्शितयेति यावत्। दृश्यमानमदनबाणव्रणकिणानुकारिकस्तूरिकापङ्कपत्रलताङ्कितकुचकलशश्रियं—दृश्यमानो मदनबाणानां=कामशराणां, व्रणकिणाः=व्रणानां पूरिततया तच्छुष्कमांसग्रन्थयः, तदनुकारी=तत्सदृशः, यः कस्तूरिकापङ्कः=कस्तूरिकाद्रवः, तत्कृतपत्रलता=पत्ररचना च, ताभ्याम् अङ्किता=चिह्निता, कुचकलशयोः=स्तनकुम्भयोः, श्रीः=शोभा यस्यास्ताम्, अष्टमीशशाङ्कशकलश्रीशोभाभाजि—अष्टमीतिथिस्तत्सम्बन्धि शशाङ्कशकलं=चन्द्रखण्डं, तस्य श्रियाः शोभां भजते=धारयतीति तथाविधे, ललाटपट्टे=भालफलके, स्मरपरवशत्रिपुरुषैरिव—स्मरपरवशाः=कामाभिभूताः, ये त्रयाणां=सत्त्वरजस्तमसां, पुरुषास्तैरिव [त्रिपुरुषैरित्यत्र षष्ठीसमास एवोचितो यथा त्रयाणां धर्मादीनां गणस्त्रिगणः, तथा त्रयाणां धर्मादीनां वर्गस्त्रिवर्गः। कर्मधारयस्तु संज्ञायामेव]। 'ममेयं ममेयं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ममेयम्' इति संहर्षात्=प्रतिद्वन्द्विभावात्, कृतं=विहितं, स्ववर्णानुकारिस्वीकार-चिह्नमिव—स्ववर्णानुकारि=श्वेत-रक्त-श्यामवर्णकमित्यर्थः । स्वीकारचिह्नमिव=स्वीकृतिचिह्नसदृशं, कुंकुममृगमदमलयजरसरचितत्रिपुण्ड्रकरेखात्रितयं—कुङ्कुम-मृगमदमलयजरसेन—कुङ्कुममिति रजश्चिह्नम्, मृगमदः=कस्तूरिकेति तमश्चिह्नम्; मलयजं=चन्दनमिति सत्त्वचिह्नं च ज्ञेयम् । कुङ्कुमादितत्तद्रसेन=तत्तद्द्रवेण, रचितं=निर्मितं, त्रिपुण्ड्रकस्य=तिलकविशेषस्य, रेखात्रितयं=चिह्नत्रयम्; उद्वहन्तीं=धार-यन्तीम्, आलोहितेन=रक्तेन च, त्वद्वार्तामृतपानबालप्रबालप्रणालकेनेव—त्वद्वार्ता-मृतपानाय=त्वत्कथासुधाश्रवणाय, बालप्रबालप्रणालकेनेव=नूतनविद्रुमरचितत्प्रवह-मार्गेणेव, कर्णप्रणयिना=कर्णावतंसत्वेन धृतेनेत्यर्थः, बालपल्लवेन=नूतनकिसलयेन, विराजितवदनां—विराजितं=सुशोभितं; वदनं=मुखं यस्यास्ताम्, आसन्नमणिभित्ति-दर्पणसंक्रान्तप्रतिबिम्बतया—आसन्नमणिभित्तय एव दर्पणास्तेषु संक्रान्तः प्रतिबिम्बो यस्यास्तस्या भावस्तत्ता तया, त्वत्सङ्गमवाञ्छाकृतसन्तापसंविभागार्थमिव—त्वत्सङ्गमवाञ्छया कृतः=विहितः, यः सन्तापस्तस्य संविभागार्थमिव, बहूनि=अनेकानि, आत्मरूपाणि=स्वरूपाणि, सृजन्तीं=रचयन्तीम्, आसन्नवर्तिनीभिः=समीपवर्तिनीभिः, वीणादिविनोदविदुषीभिः—वीणादिना=तन्त्रीप्रभृतिना, विनोदे=मनोरञ्जने, विदुषीभिः=निपुणाभिः, समानवयोवेषाभिः—समानं वयः=अवस्था, वेषः=आकृतिश्च यासां ताभिः, सखीभिः=सहचरीभिः, सरस्वतीमिव=वीणावादि-नीमिव, सकलविद्याधिदेवताभिः उपास्यमानां=सेव्यमानाम्, उन्मिषत्कुसुमाभरण-रमणीयाभिः—उन्मिषन्ति=विकसन्ति, कुसुमानि=पुष्पाणि, तान्येव आभरणानि=आभूषणानि, तैः रमणीयाभिः=रम्याभिः, चामरग्राहिणीभिः=चामरधारिणीभिः, बनदेवताभिरिव=वनाधिष्ठातृदेवीभिर्यथा, शरीरिणीं=मूर्त्तिमतीं, वसन्तमासश्रियं—वसन्तमासस्य श्रियं=शोभाम्, उपसेव्यमानाम्=उपास्यमानाम्, अनुलेपनपुष्प-पाणिभिः—अनुलेपनम्=अङ्गरागः, पुष्पाणि च=कुसुमानि च, पाणौ=करे यासां तथाविधाभिः, प्रसाधिकाभिः=प्रसाधनकारिणीभिः, अनेकनाकनायकनारीभिः=अनेकदेवाङ्गनाभिः, आराध्यमानां=पूज्यमानां, भवानीमिव=पार्वतीमिव, इतस्ततः=परितः, निपतन्मण्डनमणिमयूखमञ्जरीजालच्छलेन—निपततः=विकीर्यमाणस्य, मण्डनमणीनां=भूषणमणीनां, मयूखमञ्जरीजालस्य=किरणमञ्जरीजालस्य, छलेन=व्याजेन, अमान्तमिव=देहेऽलब्धावकाशमिव, कान्तिरसविसरं=प्रभारसपूरम्, उत्सृजन्तीं=बहिर्निष्कासयन्तीम्, अशेषाङ्गावयवेषु=सकलदेहावयवेषु, प्रतिबिम्बितैः=प्रतिभासितैः, चित्रभित्तिरूपकैः—चित्रभित्तिषु यानि रूपकाणि=चित्रत्वेनाङ्कि-तानि सुरासुराणां रूपाणि तैः, मायाविभिः=कूटयुक्तिप्रयोगकुशलैः, कथमप्यदृश्यभावे-नागतैरिति भावः । सुरासुरैरिव=देवदानवैरिव, विधीयमानाश्लेषां—विधीयमानः=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्रियमाणः, आश्लेषः=आलिङ्गनं यस्यास्तथाविधामिव, अग्रस्थिते—अग्रे=पुरतः, स्थिते, पद्मरागमणिदर्पणे—पद्मरागमणिरेव दर्पणस्तत्र, कन्दर्पातुरे=कामपीडिते, रागिणि=आसक्तिमति, शशिनि=चन्द्रमसीव, करुणया=दयया, अर्पितच्छायाम्—अर्पिता=समर्पिता, छाया=स्वप्रतिबिम्बितमूर्तिः यया तां तथोक्ताम्; मन्मथस्य=कामदेवस्य, अशेषजगद्विजयास्त्रशालामिव=सम्पूर्णसंसारजयास्त्रशालामिव, समस्तसौन्दर्यगुणानां=निःशेषसुन्दरतागुणानां, सङ्केतवसतिमिव=सङ्केतस्थलीमिव, सौभाग्यस्य अधिदेवतामिव=अधिष्ठातृदेवीमिव, लावण्यस्य=कमनीयतायाः, विपणिरिव=हट्ट इव, विधातुः=ब्रह्मणः, शिल्पसर्वस्वपरिणामरेखामिव=समस्त-शिल्पकलापरिणामावधिनिर्धारणरेखामिव, संसाररोहणैकरत्नकन्दलीं—संसार एव रोहणः=रोहणाख्यः गिरिः, तत्र एकाम्=अद्वितीयां, रत्नकन्दलीं=रत्नप्ररोहशलाकां, दमयन्तीं=भीमनृपसुताम्, अद्राक्षं=दृष्टवान् ॥

ज्योत्स्ना—सञ्चरण कर रहे सर्पों से व्याप्त एवं अनन्त (शेषनाग) के निवास-स्थानभूत पाताल के समान भ्रमण कर रहे कञ्चुकियों से व्याप्त एवं असंख्य घरों से समन्वित उस राजभवन में प्रवेश कर विविध पुष्पसम्पदा से सम्पन्न पवित्र अर्थात् रमणीय वृक्षों से परिवेष्टित आँगन की बावली के तटभाग पर सञ्चरण कर रहे चक्रवाक पक्षियों वाले, चन्द्रशालाओं (उत्तुंग भवनों) से सुशोभित, नानाविध (भूमिकाओं) वेषों को धारण करने वाले नट के समान अनेकों भूमिकाओं (भूभागों—मञ्जिलों) को धारण करने वाले, सुभद्रा से समन्वित धनञ्जय (अर्जुन) के समान सुन्दर भद्रों (गृहावयवों—दिवालों-खिड़कियों-दरवाजों आदि) से समन्वित, सुन्दर चित्र-विचित्रनामक भित्ति (मूलपुरुषों) को धारण करने वाले कुरुवंश के आख्यान (कथा) के समान सुन्दर चित्रों के कारण रमणीय भित्तियों को धारण करने वाले, हिमालय के उत्तुंग शिखर के समान चूने से धवल उच्चतम भाग वाले भवन में ध्वज-पंक्तियों के साथ विलास कर रहे सप्तसप्ति (सूर्य) के सप्तियों (अश्वों) के समान सप्तम तल पर इसी ओर मुख वाली खिड़की पर बैठी हुई, यहाँ आपके पास से ही (वापस) गईं हुईं और आपसे ही सम्बन्धित कथा-प्रसंग के माध्यम से (दमयन्ती का) मनोरञ्जन करती हुईं कुब्जा (कुबड़ी) तथा वामनी (नाटी) कन्याओं के साथ वार्तालाप करती हुई, चञ्चल नेत्रों से निरन्तर अवलोकन के द्वारा आपसे सनाथित दिशा को मानों नीलकमलों का उपहार-सा प्रदान करती हुई, उत्तरीय वस्त्र (आँचल) के निर्मल होने से (पारदर्शी होने के कारण) दिखाई पड़ रहे कामबाण के व्रणों (घावों) से भरे कणों (शुष्क मांसग्रन्थियों) का अनुकरण करने वाले कस्तूरी-लेप द्वारा निर्मित पत्ररचना से चिह्नित स्तनों की शोभा वाली, अष्टमी तिथि के चन्द्र-खण्ड की शोभा को धारण करने वाले भालफलक पर काम के वशीभूत (सत्त्व-रज-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तमरूप) तीनों पुरुषों द्वारा मानों "यह मेरी है, यह मेरी है, यह मेरी है" इस प्रकार की प्रतिद्वन्द्विता से बनाये गये अपने-अपने वर्णों के अनुरूप स्वीकार-चिह्न के समान कुंकुम (रजःचिह्न), मृगमद अर्थात् कस्तूरी (तमःचिह्न) और मलयज (सत्त्वचिह्न) के रसों से रचित त्रिपुण्ड्ररूप तिलक की तीन रेखाओं को धारण करती हुई, आपके कथारूप अमृत का पान करने के लिए रक्त वर्ण के नूतन पल्लवों से निर्मित प्रणालिका (प्रवाहमार्ग—नाली) के समान कानों को प्रिय अर्थात् कर्णभूषण के रूप में धारण किये गये नूतन किसलयों से सुशोभित मुख वाली, समीपवर्ती मणिमय भित्तिरूप दर्पणों पर पड़ रहे प्रतिबिम्बों के द्वारा आपसे मिलन की कामना से किये गये सन्ताप के सम्यक् विभाग के समान अनगिनत स्वरूप की रचना करने वाली, समीपवर्ती वीणा आदि के द्वारा मनोरञ्जन में निपुण, समान अवस्था एवं वेषभूषा वाली सखियों के द्वारा समस्त विद्याओं की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती के समान सेवित, विकसित हो रहे पुष्परूपी अलंकारों के कारण रमणीय चामर धारण करने वाली सेविकाओं के द्वारा वनाधिष्ठात्री देवियों के द्वारा सेवित शरीरधारिणी वसन्त ऋतु की लक्ष्मी के समान सेवित होती हुई, हाथों में अनुलेपन (अंगराग) और पुष्पों को ली हुई प्रसाधिकाओं (शृङ्गार करने में प्रवीण सेविकाओं) के द्वारा अनेकों देवांगनाओं से आराध्यमान पार्वती के समान आराधित होती हुई, इधर-उधर छिटक रहे आभूषणजड़ित मणियों की किरणों के बहाने से मानों शरीर में स्थान न प्राप्त करने वाली कान्तिरस की धारा को बाहर निकालती हुई, शरीर के समस्त अवयवों पर प्रतिबिम्बित समीपवर्ती भित्तियों पर चित्ररूप में अंकित चित्रों के कारण मायावी देवताओं तथा दानवों के द्वारा आलिङ्गन की जाती हुई के समान, सामने स्थित पद्मरागमणिरूप दर्पण में स्थित कामपीड़ित आसक्त चन्द्रमा पर मानों दयावश अपनी छाया को समर्पित करती हुई, सम्पूर्ण संसार को विजित करने के लिए कामदेव की अस्त्रशाला के समान, समस्त सौन्दर्यगुणों की संकेतस्थली के समान, सौभाग्य की अधिष्ठात्री देवी के समान, लावण्य की दुकान के समान, विधाता की समस्त शिल्पकला की पूर्णता को निर्धारित करने वाली रेखा के समान, अनन्त संसाररूपी रोहणनामक पर्वत पर रत्नमयी अद्वितीया कन्दली-स्वरूपा दमयन्ती को (मैंने) देखा ॥

विमर्श—चित्र-विचित्र—शान्तनुपुत्र चित्र और विचित्र कुरुकुल के मूल पुरुष थे, जिनकी पत्नियों से पाण्डु और धृतराष्ट्र उत्पन्न हुए थे।

स्मरपरवशत्रिपुरुषैः—दमयन्ती ने अपने भालफलक पर त्रिपुण्ड्र का तिलक धारण कर रखा था, जिसकी तीनों ही रेखायें तीन रंगों की थीं। त्रिपुण्ड्र की वे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीनों रेखायें कुंकुम, कस्तूरी तथा चन्दन से बनाई गई थीं। इनमें कुंकुमरचित रेखा रक्त वर्ण की होने से रजोगुण का प्रतिनिधित्व करने वाली थी, कस्तूरीरचित रेखा कृष्ण वर्ण की होने से तमोगुण का प्रतिनिधित्व करने वाली थी एवं चन्दन-रचित रेखा शुभ्र वर्ण की होने से सत्त्व गुण का प्रतिनिधित्व करने वाली थी। इन तीनों ही गुणों की कल्पना कवि ने त्रिपुरुष के रूप में की है ॥

ईक्षणामृतशलाकामवलोक्य च तामतिहर्षविस्मयकौतुकोत्तानित-चक्षुश्चिन्तितवानहम् ॥

कल्याणी—ईक्षणेति। ईक्षणामृतशलाकां=नेत्रामृतवर्त्ति, तां=दमयन्तीम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, अतिहर्षविस्मयकौतुकोत्तानितचक्षुः=महदानन्दविस्मयोत्कण्ठाभि-विस्फारितनेत्रः, अहं=पर्वतकः, चिन्तितवान्=विचारितवान् ॥

ज्योत्स्ना—और नयनों के लिए अमृतशलाका के समान उस दमयन्ती को देखकर अत्यधिक आनन्द, विस्मय और उत्कण्ठा के कारण विस्फारित नेत्रों वाला मैं सोचा—

इयं हि—

स्मरराजराजधानी मङ्गलवलभी विलासविहगानाम्।
शृङ्गाररङ्गशाला हरति न बाला मनः कस्य ॥२०॥

अन्वयः—(इयं हि) स्मरराजराजधानी विलासविहगानां मङ्गलवलभी शृङ्गाररङ्गशाला बाला कस्य मनः न हरति ॥२॥

कल्याणी—स्मरेति। (इयं हि=दमयन्ती हि) स्मरराजराजधानी—स्मरः=कामः, स एव राजा=नृपः, तस्य राजधानी, विलासविहगानां—विलासा एव विहगाः=पक्षिणः तेषां, मङ्गलवलभी=मङ्गलमयनिवासयष्टिका, शृङ्गाररङ्ग-शाला—शृङ्गारस्य=शृङ्गाररसस्य, मङ्गशाला=रङ्गभूमिः, बाला=युवती दमयन्ती, कस्य=कस्य जनस्य, मनः=चेतः, न हरति=न मोहयति, सर्वस्यापि मनो हरतीत्यर्थः। रूपकालङ्कारः। आर्या जातिः ॥२०॥

ज्योत्स्ना—कामदेवरूप राजा की राजधानीस्वरूपा, विलासरूप पक्षियों के लिए मंगलमय निवासभूमिस्वरूपा एवं शृंगार की रंगभूमिस्वरूपा यह बाला किसके मन का हरण नहीं करती अर्थात् सबके मन का हरण कर ही लेती है ॥२०॥

अपि च—

दग्धो विधिर्विधत्ते न सर्वगुणसुन्दरं जनं कमपि।
इत्यपवादभयादिव हरिणाक्षी वेधसा विहिता ॥२१॥

अन्वयः—दग्धः विधिः कमपि जनं सर्वगुणसुन्दरं न विधत्ते, इति अपवाद-भयात् इव वेधसा हरिणाक्षी विहिता ॥२१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—दग्ध इति। दग्धः=निन्द्यः, दग्धशब्दो निन्दार्थेऽपि प्रयुज्यते। विधिः=विधाता, कमपि=एकमपि, जनं=पुरुषं, सर्वगुणसुन्दरं=सर्वगुणैः परिपूर्णं, न विधत्ते=न करोति, इति=इत्थं, योऽसावपवादस्तद्भयादिव=त्रासादिव; वेधसा=विधिना, हरिणाक्षी=मृगाक्षी, उपलक्षणतया सर्वगुणसुन्दरीत्यर्थः। दमयन्तीयं विहिता=रचिता। हरिणाक्षीत्यादिचतुर्थपादस्थाने 'तेनासौ सुन्दरी विहिता' इति पाठः समीचीनः। पूर्वोक्तपाठेऽक्षिमात्रसौन्दर्यार्थबोधनशक्तिर्न हि तेन समग्रगुणसुन्दरता व्यज्यते इति चण्डपालः। तेन विधिनाऽसौ साक्षाद्दृष्टा सुन्दरी समग्रगुणसौन्दर्योपेता विहिता=कृता। अतस्तस्यां सृष्टायां स्रष्टुरपवादो न भविष्यतीति तदर्थः। अत्र दमयन्त्याः सर्वगुणसौन्दर्योपेततया विधिना निर्माणे सर्वगुणसुन्दरजननिर्माणाभावरूपापवादभयस्य हेतुत्वेनोत्प्रेक्षणाद् हेतूत्प्रेक्षा। आर्या जातिः ॥२१॥

ज्योत्स्ना—और भी—"निन्दनीय विधाता किसी भी पुरुष को समस्त गुणों से सुन्दर अर्थात् परिपूर्ण नहीं बनाता"—इस निन्दा के भय से ही विधाता ने मानों इस मृगनयनी (दमयन्ती) का निर्माण किया है।

विमर्श—यह प्रसिद्धि है कि विधाता की समस्त रचनाओं में, चाहे वे कितनी ही अपूर्व क्यों न हों, कोई न कोई कमी अवश्य रहती है। इसी लोकापवाद से विधाता को मुक्त करने के लिए यहाँ कवि ने दमयन्ती को समग्र रूप से सभी गुणों और सौन्दर्य से परिपूर्ण बताने की चेष्टा की है।

यहाँ चतुर्थ चरण में 'हरिणाक्षी वेधसा विहिता' के स्थान पर 'तेनाऽसौ सुन्दरी विहिता' पाठ ज्यादा समीचीन प्रतीत होता है; क्योंकि 'हरिणाक्षी' पद से मात्र उसके नेत्रों की ही सुन्दरता स्पष्ट होती है, जबकि उसे समग्रतया सुन्दर बताना कवि को अभीष्ट है, जिस अर्थ के स्फुरण के विना विधाता का अपवादमुक्त होना सम्भव नहीं है ॥२१॥

किञ्चान्यत्—

लावण्यपुण्यपरमाणुदलं तदन्य-
दन्यः स चापि निपुणः खलु कोऽपि वेधाः।
येनाद्भुता कृतिरियं विहिता विशिष्ट-
कार्येण कारणविशेषगुणोऽनुमेयः ॥२२॥

अन्वयः—तत् लावण्यपुण्यपरमाणुदलम् अन्यत्, स चापि निपुणः वेधाः खलु कोऽपि अन्यः, येन इयम् अद्भुता कृतिः विहिता। विशिष्टकार्येण कारणविशेषगुणः अनुमेयः ॥२२॥

कल्याणी—लावण्येति। तत्=तथाविधं, लावण्यपुण्यपरमाणुदलं—लावण्यस्य=सौन्दर्यस्य, पुण्यपरमाणुदलं=पवित्र परमाणुपुञ्जः, अन्यत्=प्राचीनपरमाणुदलाद्भिन्नम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स चापि निपुणः=कुशलः, वेधाः=विधिः, खलु=निश्चयेन, कोऽपि=कश्चिदपि; अन्यः=पुरातनविधातुर्भिन्नः। येन=येन विधि विशेषेण तत्परमाणुदलविशेषेण, इयम्=एषा दमयन्तीलक्षणा, अद्भुता=सकललोकापेक्षया विलक्षणा, कृतिः=रचना, विहिता=निर्मिता। तत्र हेतुमाह—विशिष्टकार्येणेति। विशिष्टकार्येण=कार्यविशेषेण, कारणविशेषगुणः=कारणविशेषस्य गुणः, अनुमेयः=अनुमानयोग्यः भवति। कार्यविशेषेणैव कारणविशेषस्य गुणोऽनुमन्यत इत्यर्थः। अत्र वर्ण्यदमयन्त्या रचना तेनैव प्राक्तनपरमाणुदलेनैव तेनैव विधिना कृतेति स्पष्टम्, किन्तु दमयन्त्या असाधारणतया कविना तत्र परमाणुदले तद्विधावप्यसाधारणतायाः कल्पनां कृत्वा भेदस्याध्यवसानं कृतमित्यभेदे भेदातिशयोक्तिरलङ्कारः। चतुर्थपादस्य प्रथमपादत्रयार्थस्य निष्पादकहेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गम्। तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः। वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥२२॥

ज्योत्स्ना—और क्या कहा जाय; सौन्दर्य के वह परमाणुपुञ्ज कुछ और ही हैं और वह निपुण ब्रह्मा भी कोई दूसरा ही है, जिसके द्वारा दमयन्तीरूप यह अद्भुत कृति निर्मित की गई है, (क्योंकि) विशिष्ट कार्य के द्वारा ही उसके कारणभूत विशेष गुणों का अनुमान किया जाता है।

विमर्श—अनादि काल से सृष्टिकर्ता द्वारा परमाणुपुञ्ज से ही सृष्टि की जाती रही है; किन्तु कवि की कल्पना यहाँ यह है कि जिन परमाणुपुञ्जों से सृष्टिकर्ता सृष्टि का निर्माण करता है, न तो उन परमाणुपुञ्जों से दमयन्ती का निर्माण किया गया है और न ही समस्त सृष्टि के निर्माता ब्रह्मा ने इसकी रचना ही की है; बल्कि समस्त संसार की अपेक्षा इसकी विलक्षणता को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी रचना किसी विशिष्ट परमाणुपुञ्ज से किसी विशिष्ट सृष्टिकर्ता द्वारा की गई है ॥२२॥

एवं वितर्कयन्तं सापि मां पुष्कराक्षसूचितमुचितसम्भ्रमेण मनाग्वलितकन्धराकन्दलीकम्पितकर्णोत्पलमवलोक्य स्वागतप्रश्नानन्तरम् 'अहो बहोः कालादभूत्सुप्रभातमद्योद्द्योतितमिव तमस्काण्डपिण्डीकृतं कुण्डिनम्, अकाण्डाडम्बरितवसन्तविकासोत्सव इवाभवत्सरित्सङ्गमोपकण्ठवनविभागः, चिरात् सम्पन्ना सलक्षणा दक्षिणा दिगियम्, उन्निद्रित इव सह्याद्रिः, अमृतद्रवार्द्रित इवोज्जीवितोऽयं जनः' इत्यभिधाय 'पर्वतक! कच्चित्कुशली परबलदलदावानलो नलः' इति स्मितमुग्धमधुरया गिरा समभाषत ॥

कल्याणी—एवमिति। एवं वितर्कयन्तं='स्मरराज'—इत्यादिपद्यत्रयेणैवमूहमानं, पुष्कराक्षसूचितं—पुष्कराक्षेण सूचितं=निवेदितं, मां=पर्वतकम्, उचितसंभ्रमेण=यथोचितसमादरेण, आदरार्थोऽपि सम्भ्रमशब्दः। यथोक्तं भर्तृहरिणा—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'गृहमुपगते सम्भ्रमविधिः।' रामायणे वाल्मीकिनाप्युक्तम्—'तव वीर्यवतः कश्चिद्यद्यस्ति मयि सम्भ्रमः।' मनाक्=स्तोकं, वलितकन्धराकन्दलीकम्पितकर्णोत्पलं—वलिता=वक्रीकृता, कन्धराकन्दली=ग्रीवाप्ररोहः, तेन कम्पितं=चलितं, कर्णोत्पलम्=अवतंसत्वेन धृतं कर्णकमलं यस्मिन् कर्मणि तद्यथा स्यात्तथा, अवलोक्य=वीक्ष्य, स्वागतप्रश्नानन्तरं=कुशलक्षेमपृच्छानन्तरम्, अहो इति हर्षे। बहोः कालात्=चिरकालानन्तरं, सुप्रभातं =सुन्दरप्रातःकालम्, अभूत्। अद्य=अस्मिन् दिने, तमस्काण्डपिण्डीकृतम्—तमस्काण्डेन=तिमिरपटलेन, पिण्डीकृतम्=आवृतं, कुण्डिनं=कुण्डिननगरम्, उद्योतितमिव=प्रकाशितमिव, अभूत्=जातम्; सरितत्सङ्गमोपकण्ठवनविभागः—सरित्सङ्गमस्य=नदीसंगमस्य, उपकण्ठे=परिसरे, यः वनविभागः=वनप्रदेशः, सः अकाण्डाडम्बरितवसन्तविकासोत्सव इव—अकाण्डे=अनवसरे, आडम्बरितः=सोल्लासमनुभूतः, वसन्तविकासोत्सवः=वसन्तविकासस्यानन्दः, येन तथाविध इवाभवत्। चिरात्=बहुकालादनन्तरम्, इयम्=एषा, दक्षिणा दिक्=अवाची दिशा, लक्षणैः=शुभलक्षणैः सहेति सलक्षणा=शुभलक्षणोपेता, सम्पन्ना=जाता, सह्याद्रिः=सह्याचलः; उन्निद्रित इव=प्रबुद्ध इव सम्पन्नः, अयं जनः=दमयन्तीलक्षणः जनः, अमृतद्रवार्द्रित इव—अमृतद्रवेण=सुधारसेन, अर्द्रितः=सिक्त इव, उज्जीवितः=लब्धपुनर्जीवनः जातः। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, पर्वतक=अयि पर्वतक!, कच्चिदिति पृच्छायाम्। परबलदलदावानलः—परबलदलस्य=शत्रुसैन्यसमूहस्य, दावानलः=वनवह्निः, नलः=निषधराजः, कुशली=सकुशलमस्ति, इति=इत्थं, स्मितमुग्धमधुरया—स्मितेन=मन्दहासेन, मुग्धा=मनोज्ञा, मधुरा=मनोरमा च तया; गिरा=वाण्या, समभाषत=समवोचत। दावानलोपमानेन दमयन्त्या नलस्य स्वविरहसन्तापहेतुत्वमपि व्यज्यते॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार तर्क-वितर्क करते हुए पुष्कराक्ष द्वारा सूचित मुझ पर्वतक को, यथोचित आदर के साथ थोड़ा-सा तिरछा किये जाने के कारण हिलते हुए कर्णपुष्पों वाले अंकुरसदृश गर्दन को घुमा, देखकर स्वागतसम्बन्धी प्रश्न के बाद (हर्ष के साथ) "अहो! बहुत समय बाद सुन्दर प्रभात (सबेरा) हुआ है। आज अन्धकारपुञ्ज से आवृत कुण्डिननगर प्रकाशित-सा हो गया। नदियों के संगम का तटवर्ती वनप्रदेश असमय में प्रफुल्लित वसन्त ऋतु के आनन्द से मानों उल्लास का अनुभव कर रहा है। बहुत समय बाद यह दक्षिण दिशा (आज) शुभ लक्षणों से सम्पन्न हो गई; सह्य पर्वत जाग-सा उठा, यह जन (दमयन्ती) अमृतधारा से सिक्त-सा होकर मानो पुनः जीवित-सा हो गया।" इस प्रकार कहकर "पर्वतक! शत्रुसेना के लिए दावानलसदृश महाराज नल कुशल से तो हैं?" इस प्रकार मन्द हास के साथ मनमोहक मधुर वाणी से बोली॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहमपि प्रणम्य यथोचितमनन्तरमतित्वरितसखीजनोपनीतमासनमध्यास्य देवेन प्रहितानि तान्याभरणोपायनान्युपानैषम् ॥

कल्याणी—अहमपीति। अहं=पर्वतकोऽपि, यथोचितं=यथोपयुक्तं, प्रणम्य=नमस्कृत्य, अनन्तरं=तदनन्तरम्, अतित्वरितसखीजनोपनीतम्—अतित्वरितम्=अतिशीघ्रं, सखीजनेन उपनीतं=समानीतम्, आसनं=विष्टरम्, अध्यास्य=आसीनो भूत्वा, आसनमिति 'अधिशीङ्स्थासां कर्म' इत्याधारस्य कर्मत्वेन द्वितीयान्तम्। देवेन=भवता महाराजेन, प्रहितानि=प्रेषितानि, तानि आभरणोपायनानि=भूषणोपहारान्, उपानैषम्=उपातिष्ठिपम् ॥

ज्योत्स्ना—मैंने भी यथोचित प्रणाम करने के बाद शीघ्रतापूर्वक सखियों द्वारा लाये गये आसन पर बैठ कर महाराज द्वारा (मेरे हाथों) प्रेषित आभूषणरूप उन उपहारों को प्रस्तुत किया ॥

आदरेण तया गृहीतेषु तेषु, बहुमते मयि, प्रक्रान्ते त्वद्गुणग्रहणगोष्ठीव्यतिकरे, नर्मसुखालापलीलयातिक्रामति स्तोककालकलापे, पुष्कराक्षोऽप्यभाषत ॥

कल्याणी—आदरेणेति। तया=दमयन्त्या, तेषु=उपायनेषु, आदरेण=सम्मानेन, गृहीतेषु=स्वीकृतेषु, मयि=पर्वतके, बहुमते=सम्मानिते, त्वदगुणग्रहणगोष्ठीव्यतिकरे—त्वद्गुणग्रहणं=भवद्गुणवर्णनं, तद्गोष्ठीव्यतिकरे=तद्गोष्ठीप्रसङ्गे, प्रक्रान्ते=प्रारब्धे, नर्मसुखालापलीलया=सरससुखसंवादक्रीडया, स्तोककालकलापे=ईषत्समये, अतिक्रामति=व्यपगच्छति, पुष्कराक्षोऽपि अभाषत=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—उस (दमयन्ती) के द्वारा उन उपहारों को आदर के साथ ग्रहण करने पर, मुझे (उसके द्वारा) सम्मानित होने पर, आपके गुणों के वर्णनरूप गोष्ठीप्रसङ्ग के प्रारम्भ हो जाने पर, सरस सुख-सम्वाद-लीला में कुछ काल के व्यतीत हो जाने पर पुष्कराक्ष भी बोला—

'देवि ! विज्ञापयामि यद्यभयम् ॥

कल्याणी—देवीति। देवि !=स्वामिनि !, यदि=चेत्, अभयम्=अभयदानं दद्याः तद्, विज्ञापयामि=निवेदयामि ॥

ज्योत्स्ना—स्वामिनि ! यदि (आप) अभयदान दें तो (मैं भी कुछ) निवेदन करूँ।

एवमनुश्रुतमस्माभिः 'किल सकलनाकिनायकपुरन्दरपुरःसराः सर्वेऽपि लोकपालास्त्वामभिलषन्तोऽन्तःकरणारण्यलग्नमदनदावानलानलमायान्तमभ्यर्थितवन्तो यथा महानुभावा भवन्ति हि भवादृशाः परोपकारव्रतधर्माणः' तदेष प्रार्थ्यसे स्वप्रयोजननिरपेक्षेण त्वयास्मदर्थे दमयन्ती वरणीया' इति ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—एवमिति। अस्माभिः=परिजनवर्गैः, एवम्=इत्थम्, अनुश्रुतम्=आकर्णितम्—किलेति वार्तायाम्। सकलनाकिनायकपुरन्दरपुरःसरा—सकलनाकिनां=समस्तदेवानां, नायकः=नेता, यः पुरन्दरः=इन्द्रः, तत्पुरःसराः=तत्प्रभृतयः, सर्वेऽपि=समस्तेऽपि, लोकपालाः=दिक्स्वामिनः, त्वां=दमयन्तीम्, अभिलषन्तः=कामयमानाः, अन्तःकरणारण्यलग्नमदनदावानलानलम्—अन्तःकरणं=हृदयं, स एव अरण्यं=वनं, तत्र लग्नः=संसक्तः, मदनदावानलः=कामवनवह्निः येषां ते तथोक्ताः, आयान्तं=कुण्डिनपुरमागच्छन्तं, नलं=निषधाधिपम्, अभ्यर्थितवन्तः=प्रार्थयन्तः, यथा हि=यतः, भवादृशाः=भवल्लक्षणा जनाः, महानुभावाः=सदाशयाः, परोपकारव्रतधर्माणः—परोपकारव्रतमेव धर्मं येषां ते तथोक्ताः, भवन्ति=जायन्ते, तत्=तस्मात्, एषः=अयं त्वं, प्रार्थ्यसे=याच्यसे, स्वप्रयोजननिरपेक्षेण=स्वप्रयोजनमचिन्तयता, त्वया=भवता, अस्मदर्थे=अस्माकं कृते, दमयन्ती=भीमराजतनया, वरणीया=व्रियेतेति॥

ज्योत्स्ना—हम लोगों ने इस प्रकार सुना—"समस्त देवताओं में अग्रणी इन्द्रप्रभृति समस्त लोकपालों ने आपकी कामना करते हुए हृदयरूपी वन में लगे हुए दावानलसदृश आते हुए महाराज नल से इस प्रकार प्रार्थना की, "क्योंकि आप जैसे महानुभाव लोग ही परोपकार व्रतरूपी धर्म को धारण करने वाले होते हैं। इसलिए आपसे (हम) यह निवेदन करते हैं कि अपने प्रयोजन की चिन्ता न करते हुए आपके द्वारा हम लोगों के लिए ही दमयन्ती का वरण किया जाना चाहिए"॥

तद्देवि! देवदूतकार्येणागतो निषधेश्वरः। पृच्छतु वा देवी पर्वतकम्'॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, देवि!=स्वामिनि! निषधेश्वरः=नलः, देवदूतकार्येण=देवदौत्येन, आगतः=समायातः, वा=अथवा, देवी=भवती, पर्वतकं=पर्वतकनामकं वामनं, पृच्छतु॥

ज्योत्स्ना—अतः हे स्वामिनि! महाराज नल देवताओं के दौत्यकार्य से यहाँ आये हैं। अथवा आप पर्वतक से ही (इस बारे में) पूछ लें"॥

इति श्रुत्वा पुष्कराक्षभाषितम्, ईषद्विषादविलक्षस्मितस्मेरां दृशं मयि साचि सञ्चारितवती॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवं, पुष्कराक्षभाषितं=पुष्कराक्षवचनं, श्रुत्वा=आकर्ण्य, ईषद्विषादविलक्षस्मितस्मेराम्—ईषत्=स्तोकं, विषादेन=खेदेन, विलक्षा=व्याकुला, स्मितेन=मन्दहासेन, स्मेरा=प्रफुल्ला तां, दृशं=दृष्टिं, मयि=पर्वतके, साचि=वक्रगत्या, सञ्चारितवती=निपातितवती॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार की पुष्कराक्ष द्वारा कही गई बातों को सुनकर थोड़े खेद के कारण व्याकुल, मन्दहासयुक्त प्रफुल्ल दृष्टि को मेरे ऊपर वक्रगति से फेंका।

आशय यह है कि पुष्कराक्ष के द्वारा देवदूत के रूप में महाराज नल का आगमन जान कर कष्ट के कारण व्याकुल होकर दमयन्ती ने तिरछी नजरों से पर्वतक को देखा ॥

मयापि संवादिते पुष्करक्षवचने तस्मिन्, आकस्मिककठोरकाष्ठप्रहारव्यथामिवानुभवन्तीं, विन्दतु वीणाक्वणो माधुर्यमितीव प्रतिपन्नमौनव्रता, लभेतां कर्णोत्पले परभागमितीव मुकुलितनयना, प्राप्नोतु शोभां मुक्तावली दीप्तिजालमितीव मुक्तस्मिता, गच्छतु च्छायां कण्ठावलम्बिनी चम्पकमालेयमितीवाङ्गीकृतवैवर्ण्या लभतां लीलाकमलमिदं सौभाग्यमितीवोच्छ्वसितवदना, सा क्षणमभूत् ॥

कल्याणी—मयापीति। मया=पर्वतकेनापि, तस्मिन्=पूर्वोक्ते, पुष्कराक्षवचने=पुष्कराक्षभाषिते, संवादिते=समर्थिते, आकस्मिककठोरकाष्ठप्रहारव्यथामिव=सहसा कठोरकाष्ठप्रहारजन्यपीडामिव, अनुभवन्तीम्=अनुभवं कुर्वन्तीं, वीणाक्वणः=वीणाध्वनिः, माधुर्यं=मधुरतां, विन्दन्तु=लभेताम्, इतीव=इत्थं यथा, प्रतिपन्नमौनव्रता—प्रतिपन्नं=स्वीकृतं, मौनव्रतं यया सा तथोक्ता, दमयन्तीवचनस्य वीणाक्वणातिशायित्वादिति भावः। एवमग्रेऽपि तत्तत् क्रियाकलापे हेतुत्वं बोध्यम्। कर्णोत्पले=कर्णकमले, परभागं=समृद्धि, लभेतामितीव मुकुलितनयना=निमीलिताक्षी, मुक्तावलीदीप्तिजालं=मौक्तिकमालाप्रभापुञ्जः शोभां प्राप्नोतु इतीव, मुक्तस्मिता—मुक्तं=त्यक्तं, स्मितं=मन्दहासः यया सा तथोक्ता, कण्ठावलम्बिनी=गलावलम्बिनी, इयम्=एषा, चम्पकमाला=चम्पकपुष्पस्रक्, छायां=कान्ति, गच्छतु=प्राप्नोतु, इतीव=इत्थं यथा, अङ्गीकृतवैवर्ण्या—अङ्गीकृतं=स्वीकृतं, वैवर्ण्यं=विवर्णभावः यया सा तथोक्ता, इदम्=एतत्, लीलाकमलं=क्रीडोत्पलम्, सौभाग्यं=सौन्दर्यं, लभतामितीव सा=दमयन्ती, क्षणं=कञ्चित्कालम्, उच्छ्वसितवदना—उच्छ्वसितं=व्याकुलमित्यर्थः, वदनं=मुखं यस्याः सा तथाभूता, अभूत्=बभूव। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना--मेरे (पर्वतक के) द्वारा भी पुष्कराक्ष के उपर्युक्त कथन का समर्थन किये जाने पर अकस्मात कठोर काष्ठ-प्रहार के कारण उत्पन्न पीड़ा के समान पीड़ा का अनुमान करती हुई 'वीणा की ध्वनि ही अब मधुरता प्राप्त करे' इस प्रकार (निश्चय करती हुई) मानों उसने मौनव्रत स्वीकार कर लिया, 'कानों में संसक्त कमल ही अब समृद्धि प्राप्त करें' इस प्रकार निश्चय करती हुई मानों उसने आँखों को बन्द कर लिया; 'मुक्ताहार का प्रभापुञ्ज ही शोभा को प्राप्त करे'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार निश्चय करती हुई मानों उसने मन्दहास का त्याग कर दिया, 'गले में झूल रही चम्पकपुष्पों की यह माला ही कान्ति को प्राप्त करे' इस प्रकार निश्चय करती हुई मानों उसने विवर्णभाव (मलिनता) को अंगीकार कर लिया, 'यह लीलाकमल ही सौन्दर्य को प्राप्त करे' इस प्रकार निश्चय करती हुई वह दमयन्ती क्षण भर के लिए मानों व्याकुल मुख वाली हो गई ॥

विमर्श—कवि का तात्पर्य यह है कि देवदूत के रूप में नल का आगमन हुआ सुनकर दमयन्ती अकथनीय रूप से व्यथित हो हतप्रभ रह गई ॥

तत्र च व्यतिकरे—

विगलितविलासमपरसमाकस्मिकजातभङ्गशृङ्गारम् ।
मूकितमिव मूर्च्छितमिव मुद्रितमिव भवनमिदमासीत् ॥२३॥

अन्वयः—(तत्र च व्यतिकरे) विगलितविलासम् अपरसम् आकस्मिकजातभङ्गशृङ्गारम् इदं भवनं मूकितमिव मूर्च्छितमिव मुद्रितमिव आसीत् ॥२३॥

कल्याणी—तत्र चेति । तत्र च व्यतिकरे=एवं घटिते सतीत्यर्थः ।

विगलितेति । विगलितविलासं—विगलितः=विनष्टः, विलासः=सौन्दर्यं यस्य तत्तथोक्तम्, अपरसम्—अपगतः रसः=सारः यस्य तत्तथाविधम्, आकस्मिकजातभङ्गशृङ्गारम्—आकस्मिकः=सहसा, जातभङ्गः=भग्नः, शृङ्गारः=ललितवेशभूषा यस्य तत्तथोक्तम्, इदम्=एतत्, भवनं=प्रासादं, मूकितमिव=मूकीभूतमिव, मूर्च्छितमिव=संज्ञाशून्यमिव, मुद्रितमिव=संकुचितमिव; आसीत्=अभूत् । उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः । आर्या जातिः ॥२३॥

ज्योत्स्ना—इस स्थिति में—विनष्ट विलास (सौन्दर्य) वाला, रसशून्य तथा अचानक भग्न हो गये शृंगार (सजावट) वाला वह भवन मूक की भाँति, मूर्च्छित की भाँति और संकुचित की भाँति प्रतीत होने लगा ॥२३॥

राजा तु 'पर्वतक ! ततस्ततः' ॥

कल्याणी—राजेति । राजा=नलस्तु, पर्वतक !=हे पर्वतक ! ततस्ततः=तदनन्तरं किमभूदित्यर्थः, इत्याह । 'ततस्ततः' इति सम्भ्रमे द्विर्वचनम् ॥

ज्योत्स्ना—राजा ने पूछा—"पर्वतक ! उसके बाद क्या हुआ ?"

पर्वतकोऽपि 'देव ! श्रूयताम् ॥

कल्याणी—पर्वतकोऽपीति । पर्वतकोऽपि 'देव !=महाराज !, श्रूयताम्=आकर्ण्यतामित्याह ॥

ज्योत्स्ना—पर्वतक भी बोला—"महाराज ! सुनिये ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतः परम्—

ईषन्निःसृत-कुन्द-कुड्मलसदृग्दन्त-प्रभामञ्जरी-
रोचिष्णुस्मितमन्थरां मयि दृशं सञ्चारयन्ती मनाक्।
अस्यन्ती करपद्मभृङ्गमधरे बन्धूकबुद्ध्यागतं
वारंवारमकम्पयत्तरलितस्तोकावतंसं शिरः ॥२४॥

अन्वयः—(अतः परम्) ईषत् निःसृतकुन्दकुड्मलसदृग्दन्तप्रभामञ्जरी-रोचिष्णुस्मितमन्थरां दृशं मयि मनाक् सञ्चारयन्ती बन्धूकबुद्ध्या अधरे आगतं करपद्मभङ्गम् अस्यन्ती तरलितस्तोकावतंसं शिरः वारं वारं अकम्पयत् ॥२४॥

कल्याणी—ईषदिति। (अतः परम्=अस्मादनन्तरम्) ईषत्=स्तोकं, निःसृतकुन्दकुड्मलसदृग्दन्तप्रभामञ्जरीरोचिष्णुस्मितमन्थरां—निःसृताः = निर्गताः, कुन्दकुड्मलसदृशः=कुन्दकलिकासमाः, ये दन्ताः=रदाः, तेषां प्रभामञ्जरी=कान्तिमञ्जरी, तया रोचिष्णुः=देदीप्यमानं, यत् स्मितं=मन्दहासः, तेन मन्थरां=गम्भीरां, दृशं=दृष्टि, मयि=पर्वतके, मनाक्=ईषत्, सञ्चारयन्ती=पातयन्ती, बन्धूकबुद्ध्या=जपाकुसुमभ्रान्त्या, अधरे=अधरोष्ठे, आगतं=समायातं, करपद्मभृङ्गं=करकमलस्य भृङ्गम्, अस्यन्ती=अपसारयन्ती, [प्रथमं पद्मभ्रान्त्या भृङ्गः करे आगतस्तत्क्षणमेव बन्धूकबुद्ध्याऽधरे आगत इति करपद्मभृङ्गमिति षष्ठीतत्पुषसमासेन द्योतितम्] तरलितस्तोकावतंसं—तरलितस्तोकम्=ईषच्चञ्चलम्, अवतंसं=कर्णभूषणं यस्य तत्तथाविधं, शिरः=मूर्धानं, वारं वारं=भूयोभूयः, अकम्पयत्=व्यधूनयत्। बन्धूकबुद्ध्याऽधरे भृङ्गस्यागमनाद् भ्रान्तिमान् अलङ्कारः। दन्तानां कुन्दकुड्मलसादृश्यादुपमा। तयोर्नैरपेक्ष्येण संसृष्टिः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२४॥

ज्योत्स्ना—इसके बाद—थोड़ी निकली हुई कुन्दकलिकासदृश दाँतों की प्रभा-मञ्जरी से देदीप्यमान मन्द हास से मन्थर (गम्भीर) दृष्टि को मुझ पर्वतक के ऊपर कुछ-कुछ डालती हुई, बन्धूक-पुष्प (जपाकुसुम) समझकर अधरों पर आये हुए करकमल के भ्रमर को दूर हटाती हुई थोड़े चञ्चल कर्णभूषण वाले शिर को बार-बार कँपाया (हिलाया)।

विमर्श—करपद्मभृङ्ग का तात्पर्य यह है कि स्वाभाविक आकर्षण के स्थान कमल की भ्रान्ति से भ्रमर पहले दमयन्ती के हाथों पर आया, लेकिन तत्क्षण ही उसके अधरों को बन्धूकपुष्प समझकर हाथों से उड़कर अधरों पर आ गया। इसी आशय से यहाँ 'करपद्मभृङ्ग' शब्द का प्रयोग किया गया है ॥२४॥

ततः परम्। वारितवारविलासिनीचाटुवचनक्रमम्, आकस्मिकविस्मयविस्मृतस्मितविलासम्, अतनुतुहिनाहतनवनलिनदलदीनदीर्घेक्षणम्, उष्णसरलश्वासारम्भिविषमविषादविच्छायिताननेन्दुद्युति, तस्याः स्थानकमव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोक्य सखेदं सखीजननेन 'देवि ! भवन्निःश्वासपवनपरम्परया पर्यस्त इवास्ताचलहस्तावलम्बनमयमाश्रयति भगवान्भानुः, इयं च सौभाग्यशालिनि नले निलीनचित्तायास्तव लोकपालपार्थिवप्रार्थनाव्यतिकरमिममाकर्ण्य लज्जितेव पिहितश्रवणा दूरे भवति वासरश्रीः, इमानि निश्चलनिलीनमधुपनिपीयमानगर्भमधूनि सङ्कोचयन्ति लोचनानीव कमलानि, संविभागीकृतविषादा इव विलासवयस्याः सरसीसरोरुहिण्यः, इमाश्च 'कथमस्मत्पतयो मनुष्यकन्यकां कामयन्ते' इतीर्ष्याशोकवशादिव दिशः श्यामायन्ते, तत्प्रेष्यतामयं पर्वतकः' इत्यभिधीयमाना कथङ्कथमपि चिन्तान्तरायतिरस्कृतालापमीषदुन्नमय्य मुखं समुल्लसदशोकपल्लवानुकारि करतलमुत्तानीकृत्य मामविस्मरणीयसम्मानदानावसाने व्यसर्जयत् ॥

कल्याणी—तत इति। ततः परं=तदनन्तरं, वारितवारविलासिनीचाटुवचनक्रमं—वारितः=निरस्तीकृतः, वारविलासिनीनां=वाराङ्गनानां, चाटुवचनक्रमः=चाटुकारितापूर्णवचनप्रसङ्गः यस्मिंस्तथाविधम्, आकस्मिकविस्मयविस्मृतस्मितविलासम्—आकस्मिकविस्मयेन=अकस्मादागतेन विस्मयेन=आश्चर्येण, विस्मृतः=विस्मरणपथङ्गत, स्मितविलासः=हास्यविलासः यस्मिंस्तत्तथोक्तम्, अतनुतुहिनाहतनवनलिनदलदीनदीर्घेक्षणम्—अतनुना=समधिकेन, तुहिनेन=हिमपातेन, आहतनवनलिनदलम्—आहतं=शुष्कतां गतं, यन्नवनलिनदलं=बालकमलपत्रं, तद्वद् दीने=विषण्णे, दीर्घे=विशाले, ईक्षणे=नयने यस्मिंस्तत्, उष्णसरलश्वासारम्भविषमविषादविच्छायिताननेन्दुद्युति—उष्णानां सरलानां च दीर्घाणां श्वासानामारम्भोऽस्त्यस्मिन्निति तादृशः यः विषमः=अत्यधिकः, विषादेन=खेदेन, विच्छायिता=म्लानतां गता, आननेन्दोः=मुखचन्द्रस्य, द्युतिः=कान्तिः यस्मिंस्तत्तथाविधं, तस्याः=दमयन्त्याः, स्थानकं=स्थितिम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, सखेदं=सविषादं यथा तथा, सखीजनेन=सखीवृन्देन, 'देवि=हे देवि !, भवन्निःश्वासपवनपरम्परया—भवत्याः निःश्वासपवनस्य=श्वासवायोः, परम्परा=नियमितक्रमः, आवेग इति यावत्; तया पर्यस्तः=दूरं प्रक्षिप्त इव, भगवान् भानु=सूर्यः, अयम्=एषः, अस्ताचलहस्तावलम्बनम्—अस्ताचलस्य=अस्तगिरेः, हस्तैः=करैः किरणैश्च, अवलम्बनम्=आश्रयणम्, आश्रयति=गृह्णाति, इयं च=एषा च, वासरश्रीः=दिवसलक्ष्मीः; सौभाग्यशालिनि=भाग्यवति, नले=निषधेश्वरे, निलीनचित्तायाः—निलीनं=संसक्तं; चित्तं=मनः यस्यास्तस्याः, तव=ते, इमं लोकपालपार्थिवप्रार्थनाव्यतिकरम्—लोकपालैः=इन्द्रादिलोकपालैः, कृता पार्थिवं प्रति=नलं प्रति, या प्रार्थना=याच्ञा, तस्या व्यतिकरं=वृत्तान्तम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, लज्जितेव=त्रपितेव, पिहितश्रवणा—पिहितम्=आच्छादितं, श्रवणं=श्रोत्रं तदाख्यं नक्षत्रं च यया सा तथोक्ता सती,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूरे भवति=दूरं गच्छति। इमानि=एतानि, निश्चलनिलीनमधुपनिपीयमानगर्भमधूनि-निश्चलैः=स्थिरैः, निलीनैः=अन्तरितैश्च, मधुपैः=भृङ्गैः, निपीयमानं=पीयमानं, गर्भमधु=कोशमकरन्दः येषां तथाविधानि, कमलानि=पद्मानि, लोचनानि इव=नेत्राणीव, सङ्कोचयन्ति=निमीलन्ति, लोकपालानां दुष्प्रवृत्तिश्रवणजन्यसङ्कोचवशान्निमीलयन्तीत्यर्थः। विलासवयस्याः=क्रीडासख्यः, सरसीसरोरुहिण्यः=वापीकमलिन्यः, संविभागीकृतविषादा इव—संविभागीकृतः=संविभाजितः, विषादः=इन्द्रादिलोकपालानां दुष्प्रवृत्तिश्रवणजन्यत्वदीयखेदः याभिस्ता इव; त्वयि विषण्णायां क्रीडासखीभावाद्वापीकमलिन्योऽपि विषण्णा इव जाता इति भावः। कथं=केन प्रकारेण, आश्चर्यमेतदिति भावः। कथमित्याश्चर्यद्योतकत्वेन बहुधा प्रयुज्यते। अस्मत्पतयः—अस्माकं दिशां पतयः=स्वामिनः, [देवाः सन्तोऽपि] मनुष्यकन्यकां=मानवसुतां, कामयन्ते=अभिलषन्ति, इति=अस्मात्कारणात्, ईर्ष्याशोकवशादिव=ईर्ष्या च शोकश्च तद्वशादिव, इमाः=एताः, दिशः=ककुभाः; श्यामायन्ते=श्यामा भवन्ति। [सर्वत्रोत्प्रेक्षालङ्कारः, अन्त्यवाक्ये तु लोकपालेषु लम्पटानां दिक्षु चानादृतनायिकानां व्यवहारसमारोपात्समासोक्तिरपि, तदेवं तत्र द्वयोरुत्प्रेक्षासमासोक्त्योः संकरः]। तत्=तस्मात् प्रेष्यतां=विसृज्यताम्; अयम्=एषः पर्वतकः' इति=एवम्, अभिधीयमाना=उच्यमाना, कथंकथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। चिन्तान्तरायतिरस्कृतालापं— चिन्तान्तरायेण=चिन्ताव्यवधानेन, तिरस्कृतः=परित्यक्तः, आलापः=वाग्विनोदः येन तथाविधं, मुखम्=आननम्, ईषत्=किञ्चित्, उन्नमय्य=उन्नतं कृत्वा, समुल्लसदशोकपल्लवानुकारि=विकसदशोककिसलयसदृशं, करतलं=हस्ततलम्, उत्तानीकृत्य=प्रसार्य, अविस्मरणीयसम्मानदानावसाने अविस्मरणीयः=कदापि न विस्मर्तुं शक्यः; यः सम्मानः=आदरः, तस्य दानावसाने=प्रदानसमाप्तौ, मां=पर्वतकं, व्यसर्जयत्=विससर्ज ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् वारांगनाओं के चाटुकारितापूर्ण वचन-क्रम को निरस्त कर, अकस्मात् आये हुए विस्मय के कारण हास-विलास को भूल चुकी, अत्यधिक हिमपात के कारण आहत अर्थात् सूख चुके नूतन कमलदल के समान दीन अर्थात् विषण्णता को प्रदर्शित कर रही विशाल आँखों वाली, उष्ण तथा तीव्र श्वासों का आरम्भ करने वाले अत्यधिक विषाद के कारण मलिन मुखकान्ति वाली उस दमयन्ती की स्थिति को देखकर दुःखी सखियों के द्वारा "हे देवि ! आपके श्वासवायु की परम्परा अर्थात् आवेग से दूर फेंके गये के समान भगवान् सूर्य अपने हाथों और किरणों से अस्ताचल का अवलम्बन ले रहे हैं और यह दिवसलक्ष्मी सौभाग्यशाली नल में अनुरक्त चित्तवाली तुमसे सम्बन्धित लोकपालों द्वारा राजा नल के प्रति की गई प्रार्थनासबन्धी प्रसङ्ग (वृत्तान्त) को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनकर लज्जित-सी होती हुई कानों को बन्द कर दूर चली जा रहीहै। निश्चल और छिपे हुए भ्रमरों द्वारा पान किये जा रहे कोशगत मकरन्द वाले ये कमल (लोकपालों की दुष्प्रवृत्ति को सुनकर संकोच के कारण) मानों अपनी आँखों को बन्द कर रहे हैं। खेल में सहचरीस्वरूपा सरोवर की कमलिनियाँ तुम्हारे विषाद का बटवारा-सी कर रही हैं अर्थात् तुम्हारे विषण्ण होने से क्रीडासखी होने के कारण सरोवर-कमलिनियाँ भी विषण्ण-सी हो रही हैं और आश्चर्य है कि हमारे स्वामी (देवता होते हुए भी) मानवी कन्या की कामना कर रहे हैं। इस कारण से ईर्ष्या और शोक के वशीभूत हो ये दिशायें भी मानों काली होती जा रही हैं। अतः इस पर्वतक को भेज दें।"—इस प्रकार कहे जाने पर चिन्तारूपी व्यवधान के कारण तिरस्कृत किये हुए अर्थात् त्याग किये हुए वाग्विनोद वाले मुख को किसी-किसी प्रकार थोड़ा ऊपर उठाकर, खिलते हुए अशोक वृक्ष के किसलयसदृश करतल को उठाकर कभी न भूलने योग्य सम्मान प्रदान करने के पश्चात् मुझ पर्वतक को विदा किया ॥

विसर्जितश्च तया तत्कालमाविर्भवद्विषादवशसम्पन्नमौनया न पुनः सम्भाषितोऽस्मि, न वीक्षितोऽस्मि, न पृष्टम्, न संदिष्टं किमपि, केवलं चलन्नेत्रविभागप्रान्ततरत्तारया दृष्ट्या समवलोक्य समुत्तानितकरकमलसंज्ञयैव कथमपि संप्रेषितः 'कष्टम्' इति चिन्तयन्नलसालसैरसमञ्जसपातिभिः पश्चिममुखैरिव पादैरिहायातवान् ॥

कल्याणी—विसर्जित इति। विसर्जितश्च=कृतविसर्जनश्च, तया=दमयन्त्या, तत्कालं=तत्क्षणम्, आविर्भवद्विषादवशसम्पन्नमौनया—आविर्भवत्=उत्पद्यमानः, यः विषादः=खेदः, तद्वशात् सम्पन्नं=गृहीतं, मौनं=मूकभावं यया तया दमयन्त्या, न पुनः संभाषितः=किमप्युक्तोऽस्मि, न, वीक्षितः=दृष्टोऽस्मि, न, [किमपि] पृष्टं=पृच्छा कृता, न किमपि सन्दिष्टं=सन्देशो दत्तः, केवलं=मात्रं,चलन्नेत्रविभागप्रान्ततरत्तारया—चलन्नेत्रविभागप्रान्ते=चञ्चलनेत्रोपान्ते, तरन्ती=प्लवमाना, तारा=कनीनिका यस्यास्तथाविधया, दृष्ट्या=दृशा, समवलोक्य=वीक्ष्य, समुत्तानितकरकमलसंज्ञयैव—समुत्तानितस्य=प्रसारितस्य, करकमलस्य=पाणिपद्मस्य, संज्ञयैव=संकेतेनैव, कथमपि=केनापि प्रकारेण, अतिकृच्छ्रेणेत्यर्थः। संप्रेषितः=संप्रहितः, 'कष्टम्=दुःखम्' इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, अलसालसैः=अत्यलसैः, असमञ्जसपातिभिः—असमञ्जसे पतन्त्यवश्यमिति तैः, पश्चिममुखैरिव=पृष्ठतो गन्तुकामैरिव, पादैः=चरणैः, इह=अत्र, आयातवान्=आगतः। दमयन्तीकष्टदशामवधार्य नाहमग्रे गन्तुमुत्सहे स्मेति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और मुझे विदाकर तत्क्षण उत्पन्न विषाद के कारण मौन धारण की हुई उस (दमयन्ती) ने न तो मुझसे कुछ कहा, न मेरी ओर देखा, न कुछ पूछा और न कोई सन्देश ही दिया ! केवल चञ्चल नयनों के एक भाग में तैरती हुई कनीनिका वाली दृष्टि से देखकर उठाये हुये करकमलों के संकेत से ही किसी-किसी प्रकार भेज दिया। (अतः) 'बहुत कष्टकर स्थिति है' इस प्रकार सोचता हुआ अत्यन्त आलस्य अर्थात् अनिच्छा से असमञ्जस में पड़े मानों पृष्ठभाग का अनुगमन करते हुए अर्थात् उलटे पैरों से ही यहाँ आया हूँ।

आशय यह है कि दमयन्ती के कष्टों को देखते हुए आगे बढ़ने का साहस मैं नहीं जुटा पा रहा था ॥

तद्देव दमयन्ती देवदूतकार्याङ्गीकरणव्यतिकरमिममाकर्ण्य परं विषादमापद्यत ॥

कल्याणी—तदिति। तत्=तस्मात्, देव !=महाराज !, दमयन्ती=भीमसुता, इमम्=एतम्, देवदूतकार्याङ्गीकरणव्यतिकरं—भवता यद् देवानां=सुरेन्द्रादिदेवानां, दूतकार्यस्य=दौत्यस्य, अङ्गीकरणं=स्वीकरणं, तद्व्यतिकरं=तद्वृत्तान्तम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, परम्=अत्यधिकं, विषादं=खेदम्, आपद्यत=समवाप्नोत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए हे महाराज ! आपके द्वारा देवताओं के दौत्यकार्य को स्वीकार करने वाले इस प्रसंग को सुनकर दमयन्ती अत्यधिक कष्ट में पड़ गई है, उसे बहुत दुःख पहुचा है ॥

अन्यच्च। मन्ये च—

परिम्लान—च्छाया-विरहित-सनिद्रद्रुमवनं
पतत्पङ्क्तीभूत-ध्वनित-शकुनोन्नादितनभः।
वियोगव्याकूतादुपनदि रुदच्चक्रमिथुनं
विषीदन्त्यां देव्यामिदमपि विषण्णं जगदभूत् ॥२५॥

अन्वयः—(अन्यच्च, मन्ये च) देव्यां विषीदन्त्यां परिम्लानच्छायाविरहित-सनिद्रद्रुमवनं पतत्पङ्क्तीभूतध्वनितशकुनोन्नादितनभः उपनदि वियोगव्याकूतात् रुदच्चक्रमिथुनम् इदं जगत् अपि विषण्णम् अभूत् ॥२५॥

कल्याणी—परिम्लानेति। देव्यां=दमयन्त्यां, विषीदन्त्यां=व्याकुलीभूतायां, परिम्लानच्छायाविरहितसनिद्रद्रुमवनं—परिम्लानं=परिमलिनं, छाया-विरहितं=कान्तिविहीनं, च सनिद्रं=निद्रायुक्तमिव, द्रुमवनं=वृक्षसमूहः यत्र तत्तथा-विधम्, पतत्पङ्क्तीभूतध्वनितशकुनोन्नादितनभः—पतद्भिः=आकाशदध आगच्छद्भिः, पङ्क्तिभूतैः=श्रेणिबद्धैः, ध्वनितैः=आक्रन्दितैः, शकुनैः=पक्षिभिः, उन्नादितं=मुखरितं, नभः=गगनं यत्र तत्तथोक्तम्, उपनदि=सरित्परिसरे, समीपार्थेऽव्ययीभावः। वियोग-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्याकूतात्=विरहसंवेगात्, रुदच्चक्रमिथुनं—रुदन्ति=क्रन्दन्ति, चक्रमिथुनानि=चक्रवाकयुग्मानि यत्र तत्तथाविधम्, इदम्=एतत्, जगदपि=लोकोऽपि, विषण्णं=खिन्नम्, अभूत्=बभूव। उत्प्रेक्षाऽलङ्कार। शिखरिणी वृत्तम् ॥२५॥

ज्योत्स्ना—और भी—मैं ऐसा मानता हूँ कि देवी दमयन्ती के दुःख में पड़ जाने पर पूर्णतया मलिन और छाया-(कान्ति)-रहित निद्रायुक्त से वृक्षों वाला, (आकाश से) नीचे की ओर आते हुए पंक्तिवद्ध क्रन्दन कर रहे पक्षियों से मुखरित आकाश वाला तथा नदी-तट पर वियोग की व्याकुलता से रुदन कर रहे चक्रवाक-युगलों वाला यह संसार भी विषण्ण हो गया है ॥२५॥

इत्यभिधाय स्थिते पर्वतके तत्कालोचितमिममेवार्थं समर्थयन्नवसर-पाठकः पपाठ ॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, पर्वतके स्थिते=तूष्णींभूते, तत्कालोचितं=तत्प्रसङ्गानुकूलम्, इममेव=एतमेव, अर्थं=कारणं, समर्थयन्=संवादयन्, अवसरपाठकः=वैतालिकः, पपाठ=अपठत् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार कहकर पर्वतक के मौन हो जाने पर तात्कालिक प्रसंग के अनुरूप इसी अर्थ का समर्थन करते हुए अवसरपाठक (वैतालिक) ने पढ़ा—

'कन्यामन्यानुरक्तां कथममृतभुजो मानुषीं कामयन्ते
तन्वङ्गीः सस्मितास्याः स्मरविवशदृशो नाकनारीर्विहाय।
वक्तुं खेदादिवैतद्दिनपतिरधिकं व्रीडयैवावनम्रः
कोपेनेवारुणांशुः प्रविशति वरुणस्यालयं पश्चिमाब्धिम् ॥२६॥

अन्वयः—तन्वङ्गीः सस्मितास्याः स्मरविवशदृशः नाकनारीः विहाय अमृत-भुजः कथम् अन्यानुरक्तां मानुषीं कन्यां कामयन्ते, खेदात् एतत् वक्तुं दिनपतिः व्रीडयैव अवनम्रः क्रोधेन इव अरुणांशुः वरुणस्य आलयं पश्चिमाब्धिं प्रविशति ॥२६॥

कल्याणी—कन्यामिति। तन्वङ्गीः—तनूनि=कृशानि, अङ्गानि=देहयष्टयः यासां ताः, सस्मितास्याः—सस्मितानि=मन्दहासयुक्तानि, आस्यानि=मुखानि यासां ताः, तथा स्मरविवशदृशः—स्मरविवशा=मदनालसा, दृशः=नेत्राणि यासां तथाविधाश्च, नाकनारीः=स्वर्गाङ्गनाः, विहाय=समुपेक्ष्य, अमृतभुजः=अमृत-पायिनः देवाः, इन्द्रादयो दिक्पालाः, कथं=केन प्रकारेण, आश्चर्यमेतदिति भावः। अन्यानुरक्ताम्—अन्यस्मिन्=स्वजातीयान्यपुरुषे, अनुरक्तां=सानुरागां, मानुषीं=मानवजातीयां, कन्यां=ललनां, कामयन्ते=अभिलषन्ति, खेदात्=दुःखात्, देवानां प्रतिष्ठाप्रतिकूलाचरणमूलकादिति भावः। एतत्=अशोभनं वृत्तं, वक्तुं=विज्ञापयितुं, तथाविधानुचितकार्याद् विनिवारयितुमिवेति भावः। दिनपतिः=सूर्यः;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्रीडयैव=लज्जयैव, अवनम्रः=अवनतः, क्रोधेनेव अरुणांशुः—अरुणाः=रक्ताः, अंशवः=किरणाः यस्य स तथाभूतः, रक्तकान्तिरित्यर्थः। वरुणस्य=वरुणदेवस्य, आलयं=निवासस्थानं, पश्चिमाब्धिं=पश्चिमसागरं, प्रविशति=प्रवेशं करोति। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। स्रग्धरा वृत्तम् ॥२६॥

ज्योत्स्ना—कृश अंगों वाली, मन्द हासयुक्त मुखों वाली तथा काम के कारण आलस्ययुक्त नयनों वाली स्वर्गसुन्दरियों की उपेक्षा कर अमृत का पान करने वाले (इन्द्रादि) देवगण दूसरे (स्वजातीय अन्य पुरुष) में अनुरक्त मनुष्य-जातीय कन्या के लिए क्यों लालायित हो रहे हैं ? (देवताओं की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल उनके इस आचरण के चलते) खेद के कारण इस (अशोभन समाचार) को बताने के लिए भगवान् सूर्य मानों अत्यधिक लज्जा के कारण अवनत तथा क्रोध के कारण रक्त वर्ण किरणों वाले होकर वरुणदेव के आवासस्थानस्वरूप पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर रहे हैं ॥२६॥

राजा तु तदाकर्णयन्, अवतीर्य सौधशिखरतलाल्लीलापदप्रचारेण सन्ध्यावन्दनविधिविरामोपविष्टजपद्विजजनसनाथसैकते सरित्सङ्गमे सन्ध्याह्निकमकरोत् ॥

कल्याणी—राजेति। राजा=नलस्तु, तत्=स्तुतिपाठकपठितम्, आकर्णयन्=शृण्वन्, सन्ध्याकालं विज्ञायेति भावः। सौधशिखरतलात्=तदारोपित-जङ्गमचित्रकूटाख्यसौधस्य स्कन्धप्रदेशात्, अवतीर्य=अवतरणं कृत्वा, लीलापद-प्रचारेण—लीलया=विलासेन, पदैः=चरणैः, प्रचारः=विचरणं तेन, पद्भ्यामेव गत्वेति भावः। सन्ध्यावन्दनविधिविरामोपविष्टजपद्विजजनसनाथसैकते—सन्ध्या-वन्दनविधेः=सान्ध्यपूजनप्रकारस्य, विरामे=अवसाने, उपविष्टैः=आसीनैः, जपन्तीति जपास्तैः [पचाद्यच्] द्विजजनैः=ब्राह्मणैः, सनाथं=युक्तं, सैकतं=वालुकामयतटं यस्य तस्मिन्, सारित्सङ्गमे=विदर्भवरदासङ्गमस्थले, सन्ध्याह्निकं=सायंकालिक-दैनिककृत्यम्, अकरोत्=चकार ॥

ज्योत्स्ना—राजा नल तो यह सुनते ही (सन्ध्याकाल समझकर) प्रासाद के शिखरभाग से उतर कर धीरे-धीरे पैदल ही जाकर सन्ध्यावन्दन विधि की समाप्ति के बाद बैठ कर जप में तत्पर ब्राह्मणों से सनाथित वालुकामय तट वाले नदी-संगम पर दैनिक कृत्य को सम्पन्न किया ॥

ततश्च पश्चिमायां दिशि स्फुरति सन्ध्यारागे, रुधिरासवपिपासया कालवेतालमण्डलीव प्रधावमाना, त्रिभिः स्रोतोभिः प्रवृत्तया गङ्गया सह संहर्षादिवानेकैः स्रोतसां सहस्रैर्गगनतलमिव प्लावयन्ती कालिन्दीव, व्यजृम्भत तिमिरपटलपङ्क्तिः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—ततश्चेति। ततः=तदनन्तरं च, पश्चिमायां दिशि=प्रतीची-दिशायां, सन्ध्यारागे—सन्ध्यायाः रागः=अरुणिमा तस्मिन्, स्फुरति=प्रकटति, रुधिरासवपिपासया=रुधिरासवं पातुमिच्छया, कालवेतालमण्डलीव=कालरूपा वेतालसभा इव; प्रधावमाना=धावमाना, त्रिभिः=त्रिसंख्याकाभिः, स्रोतोभिः=धाराभिः; प्रवृत्तया=प्रवहन्त्या, गङ्गया=भागीरथ्या, सह=साकं, संहर्षादिव=स्पर्धावशादिव, अनेकैः=नानाविधैः, स्रोतसां=धाराणां, सहस्रैः=सहस्रसंख्याकैः, गगनतलमिव=आकाशतलमिव, प्लावयन्ती=निमज्जयन्ती, कालिन्दीव=यमुनेव, तिमिरपटल-पङ्क्तिः=अन्धकारराशिः, व्यजृम्भत=उदलसत्। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद पश्चिम दिशा की ओर सन्ध्या की लालिमा के फैल जाने पर, रुधिर-आसव का पान करने की इच्छा से दौड़ती हुई कालरूप वेतालमण्डली के समान, तीन धाराओं से प्रवहमान गंगा के साथ स्पर्धा के कारण मानों अनेकों हजार धाराओं से गगनतल को निमग्न करती हुई यमुना के समान अन्धकार-पुञ्ज उल्लसित हो उठा॥

अनन्तरं च चन्द्रमसा गर्भिणी पौरन्दरी दिक्केतकीपुष्पपत्त्रपाण्डिमानमगमत्॥

कल्याणी—अनन्तरं चेति। अनन्तरं=परतश्च, चन्द्रमसा=चन्द्रेण; गर्भिणी=गर्भयुक्ता, पुरन्दरस्य=इन्द्रस्येयं पौरन्दरी=पूर्वा दिक्, केतकीपुष्पपत्त्रपाण्डिमानं-केतकीपुष्पपत्त्रस्य पाण्डिमानं=पाण्डुताम् अगमत्=अभाक्षीत्। गर्भिणी हि केतकपत्त्रवत्पाण्डुतां धत्ते। प्रतीयमानोत्प्रेक्षा॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद चन्द्रमा से गर्भयुक्त हो इन्द्र की दिशा अर्थात् पूर्व दिशा केतकी-(केवड़ा)-पुष्प के पत्ते के समान पीत वर्ण की हो उठी॥

उल्ललास च चण्डतरमारुतान्दोलितोदयाद्रिद्रुमकुसुमकिञ्जल्करेणुराजिरिव कपिशा शशाङ्कद्युतिः॥

कल्याणी—उल्ललासेति। चण्डतरमारुतान्दोलितोदयाद्रिद्रुमकुसुमकिञ्जल्करेणुराजिरिव—चण्डतरमारुतेन=प्रचण्डवायुना, आन्दोलितानां=प्रकम्पितानाम्, उदयाद्रिद्रुमाणाम्=उदयाचलतरूणां, कुसुमकिञ्जल्करेणुराजिरिव=पुष्पकेसरधूलि-पङ्क्तिरिव, कपिशा=स्वर्णाभा, शशाङ्कद्युतिः=चन्द्रकान्तिश्च, उल्ललास=उद्दिदीपे। उपमाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और प्रचण्ड वायु के द्वारा कम्पित उदयाचलस्थित वृक्षों के पुष्पपरागरेणु के समान कपिश वर्ण वाली चन्द्रमा की कान्ति उद्दीप्त हो उठी॥

अथ क्रमेण पूर्वपयोधिपुलिनाद्राजहंस इव गगनमन्दाकिनीमुच्चलितः केसरिकिशोर इवोदयगिरिगुहागह्वरात्तिमिरकरियूथपपृष्ठलग्नः, स्फटिक-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मयः पूर्णकुम्भ इव जगद्विजयप्रस्थानस्थितस्य मङ्गलाय मकरकेतोः केनापि सज्जीकृतः, श्रीखण्डपिण्ड इव मण्डनाय महेन्द्रदिशाहस्तश्लेषोपलालितः, शङ्खिकापुष्पस्तबक इव गगनश्रिया श्रवणे संयोजितः, कुम्भ इवैकः प्राचीवनविहारिसुरकरीन्द्रस्य प्रकटतां गतः, वासरविरामवल्लीमुल्लूय कन्द इवोद्धृतो निशाशबरिकया, पाण्डुपुष्पाक्षतगुञ्जापुञ्ज इव सिद्धवधूभिरुदयाचलचतुष्पथे विरचितः, गण्डशैल इव कैलासशिखराल्लुठित्वागतः, सीमन्तमौक्तिकमिव पूर्वदिङ्मुखस्य, सितातपत्रमिव पूर्वाशाधिपतेः पुरन्दरस्य, क्रीडामौक्तिककन्दुक इव कालकुमारस्य क्षीरडिण्डीरपिण्डसदृशो दृष्टिपथमवततार तारापतिः ॥

कल्याणी— अथेति । अथ=अनन्तरं, क्रमेण=क्रमशः, पूर्वपयोधिपुलिनात्=पूर्वसिन्धुतटप्रदेशात्, राजहंस इव=मराल इव, गगनमन्दाकिनीम्=आकाशगङ्गाम्, उच्चलितः=प्रस्थितः, केसरिकिशोर इव=मृगराजपोत इव, उदयगिरिगुहागह्वरात्=उदयाचलगुहाभ्यन्तरात्, [निःसृत्य] तिमिरकरियूथपृष्ठलग्नः—तिमिरं=तमः; स एव करियूथं=गजसमूहः, तस्य पृष्ठे=पश्चाद्भागे, लग्नः=संसक्तः, तदनुधावन्नित्यर्थः । स्फटिकमयः=स्फटिकनिर्मितः, पूर्णकुम्भ इव=पूर्णघट इव, जगद्विजयप्रस्थानस्थितस्य—जगद्विजयाय=विश्वजयाय, यत् प्रस्थानं=प्रयाणं, तत्र स्थितस्य=विद्यमानस्य, मकरकेतोः=कामदेवस्य, मङ्गलाय=कल्याणाय, केनापि=केनापि जनेन, सज्जीकृतः=विभूषितः,श्रीखण्डपिण्ड इव=चन्दनपिण्ड इव, मण्डनाय=अलङ्काराय, महेन्द्रदिशाहस्तश्लेषोपलालितः—महेन्द्रदिशा=पूर्व दिशा, हस्तश्लेषेन=करालिङ्गनेन, उपलालितः=सम्मानितः, शङ्खिकापुष्पस्तबक इव—शङ्खिकापुष्पाणां स्तबकः=गुच्छ इव, गगनश्रिया=आकाशलक्ष्म्या, श्रवणे=कर्णप्रदेशे श्रवणनक्षत्रे च, संयोजितः=धारितः सम्बद्धीकृतश्च, प्राचीवनविहारिसुरकरीन्द्रस्य—प्राचीवने विहारिणः=विहरतः, सुरकरीन्द्रस्य=देवगजस्यैरावतस्य, एकः=अपूर्वः, कुम्भ इव=घट इव, प्रकटतां गतः=प्रकटीभूतः, [वनगहने हि विहरतो गजस्य प्रायेणैक एव कुम्भस्थलविभागो लक्ष्यते] । निशाशबरिकया—निशा=रात्रिरेव शबरिका=शबराङ्गना तया, वासरविरामवल्लीमुल्लूय—वासरविरामः=दिनावसानमेव वल्ली=लता, तामुल्लूय=उच्छिद्य, कन्द इव=ग्रन्थिलमूलमिव, उद्धृतः=निःसारितः, पाण्डुपुष्पाक्षतगुञ्जापुञ्ज इव—पाण्डु=पीतवर्णं, पुष्पाणाम् अक्षतानां गुञ्जानां च पुञ्ज इव=राशिरिव, [मङ्गलाय] सिद्धवधूभिः—सिद्धः=देवयोनिविशेषः, सिद्धवधूभिः=सिद्धाङ्गनाभिः, उदयाचलचतुष्पथे=उदयाचलस्य चतुष्के, विरचितः=रचितः, निहित इत्यर्थः । गण्डशैल इव=भग्नप्रस्तरसमूह इव, कैलासशिखरात्=कैलासशृङ्गाग्रभागात्, लुठित्वा=भङ्क्त्वा, आगतः=आयातः, पूर्वदिङ्मुखस्य—पूर्वा या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिक् तस्या मुखस्य, सीमन्तमौक्तिकमिव—सीमन्तः=केशपाशविभाजकमध्यरेखा, तन्मौक्तिकमिव=भूषणमिव, [स्त्रीभिर्हि सीमन्तो मौक्तिकैः पूर्यते]। पूर्वाशाधिपतेः—पूर्वाशा=पूर्वा दिक्, तस्या अधिपतिः=स्वामी इन्द्रः तस्य, सितातपत्रमिव=श्वेतच्छत्रमिव, कालकुमारस्य—कालः=समयः, स एव कुमारः=पुत्रः तस्य, क्रीडामौक्तिककन्दुक इव—क्रीडायै मौक्तिककन्दुक इव, क्षीरडिण्डीरपिण्डसदृशः=दुग्धफेनपिण्डसदृशः, तारापतिः=चन्द्रः, दृष्टिपथं=नयनमार्गम्, अवततार=अवातरत्, अदृश्यतेत्यर्थः ॥

ज्योत्स्ना—इसके अनन्तर क्रमशः समुद्रतट से प्रस्थान करते राजहंस के समान आकाशगंगा की ओर प्रस्थान करते हुए, सिंहशावक के समान उदयाचल की गुफाओं के भीतर से निकल कर अन्धकाररूपी हस्तिसमूह के पीछे दौड़ते हुए, स्फटिकनिर्मित पूर्ण कुम्भ के समान विश्वविजय के लिए प्रयाण हेतु तैयार कामदेव के मंगल हेतु किसी के द्वारा सज्जित किया गया, चन्दनपिण्ड के समान अलंकार के लिए पूर्व दिशा के हाथों द्वारा आलिङ्गन से सम्मानित, शंखपुष्पिका-गुच्छ के समान आकाशलक्ष्मी के द्वारा कर्णप्रदेश पर धारण किया गया और श्रवण नक्षत्र से सम्बद्ध, पूर्व दिशा के वन में विहार कर रहे देवगज ऐरावत के एक कुम्भस्थल के समान प्रकट हुआ, रात्रिरूपी शबरसुन्दरी के द्वारा दिन की समाप्तिरूपी लता को उखाड़ कर कन्द (ग्रन्थिल मूल) के समान निकाला गया, पीले रंग के पुष्प-अक्षत एवं गुञ्जों की राशि के समान (मंगल के लिए) सिद्धांगनाओं के द्वारा उदयाचल के चौराहे पर रक्खा गया, गण्डशैल (भग्न-प्रस्तरसमूह) के समान कैलास पर्वत के शिखर से टूट कर आया हुआ, पूर्व दिशा के मुख के सीमन्तमौक्तिक (केशों को विभाजित करने वाली शिरःस्थित मध्यरेखा के आभूषण) के समान, पूर्व दिशा के स्वामी इन्द्र के श्वेत छत्र के समान, समयरूपी कुमार (बालक) को खेलने के लिए मौक्तिककन्दुक के समान दुग्ध के फेनपिण्डसदृश तारापति (चन्द्रमा) दृष्टिपथ पर अवतरित हुआ अर्थात् दिखाई पड़ा ॥

तदनु च—

मदनमिति युवानं यौवराज्येऽभिषिञ्चन्
कृतकुमुदविकासो भासयन्दिङ्मुखानि ।
इममृततरङ्गैः प्लावयञ्जीवलोकं
गगनमवजगाहे मन्दमन्दं मृगाङ्कः ॥२७॥

अन्वयः—मदनमिति युवानं यौवराज्ये अभिषिञ्चन् कृतकुमुदविकासः दिङ्मुखानि भासयन् अमृततरङ्गैः इमं जीवलोकं प्लावयन् मृगाङ्कः मन्दमन्दं गगनम् अवजगाहे ॥२७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—मदनमिति । मदनमिति युवानं=मदनयुवानं; यौवराज्ये=युवराजपदे, अभिषिञ्चन्=अभिषिक्तं कुर्वन्, कृतकुमुदविकासः—कृतः=विहितः, कुमुदानां विकासः येन स तथाविधः, दिङ्मुखानि=दिशां मुखानि, भासयन्=उद्दीपयन्, अमृततरङ्गैः=सुधालहरीभिः, इमम्=समस्तं; जीवलोकं=प्राणिजगत्, प्लावयन्=स्नपयन्, मृगाङ्कः=चन्द्रः, मन्दमन्दं=शनैः शनैः, गगनम्=आकाशम्, अवजगाहे=प्रविवेश । मृगाङ्केण गगनस्य मन्दमन्दावगाहे प्रथमपादस्यार्थस्य हेतुत्वेनोपन्यासात् काव्यलिङ्गालङ्कारः । मालिनी वृत्तम् ॥२७॥

ज्योत्स्ना—और उसके बाद—मदनयुवक को युवराज पद पर अभिषिक्त करता हुआ, कुमुदों को विकसित कर दिङ्मुखों को प्रकाशित करता हुआ, अमृततरंगों के द्वारा इस समस्त जीवलोक को प्लावित करता हुआ अर्थात् नहलता हुआ चन्द्रमा धीरे-धीरे आकाश में प्रविष्ट हुआ ॥२७॥

तदनन्तरम्, आप्लावितमिव मुक्तमर्यादेन दुग्धवार्धिना, सिक्तभूभागाङ्गणमिवामन्दचन्दनाम्बुच्छटाभिः, विलिप्तदिग्भित्तिकमिव सान्द्रसुधापङ्कपिण्डितैः; पूरितमिवोत्सर्पिकर्पूरपांसुवृष्टया, प्रविष्टमिव स्फाटिकमणिमहामन्दिरोदरदरीम्, उत्प्लवमानमिव द्रवीभूततुहिनाचलमहाप्लवेन, भुवनमासीत् ॥

कल्याणी—तदनन्तरमिति । तदनन्तरं=तत्पश्चात्, भुवनं=संसारः; मुक्तमर्यादेन—मुक्ता=परित्यक्ता, मर्यादा=सीमा येन तेन, दुग्धवार्धिना=क्षीरसागरेण, आप्लावितमिव=निमज्जितमिव, अमन्दचन्दनाम्बुच्छटाभिः=समधिकचन्दनमिश्रितजलासारैः, सिक्तभूभागाङ्गणमिव—सिक्तम्=आर्द्रीकृतं; भूभागात्मकमङ्गणं=अजिरं यस्य तत्तथोक्तमिव, सान्द्रसुधापङ्कपिण्डितैः—सान्द्रः=प्रगाढः, यः सुधापङ्कः=लेपविशेषः, तस्य पिण्डितैः=राशिभिः, विलिप्तदिग्भित्तिकमिव—विलिप्ता दिग्भित्तयः यस्य तत्तथाविधमिव, उत्सर्पिकर्पूरपांसुवृष्टया—उत्=ऊर्ध्वं, सर्पति=गच्छत्यवश्यमित्युत्सर्पी, आकाशगत इत्यर्थः । तथाविधो यः कर्पूरः, तस्य पांसुवृष्टया=धूलिवर्षणेन, यद्वा उत्थायाकाशं गतानां कर्पूरधूलीनां वृष्टया पुनरधःपातेनेत्यर्थः । पूरितमिव=पूर्णीकृतमिव, स्फाटिकमणिमहामन्दिरोदरदरीं=स्फटिकमणिनिर्मितविशालभवनस्याभ्यन्तरभागात्मकगुहां, प्रविष्टमिव=कृतप्रवेशमिव, द्रवीभूततुहिनाचलमहाप्लवेन—द्रवीभूतस्य तुहिनाचलस्य=हिमाचलस्य, महाप्लवेन=भीषणजलपूरेण, उत्प्लवमानमिव=तरदिव, आसीत्=अभवत् ॥

ज्योत्स्ना—तत्पश्चात् संसार मर्यादा का परित्याग किये हुए क्षीरसागर द्वारा डुबोये गये के समान, समधिक चन्दनमिश्रित जल की धारा के द्वारा सिञ्चित भूभागरूपी आँगन के समान, अत्यन्त गाढ़े चूने के गोले से लिप्त की गई दिशारूपी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दीवालों की भित्तियों के समान, ऊपर गये हुए अर्थात् आकाशगत अथवा उठकर आकाश में गये हुए कर्पूर की रेणुवृष्टि के द्वारा पूर्ण किये गये के समान, स्फटिक मणि से निर्मित विशाल भवन के मध्यभागरूपी गुफा में प्रविष्ट हुए के समान, पिघले हुए हिमालय के भीषण जलभराव (बाढ़) से तैरते हुए के समान हो गया ॥

विमर्श—प्रकृत समस्त शब्दजाल के माध्यम से कवि को केवल इतना ही कहना अभीष्ट है कि आकाश में चन्द्रमा का उदय हो जाने पर उसकी चाँदनी से समस्त संसार शुभ्र दिखाई पड़ने लगा ॥

ततश्च—

कैलासायितमद्रिभिर्विटपिभिः श्वेतातपत्रायितं
मृत्पङ्केन दधीयितं जलनिधौ दुग्धायितं वारिभिः ।
मुक्ताहारलतायितं व्रततिभिः शङ्खायितं श्रीफलैः
श्वेतद्वीपजनायितं जनपदैर्जाते शशाङ्कोदये ॥२८॥

अन्वयः—शशाङ्कोदये जाते अद्रिभिः कैलासायितं, विटपिभिः श्वेतातपत्रायितम्, मृत्पङ्केन दधीयितम्, जलनिधौ वारिभिः दुग्धायितम्, व्रततिभिः मुक्तहारलतायितम्, श्रीफलैः शङ्खायितम्, जनपदैः श्वेतद्वीपजनायितम् ॥२८॥

कल्याणी—कैलासायितमिति । शशाङ्कोदये जाते=चन्द्रमसि पूर्णतः समुदिते सति, अद्रिभिः=सकलपर्वतैः, कैलासायितं=कैलासेनेवाचरितम्, सर्वे पर्वताः कैलासवच्छुभ्रा जाता इत्यर्थः । विटपिभिः=वृक्षैः, श्वेतातपत्रायितं— श्वेतातपत्रं=छत्रं, तेनेवाचरितम्, सर्वे विटपिनः श्वेतच्छत्रवच्छुभ्राः प्रतीयन्ते स्मेत्यर्थः । मृत्पङ्केन— मृदः=मृत्तिकायाः, पङ्कः=कर्दमः तेन, दधीयितं=दध्नेवाचरितम् मृत्पङ्को दधिवत् प्रतीयते स्म । जलनिधौ=सागरे, वारिभिः=जलैः, दुग्धायितं=दुग्धैरिवाचरितम्, सागरे वारीणि क्षीरवत्प्रतीयन्ते स्म । व्रततिभिः=लताभिः, मुक्ताहारलतायितं=मुक्ताहारलताभिरिवाचरितम्, व्रततयो मुक्ताहारलतावत् प्रतीयन्ते स्म । श्रीफलैः=बिल्वफलैः, शङ्खायितं=शङ्खवदाचरितम्, बिल्वफलानि शङ्खवत्प्रतीयन्ते स्म । जनपदैः=जनसमुदायैः, श्वेद्वीपजनायितं=श्वेतद्वीपजनैरिवाचरितम्, जनसमुदायाः श्वेतद्वीपजनवत्प्रतीयन्ते स्म । सर्वत्र व्यङ्गतोपमा । अद्र्यादीनां तत्तत्पदार्थानां स्वगुणत्यागपूर्वं ह्यत्युत्कृष्टगुणग्रहणात् तद्गुणालङ्कारः । तयोरङ्गाङ्गिभावेन सङ्करः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥२८॥

ज्योत्स्ना—और तब—चन्द्रमा के पूर्णतया उदित हो जाने पर समस्त पर्वत कैलास के समान (शुभ्र) लगने लगे, वृक्ष श्वेत छत्र के समान (शुभ्र) प्रतीत होने लगे, मिट्टी की कीचड़ दधि के समान प्रतीत होने लगी, समुद्रः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का जल दूध के समान दिखाई देने लगा, लतायें मुक्ताहार (मोतियों की माला) के समान प्रतीत होने लगीं, श्रीफल (बेल) शंख जैसे लगने लगे और जनपद अर्थात् जनसमुदाय श्वेत द्वीप के निवासी लोगों के समान प्रतीत होने लगा ॥२८॥

अपि च—

सर्वेऽपि पक्षिणो हंसाः सर्वेऽप्यैरावता गजाः।
जाताश्चन्द्रांशुभिः सर्वे रौप्यपुञ्जाः शिलोच्चयाः ॥२९॥

अन्वयः—चन्द्रांशुभिः सर्वे अपि पक्षिणः हंसाः सर्वे अपि गजाः ऐरावताः सर्वे शिलोच्चयाः रौप्यपुञ्जाः जाताः ॥ २९ ॥

कल्याणी—सर्वेऽपीति। चन्द्रांशुभिः=चन्द्रकिरणैः, सर्वेऽपि=निखिला अपि, पक्षिणः=खगाः, हंसाः=मरालाः, सर्वेऽपि=समस्ता अपि, गजाः=हस्तिनः, ऐरावताः=ऐरावताख्याः, सर्वे=समस्ताः, शिलोच्चयाः=प्रस्तरराशयः, रौप्यपुञ्जाः=रजतसमुच्चयाः, जाताः=सञ्जाताः। तद्गुणालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ २९ ॥

ज्योत्स्ना—और भी—चन्द्रमा की किरणों (चांदनी) से सभी पक्षी हंस के समान, सभी हाथी ऐरावत के समान और पत्थर की सभी चट्टानें चांदी की ढेर के समान प्रतीत होने लगे ॥ २९ ॥

अपि च—

सुधापङ्कोपलिप्तेव बद्धेव स्फटिकोपलैः।
विलीनहिमदिग्धेव मेदिनी ज्योत्स्नया कृता ॥३०॥

अन्वयः—मेदिनी ज्जोत्स्नया सुधापङ्कोपलिप्ता इव स्फटिकोपलैः बद्धा इव विलीनहिमदिग्धा इव कृता ॥ ३० ॥

कल्याणी—सुधेति। मेदिनी=पृथ्वी, ज्योत्स्नया=चन्द्रिकया, सुधापङ्कोपलिप्ता इव—सुधापङ्केन=लेपविशेषेण, उपलिप्तेव, स्फटिकोपलैः=स्फटिकप्रस्तरैः, बद्धेव=खचितेव, विलीनहिमदिग्धा इव—विलीनेन=द्रवीभूतेन, हिमेन=तुहिनेन, दिग्धेव=उपलिप्तेव, कृता=विहिता। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ३०॥

ज्योत्स्ना—और भी—पृथिवी (चन्द्रमा की) चन्द्रिका के द्वारा चूने के पङ्क से लिप्त की गई के समान, स्फटिकप्रस्तरों से जड़ी हुई के समान और विलीन अर्थात् द्रवीभूत (पिघले हुए) बर्फ से उपलिप्त के समान बना दी गई ॥३०॥

अपि च—

सौधस्कन्धतलानि दीपपटलैः कम्पेन पाण्डुध्वजा
हंसाः पक्षविधूननेन मृदुना निद्रान्तनादेन च।
लक्ष्यन्ते कुमुदानि षट्पदरुतैरुत्सर्पिगन्धेन च
क्षुभ्यत्क्षीरपयोधिपूरसदृशे जाते शशाङ्कोदये ॥३१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—क्षुभ्यत्क्षीरपयोधिपूरसदृशे शशाङ्कोदये जाते सौधस्कन्धतलानि दीपपटलैः पाण्डुध्वजाः कम्पेन हंसाः पक्षविधूननेन मृदुना निद्रान्तनादेन कुमुदानि षट्पदरुतैः उत्सर्पिगन्धेन च लक्ष्यन्ते ॥३१॥

कल्याणी—सौधेति । क्षुभ्यत्क्षीरपयोधिपूरसदृशे—क्षुभ्यत्=स्फायमानः, यः क्षीरपयोधिः=दुग्धसिन्धुः, तस्य पूरेण=प्रवाहेण, सदृशे=समे, शशाङ्कोदये=चन्द्रोदये; जाते=सञ्जाते, सौधस्कन्धतलानि=सौधशिखरतलानि, दीपपटलैः=दीपश्रेणिभिः, पाण्डुध्वजाः=श्वेतपताकाः, कम्पेन=कम्पनेन, हंसाः=मरालाः, पक्षविधूननेन=पक्षास्फालनेन, तथा मृदुना=कोमलेन, निद्रान्तनादेन—निद्रान्ते कृतेन नादेन=ध्वनिना च, कुमुदानि षट्पदरुतैः=मधुपगुञ्जितैः, उत=अथवा, उत्सर्पिगन्धेन=प्रसरणशीलगन्धेन च, लक्ष्यन्ते=अभिज्ञायन्ते । अत्र सौधस्कन्धहंसादिशुभ्रपदार्थानां तुल्यगुणतया चन्द्रांशुतादात्म्यप्रतीत्या सामान्यालङ्कारः 'सामान्यं प्रकृतस्यान्यतादात्म्यं सदृशैर्गुणैः ।' इति तल्लक्षणात् । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३१॥

ज्योत्स्ना—और भी—उमड़ रहे क्षीरसागर के जलभरावसदृश चन्द्रमा के उदित हो जाने पर अट्टालिकाओं का शिखरतल दीपपंक्तियों से, श्वेत पताकायें कम्पन से, हंस पंखों के फड़फड़ाने से तथा शयन के अनन्तर की गई कोमल ध्वनि से और कुमुद भ्रमरों के गुञ्जार से अथवा फैलने वाले गन्ध से ही पहचाने जा सकते थे ।

विमर्श—निहितार्थ यह है कि जगत् के जितने भी श्वेत पदार्थ थे, वे सभी चन्द्रमा की चाँदनी के व्याप्त हो जाने पर उसी में विलीन हो गये थे । सामान्य अवस्था में उनको पहचानना ही असम्भव हो गया था ॥३१॥

तथाविधे च चन्द्रोदयप्रपञ्चे हठादुत्कण्ठयाभिभूयमानो निषधनाथश्चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—तथाविधे चेति । तथाविधे=तादृशे च, चन्द्रोदयप्रपञ्चे=चन्द्रोदयविस्तारे, हठात्=बलात्, उत्कण्ठया=उत्सुकतया, अभिभूयमानः=पराजीयमानः, निषधनाथः=नलः, चिन्तयाञ्चकार=अचिन्तयत् ॥

ज्योत्स्ना—और इस प्रकार से चन्द्रोदय का विस्तार हो जाने पर उत्कण्ठा के द्वारा बलात् पराजित किये जाते हुए निषधनरेश नल ने विचार किया कि—

'इतश्चन्द्रः सान्द्रान्किरति किरणानग्निपरुषान्
इतोऽपि प्रोन्मीलत्कुमुदवनवायुर्विलसति ।
इतः कादम्बानां ध्वनितमपि निद्रालसदृशा-
मसह्यः सर्वोऽयं मनसिजमहिम्नः परिकरः ॥३२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—इतः चन्द्रः अग्निपरुषान् सान्द्रान् किरणान् किरति, इतः अपि प्रोन्मीलत्कुमुदवनवायुः विलसति, इतः निद्रालसदृशां कादम्बानां ध्वनितम् अपि, सर्वः अयं मनसिजमहिम्नः परिकरः असह्यः ॥३२॥

कल्याणी—इत इति। इतः=अस्मिन् भागे, चन्द्रः=शशी, अग्निपरुषान्=अग्निवत् तीक्ष्णान्, सान्द्रान्=निबिडान्, किरणान्=गभस्तयः, किरति=प्रक्षिपति, इतोऽपि प्रोन्मीलत्कुमुदवनवायुः—प्रोन्मीलतः=विकसतः, कुमुदवनस्य=कुमुदारण्यस्य, वायुः=पवनः, विलसति=मन्दमन्दं वहति, इतो निद्रालसदृशा—निद्रया अलसे दृशौ=नेत्रे येषां तथाविधानां, कादम्बानां=हंसानां, ध्वनितं=ध्वनिरपि, सर्वोऽयं मनसिजमहिम्नः=काममाहात्म्यस्य, परिकरः=परिजनः, असह्यः=सोढुमशक्यः। चन्द्रकिरणादीनां कामसहायतया तत्परिजनत्वम्। शिखरिणी वृत्तम् ॥३२॥

ज्योत्स्ना—"इधर चन्द्रमा अग्निसदृश तीक्ष्ण घनी किरणों को फेंक रहा है और इधर खिलते हुए कुमुदवन की मन्द-मन्द हवा बह रही है। इधर निन्द्रा के कारण अलसाई आँखों वाले हंसों की ध्वनि भी हो रही है। कामदेव की महिमा को व्यक्त करने वाली ये सभी सामग्रियाँ असह्य हैं ॥३२॥

अपि च—

इतो मकरकेतनः किरति दुर्निवारः शरा-
नितोऽपि वयमाकुलाः कुलिशपाणिदत्ताज्ञया।
तदेतदतिसङ्कटं यदिह कैश्चिदुक्तं जनै-
रितो विषमदुस्तटी भयमितो महाव्याघ्रतः ॥ ३३ ॥

अन्वयः—इतः दुर्निवारः मकरकेतनः शरान् किरति, इतः अपि कुलिशपाणिदत्ताज्ञया वयम् आकुलाः; तत् इह एतत् अतिसङ्कटं यत् कैश्चित् जनैः उक्तम्,' इतः विषमदुस्तटी इव महाव्याघ्रतः भयम् ॥३३॥

कल्याणी—इत इति। इतः=इतस्तु, दुर्निवारः=दुर्धर्षः, मकरकेतनः=कामदेवः; शरान्=बाणान्, किरति=प्रक्षिपति, इतोऽपि कुलिशपाणिदत्ताज्ञया—कुलिशपाणिः=इन्द्रः; तेन दत्ता=प्रदत्ता, या आज्ञा=आदेशः तया, वयम् आकुलाः=उद्विग्नाः, तत्=तस्मात्, इह=अस्यां परिस्थितौ, एतत्=इदम्, अतिसङ्कटं=महद्विपत्, यत्कैश्चिज्जनैः=कैश्चित्पुरुषैः, उक्तं=कथितम्, इतो विषमदुस्तटी=भयङ्करतटम्, इतो महाव्याघ्रतः=भीषणव्याघ्रात्, भयं=भीतिः। पृथ्वी वृत्तम्। तल्लक्षणं यथा—'जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः'। इति ॥३३॥

ज्योत्स्ना—और भी—इधर दुर्धर्ष कामदेव (अपने) बाणों को फेंक रहा है और उधर वज्रपाणि (इन्द्र) द्वारा दी गई आज्ञा के कारण हमलोग व्याकुल हैं। इसलिए यह अत्यन्त संकटपूर्ण स्थिति है, जैसे कि कुछ लोगों द्वारा कहा गया कि—इधर भयंकर किनारा और उधर भीषण व्याघ्र का भय ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विमर्श—आशय है कि 'भई गति सांप छुछुंदर केरी' वाली स्थिति में पड़कर राजा नल किंकर्तव्यविमूढ़-सा होकर अपने को लाचार महसूस करने लगा था ॥३३॥

तदिदानीं किमिह कर्तव्यम्, कथं वा हास्येनाप्यवन्ध्यवचसामलङ्घनीयः खल्वादेशो लोकपालानाम्' इति चिन्तयन्नेकाकी पद्भ्यामेव विनिर्गत्य निजनिकेनात्समन्तादापतद्भिः शशाङ्ककिरणजालैः परिजनैरिव परिदर्शितवर्त्मा कैश्चित्काललवैः कैलासकूटायमानाट्टालकाभोगभव्यं भीमभूपालभवनमवाप्य कन्यान्तःपुरं पुरन्दरवरप्रदानाददृश्यमानरूपः प्रासादपालकैः प्रविवेश ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, इदानीं=सम्प्रति, इह=अस्यां स्थितौ, किं कर्त्तव्यं=किं करणीयम्, वा=अथवा, कथं=केन प्रकारेण, अवन्ध्यवचसाम्—अवन्ध्यम्=अव्यर्थं, वचः=वचनं येषां तथाविधानां, लोकपालानाम्=इन्द्रादीनाम्, आदेशः=निदेशः, हास्येनापि=हास्यदशयाऽपि, अलङ्घनीयः=अनतिक्रमणीयः, खलु=निश्चयेन, लोकपालानां सर्वथा पालनीयमादेशं कथं वा पालयेयमिति भावः । इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, एकाकी=असहाय एव, पद्भ्यां=चरणाभ्यां, निजनिकेतनात् = स्वावासस्थानात्, विनिर्गत्य = निःसृत्य, समन्तात्=परितः, आपतद्भिः=विकीर्यमाणैः, शशाङ्ककिरणजालैः=चन्द्रकिरणसमूहैः, परिजनैरिव=अनुचरवर्गैरिव, परिदर्शितवर्त्मा—परिदर्शितं=निर्दिष्टं, वर्त्म=मार्गः यस्य स तथोक्तः, कैश्चित्काललवैः=कतिपयक्षणैः [अपवर्गे तृतीया], कैलासकूटायमानाट्टालकाभोगभव्यं—कैलासकूटाः=कैलासशिखराः, इवाचरन्त इति कैलासकूटायमानाः, तद्वदुत्तुङ्गा इत्यर्थः । तथाविधाः ये अट्टालकाः=प्रासादाः; तेषाम् आभोगेन=विस्तारेण; भव्यं=मनोहरं, भीमभूपालभवनं—भीमभूपालस्य=भीमनृपतेः, भवनं=प्रासादम्, अवाप्य=आसाद्य, पुरन्दरवरप्रदानात्—पुरन्दरस्य=इन्द्रस्य, वरप्रदानात्=वरमाहात्म्यादित्यर्थः, प्रासादपालकैः=प्रासादरक्षकैः, अदृश्यमानरूपः—न दृश्यमानं रूपम्=आकृतिः यस्य स तथोक्तः, कन्यान्तःपुरं=कन्यकावासगृहं, प्रविवेश=अविशत् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस समय ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए अथवा किस प्रकार अलंघनीय वाणी वाले इन्द्र आदि लोकपालों के आदेश का हँसी से भी अतिक्रमण नहीं करना चाहिए अर्थात् लोकपालों की अवश्यकरणीय आज्ञा का पालन किस प्रकार करना चाहिए।" यह विचार करता हुआ अकेले ही पैदल अपने आवासस्थान से निकलकर चारो तरफ पड़ रही चन्द्र-किरणपुञ्जों के द्वारा परिजनों के समान मार्गदर्शन प्राप्त करता हुआ कुछ ही क्षणों में कैलास-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिखर के समान आचरण करते हुए अर्थात् कैलास पर्वत के समान उत्तुंग (ऊँचे) प्रासादों के विस्तार के कारण मनोहर राजा भीम के राजभवन को प्राप्त कर इन्द्र के व्रत की महिमा के कारण प्रासादरक्षकों द्वारा अदृश्यमानस्वरूप (दिखाई न देने वाली आकृति वाला) होकर कन्याओं के अन्तःपुर में प्रवेश कर गया ॥

प्रविश्य च दूरादभिमुखागतेनानवरतदह्यमानकृष्णागुरुधूपधूमवर्त्तिनर्तकेन बहलयक्षकर्दमाम्बुसिक्तसौधस्कन्धसन्धिसञ्चारिणा गन्धवाहेन कृताभ्युत्थान इव, परिक्रम्य स्तोकमन्तरम् 'इत इतो देवी वर्त्तते' इति गीतगोष्ठीस्थितसखीगीतझङ्कारेणाहूयमान इव, यत्रास्ते दमयन्ती तत्सौधपृष्ठमारूढवान् ॥

कल्याणी—प्रविश्य चेति। [कन्यान्तःपुरम्] प्रविश्य च, दूरात्=दूरस्थानात्, अभिमुखागतेन—अभिमुखं=सम्मुखं, नलस्येति भावः। आगतेन=आयातेन, अनवरतदह्यमानकृष्णागुरुधूपधूमवर्तिनर्तकेन—अनवरतं=सततं, दह्यमानानां=जाज्वल्यमानानां, कृष्णागुरुधूपानां=सुगन्धद्रव्यानां, यः धूमस्तस्य या वर्त्तिः=रेखा, तस्या नर्तकः=नर्तनकारयिता तेन, बहलयक्षकर्दमाम्बुसिक्तसौधस्कन्धसन्धिसञ्चारिणा—बहलः=प्रचुरः, यः यक्षकर्दमः=कर्पूरकस्तूरिकादीनां क्षोदः, तन्मिश्रिताम्बुभिः=जलैः, सिक्तानां सौधानां=प्रासादानां, स्कन्धसन्धिषु=शिखरसन्धिषु, सञ्चारिणा=सञ्चरणशीलेन, गन्धवाहेन=वायुना, कृताभ्युत्थान इव—कृतं=विहितम्, अभ्युत्थानं=स्वागतं यस्य स तथोक्त इव, स्तोकमन्तरं=किञ्चिद् दूरं, परिक्रम्य=गत्वा, 'इत इतः=अत्र स्थाने, देवी=दमयन्ती, वर्त्तते=तिष्ठति' इति=एवं, गीतगोष्ठीस्थितसखीगीतझङ्कारेण—गीतगोष्ठ्यां=सङ्गीतपरिषदि, स्थितानाम्=अवस्थितानां, सखीनां=सहचरीणां, गीतझंकारेण=गीतस्य मधुरध्वनिना; आहूयमान इव=आमन्त्र्यमाण इव, यत्र=सौधपृष्ठे, दमयन्ती=भीमतनया, आस्ते=वर्तते, तत्सौधपृष्ठं=तस्मिन् प्रासादोपरि, आरूढवान्=आरुरोह ॥

ज्योत्स्ना—और (कन्याओं के उस अन्तःपुर में) प्रवेश करके दूर से सामने आये हुए, अनवरत जल रहे कृष्णागुरु आदि सुगन्धित द्रव्यों के धूप की रेखा को नचाते हुए, पर्याप्त यक्षकर्दम-(कस्तूरी-कुंकुम आदि के चूर्ण)-मिश्रित जल से सिञ्चित प्रासादशिखरों की सन्धियों में सञ्चरणशील वायु के द्वारा मानों किये गये स्वागत वाला (वह राजा नल) घूमता हुआ कुछ दूर जाकर "इधर, देवी दमयन्ती इधर हैं।" इस प्रकार गीतगोष्ठियों में बैठी सखियों के गीत की मधुर ध्वनियों के द्वारा मानों बुलाया जाता हुआ, जहाँ दमयन्ती रहती थी उस प्रासाद पर चढ़ गया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आरुह्य च मनाग्व्यवहितोऽनुपलक्ष्यमाण इव, वेणुवीणाक्वणानुसारिणा कोमलकाकलीप्रायेण किंनरीप्रमुखसखीनां गीतेन विनोद्यमानाम्, अलकवल्लरीमध्यनिवेशिततारानुकारिमौक्तिकेन कज्जलकलङ्कितनयनोत्पलपक्ष्मपालिना मुखेन सचन्द्रगगनस्पर्धया भूतलमपि पूर्णोदितेन्दुमण्डलमिवापादयन्तीम्, उच्चकुचमण्डलविलोलया सस्मरसप्तर्षिग्रहणपङ्क्त्येव हारलतया कृतकण्ठकन्दलाश्लेषाम्, ईषत्कपोलपालिं परामृशता चाटुकारेण वसन्तसमयप्रहितदूतेनेव कर्णलग्नेन कुसुममञ्जरीद्वितीयेन बालपल्लवेन विराजितवदनाम्, अच्छाच्छैः कस्तूरिकापङ्कपत्रभङ्गैर्भुजङ्गैरिव लावण्यामृतरक्षागतैरलंकृतभव्यभुजशिखराम्, आसन्नभुवि विकीर्णैः पाण्डुपुष्पप्रकरैर्गगनादवतीर्य रूपालोकनकुतूहलिभिर्नक्षत्रैरिव परिवृताम्,

कल्याणी—आरुह्य चेति । आरुह्य च=आरोहणं कृत्वा च, मनाक्=ईषत्, व्यवहितः=केनाप्यन्तःक्षिप्तवस्तुनाऽन्तरितः; [अतएव] अनुपलक्ष्यमाण इव=न केनापि दृश्यमान इव [नलः], वेणुवीणाक्वणानुसारिणा—वेणूनां वीणानां च क्वणः=ध्वनिः, तदनुसारिणा=तत्सङ्गतिकारिणा, कोमलकाकलीप्रायेण—कोमलः=मधुरः, यः काकली—ईषत्कलोऽस्त्यस्येति काकली=निषादसंज्ञः स्वरः, तत्प्रायेण, 'निषादः काकलीसंज्ञो द्विश्रुत्युत्कर्षणाद् भवेत्' इत्युक्तेः । किंनरीप्रमुखसखीनां गीतेन=गानेन, विनोद्यमानां=क्रियमाणविनोदाम्, अलकवल्लरीमध्यनिवेशिततारानुकारिमौक्तिकेन—अलकवल्लरी=केशलता, तन्मध्ये=अन्तरे, निवेशितानि=धारितानि, तारानुकारीणि=तारासदृशानि, मौक्तिकानि=मुक्ताफलानि यत्र तथाविधेन, कज्जलकलङ्कितनयनोत्पलपक्ष्मपालिना—कज्जलेन कलङ्किता=कलङ्क इवाचरितवती, नयनोत्पलपक्ष्मपालिः=नयनकमलपक्ष्मपंक्तिः यत्र तथाविधेन, मुखेन=आननेन, सचन्द्रगगनस्पर्धया—सचन्द्रगगनेन=चन्द्रसहितनभसा, या स्पर्धा तया, भूतलमपि=पृथ्वीतलमपि, पूर्णोदितेन्दुमण्डलमिव—पूर्णोदितम् इन्दुमण्डलं=चन्द्रबिम्बं यत्र तत्तथाविधमिव, आपादयन्तीं=कुर्वन्तीम्, उच्चकुचमण्डलविलोलया—उच्चकुचमण्डले=उन्नतपयोधरबिम्बे, विलोलया=लुठन्त्या, सस्मरसप्तर्षिग्रहणपङ्क्त्या—सस्मराः=सकामाः, ये सप्तर्षयः ग्रहणाश्च तेषां पंक्त्येव=तत्या इव, हारलतया=मालया, कृतकण्ठकन्दलाश्लेषां—कृतः=विहितः, कण्ठकन्दलाश्लेषः=कण्ठाङ्कुरालिङ्गनं यस्यास्ताम्, ईषत्=किञ्चित्, कपोलपालिं=कपोलप्रान्तं, परामृशता=स्पृशता, चाटुकारेण=चाटुलेन, वसन्तसमयप्रहितदूतेन इव—वसन्तसमयेन=वसन्तर्तुना, प्रहितः=प्रेषितः, दूतः=सन्देशहरः तेनेव, कर्णलग्नेन=कर्णधृतेन [केनचित्प्रहतो दूतोऽपि कर्णलग्नः सन् सन्देशं श्रावयति], कुसुममञ्जरीद्वितीयेन—कुसुममञ्जरी द्वितीया यस्य तेन, कुसुममञ्जरीसहितेनेत्यर्थः । बालपल्लवेन=नूतनकिसलयेन,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्र च बालः=मूर्खः, पल्लवः=स्वेच्छारी, तेन विराजितं=सुशोभितं, वदनं=मुखं यस्यास्ताम्, अच्छाच्छैः=अतिनिर्मलैः, कस्तूरिकापत्रभङ्गैः=कस्तूरीलेपरचितैः पत्ररचनाभिः, लावण्यामृतरक्षागतैः—लावण्यं=सौन्दर्यं, तदेव अमृतं=सुधा, तद्रक्षार्थम् आगतैः=आयातैः, भुजङ्गैरिव=सर्पैरिव, अलंकृतभव्यभुजशिखराम्—अलंकृतः=शोभितः; भव्यः=मनोहरः, भुजयोः=बाह्वोः, शिखरः=अग्रभागः यस्यास्ताम्, आसन्नभुवि=समीपस्थभूमौ, विकीर्णैः=प्रसृतैः, पाण्डुपुष्पप्रकरैः=श्वेतकुसुमराशिभिः, गगनात्=नभोमण्डलात्, अवतीर्य=भूमावागत्य, रूपालोकनकुतूहलिभिः=छटादर्शनसमुत्सुकैः, नक्षत्रैरिव=तारागणैरिव, परिवृतां=परितः आवृताम्; दमयन्तीमद्राक्षीदिति वक्ष्यमाणेनान्वयः। सर्वत्रोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—और (दमयन्ती वाले प्रासाद पर) चढ़कर थोड़ा ओट में होकर किसी के द्वारा न देखा जाता हुआ-सा (वह नल) वेणु तथा वीणा की ध्वनि का अनुसरण करने वाले कोमल काकली ध्वनिबहुल गीत से किन्नरकुलोत्पन्न सखियों द्वारा मनोविनोद की जा रही; केशलता के मध्य में धारण किये गये तारासदृश मौक्तिक एवं कज्जल से कलङ्कित अर्थात् कजरारे कमलसदृश नयन-पक्ष्मपंक्ति वाले मुख से चन्द्रमासहित आकाश के साथ स्पर्धा के द्वारा पृथ्वीतल को भी पूर्ण रूप से उदित चन्द्रमण्डल से युक्त के समान बनाती हुई, उन्नत स्तन-मण्डल पर लोटती हुई कामसहित सप्तर्षियों तथा ग्रहों की पंक्ति के समान हारलता द्वारा कण्ठांकुर (गले) का आलिंगन करती हुई, थोड़ा-थोड़ा कपोलस्थल का स्पर्श कर रहे वसन्त द्वारा प्रेषित चाटुकार दूत के समान कानों से लगे हुए कुसुममञ्जरी-सहित नूतन किसलय से सुशोभित मुख वाली, अतीव निर्मल कस्तूरी के लेप से निर्मित पत्ररचनाओं के द्वारा सौन्दर्यरूपी अमृत की रक्षा करने के लिए आये हुए सर्पों के समान अलंकृत मनोहर भुजाओं के अग्रभाग वाली, समीपस्थित भूमि पर बिखरे श्वेत पुष्पपुञ्जों के द्वारा आकाश से (पृथ्वी पर) उतर कर (दमयन्ती की) छटादर्शन के लिए उत्कण्ठित नक्षत्रों के समान घिरी हुई (दमयन्ती को देखा)॥

ऊरुनितम्बमण्डलस्पर्शसुखलम्पटतया नीवीप्रान्तपुञ्जिततरङ्गं क्षीरोदमिव वस्त्रतां गतमच्छपाण्डुनेत्रपट्टं परिदधानाम्, 'अहमेव त्वया स्वयंवरे वरणीयः' इत्यर्थितया पादलग्नेन शेषोरगेणेव रौप्यनूपुरवलयेन विराजितवामचरणपल्लवाम्,

कल्याणी—ऊरुनितम्बेति। ऊरुनितम्बमण्डलस्पर्शसुखलम्पटतया—ऊर्वोः=जङ्घयोः, नितम्बमण्डलस्य=नितम्बवृत्तस्य, स्पर्शेन यत्सुखं तत्र लम्पटः=कामुकः; तस्य भावस्तत्ता तया, नीवीप्रान्तपुञ्जिततरङ्गम्—नीवीप्रान्ते=नीवीबन्धनप्रान्ते, पुञ्जितः=राशीकृतः, तरङ्गः येन तं तथाविधं, क्षीरोदं=क्षीरसागरमिव, वस्त्रतां=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वस्त्रभावं, गतं=प्राप्तम्, अच्छपाण्डुनेत्रपट्टम्—अच्छं=स्वच्छं, पाण्डुनेत्रपट्टं=शुभ्र-क्षौमवस्त्रविशेषं, परिदधानां=धारयन्तीम्, 'अहं=शेष एव, स्वयंवरे त्वया=दमयन्त्या, वरणीयः=चयनीयः, इत्यर्थितया=एवं याचकभावेन, पादलग्नेन=गृहीतपादेन, शेषोरगेणेव=शेषनागेनेव, रौप्यनूपुरवलयेन=रजतनूपुरमण्डलेन; विराजितवामचरणपल्लवां—विराजितः=सुशोभितः, वामचरणपल्लवः=किसलयोपमवामपादः यस्यास्ताम्, दमयन्तीमद्राक्षीदिति वक्ष्यमाणेनान्वयः। सर्वत्रोत्प्रेक्षाऽलङ्कारः॥

ज्योत्स्ना—जंघा और नितम्बमण्डल के स्पर्शजनित सुख के लोभ से नीवीभाग में एकत्रित तरंगों वाले क्षीरसागर के समान वस्त्रभाव को प्राप्त अर्थात् वस्त्र-सा बने हुए स्वच्छ, शुभ्र नेत्रपट्ट (विशेष प्रकार के चमकीले रेशमी वस्त्र) को धारण की हुई, "मैं (शेषनाग) ही तुम्हारे द्वारा स्वयंवर में वरण करने लायक हूँ।" इस प्रकार याचकभाव से अर्थात् याचना (प्रार्थना) करते हुए पैरों को पकड़े शेषनाग के समान चाँदी से निर्मित नूपुरवलय से सुशोभित किसलयसदृश बायें पैर वाली (दमयन्ती को देखा)॥

विविधविलासवर्तिकाभिरिवाकारिताम्, अमृतद्रववर्णकैरिव चित्रितावयवाम्, आनन्दकन्दलैरिव घटिताम्, मोहनमणिशिलायामिवोत्कीर्णाम्, शृङ्गारदारुणीवोत्कुट्टिताम्, वशीकरणपरमाणुभिरिव विनिर्मिताम्, मदनमृत्पिण्डेनेव निष्पादिताम्, वज्रलेपपुत्रिकामिव दृशोः, आकर्षणमणिशलाकामिव हृदयस्य, जीवनौषधिमिवानुरागस्य, जयपताकामिव मदनस्य, बहलचन्दनाम्बुच्छटार्द्रितभुवि विकीर्णसुरभिपरिमलमिलन्मधुकररवानुमेयपाण्डुरपुष्पप्रकरे मसृणसितसुधाबन्धपिच्छिले सौधस्कन्धे ज्योत्स्नामृतस्पर्शसुखमनुभवन्तीम्, अच्छांशुस्फटिकमणिपर्यङ्किकाङ्कभाजं दमयन्तीमलब्धनिद्रामद्राक्षीत्॥

कल्याणी – विविधेति। विविधविलासवर्तिकाभिः—विविधविलासस्य=अनेकविलासमयभावस्य, या वर्तिकाः=चित्रकूर्चिका, विविधविलासमयभावाभिव्यञ्जनसमर्थाश्चित्रकूर्चिका इत्यर्थः, ताभिः, आकारितामिव=विनिर्मितामिव, आकारितामित्यत्राचारक्विबन्तादाकारशब्दात् क्तप्रत्ययः। अमृतद्रववर्णकैः=अमृतरसमिश्रितरङ्गैरिव, चित्रितावयवां—चित्रिता=चित्राङ्किता, अवयवाः=अङ्गानि यस्यास्ताम्, आनन्दकन्दलैरिव=आनन्दाङ्कुरैरिव, घटितां=रचिताम्, मोहनमणिशिलायामिव=मोहनमणिप्रस्तर इव, उत्कीर्णां=खचिताम्, शृङ्गारदारुणीव—शृङ्गारदारु=शृङ्गारकाष्ठं तस्मिन्निव, उत्कुट्टितां=उत्खचिताम्, वशीकरणपरमाणुभिरिव=मोहनपरमाणुभिरिव, विनिर्मितां=सृष्टाम्, मदनमृत्पिण्डेनेव=काममृत्तिकापिण्डेनेव, निष्पादितां=निष्पन्नीकृताम्, दृशोः=नयनयोः; वज्रलेपपुत्रिकामिव=वज्रले-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पनिर्मितपुत्तलिकामिव, हृदयस्य=मनसः, आकर्षणमणिशलाकामिव=आकर्षणमणि-निर्मितलघुयष्टिमिव, अनुरागस्य=प्रेम्णः, जीवनौषधिमिव=पुनर्जीवनदात्रीमोषधिमिव, मदनस्य=कामदेवस्य, जयपताकामिव=विजयवैजयन्तीमिव, बहलचन्दनाम्बुच्छटार्द्रितभुवि—बहलचन्दनाम्बुच्छटाभिः=प्रचुरचन्दनरसपुञ्जैः, आर्द्रिता=सिक्ता, भूः=भूमिः यस्य तथाविधे, विकीर्णसुरभिपरिमलमिलन्मधुकररवानुमेयपाण्डुरपुष्पप्रकरे—विकीर्णः=प्रसृतः, सुरभिः=मनोज्ञः, यः परिमलः=मधुरगन्धः, तस्मै मिलन्तः=गच्छन्तः, ये मधुकराः=भ्रमराः, तेषां रवेण=मधुरगुञ्जितेन, अनुमेयः=अनुमानेनाभिज्ञेयः, पाण्डुरपुष्पप्रकरः=श्वेतकुसुमपुञ्जः यत्र तथाविधे, मसृणसितसुधाबन्धपिच्छिले=चिक्कणश्वेतसुधालेपविशेषेण पिच्छिले, पिच्छशब्दात् 'लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः' इति मतुबर्थे इलच् । सौधस्कन्धे=सौधशिखरे, ज्योत्स्नामृतस्पर्शसुखं=चन्द्रिकासुधास्पर्शसुखम्, अनुभवन्तीम्=अनुभवं कुर्वन्तीम्, अच्छांशुस्फटिकमणिपर्यङ्किकाङ्कभाजम् –अच्छा=निर्मला, अंशवः=किरणाः येषां तथाविधानां स्फटिकमणीनां पर्यङ्किकायाः=शय्यायाः, अङ्कं=क्रोडं, भजते इति तां तथोक्तां, स्वच्छकान्तियुक्तस्फटिकमणिविनिर्मितपर्यङ्किकामधिशयानामित्यर्थः । अलब्धनिद्रां न—लब्धा=प्राप्ता, निद्रा=स्वापः यया तां तथाविधां, दमयन्तीं=भीमतनयाम्, अद्राक्षीत्=दृष्टवान् ॥

ज्योत्स्ना—नानाविध विलासमय भावों की चित्रकूर्चिका के द्वारा बनाई गई-सी, मानों अमृतरस से मिश्रित रंगों से चित्रित अवयवों वाली, आनन्दांकुरों से निर्मित की गई-सी, मोहनमणि-शिला पर उत्कीर्ण की गई-सी, शृंगारकाष्ठ पर तराशी गई-सी, वशीकरण के परमाणुओं द्वारा निर्मित की गई-सी, कामरूपी मिट्टी के पिण्ड से बनाई गई-सी, आँखों के लिए वज्रलेप से निर्मित पुत्तलिका के समान, हृदय के लिये आकर्षण मणि से निर्मित शलाका के समान, अनुराग के लिए पुनर्जीवन औषधि के समान, कामदेव की विजयपताका के समान, पर्याप्त चन्दनरसों से सिञ्चित भूमि पर फैल रहे मनोहर मधुर गन्ध के लिये आते हुए भ्रमरों की ध्वनि से अनुमान किये जा सकने वाले श्वेत पुष्पों से समन्वित एवं चिकने सफेद चूने के लेप से पिच्छिल बने हुए प्रासादशिखर पर (चन्द्रमा की) चन्द्रिकारूपी सुधा के स्पर्शसुख का अनुभव करती हुई, निर्मल किरणों वाले स्फटिक मणि से निर्मित पलंग पर लेट कर भी निद्रा को न प्राप्त करने वाली दमयन्ती को देखा ॥

तां चावलोक्य विचिन्तितवान् । 'अहो स्थानेऽभिनिवेशो लोकपालानाम् । अशेषसुखनिधानाय को न स्पृहयति ॥

कल्याणी—तामिति । तां=दमयन्तीं च, अवलोक्य=दृष्ट्वा, विचिन्तितवान्=व्यचिन्तयत्—अहो इति प्रशंसायाम् । स्थाने=योग्यपात्रे, लोकपालानाम्=

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रादीनाम्, अभिनिवेशः=प्रवृत्तिः । अशेषसुखनिधानाय=सकलसुखागाराय, कः=कः जनः, न स्पृहयति=नाभिलषति, सर्वोऽपि स्पृहयत्येवेत्यर्थः । अशेषसुखनिधानायेत्यत्र 'स्पृहेरीप्सितः' इति सम्प्रदानत्वाच्चतुर्थी ॥

ज्योत्स्ना—और उसे देखकर सोचा—"अहो ! उचित स्थल पर ही (इन्द्र आदि) लोकपालों की प्रवृत्ति हुई है; (क्योंकि) समस्त सुखों के खजाने की कामना कौन नहीं करता ? ॥

मन्ये च, विस्फारिततारेक्षणैरिमामेव पश्यन्नयमाकाशः सग्रहोऽभूत् ॥

कल्याणी—मन्ये चेति । मन्ये च=अनुमीये च, विस्फारिततारेक्षणैः—विस्फारिताः=विस्तारिताः, तारा=नक्षत्राण्येव तारा=कनीनिका येषां तथाविधैः, ईक्षणैः=नेत्रैः, इमामेव=दमयन्तीमेव, पश्यन्—वीक्षमाणः, अयम्=एषः, आकाशः=गगनः, सग्रहः=सूर्यादिग्रहसहितः भूताद्यभिनिवेशयुक्तश्च, अभूत्=सञ्जातः । श्लेषानुप्राणितोत्प्रेक्षा ॥

ज्योत्स्ना—और ज्ञात होता है कि—फैलाई गई तारारूपी कनीनिका वाली आँखों से इसी को देखता हुआ यह आकाश (सूर्य आदि) ग्रहों से युक्त हो गया है ॥

अयं च चन्द्रश्चन्दनपाण्डुभिः करैरिमामेव परामृशन्मदनानलदाहमयीं व्रणलेखां कलङ्कच्छलेन हृदयेनोद्वहति ॥

कल्याणी—अयं चेति । अयं च चन्द्रः=अयं सुधांशुरपि, चन्दनपाण्डुभिः=चन्दनवच्छ्वेतैः, करैः=किरणैः, अथ च चन्दनलेपग्रहणेन श्वेतैर्हस्तैः, इमां=दमयन्तीमेव, परामृशन्=संस्पृशन्, मदनानलदाहमयीं—मदनानलेन=कामवह्निना, यः दाहः=ज्वलनं, तन्मयीं=तज्जनितां, व्रणलेखां=व्रणचिह्नं, कलङ्कच्छलेन=कलङ्कव्याजेन, हृदयेन=चेतसा, उद्वहति=धारयति । अपह्नुतिरलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—और यह चन्द्रमा भी चन्दन के समान श्वेत किरणों अथवा चन्दन-लेप को ग्रहण करने से श्वेत हाथों के द्वारा इसी का स्पर्श करता हुआ कामाग्नि से जल जाने के कारण होनेवाले व्रण-(घाव)-चिह्न को कलंक के बहाने से हृदय में धारण करता है ॥

अयमपि समीपोद्यानमारुतोऽस्याः समर्पितकुसुमगन्धः शनैरुत्तरीयांशुकमाक्षिपन्मदनातुरस्तिर्यक् पतति ॥

कल्याणी—अयमपीति । अयम्=एषः, समीपोद्यानमारुतः—समीपोद्यानस्य=निकटवर्तिनः उपवनस्य; मारुतः=पवनोऽपि; अस्याः=दमयन्त्याः, समर्पितकुसुमगन्धः—समर्पितः=दत्तः, कुसुमानां=पुष्पाणां, गन्धः=सुगन्धः येन स तथोक्तः, सन्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शनैरुत्तरीयांशुकम्=उत्तरीयवस्त्राञ्चलम्, आक्षिपन्=अपकर्षन्, मदनातुरः=कामविह्वलः, तिर्यक्=वक्रत्वेन, पतति=स्खलति। अन्योऽपि मदनातुरः कुसुमगन्धं कस्तूरिकादि चार्पयन्नञ्चलाकर्षणपरस्तिर्यक् पततीति मारुते हठकामुकव्यवहारसमारोपात् समासोक्तिरलङ्कारः ॥

ज्योत्स्ना—समीपवर्ती उपवन का यह पवन भी इसे पुष्पों का गन्ध समर्पित कर धीरे-से (इसके) उत्तरीय वस्त्र (आँचल) को हटाता हुआ काम से विह्वल होकर तिरछे रूप से गिर रहा है ॥

सर्वथा जितं मनुष्यलोकेन, यत्रैवंविधमचिन्त्यम्, अनालोचनगोचरम्, अप्रतिमरूपम्, अद्भुतम्, अमूल्यमुदपद्यत स्त्रीरत्नम् ॥

कल्याणी—सर्वथेति। मनुष्यलोकेन=मानवलोकेन, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, जितं=विजितम्, अयं मनुष्यलोकः सर्वथा सर्वोत्कृष्टो जात इत्यर्थः। यत्र=यस्मिन्, एवंविधम्=एतादृशम्, अचिन्त्यम्=अचिन्तनीयम्, अनालोचनगोचरम्=अदृष्टपूर्वमित्यर्थः। अप्रतिमरूपम्—अप्रतिमम्=अनुपमं, रूपं=सौन्दर्यं यस्य तत्, अद्भुतम्=आश्चर्यकरम्, अमूल्यं=महार्घं, स्त्रीरत्नम्=नारीरत्नम्, उदपद्यत=आविरभवत् ॥

ज्योत्स्ना—मनुष्य लोक सब प्रकार से जीत गया है अर्थात् यह मनुष्यलोक सब प्रकार से सर्वोत्कृष्ट है, जिसमें इस प्रकार का अचिन्तनीय, पूर्व में न देखा गया; अनुपम सौन्दर्य वाला, आश्चर्यजनक, अमूल्य स्त्रीरत्न उत्पन्न हुआ है ॥

आः प्रजापते ! परिणतशिल्पोऽसि। संसार ! सनाथोऽसि। मदन ! महोत्सववानसि। चक्षुः ! कृतार्थमसि। हृदय ! पूर्णमनोरथमसि। दूरागमनश्रम ! सफलोऽसि ॥

कल्याणी—आः प्रजेति। 'आः' इति विस्मयादिबोधकमव्ययपदमत्र स्वीकृतौ। प्रजापते !=विधातः ! परिणतशिल्पोऽसि—परिणतं=परिपक्वतां गतं, पूर्णविकसितमिति यावत्, शिल्पं=निर्माणकौशलं यस्य स तादृशोऽसि। संसार !=हे विश्व, सनाथोऽसि। मदनः=कामदेव ! महोत्सववान्=महोत्सवसम्पन्नोऽसि। चक्षुः !=नेत्र !, कृतार्थं=सफलमसि। हृदय !=चेतः !, पूर्णमनोरथोऽसि—पूर्णः मनोरथः यस्य तथाविधमसि। दूरागमनश्रम ! [त्वमपि] सफलोऽसि=सार्थकोऽसि ॥

ज्योत्स्ना—हे प्रजापते (सृष्टि का निर्माण करने वाले) ! (आप) पूर्णता को प्राप्त अर्थात् पूर्ण विकसित निर्माण-कौशल वाले हो गये हो। हे संसार ! तुम सनाथ हो गये हो। हे काम ! तुम महोत्सव से सम्पन्न हो गये हो ! हे नेत्र ! तुम कृतार्थ अर्थात् सफल हो गये हो। हे हृदय ! तुम पूर्ण मनोरथ वाले हो गये हो। हे दूर से आने के कारण होने वाले परिश्रम ! तुम भी सफल हो गये हो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकलयुवजनमनोमधुकराकृष्टिकुसुमितलतिके निजनयननिर्जितराजीवे जीव चिरम् ॥

कल्याणी— सकलेति । सकलयुवजनमनोमधुकराकृष्टिकुसुमितलतिके—सकलयुवजनस्य=समस्ततरुणलोकस्य, मनः=चित्तमेव, मधुकरः=भ्रमरः, तस्याकृष्टौ=आकर्षणे, कुसुमितलतिका=पुष्पितमनोज्ञलता, तत्सम्बोधने तथोक्ते ! [परम्परितरूपकम्] निजनयननिर्जितराजीवे—निजनयनेन=स्वकीयनेत्रेन, निर्जितम्=अभिभूतं, राजीवं=कमलं यया, तत्सम्बुद्धौ तथोक्ते [व्यतिरेकालङ्कारः], चिरं=बहुकालं, जीव=जीवनं धारय ॥

ज्योत्स्ना—समस्त युवकों के मनरूपी भ्रमर को आकृष्ट करने वाली हे पुष्पित लतिके ! हे निजनयननिर्जितराजीवे ! अर्थात् अपने नयनों के द्वारा कमल को भी पराभूत करने वाली ! (तुम) चिरकाल तक जीवित रहो ॥

तथाहि—

लक्ष्मीं बिभ्राणयोः काञ्चिच्चञ्चद्भ्रूभङ्गभागयोः ।
बलिं यामो वयं तन्वि तवाब्जसदृशोर्दृशोः ॥३४॥

अन्वयः—तन्वि ! काञ्चित् लक्ष्मीं बिभ्राणयोः चञ्चद्भ्रूभङ्गभागयोः अब्जसदृशोः तव दृशः वयं बलिं यामः ॥३४॥

कल्याणी—लक्ष्मीमिति । हे तन्वि !=कृशाङ्गि !, काञ्चित्=लोकोत्तरां, लक्ष्मीं=शोभां, बिभ्राणयोः=दधानयोः [अब्जान्यपि लक्ष्मीं बिभ्रति] । तथा चञ्चद्भ्रूभङ्गभागयोः—चञ्चन्ती=चञ्चला, भ्रूरेव भङ्गः=तरङ्गः, स भागे=एकदेशे ययोस्तथाविधयोः, 'चञ्चद्भ्रूभृङ्गसङ्गयोः' इति पाठे भ्रुवावेव भृङ्गौ तयोः संगो यत्र तयोरित्यर्थः । अत एवाब्जसदृशोः=कमलतुल्ययोः, तव=ते, दृशोः=नेत्रयोः, वयं बलिं यामः=उपहारीभवामः, इति परमप्रीतिगर्भा लोकोक्तिः । अनुष्टुब्वृत्तम् ॥३४॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि, हे कृशाङ्गि ! लोकोत्तर शोभा को धारण करने वाले तथा एक भाग में चञ्चल भौंहरूपी तरंगों वाले, अतएव कमलसदृश तुम्हारे नयनों के ऊपर हम बलिहारी जाते हैं अर्थात् अपने-आपको न्योछावर करते हैं ॥३४॥

अपि च—

किन्नरवदनविनिर्गतपञ्चमगीतामृते श्रुतिं श्रयति ।
हरति हरिणीदृशो दृक् सालसवलिता च लुलिता च ॥३५॥

अन्वयः—किन्नरवदनविनिर्गतपञ्चमगीतामृते श्रुतिं श्रयति हरिणीदृशः सालसवलिता च लुलिता च दृक् हरति ॥३५॥

कल्याणी—किन्नरेति । किन्नरवदनविनिर्गतपञ्चमगीतामृते—किन्नराणां=किम्पुरुषाणां, वदनेभ्यः=मुखेभ्यः, विनिर्गतं=निःसृतं, यत् पञ्चमगीतामृतं=पञ्चमस्वरगायनसुधारसं तस्मिन्, श्रुतिं=कर्णं, श्रयति=आश्रयति सति, श्रुतिविवरं प्रविशति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सतीत्यर्थः । हरिणीदृशः=मृगाक्ष्याः दमयन्त्याः, सालसवलिता=आलस्यपूर्वं, वलिता=वक्रीकृता च, लुलिता च=चञ्चला च, दृक्=दृष्टिः, हरति=आकर्षति, मन इति शेषः । हरिणीदृक्तयैव तस्या दृक् गीतमनुसरति च लोलति चेति 'हरिणीदृशः' इति दमयन्तीविशेषणस्य साभिप्रायत्वात् परिकरालङ्कारः । आर्या जातिः ॥३५॥

ज्योत्स्ना—और भी—किन्नरों के मुख से निकले पञ्चम स्वर से समन्वित गीत के कान में प्रवेश करने पर मृगनयनी (दमयन्ती) की आलस्यपूर्ण तिरछी चञ्चल नजरें (मन को) आकृष्ट कर ही लेती हैं ॥३५॥

इत्यनेकविधानि चिन्तयन्मृदुलीलापदैरागत्य गीतगोष्ठीस्थितस्य 'कोऽयम्' इति विस्मयविस्फारितलोचनस्य संभ्रमवतः सखीकदम्बकस्य मध्यमविशत् ॥

कल्याणी—इतीति । इति=एवम्, अनेकविधानि=विविधानि, चिन्तयन्=विचारयन्, मृदुलीलापदैः=कोमलसविलासपदविन्यासैः, आगत्य=एत्य, गीतगोष्ठीस्थितस्य—गीतगोष्ठ्यां=सङ्गीतपरिषदि, स्थितस्य=अवस्थितस्य, तथा 'कोऽयम्' इति विस्मयविस्फारितलोचनस्य - विस्मयेन—आश्चर्येण, विस्फारिते=विस्तारिते, लोचने=नयने यस्य तथाविधस्य, सम्भ्रमवतः=संभ्रान्तस्य, सखीकदम्बकस्य=सखीसमूहस्य, मध्यं=मध्यभागम्, अविशत्=प्रविष्टः ॥

ज्योत्स्ना—इस तरह नाना प्रकार से सोचता हुआ कोमल विलासपूर्ण पदविन्यास से आकर गीतगोष्ठी में बैठे हुए तथा "यह कौन है ?" इस प्रकार के आश्चर्य से फैल गई आँखों वाले, घबराये हुए सखी-समूह के मध्य (राजा नल) प्रविष्ट हो गया ॥

प्रविष्टे च तस्मिन्, आकस्मिकविस्मयेन विस्फारितानि, भयेन भ्रमितानि, कौतुकेनोत्तानितानि, व्रीडया वलितानि; मुदा मिलदरालपक्ष्माणि. स्मराकूतेन विलुलितानि, दिदृक्षारसेनानिमिषाणि, दृष्टिसङ्घट्टनेन मुकुलितानि, विलासेन मिलितानि, चिरं चक्षूंषि बिभ्राणाः किमपि चलितासनम्, उत्कम्पितहृदयम्, अपसरद्धैर्यम्, अवगलत्स्वेदसलिलम्, उत्पुलकिताङ्गम्, अनङ्गभङ्गुरम्, अवलोकितान्योन्यमुखमवतस्थिरे तदभिमुखाः सख्यः ॥

कल्याणी—प्रविष्टे चेति । प्रविष्टे=प्रवेशङ्गते च, तस्मिन्=नले, आकस्मिकविस्मयेन=अकस्मादागतेनाश्चर्येण, विस्फारितानि=प्रसारितानि, भयेन=भीत्या, भ्रमितानि=विचलितानि, कौतुकेन=उत्कण्ठया, उत्तानितानि=उत्थितानि, व्रीडया=लज्जया, वलितानि=परावृत्तानि, मुदा=हर्षेण, मिलदरालपक्ष्माणि—मिलन्ति=सम्मिलन्ति, अरालानि=वक्राणि, पक्ष्माणि=निमिषाणि येषां तथाविधानि,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्मराकूतेन=मदनसंवेगेन, विलुलितानि=अतिचञ्चलानि, दिदृक्षारसेन=दर्शनेच्छाभावनया, अनिमिषाणि=निर्निमेषाणि, दृष्टिसङ्घट्टनेन=दृष्टिसङ्घर्षेण, मुकुलितानि=किञ्चिन्निमीलितानि, विलासेन=अनुरागेण, मिलितानि=सम्मिलितानि, चक्षूंषि=नेत्राणि, चिरं=बहुकालं, बिभ्राणाः=धारयन्त्यः, तदभिमुखाः=नलाभिमुखाः, सख्यः=सखीजनाः, किमपि=किञ्चिदपि, चलितासनं—चलितं=कम्पितम्, आसनं=विष्टरं यस्मिन् कर्मणि तद्यथा तथा, उत्कम्पितहृदयम्—उत्कम्पितम्=उच्चलितं, हृदयं=चेतः यस्मिन् कर्मणि तद्यथा तथा, अपसरत्=दूरं गच्छत्, धैर्यं यस्मिंस्तद्यथा तथा, अवगलत्=प्रवहत्, स्वेदसलिलं यस्मिंस्तद्यथा तथा, उत्पुलकिताङ्गम्—उत्पुलकितानि=रोमाञ्चितानि, अङ्गानि=अवयवाः यस्मिंस्तद्यथा तथा, अनङ्गभङ्गुरम्—अनङ्गेन=कामेन, भङ्गुरं=भिदुरम्, अवलोकितान्योन्यमुखम्—अवलोकितं=दृष्टम्, अन्योन्यस्य मुखं=वदनं यस्मिंस्तद्यथा तथा, अवतस्थिरे=अवस्थिता आसन्। 'समवप्रविभ्यः स्थः' इत्यात्मनेपदम् ॥

ज्योत्स्ना—और (सखी-समूह के मध्य) उसके प्रवेश कर जाने पर अचानक प्राप्त हुए आश्चर्य के कारण विस्फारित (फैली हुई), भय के कारण विचलित, उत्कण्ठा के कारण उत्थित (उठी हुई), लज्जा के कारण परावृत्त (वापस संकुचित हुई), प्रसन्नता के कारण (आपस में) मिल रहे पक्ष्मों (पलकों) वाली, काम की अधिकता से चञ्चल, देखने की कामना से निमेषरहित, नजरों के मिलने से कुछ मुकुलित (संकुचित) और विलास से परिपूर्ण आँखों को बहुत देर तक धारण करती हुई सखियाँ उस (नल) के सामने आसन पर कुछ हिलती हुईं, उत्कम्पित हृदय वाली होकर, धैर्य से रहित होती हुईं, रोमाञ्चित अंगों वाली होकर, काम से व्याकुल होकर, एक-दूसरे का मुख देखती हुई बैठी रह गईं ॥

दमयन्त्यपि 'देवि ! वर्धयामो वर्धयामः कोऽपि कस्याश्चिज्जीवितेश्वरोऽयमत्रैवागतो दृश्यते' इति हर्षोत्कर्षगद्गदगिरां, गीतमुत्सृज्य ससंभ्रमोत्थितकुब्जवामनकन्यकानां मृदुकरतलतालिकाकलितकलकलेन मनाग्विलसवलितमुखी तदभिमुखमवलोक्य शय्यातलादुदचलत् ॥

कल्याणी—दमयन्तीति। दमयन्त्यपि=भीमसुताऽपि, 'देवि !=स्वामिनि !, वर्धयामो वर्धयामः=वयमभिनन्दनं कुर्मः, हर्षातिरेके द्विर्वचनम्। कोऽपि=कश्चिदपि, अयम्=एषः, कस्याश्चित्=सौभाग्यशालिन्यः, जीवितेश्वरः=प्राणपतिः, अत्रैव=इहैव, आगतः=आयातः, दृश्यते=अवलोक्यते, इति=एवं, हर्षोत्कर्षगद्गदगिरां—हर्षोत्कर्षेण=हर्षातिरेकेण, गद्गदा गीः=वाणी यासां तथाविधानाम्, गीतं=गानम्, उत्सृज्य=परित्यज्य, ससम्भ्रमोत्थितकुब्जवामनकन्यकानां—ससंभ्रमम्=आतुरतापूर्वम्;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्थितानाम्=उद्गतानां, कुब्जवामनकन्यकानां=कुब्जवामनललनानां, मृदुकरतल-तालिकाकलितकलकलेन—मृदुकरतलेन=कोमलहस्ततलेन, तालिका=तालिका-दानमित्यर्थः, तेन। कलितः=सम्प्रपन्नः, यः कलकलः=ध्वनिः, तेन मनाक्=ईषत्, विलासवलितमुखी—विलासेन=हावेन, वलितं=वक्रीकृतं, तदभिमुखीकृतमिति यावत्, मुखम्=आननं यया सा, तदभिमुखं—तस्य=नलस्य, अभिमुखं=सम्मुखम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, [प्रत्युद्गमनाय] शय्यातलात्=शय्यायाः पृष्ठात्, उदचलत्=उदतिष्ठत् ॥

ज्योत्स्ना—दमयन्ती भी "स्वामिनि ! हमलोग बड़ी ही भाग्यशालिनी हैं, जो कि यह किसी के कोई प्राणेश्वर यहीं आये हुए दिखाई दे रहे हैं।" इस प्रकार अतिशय प्रसन्नता से गद्गद वाणी वाली, गीत का परित्याग कर हड़बड़ाहट के साथ उठी हुई कुब्जा तथा वामनी कन्याओं के कोमल करतल से उत्पन्न ध्वनि (तालिकावादन की ध्वनि) से थोड़े विलास के साथ मुख घुमा उस (नल) की ओर देखकर शय्यातल से उठ खड़ी हुई ॥

'आः कुतोऽस्यानेकप्राकाररक्षकरक्षिते पक्षिणामपि दुष्प्रवेशे विशेषतो रजन्यां कन्यान्तःपुरे प्रवेशः' इत्यद्भुतरसावेशस्तिमितेन किञ्चित्सञ्चारितेन चक्षुषा पुनः पुनर्नलमवलोक्य चिन्तयाञ्चकार ॥

कल्याणी—आः इति। 'आः' इति रोचकाश्चर्ये। अनेकप्राकाररक्षक-रक्षिते—अनेकप्राकारैः रक्षकैश्च रक्षिते=सुरक्षिते, [अतएव] पक्षिणामपि=खगानामपि, दुष्प्रवेशे=कष्टेन गम्ये, विशेषतः=वैशिष्ट्येन; रजन्यां=रात्रौ, कन्यान्तः-पुरे=कन्यानामस्मिन्निवासगृहे, कुतः=केन प्रकारेण, अस्य=अस्य पुरुषस्य, प्रवेशः=आगमनं, जातः=सञ्जातः इति=एवम्, अद्भुतरसावेशस्तिमितेन—अद्भुतरसावेशेन=विलक्षणानन्दावेगेन, स्तिमितेन=स्तब्धेन, तथा किञ्चित्=ईषत्, सञ्चारितेन=प्रणोदितेन, चक्षुषा=नेत्रेण, पुनः पुनः=भूयो भूयः, नलं=निषधाधिपम्, अवलोक्य=वीक्ष्य, चिन्तयाञ्चकार=व्यचिन्तयत् ॥

ज्योत्स्ना—"आह ! (आश्चर्य है कि) अनेकों प्राकारों (चहारदीवारियों) तथा रक्षकों से सुरक्षित, (अतएव) पक्षियों के लिए भी कठिनता से प्रवेश करने योग्य, विशेषकर रात्रि में कन्याओं के इस अन्तःपुर में इस (पुरुष) का प्रवेश किस प्रकार हो गया ?" इस प्रकार अद्भुत रस के आवेश से स्तब्ध तथा थोड़ी घूमती आँखों से बार-बार नल को देखकर सोची—

धन्या काप्युपराधिताद्रितनया यस्यास्त्वमाह्लादयन्
मुक्ताहार इव प्रसारितभुजः कण्ठे विलोठिष्यसि।
धातस्तात तवापि धन्यममुना सृष्टेन मन्ये श्रमं
मातर्मेदिनि वन्ध्यसे किमपरं यस्यास्तवायं पतिः" ॥३६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—उपराधिताद्रितनया काऽपि धन्या, यस्याः कण्ठे मुक्ताहार इव आह्लादयन् प्रसारितभुजः विलोठिष्यसि। तात धातः! अमुना सृष्टेन तव अपि श्रमं धन्यं मन्ये। मातः मेदिनि! किम् अपरं वन्द्यसे यस्याः तव अयं पतिः ॥३६॥

कल्याणी—धन्येति। उपराधिताद्रितनया—उपराधिता=प्रसादिता, अद्रितनया=पार्वती यया सा, कापि=असाधारणा सुन्दरी, धन्या=प्रशस्या, पार्वतीप्रसादादेव सा लोकोत्तरं वल्लभमवाप्नोदिति भावः। यस्याः=यस्याः सुन्दर्याः, कण्ठे=गले, मुक्ताहार इव=मौक्तिकाला इव, आह्लादयन्=आनन्दयन्, प्रसारितभुजः—प्रसारितौ=विस्तारितौ, भुजौ=बाहू येन स तथाभूतस्त्वं, विलोठिष्यसि=विलासं करिष्यसि। हे तात धातः!=विधे!, अमुना=अनेन, सृष्टेन=रचितेन, तवापि=ते अपि, श्रमं=रचनापरिश्रमं, धन्यं=सफलं, मन्ये=अवगच्छामि। हे मातः! मेदिनि=पृथ्वि! किमपरम्=अन्यत्किं कथयामि, त्वमपि वन्द्यसे=वन्दनीयाऽसि, यस्यास्तव=ते, अयम्=एषः पुरुषः, पतिः=स्वामी, वर्तते। 'पूर्वार्द्धे त्वं विलोठिष्यसि' इति मध्यमपुरुषप्रयोगादापातत इयं साक्षान्नलं प्रति दमयन्त्युक्तिरिति प्रतीयते। वस्तुतो मनसि विचिन्तन एव दमयन्त्या मध्यमपुरुषप्रयोगः कृत इति न कापि हानिः। मातृशब्दं स्त्रियः सपत्न्यादिष्वपि प्रणयसम्बोधने प्रयुञ्जते इति दमयन्त्या 'मातर्मेदिनि' इति सम्बोधनं न दुष्टम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३६॥

ज्योत्स्ना—अद्रितनया पार्वती की आराधना की हुई वह कोई कामिनी धन्य है, जिसके गले में मुक्तामाला के समान (उसे) आनन्दित करते हुए फैली भुजाओं वाले तुम विलास करोगे अर्थात् जिसका तुम आलिंगन करोगे। हे तात धातः! इस (सुन्दर पुरुष) को बनाने के कारण निर्माणसम्बन्धी आपके परिश्रम को भी मैं धन्य अर्थात् सफल मानती हूँ। अधिक क्या कहूँ; हे माते पृथ्वि! वह तुम भी वन्दना करने योग्य हो, जिसका कि यह पति है ॥३६॥

एवं चिन्तयन्त्येव तत्कालमाकूतकौतुकहर्षभयाद्यनेकरसपरम्परापरावर्तितनयनोत्पला लज्जावनमितमुखी विधेयविवेकवैकल्यमभजत ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थं, चिन्तयन्त्येव=विचारयन्त्येव, तत्कालं=तत्क्षणमेव, आकूतकौतुकहर्षभयाद्यनेकरसपरम्परावर्तितनयनोत्पला—आकूतं=संवेगः, कौतुकं=कुतूहलम्, हर्षः=प्रमोदः, भयं=भीतिश्चादिर्येषां, तेषाम् अनेकरसानां परम्परया=अविच्छिन्नधारया, परावर्तिते=प्रत्यावर्तिते, नयनोत्पले=नेत्रकमले यया सा, लज्जावनमितमुखी—लज्जया=व्रीडया, अवनमितमुखी=अधोमुखी, विधेयविवेकवैकल्यं—विधेयं=कर्तव्यं, तत्र यः विवेकः=ज्ञानं, तेन वैकल्यं=राहित्यम्, अभजत्=असेवत। कर्तव्यविवेकशून्या जातेत्यर्थः। सम्प्रति किं कर्तव्यमिति निर्णेतुमक्षमा बभूवेति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार विचार करती हुई तत्काल ही आकूत (संवेग), कौतूहल, हर्ष, भय आदि अनेक रसों की अविच्छिन्न धारा में चक्कर काटती हुई नयनकमलों वाली (वह दमयन्ती) लज्जा के कारण नीचे की ओर मुख कर (उस स्थिति में) कर्तव्यज्ञान से रहित हो गई अर्थात् इस समय क्या करना उचित होगा—इसका निर्धारण नहीं कर पायी ॥

नलोऽपि 'विहङ्गवागुरिके ! भवत्स्वामिन्याः किमेवंविधः समाचारः, यदभ्यागतजनेन सह स्वागतालापमात्रेणापि न क्रियते व्यवहारः' इति तस्याः समीपवर्तिनीं पूर्वपरिचितां किन्नरीमभाषत ॥

कल्याणी—नलोऽपीति। नलोऽपि=निषधराजोऽपि, हे विहङ्गवागुरिके इति किन्नरीसम्बोधनम्। भवत्स्वामिन्याः—भवत्याः स्वामिनी=देवी दमयन्ती, तस्याः। किमित प्रश्ने। एवंविधः=ईदृशः, समाचारः=व्यवहारः; यत् अभ्यागतजनेन=अतिथिजनेन, सह=सार्कं, स्वागतालापमात्रेणापि=स्वागतभाषणमात्रेणापि, व्यवहारः=शिष्टाचारः; न क्रियते=नैव विधीयते, इति=इत्थं, तस्याः=दमयन्त्याः, समीपवर्तिनीं=पार्श्ववर्तिनीं, पूर्वपरिचितां=प्राग्जातपरिचयां, किन्नरीं=विहङ्गवागुरिकाभिधेयां किन्नरीम्, अभाषत=अवदत् ॥

ज्योत्स्ना—नल भी "हे विहंगवागुरिके ! तुम्हारी स्वामिनी का क्या ऐसा ही व्यवहार अर्थात् आचरण है कि (वे) अभ्यागत व्यक्ति के साथ स्वागतसम्बन्धी वार्तालाप से भी व्यवहार नहीं करतीं ?" इस प्रकार उसकी समीपवर्तिनी और अपनी पूर्वपरिचिता किन्नरी से बोला ॥

सापि ससंभ्रमप्रणामपूर्वमिदमवादीत्—

कल्याणी—सापीति। सा=विहङ्गवागुरिकापि, ससम्भ्रमप्रणामपूर्वं—ससंभ्रमं=सत्वरं, प्रणामपूर्वम्=नमस्कारपूर्वकम्, इदं=वक्ष्यमाणम्, अवादीत्=प्रत्यवोचत् ॥

ज्योत्स्ना—वह (किन्नरी) भी शीघ्रता से (उसे) प्रणाम करती हुई इस प्रकार बोली—

'किञ्चित्कम्पितपाणिकङ्कणरवैः पृष्टं ननु स्वागतं
व्रीडानम्रमुखाब्जया चरणयोर्न्यस्ते च नेत्रोत्पले।
द्वारस्थस्तनयुग्ममङ्गलघटे दत्तः प्रवेशो हृदि
स्वामिन्किं न तवातिथेः समुचितं सख्याऽनयाऽनुष्ठितम् ॥३७॥

अन्वयः—स्वामिन् ! किञ्चित् कम्पितपाणिकङ्कणरवैः ननु स्वागतं पृष्टम् व्रीडानम्रमुखाब्जया चरणयोः च नेत्रोत्पले न्यस्ते, द्वारस्थस्तनयुग्ममङ्गलघटे हृदि प्रवेशः दत्तः, अनया सख्या तव अतिथेः समुचितं किं न अनुष्ठितम् ॥३७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—किञ्चिदिति । स्वामिन् ! किञ्चित्=ईषत्, कम्पितपाणिकङ्कणरवैः—कम्पितस्य पाणेः=हस्तस्य, यः कङ्कणः=वलयः, तस्य रवैः=ध्वनिभिः, नन्विति निश्चये । स्वागतं=कुशलप्रश्नं पृष्टम्, व्रीडानम्रमुखाब्जया—व्रीडया=लज्जया, नम्रम्=अवनतं, मुखाब्जं=मुखकमलं यस्यास्तया, चरणयोः=भवत्पादयोः, नेत्रोत्पले=नेत्रकमले, न्यस्ते=निहिते, द्वारस्थस्तनयुग्ममङ्गलघटे—द्वारस्थं=द्वारस्थितं, स्तनयुग्ममेव=पयोधरयुगलमेव, मङ्गलघटः=मङ्गलकलशः यत्र तथाविधे, हृदि=हृदयमन्दिरे, प्रवेशः दत्तः=स्थानं दत्तमित्यर्थः । अनया=एतया, सख्या=दमयन्त्या, तवातिथेः=भवत्सदृशाभ्यागतस्य, समुचितं=योग्यं, किं नानुष्ठितं=किं न कृतं, सर्वमपि कृतमित्यर्थः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् । अत्र स्वागतप्रश्नादीनां करकङ्कणरवाद्यात्मतया प्रकृतार्थोपयोगित्वात्परिणामः ॥३७॥

ज्योत्स्ना—"हे स्वामिन् ! थोड़े काँपते हुए हाथों के कङ्कण की ध्वनि से (हमारी सखी ने) निश्चय ही आपका स्वागत पूछा है और लज्जा के कारण अवनतमुख हो (आपके) चरणों में नेत्रकमलों को समर्पित भी किया है ।(साथ ही) द्वार पर स्थित स्तनयुगलरूपी मंगलकलश वाले हृदयरूपी मन्दिर में (आपको) प्रवेश दिया है अर्थात् स्थान दिया है । (इस प्रकार मेरी) इस सखी ने आप अतिथि के योग्य क्या नहीं किया है ?

विमर्श—आशय यह है कि मेरी सखी दमयन्ती ने आपको देखते ही पूर्णतया आपके प्रति समर्पित हो आपको अपने मन-मन्दिर में बिठा लिया है । इस प्रकार आपके स्वागत में इसने अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया है । अतः आपका यह कहना सही नहीं है कि इसने आपका सामान्य सत्कार भी नहीं किया ॥३७॥

तदितः ससम्भ्रमोत्थितयानया समर्पितमिदमुल्लसन्मणिपर्यङ्किकापृष्ठमधितिष्ठतु देवः ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, इतः=अस्मात् स्थानात्, ससम्भ्रमोत्थितया—ससंभ्रमं=सत्वरम्, उत्थितया=उद्गतया, अनया=एतया दमयन्त्या, समर्पितं=दत्तम्, इदम्=एतत्, उल्लसन्मणिपर्यङ्किकापृष्ठं=देदीप्यमानमणिखचितपर्यङ्किकातलं, देवः=भवान्, अधितिष्ठतु=अध्यास्ताम् । 'अधिशीङ्स्थासां कर्म' इत्याधारस्य कर्मत्वम्, कर्मणि च द्वितीया ॥

ज्योत्स्ना—अतः यहाँ से घबराहट के साथ उठकर इसके द्वारा समर्पित किये गये इस उज्ज्वल मणिमय पर्यङ्किका पर आप आसीन हों अर्थात् बैठें ॥

'त्वमपि देवि ! विद्रुममणिपर्यङ्किकामिमामदूरवर्तिनीमध्यास्स्व ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—त्वमपीति। देवि=स्वामिनि दमयन्ति !, त्वमपि=भवत्यपि, अदूरवर्तिनीं=समीपस्थाम्, इमाम्=एतां, विद्रुममणिपर्यङ्किकां=विद्रुममणिरचितपर्यङ्किकाम्, अध्यास्स्व=अधितिष्ठ ॥

ज्योत्स्ना—हे देवि ! आप भी समीप ही स्थित विद्रुम मणिनिर्मित इस पर्यङ्किका पर बैठें ॥

भवतु च भवतोः परमुखेन श्रुतान्योन्यस्वरूपयोरिदानीमात्मानुभवेन नयननिर्वृतिः, फलन्तु मनोरथाः सखीनाम्' इति ॥

कल्याणी—भवत्विति। परमुखेन=पथिकहंसादिमुखेन, श्रुतान्योन्यस्वरूपयोः—श्रुतम्=आकर्णितम्, अन्योन्यस्य स्वरूपं=रूपं याभ्यां तयोः, भवतो.=देविस्वामिनोः, आत्मानुभवेन=व्यक्तिगतानुभवेन, नयननिर्वृतिः=नेत्रानन्दः, भवतु=अस्तु, सखीनां=सहचरीणाञ्च, मनोरथाः=कामाः, फलन्तु=सफलीभवन्तु, इति=इत्थम्, अवादीदिति पूर्वक्रियया सम्बन्धः ॥

ज्योत्स्ना—(पथिक-हंस आदि) दूसरों के मुख से सुने हुए एक-दूसरे के स्वरूप वाले आप दोनों की आँखें व्यक्तिगत अनुभव से आनन्दित हों (तथा हम) सखियों के भी मनोरथ सफल हों।" इस प्रकार बोली ॥

तयाभिहितौ तौ सर्वसत्वरसखीकरपरामृष्टयोः स्फटिकप्रवालपर्यङ्किकयोरुत्सङ्गभागं भेजतुः ॥

कल्याणी—तयेति। तया=किन्नर्या, अभिहितौ=प्रार्थितौ, तौ—स च सा चेति तौ=नलदमयन्त्यौ, सर्वसत्वरसखीकरपरामृष्टयोः—सर्वासां=समस्तानां, सत्वराणां=संभ्रान्तानां, सखीनां=सहचरीणां, करैः=हस्तैः, परामृष्टयोः=स्वच्छीकृतयोः, स्फटिकप्रवालपर्यङ्किकयोः—स्फटिकस्य प्रवालस्य च=विद्रुमस्य च पर्यङ्किकयोः, उत्सङ्गभागं=क्रोडभागं, मध्यदेशमिति यावत्। भेजतुः=अध्यासाञ्चक्राते ॥

ज्योत्स्ना—उस किन्नरी के द्वारा (इस प्रकार) प्रार्थना किये जाने पर वे (नल-दमयन्ती) दोनों ही शीघ्रता से सखियों द्वारा हाथों से (पोंछकर) स्वच्छ किये गये स्फटिक एवं प्रवाल (विद्रुम) मणियों से निर्मित पर्यङ्किकाओं के मध्य भाग में बैठ गये ॥

ततश्च तौ—

हर्षाद्बाष्पचिते, भयात्तरलिते, विस्फारिते विस्मया-
दौत्सुक्यात्स्तिमिते, स्मराद्विलुलिते, सङ्कोचिते लज्जया।
रूपालोकनकौतुकेन रभसादन्योन्यवक्त्राम्बुजे
किञ्चित्साचि च सम्मुखं च नयने सञ्चारयामासतुः ॥३८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्वयः—(ततश्च तौ) रूपालोकनकौतुकेन रभसात् अन्योन्यवक्त्राम्बुजे, हर्षात् बाष्पचिते, भयात् तरलिते, विस्मयात् विस्फारिते, औत्सुक्यात् स्तिमिते, स्मरात् विलुलिते, लज्जया सङ्कोचिते नयने किञ्चित् साचि च सम्मुखं च सञ्चारयामासतुः ॥३८॥

कल्याणी—हर्षादिति। (ततः=तदन्तरं च, तौ=नलदमयन्त्यौ) रूपालोकनकौतुकेन—रूपस्य=सौन्दर्यस्य, यत् आलोकनं=दर्शनं, तस्य कौतुकेन=औत्सुक्येन, रभसात्=वेगात्, अन्योन्यवक्त्राम्बुजे—अन्योन्यस्य वक्त्राम्बुजे=मुखकमले, हर्षात्=आनन्दात्, बाष्पचिते—बाष्पैः=आदन्दाश्रुभिः, चिते=व्याप्ते, भयात्=भीतेः, तरलिते=चञ्चले, विस्मयात्=आश्चर्यात्, विस्फारिते=विस्तारिते, औत्सुक्यात्=औत्सुक्येन, स्तिमिते=स्थिरे, स्मरात्=कामात्, विलुलिते=अस्थिरे, लज्जया=त्रपया, संकोचिते=संकोचं गते, नयने=नेत्रे, किञ्चित्=ईषत्, साचि च=तिर्यक् च, संमुखं च=समक्षञ्च, सञ्चारयामासतुः। दर्शनौत्सुक्येन कदाचिद् दृष्टिः संमुखं निपतति तत्कालमेव च प्रथमपरिचयेन लज्जावशादधो यातीति भावः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३८॥

ज्योत्स्ना—और इसके बाद उन दोनों ने—(परस्पर एक-दूसरे के) सौन्दर्य को देखने की उत्सुकता के कारण शीघ्रतापूर्वक एक-दूसरे के मुखकमल पर आनन्दाश्रुओं से व्याप्त, भय के कारण तरलित अर्थात् चञ्चल, आश्चर्य के कारण विस्फारित अर्थात् फैले, उत्सुकता के कारण स्तब्ध, लज्जा के कारण संकुचित नयनों को कुछ तिरछे और कुछ सामने की ओर सञ्चालित किया।

विमर्श—आशय यह है कि एक-दूसरे को देखने की उत्सुकता के कारण कभी-कभी दोनों की नजरें एक-दूसरे के आमने-सामने पड़ जाती थी, लेकिन प्रथम परिचय होने के कारण तत्काल ही दोनों की नजरें झुक जाती थीं और उसके बाद तिरछी नजरों से वे दोनों एक-दूसरे को देखने लगते थे ॥३८॥

तत्र च व्यतिकरे—

अन्तः केवलमुल्लसन्ति न पुनर्वाचां तु ये गोचरा
येषां नो भरतादयोऽपि कवयः कर्तुं विवेकं क्षमाः।
लज्जामन्थरयोः परस्परमिलद्दृष्टिप्रपाते तयो-
स्ते सर्वे समकालमेव हृदये केऽप्याविरासन्रसाः ॥३९॥

अन्वयः—(तत्र च व्यतिकरे) लज्जामन्थरयोः तयोः परस्परमिलद्दृष्टिप्रपाते केऽपि ते सर्वे रसाः समकालमेव हृदये आविरासन्, ये केवलम् अन्तः उल्लसन्ति, न पुनः वाचां तु गोचराः, येषां विवेकः कर्तुं भरतादयः अपि कवयः न क्षमाः ॥३९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—अन्तरिति । (तत्र च व्यतिकरे=तथा घटिते च सति) लज्जामन्थरयोः—लज्जया=त्रपया, मन्थरयोः=शिथिलयोः, तयोः=दमयन्तीनलयोः, परस्परमिलद्दृष्टिप्रताते—परस्परमिलन्त्या दृष्टेः प्रपाते=अन्योन्यस्मिन् दृष्टिपाते सति, केऽपि=अनिर्वचनीयाः, ते सर्वे=समस्ताः, रसाः=शृङ्गारादयः, समकालमेव=युगपदेव, हृदये=चित्ते, आविरासन्=आविरभवन्, तरङ्गिता अभूवन्निति भावः। ये=ये रसाः, केवलं=मात्रम्, अन्तः=अभ्यन्तरे, उल्लसन्ति=उदयन्ति, न पुनर्वाचां तु गोचराः=न वाणीनां विषया भवन्ति, येषां च=येषां रसानाञ्च, विवेकं=विवेचनं, कर्तुं=विधातुं, भरतादयोऽपि कवयः=काव्यकर्त्तारः, नो क्षमाः=न समर्था बभूवुः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥३९॥

ज्योत्स्ना—और उस समय—लज्जा के कारण शिथिल उन दोनों के परस्पर एक-दूसरे के नयनरूपी प्रपात (झरना) के मिलने पर अर्थात् दोनों का एक-दूसरे पर दृष्टिपात होने पर अनिर्वचनीय वे सभी रस एक ही साथ हृदय में उमड़ पड़े, जो केवल अन्तःकरण में ही उल्लसित अर्थात् उदित होते हैं, वाणी के विषय नहीं बन पाते और जिनका विवेचन करने में भरत आदि रसशास्त्र के मर्मज्ञ कवि भी कभी समर्थ नहीं हो पाये ॥३९॥

अपि च । तत्र च व्यतिकरे—

कर्णान्त-कृष्ट-लयीकृत-चापचक्रश्चञ्चद्गुणस्खलन-जर्जरितप्रकोष्ठः ।
लक्षद्वयेऽपि युगपद्विशिखान्विमुञ्चन् संधानसत्वरकरः श्रमवान् स्मरोऽभूत् ॥४०॥

अन्वयः—(तत्र च व्यतिकरे) कर्णान्तकृष्टवलयीकृतचापचक्रः चञ्चद्गुणस्खलनजर्जरितप्रकोष्ठः सन्धानसत्वरकरः स्मरः लक्षद्वयेऽपि युगपत् विशिखान् विमुञ्चन् श्रमवान् अभूत् ॥४०॥

कल्याणी—कर्णान्तेति । (तत्र च व्यतिकरे=तस्मिन्नवसरे च) कर्णान्तकृष्टवलयीकृतचापचक्रः—कर्णान्तं=श्रोत्रपर्यन्तं, कृष्टम्=आकृष्टम्, अतएव वलयीकृतं=वर्तुलीकृतं, चापचक्रं=धनुर्मण्डलं येन स तथोक्तः, चञ्चद्गुणस्खलनजर्जरितप्रकोष्ठः—चञ्चतः=गतिशीलस्य, गुणस्य=मौर्व्याः, स्खलनेन=घर्षणेन, जर्जरितः=व्रणोपेतः, प्रकोष्ठः=मणिबन्धादारभ्य कूर्परपर्यन्तभुजभागः यस्य स तथोक्तः; सन्धानसत्वरकरः—संधाने=शराणां धनुष्यारोपणे, सत्वरः=त्वरायुक्तः, करः=हस्तः यस्य सः, स्मरः=कामदेवः, लक्षद्वयेऽपि=नलदमयन्तीलक्षणयोर्द्वयोरपि लक्ष्ययोः, युगपत्=समकालमेव, विशिखान्=शरान्, विमुञ्चन्=प्रक्षिपन्, श्रमवानभूत्=श्रान्तः जातः। वसन्ततिलकं वृत्तम् ॥४०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—और भी; उस समय—कर्णपर्यन्त आकृष्ट, अतएव मण्डलाकार धनुर्मण्डल वाला, चञ्चल अर्थात् गतिशील प्रत्यञ्चा के घर्षण से जर्जरित अर्थात् व्रणयुक्त प्रकोष्ठ भाग (मणिबन्ध से लेकर कूर्परपर्यन्त भाग) वाला, सन्धान अर्थात् बाणों को धनुष पर आरोपित करने में त्वरायुक्त हाथ वाला कामदेव नल-दमयन्ती-रूप दोनों ही लक्ष्यों पर एक साथ ही बाणों को छोड़ता हुआ श्रान्त हो गया अर्थात् अत्यधिक परिश्रम करने लगा ॥४०॥

अनन्तरमाप्तसखीवचनेन स्वयमर्घदानोद्यतां ताम् "अलमलमुत्पलाक्षि ! प्रयासेन । न खल्वसि पात्रं परिश्रमस्य । न पारिजातमञ्जरी जरठपवन-प्रेङ्खोलनायासं सहते' इति दमयन्तीमभिधाय तस्याः स्वादुदुर्लभसूक्तिसुधासेक-कोमलालापपण्डिताभिः सखीभिः सह परिमितपरिहासेन, किमपि जल्पन्, किमपि हसन्, किमपि हासयन्, मुहूर्त्तमिवासाञ्चक्रे ॥

कल्याणी—अनन्तरमिति । अनन्तरं=तस्मात्परतः, आप्तसखीवचनेन—आप्तसखीनां=शिष्टसखीनां, वचनेन=कथनेन, स्वयम्=आत्मनैव, अर्घदानोद्यताम्—अर्घदानाय उद्यताम्=उद्युक्तां, तां=दमयन्तीम्, 'उत्पलाक्षि !=कमलनयने !, अलमलं प्रयासेन=न प्रयासः कार्यः । न खल्वसि पात्रं परिश्रमस्य=न हि त्वं परिश्रमस्य पात्रमसि, तद्दुःसहत्वात्त्वत्सौकुमार्याच्चेति भावः । पारिजातमञ्जरीजरठपवन-प्रेङ्खोलनायासं—पारिजातमञ्जरी जरठपवनस्य=प्रवृद्धसमीरणस्य, प्रेङ्खोलनम्=उत्कटवेगः, तेन य आयासः=कष्टं, तं न सहते=न सोढुं समर्थाः [दृष्टान्तालङ्कारः], इति=एवं, दमयन्तीम् अभिधाय=उक्त्वा, तस्याः=दमयन्त्याः, स्वादुदुर्लभ-सूक्तिसुधासेककोमलालापपण्डिताभिः—स्वादी=मधुरा, दुर्लभा=न सदा प्राप्या, या सूक्तिरेव सुधा, तस्याः सेकेन=सेचनेन, कोमलः=मधुमयः, य आलापः=वाग्विनोदः, तत्र पण्डिताभिः=निपुणाभिः, सखीभिः=सहचरीभिः, सह=साकं, परिमितपरिहासेन=मर्यादितनर्मणा, किमपि=किञ्चिदपि, जल्पन्=वदन्, किमपि=किञ्चिदपि; हसन्=विहसन्, किमपि=किञ्चदपि, हासयन्=आह्लादयन्, मुहूर्तमिव=कञ्चित्कालमिव, आसाञ्चक्रे=तस्थौ ॥

ज्योत्स्ना—उसके बाद शिष्ट सखियों के कहने से स्वयं ही अर्घ्य प्रदान करने के लिए उद्यत उस दमयन्ती को "हे कमललोचने ! प्रयास न करें, आप परिश्रम करने के लायक नहीं हैं, (क्योंकि) पारिजातपुष्प की मञ्जरी प्रचण्ड वायु के उत्कट वेग से होने वाले कष्ट को सहन नहीं कर पाती।" इस प्रकार कहकर उसकी स्वादु अर्थात् मधुर एवं दुर्लभ सूक्तिरूपी सुधा के सिञ्चन से कोमल वाग्विनोद अर्थात् हास-परिहास में निपुण सखियों के साथ मर्यादित परिहास के द्वारा कुछ कहता हुआ, थोड़ा हँसता हुआ, थोड़ा हँसाता हुआ कुछ समय तक बैठा रहा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चिन्तितवांश्च—

लीलाताण्डवितभ्रुवोः स्मरभरभ्रान्तोल्लसत्तारयो-
रन्तर्मौक्तिकमालिका-धवलयोर्मुग्धस्मित—स्मेरयोः ।
किञ्चित्साचिदृशोः कृतानिलचलन्नीलोत्पलस्पर्धयो-
रुल्लोलैरिव याति पक्ष्मलदृशः कान्तिर्मदीये मुखे ॥४१॥

अन्वयः—पक्ष्मलदृशः लीलाताण्डवितभ्रुवः स्मरभरभ्रान्तोल्लसत्तारयोः अन्तर्मौक्तिकमालिकाधवलयोः मुग्धस्मितस्मेरयोः कृतानिलचलन्नीलोत्पलस्पर्धयोः किञ्चित्साचिदृशोः कान्तिः मदीये मुखे उल्लोलैरिव याति ॥४१॥

कल्याणी—लीलेति । पक्ष्मलदृशः—पक्ष्मले, दृशौ=नयने यस्यास्तस्याः दमयन्त्याः, लीलाताण्डवितभ्रुवः—लीलया=विलासेन, ताण्डविते=कृतनृत्ये, भ्रुवौ ययोस्तयोः, स्मरभरभ्रान्तोल्लसत्तारयोः—स्मरभरेण=कामोद्रेकेन, भ्रान्ते=चञ्चले, उल्लसन्ती=उल्लासपूर्णे, तारे=कनीनिके ययोस्तयोः, अन्तर्मौक्तिकमालिकाधवलयोः—अन्तः=आन्तरिकरूपेण, मौक्तिकमालिकावद्=मुक्ताहार इव, धवलयोः=शुभ्रयोः, मुग्धस्मितस्मेरयोः—मुग्धस्मितेन=मधुरहासेन, स्मेरयोः=प्रसन्नयोः, कृतानिल-चलन्नीलोत्पल स्पर्धयोः—कृता=विहिता, अनिलेन=पवनेन, चलद्भ्यां=चञ्चलाभ्यां, नीलोत्पलाभ्यां=नीलकमलाभ्यां, स्पर्धा=प्रतिद्वन्द्विता याभ्यां तयोः, किञ्चित्साचि-दृशोः=मनागवनमितनेत्रयोः, कान्तिः=दीप्तिः, मदीये=मयि, मुखे=आनने, उल्लो-लैरिव=तरङ्गैरिव, याति=स्फुरति, तरङ्गिता भवतीत्यर्थः । शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४१॥

ज्योत्स्ना—और विचार किया—पक्ष्मल नयनों वाली दमयन्ती के विलास के कारण नृत्य करती हुई भौंहों वाले, कामोद्रेक के कारण चञ्चल उल्लासपूर्ण कनीनिकाओं वाले, आन्तरिक रूप से मौक्तिकों की माला के समान धवल, मधुर मन्द मुस्कान से विकसित, वायु के द्वारा चञ्चल किये गये नीलकमलों से प्रतिद्वन्द्विता करने वाले कुछ झुके हुए नयनों की कान्ति मेरे मुख पर तरंगों के समान पड़ रही है अर्थात् तरङ्गित हो रही है ॥४१॥

अपि च—

दर-मुकुलित-नेत्र-प्रान्त-पर्यस्त - तारं
तव तरुणि सलज्जं सस्मितं सस्मरं च ।
क्षणमभिमुखवक्त्रे विस्मयस्मेरदृष्टौ
मयि वलति वलक्षं वीक्षितं मा निरौत्सीः ॥४२॥

अन्वयः—तरुणि ! दरमुकुलितनेत्रप्रान्तपर्यस्ततारं सलज्जं सस्मितं सस्मरं च वलक्षं तव वीक्षितं अभिमुखवक्त्रे विस्मयस्मेरदृष्टौ मयि क्षणं वलति (तद्वीक्षितं) मा निरौत्सीः ॥४२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्याणी—दरेति। तरुणि !=युवति !, दरमुकुलितनेत्रप्रान्तपर्यस्ततारं—दरम्=ईषत्, मुकुलितं=संकुचितं, नेत्रं=नयनं, तत्प्रान्ते=एकभागे, पर्यस्ता=प्रक्षिप्ता, तारा=कनीनिका यस्य तत्, सलज्जं=सत्रपं, सस्मितं=सहासं, सस्मरं=सकामं च, वलक्षं=धवलं, तव=ते, वीक्षितं=दृष्टिः, अभिमुखवक्त्रे—अभिमुखं=सम्मुखं, वक्त्रं=मुखं यस्य तथाविधे, विस्मयस्मेरदृष्टौ—विस्मयेन=आश्चर्येण, स्मेरा=प्रसन्ना विस्फारिता वा, दृष्टिः यस्य तथाविधे, मयि=समागते नले, क्षणं=मुहूर्तमिव, वलति=पतितुं त्वरयति, तद् वीक्षितं मा निरौत्सीः=निरुद्धं मा कार्षीः। मालिनी वृत्तम् ॥४२॥

ज्योत्स्ना—और भी—अयि युवति ! थोड़े संकुचित नयनों के एक भाग में फेंकती हुई कनीनिकाओं (पुतलियों) वाली, लज्जा से समन्वित, मन्द मुस्कान से युक्त और सकाम तुम्हारी धवल दृष्टि सामने की ओर मुख किये हुए; आश्चर्य के कारण प्रसन्न अथवा फैली हुई दृष्टि वाले मुझपर क्षण भर के लिए पड़ रही है, (उस दृष्टि को) मत रोको।

विमर्श—आशय यह है कि प्रथम साक्षात्कार की स्थिति के कारण नारीसुलभ लज्जावश तुम भरपूर नजरों से मेरी ओर नहीं देख पा रही हो, अतः ऐसा मत करो; बल्कि अपनी भरपूर नजरें मुझ पर पड़ने दो ॥४२॥

किञ्चान्यदपरमिदमाशास्महे—

लावण्यामृतदीर्घिका कुलगृहं सौभाग्यसौन्दर्ययो-
स्त्रैलोक्याकररत्नकन्दलिरियं जीव्यात्सहस्रं समाः।
लोकालोकनकौतुकाय बहुना शिल्पश्रमेणादरा-
न्मन्ये यां विधिना विधाय विहितं सृष्टेर्ध्वजारोपणम् ॥४३॥

अन्वयः—(किञ्च अन्यत् अपरम् इदम् आशास्महे) लावण्यामृतदीर्घिका सौभाग्यसौन्दर्ययोः कुलगृहं त्रैलोक्याकररत्नकन्दलिः इयं सहस्रं समाः जीव्यात्, यां विधिना लोकालोकनकौतुकाय बहुना शिल्पश्रमेण आदरात् विधाय मन्ये, सृष्टेः ध्वजारोपणं विहितम् ॥४३॥

कल्याणी—लावण्येति। (किञ्च=किन्तु, अन्यदपरम्, इदम्=एतत्, आशास्महे=कामयामहे) लावण्यामृतदीर्घिका—लावण्यं=सौन्दर्यं, तदेव अमृतं=सुधा, तद्दीर्घिका=वापी, सौभाग्यसौन्दर्ययोः=सौभाग्यस्य च सौन्दर्यस्य च, कुलगृहं=पारिवारिकवासस्थानम्, त्रैलोक्याकररत्नकन्दलिः—त्रैलोक्यमेव आकरः=निधिः; खनिरित्यर्थः। तस्य रत्नकन्दलिः=रत्नलता, इयं=दमयन्ती, सहस्रं समाः=वर्षाणि, जीव्यात्=जीवतात्, आशिषि लिङ्। यां=दमयन्तीं, विधिना=वेधसा, लोकालोकन-कौतुकाय=लोकस्य दृष्टिकौतूहलाय, द्रष्टव्यदर्शनाल्लोकदृष्टिसाफल्यायेति भावः। बहुना=महता, शिल्पश्रमेण=कलात्मकश्रमेण, आदरात्=सादरं, विधाय=विरचय्य,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन्ये=सम्भावयामि, सृष्टेः=रचनाकौशलस्य, ध्वजारोपणं=ध्वजोत्तोलनं, विहितं=कृतम्, स्वरचनाकौशलस्येयत्ता प्रदर्शितेति भावः। पूर्वार्द्धे रूपकम्, चतुर्थपादे तूत्प्रेक्षा। तयोर्नैरपेक्ष्येण संस्थितेः संसृष्टिः। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४३॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहूँ, इससे भी बढ़कर मैं तो यही आशा करता हूँ कि—सौन्दर्यरूपी अमृत की बावली, सौभाग्य और सुन्दरता का कुलभवन अर्थात् पारिवारिक निवास-स्थान एवं त्रैलोक्यरूपी खजाने (खान) की रत्नलता-स्वरूपा यह दमयन्ती हजारो वर्षों तक जीवित रहे। जिस दमयन्ती को विधाता के द्वारा लोगों के दृष्टि-कौतूहल के लिए बहुत अधिक कलात्मक परिश्रम से बनाकर, मानता हूँ कि अपने रचनाकौशल का ध्वजारोपण किया गया है अर्थात् ऐसा प्रतीत होता है कि दमयन्ती का निर्माण कर ब्रह्मा ने अपने रचनाकौशल की अन्तिम सीमा को ही प्रदर्शित किया है ॥४३॥

अहो आश्चर्यम्—

रङ्गत्यङ्गे कुरङ्गाक्ष्याश्चक्षुर्मे यत्र यत्र तु।
दृश्यते तत्र तत्रैव बलाद्बाणकरः स्वरः ॥४४॥

अन्वयः—तु कुरङ्गाक्ष्याः यत्र यत्र अङ्गे मे चक्षुः रङ्गति तत्र तत्र एव बलात् बाणकरः स्मरः दृश्यते ॥४४॥

कल्याणी—रङ्गतीति। तु पुनरर्थे। किं पुनः, कुरङ्गाक्ष्याः=मृगनयनायाः, यत्र यत्र=यस्मिन् यस्मिन्, अङ्गे=शरीरावयवे, मे=मम, चक्षुः=नेत्रं, रङ्गति=याति, तत्र तत्रैव=तत्तदेवाङ्गे, बलात्=प्रसभम्, बाणकरः—बाणः=शरः, करे=हस्ते यस्य सः, धृतबाण इत्यर्थः। स्मरः=कामः, दृश्यते=अवलोक्यते, तत्तदङ्गस्य मदनाधिष्ठितत्वात् तत्र सर्वत्र स्मरबाणबाधा प्राप्यत इति भावः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४४॥

ज्योत्स्ना—अहो! आश्चर्य है कि—मृगनयनी के जिस-जिस अंग पर मेरी दृष्टि जाती है, वहीं-वहीं बलात् हाथों में बाण लिया हुआ कामदेव ही दिखाई देता है।

विमर्श—आशय यह है कि दमयन्ती के उन-उन अंगों के काम का निवास स्थान होने के कारण उन सभी जगहों पर कामबाणरूपी बाधा उपस्थित हो जाती है ॥४४॥

तत्कथमियमन्यार्थे प्रार्थ्यते तद्दह्यतामयं परप्रेष्यभावः ॥

कल्याणी—तत्कथमिति। तत्=तस्मात्, कथं=किमर्थम्, इयम्=एषा दमयन्ती, अन्यार्थे—अन्येषाम्=इन्द्रादीनाम्, अर्थे=कृते, प्रार्थ्यते=याच्यते, तत्=तस्मात्, अयम्=एषः, परप्रेष्यभावः=परेषां दौत्यकार्यं, दह्यतां=नश्यतु। निन्दाव्यञ्जकलोकोक्तिरियम्। को लाभः परप्रेष्यभावेन तद्दूरमपसरत्वयमिति भावः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—तो फिर दूसरों के लिए इसे क्यों माँगूं ? इसलिए दूसरों के लिए दौत्यरूप मेरा यह कार्य नष्ट हो जाय।

आशय यह है कि दूसरों का दौत्य-कार्य करने से कोई फायदा नहीं है, इसलिए यह दूर हो जाय ॥

यतः; तिरयति स्वातन्त्र्यसुखम्, अभिमुखयति पारवश्यक्लेशम्, आमन्त्रयति तिरस्कारम्, आदरयति दैन्यम्, आह्वयति लघिमानम्, आवाहयति हास्यवादम्, समानयत्यौचित्यभङ्गम्, अङ्गीकारयति कार्पण्यम्, अपहस्तयति वस्तुभावम्, पुरुषस्य ॥

कल्याणी—यत इति। यतः=यतोहि, अयं परप्रेष्यभावः, पुरुषस्य=प्रेष्यभूतस्य जनस्य, स्वातन्त्र्यसुखं=स्वाधीनतासुखं, तिरयति=निरुणद्धि; पारवश्यक्लेशं=पारतन्त्र्यदुःखम्, अभिमुखयति=पुरत उपस्थापयति, तिरस्कारम्=अवमानम्, आमन्त्रयति=आह्वयति, दैन्यं=दीनभावम्, आदरयति=संमानयति, लघिमानं=लघुताम्, आह्वयति=आमन्त्रयति, हास्यवादम्=उपहासम्; आवाहयति=कारयति, औचित्यभङ्गम्—औचित्यस्य भङ्गं=विनाशं, समानयति=प्रापयति, कार्पण्यं=कदर्यताम्, अङ्गीकारयति=स्वीकारयति, वस्तुभावं=वास्तविकभावं, पुरुषत्वभावमिति भावः। अपहस्तयति=त्याजयति ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि—यह दौत्यकार्य स्वातन्त्र्य-सुख को अवरुद्ध कर देता है, परतन्त्रतामूलक दुःख को सामने उपस्थित कर देता है, तिरस्कार को आमन्त्रित करता है, दीनभाव को सम्मानित करता है, लघुता को आमन्त्रित करता है, हास्यवाद को आवाहित करता है अर्थात् उपहास कराता है, औचित्यभंग को सम्मानित करता है अर्थात् औचित्य के विनाश को प्राप्त कराता है और वास्तविकता अर्थात् पुरुषत्व भाव को छुड़ा देता है ॥

तथाहि—

सोच्छ्वासं मरणं निरग्निदहनं निःशृङ्खलं बन्धनं
निष्पङ्कं मलिनं विनैव नरकं सैषा महायातना।
सेवासञ्जनितं जनस्य सुधियो धिक्पारवश्यं यतः
पञ्चानां सविशेषमेतदपरं षष्ठं महापातकम् ॥४५॥

अन्वयः—सुधियः जनस्य सेवासञ्जनितं पारवश्यं धिक्, यतः (तत्) सोच्छ्वासं मरणं, निरग्निदहनं, निःशृङ्खलं बन्धनं, निष्पङ्कं मलिनं, नरकं विनैव सा एषा महायातना। पञ्चानां सविशेषं अपरम् एतत् षष्ठं महापातकम् ॥४५॥

कल्याणी—सोच्छ्वासमिति। सुधियः=विदुषः, जनस्य=पुरुषस्य, सेवासञ्जनितं—सेवायाः सञ्जनितं, सेवामूलकमित्यर्थः। पारवश्यं=पराधीनतां, धिक्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यतः=यस्मात्, तत् सोच्छ्वासं मरणम्=सश्वासो मृत्युः, निरग्नि=अनलरहितं, दहनं=दाहः, निःश्रृङ्खलं=निगडरहितं, बन्धनम्, निष्पङ्कं=पङ्कं विनैव, मलिनं=मलम्, नरकं विनैव सा एषा महायातना=घोरपीड़ा, पञ्चानां='ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः। महान्ति पातकान्याहुस्तत्संसर्गश्च पञ्चमम् ॥" इति मनुनोक्तपञ्च-महापातकानां, सविशेषं=वैशिष्ट्ययुक्तम्, अपरम्=अन्यत्, एतत्=इदं पारवश्यं, षष्ठं=षट्संख्याकं, महापातकम्। अत्रारोपविषये सोच्छ्वासत्वादिवैशिष्ट्ययोगादधिकारुढवैशिष्ट्यं मालारूपं निरङ्गरूपकम्। शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४५॥

ज्योत्स्ना— अतः बुद्धिमान पुरुष के सेवामूलक पराधीनता को धिक्कार है; क्योंकि यह श्वाससहित मृत्यु है, अग्निरहित दाह है, बिना वेड़ियों का बन्धन है, पंकरहित मल है और नरक के बिना ही यह घोर यातना है। पाँच महापातकों के अतिरिक्त यह एक विशेष प्रकार का छठा महापातक है।

विमर्श—महापातक पाँच कहे गये हैं—(१) ब्रह्महत्या, (२) सुरापान, (३) चोरी, (४) गुरुपत्नी-गमन और (५) इन पूर्वकथित कार्यों को करने वाले के साथ सम्पर्क। जैसा कि मनु ने कहा भी है—

"ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः।
महान्ति पातकान्याहुस्तत्संसर्गश्च पञ्चमम् ॥"

किञ्चान्यम्—

प्रस्तुतस्य विरोधेन ग्राम्यः सर्वोऽप्युपक्रमः।
वीणायां वाद्यमानायां वेदोद्गारो न रोचते ॥४६॥

अन्वयः—प्रस्तुतस्य विरोधेन सर्वः अपि उपक्रमः ग्राम्यः। वीणायां वाद्यमानायां वेदोद्गारः न रोचते ॥४६॥

कल्याणी—प्रस्तुतस्येति। प्रस्तुतस्य—प्रस्तुतः=दमयन्त्या मद्विषयकः मम च दमयन्तीविषयकोऽनुरागः तस्य, विरोधेन=प्रातिकूल्येन [लोकपालानां पुण्यस्यापि दौत्यकार्यस्य] सर्वोऽपि=समस्तोऽपि, उपक्रमः=प्रयत्नः, ग्राम्यः=अशोभनः। वीणायां=विपञ्च्यां, वाद्यमानायां, [पुण्योऽपि] वेदोद्गारः=वेदध्वनिः, न रोचते==रुचिकरो न प्रतीयते। अत्र सादृश्याभिव्यञ्जके वाक्यद्वये ग्राम्यत्वमरुचिकरत्वं चैक एव धर्मः पौनरुक्त्यनिरासाय भिन्नवाचकतया निर्दिष्टस्तत्प्रतिवस्तूपमालङ्कारः। अनुष्टुब्वृत्तम् ॥४६॥

ज्योत्स्ना—अधिक क्या कहा जाय; (दमयन्ती का मेरे प्रति और मेरा दमयन्ती के प्रति अनुरागरूप) प्रस्तुत प्रसंग के विरोध से यह समस्त उपक्रम ही ग्राम्य अर्थात् फूहड़ लगता है, (क्योंकि) वीणा के बजते रहने पर (पवित्र होने पर भी) वेदध्वनि अच्छी नहीं लगती ॥४६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्किमिदानीमिदमुच्यते । लोलाक्षि ! लोकपालास्त्वामस्मन्मुखेन वृण्वन्ति इति प्रस्तुतानुरागभङ्गः, तदादेशोऽपह्नूयते स्वामिन्यन्यथा कथ्यते श्रेयःस्खलनम्, यथावृत्तमेवाख्यायते स्वार्थहानिः, तद्वरमस्तु स्वार्थविघातो न तु विश्वस्तदेवतावञ्चनापातकम्' इति चिन्तयन्नशेषमपि तस्यै पुरन्दरादेशं सप्रपञ्चमाचचक्षे ॥

कल्याणी—तदिति । तत्=तस्मात्, किमिदानीं=सम्प्रति, इदम्=एतत्, उच्यते=कथ्यते, लोलाक्षि!=चञ्चलनयने !, लोकपालाः=इन्द्रादयः, त्वां=दमयन्तीम्, अस्मन्मुखेन—अस्माकं मुखेन, वचनेनेति भावः । वृण्वन्ति=विवाहार्थं याचन्ते, इति=अनेन वचनेन, प्रस्तुतानुरागभङ्गः—प्रस्तुतस्य=उपस्थितस्य, अनुरागस्य=रागस्य, भङ्गः=विच्छेदः [भविष्यति] । तदादेशः—तेषां=लोकपालानाम्, आदेशः=निदेशः, [यदि] अपह्नूयते= न प्रकटीक्रियते, [यद्वा] स्वामिनि=इन्द्रादिविषये, अन्यथा=केनाप्यन्यप्रकारेण, [किमपि] कथ्यते=निवेद्यते, [तत्] श्रेयःस्खलनं=कल्याणमार्गात् परिभ्रंशनं [भविष्यति], यथावृत्तं=वास्तविकतथ्यं, [यदि] आख्यायते=उच्यते, [तत्] स्वार्थहानिः=निजलाभविघातः [भविष्यति] । तदस्मिन् स्थानके अस्तु=भवतु, स्वार्थविघातः=स्वार्थहानिः, इत्येव वरं=प्रशस्यम्, न तु विश्वस्तदेवतावञ्चनापातकं—विश्वस्तानां देवतानां वञ्चनात्मकं=छलनात्मकं, पातकम्=अघम्, इति=अनेन प्रकारेण, चिन्तयन्=विचारयन्, अशेषमपि=सकलमपि, पुरन्दरादेशं—पुरन्दरस्य=इन्द्रस्य, आदेशं=आज्ञा, तस्यै=दमयन्त्यै, सप्रपञ्चं=सविस्तारम्, आचचक्षे=उक्तवान् ॥

ज्योत्स्ना—इसलिए इस समय क्या यह कहूँ कि "हे चञ्चलनयने ! (इन्द्रादि लोकपाल मेरे मुख से तुम्हारा वरण कर रहे हैं अर्थात् विवाह के लिए तुम्हारी याचना कर रहे हैं ।" तो इससे (ऐसा कहने से) प्रस्तुत अनुराग का भंग होना होगा । उन (लोकपालों) के आदेश को यदि छिपाता हूँ अथवा इन्द्र आदि के विषय में किसी अन्य प्रकार से कुछ कहता हूँ तो श्रेयःमार्ग से पतित होना होगा । यदि वास्तविक तथ्य को ही कहता हूँ अर्थात् मैं इन्द्रादि लोकपालों का दूत बन कर तुम्हें यह बताने आया हूँ कि वे तुम्हारा वरण करना चाहते हैं ।" यह कहता हूँ तो (अपने ही) स्वार्थ की हानि होगी । अतः ऐसी स्थिति में (अपना) स्वार्थ विनष्ट हो जाय—यही अच्छा है, लेकिन (अपने ऊपर) विश्वास किये हुए देवताओं को धोखा देने का पाप करना अच्छा नहीं है ।" इस प्रकार विचार करता हुआ इन्द्र के समस्त आदेश को विस्तार के साथ दमयन्ती से कह सुनाया ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साऽपि स्तोकस्मितस्निग्धनम्रमुखी 'हं हे प्रियंवदिके ! प्रियास्मज्जीवितयाम्बया तातेन च मध्याह्ने समाहूय किमुक्ताऽसि किं शिक्षिताऽसि — न नाम बालेयम्, अविनीतेयम्, आग्रहग्रहग्रस्तेयम्,' इति केनापि कर्णेजपेन तातस्य हृदयाद् दूरीकृताहम् । वन्द्याः खलु गुरवो देवाश्च बिभेमि तेभ्योऽहम्' इति प्रियंवदिकाख्यया सख्या सार्धमन्यालापमकरोत् ॥

कल्याणी—साऽपीति । सा=दमयन्त्यपि, स्तोकस्मितस्निग्धनम्रमुखी—स्तोकं=मनाक्, स्मितं=मन्दहासयुक्तं, स्निग्धं=स्नेहपूर्णं, नम्रम्=अवनतं च, मुखं=वदनं यस्यास्तथाभूता। हं हे इत्यामन्त्रणे । प्रियंवदिके !=अपि प्रियंवदिके !, प्रियास्मज्जीवितया—प्रियम् अस्मज्जीवितं यस्यास्तया, अम्बया=मात्रा, तातेन=पित्रा च, मध्याह्ने=मध्याह्नकाले, समाहूय=आमन्त्र्य, किमुक्ताऽसि=किं शिक्षिताऽसि, न नामेति वितर्के। इयम्=एषा, बाला=कन्या, अविनीता=अशिष्टेयम्, आग्रहग्रहग्रस्ता—आग्रह एव ग्रहः=हठः, तेन ग्रस्तेयम्, इति=एवं, केनापि कर्णेजपेन=पिशुनेन, तातस्य=पितुः, हृदयात्=चेतसः, दूरीकृता=पृथक्कृता, अहम्=दमयन्ती । गुरवः=गुरुजनाः, देवाश्च=सुराश्च, खलु=निश्चयेन, वन्द्याः=वन्दनीयाः पूज्याश्च भवन्ति, तेभ्यः=गुरुभ्यः देवेभ्यश्च, अहं=दमयन्ती, बिभेमि=भयं करोमि, इति=एवं, प्रियंवदिकाख्यया—प्रियंवदिका आख्या=संज्ञा यस्यास्तया, सख्या=सहचर्या, सार्धं=सह, अन्यालापं=प्रस्तुतासम्बद्धं संभाषम्; अकरोत्=चकार । एतेनान्यालापव्याजेन दमयन्ती लोकपालान् प्रत्यवज्ञां नलं प्रत्यनुरागग्रहं च प्रतिपादितवती ॥

ज्योत्स्ना—वह दमयन्ती भी थोड़ी मुस्कुराती हुई स्नेह से परिपूर्ण अवनत मुख होकर "ऐ प्रियंवदिके ! मेरा जीवन जिन्हें प्रिय है, उन (मेरी) माता एवं पिताजी ने दोपहर को तुम्हें बुलाकर क्या कहा और क्या शिक्षा दी ? "यह (अब) लड़की नहीं रही । यह अशिष्टा अर्थात् उद्दण्ड एवं आग्रहरूपी ग्रह से ग्रस्त हो गई है अर्थात् अत्यन्त जिद्दी हो गई है ।" इस प्रकार (अपने ही) किसी निन्दक द्वारा अपने पिता के हृदय से मैं दूर कर दी गई हूँ । निश्चय ही गुरुजन तथा देवगण वन्दनीय हैं, उन दोनों से ही मैं डरती हूँ ।" इस प्रकार प्रियंवदिका नामक सखी के साथ (प्रस्तुत प्रसंग को छोड़कर) दूसरी ही बातें करने लगी ॥

नलोऽपि 'मदिराक्षि ! मदयति मदिरा, तरलयति तारुण्यम्, अन्धयति धनम्, उत्पथयति मन्मथः, विरूपयति रूपाभिमानः, खर्वयति गर्वः । सर्वजनप्रसिद्धमेतत् । किन्तु त्वमिदं सत्यतां मानैषीः । व्यभिचरतु तवाङ्गे सर्वमेतत् । नहि शशिनि वह्निः, अमृते च विषाङ्कुरः सम्भवति । तदिमं देवादेशं मावज्ञासीः । सर्वथा प्रभवन्ति प्राणिनामभी लोकपालाः । तत्रापि विशेषतः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकलत्रिदशाधिपतिरशेषसुरकिरीटमणिमयूखमालार्चितचरणारविन्दपुरन्दरो देवः। तद् वृणु कमप्यमीषाममृतभुजां मध्ये। मानय स्वर्गसुखानि। अभूमिरसि मर्त्यलोकस्तोकसुखानाम्' इति पुनस्तामभ्यधात् ॥

कल्याणी—नलोऽपीति। नलोऽपि=निषधेश्वरोऽपि, "मदिराक्षि—मदिरे=मादके, अक्षिणी=नेत्रे यस्या स्तत्सम्बुद्धौ हे मदिराक्षि !, मदिरा=सुरा, मदयति=उन्मत्तं करोति, तारुण्यं=यौवनं, तरलयति=चञ्चलं करोति, धनं=वैभवम्, अन्धयति—अन्धं=कर्त्तव्याकर्तव्यविवेकशून्यं करोति; मन्मथः=कामदेवः, उत्पथयति=पथभ्रष्टं करोति, रूपाभिमानः—रूपस्य=सौन्दर्यस्य, अभिमानः=गर्वः, विरूपयति=स्वभावं चरित्रं च विकृतं करोति, गर्वः=अहङ्कारः, खर्वयति=लघुतां गमयति, एतत्=इदं सर्वं, सर्वजनप्रसिद्धं—सर्वजने प्रसिद्धम्; जानन्ति सर्वेऽपीदमिति भावः। किन्तु त्वमिदं सत्यतां=सत्यभावं, मा नैषीः, तथा चर यथा सर्वजनप्रसिद्धमिदं मतमसत्यं स्यादिति भावः। तवाङ्गे=तव शरीरे, सर्वमेतत् व्यभिचरतु=घटितं मा भवतु, अपवादभावं व्रजत्विति भावः। न हि शशिनि=चन्द्रमसि, वह्निः=अनलः, अमृते च=सुधायाञ्च, विषाङ्कुरः=गरलकन्दलः, सम्भवति=समुत्पद्यते। तत्=तस्मात्, इमम्=एतत्, देवादेशं—देवानाम्=इन्द्रादीनाम्, आदेशम्=आज्ञां, माऽवज्ञासीः=मातिक्रमीः। अमी=एते, लोकपालाः=इन्द्रादिदेवाः, सर्वथा=सर्वप्रकारेण, प्राणिनां=जीवानां, प्रभवन्ति=स्वामिनो भवन्ति। तत्रापि=तेष्वपि, विशेषतः=वैशिष्ट्येन, सकलत्रिदशाधिपतिः=अखिलदेवाधीशः, अशेषसुरकिरीटमणिमयूखमालार्चितचरणारविन्दपुरन्दरः—अशेषसुराणां=सकलदेवानां, किरीटमणिमयूखमालाभिः=मुकुटमणिकिरणजालैः, अर्चिते=पूजिते, चरणारविन्दे=पादपद्मे, यस्य तादृशः पुरन्दरः=इन्द्रः, देवः=देवता। तत्=तस्मात्, अमीषाम्=एतेषाम्, अमृतभुजां=देवानां, मध्ये कमपि वृणु=स्वीकुरुष्व। स्वर्गसुखानि—स्वर्गस्य=स्वर्लोकस्य, सुखानि=आनन्दानि, मानय=आद्रियस्व। मर्त्यलोकस्तोकसुखानां—मर्त्यलोकस्य=भूलोकस्य, स्तोकसुखानां=स्वल्पसुखानाम्, अभूमिः=अपात्रमसि, इति=एवं, पुनः=भूयः, तां=दमयन्तीम्, अभ्यधात्=प्रबोधयामास ॥

ज्योत्स्ना—नल भी "हे मदिराक्षि ! (मादक नयनों वाली !) मदिरा उन्मत्त कर देती है, यौवन चञ्चल बना देता है, धन अन्धा बना देता है अर्थात् उचित-अनुचित के विवेक से शून्य कर देता है, काम पथभ्रष्ट कर देता है, सौन्दर्य का अहंकार विरूप अर्थात् स्वभाव एवं चरित्र को विकृत कर देता है तथा अहंकार छोटा बना देता है। यह सब लोगों में प्रसिद्ध है, किन्तु तुम इसे सत्य मत होने दो। अर्थात् ऐसा आचरण करो जिससे सर्वजनप्रसिद्ध उपयुक्त बातें भी असत्य सिद्ध हो जायें। तुम्हारे अंगों में ये सब घटित न हों अर्थात् तुम अपवादस्वरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो जाओ। चन्द्रमा में आग नहीं होती और अमृत में विष के अंकुर की सम्भावना भी नहीं की जाती। इसलिए देवताओं के इस आदेश का अतिक्रमण मत करो। ये लोकपालगण सब प्रकार से प्राणियों के स्वामी होते हैं। उनमें भी विशेषकर समस्त देवताओं के स्वामी देवराज इन्द्र, जिनके चरणकमल समस्त देवताओं के मुकुटमणियों की किरणजालों से पूजित हैं। इसलिए इन अमृतभोजी देवताओं में से ही किसी एक को स्वीकार लो। स्वर्ग-सुखों आदर करो। मर्त्यलोक के थोड़े अर्थात् सीमित सुखों की तुम पात्र नहीं हो।" इस प्रकार पुनः उससे कहा अर्थात् समझाया ॥

एवंविधे च व्यतिकरे दमयन्त्या पुनरुक्तमिमं जल्पमरण्यकरिण्ये-वारुन्तुदमङ्कुशमसहमानया मनाक्तरलिते शिरसि, स्तोकीकृते मनसि, मुक्ते निःसहनिश्वासमरुति, परावर्त्तिते चक्षुषि, विवर्णतामानीते वदनारविन्दे; प्रस्तावपण्डिता प्रियंवदिका प्राह ॥

कल्याणी—एवंविध इति। एवंविधे च व्यतिकरे=एवंविधे च घटिते सतीत्यर्थः, अरुन्तुदम्=अत्यन्तपीडाकरम्, अङ्कुशं=तोत्रम्, अरण्यकरिण्येव=वनहस्तिन्येव, इमम्=एतं, [नलस्य] पुनरुक्तं=भूयोभूयः कथितं, जल्पं=वार्तालापम्, असहमानया=सोढुमशक्यया, दमयन्त्या=भीमपुत्र्या, मनाक्=ईषत्, शिरसि=मस्तके, तरलिते=कम्पिते, मनसि=चित्ते, स्तोकीकृते=लघूकृते, अवसन्नीकृत इति भावः। निःसहनिश्वासमरुति=असह्यनिश्वासपवने, मुक्ते=त्यक्ते, चक्षुषि=नेत्रे, परावर्तिते, वदनारविन्दे=मुखकमले, विवर्णतां=मलिनताम्; आनीते=प्रापिते सति, प्रस्तावपण्डिता=विचारनिपुणा, प्रियंवदिका=तदभिधाना दमयन्ती-चेटी, प्राह=उवाच ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार के प्रसंग में अत्यन्त पीड़ादायक अंकुश को न सहन करने वाली जंगली हथिनी के समान नल द्वारा पुनः कही गई इस बात को सहन न करती हुई दमयन्ती द्वारा शिर को थोड़ा कँपाने पर, मन को छोटा कर लेने पर, असह्य निःश्वास वायु को छोड़ने पर, आँखों को घुमा लेने पर और मुखकमल पर मलिनता ला लेने पर विचारचतुरा प्रियंवदिका ने कहा—

'देव! श्रुतं श्रोतव्यम्, अवधारितो देवादेशः। किं तु न स्वतन्त्रेयम्, ईश्वरेच्छया प्रवृत्तिनिवृत्तयो यतः प्राणिनाम्, अनालोचनगोचरश्चायमनुरागोऽङ्गनाजनस्य ॥

कल्याणी—देवेति। देव!=स्वामिन्!, श्रुतम्=आकर्णितं, श्रोतव्यम्=आकर्णनीयम्, अवधारितः=अवगतः, देवादेशः—देवानाम्=इन्द्रादीनाम्, आदेशः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

=आज्ञा। किन्तु=परन्तु, न स्वतन्त्रा=स्वाधीना, इयं=दमयन्ती, यतः=यस्मात्, ईश्वरेच्छया=ईश्वरकर्तृकया, प्राणिनां=जीवानां, प्रवृत्तिनिवृत्तयः=आसक्तिविरक्तयः भवन्ति, अङ्गनाजनस्य=नारीजनस्य, अयम्=एषः, अनुरागः=प्रेम, अनालोचन-गोचरः=न हि आलोचनाविषयः, अचिन्त्योऽयमिति भावः ॥

ज्योत्स्ना—स्वामिन् ! सुन लिया, जो सुनने योग्य था। देवताओं के आदेश को जान लिया, लेकिन यह (दमयन्ती) स्वाधीन नहीं है; क्योंकि ईश्वर की इच्छा से ही (किसी विषय में) प्राणियों की प्रवृत्ति एवं निवृत्ति होती है। कामिनीजनों का यह प्रेम आलोचना का विषय नहीं होता अर्थात् अचिन्त्य होता है ॥

तथाहि—

तीव्रतपनतापप्रियाम्भोजिनी न सहते स्तोकमप्यमृतमुचो रुचश्चन्द्रस्य,
परिम्लायति मालतीमालिका सलिलसेकेन ॥

कल्याणी—तथाहीति। तीव्रतपनतापप्रिया—तीव्रः=तीक्ष्णः, यः तपनस्य=सूर्यस्य, तापः, तत्प्रिया, अम्भोजिनी=कमलिनी, चन्द्रस्य=शशिनः, अमृतमुचः=अमृत-वर्षिणीः, रुचः=कान्तीः, किरणानिति यावत्। स्तोकमपि=स्वल्पमपि, न सहते=सहनं न करोति, मालतीमालिका=मालतीस्रक्, सलिलसेकेन=जलसिञ्चनेन, परिम्लायति=परिम्लाना भवति ॥

ज्योत्स्ना—क्योंकि; तीक्ष्ण सूर्य के ताप की प्रिया कमलिनी चन्द्रमा की अमृतवर्षा करने वाली किरणों को थोड़ा भी सहन नहीं करती और मालतीपुष्पों की माला जल द्वारा सींचे जाने से भी मलिन पड़ जाती है ॥

प्रसिद्धं चैतत्—

भवति हृदयहारी क्वापि कस्यापि कश्चि-
न्न खलु गुणविशेषः प्रेमबन्धप्रयोगे।
किसलयति वनान्ते कोकिलालापरम्ये
विकसति न वसन्ते मालती कोऽत्र हेतुः ॥४७॥

अन्वयः—प्रेमबन्धप्रयोगे कस्यापि गुणविशेषः न खलु क्वापि हृदयहारी भवति। वसन्ते कोकिलालापरम्ये वनान्ते किसलयति मालती न विकसति, अत्र कः हेतुः ? ॥४७॥

कल्याणी—भवतीति। प्रेमबन्धप्रयोगे—प्रेमबन्धः=प्रीतिसम्बन्धः, तस्य प्रयोगे=आरम्भे, कस्यापि कोऽपि गुणविशेषो न खलु क्वापि=कुत्रापि, हृदयहारी=चित्ताकर्षको भवति। न कोऽपि कमपि प्रति केनापि तद्गुणविशेषेणाकृष्यमाणः प्रीतिं बध्नातीति भावः। वसन्ते=वसन्तकाले, कोकिलानां=पिकानाम्, आलापैः=ध्वनिभिः,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रम्ये=मनोज्ञे, वनान्ते=विपिनप्रान्ते, किसलयति=नवपल्लवोपेते सति, मालती=लताविशेषः, न विकसति। अत्र=अस्मिन् विषये, को हेतुः, न कोऽपि बाह्यहेतुरित्यर्थः। रमणीयोऽपि वसन्तो मालत्यै न रोचते, तथैव सर्वथा वैभवशालिनोऽपि लोकपाला अस्मत्सख्यै मनागपि न रोचन्ते। यतः प्रेमबन्धो न खलु गुणविशेषलक्षणं बाह्यहेतुं संश्रयत इति भावः। महानुभूतिना भवभूतिनाऽप्युत्तररामचरिते प्रतिपादितम्—

'व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुर्न खलु बहिरुपाधीन् प्रीतयः संश्रयन्ते।
विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं, द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः॥'

इति। दृष्टान्तालङ्कारः। मालिनी वृत्तम् ॥४७॥

ज्योत्स्ना—और यह प्रसिद्ध भी है कि—प्रेमसम्बन्ध के आरम्भ होने में (किसी का) कोई विशेष गुण कभी भी चित्ताकर्षक नहीं होता। वसन्त ऋतु में कोकिलों की ध्वनियों से रमणीय वनप्रदेश के किसलयों (नूतन पल्लवों) से युक्त हो जाने पर भी मालती विकसित नहीं होती, इसमें क्या कारण है?

विमर्श—आशय यह है कि जिस प्रकार रमणीय होते हुए भी वसन्त ऋतु मालती को अच्छी नहीं लगती उसी प्रकार ऐश्वर्यसम्पन्न होते हुए भी ये इन्द्र आदि लोकपाल हमारी सखी को थोड़े भी अच्छे नहीं लगते; क्योंकि प्रेमसम्बन्ध गुणविशेषरूप बाह्य हेतु के सहारे नहीं बनता ॥४७॥

एवमनेकविधोपाख्याननिपुणया तत्कालोचितम्, अनुच्चस्मितसुधास्निग्धम्, अविरुद्धम्, परिमितपरिहाससुन्दरम्, अनुबृंहितानुरागम्, उचितचाटुचटुलम्, अशाठ्यम्, अकठोरम्, अनुज्झितप्रियम्, प्रियंवदिकया सहाल्पाल्पं जल्पन् 'अयुक्तमिह कन्यान्तःपुरे चिरं स्थातुम्' इति चिन्तयन्नापृच्छ्य दमयन्तीं नलः पर्यङ्किकापृष्ठादुदतिष्ठत् ॥

कल्याणी—एवमिति। एवम्=इत्थम्, अनेकविधोपाख्याननिपुणया=विविधदृष्टान्तप्रचुरप्रवचनकुशलया, प्रियंवदिकया=तन्नामदमयन्तीसख्या, सह=साकं, तत्कालोचितं=तत्समयानुकूलम्, अनुच्चस्मितसुधास्निग्धम्—अनुच्चस्मितं=मन्दहासः, स एव सुधा=अमृतं, तेन स्निग्धं=कोमलम्, अविरुद्धं=सङ्गतम्, परिमितपरिहाससुन्दरं—परिमितपरिहासेन=मर्यादितविनोदेन, सुन्दरं=मनोहरम्, अनुबृंहितानुरागम्—अनुबृंहितः=उज्जृम्भितः, अनुरागः=प्रेम येन तद्यथा स्यात्तथा, उचितचाटुचटुलम्—उचितचाटुभिः=उपयुक्तचाटुवचनैः, चटुलं=सुन्दरम्, अशाठ्यं=शठताशून्यम्, अकठोरं=कठोरताविरहितम्, अनुज्झितप्रियं—नोज्झितः=त्यक्तः प्रियः यस्मिंस्तद्यथा तथा, अल्पाल्पं=स्वल्पं, जल्पन्=आलपन्, 'इह=अस्मिन्, कन्यान्तःपुरे=कन्याजननिवासस्थाने, चिरं=बहुकालं, स्थातुम्=अवस्थातुम्,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अयुक्तम्=अनुचितम्, इति=एवं, चिन्तयन्=विचारयन्, दमयन्तीमापृच्छ्य=तदनुज्ञां गृहीत्वेत्यर्थः। नलः=निषधाधिपः, पर्यङ्किकापृष्ठात्=पर्यङ्किकातलात्, उदतिष्ठत्=उदस्थात् ॥

ज्योत्स्ना—इस प्रकार नानाविध दृष्टान्तबहुल प्रवचन में निपुण प्रियंवदिका के साथ उस समय के अनुकूल, मन्द हासरूपी सुधा से स्निग्ध, संगीत, सीमित परिहास के कारण मनोहर, प्रेम को बढ़ाने वाली, उपयुक्त चाटुकारिता के कारण सुन्दर, शठतारहित, कठोरता से विहीन, प्रियता का त्याग न करने वाली थोड़ी-थोड़ी बातें करता हुआ "कन्याओं के इस अन्तःपुर में अधिक समय तक ठहरना उचित नहीं है।" इस प्रकार विचार करता हुआ दमयन्ती से पूछ कर अर्थात् आज्ञा लेकर नल पर्यङ्किका अर्थात् आसन के ऊपर से (जाने के लिए) उठ खड़ा हुआ ॥

प्रथमोत्थितया च तया लज्जावनम्रवदनारविन्दया सह सखीकदम्बकेन द्वित्राणि पदान्यनुगम्यमानो विहसन् 'अलमलमायासेन, स्थीयतां सुखम्' इत्यभिधाय स्वगृहानयासीत् ॥

कल्याणी—प्रथमेति। प्रथमोत्थितया च=नलं विसृष्टुं प्रथममुत्थितया, लज्जयावनम्रवदनारविन्दया—लज्जया=त्रपया, अवनम्रम्=अवनतं, वदनारविन्दं==मुखकमलं यस्यास्तया, तया=दमयन्त्या, सह=साकं, सखीकदम्बकेन=सखीवृन्देन, द्वित्राणि=कतिपयानि, पदानि अनुगम्यमानः=अनुस्रियमाणः, विहसन्=हसन्, 'अलमलमायासेन=आयासो न कार्यः, सुखं=सुखपूर्वं, स्थीयताम्=स्थिरा भवतु,' इति=एवम्, अभिधाय=उक्त्वा, [नलः] स्वगृहान्=स्वशिबिरम्, अयासीत्=अगमत् ॥

ज्योत्स्ना—(नल को विदा करने के लिए) पहले उठी हुई (लेकिन) लज्जा के कारण अवनत मुखकमल वाली उस दमयन्ती के साथ-साथ उसकी सखियों के द्वारा भी दो-तीन कदम अनुगमन किया जाता हुआ (नल) हँसता हुआ "बस-बस; कष्ट न करें, सुखपूर्वक बैठिये।" इस प्रकार कहकर अपने शिविर की ओर चला गया ॥

गत्वा च शिरीषकुसुमदाममृदुनि शय्यातले निषण्णश्चिन्तयाञ्चकार।

कल्याणी—गत्वेति। गत्वा च=प्रस्थाय च, शिरीषकुसुमदाममृदुनि—शिरीषकुसुमदामवत्=शिरीषपुष्पमालावत्, मृदुनि=कोमले, शय्यातले=पर्यङ्किकायां, निषण्णः=उपविष्टः, चिन्तयाञ्चकार=चिन्तयामास ॥

ज्योत्स्ना—और जाकर शिरीषपुष्प की माला के समान कोमल शय्यातल पर बैठकर सोचने लगा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हर्षादुत्पुलकं विकासि रभसादुत्तानितं कौतुका-
च्छृङ्गारादलसं, भयात्तरलदृङ् नम्रं च लज्जाभरात् ।
तस्यास्तन्नवसङ्गमे मृगदृशो दृश्येत भूयोऽपि किं
किञ्चित्काञ्चनगौरगण्डगलितस्वेदाम्बुरम्यं मुखम् ॥४८॥

अन्वयः—तस्याः मृगदृशः तत् नवसङ्गमे हर्षात् उत्पुलकं, रभसात् विकासि, कौतुकात् उत्तानितं, शृङ्गारात् अलसं, भयात् तरलदृक्, लज्जाभरात् नम्रं च किञ्चित् काञ्चनगौरगण्डगलितस्वेदाम्बुरम्यं मुखं किं भूयोऽपि दृश्येत ? ॥४८॥

कल्याणी—हर्षादिति । तस्याः=पूर्ववर्णितायाः, मृगदृशः=मृगाक्ष्याः, तत्=तस्मिन्, नवसंगमे=प्रथममिलनावसरे, हर्षात्=आनन्दातिरेकात्, उत्पुलकम्—उत्=उद्गतः, पुलकः=रोमाञ्चः यस्मिंस्तत्तथाविधम्, रभसात्=वेगात्, विकासि=विकसितम्, कौतूकात्=औत्कण्ठ्यात्, उत्तानितम्=उत्थितम्, शृङ्गारात्=शृङ्गारभावात्, अलसं=निष्क्रियम्, भयात्=भीतेः, तरलदृक्=चञ्चलनेत्रम्, लज्जाभरात्=व्रीडाभारात्, नम्रं=अवनतं च, किञ्चित्=स्वल्पं, काञ्चनगौरगण्डगलितस्वेदाम्बुरम्यं—काञ्चनगौराभ्यां=सुवर्णवद्गौरवर्णाभ्यां, गण्डाभ्यां=कपोलाभ्यां, गलितेन=प्रवहता, स्वेदाम्बुना=स्वेदजलेन, रम्यं=मनोहरं, मुखं=वदनं, किं भूयोऽपि=पुनरपि, दृश्येत=दृष्टिगोचरं भवेत् ? शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥४८॥

ज्योत्स्ना—उस मृगनयनी (दमयन्ती) का प्रथम मिलन के समय हर्ष से रोमाञ्चित, शीघ्रता से विकसित, उत्कण्ठा से उत्थित अर्थात् उठा हुआ, शृङ्गारभाव के कारण आलस्ययुक्त अर्थात् निष्क्रिय, भय के कारण चञ्चल नयनों वाला एवं लज्जा के भार से झुका हुआ, कुछ-कुछ सुवर्ण के समान गौर वर्ण वाले कपोलों से निकल रहे पसीने की बूंदों के कारण रमणीय मुख क्या पुनः दिखलाई पड़ेगा ? ॥४८॥

अपि च—

अपसरति न चक्षुषो मृगाक्षी रजनिरियं च न याति नैति निद्रा ।
प्रहरति मदनोऽपि दुःखितानां बत बहुशोऽभिमुखीभवन्त्यपायाः ॥४९॥

अन्वयः—मृगाक्षी चक्षुषः न अपसरति, इयं रजनिः च न याति, न निद्रा एति । मदनः अपि प्रहरति । बत, दुःखितानां बहुशः अपायाः अभिमुखीभवन्ति ॥४९॥

कल्याणी—अपसरतीति । मृगाक्षी=हरिणनयना दमयन्ती, चक्षुषः=नेत्रात्, नापसरति= दूरं न गच्छति । तस्या आकृतिः सततं नेत्रस्य पुरतो वर्तते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षणमपि न विस्मर्यत इति भावः। इयम्=एषा, रजनिश्च=निशापि, न याति=नावसानं गच्छति, न निद्रैति=निद्रापि नागच्छति, सुखं निद्रातुमपि न पारयामीति भावः। मदनः=कामोऽपि, प्रहरति=प्रहारं करोति। बतेति खेदे। दुःखितानां=आर्त्तानां, बहुशः=बाहुल्येन, अपायाः=विपत्तयः, अभिमुखीभवन्ति=अभिक्रामन्ति। अत्र प्रथमपादत्रयगतविशेषार्थस्य चतुर्थपादगतसामान्यार्थेन समर्थनादर्थान्तरन्यासः। पुष्पिताग्रा वृत्तम् ॥४९॥

ज्योत्स्ना—और भी—(वह) मृगनयनी नजरों से दूर नहीं हो रही और यह रात भी समाप्त नहीं हो रही है। निद्रा भी नहीं आ रही है और काम भी प्रहार कर रहा है। बहुत कष्ट है (क्योंकि) दुःखितों के सामने बहुत सारी विपत्तियाँ आ ही जाती हैं ॥४९॥

इति विविध-वितर्कावेश-विध्वस्तनिद्रः
सजलजडिम—मीलत्पक्ष्म—चक्षुर्दधानः।
हरचरण—सरोज—द्वन्द्वमाधाय चित्ते
नृपतिरपि विदग्धः स त्रियामामनैषीत् ॥५०॥

इति श्रीत्रिविक्रमभट्टविरचितायां दमयन्तीकथायां हरचरण-सरोजाङ्कायां सप्तम उच्छ्वासः समाप्तः ॥

अन्वयः—इति विविधवितर्कावेशविध्वस्तनिद्रः सजलजडिममीलत्पक्ष्म-चक्षुः दधानः सः विदग्धः नृपतिः चित्ते हरचरणसरोजद्वन्द्वम् आधाय त्रियामाम् अनैषीत् ॥५०॥

कल्याणी—इतीति। इति=एवं, विविधवितर्कावेशविध्वस्तनिद्रः—विविधवितर्काणां=नानाविधतर्कवितर्काणाम्, आवेशेन=प्रवेशेन, विध्वस्ता=विनष्टा, निद्रा यस्य स तथोक्तः, सजलजडिममीलत्पक्ष्मचक्षुः—जलेन=अश्रुणा च, जडिम्ना=जडभावेन च सह वर्तत इति सजलजडिमः, तथा मीलत्=मुद्रितं, पक्ष्म यस्य तत्तथाविधं, चक्षुः=नेत्रं, दधानः=धारयन्, सः=असौ, विदग्धः=सहृदयः, नृपतिः=नलः, चित्ते=मनसि, हरचरणसरोजद्वन्द्वं=शिवपादपद्मयुगलम्, आधाय=स्थिरीकृत्य, त्रियामां=रात्रिम्, अनैषीत्=अत्यवाहयत्। मालिनी वृत्तम् ॥५०॥

इति रामनाथत्रिपाठिकृतायां कल्याण्याख्यायां दमयन्तीकथाव्याख्यायां सप्तम उच्छ्वासः समाप्तः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्योत्स्ना—इस प्रकार नानाविध तर्क-वितर्कों के (मन में) प्रवेश कर जाने से समाप्त निद्रा वाले, अश्रु से परिपूर्ण, जड़वत एवं बन्द पलकों वाली आँखों को धारण करते हुए उस सहृदय राजा नल ने मन में भगवान् शंकर के चरणकमलों को स्थिर कर रात्रि को व्यतीत किया।

विमर्श—विदर्भराज की कन्याओं के अन्तःपुर से दमयन्ती से मिलकर लौटने के बाद राजा नल का मन उसमें पूर्णतया अनुरक्त हो गया, जिससे वह उसी के विषय में सोचता रहा, फलतः उसकी निद्रा समाप्त हो गई। तात्कालिक वियोग के कारण आँखें सजल हो गईं और रात्रि भी कष्टकर प्रतीत होने लगी। ऐसी स्थिति में मन को शान्ति प्रदान करने के लिए उसने अपने मन को भगवान् शिव के चरण-कमलों में लगा दिया और उनका ध्यान करते हुए ही किसी-किसी प्रकार रात को बिता दिया ॥५०॥

इस प्रकार श्रीत्रिविक्रमभट्टकृत दमयन्तीकथात्मक नलचम्पू काव्य
की श्रीनिवास शर्माकृत सविमर्श 'ज्योत्स्ना' हिन्दी
व्याख्या में सप्तम उच्छ्वास पूर्ण हुआ ॥

॥ समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिशिष्टम्

नलचम्पू काव्य में प्रयुक्त छन्द : उनके लक्षण तथा श्लोकसंख्यायें

प्रथम उच्छ्वास

१. मालिनि—ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, नगण, मगण तथा दो यगण हों उसे मालिनी छन्द कहते हैं।

प्रयुक्त श्लोकसंख्यायें—१,२,३२, ५०, ५१ और ६४ ॥

२. अनुष्टुप्—श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः ॥

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में पञ्चम वर्ण लघु एवं षष्ठ वर्ण हो तथा प्रथम एवं तृतीय चरण में सप्तम वर्ण गुरु एवं द्वितीय और चतुर्थ में लघु हो वह श्लोक अनुष्टुप् छन्द में निबद्ध होता है।

प्रयुक्त श्लोकसंख्यायें—३—१४,१६—१८, २०—२८,३१, ३३, ३६, ४२ और ५९ ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—सूर्याश्वैर्मसजास्ततः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्।

अर्थात् जिस श्लोक के चारो चरणों में क्रमशः मगण; सगण, जगण, सगण; तगण, तगण और गुरु वर्ण हो वह शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है।

प्रयुक्त श्लोकसंख्यायें—१५,३४,३५,४०,४१,४४,४५-४८,५२-५६, ५८,६०—६३ ॥

४. मन्दाक्रान्ता—मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मोभनौ गौ ययुग्मम्।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, भगण, भगण; गुरु, गुरु, यगण और पुनः यगण हो तो वह मन्दाक्रान्ता छन्द होता है।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—१९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५. आर्या—यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि ।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या ।।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रथम तथा तृतीय चरण में द्वादश (१२) मात्रायें एवं द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में पञ्चदश (१५) मात्रायें हों, वह आर्या छन्द के नाम से जाना जाता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—२९, ३० ।।

६. उपजाति—उपेन्द्रवज्रा अथ इन्द्रवज्रा एतद्द्वयं यत्र हि सोपजातिः ।

अर्थात् जिस श्लोक में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के चरण मिश्रित हों, वह उपजाति छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—३७, ३८ ।।

७. शालिनी—मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेद लोकैः ।

जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, तगण, तगण और दो गुरु वर्ण होते हैं वह शालिनी छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—३९ ।।

८. द्रुतविलम्बित—द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, भगण और रगण हो वह द्रुतविलम्बित छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—४३ ।

९. शिखरिणी—रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण और अन्त में एक लघु तथा एक गुरु वर्ण होता है वह शिखरिणी छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—४९ ।!

१०. स्रग्धरा—म्रभ्णैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण हों तो वह स्रग्धरा छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—५७ ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वितीय उच्छ्वास

१. मालिनी—४,६,९,११, १३, ३९ ॥

२. अनुष्टुप्—१-३,७,८,१०,१४,१८,१९,२१-२६,२८,३१-३३ ॥

३. आर्या—१२,१५-१७ ॥

४. उपजाति—५ ॥

५. शार्दूलविक्रीडित—२९,३०,३४-३८ ॥

६. उपेन्द्रवज्रा—उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौः ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण तथा दो गुरु हों, उसे उपेन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—२० ॥

७. इन्द्रवज्रा—स्यदिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो तगण, जगण और दो गुरु हो, वह इन्द्रवज्रा छन्द कहलाता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—२७ ॥

तृतीय उच्छ्वास

१. मालिनी—८,१८,२१,३५ ॥

२. अनुष्टुप्—१,२४,५,९—१७,२०,२३—२८ ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—६,७,३०-३४ ॥

४. आर्या—१९ ॥

५. स्रग्धरा—२२ ॥

६. वसन्ततिलका—उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण और दो गुरु हों तो वह वसन्ततिलका छन्द होता है ।

प्रयुक्क श्लोक—३ ॥

७. पुष्पिताग्रा—अयुजि नयुगरेफतो यकारो
युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् जिस श्लोक के प्रथम एवं तृतीय चरण में क्रमशः दो नगण, रगण और यगण तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में क्रमशः नगण, तीन जगण और एक गुरु वर्ण हो वह पुष्पिताग्रा छन्द होता है।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—२९ ॥

चतुर्थ उच्छ्वास

१. मालिनी—२२,२३ ॥

२. अनुष्टुप्—१,३,६,८,१०—१४,१७,१९,२०,२९,३० ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—७,९,२१,२७,३१ ॥

४. आर्या—५ ॥

५. शिखरिणी—२४-२६ ॥

६. स्रग्धरा—४,१६ ॥

७. इन्द्रवज्रा—१५ ॥

८. वंशस्थ—जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ ॥

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण और रगण हो, वह वंशस्थ छन्द होता है।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—१८,२८ ॥

पञ्चम उच्छ्वास

१. मालिनी—१,८,९,१५,३३,५०-५२,६१,७०,७२,७३,७७ ॥

२. अनुष्टुप्—३,४,१३,१९,२२—२४,२६,२७,२९,३०,४५—४७,५३,६० ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—२,५, १६—१८,२०,२१, २५,३१,३२,३४,३६—३८, ४९,५७—५९,७१,७४,७५ ॥

४. मन्दाक्रान्ता—३९ ॥

५. आर्या—६,७,४३,४४,५५,५६,६६,६७ ॥

६. द्रुतविलम्बित—६३ ॥

७. शिखरिणी—४८ ॥

८. स्रग्धरा—३५,७६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

९. वसन्ततिलका—१०—१२,५४,६४,६५,६८ ॥

१०. पुष्पिताग्रा—२८,४०—४२,५९,६८ ॥

११, स्वागता—स्वागता रभसानगैर्गुरुणा च ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः रगण, भगण, नगण और दो गुरु हों वह स्वागता छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—१४,६२ ॥

षष्ठ उच्छ्वास

१. मालिनी—१,१२,४४,४५,४७,५४—५६,५८,७३,७५—७७,८० ॥

२. अनुष्टुप्—३,१४,२१,४६,४८—५३,५७ ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—२,१६,२२,२३,६१,६२,६९—७२ ॥

४. मन्दाक्रान्ता—२५,६०,६७ ॥

५. आर्या—२९,३१—३५,३७—४३,६३,६५,६६ ॥

६. द्रुतविलम्बित—७४ ॥

७. शिखरिणी—२४ ॥

८. स्रग्धरा—१७,२७,७८, ७९ ॥

९. उपेन्द्रवज्रा—१९,३० ॥

१०. इन्द्रवज्रा—१५,२६ ॥

११. वसन्ततिलका—१३,१८,६४ ॥

१२, पुष्पिताग्रा—२० ॥

१३. उपजाति—२८ ॥

१४. पृथ्वी—जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः ।

अर्थात् जिस श्लोक के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण; सगण, जगण, सगण; यगण और दो लघु मात्रायें हों, वह पृथ्वी छन्द होता है ।

प्रयुक्त श्लोकसंख्या—४—११,३६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्तम उच्छ्वास

१. मालिनी—२७,४२,४७ ॥

२. अनुष्टुप् —१४,२९, ३०.३४,४४,४६ ॥

३. शार्दूलविक्रीडित—१-४,६,८-१३,१५,१६,१८,२४,३१,३६-३९,४१,४३,४५,४८,५० ॥

४. मन्दाक्रान्ता—२८ ॥

५. आर्या—५,७,१९—२१,२३,३५,४९ ॥

६. शिखरिणी—१७,२५,३२ ॥

७. स्रग्धरा—२६ ॥

८. वसन्ततिलका—२२,४० ॥

९. पृथ्वी—३३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्लोकानुक्रमणिका

श्लोकाः	उ. सं.	श्लो. सं.	पृ. सं.
अंसस्रंसिजलार्द्र-	५	३७	४३७
अक्षमालापवृत्तिज्ञा	१	७	८
अखण्डितप्रभावोऽथ	२	३१	१९९
अगाधान्तःपरिस्पन्दम्	१	३	४
अग्रस्थामिव चेतसः	७	१५	६६५
अङ्गाः कङ्गकलिङ्ग-	७	६	६४४
अच्छाच्छैः शुकपि-	१	४६	८४
अजनि जनित-	१	५०	९५
अजनि रजनिः	६	३५	५६३
अतिललिततरं	४	५	२९०
अत्रान्तरे तरणि-	३	३	२१२
अत्रिजातस्य या	१	९	१०
अथ कथमपि नाथं	१	५१	९६
अथ नरपतिदत्ते	३	८	२२८
अथ विमलदुकूल-	३	२१	२५३
अद्य मे सुबहोः	३	१२	२३०
अद्यास्मत्कुलसंततिः	७	१	६३६
अनुगुणघटनेन	७	५	६४३
अनुभवतु चिराय	५	२८	४२२
अनेकधा यः किल-	२	२०	१५५
अन्तः केवल	७	३९	७२१
अपसरति न चक्षुषो	७	४९	७३६
अपसृताम्बुतरङ्गि	६	७४	६२०
अपहस्तितान्तराया-	५	५६	४७६
अप्रगल्भाः पदन्यासे	१	६	७
अयि भवत कृतार्थाः	६	८०	६२७
अपि रेणुकृतक्रीडं	३	२७	२७३
अब्जश्रीसुभगं	१	५३	१००
अभिलषति नाल-	५	७	३८९
अमन्दानन्दनिष्यन्द-	३	२५	२६९
अयं हि प्रथमो रागः	६	४६	५८१
अरुणमणिकिरण-	६	३९	५७१
अलंकृतनिशान्तेन	४	१२	३१०
अवतरति घृताची-	५	५१	४५६
अविरतमिदमम्भः	५	६१	४८९
अवृष्टिनष्टधूलीक-	४	१३	३१२
असमहरिततीरं	५	९	३९३
अस्ति स्वर्गसमः	१	५४	१०३
अस्तु स्वस्ति समस्त-	१	५५	१०६
अहीनां मालिकां	४	२९	३५९
आकर्ण्य स्मरयौव-	१	४०	७५
आकारः स मनोहरः	१	५८	११०
आज्यं प्राज्यमभिन्न-	७	११	६५८
आज्यप्राज्यपरान्न-	७	१२	६६०
आनन्ददायिनस्ते	६	४२	५७२
आनन्दिसुन्दर-	५	१२	३९८
आ पूर्वापर-	७	४	६४१
आबध्नत्परिवेष-	३	३२	२७९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आ ब्रह्मावधि	७	२	६३७
आरुह्यैता: शिखरि-	६	६७	६११
आवासाः कुसुमा-	६	६१	६०५
आविर्भूतविषा-	५	१६	४०६
आसीत्पिण्डित	५	३१	४२९
आसेतो: कपिकी-	७	३	६३९
आस्यश्री: संनिभे-	४	१६	३१९
आहूतोदीच्यभूपेन	५	२४	४१७
आह्लादयन्ति मृदवो	५	६८	४९४
आह्लादयन्ति	२	२४	१६४
इतश्चन्द्रः सान्द्रा-	७	३२	७०४
इति जनितमुदिन्दो:	२	३९	२०५
इति विविधमुदञ्च	६	४७	५८२
इति विविधवितर्का-	७	५०	७३७
इतो मकरकेतन:	७	३३	७०४
इत्थं काव्यकथा	१	१५	१५
इदं गोदावर्या-	४	२५	३५३
इदं मन्दाकिन्या	४	४२	३५३
इदं राज्यमियं	३	१३	२३३
इन्दो: सौन्दर्य-	१	५७	१०९
इष्ट्वा क्रतून्युग-	५	५४	४६३
इह कवलितकन्दं	२	११	१३८
इह चरति चकोर:	५	७३	४९७
इह पुनरनिशं	२	१२	१३९
इह भवतु निवासः	६	७३	६१९
ईषन्निःसृतकुन्द-	७	२४	६९०
उचितमुचित	४	२२	३५०
उच्चैः कुम्भः कपिशः	६	६०	६०१
उच्चैः शाखाग्र-	५	४७	४४४
उज्ज्वलसुवर्ण-	६	४१	५७२
उड्डीय वाञ्छितं	५	४	३८३
उत्कम्पादगलितां-	६	६९	६१३
उत्फुल्लगल्लै-	१	२३	२२
उदयगिरिगतायां	६	१	५०७
उदात्तनायकोपेता	१	२५	२३
उन्मादिनी मदन-	५	१०	३९७
उन्मादि यौवन-	५	६५	४९२
उपकर्तुं प्रियं वक्तुं	३	१४	२३४
उपनदि पुलिने	५	६९	४९५
उपनयति करे	६	५९	५९८
उपरम रमणीया-	६	५४	५९१
उपरि परिमलान्धैः	४	२३	३५१
एकान्ते सेवते योगं	२	१८	१५२
एतस्या: करिकुम्भ-	५	५९	४८७
एतस्या: सलिलाव-	६	१६	५३६
एता: प्राप्य	४	२१	३४८
एता: सान्द्रद्रुमतल-	४	४	२९७
एतास्ता: परिपक्व-	६	७१	६१०
एषा मे हृदयं जीव	२	२१	१६१
एषा सा विन्ध्यमध्य-	५	३५	४३६
कन्दर्पस्य जगज्जैत्र-	४	६	२९५
कः करोति गुणवा-	५	१४	४००
कदा किल भविष्य-	६	२१	५४१
कन्यामन्यानुरक्तां	७	२६	६९५
कर्णमूलविषये	५	६२	४८९
कर्णान्तकृष्टवलयी-	७	४०	७२२
कर्णान्तविभ्रम-	१	१३	१३
कर्पूराम्बुनिषेक	५	२१	४१३
का नाम तत्र	७	७	६४५
कालमिव कला-	६	३७	५६८
काव्यस्याम्रफल-	१	१७	१६
किं कर्पूरकणाः	२	३८	२०४
किं कवेस्तेन	१	५	७
किञ्चित्कम्पितपाणि	७	३७	७१८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किं तेन जातु	४	१९	३४४
किन्नरवदनविनि-	७	३५	७१३
किं लक्ष्मीः स्वय-	१	५६	१०८
किं स्यादञ्जनपर्वतः	१	४४	८२
किमपि परिजनेन	४	३२	३६७
किमश्वः पार्श्वेषु	१	४९	९४
किमु कुवलयनेत्राः	५	५०	४५४
कुन्दे सुन्दरि	७	९	६४९
कुररभरसहं	५	४०	४४०
कुरुते नालकवलनं	५	६	३८८
कूजत्क्रौञ्चं चटुल-	६	२५	५४९
कृतक्रीडाः क्रोडै-	५	४८	४४९
कृत्वातिथ्यक्रियां	३	१०	२३०
केनापि व्यवहारेण	५	२३	४१७
कैलासायितमद्रिभिः	७	२८	७०१
कोष्णं किं नु	४	९	२९८
क्वचिच्चटुल-	५	४४	४५२
क्वचित्प्रवरगैरिका	५	४३	४५२
क्वचिदपि कार्यारम्भे	५	५५	४७५
क्षुभ्यत्क्षीरसमुद्र-	२	३४	२०१
गीतेर्ग्रामाः किल	६	५२	५८७
गौरवं गौरवंशस्य	२	१०	१३७
ग्रीवालम्बित-	५	५८	४८७
चक्रधरं विषमाक्षं	६	३२	५६०
चार्वी सदा सदाचार	१	३३	४७
चिरविरचितचाटु-	५	७२	४९७
जननीतिमुदित	१	३०	३८
जनयति जलबुद्धि	२	९	१३७
जयति गिरिसुतायाः	१	१	१
जयति जगदेकचक्षु	६	३१	५५८
जयति मधुसहायः	१	२	३
जयत्यखिललोक-	६	८	५१५
जयत्यमरसारथि-	६	९	५१६
जयत्यमलकौस्तुभ-	६	५	५१३
जयत्यमलभावना-	६	११	५१७
जयत्यम्भोजिनी	३	५	२१४
जयत्यम्भोजिनीबन्धु-	६	३	५११
जयत्यसमसाहसः	६	१०	५१७
जयत्यसुरसुन्दरी-	६	७	५१४
जयत्युदधिनिर्गत-	६	४	५१२
जयत्युदरनिःसर-	६	६	५१४
जाताकस्मिक-	१	४८	९२
जातिर्यत्र न तत्र	५	५७	४८६
जानन्ति हि गुणा-	१	१८	१९
तत्तस्याः कमनीय-	३	३१	२७८
तत्तातस्य कृतादरस्य	४	३१	३६६
तथा भव यथा तात	४	१७	३४३
तदेतत्पुण्यानां	४	२६	३५४
तद्वार्तामृतपानार्थि	४	२	२८८
तया दत्ता मया	५	१३	३९९
तव सुभग रम्य	६	४०	५७१
तव सुहृदुपभुक्त-	६	१२	५३०
तस्मिन्स्मितमुखे	१	५९	११२
तस्य विषयमध्ये	१	२९	३७
तस्याः कान्तिनिरुद्ध-	२	३०	१९०
ता एव निर्वृति-	२	२६	१७१
तात तावन्ममा	५	३	३८३
तास्तास्तं स्नपया-	३	२०	२५२
तुभ्यं नमो नम-	३	१	२११
तेषां वंशे विशद-	१	१९	२०
तैस्तैरात्मगुणै-	१	२०	२०
त्रिदिवपुरसमृद्धि-	१	३१	४६
त्वत्तो भयेन	६	१३	५३२
त्वद्देशागतमारुतेन	६	२३	५४४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्वद्देशागतवायसाय	६	२२	५४३
दग्धो विधिर्विधत्ते	७	२१	६८२
दत्त्वार्घमर्हणीयाय	३	९	२२९
दरमुकुलितनेत्र-	७	४२	७२४
दिशः प्रसेदुः	४	२८	३५९
दिशि दिशि किमि	५	३३	४३४
दिष्ट्या दिवौकसां	५	५३	४६२
दूराभोगभरेण-	३	३४	२८४
देवो दक्षिणदिङ्-	२	२९	१८६
देशः पुण्यतमोद्देशः	१	२८	३७
देशानां दक्षिणो	२	२८	१८०
देशो भवेत्कस्य न	२	२७	१७१
धन्याः शरदि	२	१	१२५
धन्या काप्युपरा-	७	३६	७१६
धन्यास्ते दिवसाः	१	३४	५८
धीरं रङ्गन्त	५	२९	४२५
धुतकदम्ब-	१	४३	७७
धुतरजनि-	६	५६	५९४
नक्षत्रभूः क्षत्र-	१	३७	६३
न गम्यो	७	१७	६७०
न तत्काव्यं न	३	२८	२७५
नद्यास्तीरे विदर्भाया	५	२७	४२१
नमिताः फलभारेण	२	२	१२६
नलोऽपि मां	६	१९	५४०
नास्ति सा नगरी	१	२६	३१
निजप्रियमुखभ्रान्त्या	५	६०	४८८
नित्यमुद्वहते	२	३३	२००
निपतति किल	६	२०	५४०
निर्मांसं मुख-	१	४७	८६
निर्माय स्वयमेव	४	७	२९६
निश्चितं ससुरः	१	१०	११
नीरं नीरजनिर्मुक्तं	१	४२	७६
नीरञ्जनपदे	२	१९	१५३
नृप चलसि	६	६८	६१२
नोद्याने न तर	७	१६	६६९
नो नेत्राञ्जलिना	१	६२	११६
पटलमलिकुलाना-	२	४	१३४
पद्मान्यातपवारणानि	५	७१	४९६
परिम्लानच्छाया	७	२५	६९४
परिहरति वयो	३	२९	२७७
पर्णैः कर्णपुटायितै-	१	४१	७५
पर्वतभेदि पवित्रं	६	२९	५५६
पश्यैताः करिकुम्भ-	५	३८	४३८
पाण्डुपङ्कजसंलीन-	२	१४	१४७
पीनोन्नमद्धन-	६	६४	६०७
पुनरपि तदभिज्ञा	१	६४	१२०
पूर्वापरपयोराशि-	५	३०	४२८
पूर्वाह्णं विहितोदया	५	७४	५०१
पौष्पाः पञ्चशराः	७	१८	६७१
प्रभासंयोगिविख्यातं	३	२४	२६८
प्रसन्नाः कान्ति-	१	४	५
प्रसरति रणरणकरसः	६	४३	५७९
प्रसृतकमलगन्धं	५	८	३९२
प्रस्तुतस्य विरोधेन	७	४६	७२८
प्रायः सैव भवे-	४	१	२८७
प्रावृषं शरदं	२	३	१२६
प्रियविरहविषाद-	६	४५	५८१
प्रेमप्रपञ्च	५	११	३९७
वककृतनिनदं	५	४१	४४१
बाणकरवीरदमनक-	२	१७	१४९
बालोन्मील-	५	३९	४३९
बिभर्ति यो ह्यर्जुन-	४	१८	३४४
बिभ्रते हारिणीं	२	३२	२००
ब्रह्मण्योऽपि	१	४९	६५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भङ्गश्लेषकथाबन्धं	१	२२	२९
भजत बलसमूहाः	६	७५	६२१
भवति यदि सहस्रं	५	१	३७४
भवति हृदयहारी	७	४७	७३३
भवन्ति फाल्गुने	१	२७	३१
भानोः सुता	६	१५	५३५
भिन्दन्कन्द-	१	४५	८३
भुक्तान्ते घृत-	७	१२	६६२
भूपालामन्त्रणे	५	२२	४१६
भूमयो बहिरन्त-	१	३१	४३
भोगान्भो गाङ्ग-	३	२२	२५९
भ्रमकरं मकरं	५	६३	४९०
भ्राम्यद्द्विरेफाणि	२	५	१३४
भ्राम्यद्भृङ्गभरा-	६	७२	६०६
मज्जत्कुञ्जर-	५	३६	४३७
मण्डलीकृतकोदण्डः	४	३	२८९
मदनमतियुवानं	७	२७	६९९
मध्ये त्रिवली	५	६७	४९३
मन्दं मन्दर-	५	३२	४३२
मन्दायते दिनमिदं	५	६४	४९१
महावराहाङ्गविनि-	६	३०	५५७
माद्यद्दन्तिकपोल	५	३४	४३५
माद्यन्मांसलतुङ्ग-	५	२५	४१९
माल्यं मूर्धनि	६	७०	६१४
मित्रं च मन्त्री	१	२८	६५
मुक्तादाममनोरथेन	२	३०	२०४
मुक्तास्रैः श्रूयमाणं	६	२७	५५३
मुग्धस्निग्ध	३	६	२१६
मुग्धा दुग्धधिया	२	३६	२०३
मुञ्चन्त्याः शिशुतां	३	३०	२७७
मुहुरधिवसतां	५	४२	४४१
मृगेषु मैत्री	६	२८	५५५
मृदुकरपरिरम्भा	६	५८	५९७
यं श्रुत्वैव	७	१०	६५०
यत्र न फलिता-	६	६३	६०६
यथा चित्तं तथा	३	१५	२३४
यथेयमाकृति-	५	२६	४२०
यद्यावद्यादृशं	३	१७	२४०
यद्येतस्याः सकृदपि	६	१७	५३७
यः स्कन्दस्य	४	३७	३५८
यात्यस्ताचलमन्द्य-	६	२	५०८
ये कुन्दद्युतयः	१	३५	५९
रक्तेनाक्तं विनि-	५	७६	५०२
रङ्गत्यङ्गे कुरङ्गाक्ष्या	७	४४	७२६
रजनिमवनिनाथः	५	७७	५०५
रसे रसायने	४	१४	३१६
राजते राजतेनायं	२	८	१३६
राजन्राजीवपत्राक्ष-	२	२६	१६३
रूपसम्पन्नमग्राम्यं	२	२२	१६२
रोहणं सूक्तरत्नानां	१	८	९
लक्ष्मीं बिभ्राणयो-	७	३४	७१३
लब्धार्धचन्द्र ईशः	६	३८	५७०
ललाटपट्टविन्यस्त-	३	११	२३०
लावण्यपुण्य-	७	२२	६८३
लावण्यातिशयः	३	३३	२८३
लावण्यामृत-	७	४३	७२५
लास्यं पांसुकणायते	५	२०	४१२
लिप्तेवामृतपङ्केन	५	१९	४०९
लीलया मण्डलीकृत्य	४	३०	३६०
लीलाताण्डवित-	७	४१	७२४
वररजनीकरकान्ते	३	१९	२४९
वरसहकारकरञ्जक-	२	१६	१४८
वर्धमानोल्लसद्रागा	६	४८	५८३
वल्लीवल्कपिनद्ध-	१	५२	१००

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वहति नवविकासो-	२	१३	१३९
वाचः काठिन्य-	१	१६	१६
वायुस्कन्धमव-	५	४५	४४३
वासरश्रीमहावल्ली-	३	४	२१४
विकलयति कला-	५	६६	४९३
विगलितविलास-	७	२३	६८९
विचित्राः पत्त्राली	६	२४	५४८
विपिनोद्देशं सरसं	६	३४	५६२
विभो विभूतिसम्पन्न	३	२	२११
वियति विशद-	३	१८	२४५
विरचितपरिवेषाः	५	५२	४५७
विवेकः सहः	३	१६	२३५
विश्राम्यन्ति न	५	५	३८५
विश्लेषाकुलचक्र-	५	७५	५०१
वीचीनां निचयाः	५	४९	४५०
वीरपुरुषं तदेत-	६	६६	६०९
वेदविद्योपमा	६	५३	५८९
वेधा वेदनयाश्लिष्टो	६	१४	५३३
व्यासः क्षमाभृतां	१	१२	१२
शतगुणपरिपाट्या	६	५५	५९२
शश्वद्वाणद्वितीयेन	१	१४	१४
शिथिलितसकलान्य	५	१५	४०२
शुष्काङ्गी घनचा-	६	५१	५८७
शृङ्गाररस-	२	२५	१६६
श्च्योतच्चन्दन-	२	३५	२०२
श्च्योतच्चन्द्रमणि-	५	१७	४०८
षड्रसाः किल	७	१४	६६४
संगता सुरसार्थेन	१	२४	२२
संगीतका त्वदीत्सु-	६	५०	५८५
संग्रहं नाकुलीनस्य	४	२०	३४६
संसाराम्बुनिधौ	५	२	३७४
स एष निषधेश्वरः	६	३६	५६५
सकलविषयवृत्ती	६	४४	५८०
सत्काञ्च्यश्चन्द-	६	७९	६२७
सदाहंसाकुलं	१	३६	६२
सदूषणापि निर्दोषा	१	११	१२
सरलप्रियं गुणाढ्यं	२	१५	१४७
सरसिजमकरन्दा-	५	७०	४९५
सर्गव्यापारखिन्नस्य	३	२६	२७१
सर्वेऽपि पक्षिणो	७	२९	७०२
सवृद्धबालाः काले	४	११	३१०
सांशुकोन्नतवंशस्य	४	१०	३०९
सा त्वं मन्मथ-	१	६०	११२
सानूनां सानूनां	६	६५	६०८
साप्यनेककलोपेता	६	४९	५८४
सालानकमनालान-	६	५७	५९६
सा समीपस्थित-	३	२३	२६६
सिच्यन्तां राजमार्गाः	६	७८	६२६
सिन्दूरस्पृहया	३	७	२२७
सुगमस्तवास्तु	६	३३	५६१
सुधापङ्कोपलिप्तेव	७	३०	७०२
सुरसदननिवासं	६	७७	६२३
सुस्थिततेजोराशे-	७	१९	६७६
सैषा चलच्चन्द्रकि-	६	२६	५५३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोच्छ्वासं मरणं	७	४५	७२७
सोऽयं क्रीडाचलो	२	७	१३६
सोऽयं यस्तेन	४	८	२९७
सोष्णीषमूर्धा	४	१५	३१८
सोऽहं हंसायितुं	१	२१	२१
सौधस्कन्धतलानि	७	३१	७०२
स्कन्धशाखान्तरालेषु	५	४६	४४४
स्त्रीमाणिक्यमहाकरः	१	६१	११५
स्थित्वा त्वदागमन	६	१८	५३८
स्मरराजराजधानी-	७	२०	६८२
स्मरविहरणवेदीं	६	७६	६२२
स्वःसौन्दर्यविडम्बि	६	७२	६१७
हंहो हंसि चकोरि	७	८	६४९
हरचरणसरोजा-	३	३५	२८५
हरिति हरिणयूथं	२	६	१३५
हर्षादुत्पुलकं	७	४८	७३६
हर्षाद्बाष्पचिते	७	३८	७२०
हृद्योद्यानमरु-	१	६३	११९
हृद्योद्यानसर-	५	१८	४०८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हमारे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ

अमरुशतकम्। 'रसिकसंजीवनी' संस्कृत तथा 'प्रकाश' हिन्दी टीका

ऋतुसंहारम्। कालिदासकृतम्। 'हरिप्रिया' संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेतम्।
व्याख्याकार—श्रीलक्ष्मीप्रपन्नाचार्य

औचित्यविचारचर्चा। क्षेमेन्द्रविरचिता। सान्वय 'रमा' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या, विशेष टिप्पणी (नोट्स) विभूषित। व्याख्याकार—डा० रमाशङ्कर त्रिपाठी

चम्पूरामायणम्। श्रीभोजराज सार्वभौमकृतम्। 'कल्याणी' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या नोट्स सहित। व्याख्याकार—पण्डित रामनाथ त्रिपाठी शास्त्री।
बालकाण्ड सुन्दरकाण्ड
अयोध्या कांड सम्पूर्ण

भट्टिकाव्यम्। 'चन्द्रकला'-'विद्योतिनी' संस्कृत-हिन्दी टीका सहित।
टीकाकार—श्री शेषराज शास्त्री। १-६ सर्ग, [illegible]-१२ सर्ग, [illegible]-४ सर्ग,
५-८ सर्ग, १२-२२ सर्ग, सम्पूर्ण १-[illegible]

मेघदूतम्। सान्वय 'इन्दुकला' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या, [illegible] (नोट्स) सहित। व्याख्याकार—श्री वैद्यनाथ झा। पूर्वमेघ, उत्तरमेघ, [illegible]

रघुवंशमहाकाव्यम्। 'मल्लिनाथी' संस्कृत तथा सान्वय 'हृदयप्रथा' हिन्दी व्याख्या सहित। सम्पूर्ण

रसगङ्गाधर। पण्डितराजजगन्नाथविरचितः। 'रसतरंगिणी' संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेतः।
व्याख्याकारद्वयः प्रो० श्रीनारायण मिश्र एवं श्रीशशिनाथ झा

कादम्बरी। सविमर्श 'भावबोधिनी' संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेता।
व्या०—डा० जयशङ्करलाल त्रिपाठी। आदितः शुकनासोपदेशांतो भागः
पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, एवं सम्पूर्ण

काव्यप्रकाशः। मम्मटभट्टविरचितः सविमर्श 'रहस्यबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित।
व्याख्याकार—डा० गजानन शास्त्री मुसलगाँवकर। सम्पादक—आचार्य पण्डित सत्यनारायण शास्त्री खण्डूड़ी। १-६ उल्लास, ७-१० उल्लास, सम्पूर्ण

फोन : ३३३४५८

अपरञ्च पुस्तक-प्राप्तिस्थानम्
(सहयोगी संस्था)
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के. ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन, गोलघर (मैदागिन) के पास
पो. बा. नं. १००८, वाराणसी-२२१ ००१ (भारत)
E-mail : cssoffice@satyam.net.in

ISBN : 81-218-0083-8 Price Rs. 200-00

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri